



जैनाचार्य-जैनधर्मदिवाकर-पूज्यश्री-घासीलालजी-महाराज-

विरचितया ज्ञानचन्द्रिकाख्यया-व्याख्यया समलङ्कृतं

हिन्दी-गुर्जर-भाषाऽनुवादसहितम्-

# नन्दीसूत्रम्।

नियोजकः

संस्कृत-प्राकृतज्ञ-जैनागमनिष्णात-प्रियव्याख्यानि-

पण्डितमुनि-श्रीकन्हैयालालजी-महाराजः

॥

प्रकाशकः

अहमदाबाद-सरसपुरवासि-श्रेष्ठि-श्रीभोगीलाल छगनलाल-

भाई-भावसार-प्रदत्त-द्रव्यसाहाय्येन

अ० भा० श्वे० स्था० जैनशास्त्रोद्धारसमितिप्रमुखः

श्रेष्ठि-श्रीशान्तिलाल-मङ्गलदासभाई-महोदयः

मु० राजकोट

प्रथम आवृत्ति  
प्रति १०००

वीर संवत्  
२४८४

विक्रम संवत्  
२०१४

ईस्वीसन  
१९५८

मूल्यम्-रु० १०-०-०



મળવાનું ઠેકાણું :

શ્રી. અ. બા. શ્વે. સ્થાનકવાસી  
જૈન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિ  
કે. ગરેહિયા કૂવારોડ, ગ્રીન લોજ  
પાસે, રાજકોટ (સૌરાષ્ટ્ર)

✽

પ્રથમ આવૃત્તિ : પ્રત ૧૦૦૦

વીર સંવત : ૨૪૮૪

વિક્રમ સંવત : ૨૦૧૪

ઇ સ્વી સ ન : ૧૯૫૮

✽

: સુદ્રક :

મણિલાલ છગનલાલ શાહ  
ધી નવપ્રભાત પ્રિન્ટીંગ પ્રેસ  
ધીકાંટા રોડ ; ; અમદાવાદ

---

---

શ્રી-વર્ધમાન-શ્રમણ-સંઘના આચાર્યશ્રી

પૂજ્ય આત્મારામજી મહારાજશ્રીએ

આપેલ

## સમ્મતિપત્ર

\*

ઉપરાંત

પૂજ્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ-રચિત

બીજા સૂત્રોની ટીકા માટે તેઓશ્રીના મંતવ્યે।

\*

તેમજ

અન્ય મહાત્માઓ, મહાસતીજીઓ, અદ્યતન-પદ્ધતિવાળા કોલેજના પ્રોફેસરો

તેમજ

શાસ્ત્રજ્ઞ આવકોના અભિપ્રાયે।

વે. ર  
ભિતિ

---

---

जैनागमवारिधि-जैनधर्मदिवाकर-प्रधानाचार्य-पण्डित-मुनि-  
श्रीमदात्मारामजीमहाराजानाम् नन्दीसूत्रस्याचार-  
चिन्तामणिटीकायां  
सम्मत्तिपत्रम्

श्रीमल्लब्धसपर्य्याचार्यवर्य्यघासीलालजित्कृता श्रीमदाचाराङ्गसूत्र-  
प्रथमाध्ययनस्याचारचिन्तामणिवृत्तिः साकल्येनोपयोगितापूर्वकं कर्णकुह-  
रीकृता, वृत्तिरियं न्यायसिद्धान्तोपेता व्याकरणनियमोपनिबद्धा, तथा च  
प्रासङ्गिकरीत्या अन्यसिद्धान्तसङ्ग्रहोऽप्यस्यां याथातथ्येनाभासत एव,  
अपि च निखिला अपि विषयाः सम्यग् व्यक्तीकृता लेखकेन, विशेषेण  
प्रौढविषयाणां स्फुटतया गोर्वाणवाण्यां प्रतिपादनम् अधिकतरं मनो-  
रञ्जकम् । अतः आचार्यमहोदयो धन्यवादमर्हतीति ।

आशासे जिज्ञासुमहोदया अस्याः सम्यग् अध्ययनेन जैनागम-  
सिद्धान्तपीयूषं पायं पायं मनोमोदं विधास्यन्तीति । अस्याः परिशीलनेन  
चतुर्णामनुयोगानां परिचयं प्राप्तुवन्तु सज्जनाः । अथ आचार्यमहोदया  
एवमेवान्येषामपि जैनागमानां विशदव्याख्यानेन श्वेताम्बराणां स्थानक-  
वासिनां महोपकृतिं विधाय यशस्विनो भविष्यन्तीति ।

पञ्चनन्दप्रातान्तर्वर्ति - लुध्यानामण्डल-स्थानकवास्तव्यो जैनमुनि-  
रूपाध्याय आत्मारामः ।

विक्रमाब्दः २००२, मार्गशीर्षशुक्ला प्रतिपत्, शुभमस्तु ॥



સ્વ. શ્રીમાન્ છગનલાલ શામળદાસ ભાવસાર

જન્મ તા. ૧૫-૧૨-૧૮૮૨ \* દેહોત્સર્ગ તા ૧૯-૧-૧૯૪૪

### સ્મરણાંજલિ

આપે જિનેશ્વરનો ધર્મ આચરણમાં મુકીને જીવનને ધનધન્ય બનાવ્યું અને તેનો શાશ્વત વારસો અમોને આપ્યો તે બદલ અમે આપના ઋણી છીએ. આપે સિંચેલા સરકારના પ્રભાવે આજે શ્રી નદીસૂત્ર આપના સ્મરણાર્થે છપાવી આપના તરફનું અમારું ઋણ યત્કિચિત અદા કરવાનો આ અમારો નમ્ર પ્રયાસ છે

—અમે છીએ, આપના બાળકો,  
ભોગીલાલ વીગેરે



जैनागमवेत्ता जैननधर्मदिवाकर उपाध्याय श्री १००८ श्री आत्मारामी  
महाराज तथा न्यायव्याकरणके ज्ञाता परम पण्डित मुनिश्री १००७  
श्री हेमचन्द्रजी महाराज, इन दोनों महात्माओंका दिया हुआ  
श्री उपासकदशाङ्ग सूत्रका प्रमाण पत्र निम्न प्रकार है—

### सम्मइवत्तं

सिरि-वीरनिव्वाण-संवच्छर २४५८ आसोई

( पुण्णमासी ) १५ सुक्कारो लुहियाणाओ ।

मए मुणिहेमचंदेण य पंडियरयणमुणिसिरि-घासीलालविणिम्मिया सिरिउवा-  
सगसुत्तस्स अगारधम्मसंजीवणीनामिया वित्ती पंडियमूलचन्दवासाओ अज्जोवंतं  
सुया, समीईणं, इयं वित्ती जहाणामं तहा गुणेवि धारेइ, सच्चं अगाराणं तु इमा  
जीवण ( संजमजीवण ) दाई एव अत्थि । वित्तिकत्तुणा मूलसुत्तस्स भावो उज्जु-  
सेलीओ फुडीकओ, अहय उवासयस्स सामण्णविसेसधम्मो, णयसियवायवाओ,  
कम्मपुरिसट्ठवाओ, समणोवासयस्स धम्मदढया य, इच्चाइविसया अस्सिं फुडरीइओ  
वणिण्या, जेण कत्तुणो पडिहाए सुट्ठुप्पयारेण परिचओ होइ, तह इइहासदिट्ठिओवि  
सिरिसमणस्स भगवओ महावीरस्स समए वट्ठमाणभरहवासस्स य कत्तुणा विसय-  
प्पयारेण चित्ते चित्तिं, पुणो सक्कयपाढीणं, वट्ठमाणकाले हिन्दीणामियाए भासाए  
भासीणं य यरमोवयारो कडो, इमेण कत्तुणो अरिहत्ता दीसइ, कत्तुणो एयं कज्जं  
परमप्पसंसणिज्जमत्थि । पत्तेयजणस्स मज्झत्थभावाओ अस्स सुत्तस्स अवलोयणमईव  
लाहप्पयं, अवि उ सावयस्स तु ( उ ) इमं सत्थं सव्वस्समेव अत्थि, अओ कत्तुणो  
अणेगकोडिसो धन्नवाओ अत्थि, जेहिं अच्चंतपरिस्समेण जइणजणतोवरि असीमो-  
वयारो कडो, अह य सावयस्स वारस नियमा उ पत्तेयजणस्स पढणिज्जा अत्थि,  
जेसिं पहावओ वा गहणाओ आया निव्वाणाहिगारी भवइ तहा भवियव्वयावाओ  
पुरिसकारपरकमवाओ य अवस्समेव दंसणिज्जो, किं बहुणा इमीए वित्तीए पत्तेय-  
विसयस्स फुडसेइहिं वण्णयं कयं, जइ अन्नोवि एवं अम्हाणं पसुत्तप्पाए समाजे विज्जं  
भवेज्जा तया नाणस्स चरित्तस्स तहा संवस्स य विष्पं उदयो भविस्सइ, एवं  
इं मन्ने ॥

भवईओ-

उवज्झाय-जइणमुणि-आयाराम-पंचनईओ,

જૈનાગમવારિધિ-જૈનધર્મદિવાકર પ્રધાનાચાર્ય પण्डित-  
 मुनिश्री आत्मारामजी महाराज ( पं.न.प. ) ना ओ  
 नन्दीसूत्रनी आचारयिन्तामणि टीका पर आयेल  
 संमतिपत्रनो गुजराती अनुवाद

મેં પૂજ્ય આચાર્યવર્ય ધાસીલાલજી ( મહારાજ )ની ળનાવેલ શ્રીમદ્  
 નન્દીસૂત્રના અધ્યયનની આચારયિતામણિ ટીકા સમ્પૂર્ણ ઉપયોગપૂર્વક સાંભળી.

આ ટીકા ન્યાયસિદ્ધાંતથી યુક્ત, વ્યાકરણના નિયમથી નિષદ્ધ છે. તથા  
 એમાં પ્રસંગે પ્રસંગે ક્રમથી અન્ય સિદ્ધાંતોનો સંગ્રહ પણ ઉચિત રૂપથી  
 જણાઈ આવે છે.

ટીકાકારે અન્ય તમામ વિષયો સમ્યક્ પ્રકારથી સ્પષ્ટ કરેલ છે. તેમજ  
 પ્રૌઢ વિષયોનો વિશેષ રૂપથી સંસ્કૃત ભાષામાં સ્પષ્ટતાપૂર્વક પ્રતિપાદન અતિ  
 મનોરંજક છે. એ માટે આચાર્ય મહોદય ખરેખર ધન્યવાદને પાત્ર છે.

હુ આશા રાખું છું કે જિજ્ઞાસુ મહોદયો એના સારી રીતે પઠન પાઠન  
 દ્વારા જૈનાગમ સિદ્ધાંતરૂપ અમૃત પીય પીયને મનને આનંદિત કરે. અને તેના  
 મનનથી દક્ષજનો ચાર અનુયોગોનું સ્વરૂપજ્ઞાન મેળવે.

તથા આચાર્યવર્ય આવી જ રીતે બીજા પણ જૈનાગમોના સ્પષ્ટતાપૂર્વક  
 વિવેચન દ્વારા શ્વેતાંબર સ્થાનકવાસી સમાજ પર મહાન ઉપકાર કરીને  
 યશસ્વી બને.

વિ. મં. ૨૦૦૫  
 માગસર સુદિ ૧

જૈનમુનિ ઉપાધ્યાય આત્મારામ  
 લુધિયાના ( પં.ન.પ. )  
 શુભમસ્તુ

## सम्मत्तिपत्र

(भाषान्तर)

श्रीवीरनिर्वाण सं० २४५८ आसोज

शुक्ल १५ ( पूर्णिमा ) शुक्रवार लुधियाना

मैंने और पण्डितमुनि हेमचन्द्रजी पण्डितरत्नमुनिश्री घासीलाल-जीकी रची हुई उपासकदशांग सूत्रकी गृहस्थधर्मसंजीवनी नामक टीका पण्डित मूलचन्द्रजी व्यास से आद्योपान्त सुनी है। यह वृत्ति यथानाम तथा गुणवाली-अच्छी बनी-है। सच यह गृहस्थों के जीवनदात्री-संयमरूप जीवन को देनेवाली-ही है। टीकाकार ने मूल सूत्र के भावको सरल रीति से वर्णन किया है, तथा श्रावक का सामान्य धर्म क्या है ? और विशेष धर्म क्या है ? इसका खुलासा इस टीकामें अच्छे ढंगसे बतलाया है। स्याद्वादका स्वरूप, कर्म-पुरुषार्थ-वाद और श्रावकोंको धर्म के अंदर द्रढता किस प्रकार रखना, इत्यादि विषयों का निरूपण इसमें भली भांति किया है। इससे टीकाकार की प्रतिभा खूब झलकती है। ऐतिहासिक द्रष्टिसे श्रमण भगवान् महावीरके समय जैनधर्म किस जाहोजहाली पर था और वर्तमान समय जैनधर्म किस स्थितिमें पहुँचा इस विषय का तो ठीक चित्र ही चित्रित कर दिया है। फिर संस्कृत जाननेवालों को तथा हिन्दी भाषा के जाननेवालों को भी पूरा होगा, क्यों कि टीका संस्कृत है, उसकी सरल हिन्दी कर दी गई है। इसके पढ़नेसे कर्ता की योग्यता का पता लगता है कि वृत्तिकारने समझाने का कैसा अच्छा प्रयत्न किया है। टीकाकार का यह कार्य परम प्रशंसनीय है। इस सूत्र को मध्यस्थ भावसे पढ़ने वालों को परम लाभ की प्राप्ति होगी। क्या कहें ! श्रावकों (गृहस्थों) का तो यह सूत्र सर्वस्व ही है, अतः टीकाकारको कोटिशः धन्यवाद दिया जाता है, जिन्होंने अत्यन्त परिश्रमसे जैनजनताके ऊपर असीम उपकार किया है। इसमें श्रावक के बारह नियम प्रत्येक पुरुष के पढ़ने योग्य हैं, जिनके प्रभाव से अथवा यथायोग्य ग्रहण करने से आत्मा मोक्षका अधिकारी होता है, तथा भवितव्यतावाद और पुरुषकार पराक्रमवाद हरएक को अवश्य



देखना चाहिये । कहां तक कहें, इस टीका में प्रत्येक विषय सम्यक् प्रकार से बताये गये हैं । हमारी सुसप्राय ( सोई हुई सी ) समाज में अगर आप जैसे योग्य विद्वान् फिर भी कोई होंगे तो ज्ञान, चारित्र्य तथा श्री संघका शीघ्र उदय होगा, ऐसा मैं मानता हूँ ।

आपका

उपाध्याय जैनमुनि आत्माराम पंजाबी

✱

इसी प्रकार लाहोरमें विराजते हुए पण्डितवर्य विद्वान् मुनिश्री १००८

श्री भागचन्दजी महाराज तथा पं० मुनिश्री त्रिलोकचन्दजी

महाराज के दिये हुए, श्री उपासकदशाङ्ग सूत्रके

प्रमाणपत्र का हिन्दी सारांश निम्न प्रकार है—

श्री श्री स्वामी घासीलालजी महाराज—कृत श्री उपासकदशाङ्ग सूत्र की संस्कृत टीका व भाषा का अवलोकन किया, यह टीका अति रमणीय व मनोरञ्जक है, इसे अपने बड़े परिश्रम व पुरुषार्थ से तथ्यार किया है, सो आप धन्यवाद के पात्र है । आप जैसे व्यक्तियों की समाज में पूर्ण आवश्यकता है । आप की इस लेखनी से समाज के विद्वान् साधुवर्ग पढ़ कर पूर्ण लाभ उठावेंगे, टीकाके पढ़ने से हम को अत्यानन्द हुआ, और मन में ऐसे विचार उत्पन्न हुए कि हमारी समाज में भी ऐसे २ सुयोग्य रत्न उत्पन्न होने लगे—यह एक हमारे लिये बड़े गौरव की बात है ।

वि. सं. १९८९ मा. आश्विन  
कृष्ण १३ वार भौम लाहोर

✱

રૂા. ૧૦,૦૦૦) આપનાર આઘ સુરજી સમિતિના પ્રમુખ;  
દાનવીર શેઠશ્રી,



શેઠ શાંતિલાલ મંગળદાસલાઈ  
અમદાવાદ.



श्री ज्ञाताधर्मकथाङ्गसूत्र की 'अनगारधर्माऽमृतवर्षिणी' टीका पर  
 जैनधर्मदिवाकर साहित्यरत्न जैनागमरत्नाकर परमपूज्य श्रद्धेय  
 जैनाचार्य श्री आत्मारामजी महाराज का  
 सम्मतिपत्र

लुधियाना, ता. ४-८-५१

मैंने आचार्यश्री घासीलालजी म. द्वारा निर्मित 'अनगार-धर्माऽमृत-वर्षिणी' टीका वाले श्री ज्ञाताधर्मकथाङ्ग सूत्र का मुनिश्री रत्नचन्द्रजी से आद्योपान्त श्रवण किया।

यह निःसन्देह कहना पड़ता है कि यह टीका आचार्यश्री घासीलालजी म० ने बड़े परिश्रम से लिखी है। इसमें प्रत्येक शब्दका प्रमाणिक अर्थ और कठिन स्थलों पर सार-पूर्ण विवेचन आदि कई एक विशेषताएँ हैं। मूल स्थलों को सरल बनाने में काफी प्रयत्न किया गया है, इस से साधारण तथा असाधारण सभी संस्कृतज्ञ पाठकों को लाभ होगा ऐसा मेरा विचार है।

मैं स्वाध्यायप्रेमी सज्जनों से यह आशा करूँगा कि वे वृत्तिकारके परिश्रम को सफल बना कर शास्त्र में दी गई अनमोल शिक्षाओं से अपने जीवन को शिक्षित करते हुए परमसाध्य मोक्ष को प्राप्त करेंगे।



श्रीमान् जयवीर

आपकी सेवामें पोष्टद्वारा पुस्तक भेज रहे हैं और इस पर आचार्यश्रीजी की जो सम्मति है वह इस पत्रके साथ भेज रहे हैं, पहुँचने पर समाचार दें।

श्री आचार्यश्री आत्मारामजी म० ठाने ६ सुखशान्तिसे विराजते हैं। पूज्य श्री घासीलालजी म० सा० ठाजे ४ को हमारी ओरसे वन्दना अर्ज कर सुखशाता पूछें।

पूज्यश्री घासीलालजी म० जी का लिखा हुआ (विपाकसूत्र) महाराजश्रीजी देखना चाहते हैं। इसलिये १ कापी आप भेजने की कृपा करें; फिर आपको वापिस भेज देंगे। आपके पास नहीं हो तो जहाँ से मिले वहाँ से १ कापी जरूर भिजवाने का कष्ट करें, उत्तर जल्द देने की कृपा करें। योग्य सेवा लिखते रहें।

लुधियाना ता. ४-८-५१

निवेदक  
 प्यारेलाल जैन

जैनागमवारिधि-जैनधर्मदिवाकर-उपाध्याय-पण्डित-मुनि  
श्री आत्मारामजी महाराज ( पंजाब ) का आचाराङ्गसूत्र की  
आचारचिन्तामणि टीका पर

### सम्मतिपत्र

मैंने पूज्य आचार्यवर्य श्री घासीलालजी ( महाराज ) की बनाई हुई  
श्रीमद् आचाराङ्गसूत्र के प्रथम अध्ययनकी आचारचिन्तामणि टीका  
सम्पूर्ण उपयोगपूर्वक सुनी ।

यह टीका, न्यायसिद्धान्त से युक्त, व्याकरण के नियम से निबद्ध  
है । तथा इसमें प्रसङ्ग २ पर क्रमसे अन्य सिद्धान्त का संग्रह भी उचित  
रूप से मालूम होता है ।

टीकाकार के अन्य सभी विषय सम्यक् प्रकार से स्पष्ट किये हैं, तथा  
प्रौढ विषयों का विशेषरूप से संस्कृत भाषा में स्पष्टतापूर्वक प्रतिपादन  
अधिक मनोरंजक है, एतदर्थ आचार्य महोदय धन्यवाद के पात्र हैं ।

मैं आशा करता हूँ कि जिज्ञासु महोदय इसका भलीभांति पठन-  
द्वारा जैनागमसिद्धान्तरूप अमृत पी-पी कर मन को हर्षित करेंगे, और  
इसके मनन से, दक्ष जन चार अनुयोगों का स्वरूपज्ञान पावेंगे । तथा  
आचार्यवर्य इसी प्रकार दूसरे भी जैनागमों के विशद विवेचन द्वारा  
श्वेताम्बर-स्थानकवासी समाज पर महान उपकार कर यशस्वी बनेंगे ।

वि. सं. २००२

मृगसर सुदि १

जैनमुनि-उपाध्याय आत्माराम

लुधियाना ( पंजाब ). शुभमस्तु



वीकानेरवासी समाजभूषण शास्त्रज्ञ भेरुदानजी शेठियाका अभिप्राय-



आप जो शास्त्रका कार्य कर रहे हैं यह बड़ा उपकारका कार्य है ।  
इससे जैनजनताको काफी लाभ पहुँचेगा ।

( ता. २८-३-५६ के पत्रमें से )

॥ श्रीः ॥

जैनागमशरिफि—जैनधर्मदिवाकर—जैनाचार्य—पूज्यश्री आत्मारामजी—  
महाराजनां पञ्चनद—( पंजाब ) स्थानामनुत्तरोपपातिकसूत्राणा—  
मर्थबोधिनीनामकटीकायामिदम्—

### सम्मतिपत्रम्

आचार्यवर्यैः श्री घासीलालमुनिभिः सङ्कलिता अनुत्तरोपपातिकसूत्राणामर्थ-  
बोधिनीनाम्नो संस्कृतवृत्तिरूपयोगपूर्वकं सकलाऽपि स्वशिष्यमुखेनाऽश्रापि मया, इयं  
हि वृत्तिर्मुनिवरस्य वैदुष्यं प्रकटयति । श्रीमद्भिर्मुनिभिः सूत्राणामर्थान् स्पष्टयितुं  
यः प्रयत्नो व्यधायि तदर्थमनेकशो धन्यवादानर्हन्ति ते । यथा चेयं वृत्तिः  
सरला सुबोधिनी च तथा सारवत्यपि । अस्याः स्वाध्यायेन निर्वाणपदममीप्सु-  
भिर्निर्वाणपदमनुसरद्भिर्ज्ञान-दर्शन-चारित्र्येषु प्रयतमानैर्मुनिभिः श्रावकैश्च ज्ञान-  
दर्शन-चारित्र्याणि सम्यक् सम्प्राप्याऽन्येऽप्यात्मानस्तत्र प्रवर्तयिष्यन्ते ।

आशासे श्रीमदाशुकविनिर्मुनिवरो गीर्वाणवाणीजुषां विदुषां मनस्तोषाय  
जैनागमसूत्राणां सारावबोधाय च अन्येषामपि जैनागमानामित्थं सरलाः सुस्पष्टाश्च  
वृत्तीर्विधाय तांस्तान् सूत्रग्रन्थान् देवगिरा सुस्पष्टयिष्यति ।

अन्ते च “ मुनिवरस्य परिश्रमं सफलयितुं सरलां सुबोधिनीं चेमां सूत्रवृत्तिं  
स्वाध्यायेन सनाथयिष्यन्त्यवश्यं सुयोग्या हंसनिभाः पाठकाः ” इत्याशास्ते—

विक्रमाब्द २००२

श्रावणकृष्णा प्रतिपदा

लुधियाना

उपाध्याय आत्मारामो जैनमुनिः



( श्री दशवैकालिकसूत्रका सम्मतिपत्र )

॥ श्री वीरगौतमाय नमः ॥

### सम्मतिपत्रम्

मए पंडितमुणि-हेमचंदेण य पंडिय-मूलचन्दवासवारा पत्ता पंडिय-रयण-मुणि-घासीलालेण विरइया सककय-हिन्दी-भाषाहिं जुत्ता सिरि-दसवेयालिय-नामसुत्तस्स आचारमणिमंजूसा वित्ती अवलो-इया, इमा मणोहरा अत्थि, एत्थ सदाणं अइसयजुत्तो अत्थो वणिणओ, विउजणाणं पाययजणाण य परमोवयारिया इमा वित्ती दीसइ । आचारविसए वित्तीकत्तारेण अइसयपुव्वं उल्लेहो कडो, तहा अहिंसाए सरूवं जे जहा-तहा न जाणंति तेसिं इमाए वित्तीए परमलाहो भविस्सइ, कत्तुणा पत्तेयविसयाणं फुडरूवेण वण्णणं कडं, तहा मुणिणो अरहत्ता हमाए वित्तीए अवलोयणाओ अइसय-जुत्ता सिज्झइ । सककयाया सुत्तपयाणं पयच्छेओ य सुवोहदायगो अत्थि, पत्तेयजिण्णासुणो इमा वित्ती दइव्वा । अम्हाणं समाजे एरिसविज्ज-मुणिरयणाणं सव्भावो समाजस्स अहोभगं अत्थि, किं उत्तविज्जमुणिरयणाणं कारणाओ, जो अम्हाणं समाजो सुत्तप्पाओ अम्हकेर साहिच्चं च लुत्तप्पायं अत्थि, तेसिं पुणोवि उदओ भविस्सइ ? जस्स कारणाओ भविष्या मोक्खस्स जोगो भवित्ता पुणो निव्वाणं पाविहिइ । अओहं आचारमणिमंजूसाए कत्तुणो पुणो पुणो धन्नवायं देमि- ॥

वि. सं. १९९० फाल्गुन

इइ-

शुक्लत्रयोदशी मङ्गले

( अलवरस्टेट )

उवज्जाय-जइण-मुणी, आचारामो

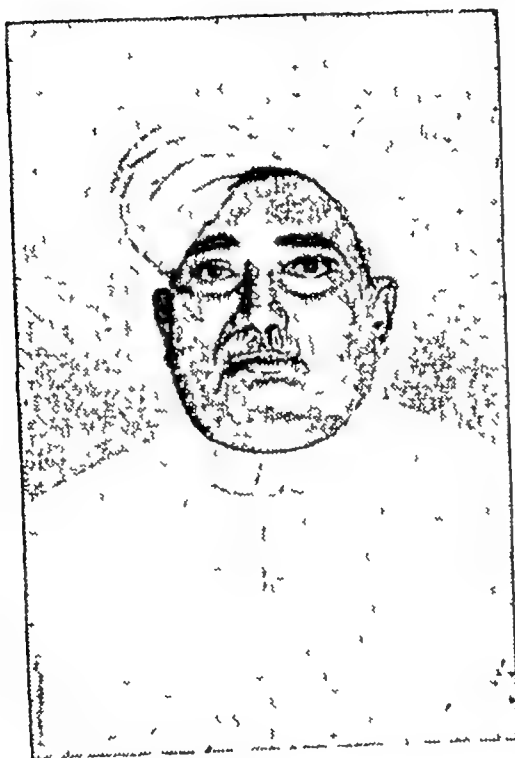
( पंचनईओ )

ऐसे ही :—

मध्यभारत सैलाना-निवासी श्रीमान् रतनलालजी डोसी  
श्रमणोपासक जैन लिखते हैं कि—

श्रीमान् की हुई दीकावाला उपासकदशांग सेवक के दृष्टिगत  
हुवा, सेवक अभी उसका मनन कर रहा है, यह ग्रन्थ सर्वाङ्गसुन्दर  
एवम् उच्च कोटि का उपकारक है ।

રૂા. ૬૦૦૦) આપનારે આઘ મુરબીશ્રી



શ્રેઠ હરખચંદ કાળીદાસ વારીયા  
ભાણુ વડ.





निरयावलिसूत्र का सम्मतिपत्र  
आगमवाराधि-सर्वतन्त्रस्वतन्त्र-जैनाचार्य पूज्यश्री  
आत्मारामजी महाराजकी तरफका आया हुवा  
सम्मतिपत्र

लुधियाना ता. ११ नवम्बर ४८

श्रीयुत गुलाबचन्दजी पानाचंदजी ! सादर जयजिनेन्द्र ॥

पत्र आपका मिला, निरयावलिका विषय पूज्यश्रीका स्वास्थ्य ठीक न होनेसे उनके शिष्य पं० श्री हेमचन्द्रजी महाराजने सम्मतिपत्र लिख दिया है, आपको भेज रहे हैं, कृपया एक कोपी निरयावलिका की और भेज दीजिये, और कोई योग्य सेवा कार्य लिखते रहे । !  
भवदीय.

गूजरमल-वलवंतराय जैन

॥ सम्मति ॥

( लेखक जैनमुनि पण्डित श्री हेमचन्द्रजी महाराज )

सुन्दरबोधिनीटीकया समलङ्कृतं हिन्दी-गुर्जर-भाषानुवादसहितं च श्रीनिरयावलिकासूत्रं मेधाविनामल्पमेधसां चोपकारकं भविष्यतीति सुदृढं मेऽभिमतम्, संस्कृतटीकेयं सरला सुबोधा सुललिता चात एव अन्वर्थनाम्नी चाप्यस्ति । सुविशदत्वात् सुगमत्वात् प्रत्येकदुर्बोधपद-व्याख्यायुतत्वाच्च टीकैषा संस्कृतसाधारणज्ञानवतामप्युपयोगिनी भाविनीत्यभिप्रेमि । हिन्दी-गुर्जरभाषानुवादावपि एतद्भाषाविज्ञानां महीयसे लाभाय भवेतामिति सम्यक् सम्भावयामि ।

जैनाचार्य-जैनधर्मदिवाकर - पूज्यश्री-घासीलालजी - महाराजनां परिश्रमोऽयं प्रशंसनीयो, धन्यवादाहर्हाश्च ते मुनिसत्तमाः एवमेव श्री-समीरमल्लजी-श्रीकन्हैयालालजी-मुनिवरेण्ययोर्नियोजनकार्यमपि श्लाघ्यं तावपि च मुनिवरौ धन्यवादाहौ स्तः ।

सुन्दरप्रस्तावनाविषयानुक्रमादिना समलङ्कृते सूत्ररत्नेऽस्मिन् यदि शब्दकोषोऽपि दत्तः स्यात्तर्हि वरतरं स्यात् । यतोऽस्यावश्यकतां सर्वेऽप्यन्वेषकविद्वांसोऽनुभवन्ति ।

पाठकाः सूत्रस्याध्ययनाध्यापनेन लेखकनियोजकमहोदयानां परिश्रमं सफलधिष्यन्तीत्याशास्महे । इति ।

श्री उपासकदशङ्ग सूत्र परत्वे जैनसमाजना अग्रगण्य जैनधर्मभूषण  
महान् विद्वान् संतोए तेमज विद्वान् श्रावकोए सम्मतिओ समर्पी  
छे, तेमना नामो नीचे प्रमाणे छे-

- (१) लुधियाना-संवत् १९८९, आश्विन पूर्णिमाका पत्र, श्रुतज्ञान के भंडार आगमरत्नाकर जैनधर्मदिवाकर श्री १००८ श्री उपाध्याय श्री आत्मारामजी महाराज, तथा न्यायव्याकरणवेत्ता श्री १००७ तच्छिष्य श्री मुनि हेमचन्द्रजी महाराज.
- (२) लाहौर-वि० सं० १९८९ आश्विन वदि १३ का पत्र, पण्डित श्री १००८ श्री भागचन्दजी महाराज तथा तच्छिष्य पण्डितरत्न श्री १००७ श्री त्रिलोकचन्दजी महाराज.
- (३) खीचन-से ता. ९-११-३६ का पत्र, क्रियापात्र स्थविर श्री १००८ श्री भारतरत्न श्री समरथमलजी महाराज.
- (४) वालाचोर-ता. १४-११-३६ का पत्र, परमप्रसिद्ध भारतरत्न श्री १००८ श्री शतावधानी श्री रत्नचन्दजी महाराज.
- (५) बम्बई-ता. १६-११-३६ का पत्र, प्रसिद्ध कविन्द्र श्री १००८ श्री कवि नानचन्द्रजी महाराज.
- (६) आगरा-ता. १८-१२-३६, जगत्-वल्लभ श्री १००८ जैनधर्मदिवाकर श्री चौधमलजी महाराज, गुणवन्त गणीजी श्री १००७ श्री साहित्यप्रेमी श्री प्यारचंदजी महाराज.
- (७) हैद्राबाद-( दक्षिण ) ता. २५-११-३६ का पत्र, स्थविरपदभूषित भाग्यवान् पुरुष श्री ताराचंदजी महाराज, तथा प्रसिद्ध वक्ता श्री १००७ श्री सोभागमलजी महाराज.
- (८) जयपुर-ता. २७-११-३६ का पत्र, संप्रदाय के गौरववर्धक शांत-स्वभावी श्री १००८ श्री खूबचन्दजी महाराज.
- (९) अम्बाला-ता. २९-११-३६ का पत्र, परमप्रतापी पंजावकेशरी श्री १००८ श्री पूज्य श्री काशीरामजी महाराज.

(१०) सेलाना-ता. २९-११-३६ का पत्र, शास्त्रों के ज्ञाता श्रीमान् रतनलालजी डोसी.

(११) खीचन-ता. ९-११-३६ का पत्र, पण्डितरत्न न्यायतीर्थ सुश्रावक श्रीयुक् माधवलालजी.

सादर जय जिनेन्द्र

आपका भेजा हुआ उपासकदशांग सूत्र तथा पत्र मिला यहां विराजित प्रवर्तक वधोवृद्ध श्री १००८ श्री ताराचंदजी महाराज पण्डित श्री किशमलालजी महाराज आदि ठाणा १४ सुख शांति में विराजमान हैं आपके वहां विराजित जैनशास्त्राचार्य पूज्यपाद श्री १००८ श्री घासीलालजी महाराज आदि ठाणा नव से हमारी वन्दना अर्ज कर सुख शांति पूछें, आपने उपासकदशांग सूत्र के विषय में यहां विराजित मुनिवरों की सम्मति मंगाई, उसके विषय में वक्ता श्री सोभागमलजी महाराजने फरमाया है कि वर्तमानमें स्थानकवासी समाजमें अनेकानेक विद्वान् मुनि महाराज मौजूद हैं मगर जैनशास्त्र की वृत्ति रचनेका साहसा जैसा घासीलालजी महाराजने किया है वैसा अन्यने किया हो ऐसा नजर नहीं आता। दूसरा यह शास्त्र अत्यन्त उपयोगी तो यों है ही, संस्कृत प्राकृत हिंदी और गुजराती भाषा होने से चारों भाषा वाले एक ही पुस्तक से लाभ उठा सकते हैं। जैनसमाज में ऐसे विद्वानों का गौरव बढे, यही शुभ कामना है। आशा है कि स्थानकवासी संघ विद्वानों की कदर करना सीखेगा।

योग्य लिखें शेष शुभ

भवदीय

जमनालाल रामलाल कीमती

आगरा से—

श्री जैनदिवाकर प्रसिद्ध वक्ता जगद्वल्लभ मुनि श्री चौथमलजी महाराज व पण्डितरत्न सुव्याख्यानी गणीजी श्री प्यारचन्द जी महाराज ने इस पुस्तक को अतीव पसन्द की है।

श्रीमान् न्यायतीर्थ पण्डित

माधवलालजी खीचनसे लिखते हैं कि—

उन पंडितरत्न महाभाग्यवंत पुरुषों के सामने उनकी अगाध-तत्त्वगवेषणा के विषय में मैं नगण्य क्या सम्मति दे सकता हूँ ।

परन्तु—

मेरे दो मित्रों ने जिन्होंने इसको कुछ पढ़ा है बहुत सराहना की है, वास्तव में ऐसे उत्तम व सबके समझने योग्य ग्रन्थों की बहुत आवश्यकता है, और इस समाज का तो ऐसे ग्रन्थ ही गौरव बढ़ा सकते हैं । ये दोनों ग्रन्थ वास्तव में अनुपम हैं । ऐसे ग्रन्थरत्नों के सुप्रकाशसे यह समाज अमावास्या के घोर अन्धकारमें दीपावली का अनुभव करती हुई, महावीर के अमूल्य वचनों का पान करती हुई अपनी उन्नति में अग्रसर होती रहेगी ।



ता. २९-११-३६

अम्बाला ( पंजाब )

पत्र आपका मिला । श्री श्री १००८ पंजाबकेसरी पूज्य श्री काशी-रामजी महाराज की सेवा में पढ़ कर सुना दिया । आपकी मेजी हुई उपासदशाङ्कसूत्र तथा गृहिधर्मकल्पतरुकी एक २ प्रति भी प्राप्त हुई । दोनों पुस्तकें अति उपयागी तथा अत्यधिक परिश्रम से लिखी हुई हैं । ऐसे ग्रन्थरत्नों के प्रकाशित करवानेकी बड़ी आवश्यकता है । इन पुस्तकों से जैन तथा अजैन सबका उपकार हो सकता है । आपका यह पुरुषार्थ सराहनीय है ।

आपका

शशिभूषण शास्त्री

अध्यापक जैन हार्डस्कूल

अम्बाला शहर

૩૧. ૫૨૫૧) આપનાર આઘ સુરખીશ્રી



કો ઠા રી હર ગો વિંદ ભા ઈ જે ચંદ  
રા જ કો ટ.



शान्तस्वभावी वैराग्यमूर्ति तत्त्ववारिधि, धैर्यवान् श्री जैनाचार्य पूज्यवर श्री श्री १००८ श्री खूबचन्दजी महाराज साहेबने सूत्र श्री उपासकदशाङ्गजी को देखा । आपने फरमाया कि पण्डित मुनि श्री घासीलालजी महाराज ने उपासक-दशाङ्ग सूत्रकी टीका लिखनेमें बड़ा ही परिश्रम किया है। इस समय इस प्रकार प्रत्येक सूत्रों की संशोधनपूर्वक सरल टीका और शुद्ध हिन्दी अनुवाद होनेसे भगवान् निर्ग्रन्थों के प्रवचनों के अपूर्व रसका लाभ मिलसकता है।



वालाचोर से भारतरत्न शतावधानी पण्डित मुनि श्री १००८ श्री रतनचन्दजी महाराज फरमाते हैं कि—

उत्तरोत्तर जोतां मूलसूत्रनी संस्कृत टीकाओ रचवामां टीकाकारे स्तुत्य प्रयास कर्यो छे, जे स्थानकवासी समाज माटे मगरूरी लेवा जेवुं छे, वळी करांचीना श्री संघे सारा कागळमां अने सारा टाईपमां पुस्तक छपावी प्रगट कर्युं छे जे एक प्रकारनी साहित्य सेवा वजावी छे.



वम्बई शहरमें विराजमान कवि मुनि नानचन्दजी महाराजने फरमाया है कि पुस्तक सुन्दर है प्रयास अच्छा है।



खीचन से स्थविर क्रियापात्र मुनि श्री रतनचन्दजी महाराज और पण्डित-रत्न मुनि श्री समर्थमलजी फरमाते हैं कि—विद्वान् महात्मा पुरुषों का प्रयत्न सराहनीय है, जैनागम श्रीमद् उपासकदशाङ्गसूत्र की टीका, एवं उस की सरल सुबोधिनी शुद्ध हिन्दी भाषा बड़ी सुंदरता से लिखी है।





श्री वीतरागाय नमः ।

श्री श्री श्री १००८ जैनधर्मदिवाकर जैनागमरत्नाकर श्रीमज्जैना-  
चार्य श्री पूज्य घासीलालजी महाराज चरणवन्दन स्वीकार हो ।

अपरश्व समाचार यह है कि आपके भेजे हुए ९ शास्त्र मास्टर  
शोभालालजी के द्वारा प्राप्त हुए, एतदर्थ धन्यवाद ! आपश्रीजी ने तो  
ऐसा कार्य किया है जो कि हजारों वर्षों से किसी भी स्थानकवासी  
जैनाचार्य ने नहीं किया ।

आपने स्थानकवासी जैनसमाज के ऊपर जो उपकार किया है वह  
कदापि भूलाया नहीं जा सकता और नहीं भूलाया जा सकेगा ।

हम तीनों मुनि भगवान महावीर से अथवा शासनदेव से प्रार्थना  
करते हैं कि आप की इस वज्रमयी लेखनी को उत्तरोत्तर शक्तिप्रदान  
करें ता कि आप जैनसमाज से ऊपर और भी उपकार करते रहें, और  
आप चिरञ्जीवी हो ।

हम हैं आपके मुनि तीन  
मुनि सत्येन्द्रदेव, मुनि लखपतराय, मुनि पद्मसेन

## इतवारी बाजार

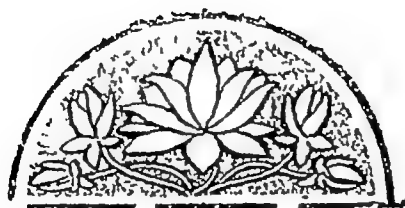
नागपुर ता. १९-१२-५६

प्रखर विद्वान् जैनाचार्य मुनिराज श्री घासीलालजी महाराजद्वारा जो आगमोद्धार हुआ और हो रहा है सचमुच महाराज श्री का यह स्तुत्य कार्य है। हमने प्रचारकजी के द्वारा नौ सूत्रोंका सेट देखा और कह मर्मिक स्थलोंकी पढा, पढ कर विद्वान मुनिराजश्री की शुद्ध श्रद्धा तथा लेखनीके प्रति हार्दिक प्रसन्नता फूट पडी।

वास्तवमें मुनिराज श्री जैन समाज पर ही नहीं इतर समाज पर भी गहरा उपकार कर रहे हैं। ज्ञान किसी एक समाज का नहीं होता वह सभी समाज की अनमोल निधि है जिसे कठिन परिश्रम से तैयार कर जनता के सम्मुख रक्खा जा रहा है, जिसका एक एक सेट हर शहर गांव और घर घरमें होना आवश्यक है।

साहित्यरत्न

मोहनमुनि सोहनमुनि जैन



# શ્રી દશવૈકલિક સૂત્રનું સમ્મતિપત્ર

શ્રમણ સંઘના મહાન આચાર્ય આગમ વારિધિ સર્વતન્ત્રસ્વતંત્ર જૈનાચાર્ય પૂજ્યશ્રી આત્મારામજી મહારાજે આપેલા સમ્મતિપત્રનો ગુજરાતી અનુવાદ.

✽

મેં તથા પંડિત મુનિ હેમચંદ્રજીએ પંડિત મુલચંદ વ્યાસ ( નામૌર મારવાડવાલા ) દ્વારા મળેલી પંડિત રત્ન શ્રી ઘાસીલાલજી મુનિ વિરચિત સંસ્કૃત અને હિન્દી ભાષા સહિત શ્રી દશવૈકલિક સૂત્રની આચારમણિમંજૂષા ટીકાનું અવલોકન કર્યું. આ ટીકા સુંદર બની છે. તેમાં પ્રત્યેક શબ્દોનો અર્થ સારી રીતે વિશેષભાવ લઈ ને સમજાવવામાં આવેલ છે.

તેથી તે વિદ્વાનો અને સાધારણ બુદ્ધિવાળાઓ માટે ઉપકાર કરવાવાળી છે. ટીકાકારે મુનિના આચાર વિષયનો ઉદ્દેશ સારો કરેલ છે. જે આધુનિક-મતાવલંબી અહિંસાના સ્વરૂપને નથી જાણતા, ક્યામાં પાપ સમજે છે તેમને માટે ‘અહિંસા શું વસ્તુ છે’ તેનું સારી રીતે પ્રતિપાદન કરેલ છે. વૃત્તિકારે સૂત્રના પ્રત્યેક વિષયને સારી રીતે સમજાવેલ છે. આ વૃત્તિના અવલોકનથી વૃત્તિકારની અતિશય યોગ્યતા સિદ્ધ થાય છે.

આ વૃત્તિમાં એક બીજી વિશેષતા એ છે કે મૂલસૂત્રની સંસ્કૃત છાયા હોવાથી સૂત્ર, સૂત્રનાં પદ અને પદચ્છેદ સુબોધદાયક બનેલ છે.

પ્રત્યેક જણાસુએ આ ટીકાનું અવલોકન અવશ્ય કરવું જોઈએ. વધારે શું કહેવું? અમારી સમાજમાં આવા પ્રકારના વિદ્વાન મુનિરત્નનું હોવું એ સમાજનું અહોભાગ્ય છે. આવા વિદ્વાન મુનિરત્નોના કારણે સુમપ્રાય-સુતેલો સમાજ અને હુમપ્રાય એટલે લોપ પામેલું સાહિત્ય એ બન્નેનો ફરીથી ઉદય થશે. અમે વૃત્તિકારને વારંવાર ધન્યવાદ આપીએ છીએ.

વિક્રમ સંવત ૧૯૬૦ શકાબ્દ શુકલ  
તેરસ મંગળવાર  
( અલ્હાબદ સ્ટેટ )

ઈતિ  
ઉપાધ્યાયજૈનમુનિ આત્મારામ  
( પંજાબી )

રૂ. ૫૦૦૧) આપનાર આદ્ય મુરુખીશ્રી



(સ્વ.) શેઠ ધારસીભાઈ જીવણભાઈ  
સોલા પુર.



શ્રમણ સંઘના પ્રચારમંત્રી પંજબકેશરી મહારાજ શ્રી પ્રેમચંદણ મહારાજ જેઓશ્રી રાજકોટમાં પધારેલ હતાં ત્યારે તેઓના તરફથી શાસ્ત્રોને માટે મળેલો અભિપ્રાય.

\*

શાસ્ત્રોદ્ધારસમિતિ તરફથી પૂજ્યપાદ શાસ્ત્રવારિધિ પંડિતરાજ સ્વામીશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ દ્વારા શાસ્ત્રોદ્ધારનું જે કાર્ય થઈ રહ્યું છે તે કાર્ય જૈનસમાજ તેમાં ખાસ કરીને સ્થાનકવાસીજૈનસમાજને માટે મૂળભૂત મૌલિક સંસ્કૃતની જડને મજબુત કરવાવાળું છે.

એટલા ખાતર આ કાર્ય અતિ પ્રશંસનીય છે માટે દરેક વ્યક્તિએ તેમાં યથાશક્તિ ભોગ દેવાની ખાસ આવશ્યકતા છે અને તેથી એ લગીરથ કાર્ય જલ્દીથી જલ્દી સંપૂર્ણપણે પાર પાડી શકાય અને જનતા શ્રુતજ્ઞાનનો લાભ મેળવી શકે.

\*

દરીયાપુર સંપ્રદાયના પૂજ્ય આચાર્ય શ્રી ઈશ્વરલલાજી મહારાજ સાહેબના

## સૂત્રો સંબંધે વિચારો

નમામિ વીરં ગિરિસારધીરં

પૂજ્યપાદ જ્ઞાનિપ્રવર શ્રી ઘાસીલાલ મહારાજ તથા પંડિતશ્રી કનૈયાલાલજી મહારાજ આદિ થાણા છત્રી સેવામાં—

અમદાવાદ શાહપુર ઉપાશ્રયથી સુનિ દયાનંદજીના ૧૦૮ પ્રણિપાત.

આપ સર્વે થાણાઓ સુખ સમાધિમાં હશે! નિરંતર ધર્મધ્યાન ધર્મારાધનામાં લીન હશે.

સૂત્ર પ્રકાશન કાર્ય ત્વરિત થાય એવી ભાવના છે દશવૈકાલિક તથા આચારાંગ એક એક ભાગ અહીં છે, ટીકા ખૂબ સુંદર, સરળ અને અર્થ સાથે પ્રકાશન થાય તો શ્રાવકગણ તેનો વિશેષ લાભ લઈ શકે, અને પૂજ્ય આચાર્ય ગુરુદેવને આંખે મોતીયો ઉતરાવ્યો છે અને સારું છે એજ.

આસો સુદ ૧૦, મંગળવાર, તા. ૨૫-૧૦-૫૫

પુનઃ પુનઃ શાતા ઈચ્છતો  
દયાસુનિના પ્રણિપાત.

\*

દરિયાપુર સંપ્રદાયના પંડિતરત્ન ભાઈચંદ્રજી મહારાજનો અભિપ્રાય  
શ્રી

રાણપુર તા. ૧૬-૧૨-૧૯૫૫

પૂજ્યપાદ જ્ઞાનિપ્રવર પંડિતરત્ન પૂજ્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ આદિ  
મુનિવરોની સેવામાં, આપ સર્વ સુખસમાધીમાં હશે.

સૂત્રપ્રકાશનનું કામ સુંદર થઈ રહ્યું છે તે જાણી અત્યંત આનંદ. આપના  
પ્રકાશિત થયેલાં કેટલાંક સૂત્રો મેં જોયાં. સુંદર અને સરલ સિદ્ધાંતના ન્યાયને પુષ્ટિ  
કરતી ટીકા પંડિતરત્નોને સુપ્રિય થઈ પડે તેવી છે. સૂત્ર પ્રકાશનનું કામ  
ત્વરિત પૂર્ણ થાય અને ભવિ આત્માઓને આત્મકલ્યાણ કરવામાં સાધનભૂત  
થાય એજ અભ્યર્થના.

લી. પંડિતરત્ન બાળબ્રહ્મચારી  
પૂ. શ્રી ભાઈચંદ્ર મહારાજની  
આજ્ઞાનુસાર શાન્તિમુનીના  
પાયવંદન સ્વીકારશે.

✽

તા. ૧૧-૫-૫૬  
વિરમગામ

ગરુડાધિપતિ પૂજ્ય મહારાજ શ્રી જ્ઞાનચંદ્રજી મહારાજના સંપ્રદાયના  
આત્માર્થી, ક્રિયાપાત્ર, પંડિતરત્ન, મુનિશ્રી સમરથમલજી મહારાજનો અભિપ્રાય.

ખીચનથી આવેલ તા. ૧૨-૨-૫૬ના પત્રથી ઉદ્દૃત.

પૂજ્ય આચાર્ય ઘાસીલાલજી મહારાજના હસ્તક જે સૂત્રોનું લખાણ સુંદર  
અને સરળ ભાષામાં થાય છે તે સાહિત્ય, પંડિત મુનિશ્રી સરથમલજી મહારાજ  
સમય ઓછો મળવાને કારણે સંપૂર્ણ જોઈ શકાયા નથી. છતાં જેટલું સાહિત્ય  
જોયું છે, તે બહુ જ સારું અને મનન સાથે લખાયેલું છે, તે લખાણ શાસ્ત્ર-આજ્ઞાને  
અનુરૂપ લાગે છે. આ સાહિત્ય દરેક શ્રદ્ધાળુ જીવોને વાંચવા યોગ્ય છે. આમાં  
સ્થાનકવાસી સમાજની શ્રદ્ધા, પ્રરૂપણા અને ફરસાણાની દૃઢતા શાસ્ત્રાનુકૂળ છે.  
આચાર્યશ્રી અપૂર્વ પરિશ્રમ લઈ સમાજ ઉપર મહાન ઉપકાર કરે છે.

લી. કિશનલાલ પૃથ્વીરાજ માલુ.  
મું. ખીચન.

✽

## લોખંડી સંપ્રદાયના મુનિશ્રી છોટાલાલજી મહારાજનો અભિપ્રાય

શ્રી વીતરાગદેવે જ્ઞાનપ્રચારને તીર્થંકર-નામ-ગોત્ર બાંધવાનું નિમિત્ત કહેલ છે. જ્ઞાનપ્રચાર કરનાર, કરવામાં સહાય કરનાર, અને તેને અનુમોદન આપનાર, જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો ક્ષય કરી કેવળ જ્ઞાનને પ્રાપ્ત કરી પરમપદના અધિકારી બને છે. શાસ્ત્રજ્ઞ, પરમ શાન્ત અને અપ્રમાદી પૂજ્યશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ પોતે અવિશ્રાન્તપણે જ્ઞાનની ઉપાસના અને તેની પ્રભાવના અનેક વિકટ પ્રસંગોમાં પણ કરી રહ્યા છે. તે માટે તેઓશ્રી અનેકશઃ ધન્યવાદના અધિકારી છે. વંદનીય છે. તેમની જ્ઞાનપ્રભાવનાની ધગશ ઘણા પ્રમાદિઓને અનુકરણીય છે. જેમ પૂજ્યશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ પોતે જ્ઞાન પ્રચાર માટે અવિશ્રાન્ત પ્રયત્ન કરે છે. તેમજ-શાસ્ત્રોદ્ધારસમિતિના કાર્યવાહકો પણ એમાં સહાય કરીને જે પવિત્ર સેવા કરી રહેલ છે. તે માટે તેઓ પણ ખરેખર ધન્યવાદના પૂર્ણ અધિકારી છે.

એ સમિતિના કાર્યકરોને મારી એક સુચના છે કે:—

શાસ્ત્રોદ્ધાર પ્રવર પંડિત અપ્રમાદી સંત ઘાસીલાલજી મહારાજ જે શાસ્ત્રોદ્ધારકનું કામ કરી રહેલ છે. તેમાં સહાય કરવા માટે-પંડિતો વિગેરેના માટે જે ખર્ચો થઈ રહેલ છે તેને પહોંચી વળવા માટે સારું સરખું ફંડ જોઈએ. એના માટે મારી એ સુચના છે કે-શાસ્ત્રોદ્ધારસમિતિના મુખ્ય કાર્યવાહકો-જો બની શકે તો પ્રમુખ પોતે અને બીજા બે ત્રણ જણાઓ ગુજરાત, સૌરાષ્ટ્ર, અને કચ્છમાં પ્રવાસ કરી મેમ્બરો બનાવે અને આર્થિક સહાય મેળવે.

જો કે અત્યારની પરિસ્થિતિ વિષમ છે. વ્યાપારીઓ, ધંધાદારીઓને પોતાના વ્યવહાર સાચવવા પણ મુશ્કેલ બન્યા છે. છતાં જો સંભવિત ગૃહસ્થો પ્રવાસે નીકળે તો જરૂર કાર્ય સફળ કરે એવી મને શ્રદ્ધા છે.

આર્થિક અનુકૂળતા થવાથી શાસ્ત્રોદ્ધારનું કામ પણ વધુ સરલતાથી થઈ શકે. પૂજ્યશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ જ્યાં સુધી આ તરફ વિચરે છે ત્યાં સુધીમાં એમની જ્ઞાનશક્તિનો જેટલો લાભ લેવાય તેટલો લઈ લેવો, કદાચ સૌરાષ્ટ્રમાં વધુ વખત રહેવાથી તેમને હવે બહાર વિહરવાની ઇચ્છા થતી હોય તો શાન્તિભાઈ શેઠ જેવાએ વિનંતિ કરી અમદાવાદ પધરાવવા, અને ત્યાં અનુકૂળતા મુજબ બે-ત્રણ વર્ષની સ્થિરતા કરાવીને તેમની પાસે શાસ્ત્રોદ્ધારનું કામ પૂર્ણ કરાવી લેવું જોઈએ.

થોડા વખતમાં જામનગરપુરમાં શાસ્ત્રોદ્ધારકમીટી મળવાની છે, તે વખતે ઉપરની સૂચના વિચારાય તો ઠીક.



ક્રૂરી શાસ્ત્રોદ્ધારક પૂજ્યશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજને એમની આ સેવા અને પરમ કલ્યાણકારક પ્રવૃત્તિને માટે વારંવાર અભિનંદન છે. શાસનનાયક દેવ તેમના શરીરાદિને સશક્ત અને દીર્ઘાયુ રાખે જેથી સમાજ ધર્મની વધુ ને વધુ સેવા કરી શકે ૐ અસ્તુ.

ચાતુર્માસ સ્થળ લીંબડી	}	લી.
સં. ૨૦૧૦ શ્રાવણ વદ ૧૩ ગુરૂ		સદાનંદી જૈનમુનિ છોટાલાલજી

\*

### શ્રી વર્ધમાન સંપ્રદાયના પૂજ્યશ્રી પુનમચંદ્રજી મહારાજનો અભિપ્રાય

શાસ્ત્રવિશારદ પૂજ્ય આચાર્ય મહારાજ શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજશ્રીએ જૈન આગમો ઉપર જે સંસ્કૃત ટીકા વગેરે રચેલ છે તે માટે તેઓશ્રી ધન્યવાદને પાત્ર છે. તેમણે આગમો ઉપરની સ્વતંત્ર ટીકા રચીને સ્થાનકવાસી જૈન સમાજનું ગૌરવ વધાર્યું છે, આગમો ઉપરની તેમની સંસ્કૃત ટીકા ભાષા અને ભાવની દૃષ્ટિએ ઘણી જ સુંદર છે. સંસ્કૃતરચના માધુર્ય. તેમજ અલંકાર વગેરે ગુણોથી સુકત છે. વિદ્વાનોએ તેમજ જૈન સમાજના આચાર્યો, ઉપાધ્યાયો વગેરે એ શાસ્ત્રો ઉપર રચેલી આ સંસ્કૃતરચનાની કદર કરવી જોઈએ. અને દરેક પ્રકારનો સહકાર આપવો જોઈએ.

આ મહાન કાર્યમાં પંડિતરત્ન પૂજ્યશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ જે પ્રયત્ન કરી રહ્યા છે તે અલૌકિક છે. તેમનું આગમ ઉપરની સંસ્કૃત ટીકા વગેરે રચવાનું ભગીરથકાર્ય શીઘ્ર સફળ થાય એ જ શુભેચ્છા સાથે.

અમદાવાદ	}	મુનિ પુનમચંદ્રજી
તા. ૨૨-૪-૫૬ રવીવાર		
મહાવીર જયંતિ		

ખંભાત સંપ્રદાયના મહાસતી શારદાબાઈ સ્વામીનો અભિપ્રાય  
લખતર તા. ૨૫-૪-૫૬

શ્રીમાન શેઠ શાંતીલાલભાઈ મંગળદાસભાઈ.

પ્રમુખ સાહેબ અખિલ ભારત ટ્રેડ સ્થાન જૈન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિ

મુ. અમદાવાદ

અમો અત્રે દેવગુરૂની કૃપાએ સુખરૂપ છીએ. વિ. મા. આપની સમિતિદ્વારા પૂજ્ય આચાર્ય મહારાજ શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ સાહેબ જે સૂત્રોનું કાર્ય કરે છે તે પૈકીનાં સૂત્રોમાંથી ઉપાસકદશાંગસૂત્ર, આચારાંગસૂત્ર, અનુત્તરોપપતિકસૂત્ર

દશવૈકાલિકસૂત્ર વિગેરે સૂત્રો જોયાં તે સૂત્રો સંસ્કૃત હિન્દી અને ગુજરાતી ભાષાઓમાં હોવાને કારણે વિદ્વાન અને સામાન્ય જનોને ઘણો જ લાભદાયક છે. તે વાંચન ઘણું જ સુંદર અને મનોરંજન છે. આ કાર્યમાં પૂજ્ય આચાર્યશ્રી જે અગાધ પુરૂષાર્થ કાર્ય કરે છે તે માટે વારંવાર ધન્યવાદને પાત્ર છે. આ સૂત્રોથી સમાજને ઘણો લાભ થવા સંભવ છે.

હંસ સમાન બુદ્ધિવાળા આત્માઓ સ્વપરના ભેદથી નિખાલસ ભાવનાઓ અવલોક કરશે તો આ સાહિત્ય સ્થાનકવાસી સમાજ માટે અપૂર્વ અને ગૌરવ લેવા જેવું છે. દરેક ભવ્ય આત્માઓને સૂચન કરું છું કે આ સૂત્રો પોતા-પોતાના ઘરમાં વસાવવાની સુંદર તકને ચૂકશો નહિ. કારણ આવા શુદ્ધ પવિત્ર અને સ્વપરંપરાને પુષ્ટિરૂપ સૂત્રો મળવાં બહુ બહુ મુશ્કેલ છે. આ કાર્યમાં આપશ્રી તથા સમિતિના અન્ય કાર્યકરો જે શ્રમ લઈ રહ્યા છો તેમાં મહાન નિર્જરાનુ કારણ જોવામાં આવે છે તે બદલ ધન્યવાદ. એ જ.

લી. શારદાબાઈ સ્વામી

ખંભાત સંપ્રદાય.

\*

## ખરવાળા સંપ્રદાયના વિદુષી મહાસતીજી સ્વામીનો અભિપ્રાય

ધંધુકા તા. ૨૭-૧-૫૬

શ્રીમાન શેઠ શાન્તીલાલ મંગળદાસભાઈ  
પ્રમુખ અં ભાં શ્વેં સ્થાં જૈનશાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિ  
રાજકોટ

અત્રે ખીરાજતા ગું ગુંના લ'કાર મહાસતીજી વિદુષી મોંઘીબાઈ સ્વામી તથા હીરાબાઈ સ્વામી આદિકોણાં બન્ને સુખશાંતમાં ખીરાજે છે. આપને સૂચન છે કે અપ્રમત્ત અવસ્થામાં રહી નિવૃત્તિ ભાવને મેળવી ધર્મધ્યાન કરશો એજ આશા છે.

વિશેષમાં અમને પૂજ્ય આચાર્ય મહારાજ શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજના રચેલાં સૂત્રો ભાઈ પોપટ ધનજીભાઈ તરફથી ભેટ તરીકે મળેલાં તે સૂત્રો તમામ અધોપાન્ત વાંચ્યાં મનન કર્યાં અને વિચાર્યાં છે તે સૂત્રો સ્થાનકવાસી સમાજને અને વીતરાગમાર્ગને ખૂબ જ ઉન્નત બનાવનાર છે. તેમાં આપણી શ્રદ્ધા એટલી ન્યાયરૂપથી ભરેલી છે તે આપણા સમાજ માટે ગૌરવ લેવા જેવું છે. હંસ સમાન

આત્માઓ જ્ઞાનઝરણાઓથી આત્મરૂપવાડીને વિકસિત કરશે, ધન્ય છે આપને અને સમિતિના કાર્યકરોને જે સમાજ ઉત્થાન માટે કોઈની પણ પરવા કર્યા વગર જ્ઞાનનું દાન લભ્ય આત્માઓને આપવા નિમિત્તરૂપ થઈ રહ્યા છે. આવા સમર્થ વિદ્વાન પાસેથી સંપૂર્ણ કાર્ય પુરું કરાવશે તેવી આશા છે.

એજ લિ. ઘરવાળા સંપ્રદાયના વિદુષી

મહાસતીજી મોંઘીખાઈ સ્વામી

ના ફરમાનથી લી. જોડીદાસ ગણેશભાઈ-ધંધુકા

સ્થાનકવાસી જૈન સંઘના પ્રમુખ

✽

અદ્યતન પદ્ધતિને અપનાવનાર વડોદરા કોલેજના એક વિદ્વાન

પ્રોફેસરનો અભિપ્રાય

સ્થાનકવાસી સંપ્રદાયના મુનિશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ જૈનશાસ્ત્રોના સંસ્કૃત ટીકાખંડ, ગુજરાતીમાં અને હિન્દીમાં ભાષાંતરો કરવાના ઘણા વિકટ કાર્યમાં વ્યાપ્ત થયેલા છે. શાસ્ત્રો પૈકી જે શાસ્ત્રો પ્રસિદ્ધ થયાં છે તે હું જોઈ શક્યો છું, મુનિશ્રી પોતે સંસ્કૃત, અર્ધમાગધી હિંદી ભાષાઓના નિષ્ણાત છે. એ એમનો ટુંક પરિચય કરતાં સહજ જણાઈ આવે છે. શાસ્ત્રોનું સંપાદન કરવામાં તેમને પોતાના શિષ્ય વર્ગનો અને વિશેષમાં ત્રણ પંડિતોનો સહકાર મળ્યો છે. તે જોઈ મને આનંદ થયો. સ્થાનકવાસી સંપ્રદાયના અગ્રેસરોએ પંડિતોનો સહકાર મેળવી આપી, મુનિશ્રીના કાર્યને સરળ અને શિષ્ટ બનાવ્યું છે. સ્થાનકવાસી સમાજમાં વિદ્વત્તા; ઘણી ઓછી છે, તે દિગંબર મૂર્તિપૂજક શ્વેતાંબર વગેરે જૈનદર્શનના પ્રતિનિધિઓના ઘણા સમયથી પરિચયમાં આવતાં હું વિરોધના ભય વગર કહી શકું. પૂર્વ મહારાજનો આ પ્રયાસ સ્થાનકવાસી સંપ્રદાયમાં પ્રથમ છે એવી મારી માન્યતા છે. સંસ્કૃત સ્પષ્ટીકરણો સારાં આપવામાં આવ્યાં છે, ભાષા શુદ્ધ છે એમ ચોક્કસ કહી શકું છું. ગુજરાતી ભાષાંતરો પણ શુદ્ધ અને સરળ થયેલાં છે. મને વિશ્વાસ છે કે મહારાજશ્રીના આ સ્તુત્ય પ્રયાસને જૈનસમાજ ઉત્તેજન આપશે અને શાસ્ત્રોના ભાષાંતરોને વાચનાલયમાં અને કુટુંબોમાં વસાવી શકાય તે પ્રમાણે વ્યવસ્થા કરશે.

પ્રતાપગંજ, વડોદરા

કામદાર કેશવલાલ હિંમતરામ

## મુંબઈની બે કોલેજોના પ્રોફેસરોનો અભિપ્રાય

મુંબઈ તા. ૩૧-૩-૫૬

શ્રીમાન શેઠ શાન્તિલાલ મંગળદાસ

પ્રમુખ : શ્રી અખિલ ભારત શ્વે. સ્થા. જૈનશાસ્ત્રોદ્ધારસમિતિ,  
રાજકોટ.

પૂજ્યાચાર્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજે તૈયાર કરેલાં આચારાંગ, દશવૈકાલિક, આવશ્યક, ઉપાસકદશાંગ વગેરે સૂત્રો અમે જોયાં. આ સૂત્રી ઉપર સંસ્કૃતમાં ટીકા આપવામાં આવી છે, અને સાથે હિંદી અને ગુજરાતી ભાષાંતરો પણ આપવામાં આવ્યાં છે. સંસ્કૃતટીકા અમે ગુજરાતી તથા હિંદી ભાષાંતરો જોતાં આચાર્યશ્રીના આ ત્રણે ભાષા પરના એક સરખા અસાધારણ પ્રભુત્વની સચોટ અને સુરેખ છાપ પડે છે. આ સૂત્ર ગ્રંથોમાં પાને પાને પ્રગટ થતી આચાર્યશ્રીની અપ્રતિમ વિદ્વત્તા મુગ્ધ કરી દે તેવી છે. ગુજરાતી તથા હિંદીમાં થયેલાં ભાષાંતરમાં ભાષાની શુદ્ધિ અને સરળતા નોંધપાત્ર છે. એથી વિદ્વજ્ઞન અને સાધારણ માણસ ભયને સંતોષ આપે એવી એમની લેખનીની પ્રતીતિ થાય છે. ૩૨ સૂત્રોમાંથી હજી ૧૩ સૂત્રો પ્રગટ થયાં છે. બીજાં ૭ સૂત્રો લખાઈને તૈયાર થઈ ગયાં છે. આ બધાં જ સૂત્રો જ્યારે એમને હાથે તૈયાર થઈને પ્રગટ થશે ત્યારે જૈન-સૂત્ર-સાહિત્યમાં અમૂલ્ય સંપત્તિરૂપ ગણાશે એમાં સંશય નથી. આચાર્યશ્રીના આ મહાન કાર્યને જૈનસમાજનો વિશેષતઃ સ્થાનકવાસી સમાજનો સંપૂર્ણ સહકાર સાંપડી રહેશે એવી અમે યોશા રાખીએ છીએ,

પ્રો. રમણલાલ ચીમનલાલ શાહ

સેન્ટ ઝેવિયર્સ કોલેજ, મુંબઈ.

પ્રો. તારા રમણલાલ શાહ

સોફીયા, કોલેજ, મુંબઈ

✽

રાજકોટ ધર્મેન્દ્રસિંહજી કોલેજના પ્રોફેસર સાહેબનો અભિપ્રાય

જયમહાલ

જાગનાથ પ્લોટ

રાજકોટ, તા. ૧૮-૪-૫૬

પૂજ્યાચાર્ય પં. મુનિશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ આજે જૈનસમાજ માટે એક એવા કાર્યમાં વ્યાપ્ત થયેલા છે કે જે સમાજ માટે બહુ ઉપયોગી થઈ પડશે. મુનિશ્રીએ તૈયાર કરેલાં આચારાંગ, દશવૈકાલિક; શ્રી વિપાકશ્રુત વિ. મેં જોયાં.

આ સૂત્રો જોતાં પહેલી જ નજરે મહારાજશ્રીનો સંસ્કૃત, અર્ધભાગધી, હિન્દી તથા ગુજરાતી ભાષાઓ ઉપરનો અસાધારણ કાબુ જણાઈ આવે છે. એક પણ ભાષા મહારાજશ્રીથી અજાણી નથી. આપણે જોઈએ છીએ કે એ સૂત્રો ઉચ્ચ અને પ્રથમ કોટીના છે. તેની વસ્તુ ગંભીર, વ્યાપક અને જીવનને તલસ્પર્શી છે, એટલા ગહન અને સર્વગ્રાહ્ય સૂત્રોનું ભાષાંતર પૂઠ ઘાસીલાલજી મહારાજ જેવા ઉચ્ચ કોટીના મુનિરાજને હાથે થાય છે તે આપણાં અહોભાગ્ય છે. યંત્રવાદ અને ભૌતિકવાદના આ જમાનામાં જ્યારે ધર્મભાવનાં ઓસરતી જાય છે એવે વખતે આવા તત્ત્વજ્ઞાન આધ્યાત્મિકતાથી ભરેલા સૂત્રોનું સરળ ભાષામાં ભાષાંતર દરેક જિજ્ઞાસુ, મુમુક્ષુ અને સાધકને માર્ગદર્શક થઈ પડે તેમ છે. જૈન અને જૈનેતર, વિદ્વાન અને સાધરણ માણસ સાધુ અને શ્રાવક દરેકને સમજણ પડે તેવી સ્પષ્ટ સરળ અને શુદ્ધ ભાષામાં સૂત્રો લખવામાં આવ્યાં છે. મહારાજશ્રીને જ્યારે જોઈએ ત્યારે તેમના આ કાર્યમાં સંકળાયેલા જોઈએ છીએ. એ ઉપરથી મુનિશ્રીના પરિશ્રમ અને ધગશની કલ્પના કરી શકાય તેમ છે. તેમનું જીવન સૂત્રોમાં વણાઈ ગયું છે.

મુનિશ્રીના આ અસાધારણ કાર્યમાં પોતાના શિષ્યોનો તથા પંડિતોનો સહકાર મળ્યો છે. અને આશા છે કે જો દરેક મુમુક્ષુ આ પુસ્તકોને પોતાના ઘરમાં વસાવશે અને પોતાના જીવનને સાચા સુખને માર્ગે વાળશે તો મહારાજશ્રીએ ઉઠાવેલો શ્રમ સંપૂર્ણપણે સફળ થશે.

પ્રો. રસીકલાલ કસ્તુરચંદ ગાંધી

એમ. એ. એલ. એલ. બી

ધર્મેન્દ્રસિંહજી કોલેજ

રાજકોટ (સૌરાષ્ટ્ર)

✽

મુખર્ષી અને ઘાટકોપરમાં મળેલી સભાએ લિનાસર કોન્ફેરેન્સ તથા સાધુસંમેલનમાં મોકલાવેલ ઠરાવ

હાલ જે વખત શ્રી શ્રવેતાંબર સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ માટે આગમ સંશોધન અને સ્વતંત્ર ટીકાવાળા શાસ્ત્રોદ્ધારની અતિ આવશ્યકતા છે અને જે મહાનુભાવોએ આ વાત દીર્ઘ દૃષ્ટિથી પહેલી પોતાના મગજમાં લઈ તે પાર પાડવા મહેનત લઈ રહ્યા છે તેવા મુનિ મહારાજ પંડિતરત્ન શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ કે જેઓને સાદડી અધિવેશનમાં સર્વાનુમતે સાહિત્યમંત્રી નીમ્યા છે, તેઓશ્રીની દેખરેખ નીચે અ. ભા. શ્રવે. સ્થા. જૈન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિ જે એક મોટી વગવાળી કમિટી છે તેની મારફતે કામ થઈ રહ્યું છે. જેને પ્રધાનાચાર્યશ્રી તથા પ્રચારમંત્રીશ્રી

તથા અનેક અનુભવી મહાનુભાવોએ પોતાની પસંદગીની મહોર છાપ આપી છે. અને છેલ્લામાં છેલ્લા વડોદરા યુનિવર્સિટીના પ્રોફેસર કેશવલાલ કામદાર એમ. એ. પોતાનું સવિસ્તર પ્રમાણપત્ર આપ્યું છે. તે શાસ્ત્રોદ્ધાર કમિટીના કામને આ સંમેલન તથા કોન્ફેરન્સ હાર્દિક અભિનંદન આપે છે. અને તેમના કામને જ્યાં જ્યાં અને જે જે જરૂર પડે-પડિતાની અને નાણાંની તે તે પોતાની પાસેના ફંડમાંથી અને બહાર જનતા પાસેથી મદદ મળે તેવી ઈચ્છા ધરાવે છે.

આ શાસ્ત્રો અને ટીકાઓને જ્યારે આટલી બધી પ્રશંસાપૂર્વક પસંદગી મળી છે, ત્યારે તે કામને મદદ કરવાની આ કોન્ફેરન્સ પોતાની ફરજ માને છે અને જે કોઈ ત્રુટી હોય તે પં. ર. શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજની સાંનિધ્યમાં જઈ, બતાવીને સુધારવા પ્રયત્ન કરવો. આ કામને ટલ્લે ચઢાવવા જેવું કોઈ પણ કામ સત્તા ઉપરના અધિકારીઓના વાણી કે વર્તનથી ન થાય તે જોવા પ્રમુખ સાહેબને લલામણુ કરે છે.

(સ્થા. જૈન પત્ર તા. ૪-૫-૫૬)

✽

### સ્વતંત્રવિચારક અને નિહર લેખક ‘જૈનસિદ્ધાંત’ના તંત્રી શેઠ નગીનદાસ ગીરધરલાલનો અભિપ્રાય

શ્રી સ્થાનકવાસી શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિ સ્થાપીને પૂ. ઘાસીલાલજી મહારાજને સૌરાષ્ટ્રમાં બોલાવી તેમની પાસે બત્રીસે સૂત્રો તૈયાર કરવાની હિલચાલ ચાલતી હતી ત્યારે તે હિલચાલ કરનાર શાસ્ત્રજ્ઞ શેઠ શ્રી દામોદરદાસભાઈ સાથે મારે પત્રવ્યવહાર ચાલેલો ત્યારે શેઠ શ્રી દામોદરદાસભાઈએ તેમના એક પત્રમાં મને લખેલું કે—

“આપણા સૂત્રોના મૂળ પાઠ તપાસી શુદ્ધ કરી સંસ્કૃત સાથે તૈયાર કરી શકે તેવા સ્થાનકવાસી સંપ્રદાયમાં મુનિશ્રી ઘાસીલાલજી મ. સિવાય મને કોઈ વિશેષ વિદ્વાન મુનિ જોવામાં આવતા નથી. હાંબી તપાસને અંતે મેં મુનિશ્રી ઘાસીલાલજીને પસંદ કરેલા છે.”

શેઠ શ્રી દામોદરદાસભાઈ પોતે વિદ્વાન હતા. શાસ્ત્રજ્ઞ હતા તેમ વિચારક પણ હતા શ્રાવકો તેમજ મુનિઓ પણ તેમની પાસેથી શિક્ષા વાંચના લેતા, તેમ જ્ઞાનચર્યા પણ કરતા. એવા વિદ્વાન શેઠશ્રીની પસંદગી યથાર્થ જ હોય એમાં

નવાઈ નથી. અને પૂ. શ્રી ધાસીલાલજીના બનાવેલાં સૂત્રો જોતાં સૌ કોઈને ખાત્રી થાય તેમ તે કે દામોદરદાસભાઈએ તેમજ સ્થાનકવાસી સમાજે જેવી આશા શ્રી ધાસીલાલજી મ. પાસેથી રાખેલી તે બરાબર ફળીભૂત થયેલ છે.

શ્રી વર્ધમાન શ્રમણસંઘના આચાર્ય શ્રી આત્મારામજી મહારાજે શ્રી ધાસીલાલજી મહારાજના સૂત્રો માટે ખાસ પ્રશંસા કરી અનુમતિ આપેલ છે તે ઉપરથી જ શ્રી ધાસીલાલજી મ. ના સૂત્રોની ઉપયોગિતાની ખાત્રી થશે.

આ સૂત્રો વિદ્યાર્થીને, અભ્યાસીને તેમજ સામાન્ય વાંચકોને સર્વને એક સરખી રીતે ઉપયોગી થઈ પડે છે. વિદ્યાર્થીને તેમજ અભ્યાસીને મૂળ તથા હિંદી અનુવાદ અને ગુજરાતી વાંચકને ગુજરાતી અનુવાદથી આખું સૂત્ર સરળતાથી સમજાય છે.

કેટલાકનો એવો ભ્રમ છે કે સૂત્રો વાંચવાનું કામ આપણું નહિ, સૂત્રો આપણને સમજાય નહિ. આ ભ્રમ તદ્દન ખોટો છે. ખીજા કોઈ પણ શાસ્ત્રીય પુસ્તક કરતાં આ સૂત્રો સામાન્ય વાંચકને પણ ઘણી સરળતાથી સમજાઈ જાય છે. સામાન્ય માણસ પણ સમજી સકે તેટલા માટે જ ભગવાન મહાવીરે તે વખતની લોકભાષામાં (અર્ધભાગધી ભાષામાં) સૂત્રો બનાવેલાં છે. એટલે સૂત્રો વાંચવા તેમજ સમજવામાં ઘણું સરળ છે.

માટે કોઈ પણ વાંચકને એનો ભ્રમ હોય તો તે કાઢી નાંખવો અને ધર્મનું તેમજ ધર્મના સિદ્ધાંતોનું સાચું જ્ઞાન મેળવવા માટે સૂત્રો વાંચવાને ચૂકવું નહિ. એટલું જ નહિ પણ જરૂરથી પહેલાં સૂત્રો જ વાંચવાં,

સ્થાનકવાસીઓમાં આ શ્રી સ્થાન જૈન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિએ જે કામ કર્યું છે. અને કરી રહી છે તેવું કોઈ પણ સંસ્થાએ આજ સુધી કર્યું નથી. સ્થાન જૈન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિના છેલ્લા રિપોર્ટ પ્રમાણે ખીજા છ સૂત્રો લખાયેલ પડ્યા છે, જે સૂત્રો-અનુયોગદ્વાર અને ઠાણાંગ સૂત્ર-લખાય છે. તે પણ થોડા વખતમાં તૈયાર થઈ જશે. તે પછી બાકીના સૂત્રો હાથ ધરવામાં આવશે.

તૈયાર સૂત્રો જલ્દી છપાઈ જાય એમ ઇચ્છીએ છીએ અને સ્થા. બંધુઓ સમિતિને ઉત્તેજન અને સહાયતા આપીને તેમનાં સૂત્રો ઘરમાં વસાવે એમ ઇચ્છીએ છીએ.

‘જૈન સિદ્ધાંત’ પત્ર-મે ૧૯૫૫

## શ્રુત-ભક્તિ

(પૂં આચાર્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મં સાંની આજ્ઞા અનુસાર લખનાર)

દ. સ. ના જૈન મુનિ શ્રી દયાનંદજી મહારાજ

આજે લગભગ ૨૦ વર્ષથી શ્રદ્ધેય પરમપૂજ્ય. જ્ઞાનદિવાકર પ,૦ મુનિશ્રી ઘાસીલાલજી મં ચરમ તીર્થંકર ભગવાન મહાવીરના અનુત્તર, અનુપમ ન્યાય યુક્ત, પૂર્વાપર અવિરોધસ્વરૂપ કલ્યાણકારક, ચરમ શીતળ વાણીના ઘોતક એવા શ્રી જિનાગમ પર પ્રકાશ પાડે છે, તેઓશ્રી પ્રાચીન, પૌર્વાત્ય સંસ્કૃતાદિ અનેક ભાષાના પ્રખર પંડિત છે, અને જિનવાણીનો પ્રકાશ સંસ્કૃત, ગુજરાતી અને હિંદીમાં મૂળ શબ્દાર્થ, ટીકા, વિસ્તૃત વિવરણ, સાથે પ્રકાશમાં લાવે છે.

ભં મહાવીર અત્યારે આપણી પાસે વિદ્યમાન નથી. પરંતુ તેમની વાણી રૂપે અક્ષરદેહ ગણધર મહારાજેએ શ્રુતપરંપરાએ સાચવી રાખ્યો શ્રુતપરંપરાથી સચવાતું જ્ઞાન જ્યારે વિસ્મૃત થવાનો સમય ઉપસ્થિત થવા લાગ્યો ત્યારે શ્રી દેવર્દિંગણિ ક્ષમાશ્રમણે વલ્લીપુર-વળામાં તે આગમોને પુસ્તકો રૂપે આરૂઢ કર્યો. આજે આ સિદ્ધાંતો આપણી પાસે છે. તે અર્ધભાગધી ભાષામાં છે. અત્યારે આ ભાષા ભગવાનની, દેવોની તથા જનગણની ધર્મભાષા છે. તેને આપણા શ્રમણો અને શ્રમણીઓ તથા સુમુક્ષુ શ્રાવક શ્રાવિકાઓ મુળપાઠ કરે છે, પરંતુ તેનો અર્થ અને ભાવ ઘણા થોડાઓ સમજે છે.

જિનાગમ એ આપણાં શ્રદ્ધેય પવિત્ર ધર્મસૂત્રો છે. એ આપણી આંખો છે. તેનો અભ્યાસ કરવો એ આપણી સૌની-જૈન માત્રની ફરજ છે. તેને સત્ય સ્વરૂપે સમજાવવા માટે આપણા સદ્ભાગ્યે જ્ઞાનદિવાકર શ્રી ઘાસીલાલ મહારાજે સત્ સંકલ્પ કર્યો છે અને તે લિખિત સૂત્રોને પ્રગટાવી શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિદ્વારા જ્ઞાન પરબ વહેતી કરી છે. આવા અનુપમ કાર્યમાં સકળ જૈનોનો સહકાર અવશ્ય હોવો ઘટે અને તેનો વધારેમાં વધારે પ્રચાર થાય તે માટે પ્રયત્નો કરવા ઘટે.

ભં મહાવીરને ગણધર ગૌતમ પૂછે છે કે હે ભગવાન, સૂત્રની આરાધના કરવાથી શું ફળ પ્રાપ્ત થાય? ભગવાન તેનો પ્રતિ ઉત્તર આપે છે કે શ્રુતની આરાધનાથી જીવોના અજ્ઞાનનો નાશ થાય છે, અને તેઓ સંસારના કલેશોથી નિવૃત્તિ મેળવે છે, અને સંસાર કલેશોથી નિવૃત્તિ અને અજ્ઞાનનો નાશ થતાં મોક્ષના ફળની પ્રાપ્તિ થાય છે.

આવા જ્ઞાનકાર્યમાં મૂર્તિપૂજક જૈનો, દિગંબરો અને અન્ય ધર્મિઓ હજારો અને લાખો રૂપીયા ખર્ચે છે. હિંદુ ધર્મમાં પવિત્ર મનાતા ગ્રંથ ગીતાના સેંકડો નહિ પણ હજારો ટીકા ગ્રંથો દુનિયાની લગભગ સર્વ ભાષાઓમાં પ્રગટ થયા છે. ઇસાઈ ધર્મના પ્રચારકો તેમના પવિત્ર ધર્મગ્રંથ બાઈબલના પ્રચારાર્થે તેનું જગતની સર્વ



ભાષાઓમાં ભાષાંતર કરી તેને પડતર કરતાં પણ ઘણી ઓછી કિંમતે વેચી ધર્મ-સૂત્રોનો પ્રચાર કરે છે. મુસ્લિમ લોકો પણ તેમના પવિત્ર મનાતા ગ્રંથ કુરાનનું અનેક ભાષાઓમાં ભાષાંતર કરી સમાજમાં પ્રચાર કરે છે. આપણે પૈસા પરનો મોઢ ઉતારી લગવાનના સિદ્ધાંતોનો પ્રચાર કરવા માટે તન, મન, ધન સમર્પણ કરવાં જોઈએ. અને સૂત્ર પ્રકાશનના કાર્યને વધુ ને વધુ વેગ મળે તે માટે સક્રિય પ્રયત્નો કરવા જોઈએ આવા પવિત્ર કાર્યમાં સાંપ્રદાયિક મતભેદો સૌએ ભૂલી જવા જોઈએ અને શુદ્ધ આશયથી થતા શુદ્ધ કાર્યને અપનાવી લેવું જોઈએ. અમિતિના નિયમાનુસાર રૂ. ૨૫૧૭ ભરી સમિતિના સભ્ય બનવું જોઈએ. ધાર્મિક અનેક ખાતાઓના મૂકાબલે સૂત્ર પ્રકાશનનું-જ્ઞાનપ્રચારનું આ ખાતું સર્વશ્રેષ્ઠ ગણવું જોઈએ.

આ કાર્યને વેગ આપવાની સાથે સાથે એ આગમો-લગવાનની એ મહાવાણીનું પાન કરવા પણ આપણે હરહંમેશ તત્પર રહેવું જોઈએ. જેથી પરમ શાંતિ અને જીવનસિદ્ધિ મેળવી શકાય. (સ્થા. જૈન તા. ૫-૭-૫૬)

\*

શ્રી. અ. ભા. શ્વે. સ્થા. જૈન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિનાં પ્રમુખ શ્રી વગેરે. રાણપુર

પરમ પવિત્ર સૌરાષ્ટ્રની પુણ્ય ભૂમિ પર જ્યારથી શાંત-શાસ્ત્રવિશારદ અપ્રમાદિ પૂજ્ય આચાર્ય મહારાજ શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજનાં પુનીત પગલાં થયાં છે ત્યારથી ઘણાં લાંબા કાળથી લાગુ પડેલ જ્ઞાનાવરણીય કર્મનાં પડળ ઉતારવાનો શુભ પ્રયાસ થઈ રહ્યો છે, અને જે પ્રવચનની પ્રભાવના તેઓશ્રી કરી રહ્યા છે તે અનંત ઉપકારક કાર્યમાં તમે જે અપૂર્વ સહાય આપી રહ્યા છો તે માટે તમે સર્વને ધન્ય છે અને એ શુભ પ્રવૃત્તિના શુભ પરિણામોનો જનતા લાલ લે છે, મને તો સમજાય છે કે સાધુજી છટે ગુણસ્થાનકે હોય છે પણ પૂજ્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ તો બહુધા સાતમે અપ્રમત્ત ગુણસ્થાનકે જ રહે છે એવા અપ્રમત્ત માત્ર પાંચ-સાત સાધુઓ જે સ્થાનકવાસી જૈનસમાજમાં હોય તો સમાજનું શ્રેય થતાં જરાએ વાર ન લાગે સમાજ-કાશમાં સ્થા. જૈન સંપ્રદાયનો દિવ્ય પ્રભાકાર જળહળી નીકળે પણ વો દિન.....

શ્રી શાસ્ત્રોદ્ધારસમિતિને મારી એક નમ્ર સુચના છે કે-પૂજ્યશ્રીની વૃદ્ધાવસ્થા છે, અને કાર્યપ્રણાલિકા યુવાનોને શરમાશે તેવી છે. તેમને ગામેગામ વિહાર કરવું અને શાસ્ત્રોદ્ધારનું કાર્ય કરવું તેમાં ઘણાં શારીરિક માનસિક અને વ્યવહારિક મુશ્કેલી વેઠવી પડે છે, તો કોઈ યોગ્ય સ્થળ કે જ્યાંના શ્રાવકો લક્ષિત વાળા હોય. વાડાનાં રાગના વિષથી અલિપ્ત હોય. એવા કોઈ સ્થળે શાસ્ત્રોદ્ધારનું કાર્ય પૂર્ણ થાય ત્યાં સુધી સ્થિરતા કરી શકે એના માટે પ્રયત્ન કરવો જોઈએ. ખીજા કોઈ એવા સ્થળની અનુકુળતા ન મળે તો છેવટ અમદાવામાં યોગ્ય સ્થળે રહેવાની સગવડ કરી અપાય તો વધુ સારું. મહારી આ સુચના પર ધ્યાન આપવા ફરી યાદ આપું છું. ફરીવાર પૂજ્ય આચાર્યશ્રીને અને તેમના સત્કાર્યના સહાયકોને મારા અભિનંદન પાઠવું તે સ્વીકારશો, લી. સદાનંદી જૈનસુનિ છોટાલાલજી

## “જૈનસિદ્ધાંતના” તંત્રીશ્રીનો અભિપ્રાય

સ્થાનકવાસીઓમાં પ્રમાણભૂત સૂત્રો બહાર પાડનારી આ એકની એક સંસ્થા છે, અને એના આ છેલ્લા રિપોર્ટ ઉપરથી જણાય છે કે-તેણે ઘણી સારી પ્રગતી કરી છે તે જોઈ આનંદ થાય છે.

મૂળ પાઠ, ટીકા, હિંદી તથા ગુજરાતી અનુવાદ સહિત સૂત્રો બહાર પડવાં એ કાંઈ સહેલું કામ નથી એ એક મહાભારત કામ છે અને તે કામ આ શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિ ઘણી સફળતાથી પાર પાડી રહી છે તે સ્થાનકવાસી સમાજ માટે ઘણા ગૌરવનો વિષય છે અને સમિતિ ધન્યવાદને પાત્ર છે.

સમિતિ તરફથી નવસૂત્રો બહાર પડી ચુક્યાં છે, હાલમાં ત્રણ સૂત્રો છપાય છે. નવ સૂત્રો લખાઈ ગયાં છે અને જંબૂદ્વીપપ્રજ્ઞપ્તિ તથા નંદીસૂત્ર તૈયાર થઈ રહ્યાં છે.

હાલમાં મંત્રી શ્રી સાંકરચંદ ભાઈચંદ સમિતિના કામમાં જ તેમનો આખો વખત ગાળે છે અને સમિતિના કામકાજને ઘણો વેગ આપી રહ્યા છે. તેમના ખત માટે ધન્યવાદ.

અને આ મહાભારત કામના મુખ્ય કાર્યકર્તા તો છે વયોવૃદ્ધ પંડિત મુનિશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ. મૂળ પાઠનું સંશોધન તથા સંસ્કૃત ટીકા તેઓશ્રી જ તૈયાર કરે છે. મુનિશ્રીનો આ ઉપકાર આખાય સ્થા. જૈન સમાજ ઉપર ઘણો મહાન છે. એ ઉપકારનો બદલો તો વાળી શકાય તેમજ નથી.

પરંતુ આ સમિતિના મેમ્બર બની તેના બહાર પડેલાં સૂત્રો ઘરમાં વસાવી તેનું અધ્યયન કરવામાં આવે તો જ મહારાજશ્રીનું થોડું ત્રણ અઢા કયું ગણાય.

ભગવાને કહ્યું છે કે પદ્મ જાણે તજો દયા પહેલું જ્ઞાન પછી દયા, દયા ધર્મ યથાર્થ સમજવો હોય તો ભગવાનની વાણીરૂપ આપણા સૂત્રો વાંચવાં જ જોઈએ તેનું અધ્યયન કરવું જોઈએ અને તેનો ભાવાર્થ સમજવો જોઈએ.

એટલા માટે શાસ્ત્રોદ્ધારસમિતિના સર્વ સૂત્રો દરેક સ્થા. જૈને પોતાના ઘરમાં વસાવવાં જ જોઈએ સર્વ ધર્મજ્ઞાન આપણા સૂત્રોમાંજ સમાયેલું છે અને સૂત્રો સહેલાઈથી વાંચીને સમજી શકાય છે, માટે દરેક સ્થા. જૈન આ સૂત્રો વાંચે એ ખાસ જરૂરનું છે.

“જૈનસિદ્ધાંત” ડીસેમ્બર-૫૬

## શ્રી ઉપાસકદશાંગસૂત્રને માટે અભિપ્રાય

મૂળ સૂત્ર તથા પૂજ્ય મુનિશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજે બનાવેલ સંસ્કૃત છાયા તથા ટીકા અને હિંદી તથા ગુજરાતી-અનુવાદ સહિત.

પ્રકાશક-અ. ભા. શ્રવે. સ્થાનકવાસી જૈનશાસ્ત્રોદ્ધારસમિતિ, ગરેડીઆ કુવા રોડ, શ્રીન લોજ પાસે, રાજકોટ. (સૌરાષ્ટ્ર) પૃષ્ઠ ૬૧૬ બીજી આવૃત્તિ બેવડું (મોડું) કદ. પાકું પુકું, જેકેટ સાથે સને ૧૯૫૬ ક્રિંમત રૂ. ૮-૮-૦

આપણા મૂળ ખાર અંગ સૂત્રોમાંનું ઉપાસકદશાંગ એ સાતસું અંગ સૂત્ર છે. એમાં લગવાન મહાવીરના દશ ઉપાસકો-શ્રાવકોનાં જીવનચરિત્રો આપેલાં છે, તેમાં પહેલું ચારિત્ર આનંદ શ્રાવકનું આવે છે.

આનંદ શ્રાવકે જૈનધર્મ અંગીકાર કર્યો અને ખાર વ્રત લગવાન મહાવીર પાસે અંગીકાર કરી પ્રતિજ્ઞા ( પ્રત્યાખ્યાન ) લીધાં તેનું સવિસ્તર વર્ણન આવે છે, તેની અંતર્ગત અનેક વિષયો જેવા કે, અભિગમ, લોકાલોકસ્વરૂપ, નવતત્ત્વ નરક, દેવલોક વગેરેનું વર્ણન પણ આવે છે.

આનંદ શ્રાવકે ખાર વ્રત લીધાં તે ખાર વ્રતની વિગત અતિચારની વિગત વગેરે બધું આપેલું છે. તેજ પ્રમાણે બીજા નવ શ્રાવકોની પણ વિગત આપેલ છે.

આનંદ શ્રાવકની પ્રતિજ્ઞામાં અરિહંતચેડ્યાઈ શબ્દ આવે છે. મૂર્તિપૂજકો મૂર્તિપૂજા સિદ્ધ કરવા માટે તેનો અર્થ અરિહંતનું ચૈત્ય (પ્રતિમા) એવો કરે છે. પણ તે અર્થ તદ્દન ખોટો છે. અને તે જગ્યાએ આગળ પાછળના સંબંધ પ્રમાણે તેનો એ ખોટો અર્થ બંધ બેસતો જ નથી તે મુનિશ્રી ઘાસીલાલજીએ તેમની ટીકામાં અનેક રીતે પ્રમાણ આપી સાબિત કરેલ છે અને અરિહંતચેડ્યાઈનો અર્થ સાધુ થાય છે. તે બતાવી આપેલ છે.

આ પ્રમાણે આ સૂત્રમાંથી શ્રાવકના શુદ્ધ ધર્મની માહિતી મળે છે તે ઉપરાંત તે શ્રાવકોની ઋદ્ધિ, રહેઠાણ. નગરી વગેરેના વર્ણનો ઉપરથી તે વખતની સામાજિક સ્થિતિ, રીતરિવાજ રાજવ્યવસ્થા વગેરે બાબતોની માહિતી મળે છે.

એટલે આ સૂત્ર દરેક શ્રાવકે અવશ્ય વાંચવું જોઈએ, એટલું જ નહિ પણ વારંવાર અધ્યયન કરવા માટે ઘરમાં વસાવવું જોઈએ.

પુસ્તકની શરૂઆતમાં વર્ધમાન શ્રમણસંઘના આચાર્ય શ્રી આત્મારામજી મહારાજનું સંમતિપત્ર તથા બીજા સાધુઓ તેમજ શ્રાવકોના સંમતિપત્રો આપેલ છે, તે સૂત્રની પ્રમાણભૂતતાની ખાત્રી આપે છે.

“ જૈનસિદ્ધાંત ” બાન્યુઆરી-૫૭

સેકડો સર્ટિફિકેટો ઉપરાંત હાલમાં મળેલ  
કેટલાક તાજા અભિપ્રાયો.

## શાસ્ત્રોદ્ધારના કાર્યને વેગ આપો

તંત્રીસ્થાનેથી (જૈનજ્યોતિ) તા. ૧૫-૬-૫૭

પૂજ્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ ઠાણા ૪ હાલમાં અમદાવાદ મુકામે સરસપુરના સ્થા. જૈન ઉપાશ્રયમાં બિરાજમાન છે. તેઓ શ્રી શાસ્ત્રોદ્ધારનું કાર્ય ખૂબ જ ખંત અને ઉત્સાહથી વૃદ્ધવયે પણ કરી રહ્યા છે. તેઓશ્રી વૃદ્ધ છે છતાં પણ આખો દિવસ શાસ્ત્રની ટીકાઓ લખી રહ્યા છે. આજ સુધીમાં તેમણે લગભગ ૨૦ જેટલાં શાસ્ત્રોની ટીકાઓ લખી નાખી છે અને બાકીનાં સૂત્રોની ટીકા જેમ અને તેમ જલદી પૂર્ણ કરવી તેવા મનોરથ સેવી રહેલ છે. સ્થા. જૈન સમાજમાં શાસ્ત્રો ઉપર સંસ્કૃત ટીકા લખવાનો આ પ્રથમ જ પ્રયાસ છે અને તે પ્રયાસ સંપૂર્ણ અને એવી અમે શાસનદેવ પ્રત્યે પ્રાર્થના કરીએ છીએ. આજ સુધી ઘણા મુનિવરોએ શાસ્ત્રોનું કામ શરૂ કરેલ છે પણ કોઈએ પૂર્ણ કરેલ નથી. પૂજ્યશ્રી અમુલબન્નધીજી મહારાજે બત્રીસ શાસ્ત્રો ઉપર હિંદી અનુવાદ કરેલ અને સંપૂર્ણ બનેલ, ત્યારબાદ આચાર્ય શ્રી આત્મારામજી મહારાજશ્રીએ હિંદી ટીકા કેટલાક શાસ્ત્રો ઉપર લખેલ પણ ઘણાં શાસ્ત્રો બાકી રહી ગયાં. પૂજ્ય હસ્તિમલજી મહારાજે એક બે શાસ્ત્રો ઉપરની ટીકાઓના અનુવાદો કરેલ. પૂજ્ય શ્રી જવાહિરલાલ મહારાજશ્રીએ સૂયગડાંગસૂત્ર ટીકા સહિત હિન્દી અનુવાદ સાથે કરેલ. શ્રી સૌભાગ્યમલજી મહારાજે આચારાંગની હિંદી ટીકા લખેલ. પણ સંપૂર્ણ શાસ્ત્રો ઉપર સંસ્કૃત ટીકા હજી સુધી સ્થા. જૈન સાધુઓ તરફથી થયેલ નથી. જ્યારે પૂજ્યશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજશ્રીએ ૨૦ શાસ્ત્રો ઉપર સંસ્કૃત ટીકા તેનો હિંદી ગુજરાતી અનુવાદ કરાવેલ છે આથી હવે આશા બંધાય છે કે તેઓશ્રી બત્રીસે બત્રીસ શાસ્ત્રો ઉપર સંસ્કૃત ટીકા લખવામાં સફળ થશે અને શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિએ આજ સુધી ૧૦ થી ૧૨ શાસ્ત્રો છપાવી પણ હીધાં છે અને હજી પણ તે શાસ્ત્રો વિશેષ જલદી છપાય તે માટે શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિ સંપૂર્ણ પ્રયત્ન કરી રહેલ છે તે ધન્યવાદને પાત્ર છે.

જૈન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિના ડૉ. ૨૫૧૭ ભરીને લાઈફ મેમ્બર થનારને તમામ શાસ્ત્રો શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિ તરફથી લેટ મળે છે. આ રીતે એક પંથ અને દો કાળ. બન્ને રીતે લાભ થાય તેમ છે. ડૉ. ૨૫૧ માં ૫૦૦ રૂપિયાની કિંમતમાં શાસ્ત્રો મળે એ પણ મોટો લાભ છે અને પ્રવચનની પ્રલાવના કરવાનો ધર્મ-લાભ પણ મળે છે.

આ સાથે પૂજ્યશ્રી ધાસીલાલજી મહારાજના સુશિષ્ય પં. મિનશ્રી કનૈયા-  
લાલજી મહારાજ મલાડ મુકામે ચાતુર્માસ બિરાજે છે અને તેઓશ્રી શાસ્ત્રોના  
મેમ્બરો કરવા માટે અથાગ પ્રયત્ન કરીને પ્રવચનની સેવા બજાવી રહ્યા છે. અને  
અત્યાર સુધીમાં મુંબઈ તેમજ પરાઓના લગભગ ૪૦ જેટલા ગૃહસ્થો લાઇફ  
મેમ્બર બની ગયા છે અને મુંબઈમાં લગભગ ૩૦૦ જેટલા મેમ્બરો થાય તે  
ધ્વજવા ચોગ્ય છે. શ્રીમંત ગૃહસ્થો હજારો રૂપિયા પોતાના ઘર ખર્ચમાં તેમજ  
મોજશોખના કામોમાં તેમજ વ્યવહારિક કામોમાં વાપરી રહ્યા છે તો આવા  
શાસ્ત્રોદ્ધાર જેવા પવિત્ર કાર્યમાં રૂપિયા વાપરશે તો ધર્મની સેવા કરી ગણાશે.  
અને બદલામાં ઉત્તમ આગમસાહિત્યની એક લાયબ્રેરી બની જશે. જેનું વાંચન  
કરવાથી આત્માને શાંતિ મળશે અને શાસ્ત્રાજ્ઞા પ્રમાણે વર્તવાથી જીવન સફળ થશે.



શતાવધાની મુનિશ્રી જ્યંતિલાલજી મહારાજશ્રીનો અમદાવાદનો પત્ર “ સ્થાનકવાસી જૈન ” તા. ૫-૯-૫૭ ના અંકમાં છપાયેલ છે જે નીચે મુજબ છે.

સૂત્રોના મૂળ પાઠોમાં ફેરફાર હોઈ શકે ખરો ?

તા. ૭-૮-૫૭ના રોજ અત્રે બિરાજતા શાસ્ત્રોદ્ધારક આચાર્ય મહારાજશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ પાસે, મારા ઉપર આવેલ એક પત્ર લઈને હું ગયો હતો, તે સમયે મારે પૂ. મ. સા. સાથે જે વાતચીત થઈ તે સમાજને જાણ કરાવા સારૂ લખું છું.

‘ શાસ્ત્રોત્તું કામ એક ગહન વસ્તુ છે. અપ્રમાદી થઈ તેમાં અવિરત પ્રયત્નો કરવા જોઈએ. સંપૂર્ણ શાસ્ત્રોત્તું જ્ઞાન તેમજ દરેક પ્રકારની ખાસ લાપાઓનું જ્ઞાન હોય તોજ આગમોદ્ધારકનું કાર્ય સફળતાથી થાય છે. આ પ્રકારનો પ્રયત્ન હાલ અમદાવાદ ખાતે સરસપુર જૈન સ્થાનકમાં બિરાજતા પૂજ્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ કરી રહ્યા છે. શાસ્ત્રલેખનનું આ કાર્ય થઈ રહ્યું છે, તેમાં અનેક વ્યક્તિઓને અનેક પ્રકારની શંકાઓ થાય છે તેમાં શાસ્ત્રોના મૂળ પાઠમાં ફેરફાર થાય છે ? કરવામાં આવે છે ? એવો પ્રશ્ન પણ કેટલાકને થાય છે અને તેવો પ્રશ્ન થાય ને સ્વાભાવિક છે; કેમકે અમુક મુનિરાજો તરફથી પ્રગટ થયેલા સૂત્રોના મૂળ પાઠમાં ફેરફાર થયેલા છે. જેથી આ કાર્યમાં પણ સમાજને શંકા થાય.

પણ ખરી રીતે જોતાં, અત્યારે જે શાસ્ત્રોદ્ધારનું કામ ચાલી રહ્યું છે તે વિષે સમાજને ખાત્રિ આપવામાં આવે છે કે, શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિ તરફથી અત્યાર સુધીમાં પ્રગટ થયેલાં આગમોના મૂળ પાઠમાં જરાપણ ફેરફાર કરવામાં આવેલ નથી અને લવિષ્યમાં જે સૂત્રો પ્રગટ થશે તેમાં ફેરફાર થશે નહિ તેની સમાજ નોંધ લે.

લી.

શતાવધાની શ્રી જ્યંતિ મુનિ-અમદાવાદ

# શ્રી અખિલ ભારત શ્વેતામ્બર સ્થાનકવાસી જૈનશાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિનો ટુંક પરિચય

સ્થાનકવાસી સમાજની આ એકની એક સંસ્થા છે કે જેણે અત્યાર સુધીમાં તેર સૂત્રો છપાવી બહાર પાડી દીધાં છે. સાત સૂત્રો છપાય છે અને બીજાં કેટલાક છાપવા માટે તૈયાર થઈ ચૂક્યા છે.

આ પ્રમાણે આ સંસ્થાએ મહાન્ પ્રગતિ સાધી છે તેનો ટુંક પરિચય આ પત્રિકામાં આપેલ છે તે વાંચી જઈ સર્વ સ્થા. જૈન લાઈબ્રેરીઓ આ સંસ્થાને યથાશક્તિ મદદ કરી તેના કાર્યને હજી વિશેષ વેગવાન બનાવવાની જરૂર છે.

ખાલી ઘડો વાગે ઘણો એમ સ્થા. કોન્ફરન્સ જેમ ખોટાં બણાં કુંકનારી સંસ્થાની કિંમત નથી, ત્યારે નક્કર કામ કરનારી આ શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિને દરેક પ્રકારે ઉત્તેજન આપવાની દરેક સ્થાનકવાસી જૈનની અનિવાર્ય ફરજ છે.

અને આ સર્વ સૂત્રો તૈયાર કરનાર પૂજ્ય મુનિશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજનો સ્થાનકવાસી સમાજ ઉપર ઘણો મહાન ઉપકાર છે. વયોવૃદ્ધ હોવા છતાં તેઓશ્રી જે મહેનત લઈ સૂત્રો તૈયાર કરાવે છે તેવું કામ હજી સુધી બીજા કોઈ એ કયું નથી અને બીજું કોઈ કરી શકશે કે નહિ તે પણ શંકાલયું છે. પૂજ્ય મુનિશ્રીના આ મહાન્ ઉપકારનો કિંચિત બદલો સમાજે આ શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિને બની શકતી સહાય કરીને વાળવાનો છે. સ્થાનકવાસી સમાજ જ્ઞાનની કદર કરવામાં પાછો હોઈ તેમ નથી એવી અમે આશા રાખીએ છીએ.

“ જૈનસિદ્ધાંત પત્ર ” ઓક્ટોબર ૧૯૫૭

## શ્રી દશવૈકલિક તથા ઉપાસકદશાંગ સૂત્રો

ગુજરાતી ભાષામાં અનુવાદ થયેલાં પૂજ્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ વિરચિત શ્રી ઉપરોક્ત એ સૂત્રો જૈન ધર્મ પાળતા દરેક ઘરમાં હોવા જ જોઈએ. તે વાંચવાથી શ્રાવક ધર્મ અને શ્રમણ ધર્મના આચારનું જ્ઞાન પ્રાપ્ત થઈ શકે છે અને શ્રાવકો પોતાની નિરવધ અને એષણિય સેવા શ્રમણ પ્રત્યે બજાવી શકે છે. વર્તમાનકાળે શ્રાવકોમાં તે જ્ઞાન નહિ હોવાને લીધે અંધશ્રદ્ધાએ શ્રમણ વર્ગની વૈયાવચ્ચ તો કરી રહેલ છે. પરંતુ ‘કલ્પ શું અને અકલ્પ શું’ એનું જ્ઞાન નહિ હોવાને લીધે પોતે સાવધ સેવા અર્પી પોતાના સ્વાર્થને ખાતર શ્રમણ વર્ગને પોતાને સહાયક થવામાં ઘસડી રહ્યા છે, અને શ્રમણ વર્ગની પ્રાયઃ કુસેવા કરી રહ્યા છે. તેમાંથી બચી લાભનું કારણ થાય અને શ્રમણને યથાતથ્ય સેવા અર્પી તેમને પણ જ્ઞાનદર્શન ચારિત્રની આરાધના કરવામાં સહાયક થઈ પોતાના જ્ઞાનદર્શન ચારિત્રની આરાધના કરી સુગતિ મેળવી શકે. શ્રમણની યથાતથ્ય સેવા કરવી તે અવશ્ય ગૃહસ્થની ફરજ છે.

પૂજ્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મ. શાસ્ત્રોદ્ધારનું અનુવાદન ત્રણ ભાષામાં રૂઢી રીતે કરી રહ્યા છે અને રૂપીયા ૨૫૧૭ લરી મેમ્બર થનારે રૂ. ૪૦૦-૫૦૦ ની લગભગ કીંમતના બત્રીસે આગમો ફ્રી મળી શકે છે તો તે રૂ. ૨૫૧૭ લરી મેમ્બર થઈ બત્રીસે આગમો દરેક શ્રાવક ઘરે મેળવવા જોઈએ. બત્રીસે શાસ્ત્રોના લગભગ ૪૮ પુસ્તકો મળશે. તો તે લાભ પોતાની નિર્જરા માટે પુન્યાનુબંધી પુન્ય માટે જરૂર મેળવે. ઉપરોક્ત બંને સૂત્રોની કીંમત સમિતિ કંઈક ઓછી રાખે તો હરકોઈ ગામમાં શ્રીમંત હોય તે સૂત્રો લાવી અરધી કીંમતે, મફત અથવા પૂરી કીંમતે લેનારની સ્થિતિ જોઈ દરેક ઘરમાં વસાવી શકે.

—એક ગૃહસ્થ

**નોંધ**—ઉપરની સુચનાને અમે આવકારીએ છીએ. આવાં સૂત્રો દરેક ઘરમાં વસાવવા યોગ્ય તેમજ દરેક શ્રાવકે વાંચવા યોગ્ય છે. તંત્રી—

“રત્નજ્યોત” પત્ર

તા. ૧-૧૦-૫૭



પૂજ્ય આચાર્યશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજનાં  
બનાવેલાં સૂત્રો

કારમીર.....થી .....કન્યાકુમારી

તેમજ કરાંચી.....થી.....કલકત્તા

સુધી

દરેક સ્થળે હોંશથી વંચાય છે.

કારણ કે

આવી રીતે શાસ્ત્રો તૈયાર કરવાનું અનોખું કાર્ય  
હજી સુધી કોઈ કરી શક્યું નથી

\* \* \*  
શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સમાજ

ઉપરાંત

શ્રી દેરાવાસી સંપ્રદાયના મહાન આચાર્યશ્રી રામવિજયસૂરીજી  
તથા અન્ય મુનિવરોએ

તેમજ

તેરાપંથી મહાસલા કલકત્તાવાળાએ આ સૂત્રો અપનાવ્યાં છે.

\* \* \*

દેશ-પરદેશના મેમ્બરો સૂત્રો વાંચી જૈન ધર્મના શ્રુતજ્ઞાનનો અણમોલો  
લાભ લઈ રહ્યા છે.

હમણાંજ લંડનની ઈન્ડિયા ઓફીસ લાયબ્રેરીએ આ સૂત્રો મંગાવ્યાં છે.

\* \* \*

આપ રૂપીઆ ૨૫૧-૦-૦ મોકલી મેમ્બર તરીકે નામ નોંધાવી હપ્તે હપ્તે  
લગલગ રૂપીઆ પાંચસો સુધીની કિંમતનાં શાસ્ત્રો વિના મૂલ્યે મેળવી શકો છો.

વધુ વિગત માટે લખો :

ઠે. શ્રીન લોજ પાસે,  
ગરેડીઆકુવા રોડ  
રાજકોટ.

મંત્રી  
શ્રી અખિલ ભારત પ્રવે. સ્થા. જૈન  
શાસ્ત્રોદ્ધારસમિતિ

શ્રી

દક્ષિણ, મધ્યપ્રદેશ, ઉત્તરપ્રદેશ, રાજસ્થાન, દિલ્હી,  
પંજાબ, ગુજરાત સૌરાષ્ટ્ર આદિ પ્રાંતોમાં  
ઉગ્ર વિહાર કરવાવાળાં-

સતીશિરોમણિ પૂ. રંભાકુંવરજી મહાસતીજીનો તથા  
પ્રસિદ્ધવ્યાખ્યાત્રી વિવિધભાષાવિશારદ શાસ્ત્રજ્ઞા, પૂજ્ય મહાસતી  
શ્રીસુમતિકુંવરજી મહાસતીજીનો પૂજ્યશ્રી ૧૦૦૮ શ્રી  
ધાર્મીલાલજી મહારાજ સા. નિર્મિત જૈનાગમોની સંસ્કૃત ટીકા  
તથા હિન્દી, ગુજરાતી, ભાષાંતર પર-

- અભિપ્રાય -

ૐ નમો સિદ્ધાં

શાસ્ત્રવિશારદ, શ્રદ્ધેય પંડિતરત્ન પૂજ્ય આચાર્ય સુનીશ્રી  
ધાર્મીલાલજી મહારાજ સાહેબ જૈનાગમોના એક વિદ્વાન વૃદ્ધ  
વિચારક એવં ઉત્તમ લેખક છે.

સાહિત્યસર્જન એ તેમના જીવનનો ઉત્તમ સંકલ્પ છે.  
સામાજિક પ્રયોજોથી દૂર રહી અથાગ પરિશ્રમ દ્વારા વિરચિત  
સંપાદિત અને અનુવાદિત અનેક ગ્રંથો આજ તમામ જૈનોને  
માટે ચિંતન, મનન, અને અધ્યયન, અધ્યાપન માટે એક અપૂર્વ  
સાધન તૈયાર કરીને મહાન સાહિત્યસેવીના પદને દીપાવ્યું છે.

આગમના રહસ્યોથી અનભિજ્ઞ (અજ્ઞાણ) આજની પ્રજા  
માટે શ્રદ્ધેય શ્રીમહારાજ સાહેબનું સાહિત્ય અત્યંત ઉપયોગી છે  
તેમ હું માનું છું.

સરસપુર, અમદાવાદ-તા. ૧-૫-૫૮

આર્થો-

સુમતિકુંવર

## શ્રી વીતરાગાય નમઃ

આ અનંતાનંત સંસારમાં જન્મ અને મરણ પ્રાણિમાત્રને વળગેલા છે. માનવીઓ આવે છે અને જાય છે. પણ અનંતો સંસાર, અનંતાકાળની સાથે પગરવ માંડતો એની અલૌકિક ગતિએ વહ્યો જાય છે. માનવી પણ એની સાથે સ્મૃતિ-શેષ થતો જાય છે. માનવી આવ્યો-કેટલું ધન વધાયું-કેટલું માન વધાયું અને કેટલી નામના વધારી? તેની સાથે જગતને કાંઈ જ નિસ્ખત નથી. અનંતાનંત આવ્યા અને અનંતાનંત કાળના ગર્ભમાં લુપ્ત થયા. પણ જેણે સ્વકાળે, પરકાળે, સમાજકાળે, ધર્મકાળે અને દેશકાળે પોતાના જીવનને ચંદનની માફક ઘસીને અન્યને શાતા ઉપજાવી છે તેવા ભદ્ર પુરુષોનું જીવન કાળની રેતી ઉપર પગલીઓ મુકતું જાય છે, જે ભવી જીવો માટે જીવનને ઉચ્ચ કક્ષાએ લઈ જવા માટે પ્રેરણાનું ચિરંતન સ્થાન બની ચૂકે છે.

પૂજ્ય આચાર્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ સાહેબ સ્થાનકવાસી તથા સમગ્ર જૈન સંપ્રદાયના ભવીજીવોના હિતાર્થે વયોવૃદ્ધ ઉમ્મર છતાં અ. ભા. ૨૦૦૨ થી ૨૦૦૪ જૈન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિના સહકારથી જૈન આગ-મોના-શાસ્ત્રોદ્ધારનું કાર્ય કેટલાક વર્ષોથી કર્યું જાય છે. શાસ્ત્રોદ્ધારનું મોટા ભાગનું કાર્ય પૂર્ણતાની ટોચે પહોંચવા આવ્યું છે. છતાં હજી ઘણું કાર્ય બાકી છે. જે પૂજ્ય શ્રી હાલ સરસપુર (અમદાવાદ)ના ઉપાશ્રયે ખીરાજી અથાગ કષ્ટ વેઠીને પણ શાસ્ત્રોદ્ધારનું કાર્ય પૂર્ણ કરવા અથાગ પરિશ્રમ કરી રહ્યા છે જે શાસનદેવની કૃપાથી પરીપૂર્ણ થશે, એવી આશા રાખીએ છીએ. પૂજ્યશ્રીએ જે શાસ્ત્રોની ટીકા રચી છે તે પૈકીનું શ્રી-નંદીસૂત્ર આપના હસ્તક્રમમાં આવે આવી રહ્યું છે.

શ્રી-નંદીસૂત્ર સરસપુર સંઘના સદ્ગત સંઘપતિ શ્રી છગનલાલ શામળદાસ ભાવસાર (માસ્તર)ના સ્મરણાર્થે છપાવી તેમના કુટુંબીજનોએ શાસ્ત્રોદ્ધારના કાર્યને સફળ બનાવવાની દિશામાં સારો એવો ટેકો આપ્યો છે. અને એ માટે શ્રી શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિ તેઓને આભાર સાથે ધન્યવાદ આપે છે.

શ્રી છગનભાઈનો જન્મ સને ૧૮૮૨ ની ૧૫ મી ડીસેમ્બરના રોજ કડી-ઉત્તરગુજરાત મુકામે થયો હતો. તેમના પિતાનું નામ શામળદાસ તથા માતાનું નામ અચલા બહેન હતું. આર્થિક પરીસ્થિતિ સાતુકુળ ન હોવાને કારણે શામળદાસે પોતાનું ભાગ્યનિર્માણ કરવા મૂળ વતન કડી છોડીને પોતાના ત્રણ પુત્રો-હરગોવિન્દભાઈ, છગનભાઈ તથા મનસુખભાઈને સાથે લઈને અમદાવાદ તરફ પ્રયાણ કર્યું. તે વખતના સરસપુર શ્રી સંઘના આદ્ય સંઘપતિ શ્રી જીવાભાઈ ઘેલાભાઈ ભાવસારે સંપૂર્ણ સહકાર આપી તેમને સરસપુરમાં સ્થાયી બનાવ્યા,



સાતસોના વિવીંગમાસ્તર બનવા છતાં તેમણે કદી પણ પાટલુન પહેર્યું જ ન હતું. એકવાર કોઈ કારણસર મજુર મહાજન તરફથી મીલને ઝાંપે સભા ભરાઈ હતી. પૂજ્ય ગાંધીજી અને અનસૂયા બહેન હાજર હતા. મીટીંગનું કાર્ય શરૂ થતાં ગાંધીજીએ માસ્તરને બોલાવવા જણાવ્યું. કારીગર વર્ગ બોલી ઉઠ્યો, “બાપુ! માસ્તર તો અમારી વચમાં જ બેઠેલા છે.” સાબરમતિના એ સંત માસ્તરની આ સાદાઈ અને નીરભિમાનપણાને અને પોતાના કામદારો પ્રત્યેની મમતાને જોઈ નવાઈ પામ્યા.

રીટાયર્ડ થયા બાદ તેમણે પોતાના સમગ્ર જીવનનું વહેણ પાર્થિવ પ્રવૃત્તિમાંથી ખસેડી આધ્યાત્મિક પ્રવૃત્તિમાં વાળ્યું. સરસપુરનો તે વખતનો જુનો ઉપાશ્રય ઘણો અગવડ ભર્યો હતો. બારણાં એટલાં નીચાં હતાં કે સાધુ-સાધ્વી-જીઓનાં માંથા અથડાય. છગનભાઈએ નિર્ણય કર્યો કે સાધુ-સાધ્વીજીઓને આરી રીતે રાખવાં હોય તો ઉપાશ્રયનો જીર્ણોદ્ધાર જરૂરી છે. પણ સંઘ પાસે જરૂરી નાણા નહતા. ખીજેથી મદદ મળે તેમ ન હતી. તેથી ગચ્છાધિપતિ પૂજ્યશ્રી હાથીજી મહારાજ પાસે આશિર્વાદ માગી જીર્ણોદ્ધારનું શુભ કાર્ય પોતાના ભાઈઓ હરગોવિન્દલાલ તથા મનસુખભાઈના સહકારથી સ્વખર્ચે શરૂ કર્યું. તે વખતે એમના એક જ્યોતિષી મિત્રે આગાહી કરી કે “માસ્તર, દૂર રહીને કામ લેજો માથે બારમો રાહુ ગાળે છે” તેથી દૂર રહીને ઉપાશ્રયના કાર્યની દેખરેખ રાખતા હતા. લલાટના લેખ મિથ્યા થતા નથી. તેમ કારણ ઉપસ્થિત થતાં તેમને ઉપાશ્રયમાં દાખલ થવું પડ્યું. સીડી ચઢતાં જ લોખંડની મોટી કોશ ઉપરથી સીધી તેમના માંથા ઉપર ઘા કરવા ધસી આવી. પણ જેને ધર્મનું શરણુ છે તેને મારનાર કોઈ નથી એ ઉક્તિ પ્રમાણે સાધારણ ઈજા થઈ. તેમના રક્તથી ઉપાશ્રયની ધરતીને તૃપ્તિ મળી અને તેઓ આ ભયંકર વિઘ્નમાંથી બચી ગયા એ દૈવી ચમત્કાર જ કહેવાય.

શાસનદેવની કૃપાથી ઉપાશ્રયનું કાર્ય પૂર્ણ થયું. છગનભાઈ એક દિવસ પૂજ્યશ્રી હાથીજી મહારાજને સુખશાતા પુછવા છીંપાપોળના ઉપાશ્રયે ગયા. પૂજ્યશ્રીએ ઉપાશ્રય અંગે પુછપરછ કરી. છગનભાઈએ શ્રી સંઘની આર્થિક સ્થિતિ અને કેવા સ્ત્ર જોગોમા ઉપાશ્રય ખંધાયો તેની વીતકકથા કહી. પૂજ્યશ્રીએ જણાવ્યું કે ફીકર ન કરશો. શાસનદેવની કૃપાથી સૌ સારાં વાનાં થશે. આતુર્માંસ પૂરું થયે પૂજ્યશ્રી સરસપુરના ઉપાશ્રયે પધાર્યા અને થોડા દિવસ બાદ સમાધિ-પૂર્વક કાળધર્મ પામ્યા. ઉછામણી સારી થઈ અને તેઓશ્રીના ધર્મોપદેશના મતાપે સરસપુર શ્રી સંઘની ઉન્નતિ ઉત્તરોત્તર થતી ગઈ છે.

છગનલાઈ સવારે કુતરાંના રોટલા નાખ્યા પછી ઉપાશ્રયે વ્યાખ્યાનમાં જતા. સાંજના શહેરના ઉપાશ્રયોમાં સાધુસાધ્વીજીની સુખશાતા પુછવા જતા. તે પછી સાંજનો સમય ગુજરાત કલ્પમાં ગાળતા. એ તેમનો નિત્યક્રમ થઈ પડ્યો હતો.

સને ૧૯૪૪ ના મકરસંક્રાન્તિના દિવસે કુતરાંને રોટલા નાખવા જઈ આવ્યા પછી તેમને એકાએક હાટ એટલે થયો. તેમાંથી બચવાની સંભાવના ઓછી લાગી એટલે ધર્મપ્રણાલિકા મુજબ વ્રત પચ્ચખાણ કરી લીધાં. પોતાના હાથે જે કાંઈ દાનપુણ્ય કરવા જેવું હતું તે કરી લીધું. તેઓશ્રી દેવલોક પામ્યા તે દિવસે સવારે યુવાચાર્ય શાંતભૂતિ પૂજ્યશ્રી ભાઈચંદજી મહારાજ સાહેબ તેમની ખબર કાઢવા પધાર્યા. તેમણે ફરીથી પ્રેમભાવે વ્રત પચ્ચખાણ કરાવ્યાં. છગનલાઈએ કીધું કે “ મરણની મને ચિંતા નથી. ખીસા પોટલાં સાથે તૈયાર છું. આંડી પણ સાધુ-સાધ્વીજીની સેવા મળી અને ખીજી ગતિમાં પણ કરીશ. મારે તો બન્ને સ્થળે આનંદ જ આનંદ છે ” અને તેજ રાત્રે-તા. ૧૯-૧-૧૯૪૪ ના રોજ વાત કરતાં કરતાં તેમણે નશ્વર દેહનો ત્યાગ કર્યો. તેમના પરિચયમાં આવનાર સૌ કોઈએ આઘાત અનુભવ્યો. સંઘાડાનાં સર્વ સાધુ સાધ્વીજીઓ અને સંઘોમાં શોકની લાગણી છવાઈ ગઈ.

છગનલાઈ તો ગયા પણ તે પછીની તેમની અધુરી રહેલી શાસન સેવા તેમનાં પત્ની જમનાબેન તથા તેમના સુપુત્રો ભોગીલાઈ, છોટાલાઈ, શકરાલાઈ તથા તેમના બહોળા કુટુંબે ઉપાડી લીધી. પૂજ્ય શ્રી ઇશ્વરલાલજી મહારાજ સાહેબની શુભાશિષથી શ્રી ભોગીલાઈએ સરસપુર સંઘનું સુકાન સંભાળ્યું. શહેરની રોનક બદલાવા માંડી તેની સાથે મ્યુનીસીપાલિટી તરફથી આકરા કાયદાઓ થવા માંડ્યા. રસ્તા ઉપર પાણી પણ ઢોળી ન શકાય તો ધર્મ કરણી કરનારાઓએ ધર્મકરણી કરવી શી રીતે? સમસ્ત શહેરના સંઘપતિઓને આ મુંઝવણ ઉભી થવા માંડી. સરસપુર સંઘના સદ્ભાગ્યે સદ્ગત સંઘપતિ શ્રી છગનલાઈએ ધર્મકરણી કરનારાઓના ઉપયોગ માટે વાડા સહિતની ખુલ્લી જમીન દીર્ઘદૃષ્ટિ વાંપરી અગાઉથી રાખેલી હતી. આ જમીન ઉપર નજર મંડાઈ. આ જગામાં ઉપાશ્રય બાંધવામાં આવે તો ધર્મકરણી કરતાં જીવોને કોઈ રીતે અગવડ ન પડે. એ હેતુથી ઉપાશ્રય બાંધવા માટે વિચાર કર્યો પણ શ્રી સંઘ પાસે પુરતું ભંડોળ ન હતું અને ઉપાશ્રય બાંધ્યા વગર ચાલે તેમ ન હતું.

આપારમાં સાહસ વગર દ્રવ્યોપાજ્ઞન થતું નથી. તેમાં સૌ કોઈ સાહસ એકે પણ ધર્મના કાર્યમાં પૈસા ખર્ચવાનું સાહસ કોણ એકે? ફક્ત વિરલા.

એજ ખેડી શકે. એક બાળુ સાધુ-સાધ્વીજીઓની સરસપુર સંઘ પ્રત્યેની આહના. બીજી બાળુ તેમને રાખવા માટેના મ્યુ. તરફથી થતા અંતરાયો. કાંતો ધર્મ પ્રત્યેની મમતા કાંતો ધન પ્રત્યેની મમતા. બન્નેમાંથી એક સ્વીકારવાનું હતું. તે પણ કોઈની સહાય વિના મધ્યમ વર્ગના એક માનવીને પોતાના ગળ ઉપરાંતનું સાહસ ખેડવાનું હતું. સાહસ ખેડે તો જ આ કાર્ય થાય એમ હતું. શ્રી લોગીલાઈએ વિચાર્યું કે જો કુદરતની ઇચ્છા આ ઉપાશ્રય બાંધવામાં મને જ નિમિત્ત બનાવવા માંગતી હોય તો આ લાલ મારે શા માટે જતો કરવો? ધન તો પુણ્યને આધીન છે. પુણ્ય હોય ત્યાં સુધીજ લક્ષ્મી ટકે છે. “ધર્મ કરતાં કોઈની લાજ ગઈ નથી જાણી રે” એ ઉક્તિ મુજબ વિચાર કરી પોતે ઉપાશ્રય બાંધાવવા નિર્ણય કર્યો. પરોપકાર ખાતર તન, મન અને ધનનું સમર્પણ કરનાર આવા વિરલા તો કોઈકજ હોય છે. તેઓશ્રીના ત્રણ સુપુત્રો છે. જ્યંતીલાઈ, દીનેશલાઈ, અને રમણલાઈ તે ઉપરાંત છોટાલાઈને લક્ષ્મણલાઈ તથા શકરાલાઈને અરવિન્દલાઈ નામે સુપુત્રો છે. આ બધાં ભાઈઓમાં પણ તેમના પૂર્વજોનો વારસો અત્યારથી જ પ્રજ્વલિત દેખાય છે આજે પૂજ્ય આચાર્યશ્રી દ્વારા જે અપૂર્વ સાહિત્ય-લેખનનું કાર્ય સરસપુર મુકામે સમિતિ કરાવે છે. તેમાં પણ શ્રી લોગીલાઈનો સારો એવો હિસ્સો છે અતિથિ, તથા સ્વધર્મ બંધુઓ પ્રત્યે જે વાત્સલ્ય છે, તે અપૂર્વ છે, તેવો જ કાયમ માટે રહે તેમ પરમકૃપાલુ પરમાત્મા પ્રત્યે પ્રાર્થના છે. આ ઉપરના કાર્યને સુંદર બનાવવામાં તેમના ભાઈ છોટાલાલભાઈ તથા શકરાભાઈ તેમજ રતિલાલભાઈ આદિ સરસપુર શ્રી સંઘે પણ ખૂબ સહકાર આપ્યો છે ને આપી રહ્યા છે. તે બદલ તે સૌને ધન્યવાદ ઘટે છે.

શ્રી લોગીલાઈએ આ ઉપાશ્રયના બાંધકામનું સાહસ ખેડ્યું, અને શાસનદેવની કૃપાથી હેમખેમ કોઈ પણ જાતની અડચણ શીવાય કાર્ય પૂર્ણ થયું. જાણેકે છગનભાઈનું અધુરું કાર્ય પૂર્ણ થયેલું જોવાજી જીવ્યાં હોય તેમ ઉપાશ્રયનું કામ આ બાળુ પૂર્ણ થયું અને શ્રી લોગીલાઈનાં માતૃશ્રી જમનાબેન ૨૦૧૩ના રામનવમીના રોજ દેવલોક પામ્યાં. તેઓની સેવા સૌ ભાઈઓએ બનતા પ્રયાસે ઘણી સારી રીતે કરી.

કુદરતની વાત ન્યારી છે. એક બાળુ અનુકુળતાવાળો ઉપાશ્રય-તૈયાર થયો. બીજી બાળુ શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિએ પૂજ્યશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ સાહેબને શાસ્ત્રોદ્ધારનું ભગીરથ કાર્ય અમદાવાદ મુકામે રહીને કરવા વિનંતિ કરી. પૂજ્યશ્રીએ માન્ય રાખી. સમિતિના સદસ્યહરથો આમંત્રણ તો આપી આવ્યા પણ ક્યંતની શોધમાં પડ્યા. જોગાનુજોગ તેમની દષ્ટિ સરસપુરના ઉપાશ્રય ઉપર પડી.

સમિતિના સભ્યો અને શ્રી લોગીભાઈ ભટ્ટિક અને સરળ સ્વભાવી પૂજ્ય શ્રી ઇશ્વરદાસજી મહારાજસાહેબ પાસે વિનંતિ કરવા ગયા. અને પૂજ્યશ્રીએ પૂજ્યશ્રી ઘાસીદાસજી મહારાજ સાહેબનું સંવત ૨૦૧૩નું ચાતુર્માસ સરસપુર મુકામે થાય તેમાં એમની સહુર્ષ સંમતિ આપી, સરસપુરના શ્રી સંઘ અને સમિતિ ઉપર મહાન ઉપકાર કર્યો. ચાતુર્માસ નક્ષિ થતાં સરસપુરના અને શહેરના અન્ય શ્રી સંઘોમાં અકથ્ય આનંદ વ્યાપી રહ્યો.

પૂજ્ય શ્રી અત્યારે સરસપુરના ઉપાશ્રયે ખીરાજી વયોવૃદ્ધ ઉમ્મર હોવા છતાં ભાવિ પ્રજાના હીતાર્થે અવિરત પરિશ્રમ ઉઠાવી શાસ્ત્રોદ્ધારનું કાર્ય કરી રહ્યા છે. ભાગ્યયોગે શ્રી છગનભાઈના કુટુંબીજનો તથા સરસપુરના શ્રી સંઘને પૂજ્યશ્રી તથા શાસ્ત્રની સેવાનો પરમયોગ પ્રાપ્ત થયો તે તેમના માટે ગૌરવનો વિષય છે.

અ. ભા. શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિ.







श्री  
श्री नन्दीसूत्रस्थ  
विषयानुक्रमणिका

	विषय-	पृष्ठाङ्कः-
	स्यधिरावलिः	
१	मङ्गलाचरणम्	१-५
२	उपोद्घातः	६-९
३	ज्ञाननिरूपणम्	१०-६७०
१	पञ्चविधज्ञाननामानि	१०
२	आभिनिबोधिकज्ञानवर्णनम्	११-१४
३	श्रुतज्ञानवर्णनम्	१४-१५
४	अवधिज्ञानवर्णनम्	१५-१७
५	मनःपर्ययज्ञानशब्दार्थः	१८-२०
६	केवलज्ञानशब्दार्थः	२२-२५
७	अवध्यादिज्ञानतः पूर्वं मतिश्रुत- ज्ञानवर्णने हेतुः	२६
८	मतिज्ञानानन्तरं श्रुतज्ञाननिर्देशहेतुः	२७
९	मतिश्रुतज्ञानानन्तरमवधिज्ञान- व्योपन्यासे हेतुकथनम्	२८-२९
१०	मनःपर्ययज्ञानानन्तरं केवलज्ञानो- पन्यासे हेतुकथनम्	३०
११	पञ्चविधज्ञानस्य संक्षेपतो द्वैविध्येन निर्देशः	३१
१२	प्रत्यक्ष शब्दार्थः	३२
१३	प्रत्यक्षलक्षणम्	३३-३५
१४	परोक्षशब्दार्थः	३६
१५	प्रत्यक्षभेदवर्णनम्	३६-३७
१६	इन्द्रियप्रत्यक्ष भेदवर्णनम्	३८-४३
१७	नोइन्द्रिय प्रत्यक्ष भेदवर्णनम्	४४

विषय-	पृष्ठाङ्कः-
१८ अवधिज्ञानप्रत्यक्ष भेदवर्णनम्	४४-४५
१९ भवप्रत्ययिक प्रत्यक्षवर्णनम्	४६-४७
२० क्षायोपशमिक स्वरूपवर्णनम्	४८-५३
२१ स्नेहप्रत्यय स्पर्धकप्ररूपणा	५५-५७
२२ सर्वधाति प्रकृतिभेदवर्णनम्	५७-५८
२३ देशधातिप्रकृति भेदवर्णनम्	५८-५९
२४ अधातिप्रकृतिवर्णनम्	५९-६३
२५ क्षायोपशमिकभावप्रादुर्भाववर्णनम्	६३-६९
२६ स्पर्धक भेदप्ररूपणा	७०-७५
२७ प्रसङ्गतः प्रकृतीनां भावकथनम्	७५-७६
२८ प्रकारान्तरेणावधिज्ञानवर्णनम्	७६-७८
२९ मनः पर्ययज्ञानप्ररूपणा	७८-८०
३० अवधिज्ञान भेदवर्णनम्	८०-८२
३१ सभेदानुगमिकावधिज्ञानवर्णनम्	८२-९६
३२ अनानुगमिकावधिज्ञानस्वरूपवर्णनम्	९६-९७
३३ वर्धमानकावधिज्ञानवर्णनम्	९८-१३९
३४ अवधिज्ञानस्यजघन्यक्षेत्रवर्णनम्	१००-१०८
३५ अवधिज्ञानस्योत्कृष्टक्षेत्रवर्णनम्	१०८-१२२
३६ अवधिज्ञानस्य मध्यमक्षेत्रवर्णनम्	१२२-१३१
३७ द्रव्यक्षेत्रकाल भावानां मध्ये यस्य वृद्धौ यस्य वृद्धिर्भवति, यस्य च न भवतीति वर्णनम्	१३१-१३७
३८ क्षेत्रस्य कालादसंख्येयगुणता प्रतीतौ हेतुकथनम्	१३८-१३९
३९ वीर्यमानावधिज्ञानवर्णनम्	१४०-१४१
४० प्रतिपात्यवधिज्ञानवर्णनम्	१४१-१४४
४१ अप्रतिपात्यवधिज्ञानवर्णनम्	१४५-१४७
४२ द्रव्याद्यपेक्षया अवधिज्ञानस्य भेदकथनम्	१४८-१५३
४३ संग्रहगाथाभ्यामवधिज्ञानवर्णनम्	१५३-१५८
४४ मनःपर्ययज्ञान स्वरूपवर्णनम्	१५८-१७६

	विषय—	पृष्ठाङ्कः—
४६	मनःपर्ययज्ञानभेदवर्णनम्	१७७—१९४
४६	केवलज्ञानवर्णनम्	१९४—२७४
४७	केवलज्ञान भेदस्य केवल शब्दस्य पर्यायाणां पर्यायार्थानां च वर्णनम्	१९४—१९८
४८	सभेदस्य भवस्य केवलज्ञानस्य वर्णनम्	१९८—२०१
४९	सभेदस्य सिद्धकेवल ज्ञानस्य वर्णनम्	२०२
५०	तीर्थसिद्धादिपदानम् अर्थनिर्देशपूर्वकं क्वचित् क्वचित् तत्तत्पद सार्थक्य निर्देशः	२०३—२११
५१	स्त्रीमोक्षसमर्थनम्	२१२—२६५
५२	सभेदस्य परस्पर सिद्धकेवल ज्ञानस्य वर्णनम्	२६६—२६७
५३	प्रकारान्तरेण सभेदकेवल ज्ञान वर्णनम्	२६८—२७४
५४	परोक्षज्ञानवर्णनं, परोक्षज्ञान भेदस्यान्योन्यानुगतत्वेऽपि पार्थक्येन प्रतिपादनं, श्रुतज्ञानस्य मतिज्ञान पूर्वकत्ववर्णनम्, मतिज्ञानस्य श्रुतज्ञानपूर्वकत्व निरसनं च	२७५—२९४
५५	मतिज्ञान मत्यज्ञानयोः श्रुतज्ञान श्रुताज्ञानयोश्च वर्णनम्	२९४—३००
५६	सभेदस्य आभिनिबोधिक ज्ञानस्य वर्णनम् आभिनिबोधिकज्ञान भेदस्याश्रुतनिश्चितस्य चातुर्विध्य प्रतिपादनं च	३०१—३०६
५७	औत्पत्तिकबुद्धेर्लक्षणम्	३०५—३०६
५८	औत्पत्तिकव्याबुद्धे रूदाहरणानि	३०६—३०७
५९	वैनयिकबुद्धेर्लक्षणम्	३०७—३०९
६०	वैनयिक बुद्धेरूदाहरणानि	३०९

	विषय-	पृष्ठाङ्कः-
६१	कर्मजाया बुद्धे लक्षणम्	३१०
६२	कर्मजाया बुद्धे रुदाहरणानि	३१०
६३	पारिणामिक्या बुद्धे लक्षणम्	३११-३१४
६४	पारिणामिक्याबुद्धेरुदाहरणानि	३१४-३१५
६५	श्रुतनिश्चितमतिज्ञानभेदकथनम्	३१५-३२४
६६	अवग्रह भेदनिरूपणम्	३२५-३८२
६७	व्यञ्जनावग्रह भेदनिरूपणम्	३३३-३६१
६८	अर्थावग्रह भेदनिरूपणम्	३६२-३६४
६९	अवग्रहनामानि	३६५-३८२
७०	ईहायाः भेदानां पर्यायाणां च वर्णनम्	३८२-३८४
७१	अत्रायस्यभेदानांपर्यायाणां च वर्णनम्	३८५-३८७
७२	धारणा भेद वर्णनम्	३८८-३९०
७३	अवग्रहादीनां स्थितिकाल प्ररूपणम्	३९२
७४	सदृष्टान्तं व्यञ्जनावग्रहप्ररूपणम्	३९२-४०१
७५	सदृष्टान्तं अर्थावग्रहनिरूपणम्	४०२-४२२
७६	मतिज्ञान भेदनिरूपणम्	४२३-४३८
७७	श्रुतज्ञान परोक्ष भेदाः	४३८
७८	अक्षरश्रुतानक्षरश्रुत० भेद वर्णनम्	४३९-४५७
७९	संज्ञिश्रुतासंज्ञिश्रुतभेदवर्णनम्	४५७-४७१
८०	सम्यक्श्रुतभेदवर्णनम्	४७२-४८३
८१	मिथ्याश्रुत भेदवर्णनम्	४८४-४८८
८२	सम्यक्श्रुतस्य सादिपर्यवसितत्वा नाद्यपर्यवसितत्व निरूपणम्	४८९-५२३
८३	गमिकागमिकश्रुतवर्णनम्	५२३-५२४
८४	अङ्गप्रविष्टाङ्गबाह्यश्रुतभेदवर्णनम्	५२४-५२८
८५	अङ्गबाह्य श्रुतभेदवर्णनम्	५२८-५४६
८६	अङ्गप्रविष्ट श्रुतभेद वर्णनम्	५३७
८७	आचाराङ्ग स्वरूप वर्णनम्	५४८-५७०
८८	सूत्रकृताङ्गसूत्रस्य स्वरूपवर्णनम्	५७०-५७८

विषय-	पृष्ठाङ्कः-
८९ स्थानाङ्गस्वरूपवर्णनम्	५७९-५८३
९० समवायाङ्ग स्वरूप वर्णनम्	५८३-५८७
९१ व्याख्याप्रज्ञप्ति स्वरूप वर्णनम्	५८८-५९२
९२ ज्ञाताधर्मकथा स्वरूप वर्णनम्	५९२-६००
९३ उपासकदशाङ्ग स्वरूप वर्णनम्	६००-६०५
९४ अन्तकृतदशाङ्ग स्वरूप वर्णनम्	६०५-६०८
९५ अनुत्तरोपपातिकदशाङ्ग स्वरूप वर्णनम्	६०९-६१२
९६ प्रश्नव्याकरण स्वरूप वर्णनम्	६१३-६१६
९७ विपाकश्रुत स्वरूप वर्णनम्	६१७-६२२
९८ दृष्टिवादाङ्ग भेदवर्णनम्	६२२
९९ सिद्धश्रेणिकापरिकर्मवर्णनम्	६२३-६२४
१०० मनुष्यश्रेणिकापरिकर्मवर्णनम्	६२५
१०१ पृष्ठश्रेणिकापरिकर्मवर्णनम्	६२६
१०२ अवगाढश्रेणिका परिकर्म वर्णनम्	६२६
१०३ अवगाढश्रेणिकापरिकर्मण उपसम्पा- दन श्रेणिकापरिकर्मणो विप्रहाण श्रेणिकापरिकर्मण च्युताच्युत श्रेणि- कापरिकर्मणश्च निरूपणम्	६२७-६२९
१०४ सूत्रभेदवर्णनम्	६३०-६३३
१०५ पूर्वगत भेदवर्णनम्	६३४-६४२
१०६ मूलप्रथमानुयोगवर्णनम्	६४२-६४५
१०७ गण्डिकानुयोगवर्णनम्	६४५-६४७
१०८ चूलिकावर्णनम्	६४८
१०९ दृष्टिवादाङ्गस्य वाचनादिप्रमाण वर्णनम्	६४८-६५०
११० द्वादशाङ्गगत भावाभावदि पदार्थ- वर्णनम्	६५२-६५३
१११ द्वादशाङ्गविराधनाऽऽराधना जनित फल वर्णनम्	६५४-६५६

## विषय-

## पृष्ठाङ्क-

११२	द्वादशाङ्गस्य ध्रुवत्वादि प्रतिपादनम्	६५७-६६१
११३	शास्त्रोपसंहारः	६६१-६७०
४	औत्पत्तिकबुद्धेदृष्टान्ताः	६७१-७०७
१	भरतशिलादृष्टान्तः	६७१-६८१
२	मेघदृष्टान्तः	६८२-६८४
३	कुक्कुटदृष्टान्तः	६८४-६८६
४	तिलदृष्टान्तः	६८६-६८७
५	वालुकादृष्टान्तः	६८८-६८९
६	हस्तिदृष्टान्तः	६८९-६९१
७	अगडदृष्टान्तः	६९२-६९३
८	वनखण्डदृष्टान्तः	६९३-६९४
९	पायसदृष्टान्तः	६९४-६९५
१०	अजादृष्टान्तः	६९९-७००
११	पत्रदृष्टान्तः	७०१-७०२
१२	खाडहिलादृष्टान्तः	७०२-७०३
१३	पञ्चपितृकदृष्टान्तः	७०३-७०७
५	औत्पत्तिकबुद्धेर्वाचनान्तरेण दृष्टान्ताः	७०७-७०७
१	भरतशिलापणितेतिदृष्टान्तद्वयम्	७०७-७११
२	वृक्षदृष्टान्तः	७११-७१२
३	क्षुल्लकदृष्टान्तः	७१२-७२१
४	पटदृष्टान्तः	७२२-७२३
५	सरटदृष्टान्तः	७२३-७२५
६	काकदृष्टान्तः	७२५-७२६
७	उच्चारदृष्टान्तः	७२६-७२७
८	गजदृष्टान्तः	७२८-७२९
९	मण्डनदृष्टान्तः	७२९-७३१
१०	गोलकदृष्टान्तः	७३२
११	स्तम्भदृष्टान्तः	७३३

## विषय-

## पृष्ठाङ्क-

१२	धुलकदृष्टान्तः	७३३-७३५
१३	मार्गदृष्टान्तः	७३६-७३८
१४	स्त्रीदृष्टान्तः	७३८-७३९
१५	पतिदृष्टान्तः	७४०-७४१
१६	पुत्रदृष्टान्तः	७४२-७४४
१७	मधुसिक्थदृष्टान्तः	७४४-७४६
१८	मुद्रिकादृष्टान्तः	७४६-७५०
१९	अङ्कदृष्टान्तः	७५०-७५२
२०	नाणकदृष्टान्तः	७५२-७५४
२१	भिक्षुकदृष्टान्तः	७५५-७५७
२२	चेटकनिधानदृष्टान्तः	७५७-७६१
२३	शिक्षादृष्टान्तः	७६२-७६४
२४	अर्थशास्त्रदृष्टान्तः	७६५-७६६
२५	इच्छामहद्दृष्टान्तः	७६७-७६८
२६	शतसहस्रदृष्टान्तः	७६८-७७०
६	वैनयिकबुद्धेर्दृष्टान्ताः	७७१-८००
१	निमित्तदृष्टान्तः	७७१-७७९
२	कल्पकमन्त्रिदृष्टान्तः	७७९
३	लिपिज्ञानदृष्टान्तः	७७९
४	गणितज्ञानदृष्टान्तः	७७९
५	कूपदृष्टान्तः	७७९-७८०
६	अश्वदृष्टान्तः	७८०
७	गर्दभदृष्टान्तः	७८१-७८३
८	लक्षणदृष्टान्तः	७८३-७८५
९	ग्रन्थिदृष्टान्तः	७८५-७८७
१०	अगददृष्टान्तः	७८८-७८९
११	रथिक दृष्टान्त गणिकादृष्टान्तौ	७९०
१२	शाटिकादि दृष्टान्तः	७९०-७९२
१३	नीत्रोदक दृष्टान्तः	७९२-७९४
१४	वृषभहरणादिकः पञ्चदशो दृष्टान्तः	७९४-८००
७	कर्मजाया बुद्धेर्दृष्टान्तः	८००-८०६
१	हैरण्यकदृष्टान्तः	८००
२	कर्षकदृष्टान्तः	८०१-८०३



## विषय-

## पृष्ठाङ्क-

३ कौलिकदृष्टान्तः	८०३
४ दर्वाकारदृष्टान्तः	८०४
५ मौक्तिक दृष्टान्तः	८०४
६ घृतदृष्टान्तः	८०४
७ प्लवकदृष्टान्तः	८०५
८ तुन्नवायदृष्टान्तः	८०५
९ वर्धकिदृष्टान्तः	८०५
१० आपूपिकदृष्टान्तः	८०५
११ घटकार दृष्टान्तः	८०६
१२ चित्रकारदृष्टान्तः	८०६
८ पारिणामिकबुद्धेर्दृष्टान्ताः ।	
१ अभयकुमारदृष्टान्तः	८०७
२ श्रेष्ठिदृष्टान्तः	८०७-८०९
३ कुमारदृष्टान्तः	८०९
४ देवीदृष्टान्तः	८१०-८११
५ उदितोदय दृष्टान्तः	८११-८१२
६ साधुनन्दिषेणदृष्टान्तः	८१२-८१३
७ धनदत्तदृष्टान्तः	८१३-८१४
८ श्रावकदृष्टान्तः	८१४
९ अमात्यदृष्टान्तः	८१५
१० क्षपकदृष्टान्तः	८१५-८१६
११ अमात्यदृष्टान्तः	८१६
१२ चाणक्यदृष्टान्तः	८१७
१३ स्थूलभद्रदृष्टान्तः	८१७
१४ नासिक्यसुन्दरीदृष्टान्तः	८१८
१५ वज्रदृष्टान्तः	८१८-८२१
१६ चरणाहतदृष्टान्तः	८२२-८२३
१७ आमण्ड-दृष्टान्तः	८२३
१८ मणिदृष्टान्तः	८२४
१९ सर्पदृष्टान्तः	८२५
२० खड्गिदृष्टान्तः	८२५-८२६
२१ स्तूपेन्द्रदृष्टान्तः	८२६-८२७
शास्त्रप्रशस्तिः	८२८-८२९

## अथ स्थविरावली

मूलम्—

जयइ जगजीवजोणी,<sup>१</sup>—वियाणओ जगगुरु जगाणंदो ।<sup>२</sup>  
जगणाहो जगबंधू,<sup>३</sup> जयइ जगप्पियामहो भयवं ॥ १ ॥<sup>४</sup>

छाया—

जयति जगज्जीवयोनि,—विज्ञायको जगद्गुरुर्जगदानन्दः ।  
जगन्नाथो जगद्वन्धुर्जयति जगत्पितामहो भगवान् ॥१॥

अर्थः—

जगत् (तीन लोक) के जीवों की योनि (उत्पत्तिस्थान) के जाननेवाले तथा जगद्गुरु, जगदानन्द—संज्ञिपंचेन्द्रियरूप जगतको मोक्षाभ्युदयसाधक अमृतवर्षिणी देशना से ऐहलौकिक पारलौकिक आनन्द देनेवाले तथा दर्शनमात्र से आनन्द उत्पन्न करनेवाले, जगन्नाथ (चराचररूप जगत् के स्वामी) जगद्वन्धु (जगत् के बन्धुवत्)—सर्व प्राणि समुदायरूप जगत् को अहिंसारूपका उपदेश करनेसे रक्षक होने के कारण बन्धुके समान, जगत्पितामह (जगत् के जनक के जनक) — अर्थात्—सकल प्राणियों के नारकादि कुगति—विनिपात भय और अनर्थ (अनिष्ट) से रक्षा करनेके कारण पिताके समान सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित मूलगुण और उत्तरगुणों का समुदायरूप धर्म है उसके अर्थतः उत्पादक, भगवान् (सर्वैश्वर्य १ सम्पत् २ यश ३ श्री ४ ज्ञान ५ वैराग्य ६ रूप भगवाले) सर्वोत्कर्षसे वारंवार (सदा) विराजते हैं ॥ १ ॥

मूलम्—

जयइ सुयाणं पभवो,<sup>१</sup> तित्थयराणं अपच्छिमो जयइ ।<sup>२</sup>  
जयइ गुरु लोगाणं,<sup>३</sup> जयइ महप्पा महावीरो ॥ २ ॥<sup>४</sup>

छाया—

जयति श्रुतानां प्रभवः तीर्थकराणामपश्चिमोजयति ।  
जयति गुरुलोकानां, जयति महात्मा महावीरः ॥ २ ॥

अर्थः—

द्वादशाङ्गरूप श्रुत ( शास्त्र ) के प्रभव ( उत्पत्तिकारण ) अर्थात् अर्थरूप से निर्माता तथा तीर्थंकरों के मध्य में अपश्चिम अवसर्पिणीकाल के २४ तीर्थंकरों के मध्यमें अन्तिम, और तीनों लोक के गुरु, तथा निःस्पृहभावसे तत्त्वोपदेशक महात्मा श्री महावीरस्वामी सर्वोत्कर्ष से बार बार ( सदा ) विराजते हैं ॥ २ ॥

मूलम्—

६ १ ७ ५ ४  
भद्रं सर्वजगुज्जोयगस्स, भद्रं जिणस्स वीरस्स ।

८ २ ९ ३  
भद्रं सुरासुरनमंसियस्स, भद्रं धूरयस्स ॥ ३ ॥

छाया—

भद्रं सर्वजगदुद्घोतकस्य, भद्रं जिनस्य वीरस्य ।

भद्रं सुरासुरनमस्यितस्य, भद्रं धूतरजसः ॥ ३ ॥

अर्थः—

सब जगत् के उद्घोतक-ज्ञानरूप नेत्र दे कर जगत् को प्रकाशित करनेवाले सुर और असुरों से वन्दित कर्मधूली को निवारण करनेवाले श्रीमहावीरस्वामी जिन का चारं बार ( सदा ) कल्याण हो ॥ ३ ॥

मूलम्—

( श्री सङ्घस्तुति - )

गुण भवणगहणसुयरयण,—भरियदंसण विसुद्धरत्थागा ।

३ ४ २  
संघनगर ! भद्रं ते, अखण्डचारित्तपागारा ! ॥ ४ ॥

छाया—

गुणभवनगहनश्रुतरत्न,—भूतदर्शन विशुद्धरथ्याक ! ।

सङ्घनगर ! भद्रं ते, अखण्डचारित्र्यपाकार ! ॥ ४ ॥

अर्थः—

गुणरूप घरोंसे गहन ( दुर्गम ) श्रुत ( शास्त्र ) रूप रत्नों से भरी हुई और

सम्यग्दर्शनरूप विशुद्ध ( निर्मल ) रथ्या ( मार्ग ) वाला और अखण्ड चारित्ररूप  
प्राकार ( कोट ) वाला हे सङ्गरूप नगर ! तेरा कल्याण हो ॥ ४ ॥

मूलम्—

संजम तव तुंवारयस्स, नमो सम्मत्तपारियल्लस्स ।

अप्पडिचक्कस्स जओ, होउ सया संघचक्कस्स ॥ ५ ॥

छाया—

संयम तपस्तुम्बाऽऽरकस्य ( काय ) नमः सम्यक्त्वपरिकरस्य ( राय ) ।

अप्रतिचक्रस्य ( क्राय ) जयो भवतु सदा सङ्घचक्रस्य ( क्राय ) ॥ ५ ॥

अर्थः—

संयमरूप नाभि ( मध्य भाग ) और तपरूप आरा ( चारो तरफ के काष्ठ )  
वाले सम्यक्त्व परिकर ( उपर के भाग ) वाले ऐसे शत्रुरहित सङ्गरूप चक्र को  
नमस्कार और उसकी जय सदा हो ॥ ५ ॥

मूलम्

भदं शील पडागू सियस्स, तव नियम तुरयजुत्तस्स ।

संघ रहस्स भगवओ सज्झाय सुनंदिघोसस्स ॥ ६ ॥

छाया—

भद्रं शीलपताकोच्छ्रितस्य, तपो नियमतुरगयुक्तस्य ।

सङ्गरथस्य भगवतः स्वाध्यायसुनन्दि घोषस्य ॥ ६ ॥

अर्थः—

शील ( सद्वृत्त ) रूप पताका से उन्नत तप और नियमरूप दो घोडों से युक्त  
और पांच प्रकार के स्वाध्यायरूप माङ्गलिक शब्दवाले भगवान् ( समस्तैश्वर्यादि  
षट्कसम्पन्न ) सङ्गरूप रथका कल्याण हो ॥ ६ ॥

मूलम्

कम्मरयजलोह विणिग्गयस्स, सुयरयणदीहनालस्स ।

पंचमहव्वय थिरकणिणयस्स, गुणकेसरालस्स ॥ ७ ॥

छाया—

कर्मरजोजलौघविनिर्गतस्य, श्रुतरत्नदीर्घनालस्य ।  
पञ्चमहाव्रतस्थिरकर्णिकस्य, गुणकेसरवतः ॥ ७ ॥

मूलम्

सावगजणमहुयरपरिवुडस्स, जिणसूरतेयबुद्धस्स ।

संघपउमस्स भदं, समणगणसहस्रपत्तस्स ॥ ८ ॥

छाया—

श्रावकजन मधुकर परिवृतस्य, जिनसूर्यतेजोबुद्धस्य ।  
सङ्घपत्रस्य भद्रं, श्रमणगणसहस्रपत्रस्य ॥ ८ ॥ (युग्मम्)

अर्थः—

कर्मरूप रज ( कीचड ) और जलसमूहसे निकले हुए शास्त्ररूप रत्नमय लम्बायमान नालवाले अहिंसादि पांच महाव्रतरूप दृढ कर्णिकावाले, क्षमा-आर्जवादि उत्तरगुणरूप केसर ( किञ्जल्क ) वाले, श्रावक जनरूप भौरी से घेरे हुए तीर्थङ्कर-रूप सूर्यके तेज ( किरण ) से विकसित साधुसमूहरूप हजार पत्रवाले सङ्घरूप कमल का कल्याण हो ॥ ७-८ ॥

मूलम्

तव संजममयलंछण, अकिरियराहुमुहदुद्धरिस ! निच्चं ।

जय संघचंद निम्मल,—सम्मत्तविसुद्धजोणहागा ! ॥ ९ ॥

छाया—

तपः संयम मृगलाञ्छन ! अक्रियराहुमुखदुर्धर्ष ! नित्यम् ।  
जय सङ्घचन्द्र ! निर्मल,—सम्यक्त्व विशुद्धज्योत्स्नाक ! ॥ ९ ॥

अर्थः—

तपः प्रधान संयमरूप मृगचिह्नवाले अक्रिय ( नास्तिकत्व ) रूप राहुमुखसे दुर्जय निर्दोष सम्यक्त्वरूप स्वच्छ चन्द्रिकावाले हे सङ्घरूप चन्द्र ! तू सदा सर्वोत्कृष्ट हो ॥ ९ ॥

मूलम्

परतिथियगहपहनासगस्स, तवतेयदित्तलेसस्स ।

नाणुज्जोयस्स जए, भदं दमसंघसूरस्स ॥ १० ॥

छाया—

परतीर्थिक ग्रहप्रभा नाशकस्य, तपस्तेजोदीप्तलेश्यस्य ।

ज्ञानोद् द्योतस्य जगति, भद्रं दमसङ्घसूरस्य ॥ १० ॥

अर्थः—

परतीर्थिक ( परदर्शनानुयायी ) रूप ग्रहोंकी प्रभा कौ नाश करनेवाले तपस्तेजरूप चमकदार लेश्या ( आत्मपरिणामविशेष ) वाले ज्ञानरूप प्रकाशवाले, दम ( इन्द्रियनिग्रह ) प्रधानक सङ्घरूप सूर्यका जगत में कल्याण हो ॥ १० ॥

मूलम्

भदं धिइ वेला परिगयस्स, सज्झाय योग मगरस्स ।

अक्खो हस्स भगवओ, संघसमुदस्स रुंदस्स ॥ ११ ॥

छाया—

भद्रं धृतिवेलापरिगतस्य, स्वाध्याययोगमकरस्य ।

अक्षोभस्य भगवतः, सङ्घसमुद्रस्य विस्तीर्णस्य ॥ ११ ॥

अर्थः—

धैर्यरूप वेला ( जलवृद्धि ) से युक्त स्वाध्याययोग ( स्वाध्याय रूप जलचरवाले ) क्षोभरहित और विस्तृत-विस्तारवाले भगवान् सङ्घरूप समुद्र का कल्याण हो ॥ ११ ॥

## मूलम्

सम्महंसण वरवड्ढर—दढरूढगाढावगाढपेढस्स । <sup>१</sup>

धम्मवर रयण मंडिय,—चामीयर मेहलागस्स ॥ १२ ॥ <sup>२</sup>

नियमूसियकणय,—सिलायलुज्जलजलंत चित्तकूडस्स । <sup>३</sup>

नंदणवण मण हरसुरभि,—सीलगंधुद्धमायस्स ॥ १३ ॥ <sup>४</sup>

जीवद्यासुंदरकंदरुद्धरिय, मणिवर मंड्द इन्नस्स ॥ <sup>५</sup>

हेउसयधाउपलगंत,—रयणदित्तो सहियुहस्स ॥ १४ ॥ <sup>६</sup>

संवरवरजलपगलिय,—उज्झरप्पविरायमाण हारस्स । <sup>७</sup>

सावगजणपउररवंत—नच्चंतमोरकुहरस्स ॥ १५ ॥ <sup>८</sup>

विणयनयप्पवरमुणिवर,—कुरंतविज्जुज्जलंतसिहरस्स । <sup>९</sup>

विविहगुणकप्परुक्खग,—पलभरकुसुमाउलवणस्स ॥ १६ ॥ <sup>१०</sup>

नाण वररयण दिप्पंत,—कंतवेरुलियविमलचूलस्स । <sup>११</sup>

वंदामि विणयपणओ, संघमहामंदरगिरिस्स ॥ १७ ॥ (कुलकं) <sup>१४ १३ १२</sup>

छाया—

सम्यग्दर्शन वर वज्र,—दढ रूढ गाढावगाढपीठस्य ।

धर्मवररत्नमण्डित चामीकर मेखला कस्य ॥ १२ ॥

नियमकनकशिलातलोच्छ्रितोज्ज्वलज्वलचित्त(त्र)कूटस्य ।

नन्दनवन मनोहरसुरभि,—शील गन्धोद्धूमायस्य ॥ १३ ॥

जीवदया सुन्दरकन्दरोद् दप्त मुनिवरमृगेन्द्राकीर्णस्य ।

हेतुशतधातु प्रगलद्रत्न दीप्तौषधिगुहस्य ॥ १४ ॥

संवरवरजलप्रगलितोज्झर प्रविराजमान हा (धा) रस्य ।

श्रावकजनप्रचुररवन्नृत्यन्मयूर कुहरस्य ॥ १५ ॥

विनयनत प्रवर मुनिवर स्फुरद्विद्युज्ज्वलच्छिखरस्य ।

विविधगुणकल्पवृक्षक भरकुसुमाकुलवनस्य ॥ १६ ॥

ज्ञानवररत्नदीप्यमान कान्तवैडूर्यविमल चूलस्य ।

वन्देविनयप्रणतः, सङ्गमहामन्दिरगिरेः ॥ १७ ॥ ( कुलकम् )

अर्थः—

मैं सम्यग्दर्शनरूप उत्तम वज्रमय दृढ ( स्थिर-चिरकालिक ) अत्यन्त अव-  
गाढ ( भूमि में गड़ा हुआ ) पीठ ( आधारशिला ) वाले तथा धर्मरूप उत्तम रत्नों से  
शोभित सुवर्णमय मेखला ( मध्यभाग ) वाले नियमरूप सुवर्णमय शिलातल पर  
उच्च उज्ज्वल ( विमल ) और भास्वर ( चमकदार ) चित्तरूप अद्भुत कूट ( शिखर  
-चोटी ) वाले, सन्तोषरूप नन्दनवनसम्बन्धी चित्ताकर्षक सौरभ्य से युक्त शील  
( सदाचार ) रूप सुवास-( खूसबु ) से सम्पन्न, जीवदयारूप सुन्दर ( अच्छी )  
कन्दरा ( गुफा ) में दप्त ( कर्मरूप शत्रु के प्रति और कुमतानुयायियों के प्रति  
वादलब्धिसे सात्त्विक अभिमानवाले ) मुनि शिरोमणिरूप सिंहींसे व्याप्त ( अधिष्ठित )  
सैकड़ों हेतुरूप धातु क्षायोपशमिकभाव से गिरते हुए शुभ विचाररूप रत्नों से  
प्रकाशित .आमर्षौषधि आदि औषधिवाली व्याख्यानशालारूप गुफा वाले पांच  
आस्रवों का निरोधरूप संवररूप स्वच्छजलके गिरे हुए प्रशमादि विचारधारारूप  
उन्नत झरनारूप धारावाले श्रावकजनरूप बहुत बोलते नाचते मोरवाली  
कन्दरावाले, विनयसे नम्रीभूत उत्तम मुनिवररूप चमकती हुई विजलियों से शोभा-  
यमान शिखरवाले, अनेक गुणरूप कल्पवृक्षके फलों के भर ( समूह ) और पुष्पोंसे  
व्याप्त वनवाले, उत्तम ज्ञानरूप रत्नों से शोभायमान सुन्दर वैडूर्य मणिमय चोटी-  
वाले सङ्गरूप महान् सुमेरु पर्वतको ( मैं ) विनय से प्रणत ( अतिनम्र ) हो वन्दन  
करता हूँ ॥ १२-१७ ॥



मूलम्

१

२

गुणरयणुज्ज्वलकडयं, शीलसुगंधि तवमंडिउद्देशं ।

३

४

५

सुयवारसगसिहरं, संघमहामंदरं वंदे ॥ १८ ॥

छाया—

गुणरत्नोज्ज्वलकटकं, शील सुगन्धि तपोमण्डितोद्देशम् ।

श्रुतद्वादशाङ्गशिखरं, सङ्घमहामन्दरं वन्दे ॥ १८ ॥

अर्थः—

मैं गुणरूप रत्नमय स्वच्छ मध्य भागवाले तथा शील (सदाचार) रूप सुवास (खुसबू) से सुवासित, और तपस्या से शोभित, और उद्देश (अवयव) वाले द्वादशाङ्गशास्त्र वा शास्त्रके द्वादशाङ्गरूप शिखरवाले सङ्घरूपवडे सुमेरु पर्वतको वंदता हूं ॥ १८ ॥

मूलम्

२

३

४

५

नगर रह चक्र पउमे, चंदे सूरु समुद्र मेरुम्मि ।

१

६

१०

७

९

८

११

जो उवमिज्जइ सययं, तं संघ गुणायरं वंदे ॥ १९ ॥

छाया—

नगररथचक्रपद्मे, चन्द्रे सूरु समुद्रे मेरौ ।

य उपमीयते सततं, तं सङ्घं गुणाकरं वन्दे ॥ १९ ॥

अर्थः—

जो नगर, रथ, चक्र, कमल, चन्द्र, सूर्य, समुद्र और सुमेरु में तुलित किया जाता है अर्थात् नगरादियों की उपमा जिसमें दी जाती है उस गुणाकर (गुणकीखान) संघको मैं सदा वन्दन करता हूं इसमें समुद्र और संघ इन दोनो शब्दमें प्राकृत होनेके कारण विभक्ति लोप हुआ है ॥ १९ ॥

मूलम्

१ २ ३  
(वंदे) उसभं अजियं संभव-अभिनन्दणसुमइ सुप्पभसुपासं ।

४ ५ ६  
ससिपुप्फदंतसीयल, सिज्झंसं वासुपूज्जं च ॥ २० ॥

७ ८ ९ १० ११ १२ १३ १४ १५  
विमलमणंत च धम्मं, संतिं कुंथुं अरं च मल्लिं च ।

१६ १७ १८ १९ २०  
मुनि सुव्वय नमिनेमिं, पासं तह वद्धमाणं च ॥ २१ ॥

छाया—

ऋषभमजितं सम्भव-मभिनन्दनसुमतिसुप्रभसुपार्श्वम् ।

शशिपुष्पदन्तशीतल-श्रेयांसं वासुपूज्यं च ॥ २० ॥

विमलमनन्तं च धर्मं, शान्तिं कुन्धुमरं च मल्लिं च ।

मुनिसुव्रतं नमिनेमिं, पार्श्वं तथा वर्द्धमानं च ॥ २१ ॥

अर्थः—

मैं श्री ऋषभदेवस्वामी श्री अजितनाथजी श्री सम्भवनाथजी श्री अभिनन्दजी श्री सुमतिजी श्री सुप्रभजी श्री सुपार्श्वनाथजी श्री चन्द्रप्रभजी श्री पुष्पदन्तजी ( श्री सुविधिनाथजी ) श्री शीतलनाथजी श्री श्रेयांसनाथजी श्री वासुपूज्यजी श्री विमलनाथजी श्री अनन्तनाथजी श्री धर्मनाथजी श्री शान्तिनाथजी श्री कुन्धुनाथजी श्री अरनाथजी श्री मल्लिनाथजी श्री मुनि सुव्रतजी श्री नमिनाथजी श्री नेमिनाथजी श्री पार्श्वनाथजी और श्री वर्द्धमान ( श्री महावीर ) स्वामी को मैं वन्दन करता हूँ ॥ २०-२१ ॥

मूलम्

२ १ ३ ५ ४ १५ ६ ७  
पढमित्थ इंदभूर्इ, बीए पुण होइ अग्निभूइत्ति ।

९ ८ १० ११ १२ १३ १४  
तइए य वाउ भूर्इ, तओ वियत्ते सुहम्मै य ॥ २२ ॥

छाया—

प्रथमोऽत्र इन्द्रभूति द्वितीयः पुनर्भवत्यग्निभूतिरिति ।

तृतीयश्च वायुभूतिस्ततो व्यक्तः सुधर्मा च ॥ २२ ॥

अर्थः—

यहां ( श्री महावीर स्वामीके शासनमें ) प्रथम गणधर इन्द्रभूति ( श्री गौतमस्वामी ) हैं, फिर दूसरे अग्निभूति हैं और तीसरे वायुभूति हैं बाद चौथे व्यक्तस्वामी हैं पांचमें श्री सुधर्मास्वामी है ॥ २२ ॥

मूलम्

मंडियमोरियपुत्ते, अकंपिण चेव अयलभाया य ।

मेयज्जे य पहासे गणहरा हुंति वीरस्स ॥ २३ ॥

छाया—

मण्डित-मौर्यपुत्रावकम्पितश्चैवाचल भ्राता च ।

मेतार्यश्च प्रभासो गणधराः सन्ति वीरस्य ॥ २३ ॥

अर्थः—

छट्ठे मण्डित और सातमे मौर्यपुत्र गणधर हैं और ऐसे ही आठमे अकम्पित और नवमे अचलभ्राता गणधर हैं । दशवे मेतार्यस्वामी और ग्यारवे प्रभास-स्वामी ये सब श्री महावीरस्वामी के गणधर हैं ॥ २३ ॥

मूलम्

निव्वुड्ढपह सासणयं, जयइ सयो सबभाव देसणयं ।

कुसमय मय नासणयं, जिणिंदवर वीर सासणयं ॥ २४ ॥

छाया—

निर्वृतिपथ शासनकं, जयति सदा सर्वभाव देशनकम् ।

कुसमय मद नाशनकं, जिनेन्द्रवरवीरशासनकम् ॥ २४ ॥

अर्थः—

मोक्षमार्ग का शासक सवपदार्थों का उपदेशक और कुसिद्धान्तों के अहङ्कार को नष्ट करने वाला जिनेन्द्रोंमें श्रेष्ठ श्री महावीर स्वामी का शासन सर्वोत्कर्ष से सदा विराजता है ॥ २४ ॥

मूलम्

२ १ ५ ३ ४  
सुहम्मं अग्निवेशाणं, जंबूनामं च कासवं ।

७ ६ ११ १० ९ ८  
प्रभवं कच्चायणं वन्दे, वच्छं सिज्जंभवं तथा ॥ २५ ॥

छाया--

सुधर्माण मग्निवेशायनं, जम्बूनामानं च काश्यपम् ।

प्रभवं कात्यायनं वन्दे, वात्स्यं शय्यम्भवं तथा ॥ २५ ॥

अर्थः—

मैं अग्निवेशायन गोत्र श्री सुधर्म स्वामी काश्यपगोत्र श्री जम्बूस्वामी कात्यायन गोत्र श्री प्रभवस्वामी और वत्सगोत्रोत्पन्न श्री शय्यम्भवस्वामी को मैं वंदन करता हूँ ॥२५॥

मूलम्

२ १ १२ ४ ५ ३  
जसभद्रं तुंगियं वन्दे, संभूयं चैव माढरं ।

७ ८ ६ १० ११ ९  
भद्रबाहुं च पाइन्नं, स्थूलभद्रं च गोयमं ॥ २६ ॥

छाया—

यशोभद्रं तुङ्गिकं वन्दे, सम्भूतं चैव माढरम् ।

भद्रबाहुं च प्राचीनं, स्थूलभद्रं च गौतमम् ॥२६॥

अर्थः—

मैं तुङ्गिकगोत्र श्री यशोभद्रस्वामी माढर गोत्र श्री सम्भूतस्वामी प्राचीन गोत्र श्री भद्रबाहुस्वामी और गौतमगोत्र श्री स्थूलभद्रस्वामी को वंदन करता हूँ, इन चारोंमें यशोभद्रस्वामी श्री शय्यम्भवस्वामी के शिष्य थे, श्री यशोभद्रस्वामी के शिष्य श्री सम्भूत (विजय) हैं, श्री सम्भूतस्वामी के शिष्य श्री स्थूलभद्राचार्य हैं ॥२६॥

मूलम्

१ ५ २ ३ ४  
एलावच्चसगोत्तं, वंदामि महागिरिं सुहृत्तिं च ।

६ ७ ८ ९ १०  
तत्तो कोसियगोत्तं, बहुलस्स सरिक्खयं वन्दे ॥ २७ ॥

छाया—

एलापत्यसगोत्रं, वन्दे महागिरिं सुहस्तिनञ्च ।

ततः कौशिकगोत्रं, बहुलस्य सद्गव्यसं वन्दे ॥२७॥

अर्थः—

मैं एलापत्य गोत्र वाले श्रीमहागिरि और श्रीसुहत्स्याचार्यको वन्दन करता हूँ, उसके बाद कौशिक गोत्र [ विश्वामित्र गोत्रोत्पन्न ] श्री बहुलमुनिके समान-वयवाले बलिस्सहजी को वन्दन करता हूँ । इनमें श्रीमहागिरिजी श्रीस्थूलभद्रजी के शिष्य थे, और श्रीसुहस्तीजी भी श्रीस्थूलभद्रजी के ही शिष्य थे, श्रीमहागिरिजी के श्री बहुलजी और श्री बलिस्सहजी ये दो प्रधान शिष्य थे ॥२७॥

मूलम्

१ २ ३ ७ ८ ५ ६  
हारियुत्तं साइं च, वंदिमो हारियं च सामजं ।

११ ८ ९ १०  
वंदे कौसियगोत्तं, संडिल्लं अज्जजीय धरं ॥ २८ ॥

छाया—

हारीतगोत्रं स्वीतिं च, वन्दामहे हारीतं च श्यामार्यम् ।

वन्दे कौशिकगोत्रं, शाण्डिल्यमार्यजीतधरम् ॥२८॥

अर्थः—

हम हारीतगोत्र श्री स्वात्याचार्य और हरीतगोत्र श्री श्यामार्यजी को वन्दन करता हूँ, मैं काशिकगोत्र श्री शाण्डिल्याचार्य और श्रीआर्यजीतधराचार्यजी को वन्दन करता हूँ, इनमें श्री स्वातिजी बलिस्सहजी के शिष्य थे, श्यामार्य श्रीस्वातिजी के शिष्य थे, किसीने श्यामार्य श्री शाण्डिल्यजी काही आर्यजीतधर यह विशेषण लगाकर वन्दन कहा है, उसका अर्थ—“मर्यादादर्शक सूत्रधारक है ॥२८॥

मूलम्

१ २ ३  
तिसमुद्दखायकिंतिं, दीवसमुद्देसु गहिय पेयालं ।

६ ५ ४  
वंदे अज्जसमुद्दं, अक्खुभिय समुद्दं गंभीरं ॥ २९ ॥

छाया—

त्रिसमुद्राख्यातकीर्तिं, द्वीपसमुद्रेषु गृहीत [पेचालम्] प्रमाणम् ।  
वन्दे आर्यसमुद्रम्, अक्षुभितसमुद्रगम्भीरम् ॥२९॥

अर्थः—

मैं पूर्वद्वक्षिण और पश्चिम इन तीन समुद्रपर्यन्त ख्यात कीर्तिवाले अनेक द्वीप और समुद्र के विषयमें इन के प्रमाण के जानकर अर्थाम् द्वीपसमुद्रप्रज्ञप्तिज्ञाता अक्षुभित-क्षोभ रहित स्थिर समुद्र के समान गम्भीर श्री आर्यसमुद्राचार्यजी को वन्दन करता हूँ । ये आर्य समुद्र जी-शाण्डिल्यजी के शिष्य थे ॥ २९ ॥

मूलम्

<sup>१</sup> भणगं <sup>२</sup> करगं <sup>३</sup> झरगं, <sup>५</sup> प्रभावगं <sup>४</sup> णाणदंसणगुणाणं ।  
<sup>९</sup> वंदामि <sup>८</sup> अज्जमंगुं, <sup>६</sup> सुयसागरपारगं <sup>७</sup> धीरं ॥ ३० ॥

छाया—

भाणकं कारकं स्मारकं, प्रभावकं ज्ञानदर्शनगुणानाम् ।  
वन्दे आर्यमङ्गुं, श्रुतसागरपाठकं धीरम् ॥३०॥

अर्थः—

मैं कालिक आदि सूत्रों के पाठक [पढ़नेवाले] सूत्रोक्तक्रियाकलाप के कारक [करनेवाले] स्मारक धर्मके ध्यायक (ध्यान करनेवाले) इसी कारण से ज्ञान दर्शन और उपलक्षणतया चारित्ररूप गुणों के प्रभावक [प्रदीप्तकरने वाले] शास्त्र-रूप समुद्र के पारङ्गत और धीर [विकार कारण प्राप्त होने पर भी अक्षुब्धचित्तवाले] श्री आर्यमङ्गु-नामक आचार्य को वन्दन करता हूँ, ये आर्यमङ्गुजी श्री आर्यसमुद्रजीके शिष्य थे ॥३०॥

मूलम्

<sup>२</sup> वंदामि <sup>१</sup> अज्जधम्मं, <sup>३</sup> तत्तो <sup>७</sup> वंदे <sup>४</sup> य <sup>५</sup> भद्दगुत्तं <sup>६</sup> च ।  
<sup>८</sup> तत्तो <sup>९</sup> य <sup>१२</sup> अज्जवड्ढरं, <sup>१०</sup> तवनियमगुणेहिं <sup>११</sup> वड्ढरसमं ॥ ३१ ॥

छाया—

वन्दे आर्यधर्मं, ततो वन्दे च भद्रगुप्तं च ।  
ततश्चार्यवज्रं, तपोनियमगुणैर्वज्रं समम् ॥ ३१ ॥

अर्थः—

मैं श्री आर्य धर्मनामक आचार्य को वन्दन करता हूँ, और उसके बाद श्री भद्रगुप्त नामक आचार्य को वन्दन करता हूँ, और उसके बाद तप नियम आदि गुणों से वज्र के समान बलवान् श्री आर्यवज्रस्वामी को वन्दन करता हूँ ॥ ३१ ॥

मूलम्

<sup>७</sup> वंदामि <sup>६</sup> अजरक्खिय, <sup>५</sup> खवणे रक्खिय चारित्तं सव्वस्से ।  
<sup>२</sup> रयणकरण्डगभूओ, <sup>३</sup> अणुओगो <sup>४</sup> रक्खिओ <sup>१</sup> जेहिं ॥ ३२ ॥

छाया—

वन्दे आर्य रक्षित क्षपणान् रक्षित चारित्र सर्वस्वान् ।  
रत्न करण्डक भूतोऽनुयोगो रक्षितो यैः ॥ ३२ ॥

अर्थः—

मैं जिन्होंने रत्नमय पेटी के समान अनुयोग की उन चारित्र (संयम रूप सर्वस्व की) भूतकालमें रक्षा करने वाले श्री आर्य रक्षित क्षपण (तपस्वी) को वन्दन करता हूँ ॥ ३२ ॥

मूलम्

<sup>१</sup> नाणम्मि <sup>२</sup> दंसणम्मि <sup>३</sup> य, <sup>४</sup> तव <sup>५</sup> विणए <sup>६</sup> णिच्चकालं <sup>७</sup> मुज्जुत्तं ।  
<sup>८</sup> अज्जं <sup>९</sup> नन्दिल <sup>१०</sup> खवणं, <sup>११</sup> सिरसा <sup>७</sup> वंदे <sup>८</sup> पसणमणं ॥ ३३ ॥

छाया—

ज्ञाने दर्शने च, तपो विनये नित्यकालमुद्युक्तम् ।  
आर्य नन्दिल क्षपणं, शिरसा वन्दे प्रसन्नमनसम् ॥ ३३ ॥

अर्थः—

में सम्यग्ज्ञान, सम्यग्दर्शन, च से सम्यक् चारित्र, तप और विनय में सदा उद्यत (अप्रमादी) रागद्वेष रहित होने के कारण सदा मध्यस्थभाववाले आर्यश्री नन्दिल नामक क्षपण (तपस्वी) को मस्तक से वन्दन करता हूँ। श्री नन्दिलजी श्री आर्यमङ्गुजी के शिष्य थे ॥३३॥

मूलम्

५                      ३                      ४                      २  
वडूढउ वायगवंसो, जसवंतो अज्जनागहत्थीणं ।

१  
वागरण करणभंगिय, कम्मप्पयडीपहाणाणं ॥ ३४ ॥

छाया—

वर्द्धतां वाचकवंशो, यशोवंश आर्यनागहस्तिनाम् ।  
व्याकरण करण भाङ्गिक-कर्मप्रकृतिप्रधानानाम् ॥ ३४ ॥

अर्थः—

व्याकरण, करण ( ज्योतिष ), भङ्गजाल और कर्मप्रकृति आदि की प्ररूपणा में सर्वश्रेष्ठ श्री आर्य नागहस्ती आचार्य की शिष्य परम्परा और यशपरम्परा सर्वदा बढे ॥ ३४ ॥

मूलम्

१                      २  
जच्चंजणधाउ समप्पहाणं, मुद्धिय कुवलयनिहाणं ।

५                      ४                      ३  
वडूढउ वायगवंसो, रेवइणक्खत्तणामाणं ॥ ३५ ॥

छाया—

जात्याञ्जन धातु समप्रभाणां, मृद्वीका कुवलयनिभानाम् ।  
वर्द्धतां वाचकवंशो, रेवतीनक्षत्रनाम्नाम् ॥ ३५ ॥



अर्थः—

श्रेष्ठ जातिमान काले मणिके सदृश वर्णवाले तथा पकि द्राक्षा के समान काले वर्णवाले और नीलकमल के समान नील शरीर वर्णवाले रेवती नक्षत्र नामक आचार्यका वाचकवंश बड़े । ये श्री रेवती नक्षत्रजी श्री आर्यनागहस्तीजीके शिष्य थे ॥ ३५ ॥

मूलम्

अचलपुरा<sup>१</sup> निखंते, कालियसुय<sup>२</sup> आणुओगिण<sup>३</sup> धीरे ।

बंभदीवगसीहे,<sup>७</sup> वायगपयमुत्तमं<sup>४ ५ ६</sup> पत्ते ॥ ३६ ॥

छाया—

अचलपुरानिष्क्रान्तान् कालिकश्रुतानुयोगिकान् धीरान् ।

ब्रह्मदीपकसिंहान्, वाचकपदमुत्तमं प्राप्तान् ॥ ३६ ॥

अर्थः—

मैं अचलपुर से निष्क्रान्त ( प्रव्रजित ) कालिकसूत्ररूप शास्त्रके अनुयोग ( व्याख्या ) के ज्ञाता धीर उत्तमवाचकपदप्राप्त ब्रह्मदीपकी शाखासे उपलक्षित श्री सिंहाचार्यको वन्दन करता हूँ । ये रेवती नक्षत्राचार्यके शिष्य थे ॥ ३६ ॥

मूलम्

जेसिं<sup>१</sup> इमो अणुओगो,<sup>२</sup> पयरइ<sup>५</sup> अज्जावि<sup>४</sup> अड्ढभरहम्मि<sup>३</sup> ।

बहुनयरनिग्गायजसे,<sup>७</sup> ते वंदे<sup>६</sup> खंदिलायरिण<sup>९</sup> ॥ ३७ ॥

छाया—

येपामयमनुयोगः प्रचरत्यद्याप्यर्द्धभरते ।

बहुनगरनिर्गतयशसः, तान् वन्दे स्कन्दिलाचार्यान् ॥ ३७ ॥

अर्थः—

मैं जिनका यह ( इस समय में उपलभ्यमान ) अनुयोग अर्द्धभरत ( भरतक्षेत्र के अर्ध-दक्षिण भरतक्षेत्र ) में आज भी प्रचलित है अनेक नगरों में अभ्युदित प्रसूत

यशवाले उन श्रीस्कन्दिलाचार्य को वन्दन करता हूँ, ये श्रीसिंहाचार्य के शिष्य थे ॥ ३७ ॥

मूलम्

<sup>१</sup>ततो <sup>२</sup>हिमवंतमहंत-<sup>३</sup>विक्रमे <sup>४</sup>धिइपरक्रममणंते ।

<sup>५</sup>सज्ज्ञायमणंतधरे, <sup>६</sup>हिमवंते <sup>८</sup>वंदिमो <sup>७</sup>सिरसा ॥ ३८ ॥

छाया--

ततो हिमवन्महाविक्रमान् अनन्तधृतिपराक्रमान् ।

अनन्तस्वाध्यायधरान्, हिमवतो वन्दे शिरसा ॥ ३८ ॥

अर्थ:--

मैं उन ( श्रीस्कन्दिलाचार्य ) के बाद हिमालयपर्वतके समान बहुत क्षेत्रों में विहार करनेवाले अपरिमित धैर्यपराक्रमवाले और अर्थ की दृष्टिसे अपरिमित स्वाध्यायको धारण करनेवाले श्री हिमवदाचार्य को शिर ( मस्तक ) से वन्दन करता हूँ । ये श्री स्कन्दिलाचार्य के शिष्य थे ॥ ३८ ॥

मूलम्

<sup>१</sup>कालियसुयअणुओगस्स, <sup>२</sup>धारए <sup>५</sup>धारए <sup>४</sup>य <sup>३</sup>पुठ्वाणं ।

<sup>६</sup>हिमवंतखमासमणे, <sup>८</sup>वंदे <sup>७</sup>णागज्जुणायरिण ॥ ३९ ॥

छाया--

कालिकश्रुतानुयोगस्य, धारकान् धारकांश्च पूर्वाणाम् ।

हिमवत्क्षमाश्रमणान्, वन्दे नागार्जुनाचार्यान् ॥ ३९ ॥

अर्थ:--

मैं कालिकश्रुतके अनुयोग ( व्याख्या ) के धारण करनेवाले और उत्पात आदि पूर्वी के धारक श्री हिमवत् नामके क्षमाश्रमण और श्रीनागार्जुनाचार्य को वन्दन करता हूँ, यहां श्री हिमवदाचार्य का वन्दन दुहराया गया है, श्री हिमवदाचार्यके शिष्यश्री नागार्जुनाचार्य हुए ॥ ३९ ॥

मूलम्

<sup>१</sup>मिउमद्वसंपन्ने, <sup>२</sup>अणुपुवि <sup>३</sup>वायगत्तणं <sup>४</sup>पत्ते ।

<sup>५</sup>ओहसुयसमायारे, <sup>६</sup>नागज्जुणवायए <sup>७</sup>वंदे ॥ ४० ॥

छाया—

मृदुमार्दवसम्पन्नान्, आनुपूर्व्या वाचकत्वं प्राप्तान् ।

ओघश्रुतसमाचारान् नागार्जुनवाचकान् वन्दे ॥ ४० ॥

अर्थः—

मैं अतीव कोमलता गुणसे सम्पन्न, क्रमसे वाचकपद प्राप्त और ओघश्रुत (उत्सर्ग-विधिमार्ग) के सम्यक् प्रकारसे आचरण करनेवाले श्रीनागार्जुनाचार्य को वन्दन करता हूँ ॥ ४० ॥

मूलम्—

<sup>८</sup>गोविंदाणं <sup>९</sup>पि <sup>१०</sup>नमो, <sup>१</sup>अणुओगे <sup>२</sup>विउलधारणिंदाणं ।

<sup>६</sup>णिच्चं <sup>३</sup>खंतिदयाणं <sup>४</sup>परूवणे <sup>५</sup>दुल्लभिंदाणं ॥ ४१ ॥

छाया—

गोविन्देभ्योऽपि नमः, अनुयोगे विपुलधारणेन्द्रेभ्यः ।

नित्यं क्षान्तिदयानां, प्ररूपणे इन्द्रदुर्लभेभ्यः ॥ ४१ ॥

अर्थः—

अनुयोगकी अधिक धारण रखनेवालों में इन्द्रके समान, क्षमा और दया गुणों की प्ररूपणामें इन्द्रों के भी सदा दुर्लभ श्रीगोविन्द नामक आचार्य को भी मेरा नमस्कार हो ॥ ४१ ॥

मूलम्

<sup>१</sup>तत्तो <sup>२</sup>य <sup>८</sup>भूयदिन्नं <sup>४</sup>निच्चं <sup>३</sup>तवसंजमे <sup>५</sup>अनिविण्णं ।

<sup>६</sup>पंडियजणसम्माणं, <sup>९</sup>वंदामो <sup>७</sup>संजमविहिण्णुं ॥ ४२ ॥

छाया—

ततश्च भूतदिन्नं, नित्यं तपःसंयमेऽनिर्विण्णम् ।  
पण्डितजनसंमान्यं, वन्दामहे संयमविधिज्ञम् ॥ ४२ ॥

अर्थः—

उसके बाद हम तपस्या और संयममें सदा ग्लानिरहित तथा पण्डितजनों के  
खूब माननीय और संयमविधिके जाननेवाले श्रीभूतदिन्नामक आचार्य को वन्दन  
करते हैं ॥ ४२ ॥

मूलम्

वरकणगतवियचंपग—विमउलवरकमलगब्भसरिवन्ने ।<sup>२</sup>

भविजणहिययदइए, दयागुणविसारए धीरे ॥ ४३ ॥<sup>३ ४ ५</sup>

अड्ढभरहप्पहाणे, बहुविहसज्झायसुमुणियपहाणे ।<sup>६ ७</sup>

अणुओगियवरवसभे, नाइलकुलवंसनंदिकरे ॥ ४४ ॥<sup>८ ९</sup>

भूयहियप्पगब्भे, वंदेहं भूयदिन्नमायरिए ।<sup>१० १४ १</sup>

भवभयवुच्छेयकरे, सीसे नागाज्जुणरिसीणं ॥ ४५ ॥ (विसेसयं)<sup>११ १३ १२</sup>

छाया—

वरतप्तकनकचम्पक—विमुकुलवरकमलगर्भसदृशवर्णान् ।

भविकजनहृदयदयितान्, दयागुणविशारदान् धीरान् ॥ ४३ ॥

अर्द्धभरतप्रधानान् सुविज्ञातबहुविधस्याध्यायप्रधानान् ।

अनुयोजितवरवृषभान्, 'नागिल' कुलवंशनन्दिकरान् ॥ ४४ ॥

भूतहितप्रगल्भान्, वन्देऽहं भूतदिन्नाचार्यान् ।

भवभयव्युच्छेदकरान्, शिष्यान् नागार्जुनर्षीणाम् ॥ ४५ ॥ (विशेषकम्)

अर्थः—

तप्त (तपाया हुआ) कनक (सुवर्ण) तथा चम्पापुष्प, विकसित उत्तमकमलगर्भ (अन्दरके भाग) के समान वर्णवाले, भव्यजनों के हृदयके प्रिय तथा दयारूप गुण के स्वयं धारण करने में औरों को भी धारण कराने में विशारद (निपुण) तथा धीर, भरतक्षेत्र के दक्षिणार्द्ध भागमें प्रधान (श्रेष्ठ), तथा अनेक प्रकारके आचाराङ्ग आदि शास्त्रके स्वाध्याय को अच्छी तरहसे जाननेवाले, तथा अनेक पुरुष श्रेष्ठ साधुओं को स्वाध्याय में लगानेवाले, नागिलकुल-नामक वंशको समृद्ध करनेवाले, प्राणियों के कल्याण करनेमें निर्भीक, और भव (जन्ममरणरूप संसार) के भयको मिटानेवाले नागार्जुनऋषि के शिष्य श्री भूतदिनाचार्यको वन्दन करता हूँ ॥ ४३-४५ ॥

मूलम्

सुसुणियनिच्चानिच्चं, सुसुणियसुत्तत्थधारयं वंदे ।

सब्भावुब्भावणया, तत्थं लोहिच्चणामाणं ॥ ४६ ॥

छाया—

सुज्ञातनित्यानित्यं, सुज्ञातसूत्रार्थधारकं वन्दे ।

सद्भावोद्भावणया, तथ्यं लौहित्यनामानम् ॥ ४६ ॥

अर्थः—

मैं, नित्य और अनित्य पदार्थों को अच्छी तरह से जाननेवाले, सूत्रार्थों को अच्छी तरहसे धारण करनेवाले, तथा सद्भाव (यथावस्थित विद्यमान पदार्थ) की उद्भावना (प्रकाशना) से तथ्य—(सत्य-पदार्थ तत्त्वों को यथार्थ प्रतिपादन करने के कारण सत्यार्थभाषी) श्रीलौहित्य नामक आचार्य को वन्दन करता हूँ ॥ ४६ ॥

मूलम्—

अत्थमहत्थखाणि, सुसमणवक्खाणकहणनिव्वाणि ।

पयईए महुरवाणि, पयओ पणमामि दूसगणिं ॥ ४७ ॥

छाया—

अर्थमहार्थखनि, सुश्रवणव्याख्यानकथननिर्वाणिनम् ।

प्रकृत्या मधुरवाणीकं, प्रयतः प्रणमामि दूष्यगणिनम् ॥ ४७ ॥

अर्थः—

मैं अर्थ ( साधारण अर्थ ) महार्थ ( विशिष्ट अर्थ ) खनि ( आकर-खान ) सुश्रवण ( अच्छा श्रवणवाला - कर्णप्रिय ) व्याख्यान और पृष्ट विषयों के कथन ( उत्तर देने ) में शान्तचित्त वाले और स्वभावसे मधुरभाषी श्री दूष्यनामकगणी (आचार्य) को यतनापूर्वक वन्दन करता हूँ ॥४७॥

मूलम्

१

तवनियमसच्चसंजम—विणयज्जवखंतिमद्वरयाणं ।

२

३

शीलगुणगद्वियाणं, अणुओगजुगप्पहाणाणं ॥ ४८ ॥

६

४

११

७

सुकुमालकोमलतले, तेसिं पणमामि लक्खणपसत्थे ।

१०

५

८

९

पाए पावयणीणं, पडिच्छयसयएहिं पणिवइए ॥४९॥

छाया—

तपोनियमसत्यसंयम,—विनयार्जवक्षान्तिमार्दवरतानाम् ।

शीलगुणगर्वितानाम्, अनुयोगयुगप्रधानानाम् ॥ ४८ ॥

सुकुमारकोमलतलान्, तेषां प्रणमामि लक्षणप्रशस्तान् ।

पादान् प्रवचनिनां, प्रतीच्छकशतकैः प्रणिपत्तितान् ॥ ४९ ॥

अर्थः—

मैं तपस्या, नियम, सत्य, संयम, विनय, सरलता, क्षमा और कोमलता में रत ( संलग्न-लगे हुए ), शील ( सदाचार ) रूप गुण से गर्वित-सम्पन्न, अनुयोग ( व्याख्यान ) में : युगप्रधान ( युगप्रधान-पदप्राप्त ) प्रशस्तप्रवचनसम्पन्न, (श्री-दूष्यगणी) के परम कोमलतलवाले, लक्षणों से प्रशस्त (सुलक्षण) और सैकड़ों प्रती-च्छकों (सूत्र और सूत्रार्थों के ग्रहण करनेवाले शिष्यों) से प्रणिपत्तित (अभिवन्दित) धरणों को नमस्कार करता हूँ ॥ ४८-४९ ॥

मूलम्—

२ १ ५ ३ ४  
जे अन्ने भगवंते कालियसुयअणुओगिए धीरे ।

६ ८ ७ ९ १० ११  
ते पणामिऊण सिरसा, नाणस्स परूवणं वोच्छं ॥ ५० ॥

छाया—

येऽन्ये भगवन्तः कालिकश्रुतानुयोगिनो धीराः ।

तान् प्रणम्य शिरसा, ज्ञानस्य प्ररूपणं वक्ष्ये ॥ ५० ॥

अर्थः—

मैं पूर्वोक्त आचार्यों से अतिरिक्त जो आचार्य कालिकश्रुत के व्याख्यान करनेवाले, धीर और भगवान् ( ऐश्वर्य सम्पन्न ) हैं, उन्हें मस्तक से प्रणाम कर ज्ञान की प्ररूपणा करूंगा, अर्थात् ज्ञानविषयक रचना करूंगा । इस लेख से यह बात स्पष्ट होती है कि नंदीसूत्र देवर्द्धिगणीने नहीं रचा है, उन्होंने किसी अन्य ज्ञानविषयक ग्रंथ की रचना की है । इसका खुलासा इसी नंदीसूत्र की टीका में किया गया है । जिज्ञासु वहां से देख लें ॥ ५० ॥

॥ इति स्थविरावली सम्पूर्णा ॥



# श्री-नन्दीसूत्रम्





॥ श्रीवीतरागाय नमः ॥



जैनाचार्य-जैनधर्मदिवाकर-पूज्यश्री-घासीलालजी-  
महाराजविरचित-ज्ञानचन्द्रिका-टीका-समलङ्कृतम्-

## श्री-नन्दीसूत्रम् ।

॥ मङ्गलाचरणम् ॥

( मालिनी-छन्दः )

शिवसरणिविधानं जीवरक्षकतानं,  
सुरनरकृतगानं केवलोद्भासमानम् ।  
प्रशमरसनिदानं ज्ञानदानप्रधानं,  
परमसुखनिधानं नौम्यहं वर्धमानम् ॥ १ ॥  
करणचरणधारं प्राप्तपूर्वाब्धिपारं,  
शुभतरगुणधारं प्राप्तसंसारपारम् ।  
कलितसकललब्धिं लब्धविज्ञानसिद्धिं,  
गणधरमभिरामं गौतमं तं नमामि ॥ २ ॥

( अनुष्टुप्-वृत्तम् )

श्रीसुधर्मा महावीर-लब्धरत्नोज्ज्वलो गणी ।  
निवबन्ध तदुक्तार्थं, नमस्तस्मै दयालवे ॥ ३ ॥

( पृथ्वी-छन्दः )

सगुप्तिसमितिं समां, विरतिमादधानं सदा,  
क्षमावदखिलक्षमं, कलितमञ्जुचारित्रिकम् ।  
सदोर-मुखवस्त्रिका-विलसिताननेन्दुं शुभं,  
प्रणौमि धिषणासवं, गुरुममुं भवाब्धौ प्लवम् ॥ ४ ॥

( अनुष्टुप्-वृत्तम् )

जैनीं सरस्वतीं नत्वा, नन्दीसूत्रार्थदर्शिका ।  
घासीलालेन मुनिना, क्रियते ज्ञानचन्द्रिका ॥ ५ ॥

## हिन्दीभाषानुवाद ।

मङ्गलाचरणका अर्थ—

( शिवसरणिविधानम् ) मुक्तिमार्गके प्रणेता ( जीवरक्षैकतानम् ) जीवों के अद्वितीय रक्षक ( सुरनरकृतगानम् ) देव एवं मनुष्योंद्वारा स्तुत ( केवलोद्भासमानम् ) केवलज्ञानसे सदा प्रकाशित, ( प्रशमरस निदानम् ) प्रशमरसके स्रोत ( ज्ञानदानप्रधानम् ) अपनी दिव्य देशना-द्वारा मनुष्यों के लिये सम्यक्ज्ञानके दाता, तथा—( परमसुखनिधानम् ) अव्याबाध सुखके भण्डार ऐसे ( वर्धमानं नमामि ) वर्धमान प्रभुको मैं मस्तक झुका कर नमस्कार करता हूँ ॥

भावार्थ—टीकाकार ने इस श्लोकद्वारा मोक्षमार्गके प्रणेता, जीवोंको अभयके दाता, देव एवं मनुष्योंद्वारा सदा स्तूयमान, केवलज्ञानरूप प्रखर प्रभासम्पन्न, प्रशम रसके अभिनेता संसारी प्राणियों के लिये आत्म-ज्ञानरूप दिव्यनिधिके दाता, एवं परमसुखके एक निधान, ऐसे वर्धमान स्वामीको नमस्कार किया है । इसमें प्रायः सभी विशेषण अन्ययोग-

गुणशती भाषानुवाद.

भंगणायरण्यो अर्थ—

( शिवसरणिविधानम् ) मुक्तिमार्गना प्रणेता ( जीवरक्षैकतानम् ) ज्योना अनेक रक्षक ( सुरनरकृतगानम् ) देवो अने मनुष्योद्वारा जेनी स्तुति थाय छे जेवां ( केवलोद्भासमानम् ) केवणज्ञानथी सदा प्रकाशित, ( प्रशम-रसनिदानम् ) शान्तरसनु अरण्य, ( ज्ञानदानप्रधानम् ) पोतानी दिव्य देशना द्वारा मनुष्योने भाटे सम्यक्ज्ञानना दाता, तथा ( परमसुखनिधानम् ) अपार सुखना भंडार जेवा ( वर्धमानं नमामि ) वर्धमान प्रभुने हुं माथुं नभावीने नभन कइं छुं.

भावार्थ—टीकाकारे आ श्लोक-द्वारा मोक्षमार्गना प्रणेता, ज्योने अभय देनारा, देवो तथा मनुष्यो द्वारा सदा जेनी स्तुति थाय छे जेवां, केवण-ज्ञानरूप, भंडान, प्रभायुक्त, शान्त रसना अभिनेता, संसारमां रहैता प्राणी-ज्योने भाटे आत्मज्ञानरूपी दैवी भंडारना दाता अने परम सुखनुं जेक न निधान जेवा वर्धमान स्वामीने प्रणाम कर्था छे. तेमां भाटे लागे अधां विशेष-

વ્યવચ્છેદપરક હૈં । “શિવસરણિવિધાનં” ઇસ પદસે જો એસા માનતે હૈં કિ જીવાત્મા પરમાત્મા નહીં બન સકતા હૈ, એસે મીમાંસક આદિ મતકા વ્યુદાસ કિયા હૈ । આત્મા હી જીવન્મુક્ત પરમાત્મા બન પરમાત્મા બનનેકા ભવ્ય જીવોંકો ઉપદેશ દે કર સ્વયં સિદ્ધિગતિકા નેતા બન જાતા હૈ । “જીવરક્ષૈકતાનં” ઇસ પદ દ્વારા જો એસા માનતે હૈં કિ ‘મનુષ્યકે ઉપયોગકે લિયે હી મનુષ્યસે અતિરિક્ત શેષ પ્રાણિયોં કા નિર્માણ હુવા હૈ અતઃ સ્વેચ્છાનુસાર મનુષ્ય ઇનકા અપને લિયે ઉપયોગ કર સકતા હૈ ’ એસી માન્યતાકો દૂર કરતે હુએ યહ બતલાયા હૈ કિ પ્રભુકા આદેશ સંસારકે સમસ્ત એકેન્દ્રિયાદિક જીવોંકે રક્ષણ કરને કા હૈ, ડનકી દૃષ્ટિમેં એસા અનુચિત પક્ષપાત નહીં હૈ । “સુરનરકૃતગાનં” ઇસ પદસે યહ સૂચિત હોતા હૈ કિ-જો પ્રાણિમાત્રકે રક્ષક હોતે હૈં વે હી દેવ ઓર મનુષ્યોંકે સ્તુતિપાત્ર હોતે હૈં, અન્ય નહીં । “કેવલોદ્ઘાસમાનમ્” ઇસ પદ દ્વારા વૈશેષિક આદિ મતકી માન્યતા નિરસ્ત કી હૈ । ડનકી એસી કલ્પના હૈ કિ-‘જ્ઞાન આત્માકા સ્વભાવ નહીં, તથા બુદ્ધ્યાદિક નૌ ગુણોંકે નાશસે હી મુક્તિ હોતી હૈ । ’ ઇસ પર એસા યહાં કહા ગયા હૈ કિ જ્ઞાન આત્માકા સ્વભાવ હૈ ઓર યહી જ્ઞાન જ્ઞાનાવર-

પણું અન્યયોગવ્યવચ્છેદ વાળા છે “શિવસરણિવિધાનં” આ પદથી જે એવું માને છે કે જીવાત્મા પરમાત્મા બની શકતો નથી, એવાં મીમાંસક વગેરે મતનું ખંડન કર્યું છે. આત્મા જ જીવન્મુક્ત પરમાત્મા બનીને ભવ્ય જીવોને પરમાત્મા બનવાનો ઉપદેશ દઈને પોતે સિદ્ધિગતિનો નેતા બની બીજા છે. “જીવરક્ષૈકતાનં” આ પદ દ્વારા જે એવું માને છે કે “મનુષ્યના ઉપયોગને માટે જ મનુષ્ય સિવાયના બાકીના પ્રાણીઓનું નિર્માણ થયું છે તેથી પોતાની ઇચ્છા પ્રમાણે મનુષ્ય તેમને પોતાને માટે ઉપયોગ કરી શકે છે” એવી માન્યતાને દૂર કરીને એ બતાવાયું છે કે “પ્રભુનો આદેશ સંસારના સર્વ એકેન્દ્રિય વગેરે જીવોનું રક્ષણ કરવાનો છે. તેમની દૃષ્ટિએ એવો અયોગ્ય પક્ષપાત નથી.” “સુરનરકૃતગાનં” આ પદથી એ સૂચિત થાય છે કે જે પ્રાણીમાત્રના રક્ષક હોય છે તેઓ જ દેવો તથા મનુષ્યોની સ્તુતિને પાત્ર હોય છે બીજાં નહીં. “કેવલોદ્ઘાસમાનમ્” આ પદ દ્વારા વૈશેષિક વગેરે મતની માન્યતાનું ખંડન કર્યું છે. તેમની એવી કલ્પના છે કે “જ્ઞાન આત્માનો સ્વભાવ નથી, તથા બુદ્ધિ વગેરે નવ ગુણોના નાશથી જ મોક્ષ હોય છે” તે બાબતમાં અહીં એવું કહેવાયું છે કે જ્ઞાન આત્માનો સ્વભાવ છે અને એજ જ્ઞાન જ્ઞાનાવરણીય

णीय कर्मके अभावमें सर्वथा निर्मल हो कर केवलज्ञानरूप परिणत हो जाता है । नैयायिकों ने २१ इक्कीस प्रकारके दुःखोंके साथ सुखका भी मुक्तिमें अभाव माना है, अतः इस मान्यताको हटानेके लिये “ परम-सुखनिधानम् ” यह विशेषण दिया गया है ॥ १ ॥

( करणचरणधारम् ) करणसत्तरी एवं चरणसत्तरी को धारण करनेवाले ( सर्वपूर्वावधिपारम् ) ग्यारह अंग एवं चौदह पूर्वरूप समुद्रके पारगामी ( शुभतरगुणधारम् ) शुभतर सम्यग्दर्शनादिक गुणोंके धारक ( प्राप्तसंसारपारम् ) संसारके पारको पानेवाले ( कलितसकललब्धिम् ) सकल लब्धियोंके धारक ( लब्धविज्ञानसिद्धिम् ) मनःपर्ययज्ञानके धारी ऐसे ( अभिरामम् ) सर्वोत्तम ( तं गौतमं गणधरं नमामि ) जगत् प्रसिद्ध गौतम गणधरको मैं नमन करता हूँ ।

भावार्थ—इस श्लोकद्वारा वर्धमान भगवान्‌के प्रसिद्ध गौतम गण-धर को नमस्कार किया है । गौतम गणधर ने करणसत्तरी एवं चरण-सत्तरी के सेवनसे अपने जीवनको बहुत अधिक श्रेष्ठतम बना लिया था । चौदहपूर्वके वे पूर्ण पाठी थे । सम्यग्दर्शनादिक गुणोंकी पूर्ण जागृति

કર્મના અભાવમાં સદા નિર્મળ થઈને કેવળજ્ઞાનના રૂપમાં પરિણમે છે. નૈયા-યિકોએ એકવીસ પ્રકારનાં દુઃખોની સાથે સુખનો પણ મુક્તિમાં અભાવ માન્યો છે, તેથી તે માન્યતાનું ખંડન કરવા માટે “ પરમસુખનિધાનમ્ ” એ વિશેષણ મૂકાયું છે. ॥ ૧ ॥

( કરણચરણધારમ્ ) કરણસત્તરી અને ચરણસત્તરીને ધારણ કરનારા ( સર્વપૂર્વાવધિપારમ્ ) અગીયાર અંગ તથા ચૌદ પૂર્વરૂપ સમુદ્રને પાર જનારા ( શુભતરગુણધારમ્ ) શુભતર સમ્યગ્દર્શન વગેરે ગુણો ધારણ કરનારા ( પ્રાપ્તસંસારપારમ્ ) સંસારનો પાર પામનારા ( કલિતસકલલબ્ધિમ્ ) બધી લબ્ધિઓ ધારણ કરનારા ( લબ્ધવિજ્ઞાનસિદ્ધમ્ ) મનઃપર્યય જ્ઞાન ધરાવનારા એવા ( અભિરામમ્ ) સર્વોત્તમ ( તં ગૌતમં ગણધરં નમામિ ) જગત વિખ્યાત ગૌતમ ગણધરને હું નમન કરું છું.

ભાવર્થ:—આ શ્લોક દ્વારા વર્ધમાન ભગવાનના પ્રસિદ્ધ ગૌતમ ગણધરને નમસ્કાર કરાયાં છે. ગૌતમ ગણધરે કરણસત્તરી અને ચરણસત્તરીના સેવનથી પોતાનાં જીવનને અત્યંત શ્રેષ્ઠ બનાવ્યું હતું. ચૌદપૂર્વના તેઓ પૂર્ણ પાઠી હતાં. સમ્યગ્દર્શન વગેરે ગુણોની પૂર્ણ જાગૃતિથી તેમણે એ જ ભવમાં મુક્તિ પ્રાપ્ત

से उन्होंने उसी भवसे मुक्ति प्राप्त कर ली थी । सकल लब्धियोंकी एवं मनःपर्यय ज्ञानकी सिद्धि उन्हें मुक्ति जानेसे पहिले हो चुकी थी ॥२॥

( महावीरलब्धरत्नोज्ज्वलो गणी ) श्रमण भगवान् महावीरसे प्राप्त रत्नत्रयसे प्रकाशमान गणधर ( श्रीसुधर्मा ) श्रीसुधर्मास्वामी ने ( तदुक्तार्थ ) भगवान्के द्वारा कथित अर्थको सकल जगज्जीवके उपकार के लिये ( निबबन्ध ) सूत्ररूप से गूँथा है । ( नमस्तस्मै दयालवे ) ऐसे परम उपकारी दयालु श्री सुधर्मास्वामीको मैं नमस्कार करता हूँ ॥३॥

( समां सगुप्तिसमितिम् ) सम्पूर्णरूपसे पांच समिति एवं तीन गुप्तियोंका पालन करनेवाले ( सदा विरतिम् आदधानम् ) सर्वदा सर्वविरति को धारण करनेवाले ( क्षमावद् अखिलक्षमम् ) पृथ्वीकी तरह सब प्रकारके परीषहोंको सहनेवाले ( कलितमञ्जुचारित्रकम् ) निरतिचार चारित्रके पालन करनेवाले ( अपूर्वबोधप्रदम् ) भव्य जीवोंको अपूर्व आत्मबोधको देनेवाले ऐसे ( गुरुम् ) गुरुदेवको कि जिनका ( सदोरमुखवस्त्रिकाविलसिताननेन्दुम् ) मुखचन्द्रमंडल सदा सदोरकमुखवस्त्रिकासे सुशोभित होता रहता है, तथा ( भववारिधिप्लवम् ) संसाररूप समुद्रमें

करी लीधी डूती, सर्वे लब्धिये तथा मनःपर्यय ज्ञानकी सिद्धि तेमने मोक्ष पाभ्यां पड़ेलां थछ चुकी डूती. ॥ २ ॥

( महावीरलब्धरत्नोज्ज्वलो गणी ) श्रमण भगवान् महावीर द्वारा प्राप्त रत्नत्रयकी प्रकाशमान गणधर ( श्रीसुधर्मा ) श्री सुधर्मा स्वामीने ( तदुक्तार्थ ) भगवान्द्वारा कथित अर्थने जगंतना सकल जेवोना उपकारार्थे ( निबबन्ध ) सूत्र रूपकी गूथेला छे. ( नमस्तस्मै दयालवे ) जेवां परम उपकारी दयालु श्री सुधर्मास्वामीने हुं नमन करूं छुं ॥ ३ ॥

( समां सगुप्तिसमितिम् ) पूरुंइये पांच समिति तथा त्रण गुप्तितने पाणनारा ( सदा विरतिम् आदधानम् ) सदा सर्वविरतिने धारण करनारा ( क्षमावत् अखिलक्षमम् ) पृथ्वीनी जेम अधा प्रकारना परीषडो सहन करनारा ( कलितमञ्जुचारित्रकम् ) निरतिचार चारित्रनां पाणनारा ( अपूर्वबोधप्रदम् ) भव्य जेवोने अपूर्व आत्मबोध हेनारा जेवां ( गुरुम् ) गुरुदेवने के जेतु ( सदोरमुखवस्त्रिकाविलसिताननेन्दुम् ) मुखचन्द्रमंडल डूभेशा द्वारा साथेनी मुडपत्तीथी सुशोभित अनी रहे छे, तथा ( भववारिधिप्लवम् ) जे संसारइपी

इह खलु भगवत्तीर्थङ्करोपदिष्टमर्थरूपमागममुपादाय गणधराः सूत्ररूपेण जग्रन्थुः । उक्तञ्च—“ अत्थं भासइ अरिहा, सुत्तं गंथंति गणहरा निउणा ” इत्यादि। तत्र पूर्वापरविरोधरहितानि स्वतःप्रमाणभूतानि द्वात्रिंशत् सूत्राणि संप्रति समुपलभ्यन्ते।

હૂવતે હુણ જીવોંકે લિયે નૌકા જૈસે હૈં उनको मैं (प्रणौमि ) मस्तक झुका कर नमस्कार करता हूं ॥ ४ ॥

मैं मुनि घासीलाल (जैनीं सरस्वतीं नत्वा) जिनेन्द्रदेवके मुखचन्द्रसे निर्गत दिव्यदेशनाको नमस्कार करके (नन्दीसूत्रार्थदर्शिका ज्ञानचन्द्रिका क्रियते) नन्दीसूत्रके अर्थको स्पष्ट करनेवाली यह ‘ज्ञानचन्द्रिका’ नामकी टीका बनाता हूं ॥ ५ ॥

‘इह खलु’ इत्यादि—इस कालमें भगवान् तीर्थङ्करोंद्वारा उपदिष्ट अर्थरूप आगमको लेकर गणधरोंने उसका सूत्ररूपसे ग्रथन किया है । अन्यत्र भी यही बात कही गई है—“ अत्थं भासइ अरिहा, सुत्तं गंथंति गणहरा निउणा ” इत्यादि ।

अर्हन्त प्रभु अर्थरूपसे सर्व प्रथम आगमकी रचना करते हैं, पश्चात् गणधर उसकी प्ररूपणा सूत्ररूपसे करते हैं । वर्तमान समयमें पूर्वापर विरोधरहित होनेके कारण स्वतःप्रमाणभूत ३२ वत्तीस सूत्र उपलब्ध हैं, वे इस प्रकार हैं—

સાગરમાં ડૂબતાં હોવાને માટે નૌકાસમાન છે તેમને હું (પ્રણૌમિ) માથું નમાવીને પ્રણામ કરું છું ॥ ૪ ॥

હું મુનિ ઘાસીલાલ (જૈનીં સરસ્વતીં નત્વા) જિનેન્દ્ર દેવના મુખચન્દ્ર માંથી નીકળેલી દિવ્ય દેશનાને નમન કરીને (નન્દીસૂત્રાર્થદર્શિકા જ્ઞાનચન્દ્રિકા ક્રિયતે) નન્દીસૂત્રના અર્થને સ્પષ્ટ કરનારી આ જ્ઞાનચન્દ્રિકા નામની ટીકા બનાવું છું ॥ ૫ ॥ ‘इह खलु’ इत्यादि.

આ કાળમાં તીર્થંકર ભગવાનો દ્વારા ઉપદેશાયેલ અર્થરૂપ આગમોને લઈને ગણધરોએ તેની સૂત્રરૂપે ગ્રંથણી કરી છે. અન્યત્ર પણ એ જ વાત કહેવાઈ છે—“ અત્થં ભાસइ અરિહા, સુત્તં ગંથંતિ ગણહરા નિઉણા ” ઇત્યાદિ

અર્હન્ત ભગવાન સર્વ પ્રથમ અર્થરૂપે આગમની રચના કરે છે. પછી ગણધરો સૂત્રરૂપે તેની પ્રરૂપણા કરે છે. વર્તમાન કાળમાં પૂર્વાપરવિરોધ વિનાના હોવાને કારણે સ્વતઃપ્રમાણભૂત (૩૨) બત્તીસ સૂત્રો ઉપલબ્ધ (પ્રાપ્ત) છે. તે નીચે પ્રમાણે છે:—

તત્રાચારાઙ્ગાદીન્યેકાદશાઙ્ગસૂત્રાણિ (૧૧), ઔપપાતિકાદીનિ દ્વાદશોપાઙ્ગસૂત્રાણિ (૧૨), નન્દ્યાદીનિ ચત્વારિ મૂલસૂત્રાણિ (૪) બૃહત્કલ્પાદીનિ ચત્વારિ છેદ-સૂત્રાણિ (૪) આવશ્યકસૂત્રમેકં (૧) ચેતિ [ ૩૨ ] ।

તત્ર “ નન્દીસૂત્રનામ્ના પ્રસિદ્ધસ્ય મૂલસૂત્રસ્ય રચયિતા દેવવાચકાચાર્યઃ ” ઇતિ કેચિદ્ વદન્તિ । કેચિત્તુ “ સ તસ્ય સઙ્કલયિતા, ન તુ રચયિતા ” ઇતિ । एतत् पक्षद्वयमसंगतम्, गणधरसमये देववाचकाचार्यो नासीदिति सर्वसम्मतम्, गणधर-कृते समवायाङ्गे (८८ स.) भगवतीसूत्रे ( ८ श., २ उ.) राजप्रश्नीयसूत्रे च “ जहा नंदीए ” इति पाठस्योपलभ्यमानत्वात् नन्दीसूत्रं गणधरसमये विद्यमानमासीदि-

આચારાઙ્ગ આદિ ૧૧ ગ્યારહ અઙ્ગસૂત્ર, ઔપપાતિક આદિ ૧૨ બારહ ઉપાઙ્ગસૂત્ર, નન્દી આદિક ૪ ચાર મૂલસૂત્ર, બૃહત્કલ્પાદિક ૪ ચાર છેદસૂત્ર, તથા ૧ એક આવશ્યકસૂત્ર (૩૨) ।

“ મૂલસૂત્રરૂપસે પ્રસિદ્ધ્વ ઇસ નન્દીસૂત્રકે રચયિતા દેવવાચક આચાર્ય હૈ ” એસા કિતનેક કહતે હૈ । કિતનેક એસા કહતે હૈ કિ “ દેવવાચક આચાર્ય ઇસ સૂત્રકે રચયિતા નહીં હૈ, કિન્તુ ઇસકે સંકલનકર્તા હૈ ” પરન્તુ યહ દોનોં ધારણાઈ ઠીક નહીં હૈ, કારણ કિ ગણધરોંકે સમયમેં દેવવાચક આચાર્ય નહીં થે, યહ તો સર્વવિદિત હી હૈ । તથા યહ નન્દીસૂત્ર તો ગણધરોં કે સમયમેં ભી થા, ક્યોં કિ ગણધરકૃત સમવાયાઙ્ગસૂત્રમેં ( ૮૮ સ. ) ભગવતીસૂત્રમેં ( ૮શ. ૨ઉ. ) તથા રાજપ્રશ્નીયસૂત્રમેં “ જહા નન્દીએ ” એસા પાઠ દેખનેમેં આતા હૈ । ઇસ પાઠસે ગણધરોંકે સમયમેં નન્દીસૂત્રકા અસ્તિત્વ સ્પષ્ટરૂપસે સિદ્ધ્વ હોતા હૈ ।

આચારાંગ વગેરે અગિયાર અંગસૂત્ર ૧૧, ઔપપાતિક વગેરે બાર ઉપાંગસૂત્ર ૧૨, નન્દી આદિ ચાર મૂલસૂત્ર ૪, બૃહત્કલ્પાદિક ચાર છેદ સૂત્ર ૪, તથા એક આવશ્યક સૂત્ર. (૩૨)

“ મૂળસૂત્રરૂપથી પ્રસિદ્ધ્વ આ નન્દીસૂત્રના કર્તા દેવવાચક આચાર્ય છે ” એવું કેટલાક કહે છે. કેટલાક એવું કહે છે કે “ દેવવાચક આચાર્ય આ સૂત્રના રચનાર નથી પણ તેનું સંકલન કરનાર છે. ” પણ આ બન્ને માન્યતાઓ બરાબર નથી, કારણ કે ગણધરેના સમયમાં દેવવાચક આચાર્ય હતા નહિ, તે તો સર્વવિદિત જ છે. વળી નન્દીસૂત્ર તો ગણધરેના સમયમાં પણ હતું, કારણ કે ગણધરકૃત સમવાયાંગ સૂત્રમાં ( ૮૮ સ. ) ભગવતીસૂત્રમાં ( ૮શ ૨ ઉ ) અને રાજ-પ્રશ્નીયસૂત્રમાં “ જહા નન્દીએ ” એવો પાઠ બેવામાં આવે છે, આ પાઠથી ગણધરેના સમયમાં નન્દીસૂત્રનું અસ્તિત્વ સ્પષ્ટરૂપે સાબિત થાય છે. બે પૂર્વોક્ત



ત્યવગમ્યતે । ઉક્તપક્ષદ્વયાઙ્ગીકારે તુ ગણધરસમયે દેવવાચકસ્યાસદ્ભાવેન તત્સંકલિ-  
તસ્યાપિ નન્દીસૂત્રસ્યાભાવાદ્ “જહા નંદીએ” ઇતિ ગણધરવાક્યં નોપપદ્યતે । તન્મતે  
નન્દીસૂત્રસંકલનં કર્તુમુદ્યતસ્ય દેવવાચકસ્ય તત્પ્રારમ્ભસમયે—“ નાણસ્સ પ્રહ્વણં  
વોચ્છં ” ઇતિ વાક્યેન ‘ નન્દીસૂત્રં વક્ષ્યે ’ ઇત્યર્થો નોપલબ્ધું શક્યતે । નન્દીસૂત્રા-  
તિરિક્તેન કેનચિદ્ ગ્રન્થાન્તરેણાપિ જ્ઞાનપ્રરૂપણા ભવિતુમર્હતિ ।

અથ ‘ નન્દીસૂત્ર ’—મિત્યસ્ય કઃ શબ્દાર્થઃ ?, ઉચ્યતે—નન્દનં—નન્દી=‘દુનદિ  
સમૃદ્ધૌ’ ઇત્યસ્માદ્વાતોઃ “ ઇક્કુળ્યાદિભ્યઃ ” ઇતિ વાર્તિકેણ ભાવે ઇક્પ્રત્યયે, યદ્વા

પદિ પૂર્વોક્ત વાત હી સ્વીકાર કી જાવે તો યહ સમજાને જૈસી વાત  
હૈ કિ ગણધરોંકે સમયમેં દેવવાચક આચાર્યકે ન હોનેસે ફિર ડનકે દ્વારા  
સંકલિત ઇસ નંદીસૂત્રકા સદ્ભાવ ભી કૈસે ડસ સમય માના જાયગા ?  
અતઃ ઇસકે સદ્ભાવકે અભાવમેં “ જહા નંદીએ ” યહ ગણધરવચન  
સંગત નહીં હો સકતા હૈ । તથા ‘ નન્દીસૂત્રકે સંકલનકર્તા દેવવાચક  
આચાર્ય હૈ ’ ઇસ માન્યતામેં “ નાણસ્સ પ્રહ્વણં વોચ્છં ” ઇસ વાક્યસે  
“ નન્દીસૂત્રં વક્ષ્યે ” યહ અર્થ ઉપલબ્ધ નહીં હો સકતા હૈ, કારણ કિ  
નંદીસૂત્રાતિરિક્ત અન્ય ઔર ભી કિસી દૂસરે ગ્રન્થસે જ્ઞાનકી પ્રરૂપણા  
હો સકતી હૈ ।

અવ “ નન્દીસૂત્ર ” ઇસ પદકા ક્યા અર્થ હૈ યહ વાત પ્રદર્શિત કી  
જાતી હૈ—“ દુનદિ ” ધાતુ સમૃદ્ધિ અર્થમેં હૈ । ઇસમેં ‘ દુ ’ ઔર ‘ દ્ ’  
યે દોનોં ઇત્સંજ્ઞક હૈ । ‘ નદ્ ’ સે “ ઇક્કુળ્યાદિભ્યઃ ” ઇસ સૂત્રદ્વારા

વાત જ સ્વીકારવામાં આવે તો સમજવા જેવી વાત એ છે કે ગણધરના  
સમયમાં દેવવાચક આચાર્ય ન થયાં હોય તો પછી તેમના દ્વારા સંકલિત આ  
નંદીસૂત્રનો સદ્ભાવ (અસ્તિત્વ) પણ કેવી રીતે એ સમયનો માની શકાય ?  
તેથી તેના સદ્ભાવના અભાવમાં “ જહા નંદીએ ” આ ગણધરનું વચન સુસં-  
ગત હોઈ શકે નહીં. તથા ‘ નંદીસૂત્રનું સંકલન કરનાર દેવવાચક આચાર્ય છે’  
એ માન્યતામાં “ નાણસ્સ પ્રહ્વણં વોચ્છં ” આ વાક્યથી નંદીસૂત્રં વક્ષ્યે ” એવો  
અર્થ પ્રાપ્ત થઈ શકતો નથી. કારણ કે નંદીસૂત્ર સિવાયના બીજાં પણ કેાઈ  
ગ્રન્થથી જ્ઞાનની પ્રરૂપણા થઈ શકે છે.

હવે “ નંદીસૂત્ર ” એ શબ્દનો શો અર્થ છે તે વાત દર્શાવાય છે—  
“ દુનદિ ” ધાતુ સમૃદ્ધિના અર્થમાં છે. તેમાં “ દુ ” અને “ દ્ ” એ બન્ને ઇત્સંજ્ઞક  
છે. “ નદ્ ” થી “ ઇક્કુળ્યાદિભ્યઃ ” એ સૂત્ર દ્વારા “ ઇક્ ” પ્રત્યય, તથા “ દ્વિતો

“સર્વધાતુભ્ય ઇન્” ઇત્યૌણાદિકસૂત્રેણ ભાવે ઇન્-પ્રત્યયે ‘ઇદિતો નુમ્ ધાતોઃ’ ઇતિ સૂત્રેણ નુમાગમે નન્દિરિતિ । તતઃ “કૃદિકારાદક્તિનઃ” ઇતિ ડીષ્-પ્રત્યયેऽનુવન્ધલોપે ચ કૃતે “યસ્યેતિ ચ ” ઇતીકારલોપે ચ ‘નન્દી’ ઇતિરૂપં ભવતિ । ‘નન્દી-હર્ષઃ, પ્રમોદઃ’ ઇતિ પર્યાયાઃ । પશ્ચવિધજ્ઞાનં સ્વર્ગાપવર્ગસુખજનકમિતિ નન્દીજનકત્વાન્નન્દીત્યુચ્યતે । પશ્ચવિધજ્ઞાનમૂચકત્વાદિદં સૂત્રં નન્દીસૂત્રમુચ્યતે । તસ્યેદં શ્રીસુધર્મજમ્બૂસંવાદરૂપ-માદિસૂત્રમ્—‘સે કિં તં નાણં’ ઇત્યાદિ ।

‘ઇક્’ પ્રત્યય, તથા “ઇદિતો નુમ્ ધાતોઃ” ઇસ સૂત્રદ્વારા ‘નુમ્’ કરને પર “નન્દિ” એસા શબ્દ નિષ્પન્ન હો જાતા હૈ । અથવા “સર્વધાતુભ્યઃ ઇન્” ઇસ ઔણાદિક સૂત્રસે ભાવમેં ‘ઇન્’-પ્રત્યય ઔર ‘ઇદિતો નુમ્ ધાતોઃ’ ઇસ સૂત્રસે ‘નુમ્’ હોને પર ખી “નન્દિ” રૂપ બન જાતા હૈ । પશ્ચાત્ “કૃદિકારાદક્તિનઃ” ઇસ સૂત્ર દ્વારા “ડીષ્” તથા “યસ્યેતિ ચ ” ઇસ સૂત્રદ્વારા “ઈ” કા લોપ કરને પર “નન્દી” એસા રૂપ હો જાતા હૈ । “નન્દનં-નન્દી=હર્ષઃ” નન્દી-શબ્દ કા અર્થ હર્ષ, પ્રમોદ હૈ । જીવકો પ્રમોદકે જનક મત્યાદિક પાંચ જ્ઞાન હૈ, ક્યોં કિ સ્વર્ગ ઔર મોક્ષકા સુખ જીવકો મત્યાદિક પાંચ જ્ઞાનદ્વારા હી પ્રાપ્ત હોતા હૈ, અતઃ નન્દી-શબ્દસે ઇન પાંચ જ્ઞાનોંકી સૂચના કરનેવાલા હોનેસે ઇસ સૂત્રકા નામ ‘નન્દીસૂત્ર’ એસા કહા ગયા હૈ । ઇસકા યહ સર્વ પ્રથમ સૂત્ર હૈ—‘સે કિં તં નાણં’ ઇત્યાદિ ।

નુમ્ ધાતોઃ” એ સૂત્ર દ્વારા “નુમ્” કરવાથી “નન્દિ” એવો શબ્દ સિદ્ધ થાય છે. અથવા “સર્વધાતુભ્યઃ ઇન્” એ ઔણાદિક સૂત્રથી ભાવ માં “ઇન્” પ્રત્યય અને “ઇદિતો નુમ્ ધાતોઃ” આ સૂત્રથી ‘નુમ્’ થતાં પણ “નન્દિ” રૂપ બની જાય છે. ત્યાર પછી “કૃદિકારાદક્તિનઃ” આ સૂત્ર દ્વારા “ડીષ્” તથા “યસ્યેતિ ચ” એ સૂત્ર દ્વારા “ઈ” નો લોપ કરવાથી ‘નન્દી’ એવું રૂપ થાય છે. ‘નન્દનં નન્દી=હર્ષઃ’ નન્દી શબ્દનો અર્થ હર્ષ, પ્રમોદ છે. જીવને પ્રમોદના દેનારાં મત્યાદિક પાંચ જ્ઞાન છે, કારણ કે સ્વર્ગ અને મોક્ષનું સુખ જીવને મત્યાદિક પાંચ જ્ઞાન દ્વારા જ મળે છે. તેથી ‘નન્દી’ શબ્દ એ પાંચ જ્ઞાનનું સૂચક હોવાથી આ સૂત્રનું નામ ‘નન્દીસૂત્ર’ કહેવાયું છે. તેનું આ સર્વ પ્રથમ સૂત્ર છે:—‘સે કિં તં નાણં’ ઇત્યાદિ.

मूलम्—से किं तं नाणं ? । नाणं पंचविहं पन्नत्तं, तं जहा—  
आभिणिबोहियनाणं, सुयनाणं, ओहिनाणं, मणपज्जवनाणं,  
केवलनाणं ॥ सू० १ ॥

छाया—अथ किं तद् ज्ञानम् ? । ज्ञानं पञ्चविधं प्रज्ञप्तं, तद् यथा—१ आमि-  
निबोधिकज्ञानं, २ श्रुतज्ञानम्, अवधिज्ञानं, ४ मनःपर्यवज्ञानं, ५ केवलज्ञानम् ॥

टीका—ज्ञानपदार्थस्य तत्त्वं जिज्ञासमानः श्रीजम्बूस्वामी श्रीसुधर्मस्वामिनं  
पृच्छति—‘से किं तं नाणं’ इति । अथ किं तज्ज्ञानम् ? ‘अथ’ इति प्रश्नार्थकः  
तत्-प्रसिद्धं ज्ञानं किम्=किंस्वरूपम् = हे भदन्त ! ज्ञानस्य स्वरूपं किमस्ति, तत्  
कृपया वर्णयतामित्यर्थः । श्रीसुधर्मा स्वामी जम्बूस्वामिनं प्रत्याह—‘नाणं पंचविहं  
पणत्तं’ इत्यादि । ज्ञानं—ज्ञप्तिर्वस्तुस्वरूपावधारणमित्यर्थः । ज्ञानावरणीयकर्मक्षयक्ष-  
योपशमजनितो बोधरूप आत्मपर्यायः । तत् पञ्चविधं=पञ्चप्रकारकं मूलभेदापेक्षये-  
त्यर्थः, प्रज्ञप्तं=प्ररूपितम्, तीर्थङ्करैरित्यर्थः ।

‘पन्नत्तं’ इति पदेन—‘यथा तीर्थकरैः प्रतिबोधितस्तथा कथयामि’ इति सूचितम् ।

तद् यथेति । यथा—येन प्रकारेण, तत्-पञ्चविधं भवति, स प्रकारः प्रदर्श्यते—  
आभिनिबोधिकज्ञानं, श्रुतज्ञानम्, अवधिज्ञानं, मनःपर्यवज्ञानं, केवलज्ञानं चेति ।

सुधर्मास्वामी से जम्बूस्वामी पूछते हैं कि—हे भदन्त ! जिन ज्ञानों  
का इस सूत्रमें वर्णन किया गया है वे ज्ञान कितने और कौन २ से हैं ।  
इसके उत्तरमें श्रीसुधर्मा स्वामी जम्बूस्वामीसे कहते हैं कि—वे पांच  
प्रकारके हैं और उनके नाम इस प्रकार हैं—१ आभिनिबोधिकज्ञान,  
२ श्रुतज्ञान, ३ अवधिज्ञान, ४ मनःपर्यवज्ञान, ५ केवलज्ञान ।

भावार्थ—ज्ञानपदार्थके स्वरूपको जानने की इच्छासे श्री जम्बूस्वामी  
श्री सुधर्मा स्वामीसे पूछ रहे हैं कि ज्ञानका स्वरूप क्या है ? इसके उत्तरमें

जम्बूस्वामी सुधर्मास्वामीने पूछे छे—‘हे भदन्त ! जे ज्ञानोनुं आ  
सूत्रमां वर्णुन करायु छे ते ज्ञान डेटलां अने कयां कयां छे ?’ तेना जवाबमां  
श्री सुधर्मास्वामी जम्बूस्वामीने कहे छे—‘ते पांच प्रकारनां छे अने तेमनां  
नाम आ प्रमाणे छे—(१) आभिनिबोधिकज्ञान, (२) श्रुतज्ञान (३) अवधि  
ज्ञान (४) मनःपर्यवज्ञान अने (५) केवलज्ञान ।

भावार्थ—ज्ञानपदार्थना स्वरूपने जानुवानी छिछाथी श्री जम्बूस्वामी  
श्री सुधर्मास्वामीने पूछे छे के ज्ञाननुं शुं स्वरूप छे ? तेना जवाबमां तेमने

### (૧) આભિનિબોધિકજ્ઞાનશબ્દાર્થઃ—

‘ અભિ ’ इति—अभिमुखः—यो वस्तुनो याग्यदेशेऽवस्थानमपेक्षते स इत्यर्थः, तथा ‘ नि ’ इति नियतः—इन्द्रियमनः समाश्रित्य तत्तद् विषयमपेक्षते यो बोधः सोऽभिनिबोधः ।

उन्हें समझानेके लिये श्री सुधर्मा स्वामी कहते हैं कि—जिससे वस्तु-स्वरूपका अवधारण—निर्णय होता है वह ज्ञान है । यह ज्ञान आत्मामें ज्ञाना-वरणीय कर्मके क्षयसे, अथवा क्षयोपशमसे उत्पन्न होता है । आगममें इस ज्ञानके ५ पांच भेद बतलाये गये हैं । ये पांच भेद ज्ञानके मूल भेद हैं, और इसी अपेक्षा ज्ञान पांच प्रकारका बतलाया गया है । सूत्रमें जो “पन्नत्तं” शब्द आया है, उसका तात्पर्य ऐसा है कि तीर्थङ्कर भगवानने स्वयं ही ऐसा कहा है । इसीलिये सूत्रकार इस पद द्वारा यह सूचित कर रहे हैं कि तीर्थङ्कर भगवानने ज्ञानमें जो पांच प्रकारता बतलाई है वह इस प्रकार है, यह बात “तं जहा ” पदसे समझाई गई है ।

अब ‘आभिनिबोधिक ज्ञान’ इत्यादि पदोंका विग्रहपूर्वक अर्थ लिखा जाता है—

### (૧) આભિનિબોધિકજ્ઞાન—

આભિનિબોધિક જ્ઞાનકા અર્થે આ પ્રકારે છે— આભિનિબોધિકરૂપ જો જ્ઞાન છે તેનું નામ આભિનિબોધિક જ્ઞાન છે । આભિનિબોધિક

સમજાવવા માટે શ્રી સુધર્માસ્વામી કહે છે કે જેનાથી વસ્તુસ્વરૂપનું અવધારણુ-નિર્ણય થાય છે તે જ્ઞાન છે. એ જ્ઞાન આત્મામાં જ્ઞાનાવરણીય કર્મોના ક્ષયથી અથવા ક્ષયોપશમથી ઉત્પન્ન થાય છે. આગમમાં એ જ્ઞાનના પાંચ ભેદ દર્શાવ્યા છે. તે પાંચ ભેદ જ્ઞાનના મૂળ ભેદ છે. અને એ જ કારણે જ્ઞાન પાંચ પ્રકારનું બતાવ્યું છે. સૂત્રમાં જે ‘ પન્નત્તં ’ શબ્દનો ઉપયોગ થયો છે તેનું તાત્પર્ય એવું છે કે તીર્થંકર ભગવાને પોતે જ એવું કહ્યું છે, તેથી સૂત્રકાર તે પદ દ્વારા એ સૂચિત કરે છે કે તીર્થંકર ભગવાને જ્ઞાનનાં જે પાંચ પ્રકાર બતાવ્યા છે તે આ પ્રમાણે છે. એ વાત ‘ તં જહા ’ પદથી સમજાવેલ છે—

હવે “ આભિનિબોધિકજ્ઞાન ” વગેરે પદોનો વિગ્રહપૂર્વક અર્થ લખવામાં આવે છે:—

### (૧) આભિનિબોધિકજ્ઞાન—

આભિનિબોધિક જ્ઞાનનો અર્થ આ પ્રમાણે છે—આભિનિબોધિકરૂપ જે જ્ઞાન છે તેનું નામ આભિનિબોધિક જ્ઞાન છે, આભિનિબોધિક જ્ઞાનમાં કર્મધારય સમાસ

યદ્વા—અવિપર્યયરૂપત્વાદર્થાભિમુખઃ, અસંશયરૂપત્વાભિયતો યો બોધઃ સ અભિનિબોધઃ । સ એવાભિનિબોધિકમ્, ઇહ વિનયાદિત્વાત્ સ્વાર્થે ઠક્, ઇન્દ્રિયપશ્ચ-  
કમનોનિમિત્તો બોધ इत्यर्थः । આભિનિબોધિકં ચ તજ્ઞાનં ચાભિનિબોધિકજ્ઞાનમ્ ।

યદ્વા—અભિનિબુદ્ધ્યતે જ્ઞાયતેऽનેનેત્યભિનિબોધઃ, સ એવાભિનિબોધિકં  
તદાવરણકર્મણઃ ક્ષયોપશમઃ । યદ્વા—અભિનિબુદ્ધ્યતેऽસ્મિન્નતિ જ્ઞાનાવરણીયકર્મણઃ

જ્ઞાનમેં કર્મધારય સમાસ હુઆ હૈ । યોગ્ય દેશમેં વસ્તુકે અવસ્થાન કી  
અપેક્ષા રાખના ઇસકા નામ અભિ-અભિમુખ હૈ । ‘નિ’કા અર્થ નિયત  
હૈ । ફલિતાર્થ ઇસકા યહ હોતા હૈ કિ પાંચ ઇન્દ્રિય ઔર મનકી અપેક્ષા  
કરકે જો યોગ્ય દેશમેં અવસ્થિત વસ્તુકા જ્ઞાન હોતા હૈ વહ  
અભિનિબોધ હૈ ।

અથવા—જ્ઞાનમેં સંશયરૂપતા, અથવા વિપર્યયરૂપતા કા હોના દોષ  
માના ગયા હૈ । ઇસ સંશયરૂપ તથા વિપર્યયરૂપ દોષસે રહિત જો બોધ  
હોતા હૈ વહ અભિનિબોધ હૈ । અભિનિબોધકા નામ હી આભિનિબો-  
ધિક હૈ । ‘આભિનિબોધિક’ પદ સ્વાર્થમેં ‘ઠક્’ પ્રત્યય હોનેસે નિષ્પન્ન  
હોતા હૈ । ઇસ તરહ અભિનિબોધરૂપ જ્ઞાનકા નામ હી આભિનિબોધિક  
જ્ઞાન હૈ, એમા જાનના ચાહિયે ।

અથવા—જિસકે દ્વારા પદાર્થ જાના જાતા હૈ વહ અભિનિબોધ હૈ ।  
અભિનિબોધ હી આભિનિબોધિક હૈ । યહાં આભિનિબોધિક શબ્દસે તદા-  
વરણ કર્મકા-જ્ઞાનાવરણ કર્મકા ક્ષયોપશમ ગ્રહણ હુઆ હૈ, કારણ કિ

થયો છે. યોગ્ય દેશમાં વસ્તુના અવસ્થાનની અપેક્ષા રાખવી તેનું નામ અભિ-  
અભિમુખ છે. “નિ” નો અર્થ નિયત છે. તેનો ફલિતાર્થ એ થાય છે કે પાંચ  
ઇન્દ્રિયો અને મનની અપેક્ષા કરીને યોગ્ય દેશમાં અવસ્થિત વસ્તુનું જે જ્ઞાન  
થાય છે તે અભિનિબોધ છે

અથવા જ્ઞાનમાં સંશયરૂપતા અથવા વિપર્યયરૂપતાનું હોવું તે દોષ મનાયો  
છે. આ સંશયરૂપ તથા વિપર્યયરૂપ દોષરહિત જે બોધ થાય છે તે અભિનિબોધ  
છે. અભિનિબોધનું નામ જ આભિનિબોધિક છે. આભિનિબોધિક પદ સ્વાર્થમાં  
‘ઠક્’ પ્રત્યય હોવાથી સિદ્ધ થાય છે. આ રીતે અભિનિબોધરૂપ જ્ઞાનનું  
નામ જ આભિનિબોધિક જ્ઞાન છે. એમ બાણુવું જોઈએ.

અથવા જેના વડે પદાર્થનું જ્ઞાન થાય છે તે અભિનિબોધ છે. અભિનિ-  
બોધ જ આભિનિબોધિક છે અહીં આભિનિબોધિક શબ્દથી તદાવરણ કર્મનો  
એટલે કે જ્ઞાનાવરણ કર્મનો ક્ષયોપશમ ગ્રહણ થયો છે, કારણ કે જ્ઞાનાવરણીય

ક્ષયોપશમે સતિ આત્મા રૂપાદિકં જાનાતીત્યતઃ ક્ષયોપશમ એવાભિનિવોધઃ, સ એવા-  
ભિનિવોધિકમ્, આભિનિવોધિકં ચ યદ્ જ્ઞાનં તત્તથા । જ્ઞાનં પ્રતિ જ્ઞાના-  
વરણીયકર્મક્ષયોપશમસ્ય કારણત્વાત્ કાર્યકારણયોરભેદાચ્ચ સામાનાધિકરણ્યમ્ ।

યદ્વા—અભિનિવુદ્ધયતે=જાનાતીત્યભિનિવોધઃ, સ ચાત્મા । સ એવાભિનિવો-  
ધિકમ્, આભિનિવોધિકં ચ તજ્જ્ઞાનં ચેતિ પૂર્વવત્ । અસ્મિન્ પક્ષે ધર્મધર્મિણોરભે-  
દાદુપયોગરૂપપરિણામાદનન્યત્વમાત્મનોઽસ્તીતિ જ્ઞાનસામાનાધિકરણ્યમ્ । અસ્યૈવ  
નામાન્તરં મતિજ્ઞાનમિતિ । ઉક્તશ્ચ—

જ્ઞાનાવરણીય કર્મકે ક્ષયોપશમ હોને પર હી આત્મા રૂપાદિક પદાર્થોં કો  
જાનતા હૈ । જ્ઞાનાવરણીય કર્મકા ક્ષયોપશમ હી જ્ઞાનકે પ્રતિ કારણ હોતા  
હૈ, ઇસ લિયે કારણરૂપ જ્ઞાનાવરણીય કર્મકે ક્ષયોપશમમેં કાર્યરૂપ જ્ઞાન  
કા અભેદોપચાર કરનેસે આભિનિવોધિક પદકી જ્ઞાનકે સાથ સમાના-  
ધિકરણતા બન જાતી હૈ ।

અથવા—અભિનિવોધ શબ્દકા અર્થ આત્મા મી હૈ, કયોં કિ આત્મા  
હી પદાર્થોં કો જાનતા હૈ અતઃ વહી આભિનિવોધિક હૈ । યહાં જો  
આભિનિવોધિક-આત્મા-કો જ્ઞાનસ્વરૂપ પ્રકટ કિયા ગયા હૈ વહ ધર્મ  
ઔર ધર્મીં મેં અભેદ કી અપેક્ષા સે જાનના ચાહિયે । અપને ઉપયોગરૂપ  
પરિણામસે અભિન્ન હોનેકે કારણ આત્મારૂપ આભિનિવોધિક પદકી ઇસ  
પક્ષમેં મી જ્ઞાન પદકે સાથ સમાનાધિકરણતા બનનેમેં કોઈ વાધા નહીં  
આતી હૈ । આભિનિવોધિક જ્ઞાનકા અર્થ મતિજ્ઞાન હૈ । કહા મી હૈ—

કર્મનો ક્ષયોપશમ થતાં જ આત્મા રૂપાદિક પદાર્થોંને જાણે છે. જ્ઞાનાવરણીય  
કર્મનો ક્ષયોપશમ જ જ્ઞાનનું કારણ હોય છે, તેથી કારણરૂપ જ્ઞાનાવરણીય  
કર્મના ક્ષયોપશમમાં કાર્યરૂપ જ્ઞાનનો અભેદોપચાર કરવાથી આભિનિવોધિક પદની  
જ્ઞાનની સાથે સમાનાધિકરણતા બની જાય છે.

અથવા અભિનિવોધ શબ્દનો અર્થ આત્મા પણ છે, કારણ કે આત્મા જ  
પદાર્થોંને જાણે છે તેથી તે જ આભિનિવોધિક છે, અહીં જે આભિનિવોધિક-  
આત્માને જ્ઞાન સ્વરૂપે પ્રગટ કરેલો છે તે ધર્મ અને ધર્મીંમાં અભેદની અપે-  
ક્ષાથી જાણવો જોઈએ. પોતાના ઉપયોગરૂપ પરિણામથી અભિન્ન હોવાને કારણે  
આત્મરૂપ આભિનિવોધિક પદની આ પક્ષમાં પણ જ્ઞાનપદની સાથે સમાના-  
ધિકરણતા બનવામાં કોઈ વાંધો આવતો નથી. આભિનિવોધિક જ્ઞાનનો અર્થ  
મતિજ્ઞાન છે. કહ્યું પણ છે:—



“મતિઃ, સ્મૃતિઃ, સંજ્ઞા, ચિન્તા, અભિનિવોધ ઇત્યનર્થાન્તરમ્ ઇતિ । ન અર્થાન્તરમ્ અનર્થાન્તરમ્, એતે શબ્દા એકાર્થવાચકા ઇત્યર્થઃ ।

( ૨ ) શ્રુતજ્ઞાનશબ્દાર્થઃ—

શ્રુતજ્ઞાનમિતિ । શ્રુતં-શ્રુતિઃ શ્રવણં જ્ઞાનવિશેષઃ । હ્ર શ્રુતશબ્દેન સ એવ ગ્રાહ્યઃ । સ જ્ઞાનવિશેષઃ કીદૃશઃ? ઇતિ ચેત્, ઉચ્યતે-શબ્દાર્થપર્યાલોચનાનુસારી ઇન્દ્રિયમનો-નિમિત્તો યો જ્ઞાનવિશેષઃ સ શ્રુતમિત્યુચ્યતે । શ્રુતં ચ તજ્ઞાનં ચેતિ શ્રુતજ્ઞાનમ્ ।

યદ્વા—શ્રુણોતીતિ શ્રુતમ્, હ્ર શ્રુતશબ્દાર્થઃ શ્રોતા, સ ચાત્મા, અસ્મિન્ પક્ષે ધર્મધર્મિણોરભેદવિવક્ષયા શ્રવણાત્મકોપયોગરૂપપરિણામાદનન્યત્વમાત્મનોઽસ્તીતિ-

“મતિઃ સ્મૃતિઃ, સંજ્ઞા, ચિન્તા, અભિનિવોધઃ” યે સવ પર્યાય-વાચી શબ્દ હૈં । પર્યાયવાચી શબ્દોં મેં શબ્દકી અપેક્ષા અન્તર હોને પર મી અર્થકી અપેક્ષા અન્તર નહીં હોતા હૈ-એક હી અર્થકે યે વાચક હોતે હૈં ॥ ૧ ॥

(૨) શ્રુતજ્ઞાન—

શ્રુતજ્ઞાન શબ્દકા અર્થ ઇસ પ્રકાર હૈ—શ્રુતજ્ઞાન શબ્દકા અર્થ શબ્દ શ્રવણસે ઉત્પન્ન જ્ઞાન હૈ । યહ પાંચ ઇન્દ્રિય ઓર મનકે નિમિત્તસે ઉત્પન્ન હોતા હૈ । તથા ઇસમેં શબ્દ ઓર ડસકે અર્થકી પર્યાલોચના હોતી હૈ । ઇસ તરહ શબ્દશ્રવણસે જો જ્ઞાન આત્મામેં ઉત્પન્ન હોતા હૈ વહ શ્રુતજ્ઞાન હૈ ।

અથવા—“શ્રુણોતીતિ શ્રુતમ્” જો સુનતા હૈ વહ શ્રુત હૈ । ઇસ વિવક્ષાકે અનુસાર શ્રુતકા અર્થ શ્રોતા હૈ । શ્રોતા આત્માકા પર્યાયવાચી

‘મતિઃ સ્મૃતિઃ, સંજ્ઞા, ચિન્તા, અભિનિવોધઃ’ એ બધાં પર્યાયવાચક શબ્દો છે. પર્યાયવાચક શબ્દોમાં શબ્દની અપેક્ષાએ અતર હોવા છતાં અર્થની અપેક્ષાએ અતર હોતુ નથી. એક જ અર્થના તે દર્શાવનારા હોય છે. ॥૧॥

( ૨ ) શ્રુતજ્ઞાન—

શ્રુતજ્ઞાન શબ્દનો અર્થ આ પ્રમાણે છે:-શ્રુતજ્ઞાન શબ્દનો અર્થ-શબ્દ સાંભળવાથી ઉત્પન્ન થતું જ્ઞાન, આ જ્ઞાન પાંચ ઇન્દ્રિય અને મનના નિમિત્તથી ઉત્પન્ન થાય છે. તથા તેમાં શબ્દ અને તેના અર્થની પર્યાલોચના હોય છે. આ રીતે શબ્દના શ્રવણથી જે જ્ઞાન આત્મામાં ઉત્પન્ન થાય છે તે શ્રુતજ્ઞાન છે.

અથવા-‘શ્રુણોતીતિ શ્રુતમ્’ જે સાંભળે છે તે શ્રુત છે. આ વિવક્ષા પ્રમાણે શ્રુતનો અર્થ શ્રોતા થાય છે. શ્રોતા આત્માનો પર્યાયવાચી શબ્દ છે. આ રીતે

જ્ઞાનસામાનાધિકરણ્યમ્ । શ્રોતુરાત્મનઃ પર્યાયતયા જ્ઞાનં તદભિન્નમિતિ । શ્રુતં ચ તજ્જ્ઞાનં ચેતિ શ્રુતજ્ઞાનમ્ । શ્રુતમિત્યત્રાર્પત્વાત્ કર્તરિ ક્તપ્રત્યયઃ ક્લીવત્વં ચ । इह हि अग्रेवक्ष्यति—“ सुणेइ-त्ति सुयं ” इति ।

(૩) અવધિજ્ઞાનશબ્દાર્થઃ—

અવધિજ્ઞાનમિતિ । અવધાનમ્—આત્મનોડ્ઠર્થસાક્ષાત્કરણવ્યાપારોડ્ઠવધિઃ । યદ્વા—અવ—શબ્દોડ્ઠવ્યયત્વેનાનેકાર્થત્વાદધઃશબ્દાર્થકઃ, અવ—અધઃ, નીચપ્રદેશે વિસ્તૃતં વસ્તુ ધીયતે=પરિચ્છિદ્યતેડ્ઠનેત્યવધિઃ, અધોવિસ્તૃતવિષયકજ્ઞાનમ્ । અવધિશ્ચાસૌ

શબ્દ હૈ । इस तरह श्रोतारूप ज्ञानका नाम श्रुतज्ञान हो जाता है । इस पक्षमें श्रवणात्मक उपयोगरूप परिणामसे आत्मामें अभिन्नता ज्ञापित की गई है, इस लिये श्रुत और ज्ञानमें समानाधिकरणता सुघटित हो जाती है, कारण कि श्रोता जो आत्मा है उसकी पर्याय होनेसे ज्ञान उससे भिन्न नहीं है । ‘श्रु’ धातु से आर्ष होनेकी वजहसे कर्तामें ‘क्त’ प्रत्यय हो कर ‘श्रुतम्’ ऐसा नपुंसक लिङ्गमें शब्द बना है । श्रुतज्ञानके विषयमें आगे फिर स्पष्ट लिखा जायेगा ॥ २ ॥

(૩) અવધિજ્ઞાન—

અવધિજ્ઞાન શબ્દકા અર્થે इस प्रकार है—अर्थको साक्षात्कार करने का आत्माका व्यापार होता है उसका नाम अवधि है । अथवा ‘अव’ शब्द अव्यय भी है । अव्ययके अनेक अर्थ होते हैं, अतः यहां ‘अव’ शब्दका अर्थ “ नीचे ” ऐसा जानना चाहिये । तात्पर्य इसका यह है कि

શ્રોતારૂપે જ્ઞાનનું નામ શ્રુતજ્ઞાન થાય છે. આ પક્ષમાં શ્રવણાત્મક ઉપયોગરૂપ પરિણામથી આત્મામાં અભિન્નતા સૂચિત કરાઈ છે, તેથી શ્રુત અને જ્ઞાનમાં સમાનાધિકરણતા બંધ બેસતી થઈ જાય છે, કારણ કે શ્રોતા કે જે આત્મા છે તેની પર્યાય થવાથી જ્ઞાન તેનાથી ભિન્ન નથી, “શ્રુ” ધાતુથી આર્ષ હોવાને કારણે કર્તામાં “ક્ત” પ્રત્યય લાગીને ‘શ્રુતમ્’ એવો નાન્યતર જાતિનો શબ્દ બન્યો છે. શ્રુતજ્ઞાનના વિષયમાં આગળ ફરીથી સ્પષ્ટતાપૂર્વક લખાશે ॥૨॥

( ૩ ) અવધિજ્ઞાન—

“અવધિજ્ઞાન” શબ્દનો અર્થ આ પ્રમાણે છે:—अर्थको साक्षात्कार करवाने आत्माने જે व्यापार હોય છે તેનું નામ અવધિ છે અથવા ‘અવ’ શબ્દ અવ્યય પણ છે. અવ્યયના અનેક અર્થ થાય છે તેથી અહીં ‘અવ’ શબ્દનો અર્થ ‘નીચે’ એવો જાણવો જોઈએ. તેનો ભાવાર્થ એ છે કે જેના દ્વારા નીચા પ્રદેશમાં



જ્ઞાનં ચેત્યવધિજ્ઞાનમ્ । વિષયસ્ય વહુત્વં સ્વીકૃત્યૈવં વ્યુત્પત્તિરિતિ વોધ્યમ્, અન્યથા તિર્યગ્ ઝઞ્ઞં વા વિષયં પરિચ્છિન્દાનસ્યાવધિવ્યપદેશો ન સ્યાત્ । યદ્વા-અવધિર્મર્યાદા રૂપિણ્ણેવ દ્રવ્યેષુ પરિચ્છેદકતયા પ્રવૃત્તિરૂપા, તદુપલક્ષિતં જ્ઞાનમવધિજ્ઞાનમ્ । યદ્વા-અવધિના=મર્યાદયા-રૂપિદ્રવ્યાણ્યેવ જાનાતીતિ વ્યવસ્થયા જ્ઞાનમ્ અવધિજ્ઞાનમ્ । યદ્વા-અવ=મર્યાદયા='એતાવત્ ક્ષેત્રં પશ્યન્ એતાવન્તિ દ્રવ્યાણ્યેતાવન્તં કાલં પશ્યતી'-ત્યાદિનિયમિતક્ષેત્રાદિલક્ષણયા, ધીયતે=પરિચ્છિદ્યતે રૂપિવસ્તુજાતમ્ અનેનેત્યવધિઃ, અવધિશ્ચાસૌ જ્ઞાનં ચેત્યવધિજ્ઞાનમ્ । આત્મનો રૂપિદ્રવ્યસાક્ષાત્કારણમિન્દ્રિયમનો-નિરપેક્ષો જ્ઞાનવિશેષોઽવધિજ્ઞાનમ્ । ઉક્તશ્ચ—

જિસકે દ્વારા નીચે પ્રદેશમેં વિસ્તૃત વસ્તુકો આત્મા જાનતા હૈ ઉસકા નામ અવધિ હૈ । ઇસ તરહ અધોવિસ્તૃત વિષયકો જાનનેવાલા જ્ઞાન અવધિજ્ઞાન હૈ, યહ ફલિતાર્થ નિકલતા હૈ । વિષયકી વાહુલ્યતા કી અપેક્ષા સે હી યહ વ્યુત્પત્તિ કી ગર્હ જાનનીં ચાહિયે, નહીં તો જો વિષય તિર છે વ ઝંચે ફેલે હુએ હૈં ઉનકો જાનનેવાલા જ્ઞાન અવધિજ્ઞાન નહીં કહા જા સકેગા । અથવા-અવધિ-શબ્દકા અર્થ મર્યાદા ભી હોતા હૈ । ઇસ જ્ઞાનમેં મર્યાદા યહી હૈ કિ યહ રૂપી દ્રવ્યોંકો હી સ્પષ્ટ જાનતા હૈ, અરૂપી દ્રવ્યોંકો નહીં । અથવા—દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાલ એવં ભાવકી મર્યાદાકો લેકર જો જ્ઞાન, રૂપી પદાર્થોં કો સ્પષ્ટ જાનતા હૈ વહ અવધિજ્ઞાન હૈ । ઇસ જ્ઞાનમેં ઇન્દ્રિય ઓર મનકી અપેક્ષા નહીં રહતી હૈ । ઇનકી અપેક્ષા વિના કિયે હી યહ જ્ઞાન દ્રવ્યાદિક કી મર્યાદા કો લે કર રૂપી પદાર્થ કો જાનતા હૈ, કહા ભી હૈ—

વિસ્તૃત વસ્તુને આત્મા જાણે છે, તેનું નામ અવધિ છે. આ રીતે અધોવિસ્તૃત વિષયને જાણનાર જ્ઞાન અવધિજ્ઞાન છે, એવો ફલિતાર્થ નીકળે છે. વિષયની વાહુલ્યતાની અપેક્ષાએ જ આ વ્યુત્પત્તિ કહેલ છે, એમ માનવું જોઈએ, નહીં તો જે વિષય ત્રાસા, અથવા જાંચે ફેલાયેલ છે તેમને જાણનાર જ્ઞાન અવધિજ્ઞાન કહી શકાશે નહીં.

અથવા અવધિ-શબ્દનો અર્થ મર્યાદા પણ થાય છે. આ જ્ઞાનની મર્યાદા એ છે કે તે રૂપી દ્રવ્યોને જ સ્પષ્ટ જાણે છે, અરૂપી દ્રવ્યોને નહીં. અથવા દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાળ અને ભાવની મર્યાદા લઈને જે જ્ઞાનરૂપી પદાર્થોને સ્પષ્ટ રીતે જાણે છે તે અવધિજ્ઞાન છે એ જ્ઞાનમાં ઇન્દ્રિય અને મનની આવશ્યકતા રહેતી નથી—તેની અપેક્ષા કર્યા વિના જ એ જ્ઞાન દ્રવ્યાદિકની મર્યાદાને લઈને રૂપી પદાર્થને જાણે છે. કહ્યું પણ છે—

“ દ્રવ્યાણિ મૂર્તિમન્ત્યેવ, વિષયો यस્ય સર્વતઃ ।

નૈયત્યરહિતં જ્ઞાનં, તત્સ્યાદવધિલક્ષણમ્ ” ॥ ૧ ॥

અયમત્ર-નિષ્કર્ષઃ-નૈયત્યરહિતમ્=ઇન્દ્રિયમનોડપેક્ષાવર્જિતમિત્યર્થઃ । અવધિજ્ઞાના-  
વરણક્ષયોપશમવિશેષસમુદ્ભવં ભવપ્રત્યયં ગુણપ્રત્યયં ચ રૂપિદ્રવ્યવિષયકં જ્ઞાનમ-  
વધિજ્ઞાનમ્ । તત્ર ભવપ્રત્યયં=ભવહેતુકં નારકાણાં દેવાનાં ચ । ગુણપ્રત્યયં સમ્યગ્દ-  
ર્શનાદિગુણનિમિત્તકં તિરસ્ચાં મનુષ્યાણાં ચ ભવતિ । અવધિજ્ઞાનાવરણીયકર્મણઃ  
ક્ષયોપશમવિશેષઃ સ્વલુ ભવપ્રત્યયસ્ય ગુણપ્રત્યયસ્ય ચાવધિજ્ઞાનસ્ય કારણમ્ । સ હિ  
ક્ષયોપશમસ્તાદૃશમત્તિ પ્રતિ તાદૃશગુણં પ્રતિ ચ સાક્ષાત્કારણં અવધિજ્ઞાન પ્રતિ  
પરંપરાકારણમિતિ । સાક્ષાત્કારણાપેક્ષયા ભવપ્રત્યયમિત્યુચ્યતે । ગુણપ્રત્યયમિતિ  
ક્ષાયોપશમિક-શબ્દેન વક્ષ્યતે ।

“ દ્રવ્યાણિ મૂર્તિમન્ત્યેવ, વિષયો यस્ય સર્વતઃ ।

નૈયત્યરહિતં જ્ઞાનં, તત્સ્યાદવધિલક્ષણમ્ ” ॥ ૧ ॥

અર્થાત્--જિસ જ્ઞાનમેં ઇન્દ્રિય એવં મનકી સહાયતા નહીં હૈ, તથા  
જો રૂપી પુદ્ગલ દ્રવ્યકો હી જાનતા હૈ વહ અવધિજ્ઞાન હૈ । યહ અવધિ-  
જ્ઞાન અવધિજ્ઞાનાવરણ કર્મકે ક્ષયોપશમસે જીવકો પ્રાપ્ત હોતા હૈ ।  
હસકે દો ભેદ હૈ--૧ ગુણપ્રત્યય, ૨ ભવપ્રત્યય । ગુણપ્રત્યય અવધિજ્ઞાન  
મનુષ્ય એવં તિર્યંચોંકે હોતા હૈ । હસ અવધિજ્ઞાનકી ઉત્પત્તિમેં સમ્યગ્દ-  
ર્શન આદિ ગુણ નિમિત્ત માને ગયે હૈ । જિસ અવધિજ્ઞાનકી ઉત્પત્તિમેં  
ભવ કારણ હોતા હૈ વહ અવધિજ્ઞાન ભવપ્રત્યય માના ગયા હૈ । યહ  
અવધિજ્ઞાન દેવ એવં નારકી જીવોંકે હોતા હૈ । હન દોનોં પ્રકારકે અવ-  
ધિજ્ઞાનમેં અવધિજ્ઞાનાવરણીય કર્મકા ક્ષયોપશમ કારણભૂત હોતા હૈ

“ દ્રવ્યાણિ મૂર્તિમન્ત્યેવ, વિષયો यस્ય સર્વતઃ ।

નૈયત્યરહિતં જ્ઞાનં, તત્સ્યાદવધિલક્ષણમ્ ” ॥ ૧ ॥

એટલે કે જે જ્ઞાનમાં ઇન્દ્રિયો તથા મનની સહાયતા નથી, તથા જે રૂપી  
પુદ્ગલ દ્રવ્યને જ જાણે છે તે અવધિજ્ઞાન છે આ અવધિજ્ઞાન અવધિજ્ઞાનાવરણીય  
કર્મના ક્ષયોપશમથી જીવને પ્રાપ્ત થાય છે: તેના બે ભેદ છે (૧) ગુણપ્રત્યય (૨) ભવ  
પ્રત્યય. ગુણપ્રત્યય અવધિજ્ઞાન મનુષ્ય અને તિર્યંચોને થાય છે. આ અવધિ-  
જ્ઞાનની ઉત્પત્તિમાં સમ્યગ્દર્શન વગેરે ગુણો નિમિત્તરૂપ મનાયા છે. જે અવ-  
ધિજ્ઞાનની ઉત્પત્તિ માટે ભવ કારણરૂપ હોય છે તે અવધિજ્ઞાન ભવપ્રત્યય મનાય  
છે. આ અવધિજ્ઞાન દેવ તથા નારકી જીવોને થાય છે. એ બન્ને પ્રકારના અવ-  
ધિજ્ઞાનમાં અવધિજ્ઞાનાવરણીય કર્મના ક્ષયોપશમ જરૂર કારણરૂપ હોય છે ખરો

(૪) મનઃપર્યવજ્ઞાનશબ્દાર્થઃ—

મનઃપર્યવજ્ઞાનમિતિ । અવનમ્ અવઃ । અવ-રક્ષણગતિકાન્તિપ્રીતિતૃપ્ત્યવગ-  
માધર્થેણ પઠિતોઽસ્તિ, તપ્રાવગમાર્થમાશ્રિત્ય નિષ્પન્નઃ । અવઃ-અવગમઃ, વોધ इत्यर्थः ।  
परि-शब्दः सर्वतोभावे, पर्यवः=समन्तादवबोधः । मनसः पर्यवो मनःपर्यवः-मनो-  
सही, परन्तु वह परंपरारूपसे होता है । साक्षात्कारण भवप्रत्यय अव-  
धिमें देव एवं नारकी भव, तथा गुणप्रत्यय अवधिमें सम्यग्दर्शन आदि  
गुण माने गये हैं, कारण कि देव नारकीके भवके लिये वहां अवधि-  
ज्ञानावरणीय कर्मका क्षयोपशम होता है, तथा सम्यग्दर्शन आदि  
गुणोंके लिये मनुष्य एवं तिर्यञ्चपर्यायमें अवधिज्ञानावरणीय कर्मका  
क्षयोपशम होता है । गुणप्रत्यय अवधिका नाम क्षायोपशमिक अवधि-  
ज्ञान भी है । देव नारकीकी पर्यायमें अवधिज्ञानकी प्राप्ति जन्मसिद्ध  
अधिकार है, तब कि मनुष्य तिर्यञ्चोंमें नहीं ॥ ३ ॥

(૪) મનઃપર્યવજ્ઞાન—

મનઃપર્યવજ્ઞાન શબ્દકા અર્થે હસ પ્રકાર છે—‘અવ’ શબ્દ-રક્ષણ,  
ગતિ, કાન્તિ, પ્રીતિ, તૃપ્તિ, અવગમ આદિ અર્થોં મેં પ્રયુક્ત હુઆ છે । યહાં  
હન અર્થોં મેં કે કેવલ ‘અવગમ’ અર્થે હસ શબ્દકા ગ્રહણ કિયા ગયા છે ।  
‘પરિ’ શબ્દકા અર્થે સર્વતોભાવ છે । સર્વતોભાવસે હુએ વોધકો

પણુ તે પરમ્પરારૂપથી હોય છે, સાક્ષાત્કારણ ભવપ્રત્યય અવધિમાં દેવ અને  
નારકીનો ભવ માનવામાં આવ્યો છે. તથા ગુણપ્રત્યય અવધિમાં સમ્યગ્દર્શન  
આદિ ગુણો મનાયા છે. કારણ કે દેવ-નારકીના ભવને માટે ત્યાં અવ-  
ધિજ્ઞાનાવરણીય કર્મનો ક્ષયોપશમ થાય છે. તથા સમ્યગ્દર્શન વગેરે ગુણોને  
માટે મનુષ્ય અને તિર્યંચ પર્યાયમાં અવધિજ્ઞાનાવરણીય કર્મનો ક્ષયોપ-  
શમ થાય છે. ગુણપ્રત્યય અવધિનું નામ ક્ષાયોપશમિક અવધિજ્ઞાન પણુ છે.  
દેવ નારકીની પર્યાયમાં અવધિજ્ઞાનની પ્રાપ્તિ જન્મસિદ્ધ અધિકાર છે, પણુ મનુષ્ય,  
તિર્યંચોમાં એવું નથી. ॥૩॥

(૪) મનઃપર્યવજ્ઞાન—

મનઃપર્યવજ્ઞાન શબ્દનો અર્થ આ પ્રકારનો છે—‘અવ’ શબ્દ, રક્ષણ,  
ગતિ, કાન્તિ, પ્રીતિ, તૃપ્તિ, અવગમ વગેરે અર્થોંમાં વપરાયો છે.  
અહીં તે અર્થોંમાંથી તે શબ્દનો ફક્ત ‘અવગમ’ અર્થે જ ગ્રહણ કરાયો છે.  
‘પરિ’ શબ્દનો અર્થ સર્વતોભાવ છે, સર્વતોભાવથી થયેલ વોધને

વિષયકઃ સમન્તાદવબોધ इत्यर्थः । मनःपर्यवश्चासौ ज्ञानं चेति मनःपर्यव-  
જ્ઞાનમ્ । પર્યવઃ, પર્યયઃ, પર્યાયઃ, એતે શબ્દા એકાર્થવાચકાઃ । તત્ર પર્યય इति  
'अय'-धातोर्निष्पद्यते । अयनं=बोधनमित्ययः, पर्ययनं=समन्तात् परिच्छेदनं पर्ययः ।  
पर्याय इति 'इण् गतौ' इत्यस्मान्निष्पद्यते । अयनम् आयः, परि-समन्तादायः  
पर्यायः । मनसः पर्यायो मनःपर्यायः । मनःपर्यायश्चासौ ज्ञानं चेति मनःपर्याय-  
જ્ઞાનમિતિ । તથા મનઃપર્યવજ્ઞાનવદ્ મનઃપર્યાયજ્ઞાનમિત્યપિ શાસ્ત્રે પ્રયુજ્યતે ।

यद्वा-पर्यवाः, पर्ययाः, पर्यायाः, धर्माः, इत्येकार्थवाचकाः । मनसः पर्यवाः  
बाह्यवस्तुचिन्तनानुगुणा ये धर्माः परिणामाः अवस्थाविशेषाः, बाह्यवस्तुवालोचनादि-

यहां 'पर्यव' शब्दका वाच्यार्थ कहा गया है । इस तरह मनका-परकीय  
मनोगत पदार्थका जिसके द्वारा स्पष्टरूपसे बोध होता है वह मनःपर्य-  
वज्ञान है । 'पर्यव, पर्यय तथा पर्याय' ये शब्द एकार्थवाचक हैं । 'पर्यय'  
यह शब्द "अय गतौ" गत्यर्थक अय धातुसे बना है । इसका अर्थ बोधन  
होता है । 'परि-समन्तात्'-सर्व प्रकारसे 'अयन'-परिच्छेदन  
जिसके द्वारा होता है वह पर्यय है, ऐसे इसका उक्त अर्थ हो जाता  
है । मनसंबंधी जो पर्यय वह मनःपर्यय है । 'पर्याय' यह शब्द  
जब रखते हैं तब उसका अर्थ ऐसा होता है कि मनकी जो पर्याये हैं वे  
मनःपर्याय हैं । इस त्रिवक्षामें "इण् गतौ" धातुसे यह 'आय' शब्द  
निष्पन्न हुआ है ।

अथवा--पर्यव, पर्यय, पर्याय, धर्म, ये शब्द एकार्थवाचक हैं,  
अर्थात् जो कोई व्यक्ति मनःपर्यवज्ञानसे बाह्य वस्तु के धर्मका विचार

અહીં પર્યવ શબ્દનો વાચ્યાર્થ કહેલ છે. આ રીતે મનનો એટલે પરકીય મનો-  
ગત પદાર્થનો જેના દ્વારા સ્પષ્ટરૂપથી બોધ થાય છે તે મનઃપર્યવ જ્ઞાન છે.  
'પર્યવ, પર્યાય તથા પર્યય' એ શબ્દો એક જ અર્થ દર્શાવે છે. 'પર્યય' આ  
શબ્દ 'અય ગતૌ' ગતિવાચક 'અય' ધાતુમાંથી બન્યો છે. તેનો અર્થ બોધન  
થાય છે. પરિ-સમન્તાત્-સર્વ રીતે અયન-પરિચ્છેદન જેના દ્વારા થાય છે તે  
પર્યય છે. એ રીતે તેનો ઉપરોક્ત અર્થ થઈ જાય છે. મનસંબંધી જે પર્યય  
તે મનઃપર્યય છે. 'પર્યાય' આ શબ્દ ત્યારે વપરાય છે ત્યારે તેનો અર્થ એવો  
થાય છે કે મનની જે પર્યાય છે તે મનઃપર્યાય છે. આ વિવક્ષામાં 'इण् गतौ'  
ધાતુથી આ 'આય' શબ્દ સિદ્ધ થયો છે.

अथवा—पर्यव, पर्यय, पर्याय, धर्म, ये शब्दो एक ज अर्थना  
वाचक છે. અર્થાત્ જે કોઈ વ્યક્તિ મનઃપર્યવજ્ઞાનથી બાહ્ય વસ્તુના ધર્મનો વિચાર

પ્રકારાસ્તેષાં જ્ઞાનમ્ 'ઇદમિત્યંભૂતમનેન ચિન્તિતમ્' इत्येवंरूपं ज्ञानं मनःपर्यव-  
જ્ઞાનમિતિ જ્ઞાનશબ્દેન સહ ષષ્ઠીતત્પુરુષસમાસઃ ।

इदं चार्धतृतीयद्वीपसमुद्रान्तर्वर्तिसंज्ञिमनोगतद्रव्यालम्बनमेवेति भावः ।

इदमत्रावधेयम्-मनो द्विविधं-द्रव्यमनो भावमनश्च । तत्र द्रव्यमनो मनोवर्गणा,  
भावमनस्तु ता एव वर्गणा जीवेन गृहीताः सत्यो मन्यमानाश्चिन्त्यमाना भावमनो-  
ऽभिधीयते । तत्रेह भावमनः परिगृह्यते, तस्य भावमनसः पर्यायास्ते चैवंविधाः-  
यदा कश्चिदेवं चिन्तयेत्-'किं स्वभाव आत्मा?', ज्ञानस्वभावो रूपरहितः कर्ता  
सुखादीनामनुभविता' इत्यादयो ज्ञेयविषयाध्यवसायाः परगतास्तेषु तेषां वा  
यज्ज्ञानं तन्मनःपर्यायज्ञानम् । तानेव मनःपर्यायान् परमार्थतः समवबुध्यते । बाह्यांस्तु  
अनुमानादेवेति ।

करता है उसे उस वस्तुका स्पष्ट बोध होता है। इसमें भी इन्द्रिय और  
मनकी सहायता की आवश्यकता नहीं होती है। मनःपर्ययज्ञानी "इसने  
यह तथा इस प्रकार विचार किया है" यह बात बतला देता है।

इसका विषय अर्द्ध द्वीप एवं तदन्तर्गत समुद्रके भीतर रहे हुए संज्ञी  
पंचेन्द्रिय जीवोंका मनोगत द्रव्य हैं। मन, द्रव्यमन और भाव मनके भेदसे  
दो प्रकारका है। द्रव्यमन मनोवर्गणारूप है। यही वर्गणा जीवसे जब गृहीत  
हो जाती हैं और जीव जब उनका विचार करने लगता है तो उस  
विचारका नाम ही भावमन है, यहां मनसे भावमनका ग्रहण हुआ है।  
इस भावमनकी पर्याये इस प्रकार होती है-आत्माका क्या स्वभाव है?  
यह आत्मा ज्ञानस्वभाववाला है, रूपरहित एवं कर्ता और सुखादि-

કરે છે તેને તે વસ્તુનો સ્પષ્ટ બોધ થાય છે. તેમા પણ ઇન્દ્રિયો તથા મનની  
સહાયતાની જરૂર રહેતી નથી "આને આ વિચાર કર્યો છે તથા આ રીતે  
વિચાર કર્યો છે" તે વાત મનઃપર્યવજ્ઞાની બતાવી દે છે.

તેનો વિષય અર્ધાઈ દ્વીપ અને તેની અંદર આવેલા સમુદ્રની અંદર રહેલા  
સંજ્ઞી પંચેન્દ્રિય જીવોનું મનોગત દ્રવ્ય છે. દ્રવ્યમન અને ભાવમન એ ભેદથી મન  
એ પ્રકારનું છે. દ્રવ્યમન મનોવર્ગણારૂપ છે. આ જ વર્ગણા જ્યારે જીવથી  
ગૃહીત થઈ જાય છે અને જ્યારે જીવ તેમનો વિચાર કરવા લાગે છે ત્યારે એ  
વિચારનું નામ જ ભાવમન છે. અહીં મનથી ભાવમનનું ગ્રહણ થયું છે. એ  
ભાવમનની પર્યાયો આ પ્રમાણે હોય છે-આત્માનો કયો સ્વભાવ છે? આ આત્મા  
જ્ઞાન સ્વભાવવાળો છે, રૂપરહિત તથા કર્તા અને સુખાદિનો ભોક્તા છે. એ જ

### (૫) કેવલજ્ઞાનશબ્દાર્થઃ—

કેવલજ્ઞાનમિતિ । કેવલમ્=એકમ્-અસહાયમ્ इन्द्रियादिसाहाय्यानपेक्षणात् ૧ । યદ્વા-કેવલં=શુદ્ધં-નિર્મલં-સકલાવરણમલવ્યપગમસમુદ્ભૂતત્વાત્ ૨ । યદ્વા-કેવલં કોંકા ભોક્તા હૈ । યહી ભાવમનની પર્યાયેં હૈ । તાત્પર્ય-જિતની ખી વિચારધારાં હૈ વે સવ હી ભાવમનની પર્યાયે જાનના ચાહિયે । યે ભાવમનની પર્યાયેં નિજાત્મગત નહીં કિન્તુ પરમનોગત હી યહાં મનઃપર્યયજ્ઞાનકે પ્રકરણમેં ગૃહીત કી ગઈ હૈં । બાહ્યદ્રવ્યોંકી પર્યાયે તો અનુમાનસે હી જાની જા સકતી હૈં । નિષ્કર્ષ કેવલ ઇતના હી હૈ કિ પરમનોગત વિચારધારારૂપ પર્યાયોં કો સ્પષ્ટરૂપસે જાનનેવાલા જ્ઞાનકા નામ હી મનઃપર્યયજ્ઞાન હૈ ॥૪॥

### (૫) કેવલજ્ઞાન—

કેવલજ્ઞાનકા શબ્દાર્થ ઇસ પ્રકાર હૈ—જો એક-અસહાય જ્ઞાન હોતા હૈ ઉસકા નામ કેવલજ્ઞાન હૈ । યહાં કેવલ શબ્દકા અર્થ એક-અસહાય, એસા લિયા ગયા હૈ, ક્યોં કિ ઇસમેં ઇન્દ્રિય આદિકોંકી તથા અન્યજ્ઞાન કી અપેક્ષા નહીં રહતી હૈ, ઇસી લિયે ઇસે પરકી સહાયતાસે રહિત હોને કી વજહસે એક-અસહાય જ્ઞાન ગયા હૈ ૧ । અથવા જો શુદ્ધ જ્ઞાન હોતા હૈ વહ કેવલજ્ઞાન હૈ । યહાં કેવલ શબ્દકા અર્થ ‘શુદ્ધ’ લિયા ગયા હૈ,

ભાવમનની પર્યાયો છે. સારાંશ—જેટલી પણ વિચારધારાઓ છે તે બધીજ ભાવમનની પર્યાયો બાણુવી બેઠાં. તે ભાવમનની પર્યાયો જ નિજાત્મગત નહીં પણ પરમનોગત જ અહીં મનઃપર્યયજ્ઞાનના પ્રકરણમાં થઈ જકાઈ છે. બાહ્ય દ્રવ્યોની પર્યાયો તો અનુમાનથી જ બાણી શકાય છે. તાત્પર્ય ફક્ત આટલું જ છે કે બીજાના મનમાં રહેલી વિચારધારારૂપ પર્યાયોને સ્પષ્ટ રૂપથી બાણુનારા જ્ઞાનનું નામ જ મનઃપર્યયજ્ઞાન છે. ॥૪॥

### (૫) કેવળજ્ઞાન—

કેવળજ્ઞાનનો શબ્દાર્થ આ પ્રમાણે છેઃ—જે એક-અસહાય જ્ઞાન હોય છે તેનું નામ કેવળજ્ઞાન છે. અહીં કેવળ-શબ્દનો અર્થ એક-અસહાય એવો લીધો છે. કારણ કે તેમાં ઇન્દ્રિય વગેરેની તથા અન્યજ્ઞાનની આવશ્યકતા રહેતી નથી, તેથી તેને પરની સહાયતા વિનાનું હોવાના કારણે એક-અસહાય મનાયું છે ૧. અથવા જે શુદ્ધ જ્ઞાન હોય છે તે કેવળજ્ઞાન છે. અહીં ‘કેવળ શબ્દનો અર્થ



=સકલ-પરિપૂર્ણ, સંપૂર્ણજ્ઞેયગ્રાહિત્વાત્ ૩। યદ્વા-કેવલમ્=અસાધારણમ્, અનન્ય-સદૃશં, તાદૃશાઽપરજ્ઞાનાભાવાત્ ૪ । યદ્વા-કેવલમ્=અનન્તમ્ અપ્રતિપાતિત્વેન પર્યવસાનરહિતત્વાત્, જ્ઞેયાનન્તત્વાચ્ચ ૫। इत्येवमेकादिष्वर्थेषु केवलशब्दोऽत्र वर्तते। કેવલં ચ તજ્ઞાનં ચેતિ કેવલજ્ઞાનમ્ । આત્યન્તિક-નિરવશેષ-જ્ઞાનાવરણીયકર્મક્ષય-પ્રભવં કરતલકલિતનિસ્તુલસ્થૂલમુક્તાફલાયમાનયથાઽવસ્થિતાઽશેષભૂતભવદ્ભાવિ-ભાવસ્વભાવાવભાસકં જ્ઞાનં કેવલજ્ઞાનમ્ ।

કારણ કિ યહ જ્ઞાન સકલ આવરણોં કેક્ષય હોને પર હી હોતા હૈ ૨। અથવા-જો જ્ઞાન સમ્પૂર્ણ હોતા હૈ વહ કેવલજ્ઞાન હૈ । યહાં કેવલકા અર્થ સમ્પૂર્ણ એસા બતલાયા ગયા હૈ, કારણ કિ યહ જ્ઞાન સમ્પૂર્ણ પદાર્થોં કો રૂપી અરૂપી સમસ્ત ત્રિકાલવર્તી પદાર્થસમૂહ કો ગ્રહણ કરતા હૈ ૩। અથવા-જો જ્ઞાન અસાધારણ હોતા હૈ ઉસકા નામ કેવલજ્ઞાન હૈ । યહાં કેવલ શબ્દકા અર્થ અસાધારણ કિયા ગયા હૈ, કારણ કિ ઇસકે જૈસા ઓર કોઈ દૂસરા જ્ઞાન નહીં હોતા હૈ ૪ । અથવા જો જ્ઞાન અનંત હોતા હૈ ઉસકા નામ કેવલજ્ઞાન હૈ । યહાં કેવલકા અર્થ અનંત કિયા ગયા હૈ, કારણ કિ એક વાર આત્મામેં ઇસ જ્ઞાનકે હો જાને પર ફિર ઇસકા પ્રતિ-પાત નહીં હોતા હૈ । તથા અનંત જ્ઞેયોં કે જાનને સે ભી યહ અનંત માના ગયા હૈ ૫। ઇસ તરહ ઇન પાંચ અર્થોંવાલા જો જ્ઞાન હોતા હૈ વહી કેવલ-જ્ઞાન હૈ, એસા જાનના ચાહિયે । તાત્પર્ય ઇસકા યહી હૈ કિ ઇસ જ્ઞાનમેં જ્ઞાનાવરણીય કર્મકા સમૂલ ક્ષય હોતા હૈ । ભૂત ભવિષ્યત્ એવં વર્ત-

‘શુદ્ધ’ કર્યો છે. કારણ કે આ જ્ઞાન સર્વે આવરણો નષ્ટ થતાં જ થાય છે ૨. અથવા જે જ્ઞાન સંપૂર્ણ હોય છે તે કેવળજ્ઞાન છે. અહીં કેવળનો અર્થ સંપૂર્ણ દર્શાવાયો છે, કારણ કે આ જ્ઞાન સંપૂર્ણ પદાર્થોની-રૂપી, અરૂપી સમસ્ત ત્રિકાલવર્તી પદાર્થસમૂહને ગ્રહણ કરે છે ૩ અથવા જે જ્ઞાન અસાધારણ હોય છે તેનું નામ કેવળજ્ઞાન છે. અહીં કેવળ શબ્દનો અર્થ અસાધારણ કરાયો છે, કારણ કે તેના જેવું બીજું કોઈ જ્ઞાન નથી ૪. અથવા જે જ્ઞાન અનંત હોય છે તેનું નામ કેવળજ્ઞાન છે. અહીં કેવળનો અર્થ અનંત કરાયો છે, કારણ કે આત્મામાં એક વખત આ જ્ઞાન થયાં પછી તેનો નાશ થતો નથી. તથા અનંત જ્ઞેયોને બાણવાથી પણ તે અનંત મનાયું છું ૫. આ રીતે એ પાંચ અર્થોવાળું જે જ્ઞાન થાય છે એ જ કેવળજ્ઞાન છે, એવું બાણવું જોઈએ. તેનું તાત્પર્ય એ છે કે આ જ્ઞાનમાં જ્ઞાનાવરણીય કર્મોનો મૂળમાંથી જ ક્ષય થાય છે. ભૂત, ભવિષ્ય અને વર્તમાનકાળના સર્વે પદાર્થો હસ્તામલકવત્ તેમાં પ્રતિબિં-

કેવલજ્ઞાનં મત્યાદિનિરપેક્ષં ભવતિ, કેવલજ્ઞાનપ્રાદુર્ભાવે મત્યાદીનામસંભવાત્ ।  
નનુ કથં તદા મત્યાદીનામસંભવઃ ? , યદિ મતિજ્ઞાનાદીનિ સ્વસ્વાવરણક્ષયોપશમેઽપિ  
પ્રાદુર્ભવન્તિ, તર્હિ સર્વથા સ્વસ્વાવરણક્ષયે તુ તાનિ સુતરાં પ્રાદુર્ભવિણ્યન્તિ ચારિત્ર-  
પરિણામવત્ । ઉક્તશ્ચ—

“ આવરણદેસવિગમે, જાઈં વિજ્જંતિ મહસુયાઈણિ ।

આવરણસન્નવિગમે, કહ તાઈં ન હોંતિ જીવસ્સ ” ॥ ૧ ॥

છાયા—આવરણદેશવિગમે યાનિ વિઘનંતે મતિશ્રુતાદીનિ ।

આવરણસર્વવિગમે કથં તાનિ ન ભવન્તિ જીવસ્ય ॥ ૧ ॥

ઇતિ ચેત્, ઉચ્યતે—કથંચિન્મલસંપૃક્તસ્ય મરકતાદિમણેર્યાવત્ સર્વથા મલા-

માનકાલકે સમસ્તપદાર્થ હસ્તામલકવત્ હસમેં પ્રતિબિમ્બિત હોતે રહતે  
હૈં । તથા યહ કેવલજ્ઞાન મત્યાદિક ક્ષાયોપશમિક જ્ઞાનોં સે નિરપેક્ષ  
રહતા હૈ, કયોં કિ હસકી ઉત્પત્તિ હોને પર મત્યાદિક જ્ઞાન રહતે નહીં હૈં ।

શઙ્કા—કેવલજ્ઞાનકે સદ્ભાવમેં મત્યાદિકોંકા અસદ્ભાવ કયોં રહતા હૈ ?  
જય મત્યાદિક જ્ઞાન અપને ૨ આવરણોં કે ક્ષયોપશમ હોને પર હી હોતે હૈં  
તો યહ વાત માનને મેં ઔર અધિક સરલ પડ જાતી હૈ કિ જબ અપને ૨  
આવરણોં કા સર્વથા ક્ષય હો જાયગા તો વે અપને આપ હી પ્રગટ હોને  
લગેંગે જૈસે ચારિત્રપરિણામ હોતા હૈ । કહા મી હૈ—

“ આવરણદેસવિગમે, જાઈં વિજ્જંતિ મહસુયાઈણિ ।

આવરણસન્નવિગમે, કહ તાઈં ન હોંતિ જીવસ્સ ” ॥ ૧ ॥

હસ શઙ્કાકા ઉત્તર હસ પ્રકાર હૈ—જિસ પ્રકાર મલયુક્ત મણિસે જબ

ખિત થતાં રહે છે. તથા એ કેવળજ્ઞાન મત્યાદિક ક્ષાયોપશમિક જ્ઞાનોથી નિરપેક્ષ  
રહે છે, કારણ કે તેની ઉત્પત્તિ થતાં મત્યાદિક જ્ઞાન રહેતાં નથી.

શંકા :—કેવળજ્ઞાનના સદ્ભાવમાં મત્યાદિકોનો અસદ્ભાવ કેમ રહે છે ?  
જ્યારે મત્યાદિક જ્ઞાન પોતપોતાનાં આવરણોનો ક્ષયોપશમ થતાં જ થાય છે ત્યારે  
તે વાત માનવી વધુ સરળ પડે છે, કે જ્યારે પોત પોતાનાં આવરણોનો સદંતર  
ક્ષય થઈ જશે ત્યારે તેઓ આપો આપ જ પ્રગટ થવા લાગશે, જેવી રીતે ચારિત્ર  
પરિણામ હોય છે. કહ્યું પણ છે:—

“ આવરણદેસવિગમે, જાઈં વિજ્જંતિ મહસુયાઈણિ ।

આવરણસન્નવિગમે, કહ તાઈં ન હોંતિ જીવસ્સ ॥ ૧ ॥

એ શંકાનો ઉત્તર આ પ્રમાણે છે—જે રીતે મેલ વાળા મણીમાંથી જ્યાં



પગમો ન ભવતિ, તાવદ્ યથા યથા દેશતો મલવ્યપગમસ્તથા તથા દેશતસ્તત્સ્વરૂપાભિવ્યક્તિરુપજાયતે, સાઽપિ ક્વચિત્ કદાચિદ્ કથંચિત્ ભવતીત્યનેકવિધા, તથાઽઽત્મનોઽપિ કાલત્રયવર્તિસકલપદાર્થસાક્ષાત્કારકૈકપારમાર્થિકસ્વરૂપસ્યાપ્યનાદિકાલોપચિતજ્ઞાનાવરણીયકર્મમલપટલતિરોહિતસ્ય યાવત્ સર્વથા કર્મમલવ્યપગમો ન ભવતિ, તાવદ્ યથા યથા દેશતઃ કર્મમલક્ષ્યો જાયતે, તથા તથા દેશતસ્તસ્ય જ્ઞપ્તિઃ પ્રાદુર્ભવતિ । સાઽપિ ક્વચિત્ કદાચિત્ કથંચિદ્ ભવતીત્યનેકવિધા ભવતિ । ઉક્તશ્ચ-

તક સર્વથા મૈલકા અભાવ નહીં હોતા હૈ તવ તક જૈસે ઉસસે થોડે ૨ રૂપમેં મૈલકા અભાવ હોતા રહતા હૈ ઓર વહ મણિ ઉસ થોડે ૨ મૈલકે વિગમસે થોડે ૨ રૂપમેં અપને સ્વરૂપકી અભિવ્યક્તિ કરતા રહતા હૈ । યહ સ્વરૂપાભિવ્યક્તિ ઉસ મણિમેં સર્વદેશમેં ન હો કર ક્વચિત્ કદાચિત્ કથંચિત્ રૂપસે હોતી હૈ અતઃ યહ સ્વરૂપાભિવ્યક્તિ અનેકવિધ માની જાતી હૈ, ઉસી પ્રકાર કાલત્રયવર્તી સકલ પદાર્થોં કો સાક્ષાત્ જાનનેકા જિસકા પારમાર્થિક સ્વભાવ હૈ, ઓર યહ સ્વભાવ જિસકા અનાદિકાલસે લગે હુઽ જ્ઞાનાવરણીય કર્મપટલસે તિરોહિત હો રહા હૈ સો જવ તક આત્માસે સર્વથા કર્મમલકા વ્યપગમ નહીં હો જાતા હૈ તવ તક ઁક દેશસે જૈસા ૨ કર્મમલકા વિગમ હોતા રહતા હૈ વૈસે ૨ ઉસકે સ્વરૂપકી જ્ઞપ્તિ હોતી રહતી હૈ । યહ આત્માકે સ્વરૂપકી જ્ઞપ્તિ મી જીવકી ક્વચિત્ કદાચિત્ કથંચિત્ રૂપમેં હી હોતી હૈ, સર્વરૂપમેં નહીં, અતઃ યહ જ્ઞપ્તિ મી અનેકવિધ માની જાતી હૈ । કહા મી હૈ—

સુધી મેલનો સદંતર અભાવ થતો નથી ત્યાં સુધી જેમ તેનાથી થોડાં થોડાં પ્રમાણમાં મેલનો અભાવ થયા કરે છે અને તે મણી તે થોડા થોડા મેલના જવાથી થોડાં થોડા પ્રમાણમાં પોતાના સ્વરૂપની અભિવ્યક્તિ કરતો રહે છે. આ સ્વરૂપાભિવ્યક્તિ તે મણિમાં સર્વ દેશમાં ન હોતાં ક્વચિત્ (કોઈ કોઈ જગ્યાએ) કદાચિત્ (કોઈક વખતે) કથંચિત્ રૂપથી (કોઈ કોઈ પ્રકારે) હોય છે તેથી તે સ્વરૂપાભિવ્યક્તિ અનેક પ્રકારે મનાય છે. એજ પ્રમાણે ત્રિકાળવર્તી સર્વ પદાર્થોને સાક્ષાત્ જાણવાનો જેનો પારમાર્થિક સ્વભાવ છે, અને જેનો એ સ્વભાવ અનાદિકાળથી લાગેલા જ્ઞાનાવરણીય કર્મપટલથી તિરોહિત થઈ રહ્યો છે તે જ્યાં સુધી આત્મામાંથી કર્મમળનો સદંતર નાશ થઈ જતો નથી ત્યાં સુધી એક દેશથી જેમ જેમ કર્મમળ જતો જાય છે તેમ તેમ તેનાં સ્વરૂપની 'જ્ઞપ્તિ' (જાણ) થતી રહે છે. આ આત્માના સ્વરૂપની જાણ પણ જીવને ક્વચિત્, કદાચિત્ કથંચિત્ રૂપથી જ થાય છે, સમસ્ત રૂપે નહીં. તેથી આ જ્ઞપ્તિ—(જાણ) પણ અનેક પ્રકારે મનાય છે. કહ્યું પણ છે:—

“ મલવિદ્વમણિવ્યક્તિર્યથાઽનેકપ્રકારતઃ ।

કર્મવિદ્વાઽઽત્મવિજ્ઞસિસ્તથાઽનેકપ્રકારતઃ ” ॥૧॥

તદનેકવિધત્વં મતિશ્રુતાદિભેદાદ્ ભવતિ ।

યદા તુ તસ્ય મરકતમણેર્નિરવશેષમલવ્યપગમસ્તદા પરિસ્ફુટરૂપૈકાભિવ્યક્તિ-  
રૂપજાયતે, તદ્વદાત્મનોઽપિ જ્ઞાનદર્શનચારિત્રપ્રભાવતો નિરવશેષાવરણક્ષયે સતિ  
એકરૂપં પરિસ્ફુટં સર્વવસ્તુપર્યાયસાક્ષાત્કારકં જ્ઞાનમાર્વિર્ભવતિ । તથા ચોક્તમ્—

“ યથા જાત્યસ્ય રત્નસ્ય, નિઃશેષમલહાનિતઃ ।

સ્ફુટૈકરૂપાભિવ્યક્તિર્વિજ્ઞસિસ્તદ્વદાત્મનઃ ” ॥ ૧ ॥

તસ્માત્ કેવલજ્ઞાનં મત્યાદિનિરપેક્ષં ભવતીતિ સિદ્ધમ્ ।

“ મલવિદ્વમણિવ્યક્તિર્યથાઽનેકપ્રકારતઃ ।

કર્મવિદ્વાત્મવિજ્ઞસિસ્તથાઽનેકપ્રકારતઃ ॥ ૧ ॥ ”

યહ અનેકવિધ આત્મજ્ઞસિ હી મત્યાદિક ચાર જ્ઞાનસ્વરૂપ હૈ । જબ ઉસ  
મરકતમણિસે સમસ્ત રૂપમેં મલકા અપગમ હો જાતા હૈ તો જૈસે ઉસકે  
રૂપકી સ્ફુટરૂપમેં અભિવ્યક્તિ હો જાતી હૈ ઉસી તરહ આત્માકે ખી જ્ઞાનદ-  
ર્શનચારિત્રકે પ્રભાવસે સમ્પૂર્ણ રૂપમેં આવરણકે ક્ષય હોને પર એક સ્વરૂપકી  
કિ જો સર્વવસ્તુઓં એવં ઉનકી સમસ્ત પર્યાયોંકો વિશદરૂપસે સાક્ષા-  
ત્કાર કરનેવાલા હોતા હૈ અભિવ્યક્તિ હો જાતી હૈ । કહા ખી હૈ—

“ યથા જાત્યસ્ય રત્નસ્ય, નિઃશેષમલહાનિતઃ ।

સ્ફુટૈકરૂપાભિવ્યક્તિ, -વિજ્ઞસિસ્તદ્વદાત્મનઃ ” ॥૧॥

ઇસસે યહ સિદ્ધ હુઆ કિ-કેવલજ્ઞાન મત્યાદિનિરપેક્ષ હોતા હૈ ।

“ મલવિદ્વમણિવ્યક્તિ, -ર્યથાઽનેકપ્રકારતઃ ।

કર્મવિદ્વાત્મવિજ્ઞપ્તિ, -સ્તથાઽનેકપ્રકારતઃ ” ॥૧॥

આ અનેકવિધ આત્મજ્ઞસિ જ મત્યાદિક ચાર જ્ઞાન સ્વરૂપ છે. જ્યારે તે  
મરકતમણિમાંથી સંપૂર્ણ રીતે મેલનો નાશ થાય છે ત્યારે જેમ તેનાં રૂપની  
સ્પષ્ટ રીતે અભિવ્યક્તિ થાય છે તેજ પ્રમાણે જ્ઞાન-દર્શન-ચારિત્રના પ્રભાવથી  
આત્માના આવરણનો પણ સંપૂર્ણ રીતે ક્ષય થતાં એક સ્વરૂપની, કે જે સર્વવસ્તુઓ  
તેમજ તેમની સમસ્ત પર્યાયોનો વિશદરૂપથી સાક્ષાત્કાર કરનાર હોય છે, અભિવ્ય-  
ક્તિ થઈ જાય છે. કહ્યું પણ છે:-

“ યથા જાત્યસ્ય રત્નસ્ય, નિઃશેષમલહાનિતઃ ।

સ્ફુટૈકરૂપાભિવ્યક્તિ, -વિજ્ઞપ્તિસ્તદ્વદાત્મનઃ ” ॥૧॥

આથી એ સિદ્ધ થાય છે કે-કેવળજ્ઞાન મત્યાદિનિરપેક્ષ હોય છે.

નન્વવધ્યાદિજ્ઞાનતઃ પૂર્વ મતિશ્રુતજ્ઞાનનિર્દેશે કો હેતુઃ ?, અત્રોચ્યતે—ઇહ સ્વામિકાલકારણવિષયપરોક્ષત્વસામ્યાત્, તત્સત્ત્વે ચાવધ્યાદિજ્ઞાનસંભવાદાદાવેવ તયોરુપન્યાસ इति । તથાહિ—ય એવ મતિજ્ઞાનસ્ય સ્વામી સ એવ શ્રુતજ્ઞાનસ્યાપિ । તથા ચોક્તમ્—‘જત્ય મઙ્ગનાણં તત્થ સુચનાણં’ इति ।

તથા—યાવાન્ મતિજ્ઞાનસ્ય સ્થિતિકાલસ્તાવાનેવ શ્રુતજ્ઞાનસ્ય । યથા મતિજ્ઞાનં ક્ષયોપશમહેતુકં તથા શ્રુતજ્ઞાનમપિ । યથા ચ—મતિજ્ઞાનં દેશતઃ સર્વદ્રવ્યાદિવિષયં, તથા શ્રુતજ્ઞાનમપિ । યથા મતિજ્ઞાનં પરોક્ષં, તથા શ્રુતજ્ઞાનમપિ । મતિજ્ઞાનશ્રુતજ્ઞાનયોઃ સત્ત્વે એવ ચાવધિજ્ઞાનાદીનિ ભવન્તિ ।

શઙ્કા—અવધિ આદિ જ્ઞાનોં કે પહિલે જો મતિશ્રુતજ્ઞાનકા નિર્દેશ કિયા ગયા હૈં ઇસમેં ક્યા કારણ હૈં ? ।

ઉત્તર—ઇન દોનોંમેં પહિલે જો મતિશ્રુત જ્ઞાનકા નિર્દેશ કિયા ગયા હૈં ઉસમેં એક કારણ તો યહ હૈં કિ મતિજ્ઞાન એવં શ્રુતજ્ઞાન, ઇન દોનોંકે એક હી સ્વામી હોતે હૈં, ભિન્ન ૨ સ્વામી નહીં । તથા—ઇનકા કાલ ભી એક હી હૈં, ભિન્ન ૨ કાલ નહીં હૈં । તથા વિષયકી અપેક્ષા ભી ઇનમેં સમાનતા હૈં, અસમાનતા નહીં । તથા યે દોનોં જ્ઞાન પરોક્ષ હૈં । દૂસરા કારણ યહ હૈં કિ ઇનકે હોને પર હી અવધિ આદિ જ્ઞાન હોતે હૈં । કહા ભી હૈં—“જત્ય મઙ્ગનાણં તત્થ સુચનાણં” ।

જિસ આત્મામેં મતિજ્ઞાન હોતા હૈં ઉસી આત્મામેં શ્રુતજ્ઞાન હોતા હૈં । જિતના સ્થિતિકાલ મતિજ્ઞાનકા હૈં ઉતના હી સ્થિતિકાલ શ્રુતજ્ઞાનકા હૈં । મતિજ્ઞાન જિસ પ્રકાર મતિજ્ઞાનાવરણીય કર્મકે ક્ષયોપશમસે ઉત્પન્ન હોતા

શંકાઃ—અવધિ આદિ જ્ઞાનોમાં પહેલાં જે મતિ શ્રુત જ્ઞાનનો ઉદ્દેશ કરાયો છે તેનું શું કારણ છે ?

ઉત્તરઃ—એ જ્ઞાનોમાં પહેલાં જે માત્ર શ્રુત જ્ઞાનનો નિર્દેશ કરાયો છે તેનું એક કારણ તો એ છે કે મતિજ્ઞાન અને શ્રુતજ્ઞાન એ બન્નેનો એક જ સ્વામી હોય છે, અલગ અલગ સ્વામી હોતો નથી. વળી તેનો કાળ પણ એક જ છે, જુદો જુદો કાળ નથી. વળી વિષયની અપેક્ષાએ પણ એમાં સમાનતા છે—અસમાનતા નથી. તથા તે બન્ને જ્ઞાન પરોક્ષ છે. બીજું કારણ એ છે કે એ હોય તો જ અવધિ આદિ જ્ઞાન થાય છે. કહ્યું પણ છે:—

“જત્ય મઙ્ગનાણં તત્થ સુચનાણં” જે આત્મામાં મતિજ્ઞાન થાય છે એ જ આત્મામાં શ્રુતજ્ઞાન થાય છે. જેટલો સ્થિતિકાળ મતિજ્ઞાનનો છે એટલો જ સ્થિતિકાળ શ્રુતજ્ઞાનનો છે. મતિજ્ઞાન જે પ્રમાણે મતિજ્ઞાનાવરણીય કર્મના ક્ષયો-

નનુ મતિજ્ઞાનાનન્તરં શ્રુતજ્ઞાનનિર્દેશે કો હેતુઃ ?, ઉચ્યતે—શ્રુતજ્ઞાનસ્ય મતિપૂર્વક-  
ત્વાદ્ વિશિષ્ટમત્યંશરૂપત્વાદ્ વા શ્રુતજ્ઞાનં મતિજ્ઞાનાનન્તરમુપન્યસ્તમ્ । ઉક્તञ्च—

“મહ્નિપુઞ્વં જેણ સુયં, તેણાદીણ મહ્નિવિસિદ્ધો વા ।

મહ્નિમેઓ ચેવ સુયં, તો મહ્નિસમણંતરં મણિયં” ॥

છાયા—મતિપૂર્વં યેન શ્રુતં, તેનાદિતો મતિવિશિષ્ટં વા ।

મતિભેદશ્ચૈવ શ્રુતં, તતો મતિસમનન્તરં મણિતમ્ ॥

હૈં ઉસી પ્રકાર શ્રુતજ્ઞાન મી શ્રુતજ્ઞાનાવરણીય કર્મકે ક્ષયોપશમસે ઉત્પન્ન  
હોતા હૈં । જિસ પ્રકાર મતિજ્ઞાન સર્વ દ્રવ્યોંકો પરોક્ષરૂપસે વિષય કરતા  
હૈં ઉસી પ્રકાર શ્રુતજ્ઞાન મી વિષય કરતા હૈં । મતિજ્ઞાન જિસ પ્રકાર પરોક્ષ  
માના ગયા હૈં । ઉસી પ્રકાર શ્રુતજ્ઞાન મી પરોક્ષ માના ગયા હૈં । ઇન  
મતિજ્ઞાન ઇવં શ્રુતજ્ઞાનકે સદ્ભાવમેં હી અવધિજ્ઞાન આદિ હુઆ કરતે હૈં ।

શંકા—મતિજ્ઞાન કે બાદ શ્રુતજ્ઞાનકા જો પાઠ રક્ષા ગયા હૈં । ઉસમેં  
કયા કારણ હૈં ? ।

ઉત્તર—મતિજ્ઞાનકે બાદ શ્રુતજ્ઞાનકે પાઠ રક્ષામેં કારણ યહ હૈં કિ  
શ્રુતજ્ઞાન, મતિજ્ઞાનપૂર્વક હોતા હૈં, અથવા વહ મતિજ્ઞાનકા હી ઇક વિશિષ્ટ  
અંશ હૈં । કહા મી હૈં—

“મહ્નિપુઞ્વં જેણ સુયં, તેણાદીણ મહ્નિવિસિદ્ધો વા ।

મહ્નિમેઓ ચેવ સુયં, તો મહ્નિસમણંતરં મણિયં ॥ ૧ ॥”

પશમથી ઉત્પન્ન થાય છે એજ પ્રમાણે શ્રુતજ્ઞાન પણ શ્રુતજ્ઞાનાવરણીય કર્મના  
ક્ષયોપશમથી ઉત્પન્ન થાય છે. જે પ્રમાણે મતિજ્ઞાન સર્વે દ્રવ્યોને પરોક્ષ રૂપથી  
વિષય કરે છે એજ પ્રમાણે શ્રુતજ્ઞાન પણ વિષય કરે છે. જે રીતે મતિજ્ઞાન પરોક્ષ  
મનાયું છે એજ રીતે શ્રુતજ્ઞાન પણ પરોક્ષ મનાયું છે. એ મતિજ્ઞાન તથા શ્રુત-  
જ્ઞાનના સદ્ભાવમાં જ અવધિજ્ઞાન વગેરે થયા કરે છે.

શંકાઃ—મતિજ્ઞાનની પછી શ્રુતજ્ઞાનનો જે પાઠ રખાયો છે તેનું શું કારણ છે ?

ઉત્તર—મતિજ્ઞાનની પછી શ્રુતજ્ઞાનનો પાઠ રાખવાનું કારણ એ છે કે  
શ્રુતજ્ઞાન મતિજ્ઞાન સાથે થાય છે. અથવા તે મતિજ્ઞાનનો એક વિશિષ્ટ અંશ  
છે. કહ્યું પણ છે—

“મહ્નિપુઞ્વં જેણ સુયં, તેણાદીણ મહ્નિવિસિદ્ધો વા ।

મહ્નિમેઓ ચેવ સુયં, તો મહ્નિસમણંતરં મણિયં” ॥૧॥

નનુ મતિશ્રુતજ્ઞાનાનન્તરમવધિજ્ઞાનસ્યોપન્યાસે કો હેતુઃ?, ઉચ્યતે—કાલ-  
વિપર્યય—સ્વામિ—લાભતઃ સામ્યાદવધિજ્ઞાનસ્ય મતિશ્રુતાનન્તરં કથનમિતિ તથાહિ—

एकजीवापेक्षया, नानाजीवापेक्षया च मतिज्ञानश्रुतज्ञानयोर्यावान् स्थितिकालोऽस्ति, तावानवधिज्ञानस्यापि स्थितिकालोऽस्तीति कालतः साम्यम् । यथा च मिथ्यात्वोदये मतिश्रुतज्ञाने अज्ञानरूपं विपर्ययं प्रतिपद्येते, तथाऽवधिज्ञानमपीति विपर्ययसाम्यम् । तथा य एव मतिज्ञानश्रुतज्ञानयोः स्वामी स एवावधिज्ञानस्यापि स्वामी भवतीति स्वामिना साम्यम् । तथा विभङ्गज्ञानिनस्त्रिदशदेः सम्यग्दर्शन-  
प्राप्तौ युगपदेव ज्ञानत्रयलाभसंभवात् लाभतः साम्यम् ।

શક્કા—મતિજ્ઞાન એવં શ્રુતજ્ઞાનકે બાદ અવધિજ્ઞાનકા જો કથન સૂત્રમેં  
કિયા ગયા હૈં ઉસકા ક્યા કારણ હૈં ? ।

ઉત્તર—इसका कारण—काल, विपर्यय, स्वामी एवं लाभकी समा-  
नता है । इसका खुलासा इस प्रकार है—एक जीव अथवा नाना जीवोंकी  
अपेक्षा जितना मतिज्ञान एवं श्रुतज्ञानका स्थितिकाल है उतना ही स्थिति-  
काल अवधिज्ञानका भी है । यह कालकी अपेक्षा मतिज्ञान श्रुतज्ञानके  
साथ अवधिज्ञानकी समानता है । मिथ्यात्वके उदय होने पर जिस प्रकार  
मतिज्ञान एवं श्रुतज्ञान विपर्ययरूप हो जाते हैं उसी प्रकार अवधिज्ञान  
भी विपर्ययरूप हो जाता है । यह विपर्ययकी अपेक्षा इन दोनोंके साथ  
इसकी समानता है । मतिज्ञान एवं श्रुतज्ञानका जो स्वामी होता है वही  
अवधिज्ञानका भी स्वामी होता है । इस प्रकार स्वामीकी अपेक्षा इसमें  
उनके साथ समानता घट जाती है । विभङ्गज्ञानी देव आदिको सम्यग्द-

શંકા—મતિજ્ઞાન અને શ્રુતજ્ઞાનની પછી અવધિ જ્ઞાનનું જે કથન સૂત્રમાં  
કરાયું છે તેનું શું કારણ છે ?

ઉત્તર—એનું કારણ—કાળ, વિપર્યય, સ્વામી અને લાભની સમાનતા છે. તેનો  
ખુલાસો આ પ્રમાણે છે:—એક જીવ અથવા અનેક જીવોની અપેક્ષાએ જેટલો  
મતિજ્ઞાન અને શ્રુતજ્ઞાનનો સ્થિતિકાળ છે એટલો જ સ્થિતિકાળ અવધિજ્ઞાનનો  
પણ છે. આ કાળની અપેક્ષાએ મતિજ્ઞાન, શ્રુતજ્ઞાનની સાથે અવધિજ્ઞાનની સમા-  
નતા છે. મિથ્યાત્વનો ઉદય થતાં જે રીતે મતિજ્ઞાન અને શ્રુતજ્ઞાન વિપર્યયરૂપ  
થઈ જાય છે તે જ પ્રમાણે અવધિજ્ઞાન પણ વિપર્યયરૂપ થઈ જાય છે. એ  
વિપર્યયની અપેક્ષાએ તે બન્નેની સાથે તેની સમાનતા છે. મતિજ્ઞાન અને  
શ્રુતજ્ઞાનનો જે સ્વામી હોય છે તે જ અવધિજ્ઞાનનો પણ સ્વામી હોય છે. આ  
રીતે સ્વામીની અપેક્ષાએ તેમાં તેમની સાથે સમાનતા બંધાયેલતી થઈ જાય છે.

તથા—છદ્વસ્થવિષયભાવપ્રત્યક્ષત્વસાધર્મ્યાદવધિજ્ઞાનનન્તરં મનઃપર્યવજ્ઞાનસ્ય કથનમ્ । તથાહિ—યથાઽવધિજ્ઞાનં છદ્વસ્થસ્ય ભવતિ, તદ્વન્મનઃપર્યવજ્ઞાનમપિ છદ્વસ્થસ્યૈવેતિ છદ્વસ્થસામ્યમ્ । તથા—યથાઽવધિજ્ઞાનં રૂપિદ્રવ્યવિષયમ્, તથા મનઃપર્યવજ્ઞાનમપિ સામાન્યેનેતિ વિષયસામ્યમ્ । યથાઽવધિજ્ઞાનં ક્ષાયોપશમિકે ભાવે, તથા મનઃપર્યવજ્ઞાનમપીતિ ભાવતઃ સામ્યમ્ । યથાઽવધિજ્ઞાનં પ્રત્યક્ષં, તથા મનઃપર્યવજ્ઞાનમપીતિ પ્રત્યક્ષતયા સામ્યમ્ ।

જ્ઞાનકી પ્રાપ્તિ હોને પર યુગપત્ ઉસે મતિજ્ઞાન, શ્રુતજ્ઞાન એવં અવધિજ્ઞાનકા લાભ હો જાતા હૈ, યહ લાભકી અપેક્ષા સમાનતા હૈ ।

તથા—છદ્વસ્થ, વિષય, ભાવ, પ્રત્યક્ષત્વકી સમાનતા કી અપેક્ષાકો લેકર અવધિજ્ઞાનકે બાદ મનઃપર્યવજ્ઞાનકા સૂત્રમેં નિર્દેશ કિયા ગયા હૈ ।-જિસ પ્રકાર અવધિજ્ઞાન છદ્વસ્થ જીવોંકો હોતા હૈ ઉસી પ્રકાર મનઃપર્યવજ્ઞાન ભી ઉન્હીં જીવોંકો હોતા હૈ । યહ અવધિજ્ઞાન ઓર મનઃપર્યવજ્ઞાનકી છદ્વસ્થકી અપેક્ષા સમાનતા હૈ । અવધિજ્ઞાન જિસ પ્રકાર રૂપી દ્રવ્યકો વિષય કરતા હૈ ઉસી પ્રકાર મનઃપર્યવજ્ઞાન ભી રૂપી દ્રવ્યોંકો વિષય કરતા હૈ । યહ વિષયકી અપેક્ષા દોનોંમેં સમાનતા હૈ । ક્ષાયોપશમિકભાવમેં જિસ પ્રકાર અવધિ જ્ઞાનકો ગિનાયા ગયા હૈ ઉસી પ્રકાર મનઃપર્યવજ્ઞાન કો ભી ક્ષાયોપશમિક ભાવમેં ગિનાયા ગયા હૈ । યહ ભાવકી અપેક્ષા સમાનતા હૈ । અવધિજ્ઞાન જિસ પ્રકાર આત્મજન્ય હોનેસે પ્રત્યક્ષ માના જાતા હૈ ઉસી પ્રકાર ઇન્દ્રિય ઓર મનકી સહાયતા

વિભંગજ્ઞાની દેવ આદિને સમ્યગ્દર્શનની પ્રાપ્તિ થતાં યુગપત્ (એકીસાથે) તેને મતિજ્ઞાન, શ્રુતજ્ઞાન અને અવધિજ્ઞાનનો લાભ થઈ જાય છે, આ લાભની અપેક્ષાએ સમાનતા છે.

તથા—છદ્વસ્થ, વિષય, ભાવ, પ્રત્યક્ષત્વની સમાનતાની અપેક્ષાએ અવધિજ્ઞાનની પછી મનઃપર્યવજ્ઞાનનો સૂત્રમાં નિર્દેશ કરાયો છે. જે રીતે અવધિજ્ઞાન છદ્વસ્થ જીવોને થાય છે એ જ રીતે મનઃપર્યવજ્ઞાન પણ એ જ જીવોને થાય છે આ અવધિજ્ઞાન અને મનઃપર્યવજ્ઞાનની છદ્વસ્થની અપેક્ષાએ સમાનતા છે. અવધિજ્ઞાન જે પ્રમાણે રૂપી દ્રવ્યોને વિષય કરે છે એ જ પ્રમાણે મનઃપર્યવજ્ઞાન પણ રૂપી દ્રવ્યોને વિષય કરે છે. આ વિષયની અપેક્ષાએ બન્નેમાં સમાનતા છે. ક્ષાયોપશમિક ભાવમાં જે પ્રમાણે અવધિજ્ઞાન ગણાવ્યું છે એ જ પ્રમાણે મનઃપર્યવજ્ઞાનને પણ ક્ષાયોપશમિક ભાવમાં ગણાવ્યું છે. આ લાભની અપેક્ષાએ સમાનતા છે. અવધિજ્ઞાન જે રીતે આત્મજન્ય હોવાથી પ્રત્યક્ષ મનાય છે. એ જ રીતે મનઃપર્યવજ્ઞાન પણ ઇન્દ્રિય અને મનની સહાયતા વિના કંઈ



તથા—અપ્રમત્તસંયતસ્વામિસામ્યાત્ વિપર્યયાભાવસામ્યાચ્ચ, મનઃપર્યવજ્ઞાના-  
નન્તરં કેવલજ્ઞાનમુપન્યસ્તમ્ । તથાહિ—યથા મનઃપર્યવજ્ઞાનં પ્રમાદરહિતસ્યૈવ ભાવ-  
મુનેર્ભવતિ, તથા કેવલજ્ઞાનમપિ તાદૃશસ્યૈવ ભાવમુનેર્ભવતીતિ સ્વામિસામ્યમ્ ।  
યથા ચ—મનઃપર્યવજ્ઞાનં વિપર્યયજ્ઞાનં ન ભવતિ, તથા કેવલજ્ઞાનમપીતિ વિપર્યયા-  
ભાવસામ્યમ્ ।

કિંચ—મત્યાદિજ્ઞાનચતુષ્ટયાપેક્ષયા ઉત્તમત્વાત્, અવસાને લાભાચ્ચ કેવલજ્ઞાનં  
ચરમમિતિ । કેવલજ્ઞાનસ્યાતીતાનાગતવર્તમાનનિઃશેષજ્ઞેયસ્વરૂપાવભાસિત્વાદુત્ત-

કે ચિના કેવલ આત્માસે જન્ય હોનેકી વજહસે મનઃપર્યવજ્ઞાન ભી પ્રત્યક્ષ  
માના ગયા હૈ । યહ્ ઇન દોનોંમેં પ્રત્યક્ષત્વકી અપેક્ષા સમાનતા હૈ ।

તથા—અપ્રમત્તસંયતસ્વામી, તથા અવિપર્યયકી અપેક્ષાસે સમાનતા  
હોનેસે મનઃપર્યવજ્ઞાનકે બાદ કેવલજ્ઞાનકા પાઠ રક્ષા હૈ । મનઃપર્યવજ્ઞાન  
જિસ પ્રકાર અપ્રમત્ત ભાવમુનિકે હોતા હૈ ઉસી તરહ્ કેવલજ્ઞાન ભી  
અપ્રમત્તભાવમુનિકે હોતા હૈ । યહ્ સ્વામીકી અપેક્ષા સમાનતા હૈ । મનઃ-  
પર્યવજ્ઞાન જિસ પ્રકાર વિપર્યયસે રહિત હોતા હૈ ઉસી પ્રકાર કેવલજ્ઞાનમેં  
ભી વિપર્યય નહીં હોતા હૈ । યહ્ અવિપર્યયકી અપેક્ષાસે સમાનતા હૈ ।

દૂસરે—કેવલજ્ઞાનકો જો સવસે અન્તમેં રક્ષા ગયા હૈ ઉસમેં કારણ યહ્  
હૈ કિ યહ્ જ્ઞાન મત્યાદિક ચાર જ્ઞાનોંકી અપેક્ષા ઉત્તમ હૈ, તથા ઇન સવકે  
અન્તમેં હી ઇસકી પ્રાપ્તિ હોતી હૈ । ઇન જ્ઞાનોંકી અપેક્ષા ઉત્તમતા ઇસમેં  
ઇસલિયે હૈ કિ ઇસ જ્ઞાનમેં અતીત, અનાગત, તથા વર્તમાનકાલીન સમસ્ત  
જ્ઞેય પદાર્થોં કા અવભાસન હોતા હૈ । તથા જિસ જીવકો ચાર જ્ઞાન

આત્મજન્ય હોવાથી પ્રત્યક્ષ મનાય છે. આ બન્નેમાં પ્રત્યક્ષત્વની અપેક્ષાએ  
સમાનતા છે.

તથા—અપ્રમત્તસંયતસ્વામી, તથા અવિપર્યયની અપેક્ષાએ સમાનતા  
હોવાથી મનઃપર્યવ જ્ઞાનની પછી કેવળજ્ઞાનનો પાઠ રાખ્યો છે. મનઃપર્યવજ્ઞાન  
ને પ્રમાણે અપ્રમત્ત ભાવમુનિને થાય છે એ જ રીતે કેવળજ્ઞાન પણ અપ્રમત્ત ભાવ-  
મુનિને થાય છે આ સ્વામીની અપેક્ષાએ સમાનતા છે. મનઃપર્યવજ્ઞાન ને રીતે  
વિપર્યયરહિત હોય છે એ જ રીતે કેવળજ્ઞાનમાં પણ વિપર્યય થતો  
નથી. આ અવિપર્યયની અપેક્ષાએ સમાનતા છે. બીજું કેવળજ્ઞાનને જે બધાની  
અંતે રાખવામાં આવ્યું છે તેનું કારણ એ છે કે એ જ્ઞાન મત્યાદિક ચાર જ્ઞાનો  
કરતાં ઉત્તમ છે અને એ બધાને અંતે જ તેની પ્રાપ્તિ થાય છે. એ જ્ઞાનો  
કરતાં તેમાં ઉત્તમતા એથી છે કે આ જ્ઞાનમાં ભૂત, ભવિષ્ય અને વર્તમાન

મત્વમ્ । તથા યઃ પશ્ચવિધં જ્ઞાનં પ્રાપ્નોતિ સોઽપ્યન્ત એવેદં લભતે, इत्येवं केवल-  
જ્ઞાનમન્તે નિર્દિષ્ટમ્ ॥ સૂ૦ ૧ ॥

મૂલમ્—તં સમાસઓ દુવિહં પળ્લત્તં, તં જહા—પચ્ચક્કમ્  
ચ પરોક્કમ્ ચ ॥ સૂ૦ ૨ ॥

છાયા—તત્ સમાસતો દ્વિવિધં પ્રજ્ઞસમ્ । તદ્ યથા—પ્રત્યક્ષં ચ પરોક્ષં ચ ॥૨॥

ટીકા—‘તં સમાસઓ’ઇત્યાદિ । તત્ પૂર્વોક્તં પશ્ચવિધં જ્ઞાનં, સમાસતઃ=સંક્ષેપેણ,  
દ્વિવિધં પ્રજ્ઞપ્તં=પરૂપિતમ્ । તદ્ યથા—પ્રત્યક્ષં ચ પરોક્ષં ચ । અયં ભાવઃ—તદેતત્ પશ્ચવિધમપિ  
જ્ઞાનં દ્વે પ્રમાણે ભવતઃ, પ્રત્યક્ષં પરોક્ષં ચેતિ । પશ્ચવિધેષુ જ્ઞાનેષ્વધિજ્ઞાનાદિકં ત્રયં  
પ્રત્યક્ષમ્, આભિનિવોધિકજ્ઞાનં શ્રુતજ્ઞાનં ચેતિ દ્વયં પરોક્ષમિતિ ।

અથ પ્રત્યક્ષશબ્દાર્થઃ—

નનુ પ્રત્યક્ષમિત્યસ્ય કઃ શબ્દાર્થઃ ?, ઉચ્યતે—અશ્નુતે=જ્ઞાનાત્મના સર્વાનર્થાન્  
પ્રાપ્ત હો ચુકે હૈં ઉસ જીવકો હી અન્તમેં કેવલજ્ઞાનકા લાભ હોતા  
હૈ ॥ સૂ૦ ૧ ॥

‘તં સમાસઓ’ ઇત્યાદિ ।

(તત્) વહ પૂર્વોક્ત પાંચ પ્રકારકા જ્ઞાન (સમાસતઃ) સંક્ષેપસે  
(દ્વિવિધં) દો પ્રકારકા (પ્રજ્ઞસમ્) કહા ગયા હૈ । (તદ્ યથા) વે દો  
પ્રકાર યે હૈ—(પ્રત્યક્ષં ચ પરોક્ષં ચ) પ્રત્યક્ષ ઓર પરોક્ષ । इनमें अव-  
ધિજ્ઞાન મનઃપર્યવજ્ઞાન તથા કેવલજ્ઞાન, યે પ્રત્યક્ષ હૈં । મતિજ્ઞાન ઓર  
શ્રુતજ્ઞાન યે દો જ્ઞાન પરોક્ષ હૈં ।

પ્રત્યક્ષ શબ્દકા અર્થ

શંકા—પ્રત્યક્ષ-શબ્દકા કયા અર્થ હૈ ? ।

કાળના સર્વે જ્ઞેય પદાર્થોનો આભાસ થાય છે તથા જે જીવને આર જ્ઞાન પ્રાપ્ત  
થઈ ચૂકયાં છે તે જીવને જ છેવટે કેવળજ્ઞાનનો લાભ થાય છે ॥ સૂ૦ ૧ ॥

‘તં સમાસઓ’ ઇત્યાદિ.

(તત્) પૂર્વોક્ત પાંચ પ્રકારનાં તે જ્ઞાન (સમાસતઃ) ટુંકાણુમાં (દ્વિવિધં)  
જે પ્રકારના (પ્રજ્ઞસમ્) કહેવાયા છે. (તદ્ યથા) તે જે પ્રકાર આ છે—  
(પ્રત્યક્ષં ચ પરોક્ષં ચ) પ્રત્યક્ષ અને પરોક્ષ. તેઓમાં અવધિજ્ઞાન, મનઃપર્યવજ્ઞાન  
અને કેવળજ્ઞાન તે પ્રત્યક્ષ છે. મતિજ્ઞાન અને શ્રુતજ્ઞાન એ જે જ્ઞાન અપરોક્ષ છે.

પ્રત્યક્ષ શબ્દનો અર્થ

શંકા—પ્રત્યક્ષ શબ્દનો શો અર્થ છે ?



વ્યાપ્નોતીત્યક્ષો જીવઃ । ‘અશૂઙ્ વ્યાપ્નો’ ઇત્યસ્માદૌણાદિકઃ સક્-પ્રત્યયઃ । અક્ષં= જીવં પ્રતિ સાક્ષાદ્ ગતમ્, અન્યનિરપેક્ષં વર્તતે યદ્ જ્ઞાનં, તત્પ્રત્યક્ષમ્ । ‘અત્યાદયઃ ક્રાન્તાદ્યર્થે દ્વિતીયયા’ ઇતિ વાર્તિકેન સમાસઃ । અવધિ-મનઃપર્યવ-કેવલાનિ ત્રીણિ પ્રત્યક્ષાત્મકાનિ જ્ઞાનાનિ, અન્યાનપેક્ષતયા સાક્ષાદર્થબોધકત્વેન તેષાં જીવં પ્રતિ સાક્ષાદ્વર્તિત્વાત્ । इह ‘च’-शब्दः स्वगताऽनेकभेदसंसूचकः ।

ઉત્તર-પ્રત્યક્ષ-શબ્દકા અર્થ હૈ જો ઇન્દ્રિયાદિકોંકી સહાયતાકે વિના કેવલ આત્માકી હી સહાયતાસે ઉત્પન્ન હોતા હૈ વહ જ્ઞાન પ્રત્યક્ષ હૈ । પ્રત્યક્ષમેં પ્રતિ+અક્ષ, એસે દો શબ્દ હૈ । ‘અક્ષ’ યહ શબ્દ “અશૂઙ્-વ્યાપ્નો” ઇસ વ્યાપ્ત્યર્થક ‘અશૂઙ્’ ધાતુસે ઔણાદિક ‘સક્’-પ્રત્યય કરને પર બનતા હૈ । “અક્ષં પ્રતિ વર્તતે તત્ પ્રત્યક્ષમ્” અર્થાત્-જો જ્ઞાન જીવકે પ્રતિ અન્ય નિરપેક્ષ હોકર રહતા હૈ વહ પ્રત્યક્ષ હૈ, એસા ઇસકા ફલિતાર્થ હોતા હૈ । “અત્યાદયઃ ક્રાન્તાદ્યર્થે દ્વિતીયયા” ઇસ વાર્તિકસે યહાં દ્વિતીયા વિભક્તિકે સાથ સમાસ હુઆ હૈ । અવધિજ્ઞાન, મનઃપર્યવ-જ્ઞાન તથા કેવલજ્ઞાન, યે ત્રીન જ્ઞાન પ્રત્યક્ષસ્વરૂપ ઇસ લિયે કહે ગયે હૈં કિ ઇનમેં ઇન્દ્રિયાદિક અન્ય પદાર્થોં કી સહાયતા કી અપેક્ષા નહીં રહતી હૈ, તથા ઇનકી સહાયતાકે વિના હી યે સ્પષ્ટરૂપસે અપને વિષયભૂત પદાર્થ કો ગ્રહણ કરતે હૈં, ઇસલિયે ઇન્હેં જીવકે પ્રતિ સાક્ષાદ્વર્તી કહા ગયા હૈ । સૂત્રમેં જો “ચ” શબ્દ આયા હૈ વહ પ્રત્યક્ષગત અનેક ભેદોંકા યોધક હૈ ।

ઉત્તર—જે ઇન્દ્રિયોની મદદ વિના કેવળ આત્માની મદદથી જ ઉત્પન્ન થાય છે તે જ્ઞાન પ્રત્યક્ષ છે. પ્રત્યક્ષમાં પ્રતિ+અક્ષ એ બે શબ્દો છે. ‘અક્ષ’ આ શબ્દ “અશૂઙ્ વ્યાપ્નો” આ વ્યાપ્ત્યર્થક “અશૂઙ્” ધાતુથી ઔણાદિક સક્ પ્રત્યય કરતાં બને છે. “અક્ષં પ્રતિ વર્તતે તત્ પ્રત્યક્ષમ્” એટલે કે જે જ્ઞાન જીવોમાં અન્યનિરપેક્ષ (બીજાની અપેક્ષારહિત) થઈને રહે છે તે પ્રત્યક્ષ છે, એવો તેનો અર્થ ફલિત થાય છે. “અત્યાદયઃ ક્રાન્તાદ્યર્થે દ્વિતીયયા” આ વાર્તિકથી અહીં બીજી વિભક્તિ સાથે સમાસ થયો છે. અવધિજ્ઞાન, મનઃપર્યવજ્ઞાન, તથા કેવળજ્ઞાન એ ત્રણ જ્ઞાન પ્રત્યક્ષસ્વરૂપ એ માટે કહેવાયાં છે કે તેઓમાં ઇન્દ્રિયાદિક બીજાં પદાર્થોની સહાયતાની આવશ્યકતા રહેતી નથી, તથા તેમની મદદ વિના જ તે પોતાના વિષયભૂત પદાર્થને સ્પષ્ટરૂપે ગ્રહણ કરે છે, તેથી તેમને જીવની તરફ સાક્ષાદ્વર્તી કહેવાયાં છે. સૂત્રમાં જે ‘ચ’ શબ્દ આવ્યો તે પ્રત્યક્ષગત અનેક ભેદોનો યોધક છે.

### અથ પ્રત્યક્ષલક્ષણમ્—

इह प्रत्यक्षलक्षणमुच्यते—मतिश्रुताभ्यां यदन्यत् त्रिविधं ज्ञानं तत् प्रत्यक्षम् । यत् प्राणिनां ज्ञानदर्शनावरणयोः क्षयोपशमात् क्षयाच्च इन्द्रियानिन्द्रियनिरपेक्षमात्मानमेव केवलमाश्रित्योत्पद्यते तत् प्रत्यक्षमिति निष्कर्षः । तच्चावध्यादि । एतत्त्रयं प्रत्यक्षं निश्चयनयेनेति बोध्यम् । व्यवहारतस्तु चक्षुरादीन्द्रियजन्यं ज्ञानं प्रत्यक्षम् । अस्मिन् पक्षे 'अक्ष'—शब्द इन्द्रियार्थकः, अक्षम्—इन्द्रियं प्रति गतं, प्रत्यक्षम्, इन्द्रियाधीनतया यदुत्पद्यते तत् प्रत्यक्षमिति ।

### પ્રત્યક્ષકા લક્ષણ

इस प्रकार प्रत्यक्ष शब्दका अर्थ कह कर अब प्रत्यक्षका लक्षण स्पष्ट किया जाता है, वह इस प्रकार है—मतिज्ञान और श्रुतज्ञानसे अन्य जो तीन प्रकारके ज्ञान हैं वे प्रत्यक्ष हैं । अर्थात्—जो ज्ञान प्राणियों के ज्ञानावरण एवं दर्शनावरणके क्षयोपशम से तथा क्षय से इन्द्रिय और अनिन्द्रिय निरपेक्ष होकर केवल आत्मा को आश्रित करके उत्पन्न होता है वह प्रत्यक्ष है, ऐसा जानना चाहिये । यह प्रत्यक्ष अवधि आदि तीन ज्ञान हैं । इन तीन ज्ञानोंको जो प्रत्यक्ष कहा है वह निश्चयनयकी अपेक्षा से ही कहा है । व्यवहार की अपेक्षासे तो चक्षु आदि पांच इन्द्रियोंसे जो ज्ञान होता है वह प्रत्यक्ष कहा जाता है । व्यवहारनयकी अपेक्षा से जब इन्द्रियजन्य ज्ञान को प्रत्यक्ष कहा जाता है तो इस स्थितिमें अक्ष—शब्द इन्द्रिय अर्थका बोधक होता है । इसका तात्पर्य यह होता है कि जो ज्ञान इन्द्रियोंकी अधीनता से उत्पन्न है वह प्रत्यक्ष है ।

### પ્રત્યક્ષ શબ્દનું લક્ષણ

આ પ્રમાણે પ્રત્યક્ષ શબ્દનો અર્થ કહીને હવે પ્રત્યક્ષનું લક્ષણ સ્પષ્ટ કરવામાં આવે છે. તે આ પ્રમાણે છે:—મતિજ્ઞાન અને શ્રુતજ્ઞાન સિવાયનાં જે ત્રણ પ્રકારનાં જ્ઞાન છે તે પ્રત્યક્ષ છે. એટલે કે જે જ્ઞાન પ્રાણીઓનાં જ્ઞાનાવરણ અને દર્શનાવરણના ક્ષયોપશમ તથા ક્ષયથી ઇન્દ્રિય અને અનિન્દ્રિય નિરપેક્ષ થઈને ક્ષત આત્માને આશ્રિત કરીને ઉત્પન્ન થાય છે તે પ્રત્યક્ષ છે. એમ માનવું જોઈએ. આ પ્રત્યક્ષ અવધિ આદિ ત્રણ જ્ઞાન છે. એ ત્રણ જ્ઞાનોને જે પ્રત્યક્ષ કહ્યાં છે તે નિશ્ચયનયની અપેક્ષાએ જ કહ્યાં છે. વ્યવહારની અપેક્ષાએ તો ચક્ષુ વગેરે પાંચ ઇન્દ્રિયોથી જન્ય જે જ્ઞાન હોય છે તે પ્રત્યક્ષ કહેવાય છે. વ્યવહારનયની અપેક્ષાએ જ્યારે ઇન્દ્રિયજન્ય જ્ઞાનને પ્રત્યક્ષ કહેવાય છે ત્યારે આ સ્થિતિમાં 'અક્ષ' શબ્દ ઇન્દ્રિય અર્થનો બોધક હોય છે. એનું તાત્પર્ય એ હોય છે કે જે જ્ઞાન ઇન્દ્રિયોની અધીનતાથી ઉત્પન્ન થાય છે તે પ્રત્યક્ષ છે.

નનુ પ્રતિપૂર્વાદક્ષિશબ્દાત્ ‘પ્રતિપરસમનુભ્યોઽક્ષણઃ’ ઇત્યવ્યયીભાવસમાસાન્તે ટચિ પ્રત્યયે પ્રત્યક્ષમિતિ સિધ્ધ્યતિ તદત્ર કિં તત્પુરુષસમાસાશ્રયણેન ?

ન ચૈવં સ્પર્શનાદિપ્રત્યક્ષ પ્રત્યક્ષશબ્દસ્યાર્થો ન સ્યાદિતિ વાચ્યમ્, અત્ર હિ વ્યુત્પત્તિનિમિત્તમાત્રપ્રદર્શનાર્થમક્ષિશબ્દઃ પ્રયુજ્યતે, પ્રત્યક્ષશબ્દસ્ય પ્રવૃત્તિનિમિત્તં તુ સ્પર્શનાદિપ્રત્યક્ષેઽપ્યસ્તીતિ તત્ર પ્રત્યક્ષશબ્દવાચ્યતોપપત્તેઃ । કથમન્યથાઽક્ષ-શબ્દોપાદાનેઽપ્યનિન્દ્રિયપ્રત્યક્ષસ્ય પ્રત્યક્ષશબ્દવાચ્યતોપપત્તિઃ સ્યાત્ ।

ન ચાવ્યયીભાવસમાસાઙ્ગીકારે ‘પ્રત્યક્ષોઽયં ઘટઃ, પ્રત્યક્ષા ચૈયં લતા’ ઇત્યા-

શંકા-જબ પ્રતિપૂર્વક અક્ષિ શબ્દસે “પ્રતિ-પર-સમનુભ્યોઽક્ષણઃ” ઇસ સૂત્રસે અવ્યયીભાવસમાસાન્તટ્-પ્રત્યય હોને પર પ્રત્યક્ષ શબ્દ સિદ્ધ હોતા હૈ તો યહાં તત્પુરુષસમાસ કરનેકી આવશ્યકતા હી કયા હૈ ? । યદિ ઇસ પર એસા કહા જાવે કિ અક્ષિ-શબ્દસે અવ્યયીભાવ-સમાસાન્તટ્પ્રત્યય કરને પર જબ પ્રત્યક્ષ શબ્દકી સિદ્ધિ કી જાવેગી તો એસી હાલતમેં સ્પર્શનાદિ પ્રત્યક્ષ, પ્રત્યક્ષ-શબ્દકે વાચ્યાર્થ નહીં હો સકેંગે સો એસી આશંકા બી ઉચિત નહીં હૈ, કારણ કિ યહાં કેવલ વ્યુત્પત્તિ-નિમિત્ત દિશ્વલ્લાને કે લિયે હી અક્ષિ-શબ્દકા પ્રયોગ કિયા ગયા હૈ । પ્રત્યક્ષ શબ્દકા પ્રવૃત્તિનિમિત્ત તો સ્પર્શનાદિપ્રત્યક્ષમેં બી હૈ હી, ઇસ-લિયે વહાં પ્રત્યક્ષ-શબ્દવાચ્યતા વન જાવેગી । નહીં તો અક્ષ શબ્દકે ઉપાદાનમેં બી અનિન્દ્રિયપ્રત્યક્ષમેં પ્રત્યક્ષશબ્દવાચ્યતા કેસે આ સકેગી ।

યદિ ફિર એસી શંકા કી જાવે કિ-જબ અવ્યયીભાવ સમાસ સ્વીકૃત

શંકા-—ન્યારે પ્રતિપૂર્વક અક્ષિ શબ્દથી “પ્રતિ-પર-સમનુભ્યોઽક્ષણઃ” આ સૂત્રથી અવ્યયીભાવસમાસાન્ત ‘ટ્’ પ્રત્યય હોવાથી પ્રત્યક્ષ શબ્દ સિદ્ધ થાય છે તો અહીં તત્પુરુષસમાસ કરવાની આવશ્યકતા જ શી છે ? જો અહીં એવું કહેવાય કે ‘અક્ષિ’ શબ્દથી અવ્યયીભાવસમાસાન્ત ‘ટ્’ પ્રત્યય કરવાથી ન્યારે પ્રત્યક્ષ શબ્દની સિદ્ધિ કરાશે ત્યારે એવી હાલતમાં સ્પર્શનાદિપ્રત્યક્ષ પ્રત્યક્ષ શબ્દના વાચ્યાર્થ થઈ શકશે નહીં, તો એવી આશંકા પણ યોગ્ય નથી, કારણ કે અહીં ફક્ત વ્યુત્પત્તિનિમિત્ત બતાવવાને માટે જ અક્ષિ શબ્દનો પ્રયોગ કરાયો છે. પ્રત્યક્ષ શબ્દનું પ્રવૃત્તિનિમિત્ત તો સ્પર્શનાદિપ્રત્યક્ષમાં પણ છે જ, તેથી ત્યાં પ્રત્યક્ષશબ્દવાચ્યતા બની જશે. નહીં તો અક્ષ શબ્દના ઉપાદાનમાં પણ અનિન્દ્રિયપ્રત્યક્ષમાં પ્રત્યક્ષશબ્દવાચ્યતા કેવી રીતે આવી શકશે ?

જો ફરીથી એવી શંકા કરવામાં આવે કે ન્યારે અવ્યયીભાવ સમાસ

દયઃ પ્રયોગા ન સ્યુઃ, અવ્યયીભાવસ્ય સદા નપુંસકત્વાદિતિ વાચ્યમ્, પ્રત્યક્ષમ-  
સ્યાસ્તીત્યર્થેઽર્શ આદિત્વાદચ્-પ્રત્યયે કૃતે તત્સિદ્ધિસંભવાદિતિ ચેત્ અત્રોચ્યતે—  
एवमपि ‘प्रत्यक्षो बोधः’ ‘प्रत्यक्षा बुद्धिः’ इत्यादिप्रयोगाणां साधुत्वं न स्यात्,  
न ह्यत्र मत्वीयार्थो घटते, प्रत्यक्षात्मकज्ञानस्यैव बोधबुद्धिशब्दाभ्यामभिधानादिह  
तत्पुरुषसमासाश्रयणमेव श्रेय इति ।

કિયા જાયગા તો “પ્રત્યક્ષોઽયં ઘટઃ પ્રત્યક્ષા ચેયં લતા” ઇત્યાદિક  
પ્રયોગ નહીં બન સકેંગે, કારણ કિ જો અવ્યયીભાવ સમાસ હોતા હૈ  
વહ સદા નપુંસકલિંગ હોતા હૈ સો એસી આશંકા મી ઠીક નહીં હૈ,  
કારણ કિ “પ્રત્યક્ષમસ્યાસ્તીતિ” ઇસ અર્થમેં “અર્શઆદિભ્યોઽચ્” ઇસ  
સૂત્રદ્વારા અચ્-પ્રત્યય હોને પર “પ્રત્યક્ષઃ પ્રત્યક્ષા” ઇન શબ્દોં કી સિદ્ધિ  
હો જાતી હૈ તો ફિર તત્પુરુષ સમાસ કી આવશ્યકતા નહીં રહતી ।

ઉત્તર-અવ્યયીભાવ સમાસ કી સિદ્ધિકે નિમિત્ત એસા સમાધાન  
દેના ઠીક નહીં હૈ । કારણ કિ એસા માનને પર મી “પ્રત્યક્ષો બોધઃ”  
“પ્રત્યક્ષા બુદ્ધિઃ” ઇત્યાદિ પ્રયોગોંમેં સાધુતા નહીં આ સકતી હૈ, કયોં  
કિ યહાં મત્વીય અર્થ ઘટિત હી નહીં હોતા હૈ । યહાં તો પ્રત્યક્ષાત્મક  
જ્ઞાનકા હી બોધ એવં બુદ્ધિ શબ્દોં કે દ્વારા કથન કિયા ગયા હૈ, ઇસ  
લિયે “પ્રત્યક્ષ” યહાં તત્પુરુષસમાસ હી ઠીક માનના ચાહિયે; અવ્ય-  
યીભાવ સમાસ નહીં ।

સ્વીકૃત કરવામાં આવશે તો “પ્રત્યક્ષોઽયં ઘટઃ, પ્રત્યક્ષા ચેયં લતા” વગેરે પ્રયોગ  
બની શકશે નહીં, કારણ કે જે અવ્યયીભાવ સમાસ હોય છે તે સદા નાન્યેતર  
બલિમાં હોય છે તો એવી આશંકા પણ બરાબર નથી, કારણ કે “પ્રત્યક્ષમ-  
સ્યાસ્તીતિ” આ અર્થમાં ‘અર્શ આદિભ્યોઽચ્’ આ સૂત્રદ્વારા ‘અચ્’ પ્રત્યય  
હોવાથી ‘પ્રત્યક્ષઃ પ્રત્યક્ષા’ એ શબ્દોની સિદ્ધિ થઈ જાય છે તો પછી તત્પુરુષ  
સમાસની આવશ્યકતા રહેતી નથી.

ઉત્તર—અવ્યયીભાવ સમાસની સિદ્ધિના નિમિત્તે એવું સમાધાન દેવું  
બરાબર નથી, કારણ કે એવું માનવા છતાં પણ ‘પ્રત્યક્ષો બોધઃ’ ‘પ્રત્યક્ષા બુદ્ધિઃ’  
વગેરે પ્રયોગોમાં સાધુતા આવી શકતી નથી, કારણ કે અહીં મત્વીય અર્થ  
બંધખેસતો જ થતો નથી, અહીં તો પ્રત્યક્ષાત્મક જ્ઞાનનું બોધ અને બુદ્ધિ શબ્દોના  
દ્વારા કથન કરાયું છે. તેથી ‘પ્રત્યક્ષ’ અહીં તત્પુરુષસમાસ જ યોગ્ય માનવો  
જોઈએ, અવ્યયીભાવ સમાસ નહીં.

અથ પરોક્ષશબ્દાર્થઃ—

નનુ પરોક્ષમિત્યસ્ય કોઽર્થઃ ? , ઉચ્યતે—પરાણિ=અક્ષાપેક્ષયા ભિન્નાનિ દ્રવ્યેન્દ્રિય દ્રવ્યમનાંસિ પુદ્ગલમયત્વેન રૂપિત્વાત્, તેભ્યઃ પરેભ્યોઽક્ષસ્ય જીવસ્ય યદુત્પદ્યતે, તત્પરોક્ષમ્ । પરનિમિત્તત્વાત્ પરોક્ષમિતિ જિનમતે પરિભાષિતમ્ ॥સૂ૦૨॥

મૂલમ્—સે કિં તં પચ્ચક્કલં ? । પચ્ચક્કલં દુવિહં પન્નત્તં; તં જહા—ઇંદિયપચ્ચક્કલં, નોઇંદિયપચ્ચક્કલં ચ ॥ ૩ ॥

છાયા—અથ કિં તત્ પ્રત્યક્ષમ્ ? । પ્રત્યક્ષં દ્વિવિધં પ્રજ્ઞપ્તમ્ । તદ્ યથા—ઇન્દ્રિય-પ્રત્યક્ષં નોઇન્દ્રિયપ્રત્યક્ષં ચ ॥ ૩ ॥

‘ સે કિં તં પચ્ચક્કલં ’ ઇત્યાદિ ।

ટીકા—‘ સે ’ ઇતિ મગધદેશપ્રસિદ્ધોઽથશબ્દાર્થકઃ । તત્=પૂર્વમુપદિષ્ટં, પ્રત્યક્ષં કિમ્ ? પૂર્વોક્તસ્ય પ્રત્યક્ષસ્ય કિંસ્વરૂપમ્ ? ઇતિ શિષ્યસ્ય પ્રશ્નવાક્યમ્ । ઉત્તરમાહ—

પરોક્ષ શબ્દકા અર્થ—

પરોક્ષ શબ્દ કા અર્થ હસ પ્રકાર હૈ—આત્માસે ભિન્ન દ્રવ્યેન્દ્રિય એવં દ્રવ્યમન હૈ, કયોં કિ યે પુદ્ગલમય હોનેસે રૂપી હૈ । આત્મા અપૌદ્ગલિક હોનેસે રૂપી નહીં હૈ । હસ અક્ષ—આત્મા—સે જો પર દ્રવ્યેન્દ્રિય એવં દ્રવ્યમન હૈ યનેસે જીવ કો—આત્મા કો—જો જ્ઞાન ઉત્પન્ન હોતા હૈ વહ પરોક્ષ હૈ, પ્રત્યક્ષમેં પરનિમિત્તસે જ્ઞાન ઉત્પન્ન નહીં હોતા, કિન્તુ પરોક્ષમેં નિમિત્તસે જ્ઞાન ઉત્પન્ન હોતા હૈ હસલિયે ડસકા નામ પરોક્ષ હૈ । એસા જિનેન્દ્ર દેવકા આદેશ હૈ ॥સૂ૦૨॥

‘ સે કિં તં પચ્ચક્કલં ’ ઇત્યાદિ ।

પૂર્વોક્ત પ્રત્યક્ષકા કયા સ્વરૂપ હૈ ? હસ પ્રકાર શિષ્યકા પ્રશ્ન સુન—

પરોક્ષ શબ્દનો અર્થ—

પરોક્ષ શબ્દનો અર્થ આ પ્રમાણે છે—દ્રવ્યેન્દ્રિય અને દ્રવ્યમન આત્માથી ભિન્ન છે. કારણ કે તેઓ પુદ્ગલમય હોવાથી રૂપી છે. આત્મા અપૌદ્ગલિક હોવાથી રૂપી નથી. આ અક્ષ—આત્માથી પર જે દ્રવ્યેન્દ્રિય અને દ્રવ્યમન છે આવા જીવ—આત્માને જે જ્ઞાન ઉત્પન્ન થાય છે તે પરોક્ષ છે. પ્રત્યક્ષમાં બીજાનાં નિમિત્તથી જ્ઞાન ઉત્પન્ન થતું નથી પણ પરોક્ષમાં બીજાનાં નિમિત્તથી જ્ઞાન ઉત્પન્ન થાય છે તેથી તેનું નામ પરોક્ષ છે. એવો જિનેન્દ્ર દેવનો આદેશ છે ॥સૂ ૨॥

“ સે કિં તં પચ્ચક્કલં ” ઇત્યાદિ.

પૂર્વોક્ત પ્રત્યક્ષનું શુ સ્વરૂપ છે ? આ પ્રશ્નનો શિષ્યનો પ્રશ્ન સાંભળીને

—‘ पञ्चकखं दुविहं पन्नत्तं ’ इत्यादि । प्रत्यक्षं द्विविधं=द्विप्रकारकं, प्रज्ञप्तं=प्ररूपितं तीर्थङ्करैरिति भावः । तद् यथा=तद्-द्वैविध्यं यथाऽस्ति तथा कथयामीत्यर्थः । इन्द्रियप्रत्यक्षं, नोइन्द्रियप्रत्यक्षं चेति भेदद्वयेन प्रत्यक्षं द्विविधमित्यर्थः । इह द्रव्यभावरूपं द्विविधमिन्द्रियं गृह्यते, एकस्याप्यभावे इन्द्रियप्रत्यक्षत्वाऽनुपपत्तेः । तत्रेन्द्रियस्य प्रत्यक्षमिन्द्रियप्रत्यक्षम्, इन्द्रियनिमित्तकम् इन्द्रियसम्बन्धि वा यत् प्रत्यक्षं, तदिन्द्रियप्रत्यक्षम् । नोइन्द्रियप्रत्यक्षम् यद् इन्द्रियप्रत्यक्षं न भवति, तत् नोइन्द्रियप्रत्यक्षम् । नोशब्दः सर्वनिषेधवाची, तेन मनसोऽपि कथञ्चिदिन्द्रियत्वा-ङ्गीकारात् तन्निमित्तकं यद् ज्ञानं तत् परमार्थतः प्रत्यक्षं न भवतीति सिद्धम् ॥सू० ३॥  
इन्द्रियप्रत्यक्षस्य पञ्चविधत्वमाह—‘ से किं तं इन्द्रियपञ्चकखं ’ इत्यादि ।

कर गुरु महाराज अब उसका उत्तर देनेका उपक्रम करते हुए कहते हैं कि हे शिष्य ! तीर्थंकरोंने प्रत्यक्ष दो प्रकार का बतलाया है वह इस प्रकार है—

१ इन्द्रियप्रत्यक्ष और २ नोइन्द्रियप्रत्यक्ष । इन्द्रियप्रत्यक्ष वह है जो द्रव्य-इन्द्रिय और भाव-इन्द्रिय के द्वारा होता है । द्रव्यइन्द्रिय एवं भाव इन्द्रिय इन दोनोंमेंसे किसी एक के अभावमें इन्द्रियप्रत्यक्ष ज्ञान उत्पन्न नहीं हो सकता है । जिसमें इन इन्द्रियों की सहायता की अपेक्षा नहीं होती है वह नोइन्द्रियप्रत्यक्ष है । नोइन्द्रियमें ‘नो’ शब्द सर्व इन्द्रियों के निषेध का वाचक है । इससे यह सिद्ध हुआ कि अगर मनको भी कथंचित् इन्द्रियस्वरूप मान लिया जाय तो भी तज्जन्य ज्ञान परमार्थसे प्रत्यक्ष नहीं है ॥सू० ३॥

अब इन्द्रियप्रत्यक्ष को कहते हैं—‘ से किं तं इन्द्रियपञ्चकखं ’ इत्यादि ।

गुहमहाराज तेनो उत्तर देवानो उपक्रम करतां कडे छे के डे शिष्य ! तीर्थ-  
करोअे ‘ प्रत्यक्ष ’ जे प्रकारना बताव्यां छे ते आ प्रमाणे छे—(१) इन्द्रिय  
प्रत्यक्ष अने (२) नोइन्द्रियप्रत्यक्ष. इन्द्रियप्रत्यक्ष अे छे के जे द्रव्य इन्द्रिय  
अने भावइन्द्रियना द्वारा थाय छे. द्रव्यइन्द्रिय अने भावइन्द्रिय, अे जन्मेमांथी  
अेकना अभावमां इन्द्रियप्रत्यक्ष ज्ञान उत्पन्न थर्छ शकतुं नथी. जेमां अे  
इन्द्रियोनी सहायतानी अपेक्षा रहती नथी ते नोइन्द्रियप्रत्यक्ष छे. नो  
इन्द्रियमां ‘ नो ’ शब्द सर्वे इन्द्रियोना निषेधनो वाचक छे, आथी अे साबित  
थयुं के जे मनने पणु कथंचित् इन्द्रियस्वरूप मानवामां आवे तो पणु  
तज्जन्य ज्ञान परमार्थथी प्रत्यक्ष नथी ॥ सू० ३ ॥

डवे इन्द्रियप्रत्यक्षने कडे छे—‘ से किं तं इन्द्रियपञ्चकखं ’ इत्यादि.



મૂલમ્—સે કિં તં ઇંદિયપચ્ચક્ખં ? ઇંદિયપચ્ચક્ખં પંચવિહં  
પણત્તં, તં જહા—સોઇંદિયપચ્ચક્ખં ૧, ચર્વિંલદિયપચ્ચક્ખં ૨,  
ઘાણિંદિયપચ્ચક્ખં ૩, જિર્વિંમદિયપચ્ચક્ખં ૪, ફાસિંદિય-  
પચ્ચક્ખં ૫, સે તં ઇંદિયપચ્ચક્ખં ॥ સૂ. ૪ ॥

છાયા—અથ કિં તદિન્દ્રિયપ્રત્યક્ષમ્ ? । ઇન્દ્રિયપ્રત્યક્ષં પञ્ચવિધં પ્રજ્ઞસં,  
તદ્ યથા—શ્રોત્રેન્દ્રિયપ્રત્યક્ષં ૧, ચક્ષુરિન્દ્રિયપ્રત્યક્ષં ૨, ઘ્રાણેન્દ્રિયપ્રત્યક્ષં ૩,  
જિહ્વેન્દ્રિયપ્રત્યક્ષં ૪, સ્પર્શેન્દ્રિયપ્રત્યક્ષં ૫, તદેતદ્ ઇન્દ્રિયપ્રત્યક્ષમ્ ॥મૂ. ૪॥

ટીકા—‘ સે-અથ ’ ઇતિ પ્રશ્નમૂલકઃ । તત્-પૂર્વોક્તમ્ ઇન્દ્રિયપ્રત્યક્ષં, કિમ્ ૧,  
પૂર્વોક્તસ્ય ઇન્દ્રિયપ્રત્યક્ષસ્ય કિં સ્વરૂપમિતિ । ઉત્તરમાહ—ઇન્દ્રિયપ્રત્યક્ષં પञ્ચવિધં  
પ્રજ્ઞસમ્ । તદ્ યથા—શ્રોત્રેન્દ્રિયપ્રત્યક્ષમિત્યાદિ । શ્રોત્રેન્દ્રિયપ્રત્યક્ષં, શ્રોત્રેન્દ્રિયપ્રત્યક્ષં=  
શ્રોત્રન્દ્રિયનિમિત્તકમિત્યર્થઃ । શ્રોત્રેન્દ્રિયં નિમિત્તીકૃત્ય ચદુત્પન્નં જ્ઞાનં તત્  
શ્રોત્રેન્દ્રિયપ્રત્યક્ષમિતિ ભાવઃ । એવં ચક્ષુરિન્દ્રિયપ્રત્યક્ષાદિષુ ભાવનીયમ્ । તત્-

શિષ્ય ગુરુ મહારાજ સે પ્રશ્ન કર રહા હૈ કિ હે ગુરુ મહારાજ !  
ઇન્દ્રિયપ્રત્યક્ષકા કયા સ્વરૂપ હૈ । ઉત્તરમેં ગુરુ મહારાજ કહતે હૈં કિ  
ઇન્દ્રિયપ્રત્યક્ષ પાંચ પ્રકારકા કહા હૈ વહ ઇસ પ્રકાર હૈ—જો પ્રત્યક્ષ  
શ્રોત્રેન્દ્રિયકે નિમિત્તસે હોતા હૈ વહ શ્રોત્રેન્દ્રિય-પ્રત્યક્ષ હૈ, અર્થાત્  
શ્રોત્રેન્દ્રિયકો નિમિત્ત કરકે જો જ્ઞાન ઉત્પન્ન હોતા હૈ વહ શ્રોત્રેન્દ્રિય  
પ્રત્યક્ષ હૈ ૧ । ઇસી પ્રકાર ચક્ષુ આદિ ઇન્દ્રિયોંસે હોને વાલે જ્ઞાનમેં તત્તદિ-  
ન્દ્રિયપ્રત્યક્ષતા સમજ લેની ચાહિયે, અર્થાત્ ચક્ષુ-ઇન્દ્રિયસે ઉત્પન્ન હુએ  
જ્ઞાનકો ચક્ષુ-ઇન્દ્રિય-પ્રત્યક્ષ ૨, ઘ્રાણ-ઇન્દ્રિયસે ઉત્પન્ન હુએ જ્ઞાનકો  
ઘ્રાણેન્દ્રિય-પ્રત્યક્ષ ૩, જિહ્વા-ઇન્દ્રિયસે ઉત્પન્ન જ્ઞાનકો જિહ્વેન્દ્રિય-પ્રત્યક્ષ ૪,

શિષ્ય ગુરુમહારાજને પ્રશ્ન કરે છે કે હે ગુરુમહારાજ ! ઇન્દ્રિયપ્રત્યક્ષનું  
શું સ્વરૂપ છે ? ઉત્તરમાં ગુરુમહારાજ કહે છે કે ઇન્દ્રિયપ્રત્યક્ષ પાંચ પ્રકારનાં  
કલાં છે. તે આ પ્રમાણે છે:—(૧) જે શ્રોત્રેન્દ્રિયનાં નિમિત્તથી પ્રત્યક્ષ થાય છે  
તે શ્રોત્રેન્દ્રિયપ્રત્યક્ષ છે એટલે કે શ્રોત્રેન્દ્રિયને નિમિત્ત કરીને જે જ્ઞાન ઉત્પન્ન  
થાય છે તે શ્રોત્રેન્દ્રિયપ્રત્યક્ષ છે એ જ પ્રમાણે ચક્ષુ આદિ ઇન્દ્રિયોથી થનારાં  
જ્ઞાનમાં તે તે ઇન્દ્રિયની પ્રત્યક્ષતા સમજ લેવી જોઈએ. એટલે કે—( ૨ ) ચક્ષુ  
ઇન્દ્રિયથી ઉત્પન્ન થયેલાં જ્ઞાનને ચક્ષુઇન્દ્રિયપ્રત્યક્ષ (૩) ઘ્રાણેન્દ્રિયથી ઉત્પન્ન  
થયેલાં જ્ઞાનને ઘ્રાણેન્દ્રિયપ્રત્યક્ષ (૪) જિહ્વા ઇન્દ્રિયથી ઉત્પન્ન થયેલાં જ્ઞાનને

અનન્તરોક્તમ્, એતત્-પશ્ચવિધં, પ્રત્યક્ષમ્ ઇન્દ્રિયપ્રત્યક્ષં ભવતીતિ શેષઃ । એતન્ચ પશ્ચવિધં પ્રત્યક્ષમ્ વ્યવહારાદુચ્યતે, ન તુ પરમાર્થતઃ ।

નન્વેતત્ પશ્ચવિધં પ્રત્યક્ષં વ્યાહારિકમિત્યત્ર કિં પ્રમાણમ્? ઇતિ ચેત્ ઉચ્યતે-અસ્ત્યત્રાગમપ્રમાણમ્, તથાહિ-ઈહૈવાગ્રે પ્રત્યક્ષભેદાભિધાનાનન્તરં વક્ષ્યતે । ‘પરોક્ષં દુવિહં પળ્ળત્તં, તં જહા-આભિણિવોહિયણાણપરોક્ષં ચ સુચણાણપરોક્ષં ચ’ ઇતિ ।

તત્રાભિનિવોધિકજ્ઞાનમવગ્રહાદિરૂપમ્, અવગ્રહાદયશ્ચ શ્રોત્રેન્દ્રિયાઘાશ્રિતાસ્તથા વર્ણિતાઃ, તદ્ યદિ શ્રોત્રાદીન્દ્રિયાશ્રિતં જ્ઞાનં પરમાર્થતઃ પ્રત્યક્ષ, તત્ કથમવગ્રહાદયઃ

તથા સ્પર્શન-ઇન્દ્રિયસે ઉત્પન્ન હુએ જ્ઞાનકો સ્પર્શનેન્દ્રિય-પ્રત્યક્ષ ૫ જાનના ચાહિયે । ઇસ પ્રકાર ઇન પાંચ ઇન્દ્રિયોંસે જો મી જ્ઞાન હોતા હૈ વહ સબ ઇન્દ્રિયપ્રત્યક્ષ હૈ, એસા વ્યવહારકી અપેક્ષા જાનના ચાહિયે, પરમાર્થકી અપેક્ષાસે નહીં ।

શંકા-ઇન્દ્રિયોંસે ઉત્પન્ન યહ પાંચ પ્રકાર કા પ્રત્યક્ષ વ્યાવહારિક પ્રત્યક્ષ હૈ, પારમાર્થિક પ્રત્યક્ષ નહીં હૈ, ઇસમેં કયા પ્રમાણ હૈ ?

ઉત્તર-ઇન્દ્રિયોંસે હોનેવાલા જ્ઞાન વાસ્તવમેં પ્રત્યક્ષ નહીં હૈ કિન્તુ પરોક્ષ હૈ, ઇસ કથનમેં આગમપ્રમાણ હૈ । યહીં પર આગે પ્રત્યક્ષ કે ભેદ કથન કે વાદ સૂત્રકાર એસા સૂત્ર કહેંગે-“પરોક્ષં દુવિહં પળ્ળત્તં તં જહા-આભિણિવોહિયણાણપરોક્ષં સુચણાણપરોક્ષં ચ” પરોક્ષજ્ઞાન દો પ્રકાર હૈ-એક આભિનિવોધિકજ્ઞાન ઓર દૂસરા શ્રુતજ્ઞાન । અવગ્રહ, ઈહા આદિ રૂપ આભિનિવોધિક જ્ઞાન હોતા હૈ । અવગ્રહાદિક જ્ઞાન શ્રોત્ર આદિ

જીહ્વેન્દ્રિયપ્રત્યક્ષ તથા (૫) સ્પર્શનેન્દ્રિયથી ઉત્પન્ન થયેલાં જ્ઞાનને સ્પર્શનેન્દ્રિય પ્રત્યક્ષ જાણવું જોઈએ. આ પ્રમાણે તે પાંચ ઇન્દ્રિયોથી જે કોઈ જ્ઞાન થાય છે તે સર્વે ઇન્દ્રિયપ્રત્યક્ષ છે એમ વ્યવહારની અપેક્ષાએ જાણવું જોઈએ. પરમાર્થની અપેક્ષાએ નહીં.

શંકાઃ—ઇન્દ્રિયોથી ઉત્પન્ન થતું આ પાંચ પ્રકારનું પ્રત્યક્ષ વ્યવહારિક પ્રત્યક્ષ છે પારમાર્થિક પ્રત્યક્ષ નહીં તેની સાબિતી શી છે ?

ઉત્તરઃ—ઇન્દ્રિયો વડે થનારું જ્ઞાન વાસ્તવમાં પ્રત્યક્ષ નહીં પણ પરોક્ષ છે. આ કથનમાં આગમ પ્રમાણરૂપ છે. અહીં આગળ પ્રત્યક્ષના ભેદ ક્યાં પછી સૂત્રકાર આવું સૂત્ર કહેશે-“પરોક્ષં દુવિહં પળ્ળત્તં તં જહા-આભિણિવોહિયણાણપરોક્ષં સુચણાણપરોક્ષં ચ” પરોક્ષ જ્ઞાન બે પ્રકારનું છે (૧) આભિનિવોધિક જ્ઞાન અને બીજું શ્રુતજ્ઞાન. અવગ્રહ, ઈર્ષા આદિરૂપ આભિનિવોધિક જ્ઞાન હોય છે. અવગ્રહાદિક જ્ઞાન શ્રોત્ર આદિ ઇન્દ્રિયોને આશ્રિત છે. જે એ



પરોક્ષત્વેનાગ્રે વર્ણિતાઃ ? । તસ્માદુત્તરત્રેન્દ્રિયાશ્રિતજ્ઞાનસ્ય પરોક્ષત્વેન વર્ણનાદિદં નિશ્ચીયતે—‘ ઇન્દ્રિયાશ્રિતજ્ઞાનં સંવ્યવહારમધિકૃત્ય પ્રત્યક્ષમુક્તં ન તુ પરમાર્થતઃ ઇતિ । કિન્ચ—ઇન્દ્રિયમનોનિમિત્તકં મતિશ્રુતાભ્યામન્યત્ કિમપિ જ્ઞાનં ભવતીતિ ચેત્ તર્હિ પ્ઠજ્ઞાનપ્રસંગાદાગમવિરોધઃ સ્યાદિતિ પરમાર્થતઃ પરોક્ષમેવેદમિતિ ।

નન્વિહ લોકે વાહ્યધૂમાદિहेतुकं यज्ज्ञानं, तदेव परोक्षमिति प्रसिद्धं, नत्विन्द्रिय-जन्यं, कथं तर्हि परमार्थतोऽस्य परोक्षत्व मन्यसे ? इति चेत्,

इन्द्रियोंके आश्रित हैं । यदि ये श्रोत्र आदि इन्द्रियाश्रित ज्ञान परमार्थतः प्रत्यक्ष माने गये होते तो फिर इन अवग्रहादिकों के आगे जो परोक्षरूपसे वर्णित किया गया है वह क्यों करते ? प्रत्यक्षरूपसे ही उनका वर्णन करना चाहिये था, सो ऐसा नहीं है, इसलिये आगे आनेवाले इस इन्द्रियाश्रित ज्ञानके परोक्षरूपसे वर्णन होनेकी वजहसे यह निश्चित हो जाता है कि इन्द्रियाश्रित ज्ञानमें जो प्रत्यक्षता मानी जाती है वह व्यवहारकी अपेक्षासे ही मानी जाती है, परमार्थकी अपेक्षासे नहीं ।

फिरभी—इन्द्रिय और मनके निमित्तसे होने वाला ज्ञान मतिज्ञान एवं श्रुतज्ञानसे भिन्न और दूसरा कोई ज्ञान माना जाय तो छ प्रकारका ज्ञान मानना पड़ेगा, और छ प्रकार का ज्ञान मानना आगमविरुद्ध होगा, इसलिये यह ज्ञान वस्तुतः परोक्ष ज्ञान ही है, प्रत्यक्ष ज्ञान नहीं ।

શંકા—લોકમાં તો એવી વાત દેખી જાય છે કે જો જ્ઞાન વાહ્ય ધૂમાદિક ચિહ્નોની સહાયતાસે હોતા હોય તો પરીક્ષા માનવામાં આવે છે કે જે જ્ઞાન વાહ્ય

શ્રોત્ર આદિ ઇન્દ્રિયાશ્રિત જ્ઞાન પરમાર્થતઃ પ્રત્યક્ષ મનાયાં હોત તો પછી તે અવગ્રહાદિકોને આગળ જે પરીક્ષરૂપથી વર્ણિત કરાયાં છે તે શા માટે કહેત ? પ્રત્યક્ષરૂપથી જ તેમનું વર્ણન કરવું જોઈતું હતું. પણ એવું નથી તેથી આગળ આવનારું આ ઇન્દ્રિયાશ્રિત જ્ઞાનના પરીક્ષ રૂપે વર્ણન થવાના કારણે આ ચોક્કસ થઈ જાય છે કે ઇન્દ્રિયાશ્રિત જ્ઞાનમાં જે પ્રત્યક્ષતા મનાય છે તે વ્યવહારની અપેક્ષાએ જ મનાય છે, પરમાર્થની અપેક્ષાએ નહીં.

વળી ઇન્દ્રિય અને મનનાં નિમિત્તથી થતું જ્ઞાન, મતિજ્ઞાન અને શ્રુતજ્ઞાનથી ભિન્ન ફરી બીજું કોઈ જ્ઞાન માનવામાં આવે તો જ્ઞાન છ પ્રકારનું માનવું પડશે, પણ છ પ્રકારનું જ્ઞાન માનવું તે આગમવિરુદ્ધનું ગણાશે, તેથી આ જ્ઞાન વસ્તુતઃ પરીક્ષજ્ઞાન જ છે, પ્રત્યક્ષ જ્ઞાન નથી.

શંકા:—લોકમાં તો એવી વાત જોવામાં આવે છે કે જે જ્ઞાન વાહ્ય ધૂમાદિક ચિહ્નોની સહાયતાથી થાય છે એજ પરીક્ષ છે. ઇન્દ્રિયજન્ય જ્ઞાનને

ઉચ્યતે—ઇન્દ્રિયમનોભિર્વાહધૂમાદિનિમિત્તકં યદુત્પદ્યતે જ્ઞાનં, તદેકાન્તે નૈવેન્દ્રિયાણામાત્મનશ્ચ પરોક્ષં, પરનિમિત્તત્વાત્, ધૂમાદ્ વહ્નિજ્ઞાનવત્, અતસ્તત્ પરોક્ષ-તયા લોકે પ્રસિદ્ધમસ્તિ, યત્તુ સાક્ષાદિન્દ્રિયમનોનિમિત્તકં, તદિન્દ્રિયાણામેવ પ્રત્યક્ષમ્, ઇન્દ્રિયાશ્રિતમેવ ( ઇન્દ્રિયમેવાશ્રિત્ય ) પ્રત્યક્ષમ્; ન ત્વાત્મનઃ, યથાજ્વલ્યાદિકં જ્ઞાનં સાક્ષાદાત્મનિમિત્તકમ્ । તત્ર હિ અન્યાનપેક્ષણાદાત્મૈવ સાક્ષાત્કારણં ભવતિ । તથેન્દ્રિયાણાં વાહ્યધૂમાદિપદાર્થોઽપેક્ષયા યત્ પ્રત્યક્ષં ભવતિ તદિન્દ્રિયાણામેવ, ન ત્વાત્મનઃ, આત્મનસ્તુ તત્ પરોક્ષમેવ, પરનિમિત્તકત્વાત્ અનુમતિજ્ઞાનવત્, ઇન્દ્રિયાણામપિ તત્ પ્રત્યક્ષં ન પરમાર્થતઃ, કિન્તુ વ્યવહારાદેવ । કથમ્ ? ઇન્દ્રિયાણામચેતનત્વાત્ ।

જન્ય જ્ઞાન પરોક્ષ નહીં માના જાતા, તો ફિર આપ ઇન્દ્રિયજન્ય જ્ઞાનકો પરમાર્થતઃ પરોક્ષ કૈસે માનતે હૈં ? ।

ઉત્તર—ઇન્દ્રિય ઓર મનકે દ્વારા જો જ્ઞાન વાહ્ય ધૂમાદિક ચિહ્નોકો નિમિત્ત કરકે ઉત્પન્ન હોતા હૈ વહ પરકે નિમિત્તસે હોનેવાલા હોને કે કારણ એકાન્તરૂપસે પરોક્ષ માના ગયા હૈ, કારણ કિ હસ જ્ઞાનમેં ન તો સાક્ષાત્કારણ ઇન્દ્રિયાં હૈં ઓર ન આત્મા, ધૂમાદિક વાહ્ય સાધન હી ડસમેં સાક્ષાત્કારણ હૈ । જિસ જ્ઞાનમેં ઇન્દ્રિયાં એવં મન નિમિત્ત હોતે હૈં વહ જ્ઞાન ઇન્દ્રિયપ્રત્યક્ષ ઓના ગયા હૈ, કારણ કિ ઇન્દ્રિયપ્રત્યક્ષમેં ઇન્દ્રિયાં હી સાક્ષાત્કારણ હોતી હૈં । યદ્યપિ પરોક્ષજ્ઞાનમેં ભી ઇન્દ્રિયાં નિમિત્ત હોતી હૈં પરન્તુ વે પરંપરારૂપસે નિમિત્ત હોતી હૈં, સાક્ષાત્ રૂપસે નહીં । ઇન્દ્રિયપ્રત્યક્ષમેં ઇન્દ્રિયાં હી સાક્ષાત્કારણ હોતી હૈં । હસ-

પરોક્ષ મનાય, નહીં તો પછી આપ ઇન્દ્રિયજન્ય જ્ઞાનને પરમાર્થતઃ પરોક્ષ કેવી રીતે માને છો ?

ઉત્તર:—ઇન્દ્રિય અને મનનાં દ્વારા જે જ્ઞાન વાહ્ય ધૂમાદિક ચિહ્નોને નિમિત્ત કરીને ઉત્પન્ન થાય છે તે પરનાં નિમિત્તથી થનાર હોવાને કારણે એકાન્તરૂપથી પરોક્ષ મનાયું છે, કારણ કે આ જ્ઞાનમાં સાક્ષાત્કારણ ઇન્દ્રિયો પણ નથી અને આત્મા પણ નથી.

ધૂમાદિક વાહ્ય સાધન જ તેમાં સાક્ષાત્ કારણ છે. જે જ્ઞાનમાં ઇન્દ્રિયો અને મન નિમિત્તરૂપ હોય છે તે જ્ઞાન ઇન્દ્રિયપ્રત્યક્ષ મનાયું છે, કારણ કે ઇન્દ્રિયપ્રત્યક્ષમાં ઇન્દ્રિયો જ સાક્ષાત્કારણ હોય છે. જો કે પરોક્ષ જ્ઞાનમાં પણ ઇન્દ્રિયો નિમિત્ત હોય છે પણ તેઓ પરંપરારૂપથી નિમિત્ત થાય છે, સાક્ષાત્રૂપથી નહીં. ઇન્દ્રિય પ્રત્યક્ષમાં ઇન્દ્રિયો જ સાક્ષાત્કારણ હોય છે

લિયે વહ ઇન્દ્રિયોં કા હી પ્રત્યક્ષ માના જાતા હૈ, આત્મા કા નહીં । આત્મા હી જિસ જ્ઞાન કી ઉત્પત્તિમેં સાક્ષાત્કારણ હોતા હૈ વહ જ્ઞાન હી આત્માકા પ્રત્યક્ષ માના ગયા હૈ, જૈસે અવધિજ્ઞાન આદિ । આત્મા કે પ્રત્યક્ષમેં આત્માકે સિવાય અન્ય ઇન્દ્રિયાદિક સાક્ષાત્ યા પરંપરારૂપસે ભી કારણ નહીં હોતે હૈ, કેવલ આત્મા હી સાક્ષાત્કારણ હોતા હૈ । ઇસી તરહ બાહ્ય ધૂમાદિક ચિહ્ન જિસ જ્ઞાનમેં સાક્ષાત્કારણ નહીં હોતે હૈ, કેવલ ઇન્દ્રિયાં હી સાક્ષાત્કારણ હોતી હૈ વહ ઇન્દ્રિયોંકા પ્રત્યક્ષ હૈ-ઇન્દ્રિયપ્રત્યક્ષ હૈ, આત્મપ્રત્યક્ષ નહીં । આત્મા કે લિયે તો વહ પરોક્ષ હી હૈ, ક્યોંકિ યહાં પરનિમિત્તતા હૈ, આત્મનિમિત્તતા નહીં, અર્થાત્-આત્માસે ભિન્ન જો ઇન્દ્રિયાદિક હૈં વે આત્માસે પર હૈં, ઓર ઇન્હીં પરરૂપ ઇન્દ્રિયોંસે વહ પ્રત્યક્ષ જ્ઞાન ઉત્પન્ન હુઆ હૈ અતઃ વહ પરોક્ષ હી હૈ, જિસ પ્રકાર અનુમાનજ્ઞાન બાહ્ય લિંગાદિકોં સે હોતા હૈ, ઓર ઇસીલિયે વહ પરોક્ષ માના જાતા હૈ । યહાં જો ઇન્દ્રિયોંકે સાક્ષાત્કારણ હોને કી વજહસે હોને વાલે જ્ઞાન કો પ્રત્યક્ષ કહા હૈ વહ પરમાર્થતઃ નહીં, કિન્તુ વ્યવહાર કી અપેક્ષા સે હી કહા ગયા હૈ, એસા જાનના ચાહિયે, ક્યોં કિ ઇન્દ્રિયાં અચેતન હૈં ।

તેથી તે ઇન્દ્રિયોનું પ્રત્યક્ષ મનાય છે. આત્માનું નહીં. આત્મા જ જે જ્ઞાનની ઉત્પત્તિમાં સાક્ષાત્કારણ હોય છે તે જ્ઞાન જ આત્માનું પ્રત્યક્ષ મનાયું છે, જેવાંકે અવધિજ્ઞાન આદિ. આત્માના પ્રત્યક્ષમાં આત્મા સિવાય અન્ય ઇન્દ્રિયાદિક સાક્ષાત્ કે પરંપરા રૂપથી પણ કારણ હોતાં નથી, કેવળ આત્મા જ સાક્ષાત્ કારણ હોય છે. આ રીતે બાહ્ય ધૂમાદિક ચિહ્ન જે જ્ઞાનમાં સાક્ષાત્કારણ હોતાં નથી કેવળ ઇન્દ્રિયો જ સાક્ષાત્કારણ હોય છે તે ઇન્દ્રિયોનું પ્રત્યક્ષ છે-ઇન્દ્રિયપ્રત્યક્ષ છે, આત્મપ્રત્યક્ષ નહીં. આત્માને માટે તો તે પરોક્ષ જ છે, કારણ કે અહીં પરનિમિત્તતા છે, આત્મનિમિત્તતા નથી. એટલે કે આત્માથી ભિન્ન જે ઇન્દ્રિયાદિક છે તે આત્માથી પર છે અને એજ પરરૂપ ઇન્દ્રિયોથી તે પ્રત્યક્ષ જ્ઞાન ઉત્પન્ન થયું છે, તેથી તે પરોક્ષ જ છે. જે રીતે અનુમાન જ્ઞાન બાહ્ય લિંગાદિકોથી થાય છે, અને તેથી તે પરોક્ષ મનાય છે. અહીં જે ઇન્દ્રિયોના સાક્ષાત્કારણ હોવાને કારણે થનારા જ્ઞાનને પ્રત્યક્ષ કહ્યું છે તે પરમાર્થતઃ નહીં પણ વ્યવહારની અપેક્ષાએ જ કહેવાયું છે, એમ માનવું જોઈએ, કારણ કે ઇન્દ્રિયો અચેતન છે.

નનુ સ્પર્શનરસનઘ્રાણચક્ષુઃશ્રોત્રાણીન્દ્રિયાણીતિ ક્રમઃ, અયમેવ ચ સમીचीनः, પૂર્વપૂર્વલાભે સત્યેવોત્તરોત્તરલાભસંભવાત્, તતઃ કિમર્થમુત્ક્રમોપન્યાસઃ કૃતઃ? इति चेत्, उच्यते—“अस्ति पूर्वानुपूर्वी, अस्ति पश्चानुपूर्वी” इति न्यायप्रदर्शनार्थोऽयमु-  
ત્ક્રમोपन્યાसः कृतः । अपि च—शेषेन्द्रियापेक्षया श्रोत्रेन्द्रियं प्रधानं, श्रोत्रेन्द्रियस्य हि यत्प्रत्यक्षं तदितरेन्द्रियप्रत्यक्षापेक्षया स्पष्टसंवेदनं भवति । स्पष्टसंवेदनं चोपवर्ण्यमानं शिष्यः सुखेनावबुध्यते, ततः स्पष्टसंवेदनद्वारेण सुखपूर्वकावबोध-  
प्राप्तिहेतुत्वादिह श्रोत्रेन्द्रियादિક्रम उक्तः ॥ सू० ४ ॥

શંકા—સ્પર્શન, રસના, ઘ્રાણ, ચક્ષુ ઓર શ્રોત્ર, ઇસ પ્રકાર ઇન્દ્રિ-  
યોં કા ક્રમ હૈ ઓર યહી સમીचीन હૈ, કારણ કિ પૂર્વ પૂર્વ ઇન્દ્રિયોંકે લાભ  
હોને પર હી ઉત્તરની ઇન્દ્રિયોંકા લાભ હોતા હૈ, તો ફિર સૂત્રમેં ઇસ  
પ્રકારકા ક્રમ ન રાખકર વ્યુત્ક્રમરૂપસે ઉપન્યાસ ક્યોં કિયા ગયા હૈ? ।

ઉત્તર—“પૂર્વાનુપૂર્વી હૈ તથા પશ્ચાનુપૂર્વી ભી હૈ” ઇસ ન્યાય કો  
દિશાને કે લિયે સૂત્રકારને સૂત્રમેં યહ વ્યુત્ક્રમરૂપસે ઉપન્યાસ કિયા હૈ ।  
અર્થાત્—પૂર્વાનુપૂર્વીરૂપ તથા પશ્ચાનુપૂર્વીરૂપસે ક્રમ દો પ્રકાર કા હોતા હૈ ।  
દોનો પ્રકારસે વર્ણન કરનેમેં ક્રમકા વિઘાત નહીં હોતા હૈ । ફિર યહ કિ  
સમસ્ત ઇન્દ્રિયોંમેં શ્રોત્ર ઇન્દ્રિય પ્રધાન હૈ, કારણ કિ શ્રોત્રેન્દ્રિયકા જો  
પ્રત્યક્ષ હોતા હૈ વહ ઇતર ઇન્દ્રિયોંસે હોનેવાલે પ્રત્યક્ષકી અપેક્ષા અધિક  
સ્પષ્ટ હોતા હૈ । શિષ્યજન વર્ણ્યમાન વિષય કો શ્રોત્ર ઇન્દ્રિય દ્વારા સુનકર  
હી ઉસ વિષયકો અચ્છી તરહ જાનતે હૈ । ઇસલિયે સ્પષ્ટ સંવેદન દ્વારા

શંકાઃ—સ્પર્શન, રસના, ઘ્રાણ, ચક્ષુ, અને શ્રોત્ર, આ પ્રમાણે ઇન્દ્રિયોના  
ક્રમ છે અને એજ સમીचीन છે કારણ કે પૂર્વ પૂર્વ ઇન્દ્રિયોના લાભ થવાથી  
જ ઉત્તર, ઉત્તરની ઇન્દ્રિયોના લાભ થાય છે, તો પછી સૂત્રમાં આ પ્રકારનો  
ક્રમ ન રાખતાં ઉલટા ક્રમથી ઉપન્યાસ કેમ કરાયો છે ?

ઉત્તરઃ—“ પૂર્વાનુપૂર્વી છે તથા પશ્ચાનુપૂર્વી પણ છે ” આ ન્યાયને દર્શા-  
વવા માટે સૂત્રકારે સૂત્રમાં આ વ્યુત્ક્રમ (અવળા) રૂપથી ઉપન્યાસ કર્યો છે,  
એટલે કે પૂર્વાનુપૂર્વીરૂપ તથા પશ્ચાનુપૂર્વીરૂપથી બે પ્રકારનો ક્રમ થાય છે. બન્ને  
રીતે વર્ણન કરવામાં ક્રમનો વિઘાત થતો નથી. ફરીએ કે સર્વે ઇન્દ્રિયોમાં શ્રોત્રે-  
ન્દ્રિય મુખ્ય છે, કારણ કે શ્રોત્રેન્દ્રિયનું જે પ્રત્યક્ષ હોય છે તે બીજા ઇન્દ્રિયોથી  
થનારાં પ્રત્યક્ષની અપેક્ષાએ વધારે સ્પષ્ટ હોય છે. શિષ્યજન વર્ણ્યમાન વિષયને  
‘શ્રોત્ર’ ઇન્દ્રિય દ્વારા સાંભળીને જ તે વિષયને સારી રીતે જાણે છે. તેથી સ્પષ્ટ

મૂલમ્—સે કિ તં નોઈન્દિયપચ્ચક્કલં ? નોઈન્દિયપચ્ચક્કલં  
તિવિહં પળ્લત્તં, તં જહા—ઓહિનાળપચ્ચક્કલં, મળપજ્જવનાળ-  
પચ્ચક્કલં કેવલનાળપચ્ચક્કલં ॥ સૂ૦ ૫ ॥

છાયા—અથ કિં તત્ નોઈન્દ્રિયપ્રત્યક્ષમ્ ? નોઈન્દ્રિયપ્રત્યક્ષં ત્રિવિધં પ્રજ્ઞ-  
પ્તમ્ । તદ્ યથા—અવધિજ્ઞાનપ્રત્યક્ષં ૧, મનઃપર્યવજ્ઞાનપ્રત્યક્ષં ૨, કેવલજ્ઞાન-  
પ્રત્યક્ષમ્ ૩ ॥ સૂ૦ ૫ ॥

‘સે કિં તં નોઈન્દિયપચ્ચક્કલં’ ઇત્યાદિ ।

ટીકા—‘સે-અથ’ ઇતિ પ્રશ્નાર્થકઃ । તત્-પૂર્વોક્તં, નોઈન્દ્રિયપ્રત્યક્ષમ્=  
ઈન્દ્રિયપ્રત્યક્ષભિન્નં પ્રત્યક્ષં, કિમ્?—ઈન્દ્રિયપ્રત્યક્ષભિન્નસ્ય પ્રત્યક્ષસ્ય સ્વરૂપં કિમસ્તિ? ।  
ઉત્તરમાહ—‘નોઈન્દિયપચ્ચક્કલં તિવિહં પળ્લત્તં’ ઇત્યાદિ । એતત્ સુગમમ્ ॥ સૂ૦ ૫ ॥

મૂલમ્—સે કિં તં ઓહિનાળપચ્ચક્કલં ? ઓહિનાળપચ્ચક્કલં  
દુવિહં પળ્લત્તં, તં જહા—ભવપચ્ચદ્વયં ચ સ્વાઓવસમિયં ચ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

છાયા—અથ કિં તદવધિજ્ઞાનપ્રત્યક્ષમ્ ? અવધિજ્ઞાનપ્રત્યક્ષં દ્વિવિધં પ્રજ્ઞપ્તમ્ ।  
તદ્ યથા—ભવપ્રત્યયિકં ચ, ક્ષાયોપશમિકં ચ ॥ ૬ ॥

સુખપૂર્વક અવબોધની પ્રાપ્તિકા હેતુ હોનેસે યહાં સૂત્રમેં શ્રોત્રેન્દ્રિયાદિકા  
ક્રમ રચા ગયા હૈ ॥ સૂ૦ ૪ ॥

‘સે કિં તં નોઈન્દિયપચ્ચક્કલં’ ઇત્યાદિ ।

પૂર્વોક્ત નોઈન્દ્રિયપ્રત્યક્ષ કા કયા સ્વરૂપ હૈ, ૧ ઉત્તર—નોઈન્દ્રિય-  
પ્રત્યક્ષ—જો ઈન્દ્રિયપ્રત્યક્ષ સે સર્વથા ભિન્ન માના ગયા હૈ ઉસકા સ્વરૂપ  
અવધિજ્ઞાન, મનઃપર્યવજ્ઞાન એવં કેવલજ્ઞાન રૂપ હૈ । યહાં નો—શબ્દ  
ઈન્દ્રિયોંકી સહાયતાસે સર્વથા રહિત અર્થકા બોધક હૈ । ઈન્દ્રિયોંકી  
સહાયતા—અવધિજ્ઞાન, મનઃપર્યવજ્ઞાન એવં કેવલજ્ઞાનમેં બિલકુલ નહીં  
હોની હૈ, ઇસલિયે યે હી ત્રીન જ્ઞાન નોઈન્દ્રિયપ્રત્યક્ષ કહે ગયે હૈ ॥ સૂ૦ ૫ ॥

સંવેદનદ્વારા સુખપૂર્વક અવબોધની પ્રાપ્તિને હેતુ હોવાથી અહીં સૂત્રમાં શ્રોત્રેન્દ્રિ-  
યાદિકને ક્રમ રાખવામાં આવેલ છે. ॥ સૂ૦ ૪ ॥

“સે કિં તં નોઈન્દિયપચ્ચક્કલં” ઇત્યાદિ.

પૂર્વોક્ત ‘નોઈન્દ્રિયપ્રત્યક્ષ’ નું શું સ્વરૂપ છે? ઉત્તર—‘નોઈન્દ્રિય-  
પ્રત્યક્ષ’ જે ઈન્દ્રિયપ્રત્યક્ષથી સદંતર ભિન્ન મનાયું છે, તેનું સ્વરૂપ અવધિજ્ઞાન,  
મનઃપર્યવજ્ઞાન અને કેવળજ્ઞાન રૂપ છે. અહીં ‘નો’ શબ્દ ઈન્દ્રિયોની સહાયતાથી  
સદંતર રહિત અર્થનો બોધક છે. અવધિજ્ઞાન, મનઃપર્યવજ્ઞાન અને કેવળજ્ઞાનમાં  
ઈન્દ્રિયોની સહાયતા બિલકુલ હોતી નથી તેથી જ તે ત્રણ જ્ઞાનને નોઈન્દ્રિય-  
પ્રત્યક્ષ કહેલ છે. ॥ સૂ૦ ૫ ॥

‘સે કિં તં ઓહિનાણપચ્ચક્ખં’ ઇત્યાદિ ।

ટીકા—શિષ્યઃ પૃચ્છતિ—અથ કિં તદવધિજ્ઞાનપ્રત્યક્ષમ્ ? , પૂર્વનિર્દિષ્ટસ્યાવધિજ્ઞાનપ્રત્યક્ષસ્ય કિં સ્વરૂપમિતિ પ્રશ્નઃ । ઉત્તરમાહ—‘ઓહિનાણપચ્ચક્ખં દુવિહં પણત્તં’ ઇત્યાદિ । અવધિજ્ઞાનપ્રત્યક્ષં દ્વિવિધં પ્રજ્ઞસમ્ । તદ્ દ્વૈવિધ્યં પ્રદર્શયિતુમાહ—‘ત જહા’ ઇત્યાદિ, ‘તદ્ યથા—ભવપ્રત્યયિકં ચ ક્ષાયોપશમિકં ચેતિ । ભવનં ભવઃજન્મ, સ પ્રત્યયઃ કારણં યસ્ય તદ્ ભવપ્રત્યયમ્ ।

યદ્વા—ભવન્તિ—વર્તન્તે કર્મવશવર્તિનઃ પ્રાણિનોઽસ્મિન્નિતિ ભવઃ=નરકાદિજન્મ, ભવ એવ પ્રત્યયઃ=કારણં યસ્ય તદ્ ભવપ્રત્યયમ્ । પ્રત્યયશબ્દશ્ચેહ કારણેઽર્થે વર્તતે ।

ઉક્તશ્ચ—‘પ્રત્યયઃ શપથ—જ્ઞાન—હેતુ—વિશ્વાસ—નિશ્ચયે’ ઇતિ ।

તદેવ ભવપ્રત્યયિકં જન્મહેતુકમિત્યર્થઃ । ચકારઃ પૂર્વવત્ સ્વગતદેવનારકાશ્રિત—ભેદદ્વયમૂચકઃ । તથા—ક્ષયશ્ચોપશમશ્ચ ક્ષયોપશમૌ, તાભ્યાં નિર્વૃત્તં ક્ષાયોપશમિકં ચેતિ ।

‘સે કિં તં ઓહિનાણપચ્ચક્ખં’ ઇત્યાદિ ।

શિષ્ય યહાં પ્રશ્ન કરતા હુઆ પૂછ રહા હૈ કિ હે ભદન્ત ! જિસ અવધિ જ્ઞાન કો આપને અમી નોઈન્દ્રિયપ્રત્યક્ષ કહા હૈ ઉસકા કયા સ્વરૂપ હૈ ? ઉત્તરમેં ગુરુમહારાજ કહતે હૈં કિ વહ અવધિજ્ઞાન દો પ્રકાર કા હૈ—૧ ભવપ્રત્યયિક, ૨ ક્ષાયોપશમિક । જિસ અવધિજ્ઞાન કી ઉત્પત્તિમેં જન્મ કારણ હોતા હૈ વહ ભવપ્રત્યયિક અવધિજ્ઞાન હૈ । યહ અવધિજ્ઞાન દેવ ઓર નારકિયોં કે હોતા હૈ, કારણ કિ વહાં જન્મ લેતે હી જીવ કો અવધિજ્ઞાન ઉત્પન્ન હો જાતા હૈ । ક્ષય ઓર ઉપશમ સે જો અવધિજ્ઞાન ઉત્પન્ન હોતા હૈ વહ ક્ષાયોપશમિક અવધિજ્ઞાન હૈ । યહ અવધિ જ્ઞાન તિર્યશ્ચ ઓર મનુષ્યગતિ કે જીવોં કો હોતા હૈ । ક્ષયોપશમ—શબ્દકા અર્થ ‘ક્ષયસહિત ઉપશમ’ એસા હૈ । ઉદયપ્રાપ્ત કર્મ કા વિનાશ ક્ષય હૈ,

“સે કિં તં ઓહિનાણપચ્ચક્ખં” ઇત્યાદિ.

શિષ્ય અહીં પ્રશ્ન કરે છે કે હે ભદન્ત ! જે અવધિજ્ઞાનને આપે હમણાં જ ‘નોઈન્દ્રિયપ્રત્યક્ષ’ કહ્યું છે તેનું શું સ્વરૂપ છે ? ઉત્તરમાં શુરુ મહારાજ કહે છે કે તે અવધિજ્ઞાન બે પ્રકારનું છે. (૧) ભવપ્રત્યયિક (૨) ક્ષાયોપશમિક. જે અવધિજ્ઞાનની ઉત્પત્તિમાં જન્મ કારણરૂપ હોય છે તે ભવપ્રત્યયિક અવધિજ્ઞાન છે. આ અવધિજ્ઞાન દેવ અને નારકીઓને થાય છે, કારણ કે ત્યાં જન્મ લેતાં જ જીવને અવધિજ્ઞાન ઉત્પન્ન થઈ જાય છે. ક્ષય અને ઉપશમથી જે અવધિજ્ઞાન ઉત્પન્ન થાય છે તે ક્ષાયોપશમિક અવધિજ્ઞાન છે. આ અવધિજ્ઞાન તિર્યચ અને મનુષ્યગતિના જીવોને થાય છે. ક્ષયોપશમ શબ્દનો અર્થ “ક્ષયસહિત ઉપશમ” એવો છે. ઉદયપ્રાપ્ત કર્મનો વિનાશ ક્ષય છે, ઉદયનો નિરોધ ઉપશમ છે.



યદ્વા—ક્ષયેણ=ઉદયપ્રાપ્તકર્મણો વિનાશેન સહિતઃ ક્ષયસહિતઃ, ઉપશમઃ=ઉદય-  
નિરોધઃ, ક્ષયસહિતશ્વાસાવુપશમઃ ક્ષયોપશમઃ । इह मध्यमपदलोपी समासः शाक-  
पार्थिवादिवत् । यद्वा-विवक्षितज्ञानादिगुणविघातकस्य कर्मण उदयप्राप्तस्य क्षयः=  
सर्वथाऽपगमः, अनुदीर्णस्य तु तस्यैव उपशमः=विपाकत उदयाभावः । क्षयोपलक्षित  
उपशमः क्षयोपशमः । क्षयोपशमे भवं क्षायोपशमिकम् ॥ सू० ६ ॥

મૂલમ્—સે કિં તં ભવપચ્ચઇયં ?, ભવપચ્ચઇયં દુણ્હં, તં  
જહા—દેવાણ ય, નેરઙ્ગયાણ ય ॥ સૂ૦ ૭ ॥

છાયા--અથ કિં તદ્ ભવપ્રત્યયિકમ્ ? । ભવપ્રત્યયિકં દ્વયોઃ, તદ્ યથા-  
દેવાનાં ચ નૈરયિકાણાં ચ ॥ સૂ૦ ૭ ॥

‘સે કિં તં ભવપચ્ચઇયં’ ઇત્યાદિ ।

ટીકા—શિષ્યઃ પૃચ્છતિ—અથ કિં તદ્ ભવપ્રત્યયિકમ્ ?=પૂર્વનિર્દિષ્ટસ્ય ભવ-  
પ્રત્યયિકસ્ય કિં સ્વરૂપમિતિ । ઉત્તરમાહ—‘ભવપચ્ચઇયં દુણ્હં’ ઇત્યાદિ । ભવપ્રત્ય-

ઉદય કા નિરોધ ઉપશમ હૈ । ક્ષયસહિતઉપશમમેં મધ્યમપદલોપી સમાસ  
હુઆ હૈ, જૈસે શાકપાર્થિવમેં હોતા હૈ । અથવા—વિવક્ષિત જ્ઞાનાદિક ગુણ  
કે વિઘાતક કર્મ કા કિં જો ઉદયાગત હૈ સર્વથા વિનાશ હોના, એવં  
ઉસી કા જો જિતના અનુદીર્ણ—ઉદયમેં પ્રાપ્ત નહીં હુઆ—હૈ ઉસકા ઉપશમ  
હોના—વિપાક કી અપેક્ષા ઉદય કા અભાવ હોના ઇસકા નામ ક્ષયોપશમ  
હૈ । ઇસ ક્ષયોપશમ કે હોને પર જો અવધિજ્ઞાન હોતા હૈ વહ ક્ષાયોપશ-  
મિક અવધિજ્ઞાન હૈ ॥સૂ૦ ૬॥

‘સે કિં તં ભવપચ્ચઇયં’ ઇત્યાદિ ।

શિષ્ય પૂછતા હૈ—હે ગુરુમહારાજ ! ભવપ્રત્યયિક અવધિજ્ઞાન કા કયા  
સ્વરૂપ હૈ ? ઉત્તરમેં ગુરુમહારાજ કહતે હૈં કિ—યહ ભવપ્રત્યયિક અવધિ-

ક્ષયસહિત ઉપશમમાં મધ્યમપદલોપી સમાસ થયો છે જેવી રીતે શાકપાર્થિવમાં  
થાય છે. અથવા વિવક્ષિત જ્ઞાનાદિક ગુણના વિઘાતક કર્મ કે જે ઉદયાગત છે,  
તેનો સદંતર વિનાશ થવો અને જેટલા અનુદીર્ણ—ઉદય પામ્યાં નથી—તેનો ઉપ-  
શમ થવો—વિપાકની અપેક્ષાએ ઉદયનો અભાવ હોવો એનું નામ ક્ષયોપશમ છે. આ  
ક્ષયોપશમના હોવાથી જે અવધિજ્ઞાન થાય છે તે ક્ષાયોપશમિક અવધિજ્ઞાન છે. ॥સૂ૦ ૬॥

‘સે કિં તં ભવપચ્ચઇયં’ ઇત્યાદિ.

શિષ્ય પૂછે છે—હે ગુરુ મહારાજ ! ભવપ્રત્યયિક અવધિજ્ઞાનનું શું સ્વરૂપ  
છે ? જવાબમાં ગુરુ મહારાજ કહે છે કે—આ ભવપ્રત્યયિક અવધિજ્ઞાન બે ભાગોને

યિકં દ્વયોઃ=જીવસમૂહયોર્ભવતિ । કયોર્દ્વયોરિતિ જિજ્ઞાસાયમાહ-‘તં જહા’ ઇત્યાદિ ।  
તદ્ યથા-દેવાનાં ચ નૈરયિકાણાં ચ । ભવનિમિત્તકમવધિજ્ઞાનં દેવાનાં નાર-  
કાણાં ચેત્યુભયેષાં ભવતીત્યર્થઃ । ચકાર ઉભયત્ર સ્વગતાઽનેકભેદસંસૂચકઃ ।

નન્વવધિજ્ઞાનં ક્ષાયોપશમિકે ભાવે વર્તતે, નારકાદિભવશ્ચૌદયિકે, તત્ કથં  
દેવાદીનામવધિજ્ઞાનં ભવપ્રત્યયિકમિતિ વ્યપદિશ્યતે ? । નૈષ દોષઃ સંભવતિ, અવધિ-  
જ્ઞાનં હિ પરમાર્થતઃ ક્ષાયોપશમિકમેવ, કિન્તુ અવધિજ્ઞાનાવરણીયકર્મક્ષયોપશમો  
દેવનારકભવયોરવશ્યંભાવીત્યવધિજ્ઞાનં દેવનારકાણામવશ્યં ભવત્યેવ, પક્ષિણામાકા-  
શગમનલબ્ધિવત્, તસ્માદ્ ભવપ્રત્યયમિતિ વ્યપદિશ્યતે । યદ્વા-અવધિજ્ઞાનં પ્રતિ યો  
ભવઃ સાક્ષાત્કારણં તમધિકૃત્ય ભવપ્રત્યયિકમિતિ ભેદોપન્યાસઃ કૃતઃ ॥ સૂ૦૭ ॥

શિષ્યઃ પૃચ્છતિ-‘ સે કિં તં સ્વાઓવસમિયં ’ ઇત્યાદિ ।

જ્ઞાન દો જીવોંકે હોતા હૈ । વે દો જીવ યે હૈ-દેવ ઔર નારકી । ભવપ્રત્ય-  
યિક અવધિજ્ઞાન દેવ ઔર નારકિયોં કે હોતા હૈ ।

શંકા-અવધિજ્ઞાન ક્ષાયોપશમિક ભાવમેં ગિનાયા ગયા હૈ, તથા  
નારકાદિકભવ ઔદયિક ભાવમેં, તબ ફિર દેવાદિકોંકા અવધિજ્ઞાન  
ભવપ્રત્યયિક કૈસે કહલા સકતા હૈ ? વહ તો ક્ષાયોપશમિક હી કહલાવેગા ।

ઉત્તર-અવધિજ્ઞાન પરમાર્થતઃ ક્ષાયોપશમિક હી હોતા હૈ, કિન્તુ  
‘ અવધિજ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા ક્ષયોપશમ દેવ ઔર નારકિયોં કે ભવમેં  
અવશ્ય હી હોતા હૈ ’ ઇસ અપેક્ષા સે ડસ અવધિજ્ઞાનાવરણીય કર્મ કે  
ક્ષયોપશમ મેં ભવ સાક્ષાત્કારણ હોને સે ડસકો ભવપ્રત્યયિક કહા હૈ,  
જૈસે પક્ષિયોં મેં ડહના ભવપ્રત્યયિક કહા જાતા હૈ, શિક્ષા આદિ ગુણ-  
નિમિત્તક નહીં । ઇસી પ્રકાર દેવ નારકિયોં કા અવધિજ્ઞાન તપસ્યા આદિ  
દ્વારા હોનેવાલે અવધિજ્ઞાનાવરણીય કર્મ કે ક્ષયોપશમનિમિત્તક નહીં

થાય છે. તે બે ભુવ આ છે-દેવ અને નારકી. ભવપ્રત્યયિક અવધિજ્ઞાન દેવ અને  
નારકીઓને થાય છે.

શંકા:-અવધિજ્ઞાન ક્ષાયોપશમિક ભાવમાં ગણાવ્યું છે તથા નારકાદિક  
ભવ ઔદયિક ભાવમાં ગણાવેલ છે તો પછી દેવાદિકોં અવધિજ્ઞાન ભવપ્ર-  
ત્યયિક કેવી રીતે કહી શકાય ? તે તો ક્ષાયોપશમિક જ કહેવાશે.

ઉત્તર:-અવધિજ્ઞાન પરમાર્થતઃ ક્ષાયોપશમિક જ હોય છે, પણ “ અવધિ-  
જ્ઞાનાવરણીય કર્મનેા ક્ષયોપશમ દેવ અને નારકીઓના ભવોમાં અવશ્ય થાય છે જ ”  
આ અપેક્ષાએ તે અવધિજ્ઞાનાવરણીય કર્મના ક્ષયોપશમમાં ભવ સાક્ષાત્કારણ  
હોવાથી તેને ભવપ્રત્યયિક કહ્યું છે, જેવી રીતે પક્ષીઓમાં ‘ઉડવું’ તે ભવપ્રત્ય-  
યિક કહેવાય છે શિક્ષા આદિ ગુણનિમિત્તક નહીં. એજ પ્રમાણે દેવ, નારકી-  
ઓનું અવધિજ્ઞાન તપસ્યા આદિ દ્વારા થનારાં અવધિજ્ઞાનાવરણીય કર્મના



મૂલમ્—સે કિ તં સ્વાઓવસમિયં ? । સ્વાઓવસમિયં દુષ્ઠં ।  
તં જહા—મણુસ્સાણ ય, પંચેન્દ્રિયતિરિક્ખજોણિયાણ ય । કો  
હેઊ સ્વાઓપસમિયં ? । સ્વાઓવસમિયં તયાવરાણિજ્જાણં  
કમ્માણં ઉદિપ્પણાણં સ્વણં, અણુદિપ્પણાણં ઉવસમેણં ઓહિનાણં  
સમુપ્પજ્જઈ ॥ સૂ૦ ૮ ॥

છાયા—અથ કિં તત્ ક્ષાયોપશમિકમ્ ? । ક્ષાયોપશમિકં દ્વયોઃ । તદ્ યથા  
—મનુષ્યાણાં ચ પઠ્ઠ્ઠેન્દ્રિયતિરિગ્યોનિકાનાં ચ । કો હેતુઃ ક્ષાયોપશમિકં ? , ક્ષાયો-  
પશમિકં તદાવરણીયાનાં કર્મણામ્ ઉદીર્ણાનાં ક્ષયેણ, અનુદીર્ણાનામુપશમેન, અવ-  
ધિજ્ઞાનં સમુત્પદ્યતે ॥ સૂ૦ ૮ ॥

ટીકા—‘અથ કિં તત્ ક્ષાયોપશમિકમ્’ ઇતિ । ક્ષાયોપશમિકસ્યાવધિજ્ઞાનસ્ય કિં  
સ્વરૂપ ? મિતિ । ઉત્તરમાહ—‘સ્વાઓવસમિયં દુષ્ઠં’ ઇત્યાદિ । ક્ષાયોપશમિકં=ક્ષયો-  
પશમનિમિત્તકં દ્વયોઃ=જીવસમૂહયોઃ । કયોર્દ્વયોઃ ? ઇતિ જિજ્ઞાસાયામાહ—‘તં જહા’  
ઇત્યાદિ । તદ્ યથા—મનુષ્યાણાં ચ પઠ્ઠ્ઠેન્દ્રિયતિરિગ્યોનિકાનાં ચ । ક્ષાયોપશમિ-  
કમવધિજ્ઞાનં મનુષ્યાણાં પઠ્ઠ્ઠેન્દ્રિયતિરશ્ચાં ચેત્યુભયેષાં ભવતીત્યર્થઃ ।

પુનરપિ શિષ્યઃ પૃછતિ—‘કો હેઊ’ ઇત્યાદિ । કો હેતુઃ ક્ષાયોપશમિકમ્ ?  
ઇતિ । અવધિજ્ઞાનં ક્ષાયોપશમિકં ભવતીત્યત્ર કિં કારણમિતિ પ્રશ્નઃ । ઉત્તરમાહ—  
હોતા હૈ, કિન્તુ વહાંકે ભવનિમિત્તક હી હોતા હૈ, અતઃ ઇસ અપેક્ષા વહ  
ભવપ્રત્યયિક કહા જાતા હૈ ॥ સૂ૦ ૭ ॥

‘સે કિં તં સ્વાઓવસમિયં’ ઇત્યાદિ ।

શિષ્ય પૂછતા હૈ—ક્ષાયોપશમિક અવધિજ્ઞાન કા કયા સ્વરૂપ હૈ ?  
ગુરુ કહતે હૈ—ક્ષાયોપશમિક અવધિજ્ઞાન મનુષ્યોં કે તથા પંચેન્દ્રિયતિરિગ્ય  
જીવોં કે હોતા હૈ ।

પ્રશ્ન—ક્ષાયોપશમિક અવધિજ્ઞાન કા કયા સ્વરૂપ હૈ ?

ક્ષાયોપશમનિમિત્તક હોતું નથી, પણ ત્યાંના ભવનિમિત્તક જ થાય છે, તેથી એ  
અપેક્ષાએ તે ભવપ્રત્યયિક કહેવાય છે. ॥ સૂ ૭ ॥

“સે કિં તં સ્વાઓવસમિયં” ઇત્યાદિ.

શિષ્ય પૂછે છે—“ક્ષાયોપશમિક અવધિજ્ઞાનનું શું સ્વરૂપ છે ? ગુરુ કહે છે—  
ક્ષાયોપશમિક અવધિજ્ઞાન મનુષ્યો તથા પંચેન્દ્રિયતિરિગ્ય એવાં બે થાય છે.

પ્રશ્ન—ક્ષાયોપશમિક અવધિજ્ઞાનનું શું સ્વરૂપ છે ? ઉત્તર—અવધિજ્ઞાનના

‘આવરણીયાનિ’ ઇત્યાદિ । તદાવરણીયાનામ્=તસ્ય-અવધિજ્ઞાનસ્ય, યાનિ આવરણીયાનિ-આવરકાણિ, તેષાં કર્મણાં મધ્યે, ઉદીર્ણાનામ્=ઉદયાવલિકાં પ્રાપ્તાનાં કર્મદલિકાનાં ક્ષયેણ=ક્ષયકરણેન, તથા-અનુદીર્ણાનામ્-અવધિજ્ઞાનાવરણીયકર્મસુ યાન્યનુદિતાનિ આત્મનિ સ્થિતાનિ કર્મદલિકાનિ તેષામ્, ઉપશમેન=ઉપશમનકરણેન વિપાકોદયનિરોધેન, યદવધિજ્ઞાનં સમુત્પદ્યતે, તદવધિજ્ઞાનં ક્ષાયોપશમિકમિત્યુચ્યતે । અનેન ક્ષાયોપશમિકમવધિજ્ઞાનં પ્રતિ અવધિજ્ઞાનાવરણીયકર્મણાં ક્ષયોપશમરૂપો હેતુ-રુક્તઃ । ક્ષયોપશમશ્ચ દેશઘાતિરસસ્પર્ધકાનામુદયે સતિ ભવતિ ન તુ સર્વઘાતિ-રસસ્પર્ધકાનામ્ ।

મનુષ્યાણાં પञ્ચેન્દ્રિયતિરસ્ચાં ચાવધિજ્ઞાનં નાવશ્યંભાવિ, તસ્માત્ સમાનેऽપિ, ક્ષાયોપશમિકત્વે ભવપ્રત્યયિકાદિદં મિદ્યતે । પરમાર્થતસ્તુ સકલમપ્યવધિજ્ઞાનં

ઉત્તર--અવધિજ્ઞાન કે આવરક જિતને કર્મ હૈં उनके उदीर्ण दलिकों का क्षय होता है, तथा अनुदीर्ण दलिकों का सदवस्थारूप उपशम रहता है, इस स्थितिमें जो अवधिज्ञान होता है वह क्षायोपशमिक अवधिज्ञान है । इस तरह अवधिज्ञान के प्रति अवधिज्ञानावरणीय कर्म का क्षयोपशम हेतुरूपसे कहा गया है । अवधिज्ञानमें अवधिज्ञानावरणीय कर्म के देशघातिरसस्पर्धकों ( कर्मांशों ) का उदय तथा सर्वघातिरसस्पर्धकों का कुल का क्षय और कुल का सदवस्थारूप उपशम रहता है । मनुष्यों के तथा पञ्चेन्द्रिय तिर्यश्चों के अवधिज्ञान अवश्यंभावी नहीं होता है, अर्थात् क्षायोपशमिक अवधिज्ञान समस्त मनुष्य एवं पञ्चेन्द्रिय तिर्यश्चों के होता ही है, ऐसा नियम नहीं है किन्तु जिनके अवधिज्ञानावरणीय कर्म का क्षयोपशम होता है उन्हीं के यह होता है, ऐसा नियम है, अतः भव-प्रत्ययिक अवधिज्ञान जो समस्त देव और नारकियों के अवश्यंभावी

આવારક બેટલાં કર્મ છે તેમના ઉદીર્ણ દલિકોનો ક્ષય થાય છે અને અનુદીર્ણ દલિકોનો સદવસ્થારૂપ ઉપશમ રહે છે. આ સ્થિતિમાં જે અવધિજ્ઞાન થાય છે તે ક્ષાયો-પશમિક અવધિજ્ઞાન છે. આ રીતે અવધિજ્ઞાનની પ્રતિ અવધિજ્ઞાનાવરણીય કર્મનો ક્ષયોપશમ હેતુરૂપે કહેવાયો છે. અવધિજ્ઞાનમાં અવધિજ્ઞાનાવરણીયના દેશઘાતિ સ્પર્ધકો ( કર્માંશો ) નો ઉદય તથા સર્વઘાતિરસસ્પર્ધકોમાંના કેટલાંકનો ક્ષય તથા કેટલાંકનો સદવસ્થારૂપ ઉપશમ રહે છે. મનુષ્યોનું તથા પંચેન્દ્રિય તિર્ય-ચોનું અવધિજ્ઞાન અવશ્યંભાવી હોતું નથી, એટલે કે ક્ષાયોપશમિક અવધિ-જ્ઞાન સર્વે મનુષ્યો તથા પંચેન્દ્રિય તિર્યચોને થાય જ છે એવો નિયમ નથી, પણ જેને અવધિજ્ઞાનાવરણીય કર્મનો ક્ષયોપશમ થાય છે તેમને તે થાય જ છે એવો નિયમ છે. તેથી ભવપ્રત્યયિક અવધિજ્ઞાન જે સમસ્ત દેવ અને નારકીઓને

ક્ષાયોપશમિકમેવ । તત્રાવધિજ્ઞાનાવરણકર્મપ્રકૃતીનાં તથાવિધવિશુદ્ધાધ્યવસાયતઃ પ્રચુરીભૂતરસસ્યાલ્પીકરણેન સર્વઘાતિષ્ઠ રસસ્પર્ધકેષુ દેશઘાતિરૂપતયા પરિણમિતેષુ, દેશઘાતિરસસ્પર્ધકેષ્વપિ યાનિ અતિસ્નિગ્ધાનિ રસસ્પર્ધકાનિ સન્તિ તેષુ અલ્પ-રસીકૃતેષુ ઉદયાવલિકાપ્રાપ્તસ્યાંશસ્ય ક્ષયેऽનુદીર્ણસ્ય ચોપશમે-વિપાકોદયવિષ્ક-મ્ભરૂપે જીવસ્યાવધ્યાદયો ગુણાઃ પ્રાદુર્ભવન્તિ ।

હોતા હૈં ઉસસે ઇસમેં ભિન્નતા હૈં । યદ્યપિ ભવપ્રત્યય અવધિજ્ઞાનમેં ઔર ક્ષાયોપશમિક અવધિજ્ઞાનમેં અવધિજ્ઞાનાવરણીય કર્મ કે ક્ષાયોપશમ કી સમાનતા હૈં, ફિર મી ભવપ્રત્યય અવધિ તો સમસ્ત દેવ ઔર નારકિયોં કે અવશ્યંભાવી હૈં, તબ કિ મનુષ્ય ઔર તિર્યચ્ચોં કા અવધિજ્ઞાન એસા નહીં હૈં, અર્થાત્ હોતા મી હૈં ઔર નહીં મી હોતા હૈં । અવધિજ્ઞાન ચાહે ક્ષાયો-પશમિક હો ચાહે ભવપ્રત્યયિક હો વહ પરમાર્થતઃ ક્ષાયોપશમિક હી હૈં । ઉસમેં કારણ ગ્રહ હૈં કિ અવધિજ્ઞાન કે આવારક જિતને મી અવધિજ્ઞાના-વરણીય કર્મ કે રસસ્પર્ધક હૈંં ઉનમેં પ્રચુરીભૂત જો રસ હૈં વહ તથાવિધ શુભ અધ્યવસાય કે વશસે અલ્પ કર દિયા જાતા હૈં, એવં સર્વઘાતિરસ સ્પર્ધકોં કો દેશઘાતિરસસ્પર્ધકરૂપ પરિણમા દિયા જાતા હૈં, તથા ઉદિત દેશઘાતિરસસ્પર્ધકોં મેં મી જો અતિસ્નિગ્ધ રસસ્પર્ધક હૈંં વે અલ્પ રસવાલે કર દિયે જાતે હૈંં, એસી સ્થિતિમેં ઉદયાવલિમેં પ્રાપ્ત જો અંશ હોતા હૈંં ઉસ કે ક્ષય હોને પર, તથા અનુદીર્ણ અંશ કે ઉપશમ હોને પર જીવ કે અવધિ આદિ ગુણ પ્રાદુર્ભૂત હુઆ કરતે હૈંં ।

અવશ્યંભાવી હોય છે તેથી તેમાં ભિન્નતા છે. જો કે ભવપ્રત્યય અવધિજ્ઞાનમાં અને ક્ષાયોપશમિક અવધિજ્ઞાનમાં અવધિજ્ઞાનાવરણીય કર્મના ક્ષાયોપશમની સમા-નતા છે તો પણ ભવપ્રત્યય અવધિ તો સમસ્ત દેવ અને નારકીઓને અવશ્યં ભાવી છે ત્યારે મનુષ્ય અને તિર્યંચોનું અવધિજ્ઞાન એવું નથી, એટલે કે હોય છે પણ ખરું અને નથી પણ હોતું. અવધિજ્ઞાન ભલે ક્ષાયોપશમિક હોય કે ભલે ભવપ્રત્યયિક હોય પણ તે પરમાર્થતઃ ક્ષાયોપશમિક જ છે. તેનું કારણ એ છે કે અવધિજ્ઞાનના આવારક જેટલાં પણ અવધિજ્ઞાનાવરણીય કર્મના રસસ્પર્ધક છે તેઓમાં પ્રચુરીભૂત જે રસ છે તે, તે પ્રકારના શુભ અધ્યવસાયના વશથી અદ્ય કરી દેવાય છે, અને સર્વઘાતિરસસ્પર્ધકોને દેશઘાતિરસસ્પર્ધકરૂપ પરિણમા વાય છે, તથા ઉદિત દેશઘાતિરસસ્પર્ધકોમાં પણ જે અતિસ્નિગ્ધ રસ સ્પર્ધક છે તેઓને અદ્ય રસવાળાં કરી દેવાય છે, એવી સ્થિતિમાં ઉદયાવલિમાં પ્રાપ્ત જે અંશ હોય છે તેનો ક્ષય થતાં તથા અનુદીર્ણ અંશનો ઉપશમ થતાં અવધિઆદિ ગુણ પ્રાદુર્ભૂત થયા કરે છે.

કદાચિદ્ વિશિષ્ટગુણપ્રતિપત્તિમન્તરેણ કદાચિદ્ વિશિષ્ટગુણપ્રતિપત્તિતથ્વ  
સર્વઘાતીનિ રસસ્પર્ધકાનિ દેશઘાતીનિ ભવન્તિ ।

તત્ર વિશિષ્ટગુણપ્રતિપત્તિમન્તરેણ કથમ્ ? इति चेत्, उच्यते—यथाऽऽकाशे  
जलदपटलाच्छादितस्य सूर्यमण्डलस्य कथंचिद् विस्रसापरिणामेन जलदपटलैकदेश  
पुद्गलानां निःस्नेहीभूय व्यपगमे सति संजातेन तेन छिद्रेण निर्गतास्तिमिरनिक-  
रोपसंहारहेतवो रश्मयः स्वावपातदेशावस्थितं वस्तु विद्योतयन्ति, तथा मिथ्यात्वा-  
विरतिप्रमादादिहेतूपचयोपजनितावधिज्ञानावरणकर्ममलपटलाच्छादितस्यानादिसंसारे

શંકા—સર્વઘાતિરસસ્પર્ધક દેશઘાતિરસસ્પર્ધકરૂપ કૈસે હોતે હૈં ?

उत्तर—कदाचित् विशिष्ट गुण की प्रतिपत्ति से, तथा कदाचित् इसके  
बिना भी वे उसरूप हो जाते हैं । विशिष्टगुण की प्रतिपत्ति के बिना  
सर्वघातिस्पर्धक देशघातिस्पर्धकरूप हो जाते हैं, इसका स्पष्टीकरण  
इस प्रकार है—जैसे आकाशमें जब सूर्यमंडल मेघपटल से घिर जाता  
है—ढक जाता है तब उसका प्रकाश रुक जाता है, और जब वही मेघ-  
पटल विस्रसापरिणामस्वभाव से एकदेशरूपमें—थोड़े २ रूपमें उसके  
ऊपर से जैसे २ हटने लगता है वैसे २ उनके भीतर से सूर्य की तिमिर  
निकर (अन्धकारसमूह) का संहार करनेवाली किरणें छिटकने लगती  
हैं, और अपने द्वारा प्रकाशित स्थानमें स्थित पदार्थों को वे प्रकाशित  
करती हैं, इसी तरह मिथ्यात्व, अविरति एवं प्रमाद आदि हेतु के उपचय  
से जनित जो अवधिज्ञानावरणीयरूप कर्ममल उससे आच्छादित तथा

શંકા—સર્વઘાતિરસસ્પર્ધક દેશઘાતિરસસ્પર્ધકરૂપ કેવી રીતે થાય છે ?

उत्तर—क्यारेक विशिष्ट गुणुनी प्रतिपत्तिथी तथा क्यारेक तेना बिना  
पणु तेओ ओ इय थछ नय छे. विशिष्टगुणुनी प्रतिपत्ति बिना सर्वघातिस्पर्धक  
देशघातिस्पर्धकइय थछ नय छे तेनुं स्पष्टीकरण आ प्रमाणे छे—जेम आका-  
शमां न्यारे सूर्यमंडल मेघपटलथी आच्छादित थछ नय छे (ढंकाछ नय छे)  
त्यारे तेना प्रकाश रोकાય छे, अने न्यारे ओज मेघपटल विस्रसापरिणाम स्वभा-  
व—थी ओकदेशइयमां थोडां थोडां प्रमाणुमां तेना उपरथी जेम जेम हूर थवा  
लागे छे तेम तेम तेमनी अंदरथी सूर्यनी तिमिरनिकर (अंधकारसमूह)नो संहार  
करनारी किरणो निकलवा लागे छे, अने पोताना द्वारा प्रकाशित स्थानमां रडेलां  
पदार्थोने तेओ प्रकाशित करे छे, ओ ज रीते मिथ्यात्व, अविरति अने प्रमाद  
आदि हेतुना उपचयथी चेदा थयेल जे अवधिज्ञानावरणीयरूप कर्ममल तेनाथी

ભ્રામ્યમાણસ્ય ભાસ્વરસ્વરૂપસ્યાત્મનઃ કથંચિદેવ યથાપ્રવૃત્ત્યાઽનાદિકાલતો-  
 ઽનાદિસંસિદ્ધપ્રકારેણ કર્મક્ષપણપ્રવૃત્તાધ્યવસાયવિશેષરૂપયા તથાવિધશુભાધ્યવસાય-  
 પ્રવૃત્તિતોઽવધિજ્ઞાનાવરણસમ્બન્ધિનાં સર્વઘાતિરસસ્પર્ધકાનાં દેશઘાતિરસસ્પર્ધક-  
 તયા જાતાનામુદયાવલિકાપ્રાપ્તસ્યાંશસ્ય પરિક્ષયતોઽનુદયાવલિકાપ્રાપ્તસ્યોપશમતઃ  
 સમુદ્ભૂતેન ક્ષયોપશમરૂપેણ રન્ધ્રેણાવધિજ્ઞાનરૂપઃ પ્રકાશઃ પ્રાદુર્ભવતિ । યેનેન્દ્રિય-  
 મનોનિરપેક્ષાઃ સન્તો દેવા નારકાશ્ચ રૂપિદ્રવ્યં વિજાનન્તિ । તદેતદવધિજ્ઞાનં ભવ-  
 પ્રત્યયિકમિત્યુચ્યતે । વિશિષ્ટગુણપ્રતિપત્તિસ્તુ મૂલગુણાદિપ્રતિપત્તેર્ભવતીત્યનન્તર-  
 સૂત્ર એવ વક્ષ્યતે ।

યથાપ્રવૃત્તિકરણ સે અનાદિ સંસારમેં ભ્રમણ કરનેવાલે સૂર્યતુલ્ય હસ  
 આત્માકે કથંચિત્ કર્મક્ષપણ મેં પ્રવૃત્ત જો શુભાધ્યવસાયવિશેષ હેં ઉનમેં  
 પ્રવૃત્તિ કરને સે જીવ અવધિજ્ઞાનાવરણીય કર્મોં કે સર્વઘાતિરસસ્પર્ધકોં  
 કો દેશઘાતિરસસ્પર્ધકરૂપ પરિણમા દેતા હૈ । એવં જો ઉનકા અંશ ઉદ-  
 યાવલીમેં પ્રાપ્ત હોતા હૈ ઉસે ક્ષય કર દેતા હૈ, તથા જો અંશ ઉદયાવલીમેં  
 પ્રાપ્ત નહીં હોતા હૈ ઉસે ઉપશમિત કર દેતા હૈ, હસ તરહ હસ ક્ષાયોપશ-  
 મિકરૂપ છિદ્ર સે અવધિજ્ઞાનરૂપ પ્રકાશ છિટકને લગતા હૈ । હસકે દ્વારા  
 દેવ એવં નારકી હન્દ્રિય ઓર મનકી સહાયતા કે વિના હી રૂપી દ્રવ્યકો  
 જાનતે હેં । હસ તરહ યહ અવધિજ્ઞાન ભવપ્રત્યયિક કહા જાતા હૈ । મૂલ-  
 ગુણાદિક કી પ્રતિપત્તિ સે હી જીવ કો વિશિષ્ટગુણોં કી પ્રતિપત્તિ હોતી  
 હૈ, યહ વાત સ્વયં સૂત્રકાર અનન્તર સૂત્રમેં કહેંગે ।

આચ્છાદિત તથા યથાપ્રવૃત્તિકરણથી અનાદિ સંસારમાં ભ્રમણ કરનારા સૂર્યતુલ્ય  
 આ આત્માના કથંચિત્ કર્મક્ષપણમાં પ્રવૃત્ત શુભાધ્યવસાયવિશેષ છે તેઓમાં  
 પ્રવૃત્તિ કરવાથી જીવ અવધિજ્ઞાનાવરણીય કર્મોના સર્વઘાતી રસસ્પર્ધકોને દેશઘાતી  
 રસસ્પર્ધકરૂપ પરિણમા દે છે અને તેમનો જે અંશ ઉદયાવલીમાં પ્રાપ્ત હોય  
 છે તેનો ક્ષય કરી નાખે છે, તથા જે અંશ ઉદયાવલીમાં પ્રાપ્ત હોતો નથી તેને  
 ઉપશમિત કરી નાખે છે. આ રીતે આ ક્ષાયોપશમિકરૂપ છિદ્રમાંથી અવધિજ્ઞાન  
 રૂપી પ્રકાશ વેરાવા લાગે છે. તેના દ્વારા દેવ અને નારકી ઈન્દ્રિય અને મનની  
 સહાયતા વિના જ રૂપી દ્રવ્યને જાણે છે. આ રીતે આ અવધિજ્ઞાન ભવપ્રત્ય-  
 યિક કહેવાય છે. મૂલગુણાદિકની પ્રતિપત્તિથી જ જીવને વિશિષ્ટ ગુણોની પ્રતિપત્તિ  
 થાય છે, આ વાત સ્વયં સૂત્રકાર આગળના સૂત્રમાં કહેશે.

નનુ યદુક્તં—“ ક્ષયોપશમઃ સ્વલુ દેશઘાતિરસસ્પર્ધકાનામુદયે સતિ ભવતિ, ન તુ સર્વઘાતિરસસ્પર્ધકાનામ્ ” ઇતિ, તત્ર રસસ્પર્ધકશબ્દસ્ય કોડ્ઠ્યઃ ? ।

ઉચ્યતે—કર્મપુદ્ગલાનાં પરસ્પરસંશ્લેષહેતુર્યઃ સ્નેહસ્તન્નિમિત્તકં સ્પર્ધકં રસસ્પર્ધકમિત્યુચ્યતે । રસસ્પર્ધકં, સ્નેહપ્રત્યયસ્પર્ધકમિત્યેક એવ પદાર્થઃ । સ્નેહઃ=ચિક્ષણતા પ્રત્યયો=નિમિત્તં યસ્ય તત્ સ્નેહપ્રત્યયમ્ । સ્નેહપ્રત્યયં યત્ સ્પર્ધકં તત્ સ્નેહપ્રત્યયસ્પર્ધકમ્ । સ્પર્ધન્તે ઇવોત્તરોત્તરવૃદ્ધ્યા કર્મવર્ગણા અત્રેતિ સ્પર્ધકં=વર્ગણાનાં સમુદાયઃ ।

પુદ્ગલદ્રવ્યાણાં પરસ્પરં સમ્બન્ધઃ સ્નેહતો ભવતિ તતોડવશ્યં સ્નેહપ્રરૂપણા કર-

શંકા—યહાં જો કહા ગયા હૈ કિ-દેશઘાતિરસસ્પર્ધકોં કે ઉદય હોને પર હી ક્ષયોપશમ કહલાતા હૈ, સર્વઘાતિરસસ્પર્ધકોં કે ઉદય મેં નહીં, સો યહાં પર રસસ્પર્ધક શબ્દ કા કયા અર્થ હૈ ?

ઉત્તર—કર્મપુદ્ગલોંમેં જો પરસ્પરમેં બંધ કા હેતુ સ્નેહ હોતા હૈ વહ સ્નેહ જિન સ્પર્ધકોં કા નિમિત્ત હોતા હૈ ઉસકા નામ રસસ્પર્ધક હૈ । યહી રસસ્પર્ધક શબ્દ કા અર્થ હૈ । રસસ્પર્ધક ઓર સ્નેહપ્રત્યયસ્પર્ધક, યે દોનોં શબ્દ પર્યાયવાચી શબ્દ હૈ । શબ્દભેદ હોને પર ખી इनके अर्थमें कोई भेद नहीं है । સ્નેહ શબ્દ કા અર્થ ચિક્ષણતા-ચિકનાઈ હૈ । યહ ચિકનાઈ જિસ સ્પર્ધકમેં નિમિત્ત હોતી હૈ વહ સ્નેહપ્રત્યયસ્પર્ધક હૈ । ઉત્તરોત્તર વૃદ્ધિ-રૂપ સે કર્મવર્ગણા જહાં પરસ્પરમેં સ્પર્ધા-ઈર્ષ્યા જૈસે કરે વહ સ્પર્ધક હૈ । યહ સ્પર્ધક કર્મવર્ગણાઓંકા એક સમુદાય હૈ ।

પુદ્ગલ દ્રવ્યોં કા પરસ્પર મેં બંધ સ્નેહગુણ સે હોતા હૈ અતઃ સ્નેહ કી

શંકા—અહીં જે કહેવામાં આવ્યું છે કે દેશઘાતી રસસ્પર્ધકોનો ઉદય થતાં જ ક્ષયોપશમ કહેવાય છે, સર્વઘાતી રસસ્પર્ધકોના ઉદયમાં નહીં તો અહીં રસસ્પર્ધક શબ્દનો અર્થ શો છે ?

ઉત્તર—કર્મપુદ્ગલોમાં પરસ્પરમાં બંધનો હેતુ જે સ્નેહ હોય છે તે સ્નેહ જે સ્પર્ધકોનું નિમિત્ત હોય છે તેનું નામ રસસ્પર્ધક છે. આ જ રસસ્પર્ધક શબ્દનો અર્થ છે. રસસ્પર્ધક અને સ્નેહપ્રત્યયસ્પર્ધક એ બન્ને પર્યાયવાચી શબ્દ છે. શબ્દ ભેદ હોવા છતાં પણ તેમના અર્થમાં કોઈ ભેદ નથી. સ્નેહ શબ્દનો અર્થ ચિક્ષણતા (ચિકાશ) છે. આ ચિકાશ જે સ્પર્ધકમાં નિમિત્ત હોય છે તે સ્નેહપ્રત્યયસ્પર્ધક છે. ઉત્તરોત્તર વૃદ્ધિરૂપથી કર્મવર્ગણા બંધનાં પરસ્પરમાં સ્પર્ધા-ઈર્ષ્યા જેવી કરે તે સ્પર્ધક છે. આ સ્પર્ધક કર્મવર્ગણાઓનો એક સમુદાય છે. પુદ્ગલ દ્રવ્યોનો પરસ્પરમાં બંધ સ્નેહગુણથી થાય છે, તેથી સ્નેહની પ્રપણા



નીયા । સા ચ ત્રિધા ભવતિ—સ્નેહપ્રત્યયસ્પર્ધકપ્રરૂપણા ૧, નામપ્રત્યયસ્પર્ધકપ્રરૂપણા ૨, પ્રયોગપ્રત્યયસ્પર્ધકપ્રરૂપણા ૩ ચ ।

તત્ર સ્નેહપ્રત્યયસ્ય=સ્નેહનિમિત્તસ્ય સ્પર્ધકસ્ય પ્રરૂપણા સ્નેહપ્રત્યયસ્પર્ધકપ્રરૂપણા ૧ ।

તથા—શરીરબન્ધનનામકર્મોદયતઃ પરસ્પરં વદ્ધાનાં શરીરપુદ્ગલાનાં સ્નેહમધિકૃત્ય સ્પર્ધકપ્રરૂપણા નામપ્રત્યયસ્પર્ધકપ્રરૂપણા । શબ્દાર્થશ્ચાયમ્—નામપ્રત્યયસ્ય=વન્ધનનામનિમિત્તસ્ય શરીરપુદ્ગલસ્પર્ધકસ્ય પ્રરૂપણા નામપ્રત્યયસ્પર્ધકપ્રરૂપણા ૨ ।

તથા—પ્રકૃષ્ટો યોગઃ પ્રયોગઃ=વાહુમનઃકાયવ્યાપારઃ, તેન પ્રત્યયભૂતેન—કારણભૂતેન યે ગૃહીતાઃ પુદ્ગલાસ્તેષાં સ્નેહમધિકૃત્ય સ્પર્ધકપ્રરૂપણા પ્રયોગપ્રત્યયસ્પર્ધકપ્રરૂપણા ૩ ।

પ્રરૂપણા કી જાતી હૈ । સ્નેહ કી પ્રરૂપણા ત્રીન તરહ સે હોતી હૈ—(૧) સ્નેહપ્રત્યયસ્પર્ધક પ્રરૂપણા (૨) નામપ્રત્યયસ્પર્ધકપ્રરૂપણા, (૩) પ્રયોગપ્રત્યયસ્પર્ધક પ્રરૂપણા ।

જિસ સ્પર્ધક કા કારણ સ્નેહ હોતા હૈ ઉસ સ્પર્ધકકી પ્રરૂપણા કા નામ સ્નેહપ્રત્યયસ્પર્ધકપ્રરૂપણા હૈ ૧ । જિસ સ્પર્ધક કા કારણ બન્ધન નામકર્મ હોતા હૈ ઉસ સ્પર્ધકકી પ્રરૂપણા કા નામ નામપ્રત્યયસ્પર્ધકપ્રરૂપણા હૈ । અર્થાત્ શરીરબન્ધનનામકર્મ કે ઉદય સે પરસ્પર વદ્ધ જો શરીરપુદ્ગલ હૈં ઉનકે સ્નેહગુણ કો લેકર જો સ્પર્ધક કી પ્રરૂપણા કી જાતી હૈં વહ નામપ્રત્યયસ્પર્ધકપ્રરૂપણા હૈ । શરીરપુદ્ગલોંકા કારણ બંધનનામકર્મ હૈ । ઇસ શરીરરૂપ પુદ્ગલસ્પર્ધક કી પ્રરૂપણા કા નામ નામપ્રત્યયસ્પર્ધકપ્રરૂપણા હૈ, એસા જાનના ચહિયે ૨ । તથા પ્રકૃષ્ટ યોગ કા નામ પ્રયોગ હૈ । વહ મન વચન એવં કાય કા વ્યાપારરૂપ બતલાયા ગયા હૈ । ઇસ

કરવામાં આવી છે. સ્નેહની પ્રરૂપણા ત્રણ રીતે થાય છે.—(૧) સ્નેહપ્રત્યયસ્પર્ધક પ્રરૂપણા (૨) નામપ્રત્યયસ્પર્ધકપ્રરૂપણા. (૩) પ્રયોગપ્રત્યયસ્પર્ધકપ્રરૂપણા.

(૧) જે સ્પર્ધકનું કારણ સ્નેહ હોય છે તે સ્પર્ધકની પ્રરૂપણાનું નામ સ્નેહપ્રત્યયસ્પર્ધકપ્રરૂપણા છે. (૨) જે સ્પર્ધકનું કારણ બન્ધન નામકર્મ હોય છે તે સ્પર્ધકની પ્રરૂપણાનું નામ નામપ્રત્યયસ્પર્ધકપ્રરૂપણા છે. એટલે કે શરીરબન્ધનનામકર્મના ઉદયથી પરસ્પર વદ્ધ જે શરીર-પુદ્ગલ છે તેમના સ્નેહગુણને લઈને જે સ્પર્ધકની પ્રરૂપણા કરવામાં આવે છે તે નામપ્રત્યયસ્પર્ધકપ્રરૂપણા છે. શરીરપુદ્ગલોનું કારણ બંધનનામકર્મ છે. આ શરીરરૂપ પુદ્ગલ સ્પર્ધકની પ્રરૂપણાનું નામ નામપ્રત્યયસ્પર્ધકપ્રરૂપણા છે, એવું જાણવું જોઈએ. (૩) તથા પ્રકૃષ્ટ યોગનું નામ પ્રયોગ છે. તે મન, વચન, અને કાયાના વ્યાપાર

इह स्नेहप्रत्ययस्पर्धकस्याधिकारात् तत्प्ररूपणा क्रियते—

स्नेहप्रत्ययस्पर्धकम्— स्नेहप्रत्यય=સ્નેહનિમિત્તમ્ એકૈકસ્નેહાવિભાગવૃદ્ધાનાં પુદ્ગલવર્ગણાનાં સમુદાયરૂપં યત્ સ્પર્ધકં તત્ સ્નેહપ્રત્યયસ્પર્ધકમ્ । તદ્ એકં ભવતિ । તસ્મિંશ્ચ સ્પર્ધકે અવિભાગવર્ગણાઃ=એકૈકસ્નેહાવિભાગાધિક-પરમાણુસમુદાયરૂપા વર્ગણા અનન્તા દ્રષ્ટવ્યાઃ । તાસુ વર્ગણાસુ અલ્પસ્નેહયુક્તાઃ પુદ્ગલા બહવઃ સન્તિ, પ્રભૂતસ્નેહયુક્તાસ્તુ પુદ્ગલાઃ સ્વલ્પાઃ ।

योग કે નિમિત્ત સે જો પુદ્ગલ ગ્રહણ કિયે જાતે હૈં જન કે સ્નેહગુણ કો લેકર સ્પર્ધક કી પ્રરૂપણા કી જાતી હૈં વહ પ્રયોગપ્રત્યયસ્પર્ધક પ્રરૂપણા હૈં ૩ ।

यहां स्नेहप्रत्ययस्पर्धकका अधिकार है अतः उसकी प्ररूपणा की जाती है ।

एक २ स्नेहगुण के अविभागसे वर्धित जो पुद्गलवर्गणाओं का समुदायरूप स्पर्धक होता है वह स्नेहप्रत्ययस्पर्धक है, और वह एक है । इस एक स्पर्धकमें अविभागवर्गणाएँ—एक २ स्नेहगुण के अविभागकी अधिकतावाले परमाणुओं के समुदायरूप वर्गणाएँ अनंत होती हैं । इन वर्गणाओंमें अल्पस्नेहगुणयुक्त पुद्गल बहुत होते हैं, तथा प्रभूतस्नेहगुण-युक्त पुद्गल बहुत थोड़े होते हैं ।

રૂપ યતાવાયુ' છે. આ યોગના નિમિત્તથી જે પુદ્ગલો ગ્રહણ કરાય છે, તેમના સ્નેહગુણને લઈ ને સ્પર્ધકની પ્રરૂપણા કરાય છે, તે પ્રયોગપ્રત્યયસ્પર્ધક પ્રરૂપણા છે.

અહીં સ્નેહપ્રત્યયસ્પર્ધકનો અધિકાર છે તેથી તેની પ્રરૂપણા કરવામાં આવે છે.

એક એક સ્નેહગુણના અવિભાગથી વર્ધિત જે પુદ્ગલવર્ગણાઓના સમુદાયરૂપ સ્પર્ધક હોય છે તે સ્નેહપ્રત્યયસ્પર્ધક છે, અને તે એક છે આ એક સ્પર્ધકમાં અવિભાગ વર્ગણાઓ—એક એક સ્નેહગુણના અવિભાગની અધિકતા વાળાં પરમાણુઓના સમુદાયરૂપ વર્ગણાઓ અનંત હોય છે. એ વર્ગણાઓમાં અલ્પસ્નેહગુણવાળાં પુદ્ગલ ઘણાં જ હોય છે, તથા વધારે સ્નેહ ગુણવાળાં પુદ્ગલો ઘણાં થોડાં હોય છે.

(૧) સ્નેહાવિભાગઃ=રસાણુઃ ।



इयमत्र भावना—इह यः सर्वोत्कृष्टः स्नेहः स केवलिप्रज्ञाछेदनकेन छिद्यते, छित्त्वा छित्त्वा च निर्विभागा भागाः पृथक् पृथग् व्यवस्थाप्यन्ते । तत्र जगति ये केचित् परमाणव एकेन स्नेहस्य निर्विभागेन भागेन युक्ताः सन्ति, तेषां समुदायः प्रथमा वर्गणा । ये तु द्वाभ्यां स्नेहाविभागाभ्यां युक्ताः परमाणवः सन्ति तेषां समुदायो द्वितीया वर्गणा । एवं त्रिभिश्चतुर्भिः पञ्चभिश्च स्नेहाविभागयुक्तानां पुद्गलानां समुदायस्तृतीया, चतुर्थी, पञ्चमी च वर्गणा । एवं संख्येयैः स्नेहाविभागैर्युक्तानां पुद्गलानां समुदायः संख्येया वर्गणा वाच्याः। असंख्येयैः स्नेहाविभागैर्युक्तानां पुद्गलानां समुदायस्तु असंख्येया वर्गणा भवन्ति । अनन्तैः स्नेहाविभागैर्युक्तानां पुद्ग-

इसका अभिप्राय इस प्रकार है—इन वर्गणाओं में जो सर्वोत्कृष्ट स्नेह है उसके, केवली की प्रज्ञारूप छैनी से छेद—खंड—करो, छेद करते २ जो अंतमें अविभाग खंड निकले उन्हें पृथक् एक तरफ रख दो। इस तरह जगतमें जो कोई परमाणु एकस्नेहगुण के अविभाग भागवाले हैं, उनके समुदायरूप यह प्रथम वर्गणा निकल आती है। इसी तरह जो पुद्गलपरमाणु दो स्नेहगुण के अविभाग भाग से युक्त हैं उनके समुदायरूप द्वितीयवर्गणा स्थापित हो जाती है। इसी तरह तीन, चार पांच स्नेहगुण के अविभाग भागों से युक्त पुद्गलपरमाणुओं के समुदायरूप तृतीय चतुर्थ, पंचम वर्गणाएँ हो जाती हैं। इसी प्रकार संख्यात स्नेहगुण के अविभागभागों से विशिष्ट पुद्गलों के समुदायरूप संख्यातवर्गणाएँ, असंख्यात स्नेहगुण के अविभागभागों से युक्त पुद्गलों के समुदायरूप असंख्यात वर्गणाएँ, एवं अनंत स्नेहगुण के अविभागभागों से युक्त

તેનુ તાત્પર્ય આ પ્રમાણે છે—એ વર્ગણાઓમાં જે સર્વોત્કૃષ્ટ સ્નેહ છે તેના કેવળીની પ્રજ્ઞારૂપી છૈની (છીણી) થી છેદ (ખંડ) કરો, છેદ કરતાં કરતાં છેવટે જે અવિલાન્ય નિકળે તેને જુદો એક બાબુ મૂકી દો. આ રીતે જગતમાં જે કોઈ પરમાણુ એક સ્નેહગુણના અવિલાન્ય ભાગવાળાં છે એમના સમુદાયરૂપ આ પહેલી વર્ગણા નિકળી આવે છે. આ રીતે જે પુદ્ગલપરમાણુ બે સ્નેહ-ગુણના અવિલાન્ય ભાગથી યુક્ત છે તેમના સમુદાયરૂપ બીજી વર્ગણા સ્થાપિત થઈ જાય છે. એ જ પ્રમાણે ત્રણ, ચાર પાંચ સ્નેહગુણના અવિલાન્ય ભાગોથી યુક્ત પુદ્ગલ પરમાણુઓના સમુદાયરૂપ ત્રીજી, ચોથી, પાંચમી વર્ગણાઓ થઈ જાય છે. એ જ રીતે સખ્યાત સ્નેહ ગુણના અવિલાન્ય ભાગોથી વિશિષ્ટ પુદ્ગલોના સમુદાયરૂપ સખ્યાત વર્ગણાઓ, અસખ્ય સ્નેહગુણના અવિલાન્ય ભાગોથી યુક્ત પુદ્ગલોના સમુદાયરૂપ અસખ્યવર્ગણાઓ, અને અનંત સ્નેહગુ-

લાનાં સમુદાયસ્ત્વનન્તા વર્ગના ભવન્તિ । આભિઃ સર્વાભિર્વર્ગનાભિરેકં સ્પર્ધકં ભવતિ ।  
તાનિ ચ સ્પર્ધકાનિ અભવ્યેભ્યોઽનન્તગુણાનિ, સિદ્ધેભ્યોઽનન્તભાગહીનાનિ ભવન્તિ ।

॥ ઇતિ સ્નેહપ્રત્યયસ્પર્ધકપ્રરૂપણા ॥

નામપ્રત્યયસ્પર્ધકં ૨ પ્રયોગપ્રત્યયસ્પર્ધકં ૩ ચાન્યત્ર પ્રરૂપિતમ્, ઇહાનુપયુક્ત-  
ત્વાદ્ વિસ્તરભયાચ્ચ વિરમ્યતે ।

ઇહ રસભેદતઃ પ્રકૃતીનાં સર્વઘાતિત્વં દેશઘાતિત્વં ચ ભવતિ, અતઃ સર્વઘાતિ-  
દેશઘાતિ-પ્રકૃતયઃ પ્રોચ્યન્તે । તત્ર સર્વઘાતિન્યઃ પ્રકૃતયો વિંશતિસંખ્યકા ભવન્તિ,

પુદ્ગલોં કે સમુદાયરૂપ અનંતવર્ગનાં હો જાતીં હૈં । इन समस्तवर्गणाओं  
से एक स्पर्धक बनता है । अर्थात् एक स्पर्धक में संख्यात असंख्यात एवं  
अनंतवर्गणाँ तक रहती हैं । ये वर्गणाँ अभव्यराशि से अनंतगुणी  
और सिद्धराशि के अनंतवें भाग बतलाई गई हैं ॥१॥

यह स्नेहप्रत्ययस्पर्धकपरूपणा हुई ॥ १ ॥

નામપ્રત્યયસ્પર્ધક એવં પ્રયોગપ્રત્યયસ્પર્ધક, इन दोनों का यहां प्रकरण  
नहीं है अतः इनका कथन यहां विस्तारभय से नहीं किया गया है,  
वह ग्रन्थान्तर से समझलेवे ।

કર્મપ્રકૃતિયોંમેં જો સર્વઘાતિપના એવં દેશઘાતિપના હૈં વહ રસભેદ  
કી અપેક્ષા સે હી હૈં, इसलिये सर्वघाती प्रकृतियां कौन२ सी हैं और  
देशघातीप्रकृतियां कौन२ सी हैं यह बतलाया जाता है—सर्वघातिप्रकृ-  
तियां २० बीस हैं और वे इस प्रकार हैं—केवलज्ञानावरणीय १, केवल-

જોના અવિભાજ્ય ભાગોથી યુક્ત પુદ્ગલોના સમુદાયરૂપ અનંત વર્ગણાઓ થઈ  
જાય છે. એ સમસ્ત વર્ગણાઓ વડે એક સ્પર્ધક બને છે. એટલે કે એક  
સ્પર્ધકમાં સંખ્યાત, અસંખ્યાત અને અનંત વર્ગણાઓ પણ રહે છે. એ વર્ગણાઓ  
અભવ્યરાશીથી અનેક ગણી અને સિદ્ધરાશીના અનંતમાં ભાગની બતાવવામાં  
આવી છે. ॥૧॥

॥ આ સ્નેહપ્રત્યયસ્પર્ધકપરૂપણા થઈ ॥૧॥

નામપ્રત્યયસ્પર્ધક અને પ્રયોગપ્રત્યયસ્પર્ધક એ બન્નેનું પ્રકરણ અહીં નહીં  
હોવાથી તેમનું વર્ણન અહીં વિસ્તારભયથી કરાયું નથી. તે બીજાં શ્રેયોમાંથી  
સમજ લેવું.

કર્મપ્રકૃતિયોમાં જે સર્વઘાતિપણું અને દેશઘાતિપણું છે તે રસભેદની  
અપેક્ષાએ જ છે, તેથી સર્વઘાતી પ્રકૃતિયો કઈ કઈ છે, અને દેશઘાતી પ્રકૃતિયો  
કઈ કઈ છે તે બતાવવામાં આવે છે—સર્વઘાતી પ્રકૃતિયો વીસ છે અને તે  
આ પ્રમાણે છે—

તથાહિ-કેવલાવરણદ્વિકમ્-કેવલજ્ઞાનાવરણીયમ્ ૧, કેવલદર્શનાવરણીયમ્ ૨ । નિદ્રા-પञ्चકમ્-નિદ્રા ૧, નિદ્રા-નિદ્રા ૨, પ્રચલા ૩, પ્રચલા-પ્રચલા ૪, સ્ત્યાનર્દ્ધિઃ ૫ । દ્વાદશ કષાયાઃ-ક્રોધમાનમાયાલોભાનાં ચતુર્ણાં પ્રત્યેકમનન્તાનુબન્ધ્ય ૧, પ્રત્યાખ્યાનાવરણ ૨-પ્રત્યાખ્યાનાવરણ ૩-નામત્રયેણ દ્વાદશવિધત્વમ્ । તથા-મિથ્યાત્વમોહનીયં ચેતિ ૨૦ । એતા વિશતિઃ પ્રકૃતયઃ-સર્વમપિ સ્વાઽઽવાર્યગુણં ઘાતયન્તીત્યેવંશીલાઃ સર્વઘાતિન્ય ઉચ્યન્તે । સર્વઘાતિપ્રકૃતીનાં સર્વઘાતીન્યેવ રસસ્પર્ધકાનિ ભવન્તિ ।

અથ દેશઘાતિન્યઃ પ્રકૃતય ઉચ્યન્તે-દેશઘાતિરસસ્પર્ધકયુક્તાઃ પ્રકૃતયો મતિજ્ઞાનાવરણાદિરૂપાઃ પञ્ચવિંશતિસંખ્યકા દેશઘાતિન્યો વ્યવહિયન્તે, તથાહિ-જ્ઞાનાવરણીયચતુષ્ટયમ્-મતિજ્ઞાનાવરણીયમ્ ૧, શ્રુતજ્ઞાનાવરણીયમ્ ૨, અવધિજ્ઞાનાવરણીયમ્ ૩, મનઃપર્યયજ્ઞાનાવરણીયમ્ ૪ । દર્શનાવરણીયત્રિકમ્=ચક્ષુર્દર્શનાવરણીયમ્ ૧,

દર્શનાવરણીય ૨, નિદ્રા ૩, નિદ્રાનિદ્રા ૪, પ્રચલા ૫, પ્રચલાપ્રચલા ૬, સ્ત્યાનર્દ્ધિ ૭, અનંતાનુબંધી ૮, ક્રોધ-માન ૯, માયા ૧૦, લોભ ૧૧, અપ્રત્યાખ્યાનાવરણ-ક્રોધ ૧૨, માન ૧૩, માયા ૧૪, લોભ ૧૫, પ્રત્યાખ્યાનાવરણ-ક્રોધ ૧૬, માન ૧૭, માયા ૧૮, લોભ ૧૯, તથા મિથ્યાત્વમોહનીય ૨૦ । યે સર્વઘાતિપ્રકૃતિયાં હસ લિયે કહી જાતી હૈં કિ યે અપને દ્વારા આવાર્ય જ્ઞાનાદિક ગુણોં કા સર્વરૂપ સે ઘાત કરતી હૈં । હનકે રસસ્પર્ધક ભી સર્વઘાતિરૂપ હી હુઆ કરતે હૈં ।

દેશઘાતિ પ્રકૃતિયાં ૨૫ પચ્ચીસ હોતી હૈં । હનકે રસસ્પર્ધક દેશઘાતી હુઆ કરતે હૈં । મતિજ્ઞાનાવરણીય ૧, શ્રુતજ્ઞાનાવરણીય ૨, અવધિજ્ઞાનાવરણીય ૩, મનઃપર્યયજ્ઞાનાવરણીય ૪, ચક્ષુર્દર્શનાવરણીય ૫, અચક્ષુ-

(૧) કેવળજ્ઞાનાવરણીય, (૨) કેવળદર્શનાવરણીય, (૩) નિદ્રા (૪) નિદ્રાનિદ્રા (૫) પ્રચલા, (૬) પ્રચલાપ્રચલા, (૭) સ્ત્યાનર્દ્ધિ, અનંતાનુ-બંધી-(૮) ક્રોધ, (૯) માન, (૧૦) માયા, (૧૧) લોભ, અપ્રત્યાખ્યાનાવરણ-(૧૨) ક્રોધ, (૧૩) માન, (૧૪) માયા, (૧૫) લોભ, પ્રત્યાખ્યાનાવરણ-(૧૬) ક્રોધ, (૧૭) માન, (૧૮) માયા, (૧૯) લોભ, તથા (૨૦) મિથ્યાત્વમોહનીય. તેઓ સર્વઘાતી પ્રકૃતિયો એટલા માટે કહેવાય છે કે તેઓ પોતાના વડે આવાર્ય જ્ઞાનાદિક ગુણોના સર્વરૂપથી ઘાત કરે છે. તેમના રસસ્પર્ધક પણ સર્વઘાતિરૂપ જ થયા કરે છે.

દેશઘાતી પ્રકૃતિયો પચ્ચીસ હોય છે તેમના રસસ્પર્ધક દેશઘાતી થયા કરે છે.—(૧) મતિજ્ઞાનાવરણીય, (૨) શ્રુતજ્ઞાનાવરણીય, (૩) અવધિજ્ઞાનાવરણીય, (૪) મનઃપર્યયજ્ઞાનાવરણીય, (૫) ચક્ષુર્દર્શનાવરણીય, (૬) અચક્ષુર્દર્શના-

अवधुर्दर्शनावरणीयम् २, अवधिदर्शनावरणीयम् ३ । संज्वलनरूपाश्चत्वारः क्रोधादि-  
कषायाः ४ । नोकषाया नव-हास्य १-रत्य २-रति ३-शोक ४-भय ५-जुगु-  
प्सा ६-स्त्रीवेद ७-पुंवेद ८-नपुंसकवेद ९-स्वरूपाः । पञ्चविधमन्तरायम्-दान १-  
लाभ २-भोगो ३-पभोग ४-वीर्य ५-रूपम् । एवं देशघातिन्यः पञ्चविंशतिसं-  
ख्यकाः प्रकृतयो भवन्ति । देशघातिप्रकृतीनां देशघातीनि सर्वघातीनि च  
रसस्पर्धकानि भवन्ति ।

तत्प्रतिपक्षभूता अघातिन्यः प्रकृतयो भवन्ति । एताः पञ्चसप्ततिसंख्यकाः प्रकृ-  
तयो न कश्चिद् गुणं घातयन्ति तस्मादघातिन्य उच्यन्ते । एता अघातिन्योऽपि सर्व-

दर्शनावरणीय ६, अवधिदर्शनावरणीय ७, संज्वलन-क्रोध ८, मान ९,  
माया १०, लोभ ११, हास्य १२, रति १३, अरति १४, शोक १५,  
भय १६, जुगुप्सा १७, स्त्रीवेद १८, पुंवेद १९, नपुंसकवेद २०, दाना-  
न्तराय २१, लाभान्तराय २२, भोगान्तराय २३, उपभोगान्तराय २४,  
वीर्यान्तराय २५ । इस प्रकार ये पच्चीस हो जाती हैं ।

देशघातिप्रकृतियों के रसस्पर्धक देशघाती एवं सर्वघाती दोनों  
प्रकार के होते हैं । ये २५ पच्चीस प्रकृतियां देशघाती इसलिये कही  
गई हैं कि ये अपने द्वारा आवार्य ज्ञानादिक गुणों का सर्वरूप से घात  
नहीं करती हैं किन्तु एकदेशरूप से घात करती हैं । ये पूर्वोक्त भेद  
घातिया कर्मों की प्रकृतियोंमें होते हैं ।

अब इनके प्रतिपक्षभूत जो अघातिया कर्म हैं उनकी प्रकृतियां ७५  
पचहत्तर हैं । ये पचहत्तर प्रकृतियां किसी गुणका घात नहीं करती हैं

वरणीय, (६) अवधिदर्शनावरणीय, (७) संज्वलन (८) क्रोध, (९) मान, (१०) माया,  
(११) लोभ, (१२) हास्य, (१३) रति, (१४) अरति, (१५) शोक, (१६) भय,  
(१७) जुगुप्सा, (१८) स्त्रीवेद, (१९) पुंवेद, (२०) नपुंसकवेद, (२१) दानान्तराय,  
(२२) लाभान्तराय, (२३) भोगान्तराय, (२४) उपभोगान्तराय, (२५) वीर्यान्तराय,  
आ रीते ते पञ्चीश होय छे ।

देशघाती प्रकृतियोना रसस्पर्धक देशघाती अने सर्वघाती अने गन्ने प्रकारना  
होय छे । ते पञ्चीश प्रकृतियोने देशघाती अटला भाटे कडेवासां आवी छे के  
तेओ पोताना वडे आवार्य ज्ञानादिक गुणोना सर्वरूपे घात करती नथी पणु अके  
देश रूपे घात करे छे । पूर्वोक्त ते लेह घातिया कर्मोनी प्रकृतियोमां होय छे ।

हुवे तेमना प्रतिपक्षभूत ने अघातिया कर्म छे तेमनी प्रकृतियो ७५  
पञ्चातेर छे । ते पञ्चातेर प्रकृतियो कोर्ध गुणोना घात करती नथी, तेथी अघाती

ઘાતિનીભિઃ સહ વેદ્યમાનાઃ સર્વઘાતિરસવિપાકં દર્શયન્તિ । દેશઘાતિનીભિઃ સહ-  
વેદ્યમાનાસ્તુ દેશઘાતિરસવિપાકં દર્શયન્તિ । યથા સ્વયમચૌરશ્ચૌરૈઃ સહ વર્તમાનશ્ચૌર  
ઇવાવભાસતે ।

આસાં નામાનિ-પ્રત્યેકનામકર્મપ્રકૃતયોઽષ્ટૌ-પરાઘાતો ૧-ઉચ્છ્વાસો ૨-આતપો ૩-  
ઉદ્યોતો ૪-અગુરુલઘુ ૫-તીર્થકર ૬-નિર્માણો ૭-ઉપઘાત ૮-રૂપાઃ । શરીરાષ્ટકમ્-  
ઔદારિક ૧-વૈક્રિયા ૨-આહારક ૩-તૈજસ ૪-કાર્મણ ૫-શરીરાણિ પશ્ચ, ઉપાદ્ધાનિ  
ત્રીણિ-ઔદારિક-વૈક્રિયા-આહારકાદ્ગોપાદ્ધરૂપાણિ, એતાન્યષ્ટૌ । સંસ્થાનાનિ ૫૬ ।  
સંહનનાનિ ૫૬ । જાતયઃ ૫૭ । ગતયશ્ચતસ્રઃ । વિહાયોગતી દ્વે । આનુપૂર્વ્યશ્ચતસ્રઃ ।  
આયુષિ ચત્વારિ । ત્રસદશકમ્ । સ્થાવરદશકમ્ । ગોત્રદ્વિકમ્ । વેદનીયદ્વયમ્ ।  
વર્ણાદયશ્ચતસ્રઃ । ઇતિ પશ્ચસપ્તતિઃ ૭૫ ।

અતઃ અઘાતી કહલાતી હૈં । યે અઘાતી પ્રકૃતિયાં સર્વઘાતી પ્રકૃતિયોં કે  
સાથ જવ વેદ્યમાન હોતી હૈં તવ સર્વઘાતી રસવિપાક કો દિશ્વલાતી હૈં ।  
ઔર જવ દેશઘાતી પ્રકૃતિયોં કે સાથ વેદ્યમાન હોતી હૈં તવ દેશઘાતી  
રસવિપાક કો દિશ્વલાતી હૈં । જૈસે કોઈ સ્વયં ચોર નહીં હોતે હુએ મી  
ચોરોં કે સાથમેં રહને સે ચૌર જૈસા હો જાતા હૈં વૈસે હી યે પ્રકૃતિયાં હૈં ।

વે ૭૫ પચહત્તર પ્રકૃતિયાં હસ પ્રકાર હૈં—પરાઘાત ૧, ઉચ્છ્વાસ ૨,  
આતપ ૩, ઉદ્યોત ૪, અગુરુલઘુ ૫, તીર્થકર ૬, નિર્માણ ૭, ઉપઘાત ૮,  
ઔદારિક ૯, વૈક્રિયિક ૧૦, આહારક ૧૧, તૈજસ ૧૨, કાર્મણ ૧૩,  
ઔદારિક અંગોપાંગ ૧૪, વૈક્રિયિક અંગોપાંગ ૧૫, આહારક અંગો-  
પાંગ ૧૬, સંસ્થાન ૬ (૨૨), સંહનન ૬ (૨૮), જાતિ ૫ (૩૩), ગતિ ૪ (૩૭),

કહેવાય છે. એ અઘાતી પ્રકૃતિયો સર્વઘાતી પ્રકૃતિયોની સાથે જ્યારે વેદ્યમાન  
થાય છે ત્યારે સર્વઘાતી રસવિપાકને દર્શાવે છે, અને જ્યારે દેશઘાતી પ્રકૃતિ-  
યોની સાથે વેદ્યમાન થાય છે ત્યારે દેશઘાતી રસવિપાકને દર્શાવે છે. જેવી  
રીતે કોઈ પોતે ચોર ન હોવા છતાં પણ ચોરોની સાથે રહેવાથી ચોર જેવો  
બની જાય છે. એવી જ એ પ્રકૃતિયો છે.

તે ૭૫ પચોતેર પ્રકૃતિયો આ પ્રમાણે છે—(૧) પરાઘાત, (૨) ઉચ્છ્-  
વાસ, (૩) આતપ, (૪) ઉદ્યોત, (૫) અગુરુલઘુ, (૬) તીર્થકર, (૭) નિર્માણ,  
(૮) ઉપઘાત, (૯) ઔદારિક, (૧૦) વૈક્રિયિક, (૧૧) આહારક, (૧૨) તૈજસ, (૧૩)  
કાર્મણ, (૧૪) ઔદારિક અંગોપાંગ, (૧૫) વૈક્રિયિક અંગોપાંગ, (૧૬) આહારક  
અંગોપાંગ, સંસ્થાન ૬ (૧૭થી૨૨), સંહનન ૬ (૨૩થી૨૮), જાતિ ૫ (૨૯થી૩૩),  
ગતિ ૪ (૩૪થી૩૭), વિહાયોગતિ ૨ (૩૮થી૩૯), આનુપૂર્વી ૪ (૪૦થી૪૩),

इह रसभेदतः प्रकृतीनां सर्वघातित्वं देशघातित्वं च भवतीत्युक्तम् । रसः सर्वघातित्वेन देशघातित्वेन च प्ररूप्यते । तत्र प्रथमं सर्वघातिरसस्वरूपमुच्यते—

जो घाण्ड सविसयं, सयलं सो होइ सव्वघाइरसो ।

निच्छिद्रो निद्धो तणु, फलिहब्भहारअइविमलो ॥ १ ॥

છાયા—યઃ ઘાતયતિ સ્વવિષયં સકલં સ ભવતિ સર્વઘાતિરસઃ ।

निश्छिद्रः स्निग्धस्तनुः स्फटिकाभ्रहारातिविमलः ॥ १ ॥

यः स्वविषयं ज्ञानादिकं सकलमपि घातयति=स्वकार्यसाधनं प्रत्यसमर्थं करोति, स रसः सर्वघाती भवति । स च ताम्रभाजनवत् निश्छिद्रो, घृतमिवातिशयेन स्निग्धः, तथा-तनुः=द्राक्षावत् तनुप्रदेशोपचितः, तथा-स्फटिकाभ्रहारवच्चातीव

વિહાયોગતિ ૨ (૩૯), આનુપૂર્વી ૪ (૪૩), આયુ ૪ (૪૭), ત્રાસ ૧૦ (૫૭), સ્થાવર ૧૦ (૬૭), ગોત્ર ૨ (૬૯), વેદનીય ૨ (૭૧), વર્ણાદિક ૪ (૭૫) ।

रस के भेद से प्रकृतियों में सर्वघातिपना एवं देशघातिपना होता है, यह बात समझा दी गई, अब सर्वघाती एवं देशघाती रसों में से प्रथम सर्वघाती रसका स्वरूप कहते हैं—

“ जो घाण्ड सविसयं, सयलं सो होइ सव्वघाइरसो ।

निच्छिद्रो निद्धो तणु, फलिहब्भहारअइविमलो ” ॥ १ ॥

જો અપને વિષયભૂત જ્ઞાનાદિકોં કા મમ્પૂર્ણરૂપ સે ઘાત કરતા હૈ વહ સર્વઘાતી રસ કહલાતા હૈ । યહ તામ્રભાજન કે સમાન નિશ્ચિદ્ર હોતા હૈ । ઘૃતકે સમાન અતિશય સ્નિગ્ધ હોતા હૈ । દ્રાક્ષા કી તરહ તનુ-પ્રદેશોં સે ઉપચિત હોતા હૈ । તથા સ્ફટિક, શરદ ઋતુ કા મેઘ એવં હાર

આયુ ૪ (૪૪થી૪૭), ત્રાસ ૧૦ (૪૮થી૫૭), સ્થાવર ૧૦ (૫૮થી૬૭), ગોત્ર ૨ (૬૮થી૬૯), વેદનીય ૨ (૭૦, ૭૧), વર્ણાદિક ૪ (૭૨થી૭૫).

રસના ભેદથી પ્રકૃતિયોમાં સર્વઘાતિપણું અને 'દેશઘાતિપણું' થાય છે એ વાત સમજાવી દેવામાં આવી છે. હવે સર્વઘાતી અને દેશઘાતી રસોમાંથી પહેલાં સર્વઘાતી રસનું સ્વરૂપ કહે છે—

“ जो घाण्ड सविसयं, सयलं सो होइ सव्वघाइरसो ।

निच्छिद्रो निद्धो तणु, फलिहब्भहारअइविमलो ” ॥ ૧ ॥

જે પોતાના વિષયભૂત જ્ઞાનાદિકોના સંપૂર્ણરૂપથી ઘાત કરે છે તે સર્વઘાતિરસ કહેવાય છે. આ તામ્રપાત્રની જેમ નિશ્ચિદ્ર (છેદરહિત) હોય છે. ધીના જેવું અતિશય સ્નિગ્ધ હોય છે. દ્રાક્ષની જેમ તનુપ્રદેશથી ઉપચિત હોય છે. તથા



નિર્મલો ભવતિ । इह रसः केवलो न भवति, तस्माद्रसस्पर्धकसंघात एवरूपो भवतीति ज्ञेयम् । अथ देशघातिरसस्वरूपमुच्यते—

देशविघाइट्तणओ, इयरो कडकंवलंसुसंकासो ।

विविहबहुच्छिद्भरिओ, अप्पसिणेहो अविमलो य ॥ १ ॥

છાયા—દેશવિઘાતિત્વાત્, ઇતરઃ કટ-કમ્બલાં-શુકસંકાશઃ ।

વિવિધ-વહુચ્છિદ્ર-ભૃતઃ, અલ્પસ્નેહઃ અવિમલશ્ચ ॥ ૧ ॥

વ્યાખ્યા—ઇતરઃ દેશઘાતી રસઃ, દેશઘાતિત્વાત્=સ્વવિષયૈકદેશઘાતિત્વાત્, વિવિધવહુચ્છિદ્રભૃતો ભવતિ । તત્ર દૃષ્ટાન્તમાહ—‘કડકંવલંસુસંકાસો’ ઇતિ । કટ-કમ્બલાં-શુકસંકાશઃ=કટો વંશદલનિર્મિતઃ, ‘ચટાઈ’ ઇતિ ભાષાપ્રસિદ્ધઃ । કમ્બલ ઝર્ણામયઃ, અંશુકં=વસ્ત્રં, તત્સદ્કાશઃ=તત્સદ્દશઃ । કશ્ચિત્-કટવદ્ અતિસ્થૂલચ્છિદ્રશતસંકુલઃ, કશ્ચિત્ કંબલ ઇવ મધ્યમવિવરશતસંકુલઃ, કશ્ચિત્ તથાવિધમસ-કી તરહ અત્યંત નિર્મલ હોતા હૈ । ઇસ રસકા સ્વતંત્ર અસ્તિત્વ નહીં પાયા જાતા હૈ । ઇસ લિયે યહાં રસ સે રસસ્પર્ધકરૂપ સંઘાત કા ગ્રહણ કરના ચાહિયે ઓર વહ રસસ્પર્ધક સંઘાત પૂર્વોક્ત સ્વરૂપ વાલા હૈ ।

अब देशघाती रसका स्वरूप कहते हैं—

“देशविघाइट्तणओ, इयरो कडकंवलंसुसंकासो ।

विविहबहुच्छिद्भरिओ, अप्पसिणेहो अविमलो य ” ॥ ૧ ॥

અપને વિષયભૂત જ્ઞાનાદિક ગુણોં કા એકદેશરૂપ સે ઘાત કરને કે કારણ વહ રસ દેશઘાતી કહલાતા હૈ । યહ વિવિધ વહુચ્છિદ્રોં સે યુક્ત હોતા હૈ । કોઈ ૨ દેશઘાતી રસ ચટાઈ કે સમાન સૈકડોં અતિસ્થૂલ ચ્છિદ્રોં સે યુક્ત હોતા હૈ । કોઈ ૨ કંબલ કે સમાન સૈકડોં મધ્યમ છેદોં

સ્ફટિક, શરદઋતુના મેઘ અને હારના જેવું અત્યંત નિર્મળ હોય છે. આ રસનું સ્વતંત્ર અસ્તિત્વ જણાતું નથી, તેથી અહીં રસથી રસસ્પર્ધકરૂપ સંઘાતને ગ્રહણ કરવો જોઈએ, અને તે રસસ્પર્ધકસંઘાત પૂર્વકથિત સ્વરૂપવાળો છે. હવે દેશઘાતી રસનું સ્વરૂપ કહે છે—

“ देशविघाइट्तणओ, इयरो कड-कवलं-सु-संकासो ।

विविह-बहुच्छिद्भरिओ, अप्पसिणेहो अविमलो य ” ॥ ૧ ॥

પોતાના વિષયભૂત જ્ઞાનાદિક ગુણોના એક દેશરૂપથી ઘાત કરવાને કારણે તે રસ દેશઘાતી કહેવાય છે. તે વિવિધ બહુ છિદ્રોવાળો હોય છે. કોઈ કોઈ દેશઘાતી રસ ચટાઈનાં જેવાં સેંકડો અતિસ્થૂળ છિદ્રોવાળો હોય છે. કોઈ કોઈ કામળાનાં જેવાં સેંકડો મધ્યમ છિદ્રોવાળો હોય છે. કોઈ કોઈ ચિકણું વસ્ત્રની

ળવસ્ત્રવદતીવમૂક્ષ્મવિવરસંવૃતો ભવતીત્યર્થઃ । તથા-અલ્પસ્નેહઃ—સ્વરૂપતોઽલ્પસ્નેહઃ, સ્તોકસ્નેહાઽવિભાગસમુદાયરૂપ इत्यर्थः । તથા અવિમલશ્ચ નૈર્મલ્યરહિતશ્ચ ભવતિ ॥૧॥

કર્મણામુદયે ક્ષાયોપશમિકભાવસ્ય પ્રાદુર્ભાવઃ ।

નનુ ક્ષાયોપશમિકો ભાવઃ કર્મણામુદયે સતિ ભવત્યનુદયે વા ?, ન તાવદુદયે, વિરોધાત્ । તથાહિ-ક્ષાયોપશમિકો ભાવ ઉદયાવલિકાપ્રવિષ્ટસ્યાંશસ્ય ક્ષયે સતિ, અનુદિતસ્ય ચોપશમે વિપાકોદયનિરોધલક્ષણે પ્રાદુર્ભવતિ, નાન્યથા । તતો યદ્યુદયઃ, કથં ક્ષયોપશમઃ ?, ક્ષયોપશમશ્ચેત્ કથમુદયઃ, તમઃપ્રકાશવત્ તયોર્વિરોધાદિતિ ? ।

વાલા હોતા હૈ । કોઈર ચિકને વસ્ત્ર કી તરહ અત્યંત સૂક્ષ્મ છિદ્રોં સે યુક્ત હોતા હૈ । ઇસમેં સ્નેહગુણ અલ્પરૂપમેં રહતા હૈ અર્થાત્ યહ થોડે સે સ્નેહ-ગુણ કે અવિભાગવાલે સમુદાયરૂપ હોતા હૈ । તથા નિર્મલતા સે રહિત હોતા હૈ ॥૧॥

કર્મોં કે ઉદયમેં ક્ષાયોપશમિક ભાવ કા પ્રાદુર્ભાવ—

શંકા—ક્ષાયોપશમિક ભાવ કર્મોં કે ઉદય હોને પર હોતા હૈ યા અનુદયમેં હોતા હૈ ? ઉદયમેં તો હો નહીં સકતા, ક્યોં કિ ક્ષાયોપશમિક ઔર ઉદય કા વિરોધ હૈ । ઉદયાવલિમેં પ્રવિષ્ટ અંશ કે ક્ષય હોને પર, અનુદિત અંશ કે ઉપશમ હોને પર—વિપાકોદય કે નિરોધ હોને પર—ક્ષાયોપશમિક ભાવ ઉત્પન્ન હોના હૈ, અન્યરૂપ સે ક્ષાયોપશમિક ભાવ નહીં હોતા હૈ, ઇસલિયે યદિ ક્ષાયોપશમિક કો ઉદયજન્મ માના જાયગા તો વહ ક્ષાયોપશમિક કૈસે કહલાવેગા ? અર્થાત્ વહ તો ઔદયિક ભાવ રૂપ હી કહલાવેગા । યદિ ઁસ કો ઔદયિક માના જાય તો ક્ષાયોપશ-

જેમ અત્યંત સૂક્ષ્મ છિદ્રોવાળો હોય છે. આમાં સ્નેહગુણ અલ્પરૂપમાં રહે છે. એટલે કે તે થોડાં પ્રમાણમાં સ્નેહગુણના અવિભાગવાળાં સમુદાયરૂપ હોય છે. તથા નિર્મળતાથી રહિત હોય છે (૧)

કર્મોના ઉદયમાં ક્ષાયોપશમિક ભાવનો પ્રાદુર્ભાવ—

શંકા—ક્ષાયોપશમિક ભાવ કર્મોના ઉદય થતાં થાય છે કે અનુદયમાં થાય છે ? ઉદયમાં તો થઈ શકતો નથી, કારણ કે ક્ષાયોપશમિક અને ઉદયનો વિરોધ હોય છે ઉદયાવલિમાં પ્રવિષ્ટ અંશનો ક્ષય થતા, તથા અનુદિત અંશનો ઉપશમ થતાં—વિપાકોદયનો નિરોધ થતાં—ક્ષાયોપશમિક ભાવ ઉત્પન્ન થાય છે, અન્યરૂપથી ક્ષાયોપશમિક ભાવ થતો નથી, તેથી જો ક્ષાયોપશમિકને ઉદયજન્મ માનવામાં આવે તો તે ક્ષાયોપશમિક કેવી રીતે કહેવાય ? એટલે કે તે તો ઔદયિકભાવરૂપ જ કહેવાશે. જો ઔદયિક માનવામાં આવે તો તેમાં ક્ષાયો-



અથાનુદયે ભવતીતિ પક્ષઃ, તથા સતિ કિં તેન ક્ષાયોપશમિકેન ભાવેન, ઉદયાભાવાદેવ વિવક્ષિતફલસિદ્ધિસંભવાત્ । તથાહિ—મતિજ્ઞાનાદીનિ જ્ઞાનાવરણાદ્યુદ-  
યાભાવાદેવ સેત્સ્યન્તિ, કિં ક્ષાયોપશમિકભાવપરિકલ્પનેન ? ।

ઉચ્યતે—કર્મણામુદયે ક્ષાયોપશમિકો ભાવઃ પ્રાદુર્ભવતિ । ન ચ તત્ર વિરોધોઽસ્તિ । ઉક્તશ્ચ—

ઉદયે વિ ય અવિરુદ્ધો, સ્વાત્વસમ્મો અણેગભેઽન્તિ ।

જહ ભવહ તિણ્હ ઇસો, પદેસઉદયમ્મિ મોહસ્સ ॥ ૧ ॥

છાયા—ઉદયેઽપિ ચ અવિરુદ્ધઃ, ક્ષાયોપશમોઽનેકભેદ ઇતિ ।

યદિ ભવતિ ત્રયાણામ્ ઇષઃ, પ્રદેશોદયે મોહસ્ય ॥ ૧ ॥

મિકતા ઉસમેં કૈસે આસકેગી, હસલિયે જૈસે અંધકાર એવં પ્રકાશમેં વિરોધ રહા કરતા હૈ ઉસી પ્રકાર ઉદય ઔર ક્ષયોપશમમેં ભી વિરોધ હૈ ।

યદિ કહો કિ કર્મોં કે અનુદયમેં હોતા હૈ તો એસી માન્યતામેં ક્ષાયોપશમિક ભાવ સે મતલબ હી કયા સધ સકતા હૈ, કારણ કિ કર્મોં કે ઉદય કે અભાવ સે હી વિવક્ષિત ફલ કી સિદ્ધિ સધ જાયગી, અર્થાત્ મતિજ્ઞાન આદિ જ્ઞાન જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મોં કે ઉદય કે અભાવ સે હી ઉત્પન્ન હોને લગેંગે ફિર ઇન્હેં ક્ષાયોપશમિક ભાવરૂપ સે માનને કી કયા આવશ્યકતા હૈ ? ।

ઉત્તર—ક્ષાયોપશમિક ભાવ કર્મોં કે ઉદયમેં હોતા હૈ હસમેં કોઈ વિરોધ નહીં હૈ । કહા ભી હૈ—

“ઉદયે વિ ય અવિરુદ્ધો, સ્વાત્વસમ્મો અણેગભેઽન્તિ ।

જહ ભવહ તિણ્હ ઇસો, પદેસઉદયમ્મિ મોહસ્સ ” ॥૧॥

પશમિકતા કેવી રીતે આવશે ? તેથી જેમ અંધકાર અને પ્રકાશમાં વિરોધ રહ્યા કરે છે, એજ પ્રમાણે ઉદય અને ક્ષયોપશમમાં વિરોધ છે.

જે એમ કહો કે કર્મોના અનુદયમાં થાય છે તો એવી માન્યતામાં ક્ષાયો-  
પશમિક ભાવથી મતલબ જ શી સધાય છે ? કારણ કે કર્મોના ઉદયના અભાવથી જ વિવક્ષિત ફળની સિદ્ધિ સધાશે, એટલે કે મતિજ્ઞાન આદિ જ્ઞાન જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મોના ઉદયના અભાવથી જ ઉત્પન્ન થવાં લાગશે, તો પછી તેમને ક્ષાયોપ-  
શમિકભાવ રૂપે માનવાની શી આવશ્યકતા છે ?

ઉત્તર—ક્ષાયોપશમિક ભાવ કર્મોના ઉદયમાં થાય છે આમાં કોઈ વિરોધ નથી. કહ્યું પણ છે.—

“ઉદયે વિ ય અવિરુદ્ધો, સ્વાત્વસમ્મો અણેગભેઽન્તિ ।

જહ ભવહ તિણ્હ ઇસો, પદેસઉદયમ્મિ મોહસ્સ ” ॥૧॥

વ્યાખ્યા—ઇહ યાનિ જ્ઞાનાવરણીયાદીનિ કર્માણિ સર્વથાક્ષયાત્ પ્રાગ્ ધ્રુવોદયાનિ, તેષામુદયાવસ્થાયામેવ ક્ષયોપશમો ભવિતુમર્હતિ, નાનુદયે । ઉદયાભાવે તેષાં જ્ઞાનાવરણીયાદિકર્મણામેવાસંભવાત્ । તસ્માદુદયાઽવિરુદ્ધઃ ક્ષાયોપશમિકો ભાવઃ ।

યત્તુ વિરોધોદ્ભાવનં ‘યદુદયઃ કથં ક્ષયોપશમઃ’ ઇત્યાદિ, તદપ્યયુક્તમ્, દેશઘાતિસ્પર્ધકાનામુદયેઽપિ કતિપયદેશઘાતિસ્પર્ધકાપેક્ષયા યથોક્તક્ષયોપશમાવિરોધાત્ ।

સ ચ ક્ષયોપશમો નૈકભેદઃ, કિં તુ તત્ર દ્રવ્યક્ષેત્રકાલાદિસામગ્રીતો વૈચિત્ર્ય-સમ્ભવાદનેકભેદ ઇતિ । અયમુદયાઽવિરુદ્ધઃ ક્ષાયોપશમિકો ભાવો યદિ ભવતિ, તર્હિ ત્રયાણામેવ કર્મણાં જ્ઞાનાવરણ-દર્શનાવરણા-ન્તરાયાણામ્, ન તુ સર્વપ્રકૃતીનામ્ ।

इस गाथा का अर्थ इस प्रकार है—क्षय होने से पहिले ज्ञानावरणीय आदि कर्म ध्रुवोदयवाले माने गये हैं इसलिये उदयावस्थामें ही इनका क्षयोपशम होता है, अनुदय अवस्थामें नहीं, अतः जब उदयावस्थामें ही इनका क्षयोपशम होता है और अनुदयावस्थामें नहीं होता है तो ऐसी स्थितिमें क्षायोपशमिक भाव कर्मों के उदय के साथ विरुद्ध नहीं हो सकता है । उदय के साथ जो इसका विरोधोद्भावन किया गया है सो वह इसलिये युक्तियुक्त नहीं प्रतीत होता है कि क्षायोपशमिक भावमें देशघाती स्पर्धकों का ही उदय रहता है, तथा सर्वघाती स्पर्धकों का उदयाभावरूप क्षय एवं कितनेक सर्वघाती स्पर्धकों का सदवस्थारूप उपशम रहता है, अतः देशघातिस्पर्धकों के उदय की अपेक्षा क्षायोपशमिक भाव में कर्मों का क्षयोपशम विरुद्ध नहीं पड़ता है । यह क्षयोपशम अनेक प्रकार का होता है, कारण कि इसमें द्रव्य, क्षेत्र, काल आदि

આ ગાથાનો અર્થ આ પ્રમાણે છે—ક્ષય થતાં પહેલાં જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મ ધ્રુવોદયવાળાં મનાયાં છે, તેથી ઉદયાવસ્થામાં જ તેમનો ક્ષયોપશમ થાય છે, અનુદય અવસ્થામાં નહીં. તેથી જ્યારે ઉદયાવસ્થામાં જ તેમનો ક્ષયોપશમ થાય છે અને અનુદયાવસ્થામાં થતો નથી ત્યારે એવી સ્થિતિમાં ક્ષાયોપશમિક ભાવ કર્મોના ઉદયની સાથે વિરુદ્ધ હોઈ શકતો નથી. ઉદયની સાથે જ તેનું વિરોધોદ્ભાવન કરવામાં આવ્યું છે તે આ કારણે યુક્તિયુક્ત પ્રતીત થતું નથી કે ક્ષાયોપશમિક ભાવમાં દેશઘાતિસ્પર્ધકોનો જ ઉદય રહે છે, તથા સર્વઘાતિસ્પર્ધકોનો ઉદયાભાવરૂપ ક્ષય અને કેટલાંક સર્વઘાતિસ્પર્ધકોના સદવસ્થારૂપ ઉપશમ રહે છે, તેથી દેશઘાતિસ્પર્ધકોના ઉદયની અપેક્ષાએ ક્ષાયોપશમિક ભાવમાં કર્મોનો ક્ષયોપશમ વિરુદ્ધ પડતો નથી. આ ક્ષયોપશમ અनेक प्रकारનું હોય છે, કારણ કે તેમાં દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાળ આદિ સમગ્રીની

નનુ તર્હિ મોહનીયસ્ય કર્મણઃ ક્ષયોપશમઃ કયં ભવતીતિ જિજ્ઞાસાયમાહ—  
'પદેસઉદયમ્મિ મોહસ્સ' ઇતિ । મોહસ્ય=મોહનીયસ્ય પ્રદેશોદયે ક્ષાયોપશમિક-  
ભાવસ્ય નાસ્તિ વિરોધઃ, કિન્તુ વિપાકોદય એવ । કિમત્ર કારણમિતિ ચેત્ ?

સામગ્રી કી અપેક્ષા સે અનેકવિધતા આ જાતી હૈ । ક્ષાયોપશમિક ભાવ  
મેં જો કર્મોં કે ઉદય કે સાથ અવિરોધતા બતલાઈ ગઈ હૈ વહ જ્ઞાનાવરણ  
દર્શનાવરણ એવં અન્તરાય, इन तीन कर्मों के उदय के साथ ही जाननी  
चाहिये, अन्य सर्व प्रकृतियों के उदय के साथ नहीं । तात्पर्य इसका यह  
है कि क्षायोपशमिक भाव इन तीन कर्मों के उदयमें ही होता है अन्य  
कर्मों के उदयमें नहीं । इन तीन कर्मों के उदय का तात्पर्य होता है  
देशघातिरसस्पर्धकों का उदय ।

શંકા—મોહનીય કર્મ કા ક્ષયોપશમ કૈસે હોતા હૈ ? । શંકાકાર કા  
પૂછને કા તાત્પર્ય યહ હૈ કિ જબ ક્ષયોપશમ इन तीन कर्मों का ही होता  
है तो फिर मोहनीय कर्म का क्षयोपशम कैसे होता है ? ।

ઉત્તર—મોહનાય કર્મ કા ક્ષયોપશમ પ્રદેશોદય કી અપેક્ષા સે હોતા  
હૈ, વિપાકોદય કી અપેક્ષા સે નહીં, ઇસલિયે ક્ષાયોપશમિક ભાવ મોહ-  
નીય કર્મ કે પ્રદેશોદયમેં વિરુદ્ધ નહીં પડતા હૈ । અર્થાત્ મોહનીય કર્મ કા  
પ્રદેશોદય મી હો ઔર ઉસકે સાથ ક્ષાયોપશમિક ભાવ મી હો, ઇસમેં  
વિરોધ કે લિયે કોઈ ગુંજાઈશ નહીં હૈ । હાં, વિરોધ વિપાકોદયમેં હી હૈ ।

અપેક્ષાએ અનેકવિધતા આવી જાય છે. ક્ષાયોપશમિક ભાવમાં કર્મોના ઉદયની  
સાથે જે અવિરોધતા બતાવવામાં આવી છે તે જ્ઞાનાવરણ, દર્શનાવરણ, અને  
અન્તરાય, એ ત્રણ કર્મોના ઉદયની સાથે જ જાણવી જોઈ એ, બીજા સર્વે પ્રકૃતિ-  
ઓના ઉદયની સાથે નહીં. તેનું તાત્પર્ય એ છે કે ક્ષાયોપશમિક ભાવ એ ત્રણ  
કર્મોના ઉદયમાં જ થાય છે, બીજાં કર્મોના ઉદયમાં નહીં. એ ત્રણ કર્મોના  
ઉદયનું તાત્પર્ય દેશઘાતિરસસ્પર્ધકોનો ઉદય, એવું થાય છે.

શંકા—મોહનીય કર્મનો ક્ષયોપશમ કેવી રીતે થાય છે ? શંકાકરનારની  
શંકાનું તાત્પર્ય એ છે કે જો એ ત્રણ કર્મોનો જ ક્ષયોપશમ થતો હોય તો  
પછી મોહનીય કર્મનો ક્ષયોપશમ કેવી રીતે થાય છે ?

ઉત્તર—મોહનીય કર્મનો ક્ષયોપશમ પ્રદેશોદયની અપેક્ષાએ થાય છે,  
વિપાકોદયની અપેક્ષાએ નહીં. તેથી ક્ષાયોપશમિક ભાવ મોહનીય કર્મના  
પ્રદેશોદયમાં વિરુદ્ધ પડતો નથી. એટલે કે મોહનીય કર્મનો પ્રદેશોદય પણ  
હોય અને તેની સાથે ક્ષાયોપશમિક ભાવ પણ હોય, તેમાં વિરોધને માટે કોઈ

ઉચ્યતે—યતોઽનંતાનુબંધ્યાદિપ્રકૃતયઃ સર્વઘાતિન્યઃ સન્તિ, સર્વઘાતિનીનાં ચ રસસ્પર્ધકાનિ સર્વાણ્યપિ સર્વઘાતીન્યેવ, ન તુ દેશઘાતીનિ ભવન્તિ । સર્વઘાતીનિ ચ રસસ્પર્ધકાનિ સ્વઘાત્યં ગુણં સર્વથા ઘનન્તિ, ન તુ દેશતઃ, અતસ્તેષાં વિપાકોદયે ક્ષયોપશમસમ્ભવો નાસ્તિ, કિન્તુ પ્રદેશોદયે ક્ષયોપશમો ભવિતુમર્હતિ ।

નનુ પ્રદેશોદયેઽપિ કથં ક્ષાયોપશમિકભાવસ્ય સમ્ભવઃ, સર્વઘાતિરસસ્પર્ધક-પ્રદેશાનાં સર્વ-સ્વઘાત્યગુણઘાતકત્વાદિતિ ચેત્ ? તદયુક્તમ્—વસ્તુતત્ત્વાપરિજ્ઞાનાત્ ।

इसका कारण यह है कि अनंतानुबंधी आदि प्रकृतियां सर्वघाती ही हैं । सर्वघाती प्रकृतियों के समस्त रसस्पर्धक सर्वघाती ही होते हैं, देशघाती नहीं होते हैं, अतः सर्वघाती जो रसस्पर्धक होते हैं वे अपने द्वारा घात करने योग्य गुण का सर्वथा रूपमें ही घात करते हैं, देशरूपमें नहीं, इस लिये सर्वघाती रसस्पर्धकों के विपाकोदयमें क्षयोपशम की संभावना ही नहीं होती है, किन्तु यह संभावना प्रदेशोदयमें ही होती है, इसलिये मोहनीय कर्म के प्रदेशोदयमें क्षयोपशम हो सकता है ।

શંકા—પ્રદેશોદયમાં મી ક્ષાયોપશમિક ભાવ કૈસે હો સકતા હૈ ? કારણ કિ જો સર્વઘાતિરસસ્પર્ધકોં કે પ્રદેશ હૈં વે અપને દ્વારા ઘાત કરને યોગ્ય જ્ઞાનાદિક ગુણોં કા સર્વરૂપ સે હી ઘાત કરનેવાલે હોતે હૈં ફિર इनके प्रदेशोदयमें क्षायोपशमिक भावकी सत्ता अविरुद्ध कैसे मानी जावेगी ।

સ્થાન નથી. હા, વિરોધ વિપાકોદયમાં જ છે. તેનું કારણ એ છે કે અનંતાનુબંધી આદિ પ્રકૃતિયો સર્વઘાતી જ છે. સર્વઘાતી પ્રકૃતિયોના સમસ્ત રસસ્પર્ધકો સર્વઘાતી જ હોય છે, દેશઘાતી હોતાં નથી, તેથી જે સર્વઘાતિરસસ્પર્ધકો હોય છે તેઓ પોતાના દ્વારા ઘાત કરવા લાયક ગુણોના સદંતર જ ઘાત કરે છે, દેશરૂપમાં નહીં, તેથી સર્વઘાતિરસસ્પર્ધકોના વિપાકોદયમાં ક્ષયોપશમની શક્યતા જ હોતી નથી, પણ તે શક્યતા પ્રદેશોદયમાં જ હોય છે, તેથી મોહનીય કર્મના પ્રદેશોદયમાં ક્ષયોપશમ થઈ શકે છે.

શંકા—પ્રદેશોદયમાં પણ ક્ષાયોપશમિક ભાવ કેવી રીતે હોઈ શકે છે ? કારણ કે જે સર્વઘાતિરસસ્પર્ધકોના પ્રદેશ છે તે પોતાના દ્વારા ઘાત કરવા લાયક જ્ઞાનાદિક ગુણોનું સર્વરૂપે જ ઘાત કરનારા હોય છે, તો પછી તેમના પ્રદેશોદયમાં ક્ષાયોપશમિક ભાવની સત્તા અવિરુદ્ધ કેવી રીતે માની શકાશે ?

તે હિ સર્વઘાતિરસસ્પર્ધકપ્રદેશાસ્તથાવિધવિશુદ્ધાઽધ્યવસાયવિશેષેણ મનાગ્ મન્દા-  
નુભાવીકૃત્ય વિરલ-વિરલતયા વેદ્યમાનદેશઘાતિરસસ્પર્ધકેષ્વન્તઃ પ્રવેશિતા ન  
યથાવસ્થિતં સ્વમાહાત્મ્યં પ્રકટયિતું સમર્થા ભવન્તિ, તતો ન તે ક્ષયોપશમહન્તાર ઇતિ  
ન વિરુદ્ધયતે પ્રદેશોદયે ક્ષાયોપશમિકો ભાવઃ ।

‘ અણેગમેઽત્તિ ’ ઇત્યત્રેતિ—શબ્દસ્યાધિકસ્યાધિકાર્થસંસૂચનાદયમર્થઃ  
સૂચ્યતે—મોહનીયપ્રકૃતિષુ મિથ્યાત્વમોહનીયં તથાઽનન્તાનુવન્ધ્યાદિદ્વાદશકષા-  
યાશ્ચ સર્વઘાતિપ્રકૃતયઃ સન્તિ, તદ્ભિન્નાનાં સંજ્વલનકષાયનોકષાયપ્રકૃતીનાં ત્રયો-

ઉત્તર—યહ શંકા ઠીક નહીં હૈ ક્યોં કિ જો સર્વઘાતિરસસ્પર્ધકોં  
કે પ્રદેશ હોતે હૈં વે તથાવિધ વિશુદ્ધ અધ્યવસાયવિશેષ સે ધીરે ૨  
મન્દરસવાલે બના દિયે જાતે હૈં, ઓર ઇસ તરહ વે થોડે ૨ રૂપમેં કરકે  
વેદ્યમાનદેશઘાતિરસસ્પર્ધકોંમેં મિલા દિયે જાતે હૈં । ઇસ તરહ ડનકી  
સર્વઘાતિરૂપ શક્તિ મન્દ કર દી જાતી હૈ ઓર ઇસી કારણ વે અપને  
પ્રભાવ કો પ્રકટ કરનેમેં અસમર્થ બન જાતે હૈં । યહી કારણ હૈ કિ વે  
ક્ષયોપશમ કે વિઘાતક નહીં હો સકતે હૈં । ઇસીલિયે ડન કે પ્રદેશોદયમેં  
ક્ષાયોપશમિક ભાવ કા હોના વિરુદ્ધ નહીં પડતા હૈ । યહી બાત “અણે-  
ગમેઽત્તિ” ઇસ ગાથાંશ દ્વારા પ્રકટ કી ગઈ હૈ । ઇસમેં યહ બતલાયા  
ગયા હૈ કિ મોહનીય કર્મ કી પ્રકૃતિયોંમેં મિથ્યાત્વ મોહનીય, અનન્તાનુ-  
વંધી આદિ દ્વાદશ કષાય, યે સવ સર્વઘાતી પ્રકૃતિયાં હૈં । ડનસે ભિન્ન  
સંજ્વલનકષાય તથા નોકષાય (નવ નો કષાય) ડન તેરહ ૧૩ પ્રકૃતિયોં

ઉત્તર—આ શંકા બરાબર નથી, કારણ કે, સર્વઘાતિરસસ્પર્ધકોના જે  
પ્રદેશ હોય છે તેઓ તથાવિધવિશુદ્ધઅધ્યવસાયવિશેષથી ધીમે ધીમે મંદ  
રસવાળા બનાવી દેવાય છે, અને એ રીતે તેઓ થોડાં થોડાં રૂપમાં કરીને વેદ્યમાન  
દેશઘાતિ સ્પર્ધકોમાં મેળવી દેવામાં આવે છે. આ રીતે તેમની સર્વઘાતિરૂપ  
શક્તિ મન્દ કરી નાખવામાં આવે છે અને એજ કારણે તેઓ પોતાના પ્રભાવને  
પ્રગટ કરવાને અસમર્થ બની જાય છે. આજ કારણે તેઓ ક્ષયોપશમના વિઘાતક  
થઈ શકતા નથી, તેથી તેમના પ્રદેશોદયમાં ક્ષાયોપશમિક ભાવનું હોવું તે  
વિરુદ્ધ પડતું નથી. એજ વાત “અણેગમેઽત્તિ” આ ગાથાંશ દ્વારા પ્રગટ  
કરાઈ છે, તેમાં એ બતાવાયું છે કે મોહનીયકર્મની પ્રકૃતિયોમાં મિથ્યાત્વ-  
મોહનીય, અનન્તાનુવંધી આદિ બાર કષાય, એ બધી સર્વઘાતી પ્રકૃતિયો છે.  
તેમનાથી ભિન્ન સંજ્વલન કષાય તથા નોકષાય (નવ નોકષાય) એ તેર પ્રકૃતિયોને ।

દશાનાં પ્રદેશોદયો વા વિપાકોદયો વા ભવેત્, તદા ક્ષયોપશમો ભવતિ, તાસાં પ્રકૃતીનાં દેશઘાતિત્વાત્ ।

સપ્તવિંશતિઃ પ્રકૃતયો ધ્રુવોદયાઃ સન્તિ । તદ્ યથા-દ્વાદશ નામકર્માણિ-  
૧નિર્માણં, ૨સ્થિરમ્, ૩અસ્થિરમ્, ૪અગુરુલઘુ, ૫શુભનામ, ૬અશુભનામ, ૭તૈજસં,  
૮કાર્મણં, વર્ણાદીનિ ચત્વારિ-૯વર્ણ, ૧૦ગન્ધ, ૧૧રસ, ૧૨સ્પર્શરૂપાણિ, તથા-  
જ્ઞાનાવરણપશ્ચકમ્ ૧૭, અન્તરાયપશ્ચકં ૨૨, દર્શનચતુષ્કં ૨૬, મિથ્યાત્વમિતિ ૨૭ ।  
एताः सप्तविंशतिः प्रकृतयो नित्योदयाः । आसां सर्वासामपि सर्वथाक्षयात् प्राग्  
अव्यवच्छिन्नोदयत्वादिति ।

કાં ચાહે પ્રદેશોદય હો, ચાહે વિપાકોદય હો ઉસમેં ક્ષયોપશમ ભાવ હોતા હૈ, ક્યોં કિ યે પ્રકૃતિયાં દેશઘાતી હૈં ।

સત્તાઈસ ૨૭ પ્રકૃતિયાં ધ્રુવોદયવાળી હૈં ઔર વે હિસ પ્રકાર હૈં-  
બારહ ૧૨ નામકર્મ કી-(૧) નિર્માણ, ૨ સ્થિર, ૩ અસ્થિર, અગુરુલઘુ ૪,  
શુભનામ ૫, અશુભનામ ૬, તૈજસ ૭, કાર્મણ ૮, વર્ણાદિચાર-વર્ણ,  
રસ, ગંધ, સ્પર્શ (૧૨), જ્ઞાનાવરણ કી ૫, (૧૭) અન્તરાય કી ૫ (૨૨),  
દર્શનચતુષ્ક-ચક્ષુર્દર્શન ૧, અચક્ષુર્દર્શન ૨, અવધિદર્શન ૩, કેવલદર્શન ૪  
(૨૬), ઔર ૧ મિથ્યાત્વ (૨૭) । હિસ પ્રકાર યે સત્તાઈસ ૨૭ પ્રકૃતિયાં  
ધ્રુવ પ્રકૃતિયાં હૈં । જબ તક હિન સબકા ક્ષય નહીં હો જાતા હૈં ઉસ કે  
પહિલે હિનકા ઉદય વ્યવચ્છિન્ન નહીં હોતા હૈ, અર્થાત્ ઉદય રહતા હી હૈ ।

ચાહે પ્રદેશોદય થાય, કે ચાહે વિપાકોદય થાય પણ તેમાં ક્ષયોપશમ ભાવ હોય છે,  
કારણ કે તે પ્રકૃતિયો દેશઘાતી છે.

સત્તાવીશ (૨૭) પ્રકૃતિયો ધ્રુવોદયવાળી છે અને તે આ પ્રમાણે છે—

બાર (૧૨) નામકર્મની-(૧) નિર્માણ, (૨) સ્થિર, (૩) અસ્થિર, (૪)  
અગુરુલઘુ, (૫) શુભનામ, (૬) અશુભનામ, (૭) તૈજસ, (૮) કાર્મણ, વર્ણાદિચાર-  
વર્ણ ૧, રસ ૨, ગંધ ૩, સ્પર્શ ૪ (કુથી ૧૨), જ્ઞાનાવરણની ૫ (૧૩થી ૧૭), અન્તરાયની ૫  
(૧૮થી ૨૨), દર્શનચતુષ્ક-ચક્ષુર્દર્શન ૧, અચક્ષુર્દર્શન ૨, અવધિદર્શન ૩, કેવલદર્શન ૪  
(૨૩થી ૨૬), અને મિથ્યાત્વ (૨૭). આ પ્રમાણે તે સત્તાવીશ (૨૭) પ્રકૃતિયો  
ધ્રુવપ્રકૃતિયો છે. જ્યાં સુધી તે બધીનો ક્ષય થતો નથી તેનાં પહેલાં ઉદય  
વ્યવચ્છિન્ન થતો નથી. એટલે કે ઉદય રહે છે જ.



## अथ स्पर्धकभेदप्ररूपणा—

प्रकृतीनामौदयिको भावो द्विधा भवति, तद् यथा—शुद्धः, क्षयोपशमानुविद्धश्च ।  
एतत्स्पष्टप्रतिपत्तये स्पर्धकभेदप्ररूपणा वाच्या, अतस्तावत् स्पर्धकभेदप्ररूपणा  
क्रियते । उक्तञ्च—

चउतिट्ठाण-रसाइं, सव्वघाईणि होंति फट्ठाइं ।

दुट्ठाणयाणि मीसाणि, देसघाईणि सेसाणि ॥ १ ॥

छाया—चतुस्त्रिस्थानरसानि, सर्वघातीनि भवन्ति स्पर्धकानि ।

द्विस्थानकानि मिश्राणि, देशघातीनि शेषाणि ॥ १ ॥

अन्वयः—(यानि) चतुस्त्रिस्थानरसानि द्विस्थानकानि स्पर्धकानि (सन्ति)  
तानि (सर्वघातिप्रकृतीनां) सर्वघातीनि भवन्ति । (देशघातिप्रकृतीनां तु)  
मिश्राणि भवन्ति । शेषाणि देशघातीनि भवन्ति ।

व्याख्या—स्पर्धकानि=रसस्पर्धकानि चतुर्धा भवन्ति । तद् यथा—एकस्थान-  
कानि द्विस्थानकानि, त्रिस्थानकानि, चतुःस्थानकानि च ।

## ॥ स्पर्धकभेदप्ररूपणा ॥

प्रकृतियों का औदयिक भाव दो प्रकार का होता है—(१) शुद्ध, (२)  
क्षयोपशमानुविद्ध । इस बात को स्पष्टरूप से समझाने के लिये अब  
स्पर्धकों के भेद की प्ररूपणा की जाती है । वह इस प्रकार है—

“चउतिट्ठाणरसाइं, सव्वघाईणि होंति फट्ठाइं ।

दुट्ठाणयाणि मीसाणि देसघाईणि सेसाणि ॥१॥”—

इस गाथा का अर्थ इस प्रकार है—रसस्पर्धक चार प्रकार के होते  
हैं—१ एकस्थानक, २ द्विस्थानक, ३ त्रिस्थानक, ४ चतुःस्थानक । शुभ-

## स्पर्धकभेदप्ररूपणा—

प्रकृतियों का औदयिक भाव दो प्रकार का होता है—(१) शुद्ध, (२) क्षयोपशमा-  
नुविद्ध । आ बातने स्पष्टरूप से समझाने भाटे डवे स्पर्धकों का भेदनी प्ररूपणा  
करवामां आवे छे, ते आ प्रमाणे छे—

“चउतिट्ठाणरसाइं, सव्वघाईणि होंति फट्ठाइं ।

दुट्ठाणयाणि मीसाणि देस घाईणि सेसाणि ॥१॥ ”

आ गाथानो अर्थ आ प्रमाणे छे—रसस्पर्धक चार प्रकारनां होय छे, (१)  
एकस्थानक, (२) द्विस्थानक, (३) त्रिस्थानक, (४) चतुःस्थानक । शुभ प्रकृतियों का

અથ કિમિદં રસસ્યૈકસ્થાનકત્વ-દ્વિસ્થાનકત્વાદિ ? । ઉચ્યતે—ઈહ શુભ-પ્રકૃતીનાં રસઃ ક્ષીરચ્છાંડાદિરસોપમો ભવતિ । અશુભપ્રકૃતીનાં તુ નિમ્બ-કોષાત-કયાદિરસોપમઃ । ક્ષીરાદિ-રસશ્ચ-એકકર્પપરિમિતઃ ‘એકતોલા’ ઇતિ ભાષાપ્રસિદ્ધઃ, સ્વાભાવિક એકસ્થાનક ઉચ્યતે । સ એવ મન્દરસ ઇત્યભિધીયતે । દ્વયોસ્તુ કર્પયો-ર્વહિતાપૈરુત્કાલને કૃતે સતિ યોઽવશિષ્યતે એકઃ કર્પઃ, સ દ્વિસ્થાનકઃ । સ તીવ્ર-રસ ઇત્યુચ્યતે । ત્રયાણાં કર્પાણાં તથૈવોત્કાલને કૃતે સતિ ય એકઃ કર્પોઽવશિષ્ટઃ સ ત્રિસ્થાનકઃ । સ તીવ્રતરરસ ઇત્યુચ્યતે । ચતુર્ણાં કર્પાણામાવર્તને કૃતે સતિ યોઽવશિષ્ટ એકઃ કર્પઃ, સ ચતુઃસ્થાનકઃ । સ તીવ્રતમરસ ઇત્યુચ્યતે । એકસ્થાનકોઽપિ

પ્રકૃતિયોંકા રસ સ્વીર ચ્છાંડ આદિ કે રસ કે સમાન હોતા હૈ । તથા અશુભ પ્રકૃતિયોંકા રસ નીમ એવં કોષાતકી (કડવી તુરઈ) આદિ કે રસ કે સમાન હોતા હૈ । દૂધઆદિમેં જો એક તોલા પ્રમાણ સ્વાભાવિક રસ હોતા હૈ વહ એકસ્થાનિક રસ જાનના ચાહિયે । ઈસી કા દૂસરા નામ મન્દ રસ ખી હૈ ૧ । દો તોલા પ્રમાણ રસ જબ અગ્નિ દ્વારા ઉકાલા જાતા હૈ ઓર ઈસ તરહ ઉકાલતે ૨ જબ વહ દો તોલા કા ૧ તોલા પ્રમાણમેં રહ જાતા હૈ તો ઉસે દ્વિસ્થાનિક રસ સમજના ચાહિયે । ઈસકા દૂસરા નામ તીવ્ર રસ ખી હૈ ૨ । ત્રીન તોલા પ્રમાણ રસ જબ ઉકાલતે ૨ એક તોલા રહ જાતા હૈ તો ઈસે ત્રિસ્થાનિક રસ જાનના ચાહિયે । ઈસકા દૂસરા નામ તીવ્રતર રસ ખી હૈ ૩ । ઈસી તરહ ચાર તોલા પ્રમાણ દુગ્ધાદિ કા રસ ઉકાલતે ૨ જબ એક તોલા પ્રમાણમેં રહ જાતા હૈ તો વહ ચતુઃસ્થાનિક રસ સમજના ચાહિયે । ઈસકા દૂસરા નામ તીવ્રતમ રસ ખી હૈ ૪ । એક સ્થા-

રસ ખીર, ખાંડ વગેરેના રસ જેવો હોય છે. તથા અશુભ પ્રકૃતિયોના રસ લીમડો અને કોષાતકી (કડવું તુરીયું) વગેરેના રસ જેવો હોય છે. દૂધ આદિમાં જે એક તોલા પ્રમાણ સ્વાભાવિક રસ હોય છે તે એકસ્થાનિક રસ જાણવો જોઈએ. તેનું ખીજું નામ મન્દરસ પણ છે. જે તોલા માપના રસને જ્યારે અગ્નિવડે ઉકાળવામાં આવે અને આ રીતે ઉકાળતાં ઉકાળતાં જ્યારે તે જે તોલામાંથી એક તોલાના પ્રમાણમાં રહી જાય ત્યારે તેને દ્વિસ્થાનિક રસ જાણવો જોઈએ. એનું ખીજું નામ તીવ્ર રસ પણ છે. ત્રણ તોલા વજનનો રસ જ્યારે ઉકાળતાં ઉકાળતાં એક તોલાજ રહી જાય ત્યારે તેને ત્રિસ્થાનિક રસ જાણવો જોઈએ. તેનું ખીજું નામ તીવ્રતર પણ છે. એ જ રીતે ચાર તોલા વજનનો દુગ્ધાદિક રસ ઉકાળતાં ઉકાળતાં જ્યારે એક તોલા બાકી રહે ત્યારે તે ચતુઃસ્થાનિક રસ જાણવો જોઈએ તેનું ખીજું નામ તીવ્રતમ પણ છે.



ચ રસો જલ-લવ-વિન્દુ-ચુલ્લક-પ્રસૃત્ય-ઝલિ-કરક-( લોટા )-કુમ્ભ-દ્રોણા-  
(કુડા) દિષુ પ્રક્ષેપાદ્ મન્દ-મન્દતરાદ્યનેકભેદત્વં પ્રતિપદ્યતે । एवं द्विस्थानकादिष्वपि  
रसेष्वनेकभेदत्वं वाच्यम् । तथा कर्मणामपि रसेष्वेकस्थानकत्वादिकं स्वधिया  
भावनीयम् । प्रत्येकमनन्तभेदभिन्नाश्च कर्मणां चैकस्थानकरसात् द्विस्थानकादयो रसा  
यथोत्तरमनन्तगुणा वाच्याः । तत्र सर्वघातिनीनां देशघातिनीनां वा प्रकृतीनां यानि  
चतुःस्थानकरसानि, त्रिस्थानकरसानि, द्विस्थानकरसानि वा स्पर्धकानि, तानि  
सर्वघातिनीनां सर्वघातीन्येव । देशघातिनीनां तु मिश्राणि=कानिचित् सर्वघातीनि

નવાલા રસ મી જબ હમ જલ કે અંશમેં, વિન્દુઓમેં, ચુલ્લૂમેં, પસલિમેં,  
અંજલિમેં, લોટા, કુંભ, કુંડ આદિમેં ડાલતે હૈં તો વહ મી મન્દ મન્દતર  
આદિ અનેક ભેદવાલા બન જાતા હૈં । इसी तरह द्विस्थानक आदि रस  
भी मन्द मन्दतर आदि अनेक भेदवाला बन जाता है । जिस प्रकार  
दुर्घादिक के रसमें यह एकस्थानिक द्विस्थानिक आदि रस की व्यवस्था  
समझाई गई है उसी प्रकार कर्मों के रसोंमें भी एकस्थानिक आदि की  
और उनमें भी तीव्र तीव्रतर आदि अनेक भेदों की कल्पना अपनी बुद्धि  
से कर लेना चाहिये । इस तरह एकस्थानिक रस से द्विस्थानिक रस,  
द्विस्थानिक रस से त्रिस्थानिक रस, एवं त्रिस्थानिकरस से चतुःस्थानिक  
रस अनन्ताऽनन्त भेदवाले बन जाते हैं । इनमें जो सर्वघाती अथवा  
देशघाती प्रकृतियों के चतुःस्थानिक, त्रिस्थानिक एवं द्विस्थानिक रस-  
वाले स्पर्धक हैं वे सर्वघाती प्रकृतियों के तो सर्वघाती ही हैं । देशघाती  
प्रकृतियों के मिश्र होते हैं । इनमें कितनेक सर्वघाती होते हैं और कित-

એક સ્થાનવાળો રસ પણ બીયારે આપણે જળના અંશમાં, બિન્દુઓમાં,  
પસલીમાં, અંજલિમાં, લોટા, કુંભ, કુંડ આદિમાં નાખીએ છીએ તો  
તે પણ મન્દ, મન્દતર વગેરે અનેક ભેદવાળો થઈ જાય છે. જે રીતે હૃદય  
વગેરેના રસમાં આ એકસ્થાનિક, દ્વિસ્થાનિક વગેરે રસની વ્યવસ્થા સમજા-  
વવામાં આવી છે એ જ પ્રમાણે કર્મોના રસોમાં પણ એકસ્થાનિક આદિની  
અને તેઓમાં પણ તીવ્ર, તીવ્રતર આદિ અનેક ભેદોની કલ્પના પોતાની બુદ્ધિથી  
કરી લેવી જોઈએ. આ રીતે એકસ્થાનિક રસમાંથી દ્વિસ્થાનિક રસ, દ્વિસ્થા-  
નિક રસમાંથી ત્રિસ્થાનિક રસ અને ત્રિસ્થાનિક રસમાંથી ચતુઃસ્થાનિક રસ,  
અનંતાનંત ભેદવાળા બની જાય છે. તેમનામાં જે સર્વઘાતી અથવા દેશઘાતી  
પ્રકૃતિયોના ચતુઃસ્થાનિક, ત્રિસ્થાનિક અને દ્વિસ્થાનિક રસવાળા સ્પર્ધક છે  
તેઓ સર્વઘાતી પ્રકૃતિયોના તો સર્વઘાતી છે. દેશઘાતી પ્રકૃતિયોના મિશ્ર હોય છે.

કાનિચિદેશઘાતીનિ સ્પર્ધકાનિ ભવન્તીત્યર્થઃ । શેવાણિ=એકસ્થાનકરસાનિ સ્પર્ધકાનિ તુ સર્વાણ્યપિ દેશઘાતીન્યેવ । તાનિ ચ દેશઘાતિનીનાં સંભવન્તિ, ન તુ સર્વઘાતિનીનામિતિ કૃતા સ્પર્ધકભેદપ્રરૂપણા ।

અર્થૌદયિકભાવસ્ય દ્વૈવિધ્યં પ્રરૂપ્યતે । ઉક્તશ્ચ—

નિહણસુ સન્વઘાઈ,-રસેસુ ફઢ્ઢેસુ દેસઘાઈણં ।

જીવસ્સ ગુણા જાયં,-તિ ઓહિમણચક્કુમાઈ ય ॥ ૧ ॥

છાયા—નિહતેષુ સર્વઘાતિરસેષુ, સ્પર્ધકેષુ દેશઘાતિનામ્ ।

જીવસ્ય ગુણા જાયન્તે, અવધિમનશ્ચક્ષુરાદયશ્ચ ॥ ૧ ॥

વ્યાખ્યા—દેશઘાતિનામ્=અવધિજ્ઞાનાવરણપ્રમૃત્તીનાં કર્મણાં સમ્બન્ધિષુ સર્વઘાતિરસેષુ=સર્વઘાતી રસો યત્ર સ સર્વઘાતિરસસ્તેષુ સર્વઘાતિરસવત્સુ સ્પર્ધકેષુ નિહ-

નેક દેશઘાતી હોતે હૈ । શેવ જો એકસ્થાનિક રસવાલે સ્પર્ધક હોતે હૈં વે તો દેશઘાતી હી હોતે હૈં, ક્યોં કિ એકસ્થાનિક રસવાલે ચે સ્પર્ધક દેશઘાતી પ્રકૃતિયોંમેં હી સંભવિત હોતે હૈં, સર્વઘાતિપ્રકૃતીયોંમેં નહીં । હસ તરહ યહ સ્પર્ધકભેદપ્રરૂપણા જાનની ચાહિયે ।

અવ ઔદયિકભાવ કે શુદ્ધ ઔર ક્ષયોપશમાનુચિદ્ધ, હન દો ભેદોં કી પ્રરૂપણા કી જાતી હૈ, વહ હસ પ્રકાર હૈ—

“ નિહણસુ સન્વઘાઈ,-રસેસુ ફઢ્ઢેસુ દેસઘાઈણં ।

જીવસ્સ ગુણા જાયં-તિ ઓહિમણચક્કુમાઈ ય ” ॥ ૧ ॥

હસ ગાથા કા અર્થ હસ પ્રકાર હૈ—

સર્વઘાતી રસવાલે સ્પર્ધકોં કો તથાવિધ વિશુદ્ધ અધ્યવસાય કે ઘલ

તેઓમાં કેટલાંક સર્વઘાતી હોય છે અને કેટલાંક દેશઘાતી હોય છે. બાકીના જે એકસ્થાનિક રસવાળાં સ્પર્ધક હોય છે તેઓ તે દેશઘાતી જ હોય છે, કારણ કે એકસ્થાનિક રસવાળાં તે સ્પર્ધકો દેશઘાતી પ્રકૃતિયોમાં જ સંભવિત હોય છે. સર્વઘાતિપ્રકૃતિયોમાં નહીં. આ રીતે આ સ્પર્ધકભેદપ્રરૂપણા બાબતી બેઠે એ.

હવે ઔદયિક ભાવના શુદ્ધ અને ક્ષયોપશમાનુચિદ્ધ, એ બે ભેદોની પ્રરૂપણા કરવામાં આવે છે. તે આ પ્રમાણે છે—

“ નિહણસુ સન્વઘાઈ,-રસેસુ ફઢ્ઢેસુ દેસઘાઈણં ।

જીવસ્સ ગુણા જાયં - તિ ઓહિ-મણ ચક્કુ-માઈ ય ” ॥ ૧ ॥

આ ગાથાનો અર્થ આ પ્રમાણે છે—

સર્વઘાતીરસવાળા સ્પર્ધકોને તથાવિધ વિશુદ્ધ અધ્યવસાયના બળથી

તેષુ=તથાવિધવિશુદ્ધાધ્યવસાયવિશેષબલેન દેશઘાતિરૂપતયા પરિણમિતેષુ, દેશઘાતિરસસ્પર્ધકેષ્વપિ ચ અતિસ્નિગ્ધેષુ અલ્પરસીકૃતેષુ, તેષાં મધ્યેક્રતિપયંરસસ્પર્ધકગતસ્યોદયાવલિકાપ્રવિષ્ટસ્યાંશસ્ય ક્ષયે, શેષસ્ય ચોપશમે વિપાકોદયવિષ્કમ્બરૂપે સતિ જીવસ્યાવધિમનઃપર્યયજ્ઞાનચક્ષુર્દર્શનાદયો ગુણાઃ=ક્ષાયોપશમિકાઃ, જાયન્તે=પ્રાદુર્ભવન્તિ ।

અર્થ ભાવઃ—યદાઽવધિજ્ઞાનાવરણીયાદીનાં દેશઘાતિનાં કર્મણાં સર્વઘાતીની રસસ્પર્ધકોનિ વિપાકોદયમાંગતાનિ વર્તન્તે, તદા તદ્વિષયઃ કેવલ એક એવ શુદ્ધ ઔદયિકભાવો ભવતિ ૧ । યદા તુ દેશઘાતિરસસ્પર્ધકાનામુદયસ્તદા તદુદયાદૌદયિકો ભાવઃ ક્રતિપયાનાં ચ દેશઘાતિરસસ્પર્ધકાનાં સમ્બન્ધિન ઉદયાવલિકાપ્રવિષ્ટસ્યાંશસ્ય ક્ષયે, સે દેશઘાતીરૂપ પરિણમાને પર, તથા અતિસ્નિગ્ધ દેશઘાતી કે રસસ્પર્ધકોં કોં મી અલ્પરસરૂપ કરને પર, ઓર इनके बीचमें मी जो कितनेक रस-स्पर्धकों का अंश है कि जो उदयावलिमें प्रविष्ट हो चुका है वह जब नष्ट हो जाता है, तथा अवशिष्ट उपशम अवस्थामें रहता है, ऐसी स्थितिमें जीव के क्षायोपशमिक अवधिज्ञान, मनःपर्ययज्ञान तथा चक्षुर्दर्शन आदि गुण प्रकट होते हैं ।

फलિતાર્થ इसका यह है कि—जिस समय अवधिज्ञानावरणीय आदि देशघाती कर्मों के सर्वघातिरसस्पर्धक, विपाकोदय वाले होते हैं तो उस समय तद्विषयक केवल एक ही शुद्ध औदयिकभाव होता है १ । तथा—जिस समय उनके देशघातीरसस्पर्धकों का उदय होता है उस समय उनके उदयसे औदयिक भाव, तथा कितनेक देशघातिरसस्पर्धकों के संबन्धी उदयावलिप्रविष्ट अंश का क्षय होने पर और अव-

देशघातिरૂપ પરિણમાતા, તથા અતિસ્નિગ્ધ દેશઘાતીના રસસ્પર્ધકોને પણ અલ્પરસરૂપ કરતાં, અને તેમની વચ્ચે પણ જે કેટલાંક રસસ્પર્ધકોનો અંશ છે કે જે ઉદયાવલિમાં પ્રવેશ કરી ચૂક્યા છે, તે ન્યારે નષ્ટ થાય છે, તથા અવશિષ્ટ ઉપશમ અવસ્થામાં રહે છે, એવી સ્થિતિમાં જીવને ક્ષાયોપશમિકે અવધિજ્ઞાન, મનઃપર્યયજ્ઞાન તથા ચક્ષુર્દર્શન આદિ ગુણ પ્રગટ થાય છે (૧)

તેનું તાત્પર્ય એ છે કે ન્યારે અવધિજ્ઞાનાવરણીય આદિ દેશઘાતી કર્મોનાં સર્વઘાતિરસસ્પર્ધક વિપાકોદયવાળા થાય છે ત્યારે તે વિષયનો ફક્ત એક જ શુદ્ધ ઔદયિક ભાવ હોય છે (૧). તથા જે સમયે તેમના દેશઘાતિરસસ્પર્ધકોનો ઉદય થાય છે તે સમયે તેના ઉદયથી ઔદયિક ભાવ, તથા કેટલાંક દેશઘાતિરસસ્પર્ધકોનાં સંબંધી ઉદયાવલિકાપ્રવિષ્ટ અંશનો ક્ષય થતાં અને અવ-



મૂલમ્-અહવા ગુણપટિવન્નસ્સ અણગારસ્સ ઓહિનાણં સમુ-  
પ્પજ્જઇ। તં સમાસઓ છવ્વિહં પન્નત્તં। તં જહા-આણુગામિયં ૧,  
અણાણુગામિયં ૨, વહ્ધમાણયં ૩, હીયમાણયં ૪, પટિવાહ્યં ૫,  
અપ્પટિવાહ્યં ૬ ॥ સૂ૦ ૯ ॥

છાયા--અથવા ગુણપ્રતિપન્નસ્યાનગારસ્યાવધિજ્ઞાનં સમુત્પદ્યતે । તત્ સમાસતઃ  
પટ્વિધં પ્રજ્ઞપ્તમ્ । તદ્ યથા-આનુગામિકમ્ ૧, અનાનુગામિકમ્ ૨, વર્ધમાનકં ૩,  
હીયમાનકં ૪, પ્રતિપાતિકમ્ ૫, અપ્રતિપાતિકમ્ ૬ ॥ સૂ૦ ૯ ॥

ટીકા--‘અહવા’ ઇત્યાદિ-‘અથવા’ ઇતિ પ્રકારાન્તરં પ્રતિબોધયતિ । વિશિ-  
ષ્ટગુણપ્રતિપત્તિમન્તરેણાવધિજ્ઞાનાવરણક્ષયોપશમો ભવતીત્યસ્માદન્યોઽયં પ્રકારઃ

ભાવ હોતે હૈં । નામ, ગોત્ર, વેદનીય તથા આયુ, ઇન ચાર કર્મોં કે  
ક્ષાયિક, ઔદયિક ઓર પારિણામિક, યે ત્રીન ભાવ હોતે હૈં ॥સૂ૦ ૮॥

‘અહવા’ ઇત્યાદિ । અથવા ગુણપ્રતિપન્નઅનગાર કે અવધિજ્ઞાન હોતા  
હૈ, વહ છહ પ્રકારકા હોતા । આનુગામિક ૧, અનાનુગામિક ૨, વર્ધમાનક  
૩, હીયમાનક ૪, પ્રતિપાતિક ૫, ઓર અપ્રતિપાતિક ૬, ।

વિશેષાર્થ-સૂત્રમેં રહા હુઆ “અહવા” શબ્દ યહ વતલાતા હૈ કિ  
વિશિષ્ટગુણપ્રતિપત્તિ કે વિના મી અવધિજ્ઞાનાવરણ કા ક્ષયોપશમ હોતા  
હૈ ઇસ કારણ ડસ કે ક્ષયોપશમ કે લિયે ઓર મી દૂસરા પ્રકાર હૈ જો  
ઇસ તરહ હૈ-મૂલગુણ એવં ઉત્તરગુણોં કો યહાં ગુણ-શબ્દ સે ગ્રહણ ક્રિયા

કર્મોના ઔપશમિક ભાવને છોડતાં યાકી ચાર ભાવ હોય છે. નામ, ગોત્ર,  
વેદનીય તથા આયુ, એ ચાર કર્મોના ક્ષાયિક, ઔદયિક અને પારિણામિક, એ  
ત્રણ ભાવ હોય છે. ॥ સૂ૦ ૮ ॥

‘અહવા’ ઇત્યાદિ. અથવા ગુણપ્રતિપન્ન અણુગારને અવધિજ્ઞાન થાય છે.  
તે છ પ્રકારનું હોય છે-(૧) આનુગામિક (૨) અનાનુગામિક (૩) વર્ધમાનક (૪)  
હીયમાનક (૫) પ્રતિપાતિક (૬) અપ્રતિપાતિક.

વિશેષાર્થ:-સૂત્રમાં આવતો “અહવા” શબ્દ એ દર્શાવે છે કે વિશિષ્ટગુણ  
પ્રતિપત્તિના વિના પણ અવધિજ્ઞાનાવરણને ક્ષયોપશમ થાય છે, તે કારણે તેના  
ક્ષયોપશમને માટે એક ખીલે પ્રકાર પણ છે જે આ પ્રમાણે છે-મૂળગુણ અને  
ઉત્તરગુણોને અહીં ગુણ શબ્દથી ગ્રહણ કરેલ છે. એ મૂળગુણ અને ઉત્તરગુણોને

પ્રદર્શ્યતે, इति भावः । गुणप्रतिपन्नस्य=गुणाः-मूलोत्तररूपास्तान् प्रतिपन्नो गुण-  
प्रतिपन्नः । अथवा-गुणैः प्रतिपन्नः, 'अयमनगारोऽस्माकमवस्थानपात्र'मिति कृत्वा  
गुणैराश्रित इत्यर्थः । अनेन पात्रतायां सत्यां स्वयमेव गुणा आयान्तीति  
सूचितम् । उक्तञ्च—

“नोदन्वानर्थितामेति, न चाम्भोभिर्न पूर्यते ।

आत्मा तु पात्रतां नेयः, पात्रमायान्ति संपदः ” ॥ १ ॥

है । इन मूलगुण और उत्तरगुणों को जो धारण करते हैं वे गुणप्रतिपन्न  
हैं । अथवा जो गुणों के द्वारा आश्रित किये गये हों वे गुणप्रतिपन्न हैं ।  
“यह साधु हमारे ठहरने का स्थान हैं” ऐसा विचार कर मानो गुण स्वयं  
उसमें आकर निवास करने लग जाते हैं, क्यों कि जब पात्रता आजाती  
है तो गुणों का ऐसा स्वभाव होता है कि वे बिना बुलाये ही स्वयमेव आकर  
उस पात्र आत्मा को अपना निवासस्थान बना लिया करते हैं, कहा भी है—

“नोदन्वानर्थितामेति, न चाम्भोभिर्न पूर्यते ।

आत्मा तु पात्रतां नेयः, पात्रमायान्ति संपदः ” ॥ १ ॥

સમુદ્ર જલ સે યહ યાચના નહીં કરતા હૈ કિ તુમ હમેં આકર ભરદો  
કિન્તુ સમુદ્રમેં પાત્રતા દેશ્વકર જલ સ્વયં ઉસમેં આકર ભર જાતા હૈ ।  
અતઃ પ્રાણી કા કર્તવ્ય હૈ કિ વહ સર્વ પ્રથમ અપને આપકો પાત્ર બનાવે ।  
પાત્રતા આને પર ગુણ-રૂપ સંપત્તિયાં સ્વયં હી ઉસે અપના નિવાસ સ્થાન  
બના લેતી હૈ ॥ ૧ ॥

જે ધારણ કરે છે તેઓ ગુણપ્રતિપન્ન છે. અથવા જે ગુણોવડે આશ્રિત કરાયા  
હોય તેઓ ગુણપ્રતિપન્ન છે. ‘આ સાધુ અમારે રહેવાનું સ્થાન છે.’ એવો  
વિચાર કરીને જાણે કે ગુણ જાતે જ આવીને તેનામાં નિવાસ કરવા માંડે છે,  
કારણ કે જ્યારે યોગ્યતા આવી જાય છે ત્યારે ગુણનો એવો સ્વભાવ છે કે તે  
વગર બોલાવ્યે જાતે જ આવીને તે લાયક (પાત્ર) આત્માને પોતાનું નિવાસ  
સ્થાન બનાવી દે છે. કહ્યું પણ છે—

“નોદન્વાનર્થિતામેતિ, ન ચામ્ભોભિર્ન પૂર્યતે ।

આત્મા તુ પાત્રતાં નેયઃ, પાત્રમાયાન્તિ સપદઃ ॥ ૧ ॥ ”

સમુદ્ર જળને એ યાચના કરતો નથી કે તુ આવીને મને ભરી દે, પણ  
સમુદ્રમાં પાત્રતા જોઈને જળ જાતે જ આવીને તેમાં ભરાઈ જાય છે. તેથી  
પ્રાણીની ફરજ છે કે તેણે સૌથી પહેલાં પોતાની જાતને લાયક બનાવવી જોઈએ.  
પાત્રતા આવતાં જ ગુણરૂપ સંપત્તિ પોતે જ તેને પોતાનું નિવાસસ્થાન બનાવી દે છે.



તસ્ય ગુણપ્રતિપત્તસ્ય અનગારસ્ય=ન ગચ્છન્તીત્યગાઃ=કાષ્ઠપાષાણાદયસ્તાન  
 ક્લુચ્છતિ=સમાશ્રયતિ, इत्यगारं=गृहं, न विद्यते अगारं यस्यासावनगारः-परित्यक्त-  
 द्रव्यभावगृह इत्यर्थः । तस्य प्रशस्तेष्वध्यवसायेषु वर्तमानस्य सर्वधातिरसस्पर्धकेषु  
 देशधातिरसस्पर्धकतया जातेषु पूर्वोक्तक्रमेण अवधिज्ञानावरणकर्मक्षयोपशमे सति,  
 अवधिज्ञानमुत्पद्यते ।

अथ मनःपर्ययज्ञानप्ररूपणा ।

मनःपर्ययज्ञानावरणीयस्य तु विशिष्टसंयमाप्रमादादिप्रतिपत्तावेव सर्वधा-  
 तीनि रसस्पर्धकानि देशधातीनि भवन्ति, तथास्वाभाव्यात् । तच्च तथास्वाभाव्यं,

जिनके अगार ( घर ) नहीं है वे अनगार हैं । काष्ठ पाषाण  
 आदि का जो आश्रय करता है—अर्थात् लकड़ी पत्थर आदि की सहायता  
 से जिसका निर्माण होता है उसका नाम अगार—घर है । इस अगार को  
 जिन्होंने परित्याग कर दिया है वे अनगार हैं । अनगार के द्रव्य और  
 भावरूप दोनों प्रकार के अगार—घर का परित्याग होता है । इस तरह  
 प्रशस्त अध्यवसायोंमें लवलीन उस अनगार के सर्वधाती जो रसस्पर्धक  
 होते हैं वे देशधातिरसस्पर्धकरूपसे परिणमित हो जाते हैं, तब पूर्वोक्त  
 क्रम से अवधिज्ञानावरण कर्म का क्षयोपशम होने पर उसके अवधिज्ञान  
 उत्पन्न हो जाता है ।

अब मनःपर्ययज्ञान की प्ररूपणा की जाती है:—

मनःपर्ययज्ञानावरणीय कर्म के सर्वधातिरसस्पर्धक, विशिष्ट संयम  
 अप्रमाद आदि गुणों की प्रतिपत्ति होने पर ही देशधातिरूप होते हैं, क्यों

જેઓને અગાર (ઘર) નથી તે અનગાર છે. કાષ્ઠ, પાષાણ આદિને જે  
 આશ્રય લે છે—એટલે કે લાકડું, પથ્થર વગેરેની સહાયતાથી જેનું નિર્માણ થાય  
 છે તેનું નામ અગાર (ઘર) છે. આ અગારનો જેણે ત્યાગ કર્યો છે તે અનગાર  
 છે. અનગારને દ્રવ્ય અને ભાવરૂપ બંને પ્રકારના અગાર—ઘરનો પરિત્યાગ હોય છે.  
 આ રીતે પ્રશસ્ત અધ્યવસાયોમાં લવલીન તે અનગારના જે સર્વધાતિરસસ્પર્ધક  
 હોય છે, તે દેશધાતિરસસ્પર્ધકનારૂપે પરિણમિત થઈ જાય છે, ત્યારે પૂર્વોક્ત ક્રમથી  
 અવધિજ્ઞાનાવરણ કર્મનો ક્ષયોપશમ થતાં તેને અવધિજ્ઞાન ઉત્પન્ન થઈ જાય છે.

હવે મનઃપર્યયજ્ઞાનની પ્રરૂપણા કરવામાં આવે છે:—

મનઃપર્યયજ્ઞાનાવરણીય કર્મના સર્વધાતિરસસ્પર્ધક, વિશિષ્ટ સંયમ,  
 અપ્રમાદ આદિ ગુણોની પ્રતિપત્તિ થતાં જ દેશધાતિરૂપ થાય છે, કારણ કે આ

બન્ધકાલે તથારૂપાણામેવ તેષાં બન્ધનાત્ । તતો મનઃપર્યયજ્ઞાનં વિશિષ્ટગુણપ્રતિ-  
પન્નસ્યૈવ વેદિતવ્યમ્ ।

મતિશ્રુતાવરણાચક્ષુર્દર્શનાવરણાન્તરાયપ્રકૃતીનાં તુ સર્વઘાતીનિ રસસ્પર્ધકાનિ  
યેન કેનચિત્ તથારૂપવિશુદ્ધાધ્યવસાયેન તદધ્યવસયાનુરૂપં દેશઘાતીનિ ભવન્તિ,  
તેષાં તથાસ્વાભાવ્યાત્ । તતો મતિજ્ઞાનાવરણાદીનાં સદૈવ દેશઘાતિનામેવ રસસ્પર્ધ-  
કાનામુદયઃ, સદૈવ ચ ક્ષયોપશમઃ । ઉક્તશ્ચ પञ્ચસંગ્રહ ટીકાયામ્—( દ્વા. ૩ ગા. ૨૯)

કિ હસ અવસ્થામેં ઁનકા ઁસા હી સ્વભાવ હોતા હૈ । હસકા મી કારણ  
યહ હૈ કિ બંધકાલમેં-હનકા જો બંધ હોતા હૈ વહ હસી પ્રકાર-કે હી  
સર્વઘાતિરસસ્પર્ધકોં કા બંધ હોતા હૈ । હસલિયે મનઃપર્યયજ્ઞાન વિશિષ્ટ-  
ગુણાશ્રિત અનગાર-કે હી હોતા હૈ, ઁસા જાનના ચાહિયે । મનઃપર્યયજ્ઞાન-  
કી ઉત્પત્તિમેં અવધિજ્ઞાનકી ઉત્પત્તિ કી તરહ ઁસમેં વિશિષ્ટગુણપ્રતિપ-  
ન્નતાકા અભાવ નહીં હોતા હૈ ।

મતિશ્રુતાવરણ, અંચક્ષુર્દર્શનાવરણ, અંતરાય, હંને પ્રકૃતિયોં કે  
સર્વઘાતિરસસ્પર્ધક જેસ કિસો મી તથારૂપ વિશુદ્ધ અધ્યવસાય સે  
ઁસોં કે અંતેસાર દેશઘાતિરૂપમેં પરિણમિત હો જાતે હૈ, કયોં કિ હંનકા  
ઁસા હી સ્વભાવ હોતા હૈ । હસલિયે મતિજ્ઞાનાવરણાદિકોં કે સદા હી  
દેશઘાતિરસસ્પર્ધકોં કા હી ઉદય રહતા હૈ ઁર સદા હી ઁનકા ક્ષયો-  
પશમ હોતા હૈ । પંચસંગ્રહટીકામેં—(દ્વા. ૩ ગા. ૨૯) યહી વાત કહી હૈ—

અવસ્થામાં તેનો એવો જ સ્વભાવ હોય છે. તેનું કારણ પણ એ જ છે કે બંધ  
કાળમાં તેમનો જ બંધ હોય છે તે એ પ્રકારના જ સર્વઘાતિરસસ્પર્ધકોનો  
બંધ હોય છે, તેથી મનઃપર્યયજ્ઞાન વિશિષ્ટગુણાશ્રિત અનગારને જ થાય છે  
એમ માનવું જોઈએ. મનઃપર્યયજ્ઞાનની ઉત્પત્તિમાં અવધિજ્ઞાનની ઉત્પત્તિની જેમ  
વિશિષ્ટગુણપ્રતિપન્નતાનો અભાવ હોતો નથી

મતિશ્રુતાવરણ, અચક્ષુર્દર્શનાવરણ, અને અંતરાય, એ પ્રકૃતિયોના સર્વ  
ઘાતિરસસ્પર્ધક કેઈ પણ એવા રૂપના વિશુદ્ધ અધ્યવસાયથી તેના પ્રમાણે  
દેશઘાતિરૂપમાં પરિણમિત થઈ જાય છે, કારણ કે તેમનો એવો જ સ્વભાવ હોય  
છે, તેથી મતિજ્ઞાનાવરણાદિકોના દેશઘાતિરસસ્પર્ધકોનો જ હંમેશા ઉદય રહે છે, અને  
હંમેશાં તેમનો જ ક્ષયોપશમ થાય છે. પંચસંગ્રહ ટીકામાં (દ્વા. ૩ ગા. ૨૯)

આજ વાત કહી છે—



“મતિશ્રુતાવરણાચક્ષુર્દર્શનાવરણાન્તરાયપ્રકૃતીનાં ચ સદૈવ દેશઘાતિરસસ્પર્ધ-  
કાનામેવોદયઃ । તતસ્તાસાં સદૈવૌદયિકક્ષાયોપશમિકૌ ભાવૌ ” ઇતિ ।

‘તં સમાસઓ’ ઇત્યાદિ । તત્=અવધિજ્ઞાનં, સમાસતઃ=સંક્ષેપેણ પદ્ધિવિધં=  
ષટ્પ્રકારકં, પ્રજ્ઞપ્તં=પ્રરૂપિતમ્ । તદ્ યથા-આનુગામિકમ્ ૧, અનાનુગામિકમ્ ૨,  
વર્ધમાનકં ૩, હીયમાનકં ૪, પ્રતિપાતિકમ્ ૫, અપ્રતિપાતિકમ્ ૬, ઇતિ ।

તત્રાનુગામિકમ્—અનુગમનશીલમ્, યદવધિજ્ઞાનં ગચ્છન્તમવધિજ્ઞાનિનં લોચ-  
નવદનુગચ્છતિ, તદિતિ ભાવઃ ૧ । અનાનુગામિકમ્—યદ્ ગચ્છન્તમવધિજ્ઞાનિનં નાનુ-  
ગચ્છતિ શંખલાપ્રતિવદ્દપ્રદોષવત્, તદિત્યર્થઃ ૨ । વર્ધમાનકમ્—વર્ધતે, ઇતિ વર્ધમાનં,

“મતિશ્રુતાવરણ, અચક્ષુર્દર્શનાવરણ એવં અન્તરાય પ્રકૃતિયોં કે  
દેશઘાતિરસસ્પર્ધકોં કાં હી સદા ઉદય રહતા હૈ અતઃ ઉનકે સદા હી  
ઔદયિક એવં ક્ષાયોપશમિક ભાવ હોતે હૈ । ”

વહ અવધિજ્ઞાન સંક્ષેપ સે છહ પ્રકાર કા બતલાયા ગયા હૈ—(૧) આનુ-  
ગામિક, (૨) અનાનુગામિક, (૩) વર્ધમાનક, (૪) હીયમાનક, (૫) પ્રતિપા-  
તિક, (૬) અપ્રતિપાતિક । જિસ પ્રકાર દૂસરે ક્ષેત્રમેં જાતે હુએ મનુષ્યકે  
સાથ ઉસકી આંખે સાથ જાતી હૈ ઉસી પ્રકાર જો અવધિજ્ઞાન અવધિ-  
જ્ઞાની કે સાથ દૂસરી જગહ ચલે જાને પર સાથ જાતા હૈ ઉસકા નામ  
આનુગામિક અવધિજ્ઞાન હૈ ૧ । સાંકલ સે જકડે હુએ દીપકકી તરહ જો  
અવધિજ્ઞાન અપને ઉત્પત્તિસ્થાન કો છોડ દેને પર જીવ કે સાથ નહીં  
જાતા હૈ વહ અનાનુગામિક હૈ ૨ । જૈસે શુક્રપક્ષ કા ચંદ્રમંડલ પ્રતિદિન  
બઢતા રહતા હૈ ઉસી પ્રકાર જો અવધિજ્ઞાન ઉત્પત્તિ કાલમેં અલ્પવિષ-  
યક હોનેપર ભી પરિણામશુદ્ધિ બઢને કે સાથ હી ક્રમશઃ અધિક ૨

“મતિશ્રુતાવરણ, અચક્ષુર્દર્શનાવરણ, અને અન્તરાય પ્રકૃતિયોના દેશઘાતિ-  
રસસ્પર્ધકોનો જ સદા ઉદય રહે છે, તેથી તેમનામાં હંમેશા જ ઔદયિક અને  
ક્ષાયોપશમિક ભાવ હોય છે.

તે અવધિજ્ઞાન સંક્ષિપ્તમાં છ પ્રકારનું બતાવાયું છે—(૧) આનુગામિક,  
(૨) અનાનુગામિક, (૩) વર્ધમાનક, (૪) હીયમાનક, (૫) પ્રતિપાતિક અને (૬)  
અપ્રતિપાતિક. (૧) જે રીતે બીજા ક્ષેત્રમાં જતાં મનુષ્યની સાથે તેની આંખો  
બીજી છે એ જ રીતે જે અવધિજ્ઞાન, અવધિજ્ઞાનીની સાથે બીજી જગ્યાએ જતાં  
પણ સાથે જ બીજી છે તેનું નામ આનુગામિક અવધિજ્ઞાન છે. (૨) સાંકળની  
સાથે જકડેલા દીવાની જેમ જે અવધિજ્ઞાન પોતાનાં ઉત્પત્તિસ્થાનને છોડી  
દેવાતાં જીવની સાથે જતું નથી તે અનાનુગામિક છે. (૩) જેમ શુક્રપક્ષનું ચંદ્ર-

તદેવ વર્ધમાનકમ્, ઉત્પત્તિકાલતઃ સમારભ્ય પ્રવર્ધમાનં શુક્લપક્ષચન્દ્રવદિત્યર્થઃ ૩ ।  
તથા હીયમાનકમ્-હીયતે इति હીયમાનં, તદેવ હીયમાનકમ્, ઉદયસમયસમેન-  
ન્તરમેવ હીયમાનં કૃષ્ણપક્ષચન્દ્રવદિત્યર્થઃ ૪ । તથા-પ્રતિપાતિકમ્-પ્રતિપતનશીલં  
પ્રતિપાતિ, તદેવ પ્રતિપાતિકમ્, યત્ફૂત્કારનષ્ટપ્રદીપવત્ સર્વથા વિનશ્યતિ તદિત્યર્થઃ ૫ ।  
તથા-અપ્રતિપાતિકમ્-ન પ્રતિપાતિ, અપ્રતિપાતિ, તદેવ-અપ્રતિપાતિકમ્, યત્  
કેવલજ્ઞાનાત્પૂર્વં ન વિનશ્યતિ તદિત્યર્થઃ ૬ ।

નન્વાનુગામિકાનાનુગામિકમેદદ્વયે શેષમેદા વર્ધમાનકાદયોઽન્તર્ભૂતાઃ  
સન્તિ, કથં તર્હિ શેષમેદાનાં વર્ધમાનકાદીનાં પૃથગુપન્યાસઃ ? इति ।

વિષયક હોતા જાતા હૈ વહ વર્ધમાનક હૈ ૩ । જિસ પ્રકાર કૃષ્ણપક્ષ કા  
ચંદ્રમા પ્રતિદિન ઘટતા જાતા હૈ ઉસી પ્રકાર જો અવધિજ્ઞાન ઉત્પત્તિ કે  
સમય અધિકવિષયવાલા હોને પર ખી પરિણામશુદ્ધિં કમ હો જાને સે  
ક્રમશઃ અલ્પવિષયક હોતા જાતા હૈ વહ હીયમાનક હૈ ૪ । જિસ પ્રકાર  
જલતા હુઆ દીપક ફૂંક સે બુઝ જાતા હૈ ઉસી પ્રકાર જો અવધિજ્ઞાન  
બિલકુલ છૂટ જાતા હૈ વહ પ્રતિપાતિક હૈ ૫ । કેવલજ્ઞાન જવતક આત્મામેં  
ન હો જાવે તવતક જો બના રહે વહ અપ્રતિપાતિક હૈ ૬ ।

શંકા—આનુગામિક અનાનુગામિક, યે જો અવધિજ્ઞાન કે દો ભેદ  
બતલાયે ગયે હૈં ઉનમેં હી વર્ધમાનક આદિ અવશિષ્ટ અવધિજ્ઞાન કે ભેદ  
અન્તર્ભૂત હો જાતે હૈં ફિર ક્યોં ઇન કા પૃથકરૂપ સે નિરૂપણ ક્રિયા  
ગયા હૈ ? ।

મંડળ પ્રતિદિન વધતું જાય છે એ જ પ્રમાણે જે અવધિજ્ઞાન ઉત્પત્તિના વખતે  
અલ્પવિષયક હોવા છતાં પરિણામશુદ્ધિ વધવાની સાથે જ ક્રમે ક્રમે વધારે ને વધારે  
વિષયક થતું જાય છે તે વર્ધમાનક છે. (૪) જે રીતે કૃષ્ણપક્ષનો ચન્દ્રમા દિવસે  
દિવસે ક્ષય પામતો જાય છે એ જ રીતે જે અવધિજ્ઞાન ઉત્પત્તિને વખતે વધારે  
વિષયવાળું હોવા છતાં પણ પરિણામશુદ્ધિ ઓછી થવાથી ક્રમે ક્રમે અલ્પવિષયક  
થતું જાય છે તે હીયમાનક છે. (૫) જે રીતે બળતો દીવો કૂંક મારવાથી ઓલ-  
વાઈ જાય છે તે જ પ્રમાણે જે અવધિજ્ઞાન તદ્દન છૂટી જાય છે તે પ્રતિપાતિક  
છે. (૬) કેવળજ્ઞાન જ્યાં સુધી આત્મામાં પેદા ન થાય ત્યાં સુધી જે ટકે તે  
અપ્રતિપાતિક છે.

શંકા—આનુગામિક અને અનાનુગામિક એ બે અવધિજ્ઞાનના જે ભેદ  
બતાવ્યા છે તેમનામાં જ વર્ધમાનક આદિ અવશિષ્ટ અવધિજ્ઞાનના ભેદનો  
સમાવેશ થઈ જાય છે તો પછી તેમનું શુદ્ધ જ નિરૂપણ શા માટે કરાયું છે ?

उच्यते—आनुगामिकादिभेदद्वये शेषभेदानामन्तर्भावे सत्यपि तद्भेदद्वया-  
देव शेषभेदानां परिच्छेदो न भवति । तथाहि—आनुगामिकमनानुगामिकं चेति  
द्वयमेव यद्युक्तं स्यात्, तर्हि वर्धमानकादयो भेदा नावगम्यन्ते, इत्यज्ञातज्ञापनार्थं  
शास्त्रे तेषां पृथगुपन्यासोऽस्तीति ॥ सू० ९ ॥

मूलम्—से किं तं आणुगामियं ओहिनाणं ? । आणुगामियं  
ओहिनाणं दुविहं पणत्तं । तं जहा—अंतगयं च मज्झगयं च ।  
से किं तं अंतगयं ? । अंतगयं तिविहं पणत्तं । तं जहा—  
पुरओअंतगयं १, मग्गओअंतगयं २, पासओअंतगयं ३ ।

से किं तं पुरओअंतगयं ? । पुरओअंतगयं—से जहानामए  
केइ पुरिसे उक्कं वा, चडुलियं वा, अलायं वा, मणिं वा, पईवं वा,  
जोइं वा, पुरओ काउं पणोल्लेमाणे २, गच्छेज्जा, से तं पुरओअंतगयं १ ।

से किं तं मग्गओअंतगयं ? । मग्गओअंतगयं से जहा  
नामए केइ पुरिसे उक्कं वा, चडुलियं वा, अलायं वा, मणिं वा,  
पईवं वा, जोइं वा, मग्गओ काउं अणुकड्ढेमाणे २, गच्छिज्जा, से तं  
मग्गओअंतगयं २ ।

से किं तं पासओअंतगयं ? । पासओअंतगयं से जहा  
नामए केइ पुरिसे उक्कं वा, चडुलियं वा, अलायं वा, मणिं वा,

उत्तर—इनके पृथक् रूप से निरूपण करने का कारण केवल एक यही  
है कि इन दोनों से शेष भेदों का परिच्छेद-ज्ञान नहीं हो सकता है।  
यदि आनुगामिक तथा अनानुगामिक ये दो ही अवधिज्ञान के भेद कहे  
जाते तो वर्धमानकादिक दूसरे भेद नहीं जाने जा सकते । इसलिये  
अल्पबुद्धिवालों को समझाने के लिये शास्त्रमें इन भेदों का पृथक् रूप से  
प्रतिपादन करनेमें आया है ॥ सू० ९ ॥

उत्तर—तेमनुं जुडं निइयणु करवानुं कारणु इकत्त ओक ज छे के ते  
अन्नेथी शेष (आधीना) लेहोनुं ज्ञान (परिच्छेद) थई शकतुं नथी. जे  
आनुगामिक अने अनानुगामिक ओ जेज अवधिज्ञानना लेह कडेवाया होत ते  
वर्धमानकादिक भीज लेहो जण्णी शकत नही. तेथी अल्पबुद्धिवाणांओने समभववा  
भाटे शास्त्रमां ओ लेहोनुं अलग इपथी प्रतिपादन करवामां आण्युं छे. ॥सू० ९॥

पईवं वा, जोईं वा, पासओ काउं परिकडूढेमाणेर गच्छिज्जा, से तं पासओअंतगयं ३, से तं अंतगयं ।

से किं तं मज्झगयं ? । मज्झगयं से जहा नामए केइ पुरिसे उक्कं वा चडुलियं वा, अलायं वा, मणिं वा, पईवं वा, जोईं वा, मत्थए काउं समुव्वहमाणेर, गच्छिज्जा, से तं मज्झगयं ।

अंतगयस्स मज्झगयस्स य को पइविसेसो ? । गोयमा ! पुरओअंतगएणं ओहिनाणेणं पुरओ चेव संखेज्जाणि वा असंखेज्जाणि वा जोयणाइं जाणइ पासइ, मग्गओ अंतगएणं ओहिनाणेणं मग्गओ चेव संखेज्जाणि वा असंखेज्जाणि वा जोयणाइं जाणइ पासइ, पासओअंतगएणं ओहिनाणेणं पासओ चेव संखेज्जाणि वा असंखेज्जाणि वा जोयणाइं जाणइ पासइ, मज्झगएणं ओहिनाणेणं सव्वओ समंता संखेज्जाणि वा असंखेज्जाणि वा जोयणाइं जाणइ पासइ । से तं आणुगामियं ओहिनाणं ॥ सू० १० ॥

छाया—अथ किं तद् आनुगामिकमवधिज्ञानम् ? आनुगामिकमवधिज्ञानं द्विविधं प्रज्ञप्तं, तद्यथा—अन्तगतं च मध्यगतं च । अथ किं तदन्तगतम् ? अन्तगतं त्रिविधं प्रज्ञप्तं, तद्यथा—पुरतोऽन्तगतं १, मार्गतोऽन्तगतं २, पार्श्वतोऽन्तगतम् ३ ।

अथ किं तत् पुरतोऽन्तगतं ? स यथानामकः कश्चित्पुरुषः—उल्कां वा, चडुलिकां वा, अलातं वा, मणिं वा, प्रदीपं वा, ज्योतिर्वा, पुरतः कृत्वा प्रणुदन् २ गच्छेत्, तदेतत् पुरतोऽन्तगतम् १ ।

अथ किं तन्मार्गतोऽन्तगतं ? मार्गतोऽन्तगतं, स यथानामकः कश्चित्पुरुषः—उल्कां वा, चडुलिकां वा, अलातं वा, मणिं वा, प्रदीपं वा, ज्योतिर्वा, मार्गतः कृत्वाऽनुकर्षन् २ गच्छेत्, तदेतन्मार्गतोऽन्तगतम् २ ।

अथ किं तत् पार्श्वतोऽन्तगतं ? पार्श्वतोऽन्तगतं, स यथानामकः कश्चित्पुरुषः—उल्कां वा, चडुलिकां वा, अलातं वा मणिं वा, प्रदीपं वा, ज्योतिर्वा, पार्श्वतः कृत्वा परिकर्षन् २ गच्छेत्, तदेतत् पार्श्वतोऽन्तगतं ३, तदेतदन्तगतम् ।

अथ किं तन्मध्यगतं ? मध्यगतं, स यथानामकः कश्चित्पुरुषः—उल्कां वा,

ચટુલિકાં વા, અલાતં વા, મર્ણિ વા, પ્રદીપં વા, ડ્યોતિર્વા, મસ્તકે કૃત્વા સમુદ્રહનર, ગચ્છેત્, તદેતન્મધ્યગતમ્ ।

અન્તગતસ્ય મધ્યગતસ્ય ચ કઃ પ્રતિવિશેષઃ ? ગૌતમ ! પુરતોઽન્તગતેનાઽવધિજ્ઞા-  
નેન પુરતશ્ચૈવ સંખ્યેયાનિ વા, અસંખ્યેયાનિ વા યોજનાનિ જાનાતિ પશ્યતિ, માર્ગતોઽ-  
ન્તગતેનાઽવધિજ્ઞાનેન માર્ગતશ્ચૈવ સંખ્યેયાનિ વા, અસંખ્યેયાનિ વા યોજનાનિ જાનાતિ  
પશ્યતિ, પાર્શ્વતોઽન્તગતેનાઽવધિજ્ઞાનેન પાર્શ્વતશ્ચૈવ સંખ્યેયાનિ વા, અસંખ્યેયાનિ વા  
યોજનાનિ જાનાતિ પશ્યતિ, મધ્યગતેનાઽવધિજ્ઞાનેન સર્વતઃ સમન્તાત્ સંખ્યેયાનિ વા  
અસંખ્યેયાનિ વા યોજનાનિ જાનાતિ પશ્યતિ, તદેતદાનુગામિકમવધિજ્ઞાનમ્ ॥ સૂ. ૦ ૧ ૦ ॥

ટીકા—‘સે કિં તં આણુગામિયં’ ઇત્યાદિ । શિષ્યઃ પૃચ્છતિ—અથ કિં  
તદાનુગામિકમવધિજ્ઞાનમ્ ? યદવધિજ્ઞાનં પૂર્વમાનુગામિકમિતિ નામ્ના નિર્દિષ્ટં,  
તસ્ય કિં સ્વરૂપમિત્યર્થઃ । ઉત્તરમાહ—આનુગામિકમવધિજ્ઞાનં દ્વિવિધં પ્રજ્ઞસમ્ ।  
તદ્ યથા—અન્તગતં ચ મધ્યગતં ચ । ઇહાન્ત—શબ્દઃ પર્યન્તવાચી, વનાન્તવત્,  
દેશાન્તવત્, વસ્ત્રાન્તવત્ । અન્તે=પર્યન્તે ગતં=વ્યવસ્થિતમ્; અન્તગતમ્ । આત્મ-  
પ્રદેશાનાં પર્યન્તે સ્થિતમિત્યર્થઃ ।

‘સે કિં તં આણુગામિયં’ ઇત્યાદિ । શિષ્ય પૂછતા હૈ કિ—હે ભદન્ત !  
આનુગામિક અવધિજ્ઞાન કા કયા સ્વરૂપ હૈ ? ।

ઉત્તર—અવધિજ્ઞાનકા પ્રથમ ભેદ જો આનુગામિક બતલાયા ગયા  
હૈ ઉસકે દો પ્રકાર હૈં । ૧ અન્તગત, ૨ મધ્યગત । વનાન્ત કી તરહ,  
દેશાન્ત કી તરહ, તથા વસ્ત્રાન્ત કી તરહ યહાં અન્ત—શબ્દ પર્યન્ત કા  
અર્થાત્ અન્તભાગ કા વાચક હૈ કિન્તુ નાશ આદિ અર્થકા વાચક નહીં  
હૈ । પર્યન્તમેં જો વ્યવસ્થિત હો ઉસકા નામ અન્તગત આનુગામિક અવધિ-  
જ્ઞાન હૈ । યહ અવધિજ્ઞાન આત્મપ્રદેશોં કે પર્યન્તમેં વ્યવસ્થિત હોતા હૈ ।

“સે કિં તં આણુગામિયં” ઇત્યાદિ.

શિષ્ય પૂછે છે કે હે ભદન્ત ! આનુગામિક અવધિજ્ઞાનનું સ્વરૂપ શું છે ?

ઉત્તર—અવધિજ્ઞાનનો પહેલો ભેદ જે આનુગામિક બતાવવામાં આવ્યો  
છે તેના બે પ્રકાર છે. (૧) અન્તગત (૨) મધ્યગત. વનાન્તની જેમ, દેશાન્તની  
જેમ અને વસ્ત્રાન્તની જેમ અહીં ‘અન્ત’ શબ્દ પર્યન્ત એટલે કે અન્તભાગનો  
વાચક છે પણ નાશ વગેરે અર્થનો વાચક નથી. પર્યન્તમાં જે વ્યવસ્થિત હોય-  
તેનું નામ અન્તગત આનુગામિક અવધિજ્ઞાન છે. આ અવધિજ્ઞાન આત્મપ્રદેશોનાં  
પર્યન્તમાં વ્યવસ્થિત હોય છે. તેનું તાત્પર્ય આ પ્રમાણે છે—

इयमत्र भावना—उत्पद्यमानः कोऽप्यवधिः स्पर्धकरूपानुसारेण जायते । इह स्पर्धकानि नाम-गवाक्षजालाभ्यन्तरस्थितप्रदीपप्रभानिर्गमस्थानानीव अवधि-ज्ञानावरणक्षयोपशमजन्यानि छिद्ररूपाणि-अवधिज्ञाननिर्गमस्थानानि । तानि स्पर्धकानि चैकजीवस्य संख्येयानि असंख्येयानि वा भवन्ति । तानि च विचित्र-रूपाणि भवन्ति । तथा हि-कानिचित् स्पर्धकानि पर्यन्तवर्तिष्वात्मप्रदेशेषु क्षयोपश-मानुविद्धमुदयं प्राप्नुवन्ति । तत्रापि कानिचित् पुरतः, कानिचित् पृष्ठतः, कानिचित् अ-धोभागे, कानिचिदुपरितनभागे, कानिचिन्मध्यवर्तिष्वात्मप्रदेशेषु क्षयोपशमानुविद्धमुदयं प्राप्नुवन्ति । यत्र यथा स्पर्धकानि भवन्ति, तत्र तथाऽवधिज्ञानमुपजायते । तदा-

तात्पर्य इसका इस प्रकार है-कोई २ अवधिज्ञान स्पर्धकों के अनुसार उत्पन्न होता है । जिस प्रकार मकान के भीतर से प्रदीप की प्रभा को बाहर निकलने के लिये गवाक्षजाल होते हैं इसी प्रकार अवधिज्ञान के निर्गमस्थान भी होते हैं । ये अवधिज्ञानावरण कर्म के क्षयोपशमजन्य होते हैं । इन्हीं का नाम स्पर्धक हैं । ये स्पर्धकरूप छिद्र एक जीव के संख्यात अथवा असंख्यात तक होते हैं और विविध प्रकार के होते हैं । कितनेक स्पर्धक तो ऐसे होते हैं जो पर्यन्तवर्ती आत्मप्रदेशोंमें क्षयोपशमसे मिश्रित उदयावस्थापन्न होते हैं । इनमें भी कितने ऐसे होते हैं जो आत्मा के आगेके प्रदेशोंमें क्षयोपशमानुविद्ध उदय को प्राप्त करते हैं, कितनेक ऐसे होते हैं जो आत्मा के पीछे के प्रदेशोंमें क्षयोपशम से युक्त उदय को पाते हैं । कितनेक अधोभागमें, कितनेक उपरितनभागमें, कितनेक मध्यवर्ती आत्मप्रदेशोंमें क्षयोपशमानुविद्ध उदय को प्राप्त करते हैं । जहां जैसे स्पर्धक होते हैं वहां वैसा अवधिज्ञान उत्पन्न होता है ।

કોઈ કોઈ અવધિજ્ઞાન સ્પર્ધકોના પ્રમાણે ઉત્પન્ન થાય છે. જે પ્રમાણે મકાનની અંદરથી દીવાના પ્રકાશને બહાર નિકળવા માટે ગવાક્ષજાળી હોય છે એજ પ્રમાણે અવધિજ્ઞાનનાં નિર્ગમસ્થાનો પણ હોય છે. તેઓ અવધિજ્ઞાના-વરણ કર્મના ક્ષયોપશમજન્ય હોય છે. તેમનું જ નામ સ્પર્ધક છે. એ સ્પર્ધકરૂપ છિદ્ર એક જીવને સંખ્યાત કે અસંખ્યાત સુધી હોય છે અને વિવિધ પ્રકારના હોય છે. કેટલાંક સ્પર્ધક તો એવાં હોય છે કે જે પર્યન્તવર્તી આત્મપ્રદેશોમાં ક્ષયોપશમથી મિશ્રિત ઉદ્યાવસ્થાપન્ન હોય છે. તેમનામાં પણ કેટલાંક એવાં હોય છે કે જે આત્માના આગળના પ્રદેશોમાં ક્ષયોપશમાનુવિદ્ધ ઉદય પ્રાપ્ત કરે છે. કેટલાંક એવાં હોય છે કે જે આત્માની પાછળના પ્રદેશોમાં ક્ષયોપશમથી યુક્ત ઉદય પ્રાપ્ત કરે છે, કેટલાંક નીચેના ભાગમાં, કેટલાંક ઉપરના ભાગમાં, કેટલાંક મધ્યવર્તી આત્મપ્રદેશોમાં ક્ષયોપશમથી યુક્ત ઉદય પ્રાપ્ત કરે છે. ત્યાં જેવાં સ્પર્ધક હોય છે ત્યાં તેવું અવધિજ્ઞાન ઉત્પન્ન થાય છે. જે તે સ્પર્ધકો



ત્મનોઽન્તે પર્યન્તે સ્થિતમિતિકૃત્વા—અન્તગતમિત્યુચ્યતે, તૈરેવ પર્યન્તવર્તિભિરાત્મ-  
પ્રદેશૈઃ સાક્ષાદવધિરૂપં જ્ઞાનં જાયતે, ન ત્વશે પૈરાત્મપ્રદેશૈઃ ? इति प्रथमोऽर्थः ।

અથવા—ઔદારિકશરીરસ્ય અન્તે ગતં—સ્થિતમન્તગતમ્, કયાચિદેકદિશયો-  
પલમ્ભાત્ । इदमपि स्पर्धकानुरूपमवधिज्ञानम् । सर्वेषामप्यात्मप्रदेशानां क्षयोपशम-  
भावेऽपि औदारिकशरीरान्તે કયાપિ દિશયા યદ્વશાદુપલમ્બ્યતે, તદપ્યન્તગતમ્ ૨ ।

નનુ યદિ સર્વાત્મપ્રદેશાનાં ક્ષયોપશમસ્તતઃ સર્વતઃ કિં ન પશ્યતિ ? ઉચ્યતે—

યદિ યે સ્પર્ધક આત્મા કે પ્રદેશોં કે અન્તમેં સ્થિત હૈં તો इन पर्यन्तवर्ती  
આત્મપ્રદેશોંસે હી સાક્ષાત્ અવધિરૂપ જ્ઞાન ઉત્પન્ન હોગા, આત્મા કે  
સમસ્તપ્રદેશોંસે નહીં । इस प्रकार यह अन्तगत आनुगामिक अवधिज्ञान  
કા ભાવ હૈ । यह प्रथम अर्थ १ ।

અથવા—અન્તગત—શબ્દ કા દૂસરા અર્થ “જો ઔદારિક શરીર કે  
અન્તમેં સ્થિત હો ” એસા મી હોતા હૈ । ઔદારિક શરીર કે અન્તમેં  
સ્થિત રહનેવાલા યહ અવધિજ્ઞાન મી સ્પર્ધકોં કે અનુરૂપ હી હોતા હૈ,  
ઔર किसी एक दिशामें स्थित रूपी पदार्थों को स्पष्ट जानता है । यद्यपि  
અવધિજ્ઞાનાવરણ કર્મ કા ક્ષયોપશમ સમસ્ત આત્મપ્રદેશોંમેં હોતા હૈ તો  
મી યહ ઔદારિક શરીર કે અન્તમેં સ્થિત હોકર હી કિસી એક દિશામેં  
વ્યવસ્થિત રૂપી પદાર્થોં કો વિષય કરતા હૈ ।

શંકા—યદિ અવધિજ્ઞાનાવરણ કર્મ કા ક્ષયોપશમ સમસ્ત આત્મ-  
પ્રદેશોંમેં હોતા હૈ તો સમસ્ત આત્મપ્રદેશોંસે હી યહ અવધિજ્ઞાન રૂપી  
પદાર્થોં કો ક્યોં નહીં જાનતા દેખતા હૈ ? ।

આત્માના પ્રદેશોના અન્તમાં રહેલા હોય તો એ પર્યન્તવર્તી આત્મપ્રદેશોમાંથી જ  
સાક્ષાત્ અવધિરૂપ જ્ઞાન ઉત્પન્ન થશે, આત્માના સમસ્ત પ્રદેશોમાંથી નહીં આ  
પ્રમાણે આ અન્તગત આનુગામિક અવધિજ્ઞાનનો ભાવ છે. આ પહેલો અર્થ.

અથવા—અન્તગત શબ્દનો બીજો અર્થ “ જે ઔદારિક શરીરના અન્તમાં  
સ્થિત હોય ” એવો પણ થાય છે ઔદારિક શરીરના અન્તમાં સ્થિત રહેનાર  
અવધિજ્ઞાન પણ સ્પર્ધકોને અનુરૂપ જ હોય છે, અને કોઈ એક દિશામાં રહેલાં  
રૂપી પદાર્થોને સ્પષ્ટ બાણે છે જે કે અવધિજ્ઞાનાવરણ કર્મનો ક્ષયોપશમ સમસ્ત  
આત્મપ્રદેશોમાં થાય છે. તો પણ તે ઔદારિક શરીરના અન્તમાં સ્થિત થઈને જ  
કોઈ એક દિશામાં વ્યવસ્થિત રૂપી પદાર્થોને વિષય કરે છે.

શંકા—જો અવધિજ્ઞાનાવરણ કર્મનો ક્ષયોપશમ સમસ્ત આત્મપ્રદેશોમાં  
થાય છે તો સમસ્ત આત્મપ્રદેશોવડે જ આ અવધિજ્ઞાન રૂપી પદાર્થોને કેમ  
બાણતું દેખતું નથી ?

एकदिशयैव वस्तुनो ज्ञानसंभवात् । विचित्रो हि क्षयोपशमस्ततः सर्वेषामप्यात्म-  
प्रदेशानामित्थंभूत एव स्वसामग्रीवशात् क्षयोपशमः सम्भवति, यदौदारिकशरीरम-  
पेक्ष्य कयाचिद् विवक्षितया एकदिशया पश्यतीति द्वितीयोऽर्थः २ ।

अथवा—एकदिग्भाविनाऽवधिज्ञानेन यदुद्द्योतितं क्षेत्रं तस्यां दिशि तदवधि-  
ज्ञानं वर्तते, अवधिज्ञानवतस्तदन्ते वर्तमानत्वात् । ततोऽन्ते=एकदिगूरूपस्यावधिज्ञान-  
विषयस्य पर्यन्ते, व्यवस्थितं तस्मादवधिज्ञानमन्तगतमित्युच्यते । इति तृतीयोऽर्थः ३ ।

इदमत्र तत्त्वम्—अन्तगतमवधिज्ञानं त्रिधा व्याख्येयम्—आत्मप्रदेशान्ते, वा  
औदारिकशरीरान्ते वा तदुद्द्योतितक्षेत्रान्ते वा व्यवस्थितं भवति । सर्वात्मप्रदेश-

उत्तर—वस्तु का ज्ञान एक दिशाको लेकर ही होता है इसलिये  
यद्यपि अवधिज्ञानावरण कर्म का क्षयोपशम समस्त आत्मप्रदेशोंमें  
होता है फिर भी वह क्षयोपशम स्वसामग्री के वश से इसी ढंग का  
होता है कि वह औदारिक शरीर की अपेक्षा करके किसी एक विवक्षित  
दिशा के सहारे उसी दिशामें स्थित रूपी पदार्थों को जानता देखता है ।  
यह दूसरा अर्थ २ ।

अन्तगत का तीसरा अर्थ ऐसा भी होता है कि—यह अवधिज्ञान  
एकदिग्भावी होता है अतः उसके द्वारा जितना भी क्षेत्र प्रकाशित  
किया जाता है उस प्रकाशित क्षेत्र के एकदिग्रूप विषय के अन्तमें यह  
व्यवस्थित होता है इसलिये यह अन्तगत कहलाता है । यह तीसरा अर्थ ३ ।  
तात्पर्य इसका इस प्रकार जानना चाहिये कि अन्तगत अवधिज्ञान  
आत्मप्रदेशान्तमें १, औदारिकशरीरान्तमें २, तथा अपने द्वारा प्रकाशित

ઉત્તર—વસ્તુનું જ્ઞાન એક દિશાને લઈને જ થાય છે. તેથી જો કે અવ-  
ધિજ્ઞાનાવરણ કર્મનો ક્ષયોપશમ સમસ્ત આત્મપ્રદેશોમાં થાય છે તો પણ તે  
ક્ષયોપશમ સ્વસામગ્રીના વશથી એવા પ્રકારનો થાય છે કે તે ઔદારિક શરીરની  
અપેક્ષા કરીને કોઈ એક વિવક્ષિત દિશાની મદદથી એજ દિશામાં રહેલ રૂપી  
પદાર્થોને જાણે છે તથા દેખે છે. આ ત્રીજો અર્થ.

અન્તગતનો ત્રીજો અર્થ એવો પણ થાય છે કે આ અવધિજ્ઞાન એક  
દિગ્ભાવી હોય છે તેથી તેના દ્વારા જેટલું પણ ક્ષેત્ર પ્રકાશિત કરાય છે તે પ્રકાશિત  
ક્ષેત્રના એક દિગ્રૂપ વિષયના અન્તમાં તે વ્યવસ્થિત હોય છે તેથી તે અન્ત-  
ગત કહેવાય છે. આ ત્રીજો અર્થ.

તેનું તાત્પર્ય આ રીતે સમજવું જોઈએ કે અન્તગત અવધિજ્ઞાન—  
(૧) આત્મપ્રદેશાન્તમાં, (૨) ઔદારિકશરીરાન્તમાં અને (૩) પોતાના દ્વારા



ક્ષયોપશમાત્ સકલજીવોપયોગે સત્યપિ સાક્ષાદેકદેશે નૈવ દર્શનાદાત્મપ્રદેશાન્તગતં  
યદવધિજ્ઞાનં તદન્તગતમુચ્યતે, इति प्रथमम् । अथवा—औदारिकशरीरैक-  
देशे नैव दर्शनादौदारिकशरीरान्ते गतं यदवधिज्ञानं तदप्यन्तगतमुच्यते, औदारिक-  
शरीरस्यैकदेशे एकस्यां दिशि तदवधिज्ञानमुत्पद्यते, इति द्वितीयम् । क्षेत्रान्तगतं तु  
अवधिज्ञानोद्द्योतितक्षेत्रदिग्भागे अवधिमतो जीवस्य वर्तमानत्वादेकदिगूरूपस्य  
क्षेत्रस्य पर्यन्ते व्यवस्थितमवधिज्ञानमन्तगतं भवतीति व्यपदिश्यते, इति तृतीयम् ।

ક્ષેત્ર કે અન્તર્મેં ૩, વ્યવસ્થિત હોને કી વજહ સે તીન પ્રકાર કા બતલાયા  
ગયા હૈ ।

यद्यपि अवधिज्ञानावरण कर्म का क्षयोपशम सर्व आत्मप्रदेशोंमें  
होता है, और इस अपेक्षा उसका उपयोग सर्व आत्मप्रदेशों के साथ ही  
होता है, फिर भी साक्षात् उसकी उत्पत्ति जीवके एकदेश से ही होती  
देखी जाती है, इसलिये वह आत्मप्रदेशान्तगत कहा गया है १ । यह  
प्रथम भेद १ ।

अथवा औदारिक शरीर की अपेक्षा कर के उसके एक देश से ही  
यह उत्पन्न होता देखा जाता है इसलिये भी यह अन्तगत कहा गया है ।  
औदारिक शरीर के एक देशमें एक दिशामें वह अवधिज्ञान उत्पन्न होता  
है यह अन्तगत का द्वितीय प्रकार है २ । तृतीय प्रकार ऐसा है कि-अव-  
धिज्ञान से उद्योतित क्षेत्र के दिग्भागमें अवधिज्ञान से युक्त जीवमें  
वर्तमान होने के कारण एकदिगूरूप अर्थ के अन्तमें यह व्यवस्थित होता  
है, अतः यह अवधिज्ञान अंतगत कहा जाता है ३ ।

પ્રકાશિત ક્ષેત્રના અન્તર્માં વ્યવસ્થિત હોવાથી ત્રણ પ્રકારનું બતાવવામાં આવ્યું છે  
જે કે અવધિજ્ઞાનાવરણ કર્મનો ક્ષયોપશમ સર્વ આત્મપ્રદેશોમાં થાય છે  
અને એ અપેક્ષાએ તેનો ઉપયોગ સર્વ આત્મપ્રદેશોની સાથે જ થાય છે છતાં  
પણ તેની સાક્ષાત્ ઉત્પત્તિ જીવના એક દેશથી જ થતી દેખાય છે, તેથી તે  
આત્મપ્રદેશાન્તગત કહેવાયેલ છે ૧ આ પહેલો ભેદ.

અથવા ઔદારિક શરીરની અપેક્ષા કરીને તેના એક દેશથી જ તે ઉત્પન્ન  
થતું દેખાય છે તેથી પણ તે અન્તગત કહેવાયું છે. ઔદારિક શરીરના એક દેશમાં,  
એક દિશામાં તે અવધિજ્ઞાન ઉત્પન્ન થાય છે. આ અન્તગતનો બીજો પ્રકાર છે ૨.

ત્રીજો પ્રકાર એવો છે કે અવધિજ્ઞાનથી ઉદ્યોતિત ક્ષેત્રના દિગ્ભાગમાં  
અવધિજ્ઞાનવાળા જીવમાં વર્તમાન હોવાને કારણે એકદિગ્ગૂરૂપ અર્થના અન્તે  
તે વ્યવસ્થિત થાય છે, તે અવધિજ્ઞાનને અંતગત કહેવામાં આવે છે ૩.

મધ્યગતં चेति । इह मध्यः प्रसिद्ध एव जम्बूद्वीपमध्यवत् । मध्ये गतं मध्य-  
गतं मध्ये स्थितमित्यर्थः । तच्च सर्वत्र स्पर्धकविशुद्धेरात्ममध्ये-सर्वात्मप्रदेशमध्ये,  
यद्वा-सर्वात्मप्रदेशानां क्षयोपशमयोगाविशेषेऽप्यौदारिकशरीरमध्ये उपलब्धेस्तन्मध्ये,  
यद्वा-सर्वदिगुपलम्भात् तत्प्रकाशितक्षेत्रमध्ये गतमवधिज्ञानं मध्यगतम् ।

इदमत्र तत्त्वम्—मध्यगतमपि त्रिधा व्याख्येयम्—आत्ममध्यगतम् १,  
औदारिकशरीरमध्यगतं २, तत्प्रद्योतितक्षेत्रमध्यगतमिति ३ । आत्मप्रदेशानां  
मध्येमध्यवर्त्तिषु आत्मप्रदेशेषु गतं स्थितम् आत्ममध्यगतम्, इदं च

મધ્યગત જો આનુગામિક અવધિજ્ઞાન કા ભેદ હૈ વહ બી ત્રીન  
પ્રકાર કા બતલાયા ગયા હૈ—આત્મમધ્યગત ૧, ઔદારિકશરીરમધ્ય-  
ગત ૨ તત્પ્રદ્યોતિતક્ષેત્રમધ્યગત ૩ । યહાં મધ્યશબ્દ જમ્બૂદ્વીપ કે મધ્ય  
કી તરહ વીચ કા વાચક હૈ । જો વીચમેં સ્થિત હોતા હૈ વહ મધ્યગત કા  
વાચ્યાર્થ હૈ । સ્પર્ધકોં કી વિશુદ્ધિ સે સમસ્ત આત્મપ્રદેશોં કે મધ્યમેં હોને  
કે કારણ આત્મમધ્યગત કહલાતા હૈ ૧ । તથા સર્વાત્મપ્રદેશોંમેં ક્ષયો-  
પશમ કી અવિશેષતા હોને પર બી ઔદારિક શરીર કે મધ્યમેં હી ઉપ-  
લબ્ધિ હોને કે કારણ યહ ઔદારિકશરીરમધ્યગત કહા જાતા હૈ ૨ ।  
તથા સમસ્તદિશારૂપ અર્થ કી ઇસ જ્ઞાન સે ઉપલબ્ધિ હોતી હૈ ફિર  
બી અવધિજ્ઞાનદ્વારા પ્રકાશિત ઉનકે ક્ષેત્ર કે મધ્યમેં હી યહ અવધિજ્ઞાન  
વ્યવસ્થિત હોતા હૈ અતઃ યહ તત્પ્રદ્યોતિતક્ષેત્રમધ્યગત માના જાતા હૈ ૩ ।  
તાત્પર્ય ઇસકા ઇસ પ્રકાર હૈ—મધ્યગત અવધિજ્ઞાન કે જો યે ત્રીન પ્રકાર  
બતલાયે ગયે હૈં ઉનમેં આત્મમધ્યગત અવધિજ્ઞાન આત્મા કે મધ્યવર્તી

મધ્યગત આનુગામિક અવધિજ્ઞાનના જે ભેદ છે તે પણ ત્રણ પ્રકારના છે—  
(૧) આત્મમધ્યગત, (૨) ઔદારિકશરીરમધ્યગત, (૩) તત્પ્રદ્યોતિતક્ષેત્રમધ્ય-  
ગત. અહીં “મધ્ય” શબ્દ જમ્બુદ્વીપની મધ્યેની જેમ “વચ્ચે” એવા  
અર્થનો વાચક છે. જે વચ્ચે રહેલ હોય છે તે મધ્યગતનો વાચ્યાર્થ છે. સ્પર્ધ-  
કોની વિશુદ્ધિથી સમસ્ત આત્મપ્રદેશોની વચ્ચે હોવાને કારણે તે આત્મમધ્યગત  
કહેવાય છે ૧. તથા સર્વાત્મપ્રદેશોમાં ક્ષયોપશમની અવિશેષતા હોવા છતાં પણ  
ઔદારિક શરીરની મધ્યમાં જ ઉપલબ્ધિ હોવાને કારણે આ ઔદારિકશરીર  
મધ્યગત કહેવાય છે. ૨. તથા સમસ્તદિશારૂપ અર્થની આ જ્ઞાનથી ઉપલબ્ધિ  
થાય છે તો પણ અવધિજ્ઞાનદ્વારા પ્રકાશિત તેમનાં ક્ષેત્રની મધ્યમાં જ આ  
અવધિજ્ઞાન વ્યવસ્થિત થાય છે તેથી આ અવધિજ્ઞાન તત્પ્રદ્યોતિતક્ષેત્રમધ્યગત  
માનવામાં આવે છે ૩. તેનું તાત્પર્ય આ પ્રમાણે છે—મધ્યગત અવધિજ્ઞાનના  
આ જે ત્રણ પ્રકાર બતાવ્યા છે તેઓમાં આત્મમધ્યગત અવધિજ્ઞાન આત્માના

સ્પર્ધકાનુરૂપમવધિજ્ઞાનં સર્વદિગુપલમ્ભકારણં મધ્યવર્તિનામાત્મપ્રદેશાનામવસેયમ્ ।  
 સર્વાત્મોપયોગે સત્યપિ મધ્યે એવ સ્પર્ધકસદ્ભાવાત્ સાક્ષાન્મધ્યભાગેનોપલબ્ધેઃ ૧ ।  
 તથા—સર્વેષામપ્યાત્મપ્રદેશાનાં ક્ષયોપશમભાવેઽપ્યૌદારિકશરીરમધ્યભાગેનોપલબ્ધેસ્ત-  
 ન્મધ્યે ગતમ્ ઔદારિકશરીરમધ્યગતમ્ ૨ । તથા—તેનાવધિજ્ઞાનેન યદુદ્ધોતિતં  
 ક્ષેત્રં સર્વાસુ દિક્ષુ, તસ્ય મધ્યે=મધ્યભાગે ગતં । સ્થિતં તત્પ્રદ્યોતિતક્ષેત્રમધ્યગતમ્ ।  
 અવધિજ્ઞાનિનસ્તદુદ્ધોતિતક્ષેત્રમધ્યવર્તિત્વાત્ ૩ ।

શિષ્યઃ પૃચ્છતિ—‘ સે કિં તં અંતગયં ’ ઇતિ । અથ કિં તદ્ અન્તગતમ્ ?,  
 પૂર્વનિર્દિષ્ટસ્યાન્તગતસ્ય કિં સ્વરૂપમિત્યર્થઃ । ઉત્તરમાહ—‘ અંતગયં તિવિહં પણત્તં ’

પ્રદેશોંમેં સ્થિત રહ્યા કરતા હૈ । યહ મધ્યગત અવધિજ્ઞાન સ્પર્ધકોં કે અનુ-  
 સાર હોતા હૈ , ઇસસે સમસ્ત દિગ્રૂપ અર્થ કી ઉપલબ્ધિ હોતી હૈ । યદ્યપિ  
 ઇસકા ઉપયોગ પૂર્ણ આત્મા મેં હોતા હૈ તો ખી ઉસ કે મધ્યમેં હી  
 સ્પર્ધકોં કા સદ્ભાવ રહ્યા કરતા હૈ ઇસસે વહ સાક્ષાત્ મધ્યભાગ સે હી  
 ઉપલબ્ધ હોતા હૈ ૧ । તથા—સમસ્ત આત્મપ્રદેશોંમેં ક્ષયોપશમકા સદ્ભાવ  
 હોતા હૈ તો ખી ઔદારિક શરીર કે મધ્યભાગ સે ઇસકી ઉપલબ્ધિ હોતી  
 હૈ ઇસલિયે ઔદારિકશરીરમધ્યગત યહ કહ્યા જાતા હૈ ૨ । તથા ઉસ  
 અવધિજ્ઞાન દ્વારા સમસ્ત દિશાઓંમેં જો ક્ષેત્ર પ્રકાશિત કિયા જાતા હૈ  
 ઉસ ક્ષેત્ર કે મધ્યમેં ઇસ કી ઉપલબ્ધિ હોતી હૈ અતઃ યહ તત્પ્રદ્યોતિત-  
 ક્ષેત્રમધ્યગત કહલાતા હૈ, કારણ કિ વહ અધિજ્ઞાની ઉસ અવધિજ્ઞાન  
 દ્વારા પ્રકાશિત ક્ષેત્ર કે મધ્યમેં હી રહ્યા કરતા હૈ, ઉસસે બાહર નહીં ૩ ।

ફિર શિષ્ય પૂછતા હૈ—‘ સે કિં તં અંતગયં ’ ઇતિ । પૂર્વનિર્દિષ્ટ અન્ત-

મધ્યવર્તી પ્રદેશોમાં સ્થિત રહ્યા કરે છે આ મધ્યગત અવધિજ્ઞાન સ્પર્ધકોંને અનુસાર  
 હોય છે. તેનાથી સમસ્ત દિગ્રૂપ અર્થની પ્રાપ્તિ થાય છે. જો કે તેનો ઉપયોગ પૂર્ણ  
 આત્મામાં થાય છે તો પણ તેની મધ્યમાં જ સ્પર્ધકોંનો સદ્ભાવ રહ્યા કરે છે.  
 તેથી તે સાક્ષાત્ મધ્યભાગથી જ પ્રાપ્ત થાય છે ૧ । તથા સમસ્ત આત્મપ્રદેશોમાં  
 ક્ષયોપશમનો સદ્ભાવ હોય છે તો પણ ઔદારિક શરીરના મધ્યભાગથી તેની  
 પ્રાપ્તિ થાય છે, તેથી તે ઔદારિકશરીરમધ્યગત માનવામાં આવે છે. ૨ ।  
 તથા તે અવધિજ્ઞાનદ્વારા સમસ્ત દિશાઓમાં જે ક્ષેત્ર પ્રકાશિત કરાય છે તે  
 ક્ષેત્રની મધ્યમાં તેની પ્રાપ્તિ થાય છે, તેથી તે તત્પ્રદ્યોતિતક્ષેત્રમધ્યગત કહે-  
 વાય છે, કારણ કે તે અવધિજ્ઞાની તે અવધિજ્ઞાન વડે પ્રકાશિત ક્ષેત્રની મધ્યમાં જ  
 રહ્યા કરે છે, તેનાથી બહાર નહીં. ૩ ।

બીજી શિષ્ય પૂછે છે—“ સે કિં તં અંતગયં ” એ, પૂર્વનિર્દિષ્ટ અન્તગત

इत्यादि । अन्तगतं त्रिविधं प्रज्ञप्तम् । तद् यथा—पुरतोऽन्तगतं १, मार्गतोऽन्तगतं २, पार्श्वतोऽन्तगतम् ३ ।

પુનરપિ શિષ્યઃ પૂછતિ—‘સે કિં તં ’ ઇતિ । અથ કિં તત્ પુરતોઽન્તગતમ્ ? ઇતિ । ઉત્તરમાહ—‘ પુરઓ અંતગયં સે જહા નામણ ’ ઇત્યાદિ । પુરતોઽન્તગતં સ યથા-નામકઃ=વિવક્ષિતઃ કશ્ચિત્ પુરુષઃ ઉલ્કાં=પ્રજ્વલજ્વાલારૂપાં વા ‘ મસાલ ’ ઇતિ પ્રસિદ્ધાં, ચટુલિકામ્=અગ્રભાગપ્રજ્વલિતતૃણપૂલિકાં વા, અલાતમ્=ઉલ્મુકમ્-અગ્રભાગપ્રજ્વલત્કાષ્ઠં વા, મણિં = પદ્મરાગાદિકં વા, પ્રદીપં=દીપકં વા, જ્યોતિઃ = પ્રજ્વલદગ્નિં ‘ વિજલી, બેટરી ’ ઇત્યાદિભાષાપ્રસિદ્ધં પ્રકાશોત્પાદકં યંત્રવિશેષં વા પુરતઃ કૃત્વા=અગ્રતો હસ્તદણ્ડાદૌ ગૃહીત્વા, ‘ પળોલ્લે-માણે ૨ ’ પ્રણુદન્ ૨=પ્રેરયન્ ૨ ગચ્છતિ, તદેતત્ પુરતોઽન્તગમ્ । વિવક્ષિતઃ કશ્ચિત્

ગત અવધિજ્ઞાન કા કયા સ્વરૂપ હૈ ? આચાર્ય કહતે હૈ—“ અંતગયં તિવિહં પળત્તં ” અંતગત અવધિજ્ઞાન ત્રીન પ્રકાર કા કહા ગયા હૈ । વહ ઇસ પ્રકાર—પુરતોઽન્તગત ૧, માર્ગતોઽન્તગત ૨ ઓર પાર્શ્વતોઽન્તગત ૩ । ફિર શિષ્ય પૂછતા હૈ—“ સે કિં તં પુરઓઅંતગયં ” ઇતિ । પુરતોઽન્તગત અવધિજ્ઞાન કા કયા સ્વરૂપ હૈ ? ।

અવ ગુરુમહારાજ પુરતોઽન્તગત અવધિજ્ઞાનકા સ્વરૂપ દૃષ્ટાન્તપૂર્વક સમજાતે હૈ—‘ પુરઓ અંતગયં સે જહાનામણ ’ ઇત્યાદિ । જૈસે કોઈ (વિવક્ષિત) પુરુષ ઉલ્કાકો—જાજ્વલ્યમાન જ્વાલા-મસાલ કો, ચટુલિકાકો જિસકે અગ્રભાગમેં અગ્નિ જલતી હૈ એસે તૃણ કે પૂલાકો, અલાતકો—અગ્રભાગમેં અગ્નિવાલે કાઠ કો, મણિકો—પદ્મરાગ આદિ મણિ કો, પ્રદીપકો, જ્યોતિ કો—સામાન્યજલતી હુઈ અગ્નિ કો આગે કર કે ઉન્હેં સંભાલતા હુઆ ૨ ડનસે પ્રકાશિત માર્ગમેં ચલતા હૈ યહી પુરતોન્તગત

અવધિજ્ઞાનનું શું સ્વરૂપ છે? આચાર્ય કહે છે—“ અંતગયં તિવિહં પળત્તં ” અંતગત અવધિજ્ઞાન ત્રણ પ્રકારનું કહેવાયું છે. તે આ પ્રમાણે છે—(૧) પુરતો-ઽન્તગત (૨) માર્ગતોઽન્તગત (૩) પાર્શ્વતોઽન્તગત. ફરીને શિષ્ય પૂછે છે. “ સે કિં તં પુરઓઅંતગયં ? ” પુરતોઽન્તગત અવધિજ્ઞાનનું શું સ્વરૂપ છે? હવે શુરુમહારાજ “ પુરતોઽન્તગત ” અવધિજ્ઞાનનું સ્વરૂપ દૃષ્ટાંત સાથે સમજાવે છે—“ પુરઓ અંતગયં સે જહા નામણ ” જેમ કેઈ (વિવક્ષિત) પુરુષ ઉલ્કાને—પ્રકાશિત જ્વાળા—મસાલને, ચટુલિકાને—જેના આગળના ભાગમાં અગ્નિ સળગતી હોય તેવા પૂળાને, અલાતને—આગળના ભાગમાં અગ્નિવાળાં લાકડાને, મણીને—પદ્મરાગ આદિ મણીને, દીવાને, જ્યોતિને—સામાન્ય બળતી અગ્નિને, આગળ ધરીને તેને સંભાળતો સંભાળતો તેમનાથી પ્રકાશિત માર્ગમાં ચાલે છે એજ પુરતોન્તગત

પુરુષઃ ઉલ્કાદિકં પ્રકાશં હસ્તાદિના ગૃહીત્વાઽગ્રેઽગ્રે નયન્ યથા ગચ્છતિ તદ્વત્ ।  
 એતાવતા અંશેન દૃષ્ટાન્ત ઉક્તઃ । અયં ભાવઃ—સ હિ ગચ્છન્ ઉલ્કાદિભ્યઃ સકાશાત્  
 પુરત એવ પશ્યતિ, નાન્યત્ર, એવમગ્રગામિપ્રકાશતુલ્યાદ્ યસ્માદવધિજ્ઞાનાદેવ પુરત એવ  
 પશ્યતિ, નાન્યત્ર તત્ પુરતોઽન્તગતમિત્યુચ્યતે । એવં સર્વત્ર દૃષ્ટાન્તો યોજનીયઃ ।

શિષ્યઃ પૃચ્છતિ—‘સે કિં તં મગ્ગઓઅંતગયં’ ઇતિ । અથ કિં તન્માર્ગતોઽન્ત-  
 ગતમ્ ૧, માર્ગતો યદન્તગતં ભવતિ, તસ્ય કિં સ્વરૂપમિતિ પ્રશ્નઃ । ઉત્તરમાહ—‘મગ્ગઓ-  
 અંતગયં સે જહા નામણ’ ઇત્યાદિ । માર્ગતોઽન્તગતં સ યથાનામકઃ કથિત્ પુરુષઃ,  
 ઉલ્કાં વા ચટુલિકાં વા અલાતં વા મણિં વા પ્રદીપં વા જ્યોતિર્વા માર્ગતઃ=પૃષ્ઠતઃ  
 કૃત્વાઽનુકર્ષન્ ૨=પશ્ચાદ્ભાગે પ્રકાશં નયન્ ૨ ગચ્છતિ, તદ્વત્ । તદેતન્માર્ગતોઽન્ત-  
 ગતમ્ । અયં ભાવઃ—યસ્માદવધિજ્ઞાનાદાત્મા પૃષ્ઠભાગવતિનં ક્ષેત્રં પશ્યતિ તત્ પૃષ્ઠ-  
 ગામ્યવધિજ્ઞાનં માર્ગતોઽન્તગતમિત્યુચ્યતે ।

અવધિજ્ઞાન હૈ । અર્થાત્—જૈસે કોઈ પુરુષ રાત્રિ કે સમય ઉલ્કાદિક પ્રકા-  
 શકો હાથમેં લેકર ઉન્હેં આગે કરકે ચલતા હૈ ઓર ઉનસે પ્રકાશિત  
 આગેકે માર્ગકી ઓર હી દેખતા હૈ અન્યત્ર નહીં, ડસી પ્રકાર અગ્રગામી  
 પ્રકાશ કે સમાન જિસ અવધિજ્ઞાન સે આગે કી ઓર હી અવધિજ્ઞાની  
 દેખતા હૈ અન્યત્ર નહીં, વહ પુરતોઽન્તગત અવધિજ્ઞાન હૈ ૧ । અવ શિષ્ય  
 પૂછતા હૈ—માર્ગતોઽન્તગત અવધિજ્ઞાન કા કયા સ્વરૂપ હૈ ? । ઉત્તરમેં  
 આચાર્ય કહતે હૈ—“મગ્ગઓઅંતગયં સે જહાનામણ” ઇત્યાદિ । જૈસે કોઈ  
 વ્યક્તિ ઉલ્કા કો, ચટુલિકા કો, અલાતકો, મણિકો, પ્રદીપકો, જ્યોતિકો  
 પીછે કર કે ચલતા હૈ, યહ માર્ગતોઽન્તગત અવધિજ્ઞાન હૈ । અર્થાત્—જિસ  
 પ્રકાર પીઠ કે પીછે પ્રકાશકો કર કે ચલને વાલા વ્યક્તિ પીછે કે પદાર્થોકો

અવધિજ્ઞાન છે. એટલે કે રાત્રે જેમ કોઈ પુરુષ ઉલ્કાદિક પ્રકાશને હાથમાં લઈને  
 તેને આગળ ધરીને ચાલે છે અને તેમનાથી પ્રકાશિત થયેલા આગળના માર્ગની  
 તરફ જ દેખે છે, ખીજે નહીં, એજ પ્રમાણે આગળ જતા પ્રકાશની જેમ જે  
 અવધિજ્ઞાનથી આગળના તરફ જ અવધિજ્ઞાન દેખે છે ખીજે નહીં, તે પુરતોઽન્ત-  
 ગત અવધિજ્ઞાન છે ૧ ।

વળી શિષ્ય પૂછે છે—‘માર્ગતોઽન્તગત’ અવધિજ્ઞાનનું શું સ્વરૂપ છે ? આચાર્ય  
 જવાબ આપે છે—“મગ્ગઓઅંતગયં સે જહા નામણ” ઇત્યાદિ. જેમ કોઈ વ્યક્તિ  
 ઉલ્કાને, ચટુલિકાને, અલાતને, મણીને, દીવાને, કે જ્યોતિને પાછળ રાખીને  
 ચાલે છે તે ‘માર્ગતોન્તગત’ અવધિજ્ઞાન છે, એટલે કે જે રીતે પીઠની પાછળ  
 પ્રકાશ કરીને ચાલનારી વ્યક્તિ પાછળનાં પદાર્થોને દેખે છે, એજ રીતે એ અવધિ-

શિષ્યઃ પૃચ્છતિ—‘સે કિં તં પાસઓ અંતગયં’ ઇતિ । અથ કિં તત્ પાર્શ્વતો-  
ડન્તગતમ્’ ઇતિ । યત્ પાર્શ્વતોડન્તગતં, તસ્ય કિંસ્વરૂપમિત્યર્થઃ । ઉત્તરમાહ—‘પાસઓ-  
અંતગયં સે જહાનામણ’ ઇત્યાદિ । પાર્શ્વતોડન્તગતં, સ યથાનામકઃ કશ્ચિત્ પુરુષઃ  
ઉલ્કાં વા, ચટુલિકાં વા, અલાતં વા મણિ વા, પ્રદીપં વા જ્યોતિર્વા પાર્શ્વતઃ કૃત્વા  
પરિકર્ષન્ ૨ ગચ્છતિ, તદેતત્ પાર્શ્વતોડન્તગતમ્ । યથા—વિવક્ષિતઃ કશ્ચિત્ પુરુષઃ  
ઉલ્કાદિકં સ્વપાર્શ્વભાગે કૃત્વા પાર્શ્વપ્રદેશસ્થિતં વસ્તુ પ્રકાશયન્ ગચ્છતિ, તદ્વત્,  
તત્-પૂર્વનિર્દિષ્ટમ્, એતત્ પાર્શ્વતોડન્તગતમ્ । અયં ભાવઃ—યસ્માદવધિજ્ઞાનાત્ પાર્શ્વ-  
ગતાન્ પદાર્થાન્ પશ્યતિ, તત્ પાર્શ્વતોડન્તગતમવધિજ્ઞાનમ્ । ‘તદેતદન્તગતમ્’  
ઇતિ, એવમેતત્ પૂર્વનિર્દિષ્ટમન્તગતં વર્ણિતમિત્યર્થઃ ।

देखता है उसी प्रकार अवधिज्ञानी भी जिस अवधिज्ञान से पृष्ठभाग-  
वर्ती क्षेत्र को देखता है वह पृष्ठगामी अवधिज्ञान मार्गतोऽन्तगत अव-  
धिज्ञान है २ । फिर शिष्य पूछता है—“से किं तं पासओ अंतगयं”  
पार्श्वतोऽन्तगत अवधिज्ञान का क्या स्वरूप है ? उत्तरमें आचार्य कहते  
हैं—“से जहानामए” इत्यादि । जैसे कोई व्यक्ति उल्का को चटुलिका  
को, अलात को, मणि को, प्रदीप को, ज्योति को पसवाडेमें करके आजू-  
बाजूमें प्रकाश को करता हुआ चलता है उसी तरह यह पार्श्वतोऽन्तगत  
अवधिज्ञान है । अर्थात् उल्कादिक प्रकाशमय पदार्थ को अपने पार्श्व-  
भागमें करके मार्गमें चलनेवाला व्यक्ति जिस तरह आजूबाजू के पदार्थोंका  
निरीक्षण करता चलता है उसी प्रकार जिस अवधिज्ञान से अवधिज्ञानी  
पार्श्वगत पदार्थोंका निरीक्षण करता है वह पार्श्वतोऽन्तगत अवधिज्ञान है ।

જાની પણ જે અવધિજ્ઞાનથી પાછળના ભાગમાં રહેલા ક્ષેત્રને દેખે છે તે પૃષ્ઠગામી  
અવધિજ્ઞાન માર્ગતોડન્તગત અવધિજ્ઞાન છે. ૨ ।

વળી શિષ્ય ફરીથી પૂછે છે—“સે કિ તં પાસઓઅંતગયં” પાર્શ્વતોડન્તગત  
અવધિજ્ઞાનનું શું સ્વરૂપ છે ?

જવાબમાં આચાર્ય કહે છે—“સે જહા નામણ” ઇત્યાદિ જેમ કોઈ વ્યક્તિ  
ઉલ્કાને, ચટુલિકાને, અલાતને, મણીને, દીવાને કે જ્યોતિને પકડે કરીને  
આબુઆબુમાં પ્રકાશ કરતો ચાલે છે એનાં જેવું આ પાર્શ્વતોન્તગત અવધિજ્ઞાન  
છે. એટલે કે ઉલ્કાદિક પ્રકાશમય પદાર્થને પોતાની આબુમાં રાખીને ચાલનાર  
વ્યક્તિ જે રીતે આબુઆબુના પદાર્થોનું નિરીક્ષણ કરતો કરતો ચાલે છે એજ  
પ્રમાણે જે અવધિજ્ઞાનથી અવધિજ્ઞાની આબુઆબુના પદાર્થોનું નિરીક્ષણ કરે છે  
તે પાર્શ્વતોન્તગત અવધિજ્ઞાન છે. ૩.



एवमन्तगतस्यावधिज्ञानस्य स्वरूपं विज्ञाय शिष्यः पृच्छति-‘ से किं तं मज्झ-  
गयं ’ इति । अथ किं तन्मध्यगतम् ? इति । यदवधिज्ञानं मध्यगतमिति नाम्ना  
पूर्वं निर्दिष्टं तस्य किं स्वरूपमित्यर्थः ? । उत्तरमाह-‘ मज्झगयं से जहानामए ’  
इत्यादि । ‘ मज्झगयं ’ इति । मध्यगतं कथयामीत्यर्थः । स यथानामकः=विवक्षितः  
कश्चित् पुरुषः उल्कां वा चटुलिकां वा अलातं वा मणिं वा प्रदीपं वा ज्योतिर्वौ  
प्रकाशकारकं वस्तु मस्तके कृत्वा=शिरसि निधाय, समुद्रवहनूर=धारयनूर  
गच्छति, तद्वत् । तदेतन्मध्यगतम्=तत्-पूर्वनिर्दिष्टम्, मध्यगतं-मध्यगतनामकम्,  
एतत्-अवधिज्ञानमिति । अयं भावः-यथा कश्चित् पुरुषो गच्छन् मस्तकस्थेनोल्का-  
दिना सर्वत्र तत्प्रकाशितमर्थं पश्यति, एवमात्मा यस्मादवधिज्ञानात् तत्प्रद्योतितं चत-  
सृषु दिक्ष्ववस्थितं वस्तु पश्यति, तन्मध्यगतमिति ।

पुनरपि शिष्यः पृच्छति-‘ अंतगयस्स मज्झगयस्स यको पइविसेसो ? ’ इति ।

फिर शिष्य पूछता है-“ से कि तं मज्झगयं ” इति ।

उत्तर-“ से जहा नामए ” इत्यादि । जैसे कोई पुरुष उल्का को अथवा  
चटुलिका से लेकर ज्योतिपर्यन्त के प्रकाशात्मक पदार्थ को मस्तक ऊपर  
ધર કર માર્ગમેં ચલતા હૈ વહ મધ્યગત અવધિજ્ઞાન હૈ । અર્થાત્ ઉલ્કા-  
દિક પ્રકાશાત્મક પદાર્થો કો અપને મસ્તક ઉપર ધરકર ચલનેવાલા  
પુરુષ જિસ પ્રકાર સર્વત્ર ફેલે હુએ પ્રકાશગત પદાર્થો કો દેખના ચલતા  
હૈ उसो प्रकार जिस अवधिज्ञान के द्वारा जीव चारों दिशाओं के प्रकाशित  
पदार्थों को देखता है वह मध्यगत अवधिज्ञान है । शिष्य पूछता है-  
‘ अंतगयस्स य ’ इत्यादि । अन्तगत अवधिज्ञानमें और मध्यगत अ-  
वधिज्ञानमें क्या अन्तर है ? अभिप्राय यह है कि अंतगत अवधिज्ञान के

ફરીથી શિષ્ય પૂછે છે-“ સે કિં તં મજ્ઞગય ” ઇતિ ।

ઉત્તર:-“ સે જહાનામએ ” ઇત્યાદિ.

જેમ કેઈ પુરુષ ઉલ્કાને અથવા ‘ચટુલિકા’ થી લઈને ‘જ્યોતિ’ સુધીના  
પ્રકાશિત પદાર્થને માથે ધરીને માર્ગમાં ચાલે છે એજ પ્રકારનું આ મધ્યગત  
અવધિજ્ઞાન છે. એટલે કે ઉલ્કાદિકથી પ્રકાશિત પદાર્થોને પોતાના માથા ઉપર  
ધરીને ચાલનાર પુરુષ જે રીતે સર્વત્ર ફેલાયેલા પ્રકાશમાં આવતા પદાર્થોને જોતો  
જોતો ચાલે છે એજ રીતે જે અવધિજ્ઞાન વડે જીવ ચારે દિશાઓના પ્રકાશિત  
પદાર્થોને જુવે છે તે ‘મધ્યગત અવધિજ્ઞાન છે.’

શિષ્ય પૂછે છે-‘ અંતગયસ્સ ચ ’ ઇત્યાદિ. અન્તગત અવધિજ્ઞાનમાં અને  
મધ્યગત અવધિજ્ઞાનમાં શો ભેદ છે ? ભાવાર્થ એ છે કે અંતગત અવધિજ્ઞાનના

અન્તગતસ્ય મધ્યગતસ્ય ચ કઃ પ્રતિવિશેષઃ ? =કો ભેદઃ ? इति । उत्तरमाह-पुरतोऽ-  
न्तगतेनाऽवधिज्ञानेन पुरतश्चैव=अग्रवर्तीन्येव वस्तूनि संख्येयानि वा, असंख्येयानि  
वा योजनानि=संख्यातयोजनपर्यन्तं, तथा-असंख्यातयोजनपर्यन्तं वा जानाति  
पश्यति । मार्गतोऽन्तगतेनाऽवधिज्ञानेन मार्गतश्चैव=पृष्ठतश्चैव संख्येयानि वा  
असंख्येयानि वा योजनानि जानाति पश्यति । पार्श्वतोऽन्तगतेनाऽवधिज्ञानेन  
पार्श्वतश्चैव संख्येयानि वा असंख्येयानि वा योजनानि जानाति पश्यति । मध्यग-  
तेनाऽवधिज्ञानेन तु-आत्मा सर्वतः=सर्वासु दिक्षु समन्तात्=सर्वासु विदिक्षु  
विशुद्धस्पर्धकैः, ‘संखिज्जाणि वा’ ‘संख्येयानि वा’ इति, संख्यायन्ते, इति संख्ये-  
यानि, एकादीनि शीर्षप्रहेलिकापर्यन्तानि गृह्यन्ते, तत ऊर्ध्वमसंख्येयानि, तदाह-

जो तीन भेद किये गये हैं उनमें और मध्यगत अवधिज्ञानमें क्या भेद  
है ?, इसका उत्तर इस प्रकार है-‘ पुरओअंतगणं ’ इत्यादि । पुरतोऽ-  
न्तगतअवधिज्ञानद्वारा अवधिज्ञानी अग्रवर्ती वस्तुओं को ही संख्यात  
योजनपर्यन्त अथवा असंख्यातयोजन पर्यन्त जानता और देखता है ।  
मार्गतोऽन्तगत अवधिज्ञान द्वारा अवधिज्ञानी पृष्ठगत पदार्थों को ही  
संख्यात तथा असंख्यात योजन पर्यन्त जानता देखता है । पार्श्वतोऽन्तगत  
अवधिज्ञानद्वारा अवधिज्ञानी आजूबाजू के संख्यात अथवा असंख्यात  
योजन पर्यन्त रहे हुए पदार्थों को जानता और देखता है परन्तु मध्यगत  
अवधिज्ञान के द्वारा अवधिज्ञानी आत्मा समस्त दिशाओंमें तथा  
समस्त विदिशाओंमें स्थित पदार्थों को विशुद्ध स्पर्धकों से संख्यात-  
एकादिक शीर्षप्रहेलिका योजन पर्यन्त, अथवा असंख्यात योजन

જે ત્રણ ભેદ કહેલ છે તેમાં અને મધ્યગત અવધિજ્ઞાનમાં શો ભેદ છે ? તેના  
જવાબ આ પ્રમાણે છે-“ પુરોઅંતગણં ” ઇત્યાદિ.

પુરતોઅન્તગત અવધિજ્ઞાન વડે અવધિજ્ઞાની અગ્રવર્તી વસ્તુઓને જ સંખ્યાત  
યોજન સુધી અથવા અસંખ્યાત યોજન સુધી જાણે છે અને દેખે છે. માર્ગતો-  
અન્તગત અવધિજ્ઞાન વડે અવધિજ્ઞાની પૃષ્ઠગત પદાર્થોને સંખ્યાત અથવા અસં-  
ખ્યાત યોજન સુધી જાણે છે તથા દેખે છે. પાર્શ્વતોઅન્તગત અવધિજ્ઞાન વડે  
અવધિજ્ઞાની આજુબાજુના સંખ્યાત અથવા અસંખ્યાત યોજન સુધી રહેલા  
પદાર્થોને જાણે છે અને દેખે છે. પણ મધ્યગત અવધિજ્ઞાન વડે અવધિજ્ઞાની  
આત્મા સમસ્ત દિશાઓમાં તથા સમસ્ત વિદિશાઓમાં રહેલ પદાર્થોને  
વિશુદ્ધ સ્પર્ધકોથી સંખ્યાત-એકાદિક શીર્ષપ્રહેલિકા યોજન પર્યન્ત, અથવા



‘ અસંખિજ્ઞાણિ વા ’ ઇતિ, અસંખ્યેયાનિ વા યોજનાનિ । સંખ્યાતયોજનમધ્યર્થીનિ, અસંખ્યાતયોજનમધ્યવર્તીનિ વસ્તૂનિ જાનાતિ પશ્યતિ । અનયોરયમેવ ભેદોઽસ્તીતિ । તદેતદાનુગામિકમવધિજ્ઞાનમ્ । इत्यवधेः प्रथमो भेदः १॥ ॥ सू० ૧૦ ॥

મૂલમ્—સે કિં તં અણાણુગામિયં ઓહિનાણં ? । અણાણુગામિયં ઓહિનાણં સે જહાનામણ્ કેઙ્ પુરિસે ઇગં મહંતં જોઙ્ઘાણં કાઁ તસ્સેવ જોઙ્ઘાણસ્સ પરિપેરંતેહિં ૨ પરિઘોલેમાણે ૨ તમેવ જોઙ્ઘાણં જાણઙ્ પાસઙ્, અન્નત્થગણ્ ન જાણઙ્ ન પાસઙ્, એવામેવ અણાણુગામિયં ઓહિનાણં જત્થેવ સમુપ્પજ્ઙઙ્, તત્થેવ સંખેજ્ઞાણિ વા અસંખેજ્ઞાણિ વા સંવદ્ધાણિ વા અસંવદ્ધાણિ વા જોયણાઙ્ જાણઙ્ પાસઙ્, અન્નત્થગણ્ ણ જાણઙ્ ણ પાસઙ્, સે તં અણાણુગામિયં ઓહિનાણં ॥ સૂ૦ ૧૧ ॥

છાયા—અથ કિં તદનાનુગામિકમવધિજ્ઞાનમ્ ? અનાનુગામિકમવધિજ્ઞાનં સ યથાનામકઃ કશ્ચિત્પુરુષઃ એકં મહત્—જ્યોતિઃસ્થાનં કૃત્વા તસ્યૈવ જ્યોતિઃસ્થાનસ્ય પરિપર્યન્તેષુ ૨ પરિઘૂર્ણન્ ૨ તદેવ જ્યોતિઃસ્થાનં જાનાતિ, પશ્યતિ, અન્યત્ર ગતો ન જાનાતિ ન પશ્યતિ, એવમેવાઽનાનુગામિકમવધિજ્ઞાનં યત્રૈવ સમુપ્પદ્યત તત્રૈવ સંખ્યેયાનિ વા અસંખ્યેયાનિ વા સંવદ્ધાણિ વાઽસંવદ્ધાણિ વા યોજનાનિ જાનાતિ પશ્યતિ, અન્યત્ર ગતો ન જાનાતિ ન પશ્યતિ, તદેતદનાનુગામિકમવધિજ્ઞાનમ્ ॥ સૂ૦ ૧૧ ॥

ટીકા—શિષ્યઃ પૃચ્છતિ—‘ સે કિં તં અણાણુગામિયં ઓહિનાણં ’ ઇતિ । અથ કિં તદનાનુગામિકમવધિજ્ઞાનમ્ ? । ઉત્તરમાહ—‘ અણાણુગામિયં ઓહિનાણં ’ ઇત્યાદિ । અનાનુગામિકમવધિજ્ઞાનં કથયામીતિ શેષઃ । સ યથાનામકઃ—વિવક્ષિતઃ, કશ્ચિત્ પર્યન્ત જાનતા દેશ્વતા હૈ । યહી અંતગત ઔર મધ્યગત અવધિજ્ઞાનમેં ભિન્નતા હૈ ॥સૂ૦ ૧૦ ॥

‘ સે કિં તં અણાણુગામિયં ’ ઇત્યાદિ ।

શિષ્ય પૂછતા હૈ—અનાનુગામિક અવધિજ્ઞાન કા કયા સ્વરૂપ હૈ ? આચાર્ય કહતે હૈ—અનાનુગામિક અવધિજ્ઞાન ઇસ પ્રકાર હૈ—જૈસે કોઈ પુરુષ

અસંખ્યાત યોજન સુધી જાણે તથા દેખે છે. અંતગત અને મધ્યગત અવધિજ્ઞાનમાં આજ ભિન્નતા છે ॥ સૂ ૧૦ ॥

“ સે કિ તં અણાણુગામિયં ” ઇત્યાદિ.

શિષ્ય પૂછે છે—અનાનુગામિક અવધિજ્ઞાનનું કેવું સ્વરૂપ હોય છે ?

આચાર્ય જવાબ આપે છે—અનાનુગામિક અવધિજ્ઞાન આ પ્રકારનું છે—જેવી

પુરુષઃ, એકં મહત્=વિશાલં, જ્યોતિઃસ્થાનં=અગ્નિસ્થાનં કૃત્વા, તસ્યૈવ જ્યોતિઃ-સ્થાનસ્ય 'પરિપેરંતેર્હિ' પરિપર્યન્તેષુર=પરિ-સર્વતઃ પર્યન્તેષુ, ન ત્વેકદિગ્ગતેષુ, 'પરિઘોલેમાણે ૨' પરિઘૂર્ણન્ ૨=પરિભ્રમન્ ૨, તદેવ જ્યોતિઃ સ્થાનં=જ્યોતિઃ પ્રકાશિતં ક્ષેત્રં પશ્યતિ, અન્યત્ર ગતો ન પશ્યતિ । તથૈવ-અનાનુગામિકમવધિજ્ઞાનં યત્રૈવ ક્ષેત્રે વ્યવસ્થિતસ્યાઽઽત્મનઃ સમુત્પદ્યતે, તત્રૈવ વ્યવસ્થિતઃ સન્ સંખ્યેયાનિ વા અસંખ્યેયાનિ વા યોજનાનિ, સંબદ્ધાનિ વા અસંબદ્ધાનિ વા જાનાતિ પશ્યતિ, અન્યત્ર ગતો ન પશ્યતિ, અવધિજ્ઞાનાવરણક્ષયોપશમસ્ય ક્ષેત્રસંબન્ધસાપેક્ષત્વાત્ । તદેતત્ અનાનુગામિકમવધિજ્ઞાનમ્ । ઇતિ દ્વિતીયો ભેદઃ ॥ સૂ૦૧૧ ॥

એક બડા ભારી અગ્નિ કા સ્થાન બનાવે ઓર ઉસમેં સ્વૂબ અગ્નિ જલાવે તો જૈસે અગ્નિકા પ્રકાશ જબ ઉસ અગ્નિસ્થાનસે બાહર ઇધર ઉધર નિકલ કર ફૈલે, ઓર ફૈલેહુએ ઉસ પ્રકાશમેં ઇધર ઉધર પરિભ્રમણ કરતા હુઆ વહ પુરુષ વહાં કે ચારોં તરફ કે પદાર્થોં કો દેખતા હૈ ઓર વહાં સે હટ જાને પર અન્યત્ર પહુંચ કર વહ નહીં દેખતા હૈ, ઉસી તરહ અનાનુગામિક અવધિજ્ઞાન જિસ ક્ષેત્રમેં સ્થિત જીવાત્મા કો ઉત્પન્ન હોતા હૈ વહ જીવાત્મા વહીં રહ કર સંબદ્ધ અથવા અસંબદ્ધ સંખ્યાત અથવા અસંખ્યાત યોજન કે ખીતર રહે હુએ પદાર્થોં કો જાનતા ઓર દેખતા હૈ । વહાં સે હટતે હી ફિર વહ દૂસરી જગહ જાકર ઉન પદાર્થોં કો ન દેખતા હૈ ઓર ન જાનતા હૈ । ઇસ અવધિજ્ઞાનમેં અવધિજ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા ક્ષયોપશમ ક્ષેત્રસાપેક્ષ હોતા હૈ । જસ પ્રકાર યહ અનાનુગામિક અવધિજ્ઞાન કા સ્વરૂપ હૈ ॥સૂ૦૧૧॥

રીતે કોઈ પુરુષ એક ઘણું મોટું અગ્નિનું સ્થાન બનાવે અને તેમાં ખૂબ અગ્નિ સળગાવે તો જેમ અગ્નિનો પ્રકાશ બ્યારે તે અગ્નિસ્થાનની બહાર આમ તેમ ફેલાય છે અને તે ફેલાયેલા પ્રકાશમાં આમ તેમ પરિભ્રમણ કરતો તે પુરુષ ત્યાંના ચારે તરફના પદાર્થોને જોવે છે, અને ત્યાંથી ખસીને બીજે જવાથી તે તેમને જોતો નથી. એજ પ્રમાણે અનાનુગામિક અવધિજ્ઞાન જે ક્ષેત્રમાં રહેલા જીવને ઉત્પન્ન થાય છે તે જીવાત્મા ત્યાંજ રહીને સંબંધ અસંબંધ, સંખ્યાત કે અસંખ્યાત યોજનની અંદર રહેલા પદાર્થોને જાણે અને દેખે છે. ત્યાંથી ખસીને વળી બીજી જગ્યાએ જવાથી તે તે પદાર્થોને જોતો નથી અને જાણતો પણ નથી. આ અવધિજ્ઞાનમાં અવધિજ્ઞાનાવરણીય કર્મનો ક્ષયોપશમ ક્ષેત્ર-સાપેક્ષ હોય છે, આ પ્રકારનું આ અનાનુગામિક અવધિજ્ઞાનનું સ્વરૂપ છે ॥ સૂ ૧૧ ॥

મૂલમ્—સે કિં તં વદ્ધમાણયં ઓહિનાણં ? । વદ્ધમાણયં ઓહિનાણં પસત્થેસુ અજ્ઞવસાયદ્વાણેસુ વદ્ધમાણસ્સ, વદ્ધમાણચરિત્તસ્સ, વિસુજ્ઞમાણસ્સ વિસુજ્ઞમાણચરિત્તસ્સ સઠ્ઠવંઓ સમંતા ઓહીવદ્ધઈ ॥

છાયા—અથ કિં તદ્ વ માનકમવધિજ્ઞાનમ્ ? વર્ધમાનકમવધિજ્ઞાનં પ્રશસ્તેષુ અધ્યવસાયસ્થાનેષુ વર્તમાનસ્ય વર્ધમાનચારિત્રસ્ય વિશુદ્ધ્યમાનસ્ય વિશુદ્ધ્યમાનચારિત્રસ્ય સર્વતઃ સમન્તાદવધિર્વર્ધતે ॥

ટીકા—‘ સે કિં તં વદ્ધમાણયં ’ ઇત્યાદિ । શિષ્યઃ પૃચ્છતિ—અથ કિં તદ્ વર્ધમાનકમવધિજ્ઞાનમ્ ? = પૂર્વનિર્દિષ્ટસ્ય વર્ધમાનાવધિજ્ઞાનસ્ય કિં સ્વરૂપમિત્યર્થઃ ? । ઉત્તરમાહ—‘ વદ્ધમાણયં ’ ઇત્યાદિ । વર્ધમાનકમિત્યત્ર સ્વાર્થે ‘ક’ પ્રત્યયઃ । વર્ધમાનકમવધિજ્ઞાનં કથયામીત્યર્થઃ । ‘પ્રશસ્તેષુ અધ્યવસાયસ્થાનેષુ વર્તમાનસ્ય’ = પ્રશસ્તાધ્યવસાયવત્ ઇત્યર્થઃ, સર્વતઃ સમન્તાદવધિર્વર્ધતે, ઇત્યન્વયઃ । વર્ધમાનમવધિજ્ઞાનમવિરતસમ્યગ્દ-

‘ સે કિં તં વદ્ધમાણયં ’ ઇત્યાદિ ।

શિષ્ય પૂછતા હૈ—વર્ધમાનક અવધિજ્ઞાન કા કયા સ્વરૂપ હૈ ?  
ઉત્તર—‘ વદ્ધમાણયં ઓહિનાણં ’ ઇત્યાદિ । વર્ધમાન અવધિજ્ઞાન અવધિજ્ઞાનાવરણીયકર્મરૂપ મલ કે અપગમ સે ઉત્તરોત્તર શુદ્ધિકા અનુભવ કરને વાલેએસે પ્રશસ્ત અધ્યવસાયસંપન્ન ચતુર્થગુણસ્થાનવર્તી અવિરત સમ્યગ્દષ્ટિજીવ કે હોતા હૈ । તથા દેશવિરત અથવા સર્વવિરત—પંચમગુણસ્થાનવર્તી, અથવા ષષ્ઠગુણસ્થાનવર્તી જીવ કે હોતા હૈ । ચતુર્થગુણસ્થાનવર્તી પંચમગુણસ્થાનવર્તી એવં ષષ્ઠગુણસ્થાનવર્તી જીવ કે યહ વર્ધમાન અવધિજ્ઞાન ચારોં દિશાઓંમેં પ્રવર્ધમાન હોતા રહતા હૈ । યહાં અધ્યવસાયસ્થાન

‘ સે કિં તં વદ્ધમાણયં ’ ઇત્યાદિ.

શિષ્ય પૂછે છે—વર્ધમાનક અવધિજ્ઞાનનું કેવું સ્વરૂપ છે ?

ઉત્તર—‘ વદ્ધમાણયં ઓહિનાણં ’ ઇત્યાદિ.

વર્ધમાન અવધિજ્ઞાન અવધિજ્ઞાનાવરણ કર્મ રૂપ મળના અપગમથી ઉત્તરોત્તર શુદ્ધિનો અનુભવ કરનાર એવાં પ્રશસ્ત અધ્યવસાય સંપન્ન ચતુર્થગુણસ્થાનવર્તી અવિરત સમ્યગ્દષ્ટિ જીવને થાય છે. તથા દેશવિરત અથવા સર્વવિરત—પંચમગુણસ્થાનવર્તી અથવા ષષ્ઠગુણસ્થાનવર્તી જીવને થાય છે. ચતુર્થગુણસ્થાનવર્તી, અને ષષ્ઠગુણસ્થાનવર્તી જીવને આ વર્ધમાન અવધિજ્ઞાન ચારે દિશાઓમાં પ્રવર્ધમાન થતું રહે છે. આહીં અધ્યવસાયસ્થાન—શબ્દમાંથી ઓછ

ષ્ટેરપિ ભવતીતિ ભાવઃ । ઇહાધ્યવસાયસ્થાન શબ્દેન ઓઘતો દ્રવ્યલેશ્યોપરજ્ઞિતં ચિત્ત-  
મુચ્યતે, તસ્ય ચાનવસ્થિતત્વાત્ તત્તદ્રવ્યસાચિવ્યે સતિ વહુભેદત્વાદ્ વહુત્વમ્ । અત્ર  
પ્રશસ્તેભિતિવિશેષણેન અપ્રશસ્તકૃષ્ણનીલકાપોતદ્રવ્યલેશ્યોપરજ્ઞિતં ચિત્તં નાવધિજ્ઞાન  
યોગ્યમિતિ સૂચિતમ્ । ‘વર્ધમાનચારિત્રસ્ય’ વર્ધનશીલ ચારિત્રસંપન્નસ્યેત્યર્થઃ । ઇહાપિ  
‘સર્વતઃ સમન્તાદવધિર્વર્ધતે’ इत्यन्वयः । देशविरतस्य सर्वविरतस्य च वर्धमानमवधिज्ञानं  
भवतीति भावः । अवधिज्ञानं विशुद्धिजन्यमित्याह-‘विसुज्झमाणस्स’ इत्यादि । ‘विशु-  
ध्यमानस्य’ = अवधिज्ञानावरणीयकर्ममलापगमादुत्તरोत्तरां शुद्धिमनुभवतः, अविरत-  
सम्यग्दृष्टेरित्यर्थः । ‘विशुध्य मानचारित्रस्य’ परिणामविशुદ્ધ્યા નિર્મલચારિત્ર-  
વતઃ, देशविरतस्य सर्वविरतस्य चेति शेषः, सर्वतઃ સમન્તાદવધિર્વર્ધતે । इदमुक्तं

શબ્દ સે ઓઘ (સામાન્ય) કી અપેક્ષા કરકે દ્રવ્યલેશ્યા સે અનુરંજિત  
ચિત્ત લિયા ગયા હૈ । યહ ચિત્ત અનવસ્થિત હોને કે કારણ ડસ ડસ  
દ્રવ્ય કે સંબંધ સે બહુત ભેદ વાલા માના ગયા હૈ । યહાં પ્રશસ્તપદરૂપ  
વિશેષણ સે સૂત્રકાર યહ વાત વતલાતે હૈં કિ અપ્રશસ્ત જો કૃષ્ણનીલ  
અવં કાપોત લેશ્યા સે અનુરંજિતચિત્ત અવધિજ્ઞાન કે યોગ્ય નહીં હોતા  
હૈ । “વિસુજ્ઞમાણચારિત્તસ્સ” યહ પદ પંચમગુણસ્થાનવર્તી અવં  
ષષ્ઠગુણસ્થાનવર્તી જીવ કા સૂચક હૈ । ઇસકા અર્થ “નિર્મલચારિત્ર  
શાલી જીવ ” એસા હોતા હૈ । “સવ્વઓ સમંતા ” યહ દોનોં પદ અવિ-  
રત સમ્યગ્દૃષ્ટિ કે તથા દેશવિરત અવં સર્વવિરત કે સાથ સંબંધ રાખતેહૈં ।  
તાત્પર્ય ઇસ સૂત્રકા ઇસ પ્રકાર હૈ-પરિણામોં કી વિશુદ્ધિ કે દ્વારા

(સામાન્ય) ની અપેક્ષા કરીને દ્રવ્યલેશ્યાથી અનુરંજિત ચિત્ત લેવાયેલ છે. આ  
ચિત્ત અનવસ્થિત હોવાને કારણે તે તે દ્રવ્યનાં સંબંધથી ઘણું જ લેદવાળું  
મનાયું છે. અહીં પ્રશસ્ત-પદરૂપ વિશેષણથી સૂત્રકાર એ વાત બતાવે છે કે અપ્ર-  
શસ્ત જે કૃષ્ણ, નીલ અને કાપોત લેશ્યાથી અનુરંજિત ચિત્ત અવધિજ્ઞાનને  
યોગ્ય હોતું નથી.

“વિસુજ્ઞમાણચરિત્તસ્સ” આ પદ પંચમગુણસ્થાનવર્તી અને ષષ્ઠગુણસ્થા-  
નવર્તી બંધનું સૂચક છે. તેનો અર્થ “નિર્મળ ચારિત્રવાળો બધ ” એવો  
થાય છે. “સવ્વઓ સમંતા” આ બંને પદ અવિરત સમ્યગ્દૃષ્ટિની તથા દેશવિરત  
અને સર્વવિરતની સાથે સંબંધ રાખે છે. આ સૂત્રનું તાત્પર્ય આ પ્રમાણે છે-  
પરિણામોની વિશુદ્ધિ વડે અવધિજ્ઞાની બંધનું જે અવધિજ્ઞાન ચારે દિશાઓમાં

भवति-परिणामविशुद्ध्याऽवधिज्ञानिनो यद् वधिज्ञानं चक्षुषु दिक्षु प्रवर्धमानं भवति, तदवधिज्ञानं वर्धमानमिति ॥

अथावधेर्जघन्यः क्षेत्रमाह—

मूलम्—जावइया तिसमया—हारगस्स सुहुमस्स पणगजीवस्स ।

ओगाहणा जहन्ना, ओही—खित्तं जहन्नं तु ॥ १ ॥

छाया—यावती तिसमया,—ऽऽहारकस्य सूक्ष्मस्य पनकजीवस्य ।

अवगाहना जघन्या, अवधिक्षेत्रं जघन्यं तु ॥ १ ॥

टीका—‘जावइया’ इत्यादि । तिसमयाऽऽहारकस्य=त्रयः समया यस्यासौ तिसमयः, स चासौ अविग्रहगत्या समुत्पन्नत्वादाहारकश्च=तिसमयाहारकः, तस्य-उत्पत्तिसमयादारभ्य तृतीयसमये वर्तमानस्येत्यर्थः, सूक्ष्मस्य-सूक्ष्मनामकर्मादयात् सूक्ष्मस्तस्य, पनकजीवस्य=निगोदजीवस्य वनस्पति विशेषस्य, यावती=यत्प्रमाणा, जघन्या=सर्वतोऽल्पा, अवगाहना=अवगाहन्ते यस्यां प्राणिनः साऽवगाहना, शरीर-मानं भवति, जघन्यं=सर्वतोऽल्पं तु अवधिक्षेत्रम्—अवधिज्ञानस्य क्षेत्रं तावदेव भवति । इह ‘तु’-शब्द एवार्थः, इति गाथार्थः ।

अवधिज्ञानी जीव के जो अवधिज्ञान चारों दिशाओंमें प्रवर्धमान होता रहता है वह वर्धमान अवधिज्ञान है ।

अब सूत्रकार अवधिज्ञान का जघन्य क्षेत्र बतलाते हैं—

‘जावइया’ इत्यादि गाथा । उत्पत्ति समय से लेकर तृतीय समयमें वर्तमान ऐसे सूक्ष्म एकेन्द्रिय निगोदिया जीव की जितनी जघन्य अव-गाहना होती है उतना ही जघन्य क्षेत्र अवधिज्ञान का होता है ।

भावार्थ—अपने उत्पत्ति समय से लेकर तृतीय समयमें आहारक बने हुए सूक्ष्म एकेन्द्रिय निगोदिया पनक जीव के शरीर का जितना प्रमाण होता है उतना ही अवधिज्ञान के जघन्य क्षेत्र का प्रमाण होता है ।

પ્રવર્ધમાન થતું રહે છે તે વર્ધમાન અવધિજ્ઞાન છે. હવે સૂત્રકાર અવધિજ્ઞાનનું જઘન્ય ક્ષેત્ર બતાવે છે—

“જાવइया” ઇત્યાદિ ગાથા—ઉત્પત્તિ કાળથી શરૂ કરીને તૃતીય સમયમાં વર્તમાન એવાં સૂક્ષ્મ એકેન્દ્રિય ઊવની જેટલી જઘન્ય અવગાહના હોય છે એટલું જઘન્ય ક્ષેત્ર અવધિજ્ઞાનનું હોય છે.

ભાવાર્થ:—પોતાના ઉત્પત્તિ કાળથી લઈને તૃતીય સમયમાં આહારક બનેલા સૂક્ષ્મ એકેન્દ્રિય નિગોદિયા પનક ઊવના શરીરનું જેટલું પ્રમાણ હોય છે એટલું જ અવધિજ્ઞાનના જઘન્ય ક્ષેત્રનું પ્રમાણ હોય છે.

અર્થઃ—યઃ કિલ યોજનસહસ્રાયામમાનો મત્સ્યો મૃત્વા સ્વશરીરૈકદેશ સંલગ્નપનકે સમુત્પદ્યમાનઃ પ્રથમસમયે સ્વાત્મપ્રદેશાનામાયામં સંહૃત્ય સ્વાત્મપ્રદેશ વિષ્કમ્ભતુલ્યં કરોતિ, તેનાયામતો વિષ્કમ્ભતશ્ચ તુલ્યપ્રમાણઃ પ્રતરઃ સંપદ્યતે । તત્ર—આયામો—દૈર્ઘ્યમ્, વિષ્કમ્ભો=વિસ્તારઃ । વાહલ્યતશ્ચાઙ્ગુલાસંખ્યેયભાગપ્રમાણો ભવતિ । તેન સ્થૂલત્વં સંક્ષિપ્ય તનુત્વમાપાદિતમ્ ।

‘એવંભૂતં પ્રતરં પ્રથમસમયે કૃત્વા દ્વિતીયસમયે તમેવ પ્રતરં સૂચીં કરોતિ । તત્ર સ્વાત્મપ્રદેશવિષ્કમ્ભં સંક્ષિપ્યાંગુલાસંખ્યેયભાગપ્રમાણં કરોતિ । તેનાઽઽયામતઃ સ્વાત્મપ્રદેશવિષ્કમ્ભપ્રમાણા, વિષ્કમ્ભતસ્તુ—અંગુલાસંખ્યેયભાગપ્રમાણા સૂચી ભવતિ ।

इसका खुलाशा अर्थ इस प्रकार है—एक हजार योजन की अवगाहनावाला महामत्स्य मरकर अपने शरीरके एक प्रदेशमें लगे हुए पनक (शेवाल)में उत्पन्न होता हुआ प्रथम समयमें अपने आत्मप्रदेशों के आयाम को संकुचित करता है, और संकुचित करके उस आयाम को वह आत्मप्रदेशों के विष्कंभके बराबर बनाता है। इस प्रकार यह प्रथम समयमें ही आयाम और विष्कंभ की अपेक्षा तुल्यप्रमाणवाला बन जाता है। इसका नाम ही प्रतर है। आयाम शब्दका अर्थ दीर्घता (लंबाई) और विष्कंभ का अर्थ विस्तार (चौड़ाई) है। इस समय यह अंगुल से असंख्यातवे भागप्रमाण अवगाहना वाला होता है, क्योंकि इसमें स्थूलताका संकोच होकर तनुता आजाती है। अर्थात् पहिले की स्थूलता संकुचित होकर तनुतारूपमें परिणत हो जाती है। इस प्रकार प्रथम समयमें प्रतर करके फिर वह द्वितीय समयमें उस प्रतर को सूची रूप करता है। इस सूची अवस्थामें वह जीव अपने आत्मा के विष्कम्भ

તેનો ખુલાસાવાર અર્થ આ પ્રમાણે છે—એક હજાર યોજનની અવગાહના વાળો મહામત્સ્ય મરીને પોતાનાં શરીરના એક દેશમાં લાગેલા પનકમાં ઉત્પન્ન થતાં પડેલા સમયમાં પોતાના આત્મપ્રદેશોના આયામને સંકુચિત કરે છે. અને સંકુચિત કરીને તે આયામને તે આત્મપ્રદેશોના વિષ્કંભની બરાબર છે. આ રીતે આ પ્રથમ સમયમાં જ આયામ અને વિષ્કંભની અપેક્ષાએ તુલ્યપ્રમાણવાળો બની જાય છે. આનું નામ જ પ્રતર છે. આયામ શબ્દનો અર્થ દીર્ઘતા ( લંબાઈ ) અને વિષ્કંભનો અર્થ પહોળાઈ છે. આ સમયે તે અંગુલના અસંખ્યાતમાં ભાગ પ્રમાણ અવગાહનાવાળો હોય છે. કારણ કે તેમાં સ્થૂળતાનો સંકુચન થઈને તનુતા આવી જાય છે. એટલે કે પડેલાની સ્થૂળતા સંકુચિત થઈને તનુતા રૂપમાં પરિણમે છે. આ પ્રમાણે પડેલા સમયમાં પ્રતર કરીને ફરીથી તે બીજા સમયમાં તે પ્રતરને સૂચીરૂપ કરે છે. આ સૂચી અવ-



વાહલ્યતશ્ચ પૂર્વવદંગુલાઽસંખ્યેયભાગપ્રમાણૈવ । દ્વિતીયસમયે એવંભૂતાં સૂચીં કૃત્વા તૃતીયસમયે તત્ર પનકત્વેન સમુત્પદ્યતે । પનકજીવસ્યોત્પત્તિસમયાદારમ્ય તૃતીયસમયે શરીરમાનં યાવદ્ ભવતિ તાવત્પરિમિતં ક્ષેત્રં જઘન્યમવધિજ્ઞાનસ્ય ભવતી’-તિ વૃદ્ધાઃ । ઉક્તશ્ચ—

યોજનસહસ્રમાનો, મત્સ્યો મૃત્વા સ્વકાયદેશે યઃ ।

ઉત્પદ્યતે હિ સૂક્ષ્મઃ, પનકત્વેનેહ સ ગ્રાહ્યઃ ॥ ૧ ॥

કો સંક્ષિપ્ત કર કે ઉસે અંગુલ કે અસંખ્યાતવે ભાગપ્રમાણ બના લેતા હૈ । આયામ કી અપેક્ષા અપને આત્મા કે પ્રદેશોં કે વિષ્કંભ પ્રમાણ, તથા વિષ્કંભ કી અપેક્ષા અંગુલ કે અસંખ્યાતવે ભાગ પ્રમાણ યહ સૂચી હોતી હૈ । તથા બાહલ્ય કી અપેક્ષા પહિલે કી તરહ યહ સૂચી અંગુલ કે અસંખ્યાતવે ભાગ પ્રમાણ હી રહતી હૈ । ઇસ પ્રકાર દ્વિતીય સમયમેં એસી સૂચી કર કે વહ જીવ તૃતીય સમયમેં પનકરૂપ પર્યાય સે ઉત્પન્ન હોતા હૈ । ઇસ પનક જીવ કા ઉત્પત્તિ કે સમય સે લેકર તૃતીય સમયમેં શરીર કા પ્રમાણ જિતના હોતા હૈ ઉતના હી ક્ષેત્ર જઘન્યરૂપ સે અવધિજ્ઞાન કા હોતા । એસા વૃદ્ધસમ્પ્રદાય કહતે હૈ । કહા બી હૈ—

“યોજનસહસ્રમાનો, મત્સ્યો મૃત્વા સ્વકાયદેશે યઃ ।

ઉત્પદ્યતે હિ સૂક્ષ્મઃ, પનકત્વેનેહ સ ગ્રાહ્યઃ ॥ ૧ ॥

સ્થામાં તે જીવ પોતાના આત્માના વિષ્કંભને ટુંકાવીને તેને અંગુલના અસંખ્યાતમાં ભાગ પ્રમાણ બનાવી લે છે. આયામની અપેક્ષાએ પોતાના આત્માના પ્રદેશોનું વિષ્કંભ પ્રમાણ, તથા વિષ્કંભની અપેક્ષાએ અંગુલના અસંખ્યાતમાં ભાગ પ્રમાણ આ સૂચી થાય છે તથા બહુતાની અપેક્ષાએ પહેલાની જેમ આ સૂચી અંગુલના અસંખ્યાતમાં ભાગ પ્રમાણ જ રહે છે. આ રીતે બીજા સમયે એવી સૂચી કરીને તે જીવ ત્રીજા સમયમાં પનકરૂપ પર્યાયે ઉત્પન્ન થાય છે. આ પનક જીવના ઉત્પત્તિના સમયથી લઈને તૃતીય સમયમાં શરીરનું પ્રમાણ બેટલું હોય છે એટલું જ ક્ષેત્ર જઘન્યરૂપથી અવધિજ્ઞાનનું હોય છે. એવું વૃદ્ધલોકી કહે છે. કહ્યું પણ છે—

યોજનસહસ્રમાનો, મત્સ્યો મૃત્વા સ્વકાયદેશે યઃ ।

ઉત્પદ્યતે હિ સૂક્ષ્મઃ, પનકત્વેનેહ સ ગ્રાહ્યઃ ॥ ૧ ॥

संहृत्य चाद्यसमये, स हायामं करोति च प्रतरम् ।  
 संख्यातीतारव्याङ्गुल-विभागवाहल्यमानं तु ॥ २ ॥  
 स्वतनुपृथुत्वमात्रं, दीर्घत्वेनापि जीवसामर्थ्यात् ।  
 तमापि द्वितीयसमये, संहृत्य करोत्यसौ सूचिम् ॥३॥  
 संख्यातीताङ्गुल-वि, भागविष्कम्भमाननिर्दिष्टाम् ।  
 निजतनुपृथुत्वदीर्घां, तृतीयसमये तु संहृत्य ॥ ४ ॥  
 उत्पद्यते च पनकः, स्वदेहदेशे स सूक्ष्मपरिमाणः ।  
 समयत्रयेण तस्याऽवगाहना यावती भवति ॥ ५ ॥  
 तावज्जघन्यमवधे-रालम्बनवस्तुभाजनं क्षेत्रम् ।  
 इदमित्थमेव मुनिगण-सुसम्प्रदायात् समवसेयम् ॥६॥

संहृत्य चाद्यसमये, सहायामं करोति च प्रतरम् ।  
 संख्यातीताख्याङ्गुलविभागवाहल्यमानं तु ॥ २ ॥  
 स्वतनुपृथुत्वमानं, दीर्घत्वेनापि जीवसामर्थ्यात् ।  
 तमपि द्वितीयसमये, संहृत्य करोत्यसौ सूचिम् ॥३॥  
 संख्यातीताङ्गुलविभाग विष्कम्भ मान निर्दिष्टाम् ।  
 निजतनुपृथुत्वदीर्घां, तृतीयसमये तु संहृत्य ॥ ४ ॥  
 उत्पद्यते च पनकः स्वदेहदेशे स सूक्ष्मपरिमाणः ।  
 समयत्रयेण तस्यावगाहना यावती भवति ॥ ५ ॥  
 तावज्जघन्यमवधेरालम्बनवस्तुभाजनं क्षेत्रम् ।  
 इदमित्थमेव मुनिगण सुसंप्रदायात्समवसेयम् ॥६॥

इन श्लोकों का भाव ऊपर प्रमाण ही है ।

संहृत्य चाद्यसमये, स हायामं करोति च प्रतरम् ।  
 संख्यातीताख्याङ्गुलविभागवाहल्यमानं तु ॥ २ ॥  
 स्वतनुपृथुत्वमानं, दीर्घत्वेनापि जीवसामर्थ्यात् ।  
 तमपि द्वितीयसमये, संहृत्य करोत्यसौ सूचिम् ॥३॥  
 संख्यातीताङ्गुलविभागविष्कम्भमाननिर्दिष्टाम् ।  
 निजतनु पृथुत्व दीर्घां, तृतीयसमये तु संहृत्य ॥४॥  
 उत्पद्यते च पनकः, स्वदेहदेशे स सूक्ष्मपरिमाणः ।  
 समयत्रयेण तस्यावगाहना यावती भवति ॥ ५ ॥  
 तावज्जघन्यमवधेरालम्बनवस्तुभाजनं क्षेत्रम् ।  
 इदमित्थमेव मुनिगण, सुसंप्रदायात्समवसेयम् ॥६॥

ॐ श्लो० ३०॥ लाव ७५२ अभाषे ४ छे.



નનુ કિમિતિ મહાન્ મત્સ્યઃ કલ્પ્યતે ? (૧), કિં વા તૃતીયસમયે મત્સ્યજી-  
વિવસ્ય સ્વદેહદેશે સમુત્પત્તિઃ સ્વીક્રિયતે ? (૨), અપિ ચ ત્રિસમયાહારકત્વ વા  
તસ્ય કેન કારણેન કલ્પ્યતે ? (૩), કિં વા સૂક્ષ્મો ગૃહ્યતે ? (૪) કિં વા પનકં ઇત્યુ-  
ચ્યતે ? (૫), કિં વા જઘન્યાવગાહના ગૃહ્યતે ? (૬) ઇતિ ષટ્ પ્રશ્નાઃ । અત્રાચ્યતે—

યોજનસહસ્રપ્રમાણ એવ હિ મહામત્સ્યજીવસ્ત્રિભિઃ સમયૈરાત્મપ્રદેશાન્ સંક્ષિપ્ત-  
પ્રયત્નવિશેષતઃ સૂક્ષ્માવગાહનાવાન્ ભવતિ નાન્યઃ, ઇતિ મહામત્સ્યગ્રહણમ્ ।૧।

સ ચ મહામત્સ્યજીવઃ પ્રથમસમયે પ્રતરં કરોતિ, દ્વિતીયસમયે સૂચીં કરોતિ,  
તૃતીયસમયે પનકભવં પ્રાપ્નોતિ, અતસ્તૃતીયસમયે સમુત્પત્તિઃ સ્વીક્રિયતે ।૨।

શંકા—ઇતને લંબે ચૌડે મત્સ્ય કી કલ્પના ક્યોં કરતે હૈં ? ૧, ક્યોં  
ઉસકી અપને દેહ પ્રદેશમેં હી તૃતીય સમયમેં ઉત્પત્તિ માનતે હૈં ? ૨ ક્યોં  
ઉસકો ઉત્પત્તિસમય સે લેકર તૃતીય સમયમેં વર્તમાન કહતે હૈં ? ૩,  
ક્યોં ઉસકો સૂક્ષ્મરૂપ સે ગ્રહણ કરતે હૈં ? ૪, ક્યોં ઉસકો ‘પનક’ ઇસ  
સંજ્ઞા સે સંબોધિત કરતે હૈં ? ૫, ઓર ક્યોં યહાં ઉસકી જઘન્ય અવગાહના  
લેતે હૈં ? ૬ । ઇસ પ્રકાર યહાં યે છહ પ્રશ્ન હૈં । ઇનકા ઉત્તર ઇસ પ્રકાર હૈ—

એક હજાર યોજન કી અવગાહના વાલા મહામત્સ્ય હી ત્રીન સમયોં  
મેં આત્મપ્રદેશોં કો સંકુચિત કરતા હુઆ પ્રયત્નવિશેષ સે સૂક્ષ્મ અવગા-  
હના વાલા હોતા હૈ, અન્યજીવ નહીં, ઇસલિયે ઉસી કા ગ્રહણ કિયા હૈ ।૧।

યહ મહામત્સ્ય પ્રથમ સમયમેં પ્રતર કરતા હૈ । દ્વિતીય સમયમેં સૂચી  
કરતા હૈ । તૃતીય સમયમેં પનક કી પર્યાય સે ઉત્પન્ન હોતા હૈ । ઇસ-  
લિયે તૃતીય સમયમેં હી પનકરૂપ પર્યાય કી ઉત્પત્તિ માની ગઈ હૈ ।૨।

શંકા—(૧) આટલા લાંબા-પહોળા મત્સ્યની કલ્પના શા માટે કરે છે ?  
(૨) શા માટે તેની પોતાના દેહ પ્રદેશમાં જ ત્રીજા સમયમાં ઉત્પત્તિ માને છે ?  
(૩) શા માટે તેને ઉત્પત્તિ સમયથી લઈને તૃતીય સમયમાં વર્તમાન કહો છે ?  
(૪) શા માટે તેને સૂક્ષ્મરૂપે ગ્રહણ કરે છે ? (૫) શા માટે તેને ‘પનક’ આ  
સંજ્ઞાથી સંબોધિત કરે છે ? (૬) અને શા માટે તેની જઘન્ય અવગાહના લે  
છે ? આ પ્રમાણે અહીં એ છ પ્રશ્નો છે. તેનો ઉત્તર આ પ્રમાણે છે—

(૧) એક હજાર યોજનની અવગાહનાવાળો મહામત્સ્ય જ ત્રણ સમયોમાં  
આત્મપ્રદેશોને સંકુચિત કરતો પ્રયત્નવિશેષથી સૂક્ષ્મ અવગાહનાવાળો થાય છે,  
બીજા છવ નહીં. તેથી જ તેને ગ્રહણ કરેલા છે.

(૨) આ મહા મત્સ્ય પ્રથમ સમયમાં ‘પ્રતર’ કરે છે. બીજા સમયમાં  
સૂચી કરે છે. ત્રીજા સમયમાં પનકની પર્યાયથી ઉત્પન્ન થાય છે, તેથી તૃતીય  
સમયમાં જ પનકરૂપ પર્યાયની ઉત્પત્તિ માનેલી છે.

સ પનકજીવ ઉત્પત્તિકાલાદારમ્ય પ્રથમે દ્વિતીયે ચ સમયેઽતિસૂક્ષ્મો ભવતિ, ચતુર્થાદિષુ સમયેષુ ચાતિસ્થૂલો ભવતિ, તૃતીયસમય એવ જઘન્યાવધિક્ષેત્રયોગ્યાવગાહનાવાન્ ભવત્યતસ્ત્રિસમયાહારકત્વં કલ્પ્યતે ।૩।

અવિગ્રહગત્યા સ્વશરીરૈકદેશ એવ સમુત્પન્નત્વેન સ પનકજીવઃ સૂક્ષ્મો ભવત્યતઃ સૂક્ષ્મગ્રહણમ્ । અન્યથા—યદિ સ્વશરીરાદ્દૂરે ગત્વાઽન્યત્ર પનકત્વેન સમુત્પદ્યેત, વિગ્રહગત્યા ચ ગચ્છેત્ તદા જીવપ્રદેશા વિસ્તરત્વં પ્રાપ્નુયુરિત્યવગાહના સ્થૂલતરા સ્યાત્ ।૪।

પનક જીવ ઉત્પત્તિસમય સે લેકર પ્રથમ ઓર દ્વિતીય સમયમેં અતિસૂક્ષ્મ રહતા હૈ, ચતુર્થ આદિ સમયોમેં અતિસ્થૂલ હો જાતા હૈ, હસલિયે ઇન સમયોંકી ડસ કી અવગાહના ગ્રહણ ન કર કે જો તૃતીય સમય કી અવગાહના ગ્રહણ કી ગઈ હૈ ડસકા કારણ કેવલ યહી હૈ કિ યહ ઇસ તૃતીય સમયમેં હી જઘન્ય અવધિજ્ઞાન કે ક્ષેત્રયોગ્ય અવગાહના વાલા હોતા હૈ । હસલિયે “ ઉત્પત્તિ કે સમય સે લેકર તૃતીય સમયમે વર્તમાન ” એસા કહા હૈ ।૩।

અવિગ્રહગતિ સે અપને શરીર કે એકદેશમેં હી ઉત્પન્ન હોને કે કારણ વહ પનક જીવ સૂક્ષ્મ હોતા હૈ । ઇસ વાત કો વતલારને કે લિયે હી સૂક્ષ્મપદ રખા ગયા હૈ । યદિ વહ અપને શરીર સે કિસી ઓર દૂસરી જગહ દૂર જાકર પનક કી પર્યાય સે ઉત્પન્ન હોતા ઓર વિગ્રહગતિ સે જાતા તો જીવકે પ્રદેશ અવશ્ય વિસ્તાર કો પ્રાપ્ત કરતે, ઇસ તરહ ડસકી અવગાહના સ્થૂલતર હો જાતી ।૪।

(૩) પનક જીવ ઉત્પત્તિસમયથી લઈને પહેલા અને બીજા સમયમાં અતિસૂક્ષ્મ રહે છે. ચતુર્થ આદિ સમયમાં અતિસ્થૂળ થઈ જાય છે. તેથી તે સમયોની તેની અવગાહના ગ્રહણ ન કરીને જે ત્રીજા સમયની અવગાહના ગ્રહણ કરેલ છે તેનું કારણ ક્રૂરતા એટલું જ છે કે તે આ તૃતીય સમયમાં જ જઘન્ય અવધિજ્ઞાનના ક્ષેત્રને યોગ્ય અવગાહનાવાળો થાય છે. તેથી “ઉત્પત્તિના સમયથી શરૂ કરીને તૃતીય સમયમાં વર્તમાન” એવું કહેલ છે.

(૪) અવિગ્રહગતિથી પોતાનાં શરીરના એક દેશમાં જ ઉત્પન્ન થવાને કારણે તે પનક જીવ સૂક્ષ્મ હોય છે. આ વાતને બતવવા માટે જ સૂક્ષ્મ પદ રાખવામાં આવેલ છે. જે તે પોતાના શરીરથી કોઈ બીજી જ જગ્યાએ દૂર જઈને પનકની પર્યાયથી ઉત્પન્ન થતો અને વિગ્રહ ગતિથી જતો તો જીવના પ્રદેશ જરૂર વિસ્તારને પામત, આ રીતે તેની અવગાહના સ્થૂળતર થઈ જાત.

પનકજીવ એવ પૃથિવ્યાઘન્યજીવાપેક્ષયા સૂક્ષ્મઃ :સૂક્ષ્મતરઃ સુક્ષ્મતમશ્ચ ભવતી-  
ત્યતઃ પનકગ્રહણમ્ ।૫।

પનકજીવ એવ ચ સર્વજઘન્યદેહો ભવતીતિ જઘન્યાવગાહનાગ્રહણમ્ ।૬।

કેચિત્તુ--‘ ત્રિસમયાહારકસ્ય ’ ઇતિ-આયામસંહરણપ્રતરકરણરૂપઃ પ્રથમઃ  
સમયઃ ૧, પ્રતરસંહરણસૂચીકરણરૂપો દ્વિતીયઃ સમયઃ ૨, તૃતીયસ્તુ સૂચીસંહા-  
રેણ પનકત્વેનોત્પત્તિસમયઃ ૩, તતશ્ચ ત્રયઃ સમયા યસ્યાસૌ ત્રિસમયઃ, વિગ્રહગ-  
ત્યભાવાદાહારકશ્ચ એતેષુ ત્રિષ્વપિ સમયેષ્વાહારકસ્તસ્માદુત્પત્તિસમય એવ ત્રિસ-

इस पनक संज्ञा से संबोधन करने का प्रयोजन यह है कि अन्य  
पृथिवी आदि जीवों की अपेक्षा पनक जीव ही सूक्ष्म, सूक्ष्मतर और  
सूक्ष्मतम होता है । ५।

इसकी जघन्य अवगाहना का ग्रहण इसलिये किया गया है कि पनक  
जीव ही सर्व जीवों की अपेक्षा जघन्य शरीर वाला होता है । ६।

કોઈ ૨ આચાર્ય એસા કહતે હૈં કિ પનક જીવ કી પર્યાયમેં ઉત્પન્ન  
હોને વાલા વહ મહામત્સ્ય કા જીવ પ્રથમ સમયમેં અપને શરીર કે  
આયામ કા સંહરણ કરતા હૈં ઓર યહ આયામ કા સંહરણ હી પ્રતર કા  
કરના હૈં । દ્વિતીય સમયમેં પ્રતર કા સંહરણ ઓર સૂચી કા કરના હોતા  
હૈં । તૃતીય સમયમેં સૂચી કે સંહાર સે ઓર પનકરૂપ પર્યાય સે ઉત્પન્ન  
હોતા હૈં । ઇસ તરહ ત્રીન સમય લગતે હૈં । તથા વિગ્રહગતિ કે અભાવ સે  
યહ આહારક હો જાતા હૈં । ઇસ પ્રકાર ત્રીનોં સમયોમેં યહ આહારક  
હોતા હૈં । ઇસલિયે ઉત્પત્તિસમયમેં હી ત્રીન સમય વાલા વહ આહારક

(૫) આ પનકસંજ્ઞાથી સંબોધન કરવાનું પ્રયોજન એ છે કે બીજા પૃથિવી  
આદિ જીવોની અપેક્ષાએ પનક જીવજ સૂક્ષ્મ, સૂક્ષ્મતર અને સૂક્ષ્મતમ હોય છે.

(૬) તેની જઘન્ય અવગાહના એ માટે ગ્રહણ કરવામાં આવેલ છે કે  
પનક જીવ જ સર્વજીવોની અપેક્ષાએ જઘન્ય શરીરવાળો હોય છે.

કોઈ કોઈ આચાર્ય એવું કહે છે કે પનક જીવની પર્યાયમાં ઉત્પન્ન થનારા  
તે મહામત્સ્યનો જીવ પ્રથમ સમયમાં પોતાના શરીરના આયામનું સંહરણ  
કરે છે અને આ આયામનું સંહરણ જ પ્રતરનું કરવું છે. બીજા સમયમાં  
પ્રતરનું સંહરણ અને સૂચીનું કરવું થાય છે. ત્રીજા સમયમાં સૂચીનું સંહરણ  
કરીને પનકરૂપ પર્યાયથી ઉત્પન્ન થાય છે. આ રીતે ત્રણ સમય લાગે છે. તથા  
વિગ્રહગતિના અભાવથી તે આહારક થઈ જાય છે. આ રીતે ત્રણ સમયોમાં  
તે આહારક હોય છે. તેથી ઉત્પત્તિ સમયે જ ત્રણ સમયવાળો તે આહારક

મયાહારકઃ સૂક્ષ્મઃ પનકજીવો જઘન્યાવગાહનાવાન્ ભવતિ, અતસ્તચ્છરીરપ્રમાણં જઘન્યમવધિક્ષેત્ર-મિતિ વદન્તિ ।

તદયુક્તમ્—ત્રિસમયાહારકત્વં હિ પનકજીવવિશેષણતયા પ્રોક્તં મત્સ્યભવ-  
સ્યાયામપ્રતર-સંહરણસમયદ્વયં ચ પનકભવસમ્બન્ધિ ન સંભવતીતિ ત્રિસમયાહારક-  
ત્વરૂપં વિશેષણં પનકજીવસ્ય નોપપદ્યતે ॥

અત્રેદં વોધ્યમ્—એતાવત્પ્રમાણસ્ય જઘન્યક્ષેત્રસ્ય તૈજસપ્રાયોગ્યવર્ગણાપાન્તરાલ-  
વર્તિ દ્રવ્યં ભાષાપ્રાયોગ્યવર્ગણાપાન્તરાલવર્તિ ચ દ્રવ્યમાલમ્બ્યાવધિઃ પ્રવર્તતે । તદપિ  
ચાલમ્બ્યમાનં દ્રવ્યં દ્વિવિધમ્—ગુરુલઘુ, અગુરુલઘુ ચ । તત્ર તૈજસપ્રત્યાસન્નં ગુરુલઘુ,

સૂક્ષ્મ પનક જીવ જઘન્ય અવગાહના વાળા હોતા હૈ । ઇસ તરહ ડસ કે  
શરીર કા જો પ્રમાણ હોતા હૈ તત્પ્રમાણ જઘન્યક્ષેત્ર અવધિજ્ઞાન કા બત-  
લાયા ગયા હૈ ।

એસા કહના ડનકા ઠીક નહીં હૈ કારણ કિ “ ત્રિસમયાહારકત્વ ”  
યહ વિશેષણ પનક જીવ કા હી કહા હૈ । ઇસલિયે પ્રથમ સમયમેં મત્સ્ય-  
ભવ કે શરીર કે આયામ કે સંહરણ તથા દ્વિતીય સમયમેં પ્રતર કે સંહ-  
રણ કરનેમેં જો ડો સમય લગતે હૈં વે પનકભવસંબંધી નહીં હૈં, અતઃ  
ત્રિસમયાહારકત્વરૂપ વિશેષણ પનક જીવ કા નહીં બનતા હૈ ।

યહાં યહ સમજ્ઞના ચાહિયે—પૂર્વોક્તપ્રમાણપરિમિત જઘન્ય ક્ષેત્ર કે  
તૈજસપ્રાયોગ્યવર્ગણા કે મધ્યવર્તી દ્રવ્ય કા ઓર ભાષાપ્રાયોગ્યવર્ગણાકે  
મધ્યવર્તી દ્રવ્ય કા અવલમ્બન કર કે અવધિજ્ઞાન પ્રવૃત્ત હોતા હૈ । વહ  
અવલમ્બ્યમાન દ્રવ્ય ગુરુલઘુ ઓર અગુરુલઘુ કે ભેદ સે ડો પ્રકાર કા હૈ ।  
ડનમેં તૈજસપ્રત્યાસન્ન દ્રવ્ય ગુરુલઘુ હૈ ઓર ભાષાપ્રત્યાસન્ન દ્રવ્ય અગુરુ-

સૂક્ષ્મ પનક જીવ જઘન્ય અવગાહનાવાળો હોય છે. આ રીતે તેના શરીરનું  
જે પ્રમાણ હોય છે તે પ્રમાણ જ જઘન્યક્ષેત્ર અવધિજ્ઞાનનું બતાવ્યું છે.

તેમનું એવું કથન બરાબર નથી કારણ કે “ ત્રિસમયાહારકત્વ ” આ  
વિશેષણ પનક જીવનું જ કહેલ છે, તેથી પ્રથમ સમયમાં મત્સ્યભવના શરી-  
રના આયામનું સંહરણ, તથા બીજા સમયમાં પ્રતરનું સંહરણ કરવામાં જે બે  
સમય લાગે છે તે પનકભવસંબંધી નથી તેથી ત્રિસમયાહારકત્વ રૂપ વિશેષણ  
પનક જીવનું બનતું નથી.

અહીં એમ સમજવું જોઈ એ—પૂર્વોક્તપ્રમાણપરિમિત જઘન્ય ક્ષેત્રના  
તૈજસપ્રાયોગ્યવર્ગણાના મધ્યવર્તી દ્રવ્યનું, અને ભાષાપ્રાયોગ્યવર્ગણાના મધ્યવર્તી  
દ્રવ્યનું અવલંબન કરીને અવધિજ્ઞાન પ્રવૃત્ત થાય છે. તે અવલંબ્યમાન દ્રવ્ય  
ગુરુલઘુ અને અગુરુલઘુના ભેદથી બે પ્રકારનું છે. તેઓમાં તૈજસપ્રત્યાસન્ન દ્રવ્ય

ભાષાપ્રત્યાસન્નં ચાશુરુલઘુ । તદ્વતાંશ્ચ પર્યાયાન્ ચતુઃસંખ્યાનેવ વર્ણગન્ધરસસ્પર્શલ-  
ક્ષણાન્ જઘન્યાવધિજ્ઞાની પश्यति, ન શેષાનિતિ ।

અયમત્ર સારાંશઃ—અંગુલાસંખ્યેયભાગપ્રમાણં જઘન્યં ક્ષેત્રમવધિજ્ઞાનસ્ય  
ભવતિ । અર્થાત્—અંગુલપ્રમાણસ્ય ક્ષેત્રસ્ય અસંખ્યેયાનિ 'સ્વળ્ડાનિ કૃતસ્ય એકસ્મિન્  
અસંખ્યેયભાગે યાવન્તિ દ્રવ્યાણિ સમવસ્થિતાનિ તાનિ જઘન્યાવધિજ્ઞાની  
પश्यति ॥ ગા૦૧ ॥

एवं जघन्यमवधिक्षेत्रमुक्त्वा, उत्कृष्टमवधिक्षेत्रमाह—

मूलम्—सर्व-बहु-अगणिजीवा, निरन्तरं जत्तियं भरिज्जंसु ।

खित्तं सर्वदिसागं, परमोही खित्तनिदिट्ठो ॥ २ ॥

छाया—सर्ववह्निजीवा,—निरन्तरं यावद् भूतवन्तः ।

क्षेत्रं सर्वदिक्कं, परमावधिः क्षेत्रनिदिष्टः ॥ २ ॥

ટીકા—‘ સર્વવહુઅગણિજીવા ’ ઇત્યાદિ । સર્વવહ્નિજીવાઃ—ઈહ સર્વ-  
લઘુ હૈ । ઇનમૈં રહે હુએ વર્ણ રસ ગંધ સ્પર્શરૂપ ચાર પર્યાયોં કો હી જઘન્ય  
અવધિજ્ઞાની દેખતા હૈ, શેષ કો નહીં । ઇસકા સારાંશ યહ હૈ—

અંગુલકા અસંખ્યાતવાં ભાગ ક્ષેત્ર અવધિજ્ઞાન કા જઘન્ય વિષય હૈ,  
ઇસ કા તાત્પર્ય યહ હૈ કિ અંગુલપ્રમાણ ક્ષેત્ર કે અસંખ્યાત ટુકડે કરો,  
અંત કા જો અસંખ્યાતવાં ટુકડા બચે ડસમૈં જિતને રૂપી દ્રવ્ય અવસ્થિત  
હોં ઉન્હે જઘન્ય અવધિજ્ઞાની જાનતા ઓર દેખતા હૈ ।

ઇસ પ્રકાર અવધિજ્ઞાન કા જઘન્ય ક્ષેત્ર કહ કર અવ ઉત્કૃષ્ટ ક્ષેત્ર  
કહતે હૈ—‘ સર્વ-બહુ-અગણિ જીવા ’ ઇત્યાદિ ।

શુરુલઘુ છે અને ભાષાપ્રત્યાસન્ન દ્રવ્ય અશુરુલઘુ છે. તેમનામાં રહેલ વર્ણ, ગંધ,  
સ્પર્શરૂપ ચાર પર્યાયોને જ જઘન્યઅવધિજ્ઞાની જુએ છે, બીજાને કોઈ નહીં.  
તેનો સારાંશ આ છે—

અંગુલનો અસંખ્યાતમો ભાગ ક્ષેત્ર અવધિજ્ઞાનનો જઘન્ય વિષય છે.  
તેનું તાત્પર્ય એ છે કે અંગુલના માપના ક્ષેત્રના અસંખ્ય ટુકડા કરો. છેવટનો  
જે અસંખ્યાતમો ટુકડો બચે તેમાં જેટલા રૂપી દ્રવ્યો રહેલ હોય તેમને  
જઘન્ય અવધિજ્ઞાની જાણે અને દેખે છે.

આ રીતે અવધિજ્ઞાનનું જઘન્ય ક્ષેત્ર કહીને હવે ઉત્કૃષ્ટ ક્ષેત્ર કહે છે—  
“ સર્વવહુઅગણિજીવા ” ઇત્યાદિ.

શબ્દેન વિવક્ષિતકાલવર્તિનો વહ્નિજીવા યાવન્તઃ સન્તિ, ત એવ સર્વે ગૃહ્યન્તે । તતશ્ચ યે ભૂત-ભવિષ્યત્કાલાવસ્થાયિ વહ્નિજીવાઃ, યે ચ શેષજીવાસ્તેપાં ગ્રહણં નાસ્તિ, અસંભવાત્ । સર્વેભ્યઃ=વિવક્ષિતકાલવર્તિભ્યોઽગ્નિજીવેભ્ય એવ યે વહ્નવસ્તે સર્વવહ્નઃ, અગ્રયશ્ચ તે જીવાઃ, અગ્નિજીવાઃ, સર્વવહ્નશ્ચ તેઽગ્નિજીવાઃ સર્વવહ્નિગ્નિજીવાઃ, સર્વદિક્કં=સર્વદિગ્ભાવાવસ્થિતં ક્ષેત્રમ્-આકાશં, નિરન્તરં-અન્તરરહિતં, ક્રિયાવિશેષ-  
ણમેતત્, વિશિષ્ટમુચીરચનયા રચિતાઃ સન્તઃ, યાવત્=યત્પરિમાણં ભૂતવન્તઃ= વ્યાપ્તવન્તઃ, પરમાવધિઃ-પરમશ્વાસાવવધિઃ સ તથા, ક્ષેત્રનિર્દિષ્ટઃ-ક્ષેત્રમ્=અનન્તરોક્તં પ્રભૂતાગ્નિજીવપ્રમિતમક્લીકૃત્ય નિર્દિષ્ટઃ=પ્રતિપાદિતો ગણધરાદિભિરિતિ । તતશ્ચા-  
વધેઃ પર્યાયેણ એતાવત્ ક્ષેત્રમુત્કૃષ્ટતો વિષય ઇતિ ભાવઃ ।

‘ભૂતવન્તઃ’ ઇતિ ભૂતકાલનિર્દેશશ્ચ ‘અજિતસ્વામિકાલ એવ પ્રાયઃ સર્વવહ્નોઽગ્નિ-  
જીવા ભવન્તિ સ્મ’ ઇતિ સૂચયિતુમ્-‘સર્વવહ્નુ’ ઇતિ વિશેષણમ્ । ‘અસ્યામવસર્પિણ્યા’-મિત્ય-

इस गाथामें सर्वशब्द से विवक्षित कालवर्ती अग्निजीव जितने हैं वे ही सब ग्रहण किये गये हैं । भूत-भविष्यत-कालवर्ती अग्निजीव तथा और जो शेष जीव हैं वे ग्रहण नहीं किये गये हैं । इस तरह विव-  
क्षितकालवर्ती अग्निजीवों से और भी जो अग्निजीव हैं वे सर्ववह्नु  
अग्नि जीव समस्त दिगवस्थित जितने आकाशरूपी क्षेत्र को निरन्तर  
रूपमें-अन्तर न रहे इस रूपमें-भरते हैं-उसे व्याप्त करते हैं उतना  
क्षेत्र उत्कृष्ट अवधिज्ञान का विषय है । ऐसा गणधरादिकों ने कहा है ।

इस गाथामें “भूतवन्तः” ऐसा जो भूतकालिक निर्देश किया है वह इस बात की सूचना के लिए है कि अजित स्वामी के समयमें ही प्रायः सर्ववह्नुअग्निजीव थे । “सर्ववह्नु” यह विशेषण इस अवस-

આ ગાથામાં ‘સર્વ’ શબ્દથી વિવક્ષિતકાળવર્તી અગ્નિજીવ જેટલાં છે તે બધાં ગ્રહણ કરેલ છે. ભૂત-ભવિષ્યકાળવર્તી અગ્નિજીવ તથા બીજાં જે બાકીનાં જીવો છે તે ગ્રહણ કરેલ નથી. આ રીતે વિવક્ષિતકાળવર્તી અગ્નિજીવો સિવા-  
યના બીજા પણ જે અગ્નિજીવો છે તે બધા-બહુઅગ્નિજીવ સમસ્ત દિગવસ્થિત જેટલા આકાશરૂપ ક્ષેત્રને નિરંતર રૂપમાં (અંતર ન રહે તે રૂપમાં) ભરે છે, તેને વ્યાપ્ત કરે છે, એટલું ક્ષેત્ર ઉત્કૃષ્ટ અવધિજ્ઞાનનો વિષય છે. એવું ગણધરાદિકેએ કહ્યું છે.

આ ગાથામાં ‘ભૂતવન્તઃ’ એવો જે ભૂતકાળનો નિર્દેશ કરેલ છે તે આ વાતની સૂચનાને માટે છે કે અજિતસ્વામીના સમયમાં જ પ્રાયઃ સર્વબહુઅગ્નિ જીવ હતા. ‘સર્વવહ્નુ’ આ વિશેષણ આ અવસર્પિણી કાળનું સૂચક છે. તથા



ર્થસ્ય રૂપાપનાર્થમ્ । 'સર્વદિક્કમ્' इत्यनेन सर्वतः सूचीपरिभ्रमण प्रमितमेव सूचितम् ।

अथवा—सर्वबहुअग्निजीवा निरन्तरं यावत् सर्वदिकं क्षेत्रं भूतवन्तः, एतावति क्षेत्रे यान्यवस्थितानि द्रव्याणि, तत्परिच्छेदसामर्थ्ययुक्तः परमावधिः, क्षेत्रमङ्गीकृत्य निर्दिष्टः, इति । अथ सांप्रदायिकोऽर्थ उच्यते—

अग्निजीवोत्पत्तेर्महावृष्ट्यादिना व्याघाताभावे समस्तभरतैरवतविदेहलक्षणાસુ પન્નદશસુ કર્મભૂમિષુ સર્વબહુવાદરાગ્નિજીવા ભવન્તિ । અવસર્પિણ્યાં દ્વિતીય-તીર્થકરકાલે યે ભવન્તિ સ્મ, ત એવ ગૃહ્યન્તે । તત્ર હિ વાદરાગ્નિજીવાનાં સંધુક્ષણ-ર્પિણી કાલ કા સૂચક હૈ । તથા—“સર્વદિક્કમ્” યહ વિશેષણ સૂચિપરિ-ભ્રમણપરિમિત ક્ષેત્ર કા હી સૂચક હૈ ।

અથવા—સર્વબહુઅગ્નિજીવ નિરન્તર સબ દિશાઓમ્હે રહે હુણ જિતને ક્ષેત્ર કો વ્યાપ્ત કરતે હૈં જિતને ક્ષેત્રમ્હે જિતને દ્રવ્ય અવસ્થિત હોતે ઉતને દ્રવ્યોં કો જાનને કી શક્તિ વાલા યહ પરમાવધિજ્ઞાન, ક્ષેત્રકી અપેક્ષા સે કહા ગયા હૈ ।

અવ સામ્પ્રદાયિક અર્થ કયા હૈ સો બતલાયા જાતા હૈ—

અગ્નિ જીવોં કી ઉત્પત્તિ કા મહાવૃષ્ટિ આદિ કે દ્વારા મી વ્યાઘાત નહીં હોતા હૈં જિસલિયે પાંચ ભરત, પાંચ ઐરવત, એવં પાંચ મહાવિદેહ, યે જો પન્દ્રહ કર્મભૂમિયાં હૈં જિનમ્હે સર્વબહુવાદરઅગ્નિજીવ હોતે હૈં ।

અવસર્પિણી કાલમ્હે દ્વિતીય તીર્થકર કે સમયમ્હે જો અગ્નિ જીવ હોતે હૈં વે હી યહાં ગ્રહણ કિયે ગયે હૈં, કારણ કિ ઉસ સમય વાદર અગ્નિ

‘સર્વદિક્કમ્’ આ વિશેષણ સૂચીપરિભ્રમણપરિમિત ક્ષેત્રનું જ સૂચક છે.

અથવા—સર્વબહુઅગ્નિજીવ નિરંતર બધી દિશાઓમાં રહેલ જેટલા ક્ષેત્રને વ્યાપ્ત કરે છે એટલા ક્ષેત્રમાં જેટલા દ્રવ્ય રહેલાં હોય છે એટલા દ્રવ્યોને જાણવાની શક્તિવાળું આ પરમાવધિજ્ઞાન ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ કહેલ છે.

હવે સાંપ્રદાયિક અર્થ શો છે તે બતાવે છે—

અગ્નિજીવોની ઉત્પત્તિનો મહાવૃષ્ટિ આદિ વડે પણ વ્યાઘાત થતો નથી. તેથી પાંચ ભરત, પાંચ ઐરવત, અને પાંચ મહાવિદેહ, તે પંદર જે કર્મભૂમિઓ છે તેઓમાં સર્વબહુવાદરઅગ્નિજીવ હોય છે. અવસર્પિણી કાળમાં બીજા તીર્થકરના સમયમાં જે અગ્નિજીવ હોય છે તેમને જ અહીં ગ્રહણ કરેલ છે, કારણ કે તે સમયે વાદર અગ્નિજીવોની સંધુક્ષણ અને જવાલન આદિ

જ્વાલનાદ્યારમ્ભપરા: સર્વેભ્યોઽપ્યતીતાઽનાગતેભ્ય: પ્રચુરા ગર્ભજમનુષ્યા: સ્વભા-  
વાદેવ ભવન્તિ સ્મ ।

યદોત્કૃષ્ટાશ્ચ સૂક્ષ્માગ્નિ જીવા: સ્વભાવતઃ એવ કથમપિ સંભવન્તિ, તદેવ  
એતૈર્વાદરાગ્નિજીવૈ: સહ સર્વબહુઅગ્નિજીવાનાં પરિમાણં ભવતિ । ઇદમત્ર હૃદયમ્-  
અનન્તાનન્તારવસર્પિણીષુ મધ્યે સ એવ કશ્ચિત્ તીર્થંકરકાલો ગૃહ્યતે, યત્ર સૂક્ષ્માગ્નિ  
જીવા ઉત્કૃષ્ટપદિન: પ્રાપ્યન્તે । તતશ્ચ તૈર્વાદરૈ: સૂક્ષ્મેશ્ચાગ્નિજીવૈરુત્કૃષ્ટપદિભિ-  
ર્મિલિતૈ: સર્વબહુઅગ્નિજીવાનાં પરિમાણં ભવતિ ।

તત્ત્વ સંભવમાત્રમાશ્રિત્ય બુદ્ધ્યા પદ્ધિવિધરચનયાઽગ્નિજીવાન્ વ્યવસ્થાપયિતું  
રચનાયા ષડ્ ભેદા: ઘનદ્વય-પ્રતરદ્વય-શ્રેણિદ્વય-રૂપા: કલ્પ્યન્તે । તત્ર પઠો ભેદો  
જીવોં કી સંધુક્ષણ એવં જ્વાલન આદિ આરંભક્રિયાદ્વારા ઉત્પત્તિ કર-  
નેમેં તત્પર ગર્ભજ મનુષ્ય અતીતઅનાગતકાલોદ્ભૂત ગર્ભજ મનુષ્યોં કી  
અપેક્ષા પ્રચુર માત્રામેં સ્વભાવ સે હી થે ।

જવ ઉત્કૃષ્ટ સૂક્ષ્મઅગ્નિજીવ સ્વભાવતઃ કિસી નિમિત્તદ્વારા  
ઉત્પન્ન હોતે હૈં તવ હી ઇન વાદરાગ્નિ જીવોં કે સાથ સર્વબહુઅગ્નિજીવોં  
કા પરિમાણ આતા હૈ । તાત્પર્ય યહ હૈ કિ અનંતાનંત અવસર્પિણિયોં કે  
વીચ વહી કોઈ એક તીર્થંકરકાલ ગ્રહણ કિયા જાતા હૈ કિ જિસમેં  
સૂક્ષ્મઅગ્નિજીવ ઉત્કૃષ્ટ પદ કો પ્રાપ્ત હોતે હૈં । ઇસ તરહ ઉત્કૃષ્ટપદપ્રાપ્ત  
યે વાદર ઓર સૂક્ષ્મઅગ્નિ જીવોં કો મિલારે પર સર્વબહુઅગ્નિજીવોં  
કા પરિમાણ હોતા હૈ ।

સર્વબહુઅગ્નિજીવોં કા પરિમાણ નિકાલને કે લિયે અપની બુદ્ધિ  
સેં છહ પ્રકાર કી રચના કી કલ્પના કરો, વે છહ પ્રકાર યે હૈં-(૧)દો

આરંભક્રિયાવડે ઉત્પત્તિ કરવામાં તત્પર ગર્ભજ મનુષ્ય અતીત અનાગત  
કાળના જન્મમેદા ગર્ભજ મનુષ્યોની અપેક્ષાએ મોટી માત્રામાં સ્વભાવથી જ હતા.

જ્યારે ઉત્કૃષ્ટ સૂક્ષ્મ અગ્નિજીવ સ્વભાવતઃ કોઈ નિમિત્ત વડે પેદા થાય  
છે ત્યારે જ એ બાદરાગ્નિજીવોની સાથે સર્વબહુ અગ્નિજીવોનું પરિમાણ  
આવે છે. ભાવાર્થ એ કે અનંતાનંત અવસર્પિણીઓની વચ્ચે કોઈ એક તીર્થ  
કરનો સમય થયેલું કસાય છે કે જેમાં સૂક્ષ્માગ્નિજીવ ઉત્કૃષ્ટ પદને મેળવે છે.  
આ રીતે ઉત્કૃષ્ટ પદ પ્રાપ્ત કરનારા તે બાદર અને સૂક્ષ્મ અગ્નિજીવોને મેળવતા  
સર્વબહુ અગ્નિજીવોનું પરિમાણ થાય છે.

સર્વબહુ અગ્નિજીવોનું પરિમાણ કાઢવાને માટે પોતાની બુદ્ધિથી છ  
પ્રકારની રચનાની કલ્પના કરે. તે છ પ્રકાર આ પ્રમાણે છે-(૧) બે ઘન (૨) બે પ્રતર



વહુતરક્ષેત્રપૂરણં કરોતિ । અન્યે પશ્ચ અનાદેશાઃ, પઞ્ચસ્તુ શ્રુતાદેશ  
 ઇતિ । તથાહિ-સર્વૈરપ્યગ્નિજીવૈઃ સમચતુરસ્રો ઘનો દ્વિપ્રકારકઃ  
 સ્થાપ્યતે । તત્ર એકૈકાકાશપ્રદેશે એકૈકાગ્નિજીવ સ્થાપનયા  
 પ્રથમો ઘનઃ । સ્વાવગાહે ચ દેહાસંખ્યેયાકાશપ્રદેશ લક્ષણે  
 એકૈકાગ્નિજીવસ્થાપનયા દ્વિતીયો ઘનઃ । ઘનરચનાયાં નવાગ્નિ-  
 જીવાઃ અસત્કલ્પનયા સ્થાપ્યન્તે ।

અત્ર સ્થાપના—

૦	૦	૦
૦	૦	૦
૦	૦	૦

એતેષાં નવાનામગ્નિજીવાનાં પ્રત્યેકમેકૈકાકાશપ્રદેશે વ્યવસ્થાપિતાના-

ઘન, (૨) દો પ્રતર (વર્ગ), (૩) દો શ્રેણિ ૬ । इनमें छठवां श्रेणीरूप भेद ही  
 વહુતર ક્ષેત્ર કો પૂરણ કરતા હૈ । અન્ય પાંચ ભેદ અનાદેશશાસ્ત્રસંમત  
 નહીં હૈ । છઠવાં હી શ્રુતાદેશ-શાસ્ત્રસંમત હૈ ।

इस का खुलाशा इस प्रकार से है—समस्त अग्निजीवों का जो घन  
 बनाया गया है वह समचतुरस्र-समचतुष्कोण है, और उस की दो प्रकार  
 से स्थापना की गई है—प्रथम प्रकारमें एक एक आकाश स्थापना यंत्र—  
 के प्रदेशमें एक एक अग्निजीव स्थापित किया गया  
 है । द्वितीय प्रकारमें जितने असंख्यातप्रदेशरूप आका-  
 शक्षेत्र को एक अग्निजीवके शरीर ने रोक रखा है उस  
 स्वावगाहित देहरूप आकाश के असंख्यात प्रदेशमें एक  
 एक अग्निजीव की स्थापना की गई है । इस तरह इस  
 घनरचनामें असत्कल्पना द्वारा नौ अग्निजीव स्थापित किये जाते हैं ।

૦	૦	૦
૦	૦	૦
૦	૦	૦

(વર્ગ) (૩) બે શ્રેણિ. તેઓમાં છઠી શ્રેણીરૂપ ભેદ જ બહુતર ક્ષેત્રને પૂર્ણ કરે  
 છે અન્ય પાંચ ભેદ અનાદેશ-શાસ્ત્રસંમત નથી. છઠો શ્રુતાદેશ જ શાસ્ત્રસંમત છે.

તેનો ખુલાસો આ પ્રમાણે છે—સમસ્ત અગ્નિજીવોનો જે ઘન બનાવવામાં  
 આવેલ છે તે સમચતુરસ્ર-સમચોરસ છે, અને તેની બે રીતે સ્થાપના કરેલ છે.  
 (૧) પહેલા પ્રકારમાં એક એક આકાશના પ્રદેશમાં એક એક અગ્નિજીવ  
 સ્થાપિત કરેલ છે. (૨) બીજા પ્રકારમાં જેટલા  
 અસંખ્યાતપ્રદેશરૂપ આકાશ ક્ષેત્રને એક અગ્નિજીવશરીરે રોકી  
 રાખેલ છે તે સ્વાવગાહિત દેહરૂપ આકાશના અસંખ્યાત  
 પ્રદેશમાં એક એક અગ્નિજીવની સ્થાપના કરેલ છે. આ રીતે આ  
 ઘનરચનામાં અસત્કલ્પના વડે નવ અગ્નિજીવ સ્થાપિત કરાય છે.

૦	૦	૦
૦	૦	૦
૦	૦	૦

મધસ્તાત્ ઉપરિષ્ટાન્ અન્યેઽપિ નવ નવ જીવા इत्थमेव स्थाप्यन्ते । एष कल्पनया सप्तविंशत्या प्रथमो घनो भवति ।

સ્થાપના ચેયમ્

સદ્ભાવતસ્ત્વ સંખ્યેયૈરગ્નિ જીવૈરેકૈકાકાશપ્રદેશવ્યવસ્થા-  
પિતૈર્ઘનો ભવતિ । દ્વિતીયોઽપિ ઘન इत्थमेव द्रष्टव्यः, किन्तु  
इह देहासंख्येयाकाशप्रदेशेष्वेकैक जीवो व्यवस्थाप्यते २ ।

○	○	○
○	○	○
○	○	○
○	○	○
○	○	○
○	○	○

एवं वृत्ताकारः प्रतरोऽपि द्विविधो भवति । तथा हि-एकै-  
काकाशप्रदेशे एकैकाग्निजीवस्थापनया प्रथमः, देहासंख्ये-

इन नौ अग्नि जीवों के भी प्रत्येक अग्नि जीव के ऊपर नीचे और  
भी नौ नौ अग्नि जीव स्थापित किये जाते हैं । स्थापना—

○	○	○
○	○	○
○	○	○
○	○	○
○	○	○
○	○	○

इस तरह की स्थापना से सत्ताईस २७ जीवों  
का यह प्रथम घन बन जाता है । इससे यह तात्पर्य  
निकलता है कि एक एक आकाश के प्रदेशमें व्यवस्था-  
पित हुए असंख्यात अग्नि जीवों का एक घन बन जाता  
है । द्वितीय घन भी इस तरह से होता है । किन्तु  
इस घनमें देहरूप असंख्येय आकाशप्रदेशमें एक एक  
जीव ही स्थापित किया जाता है । इसी प्रकार वृत्ताकार प्रतर भी दो  
तरह से होता है—एक २ आकाश के प्रदेशमें एक एक अग्निजीवकी  
स्थापना से प्रथम प्रतर, और आकाश के असंख्यात प्रदेशरूप स्वावगा-

ते नव अग्निજીવોના પણ પ્રત્યેક અગ્નિજીવની ઉપર નીચે બીજા પણ  
નવ નવ અગ્નિજીવ સ્થાપિત કરાય છે.

સ્થાપના—

○	○	○
○	○	○
○	○	○
○	○	○
○	○	○
○	○	○

આ પ્રકારની સ્થાપનાથી સત્યાવીસ (૨૭) જીવોનો  
આ પ્રથમ ઘન બની જાય છે. તેથી એ તાત્પર્ય નિકળે છે  
કે એક એક આકાશના પ્રદેશમાં વ્યવસ્થાપિત થયેલ અસં-  
ખ્યાત અગ્નિજીવોનો એક ઘન બની જાય છે. બીજો ઘન  
પણ એજ રીતે થાય છે. પણ આ ઘનમાં દેહરૂપ અસં-  
ખ્યેય આકાશ પ્રદેશમાં એક એક જીવ જ સ્થાપિત કરાય  
છે. આજ રીતે વૃત્તાકાર પ્રતર પણ બે રીતે થાય છે. એક એક આકાશના  
પ્રદેશમાં એક એક અગ્નિજીવની સ્થાપના વડે પ્રથમ પ્રતર અને આકાશના

આકાશપ્રદેશાત્મકે સ્વાવગાહે એકૈકાગ્નિ જીવસ્થાપનયા ચ દ્વિતીયઃ ૨। એવા-  
યતા સૂચ્યાકારા શ્રેણિરપિ દ્વિમેદા । તત્ર ચત્વારો ઘનપ્રતરપક્ષાઃ, પશ્ચમશ્ચ-એકૈકાકા-  
શપ્રદેશસ્થાપિતૈકૈકજીવલક્ષણઃ શ્રેણિપક્ષઃ, એતે પશ્ચાપિ ન ગ્રાહ્યાઃ, દોષદ્વયાનુષક્તાત્ ।  
તથાહિ-પશ્ચવિધયાઽપ્યનયા સ્થાપનયા સ્થાપિતા અગ્નિજીવા અવધિજ્ઞાનધરસ્ય  
ષટ્સ્વપિ દિક્ષુ અસત્કલ્પનયા ભ્રામ્યમાણાઃ સ્તોકમેવ ક્ષેત્રં સ્પૃશન્તીત્યેકો દોષઃ ।  
એકૈકાકાશપ્રદેશે એકૈકજીવસ્થાપનાયામાગમવિરોધશ્ચ દ્વિતીયો દોષઃ ।

નનુ અસંખ્યેયાકાશપ્રદેશાન્ વિના આગમે જીવાવગાહનિષેધાદસત્કલ્પનયા

હિત દેહમેં એક ૨ અગ્નિ જીવ કી સ્થાપના સે દ્વિનીય પ્રતર બનતા હૈ ।  
इसी तरह सूची के आकार जैसी लंबी श्रेणि भी दो प्रकार की है । इनमें  
घन और प्रतर के दो२ भेदरूप चार पक्ष, तथा एक २ आकाशप्रदेशमें  
स्थापित एक एक जीवरूप पांचवां श्रेणिपक्ष, ये पांचों पक्ष ग्राह्य नहीं हुए  
हैं, कारण कि ये दो दोषों से दूषित हैं ? इन दोनों दोषों का खुलाशा  
इस प्रकार है-जब पांच प्रकार की इस स्थापना से स्थापित किये गये ये  
अग्निजीव अवधिज्ञानी की छहों दिशाओंमें असत्कल्पना से इधर से  
उधर घुमाये जावेंगे तब ये स्तोक क्षेत्र का ही स्पर्श करेंगे एक तो यह  
दोष आता है १, दूसरा-एक २ आकाशप्रदेश के ऊपर एक २ जीव की  
स्थापना करना यह आगम से विरुद्ध पडता है २ ।

શંકા—યદ્યપિ અસંખ્યાત આકાશ પ્રદેશોં કે વિના આગમમેં એક  
જીવ કે અવગાહ કા નિષેધ બતલાયા ગયા હૈ ફિર મી અસત્કલ્પના

અસંખ્યાત પ્રદેશરૂપ સ્વાવગાહિત દેહમાં એક એક અગ્નિજીવની સ્થાપના વડે  
બીજા પ્રતર બને છે. આજ પ્રમાણે સૂચીના આકાર જેવી લાંબી શ્રેણી પણ બે  
પ્રકારની છે. તેમનામાં ઘન અને પ્રતરના બે બે ભેદરૂપ ચાર પક્ષ તથા એક  
એક આકાશ પ્રદેશમાં સ્થાપિત એક એક જીવરૂપ પાંચમો શ્રેણીપક્ષ, એ પાંચ  
પક્ષ ગ્રાહ્ય થયા નથી, કારણ કે તે બે દોષો વડે દૂષિત છે. એ બન્ને દોષોનો  
ખુલાસો આ પ્રમાણે છે—જ્યારે પાંચ પ્રકારની આ સ્થાપનાથી સ્થાપિત કરેલ  
એ અગ્નિજીવ અવધિજ્ઞાનીની છબે દિશાઓમાં અસત્કલ્પનાથી અહીંથી તહીં  
ઘુમાવાશે ત્યારે એ સ્તોક ક્ષેત્રનો જ સ્પર્શ કરશે. એક તો આ દોષ આવશે (૧)

બીજું—એક એક આકાશ પ્રદેશની ઉપર એક એક જીવની સ્થાપના કરવી  
તે આગમની વિરુદ્ધનું ગણાશે (૨)

શંકા—જે કે અસંખ્યાત આકાશ પ્રદેશોના વિના આગમમાં એક જીવની  
અવગાહનાનો નિષેધ બતાવ્યો છે તે છતાં અસત્કલ્પનાથી એક એક પ્રદેશમાં એક

પ્રદેશવગાહોઽપ્યસ્તુ, इति चेन्नैवम्, कल्पनाऽपि सति संभवेऽविरोधिन्येव कर्तव्या, किं विरोधेन ? तस्मात्-असंख्येयाकाशप्रदेशलक्षणस्वावगाहे श्रेण्यामेकैकजीव स्थापनेन यः श्रेणिलक्षणः पृष्ठः पक्षः स एव श्रुते आदिष्टत्वात् ग्राह्यः । शेषास्तु से एक एक प्रदेशमें एक एक जीवका अवगाह मान लिया जावे तो आगम विरुद्धता कैसे आसकेगी ?

उत्तर—ऐसा नहीं कहना चाहिये, कारण कि कल्पना भी वहीकी जानी चाहिये कि जो वहां संभवित होती हो, और जिसमें कोई विरोध नहीं आता हो । पूर्वोक्त कल्पना तो अविरोधिनी नहीं है । उसमें आगम से दोष आता है, आगममें एक जीव का आधारक्षेत्र लोकाकाश के असंख्यातवे भाग से लेकर सम्पूर्ण लोकाकाशतक हो सकने का बतलाया गया है । यद्यपि लोकाकाश असंख्यातप्रदेश परिमाण है तथापि असंख्यात संख्या के भी असंख्य प्रकार होने से लोकाकाश के ऐसे असंख्यात भागों की कल्पना की जा सकती है, जो अंगुलासंख्येयभाग परिमाण हों । इतना छोटा एक भाग भी असंख्यात प्रदेशात्मक ही होता है । उस एक भागमें कोई एक जीव रह सकता है, उतने दो भागमें भी रह सकता है । इसी तरह एक २ भाग बढ़ते २ आखिरकार सर्वलोकमें भी एक जीव रह सकता है, अर्थात् जीवद्रव्य का छोटे से छोटा आधारक्षेत्र अंगुलासंख्येय भाग

એક જીવની અવગાહના માનવામાં આવે તો આગમવિરુદ્ધતા કેવી રીતે આવી શકશે ?

ઉત્તર—એવું ન કહેવું જોઈએ કારણ કે કલ્પના પણ એવી જ કરવી જોઈએ કે જે ત્યાં સંભવિત થતી હોય, અને જેમાં કોઈ વિરોધ આવતો ન હોય. પૂર્વોક્ત કલ્પના તો અવિરોધિની નથી. તેમાં આગમથી દોષ આવે છે. આગમમાં એક જીવનું આધારક્ષેત્ર લોકાકાશના અસંખ્યાતમાં લાગથી લઈને સંપૂર્ણ લોકાકાશ સુધી હોઈ શકવાનું બતાવ્યું છે. જો કે લોકાકાશ અસંખ્યાત પ્રદેશપરિમાણ છે તો પણ અસંખ્યાત સંખ્યાના પણ અસંખ્યાત પ્રકાર હોવાથી લોકાકાશના એવા અસંખ્યાત ભાગોની કલ્પના કરી શકાય છે કે જે આગળના અસંખ્યેયભાગપરિમાણ હોય. આવડો નાનો એક ભાગ પણ અસંખ્યાત પ્રદેશાત્મક જ હોય છે. તે એક ભાગમાં કોઈ એક જીવ રહી શકે છે, એટલા બે ભાગમાં પણ રહી શકે છે, આ રીતે એક એક ભાગ વધતા વધતા છેવટે સર્વલોકમાં પણ એક જીવ રહી શકે છે, એટલે કે જીવદ્રવ્યનું નાનામાં નાનું

પશ્ચાનાદેશાઃ, સંભવોપદર્શનમાત્રેણોક્તત્વાત્ પરિહાર્યાઃ । इयं हि यथोक्तश्रेणिः  
एकैकजीवस्या संख्येयाकाशप्रदेशावगाहे व्यवस्थापितत्वाद् बहुतरं क्षेत्रं स्पृशती-  
त्येको गुणः, अवगाहविरोधाभावस्तु द्वितीयः । ततश्च-एषाऽग्निजीवश्रेणिरवधि-  
ज्ञानिनः षट्सवपि दिक्षु असत्कल्पनया भ्रामिता सती अलोके लोकप्रमाणानि  
परिमाण का खंड होता है जो समग्र लोकाकाश का एक असंख्यातवां  
हिस्सा होता है ।

अब एक एक प्रदेशमें असत्कल्पना से जीव का अवगाह-  
मानना आगमविरोध से विहीन कैसे हो सकता है । अतः असंख्यात-  
प्रदेशरूप स्वावगाहित श्रेणीमें एक २ जीव की स्थापना से जो श्रेणिरूप  
छठवां पक्ष है वही आगममें आदिष्ट होने से ग्राह्य माना गया है । बाकी  
के पांच पक्ष आदिष्ट न होने की वजह से परिहार्य बतलाये गये हैं । यहाँ  
जो उनका कथन किया गया है वह केवल संभावनामात्र को दिखलाने  
के लिये ही किया गया है । यह यथोक्त श्रेणि एक एक जीव को असंख्येय  
आकाशप्रदेशरूप आधारमें व्यवस्थापित होनेका वजह से एक तो बहुत  
अधिक क्षेत्र का स्पर्श कर लेती है । दूसरे-इस मान्यतामें अवगाह का  
विरोध भी नहीं आता है । इस तरह यह अग्निजावों की श्रेणि अवधि  
ज्ञानी की छहों दिशाओमें असत्कल्पना से घुमाने पर अलोकमें लोक-  
प्रमाण असंख्येय आकाशखंडों को स्पर्श करती है, इसलिये इतना उत्कृष्ट

આધારક્ષેત્ર આંગળના અસંખ્યેયભાગપરિભાણને। ખંડ હોય છે. જે સમગ્ર  
લોકાકાશને એક અસંખ્યાતમે ભાગ હોય છે.

હવે એક એક પ્રદેશમાં અસત્કલ્પનાથી જીવની અવગાહના માનવી તે  
આગમવિરોધ વિનાનું કેવી રીતે થઈ શકે છે, તેથી અસંખ્યાત પ્રદેશરૂપ  
સ્વાવગાહિત શ્રેણીમાં એક એક જીવની સ્થાપનાથી જે શ્રેણિરૂપ છઠો પક્ષ છે  
એ જ આગમમાં આદિષ્ટ હોવાથી ગ્રાહ્ય (સ્વીકારવા યોગ્ય) મનાયો છે. બાકીના  
પાંચ પક્ષ આદિષ્ટ ન હોવાને કારણે પરિહાર્ય બતાવ્યા છે. અહીં જે તેમનું  
કથન કરેલ છે તે ફક્ત સંભાવનામાત્રને જ દર્શાવવા માટે કરેલ છે. આ યથોક્ત  
શ્રેણિ એક એક જીવને અસંખ્યેય આકાશપ્રદેશરૂપ આધારમાં વ્યવસ્થાપિત  
હોવાને કારણે એક તો ઘણા જ અધિક ક્ષેત્રનો સ્પર્શ કરી લે છે. બીજું આ  
માન્યતામાં અવગાહનાનો વિરોધ પણ આવતો નથી. આ રીતે આ અગ્નિજીવોની  
શ્રેણિ અવધિજ્ઞાનીની છએ દિશાઓમાં અસત્કલ્પનાથી ધૂમાવવાથી અલોકમાં  
લોકપ્રમાણ અસંખ્યેય આકાશ ખંડોનો સ્પર્શ કરે છે તેથી આટલું ઉત્કૃષ્ટ ક્ષેત્ર

અસંખ્યેયાકાશખંડાનિ સ્પૃશતિ, અતઃ એતાવદુત્કૃષ્ટક્ષેત્રમવધેર્વિપયઃ, ઇત્યુક્તં ભવતીત્યાદિ સ્વયમેવ વક્ષ્યતીતિ ॥

નનુ ષડ્ભેદાનાં કલ્પનં કિમર્થં ક્રિયતે, અયુક્તમેતત્, તથાહિ-એકૈકાકાશપ્રદે-  
શાવગાહિનાં જીવાનાં ઘનો યાવત એવ આકાશપ્રદેશાન્ આક્રામતિ, પ્રતરોઽપિ તેપાં  
તાવત એવ આકાશપ્રદેશાન્ આક્રામતિ, શ્રેણિરપિ તેપાં તાવત એવ તાન્ સ્પૃશતિ ।  
સંવૃત્તપ્રસારિતનેત્રપટ્ટાક્રાન્તાકાશપ્રદેશવદિત્યેવમસંખ્યેયાકાશપ્રદેશાવગાહજીવઘન-પ્ર-  
તર-શ્રેણ્યાક્રાન્તાકાશપ્રદેશાનામપિ સ્વસ્થાને સંખ્યા તુલ્યૈવ ભાવનીયેત્યતોઽવગાહ-  
ભેદદ્વયવાન્ ઘન એવાસ્તુ, પ્રતરો વા શ્રેણિરેવ વાઽસ્તુ, ઇતિ ચેત્ ,

ક્ષેત્ર અવધિજ્ઞાન કા વિષયભૂત નિર્દિષ્ટ કિયા ગયા હૈ । ઇત્યાદિ સઑ બાતે  
સૂત્રકાર આગે સ્વયં હી સ્પષ્ટ કરેંગે ।

શંકા—યહ જો છહ ભેદોં કી કલ્પના કી ગઈ હૈ—વહ અયુક્ત હૈ,  
ક્યોં કિ એક એક આકાશ કે પ્રદેશમેં અવગાહી જીવોં કા ઘન જિતને  
આકાશ કે પ્રદેશોં કા છૂતા હૈ ઉતને હી પ્રદેશોં કો ઉનકા પ્રતર હી  
છૂતા હૈ ઓર શ્રેણિ હી ઉનકી ઉતને હી પ્રદેશોં કો છૂતી હૈ । જિસ પ્રકાર  
સંકુચિત અવસ્થામેં રક્ષા હુઆ નેત્રપટ્ટ જબ પસાર દિયા જાતા હૈ તો  
વહ જૈસે સંકુચિત અવસ્થામેં જિતને આકાશપ્રદેશોં કો ઘેરે હુએ થા ઉતને  
હી પ્રદેશોં કો વહ પસાર દેને પર હી ઘેરતા હૈ । ઇસ તરહ અસંખ્યેય આકાશ  
પ્રદેશોંમેં અવગાહી જીવ કા ઘન, પ્રતર એવં શ્રેણી યે સઑ અપને ૨ દ્વારા  
આક્રાન્ત હુએ આકાશ પ્રદેશોં કો ઉતના હી છૂંએંગે કિ જિતને આકાશ  
પ્રદેશોં કો એક દૂસરેને છૂઆ હૈ, કારણ અપને ૨ સ્થાનમેં આકાશપ્રદેશોં

અવધિજ્ઞાનનુ' વિષયભૂત નિર્દિષ્ટ કરવામાં આવ્યું છે. ઇત્યાદિ બધી વાતો સૂત્રકાર  
આગળ જાતે જ સ્પષ્ટ કરશે.

શંકા—આ જે છલેદોની કલ્પના કરેલ છે. તે અયોગ્ય છે, કારણ કે એક  
એક આકાશના પ્રદેશમાં અવગાહી જીવોનો ઘન જેટલા આકાશના પ્રદેશને સ્પર્શે છે  
એટલાજ પ્રદેશને તેનો પ્રતર પણ સ્પર્શે છે, અને તેમની શ્રેણિ પણ એટલા જ પ્રદેશને  
સ્પર્શે છે. જે રીતે સંકુચિત અવસ્થામાં રાખેલ નેત્રપટ્ટ જ્યારે વિસ્તારવામાં આવે  
છે ત્યારે તે જેમ સંકુચિત અવસ્થામાં જેટલા આકાશ પ્રદેશોને ઘેરેલ હોતો એટલા  
જ પ્રદેશને તે વિસ્તારવાથી પણ ઘેરે છે, એજ રીતે અસંખ્યેય આકાશ પ્રદેશોમાં  
અવગાહી જીવના ઘન પ્રતર અને શ્રેણી એ સૌ પોત પોતાના વડે આક્રાન્ત  
થયેલ આકાશ પ્રદેશોને એટલોજ સ્પર્શશે કે જેટલો આકાશ પ્રદેશોને એક બીજાએ  
સ્પર્શ્યો છે કારણ કે પોત પોતાનાં સ્થાનમાં આકાશ પ્રદેશોની સંખ્યા તુલ્ય જ છે



ઉચ્ચતે—અસ્યાઃ પદ્ધિવિધકલ્પનાયા ભેદોઽવશ્યં મન્તવ્યઃ । ઘનાદ્યક્રાન્તા યે આકાશપ્રદેશાસ્તેષાં સંખ્યા સમત્વવિષમત્વેન ચિન્ત્યે, કિં તુ ઘનાદીનાં મધ્યાદ્યઃ કશ્ચિદ્ રચનાવિશેષોઽવધિજ્ઞાનિનઃ સર્વાસુ દિક્ષુ શ્રામ્યમાણો બહુતરં ક્ષેત્રં કી સંખ્યા તુલ્ય હી હૈ । યદ્યપિ સંવૃત્ત અવસ્થામેં રક્ષા હુઆ નેત્રપટ્ટ પસારને પર જગદ્ અધિક ઘેરતા હૈ, હિસ તરહ વહ પહિલે કી અપેક્ષા અધિક પ્રદેશોં કો ઘેરને વાલા જ્ઞાનના ચાહિયે, પરન્તુ સંવૃત્ત અવસ્થામેં જિતને સ્થાન કો ઉસને ઘેર રક્ષા હૈ ઉતને સ્થાનમેં ભી અસંખ્યાત પ્રદેશ હૈં ઓર જિતને સ્થાન કો બાદમેં ઉસને પસારને પર ઘેરા હૈ ઉતનેમેં ભી અસંખ્યાત હી પ્રદેશ હૈં । હિસ અપેક્ષા સે યહાં સ્વસ્થાનમેં પ્રદેશોં કી સંખ્યા તુલ્ય બતલાઈ ગઈ હૈ । હિસ અપેક્ષા કો લેકર એસા કહના હૈ કિ યા તો અવગાહ કે દો ભેદો વાલા ઘન માનો, પ્રતર માનો યા શ્રેણિ માનો । હિન છહ ભેદોં કી કલ્પના કરના વ્યર્થ હૈ । કારણ હિનમેં કોઈ ભેદ નહીં બનતા હૈ ।

ઉત્તર—એસા કહના ઠીક નહીં હૈ । કારણ હિસ છહ પ્રકાર કી કલ્પનામેં ભેદ તો અવશ્ય જ્ઞાનના ચાહિયે । યહાં યહ વિચાર નહીં કિયા ગયા હૈ કિ ઘનાદિ દ્વારા આક્રાન્ત જિતને આકાશ કે પ્રદેશ હૈં વે સમ હૈં યા વિષમ હૈં । યહાં તો યહ પ્રકટ કિયા જા રહા હૈ કિ હિન ઘન આદિ કોં મેં સે જો કોઈ રચનાવિશેષ અવધિજ્ઞાની કી સમસ્ત દિશાઓંમેં

જે કે સંવૃત્ત અવસ્થામાં રાખેલ નેત્રપટ્ટ વિસ્તારવાથી જગ્યા વધારે ઘેરે છે, આ રીતે તે પહેલાં કરતાં વધારે પ્રદેશોને ઘેરનાર માનવો જોઈએ, પણ સંવૃત્ત અવસ્થામાં જેટલાં સ્થાનને તેણે ઘેરી રાખેલ છે એટલાં સ્થાનમાં પણ અસંખ્યાત પ્રદેશ છે, અને જેટલા સ્થાનને ત્યાર પછી તેણે વિસ્તાર પામતાં ઘેરેલ છે એટલામાં પણ અસંખ્યાત જ પ્રદેશ છે આ અપેક્ષાએ અહીં સ્વસ્થાનમાં પ્રદેશોની સંખ્યા તુલ્ય બતાવેલ છે આ અપેક્ષાને લઈને એવું કહેવું જોઈએ કે કાંતો અવગાહનાને જે ભેદોવાળો ઘન માનો, પ્રતર માનો કે શ્રેણિ માનો. એ છ ભેદોની કલ્પના કરવી તે વ્યર્થ છે, કારણ કે તેઓમાં કોઈ ભેદ બનતો નથી.

ઉત્તર—એમ કહેવું તે ખરાબર નથી. કારણ કે તે છ પ્રકારની કલ્પનામાં ભેદ તો જરૂર માનવો જોઈએ. અહીં આ વિચાર કરવામાં આવ્યો નથી કે ઘનાદિ વડે આક્રાન્ત જેટલા આકાશના પદાર્થ છે તેઓ સમ છે કે વિષમ છે ? અહીં તો આ પ્રગટ કરાય છે કે એ ઘન આદિકોમાંથી જે કોઈ રચનાવિશેષ અવધિજ્ઞાનીની સમસ્ત દિશાઓમાં ઘુમતા બહુતર ક્ષેત્રનો સ્પર્શ કરે છે એજ આદ્ય



સ્પૃશતિ, સ એવ ઇહ ગ્રાહ્યઃ । એવં ચ સતિ તેપાં ભેદઃ સ્વીકરણીયઃ । તથાહિ-  
 એકેકપ્રદેશાવગાઢજીવઘનો ભ્રામ્યમાણો યાવત્ ક્ષેત્રં સ્પૃશતિ, તસ્માદસંખ્યેયપ્રદે-  
 શાવગાઢજીવઘનોઽસંખ્યેયગુણં સ્પૃશતિ । તતોઽપ્યેકેકપ્રદેશાવગાઢજીવપ્રતરોઽસંખ્યે-  
 યગુણં સ્પૃશતિ । તસ્માદપ્યસંખ્યેયપ્રદેશાવગાઢજીવપ્રતરોઽસંખ્યેયગુણં સ્પૃશતિ ।  
 તસ્માદપ્યેકેકપ્રદેશાવગાઢજીવશ્રેણિર સંખ્યેયગુણં સ્પૃશતિ । તસ્માદપ્યસંખ્યેયાકાશપ્ર-  
 દેશાવગાઢૈ કૈકાગ્નિજીવશ્રેણિરસંખ્યેયગુણં ક્ષેત્રં સ્પૃશતિ । તચ્ચા લોકેલોકપ્રમાણાન્યસં-  
 ખ્યેયાકાશખંડાનિ સ્પૃશતિ । અત એવ એતાવત્ ઉત્કૃષ્ટક્ષેત્રમવધેર્વિપય ઇત્યુક્તમ્ ।

ઘૂમતા હુઆ બહુતર ક્ષેત્ર કા સ્પર્શ કરતા હૈ વહી ગ્રાહ્ય માના હૈ । ઇસ પ્રકાર માનને પર યહ વાત સ્વતઃ સિદ્ધ હો જાતી હૈ કિ ઇન છહ પ્રકારોમૈં ભેદ હૈ । જૈસે-એક એક આકાશ કે પ્રદેશમૈં અવગાઢ-રહા હુઆ જો એક જીવ કા ઘન હૈ વહ ઘૂમતા હુઆ જિતને ક્ષેત્ર કા સ્પર્શ કરતા હૈ ડસકી અપેક્ષા અસંખ્યાત આકાશ પ્રદેશોમૈં અવગાઢ હુઆ જીવ કા ઘન અસં-  
 ખ્યાત ગુણિત ક્ષેત્ર કા સ્પર્શ કરને વાલા હોગા । ડસ કી અપેક્ષા બી એક એક પ્રદેશમૈં અવગાઢ જીવ પ્રતર અસંખ્યાત ગુણ ક્ષેત્ર કા સ્પર્શ કરેગા, ડસસે બીં અસંખ્યાતગુણિત ક્ષેત્ર કા સ્પર્શ અસંખ્યેયપ્રદેશાવગાઢ જીવ-  
 પ્રતર કરેગા, ઇસ કી અપેક્ષા બી જો એકએકપ્રદેશાવગાઢ જીવ શ્રેણિ હોગી વહ અસંખ્યાત ગુણિત ક્ષેત્ર કો સ્પર્શ કરેગી, ઓર ઇસ કી અપેક્ષા બી જો અસંખ્યાતઆકાશ પ્રદેશાવગાઢ એકએકઅગ્નિ જીવશ્રેણિ હોગી વહ અસંખ્યાત ગુણિત ક્ષેત્ર કા સ્પર્શ કરેગી । ઇસ તરહ એક એક પ્રદેશ-  
 વગાઢ જીવ ઘન સે લેકર અસંખ્યાત આકાશપ્રદેશાવગાઢ એક-એક

(સ્વીકારવા યોગ્ય) માન્યું છે. આ રીતે માનવાથી એ વાત સ્વતઃ સિદ્ધ થઈ જાય છે કે તે છ પ્રકારોમાં ભેદ છે. જેમ-એક એક આકાશના પ્રદેશમાં અવગાઢ (રહેલ) જે એક જીવનો ઘન છે તે ઘૂમતા ઘૂમતા જેટલાં ક્ષેત્રનો સ્પર્શ કરે છે તેના કરતાં અસંખ્યાત આકાશ પ્રદેશોમાં અવગાઢ (રહેલ) જીવનો ઘન અસં-  
 ખ્યાતગણાં ક્ષેત્રનો સ્પર્શ કરનાર હશે. તેનાં કરતાં પણ એક એક પ્રદેશમાં અવગાઢ જીવનો પ્રતર અસંખ્યાત ગણા ક્ષેત્રનો સ્પર્શ કરશે, તેનાં કરતાં પણ અસંખ્યાત ગણાં ક્ષેત્રનો સ્પર્શ અસંખ્યેય પ્રદેશાવગાઢ જીવ પ્રતર કરશે, તેનાં કરતાં પણ જે એક-એક-પ્રદેશાવગાઢ જીવશ્રેણિ હશે તે અસંખ્યાત ગણાં ક્ષેત્રનો સ્પર્શ કરશે, અને તેનાં કરતાં પણ જે અસંખ્યાતઆકાશપ્રદેશાવ-  
 ગાઢ એક એક અગ્નિજીવ શ્રેણિ હશે તે અસંખ્યાત ગણાં ક્ષેત્રનો સ્પર્શ કરશે. આ રીતે એક-એક-પ્રદેશાવગાઢ જીવ ઘનથી લઈને અસંખ્યાત આકાશપ્રદેશાવગાઢ

નનુ રૂપિદ્રવ્યાણ્યેવાવધિઃ પશ્યતિ, ક્ષેત્રં ત્વમૂર્તત્વાત્ કથં તદ્વિષયઃ?, इति चेत्, उच्यते—‘एतावत् क्षेत्रमवधेर्विषयः’ इति यदुच्यते, तदे तत् तस्य सामर्थ्यमात्र-

अग्नि जीवश्रेणितक क्रमशः आकाशप्रदेश असंख्यातगुणित होता जाता है, और यह अलोकमें लोकप्रमाण असंख्येय आकाशखंडों तक बढ़ जाता है। इस तरह छठवां भेदरूप जो श्रेणि है वह अलोकमें लोक-प्रमाण असंख्यात आकाशखंडों को स्पर्श करने वाली बन जाती है, और इतना ही अवधिज्ञान का उत्कृष्ट विषयक्षेत्र सिद्ध होता है।

શંકા—અવધિજ્ઞાનના વિષય તો શાસ્ત્રકારોને રૂપ, ગંધ, રસ, અને સ્પર્શવાળા રૂપી પદાર્થ હી બતલાયા છે ફિર આપ ઉસકા વિષય અરૂપી પદાર્થ કયોં બતલા રહે છે ? ક્ષેત્ર તો અમૂર્ત છે અને વહ અવધિજ્ઞાનના કા જવ વિષયભૂત હોગા તવ ‘અવધિજ્ઞાન અરૂપી પદાર્થ કો જાનનેવાલા છે’ યહ વાત માનની પડેગી જો સિદ્ધાન્ત કી માન્યતા સે પ્રતિકૂલ પડતી છે। ઇસ પ્રતિકૂલતા કે વારણ કરને કે લિયે યદિ કહા જાય કિ અરૂપી પદાર્થ અવધિજ્ઞાનના વિષય નહીં હોતા છે તો ફિર ક્ષેત્ર અમૂર્ત હોને સે ઉસકા વિષય કેસે માના જા સકતા છે ? ।

ઉત્તર—યહ શંકા વિના સમજે કી ગઈ છે, કયોં કિ—સૂત્રકાર યહ કહાં કહતે છે કિ—‘ઇતના આકાશરૂપ ક્ષેત્ર અવધિજ્ઞાનના વિષય છે’ ।

એક એક અગ્નિજીવશ્રેણિ સુધી ક્રમશઃ આકાશપ્રદેશ અસંખ્યાત ગણે થતો જાય છે, અને આ અલોકમાં લોકપ્રમાણ અસંખ્યેય આકાશખંડો સુધી વધી જાય છે. આ રીતે છઠ્ઠા ભેદરૂપ જે શ્રેણિ છે તે અલોકમાં લોકપ્રમાણ અસંખ્યાત આકાશખંડોને સ્પર્શ કરનારી બની જાય છે, અને એટલું જ અવધિજ્ઞાનનું ઉત્કૃષ્ટ વિષયક્ષેત્ર સિદ્ધ થાય છે.

શંકા—અવધિજ્ઞાનનો વિષય તો શાસ્ત્રકારોએ વર્ણુ, ગંધ, રસ, અને સ્પર્શવાળો રૂપી પદાર્થ જ બતાવ્યો છે તો પછી આપ તેનો વિષય અરૂપી પદાર્થ શા માટે બતાવો છો. ક્ષેત્ર તો અમૂર્ત છે અને તે જ્યારે અવધિજ્ઞાનના વિષયભૂત થશે ત્યારે ‘અવધિજ્ઞાન અરૂપી પદાર્થને જાણનાર છે’ આ વાત માનવી પડશે કે ને સિદ્ધાન્તની માન્યતાથી પ્રતિકૂળ છે. આ પ્રતિકૂળતાનું નિવારણ કરવા માટે જો એમ કહેવાય કે અરૂપી પદાર્થ અવધિજ્ઞાનનો વિષય હોતો નથી તો પછી ક્ષેત્ર અમૂર્ત હોવાથી તેનો વિષય કેવી રીતે માની શકાય ?

ઉત્તર—આ શંકા સમજ્યા વિના કરેલ છે, કારણ કે સૂત્રકાર એવું કયાં કહે છે કે “આટલું આકાશરૂપ ક્ષેત્ર અવધિજ્ઞાનનો વિષય છે.” તે તો અમૂર્ત

મેવોચ્યતે । યદ્યેતાવતિ ક્ષેત્રે દ્રષ્ટવ્યં કિમપિ દ્રવ્યં ભવેત્, તત્ તદાઽવધિજ્ઞાની પશ્યેત્, ન ચ તદ્ દ્રષ્ટવ્યં તત્રાલોકે કિમપિ સંભવતિ, યતોઽયમવધિસ્તીર્થકરાદિભિઃ ‘રૂપિદ્રવ્યમાત્રવિષયકો ભવતી’-ત્યુક્તમ્, તત્ત્વ રૂપિદ્રવ્યમલોકે નાસ્તીતિ ।

નનુ યદ્યેવમવધિર્લોકપ્રમાણો ભૂત્વા વિશુદ્ધિવશેન લોકાદ્ વહિરપ્યસૌ વર્ધતે તત્ર તદ્વૃદ્ધેઃ કિં ફલમ્ ? લોકાદ્ વહિર્દ્રષ્ટવ્યાભાવાદિતિ ચેત્,

વહ તો અમૂર્ત હૈ, વહ उसका विषय भी कैसे हो सकता है ? परन्तु ‘इतना क्षेत्र अवधिज्ञान का विषय है’ ऐसा जो कहा जाता है इससे केवल उसका सामर्थ्य ही दिखलाया जाता है, और इसका तात्पर्य यह निकलता है कि यदि इतने क्षेत्रमें द्रष्टव्य ज्ञातव्य यदि कोई भी द्रव्य हो, तो अवधिज्ञानी उस को देख सकता है, परन्तु अलोकाकाशरूप क्षेत्रमें तो कोई ऐसा द्रव्य द्रष्टव्य है ही नहीं कि जिस को यह देख सके, यदि वहां ऐसा कोई द्रव्य होता तो उस को यह देख लेता । इसीलिये तीर्थकरादिकोंने-‘अवधिज्ञान का विषय रूपी द्रव्य है’ ऐसा कहा है । आकाश के सिवाय और कोई द्रव्य अलोकाकाशमें नहीं है ।

શંકા—इस तरह से अवधिज्ञान, लोकप्रमाण होकर यदि विशुद्धि के वश से लोक के बाहिर भी बढ़ जाता है तो फिर इसकी वहां पर वृद्धि से क्या फल निकल सकता है ? वहां पर तो इसकी वृद्धि केवल निष्फल ही मानी जावेगी, कारण—वहां द्रष्टव्य तो कोई द्रव्य है ही नहीं कि जिस को देखकर यह अपनी वृद्धिमें सफलित हो सके ?

છે, તે તેના વિષય પણ કેવી રીતે હોઈ શકે ? પણ “આટલું ક્ષેત્ર અવધિજ્ઞાનનો વિષય છે” એવું જે કહેવાય છે તેના વડે ફક્ત તેની શક્તિ જ બતાવવામાં આવે છે, અને તેનું તાત્પર્ય આ નિકળે છે કે જે બે આટલાં ક્ષેત્રમાં દ્રષ્ટવ્ય-જ્ઞાતવ્ય બે કોઈ પણ દ્રવ્ય હોય તો અવધિજ્ઞાની તેને બોધ શકે છે. પણ અલોકા-કાશરૂપ ક્ષેત્રમાં તો એવું કોઈ દ્રવ્ય દ્રષ્ટવ્ય છે જ નહીં કે જેને તે બોધ શકે, બે ત્યાં એવું કોઈ દ્રવ્ય હોત તો તેને તે બોધ લેત. તેથી જ તીર્થકરાદિકે એ એવું કહ્યું છે કે “અવધિજ્ઞાનનો વિષય, રૂપી દ્રવ્ય છે.” આકાશના સિવાય બીજું કોઈ દ્રવ્ય અલોકાકાશમાં નથી.

શંકા—આ રીતે અવધિજ્ઞાન, લોકપ્રમાણ થઈને જે વિશુદ્ધિના વશવડે લોકની બહાર પણ વધી જાય છે તો પછી તેની ત્યાં વૃદ્ધિથી કયું પરિણામ આવી શકે છે ? ત્યાં તો તેની વૃદ્ધિ તદ્દન નિષ્ફળ જ મનાશે, કારણ કે ત્યાં દ્રષ્ટવ્ય તો કોઈ દ્રવ્ય છે જ નહીં કે જેને બોધને તે પોતાની વૃદ્ધિમાં સફળ થઈ શકે ?

ઉચ્યતે—વિશુદ્ધિવશેન લોકાદ્ બહિર્વર્ધમાનોઽવધિર્લોકસ્થમેવાધિકતરં  
પશ્યતિ । સૂક્ષ્મં, સૂક્ષ્મતરં, સૂક્ષ્મતમં ચં યાવત્ સર્વતઃ સૂક્ષ્મં પરમાણુમપિ પરમાવધિઃ  
પશ્યતિ । એતદેવ તદ્વૃદ્ધેસ્તાત્ત્વિકં ફલમિતિ । અલોકે તુ તસ્ય લોકપ્રમાણા સંખ્યે-  
યાકાશખંડેષુ દ્રવ્યદર્શનસામર્થ્યમેવાસ્તીતિ ॥ ગા૦ ૨ ॥

જઘન્યમુત્કૃષ્ટં ચાવધિક્ષેત્રમુક્તમ્, અથ એતસ્માદન્યત્ સર્વં મધ્યમં ક્ષેત્રમિતિ  
પરિશેષાદવગમ્યત એવ । યસ્મિન્ મધ્યમક્ષેત્રવિશેષે યત્ કાલમાનં ભવતિ, યાવતિ ચ  
કાલે યદ્ મધ્યમં ક્ષેત્રં ભવતિ, તત્પદર્શનાય ગાથાચતુષ્ટયમાઢ—

ઉત્તર—ઇસ કી વૃદ્ધિ કા યહ ફલ થોડે હી હૈ કિ યહ અલોકાકા-  
શમેં ભી યદિ દ્રવ્ય હોવે તો ઉસે દેખકર અપની વૃદ્ધિ કી સફલતા સાર્થક  
કરે, ઓર વહાં પર જબ દ્રષ્ટવ્ય દ્રવ્ય હૈ નહીં તો ઉસકે અભાવમેં યહ  
અપની વૃદ્ધિમેં અસફલિત માના જાવે । વૃદ્ધિ કા તાત્પર્ય તો કેવલ ઇતના  
હી હૈ કિ વિશુદ્ધિ કે વશ સે લોક સે ભી બાહિર વર્દિત હુઆ યહ અવ-  
ધિજ્ઞાન અપને વિષયભૂત લોકસ્થ રૂપી દ્રવ્ય કો હી અધિકતર રૂપમેં  
વિશુદ્ધ દેખતા હૈ । પરમાવધિ જો અવધિજ્ઞાન હોતા હૈ વહ સૂક્ષ્મ,  
સૂક્ષ્મતર, સૂક્ષ્મતમ દ્રવ્ય કો દેખતા હુઆ સબ સે સૂક્ષ્મ પરમાણુ કો ભી  
દેખને વાલા હોતા હૈ । યહી અવધિજ્ઞાન કી વર્દિમાનના કા તાત્ત્વિક ફલ  
હૈ । અલોકાકાશમેં તો લોકપ્રમાણ અસંખ્યેય આકાશખંડોમેં દ્રવ્યદર્શન  
કી ઇસમેં સામર્થ્ય હી હૈ । વહાં કોઈ ભી દૂસરા દ્રવ્ય હૈ નહીં અતઃ વહ  
ઉસ અપેક્ષા વહાં અનભિવ્યક્ત હૈ ॥ ગા. ૨ ॥

ઉત્તર—તેની વૃદ્ધિનું આ ક્ષણ થોડું જ છે કે તે અલોકાકાશમાં પણ ને  
દ્રવ્ય હોય તો તેને જોઈને પોતાની વૃદ્ધિની સફળતા સાર્થક કરે, અને ત્યાં  
ને દ્રષ્ટવ્ય દ્રવ્ય નથી તો તેના અભાવમાં તે પોતાની વૃદ્ધિમાં નિષ્ફળ મનાય !  
વૃદ્ધિનું તાત્પર્ય તો ફક્ત એટલું જ છે કે વિશુદ્ધિવશથી લોકથી પણ બહાર  
વધેલ તે અવધિજ્ઞાન પોતાના વિષયભૂત લોકસ્થ રૂપી દ્રવ્યને જ અધિકતરરૂપે  
વિશુદ્ધ જોવે છે. જે પરમાવધિ અવધિજ્ઞાન હોય છે તે સૂક્ષ્મ, સૂક્ષ્મતર, અને  
સૂક્ષ્મતમ દ્રવ્યને જોતાં જોતાં બધા કરતાં સૂક્ષ્મ પરમાણુને પણ જોનાર હોય  
છે. આજ અવધિજ્ઞાનની વૃદ્ધિનું તાત્ત્વિક ક્ષણ છે. અલોકાકાશમાં તો લોકપ્રમાણ  
અસંખ્યેય આકાશખંડોમાં દ્રવ્યદર્શનની તેનામાં શક્તિ છે જ. ત્યાં કોઈ પણ  
બીજું દ્રવ્ય નથી તેથી તે અપેક્ષાએ ત્યાં અનભિવ્યક્ત છે ॥ ગા. ૨ ॥

મૂલમ્—અંગુલમાવલિયાણં, ભાગમસંખેજ્જ દોસુ સંખેજ્જાં ॥

અંગુલમાવલિયંતો, આવલિયા અંગુલપુહુતં ॥ ૩ ॥

છાયા--અંગુલાવલિકયોઃ, ભાગમસંખેયં દ્વયોઃ સંખેયમ્ ।

અંગુલમાવલિકાન્તઃ, આવલિકામંગુલપૃથક્ત્વમ્ ॥ ૩ ॥

ટીકા--‘અંગુલમાવલિયાણં’ ઇત્યાદિ । અંગુલમિહ ક્ષેત્રાધિકારાત્ પ્રમાણાંગુલં ગૃહ્યતે । અવધ્યધિકારાદુત્તરેષાંગુલમિતિ ચ કેચિદાહુઃ । અસંખ્યેયસમય-સંઘાતાત્મકઃ કાલવિશેષ આવલિકા । અંગુલં ચાવલિકા ચ અંગુલાવલિકે, તયોરંગુલાવલિકયોર્ભાગમસંખેયં પश्यति अवधिज्ञानी ।

યહાં તક અવધિજ્ઞાન કા જઘન્ય ઔર ઉત્કૃષ્ટ વિષયભૂત ક્ષેત્ર બત-  
લાયા ગયા હૈ । इन दोनों के बीच का जो क्षेत्र है वह सब मध्यमक्षेत्र  
है, इस मध्यम क्षेत्रविशेषमें जो कालका मान होता है, और जितने  
कालमें वह मध्यमक्षेत्र होता है इस बात को सूत्रकार चार गाथाओं  
द्वारा स्पष्ट करते हैं—

‘અંગુલમાવલિયાણં’ ઇત્યાદિ ।

ક્ષેત્ર કા અધિકાર હોને સે યહાં અંગુલ-શબ્દ સે પ્રમાણાંગુલ ગ્રહણ  
કિયા હૈ । कोई २ ऐसा भी कहते हैं कि अवधिज्ञान का अधिकार होने  
से अंगुल-शब्द से उत्तरेषांगुल लिया गया है । असंख्यात समय का  
समुदायरूप कालविशेष है उसका नाम आवलिका है । अवधिज्ञानी  
अंगुल एवं आवलिका के असंख्यातवें भाग को जानता है, देखता है ।

અહીં સુધી અવધિજ્ઞાનનું જઘન્ય અને ઉત્કૃષ્ટ વિષયભૂત ક્ષેત્ર બતાવ્યું  
છે. તે બંનેની વચ્ચેનું જે ક્ષેત્ર છે તે બધું મધ્યમ ક્ષેત્ર છે. આ મધ્યમ ક્ષેત્ર  
વિશેષમાં જે કાળનું માન હોય છે, અને જેટલા કાળમાં તે મધ્યમક્ષેત્ર થાય  
છે તે વાતને સૂત્રકાર ચાર ગાથાઓ વડે સ્પષ્ટ કરે છે—“અંગુલમાવ-  
લિયાણં” ઇત્યાદિ.

ક્ષેત્રનો અધિકાર હોવાથી અહીં ‘અંગુલ’ શબ્દથી પ્રમાણાંગુલ ગ્રહણ  
કરેલ છે. કોઈ કોઈ એવું પણ કહે છે કે અવધિજ્ઞાનનો અધિકાર હોવાથી  
અંગુલ-શબ્દથી ઉત્તરેષાંગુલ લેવાયું છે. અસંખ્યાત સમયના સમુદાયરૂપ જે  
કાળવિશેષ છે, તેનું નામ આવલિકા છે. અવધિજ્ઞાની અંગુલ અને આવલિકાના  
અસંખ્યાતમા ભાગને જાણે છે, દેખે છે. તેનું તાત્પર્ય આ પ્રમાણે છે—જ્યારે

एतदुक्तं भवति—अवधिज्ञानी यदा क्षेत्रतोऽंगुलस्यासंख्येयभागमात्रं पश्यति तदा कालतः—आवलिकाया अप्यसंख्येयमेव भागमतीतमनागतं च पश्यतीति । क्षेत्रकालदर्शनं चोपचारेणोच्यते । यतः क्षेत्रतः क्षेत्रव्यवस्थितानि दर्शनयोग्यानि द्रव्याणि पश्यति, कालतस्तु द्रव्यपर्यायान् विवक्षितकालान्तर्वर्तिनः पश्यत्यवधिर्न तु क्षेत्रकालौ, तस्य रूपिद्रव्यालम्बनत्वात् । एवमग्रेऽपि सर्वत्र द्रष्टव्यम् । इह गाथात्रयेऽपि ‘जानाति, पश्यति’ इति क्रियापदमध्याहार्यम् ।

तथा—‘दोसु संखिज्जा’ इति—द्वयोः=अंगुलावलिकयोः संख्येयं भागं पश्यति । यदाऽवधिज्ञानी—अंगुलस्य संख्येयभागमात्रं पश्यति तदा—आवलिकाया अपि संख्येयमेव भागं पश्यतीत्यर्थः ।

इस का तात्पर्य इस प्रकार से है—जब अवधिज्ञानी क्षेत्र की अपेक्षा अंगुल के असंख्येयभागमात्र क्षेत्र को देखता है उस समय वह काल की अपेक्षा आवलिका के असंख्यातवे भागमात्र ही अतीत अनागत काल को भी देखता है । क्षेत्र और काल को अवधि देखता है, यह तो उपचार से कहा जाता है, कारण कि क्षेत्र की अपेक्षा क्षेत्रव्यवस्थित दर्शनयोग्य द्रव्यों को ही अवधिज्ञानी देखता है, और काल की अपेक्षा विवक्षित कालान्तर्वर्ती पुद्गलद्रव्य की पर्यायों को ही देखता है, क्षेत्र और काल को नहीं देखता है, क्यों कि ये अमूर्त्तिक हैं, और अवधिज्ञान का विषय मूर्त्तिक द्रव्य है । “जानाति पश्यति” इन क्रियापदों का अध्याहार आगेकी तीन गाथाओंमें और लगा लेना चाहिये । अवधिज्ञानी जीव जिस समय अंगुल के असंख्येयभागमात्र क्षेत्र को देखता है, उस समय वह आवलिका के संख्येयभाग मात्र काल को भी देखता है ।

અવધિજ્ઞાની ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ આંગળના અસંખ્યેય ભાગમાત્ર ક્ષેત્રને દેખે છે તે વખતે તે કાળની અપેક્ષાએ આવલિકાના અસંખ્યાતમા ભાગમાત્ર જ અતીત (ભૂત) અનાગત (ભવિષ્ય) કાળને પણ દેખે છે. ક્ષેત્ર અને કાળને અવધિ ‘દેખે છે’ એ તો ઉપચારથી કહેવાય છે, કારણ કે ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ ક્ષેત્રવ્યવસ્થિત દર્શનયોગ્ય દ્રવ્યોને જ અવધિજ્ઞાની દેખે છે, અને કાળની અપેક્ષાએ વિવક્ષિત કાલાન્તર્વર્તી પુદ્ગલ દ્રવ્યની પર્યાયોને જ જાણે છે, ક્ષેત્ર અને કાળને જાણતા નથી, કારણ કે તેઓ અમૂર્તિક છે. અને અવધિજ્ઞાનનો વિષય મૂર્તિક દ્રવ્ય છે. “જાનાતિ, પશ્યતિ” આ ક્રિયાપદોનું અધ્યાહાર આંગળની ત્રણ ગાથાઓમાં વધુમાં લગાડી લેવું જોઈએ. અવધિજ્ઞાની જીવ જે સમયે આંગળના અસંખ્યાતમા ભાગમાત્ર ક્ષેત્રને દેખે છે, તે સમયે તે આવલિકાના સંખ્યેયભાગમાત્ર કાળને પણ દેખે છે.



તથા—‘ અંગુલમાવલિઅંતો ’ ઇતિ । યદા ક્ષેત્રતોડંગુલં પશ્યતિ તદા કાલત આવલિકાન્તઃ=આવલિકાયા અન્તરે, ન તુ વહિઃ, કિચિન્ન્યૂનામાવલિકાં પશ્યતીત્યર્થઃ । તથા—‘ આવલિયા અંગુલપુહુત્તં ’ ઇતિ, યદા કાલત આવલિકાં પશ્યતિ તદા ક્ષેત્રતોડંગુલપૃથક્ત્વમ્-અંગુલપૃથક્ત્વપરિમિતં ક્ષેત્રં પશ્યતિ । પૃથક્ત્વં ચ-શાસ્ત્રપરિભાષયા ‘દ્વિપ્રમૃતિ નવપર્યન્તા સંખ્યા’ ઇતિ સર્વત્ર દ્રષ્ટવ્યમ્ ॥ગા.૩॥

તથા ક્ષેત્રની અપેક્ષા જિસ સમય વહ એકઅંગુલપ્રમાણ ક્ષેત્ર કો દેખતા હૈં ઉસ સમય વહ કાલની અપેક્ષા કિચિત્ ન્યૂન આવલિકાપ્રમાણ કાલ કો બી દેખતા હૈં । જિસ સમય કાલની અપેક્ષા એક આવલિકા પ્રમાણ કાલ કો દેખતા હૈં ઉસ સમય વહ ક્ષેત્રની અપેક્ષા અંગુલપૃથક્ત્વપરિમિત ક્ષેત્ર કો દેખતા હૈં । ‘પૃથક્ત્વ’ યહ દો સે લેકર નૌ પર્યન્તની સંખ્યા કા નામ શાસ્ત્રીય પરિભાષામેં બતલાયા ગયા હૈં ।

ભાવાર્થ—ઇસ ગાથામેં ક્ષેત્ર ઓર કાલ કો વિષય કરનેની વાત સૂત્રકાર ને કહી હૈં । યદ્યપિ ક્ષેત્ર ઓર કાલ, યે દોનોં અમૂર્તિક હૈં, ઇન્હેં અવધિજ્ઞાની નહીં જાન સકતા હૈં, કારણ અવધિજ્ઞાન કા વિષય મૂર્તિક પદાર્થ હી બતલાયા ગયા હૈં । ઇસલિયે જહાં એસા કહા ગયા હૈં કિ અવધિજ્ઞાની ક્ષેત્ર ઓર કાલ કો ઇતને ૨ રૂપમેં જાનતા હૈં વહાં એસા હી જાનના

તથા ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ જ્યારે તે એકઅંગુલપ્રમાણ ક્ષેત્રને દેખે છે તે સમયે તે કાળની અપેક્ષાએ કાંઈક ઓછા આવલિકા પ્રમાણ કાળને પણ દેખે છે જે સમયે કાળની અપેક્ષાએ એક આવલિકા પ્રમાણ કાળને દેખે છે તે સમયે તે ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ અંગુલપૃથક્ત્વપરિમિત ક્ષેત્રને દેખે છે. “ પૃથક્ત્વ ” આ બેથી લઈને નવ સુધીની સંખ્યાનું નામ શાસ્ત્રીયપરિભાષામાં બતાવવામાં આવ્યું છે.

ભાવાર્થ—આ ગાથામાં ક્ષેત્ર અને કાળને વિષય કરવાની વાત સૂત્રકારે કહી છે. જો કે ક્ષેત્ર અને કાળ એ બન્ને અમૂર્તિક છે, તેમને અવધિજ્ઞાની જાણી શકતો નથી, કારણ કે અવધિજ્ઞાનનો વિષય મૂર્તિક પદાર્થ જ બતાવાયો છે. તેથી જ્યાં એવું કહેવાયું છે કે અવધિજ્ઞાની ક્ષેત્ર અને કાળને આટલા રૂપમાં જાણે છે ત્યાં એમ જ જાણવું જોઈએ કે એટલા ક્ષેત્રગત અને કાળગત રૂપી



मूलम्—हृत्थम्मि सुहुत्तंतो दिवसंतो गाउयम्मि बोद्धव्वो ॥

जोयणदिवसपुहुत्तं, पक्खंतो पन्नवीसाओ ॥ ४ ॥

छाया—हस्ते मुहूर्तान्तो, दिवसान्तो गव्यूते बोद्धव्यः ।

योजनदिवसपृथक्त्वं, पक्षान्तः पञ्चविंशतिम् ॥ ४ ॥

टीका—‘ हृत्थम्मि सुहुत्तंतो ’ इत्यादि । हस्ते=क्षेत्रतो हस्तप्रमाणक्षेत्र-

चाहिये कि उतने क्षेत्रगत और कालगत रूपी द्रव्य को ही वह जानता है । जिस समय यह अंगुल के असंख्यातवे भागमात्रगत द्रव्य को जानेगा, उस समय यह आवलिका के असंख्यातवे भाग गत द्रव्यपर्यायों को भी जानेगा, इससे अधिक कालगत द्रव्यपर्यायों को नहीं जान सकेगा । तथा—जिस समय यह अंगुल के संख्यातवे भाग गत द्रव्य को जानेगा, उस समय यह आवलिका के संख्यातवे भागगत ही द्रव्यपर्यायों का जानेगा । इसी तरह जब यह क्षेत्र की अपेक्षा अंगुलपरिमित क्षेत्रान्तर्गत वस्तु-द्रव्य-को जानेगा उस समय यह काल की अपेक्षा किञ्चिन्न्यून आवलिकान्तर्गत द्रव्यपर्यायों को भी जानेगा । तथा जब यह काल की अपेक्षा आवलिकाप्रमाण काल का जाननेवाला होगा तो उस समय यह अंगुलपृथक्त्वपरिमित क्षेत्र का जानने वाला होगा ॥ गा. ३ ॥

‘ हृत्थम्मि सुहुत्तंतो ’ इत्यादि ।

क्षेत्र की अपेक्षा—हस्तप्रमाण क्षेत्र को विषय करने वाला अवधिज्ञान

द्रव्यने ज ते जणु छे जे समये ते अंगुलना असंख्यातमात्रगत  
द्रव्यने जणुशे ते समये ते आवलिकाना असंख्यातमात्रगत द्रव्यपर्या-  
येने पणु जणुशे. तेनाथी वधारे कालगत द्रव्यपर्यायेने नही जणु शके. तथा  
—जे समये ते अंगुलना असंख्यातमात्रगत द्रव्यने जणुशे ते समये ते  
आवलिकाना संख्यातमात्रगत ज द्रव्यपर्यायेने जणुशे. जेज रीते न्यारे ते  
क्षेत्रनी अपेक्षाये अंगुलपरिमितक्षेत्रान्तर्गत वस्तु-द्रव्यने जणुशे ते समये ते  
काणनी अपेक्षाये थोडा ओछा आवलिकान्तर्गत द्रव्यपर्यायेने पणु जणुशे.  
तथा न्यारे ते काणनी अपेक्षाये आवलिकाप्रमाण काणने ज्ञाता थशे त्यारे  
ते समये ते अंगुलपृथक्त्वपरिमित क्षेत्रने पणु ज्ञाता थशे ॥ गा ३ ॥

“ हृत्थम्मि सुहुत्तंतो ” इत्यादि.

क्षेत्रनी अपेक्षाये हस्तप्रमाण क्षेत्रने विषय करनाइ अवधिज्ञान काणनी

વિષયોઽવધિઃ કાલતો મુહૂર્ત્તન્તઃ=કિશ્ચિન્ન્યૂનં મુહૂર્તં પશ્યતીત્યર્થઃ । અવધ્યવધિમ-  
તોરભેદોપચારાદવધિઃ પશ્યતીત્યુચ્યતે । ‘દિવસંતો ગાઉયમ્મિ વોદ્ધવ્વો’ इति, यदा  
कालतः दिवसान्तः=किश्चिन्न्यूनं दिवसं पश्यति तदा-क्षेत्रतो गव्यूते-गव्यूतविष-  
योऽवधिर्वोद्वव्यः, क्रोशपरिमितक्षेत्रं पश्यतीत्यर्थः । ‘जोयणदिवसपुहुत्तं’ योजन-  
दिवसपृथक्त्वम् ’ इति, क्षेत्रतः-योजनक्षेत्रविषयोऽवधिः, कालतो दिवसपृथक्त्वं  
पश्यति । ‘पक्खंतो पन्नवीसाओ’ ‘पक्षान्तः पञ्चविंशतिम्’ इति । यदा कालतः  
पक्षान्तः=किश्चिन्न्यूनं पक्षं पश्यति तदा क्षेत्रतः पञ्चविंशतिः=पञ्चविंशतियोजनानि  
पश्यति ॥ गा. ४ ॥

મૂલમ્—ભરહમ્મિ અડ્ઢમાસો, જંબુદ્વીવંમિ સાહિઓ માસો ।

વાસં ચ મણુયલોએ, વાસપુહુત્તં ચ રુયગમ્મિ ॥૫॥

છાયા—ભરતેઽર્ધમાસો, જમ્બૂદ્વીપે સાધિકો માસઃ ।

વર્ષં ચ મનુજ્યલોકે, વર્ષપૃથક્ત્વં ચ રુચકે ॥ ૫ ॥

કાલ કી અપેક્ષા કિશ્ચિત્ ન્યૂન એક મુહૂર્ત કો દેખતા હૈ । સૂત્રમેં જો  
એસા કહા હૈ કિ અવધિ દેખતા હૈ વહ અવધિજ્ઞાનીમેં અમેદ કે ઉપચાર  
સે હી કહા ગયા હૈ । જિસ સમય કાલ કી અપેક્ષા અવધિજ્ઞાન કુછ કમ  
એક દિવસરૂપ કાલ કો જાનતા હૈ ઉસ સમય ક્ષેત્ર કી અપેક્ષા વહ ગવ્યૂ-  
તિપરિમિત ક્ષેત્ર કો—એક કોશ પ્રમાણ ક્ષેત્રસ્થિત દ્રવ્ય કો જાનતા હૈ ।  
ક્ષેત્ર કી અપેક્ષા એક યોજન ક્ષેત્રવિષયક અવધિ કાલ કી અપેક્ષા સે  
દિવસપૃથક્ત્વ કો જાનતા હૈ । તથા કાલ કી અપેક્ષા જિસ સમય અવ-  
ધિજ્ઞાન કિશ્ચિન્ન્યૂન એક પક્ષકો જાનતા હૈ ઉસ સમય વહ ક્ષેત્રકી અપેક્ષા  
પચીસયોજનપરિમિત ક્ષેત્ર કો જાનતા હૈ ॥ગા. ૪॥

અપેક્ષાએ કાંઈક ન્યૂન એક મુહૂર્તને દેખે છે. સૂત્રમાં જે એવું કહ્યું છે કે  
‘અવધિ દેખે છે’ તે અવધિજ્ઞાન અને અવધિજ્ઞાનીમાં અભેદના ઉપચારથી જ  
કહેલ છે. જે સમયે કાળની અપેક્ષાએ અવધિજ્ઞાન થોડા ઓછા એક દિવસરૂપ  
કાળને જાણે છે તે સમયે ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ તે ગવ્યૂતિપરિમિત ક્ષેત્રને—એક કોશ  
પ્રમાણ ક્ષેત્રસ્થિત દ્રવ્યને—જાણે છે. ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ એકયોજનક્ષેત્રવિષયક  
અવધિ કાળની અપેક્ષાએ દિવસપૃથક્ત્વને જાણે છે. તથા કાળની અપેક્ષાએ જે  
સમયે અવધિજ્ઞાન કાંઈક ઓછું એક પક્ષને જાણે છે તે સમયે ક્ષેત્રની અપે-  
ક્ષાએ પચીસયોજનપરિમિત ક્ષેત્રને જાણે છે. ॥ગા. ૪॥

टीका—‘ भरहम्मि अड्ढमासो ’ इत्यादि । क्षेत्रतः—भरते=भरतक्षेत्रविषयेऽ-  
वधौ जाते सति कालतोऽर्धमासस्तद्विषयत्वेन बोद्धव्यः । ‘जंबुद्वीवम्मि साहिओ मासो’  
इति, क्षेत्रतो—जम्बूद्वीपविषये तु अवधौ, कालतः साधिको मासः=किञ्चिदधिकमास-  
विषयकोऽवधिर्भवति । ‘वासं च मण्यलोए ’ इति, क्षेत्रतो मनुष्यलोके=अर्धतृतीय-  
द्वीपसमुद्रपरिमाणमनुष्यलोकविषयेऽवधौ जाते सति कालतो वर्षं=संवत्सरपर्यन्तं  
पश्यतीत्यर्थः । तथा—‘ वासपुहुत्तं च रुयगम्मि ’ इति, क्षेत्रतो रुचकाख्यवाह्यद्वीप-  
विषयकेऽवधौ जाते सति कालतः वर्षपृथक्त्वं पश्यतीत्यर्थः ॥ ५ ॥

मूलम्—संखेज्जम्मि उ काले, दीवसमुद्दा वि हुंति संखेज्जा ।

कालम्मि असंखेज्जे, दीवसमुद्दा उ भइयव्वा ॥६॥

छाया—संख्येये तु काले, द्वीपसमुद्रा अपि भवन्ति संख्येयाः ।

काले असंख्येये, द्वीपसमुद्रास्तु भाज्याः ॥ ६ ॥

‘ भरहम्मि अड्ढमासो ’ इत्यादि ।

क्षेत्र की अपेक्षा—भरतक्षेत्र को विषय करनेवाले अवधिज्ञान के  
उत्पन्न होने पर काल की अपेक्षा वह अवधिज्ञान अर्धमास को—पन्द्रह  
दिन को विषय करनेवाला होगा । जो अवधिज्ञान क्षेत्र की अपेक्षा  
जम्बूद्वीप को विषय करनेवाला उत्पन्न होगा वह अवधिज्ञान काल की  
अपेक्षा कुछ अधिक एक मास को विषय करनेवाला होगा । इसी तरह  
जो अवधिज्ञान अढाई द्वीप को विषय करनेवाला उत्पन्न होगा वह  
काल की अपेक्षा एक वर्ष पर्यन्त के काल का ज्ञाता होगा । तथा क्षेत्र  
की अपेक्षा जो रुचक नाम के द्वीप को विषय करनेवाला अवधि होगा  
वह काल की अपेक्षा वर्षपृथक्त्व का जाननेवाला होगा ॥ गा० ५ ॥

“ भरहम्मि अड्ढमासो ” इत्यादि.

क्षेत्रनी अपेक्षाये भरत क्षेत्रने विषय करनाइं अवधिज्ञान उत्पन्न यतां  
काणनी अपेक्षाये ते अवधिज्ञान अर्धा मासने (पंद्रह दिनने) विषय करनाइं  
इशे अवधिज्ञान क्षेत्रनी अपेक्षाये जम्बूद्वीपने विषय करनाइं उत्पन्न थशे ते  
अवधिज्ञान काणनी अपेक्षाये अेक मास करतां कंधक वधु काण विषय करनाइं  
इशे. अेज प्रमाणे जे अवधिज्ञान अढाईद्वीपने विषय करनाइं उत्पन्न थशे ते  
काणनी अपेक्षाये अेक वर्ष सुधीना काणनुं साता इशे तथा क्षेत्रनी अपेक्षाये  
जे इयक नामना द्वीपने विषय करनाइं अवधि इशे-ते काणनी अपेक्षाये वर्ष  
पृथक्त्वनुं ज्ञाणुनार इशे. ॥गा. पा॥

टीका—‘संखेज्जमि उ काले’ इत्यादि । ‘संख्येये’ इति । संख्यायते, इति संख्येयः, स च संवत्सरमासादिरूपोऽपि भवति, अत इह ‘तु’ शब्दो विशेषणार्थः कृतः । कथंभूतकाले ? संख्येये=वर्षसहस्रात् परोऽत्र संख्येय-शब्देन गृह्यते, तस्मिन् वर्षसहस्रात् परतोवर्तिनि काले-असंख्येयकालात् प्राक्, कालतः=संख्येयकालविषयकेऽवधौ जाते सति, क्षेत्रतः संख्येया द्वीपसमुद्रास्तस्यावधेर्विषया भवन्ति । अपि-शब्दान्महानेकोऽपि तदेकदेशोऽप्यवधेर्विषयो भवति । अयमर्थः-असंख्ययोजनप्रमाणस्वयंभूरमणद्वीपसमुद्रात्मकं महान्तमेकं पश्यति, तथा स्वयंभूरमणद्वीपसमुद्रसमुत्पन्नतिरश्चोऽवधिस्तदेकदेशं योजनप्रमाणं पश्यतीति ।

तथा—‘कालमि असंखिज्जे’ इत्यादि । कालतोऽसंख्येये=पल्योपमादि-

‘संखेज्जमि उ काले’ इत्यादि ।

इस गाथा में संख्येय-शब्द से एक हजार वर्ष के बाद का और असंख्यात वर्ष से पहिले का काल ग्रहण किया गया है । जो अवधिज्ञान काल की अपेक्षा संख्येय काल को विषय करनेवाला होगा वह अवधिज्ञान क्षेत्र की अपेक्षा संख्यात द्वीप और समुद्रों को विषय करनेवाला होगा । इसी तरह जो अवधिज्ञान काल की अपेक्षा संख्यात काल को विषय करनेवाला होगा, वह अवधिज्ञान असंख्यातयोजनप्रमाण अन्तिम स्वयंभूरमण द्वीप और स्वयंभूरमणसमुद्ररूप एक महान क्षेत्र को भी जाननेवाला होगा । तथा स्वयंभूरमण द्वीप और समुद्र में उत्पन्न हुए तिर्यञ्च का अवधिज्ञान उसके योजनप्रमाण एकदेश को विषय करनेवाला होता है ।

तथा काल की अपेक्षा जो अवधिज्ञान पल्योपम आदि असंख्येय

“संखेज्जमि उ काले” इत्यादि.

આ ગાથામાં સંખ્યેય શબ્દ વડે એક હજાર વર્ષ પછીનો અને અસંખ્યાત વર્ષ પહેલાનો કાળ ગ્રહણ કરેલ છે. જે અવધિજ્ઞાન કાળની અપેક્ષાએ સંખ્યેય કાળને વિષય કરનારું હશે. એ જ રીતે જે અવધિજ્ઞાન કાળની અપેક્ષાએ સંખ્યાત કાળને વિષય કરનારું હશે તે અવધિજ્ઞાન અસંખ્યાત યોજન પ્રમાણ અન્તિમ સ્વયંભૂરમણદ્વીપ અને સ્વયંભૂરમણ સમુદ્રરૂપ એક મહાન ક્ષેત્રને પણ જાણનારું હશે, તથા સ્વયંભૂરમણ દ્વીપ અને સમુદ્રમાં ઉત્પન્ન થયેલ તિર્યંચનું અવધિજ્ઞાન તેના યોજનપ્રમાણ એક દેશને વિષય કરનારું હોય છે.

તથા કાળની અપેક્ષાએ જે અવધિજ્ઞાન પલ્યોપમ આદિ અસંખ્યેય કાળને

લક્ષણેઽવધિવિષયે સતિ, તસ્યૈવાસંખ્યેયકાલપરિચ્છેદકસ્યાવધેઃ ક્ષેત્રતઃ પરિચ્છેદ-  
તયા દ્વીપસમુદ્રાસ્તુ ભાજ્યાઃ=વિકલ્પયિતવ્યાઃ । કસ્યચિદ્-અસંખ્યેયાઃ ૨, કસ્ય-  
ચિત્ સંખ્યેયાઃ ૨, કસ્યચિદ્ એકદેશઃ ૩ इत्यर्थः । अयं भावः—

यदा इह मनुष्यस्य असंख्येयकालविषयोऽवधिरुत्पद्यते, तदानीमसंख्येया  
द्वीपसमुद्रास्तस्य विषयः । १। यदा तु बहिर्द्वीपे समुद्रे वा वर्तमानस्य कस्यचित्  
तिरश्चः असंख्येयकालविषयोऽवधिरुत्पद्यते, तर्हि तस्य संख्येया द्वीपसमुद्रास्तस्य  
विषयो भवति । २। तथा—यस्य मनुष्यस्य असंख्येयकालविषयोऽवधिर्जायते, तदानीं  
तस्य क्षेत्रतः स्वयंभूरमणस्य द्वीपस्य समुद्रस्य वा एकदेशोऽवधेर्विषयः, तथा मनुष्य-

કાલ કો વિષય કરનેવાલા હોગા उस अवधिज्ञान के क्षेत्र की अपेक्षा को  
लेकर द्वीप और समुद्र विषयतया भजनाय होंगे—किसी का वह असंख्यात  
द्वीप समुद्रों को, किसी का वह संख्यात द्वीप समुद्रों को और किसी का  
वह उनके एक देश को जाननेवाला होगा । इसका तात्पर्य इस प्रकार  
है—जिस समय यहां मनुष्य के असंख्यातकालविषयक अवधिज्ञान  
उत्पन्न होगा उस समय उस अवधिज्ञान के असंख्यात द्वीप और समुद्र  
विषयभूत होंगे, परन्तु जब बाहिर द्वीप समुद्र में वर्तमान किसी तिर्यञ्च  
के असंख्यात काल को विषय करनेवाला अवधिज्ञान उत्पन्न होगा तो  
वह उसका अवधिज्ञान संख्यात द्वीप और समुद्रों को विषय करनेवाला  
होगा । तथा जिस मनुष्य के असंख्यात काल को विषय करनेवाला  
अवधिज्ञान उत्पन्न हुआ है उसका वह अवधिज्ञान उस समय क्षेत्र की  
अपेक्षा अन्तिम स्वयंभूरमण द्वीप के और समुद्र के एक देश को विषय

વિષય કરનારું હશે તે અવધિજ્ઞાનના ક્ષેત્રની અપેક્ષાને લઈને દ્વીપ અને સમુદ્ર  
વિષયતયા ભજનીય હશે—કોઈનું તે અસંખ્યાત દ્વીપ સમુદ્રોને, કોઈનું તે સંખ્યાત  
દ્વીપ સમુદ્રોને, અને કોઈનું તે તેમના એક દેશને બાળુનારું હશે. તેનું તાત્પર્ય  
આ પ્રમાણે છે—જે સમયે અહીં મનુષ્યને અસંખ્યાતકાળવિષયક અવધિજ્ઞાન  
ઉત્પન્ન થશે તે વખતે તે અવધિજ્ઞાનના અસંખ્યાત દ્વીપ અને સમુદ્ર વિષયભૂત  
થશે, પણ બહાર દ્વીપ સમુદ્રમાં વર્તમાન કોઈ તિર્યચને અસંખ્યાતકાળને વિષય  
કરનારું અવધિજ્ઞાન ઉત્પન્ન થશે ત્યારે તેનું તે અવધિજ્ઞાન સંખ્યાત દ્વીપ અને  
સમુદ્રોને વિષય કરનારું હશે. તથા જે માણસને અસંખ્યાત કાળને વિષય કર-  
નારું અવધિજ્ઞાન ઉત્પન્ન થયું છે તેનું તે અવધિજ્ઞાન તે સમય ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ  
અન્તિમ સ્વયંભૂરમણ દ્વીપના અને સમુદ્રના એક દેશને વિષય કરનારું હશે.

ક્ષેત્રવહિર્તિર્વનઃ સ્વયંભૂરમણસમુદ્રોત્પન્નસ્ય તિરશ્ચોઽવધેસ્તદેકદેશો વિષયઃ । ક્ષેત્રપરિ-  
માણં તુ યોજનાપેક્ષયા સર્વત્રાપિ જમ્બૂદ્વીપાદારમ્ય અસંખ્યૈયદ્વીપસમુદ્રપરિમાણમવસે-  
યમ્ । અપિ ચ-સ્વયંભૂરમણમિત્ત્રા યે મનુષ્યક્ષેત્રવહિર્વર્તિનો દ્વીપસમુદ્રાસ્તત્ર સમુત્પન્નસ્ય  
તિરશ્ચોઽપ્યવધિસ્તદેકદેશવિષયકો ભવતિ ॥ ગા૦ ૬ ॥

તદેવં ક્ષેત્રવૃદ્ધૌ કાલવૃદ્ધિરનિયતા, કાલવૃદ્ધૌ તુ ક્ષેત્રવૃદ્ધિર્ભવત્યેવેતિ કથિતમ્ ,  
તદાનીં દ્રવ્યક્ષેત્રકાલભાવાનાં મધ્યે યસ્ય વૃદ્ધૌ યસ્ય વૃદ્ધિર્ભવતિ, યસ્ય ચ ન  
ભવતિ, તમર્થં बोधयितुमाह—

મૂલમ્—કાલે ચઉપહ વુડ્ઢી, કાલો મહ્યવ્વુ સ્વેત્તવુડ્ઢીણ ॥

વુડ્ઢીણ દવ્વપજ્જવ, મહ્યવ્વા સ્વેત્તકાલા ઉ ॥ ૭ ॥

છાયા—કાલે ચતુર્ણા વૃદ્ધિઃ, કાલો મજનીયઃ ક્ષેત્રવૃદ્ધયૈ ।

વૃદ્ધયૈ દ્રવ્યપર્યાયયોઃ માજ્યૌ ક્ષેત્રકાલૌ તુ ॥ ૭ ॥

करनेवाला होगा मनुष्यक्षेत्र से बहिर्वर्ती तिर्यश्च के कि जो स्वयंभूरमण  
समुद्र में उत्पन्न हुआ है उसके अवधिज्ञान का विषय स्वयंभूरमण समुद्र  
का एक देश होगा । क्षेत्र का परिमाण तो योजन की अपेक्षा सर्वत्र  
जंबूद्वीप से लेकर असंख्यातद्वीपसमुद्रपर्यंत जानना चाहिये । और  
स्वयंभूरमण समुद्र से भिन्न जितने भी मनुष्यक्षेत्रबहिर्वर्ती द्वीप और  
समुद्र हैं उनमें उत्पन्न हुए तिर्यश्च का अवधिज्ञान उनके एक देश को  
विषय करनेवाला होता है ॥ गा० ६ ॥

इस तरह क्षेत्र की वृद्धि में काल की वृद्धि अनियमित है, परन्तु काल  
की वृद्धि होनेसे क्षेत्रकी वृद्धि नियमित है—वह होती ही है, यह बात यहां  
प्रकट की गई है । जब यह बात है तो द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव, इन  
के बीच में जिसकी वृद्धि होने पर जिसकी वृद्धि होती है, और जिसकी

તથા મનુષ્ય ક્ષેત્રની બહારના તીર્થંચ કે જે સ્વયંભૂરમણ સમુદ્રમાં ઉત્પન્ન થયેલ  
છે, તેમના અવધિજ્ઞાનનો વિષય સ્વયંભૂરમણ સમુદ્રનો એક દેશ હશે. ક્ષેત્રનું  
પરિમાણ તો યોજનની અપેક્ષાએ સર્વત્ર જંબૂદ્વીપથી લઈને અસંખ્યાત દ્વીપ  
સમુદ્ર સુધી જાણવું જોઈએ. અને સ્વયંભૂરમણ સમુદ્રથી ભિન્ન જેટલાં મનુષ્ય-  
ક્ષેત્ર બહારનાં દ્વીપ અને સમુદ્ર છે તેઓમાં ઉત્પન્ન થયેલ તિર્થંચનું અવધિજ્ઞાન  
તેમના એક દેશને વિષય કરનાર હોય છે. ॥ ગા. ૬ ॥

આ રીતે ક્ષેત્રની વૃદ્ધિમાં કાળની વૃદ્ધિ અનિયમિત છે પણ કાળની વૃદ્ધિ થતા  
ક્ષેત્રની વૃદ્ધિ નિયમિત છે—તે હોય છે જ. આ વાત અહીં પ્રકટ કરેલ છે.  
જો આ વાત છે તો દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાળ અને ભાવ, તેમની વચ્ચે જેની વૃદ્ધિ



ટીકા—‘કાલે ચણ્હુવુઢ્ઠી’ ઇત્યાદિ । કાલે=અવધિવિષયે વર્ધમાને સતિ ચતુર્ણાં વૃદ્ધિઃ=દ્રવ્યક્ષેત્રકાલભાવાનાં ચતુર્ણામપિ નિયમતો વૃદ્ધિર્ભવતિ । તત્ર ભાવઃ પર્યાયરૂપઃ । કાલાત્-સૂક્ષ્મ-સૂક્ષ્મતર-સૂક્ષ્મતમાત્ ક્ષેત્રદ્રવ્યપર્યાયાણાં વૃદ્ધિર્ભવતિ । તથાહિ-કાલસ્ય સમયેઽપિ વર્ધમાને ક્ષેત્રસ્ય પ્રભૂતપ્રદેશા વર્ધન્તે, તદ્વૃદ્ધૌ ચાવશ્યંભાવિની દ્રવ્યવૃદ્ધિઃ, પ્રત્યાકાશપ્રદેશં દેશદ્રવ્યપ્રાપ્ત્યુચ્યત્, દ્રવ્યવૃદ્ધૌ ચ પર્યાયવૃદ્ધિર્ભવતિ, પ્રતિદ્રવ્યં પર્યાયવાહુલ્યાદિતિ ।

નહીં होती है इस अर्थ को समझाने के लिये अब सूत्रकार गाथा कहते हैं—

‘काले चण्ह वुड्ढी’ इत्यादि ।

કાલ કી વૃદ્ધિ હોને પર દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાલ, ઔર ભાવ, इन चारों की भी नियमतः वृद्धि होती है । यहां ‘भाव’ यह शब्द पर्याय का बोधक है । ‘काल की वृद्धि होने पर चारों की वृद्धि होती है’ इस का तात्पर्य इस प्रकार से है—जब सूक्ष्म, सूक्ष्मतर और सूक्ष्मतम रूप से अवधिज्ञान का विषयभूत काल वर्द्धित होता है तब ऐसी स्थिति में उस काल से क्षेत्र की, द्रव्य की एवं द्रव्यपर्यायों की वृद्धि होती है । काल का जब एक भी समय वर्धमान हो जाता है—तब उस समय क्षेत्र के प्रभूत प्रदेश बढ़ जाते हैं, और प्रभूतप्रदेश होने पर द्रव्य की भी वृद्धि हो जाती है, कारण आकाशरूप क्षेत्र के प्रत्येक प्रदेश पर द्रव्य की प्रचुरता रही हुई है । जब द्रव्य की प्रचुरतारूप वृद्धि हो जाती है तो इस से स्वतः यह

થતાં જેની વૃદ્ધિ થાય છે અને જેની થતી નથી, એ અર્થને સમજાવવા માટે હવે સૂત્રકાર આ ગાથા કહે છે—

“काले चण्ह वुड्ढी” इत्यादि.

કાળની વૃદ્ધિ થવાથી દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાળ અને ભાવ, એ ચારેની પણ નિયમિત વૃદ્ધિ થાય છે, અહીં “ભાવ” આ શબ્દ પર્યાયનો બોધક છે. “કાળની વૃદ્ધિ થવાથી ચારેની વૃદ્ધિ થાય છે” તેનું તાત્પર્ય આ પ્રમાણે છે—ન્યારે સૂક્ષ્મ, સૂક્ષ્મતર અને સૂક્ષ્મતમ રૂપથી અવધિજ્ઞાનનો વિષયભૂત કાળ વર્દ્ધિત થાય છે ત્યારે એવી સ્થિતિમાં તે કાળથી ક્ષેત્રની, દ્રવ્યની, અને દ્રવ્યપર્યાયોની વૃદ્ધિ થાય છે. કાળનો ન્યારે એક પણ સમય વર્ધિત થઈ જાય છે ત્યારે એ સમયે ક્ષેત્રનો પ્રભૂત પ્રદેશ વધી જાય છે, અને પ્રભૂત પ્રદેશ વધતાં જ દ્રવ્યની પણ વૃદ્ધિ થઈ જાય છે, કારણ કે આકાશરૂપ ક્ષેત્રના પ્રત્યેક પ્રદેશ પર દ્રવ્યની પ્રચુરતા રહેલ હોય છે. ન્યારે દ્રવ્યની પ્રચુરતારૂપ વૃદ્ધિ થઈ જાય છે ત્યારે



નનુ યદ્યેવં કાલે વર્ધમાને શેષસ્ય ક્ષેત્રાદિત્રયસ્ય વૃદ્ધિર્ભવતીત્યેવમેવ વક્તુમુ-  
ચિતં, કથં ચતુર્ણામપિ વૃદ્ધિરિત્યુક્તમ્ ? इति चेत् , सत्यम्—किन्तु सामान्यवचनमेतत् ।  
यथा ‘ देवदत्ते भुञ्जाने सर्वोऽपि कुटुम्बो भुङ्क्ते ’ इत्यादि । अन्यथा हि—  
तत्रापि ‘ देवदत्तं विहाय शेषोऽपि कुटुम्बो भुङ्क्ते ’ इति वक्तव्यं स्यादित्यदोषः ।

भी सिद्ध हो जाता है कि पर्यायें भी वर्धित हो जाती हैं, क्योंकि प्रत्येक  
द्रव्य में पर्यायों की बहुलता रही हुई है ।

શંકા—કાલ કી વૃદ્ધિ હોને પર તો ઇસ તરહ સે દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર ઓર  
ભાવ કી વૃદ્ધિ હોના સાવિત હોતા હૈ, કાલ કી નહીં, ફિર એસા સૂત્રકાર  
કયોં કહ રહે હૈં કિ કાલ કી વૃદ્ધિ હોને પર દ્રવ્યાદિ ચાર કી વૃદ્ધિ હોતી  
હૈ । યહાં તો એસા હી કહના ચાહિયે થા કિ કાલ કી વૃદ્ધિ હોને પર  
દ્રવ્યાદિ ત્રીન કી હી વૃદ્ધિ હોતી હૈ ?

ઉત્તર—શંકા તો ઠીક હૈ, પરન્તુ એસા જો સૂત્રકારને કહા હૈ વહ  
સામાન્યરૂપ સે હી કહા હૈ । જૈસે—દેવદત્ત કે શ્વા લેને પર “ સબ કુટુંબ  
શ્વા રહા હૈ ” એસા વ્યવહાર મેં કહ દિયા જાતા હૈ । નહીં તો એસા કહના  
ચાહિયે થા, કિ દેવદત્ત કો છોડકર શેષ કુટુંબ શ્વા રહા હૈ । કુટુંબ  
કે અન્તર્ગત તો દેવદત્ત બી આ જાતા હૈ પરન્તુ વહ તો ઊસ સમય શ્વા  
નહીં રહા હૈ—વહ તો શ્વા બુકા હૈ ફિર બી ‘ સબ કુટુંબ શ્વા રહા હૈ ’  
એસા વ્યવહાર મેં કહા હી જાતા હૈ, ઇસી તરહ કાલ કે વર્ધમાન હોને

તેનાથી આપો આપ તે પણ સિદ્ધ થઈ જાય છે કે પર્યાયો પણ વર્ધિત થઈ  
જાય છે, કારણ કે દરેક દ્રવ્યમાં પર્યાયોની પુષ્કળતા રહેલી હોય છે.

શંકા—કાળની વૃદ્ધિ થવાથી તો આ રીતે દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર અને ભાવની જ  
વૃદ્ધિ થવાનું સાબિત થાય છે, કાળની નહીં. તો પછી સૂત્રકાર એવું કેમ કહે  
છે કે કાળની વૃદ્ધિ થતાં દ્રવ્યાદિ ચારની વૃદ્ધિ થાય છે ? અહીં તો એવું જ કહેવું  
જોઈએ કે કાળની વૃદ્ધિ થવાથી દ્રવ્યાદિ ત્રણની જ વૃદ્ધિ થાય છે.

ઉત્તર—શંકા તો ખરાબર છે પણ સૂત્રકારે એવું જો કહ્યું છે તે સામાન્ય  
રૂપથી કહ્યું છે. જેમ—દેવદત્તે ખાઈ લીધાથી “ આખું કુટુંબ ખાય છે ” એવું  
વહેવારમાં કહેવાય છે. નહીં તો એવું કહેવું જોઈએ કે દેવદત્ત સિવાયનું આખું  
કુટુંબ ખાય છે. કુટુંબની અંદર તો દેવદત્ત પણ આવી જાય છે, તે તો એ  
સમયે ખાતો હોતો નથી. તેણે તો, ખાઈ લીધું છે, છતાં પણ “ આખું કુટુંબ  
ખાય છે ” એવું વ્યવહારમાં કહેવાય છે. એજ પ્રમાણે કાળની વૃદ્ધિ થવાથી દ્રવ્યાદિ

‘કાલો મહ્યવ્વુ સ્વિત્તવુઢ્ઠીય’ ઇતિ-ક્ષેત્રવૃદ્ધૌ=ક્ષેત્રસ્ય-અવધેર્વિપયસ્ય વૃદ્ધૌ=આધિક્યે સતિ કાલો મક્તવ્યઃ=મજનીયઃ, વર્ધતે વા, ન વા વર્ધતે ઇત્યર્થઃ । ક્ષેત્રં હિ અત્યન્તં સૂક્ષ્મં, કાલસ્તુ તદપેક્ષયા પરિસ્થૂલઃ । પ્રભૂતે ક્ષેત્રે વૃદ્ધિગતે કાલો વર્ધતે, ન તુ સ્વલ્પે ક્ષેત્રે ઇતિ ભાવઃ । અન્યથા હિ યદિ ક્ષેત્રસ્ય પ્રદેશાદિવૃદ્ધૌ કાલસ્ય નિયમેન સમયાદિવૃદ્ધિઃ સ્યાત્, તદાંગુલમાત્રે શ્રેણિરૂપેઽપિ વર્ધિતે ક્ષેત્રે કાલસ્ય અસંખ્યેયાવસર્પિણીરૂપસ્ય વૃદ્ધિઃ સ્યાત્ । તથા ચ વક્ષ્યતિ-‘અંગુલસેઢીમિત્તે, ઓસપ્પિ-ળીઓ અસંખેજ્જા’ ઇતિ, તતથ-‘આવલિયા અંગુલપુહુત્તં’ ઇતિ તૃતીયગાથોક્તં વિરુ-

પર દ્રવ્યાદિ ચારોં કી વૃદ્ધિ હોતી હૈ યહ કથન મી વ્યાવહારિક હૈ કારણ કિ તીનકી હી વૃદ્ધિ હોતી હૈ, કાલ તો સ્વયં વર્ધમાન હૈ હી ।

અવધિજ્ઞાન કે વિષયભૂત ક્ષેત્ર કી વૃદ્ધિ હોને પર કાલ મેં વૃદ્ધિ મજનીય હૈ-હોતી મી હૈ ઓર નહીં મી હોતી હૈ । ક્ષેત્ર અત્યન્ત સૂક્ષ્મ હૈ ઓર કાલ ઉસકી અપેક્ષા સ્થૂલ હૈ । જબ અવધિજ્ઞાન કા પ્રભૂત ક્ષેત્ર વઢ જાતા હૈ તબ તો ઉસકે કાલ મેં મી વર્ધમાનતા આ જાતી હૈ, પરન્તુ જબ ક્ષેત્ર અલ્પ રહતા હૈ ઉસ સમય કાલ મેં વૃદ્ધિ નહીં હોતી હૈ । યદિ એસા ન માના જાવે તો જબ ક્ષેત્ર મેં પ્રદેશ આદિ રૂપ સે વૃદ્ધિ હોગી તો ઉસ સમય મેં કાલ કી મી નિયમ સે સમયાદિરૂપ સે વૃદ્ધિ હોગી હી, એસી સ્થિતિ મેં ક્ષેત્ર કે અંગુલમાત્ર-શ્રેણિરૂપ મેં મી વઢને પર અસંખ્યેય અવસર્પિણીરૂપ સે કાલ મેં વૃદ્ધિ હોને લોગી-“અંગુલસેઢીમિત્તે ઓસ-પ્પિળીઓ અસંખિજ્જા” એસા સિદ્ધાન્ત વચન હૈ તબ તૃતીય ગાથા મેં જો એસા કહા હૈ કિ-“આવલિયા અંગુલપુહુત્તં” અર્થાત્-જિસ

ચારેની વૃદ્ધિ થાય છે. આ કથન પણ વ્યાવહારિક છે, કારણ કે ત્રણની જ વૃદ્ધિ થાય છે; કાળ તો જાતે જ વૃદ્ધિ પામેલો જ છે. અવધિજ્ઞાનના વિષયભૂત ક્ષેત્રની વૃદ્ધિ થવાથી કાળમાં વૃદ્ધિ ભજનીય છે-થાય પણ છે અને નથી પણ થતી. ક્ષેત્ર અત્યન્ત સૂક્ષ્મ છે, અને કાળ તેની અપેક્ષાએ સ્થૂળ છે. જ્યારે અવધિજ્ઞાનનું પ્રભૂત ક્ષેત્ર વધી જાય છે ત્યારે તો એના કાળમાં પણ વૃદ્ધિ આવી જાય છે, પણ જ્યારે ક્ષેત્ર અલ્પ રહે છે તે સમયે કાળમાં વૃદ્ધિ થતી નથી. જો એવું માનવામાં ન આવે તો જ્યારે ક્ષેત્રમાં પ્રદેશ આદિ રૂપે વૃદ્ધિ થશે ત્યારે તે સમયે કાળની પણ નિયમથી સમયાદિરૂપથી વૃદ્ધિ થશે જ, એવી સ્થિતિમાં ક્ષેત્રના અંગુલમાત્ર-શ્રેણિરૂપમાં વધવાથી અસંખ્યેય અવસર્પિણીરૂપથી કાળમાં વૃદ્ધિ થવા લાગશે-“અંગુલસેઢીમિત્તે ઓસપ્પિળીઓ અસંખિજ્જા” આવું સિદ્ધાન્ત વચન છે તો ત્રીજી ગાથામાં જે એવું કહ્યું છે કે-“આવલિયા અંગુલપુહુત્તં” અર્થાત્-જે

ધ્યેત । તસ્માત્ ક્ષેત્રવૃદ્ધૌ કાલવૃદ્ધિર્ભજનીયૈવ । દ્રવ્યપર્યાયૌ તુ ક્ષેત્રવૃદ્ધૌ નિયમાદ્ વર્ધતે એવેતિ સ્વયમેવ बोध्यमिति ।

‘વૃદ્ધીએ દ્રવ્ય-પજ્જવે’ इत्यादि । द्रव्यपर्याययोर्वृद्धौ सत्यां क्षेत्रकालौ भक्तव्यौ= भजनीयौ कदाचिद् न वा वर्धते कदाचिद् वर्धते इत्यर्थः । द्रव्यपर्यायापेक्षया क्षेत्रकालयोः परिस्थूलत्वात् । यतो द्रव्यं क्षेत्रादपि सूक्ष्मम्, एकस्मिन्नपि नभःप्रदेशेऽनन्तस्कन्धा-

સમય કાલ કી અપેક્ષા અવધિજ્ઞાની એક-આવલિકારૂપ કાલ કો દેખતા હૈ તવ વહ અંગુલપૃથક્ત્વપરિમિત ક્ષેત્ર કો દેખતા હૈ” સો વહ વિરુદ્ધ પડેગા, ક્યોંકિ અંગુલપૃથક્ત્વપરિમિત ક્ષેત્ર કે વિષય હોને પર અસંખ્યેય અવસર્પિણી રૂપ મેં કાલ વર્દિત હૈ અતઃ આવલિકારૂપ કાલ કો ન દેખકર અસંખ્યેય અવસર્પિણીરૂપ કાલ કો હી દેખના ચાહિયે, પરન્તુ એસા નહીં હૈ, કારણ યહાં પ્રભૂતરૂપ મેં ક્ષેત્ર કી વૃદ્ધિ નહીં હુઈ હૈ, અતઃ ક્ષેત્ર કી વૃદ્ધિ મેં કાલ કી વૃદ્ધિ ભજનીય હી માનની ચાહિયે । જબ ક્ષેત્ર કી વૃદ્ધિ હોતી હૈ તવ દ્રવ્ય ઔર પર્યાય, એ દોનોં હી નિયમતઃ વર્ધિત હોતે હૈ, યહ સ્વયં સમજાને જૈસી બાત હૈ ।

જબ દ્રવ્ય ઔર પર્યાય મેં વૃદ્ધિ હોતી હૈ ઉસ સમય ક્ષેત્ર ઔર કાલ મેં વૃદ્ધિ ભજનીય હોતી હૈ—એ કમી બઢતે મી હૈ ઔર કમી નહીં મી બઢતે હૈ, ક્યોંકિ દ્રવ્ય ઔર પર્યાય કી અપેક્ષા ક્ષેત્ર ઔર કાલ સ્થૂલ હૈ । એક હી નભઃપ્રદેશરૂપ ક્ષેત્ર મેં અનંત સ્કંધોં કા અવગાહ હો રહા હૈ,

સમય કાળની અપેક્ષાએ અવધિજ્ઞાન એક આવલિકારૂપ કાળને દેખે છે ત્યારે તે અંગુલપૃથક્ત્વપરિમિત ક્ષેત્રને દેખે છે” તે વિરુદ્ધ પડશે. કારણ કે અંગુલપૃથક્ત્વપરિમિતક્ષેત્રનો વિષય હોવાથી અસંખ્ય અવસર્પિણીરૂપમાં કાળ વર્દિત છે. તેથી આવલિકારૂપ કાળને ન જોતાં અસંખ્યેય અવસર્પિણીરૂપ કાળને જ જોવો જોઈએ, પણ એવું નથી, કારણ કે અહીં પ્રભૂતરૂપમાં ક્ષેત્રની વૃદ્ધિ થઈ નથી, તેથી ક્ષેત્રની વૃદ્ધિમાં કાળની વૃદ્ધિ ભજનીય જ માનવી જોઈએ. જ્યારે ક્ષેત્રની વૃદ્ધિ થાય છે ત્યારે દ્રવ્ય અને પર્યાય, એ બન્ને જ નિયમથી જ વર્ધિત થાય છે, આ બાતે જ સમજવા જેવી વાત છે.

જ્યારે દ્રવ્ય અને પર્યાયમાં વૃદ્ધિ થાય છે તે સમયે ક્ષેત્ર અને કાળમાં વૃદ્ધિ ભજનીય હોય છે—તે ક્યારેક વધે પણ છે ક્યારેક નથી પણ વધતા, કારણ કે દ્રવ્ય અને પર્યાયની અપેક્ષાએ ક્ષેત્ર અને કાળ સ્થૂળ છે એક જ નભઃપ્રદેશરૂપ ક્ષેત્રમાં અનંત સ્કંધોનો અવગાહ થઈ રહ્યો છે તેથી એ

વગાહનાત્ । દ્રવ્યાદપિ સૂક્ષ્મઃ પર્યાયઃ, એકસ્મિન્નેવ દ્રવ્યેऽનન્તપર્યાયસંભવાત્ । તસ્માદ્ દ્રવ્યપર્યાયવૃદ્ધૌ ક્ષેત્રકાલૌ ભજનીયાવેવ ભવતઃ । તથાહિ-અવસ્થિતયોરપિ ક્ષેત્રકાલયોસ્તથાવિધશુભાધ્યવસાયતઃ ક્ષયોપશમવૃદ્ધૌ દ્રવ્યં વર્ધતે એવ, અધિક-દ્રવ્યદર્શનાદિતિ ભાવઃ । દ્રવ્યવૃદ્ધૌ ચ પર્યાયા નિયમતો વર્ધન્તે । પ્રતિદ્રવ્યં સંખ્યે-યાનામસંખ્યેયાનાં વા પર્યાયાણામવધિના પરિચ્છેદસંભવાત્ । પર્યાયવૃદ્ધૌ ચ દ્રવ્ય-વૃદ્ધિર્ભાજ્યા=ભવતિ ન વા ભવતીતિ ભજનીયા । એકસ્મિન્નપિ દ્રવ્યે પર્યાયવિષયાવધિ-વૃદ્ધિસંભવેન તત્તત્પર્યાયવિશિષ્ટદ્રવ્યવૃદ્ધિર્ભવતિ । અવસ્થિતેऽપિ હિ દ્રવ્યે તથાવિધ-ક્ષયોપશમવૃદ્ધૌ પર્યાયા વર્ધન્તે, પર્યાયવૃદ્ધૌ ન દ્રવ્યવૃદ્ધિરિતિ ભાવઃ ॥

હસસે યહ નિશ્ચિત હૈ કિ ક્ષેત્ર કી અપેક્ષા દ્રવ્ય સૂક્ષ્મ હૈ, ઓર દ્રવ્ય કી અપેક્ષા ક્ષેત્ર સ્થૂલ હૈ । હસી તરહ દ્રવ્ય કી અપેક્ષા પર્યાય સૂક્ષ્મ હૈ, કારણ એક હી દ્રવ્ય મેં અનન્ત પર્યાયોં કા હોના સંભવિત હૈ, હસી લિયે દ્રવ્ય ઓર પર્યાય કી વૃદ્ધિ મેં ક્ષેત્ર ઓર કાલ કી વૃદ્ધિ ભજનીય બતલાઈ ગઈ હૈ । ક્ષેત્ર ઓર કાલ, યે અવસ્થિત હૈં તો ભી જબ તથાવિધ શુભ અધ્ય-સાય કે વશ સે અવધિજ્ઞાન મેં અવધિજ્ઞાનાવરણ કર્મ કે ક્ષયોપશમ કી વૃદ્ધિ હોતી હૈ તબ વહ અધિક દ્રવ્ય કો વિષય કરનેવાલા હોતા હૈ, હસ તરહ ક્ષેત્ર ઓર કાલ મેં અવસ્થિતતા હોને પર ભી દ્રવ્ય બઢ હી જાતા હૈ । જબ દ્રવ્ય કી વૃદ્ધિ હોતી હૈ તબ પર્યાયોં ભી નિયમતઃ બઢ જાતી હૈં, ક્યોં કિ પ્રત્યેક દ્રવ્ય મેં સંખ્યેય અથવા અસંખ્યેય પર્યાયોં કા પરિચ્છેદ હોના અવધિજ્ઞાન દ્વારા હોતા હૈ । પર્યાયોં કી વૃદ્ધિ મેં દ્રવ્ય કી વૃદ્ધિ ભજનીય હૈ-વહ હોતી ભી હૈ ઓર નહીં ભી હોતી હૈ । હસ તરહ

ચોક્કસ છે કે ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ દ્રવ્ય સૂક્ષ્મ છે અને દ્રવ્યની અપેક્ષાએ ક્ષેત્ર સ્થૂળ છે. એજ પ્રમાણે દ્રવ્યની અપેક્ષાએ પર્યાય સૂક્ષ્મ છે, કારણ કે એક જ દ્રવ્યમાં અનેક પર્યાયોનું હોવું સંભવિત છે, તેથી દ્રવ્ય પર્યાયની વૃદ્ધિમાં ક્ષેત્ર અને કાળની વૃદ્ધિ ભજનીય બતાવી છે. ક્ષેત્ર અને કાળ, એ અવસ્થિત છે, તો પણ ન્યારે તે પ્રમાણેના 'શુભ અધ્યવસાયવશથી અવધિજ્ઞાનમાં અવધિજ્ઞાનાવરણ કર્મના ક્ષયોપશમના વૃદ્ધિ થાય છે ત્યારે તે વધારે દ્રવ્યને વિષય કરનારું થાય છે. આ રીતે ક્ષેત્ર અને કાળમાં અવસ્થિતતા હોવા છતાં પણ દ્રવ્ય વધી જાય છે. ન્યારે દ્રવ્યની વૃદ્ધિ થાય છે ત્યારે પર્યાયો પણ નિયમથી જ વધી જાય છે, કારણ કે પ્રત્યેક દ્રવ્યમાં સંખ્યેય અથવા અસંખ્યેય પર્યાયોનો પરિચ્છેદ થવાનું અવધિજ્ઞાન દ્વારા થાય છે. પર્યાયોની વૃદ્ધિમાં દ્રવ્યની વૃદ્ધિ ભજનીય છે-તે થાય પણ છે અને નથી પણ થતી. આ પ્રમાણે કાળની વૃદ્ધિમાં દ્રવ્યાદિ-

નનુ ‘અંગુલમાવલિયાણં ભાગમસંખેજ્જ’ ઇત્યાદિના પરસ્પરસમ્બન્ધત્વેનાવધિ વિષયતયા પ્રોક્તયોર્જઘન્યયોર્મધ્યમયોસ્તકૃષ્ટયોશ્ચ ક્ષેત્રકાલયોરંગુલાવલિકાઽસંખ્યેય-ભાગાદિરૂપયોઃ સમ્બન્ધિનાં પરસ્પરતઃ પ્રદેશાનાં સમયાનાં ચ સંખ્યામાશ્રિત્ય કિં તુલ્યત્વમ્ ?, ઉત હીનાધિકત્વમ્ ?, ઉચ્યતે-હીનાધિકત્વમ્, તથાહિ-આવલિકાયા અસંખ્યેયભાગે જઘન્યાવધિવિષયે યે અસંખ્યાઃ સમયાસ્તદપેક્ષયા અંગુલસ્યા-સંખ્યેયભાગે જઘન્યાવધિવિષયે એવ યે અસંખ્યેયા નમઃપ્રદેશાસ્તે અસંખ્યેયગુણાઃ, એવં સર્વત્રાપ્યવધિવિષયાત્ કાલાદસંખ્યેયગુણત્વમવધિવિષયસ્ય ક્ષેત્રસ્યાવગન્તવ્યમ્।ગા.૭।

સે કાલ કી વૃદ્ધિ મેં દ્રવ્યાદિકોં મેં નિયમતઃ વૃદ્ધિ કા, ક્ષેત્રવૃદ્ધિ હોને પર કાલવૃદ્ધિ મેં ભજનીયતા કા, તથા દ્રવ્યપર્યાયોં મેં નિયમતઃ વૃદ્ધિ કા, દ્રવ્યપર્યાયોં કી વૃદ્ધિ મેં ક્ષેત્ર ઓર કાલ કી ભજનીયતા કા, દ્રવ્યવૃદ્ધિ મેં પર્યાયોં કી નિયમતઃ વૃદ્ધિ કા ઓર પર્યાયવૃદ્ધિ મેં દ્રવ્યવૃદ્ધિ કી ભજનીયતા કા સ્પષ્ટીકરણ કિયા ગયા હૈ ।

શંકા—“અંગુલમાવલિયાણં ભાગમસંખેજ્જ” ઇત્યાદિગાથાદ્વારા પરસ્પર સમ્બન્ધ હોને સે અવધિજ્ઞાન કે વિષયભૂત પ્રકટ કિયે ક્ષેત્ર ઓર કાલ કિ-જો જઘન્ય મધ્યમ, એવં ઉત્કૃષ્ટ રૂપ મેં વર્ણિત હુએ હૈં તથા જો અંગુલ એવં આવલિકા કે અસંખ્યેય ભાગ આદિ રૂપ સે પ્રકટ કિયે ગયે હૈં એસે ક્ષેત્રકે પ્રદેશોં કી, ઓર કાલકે સમયોં કી સંખ્યા મેં આપસ મેં તુલ્યતા હૈ યા હીનાધિકતા હૈ ?

ઉત્તર—હીનાધિકતા હૈ, વહ હસ પ્રકાર સે હૈ-જઘન્ય અવધિજ્ઞાન કા વિષયભૂત જો આવલિકા કા અસંખ્યાતવાં ભાગરૂપ કાલ હૈ ઉસમેં

કેામાં નિયમતઃ વૃદ્ધિનું, ક્ષેત્ર વૃદ્ધિ થતાં કાળવૃદ્ધિમાં ભજનીયતાનું, તથા દ્રવ્ય પર્યાયોમાં નિયમતઃ વૃદ્ધિનું, દ્રવ્ય-પર્યાયોની વૃદ્ધિમાં ક્ષેત્ર અને કાળની ભજનીયતાનું, દ્રવ્યવૃદ્ધિમાં પર્યાયોની નિયમતઃ વૃદ્ધિનું અને પર્યાયવૃદ્ધિમાં દ્રવ્ય વૃદ્ધિની ભજનીયતાનું સ્પષ્ટીકરણ કરાયું છે.

શંકા—“અંગુલમાવલિયાણં ભાગમસંખેજ્જ.” ઇત્યાદિગાથાદ્વારા પરસ્પર સંબંધ હોવાથી અવધિજ્ઞાનના વિષયભૂત પ્રગટ કરેલ ક્ષેત્ર અને કાળના કે-જે જઘન્ય મધ્યમ અને ઉત્કૃષ્ટ રૂપે વર્ણવેલ છે તથા જે અંગુલ અને આવલિકાના અસંખ્યેય ભાગ આદિ રૂપે પ્રગટ કરેલ છે એવા ક્ષેત્રના પ્રદેશોની અને કાળના સમયોની સંખ્યામાં અંદરે-અંદર તુલ્યતા છે કે હીનાધિકતા છે ?

ઉત્તર—હીનાધિકતા છે, તે આ પ્રમાણે છે-જઘન્ય અવધિજ્ઞાનના વિષય-ભૂત જે આવલિકાનો અસંખ્યાતમાં ભાગરૂપ કાળ છે તેમાં જેટલા અસંખ્યાત

નન્વેવં ક્ષેત્રસ્ય કાલાદસંખ્યેયગુણતા કથમવસીયતે? તત્રાહ--  
 મૂલ્મ-સુહુમો ય હોઙ કાલો, તત્તો સુહુમયરં હવઙ સ્વેત્તં ।  
 અંગુલસેઢીમેત્તે, ઓસપ્પિણિઓ અસંખ્વેજ્ઞા ॥ ૮ ॥

સે ત્તં વઙ્ઢમાણયં ઓહિનાણં ॥ સૂ૦ ૧૨ ॥

ઢાયા--સૂક્ષ્મશ્ચ ભવતિ કાલઃ, તતઃ સૂક્ષ્મતરં ભવતિ ક્ષેત્રમ્ ।

અઙ્ગુલશ્રેણિમાત્રે, અવસર્પિણ્યઃ અસંખ્યેયાઃ ॥ ૮ ॥

તદેતદ્ વર્ઢમાનકમ્ અવધિજ્ઞાનમ્ ॥ સૂ૦ ૧૨ ॥

ટીકા--“ સુહુમો ય ’ ઇત્યાદિ ।

‘ સુહુમો ય હોઙ કાલો ’ ઇતિ-યથા સૂક્ષ્મસ્તાવત્ કાલો ભવતિ, યથા ઉત્પલ-  
 પત્રશતભેદે પ્રતિપત્રભેદમસંખ્યેયાઃ સમયા લગન્તીત્યાગમે પ્રતિપાઢ્યતે । ન ચાતિ-  
 જિતને અસંખ્યાત સમય હૈં ડનકી અપેક્ષા જઘન્ય અવધિજ્ઞાન કે વિષય-  
 ભૂત હુઁ અંગુલ કે અસંખ્યાતવે આગરૂપ ક્ષેત્ર મેં હી જો અસંખ્યાત  
 પ્રદેશ હૈં વે અસંખ્યાત ગુણે હૈં । ઇસી તરહ સે સર્વત્ર અવધિ કે વિષયભૂત  
 કાલ કી અપેક્ષા અવધિ કે વિષયભૂત ક્ષેત્ર મેં અસંખ્યેય ગુણે પ્રદેશ  
 જાનને ચાહિવે ॥ ગા૦ ૭ ॥

ઇસ તરહ કે વર્ણન સે કાલ કી અપેક્ષા ક્ષેત્ર મેં અસંખ્યેયગુણતા  
 કૈસે જાની જાતી હૈ? સો કહતે હૈ--‘ સુહુમો ય હોઙ કાલો ’ ઇત્યાદિ ।

કાલ સૂક્ષ્મ હોતા હૈ, ઓર ઇસકી અપેક્ષા ક્ષેત્ર સૂક્ષ્મ હોતા હૈ ।  
 અંગુલશ્રેણિમાત્ર ક્ષેત્ર મેં અસંખ્યાત અવસર્પિણીકાલ સ્થિત હૈ । ઇસ  
 ગાથા કા ખુલાશા અર્થ ઇસ પ્રકાર હૈ-કાલ ઇતનાં સૂક્ષ્મ હોતા હૈ કિ  
 કમલ કે તરા ડપર રખે હુઁ અર્થાત્ ઁક ડપર-ઁક રખે હુઁ સો પત્રો

સમય છે તેમની અપેક્ષાએ જઘન્ય અવધિજ્ઞાનના વિષયભૂત થયેલ અંગુલનાં  
 અસંખ્યાતમાં લાગ ઇપ ક્ષેત્રમાં જ જે અસંખ્યાત પ્રદેશ છે તેઓ અસંખ્યાત  
 ગણાં છે. આ પ્રમાણે સર્વત્ર અવધિના વિષયભૂત કાળની અપેક્ષાએ અવધિના  
 વિષયભૂત ક્ષેત્રમાં અસંખ્યેય ગણાં પ્રદેશ જાણવા જોઈએ.

આ પ્રમાણેનાં વર્ણનથી કાળની અપેક્ષાએ ક્ષેત્રમાં અસંખ્યેયગુણતા કેવી  
 રીતે જાણાય છે? તો કહે છે-“ સુહુમો ય હોઙ કાલો ” ઇત્યાદિ. કાળ સૂક્ષ્મ  
 હોય છે. અને તેનાં કરતાં ક્ષેત્ર સૂક્ષ્મ હોય છે. અંગુલશ્રેણિમાત્ર ક્ષેત્રમાં  
 અસંખ્યાત અવસર્પિણી કાળ સ્થિત છે. આ ગાથાનો ખુલાસાવાર અર્થ આ પ્રમાણે  
 છે-કાળ એટલો સૂક્ષ્મ હોય છે કે કમળના તરા ડપર રાખેલાં એટલે કે એક



સૂક્ષ્મત્વેન તે પૃથગ્ વિભાવ્યન્તે । ‘તત્તો સુહુમયરં હવઃ સ્વિત્તં’ इति-तस्मादपि कालात् सूक्ष्मतरं क्षेत्रं भवति । कुतः ?-‘अंगुलसेढीमित्ते ओसप्पिणिओ असंखिज्जा’ इति, यस्मादङ्गुलश्रेणिमात्रे प्रमाणाङ्गुलैकमात्रे श्रेणिरूपे नभःखण्डे क्षेत्रे प्रति-प्रदेशं समयगणनया तत्प्रदेशपरिमाणमवसर्पिण्योऽसंख्येयास्तीर्थकरैरुक्ताः । अयं भावः-प्रमाणाङ्गुलैकमात्रे एकैकप्रदेशश्रेणिरूपेनभःखण्डे यावन्तोऽसंख्येयासु अव-सर्पिणीषु समयास्तावत्प्रमाणाः प्रदेशा वर्तन्ते, तस्मात् कालादसंख्येयगुणं क्षेत्रं, क्षेत्रादपि चानन्तगुणं द्रव्यं, द्रव्यादपि चावधिविषयाः पर्यायाः संख्येयगुणा असंख्येयगुणा वा । तस्माद्-अंगुलश्रेणिमात्रक्षेत्रप्रदेशाग्रमसंख्येयावसर्पिणीसमय-राशिपरिमाणमिति सिद्धम् । “सेतं” इत्यादि । तदेतद् वर्धमानकमवधिज्ञानं वर्णितम् ॥ गा. ८ ॥ सू० १२ ।

કે ભેદન કરને પર એક ૨ પત્ર કે છેદને મેં અસંખ્યાત સમય લગ જાતે હૈં, એસા આગમ મેં પ્રતિપાદિત કિયા હૈ । સમય ઇતના અતિસૂક્ષ્મ હૈ કિ જિસસે વે અસંખ્યાત સમય ભિન્ન ૨ રૂપ સે વિભાજિત નહીં કિયે જા સકતે હૈં । ઇસ કાલ સે ક્ષેત્ર સૂક્ષ્મતર હોતા હૈ, કયોં કિ એક પ્રમાણાંગુલ-માત્ર શ્રેણિરૂપ આકાશખંડ ક્ષેત્ર મેં પ્રત્યેક પ્રદેશ કે ઉપર સમય કી ગણના સે અસંખ્યાત અવસર્પિણિયોં મેં જિતને સમય હોતે હૈં ઉતને પ્રમાણ પ્રદેશ રહતે હૈં । ઇસ લિયે કાલ સે અસંખ્યાત ગુણ ક્ષેત્ર હોતા હૈ । ક્ષેત્ર સે મી અસંખ્યાત ગુણ દ્રવ્ય હોતા હૈ । તથા દ્રવ્ય કી અપેક્ષા, અવધિજ્ઞાન કી વિષયભૂત પર્યાયે સંખ્યાતગુણી અથવા અસંખ્યાતગુણી હોતી હૈં, અતઃ અંગુલ શ્રેણિ માત્ર ક્ષેત્ર મેં પ્રદેશોં કા પ્રમાણ અસંખ્યાત અવસર્પિણિયોં કે સમયોં કી રાશિપ્રમાણ સિદ્ધ હો જાતા હૈ । ઇસ તરહ વર્ધમાન અવ-ધિજ્ઞાન કા વર્ણન હુઆ ॥ ગા. ૮ ॥ સૂ. ૧૨ ॥

ઉપર એક રાખેલાં સો પાનને ભેદતાં એક એક પાનના ભેદનમાં અસંખ્યાત સમય લાગે છે, એવું આગમમાં પ્રતિપાદિત કરાયું છે. સમય એટલો બધો સૂક્ષ્મ છે કે જેથી તે અસંખ્યાત સમય ભિન્ન-ભિન્ન-રૂપે વિભાજિત કરી શકાતાં નથી. આ કાળથી ક્ષેત્ર સૂક્ષ્મતર હોય છે, કારણ કે એક પ્રમાણાંગુલમાત્ર શ્રેણિ-રૂપ નભઃખંડ ક્ષેત્રમાં પ્રત્યેક પ્રદેશની ઉપર સમયની ગણતરીથી અસંખ્યાત અવસર્પિણીઓમાં જેટલા સમય હોય છે એટલા પ્રમાણ પ્રદેશ રહે છે, તેથી કાળથી અસંખ્યાત ગણું ક્ષેત્ર હોય છે. ક્ષેત્ર કરતાં પણ અસંખ્યાત ગણું દ્રવ્ય હોય છે. તથા દ્રવ્યનાં કરતાં અવધિજ્ઞાનની વિષયભૂત પર્યાયે સંખ્યાત ગણી અથવા અસંખ્યાત ગણી હોય છે, તેથી અંગુલશ્રેણિમાત્ર ક્ષેત્રમાં પ્રદેશોનું પ્રમાણ અસંખ્યાત અવસર્પિણીઓનાં રાશિપ્રમાણ સિદ્ધ થાય છે. આ પ્રમાણે વર્ધમાન અવધિજ્ઞાનનું વર્ણન થયું ॥ ગા. ૮ ॥ સૂ. ૧૨ ॥



અથ હીયમાનવધિજ્ઞાનં વર્ણયતિ—

મૂલમ્—સે કિં તં હીયમાણયં ઓહિનાણં ? । હીયમાણયં ઓહિ-  
નાણં અપ્પસત્થેહિં અજ્ઞવસાણદ્વાણેહિં વટ્ટમાણસ્સ વટ્ટમાણચરિત્તસ્સ  
સંકિલિસ્સમાણસ્સ સંકિલિસ્સમાણચરિત્તસ્સ સઘ્વઓ સમંતા  
ઓહી પરિહાયઇ, સે તં હીયમાણયં ઓહિનાણં ॥ સૂ. ૧૩ ॥

છાયા—અથ કિં તદ્ હીયમાનકમવધિજ્ઞાનં ? હીયમાનકમવધિજ્ઞાનમ્—અપ્રશસ્તે-  
ષ્વધ્યવસાયસ્થાનેષુ વર્તમાનસ્ય વર્તમાનચારિત્રસ્ય સંક્લિષ્ટમાનસ્ય સંક્લિષ્ટમાન-  
ચારિત્રસ્ય સર્વતઃ સમન્તાદવધિઃ પરિહીયતે, તદેતદ્ હીયમાનકમવધિજ્ઞાનમ્ ॥ સૂ. ૧૩ ॥

ટીકા—‘સે કિં તં હીયમાણયં’ ઇત્યાદિ । શિષ્યઃ પૂછતિ—હે ભદન્ત !  
અથ કિં તદ્ હીયમાનકમવધિજ્ઞાનમ્ ? ,=પૂર્વનિર્દિષ્ટસ્ય હીયમાનાવધિજ્ઞાનસ્ય કિં  
સ્વરૂપમિત્યર્થઃ ? । ઉત્તરમાહ—‘હીયમાણયં’ ઇત્યાદિ । હે શિષ્ય ! હીયમાનં=પૂર્વા-  
વસ્થાપેક્ષયાધોધોહાસમુપગચ્છદવધિજ્ઞાનં વર્ણયતે । અપ્રશસ્તેષુ અધ્યવસાયસ્થાનેષુ

અવ સૂત્રકાર હીયમાન અવધિજ્ઞાન કા વર્ણન કરતે હૈં—

‘સે કિં તં હીયમાણયં ઓહિનાણં’ ઇત્યાદિ ।

શિષ્ય પૂછતા હૈં—હે ભદન્ત ! પૂર્વનિર્દિષ્ટ હીયમાન અવધિજ્ઞાન કા  
ક્યા સ્વરૂપ હૈં ? ઉત્તર—હે શિષ્ય ! યહ અવધિજ્ઞાન જબ ઉત્પન્ન હોતા  
હૈંતઽવધિક વિષયવાલા હોતા હૈં પરન્તુ પરિણામશુદ્ધિ કમ હો જાને  
સે ક્રમશઃ અલ્પરવિષયક હોતા જાતા હૈં, યહી બાત ટીકાકારને  
“પૂર્વાવસ્થાપેક્ષયાધોધોહાસમુપગચ્છત્” ઇસ વાક્ય દ્વારા પ્રકટ કી  
હૈં । અપ્રશસ્ત અધ્યવસાય સ્થાનોં મેં વર્તમાન જીવ કા અવધિજ્ઞાન  
સર્વતઃ—ચારોં દિશાઓં મેં વર્તમાન પદાર્થોં કે જાનને રૂપ ક્રિયા કરને સે

હવે હીયમાન અવધિજ્ઞાનનું વર્ણન કરે છે—

“સે કિં તં હીયમાણયં ઓહિનાણં” ઇત્યાદિ.

શિષ્ય પૂછે છે—હે ભદન્ત ! પૂર્વ નિર્દિષ્ટ હીયમાન અવધિજ્ઞાનનું શું સ્વરૂપ  
છે ? ઉત્તર—હે શિષ્ય ! આ અવધિજ્ઞાન જ્યારે ઉત્પન્ન થાય છે ત્યારે વધારે  
વિષયવાળું હોય છે પણ પરિણામશુદ્ધિ ઓછી થઈ જવાથી ક્રમશઃ અલ્પ-અલ્પ  
વિષયક થતું જાય છે. એ જ વાત ટીકાકારે “પૂર્વાવસ્થાપેક્ષયાધોધોહાસમુપગચ્છત્”  
આ વાક્ય દ્વારા પ્રગટ કરી છે.

અપ્રશસ્ત અધ્યવસાય સ્થાનોમાં વર્તમાન જીવનું અવધિજ્ઞાન સર્વતઃ—  
ચારે દિશાઓમાં વર્તમાન પદાર્થોને જાણવારૂપ ક્રિયા કરવાથી ક્રમશઃ ઘટતું

વર્તમાનસ્ય=અપ્રશસ્તાધ્યવસાયવત્ત્વ इत्यर्थः ‘सर्वतः समन्तादवधिः परिहीयते’ इत्यन्वयः । शुभाध्यवसायवशात् प्राप्तं सदवधिज्ञानमविरतसम्यग्दृष्टेर्हीयमानं भवतीति भावः । तथा-वर्तमानचारित्रस्य=चारित्रसम्पन्नस्येत्यर्थः, इहापि-‘सर्वतः समन्तादवधिः परिहीयते’ इत्यन्वयः । देशविरतस्य सर्वविरतस्य च हीयमानमवधिज्ञानं भवतीति भावः ।

तथा—‘संक्लिश्यमानस्य’ बध्यमानकर्मसंसर्गादुत्तरोत्तरं संक्લेशमासादयतः, अविरतसम्यग्दृष्टेरित्यर्थः, अप્રશસ્તલેશ્યોપરંજિતં ચિત્તમ્, અર્થાત્-અનેકશુભાર્થચિન્તનપરં ચિત્તં સંક્લિષ્ટમુચ્યતે । તથા—સંક્લિષ્ટમાનચારિત્રસ્ય=અપ્રશસ્તલેશ્યોપરંજિતસ્ય અનેકાઽશુભાર્થચિન્તનપરસ્ય અવિશુદ્ધચારિત્રવતો દેશવિરતસ્ય, સર્વવિરતસ્ય ચેતિ શેષઃ, સર્વતઃ સમન્તાદવધિઃ પરિહીયતે=પરિક્ષીયતે । તદેતદ્ હીયમાનવધિજ્ઞાનં વર્ણિતમ્ । इति चतुर्थो भेदः ४। ॥ सू० १३ ॥

ક્રમશઃ ઘટતા રહતા હૈ । શુભ અધ્યવસાય કે વશ સે પ્રાપ્ત ક્રિયા ગયા અવધિજ્ઞાન અવિરતસમ્યગ્દૃષ્ટિ કે હીયમાન હોતા જાતા હૈ । ચારિત્ર-સંપન્ન અવધિજ્ઞાની કા ભી અવધિજ્ઞાન હીયમાન હોતા હૈ । અર્થાત્ યાહે દેશવિરતિ શ્રાવક હો યાહે સર્વવિરતિસંપન્ન અનગાર હો યસકા ભી અવધિજ્ઞાન હીયમાન હોતા જાતા હૈ । સંક્લિષ્ટમાન જીવ કા-બધ્યમાન કર્મ કે સંસર્ગ સે ઉત્તરોત્તર સંક્લેશ ભાવ કો પ્રાપ્ત હુએ જીવ કા તથા અપ્રશસ્તલેશ્યા સે ઉપરંજિત હુએ અનેક અશુભ અર્થ કે ચિન્તન કરને મેં તત્પર બને હુએ એસે અવિશુદ્ધચારિત્રસંપન્ન દેશવિરતિ ગૃહસ્થ કા ઇવં સર્વવિરતિસંપન્ન સાધુ કા ભી અવધિજ્ઞાન સર્વતઃ સમન્તાત્ હીયમાન હોતા હૈ । હસ પ્રકાર હીયમાન અવધિજ્ઞાન કા સ્વરૂપ હૈ । ભાવાર્થ હસકા કેવલ હતના હી હૈ કિ જિસ પ્રકાર પરિમિત દાહ્ય વસ્તુઓં મેં લગી હુઈ અગ્નિ નયા દાહ્ય પદાર્થ ન મિલને સે ક્રમશઃ ઘટતી જાતી હૈ, યસી

રહે છે. શુભ અધ્યવસાયના વશથી પ્રાપ્ત કરાયેલું અવધિજ્ઞાન અવિરત સમ્યગ્દ-  
ષ્ટિનું હીયમાન થતું જાય છે. ચારિત્રસંપન્ન અવધિજ્ઞાનીનું અવધિજ્ઞાન પણ  
હીયમાન હોય છે. એટલે કે આહે દેશવિરતિ શ્રાવક હોય કે આહે સર્વવિરતિ  
સંપન્ન અણુગાર હોય, તેનું પણ અવધિજ્ઞાન હીયમાન થતું જાય છે. સંક્લિષ્ટ-  
માન જીવનું-બધ્યમાન કર્મના સંસર્ગથી ઉત્તરોત્તર સંક્લેશ લાવને પામેલ જીવનું,  
તથા અપ્રશસ્તલેશ્યાથી ઉપરંજિત થયેલ અનેક અશુભ અર્થનું ચિન્તન કરવામાં  
તત્પર બનેલ એવાં અવિશુદ્ધ ચારિત્રસંપન્ન દેશવિરતિ ગૃહસ્થનું અને સર્વવિ-  
રતિસંપન્ન સાધુનું પણ અવધિજ્ઞાન સર્વતઃ સમન્તાત્ હીયમાન હોય છે. આ  
પ્રકારનું હીયમાન અવધિજ્ઞાનનું સ્વરૂપ છે. તેનો લાવાર્થ ફક્ત એટલો જ છે કે  
જે રીતે પરિમિત દાહ્યવસ્તુઓમાં લાગેલી અગ્નિ નવો દાહ્ય પદાર્થ ન મળવાથી

મૂલમ્—સે કિં તં પઢિવાઈ ઓહિનાણં ? । પઢિવાઈ ઓહિનાણં જહણેણં અંગુલસ્સ અસંખિજ્જભાગં વા સંખિજ્જભાગં વા, બાલગ્ગં વા બાલગ્ગપુહત્તં વા, લિક્ખં વા લિક્ખપુહત્તં વા, જૂયં વા જૂયપુહત્તં વા, જવં વા જવપુહત્તં વા, અંગુલં વા અંગુલપુહત્તં વા, પાયં વા પાયપુહત્તં વા, વિહત્થિં વા વિહત્થિપુહત્તં વા, રયણિં વા રયણિપુહત્તં વા, કુચ્છિં વા કુચ્છિપુહત્તં વા, ધણું વા ધણુપુહત્તં વા, ગાઉયં વા ગાઉયપુહત્તં વા, જોયણં વા જોયણપુહત્તં વા, જોયણસયં વા જોયણસયપુહત્તં વા, જોયણસહસ્સં વા જોયણસહસ્સપુહત્તં વા, જોયણલક્ખં વા જોયણલક્ખપુહત્તં વા, જોયણકોઢિં વા જોયણકોઢિપુહત્તં વા, જોયણકોઢાકોઢિં વા જોયણકોઢાકોઢિપુહત્તં વા, જોયણસંખિજ્જં વા જોયણસંખિજ્જપુહત્તં વા, જોયણઅસંખેજ્જં વા જોયણઅસંખેજ્જપુહત્તં વા, ઉક્કોસેણં લોગં વા પાસિત્તા ણં પઢિવઈજ્જા, સે તં પઢિવાઈ ઓહિનાણં ॥ સૂ. ૧૪ ॥

છાયા—અથ કિં તત્પ્રતિપાતિ-અવધિજ્ઞાનં ? પ્રતિપાતિ-અવધિજ્ઞાનં જઘન્યેનાં ડગુલસ્યા ડસંખ્યેયભાગં વા, સંખ્યેયભાગં વા, બાલાગ્ગં વા, બાલાગ્ગપૃથક્ત્વં વા, લિક્ખાં વા, લિક્ખાપૃથક્ત્વં વા, યુકાં વા, યુકાંપૃથક્ત્વં વા, યવં વા, યવપૃથક્ત્વં વા, અંગુલં વા ડઅંગુલપૃથક્ત્વં વા, પાદં વા, પાદપૃથક્ત્વં વા, વિતસ્થિં વા વિતસ્થિપૃથક્ત્વં વા, રત્થિં વા, રત્થિપૃથક્ત્વં વા, કુચ્છિં વા, કુચ્છિપૃથક્ત્વં વા, ધનુર્વા, ધનુઃપૃથક્ત્વં વા, ગવ્યૂતં વા ગવ્યૂતપૃથક્ત્વં વા, યોજનં વા, યોજનપૃથક્ત્વં વા, યોજનશતં વા, યોજનશતપૃથક્ત્વં વા, યોજનસહસ્સં વા, યોજનસહસ્સપૃથક્ત્વં વા, યોજનલક્ષં વા, યોજનલક્ષપૃથક્ત્વં વા, યોજનકોટિં વા, યોજનકોટિપૃથક્ત્વં વા, યોજનકોટીકોટિં વા, યોજનકોટીકોટિપૃથક્ત્વં વા, યોજનસંખ્યેયં વા, યોજનસંખ્યેયપૃથક્ત્વં વા, યોજના ડસંખ્યેયં વા, યોજના ડસંખ્યેયપૃથક્ત્વં વા, ઉત્કર્ષેણ લોકં વા દૃષ્ટ્વા પ્રતિપતેત્, તદેતત્પ્રતિપાત્યવધિજ્ઞાનમ્ ॥ સૂ. ૧૪ ॥

પ્રકાર જો અવધિજ્ઞાન પરિણામોં કી વિશુદ્ધિ કે અભાવ સે ક્રમશઃ ઘટતા જાતા હૈ વહ હીયમાન હૈ ॥ સૂ. ૧૩ ॥

ક્રમશઃ ઘટતી જાય છે એજ પ્રમાણે જે અવધિજ્ઞાન પરિણામોની વિશુદ્ધિના અભાવે ક્રમશઃ ઘટતું જાય છે તે હીયમાન છે ॥ સૂ. ૧૩ ॥

टीका—‘से किं तं पडिवाइ’ इत्यादि । शिष्यः पृच्छति—अथ किं तत् प्रतिपाति अवधिज्ञानम् ? = हे भदन्त ! पूर्वनिर्दिष्टस्य प्रतिपात्यवधिज्ञानस्य किं स्वरूपमित्यर्थः । उत्तरमाह—‘पडिवाइ ओहिनाण’ इत्यादि । हे शिष्य ! प्रतिपाति=फूत्कारेण दीपकप्रकाश इव नश्वरम्, अवधिज्ञानं वर्णयामि । यत्—अवधिज्ञानं जघन्येन=सर्वस्तोकतया, अंगुलस्यासंख्येयभागमात्रं संख्येयभागमात्रं वा बालाग्रं वा, बालाग्रपृथक्त्वं वा, लिक्षां वा=बालाग्राष्टकप्रमाणां, लिक्षापृथक्त्वं वा, यूकां वा=लिक्षाष्टकमानां, यूकापृथक्त्वं वा, यवं वा=यूकाष्टकमानं वा, यवपृथक्त्वं वा, अंगुलं वा=यवाष्टकमानं वा, अंगुलपृथक्त्वं वा, एवमंगुलषट्कमानात् पादादारभ्य यावदु-

‘से किं तं पडिवाइ ओहिनाणं’ इत्यादि ।

शिष्यकाप्रश्न—प्रतिपाति अवधिज्ञान का क्या स्वरूप है ?, उत्तर—प्रतिपाति अवधिज्ञान का स्वरूप इस प्रकार है—

जो अवधिज्ञान जघन्य से अङ्गुल के असंख्यातवें भाग को अथवा संख्यातवें भागको, बालाग्र को अथवा बालाग्रपृथक्त्व को, लिक्षा को अथवा लिक्षापृथक्त्व को, यूका को अथवा यूकापृथक्त्व को, यवमध्य को अथवा यवमध्यपृथक्त्वको, अङ्गुल को अथवा अङ्गुलपृथक्त्व को, पाद को अथवा पादपृथक्त्व को, वितस्ति को अथवा वितस्तिपृथक्त्व को, रत्नि को अथवा रत्निपृथक्त्व को, कुक्षि को अथवा कुक्षिपृथक्त्व को, धनुष को अथवा धनुषपृथक्त्व को, गव्यूत को अथवा गव्यूतपृथक्त्व को, योजन को अथवा योजनपृथक्त्व को, योजनशत को अथवा योजनशतपृथक्त्व को, योजनसहस्र को अथवा योजनसहस्रपृथक्त्व को, योजनलक्ष को अथवा योजनलक्षपृथक्त्व को, योजनकोटि को अथवा

“से किं तं पडिवाइ ओहिनाणं” इत्यादि.

शिष्येन प्रश्न—“प्रतिपाति अवधिज्ञानतुं शुं स्वरूप छे ?”

उत्तर—प्रतिपाति अवधिज्ञानतुं स्वरूप आ प्रमाणे छेः—जे अवधिज्ञान जघन्यथी अंगुलना असंख्यातमां लागने अथवा संख्यातमां लागने, बालाग्रने अने बालाग्रपृथक्त्वने, लिक्षाने अथवा लिक्षापृथक्त्वने, यूकाने अथवा यूकापृथक्त्वने, यवमध्यने अथवा यवमध्यपृथक्त्वने, अंगुलने अथवा अंगुलपृथक्त्वने, पादने अथवा पादपृथक्त्वने, कुक्षिने अथवा कुक्षिपृथक्त्वने, धनुषने अथवा धनुषपृथक्त्वने, गव्यूतने अथवा गव्यूतपृथक्त्वने, योजनने अथवा योजनपृथक्त्वने, योजनशतने अथवा योजनशतपृथक्त्वने, योजनसहस्रने अथवा योजनसहस्रपृथक्त्वने, योजनलक्षने, अथवा योजनलक्षपृथक्त्वने योजनकोटीने अथवा योजनकोटीपृथक्त्वने, योजनसंख्येयने अथवा योजनसंख्येयपृथक्त्वने.

ત્કર્પેણ=સર્વપ્રચુરતયા યાવત્ લોકં દૃષ્ટ્વા=લોકમુપલભ્ય પ્રતિપતેત્=ન ભવેત્, પ્રદીપ  
 ઇવ નાશમુપગચ્છેત્, તસ્ય તથાવિધક્ષયોપશમજન્યત્વાત્, તદે તત્ પ્રતિપાત્યવધિજ્ઞાનમ્।  
 શેષં સુગમમ્। નવરં યવ ઇતિ યવમધ્યમ્, પાદ ઇતિ પાદમધ્યતલપ્રદેશઃ,  
 કુક્ષિર્દ્વિહસ્તપ્રમાણઃ, ધનુશ્ચતુર્હસ્તપ્રમાણં, પૃથક્ત્વં=સર્વત્રાપિ દ્વિપ્રભૃતિ આનવમ્બ્ય ઇતિ  
 સિદ્ધાન્તપરિભાષયા દ્રષ્ટવ્યમ્। ઇતિ પञ्चમો ભેદઃ ૫ ॥ સૂ૦ ૧૪ ॥

યોજનકોટિપૃથક્ત્વ કો, યોજનકોટીકોટિ કો અથવા યોજનકોટીકોટિ  
 પૃથક્ત્વ કો, યોજનસંખ્યેય કો, અથવા યોજનસંખ્યેયપૃથક્ત્વ કો, યોજન-  
 અસંખ્યેયકો, અથવા યોજન-અસંખ્યેય પૃથક્ત્વ કો, ઉત્કૃષ્ટરૂપ સે સમસ્ત-  
 લોક કો દેશ્વકર મી તથાવિધ-ક્ષયોપશમજન્ય હોને સે પ્રદીપ કી તરહ  
 નષ્ટ હો જાતા હૈ, વહ પ્રતિપાતિ અવધિજ્ઞાન હૈ ।

યહાં પર યહ જાનના ચાહિયે-આઠ બાલાગ્રોં કી એક લિક્ષા હોતી  
 હૈ, આઠ લિક્ષાઓં કી એક યુકા, આઠ યુકાઓં કા એક યવમધ્ય, આઠ  
 યવમધ્યોં કા એક અઙ્ગુલ, છ અઙ્ગુલ કા એક પાદ (પાદમધ્યતલ પ્રદેશ),  
 દો પાદોં કી એક વિતસ્તિ-(વેત), દો વિતસ્તિયોં કી એક રત્નિ (હાથ),  
 દો રત્નિયોં કી એક કુક્ષિ, દો કુક્ષિયોં કા એક ધનુષ, દો હજાર ધનુષોં કા  
 એક ગવ્યૂત (કોસ) ઓર ચાર ગવ્યૂતોં (કોસોં) કા એક યોજન હોતા હૈ ।  
 યોજનસંખ્યા કી ઉત્તરોત્તર વૃદ્ધિ હોને સે યોજનશત, યોજનસહસ્ર,  
 યોજનલક્ષ, યોજનકોટિ, યોજનકોટીકોટિ, યોજનસંખ્યેય ઓર યોજન-  
 અસંખ્યેય હોતા હૈ । દો સે લેકર નૌ તક કો પૃથક્ત્વ કહતે હૈં યહ  
 જ્ઞાન કા પાંચવાં ભેદ હુઆ ૫ ॥ સૂ૦ ૧૪ ॥

યોજનઅસંખ્યેયને અથવા યોજનઅસંખ્યેયપૃથક્ત્વને, ઉત્કૃષ્ટ રૂપથી સમસ્ત  
 લોકને દેખીને પણ તેવા પ્રકારના ક્ષયોપશમજન્ય હોવાથી પ્રદીપની જેમ નષ્ટ  
 થઈ જાય છે તે પ્રતિપાતિ અવધિજ્ઞાન છે.

અહીં એ બાબતું જોઈએ કે આઠ બાલાઓની એક લિક્ષા થાય છે, આઠ  
 લિક્ષાઓની એક યુકા, આઠ યુકાઓનો એક યવમધ્ય, આઠ યવમધ્યોનો એક  
 અંગુલ, છ અંગુલનો એક પાદ (પાદનો મધ્યતલ પ્રદેશ), બે પાદની એક વિતસ્તિ  
 (વેત) બે વિતસ્તિઓની એક રત્નિ (હાથ). બે રત્નિઓની એક કુક્ષિ, બે કુક્ષિઓનું  
 એક ધનુષ, બે હજાર ધનુષોનું એક ગવ્યૂત (કોસ) અને ચાર ગવ્યૂતોનો એક  
 યોજન થાય છે. યોજનસંખ્યાની ઉત્તરોત્તર વૃદ્ધિ થવાથી યોજનશત, યોજનસહસ્ર,  
 યોજનલક્ષ, યોજનકોટી, યોજનકોટીકોટી, યોજનસંખ્યેય અને યોજનઅસંખ્યેય  
 થાય છે. બેથી લઈને નવ સુધીનાને પૃથક્ત્વ કહે છે. આ જ્ઞાનનો પાંચમો ભેદ  
 થયો. ॥ સૂ. ૧૪ ॥

મૂલમ્—સે કિં તં અપડિવાઈ ઓહિનાણં ? । અપડિવાઈ ઓહિનાણં જેણં અલોગસ્સ ઇગમવિ આગાસપેસં જાણઈ પાસઈ, તેણ પરં અપડિવાઈ ઓહિનાણં, સે તં અપડિવાઈ ઓહિનાણંદ ॥ સૂ. ૧૫ ॥

છાયા—અથ કિં તદપ્રતિપાત્યવધિજ્ઞાનમ્ ? અપ્રતિપાત્યવધિજ્ઞાનં યેન અલોકસ્ય એકમપિ આકાશપ્રદેશં જાનાતિ પશ્યતિ, તેન પરમ્ અપ્રતિપાતિ અવધિજ્ઞાનમ્, તદેતત્ પ્રતિપાત્યવધિજ્ઞાનમ્ ૬ ॥ સૂ. ૧૬ ॥

ટીકા—સે કિં તં અપડિવાઈ ઓહિનાણં ' ઇત્યાદિ । શિષ્યઃ પૃચ્છતિ—અથ કિં તદ્ અપ્રતિપાત્યવધિજ્ઞાનમ્=હે ભદન્ત ! પૂર્વનિર્દિષ્ટસ્ય અપ્રતિપાત્યવધિજ્ઞાનસ્ય કિં સ્વરૂપમિત્યર્થઃ ? । ઉત્તરમાહ—'અપડિવાઈ ઓહિનાણં' ઇત્યાદિ । હે શિષ્ય ! અપ્રતિપાત્યવધિજ્ઞાનં વર્ણ્યતે । યેનાવધિજ્ઞાનેન, અલોકસ્ય=અલોકાકાશસ્ય સમ્બન્ધિનમેકમપ્યાકાશપ્રદેશમ્, અપિ શબ્દાત્ બહૂન્ વા—આકાશપ્રદેશાન્ જાનાતિ, પશ્યતિ,

‘સે કિં તં અપડિવાઈ ઓહિનાણં’ ઇત્યાદિ ।

શિષ્ય પ્રશ્ન કરતા હૈ—અપ્રતિપાતિ અવધિજ્ઞાન કા કયા સ્વરૂપ હૈ ?

ઉત્તર—અપ્રતિપાતિ અવધિજ્ઞાન કા સ્વરૂપ ઇસ પ્રકાર હૈ—જિસ અવધિજ્ઞાન કી સહાયતા સે અવધિજ્ઞાની આત્મા અલોકાકાશતક કે એક ભી આકાશપ્રદેશ કો અથવા બહુત સે આકાશપ્રદેશોં કો જાનતા ઓર દેખતા હૈ વહ અપ્રતિપાતી અવધિજ્ઞાન હૈ । યહી વાત—“જેણં અલોગસ્સ ઇગમવિ આગાસપેસં જાણઈ પાસઈ” ઇત્યાદિ પંક્તિયોં દ્વારા થતલાઈ ગઈ હૈ । યદ્યપિ અલોકાકાશ મેં અવધિજ્ઞાન કે દ્વારા દ્રષ્ટવ્ય કોઈ વસ્તુ નહીં હૈ ફિર ભી જો એસા કહા ગયા હૈ કિ—“અવધિજ્ઞાની અલોકાકાશ કે એક અથવા અનેક પ્રદેશોં કો જાનતા દેખતા હૈ” વહ

“સે કિં તં અપડિવાઈ ઓહિનાણં” ઇત્યાદિ.

શિષ્ય પૂછે છે—“અપ્રતિપાતિ અવધિજ્ઞાનનું શું સ્વરૂપ છે ?”

ઉત્તર:—અપ્રતિપાતિ અવધિજ્ઞાનનું સ્વરૂપ આ પ્રમાણે છે—જે અવધિજ્ઞાનની સહાયતાથી અવધિજ્ઞાની આત્મા અલોકાકાશ સુધીના એક પણ આકાશ પ્રદેશને અથવા ઘણાં આકાશપ્રદેશોને જાણે અને દેખે છે તે અપ્રતિપાતિ અવધિજ્ઞાન છે. એજ વાત “જેણં અલોગસ્સ ઇગમવિ આગાસપેસં જાણઈ પાસઈ” ઇત્યાદિ. પંક્તિઓ દ્વારા બતાવવામાં આવી છે જે કે અલોકાકાશમાં અવધિજ્ઞાન વડે દ્રષ્ટવ્ય કોઈ વસ્તુ નથી તે પણ જે એવું કહ્યું છે કે “અવધિજ્ઞાની અલોકાકાશના એક અથવા અનેક પ્રદેશોને જાણે દેખે છે” તે માત્ર તેની



તથાવિધક્ષયોપશમજનિતસામર્થ્યસદ્ભાવાદિતિ ભાવઃ । એતચ્ચ સામર્થ્યમાત્રં વર્ણયતે, અલોકે હિ અવધિજ્ઞાનસ્ય દ્રષ્ટવ્યં વસ્તુ કિમપિ નાસ્તિ, અવધિજ્ઞાનસ્ય રૂપિ- દ્રવ્યમાત્રવિષયકતયાઽઽકાશપ્રદેશોઽપિ નાસ્તિ દ્રષ્ટવ્યઃ, અરૂપિત્વાત્, અન્યસ્ય કસ્યાપિ દ્રવ્યસ્ય તત્રાભાવાચ્ચ । અવધિજ્ઞાનમલોકાકાશસ્યૈકં પ્રદેશં વહૂન્ વા પ્રદેશાન્ વ્યાપ્તું શક્નોતીતિ ભાવઃ । લોકાલોકવિભાગસ્ત્વેવમવગન્તવ્યઃ ધર્માદીનાં દ્રવ્યાણાં વૃત્તિર્ભવતિ યત્ર તત્ ક્ષેત્રં લોકઃ । તદ્વિપરીતં હિ ક્ષેત્રમલોકઃ । તતઃ પરં તદનન્તરં તદવધિજ્ઞાનમપ્રતિપાતિ ભવતિ, કેવલજ્ઞાનમનુત્પાદ્ય ન નિવર્તતે ।

કેવલહસકી શક્તિમાત્ર કો વતલાને કે લિયે કહ દિયા ગયા હૈ । અર્થાત્ હસ અપ્રતિપાતિ અવધિજ્ઞાન મેં હતની શક્તિ હૈ કિ વહ અલોકાકાશતક કે ભી એક અથવા અનેક પ્રદેશોં કો જાન સકતા હૈ, દેખ સકતા હૈ એસી શક્તિ ભી હસ મેં તથાવિધ ક્ષયોપશમ સે જનિત સામર્થ્ય સે હી હોતી હૈ । અવધિજ્ઞાન સિર્ફ રૂપી દ્રવ્ય કો હી વિષય કરતા હૈ, અરૂપી દ્રવ્ય કો નહીં । આકાશ કે પ્રદેશ ભી હસ તરહ અરૂપી હી હૈ, વે હસકા વિષય હો નહીં સકતે હૈ, તથા ઔર અન્ય દ્રવ્ય અલોકાકાશ મેં હૈ નહીં । એસી સ્થિતિ મેં સૂત્ર મેં જો ‘અલોકાકાશ કે એક પ્રદેશ કો અથવા વહુત પ્રદેશોં કો વહ જાનતા દેખતા હૈ’ એસા કહા હૈ વહ કેવલ હસકે સામર્થ્ય કો પ્રકટ કરને કે લિયે કહા ગયા જાનના ચાહિયે । ધર્માદિક દ્રવ્યોં કા જિતને આકાશ મેં નિવાસ હૈ વહ લોકાકાશ, તથા હસસે વહિર્ભૂત આકાશ કા નામ અલોકાકાશ હૈ । અપ્રતિપાતિ અવધિ- જ્ઞાન કેવલજ્ઞાન કો ઉત્પન્ન કિયે વિના નહીં છૂટતા હૈ ।

શક્તિમાત્રને જ બતાવવા માટે કહેલ છે. એટલે કે આ અપ્રતિપાતિ અવધિજ્ઞાનમાં એટલી શક્તિ છે કે તે અલોકાકાશ સુધીના પણ એક અથવા અનેક પ્રદેશોને બધી શકે છે એવી શક્તિ પણ તેમાં તેવા પ્રકારના ક્ષયોપશમથી પેદા થયેલ સામર્થ્યથી જ હોય છે. અવધિજ્ઞાન ફક્ત રૂપી દ્રવ્યને જ વિષય કરે છે. અરૂપી દ્રવ્યને નહીં. આકાશના પદાર્થો પણ આ રીતે અરૂપી જ છે, તે આ તેનો વિષય થઈ શકતા નથી તથા બીજાં કોઈ દ્રવ્ય અલોકાકાશમાં નથી. આવી સ્થિતિમાં સૂત્રમાં જે “અલોકાકાશના એક પ્રદેશ પ્રદેશને અથવા ઘણા પ્રદેશોને તે બધે દેખે છે” એવું કહેલ છે તે ફક્ત તેના સામર્થ્યને પ્રગટ કરવાને માટે જ કહેલ છે એમ માનવું જોઈ એ. ધર્માદિક દ્રવ્યોને જેટલાં આકાશમાં નિવાસ છે તે લોકાકાશ તથા તેની બહાર આવેલ આકાશનું નામ અલોકાકાશ છે, અપ્રતિપાતિ અવધિજ્ઞાન કેવલજ્ઞાનને ઉત્પન્ન કર્યા વિના છૂટવું નથી,



અર્થ ભાવઃ—યથા પ્રાભાતિકઃ પ્રકાશઃ સૂર્યોદયં વિના નૈવ નિવર્તતે, યથા વા કુસુમં ફલમનુત્પાદ્યન નિવર્તતે તથા યદવધિજ્ઞાનં કેવલપ્રાપ્તિં વિના ન નિવર્તતે इति । યથા વા નૃપઃ પ્રતિપક્ષનાયકે નિહતે સતિ તદિતરૈઃ પ્રતિપક્ષૈર્ન પુનઃ પરિભૂ-યતે શેષમપિ શત્રુસંઘં વિનિર્જિત્ય રાજ્યશ્રિયં લભતે, તથા તાદૃશઃ ક્ષયોપશમો લભ્યતે, યતઃ—કર્મશત્રુનાયકં મોહનીયાશ્ચ્યં કર્મશત્રું નિહત્યાવધિજ્ઞાની તદિતરૈઃ કર્મશત્રુભિર્ન પુનઃ પરિભૂયતે, કિં તુ શેષમપિ કર્મશત્રું વિનિર્જિત્યાવધિજ્ઞાની કેવલં પ્રાપ્નોત્યેવેતિ । તદેતદપ્રતિપાત્યવધિજ્ઞાનં વર્ણિતમ્ । इत्यवधेः पष्ठो भेदः ६ ॥ सू० १५॥

इसका भाव यह है कि—जिस प्रकार प्राभातिक प्रकाश सूर्योदय हुए विना नहीं हटता है, अथवा जिस प्रकार फलवाले वृक्ष का फूल, विना नहीं जाता है उसी तरह जो अवधिज्ञान केवलज्ञान की प्राप्ति किये विना फल उत्पन्न किये जीव से नहीं छूटता है वह अप्रतिपाति अवधिज्ञान है । अथवा—जिस प्रकार प्रतिपक्ष शत्रुसेना के नायक के निहत होने पर उसकी सेना के अन्य व्यक्तियों द्वारा विजयशील नरेश पराभव को प्राप्त नहीं होता है, तथा अवशिष्ट शत्रुदलको परास्त कर वह जैसे राज्यश्री का भोक्ता बनता है उसी तरह अवधिज्ञानी आत्मा में कोई ऐसे कर्मों का—अवधिज्ञानावरणीय कर्मों का—क्षयोपशम होता है कि जिसके प्रभाव से वह कर्म शत्रुओं के नायकस्वरूप मोहनीय कर्म को नाश कर, और उसके अभाव में अन्य कर्म-शत्रुओं से अजेय होकर पराभूत नहीं होता है, किन्तु अवशिष्ट शेष-कर्मशत्रुओं को भी जीतकर अवश्य ही केवलज्ञान ओ प्राप्त करता है । यही अप्रतिपाति अवधिज्ञान का स्वरूप है ॥ सू० १५ ॥

તેનો ભાવાર્થ આ છે કે જેમ પ્રાભાતિક પ્રકાશ સૂર્યોદય થયા વિના હટતો નથી, અથવા જેમ ફળવાળાં વૃક્ષના ફૂલ વિના ફળ ઉત્પન્ન કરતાં નથી એ જ પ્રમાણે જે અવધિજ્ઞાન કેવળજ્ઞાનની પ્રાપ્તિ કર્યા વિના છુવથી છૂટતું નથી તે અપ્રતિપાતિ અવધિજ્ઞાન છે. અથવા જેમ સામા પક્ષનો નાયક હણતાં તેની સેનાની અન્ય વ્યક્તિઓ દ્વારા વિજયશીલ રાજા પરાભવ પામતો નથી, તથા બાકીનાં શત્રુ દળને હરાવીને તે જેમ રાજ્યશ્રીનો ભોક્તા બને છે એજ પ્રમાણે અવધિજ્ઞાની આત્મામાં કેઈ એવાં કર્મોનો અવધિજ્ઞાનાવરણીય કર્મોનો ક્ષયોપ-શમ હોય છે કે જેના પ્રભાવથી તે કર્મશત્રુઓના નાયક રૂપી મોહનીય કર્મનો નાશ કરીને અને તેના અભાવમાં અન્ય કર્મશત્રુએ વડે અવિનિત થઈને પરા-ભવ પામતો નથી, પણ બાકી રહેલ શેષકર્મશત્રુઓને પણ જીતીને અવશ્ય જ કેવળજ્ઞાન પ્રાપ્ત કરે છે. આજ અપ્રતિપાતિ અવધિજ્ઞાનનું સ્વરૂપ છે. ॥સૂ ૧૫॥

अवधिज्ञानस्य षडपि भेदा उक्ताः, सम्प्रति द्रव्याद्यपेक्षयाऽवधिज्ञानस्य भेदा उच्यन्ते—

मूलम्—तं समासओ चउव्विहं पणत्तं, तं जहा—दव्वओ, खित्तओ, कालओ, भावओ । तत्थ दव्वओ णं ओहिनाणी जहन्नेणं अणंताइं रूविदव्वाइं जाणइ पासइ । उक्कोसेणं सव्वाइं रूविदव्वाइं जाणइ पासइ । खित्तओ णं ओहिनाणी जहन्नेणं अंगुलस्स असंखिज्जइभागं जाणइ पासइ । उक्कोसेणं असंखिज्जाइं अलोके लोगप्पमाणमित्ताइं खंडाइं जाणइ पासइ । कालओ णं ओहिनाणी जहन्नेणं आवलियाए असंखिज्जइभागं जाणइ पासइ । उक्कोसेणं असंखिज्जाओ उस्सप्पिणीओ, ओसप्पिणीओ अईयमणागयं च कालं जाणइ पासइ । भावओ णं ओहिनाणी जहन्नेणं अणंते भावे जाणइ पासइ । उक्कोसेण वि अणंते भावे जाणइ पासइ । सव्वभावाणमणंतभागं जाणइ पासइ ॥सू० १६॥

छाया—तत् समासतश्चतुर्विधं प्रज्ञप्तम् । तद् यथा—द्रव्यतः, क्षेत्रतः, कालतो भावतः । तत्र द्रव्यतः अवधिज्ञानी जघन्येन अनन्तानि रूपिद्रव्याणि जानाति पश्यति । उत्कर्षेण सर्वाणि रूपिद्रव्याणि जानाति पश्यति । क्षेत्रतोऽवधिज्ञानी जघन्येनांगुलस्याऽसंख्येयभागं जानाति पश्यति, उत्कर्षेणाऽसंख्येयानि अलोके लोकप्रमाणमात्राणि खण्डानि जानाति, पश्यति । कालतोऽवधिज्ञानी जघन्येन आवलिकाया असंख्येयभागं जानाति पश्यति । उत्कर्षेण असंख्येया उत्सर्पिणीरवसर्पिणीः—अतीतमनागतं च कालं जानाति, पश्यति । भावतोऽवधिज्ञानी जघन्येन अनन्तान् भावान् जानाति, पश्यति, उत्कर्षेणापि अनन्तान् भावान् जानाति, पश्यति । सर्वभावानामनन्तभागं जानाति पश्यति ॥ सू० १६ ॥

इस प्रकार अवधिज्ञान के छह भेदों का कथन कर अब द्रव्य आदि की अपेक्षा से उसके भेद बतलाते हैं—‘तं समासओ चउव्विहं’ इत्यादि ।

आ रीते अवधिज्ञानना छ लेहोतुं कथन करीने हुवे द्रव्य आदिनी अपेक्षाये तेना लेह अतावे छे—“ तं समासओ चउव्विहं ” इत्यादि—

ટીકા—‘ તં સમાસઓ ’ ઇત્યાદિ । તદ્ અવધિજ્ઞાનં, સમાસતઃ=સંક્ષેપેણ, ચતુર્વિધં પ્રજ્ઞપ્તમ્=પ્રરૂપિતમ્ । તદ્ યથા—દ્રવ્યતઃ ક્ષેત્રતઃ કાલતો ભાવતશ્ચ । તત્ર દ્રવ્યતઃ સ્વલુ અવધિજ્ઞાની જઘન્યેન અનન્તાનિ રૂપિદ્રવ્યાણિ=તૈજસભાષાપ્રાયોગ્યવર્ગણાન્તરાલવર્તીનિ દ્રવ્યાણિ જાનાતિ=વિશેષાકારેણ જાનાતિ । પશ્યતિ=સામાન્યાકારેણ બુદ્ધ્યતે । ઇહ-જ્ઞાનં વિશેષગ્રહણાત્મકમ્, દર્શનં-સામાન્યગ્રહણાત્મકમિતિ ભાવઃ । ઉત્કર્ષેણ સર્વાણિ રૂપિદ્રવ્યાણિ=વાદરસૂક્ષ્માણિ જાનાતિ પશ્યતિ । જ્ઞાનં દર્શનં ચ પૂર્વવત્ ।

નનુ પ્રથમં દર્શનં ભવતિ, તતો જ્ઞાનમિતિ ક્રમઃ, તર્હિં કિમર્થં ક્રમં પરિત્યજ્ય પ્રથમં જાનાતીત્યુક્તમ્ ?,

દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાલ ઓર ભાવ કી અપેક્ષા વહ અવધિજ્ઞાન સંક્ષેપ સે ચાર પ્રકાર કા કહા ગયા હૈ । યહી વાત હસ સૂત્ર દ્વારા પ્રકટ કી જા રહી હૈ—વહ અવધિજ્ઞાન સંક્ષેપ સે ચાર પ્રકાર કા પ્રરૂપિત કિયા ગયા હૈ । વે ચાર પ્રકાર ઉસકે હસ પ્રકાર હૈ—દ્રવ્ય કી અપેક્ષા, ક્ષેત્ર કી અપેક્ષા, કાલ કી અપેક્ષા ઓર ભાવ કી અપેક્ષા સે । હનમેં દ્રવ્ય કી અપેક્ષા સે અવધિજ્ઞાનસંપન્ન આત્મા જઘન્ય અવસ્થામેં અનંત રૂપી દ્રવ્યોં કો—તૈજસ ઓર ભાષા કે પ્રાયોગ્ય વર્ગણાઓં કે અન્તરાલવર્તી દ્રવ્યોં કો—વિશેષરૂપ આકાર સે જાનતા હૈ, ઓર સામાન્યરૂપ આકાર સે દેખતા હૈ । વસ્તુ કા વિશેષરૂપ સે જાનના જ્ઞાન હૈ ઓર સામાન્યરૂપ સે ઉસકા ગ્રહણ કરના દર્શન હૈ । તથા ઉત્કૃષ્ટ રૂપ સે વહ અવધિજ્ઞાની આત્મા સમસ્તરૂપી દ્રવ્યોં કો—વાદર સૂક્ષ્મ રૂપી પદાર્થોં કો—જાનતા હૈ ઓર દેખતા હૈ ।

દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાળ અને ભાવની અપેક્ષાએ તે અવધિજ્ઞાન સંક્ષેપથી ચાર પ્રકારનું કહેલ છે. એ જ વાત. આ સૂત્ર દ્વારા પથટ કરવામાં આવે છે—તે અવધિજ્ઞાન સંક્ષેપમાં ચાર પ્રકારનું પ્રરૂપિત કરાયું છે. તે ચાર પ્રકાર આ છે—દ્રવ્યકી અપેક્ષાએ, ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ, કાળની અપેક્ષાએ અને ભાવની અપેક્ષાએ તેઓમાં દ્રવ્યની અપેક્ષાએ અવધિજ્ઞાનવાળો આત્મા જઘન્ય અવસ્થામાં અનેક રૂપી દ્રવ્યોને, તૈજસભાષાની પ્રાયોગ્ય વર્ગણાઓના અન્તરાલવર્તી દ્રવ્યોને વિશેષ રૂપ આકારથી જાણે છે અને સામાન્ય રૂપ આકારથી દેખે છે. વસ્તુને વિશેષ રૂપથી જાણવી તે જ્ઞાન છે અને સામાન્યરૂપથી તેને ગ્રહણ કરવી તે દર્શન છે. તથા ઉત્કૃષ્ટ રૂપે તે અવધિજ્ઞાની આત્મા સમસ્ત રૂપી દ્રવ્યોને—વાદર સૂક્ષ્મ રૂપી પદાર્થોને જાણે છે અને દેખે છે.

ઉચ્યતે—ઇહ સર્વા લબ્ધયઃ સાકારોપયોગવતઃ પ્રજાયન્તે, અવધિરપિ લબ્ધિ-  
વિશેષતયા પ્રોચ્યતે, અતોઽસૌ પ્રથમમુત્પદ્યમાનો જ્ઞાનરૂપ એવ જાયતે, ન તુ દર્શન-  
રૂપઃ, તત્ર હિ ક્રમેણોપયોગઃ પ્રવર્તતે, જ્ઞાનોપયોગાનન્તરં દર્શનરૂપોઽપિ, તસ્માત્  
પ્રથમતો જ્ઞાનમુક્તં, પશ્ચાદ્દર્શનમ્ ।

અથવા—ઇહાધ્યયને સમ્યગ્જ્ઞાનં પ્રરૂપયિતુમુપક્રાન્તમ્ । યતોઽનુયોગપ્રાર-  
મ્મેઽવશ્યં મજ્જલાય જ્ઞાનપંચકરૂપો ભાવનન્દિર્વક્તવ્ય ઇતિ તત્પ્રરૂપણાર્થમિદમધ્યય-

શંકા—જ્ઞાન કે પહિલે દર્શન હોતા હૈ વાદ મેં જ્ઞાન, ફિર કયા કારણ  
હૈ જો એસે ક્રમ કા ઉલ્લંઘન કરકે સૂત્રકારને સૂત્ર મેં પહિલે “જાનતા હૈ”  
એસા કહા ઔર પશ્ચાત્ “દેખતા હૈ” એસા કહા ? ।

ઉત્તર—ઇસ પ્રકાર કે કહને કા ભાવ સૂત્રકાર કા યહ હૈ—જિતની  
ભી લબ્ધિયાં હોતી હૈં વે સવ સાકાર ઉપયોગ વાલે જીવ કે હોતી હૈં—  
નિરાકાર ઉપયોગ વાલે જીવ કે નહીં, અતઃ અવધિ ભી એક લબ્ધિ-  
વિશેષ હૈ । ઇસ કારણ જબ યહ પ્રથમ ઉત્પન્ન હોતી હૈ તો જ્ઞાનરૂપ હી  
ઉત્પન્ન હોતી હૈ, દર્શનરૂપ નહીં । ઇસ મેં ક્રમશઃ ઉપયોગોં કી પ્રવૃત્તિ  
હોતી હૈ । જ્ઞાનોપયોગ કે વાદ દર્શનરૂપ ભી ઉપયોગ હોતા હૈ, ઇસલિયે  
સૂત્રકારને સૂત્ર મેં પહિલે જ્ઞાન કહા ઔર ઇસકે વાદ મેં દર્શન કહા હૈ ।

અથવા—ઇસ અધ્યયન મેં સમ્યગ્જ્ઞાન કી પ્રરૂપણા હી મુખ્યતઃ કરની  
હૈ, ઇસી લિયે અનુયોગ કે પ્રારંભ મેં મંગલનિમિત્ત જ્ઞાનપંચકરૂપ  
ભાવનંદી વક્તવ્ય હૈ, ઔર ઇસી ભાવનંદી કી પ્રરૂપણા કે લિયે ઇસ

શંકાઃ—જ્ઞાનની પહેલા દર્શન હોય છે પછી જ્ઞાન. તો પછી શા માટે  
એવા ક્રમનું ઉલ્લંઘન કરીને સૂત્રકારે સૂત્રમાં પહેલાં “જાણે છે” એવું કહ્યું  
અને પછી “દેખે છે” એવું કહ્યું છે ?

ઉત્તરઃ—આ પ્રમાણે સૂત્રકારના કથનનો ભાવ આ છે—જેટલી પણ લબ્ધિઓ  
હોય છે તે બધી સાકાર ઉપયોગવાળા બને હોય છે, નિરાકાર ઉપયોગવાળાં  
બને નહીં. કારણ કે અવધિ પણ એક ખાસ લબ્ધિ છે. તે કારણે તે બ્યારે  
પ્રથમ ઉત્પન્ન થાય છે ત્યારે જ્ઞાનરૂપે જ ઉત્પન્ન થાય છે. દર્શનરૂપે નહીં. તેમાં  
ક્રમશઃ ઉપયોગોની પ્રવૃત્તિ થાય છે. જ્ઞાનોપયોગની પછી દર્શનરૂપ પણ ઉપયોગ  
હોય છે. તેથી સૂત્રકારે સૂત્રમાં પહેલું જ્ઞાન કહ્યું છે અને પછી દર્શન કહ્યું છે.

અથવા—આ અધ્યયનમાં સમ્યગ્જ્ઞાનની પ્રરૂપણા જ મુખ્યત્વે કરવાની છે.  
તેની અનુયોગની શરૂઆતમાં મંગળ નિમિત્ત જ્ઞાન પંચકરૂપ ભાવનંદી વક્તવ્ય  
છે. અને એજ ભાવનંદીની પ્રરૂપણાને માટે આ અધ્યયનનો પ્રારંભ થયો છે.

નમૌરબ્ધમ્, તસ્માત્ સમ્યગ્જ્ઞાનમિદ્ધ પ્રધાનં, ન તુ મિથ્યાજ્ઞાનં, તસ્ય માત્રજ્ઞ્યહેતુત્વા-  
ભાવાત્ । દર્શનં તુ અવધિજ્ઞાનવિભક્તસાધારણમિતિ તદપ્રધાનમ્, પ્રધાનાનુયાયી ચ  
લૌકિકો લોકોત્તરશ્ચ માર્ગઃ । તથા ચ પ્રધાનત્વાત્ પ્રથમં જ્ઞાનમુક્તં પશ્ચાદ્ દર્શનમિતિ ।

ક્ષેત્રતોઽવધિજ્ઞાની જઘન્યેન=સર્વતઃ સ્તોકતયા, જઘન્યેનેતિ ભાવપ્રધાનો નિર્દેશઃ ।  
અંગુલસ્યાસંખ્યેયભાગં જાનાતિ પશ્યતિ । ઉત્કર્ષેણ=ઉત્કર્ષતઃ, અસંખ્યેયાનિ=અસં-  
ખ્યાતસંખ્યકાનિ, અલોકે=અલોકાકાશે લોકપ્રમાણાનિ=ચતુર્દશરજ્જ્વાત્મકાનિ  
खण्डानि જાનાતિ, પશ્યતિ, અલોકે યદિ અસંખ્યાતાનિ લોકપ્રમાણાનિ खण्डानि-

અધ્યયન કા પ્રારંભ હુઆ હૈ, અતઃ ઇસ સ્થિતિ મેં સમ્યગ્જ્ઞાન યહાં  
પ્રધાનં માના ગયા હૈ, મિથ્યાજ્ઞાન નહીં, ક્યોં કિ મિથ્યાજ્ઞાન મેં મંગલ  
કે પ્રતિ હેતુરૂપતા નહીં હૈ । યહ હેતુરૂપતા સમ્યગ્જ્ઞાન મેં હી હૈ, ક્યોં કિ  
વહ મિથ્યાદર્શન કે સાથ નહીં રહતા હૈ । દર્શન મેં એસી વાત નહીં હૈ—  
વહ જિસ પ્રકાર અવધિજ્ઞાનરૂપ સમ્યગ્જ્ઞાન કે સાથ રહતા હૈ ઉસી  
પ્રકાર મિથ્યાજ્ઞાનરૂપવિભક્તગાવધિ કે બી સાથ રહતા હૈ, ઇસલિયે  
દર્શન મેં પ્રધાનતા નહીં હૈ । જો પ્રધાન હુઆ કરતા હૈ ઉસકા હી અનુયાયી  
લૌકિક ઔર લોકોત્તર માર્ગ હોતા હૈ, ઇસલિયે પ્રધાન હોને સે સૂત્ર મેં  
પ્રથમ જ્ઞાન કહા ગયા હૈ ઔર બાદ મેં દર્શન ।

ક્ષેત્ર કી અપેક્ષા અવધિજ્ઞાની જઘન્યરૂપસે અંગુલ કે અસંખ્યાતવે  
ભાગ ક્ષેત્ર કો જાનતા હૈ ઔર દેખતા હૈ । ઉત્કૃષ્ટરૂપ સે અલોકાકાશ  
મેં યદિ લોકપ્રમાણ અસંખ્યાત खण्ड સંભવિત હોજાવે તો ઉન્હેં બી  
અવધિજ્ઞાની જાન સકતા હૈ ઔર દેખ સકતા હૈ । લોક કા પ્રમાણ ચૌદહ

તેથી આ સ્થિતિમાં સમ્યગ્ જ્ઞાન અહીં મુખ્ય માનેલ છે, મિથ્યાજ્ઞાન નહી.  
કારણ કે મિથ્યાજ્ઞાનમાં મંગળની તરફ હેતુરૂપતા તથી. આ હેતુરૂપતા સમ્યગ્  
જ્ઞાનમાં જ છે કારણ કે મિથ્યાદર્શનની સાથે રહેતું નથી. દર્શનમાં એવી વાત નથી.  
તે જે પ્રમાણે અવધિજ્ઞાન રૂપ સમ્યગ્જ્ઞાનની સાથે રહે છે તે જ પ્રમાણે મિથ્યા-  
જ્ઞાનરૂપ—વિભંગાવધિની સાથે પણ રહે છે તેથી દર્શન મુખ્ય નથી. જે પ્રધાન  
(મુખ્ય) હોય છે તેનો જ અનુયાયી લૌકિક અને લોકોત્તર માર્ગ હોય છે. આ રીતે  
પ્રધાન હોવાથી સૂત્રમાં પ્રથમ જ્ઞાન કહ્યું છે અને પછી દર્શન કહ્યું છે.

ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ અવધિજ્ઞાની જઘન્ય રૂપથી અંગુલના અસંખ્યાતમાં  
ભાગના ક્ષેત્રને જાણે છે અને દેખે છે. ઉત્કૃષ્ટરૂપથી અલોકાકાશમાં જે અસંખ્યાત  
ખંડ સંભવિત થઈ જાય તો તેમને પણ અવધિજ્ઞાની જાણી શકે છે અને દેખી  
શકે છે. લોકોત્તર પ્રમાણ ચૌદ રાજ્ય બતાવ્યું છે. કાળની અપેક્ષાએ અવધિજ્ઞાની

સંભવેયુસ્તહિ તાન્યપિ અવધિજ્ઞાની પશ્યેદિત્યર્થઃ । કાલતોઽવધિજ્ઞાની જઘન્યેન આવલિકાયા અસંખ્યેયભાગં જાનાતિ પશ્યતિ । ઉત્કર્ષતોઽસંખ્યેયા ઉત્સર્પિણીઃ= અસંખ્યાતોત્સર્પિણીપ્રમાણમ્, અસંખ્યેયા અવસર્પિણી=અસંખ્યાતાવસર્પિણીપ્રમાણમ્, અતીતમનાગતં ચ કાલં જાનાતિ પશ્યતિ । ચ શબ્દાત્ વર્તમાનમપિ કાલં જાનાતિ પશ્યતીતિ ।

ભાવતોઽવધિજ્ઞાની જઘન્યેન અનન્તાન્ ભાવાન્=પર્યાયાન્, જાનાતિ, પશ્યતિ । इदं च-पर्यायाधारद्रव्यानन्तत्वादुक्तम्, न तु प्रतिद्रव्यापेक्षया, एकद्रव्यमाश्रित्य हि संख्येयानसंख्येयान् वा पर्यायानेव अवधिज्ञानी जानाति पश्यति । उत्कर्षेणाऽपि अनन्तान् भावान् जानाति, पश्यति । तत्र जघन्यापेक्षया उत्कृष्टमनन्तगुणम् भवती-

રાજૂ વતલાયા ગયા હૈ । કાલ કી અપેક્ષા અવધિજ્ઞાની જઘન્ય સે આવલિકા કે અસંખ્યાતવે ભાગ કો જાનતા ઓર દેખતા હૈ, ઓર ઉત્કૃષ્ટ કી અપેક્ષા સે અસંખ્યાત ઉત્સર્પિણીપ્રમાણ ઓર અસંખ્યાત અવસર્પિણીપ્રમાણ અતીત એવં અનાગતકાલ કો જાનતા ઓર દેખતા હૈ । તથા વર્તમાનકાલ કો ભી જાનતા દેખતા હૈ । ભાવ કી અપેક્ષા અવધિજ્ઞાની જઘન્યરૂપ સે અનંતપર્યાયોં કો જાનતા ઓર દેખતા હૈ । પર્યાયોં કે આધારભૂત દ્રવ્ય અનંત હૈ, અતઃ હસ અપેક્ષા અનંતપર્યાયોં કો જાનને દેખને કી વાત અવધિજ્ઞાની કે ભાવ કી અપેક્ષા સે કહી ગઈ હૈ, એક દ્રવ્ય કી અપેક્ષા નહીં । એક દ્રવ્ય કી અપેક્ષા તો અવધિજ્ઞાની સંખ્યાત અથવા અસંખ્યાત પર્યાયોં કો હી જાનતા દેખતા હૈ । ઉત્કર્ષ સે અવધિજ્ઞાની જીવ અનંતપર્યાયોં કો જાનતા ઓર દેખતા હૈ । જઘન્યરૂપ સે ભી અવધિજ્ઞાની અનંતપર્યાયોં કો જાનતા હૈ ઓર

જઘન્યથી આવલિકાના અસંખ્યાતમાં લાગને જાણે છે અને દેખે છે. અને ઉત્કૃષ્ટની અપેક્ષાએ અસંખ્યાત ઉત્સર્પિણી પ્રમાણ અને અસંખ્યાત અવસર્પિણી પ્રમાણ ભૂત અને લવિષ્યકાળને જાણે છે અને દેખે છે. તથા વર્તમાનકાળને પણ જાણે છે અને દેખે છે. લાવની અપેક્ષાએ અવધિજ્ઞાની જઘન્યરૂપથી અનેક પર્યાયોને જાણે છે અને દેખે છે. પર્યાયોના આધારભૂત દ્રવ્ય અનંત છે તેથી તે અપેક્ષાએ અનંત પર્યાયોને જાણવા દેખવાની વાત અવધિજ્ઞાનીના લાવની અપેક્ષાએ કહેલ છે, એક દ્રવ્યની અપેક્ષાએ નહીં. એક દ્રવ્યની અપેક્ષાએ તો અવધિજ્ઞાની સંખ્યાત અથવા અસંખ્યાત પર્યાયોને જ જાણે છે તથા દેખે છે ઉત્કર્ષથી અવધિજ્ઞાની જીવ અનંત પર્યાયોને જાણે અને દેખે છે. જઘન્ય રૂપથી પણ અવધિજ્ઞાની અનંત પર્યાયોને જાણે છે અને ઉત્કૃષ્ટથી પણ અનંત પર્યા-



ત્યાશયેનાવધિજ્ઞાની જઘન્યેન સર્વરૂપિદ્રવ્યાપેક્ષયા પર્યાયાણામનન્તભાગં જાનાતિ પશ્યતિ । તદુચ્યતે-‘સર્વભાવાણ’ ઇત્યાદિ । સર્વભાવાનામનન્તભાગં જાનાતિ પશ્યતિ॥

તદેવમવધિજ્ઞાનં દ્રવ્યાદિભેદતોઽપ્યભિધાય સંપ્રતિ સંગ્રહગાથામાહ—

મૂલમ્—ઓહી ભવપચ્ચઙ્ઞઓ, ગુણપચ્ચઙ્ઞઓ ય વણિણઓ દુવિહો ।

તસ્સ ય બહૂ વિકપ્પા, દઠ્ઠવે સ્વિત્તે ય કાલે ય ॥ ૧ ॥

છાયા—અવધિર્ભવપ્રત્યયિકો, ગુણપ્રત્યયિકશ્ચ વર્ણિતો દ્વિવિધઃ ।

તસ્ય ચ વહ્વો વિકલ્પાઃ, દ્રવ્યે ક્ષેત્રે ચ કાલે ચ ॥ ૧ ॥

ટીકા—‘ઓહી’ ઇત્યાદિ । ભવપ્રત્યયિકગુણપ્રત્યયિકશ્ચેતિ દ્વિવિધોઽવધિર્વર્ણિતઃ ।

તસ્ય દ્વિવિધસ્ય ચ વહ્વો વિકલ્પા ભવન્તિ । દ્રવ્યે ઇતિ-દ્રવ્યવિપયાઃ, પરમાણુસ્કન્ધાદિ-

ઉત્કૃષ્ટ સે મી અનંતપર્યાયોં કો જાનતા હૈ । ઉસમેં જઘન્ય કી અપેક્ષા ઉત્કૃષ્ટ અનંતગુણા હોતા હૈ, અતઃ અવધિજ્ઞાની જઘન્ય સે સર્વ રૂપી દ્રવ્યોં કી અપેક્ષા પર્યાયોં કે અનંતવેં ભાગ કો જાનતા ઓર દેખતા હૈ ॥

હસ પ્રકાર અવધિજ્ઞાન કા દ્રવ્યાદિક ભેદોં કાં અપેક્ષા વર્ણન કરકે સૂત્રકાર અવ હસ વિષયમેં સંગ્રહ ગાથા કા કથન કરતે હૈ—‘ઓહી ભવપચ્ચઙ્ઞઓ’ ઇત્યાદિ ।

ભવપ્રત્યયિક ઓર ગુણપ્રત્યયિક કે ભેદ સે અવધિજ્ઞાન દો પ્રકાર કા હોતા હૈ । ઇન દોનોં પ્રકાર કે અવધિજ્ઞાન કે અનેક ભેદ હૈ । દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર ઓર કાલ, તથા “ચ” શબ્દ સે ભાવ કો વિષય કરને કે કારણ અવધિજ્ઞાન કે ઓર મી ચાર ભેદ હોતે હૈ । પરમાણુ તથા સ્કન્ધ આદિ દ્રવ્ય કો વિષય કરનેવાલા અવધિજ્ઞાન દ્રવ્ય-અવધિજ્ઞાન હૈ । અંગુલ કે

ચેને જાણે છે. તેમાં જઘન્યના કરતાં ઉત્કૃષ્ટ અનંતગણું હોય છે, તેથી અવધિજ્ઞાની જઘન્યથી સર્વ રૂપી દ્રવ્યોની અપેક્ષાએ પર્યાયોના અનંતમાં ભાગને જાણે અને દેખે છે.

આ રીતે અવધિજ્ઞાનનું દ્રવ્યાદિક ભેદોની અપેક્ષાએ વર્ણન કરીને સૂત્રકાર હવે આ વિષયમાં સંગ્રહ ગાથાનું કથન કરે છે—

“ઓહી ભવ પચ્ચઙ્ઞઓ” ઇત્યાદિ—

ભાવપ્રત્યયિક અને ગુણપ્રત્યયિકના ભેદથી અવધિજ્ઞાન બે પ્રકારનું હોય છે. આ ભન્ને પ્રકારનાં અવધિજ્ઞાનના અનેક ભેદ છે. દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર અને કાળ તથા “ચ” શબ્દથી ભાવકો વિષય કરવાના કારણે અવધિજ્ઞાનનાં ખીલ્લં પણ ચાર ભેદ થાય છે. પરમાણુ અને સ્કન્ધ આદિ દ્રવ્યને વિષય કરનાર અવધિજ્ઞાન નં ૨૦



દ્રવ્યભેદાત્ । ક્ષેત્રે इति-ક્ષેત્રવિષયાઃ અંગુલાઽસંખ્યેયભાગાદિવિશિષ્ટક્ષેત્રભેદાત્ । કાલે इति કાલવિષયાઃ આવલિકાઽસંખ્યેયભાગાદ્યુપલક્ષિતકાલભેદાત્ । ચ-શબ્દાત્ ભાવવિષયાશ્ચ વર્ણાદ્યનેકપ્રકારત્વાદ્ ભાવાનામિત્યર્થઃ ॥ ૧ ॥

एवमधिज्ञानमुक्तं, संप्रति ये नियतावधिकाः, ये चानियतावधिका भवन्ति तान् प्राह—

मूलम्—नेरइय—देव—तित्थंकरा य, ओहिस्सऽबाहिरा हुंति ।

पासंति सव्वओ खलु, सेसा देसेण पासंति ॥ ૨ ॥

से तं ओहिनाणपच्चवखं ॥

છાયા—નૈરયિક—દેવ—તીર્થંકરાશ્ચ, અવધેરવાહ્યા ભવન્તિ ।

पश्यन्ति सर्वतः खलु, शेषा देशेन पश्यन्ति ॥ ૨ ॥

તદેતદવધિજ્ઞાનપ્રત્યક્ષમ્ ॥

અસંખ્યાતવે ભાગ આદિ વિશિષ્ટ ક્ષેત્ર કે ભેદ સે ક્ષેત્ર કો વિષય કરને-વાલા અવધિજ્ઞાન ક્ષેત્ર-અવધિજ્ઞાન હૈ । આવલિકા કે અસંખ્યેયભાગ આદિ સે ઉપલક્ષિત કાલ કે ભેદ સે કાલ કો વિષય કરનેવાલા અવધિ-જ્ઞાન કાલ-અવધિજ્ઞાન હૈ । વર્ણ આદિ કી અપેક્ષા અનેક ૨ પ્રકાર કે હોને સે આવોં કો-પર્યાયોં કો-વિષય કરનેવાલા અવધિજ્ઞાન ભાવ-અવધિજ્ઞાન હૈ ॥ ૧ ॥

इस प्रकार अवधिज्ञान का वर्णन करके अब सूत्रकार नियत अवधिवालों का और अनियत अवधिवालों का वर्णन करते हैं—‘नेरइय-देव-तित्थंकरा’ इत्यादि ।

દ્રવ્ય અવધિજ્ઞાન છે. અંગુલના અસંખ્યાતમાં ભાગ આદિ વિશિષ્ટ ક્ષેત્રના ભેદથી ક્ષેત્રને વિષય કરનારું અવધિજ્ઞાન ક્ષેત્ર અવધિજ્ઞાન છે. આવલિકાના અસંખ્યેય ભાગ આદિથી ઉપલક્ષિત કાળના ભેદથી કાળને વિષય કરનારું અવધિજ્ઞાન કાળ અવધિજ્ઞાન છે.

વર્ણુ આદિની અપેક્ષાએ અનેક અનેક પ્રકારનું હોવાથી ભાવેને-પર્યાયોને વિષય કરનારું અવધિજ્ઞાન ભાવ અવધિજ્ઞાન છે ॥ ૧ ॥

આ પ્રમાણે અવધિજ્ઞાનનું વર્ણન કરીને હવે સૂત્રકાર નિયત અવધિવાળાનું અને અનિયત અવધિવાળાનું વર્ણન કરે છે—“ નેર ઇય દેવ તિત્થકરા ” ઇત્યાદિ,

ટીકા—‘નૈરઙ્ય-દેવ૦’ ઇત્યાદિ । નૈરયિક-દેવ-તીર્થકરાશ્ચ=નૈરયિકાશ્ચ દેવાશ્ચ તીર્થકરાશ્ચ, નૈરયિકદેવતીર્થકરાઃ, ચ-શબ્દોઽવધારણે, સ ચ ભિન્નક્રમસ્તેન નૈરયિક-દેવતીર્થકરાઃ, અવધેઃ=અવધિજ્ઞાનસ્ય, અવાહ્યા એવ ભવન્તિ, કદાપિ વાહ્યા ન ભવન્તિ, एषामवधिर्नियमेन भवतीत्यर्थः । તેન ચાવધિના સર્વત એવ પશ્યન્તિ, ન તુ દેશતઃ । ‘તીર્થઙ્કરાઃ’ ઇત્યત્ર ‘તીર્થાચ્ચૈકે’ ઇતિ વચનાત્ ‘સ્વ’ પ્રત્યયે તીર્થ-શબ્દાત્ ‘મમ્’ ભવતિ ।

નનુ ‘પશ્યન્તિ સર્વતઃ સ્વલુ’ ઇત્યેવાસ્તુ ‘અવધેરવાહ્યા ભવન્તી’-ત્યેતત્કથનં ત્વનર્થકમ્, નિયતાવધિકત્વરૂપાર્થસ્ય સુતરાં લાભાત્, તથાહિ-‘દોષહં ભવપચ્ચઙ્ગ્યં,

નારકી જીવ, દેવ ઓર તીર્થકર યે નિયમતઃ અવધિજ્ઞાન સે યુક્ત હોતે હૈં । ઇસ અવધિજ્ઞાન કે દ્વારા વે સર્વ પદાર્થોં કો સર્વદેશ સે જાનતે હૈં ઓર દેખતે હૈં, એક દેશ સે નહીં । તાત્પર્ય ઇસકા કેવલ યહી હૈં કિ અવધિજ્ઞાન કા વિષય કુછ પર્યાયોંસહિત રૂપી દ્રવ્ય હૈં । તીર્થકર દેવ ઓર નારકી, યે લોક મેં રહે હુએ પદાર્થોં કો સર્વદેશ સે જાનતે ઓર દેખતે હૈં । મનુષ્ય ઓર તિર્યચ્ચ કુછ પર્યાયોંસહિત રૂપી પદાર્થ કો એકદેશ સે જાનતે હૈં । ઇનમેં મનુષ્ય સર્વદેશ સે બી જાનતે હૈં ।

શંકા—ગાથા મેં જો “પાસંતિ સઽવઓ સ્વલુ” એસા પદ રચા હૈં ડસસે હી “ઓહિસ્સઽવાહિરા હંતિ” ઇસ ગાથાંશ કા અર્થ ગૃહીત હો જાતા હૈં । અતઃ ઇસકી કોઈ સાર્થકતા નહીં હૈં । કારણ કિ “અવધેઃ અવાહ્યાઃ ભવન્તિ” ઇસસે જાં નૈરયિક દેવ, તથા તીર્થકરોં મેં નિયતા-વધિકત્વરૂપ અર્થ પ્રકટ કિયા જાતા હૈં ડસકા લાભ “પશ્યન્તિ સર્વતઃ સ્વલુ” ઇસ કથન સે સર્વથા હો જાતા હૈં । અન્યત્ર બી એસા હી કહા હૈં—

નારકી જીવ, દેવ અને તીર્થકર એ નિયમતઃ અવધિજ્ઞાનવાળાં હોય છે. આ અવધિજ્ઞાન વડે તેઓ સર્વ પદાર્થોંને સર્વદેશથી જાણે છે અને દેખે છે, એક દેશથી નહીં. તેનું તાત્પર્ય ઇક્ષત એજ છે કે અવધિજ્ઞાનનો વિષય કેટલીક પર્યાયોં સહિત રૂપી દ્રવ્ય છે. તીર્થકર, દેવ અને નારકી એ, લોકમાં રહેલાં પદાર્થોંને સર્વદેશથી જાણે છે અને દેખે છે. મનુષ્ય અને તિર્યચ્ચ કેટલીક પર્યાયોં સહિત રૂપી પદાર્થને એક દેશથી જાણે છે. તેમનામાં મનુષ્યે સર્વદેશથી પણ જાણે છે.

શંકા—ગાથામાં જે “પશ્યન્તિ સર્વતઃ સ્વલુ” એવું પદ રાખ્યું છે તેથી જ “અવધેઃ અવાહ્યાઃ ભવન્તિ” આ ગાથાંશનો અર્થ ગ્રહણ થઈ જાય છે તેથી તેની કોઈ સાર્થકતા નથી. કારણ કે “અવધેઃ અવાહ્યાઃ ભવન્તિ” તેનાથી જે નારકી, દેવ તથા તીર્થકરોંમાં નિયતાવધિકત્વ રૂપ અર્થ પ્રગટ કરાયો છે તેનો લાભ

તં જહા-દેવાણં નેરઙ્યાણં ચ' ઇતિ । દેવાનાં નારકાણાં ચાવધિર્ભવપ્રત્યયિકો ભવતિ, જન્મત એવ તેષામવધિજ્ઞાનં સિદ્ધમ્ । તીર્થંકરાણામપિ પરભવસમુત્પન્નાવધિજ્ઞાનસ્ય પ્રાપ્તિર્જન્મતઃ સુતરાં સિદ્ધા ? ।

ઉચ્યતે—‘પશ્યન્તિ સર્વતઃ સ્વલુ’ ઇત્યેતાવન્માત્રોક્તૌ નૈરયિકદેવાદીનાં નિયતાવધિત્વે સિદ્ધેઽપિ તદવધિજ્ઞાનસ્ય ન સર્વકાલાવસ્થાયિત્વસિદ્ધિસ્તસ્માત્ ‘નૈરયિકદેવ-તીર્થંકરાઃ સદાઽવધિજ્ઞાનવન્તો ભવન્તી’—તિ જ્ઞાપનાર્થમ્ ‘અવધેરવાહ્યા ભવન્તી’—ત્યુક્તમિતિ ।

દેવ તથા નારકિયોં કે ભવપ્રત્યયિક અવધિજ્ઞાન હોતા હૈ । હસ કથન સે હસ વાત કી પુષ્ટિ હોને મેં કોઈ વાધા નહીં આતી હૈ કિ દેવ ઔર નારકિયોં કે અવધિજ્ઞાન જન્મ સે હી હોતા હૈ । તથા તીર્થંકરોં કે મી જો જન્મતઃ અવધિજ્ઞાન હોતા હૈ વહ ઉન્હેં પરભવ સે હી પ્રાપ્ત હુઆ રહતા હૈ અતઃ પરભવ મેં સમુત્પન્ન અવધિજ્ઞાન કી પ્રાપ્તિ જન્મતઃ ઉનમેં સહજ હી સિદ્ધ હો જાતી હૈ ।

ઉત્તર—યદ્યપિ “પશ્યન્તિ સર્વતઃ સ્વલુ” ઇતનામાત્ર કહનેપર નૈરયિક તથા દેવાદિકોં મેં નિયતાવધિકતા સિદ્ધ હો જાતી હૈ ફિર મી ‘ઉનમેં અવધિજ્ઞાન સર્વકાલાવસ્થાયી હોતા હૈ’ હસકી સિદ્ધિ “પશ્યન્તિ સર્વતઃ સ્વલુ” ઇતને માત્ર કહને સે નહીં હોતી હૈ હસલિયે ‘નૈરયિક, દેવ તથા તીર્થંકર સદા અવધિજ્ઞાન વાલે હોતે હૈં’ હસ વાત કો વતલારે કે કે લિયે “અવધેઃ અવાહ્યાઃ ભવન્તિ” એસા કહા હૈ । અતઃ યહ કહના સાર્થક હી હૈ, નિરર્થક નહીં ।

“પશ્યન્તિ સર્વતઃ સ્વલુ” આ ગાથાંશથી ળરાળર થઈ જાય છે. બીજે પણ એવું કહ્યું છે—દેવ તથા નારકીઓને ભવપ્રત્યયિક અવધિજ્ઞાન થાય છે. આ કથનથી આ વાતને સમર્થન મળવામાં કોઈ મુશ્કેલી પડતી નથી. કે દેવ અને નારકીઓને અવધિજ્ઞાન જન્મથી જ હોય છે. તથા તીર્થંકરોને પણ જે જન્મથી જ અવધિજ્ઞાન હોય છે તે તેમને પરભવથી જ મળેલું હોય છે. તેથી પરભવમાં સમુત્પન્ન અવધિજ્ઞાનની પ્રાપ્તિ જન્મથી જ તેઓમાં સ્વાભાવિક રીતે જ સિદ્ધ થાય છે.

ઉત્તર—જો કે “પશ્યન્તિ સર્વતઃ સ્વલુ” માત્ર એટલું જ કહેવાથી નારકી તથા દેવાદિકોમાં નિયતાવધિકતા સિદ્ધ થઈ જાય છે તો પછી “તેઓમાં અવધિજ્ઞાન સર્વકાળ અવસ્થાયી હોય છે” તેની સિદ્ધિ “પશ્યન્તિ સર્વતઃ સ્વલુ” એટલું માત્ર કહેવાથી થતી નથી. તેથી નારકી, દેવ તથા તીર્થંકર સદા અવધિજ્ઞાનવાળાં હોય છે એ વાતને બતાવવાને માટે “અવધેઃ અવાહ્યાઃ ભવન્તિ” એવું કહ્યું છે. તેથી આ ગાથાંશ સાર્થક જ છે નિરર્થક નથી.

યદ્યેવં, તર્હિ તીર્થકરાણામવધેઃ સર્વકાલાવસ્થાયિત્વં વિરુદ્ધયતે, ઇતિ ચેન્ન, છદ્મસ્થકાલસ્યૈવ વિવક્ષિતત્વાત્ ।

યદ્વા—તદેવમધિજ્ઞાનમુક્તમ્, સંપ્રતિ યે બાહ્યાવધિકાઃ, યે ચાવાહ્યાવધિકા ભવન્તિ, તાન્ પ્રદર્શયતિ—‘ નેરઙ્ગ્ય ’ ઇત્યાદિ । નૈરયિક દેવતીર્થકરાઃ, અવધેઃ=અવધિજ્ઞાનસ્ય, અવાહ્યાઃ ભવન્તિ, બાહ્યા ન ભવન્તીત્યર્થઃ । અવધ્યુપલબ્ધ ક્ષેત્રસ્યાન્તરાલે વર્તન્તે ઇતિ ભાવઃ । તથા—સર્વતઃ=સર્વાસુ દિક્ષુ વિદિક્ષુ ચ, સ્વલુ-શબ્દોડવધારણા-ર્થકઃ, સર્વાસ્વેવ દિક્ષુ વિદિક્ષુ પશ્યન્તિ ।

શંકા—‘તીર્થકરોં મેં અવધિજ્ઞાન સર્વકાલ રહતા હૈ ’ યહ કથન આપ કા વિરુદ્ધ પડતા હૈ, ક્યોં કિ કેવલજ્ઞાન હોને પર ઉનસે અવધિજ્ઞાન છૂટ જાતા હૈ ।

ઉત્તર—‘તીર્થકરોં કે અવધિજ્ઞાન સર્વકાલ અવસ્થાયી રહતા હૈ’ યહ કથન ઉનમેં છદ્મસ્થકાલ કી અપેક્ષા સે હી જાનના ચાહિયે, ઓર ઉસી કાલ કી યહાં વિવક્ષા હૈ ।

ઇસ ગાથાકા અર્થ અવતરણાસહિત દૂસરે પ્રકારસે કિયા જાતા હૈ—

અથવા—ઇસ તરહ અવધિજ્ઞાન કહ દિયા ગયા હૈ, અબ જો બાહ્યાવધિક હોતે હૈં તથા જો બાહ્યાવધિક નહીં હોતે હૈં ઉન્હેં બતલાયા જાતા હૈં—‘નેરઙ્ગ્યદેવ૦’ ઇત્યાદિ ।

નૈરયિક, દેવ, તથા તીર્થકર યે અવધિજ્ઞાન કે અબાહ્ય હોતે હૈં અર્થાત્ ઉસસે બાહિર નહીં હોતે હૈં, અર્થાત્—અવધિજ્ઞાન સે ઉપલબ્ધક્ષેત્ર કે અન્તરાલવર્તી હોતે હૈં, તથા સર્વતઃ સમસ્ત હી દિશાઓં મેં વિદિશાઓં મેં દેખતે હૈં ।

શંકા—તીર્થકરોંમાં અવધિજ્ઞાન સર્વકાળ રહે છે આ કથન આપની વિરુદ્ધ પડે છે, કારણ કે કેવળજ્ઞાન થતાં તેઓમાંથી અવધિજ્ઞાન છૂટી જાય છે.

ઉત્તર—તીર્થકરોંનું અવધિજ્ઞાન સર્વકાળ અવસ્થાયી રહે છે, આ કથન તેઓમાં છદ્મસ્થ કાળની અપેક્ષાએ જ જાણવું જોઈ એ. અને એજ કાળની અહીં વિવક્ષા છે.

આ ગાથાનો અર્થ અવતરણા સહિત બીજી રીતે કરાય છે—અથવા આ રીતે અવધિજ્ઞાન કહી દેવાયું છે—હવે જે બાહ્યાવધિક હોય છે તથા જે બાહ્યાવધિક નથી હોતાં તેમને બતાવવામાં આવે છે—“ નેરઙ્ગ્ય-દેવ૦ ” ઇત્યાદિ.

નૈરયિક, દેવ તથા તીર્થકર તેઓ અવધિજ્ઞાનથી અબાહ્ય હોય છે એટલે કે તેઓ તેનાથી બહાર હોતા નથી. એટલે કે અવધિજ્ઞાનથી પ્રાપ્ત ક્ષેત્રને અન્તરાલવર્તી હોય છે. તથા સર્વતઃ સમસ્ત જ દિશાઓમાં અને વિદિશાઓમાં દેખે છે.

નનુ—અવધેરવાહ્યા ભવન્તીત્યત એવ ‘સર્વતઃ’ ઇત્યસ્ય સિદ્ધત્વાત્ ‘સર્વતઃ’ ઇતિ પુનઃ કથનં વ્યર્થમ્ ?

અત્રોચ્યતે—અવધેરભ્યન્તરત્વાભિધાનેऽપિ ન સર્વે સર્વતઃ પશ્યન્તિ, કસ્યચિદ્ દિગન્તરાલાદર્શનાદવધિજ્ઞાનસ્ય વિચિત્રરૂપત્વાદિતિ ‘સર્વતઃ’ ઇતિ કથનં ન વ્યર્થ-મિતિ । શેષાઃ=તિર્યશ્ચો મનુષ્યાશ્ચ, દેશેન=એકદેશેન પશ્યન્તિ ॥૨॥ તદેતદવધિ-જ્ઞાનપ્રત્યક્ષં વર્ણિતમ્ ॥ સૂ૦ ૧૬ ॥

મૂલમ્—સે કિં તં મણપજ્જવનાણં ?, મણપજ્જવનાણે ણં મંતે ! કિં મણુસ્સાણં ઉપ્પજ્જઈ, અમણુસ્સાણં ?, ગોયમા ! મણુસ્સાણં ઉપ્પજ્જઈ નો અમણુસ્સાણં ॥

છાયા—અથ કિં તન્મનઃપર્યવજ્ઞાનં ? મનઃપર્યવજ્ઞાનં સ્વલુ ભદન્ત ! કિં મનુ-ષ્યાણામુત્પદ્યતે, અમનુષ્યાણામ્ ? । ગૌતમ ! મનુષ્યાણામુત્પદ્યતે, નો અમનુષ્યાણામ્ ॥

શંકા—“અવધેઃ અવાહ્યાઃ ભવન્તિ” ઇતને સે હી “સર્વતઃ” ઇસકે અર્થ કી સિદ્ધિ હો જાતી હૈ, ફિર “સર્વતઃ” યહ કથન ક્યોં કિયા જાતા હૈ ?

ઉત્તર—એસા નહીં હૈ, અવધિજ્ઞાન કે સદ્ભાવ મેં ભી સમસ્ત અવ-ધિજ્ઞાની સર્વ તરફ કે પદાર્થોં કો નહીં દેખતે હૈં । કોઈ ૨ અવધિજ્ઞાની એસે ભી હોતે હૈં જો દિગન્તરાલ કો ભી નહીં દેખ સકતે હૈં । અવધિજ્ઞાનકી યહ વિચિત્રતા હૈ, ઇસલિયે “સર્વતઃ” યહ કથન વ્યર્થ નહીં પડતા હૈ ॥ ૨ ॥ યહ પ્રત્યક્ષ પ્રમાણરૂપ અવધિજ્ઞાન કા વર્ણન હુઆ ॥ સૂ૦ ૧૬ ॥

શંકા—“અવધેઃ અવાહ્યાઃ ભવન્તિ” એટલાથી જ “સર્વતઃ” આના અર્થની સિદ્ધિ થઈ જાય છે તો પછી “સર્વતઃ” આ કથન નિર્રર્થક થઈ જાય છે ?

ઉત્તર—એવું નથી. અવધિજ્ઞાનના સદ્ભાવમાં પણ સમસ્ત અવધિજ્ઞાની સર્વ તરફના પદાર્થોને જોતો નથી. કોઈ કોઈ અવધિજ્ઞાની એવાં પણ હોય છે જેમને દિગન્તરાલનું પણ દર્શન થતું નથી. અવધિજ્ઞાનની આ વિચિત્રતા છે તેથી “સર્વતઃ” આ કથન વ્યર્થ જતું નથી. ॥૨॥ આ પ્રત્યક્ષ પ્રમાણ રૂપ અવધિજ્ઞાનનું વર્ણન થયું. ॥ સૂ૦ ૧૬ ॥

હવે સૂત્રકાર મનઃપર્યવજ્ઞાનનું વર્ણન કરે છે—“સે કિં તં મણ પજ્જવનાણં” ઇત્યાદિ.

टीका—जम्बूस्वामी सुधर्मस्वामिनं पृच्छति—‘ से किं तं मणपज्जवनाणं ’ इति । पूर्वनिर्दिष्टं यन्मनःपर्यवज्ञानं तस्य किं स्वरूपमिति । एवं जम्बूस्वामिना पृष्टः सुधर्मा स्वामी मनःपर्यवज्ञानविषये भगवद्गौतमयोः संवादप्रदर्शनपूर्वकमुत्तरमाह—‘ मणपज्जवनाणे ’ इत्यादि । गौतमः पृच्छति—हे भदन्त ! मनःपर्यवज्ञानं किं मनुष्याणामुत्पद्यते, उत अमनुष्याणाम् ? भगवानाह—हे गौतम ! मनुष्याणां मनः-पर्यवज्ञानमुत्पद्यते, न तु अमनुष्याणां, मनुष्यजातिभिन्नानां देवनारकतिरश्चां मनःपर्यवज्ञानं नोत्पद्यते इत्यर्थः, तेषां विशिष्टचारित्रप्रतिपत्यभावादिति भावः । भगवता श्रीवर्धमानस्वामिना गौतमं प्रति यथा मनःपर्यवज्ञानं वर्णितं तथा वर्णितेन जम्बू-शिष्यः सम्यग् विज्ञास्यतीत्याशयेन सुधर्मा स्वामो भगवद्गौतमयोः संवादं ग्राह-

अब सूत्रकार मनःपर्यवज्ञान का वर्णन करते हैं—‘ से किं तं मणपज्जवनाणं इत्यादि ।

जम्बूस्वामी श्री सुधर्मा स्वामी से पूछते हैं—हे भदन्त ! पूर्वनिर्दिष्ट मनःपर्यवज्ञान का क्या स्वरूप है । उत्तरमें सुधर्मा स्वामी, भगवान् महावीर और गौतमस्वामी का मनःपर्यवज्ञान के विषय में जो संवाद हुआ उसको कहते हैं—गौतमस्वामी पूछते हैं—‘ मणपज्जवनाणे णं ’ इत्यादि’ हे भदन्त ! मनःपर्यवज्ञान मनुष्यों को उत्पन्न होता है कि अमनुष्यों को ? प्रत्युत्तर में भगवान् ने कहा—हे गौतम ! मनःपर्यवज्ञान मनुष्यों को उत्पन्न होता है, अमनुष्यों को नहीं । मनुष्यजाति से भिन्न देव नारकी एवं तिर्यश्च गति के जीवों को मनःपर्यवज्ञान उत्पन्न नहीं होता है, क्योंकि मनःपर्यवज्ञान की उत्पत्ति का कारण विशिष्ट चारित्र की पालना है । विशिष्ट चारित्र की पालना इन गति के जीवों के नहीं होती है । इस प्रकार का जो इस सूत्र में भगवान् श्री वर्धमानस्वामी और गौतम का संवाद मनःपर्यवज्ञान के विषय में श्री सुधर्मास्वामीने

जम्बू स्वामी श्री सुधर्मा स्वामीने पूछे छे—हे भदन्त ! पूर्व निर्दिष्ट मन-पर्यवज्ञानतुं शुं स्वरूप छे ? उत्तरमां सुधर्मास्वामी, भगवान् महावीर, अने गौतमस्वामीने मन पर्यवज्ञानना विषयमां जे संवाद थये ते कहे छे. गौतम स्वामी पूछे छे. “ मणपज्जवनाणेणं धत्त्यादि. हे भदन्त ! मन-पर्यवज्ञान मनुष्योने उत्पन्न थाय छे के अमनुष्योने ?

जवाणमां भगवाने कहुं—“ हे गौतम ! मनःपर्यवज्ञान मनुष्योने उत्पन्न थाय छे अमनुष्योने नही. मनुष्य जातिथी भिन्न देव, नारकी अने तिर्यश्च गतिना लोकोने मनःपर्यवज्ञान उत्पन्न थतुं नथी, कारण के मनःपर्यवज्ञाननी



નનુ ગૌતમોઽપિ ચતુર્દશપૂર્વધરઃ સર્વાક્ષરસંનિપાતી સંભિન્નશ્રોતાઃ સકલપ્રજ્ઞા-  
પનીયભાવપરિજ્ઞાનકુશલઃ પ્રવચનસ્ય પ્રણેતા સર્વજ્ઞકલ્પ એવ, તર્હિં કિમર્થં પૂછતિ?,  
ઉચ્યતે—હિતમર્થં સ્વશિષ્યેભ્યઃ પ્રરૂપ્ય, શિષ્યશ્રદ્ધાદઢીકરણાર્થં તત્સમક્ષં ભૂયોઽપિ  
ભગવન્તં પૂછતિ । અથવા—ઇત્યમેવ સૂત્રરચનામર્યાદા તતો ન કશ્ચિદોષ ઇતિ ॥

પ્રકટ કિયા હૈ ઉસકે પ્રકટ કરને કા ઉનકા અભિપ્રાય યહ હૈ કિ હસ  
વર્ણન સે જમ્વૂસ્વામી મનઃપર્યવજ્ઞાન કે વિષય મેં સમ્યક્રૂપ સે અવ-  
બુદ્ધ હો જાવેં ।

શંકા—શ્રી વર્ધમાનસ્વામી સે ગૌતમસ્વામીને મનઃપર્યવજ્ઞાન કે  
વિષય મેં ક્યોં પૂછા ? કારણ કિ વે સ્વયં ભી ચતુર્દશપૂર્વ કે ધારી થે,  
સર્વાક્ષરસંનિપાતી થે, સંભિન્નશ્રોતોલબ્ધિ કે ધારક થે, સમસ્ત પ્રજ્ઞાપ-  
નીય પદાર્થોં કે પરિજ્ઞાન મેં કુશલ થે, પ્રવચન કે પ્રણેતા ઔર સર્વજ્ઞકલ્પ થે ।

ઉત્તર—યદ્યપિ ગૌતમ સ્વામી સ્વયં મનઃપર્યવજ્ઞાન કે વિષય મેં  
અચ્છી જાનકારી રખતે થે ફિર ભી ભગવાન સે જો હસ વિષય મેં પૂછા  
ઉસકા કારણ યહ હૈ કિ વે અપને શિષ્યોં કો હિતકારી શિક્ષા દેતે  
રહને પર ભી શિષ્યોં કી શ્રદ્ધા મેં દઢતા લાને કે લિયે ઉનકે સામને ફિર  
પૂછતે હૈં । અથવા—સૂત્ર રચને કી મર્યાદા હસી પદ્ધતિ સે ચલતી હૈં હસલિયે  
ભી ગૌતમસ્વામી કા પ્રશ્ન સે હસ પ્રકાર પૂછના કોઈ દોષાવહ નહીં હૈ ॥

ઉત્પત્તિનુ કારણુ વિશિષ્ટ ચારિત્રનુ પાલન છે. વિશિષ્ટ ચારિત્રનુ પાલન એ  
ગતિના જીવોથી થતુ નથી. આ પ્રમાણેનો ભગવાન શ્રી વર્ધમાન સ્વામી અને  
ગૌતમનો મનઃપર્યવજ્ઞાનના વિષયમાં સંવાદ જે આ સૂત્રમાં સુધર્માસ્વામીએ  
પ્રગટ કર્યો છે તેને પ્રગટ કરવાનો તેમનો હેતુ એ છે કે આ વર્ણુનથી જન્મૂ-  
સ્વામી મનઃપર્યવજ્ઞાનના વિષયમાં સારી રીતે જાણકાર થાય.

શંકા—શ્રી વર્ધમાન સ્વામીને, ગૌતમ સ્વામીએ મનઃપર્યવજ્ઞાનના  
વિષયમાં શા માટે પૂછ્યું ? કારણ કે તેઓ પોતે જ ઔદ પૂર્વના ધારણ કરનારા  
હતાં, સર્વાક્ષરસંનિપાતી હતાં, સંભિન્નશ્રોતોલબ્ધિના ધારક હતા, સમસ્ત  
પ્રજ્ઞાપનીય પદાર્થોના પરિજ્ઞાનમાં કુશળ હતાં, પ્રવચનના પ્રણેતા અને સર્વજ્ઞકલ્પ હતાં.

ઉત્તર—જે કે ગૌતમ સ્વામી પોતે જ મનઃપર્યવજ્ઞાનના વિષયમાં સાફ  
જ્ઞાન ધરાવતાં હતા તે પણુ ભગવાનને આ વિષયમાં જે પૂછ્યું તેનું કારણ એ  
છે કે તેઓ પોતાના શિષ્યોને હિતકારી શિક્ષા દેતાં છતાં પણુ શિષ્યોની શ્રદ્ધામાં  
દઢતા લાવવાને માટે તેમની સામે ફરીથી પૂછે છે. અથવા—સૂત્ર રચવાની મર્યાદા  
આજ પદ્ધતિથી ચાલે છે તેથી પણુ ગૌતમસ્વામીએ પ્રશ્નને એ પ્રમાણે પૂછ્યું  
તે કોઈ રીતે દોષપાત્ર નથી.



મૂલમ્—જઈ મણુસ્સાણં, ઉપ્પજ્જઈ કિં સંમુચ્છિમમણુસ્સાણં ?  
ગબ્ભવક્કંતિયમણુસ્સાણં ? ગૌતમા ! ગબ્ભવક્કંતિયમણુસ્સાણં  
ઉપ્પજ્જઈ નો સંમુચ્છિમમણુસ્સાણં ॥

છાયા—યદિ મનુષ્યાણામુત્પદ્યતે કિં સંમૂર્છિમમનુષ્યાણાં ? ગર્ભવ્યુત્ક્રાન્તિકમનુ-  
ષ્યાણામ્ ? , ગૌતમ ! ગર્ભવ્યુત્ક્રાન્તિકમનુષ્યાણામુત્પદ્યતે, નો સંમૂર્છિમમનુષ્યાણામ્ ॥

ટીકા—‘જઈ મણુસ્સાણં’ ઇત્યાદિ । ગૌતમઃ પૃચ્છતિ—યદિ મનુષ્યાણામેવ  
મનઃપર્યવજ્ઞાનમુત્પદ્યતે, તર્હિ તત્ કિં સંમૂર્છિમમનુષ્યાણામુત્પદ્યતે, ઉત ગર્ભવ્યુત્ક્રા-  
ન્તિકમનુષ્યાણામ્ ? , ભગવાનાહ—હે ગૌતમ ! સંમૂર્છિમમનુષ્યાણાં નોત્પદ્યતે, કિંતુ  
ગર્ભવ્યુત્ક્રાન્તિકમનુષ્યાણામ્—ગર્ભજમનુષ્યાણામેવ મનઃપર્યવજ્ઞાનમુત્પદ્યતે ઇત્યર્થઃ ।  
સંમૂર્છનં—સંમૂર્છઃ, ભાવે ઘણૂ, તેન નિર્વૃત્તાઃ સંમૂર્છિમાઃ, સ્ત્રીપુરુષયોઃ સંયોગેન વિના  
યે પ્રાણિનઃ સમુત્પદ્યન્તે, તે સંમૂર્છિમાઃ, ઉચ્ચારાદિસમુદ્ભવાઃ । સંમૂર્છિમવિષયેઽધિકં  
જિજ્ઞાસુભિરાવશ્યકસૂત્રસ્ય મત્કૃતાયાં મુનિતોષિણીટીકાયાં વિલોકનીયમ્ । યે તુ

‘જઈ મણુસ્સાણં ઉપ્પજ્જઈ’ ઇત્યાદિ ।

ફિર ગૌતમ પૂછતે હૈં—હે ભદ્રન્ત ! યદિ મનઃપર્યવજ્ઞાન મનુષ્યોં કે હી  
ઉત્પન્ન હોતા હૈં તો કયા સંમૂર્છિમ મનુષ્યોં કો ઉત્પન્ન હોતા હૈં અથવા  
ગર્ભજ મનુષ્યોં કો ? ભગવાન્ કહતે હૈં—હે ગૌતમ ! યહ મનઃપર્યવજ્ઞાન  
ગર્ભજ મનુષ્યોં કો હી ઉત્પન્ન હોતા હૈં, સંમૂર્છિમ મનુષ્યોં કો નહીં ।  
સ્ત્રી ઓર પુરુષ કે સંયોગ કે વિના જિનકી ઉત્પત્તિ હોતી હૈં વે સંમૂર્છિમ  
કહલાતે હૈં । જૈસે—ઉચ્ચાર પ્રસ્રવણ આદિ મેં જીવોં કી ઉત્પત્તિ હોતી  
હૈં । યહ જન્મ એકેન્દ્રિય જીવોં સે લેકર અસંજી પંચેન્દ્રિયતક કે જીવોં

“જઈ મણુસ્સાણં ઉપ્પજ્જઈ” ઇત્યાદિ.

ફરીથી ગૌતમ સ્વામી પૂછે છે—“હે ભદ્રન્ત ! જો મનઃપર્યવજ્ઞાન મનુ-  
ષ્યોને જ ઉત્પન્ન થાય છે તો શું સંમૂર્છિમમનુષ્યોને ઉત્પન્ન થાય છે કે  
ગર્ભજ મનુષ્યોને ?” ભગવાન કહે છે—“હે ગૌતમ ! આ મનઃપર્યવજ્ઞાન  
ગર્ભજ મનુષ્યોને જ ઉત્પન્ન થાય છે, સંમૂર્છિમ મનુષ્યોને નહીં.” સ્ત્રી અને  
પુરુષના સંયોગ વિના જેમની ઉત્પત્તિ થાય છે તે સંમૂર્છિમ કહેવાય છે.  
જેમકે ઉચ્ચાર પ્રસ્રવણ આદિમાં જીવોની ઉત્પત્તિ થાય છે આ જન્મ એકેન્દ્રિય  
જીવોથી લઈને અસંજી પંચેન્દ્રિય સુધીના જીવોને હોય છે. આ વિષયમાં વિશેષ  
જાણવું હોય તો આવશ્યક સૂત્રની અમારી બનાવેલી મુનિતોષિણી ટીકા જોવી

ગર્ભાશયે સમુત્પદ્યન્તે તે ગર્ભવ્યુત્ક્રાન્તિકાઃ, શબ્દાર્થસ્ત્વેવમ્=ગર્ભે-ગર્ભાશયે, વ્યુત્ક્રાન્તિઃ=ઉત્પત્તિર્યેષાં તે ગર્ભવ્યુત્ક્રાન્તિકાઃ, વ્યુત્ક્રાન્તિ-શબ્દોઽત્રોત્પત્તિવાચી। યદ્વા-ગર્ભાદ્-ગર્ભાવાસાદ્ વ્યુત્ક્રાન્તિર્નિષ્ક્રમણં યેષાં તે ગર્ભવ્યુત્ક્રાન્તિકાઃ। તે દ્વિધા-મનુષ્યાઃ, પંચેન્દ્રિયતિર્યગ્ચોનિકારશ્ચેતિ। ગર્ભવ્યુત્ક્રાન્તિકમનુષ્યાસ્ત્રિધા ભવન્તિ-કર્મભૂમિજાઃ, અકર્મભૂમિજાઃ, અન્તર્દ્વીપજાશ્ચેતિ ॥

મૂલમ્—જહ ગબ્ભવક્કંતિયમણુસ્સાણં, ઉપ્પજ્જહ કિં કમ્મ-ભૂમિય-ગબ્ભવક્કંતિયમણુસ્સાણં ? અકમ્મભૂમિય-ગબ્ભવક્કંતિય-મણુસ્સાણં ?, અંતરદીવગગબ્ભવક્કંતિયમણુસ્સાણં ?, ગોયમા ! કમ્મભૂમિય-ગબ્ભવક્કંતિય-મણુસ્સાણં ઉપ્પજ્જહ, નો અકમ્મ-ભૂમિય-ગબ્ભવક્કંતિય-મણુસ્સાણં, નો અંતરદીવગ-ગબ્ભવક્કંતિય-મણુસ્સાણં ॥

કે હોતા હૈ । इस विषय में यदि विशेष जानना हो तो आवश्यकसूत्र की हमारी बनाई मुनितोषिणी टीका देखना चाहिये । जिन जीवों की उत्पत्ति गर्भाशय से होती है वे गर्भव्युत्क्रान्तिक हैं । गर्भ-गर्भाशय-में जिन जीवों की व्युत्क्रान्ति-उत्पत्ति होती है वे गर्भव्युत्क्रान्तिक हैं, यह गर्भव्युत्क्रान्तिक का शब्दार्थ है । अथवा गर्भ से जिनका व्युत्क्रान्ति-निष्क्रमण-निकलना-होता है वे गर्भव्युत्क्रान्तिक हैं । गर्भव्युत्क्रान्तिक जीव दो प्रकार के होते हैं—एक मनुष्य, दूसरे पंचेन्द्रिय तिर्यच्योनिक । गर्भव्युत्क्रान्तिक मनुष्य भी कर्मभूमिज, अकर्मभूमिज, एवं अन्तरद्वीपज, इस तरह तीन प्रकार के होते हैं । प्रन्द्रह कर्मभूमियों में, जो उत्पन्न होते हैं वे कर्मभूमिज मनुष्य कहलाते हैं । तीस अकर्मभूमियों में जो उत्पन्न होते हैं वे अकर्मभूमिज मनुष्य कहलाते हैं, एवं छप्पन अन्तरद्वीपों में जो उत्पन्न होते हैं वे अन्तरद्वीपज मनुष्य कहलाते हैं ॥

જોઈએ. જે જીવોની ઉત્પત્તિ ગર્ભાશયમાંથી થાય છે તેઓ ગર્ભવ્યુત્ક્રાન્તિક છે. ગર્ભાશયમાં જે જીવોની વ્યુત્ક્રાન્તિ (ઉત્પત્તિ) થાય છે તેઓ ગર્ભવ્યુત્ક્રાન્તિક છે, આ ગર્ભવ્યુત્ક્રાન્તિકનો શબ્દાર્થ છે. અથવા ગર્ભમાંથી જેમની વ્યુત્ક્રાન્તિ (નિષ્ક્રમણ, (નિકળવાનું) થાય છે તેઓ ગર્ભવ્યુત્ક્રાન્તિક છે. ગર્ભવ્યુત્ક્રાન્તિક જીવ બે પ્રકારના હોય છે—એક મનુષ્ય, બીજાં પંચેન્દ્રિયતિર્યચ્યોનિક. ગર્ભવ્યુત્ક્રાન્તિક મનુષ્યો પણ કર્મભૂમિજ, અકર્મભૂમિજ એટલે કે ભોગભૂમિજ, અને અન્તરદ્વીપજ, આ રીતે ત્રણ પ્રકારનાં હોય છે. પંદર કર્મભૂમિઓમાં, ત્રીસ અકર્મભૂમિઓમાં અને છપ્પન અન્તરદ્વીપોમાં જે ઉત્પન્ન થાય છે, તેઓ કર્મભૂમિજ, અકર્મભૂમિજ અને અન્તરદ્વીપજ મનુષ્યો કહેવાય છે.

છાયા—યદિ ગર્ભવ્યુત્ક્રાન્તિકમનુષ્યાણામુત્પદ્યતે, કિં કર્મભૂમિજગર્ભવ્યુત્ક્રાન્તિકમનુષ્યાણાં ?, અકર્મભૂમિજગર્ભવ્યુત્ક્રાન્તિકમનુષ્યાણામ્ ?, અન્તર્દ્વીપજગર્ભવ્યુત્ક્રાન્તિકમનુષ્યાણામ્ ?, ગૌતમ ! કર્મભૂમિજગર્ભવ્યુત્ક્રાન્તિકમનુષ્યાણામુત્પદ્યતે, નોઅકર્મભૂમિજગર્ભવ્યુત્ક્રાન્તિકમનુષ્યાણામ્, નો અન્તર્દ્વીપજ-ગર્ભવ્યુત્ક્રાન્તિકમનુષ્યાણામ્ ॥

ટીકા—‘ જહ ગબ્ભવક્કંતિયમણુસ્સાણં ’ ઇત્યાદિ । યદિ ગર્ભવ્યુત્ક્રાન્તિકમનુષ્યાણાં મનઃપર્યવજ્ઞાનમુત્પદ્યતે, તર્હિ તત્ કિં કર્મભૂમિજ-ગર્ભવ્યુત્ક્રાન્તિક-મનુષ્યાણામ્ ?, કૃષિવાણિજ્યતપઃસંયમાનુષ્ઠાનાદિકર્મપ્રધાના ભૂમયઃ કર્મભૂમયઃ, ભરતપશ્ચકૈરવતપશ્ચકમહાવિદેહપશ્ચકલક્ષણાઃ પશ્ચદશ કર્મભૂમયઃ, તત્ર સમુત્પન્નાઃ કર્મભૂમિજાઃ, યે ગર્ભવ્યુત્ક્રાન્તિકાઃ=ગર્ભજાઃ મનુષ્યાસ્તેષાં મનઃપર્યવજ્ઞાનમુત્પદ્યતે કિમ્, ઉત અકર્મભૂમિજગર્ભવ્યુત્ક્રાન્તિકમનુષ્યાણાં=કૃષ્યાદિકર્મરહિતાઃ કલ્પપાદપફલોપભોગપ્રધાના ભૂમયો હૈમવતપશ્ચકૈ-રણ્યવતપશ્ચક-હરિવર્ષપશ્ચક-રમ્યકર્ણપશ્ચક-દેવકુરુપશ્ચકો-ત્તરકુરુપશ્ચક રૂપાસ્તિશત્ અકર્મભૂમયસ્તત્ર સમુત્પન્ના અકર્મભૂ-

‘ જહ ગબ્ભવક્કંતિયમણુસ્સાણં ’ ઇત્યાદિ ।

યદિ ગર્ભવ્યુત્ક્રાન્તિક મનુષ્યોં કો મનઃપર્યવજ્ઞાન ઉત્પન્ન હોતા હૈ તો વહ કયા કર્મભૂમિજગર્ભજ મનુષ્યોં કો ઉત્પન્ન હોતા હૈ, અથવા અકર્મભૂમિજગર્ભજ મનુષ્યોં કો ઉત્પન્ન હોતા હૈ યા અન્તરદ્વીપજગર્ભજ મનુષ્યોં કો ઉત્પન્ન હોતા હૈ । જિન ભૂમિયોં મેં કૃષિ, વાણિજ્ય, તપઃસંયમ આદિ કા અનુષ્ઠાન પ્રધાનરૂપ સે કિયા જાતા હૈ વે કર્મભૂમિયાં હૈ । યે કર્મભૂમિયાં પાંચ ભરત પાંચ ઐરવત ઔર પાંચ મહાવિદેહ કે ભેદ સે પ્રન્દ્રહ વતલાઈ ગઈ હૈ । ઇનમેં જો ગર્ભ સે ઉત્પન્ન હોતે હૈ વે કર્મભૂમિજગર્ભવ્યુત્ક્રાન્તિક મનુષ્ય હૈ । જિન ભૂમિયોં મેં પૂર્વોક્ત કૃષ્યાદિકર્માનુષ્ઠાન નહીં હોતા હૈ કિન્તુ કલ્પવૃક્ષોં સે હી જહાં જીવોં કો ભોગ ઔર ઉપભોગ કી સામગ્રી પ્રાપ્ત હોતી રહતી હૈ વે અકર્મ ભૂમિયાં હૈ, યે પાંચ હૈમવત

“ જહ ગબ્ભવક્કંતિયમણુસ્સાણં ” ઇત્યાદિ.

જો ગર્ભવ્યુત્ક્રાન્તિક મનુષ્યોને મનઃપર્યવજ્ઞાન ઉત્પન્ન થાય છે તો તે શું કર્મભૂમિજગર્ભજમનુષ્યોને ઉત્પન્ન થાય છે, અથવા અકર્મભૂમિજગર્ભજમનુષ્યોને ઉત્પન્ન થાય છે, કે અન્તરદ્વીપ ગર્ભજમનુષ્યોને ઉત્પન્ન થાય છે ? જે ભૂમિયોમાં કૃષિ, વેપાર, તપઃસંયમ આદિનુ અનુષ્ઠાન મુખ્યત્વે કરાય છે તે કર્મભૂમિયો છે. તે કર્મભૂમિયો પાંચ ભરત, પાંચ ઐરવત અને પાંચ મહાવિદેહના ભેદથી પંદર બતાવેલ છે. તેઓમાં જે ગર્ભથી ઉત્પન્ન થાય છે તે કર્મભૂમિજ-ગર્ભવ્યુત્ક્રાન્તિક મનુષ્ય છે. જે ભૂમિયોમાં પૂર્વકથિત કૃષિ વગેરે કર્માનુષ્ઠાન હોતા નથી પણ કલ્પવૃક્ષો વડે જ જ્યાં જીવોને ભોગ અને ઉપભોગની સામગ્રી મળતી રહે છે

મિજાઃ, યે ગર્ભવ્યુત્ક્રાન્તિકા મનુષ્યાસ્તેષાં વા, ઉત કિમ્ અન્તરદ્વીપજ ગર્ભવ્યુત્ક્રાન્તિકમનુષ્યાણામ્ ?=અન્તરે=લવણસમુદ્રસ્ય મધ્યે દ્વીપાઃ અન્તરદ્વીપાઃ, તે ચ-હિમ-વત્પર્વતપાદપ્રતિષ્ઠિતા ઇકોરુકાદ્યાઃ પદપશ્ચાશત્સંખ્યકા ભવન્તિ, તત્ર યે સમુત્પન્ના ગર્ભવ્યુત્ક્રાન્તિકા મનુષ્યાસ્તેષાં વા મનઃપર્યયજ્ઞાનમુત્પદ્યતે, કિમિતિ પ્રશ્નઃ । મગવા-નાહ-‘ગોયમા !’ ઇત્યાદિ । હે ગૌતમ ! કર્મભૂમિજ-ગર્ભવ્યુત્ક્રાન્તિક-મનુષ્યા-ણામેવ મનઃ પર્યયજ્ઞાનમુત્પદ્યતે, ન તુ અકર્મભૂમિજાનાં ગર્ભવ્યુત્ક્રાન્તિકમનુષ્યાણાં નાપિ ચાન્તરદ્વીપજાનાં ગર્ભવ્યુત્ક્રાન્તિકમનુષ્યાણામિતિ ।

ક્ષેત્ર, પાંચ ઇરણ્યવત ક્ષેત્ર, પાંચ હરિવર્ષ ક્ષેત્ર, પાંચ રમ્યક ક્ષેત્ર, પાંચ દેવકુરુ, પાંચ ઉત્તરકુરુ, ઇસ પ્રકાર ત્રીસ હૈં । જંબૂદ્વીપ મેં ભરતક્ષેત્ર કી સીમાપર સ્થિત હિમવાન્ પર્વત કે દોનોં છોર-કિનારે-પૂર્વપશ્ચિમ લવણ સમુદ્ર મેં ફેલે હુએ હૈં । ઇસી પ્રકાર ઇરવતક્ષેત્ર કી સીમાપર સ્થિત શિખરીપર્વત કે દોનોં છોર ખી લવણસમુદ્ર મેં ફેલે હુએ હૈં । પ્રત્યેક છોર દો ભાગ મેં વિભાજિત હોને કે કારણ કુલ મિલાકર દોનોં પર્વતોં કે આઠ ભાગ લવણસમુદ્ર મેં આવે હુએ હૈં । યે ભાગ ઢાઢકે આકાર કે હૈં । પ્રત્યેક ભાગ પર યુગલિયોં કી વસ્તીવાલે સાત ૨ દ્વીપ હોને સે સબ છપ્પન હૈં । યે લવણસમુદ્ર મેં આવે હુએ હોને કે કારણ અન્તરદ્વીપ કહલાતે હૈં । યે ઇકોરુકાદિ નામ સે પ્રસિદ્ધ હૈં । ઉનમેં અકર્મભૂમિ ( ભોગભૂમિ ) કી રચના હૈં । ઇસ પ્રકાર ગૌતમ કા પ્રશ્ન સુનકર પ્રશુને કહા-હે ગૌતમ ! મનઃ-પર્યયજ્ઞાન કર્મભૂમિજ ગર્ભવ્યુત્ક્રાન્તિક મનુષ્યોં કે હી હોતા હૈં । અકર્મ-ભૂમિજ ગર્ભવ્યુત્ક્રાન્તિક મનુષ્યોં કે નહીં ઔર ન અન્તરદ્વીપજ ગર્ભવ્યુ-ત્ક્રાન્તિક મનુષ્યોં કો ॥

તે અકર્મભૂમિયો છે. તેઓ પાંચ હૈમવત ક્ષેત્ર, પાંચ ઐરાણ્યવત ક્ષેત્ર, પાંચ હરિ-વર્ષક્ષેત્ર, પાંચ રમ્યકવર્ષ, પાંચ દેવકુરુ, પાંચ ઉત્તરકુરુક્ષેત્ર, આ પ્રમાણે ત્રીસ છે. જંબૂદ્વીપમાં ભરતક્ષેત્રની સીમા પર રહેલ હિમવાન પર્વતની બન્ને કોર (છેડા) પૂર્વપશ્ચિમ લવણસમુદ્રમાં ફેલાયેલી છે. આ રીતે ઐરવત ક્ષેત્રની સીમા પર રહેલ શિખરી પર્વતના બન્ને છેડા પણ લવણસમુદ્રમાં ફેલાયેલાં છે. પ્રત્યેક છેડા બે ભાગમાં વિભાજિત હોવાને કારણે કુલ મળીને બન્ને પર્વતોના આઠ ભાગો લવણસમુદ્રમાં આવેલા છે. તે ભાગો ઢાઢના આકારના છે. પ્રત્યેક ભાગ પર યુગલિયોની વસ્તીવાળા સાત, સાત, દ્વીપ હોવાથી કુલ મળીને છપ્પન છે. તેઓ લવણસમુદ્રમાં આવેલા હોવાથી અન્તરદ્વીપ કહેવાય છે. તેઓમાં અકર્મ-ભૂમિ (ભોગભૂમિ) ની રચના છે. ગૌતમનો એવો પ્રશ્ન સાંભળીને પ્રભુએ કહ્યું- “હે ગૌતમ ! મનઃપર્યય જ્ઞાન કર્મભૂમિજ ગર્ભવ્યુત્ક્રાન્તિક મનુષ્યોને જ થાય છે, અકર્મભૂમિજ ગર્ભવ્યુત્ક્રાન્તિક મનુષ્યોને નહીં, અને અન્તરદ્વીપજ ગર્ભવ્યુત્ક્રાન્તિક મનુષ્યોને પણ નહીં.”

મૂલમ—જઈ કમ્મભૂમિય—ગઢ્ઢવકંતિય—મણુસ્સાણં, ઉપ્પ-  
જ્જઈ કિં સંખિજ્જવાસાઉય-કમ્મભૂમિય-ગઢ્ઢવકંતિયમણુસ્સાણં ?,  
અસંખિજ્જવાસાઉય—કમ્મભૂમિય—ગઢ્ઢવકંતિય—મણુસ્સાણં ?,  
ગોયમા ! સંખેજ્જવાસાઉય-કમ્મભૂમિય-ગઢ્ઢવકંતિય—મણુસ્સાણં  
ઉપ્પજ્જઈ, નો અસંખેજ્જવાસાઉય—કમ્મભૂમિય—ગઢ્ઢવકંતિય-  
મણુસ્સાણં ॥

છાયા—યદિ કર્મભૂમિજ-ગર્ભવ્યુત્ક્રાન્તિક-મનુષ્યાણામુત્પદ્યતે કિં સંખ્યેય-  
વર્ષાયુષ્ક-કર્મભૂમિજ-ગર્ભવ્યુત્ક્રાન્તિક-મનુષ્યાણામ્ ?, અસંખ્યેયવર્ષાયુષ્કકર્મભૂમિજ-  
ગર્ભવ્યુત્ક્રાન્તિક-મનુષ્યાણામ્ ?, ગૌતમ ! સંખ્યેયવર્ષાયુષ્ક-કર્મભૂમિજ-ગર્ભવ્યુત્ક્રાન્તિક-  
ક-મનુષ્યાણામુત્પદ્યતે, નો અસંખ્યેયવર્ષાયુષ્ક-કર્મભૂમિજ-ગર્ભવ્યુત્ક્રાન્તિક-મનુષ્યાણામ્ !

ટીકા—‘જઈ કમ્મભૂમિય૦’ इत्यादि । व्याख्या निगदसिद्धा । नवरं—संख्ये-  
यवर्षायुष्काः=पूर्वकोट्यादिजीविनः, असंख्येयवर्षायुष्काः=पल्योपमादिजीविन इति ।

‘જઈ કમ્મભૂમિય૦’ इत्यादि ।

अब पुनः गौतमस्वामी प्रभु से पूछते हैं—हे भदन्त ! यदि मनःपर्यय-  
ज्ञान कर्मभूमिगर्भज मनुष्यों को होता है तो क्या संख्यात वर्ष की  
आयुवाले कर्मभूमिगर्भज मनुष्य हैं उनको होता है अथवा जो असंख्यात  
वर्ष की आयुवाले कर्मभूमिगर्भज मनुष्य हैं उनको होता है । एककोटि  
पूर्व आदि आयुवालों का नाम संख्यातवर्षायुष्क और गणना से परे  
पल्योपम आदि आयुवालों का नाम असंख्यातवर्षायुष्क है । गौतम के  
इस प्रश्न को सुनकर भगवान् ने कहा—हे गौतम ! मनःपर्ययज्ञान संख्यात-  
वर्ष की आयुवाले ऐसे कर्मभूमिगर्भज मनुष्यों को ही उत्पन्न होता है  
असंख्यातवर्ष की आयुवाले कर्मभूमिगर्भज मनुष्यों को नहीं ॥

“જઈ કમ્મભૂમિય૦” इत्यादि

હવે ગૌતમ સ્વામી ફરીથી પ્રભુને પૂછે છે—“હે ભદન્ત ! જે મન·પર્યયજ્ઞાન  
કર્મભૂમિગર્ભજ મનુષ્યોને થાય છે તો શું સંખ્યાત વર્ષના આયુષ્યવાળા કર્મ-  
ભૂમિગર્ભજ મનુષ્યો છે તેમને થાય છે કે જે અસંખ્યાત વર્ષના આયુષ્યવાળા  
કર્મભૂમિગર્ભજ મનુષ્યો છે તેમને થાય છે ?” એક કોટિ પૂર્વ આદિ આયુવા-  
ળાઓનું નામ સંખ્યાતવર્ષના આયુવાળા, અને ગણનાથી પર પલ્યોપમ આદિ  
આયુવાળાઓનું નામ અસંખ્યાત વર્ષના આયુવાળાં છે. ગૌતમનો એ પ્રશ્ન  
સાંભળીને ભગવાને કહ્યું : “હે ગૌતમ ! મન·પર્યયજ્ઞાન સંખ્યાત વર્ષનાં  
આયુષ્યવાળા એવા કર્મભૂમિગર્ભજ મનુષ્યોને જ ઉત્પન્ન થાય છે. અસંખ્યાત  
વર્ષનાં આયુષ્યવાળા કર્મભૂમિગર્ભજ મનુષ્યોને નહીં. ”



મૂલમ્—જહ સંખેજ્જવાસાઉય-કમ્મભૂમિયં-ગબ્ભવક્રંતિય-મણુ-  
સ્સાણં ઉપ્પજ્જહ કિં પજ્જત્તગ—સંખેજ્જવાસાઉય—કમ્મભૂમિય-  
ગબ્ભવક્રંતિયમણુસ્સાણં ?, અપજ્જત્તગ—સંખેજ્જવાસાઉય—કમ્મ-  
ભૂમિય-ગબ્ભવક્રંતિય-મણુસ્સાણં ?, ગોયમા ! પજ્જત્તગ-સંખેજ્જવા-  
સાઉય—કમ્મભૂમિય—ગબ્ભવક્રંતિય-મણુસ્સાણં, ઉપ્પજ્જહ, નો અ-  
પ્પજ્જત્તગ-સંખેજ્જવાસાઉય-કમ્મભૂમિય-ગબ્ભવક્રંતિયમણુસ્સાણં॥

છાયા——યદિ સંખ્યેયવર્ષાયુષ્ક—કર્મભૂમિજ—ગર્ભવ્યુત્ક્રાન્તિકમનુષ્યાણામુત્પ-  
દ્યતે, કિં પર્યાપ્તક—સંખ્યેયવર્ષાયુષ્ક—કર્મભૂમિજ—ગર્ભવ્યુત્ક્રાન્તિકમનુષ્યાણામ્ ?, અ-  
પર્યાપ્તક—સંખ્યેયવર્ષાયુષ્ક—કર્મભૂમિજ—ગર્ભવ્યુત્ક્રાન્તિક—મનુષ્યાણામ્ ?, ગૌતમ !  
પર્યાપ્તક—સંખ્યેયવર્ષાયુષ્ક—કર્મભૂમિજ—ગર્ભવ્યુત્ક્રાન્તિક—મનુષ્યાણામુત્પદ્યતે, નો  
અપર્યાપ્તક—સંખ્યેયવર્ષાયુષ્ક—કર્મભૂમિજ—ગર્ભવ્યુત્ક્રાન્તિક—મનુષ્યાણામ્ ॥

ટીકા—‘જહ સંખેજ્જવાસાઉય’ इत्यादि । व्याख्या निगदसिद्धा । नवरं-  
पर्याप्तकनामकर्मोदयान्निष्पन्नपर्याप्तिमन्तः पर्याप्ताः ‘अर्शआदिभ्योऽच्’ इति  
मत्वर्थीयोऽच् । त एव पर्याप्तकनामकर्मोदयादनिष्पन्नपर्याप्तियोगादपर्याप्तास्त  
एवापर्याप्तका इति ॥

‘જહ સંખેજ્જવાસાઉય૦’ इत्यादि ।

પ્રશ્ન સે કથિત ઇસ ઉત્તર કો સુનકર ગૌતમને પુનઃ પ્રશ્ન સે પૂછા-  
હે ભદંત ! યદિ મનઃપર્યયજ્ઞાન સંખ્યાતવર્ષાયુષ્ક કર્મભૂમિગર્ભજ મનુષ્યો  
કો ઉત્પન્ન હોતા હૈ તો કયા વહ પર્યાપ્ત સંખ્યાતવર્ષાયુષ્ક કર્મભૂમિગર્ભજ  
મનુષ્યો કો હોતા હૈ અથવા અપર્યાપ્તક સંખ્યાતવર્ષાયુષ્ક કર્મભૂમિગર્ભજ  
મનુષ્યો કો હોતા હૈ ? । ગૌતમ કે ઇસ પ્રશ્ન કો સુનકર પ્રશ્નને કહા-હે  
ગૌતમ ! મનઃપર્યયજ્ઞાન, પર્યાપ્ત સંખ્યાતવર્ષ કો આયુવાલે કર્મભૂમિગર્ભજ

“જહ સંખેજ્જવાસાઉય૦” इत्यादि.

પ્રશ્નએ કહેલ તે ઉત્તર સાંભળીને ગૌતમે ફરીથી પ્રશ્નને પૂછ્યું—“હે ભદ્રંત !  
જો મનઃપર્યયજ્ઞાન સંખ્યાત વર્ષના આયુવાળા કર્મભૂમિગર્ભજ મનુષ્યોને ઉત્પન્ન  
થાય છે તો તે શું પર્યાપ્તક સંખ્યાત વર્ષનાં આયુવાળા કર્મભૂમિગર્ભજ મનુ-  
ષ્યોને થાય છે અથવા અપર્યાપ્તક સંખ્યાત વર્ષનાં આયુવાળા કર્મભૂમિગર્ભજ  
મનુષ્યોને થાય છે ?” ગૌતમનો આ પ્રશ્ન સાંભળીને પ્રશ્નએ કહ્યું—“હે ગૌતમ !  
મનઃપર્યયજ્ઞાન પર્યાપ્તક સંખ્યાત વર્ષનાં આયુવાળા કર્મભૂમિગર્ભજ મનુષ્યોને

મૂલમ્—જઈ પજ્જત્તગ—સંખેજ્જવાસાઉય—કમ્મભૂમિય—ગબ્ભ-  
વક્કંતિય-મણુસ્સાણં ઉપ્પજ્જઈ, કિં સમ્મદિદ્ધિ—પજ્જત્તગ—સંખે-  
જ્જવાસાઉય-કમ્મભૂમિય—ગબ્ભવક્કંતિય-મણુસ્સાણં ?, મિચ્છ-  
દિદ્ધિ-પજ્જત્તગ—સંખેજ્જવાસાઉય-કમ્મભૂમિય—ગબ્ભવક્કંતિય-મણુ-  
સ્સાણં?, સમ્મમિચ્છદિદ્ધિ-પજ્જત્તગ—સંખેજ્જવાસાઉય—કમ્મભૂમિ-  
ય—ગબ્ભવક્કંતિય-મણુસ્સાણં ?, ગોયમા ! સમ્મદિદ્ધિ—પજ્જત્તગ—  
સંખેજ્જવાસાઉય—કમ્મભૂમિય—ગબ્ભવક્કંતિય-મણુસ્સાણં ઉપ્પ-  
જ્જઈ, નો મિચ્છદિદ્ધિ—પજ્જત્તગ—સંખેજ્જવાસાઉય—કમ્મભૂમિય—  
ગબ્ભવક્કંતિય-મણુસ્સાણં, નો સમ્મમિચ્છદિદ્ધિ—પજ્જત્તગ—સંખે-  
જ્જવાસાઉય—કમ્મભૂમિય—ગબ્ભવક્કંતિય-મણુસ્સાણં ॥

છાયા—યદિ પર્યાપ્તક—સંખ્યેયવર્ષાયુષ્ક—કર્મભૂમિજ—ગર્ભવ્યુત્ક્રાન્તિક—મનુ-  
ષ્યાણામુત્પદ્યતે, કિં સમ્યગ્દૃષ્ટિ—પર્યાપ્તક—સંખ્યેયવર્ષાયુષ્ક—કર્મભૂમિજ—ગર્ભવ્યુ-  
ત્ક્રાન્તિક—મનુષ્યાણાં ?, મિથ્યાદૃષ્ટિ—પર્યાપ્તક—સંખ્યેયવર્ષાયુષ્ક—કર્મભૂમિજ—ગર્ભવ્યુ-  
ત્ક્રાન્તિક મનુષ્યાણાં ?, સમ્યગ્મિથ્યાદૃષ્ટિ—પર્યાપ્તક—સંખ્યેયવર્ષાયુષ્ક—કર્મભૂમિજ—  
ગર્ભવ્યુત્ક્રાન્તિક—મનુષ્યાણામ્ ?, ગૌતમ ! સમ્યગ્દૃષ્ટિ—પર્યાપ્તક—સંખ્યેયવર્ષાયુષ્ક—  
કર્મભૂમિજ—ગર્ભવ્યુત્ક્રાન્તિક—મનુષ્યાણામુત્પદ્યતે, નો મિથ્યાદૃષ્ટિપર્યાપ્તક—સંખ્યેયવ-  
ર્ષાયુષ્ક—કર્મભૂમિજ—ગર્ભવ્યુત્ક્રાન્તિકમનુષ્યાણામ્, નો સમ્યગ્મિથ્યાદૃષ્ટિ—(મિશ્રદૃષ્ટિ)  
—પર્યાપ્તક—સંખ્યેયવર્ષાયુષ્ક—કર્મભૂમિજ—ગર્ભવ્યુત્ક્રાન્તિક—મનુષ્યાણામ્ ॥

મનુષ્યોં કો હી હોતા હૈ । અપર્યાપ્ત સંખ્યાતવર્ષ કી આયુવાલે કર્મભૂમિ-  
ગર્ભજ મનુષ્યોં કો નહીં । પર્યાપ્ત નામકર્મ કે ઉદય સે જિનકી છહ  
પર્યાપ્તિયાં નિષ્પન્ન હો ચુકી હૈં વે પર્યાપ્ત મનુષ્ય હૈં, અપર્યાપ્ત નામકર્મ કે  
ઉદય સે જિનકી પર્યાપ્તિયાં નિષ્પન્ન નહીં હુઈ હૈં વે અપર્યાપ્ત મનુષ્ય હૈં ।

જ થાય છે, અપર્યાપ્તક સંખ્યાત વર્ષનાં આયુવાળા કર્મભૂમિ ગર્ભજ મનુષ્યોને  
નહી. ” પર્યાપ્તક નામ-કર્મના ઉદયથી જેમની છ પર્યાપ્તિયો પૂર્ણ થઈ ચૂકી  
છે તે પર્યાપ્તક મનુષ્યો છે અને અપર્યાપ્ત-નામકર્મના ઉદયથી જેમની પર્યાપ્તિયો  
પૂર્ણ થઈ નથી તે અપર્યાપ્તક મનુષ્યો છે.



ટીકા—‘ જહ પજ્જત્તગ-સંખેજ્જવાસાઝય ’ इत्यादि । व्याख्या निगदसिद्धा । नवरं-सम्यग्दृष्टयः-सम्यक्=अविपरीता दृष्टिर्येषां ते तथा, मिथ्या=विपरीता दृष्टिर्येषां ते तथा, सम्यग्मिथ्यादृष्टयस्तु प्रतिपत्त्यभिमुखा अन्तर्मुहूर्तमात्रं भवन्ति, न तु परित्यागाभिमुखा इति ॥

‘ જહ પજ્જત્તગ૦ ’ इत्यादि ।

પ્રભુદ્વારા હસ પૂર્વોક્ત ઉત્તર કો સુનકર પુનઃ ગૌતમને પૂછા-હે ભદન્ત ! યદિ મનઃપર્યયજ્ઞાન, પર્યાસક સંખ્યાતવર્ષ કો આયુવાલે કર્મભૂમિ ગર્ભજ મનુષ્યોં કો હી હોતા હૈ તો કયા સમ્યગ્દૃષ્ટિ-પર્યાસક-સંખ્યાત-વર્ષાયુષ્ક કર્મભૂમિગર્ભજ મનુષ્યોં કો ઉત્પન્ન હોતા હૈ ? અથવા પૂર્વોક્ત વિશેષણ વિશિષ્ટ મિથ્યાદૃષ્ટિ મનુષ્યોં કો ઉત્પન્ન હોતા હૈ ? યા પૂર્વોક્ત વિશેષણ સહિત સમ્યગ્મિથ્યાદૃષ્ટિ મનુષ્યોં કો ઉત્પન્ન હોતા હૈ ? । ગૌતમ કે હસ પ્રશ્ન કો સુનકર પ્રભુને કહા-હે ગૌતમ ! વહ મનઃપર્યયજ્ઞાન પર્યાસક સંખ્યાતવર્ષાયુષ્ક કર્મભૂમિ ગર્ભજ સમ્યગ્દૃષ્ટિ મનુષ્યોં કો હી ઉત્પન્ન હોતા હૈ । પર્યાસક, સંખ્યાતવર્ષાયુષ્ક કર્મભૂમિગર્ભજ મિથ્યાદૃષ્ટિ મનુષ્યોં કો, તથા પર્યાસક આદિ વિશેષણ વિશિષ્ટ મિશ્રદૃષ્ટિસંપન્ન મનુષ્યોં કો ઉત્પન્ન નહીં હોતા હૈ । તત્ત્વોં મેં અવિપરીત જિનકી દૃષ્ટિ-રુચિ-હોતી હૈ વે સમ્યગ્દૃષ્ટિ હૈ, તથા તત્ત્વોં મેં જિનકી રુચિ વિપરીત હોતી હૈ વે મિથ્યાદૃષ્ટિ હૈ । અન્તર્-મુહૂર્તતક પ્રતિપત્તિ કે અભિમુખ જો હોવે વે મિશ્રદૃષ્ટિ હૈ । અર્થાત્ જિસકે ઉદય સમય મેં યથાર્થતા કી રુચિ યા અરુચિ ન હોકર દોલાય-માનસ્થિતિ રહે વહ મિશ્રદૃષ્ટિ હૈ ॥

“ જહ પજ્જત્તગ૦ ” इत्यादि.

પ્રભુદ્વારા પૂર્વોક્ત ઉત્તરને સાંભળીને કરી ગૌતમે પૂછયું-“ હે ભદન્ત ! જે મનઃપર્યયજ્ઞાન, પર્યાસક સંખ્યાત વર્ષનાં આયુવાળા કર્મભૂમિગર્ભજ મનુષ્યોને જ થાય છે તો શું સમ્યગ્દૃષ્ટિ-પર્યાસક-સંખ્યાતવર્ષાયુષ્ક કર્મભૂમિજ મનુષ્યોને ઉત્પન્ન થાય છે ? કે પૂર્વોક્તવિશેષણ વિશિષ્ટમિથ્યાદૃષ્ટિ મનુષ્યોને ઉત્પન્ન થાય છે ? કે પૂર્વોક્તવિશેષણસહિત સમ્યક્મિથ્યાદૃષ્ટિ મનુષ્યોને ઉત્પન્ન થાય છે ? ” ગૌતમનો આ પ્રશ્ન સાંભળીને પ્રભુએ કહ્યું-“ તે મનઃપર્યયજ્ઞાન કર્મભૂમિગર્ભજ, પર્યાસક સંખ્યાતવર્ષાયુષ્ક (સંખ્યાત વર્ષના આયુવાળા) સમ્યગ્દૃષ્ટિ મનુષ્યોને જ ઉત્પન્ન થાય છે. પર્યાસક, સંખ્યાવર્ષાયુષ્ક કર્મભૂમિગર્ભજ મિથ્યાદૃષ્ટિ મનુષ્યોને તથા પર્યાસક આદિવિશેષણ-વિશિષ્ટ મિશ્રદૃષ્ટિસંપન્ન મનુષ્યોને ઉત્પન્ન થતું નથી. ” તત્ત્વોમાં અવિપરીત જેમની દૃષ્ટિ-રુચિ હોય છે તેઓ સમ્યગ્દૃષ્ટિ છે, તથા તત્ત્વોમાં જેમની રુચિ વિપરીત હોય છે તેઓ મિથ્યાદૃષ્ટિ છે. અન્તર્મુહૂર્ત સુધી પ્રતિપત્તિને અભિમુખ જે હોય તેઓ મિશ્રદૃષ્ટિ છે. એટલે કે જેના ઉદયસમયમાં યથાર્થતાની રુચિ અથવા અરુચિ ન થતાં દોલાયમાન સ્થિતિ રહે તે મિશ્રદૃષ્ટિ છે.

मूलम्—जइ सम्मदिट्ठि—पज्जत्तग—संखेज्जवासाउय—कम्म-  
भूमिय—गब्भवक्कंतिय—मणुस्साणं उप्पज्जइ, किं संजय—सम्मदिट्ठि-  
पज्जत्तग—संखेज्जवासाउय—कम्मभूमिय—गब्भवक्कंतिय—मणु-  
स्साणं ?, असंजय—सम्मदिट्ठि—पज्जत्तग—संखेज्जवासाउ य—  
कम्मभूमिय—गब्भवक्कंतिय—मणुस्साणं ?, संजयासंजय—सम्मदिट्ठि-  
पज्जत्तग—संखेज्जवासाउय—कम्मभूमिय—गब्भवक्कंतिय—मणुस्साणं?  
गोयमा ! संजय—सम्मदिट्ठि—पज्जत्तग—संखेज्जवासाउय—कम्मभूमि-  
य—गब्भवक्कंतिय—मणुस्साणं उप्पज्जइ, नो असंजय—सम्मदिट्ठि-  
पज्जत्तग—संखेज्जवासाउय—कम्मभूमिय—कम्मवक्कंतिय—मणुस्साणं,  
नो संजयासंजय—सम्मदिट्ठि—पज्जत्तग—संखेज्जवासाउय—कम्मभू-  
मिय—गब्भवक्कंतिय—मणुस्साणं ॥

छाया—यदि सम्यग्दृष्टिपर्याप्तक—संख्येयवर्षायुष्क—कर्मभूमिजगर्भव्युत्क्रा-  
न्तिक—मनुष्याणामुत्पद्यते, किं संयत—सम्यग्दृष्टि—पर्याप्तक—संख्येयवर्षायुष्क—कर्म-  
भूमिज—गर्भव्युत्क्रान्तिक—मनुष्याणाम्?, असंयत—सम्यग्दृष्टि—पर्याप्तक—संख्येयवर्षा-  
युष्क—कर्मभूमिज—गर्भव्युत्क्रान्तिक—मनुष्याणां ?, संयतासंयतसम्यग्दृष्टि—पर्याप्तक—  
संख्येयवर्षायुष्क—कर्मभूमिज—गर्भव्युत्क्रान्तिक—मनुष्याणाम्?, गौतम ! संयत—सम्य-  
ग्दृष्टि—पर्याप्तक—संख्येयवर्षायुष्क—कर्मभूमिज—गर्भव्युत्क्रान्तिक मनुष्याणामुत्पद्यते, नो  
असंयत—सम्यग्दृष्टि—पर्याप्तक—संख्येयवर्षायुष्क—कर्मभूमिज—गर्भव्युत्क्रान्तिक—मनु-  
ष्याणां, नो संयतासंयत—सम्यग्दृष्टि—पर्याप्तक—संख्येयवर्षायुष्क—कर्मभूमिज—गर्भव्यु-  
त्क्रान्तिक—मनुष्याणाम् ॥

टीका—‘ जइ सम्मदिट्ठि ’ इत्यादि । व्याख्या निगदसिद्धा । नवरं संयताः  
=सर्वविरतिमन्तः, असंयताः=अविरतसम्यग्दृष्टयः, संयतासंयताः=देशविरतिमन्तः  
श्रावका इति ॥

‘ जइ सम्मदिट्ठि० ’ इत्यादि ।

फिर गौतम पूछते हैं—हे भदन्त ! यदि यह मनःपर्ययज्ञान पर्याप्तक,  
संख्यातवर्ष की आयुवाले, कर्मभूमिगर्भज सम्यग्दृष्टि मनुष्यों को  
उत्पन्न होता है तो क्या जो पूर्वोक्तविशेषणसहित संयत—सम्यग्दृष्टि

“ जइ सम्म दिट्ठि० ” इत्यादि  
वणी गौतम स्वामी पूछे छे—“ छे लहन्त ! आ मनःपर्यय ज्ञान पर्याप्तक,  
संख्यात वर्षनां आयुवाणा, कर्मभूमिगर्भज सम्यग्दृष्टि मनुष्योने उत्पन्न  
थाय छे तो शुं पूर्वोक्तविशेषणसहित संयतसम्यग्दृष्टि मनुष्योने उत्पन्न

મનુષ્યોં કો ઉત્પન્ન હોતા હૈ અથવા પૂર્વોક્તવિશેષણસહિત અસંયત સમ્યગ્દષ્ટિ 'મનુષ્યોં કો ઉત્પન્ન હોતા હૈ ?' યા પૂર્વોક્તવિશેષણવિશિષ્ટ સંયતાસંયત (પંચમગુણસ્થાનવર્તીં શ્રાવક) સમ્યગ્દષ્ટિ મનુષ્યોં કો ઉત્પન્ન હોતા હૈ ? । ગૌતમ કે હસ પ્રશ્ન કો સુનકર પ્રશ્નને કહા-હે ગૌતમ ! યહ મનઃપર્યયજ્ઞાન જો સમ્યગ્દષ્ટિ સંયત હૈં પર્યાપ્તક હૈં સંખ્યાતવર્ષ કી આયુવાલે હૈં કર્મભૂમિ મેં ઉત્પન્ન હુએ હૈં, ગર્ભ સે જિનકા જન્મ હુઆ હૈં ડનકે હી ઉત્પન્ન હોતા હૈ, જો સમ્યગ્દષ્ટિ મનુષ્ય સંયત નહીં હૈં ઇાહે ખલે વે પર્યાપ્તક હૈં, સંખ્યાતવર્ષ કી આયુવાલે હૈં, કર્મભૂમિ મેં જન્મે હૈં, ગર્ભ સે ઉત્પન્ન હુએ હૈં ડનકો મનઃપર્યયજ્ઞાન નહીં હોતા હૈ, ઓર જો સમ્યગ્દષ્ટિ મનુષ્ય સંયતાસંયત હૈં, પંચમગુણસ્થાનવર્તીં હૈં, પર્યાપ્તક હૈં, સંખ્યાતવર્ષ કી આયુવાલે હૈં કર્મભૂમિજ હૈં, ગર્ભજન્મવાલે હૈં તો ખી ડનકે ઉત્પન્ન નહીં હોતા હૈ । સંયત કા તાત્પર્ય સર્વવિરતિસંપન્ન મુનિજનોં સે હૈ । અસંયતકા તાત્પર્ય ચતુર્થગુણસ્થાનવર્તીં અવિરત સમ્યગ્દષ્ટિ સે ઓર સંયતાસંયત સે પંચમગુણસ્થાનવર્તીં દેશસંયમી શ્રાવક સે હૈ ।

માવાર્થ-યહ મનઃપર્યયજ્ઞાન મુનિજનોં કે હી હોતા હૈ । ચતુર્થગુણ-સ્થાનવર્તીં યા પંચમગુણસ્થાનવર્તીં જીવોં કે નહીં હોતા હૈ ॥

થાય છે કે પૂર્વોક્તવિશેષણસહિત અસંયત-સમ્યગ્દષ્ટિ મનુષ્યોને ઉત્પન્ન થાય છે ? કે પૂર્વોક્તવિશેષણવિશિષ્ટ સંયતાસંયત (પંચમગુણસ્થાનવર્તીં શ્રાવક) સમ્યગ્દષ્ટિ મનુષ્યોને ઉત્પન્ન થાય છે ?" ગૌતમને આ પ્રશ્ન સાંભળીને ભગવાને કહ્યું-“હે ગૌતમ ! આ મનઃપર્યયજ્ઞાન જે સમ્યગ્દષ્ટિ સંયત છે, પર્યાપ્તક છે, સંખ્યાત વર્ષનાં આયુષ્યવાળા છે, કર્મભૂમિમાં ઉત્પન્ન થયા છે, અને ગર્ભમાંથી જેનો જન્મ થયો છે તેમને જ ઉત્પન્ન થાય છે. જે સમ્યગ્દષ્ટિ મનુષ્ય સંયત નથી ભલે તેઓ પર્યાપ્તક હોય, સંખ્યાત વર્ષનાં આયુષ્યવાળા હોય, કર્મભૂમિમાં જન્મ્યા હોય, ગર્ભથી ઉત્પન્ન થયાં હોય, છતાં તેમને મનઃપર્યયજ્ઞાન થતું નથી, તથા જે સમ્યગ્દષ્ટિ મનુષ્યો સંયતાસંયત છે, (પંચમગુણસ્થાનવર્તીં છે), પર્યાપ્તક છે, સંખ્યાત વર્ષનાં આયુષ્યવાળાં છે, કર્મભૂમિમાં જન્મેલા છે. ગર્ભથી જન્મેલાં છે તો પણ તેમને ઉત્પન્ન થતું નથી. સંયતનું તાત્પર્ય સર્વવિરતિવાળા મુનિજનો છે. અસંયતનું તાત્પર્ય ચતુર્થગુણસ્થાનવર્તીં અવિરત સંયમદષ્ટિ, અને સંયતાસંયતથી પંચમગુણસ્થાનવર્તીં દેશવિરતિ શ્રાવક છે. તાત્પર્ય એ છે કે આ મનઃપર્યયજ્ઞાન મુનિજનોને જ થાય છે. ચતુર્થગુણસ્થાનવર્તીં કે પંચમગુણસ્થાનવર્તીં જીવોને થતું નથી.

મૂલમ્—જહ સંજયસમ્મદિદ્ધિ—પજ્જત્તગ—સંખેજ્જવાસાઉય-કમ્મ-  
ભૂમિય—ગબ્ભવક્કંતિય મણુસ્સાણં ઉપ્પજ્જહ, કિં પમત્તસંજય—  
સમ્મદિદ્ધિ—પજ્જત્તગ—સંખેજ્જવાસાઉય —કમ્મભૂમિય —ગબ્ભવ-  
ક્કંતિય—મણુસ્સાણં ? અપમત્તસંજય — સમ્મદિદ્ધિ — પજ્જત્તગ—  
સંખેજ્જવાસાઉય — કમ્મભૂમિય — ગબ્ભવક્કંતિય--મણુસ્સાણં ?,  
ગોયમા ! અપમત્તસંજય—સમ્મદિદ્ધિ—પજ્જત્તગ—સંખેજ્જવાસાઉય-  
કમ્મભૂમિય—ગબ્ભવક્કંતિય-મણુસ્સાણં ઉપજ્જહ, નો પમત્તસંજય-  
સમ્મદિદ્ધિ-પજ્જત્તગ-સંખેજ્જવાસાઉય -કમ્મભૂમિય-ગબ્ભવક્કંતિય-  
મણુસ્સાણં ॥

છાયા—યદિ સંયતસમ્યગ્દષ્ટિ—પર્યાપ્તક—સંખ્યેયવર્ષાયુષ્ક—કર્મભૂમિજ—ગર્ભવ્યુ-  
ત્ક્રાન્તિક—મનુષ્યાણામુત્પદ્યતે, કિં પ્રમત્તસંયતસમ્યગ્દષ્ટિ—પર્યાપ્તક—સંખ્યેયવર્ષાયુષ્ક  
—કર્મભૂમિજ—ગર્ભવ્યુત્ક્રાન્તિક—મનુષ્યાણામ્ ?, અપ્રમત્તસંયત—સમ્યગ્દષ્ટિ—પર્યાપ્તક—  
સંખ્યેયવર્ષાયુષ્ક—કર્મભૂમિજ—ગર્ભવ્યુત્ક્રાન્તિક—મનુષ્યાણામ્ ? ગૌતમ ! અપ્રમત્ત—સંયત  
સમ્યગ્દષ્ટિ—પર્યાપ્તક—સંખ્યેયવર્ષાયુષ્ક—કર્મભૂમિજ—ગર્ભવ્યુત્ક્રાન્તિક મનુષ્યાણામુત્પદ્યતે,  
નો પ્રમત્ત—સંયત—સમ્યગ્દષ્ટિ—પર્યાપ્તક—સંખ્યેયવર્ષાયુષ્ક—કર્મભૂમિજ—ગર્ભવ્યુત્ક્રાન્તિક-  
મનુષ્યાણામ્ ॥

ટીકા—‘ જહ સંજય-સમ્મદિદ્ધિ ’ इत्यादि । व्याख्या निगदसिद्धा । नवरं-  
प्रमत्तसंयताः—प्रमाद्यन्ति—मोहनीयादिकर्मप्रभावतः संज्वलन कषायनिद्राद्यन्यतमप्रमा-  
दयोगतः संयमयोगेषु सीदन्तीति प्रमत्ताः, ‘कर्तरि क्तः,’ प्रमत्ताश्च ते संयताः प्रमत्त-

‘ જહ સંજયસમ્મદિદ્ધિ૦ ’ इत्यादि ।

फिर गौतम पूछते हैं—हे भदन्त ! यदि मनःपर्ययज्ञान संयत  
सम्यग्दृष्टि मनुष्यों को होता है जैसा कि ऊपर आपने कहा है कि जो  
मनुष्य पर्याप्तक है, संख्यातवर्ष की आयुवाला है, कर्मभूमि में जन्मा  
है और गर्भ से उत्पन्न हुआ है ऐसे सकलसंयमी सम्यग्दृष्टि मनुष्य

“ જહ સંજયસમ્મદિદ્ધિ ઇત્યાદિ.

વળી ગૌતમ પૂછે છે—“ હે ભદન્ત ! જો મનઃપર્યયજ્ઞાન સંયત-સમ્યગ્-  
દષ્ટિ મનુષ્યોને થાય છે જેમ કે આપે ઉપર કહ્યું કે જે મનુષ્યો પર્યાપ્તક છે,  
સંખ્યાત વર્ષનાં આયુષ્યવાળા છે, કર્મભૂમિમાં જન્મ્યાં છે, અને ગર્ભમાંથી  
ઉત્પન્ન થયાં છે એવાં સકલસંયમી સમ્યગ્દષ્ટિ મનુષ્યોને મનઃપર્યયજ્ઞાન થાય

સંયતાસ્તે ચ પ્રાયો ગચ્છવાસિનઃ, તેષાં ક્વચિદનુપયોગસંભવાત્ । અપ્રમત્તસંયતાસ્તુ પ્રાયો જિનકલ્પિકાઃ પરિહારવિશુદ્ધિકાઃ, યથાલંકલ્પિકાઃ, પ્રતિમાપ્રતિપન્નાસ્તેષાં સતતોપયોગાત્ । इह तु ये गच्छवासिनः प्रमादरहितास्तेऽप्यप्रमत्ता द्रष्टव्याः । गच्छ-  
निर्गता अपि प्रमादरहिता अप्रमत्ता बोध्याः ॥

કે મનઃપર્યયજ્ઞાન હોતા હૈ, તો કયા પૂર્વોક્ત વિશેષણવાલે પ્રમત્ત-સંયત સમ્યગ્દૃષ્ટિ કો હોતા હૈ? અથવા ઇન વિશેષણોવાલે અપ્રમત્ત સંયત સમ્યગ્દૃષ્ટિ મનુષ્યો કો હોતા હૈ?

ભાવાર્થ—ગૌતમ કા પ્રશ્ન—યહ મનઃપર્યયજ્ઞાન છઠવે ગુણસ્થાનવર્તી મુનિજનોં કો હોતા હૈ યા સાતવે ગુણસ્થાનવર્તી મુનિજનોં કો હોતા હૈ? ભગવાન્ કહતે હૈ—હે ગૌતમ ! યહ મનઃપર્યયજ્ઞાન ઉન્હીં સમ્યગ્દૃષ્ટિ મનુષ્યોં કો હોતા હૈ જો પર્યાસક આદિ વિશેષણોંવાલે હોતે હુએ અપ્રમત્ત બનકર સંયમ કા પાલન કરતે હૈ, અર્થાત્—સસમગુણસ્થાનવર્તી હોતે હૈ । જો સમ્યગ્દૃષ્ટિ પર્યાસક આદિ વિશેષણોં સે સુશોભિત હોતે હુએ મી પ્રમાદ-યુક્ત હો સંયમ કા પાલન કરતે હૈ—ષષ્ઠગુણસ્થાનવર્તી હોતે હૈ—ઉન્કો મનઃપર્યયજ્ઞાન નહીં હોતા હૈ । મોહનીય આદિ કર્મ કે પ્રભાવ સે જો મુનિજન સંજ્વલન કષાય એવં નિદ્રા આદિરૂપ કિસી એક પ્રમાદ મેં પતિત હોકર સંયમમેં શિથિલતા કરતે હૈ વે પ્રમત્તસંયત હૈ । એસે સાધુજન પ્રાયઃ ગચ્છવાસી હોતે હૈ । ઇન્કા સંયમસ્થાન મેં કહીં અનુપયોગ મી હો સકતા હૈ । જો અપ્રમત્તસંયત હોતે હૈ વે પ્રાયઃ જિનકલ્પી હોતે હૈ ।

છે, તો શું પૂર્વોક્તવિશેષણવાળા પ્રમત્ત-સંયત-સમ્યગ્દૃષ્ટિને થાય છે? અથવા એ વિશેષણોથી યુક્ત અપ્રમત્ત-સંયત-સમ્યગ્દૃષ્ટિ મનુષ્યોને થાય છે?”

ભાવાર્થ—ગૌતમનો પ્રશ્ન—આ મનઃપર્યય જ્ઞાન છઠ્ઠાં ગુણસ્થાનવર્તી મુનિજ-  
નોને થાય છે કે સાતમાં ગુણસ્થાનવર્તી મુનિજનોને થાય છે? ભગવાન કહે  
છે—“હે ગૌતમ ! આ મનઃપર્યયજ્ઞાન એજ સમ્યગ્દૃષ્ટિ મનુષ્યોને થાય છે કે  
જેઓ પર્યાસક આદિ વિશેષણોવાળા હોય છે, અપ્રમત્ત બનીને સંયમનું  
પાલન કરે છે, એટલે કે સસમગુણસ્થાનવર્તી હોય છે, જેઓ સમ્યગ્દૃષ્ટિ  
પર્યાસક આદિ વિશેષણોથી સુશોભિત હોવા છતાં પણ પ્રમાદવાળા થઈને  
સંયમનું પાલન કરે છે—છઠ્ઠાગુણસ્થાનવર્તી હોય છે—તેમને મનઃપર્યયજ્ઞાન  
થતું નથી.” મોહનીય આદિ કર્મના પ્રભાવથી જે મુનિજન સંજ્વલન કષાય  
અને નિદ્રા આદિ રૂપ કોઈ એક પ્રમાદમાં પડીને સંયમમાં શિથિલતા કરે છે  
તેઓ પ્રમત્તસંયત છે, એવાં સાધુજન પ્રાયઃ ગચ્છવાસી હોય છે. તેમના સંયમ-  
સ્થાનમાં કયાંક અનુપયોગ પણ હોઈ શકે છે, જેઓ અપ્રમત્ત-સંયત હોય છે

મૂલમ્—જઈ અપ્પમત્ત સંજય-સમ્મદિટ્ઠિ-પજ્જત્તગ-સંખેજ્જવાસા-  
 યકમ્મભૂમિય-ગબ્ભવક્કંતિય-મણુસ્સાણં ઉપ્પજ્જઈ, કિં ઇડ્ઢિ-  
 પત્ત-અપ્પમત્ત-સંજય-સમ્મદિટ્ઠિ-પજ્જત્તગ-સંખેજ્જવાસા-યક-કમ્મભૂ-  
 મિય-ગબ્ભવક્કંતિય-મણુસ્સાણં?, અણિડ્ઢિપત્ત-અપ્પમત્ત-સંજય-  
 સમ્મદિટ્ઠિ-પજ્જત્તગ-સંખેજ્જવાસા-યક-કમ્મભૂમિય-ગબ્ભવક્કંતિય-  
 મણુસ્સાણં?, ગોયમા ! ઇડ્ઢિપત્ત-અપ્પમત્ત-સંજય-સમ્મદિટ્ઠિ-  
 પજ્જત્તગ-સંખેજ્જવાસા-યક-કમ્મભૂમિય-ગબ્ભવક્કંતિય-મણુસ્સાણં  
 ઉપ્પજ્જઈ, નો અણિડ્ઢિપત્ત-અપ્પમત્ત-સંજય-સમ્મદિટ્ઠિ-પજ્જત્તગ-  
 સંખેજ્જવાસા-યક-કમ્મભૂમિય-ગબ્ભવક્કંતિય-મણુસ્સાણં મણપ-  
 જ્જવનાણં સમુપ્પજ્જઈ ॥ સૂ. ૧૭ ॥

છાયા—યદિ અપ્રમત્તસંયત-સમ્યગ્દષ્ટિ-પર્યાપ્તક-સંખ્યેયવર્ષાયુષ્કર્મભૂમિજ-  
 -ગર્ભવ્યુત્ક્રાન્તિક-મનુષ્યાણામુત્પદ્યતે, કિં ઋદ્ધિપ્રાપ્તાઽપ્રમત્ત-સંયત-સમ્યગ્દષ્ટિ-પર્યા-  
 પ્તક-સંખ્યેયવર્ષાયુષ્ક-કર્મભૂમિજ-ગર્ભવ્યુત્ક્રાન્તિક-મનુષ્યાણામ્?, અનૃદ્ધિપ્રાપ્તાપ્ર-  
 મત્ત-સંયત-સમ્યગ્દષ્ટિ-પર્યાપ્તક-સંખ્યેયવર્ષાયુષ્ક-કર્મભૂમિજ-ગર્ભવ્યુત્ક્રાન્તિક-મનુ-  
 ષ્યાણામ્?, ગૌતમ ! ઋદ્ધિપ્રાપ્તાઽપ્રમત્ત-સંયત-સમ્યગ્દષ્ટિ-પર્યાપ્તક-સંખ્યેયવર્ષાયુષ્ક-  
 કર્મભૂમિજ-ગર્ભવ્યુત્ક્રાન્તિક-મનુષ્યાણામુત્પદ્યતે, નો અનૃદ્ધિપ્રાપ્તાઽપ્રમત્તસંયત-  
 સમ્યગ્દષ્ટિ-પર્યાપ્તક-સંખ્યેયવર્ષાયુષ્ક-કર્મભૂમિજ - ગર્ભવ્યુત્ક્રાન્તિક-મનુષ્યાણાં  
 મનઃપર્યયજ્ઞાનં સમુત્પદ્યતે ॥ સૂ. ૧૭ ॥

પરિહાર વિશુદ્ધિ નામક ચારિત્ર કા પાલન કરતે હૈં । યથાલંકલ્પિક  
 હોતે હૈ । પતિમાપ્રતિપન્ન હોતે હૈં । સંયમ મેં इनका सतत उपयोग रहता  
 है । वहां पर जो गच्छवासी साधुजन हैं वे यदि प्रमादरहित होकर  
 संयम का पालन करते हैं तो वे भी अप्रमत्तसंयत हैं । तथा गच्छ से  
 निकले हुए भी प्रमादरहित साधुजन अप्रमत्त ही जानना चाहिये ।

તેઓ સામાન્ય રીતે જિનકદપી હોય છે, પરિહાર વિશુદ્ધિ નામનાં ચારિત્રનું પાલન  
 કરે છે. યથાલંકલ્પિક હોય છે, પ્રતિમાપ્રતિપન્ન હોય છે, સંયમમાં તેમનો  
 હંમેશા ઉપયોગ રહે છે. અહીં જે ગચ્છવાસી સાધુજન છે તેઓ જે પ્રમાદ  
 રહિત થઈને સંયમનું પાલન કરે છે તો તેઓ પણ અપ્રમત્ત સંયત છે. તથા  
 ગચ્છમાંથી નીકળી ગયેલ પ્રમાદરહિત સાધુજનોને પણ અપ્રમત્ત જ  
 જાણવા જોઈએ.



ટીકા—‘ જહ અપ્પમત્તસંજયં ’ ઇત્યાદિ । વ્યાખ્યા સ્પષ્ટા, નવરમ્—ઋદ્ધીઃ—આમર્શૌષધ્યાદિલક્ષણાઃ પ્રાપ્તા ઋદ્ધિપ્રાપ્તાઃ, તદ્વિપરીતાઃ અનૃદ્ધિપ્રાપ્તાઃ । વિશિષ્ટમુત્તરોત્તરપૂર્વાર્થપ્રતિપાદકં શ્રુતમવગાહમાનાઃ શ્રુતસામર્થ્યતસ્તીત્રાં તીવ્રતરાં શુભભાવનામધિરોહન્તોઽપ્રમત્તસંયતા ઋદ્ધીઃ પ્રાપ્નુવન્તિ । આમર્શૌષધ્યાદીનામન્યતમામૃદ્ધિમવધિઋદ્ધિં વા પ્રાપ્તસ્ય મનઃપર્યયજ્ઞાનમુત્પદ્યતે. નત્વનૃદ્ધિપ્રાપ્તસ્યેતિ ભાવઃ ।

‘ જહ અપ્પમત્તસંજયં ’ ઇત્યાદિ ।

ગૌતમ મનઃપર્યયજ્ઞાન કી પ્રાપ્તિ કા યહ પૂર્વોક્ત સર્વ નિમિત્ત સુનકર પ્રભુ સે પુનઃ પૂછતે હૈં કિ—હે ભદન્ત ! યદિ યહી વાત હૈ કિ મનઃપર્યયજ્ઞાનં પર્યાપ્તક, સંખ્યેય વર્ષાયુષ્ક, કર્મભૂમિજ—ગર્ભવ્યુત્ક્રાન્તિક અપ્રમત્તસંયત સમ્યગ્દષ્ટિ મનુષ્યોં કો હી ઉત્પન્ન હોતા હૈ તો કયા જો ઋદ્ધિ પ્રાપ્ત—ઋદ્ધિવાલે ઉક્તવિશેષણવિશિષ્ટ મનુષ્યોં કો ઉત્પન્ન હોતા હૈ ? અથવા અનૃદ્ધિપ્રાપ્ત ઋદ્ધિરહિત પૂર્વોક્ત વિશેષણવાલે મનુષ્યોં કો ઉત્પન્ન હોતા હૈ ? ભગવાન્ ને કહા—હે ગૌતમ ! યહ મનઃપર્યયજ્ઞાન ઋદ્ધિપ્રાપ્ત પૂર્વોક્ત વિશેષણવાલે મનુષ્યોં કો હી ઉત્પન્ન હોતા હૈ કિન્તુ અનૃદ્ધિપ્રાપ્ત—ઋદ્ધિરહિત કો નહીં હોતા હૈ ।

ભાવાર્થ—પ્રભુને ગૌતમ કો હસ સૂત્ર દ્વારા યહ સમજાયા હૈ કિ જો અપ્રમત્ત સંયત સમ્યગ્દષ્ટિ મનુષ્ય ઋદ્ધિપ્રાપ્ત—આમર્શ—ઔષધિ આદિ લબ્ધિસંપન્ન હોતે હૈં ઉન્હીં કો યહ મનઃપર્યયજ્ઞાન ઉત્પન્ન હોતા હૈ । જિનકે આમર્શ—ઔષધિ આદિ લબ્ધિયાં પ્રાપ્ત નહીં હુઈ હૈં ઉન્કે નહીં હોતા હૈ ।

“ જહ અપ્રમત્તસંજયં ” ઇત્યાદિ.

ગૌતમ મનઃપર્યય જ્ઞાનની પ્રાપ્તિના પૂર્વકથિત સર્વ નિમિત્ત સાંભળીને પ્રભુને ફરીથી પૂછે છે—“ હે ભદન્ત ! જે આજ વાત છે કે મનઃપર્યયજ્ઞાન પર્યાપ્તક, સંખ્યેય વર્ષના આયુવાળાં, કર્મભૂમિજ, ગર્ભવ્યુત્ક્રાન્તિક અપ્રમત્ત—સંયત સમ્યગ્દષ્ટિ મનુષ્યને જ ઉત્પન્ન થાય છે તો શું જે ઋદ્ધિવાળા, ઉપર કહેલ વિશેષણવાળા મનુષ્યોને ઉત્પન્ન થાય છે કે ઋદ્ધિરહિત પૂર્વોક્તવિશેષણવાળા મનુષ્યોને ઉત્પન્ન થાય છે ? ” ભગવાને કહ્યું—“ હે ગૌતમ ! આ મનઃપર્યય જ્ઞાન ઋદ્ધિવાળા પૂર્વોક્તવિશેષણવાળા મનુષ્યોને જ ઉત્પન્ન થાય છે પણ ઋદ્ધિરહિત મનુષ્યોને પ્રાપ્ત થતું નથી.

ભાવાર્થ—પ્રભુએ ગૌતમને આ સૂત્ર દ્વારા એ સમજાવ્યું કે જે અપ્રમત્ત સંયત સમ્યગ્દષ્ટિ મનુષ્યો ઋદ્ધિવાળા આમર્શ—ઔષધિ આદિ લબ્ધિવાળા હોય છે તેમને જ આ મનઃપર્યયજ્ઞાન ઉત્પન્ન થાય છે. જેમને આમર્શ—ઔષધિ આદિ લબ્ધિયો પ્રાપ્ત થઈ નથી તેમને થતું નથી. કેટલાક અપ્રમત્ત—સંયત—સમ્યગ્



નનુ—અસ્યૈવ સૂત્રસ્ય પ્રારંભે ‘મનઃપર્યયજ્ઞાનં મનુષ્યાણામુત્પદ્યતે’ इत्युक्ते सामर्थ्याद् ‘अमनुष्याणां नोत्पद्यते’ इत्यर्थो ज्ञातुं शक्यते, ततः कथमुच्यते—  
‘नो अमणुस्साणं उप्पज्जइ’ इत्यादि ? ।

उच्यते—इह शिष्यास्त्रिविधा भवन्ति, उद्घटितज्ञाः, मध्यमज्ञाः, प्रपञ्चित-  
ज्ञाश्च । तत्र ये उद्घटितज्ञास्ते गुरुणा यथोक्तसामर्थ्यम् तदवबुध्यन्ते, तथैव मध्य-  
कितनेक अप्रमत्त संयत सम्यग्दृष्टि जीव विशिष्ट तथा उत्तरोत्तर अपूर्व २  
अर्थ के प्रतिपादक आगमों के सम्यक् अभ्यास से उनके पूर्ण ज्ञाता  
बन जाते हैं । इससे उनके चित्त में तीव्र तीव्रतर शुभ भावनाएँ जाग्रत  
होती रहती हैं, अतः इन भावनाओं के बल पर वे आमर्श-औषधि  
आदि लब्धियाँ को प्राप्त कर लिया करते हैं । जिन अप्रमत्त संयतों के  
आमर्श-औषधि आदि लब्धियों में से कोई एक लब्धि भी प्राप्त हो  
चुकी है, अथवा अवधिज्ञानलब्धि के वे धारक बन चुके हैं तो उनको  
मनःपर्ययज्ञान अवश्य होता है, परन्तु अप्रमत्त, संयम के धारक होने  
पर भी यदि वे ऋद्धिप्राप्त नहीं हैं तो ऐसी स्थिति में उनको मनःपर्यय-  
ज्ञान उत्पन्न नहीं होता है ।

शंका—इसी सूत्र के प्रारंभ में मनःपर्ययज्ञान मनुष्यों के उत्पन्न  
होता है ऐसा कहने पर सामर्थ्य से ही यह बात स्पष्ट हो जाती है कि  
अमनुष्यों के मनःपर्ययज्ञान उत्पन्न नहीं होता है, तब फिर “अमनुष्याणां  
नोत्पद्यते” ऐसा क्यों कहा ?

દ્રષ્ટિ જીવ વિશિષ્ટ તથા ઉત્તરોત્તર અપૂર્વ અપૂર્વ અર્થના પ્રતિપાદક આગમોના  
સમ્યગ્ અભ્યાસથી તેમના પૂર્ણ જાણકાર થઈ જાય છે, તેથી તેમનાં ચિત્તમાં  
તીવ્ર અને તીવ્રતર શુભ ભાવનાઓ જાગૃત થતી રહે છે, તેથી એ ભાવનાઓના  
પ્રભાવથી તેઓ આમર્શ-ઔષધિ આદિ લબ્ધિઓને પ્રાપ્ત કર્યા કરે છે. જે  
અપ્રમત્ત સંયતોને આમર્શ-ઔષધિ આદિ લબ્ધિઓમાંથી કોઈ એક લબ્ધિ પણ  
પ્રાપ્ત થઈ ગઈ હોય, અથવા અવધિજ્ઞાનલબ્ધિના તેઓ ધારનારા બની ગયા હોય  
તો તેમને મનઃપર્યયજ્ઞાન જરૂર ઉત્પન્ન થાય છે, પણ અપ્રમત્ત સંયમના ધારણ  
કરનારા હોવા છતાં પણ જો તેઓને ઋદ્ધિ પ્રાપ્ત થઈ ન હોય તો એવી  
સ્થિતિમાં તેમને મનઃપર્યયજ્ઞાન ઉત્પન્ન થતું નથી.

શંકા—આજ સૂત્રની શરૂઆતમાં ‘મનઃપર્યય જ્ઞાન મનુષ્યોને ઉત્પન્ન થાય છે’  
એમ કહેવા માત્રથી જ એ વાત સ્પષ્ટ થઈ જાય છે કે અમનુષ્યોને મનઃપર્યય  
જ્ઞાન ઉત્પન્ન થતું નથી. છતાં પણ “અમનુષ્યાણાં નોત્પદ્યતે” એવું શા માટે કહ્યું ?

મજ્ઞા અપિ । યે તુ શિષ્યા અવ્યુત્પન્નત્વાન્ન યથોક્તસામર્થ્યાવગમકુશલાસ્તે પ્રપશ્ચિ-  
તમેવાર્થ જ્ઞાતું સમર્થા ભવન્તિ, તતસ્તેષાનુગ્રહાય સામર્થ્યલબ્ધમપ્યર્થ વોધયિતું ગુરવઃ  
યતન્તે । મહાપુરુષાઃ સ્વલુ પરમદયાલુત્વાદવિશેષણ સર્વેષામનુગ્રહાય પ્રવર્તન્તે, તતો  
ન કશ્ચિદ્ દોષઃ ॥ સૂ૦ ૧૭ ॥

ઉત્તર—ઇસકા કારણ ઇસ પ્રકાર હૈ—શિષ્ય ત્રીન પ્રકાર કે હોતે હૈ  
૧ ઉદ્વદિતજ્ઞ, ૨ મધ્યમજ્ઞ, ૩ પ્રપંચિતજ્ઞ । इनमें जो प्रथम और द्वितीय नंबर  
के शिष्य हुआ करते हैं वे गुरु के द्वारा कथित अर्थके सामर्थ्य से लभ्य  
अर्थ को जान लिया करते हैं । परन्तु जो तीसरे नंबर के शिष्य होते  
हैं वे गुरु के द्वारा कथित अर्थ के सामर्थ्य से लभ्य अर्थ को जानने में  
अकुशलमति हुआ करते हैं । क्यों कि इनकी बुद्धि इतनी व्युत्पन्न  
नहीं होती है, अतः इनके समक्ष जबतक विस्तारपूर्वक बात नहीं कही  
जावे तबतक वे नहीं समझ सकते हैं, अतः इनके ऊपर अनुग्रह की  
भावना से प्रेरित बने हुए गुरु महाराज सामर्थ्यलभ्य भी अर्थ को उन्हें  
समझाने के लिये प्रवृत्तिशील होते हैं, और इसीलिये वे उसको फिर  
शब्दों द्वारा प्रकट कर दिया करते हैं । महापुरुष परम दयालु होते हैं,  
अतः सब जीवों के अनुग्रह की भावना से वे विना पक्षपात के  
सामान्यरूप से ‘सब को बोध हो’ इसी एक अभिलाषा के वशवर्ती  
बनकर अर्थ का प्रतिपादन किया करते हैं और इसीके अनुरूप उनकी  
प्रवृत्ति हुआ करती है ॥ सू० १७ ॥

ઉત્તર—તેનું કારણ આ પ્રમાણે છે—શિષ્ય ત્રણ જાતના હોય છે (૧) ઉદ્વદિ-  
તજ્ઞ, (૨) મધ્યમજ્ઞ, (૩) પ્રપંચિતજ્ઞ. તેઓમાં પહેલા અને બીજા નંબરના  
જે શિષ્યો હોય છે તેઓ ગુરુ વડે કહેવાયેલા અર્થના સામર્થ્યથી લભ્ય અર્થને  
જાણી લે છે, પણ જે ત્રીજા નંબરના શિષ્યો હોય છે તેઓ ગુરુના દ્વારા કહે-  
વાયેલા અર્થના સામર્થ્યથી લભ્ય અર્થને જાણવામાં અકુશળ મતિવાળા હોય છે,  
કારણ કે તેમની બુદ્ધિ એટલી બધી કુશળ હોતી નથી, તેથી તેમની સામે જ્યાં  
સુધી વિસ્તારપૂર્વક વાત કહેવામાં ન આવે ત્યાં સુધી તેઓ સમજી શકતા નથી.  
તેથી જ તેના ઉપર કૃપા કરવાની ભાવનાથી પ્રેરાયેલા ગુરુ મહારાજ સામર્થ્ય લભ્ય  
અર્થ પણ તેમને સમજાવવાને માટે પ્રવૃત્તિશીલ રહે છે, અને તેથી તેઓ  
તેને ફરીથી શબ્દો દ્વારા પ્રગટ કરે છે, મહાપુરુષ ઘણા દયાળુ હોય છે. તેથી  
બધા જોવા પર કૃપા કરવાની ભાવનાથી પક્ષપાત વિના સામાન્યરૂપે બધાને  
બોધ થાય, એવી એક અભિલાષાને તાબે થઈને અર્થનું પ્રતિપાદન કર્યા કરે છે.  
અને તેને અનુરૂપ તેમની પ્રવૃત્તિ થયા કરે છે. ॥ સૂ. ૧૭ ॥

ऋद्धिप्राप्तानामप्रमत्तसंयतानामुत्पद्यमानं मनःपर्ययज्ञानं द्विधा भवति, तदाह-

मूलम्—तं च दुविहं उपज्जइ, तं जहा—उज्जुमई य, विउल-  
मई य । तं समासओ चउव्विहं पन्नत्तं, तं जहा—दव्वओ,  
खित्तओ, कालओ, भावओ ।

तत्थ दव्वओणं उज्जुमई अणंते, अणंतपएसिए खंधे  
जाणइ पासइ । ते चेवविउलमई अब्भहियतरगं विउलतरगं  
विसुद्धतरगं, वितिमिरतरगं जाणइ पासइ ।

खित्तओ णं उज्जुमई य जहन्नेणं अंगुलस्स असंखेज्जइभागं,  
उक्कोसेणं अहे जाव इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए उवरिम-हेडिल्ले  
खुड्डगपयरे, उड्ढं जाव जोइसस्स उवरिमतले, तिरियं जाव  
अंतोमणुस्सखित्ते अड्ढाइज्जेसु दीवसमुद्देसु, पन्नरससु कम्म-  
भूमिसु, तीसाए अकम्मभूमिसु, छप्पन्नाए अंतरदीवगेसु, सन्नि-  
पंचिंदियाणं पज्जत्तयाणं मणोगए भावे जाणइ पासइ । तं चेव  
विउलमई अड्ढाइज्जेहिमंगुलेहिं अब्भहियतरगं विउलतरगं  
विसुद्धतरगं वितिमिरतरगं खेत्तं जाणइ पासइ ।

छाया—तच्च द्विविधमुत्पद्यते, तद्यथा—ऋजुमतिश्च विपुलमतिश्च । तत् समा-  
सतश्चतुर्विधं प्रज्ञप्तम् । तद्यथा—द्रव्यतः, क्षेत्रतः, कालतो भावतः ।

तत्र द्रव्यतः खलु ऋजुमतिरनन्तान् अनन्तप्रदेशिकान् स्कन्धान् जानाति  
पश्यति । तान् चैव विपुलमतिरभ्यधिकतरान् विपुलतरकं विशुद्धतरकं विति-  
मिरतरकं जानाति पश्यति,

क्षेत्रतः खलु ऋजुमतिश्च जघन्येनाङ्गुलस्याऽसंख्येयभागम् । उत्कर्षेणाऽधो  
यावदस्या रत्नप्रभायाः पृथिव्या उपरितनानधस्तनान् क्षुल्लकप्रतरान्, उर्ध्वं याव-  
ज्ज्योतिष्कस्योपरितनतलम्, तिर्यग्यावदन्तोमनुष्यक्षेत्रे—अर्धतृतीयेषु द्वीपसमुद्रेषु,  
पञ्चदशसु कर्मभूमिषु, त्रिंशदकर्मभूमिषु, षट्पञ्चाशदन्तरद्वीपेषु संज्ञिपञ्चेन्द्रियाणां  
पर्याप्तकानां मनोगतान् भावान् जानाति पश्यति । तच्चैव विपुलमतिरर्धतृतीयैरङ्गु-  
लैरभ्यधिकतरकं विपुलतरकं विशुद्धतरकं वितिमिरतरकं क्षेत्रं जानाति पश्यति ।

કાલઓ ણં ઉજ્જુમઈ જહન્નેણં પલિઓવમસ્સ અસંખિજ્જ-  
યભાગં, ઉક્કોસેણાવિ પલિઓવમસ્સ અસંખિજ્જયભાગં અઈયમ-  
ણાગયં વા કાલં જાણઈ પાસઈ । તં ચેવ વિઉલમઈ અબ્ભહિયતરગં  
વિઉલતરગં વિસુદ્ધતરગં વિતિમિરતરગં કાલં જાણઈ પાસઈ ।

ભાવઓ ણં ઉજ્જુમઈ અણંતે ભાવે જાણઈ પાસઈ । સઠ્ઠ-  
ભાવાણં અણંતભાગં જાણઈ પાસઈ । તં ચેવ વિઉલમઈ અબ્ભ-  
હિયતરગં વિઉલતરગં વિસુદ્ધતરગં વિતિમિરતરગં ભાવં  
જાણઈ પાસઈ ॥

કાલતઃ સ્વલુ ઋજુમતિર્જઘન્યેન પલ્યોપમસ્યાસંખ્યેયભાગમ્, ઉત્કર્ષેણાપિ પલ્યો-  
પમસ્યાસંખ્યેયભાગમતીતમનાગતં વા કાલં જાનાતિ પશ્યતિ । તત્ત્વૈવ વિપુલમતિ-  
રભ્યધિકતરકં વિપુલતરકં વિસુદ્ધતરકં વિતિમિરતરકં કાલં જાનાતિ પશ્યતિ ।

ભાવતઃ સ્વલુ ઋજુમતિરનન્તાન્ ભાવાન્ જાનાતિ પશ્યતિ, સર્વભાવાનામનન્તભાગં  
જાનાતિ પશ્યતિ । તત્ત્વૈવ વિપુલમતિરભ્યધિકતરકં વિપુલતરકં વિશુદ્ધતરકં વિતિ-  
મિરતરકં જાનાતિ પશ્યતિ ॥

ટીકા—‘તં ચ દુવિહં ઉપ્પજ્જઈ’ इत्यादि । तन्मनःपर्ययज्ञानं द्विविधमुत्पद्यते ।  
तद् यथा—ऋजुमतिश्चविपुलमतिश्च । तत्र—मननं मतिः संवेदनमित्यर्थः, ऋज्वी=  
सामान्यग्राहिणी मतिः ऋजुमतिः, ‘घटोऽनेन चिन्तितः’ इत्यध्यवसायहेतुभूता

ઋદ્ધિપ્રાપ્ત અપ્રમત્ત સંયતોં કે ઉત્પદ્યમાન મનઃપર્યયજ્ઞાન દો પ્રકાર કા  
હોતા હૈ સો સૂત્રકાર કહતે હૈ—‘તં ચ દુવિહં’ इत्यादि ।

વહ મનઃપર્યયજ્ઞાન દો પ્રકાર સે ઉત્પન્ન હોતા હૈ । યે દો પ્રકાર યે હૈ—  
પ્રથમ ઋજુમતિ ઓર દૂસરા વિપુલમતિ । મતિ-શબ્દ કા અર્થ સંવેદનજ્ઞાન  
હૈ । ઋજુમતિ-શબ્દ કા અર્થ સામાન્ય હૈ । ઇસ પ્રકાર વિષય કો સામાન્ય  
રૂપ સે ગ્રહણ કરનેવાલા જ્ઞાન ઋજુમતિ, ઓર વિષય કો વિશેષરૂપ સે

ઋદ્ધિવાળા અપ્રમત્ત સંયતોને ઉત્પન્ન થતું મનઃપર્યયજ્ઞાન બે પ્રકારનું  
હોય છે, તે સૂત્રકાર કહે છે—‘તં ચ દુવિહં’ इत्यादि—

તે મનઃપર્યયજ્ઞાન બે રીતે ઉત્પન્ન થાય છે. તે બે પ્રકાર આ છે—પહેલું  
ઋજુમતિ અને બીજું વિપુલમતિ. મતિ-શબ્દનો અર્થ સંવેદન—‘જ્ઞાન’ છે.  
‘ઋજુ’ શબ્દનો અર્થ સામાન્ય છે. આ રીતે વિષયને સામાન્યરૂપથી ગ્રહણ  
કરનારું જ્ઞાન ઋજુમતિ અને વિષયને વિશેષરૂપથી ગ્રહણ કરનારું જ્ઞાન વિપુ-

કતિપયપર્યાયવિશિષ્ટમનોદ્રવ્યપ્રતિપત્તિરિત્યર્થઃ । વિપુલા=વિશેષગ્રાહિણી મતિર્વિપુ-  
લમતિઃ । ‘ઘટોઽનેન ચિન્તિતઃ, સ ચ સૌવર્ણઃ સ્થૂલો નૂતનોઽપવરકસ્થિતઃ પયઃ-  
પૂર્ણઃ’ इत्यादिविशेषाध्यवसायहेतुभूता मनोद्रव्यप्रतिपत्तिरित्यर्थः । यद्वा-विपुल-  
मतिः-विपुलं=बहु विशेषसंख्योपेतं वस्तु मन्यते=गृह्णातीति विपुलमतिः । बाहुलकात्  
कर्तरि क्ति-प्रत्ययः । यदि वा-विपुला=पर्यायशतोपेता चिन्तितघटादिवस्तुविशेष-  
ग्राहिणी मति-विपुलमतिः । तद् द्विविधमपि मनःपर्ययज्ञानं समासतः=संक्षेपेण,  
चतुर्विधं प्रज्ञप्तं=प्ररूपितम् । तद् यथा-द्रव्यतः=द्रव्यमाश्रित्य, क्षेत्रतः=क्षेत्रमाश्रित्य,  
कालतः=कालमाश्रित्य, भावतः=भावमाश्रित्य ।

તત્ર ઋજુમતિર્દ્રવ્યમાશ્રિત્યાનન્તાન્ અનન્તપ્રદેશિકાન્=અનન્તપરમાણુકાન્,  
સ્કન્ધાન્=વિશિષ્ટૈકપરિણતાન્ પરસ્પરસંયુક્તપુદ્ગલસમૂહાન્ અર્થતૃતીયદ્વીપસમુ-  
દ્રાન્તર્વર્તિપર્યાપ્તસંજ્ઞિપદ્મૈન્દ્રિયૈર્મનસ્ત્વેન પરિણમિતાન્ જાનાતિ=મનઃપર્યયજ્ઞાનાવર-  
ણીયક્ષયોપશમસામર્થ્યવશાત્ સાક્ષાત્કરોતિ પશ્યતિ=તન્મનોગ્રાહ્યં વાહ્યમર્થમનુમાનતો  
જાનાતીત્યર્થઃ ।

ગ્રહણ કરનેવાલા જ્ઞાન વિપુલમતિ હૈ । જૈસે-“इसने घटका चिन्तवन किया है” इस तरह की अध्यवसाय की हेतुभूत जो कतिपय पर्याय  
विशिष्ट मनोद्रव्य की प्रतिपत्ति है वह ऋजुमति-मनःपर्ययज्ञान है । तथा  
“इसने जो घटका चिन्तवन किया है, वह सोने के बने हुए घट का  
चिन्तवन किया है, तथा वह स्थूल है नवीन है, कोठे में रक्खा हुआ है।”  
इस तरह जो विशेष ज्ञान की हेतुभूत मनोद्रव्य की प्रतिपत्ति है वह  
विपुलमति-मनःपर्यय ज्ञान है । अथवा-जो ज्ञान विपुल-बहुत विशेष-  
संख्यासंपन्नवस्तु को ग्रहण करता है, अथवा-अनेक पर्याय से युक्त  
चिन्तित घटादिवस्तुविशेष को जानता है वह विपुलमति-मनःपर्ययज्ञान  
है यह दोनों प्रकार का मनःपर्यय ज्ञान संक्षेप से चार प्रकार का बत-

લમતિ છે. જેમકે-“તેણે ઘડાનો વિચાર કર્યો” આ પ્રકારની અધ્યવસાયની  
હેતુભૂત જે કેટલીક પર્યાયવિશિષ્ટ મનોદ્રવ્યની પ્રાપ્તિ છે તે ઋજુમતિ મનઃપર્યય  
જ્ઞાન છે. તથા “તેણે જે ઘડાનો વિચાર કર્યો છે તે સોનાના બનેલા ઘડાનો  
વિચાર કર્યો છે, તથા તે સ્થૂળ છે, નવીન છે, અને કોઠડીમાં રાખેલો છે”  
આ રીતે જે વિશેષ જ્ઞાનની હેતુભૂત મનોદ્રવ્યની પ્રાપ્તિ છે તે વિપુલમતિ  
મનઃપર્યય જ્ઞાન છે. અથવા-જે જ્ઞાન વિપુલ-બહુ-વિશેષ-સંખ્યાસંપન્ન-વસ્તુને  
ગ્રહણ કરે છે, અથવા અનેક પર્યાયવાળી ધારેલી ઘટાદિ વસ્તુવિશેષને બાજુ છે તે  
વિપુલમતિ મનઃપર્યય જ્ઞાન છે. એ બન્ને પ્રકારના મનઃપર્યય જ્ઞાનને સંક્ષિપ્તમાં

મનસ્ત્વપરિણતસ્કન્ધૈરાલોચિતં વાહ્યં ઘટાદિરૂપમર્થં મનઃપર્યયજ્ઞાની ન પ્રત્યક્ષ-  
તયા જાનાતિ કિન્તુ મનોદ્રવ્યમેવ । વાહ્યં ઘટાદિરૂપં ચિન્તિતમર્થં ત્વનુમાનતોઽવ-  
ગચ્છતિ, તન્મનસસ્તથાવિધપરિણામાન્યથાનુપપન્નયા તદનુમાનસંભવાત્ । યતો  
મનઃપર્યયજ્ઞાનં મૂર્તદ્રવ્યાલમ્બનમેવ ભવતિ, અનુમાનેન તુ અમૂર્તમપિ ધર્માસ્તિકાયા-  
દિકં દ્રવ્યં જાનાતિ । ન ચ તન્મનઃપર્યયજ્ઞાનિના સાક્ષાત્કર્તુ શક્યતે, અતસ્તચ્ચિ-  
ન્તિતમર્થં ઘટાદિકરૂપમનુમાનાદેવ જાનાતીતિ વોધ્યમ્ । તતસ્તં વાહ્યમર્થમાશ્રિત્ય  
પશ્યતીત્યુચ્યતે ।

લાયા ગયા હૈ, વહ્ इस प्रकार-द्रव्य की अपेक्षा, क्षेत्र की अपेक्षा, काल  
की अपेक्षा और भाव की अपेक्षा लेकर । इनमें द्रव्य की अपेक्षा लेकर  
मनःपर्ययज्ञान अनंत और अनंत प्रदेशवाले स्कंधों को जानता और  
देखता है । पुद्गलपरमाणुओं की विशिष्ट एक अवस्थारूप हुई परिणति  
का नाम स्कंध है । अढाई द्वीपवर्ती मनवाले संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त किसी  
भी वस्तु का चिन्तवन मन से करते हैं, चिन्तवन के समय चिन्तनीय  
वस्तु के भेद के अनुसार चिन्तनकार्यमें प्रवृत्त मन भिन्न २ आकृतियों  
को धारण करता है, ये आकृतियां ही मन की पर्याये हैं । इन मानसिक  
आकृतियों को मनःपर्ययज्ञानी साक्षात् जानता है, और चिन्तनीय  
वस्तु को मनःपर्ययज्ञानी अनुमान से जानता है । जैसे कोई मानस  
शास्त्र का अभ्यासी किसी का चहेरा देखकर या चेष्टा प्रत्यक्ष देखकर  
उसके आधार से व्यक्ति के मनोगत भावों को अनुमान से जान लेता है  
उसी प्रकार मनःपर्ययज्ञान से किसी के मन की आकृतियों को प्रत्यक्ष

ચાર પ્રકારનું બતાવ્યું છે, તે આ પ્રમાણે છે-દ્રવ્યની અપેક્ષાએ, ક્ષેત્રના અપેક્ષાએ,  
કાળની અપેક્ષાએ અને ભાવની અપેક્ષાએ. તેમનામાં દ્રવ્યની અપેક્ષાએ  
લઈને મનઃપર્યયજ્ઞાન અનંતાનંત પ્રદેશવાળા સ્કંધોને જાણે અને દેખે છે.  
પુદ્ગલપરમાણુઓની એક વિશિષ્ટ અવસ્થારૂપ પરિણતિનું નામ સ્કંધ છે.  
અઢાઈ દ્વીપવર્તી મનવાળા સંજ્ઞી પંચેન્દ્રિય પર્યાપ્ત કોઈ પણ વસ્તુનું ચિન્તવન  
મનથી કરે છે, ચિન્તવનના સમયે ચિન્તનીય વસ્તુના ભેદ પ્રમાણે ચિન્તન  
કાર્યમાં પ્રવૃત્ત મન ભિન્ન ભિન્ન આકૃતિયોને ધારણ કરતું રહે છે, એ આકૃતિયો  
જ મનની પર્યાયો છે. એ માનસિક આકૃતિયોને મનઃપર્યયજ્ઞાની સાક્ષાત્ જાણે  
છે, અને ચિન્તનીય વસ્તુને મનઃપર્યયજ્ઞાની અનુમાનથી જાણે છે. જેમ કોઈ  
માનસશાસ્ત્રનો અભ્યાસી કોઈનો ચહેરો જોઈને અથવા ચેષ્ટા પ્રત્યક્ષ જોઈને  
તેના આધારે વ્યક્તિના મનોગત ભાવોને અનુમાનથી જાણી લે છે, એજ રીતે  
મનઃપર્યયજ્ઞાની મનઃપર્યયજ્ઞાનથી કોઈના મનની આકૃતિયોને પ્રત્યક્ષ જોઈને



દેશકર વાદમેં અભ્યાસવશ એસા અનુમાન કર લેતા હૈ કિ હસ વ્યક્તિને અમુક વસ્તુ કા ચિન્તવન કિયા હૈ । હસ તરહ મનરૂપ સે પરિણત સ્કંધોં દ્વારા આલોચિત વાહ્ય ઘટાદિકરૂપ અર્થ મનઃપર્યય જ્ઞાની પ્રત્યક્ષરૂપ સે નહીં જાનતા હૈ, ઉસ કો તો વહ અનુમાનદ્વારા હી જાનતા હૈ । પ્રત્યક્ષરૂપ સે તો વહ મનોદ્રવ્ય કો હી જાનતા હૈ, કયોં કિ વહ એસા વિચાર કરતા હૈ કિ હસને અમુક વસ્તુ કા ચિન્તવન કિયા હૈ, કારણ કિ હસકા મન ઉસ વસ્તુ કે ચિન્તન કે સમય અવશ્ય હોને વાલે અમુક પ્રકાર કી પરિણતિ-આકૃતિ-સે યુક્ત હૈ, યદિ એસા નહીં હોતા તો હસ પ્રકાર કી આકૃતિ નહીં હોતી । હસ તરહ ચિન્તનીય વસ્તુ કા અન્યથાનુપપત્તિ દ્વારા જાનના હી અનુમાન સે જાનના હૈ । જૈનદર્શનને અન્યથાનુપપત્તિ કો અનુમાન સે ભિન્ન નહીં માના હૈ, ઉસકા અન્તર્ભાવ અનુમાનપ્રમાણમેં કિયા હૈ હસ તરહ યદ્યપિ મનઃપર્યયજ્ઞાની મૂર્તદ્રવ્ય કો હી જાનતા હૈ પરન્તુ અનુમાનદ્વારા વહ ધર્માસ્તિકાય આદિ અમૂર્તદ્રવ્યોં કો ભી જાનતા હૈ । હન અમૂર્તદ્રવ્યોં કા ઉસ મનઃપર્યયજ્ઞાનધારીદ્વારા સાક્ષાત્કાર નહીં કિયા જા સકતા હૈ । નિષ્કર્ષ હસકા યહી હૈ કિ મનઃપર્યયજ્ઞાની ચિન્તવન કિયે ગયે ઘટાદિકરૂપ પદાર્થકો અનુમાન સે હી જાનતા હૈ । યહી વાત પ્રકટ કરનેકે લિયે સૂત્રમેં સૂત્રકારને “પશ્યતિ” હસ ક્રિયાકા પ્રયોગ કિયા હૈ ।

ત્યાર પછી અભ્યાસને કારણે એવું અનુમાન કરી લે છે કે આ વ્યક્તિએ અમુક વસ્તુનું ચિન્તવન કર્યું છે. આ રીતે મનરૂપથી પરિણત સ્કંધો દ્વારા જોયેલા બાહ્ય ઘટાદિક રૂપ અર્થ મનઃપર્યયજ્ઞાની પ્રત્યક્ષરૂપે જાણતો નથી, તેને તો તે અનુમાનથી જ જાણે છે. પ્રત્યક્ષરૂપે તો તે મનોદ્રવ્યને જ જાણે છે, કારણ કે તે એવો વિચાર કરે છે કે એણે અમુક વસ્તુનું ચિન્તવન કર્યું છે કારણ કે તેનું મન એ વસ્તુનાં ચિન્તવન સમયે જરૂર થનારી અમુક પ્રકારની પરિણતિ-આકૃતિવાળું છે. જો એમ ન હોત તો આ પ્રકારની આકૃતિ હોત નહીં. આ રીતે ચિન્તનીય વસ્તુને અન્યથાનુપપત્તિદ્વારા જાણવું એજ અનુમાનથી જાણ્યું ગણાય છે. જૈનદર્શને અન્યથાનુપપત્તિને અનુમાનથી લિન્ન માનેલ નથી, તેનો અન્તર્ભાવ અનુમાન પ્રમાણમાં કર્યો છે. આ રીતે જો કે મનઃપર્યયજ્ઞાની મૂર્ત દ્રવ્યને જ જાણે છે, પણ અનુમાનદ્વારા તે ધર્માસ્તિકાય આદિ અમૂર્ત દ્રવ્યોને પણ જાણે છે. એ અમૂર્ત દ્રવ્યોનો એ મનઃપર્યયજ્ઞાનીદ્વારા સાક્ષાત્કાર કરી શકાતો નથી. તેનું તાત્પર્ય એ છે કે મનઃપર્યયજ્ઞાની ચિન્તવન કરાયેલા ઘટાદિકરૂપ પદાર્થને અનુમાનથી જ જાણે છે. આજ વાત પ્રગટ કરવાને માટે સૂત્રમાં સૂત્રકારે “પશ્યતિ” આ ક્રિયાનો પ્રયોગ કર્યો છે.



અથવા સામાન્યતઃ એકરૂપેઽપિ જ્ઞાને ક્ષયોપશમસ્ય તત્તદ્રવ્યાદ્યપેક્ષયા વૈચિત્ર્ય-સંભવાદનેકવિધ ઉપયોગઃ સંભવતિ । યથાઽત્રૈવ ઋજુમતિ-વિપુલમતિરૂપઃ । તતો વિશિષ્ટતરમનોદ્રવ્યાકારપરિચ્છેદાપેક્ષયા જાનાતીત્યુચ્યતે । સામાન્યમનોરૂપદ્રવ્યાકાર પરિચ્છેદાપેક્ષયા તુ પશ્યતીતિ ।

સામાન્યતઃ એકરૂપેઽપિ ક્ષયોપશમલભ્યમેઽપાન્તરાલે દ્રવ્યાદ્યપેક્ષયા ક્ષયોપશમસ્ય વિષમસંભવાદ્ વિવિધોપયોગસંભવો ભવતીતિ, તદેવં વિશિષ્ટતરમનોદ્રવ્યાકારપરિ-

અથવા—સામાન્ય સે એકરૂપજ્ઞાનમેં મ્હી, ઉસ દ્રવ્યાદિક કી અપેક્ષા સે ક્ષયોપશમ કી વિચિત્રતા સંભવિત હોને સે અનેક પ્રકારકા ઉપયોગ સંભવિત હોતા હૈ । જૈસે હસી મનઃપર્યયજ્ઞાનમેં ઋજુમતિ એવં વિપુલમતિ-રૂપ ઉપયોગ કા સંભવ હોતા હૈ, હસીલિયે વિશિષ્ટતર મનોદ્રવ્ય કે આકારોં કે જાનને કે કારણ સૂત્રકાર ને સૂત્રમેં “જાનાતિ” યહ ક્રિયા રખી હૈ । તાત્પર્ય કહનેકા યહી હૈ કિ મનઃપર્યયજ્ઞાની સામાન્યરૂપ સે મનોદ્રવ્ય કે આકારોં કા પરિચ્છેદ જબ કરતા હૈ તબ હસ અપેક્ષા વહ “અન્હેં દેખતા હૈ” એસા કહા જાતા હૈ, ઓર જબ અન્હીં મનોદ્રવ્યોં કે આકારોં કા વિશેષરૂપ સે પરિચ્છેદ કરતા હૈ તબ હસ અપેક્ષા વહ “અન્હેં જાનતા હૈ” એસા કહા જાતા હૈ । હસ તરહ એક હી જ્ઞાનમેં ઉસઉસ દ્રવ્યાદિક કી અપેક્ષા ક્ષયોપશમ કી વિચિત્રતા હોને સે ઉપયોગ કી વિવિધતા કા સંભવ હૈ ।

યદ્યપિ સામાન્યરૂપ સે ઊનર કર્મોંકા ક્ષયોપશમ અપને ૨ જ્ઞાનાદિક રૂપ કાર્યોં કી પ્રગટતામેં વિવિધરૂપ ન હોકર એકરૂપ હોતા હૈ ફિર મ્હી

અથવા—સામાન્ય રીતે એકરૂપજ્ઞાનમાં પણ દ્રવ્યાદિકની અપેક્ષાએ ક્ષયોપશમની વિચિત્રતા સંભવિત હોવાથી અનેક પ્રકારના ઉપયોગ સંભવિત હોય છે. જેમ કે તેજ મનઃપર્યયજ્ઞાનમાં ઋજુમતિ અને વિપુલમતિરૂપ ઉપયોગનો સંભવ હોય છે, તેથી વિશિષ્ટતર મનોદ્રવ્યોના આકારોને જાણવાને કારણે સૂત્રકારે સૂત્રમાં “જાનાતિ” આ ક્રિયા રાખી છે. એમ કહેવાનું તાત્પર્ય એજ છે કે મનઃપર્યયજ્ઞાની સામાન્યરૂપથી મનોદ્રવ્યોના આકારોના પરિચ્છેદ જ્યારે કરે છે ત્યારે તે અપેક્ષાએ “તે તેમને જાણે છે” એમ કહેવાય છે, અને જ્યારે એજ મનોદ્રવ્યોના આકારોનું વિશેષરૂપથી પરિચ્છેદ કરે છે ત્યારે તે અપેક્ષાએ “તે તેમને જાણે છે” એવું કહેવાય છે. આ રીતે એક જ જ્ઞાનમાં દ્રવ્યાદિકની અપેક્ષાએ ક્ષયોપશમની વિવિધતા હોવાથી ઉપયોગની વિવિધતાનો સંભવ છે.

જે કે સામાન્યરૂપથી તે તે કર્મોંનો ક્ષયોપશમ પોત-પોતાના જ્ઞાનાદિકરૂપ કાર્યોંની પ્રગટતામાં વિવિધરૂપ ન હોતાં એકરૂપ હોય છે તે પણ વચ્ચે

ચ્છેદાપેક્ષયા સામાન્યરૂપમનોદ્રવ્યાકારપરિચ્છેદો વ્યવહારતો દર્શનરૂપ ઉક્તઃ । પર-  
માર્થતસ્તુ સોઽપિ જ્ઞાનમેવ, યતઃ સામાન્યરૂપમપિ મનોદ્રવ્યાકારં પ્રતિનિયતમેવ  
પશ્યતિ, પ્રતિનિયતવિશેષગ્રહણાત્મકં ચ જ્ઞાનં, ન તુ દર્શનમ્, અત એવ સૂત્રેઽપિ દર્શનં  
ચતુર્વિધમેવોક્તં, ન પશ્ચવિધમપિ, મનઃપર્યયદર્શનસ્ય પરમાર્થતોઽસંભવાત્ ।

અન્તરાલમેં દ્રવ્યાદિકોં કી અપેક્ષા ક્ષયોપશમમેં વિચિત્રતા આ જાતી હૈ,  
इस लिये विविध उपयोग की भी संभावना हो जाती है । इस तरह  
विशिष्टतर मनोद्रव्य के आकारों के परिच्छेद की अपेक्षा सामान्यरूप  
मनोद्रव्यों के आकारों के परिच्छेद को व्यवहार की अपेक्षा से “देखते हैं”  
एसा कह दिया गया है । परमार्थ की अपेक्षा तो वह सामान्याकार का  
परिच्छेदरूप ऋजुमति ज्ञान भी ज्ञान ही है । तात्पर्य इसका केवल यही  
है कि जब ऋजुमति सामान्यग्राही है तब तो वह दर्शनरूप ही हुआ,  
उस को ज्ञान क्यों कहा ?—तो इस शंका का यह समाधान है कि ठीक  
वह—ऋजुमति सामान्यग्राही है परन्तु इसका तात्पर्य यह नहीं है—केवल  
सामान्यग्राही ही है, इसका प्रयोजन केवल इतना ही है कि वह—ऋजु-  
मति विशेषों को जानता अवश्य है परन्तु विपुलमति जितने विशेषों  
को जानता है उतने विशेषों को ऋजुमति नहीं जानता । यही बात  
टीकाकारने “यतः सामान्यरूपमपि मनोद्रव्याकारं प्रतिनियतमेव पश्यति”  
इस पंक्ति द्वारा स्पष्ट की है । जहां प्रतिनियत का ग्रहण है वही ज्ञान है,

દ્રવ્યાદિકોની અપેક્ષાએ ક્ષયોપશમમાં વિચિત્રતા આવી જાય છે, તેથી વિવિધ  
ઉપયોગની પણ સંભાવના રહે છે. આ રીતે વિશિષ્ટતર મનોદ્રવ્યના આકારોના  
પરિચ્છેદની અપેક્ષાએ સામાન્યરૂપ મનોદ્રવ્યોના આકારોના પરિચ્છેદને વ્યવહાર-  
રની અપેક્ષાએ “જુવે છે” એમ કહેલ છે. પરમાર્થની અપેક્ષાએ તો તે  
સામાન્યાકારનું પરિચ્છેદરૂપ ઋજુમતિજ્ઞાન પણ જ્ઞાન જ છે. તેનું તાત્પર્ય ફક્ત  
અટલું જ છે કે જ્યારે ઋજુમતિ સામાન્યગ્રાહી છે તો પછી તે દર્શનરૂપ જ  
થયું, તેને જ્ઞાન કેમ કહ્યું ? તો આ શંકાનું સમાધાન એ છે કે તે ઋજુમતિ  
સામાન્યગ્રાહી છે તે બરાબર છે પણ તેનું તાત્પર્ય એવું નથી કે તે વિશેષગ્રાહી નથી,  
ફક્ત સામાન્યગ્રાહી જ છે. એનો આશય ફક્ત એટલો જ છે કે તે ઋજુમતિ  
વિશેષોને અવશ્ય જાણે છે પણ વિપુલમતિ જેટલાં વિશેષોને જાણે છે તેટલાં  
વિશેષોને ઋજુમતિ જાણતું નથી. એજ વાત ટીકાકારે “યતઃ સામાન્યરૂપમપિ  
મનોદ્રવ્યાકારં પ્રતિનિયતમેવ પશ્યતિ” આ પંક્તિ દ્વારા સ્પષ્ટ કરી છે. જ્યાં  
પ્રતિનિયતનું ગ્રહણ છે એજ જ્ઞાન છે, દર્શન નથી. તેથી સૂત્રમાં પણ દર્શનો-

તથા તાનેવ મનસ્ત્વેન પરિણમિતાન્ સ્કન્ધાન્ વિપુલમતિઃ અભ્યધિકતરકમ્= અર્ધતૃતીયાઙ્ગુલપ્રમાણભૂમિક્ષેત્રવર્તિનઃ સ્કન્ધાનાદાયાઽધિકતરમ્, સા ચાધિક- તરતા દેશતોઽપિ ભવતિ, તતઃ સર્વાસુ દિક્ષુ અધિકતરતાપ્રતિપાદનાર્થમાહ-‘વિપુલ- તરકમ્’=પ્રભૂતતરકમ્, તથા-વિશુદ્ધતરકં= નિર્મલતરકમ્, ઋજુમત્યપેક્ષયાઽતીવ સ્ફુટતરપ્રકાશમિત્યર્થઃ । સ્ફુટપ્રતિભાસો વિપર્યયરૂપોઽપિ ભવતિ, યથા દ્વિચન્દ્ર- પ્રતિભાસઃ, અતસ્તદ્વારણાય વિશેષણાન્તરમાહ-‘વિતિમિરતરકમ્’ ઇતિ । વિગતં તિમિરં -તિમિરસંપાદ્યો ભ્રમો યસ્મિન્ તત્ત વિતિમિરમ્, પ્રકૃષ્ટં વિતિમિરં વિતિમિરતરમ્,

દર્શન નહીં હૈ । ઇસી લિયે સૂત્રમેં ભી દર્શનોપયોગ ચાર પ્રકાર કા હી બતલાયા ગયા હૈ, પાંચ પ્રકાર કા નહીં, કારણ કિ મનઃપર્યય દર્શન કા પરમાર્થતઃ સંભવ નહીં હૈ ।

વિપુલમતિ-ઉન્હીં મનરૂપ સે પરિણત કિયે હુએ અઢાઈ દ્વીપક્ષેત્રવર્તી સ્કન્ધોં કો કુછ અધિક અર્થાત્-અઢાઈ અંગુલપ્રમાણ ભૂમિરૂપ ક્ષેત્રમેં રહે હુએ સ્કન્ધોં કો લેકર અધિક દેખતા હૈ । ઇસ કા અભિપ્રાય યહ હૈ કિ-વિપુલમતિ ઉસ ક્ષેત્ર કી અપેક્ષા અઢાઈ અંગુલ અધિક જાનતા હૈ ઓર દેખતા હૈ । અધિકતરતા દેશ કી અપેક્ષા ભી હો સકતી હૈ, અતઃ દેશ કી અપેક્ષા સે હુઈ ઇસ અધિકતરતા કો દૂર કરને કે લિયે સૂત્રકારને સૂત્રમેં વિપુલતર પદ રક્ષવા હૈ । ઇસકા તાત્પર્ય યહ હોતા હૈ કિ વિપુલ- મતિ મનઃપર્યયજ્ઞાની ચારોં દિશાઓં કે રૂપી પદાર્થોં કો ઋજુમતિ મનઃપર્યયજ્ઞાની કી અપેક્ષા વિપુલતરરૂપ સે જાનતા ઓર દેખતા હૈ । ઉન પદાર્થોં કા જાનના ઓર દેખના ઋજુમતિ કી અપેક્ષા અતીવસ્ફુટતર હોતા હૈ, યહ બાત વિશુદ્ધતર શબ્દ સે સ્પષ્ટ હોતી હૈ । સ્ફુટ પ્રતિભાસ

પયોગ ચાર પ્રકારનાજ બતાવ્યાં છે, પાંચ પ્રકારના નહીં. કારણ કે મનઃપર્યય દર્શનનો પરમાર્થતઃ સંભવ નથી.

વિપુલમતિ-એજ મનરૂપથી પરિણત કરેલ અઢી દ્વીપ ક્ષેત્રવર્તી સ્કન્ધોને કંઈક વધારે એટલે કે અઢી આંગળ માપના ભૂમિરૂપક્ષેત્રમાં રહેલ સ્કન્ધોને લઈને વધારે દેખે છે. તેનો સાવાર્થ એ છે કે વિપુલમતિ તે ક્ષેત્રનાં કરતાં અઢી આંગળ વધારે જાણે છે અને દેખે છે. અધિકતરતા દેશની અપેક્ષાએ પણ હોઈ શકે છે, તેથી દેશની અપેક્ષાએ થયેલ એ અધિકતરતાને દૂર કરવાને માટે સૂત્ર- કારે સૂત્રમાં વિપુલતર પદ મુક્યું છે તેનું તાત્પર્ય એ છે કે વિપુલમતિ મનઃ- પર્યયજ્ઞાની ચારે દિશાઓના રૂપી પદાર્થોને ઋજુમતિ મનઃપર્યયજ્ઞાની કરતાં વિપુલતરરૂપે જાણે અને દેખે છે. તે પદાર્થોને જાણવા અને દેખવાનું ઋજુમ- તિનાં કરતાં અતિશય સ્ફુટતર હોય છે, એ વાત વિશુદ્ધતર શબ્દથી સ્પષ્ટ થાય

‘દ્વ યોઃ પ્રકૃષ્ટે તરપ્’ इति तरप्-प्रत्ययः । त एव वितिमिरतरकाः, स्वार्थे क प्रत्ययः । एवं सर्वत्र व्युत्पत्तिर्द्रष्टव्या । तत् वितिमिरतरकम् = सर्वथाभ्रमरहितमित्यर्थः जानाति, पश्यति । अथवा-‘अभ्यधिकतरकम्’ विपुलतरकम्’ इत्युभे पदे एकार्थके, तथा-‘विशुद्धतरकम्’ ‘वितिमिरतरकम्’ इत्यपि द्वे पदे एकार्थके । शिष्या हि नानादेशजा भवन्ति, यस्य देशे यत् प्रसिद्धं, तदेव तदनुग्रहार्थं प्रयुक्तमिति बोध्यम् ।

तथा-क्षेत्रतઃ સ્વલ્પઃ ક્રજુમતિઃ જઘન્યેનાઽઙ્ગુલસ્યાસંખ્યેભાગં જાનાતિ પશ્યતિ । ઉત્કર્ષેણાધસ્તલેઽસ્યા રત્નપ્રભાયાઃ પૃથિવ્યા ઉપરિતનાન્ અધસ્તનાન્ ક્ષુલ્લકપતરાન્ યાવત્ જાનાતિ પશ્યતિ ચ ।

વિપર્યયરૂપ બી હો સકતા હૈ, જૈસે એક ચન્દ્રમા મેં દ્વિચન્દ્રજ્ઞાન હોતા હૈ । એસે બ્રાન્ત સ્ફુટપ્રતિભાસ કા નિરાકરણ કરને કે લિયે સૂત્રકારને સૂત્રમેં “વિતિમિરતરક” એસા પદ રક્ષા હૈ । અથવા અભ્યધિકતરક એવં વિપુલતરક યે દોનોં શબ્દ એકાર્થવાચી બી હૈં, इन दोनों का प्रयोग सूत्रकारने नानादेश के शिष्यों को समझाने की अपेक्षा यहां रक्खा है । जिन शिष्यों के देशमें जो शब्द प्रसिद्ध होगा उससे उन्हें दूसरे शब्द का अर्थबोध हो जावेगा ।

ક્ષેત્ર કી અપેક્ષા ક્રજુમતિ મનઃપર્યયજ્ઞાની જઘન્યરૂપ સે અંગુલ કે અસંખ્યાતવે ભાગમેં સ્થિત રૂપી પદાર્થોં કો જાનતા ઓર દેખતા હૈ । તથા ઉત્કૃષ્ટરૂપ સે હસ પૃથ્વી કે નીચે રત્નપ્રભાપૃથિવી કે ઉપરિતન એવં અધસ્તન ક્ષુલ્લકપતરોંતક કો જાનતા ઓર દેખતા હૈ ।

છે. સ્ફુટ પ્રતિભાસ વિપર્યયરૂપ પણ હોઈ શકે છે, જેમ એક ચન્દ્રમામાં જે ચન્દ્રોનો ભાસ થાય છે. એવા બ્રાન્ત સ્ફુટ પ્રતિભાસનું નિવારણ કરવાને માટે સૂત્રકારે સૂત્રમાં “વિતિમિરતરક” એવું પદ રાખ્યું છે. અથવા અભ્યધિકતરક અને વિપુલતરક એ બંને શબ્દો એકાર્થવાચી પણ છે. એ બંનેનો પ્રયોગ સૂત્રકારે વિવિધ દેશના શિષ્યોને સમજાવવાની અપેક્ષાએ અહીં રાખ્યો છે. જે શિષ્યોના દેશમાં જે શબ્દ પ્રસિદ્ધ હશે તેનાથી તેના બીજા શબ્દનો અર્થ સમજાઈ જશે.

ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ ક્રજુમતિ મનઃપર્યયજ્ઞાની જઘન્યરૂપે અંગુલના અસંખ્યાતમાં ભાગમાં રહેલ રૂપી પદાર્થોને જાણે અને દેખે છે, તથા ઉત્કૃષ્ટ રૂપે આ પૃથ્વીની નીચે રત્નપ્રભા પૃથ્વીના ઉપરિતન અને અધસ્તન ક્ષુલ્લક પતરોને પણ જાણે અને દેખે છે.

નનુ કોડ્યં ક્ષુલ્લકપ્રતર ઇતિ ?, ઉચ્યતે—ઇહ લોકાકાશપ્રદેશા ઉપરિતનાધ-  
સ્તનપ્રદેશરહિતતયા વિવક્ષિતા મણ્ડલાઽઽકારતયા વ્યવસ્થિતાઃ પ્રતર ઇત્યુચ્યતે । તત્ર  
તિર્યગ્લોકસ્ય ઊર્ધ્વાધોડપેક્ષયા અષ્ટાદશયોજનશતપ્રમાણસ્ય મધ્યભાગે દ્વૌ સર્વલઘુ-  
ક્ષુલ્લકપ્રતરૌ, તયોર્મધ્યભાગે જમ્બૂદ્વીપે રત્નપ્રભાયા વહુસમે ભૂમિભાગે મેરુમધ્યેષ્ટ-  
પ્રાદેશિકો રુચકઃ । તત્ર ગોસ્તનાકારાશ્ચત્વાર ઉપરિતનાઃ પ્રદેશાશ્ચત્વારશ્ચાધસ્તનાઃ ।  
એષ એવ ચ રુચકઃ સર્વાસાં દિશાં વિદિશાં વા પ્રવર્તકઃ । એતદેવ ચ સકલતિર્યગ્-  
લોકમધ્યમ્ । તૌ ચ દ્વૌ સર્વલઘુ પ્રતરાવંગુલાઽસંખ્યેયભાગવાહલ્યૌ પુનરલોકાઽવધિ-  
ગતૌ રજ્જુપ્રમાણૌ ।

શંકા—યહ ક્ષુલ્લકપ્રતર કયા હૈ ?

ઉત્તર—લોકાકાશ કે પ્રદેશ ઉપરિતન ઓર અધસ્તન પ્રદેશોં સે  
રહિત બતલાયે ગયે હૈં । ડનકી વ્યવસ્થા મણ્ડલાકાર સે હૈં । યે લોકાકાશ  
કે પ્રદેશ હી પ્રતર હૈં । ઉર્ધ્વ એવં અધોલોક કી અપેક્ષા અઠારસૌ (૧૮૦૦)  
યોજન પ્રમાણવાલે તિર્યગ્લોક કે મધ્યભાગ મેં દો સર્વલઘુક્ષુલ્લક પ્રતર  
હૈં । ડનકે મધ્યભાગ મેં જંબૂદ્વીપ મેં રત્નપ્રભાપૃથિવી કે વહુસમભૂમિભાગ  
મેં મેરુ કે બીચ અષ્ટપ્રાદેશિક રુચક હૈં । વહાં ગોસ્તનાકાર ચાર પ્રદેશ  
ઊપર ઓર ચાર પ્રદેશ નીચે હૈં । યહી રુચક સમસ્ત દિશાઓં અથવા  
વિદિશાઓં કા પ્રવર્તક માના ગયા હૈં, ઓર યહી સમસ્ત તિર્યગ્લોક કા  
મધ્યભાગ હૈં । વે દો સર્વલઘુક્ષુલ્લકપ્રતર અંગુલ કે અસંખ્યાતવેં ભાગ  
વિસ્તારવાલે હૈં । અલોકાકાશતક ફેલે હુએ હૈં ઓર એક રાજૂ ડનકા  
પ્રમાણ હૈં ।

શંકા—આ ક્ષુલ્લક પ્રતર શું છે ?

ઉત્તર—લોકાકાશના પ્રદેશ ઉપરિતન અને અધસ્તન પ્રદેશો વિનાના  
ખતાવવામાં આવ્યા છે. તેમની વ્યવસ્થા મંડળાકાર છે. એ લોકાકાશના પ્રદેશ જ  
પ્રતર છે. ઉર્ધ્વ અને અધોલોકની અપેક્ષાએ અઠારસો (૧૮૦૦) યોજન પ્રમાણ-  
વાળા તિર્યગ્લોકના મધ્ય ભાગમાં બે સૌથી નાના ક્ષુલ્લક પ્રતર છે. તેમના  
મધ્યભાગમાં જંબૂદ્વીપમાં રત્નપ્રભા પૃથ્વીના બહુસમભૂમિ ભાગમાં મેરુની વચ્ચે  
અષ્ટપ્રાદેશિક રુચક છે. ત્યાં ગાયના આંચળના આકારના ચાર પ્રદેશ ઉપર  
અને ચાર પ્રદેશ નીચે છે. એજ રુચક સઘળી દિશાઓ અથવા વિદિશાઓનો  
પ્રવર્તક મનાયો છે, અને એજ સમસ્ત તિર્યગ્લોકનો મધ્યભાગ છે. તે બે  
સૌથી નાના ક્ષુલ્લક પ્રતર અંગુલનાં અસંખ્યાતમાં ભાગના વિસ્તારવાળાં છે, અલો-  
કાકાશ સુધી ફેલાયેલા છે અને તેમનું પ્રમાણ એક રાજૂ છે.

તત એતયોરુપરિ અન્યેઽન્યે પ્રતરાઃ તિર્યગ્ અંગુલાસંખ્યેયમાગવૃદ્ધ્યા વર્ધમાના-સ્તાવદ્ દ્રષ્ટવ્યાઃ, યાવદ્ધર્વલોકમધ્યમ્ । તત્ર પશ્ચરજ્જુપ્રમાણઃ પ્રતરઃ । તત ઉપરિ અન્યેઽન્યે પ્રતરાસ્તિર્યગ્ અંગુલાસંખ્યેયમાગહાન્યા હીયમાનાસ્તાવદ્ દ્રષ્ટવ્યાઃ, યાવ-લ્લોકાન્તે એકરજ્જુપ્રમાણઃ પ્રતરઃ । ઇહોર્ધ્વલોકમધ્યવર્તિનં સર્વોત્કૃષ્ટં પશ્ચરજ્જુપ્રમાણં પ્રતરમવધીકૃત્ય અન્યે ઉપરિતના અધસ્તનાશ્ચ ક્રમેણ હીયમાના હીયમાનાઃ સર્વેઽપિ પ્રતરાઃ ક્ષુલ્લકપ્રતરા इति व्यवहियन्ते, યાવલ્લોકાન્તે તિર્યગ્લોકે ચ રજ્જુપ્રમાણઃ પ્રતર इति ।

તથા—તિર્યગ્લોકમધ્યવર્તિસર્વલઘુક્ષુલ્લકપ્રતરસ્ય અધસ્તિર્યગ્અંગુલાસંખ્યેયમાગ-વૃદ્ધ્યા વર્ધમાનાઃ પ્રતરાસ્તાવદ્દ્રક્તવ્યાઃ, યાવદ્ધોલોકાન્તે સર્વોત્કૃષ્ટઃ સપ્તરજ્જુ-પ્રમાણઃ પ્રતરઃ । તં ચ સપ્તરજ્જુપ્રમાણં પ્રતરમપેક્ષ્યાન્યે ઉપરિતનાઃ સર્વેઽપિ ક્રમેણ હીયમાનાઃ ક્ષુલ્લકપ્રતરા અભિધીયન્તે, યાવત્ તિર્યગ્લોકમધ્યવર્તી સર્વલઘુઃ ક્ષુલ્લકઃ પ્રતરઃ । એષા ક્ષુલ્લકપ્રતરપ્રરૂપણા ।

इसके बाद इन दोनों सर्वलघु क्षुल्लक प्रतरों के ऊपर और और प्रतर तिर्यक् अंगुल के असंख्यातवें भाग की वृद्धि से तबतक बढ़ते हुए चले जाते हैं कि जबतक उर्ध्वलोक का मध्यभाग नहीं आ जाता है । यहाँ प्रतर का प्रमाण पांच राजू का होता है । इस प्रतर के ऊपर भी और और प्रतर तिर्यक् अंगुल के असंख्यातवें भाग की हानि से घटते हुए चले जाते हैं और इस तरह ये तबतक घटते जाते हैं कि जबतक लोक के अन्तमें एक राजू प्रमाण वाला प्रतर नहीं आ जाता है । इस तरह उर्ध्वलोक के मध्यवर्ती सर्वोत्कृष्ट पांच राजू प्रमाण वाले प्रतर से लगाकर अन्य उपरितन और अधस्तन प्रतर क्रम २ से घटते घटते बतलाये गये हैं । ये सब क्षुल्लक प्रतर हैं । ये क्षुल्लक प्रतर लोक के अन्तमें और तिर्यग्लोक में एक २ राजू प्रमाण वाले हैं ।

ત્યાર બાદ તે બન્ને સર્વલઘુ ક્ષુલ્લક પ્રતરોની ઉપર જુદા જુદા પ્રતર તિર્યક્ અંગુલના અસંખ્યાતમાં લાગતી વૃદ્ધિથી ત્યાં સુધી વધતા બંધ છે કે જ્યાં સુધી ઉર્ધ્વલોકનો મધ્ય ભાગ આવી જતો નથી. અહીં પ્રતરનું પ્રમાણ પાંચ રાજૂનું થઈ બંધ છે. આ પ્રતરની ઉપર પણ જુદા જુદા પ્રતર તિર્યક્ અંગુલના અસંખ્યાતમાં લાગતી હાનિથી ઘટતા બંધ છે. જ્યાં સુધી લોકના અંતે એક રાજૂ પ્રમાણવાળું પ્રતર આવતું નથી. આ રીતે ઉર્ધ્વલોકના મધ્યવર્તી સર્વોત્કૃષ્ટ પાંચ રાજૂ પ્રમાણવાળાં પ્રતરથી માંડીને બીજા ઉપરિતન અને અધસ્તન પ્રતર ક્રમે ક્રમે ઘટતાં જતાં બતાવ્યાં છે. એ બધાં ક્ષુલ્લક પ્રતર છે એ ક્ષુલ્લક પ્રતર લોકના અંતમાં અને તિર્યગ્લોકમાં એક એક રાજૂ પ્રમાણવાળાં છે.



તત્ર—તિર્યંગલોકમધ્યવર્તિનઃ સર્વલઘુરજ્જુપ્રમાણાત્ ક્ષુલ્લકપતરાદારમ્ય યા-  
વદધો નવયોજનશતાનિ તાવદસ્યાં રત્નપ્રમાયાં પૃથિવ્યાં યે પ્રતરાઃ, તે ઉપરિતન-  
ક્ષુલ્લકપતરા ઉચ્યન્તે । તેષામપિ ચાધસ્તાદ્ યે પ્રતરાઃ યાવદધોલૌકિકગ્રામેષુ સર્વા-  
ન્તિમાઃ પ્રતરાઃ, તેઽધસ્તનક્ષુલ્લકપતરા ઉચ્યન્તે ।

તત્ર—મનઃપર્યયજ્ઞાની ઉપરિતનાત્ ક્ષુલ્લકપતરાન્ નવયોજનશતાનિ યાવત્,  
અધસ્તાત્ સહસ્રયોજનાનિ યાવત્ અધસ્તનક્ષુલ્લકપતરાન્ જાનાતિ, પશ્યતિ ચ ।

તથા—તિર્યંગલોક કે મધ્યવર્તી જો સર્વલઘુ ક્ષુલ્લક પ્રતર હૈં ઉસકે  
નીચે ઔર ૨ પ્રત્તર તિર્યંગ અંગુલ કે અસંખ્યાતવે ભાગ કી વૃદ્ધિ સે તબ-  
તક બઢતે હુએ ચલે ગયે હૈં કિ જબતક અધોલોક કે અન્તમેં સર્વોત્કૃષ્ટ  
સાતરાજૂ પ્રમાણવાલા પ્રતર નહીં આ જાતા હૈં । ઇસ સર્વોત્કૃષ્ટ સાતરાજૂ  
પ્રમાણવાલે પ્રતર સે લેકર દૂસરે જો ડપર કે ક્રમ સે હીયમાન પ્રતર હૈં  
વે સબ ક્ષુલ્લક પ્રતર હૈં । ઔર ઇન સબ ક્ષુલ્લક પ્રતરોં કી અપેક્ષા તિર્યંગલોક  
કે મધ્યમેં રહા હુઆ જો પ્રતર હૈં વહ સર્વલઘુ ક્ષુલ્લક પ્રતર હૈં । ઇસ  
પ્રકાર યહ ક્ષુલ્લક પ્રતર કી પ્રરૂપણા હૈં ।

તિર્યંગલોક કે મધ્યમેં રહે હુએ ઇક રાજૂ પ્રમાણવાલે સર્વલઘુ ક્ષુલ્લક  
પ્રતર સે લેકર નૌ સૌ યોજન નીચે તક ઇસ રત્નપ્રમાણપૃથિવી મેં જિતને  
પ્રતર હૈં વે ઉપરિતન ક્ષુલ્લક પ્રતર હૈં । ઇનકે ભી નીચે જહાંતક અધો-  
લૌકિક ગ્રામોમેં સર્વાન્તિમ પ્રતર હૈં તબતક કે જિતને પ્રતર હૈં વે સબ

તથા—તિર્યંગલોકના મધ્યવર્તી જે સર્વલઘુ ક્ષુલ્લક પ્રતર છે તેની નીચે  
જૂઠાં જૂઠાં પ્રતર તિર્યંગ અંગુલના અસંખ્યાતમાં ભાગની વૃદ્ધિથી ત્યાં સુધી  
વધતાં જાય છે કે જ્યાં સુધી અધોલોકને અંતે સર્વોત્કૃષ્ટ સાતરાજૂ પ્રમાણવાળાં  
પ્રતર આવતાં નથી. આ સર્વોત્કૃષ્ટ સાતરાજૂ પ્રમાણવાળા પ્રતરથી માંડીને બીજાં  
જે ઉપરના ક્રમથી હીયમાન પ્રતર છે તે બધાં ક્ષુલ્લક પ્રતરો છે, અને તે સઘળા  
ક્ષુલ્લક પ્રતરો કરતાં તિર્યંગલોકની મધ્યમાં રહેલ જે પ્રતર છે તે સર્વલઘુ  
ક્ષુલ્લક પ્રતર છે. આ પ્રમાણે આ ક્ષુલ્લક પ્રતરની પ્રરૂપણા છે.

તિર્યંગલોકની મધ્યમાં રહેલ એક રાજૂ પ્રમાણવાળાં સર્વલઘુ પ્રતરથી લઈને  
નવસો યોજન નીચે સુધી આ રત્નપ્રમાણ પૃથ્વીમાં જેટલાં પ્રતર છે તે ઉપરિતન  
ક્ષુલ્લક પ્રતરો છે. તેમની પણ નીચે જ્યાં સુધી અધોલૌકિક ગ્રામોમાં સર્વાન્તિમ  
પ્રતર છે. ત્યાં સુધીનાં જેટલાં પ્રતરો છે તે બધાં અધસ્તન ક્ષુલ્લક પ્રતરો છે.



વક્તૃત્વ—“ઈહાધોલૌકિકગ્રામાન્ તિર્યગ્લોકવિવર્તિનઃ ।

મનોગતાંસ્ત્વસૌ ભાવાન્, વેત્તિ તદ્વર્તિનામપિ” ॥૧॥

અસૌ=મનઃ પર્યયજ્ઞાની ભાવાન્=પર્યાયાન્ વેત્તિ=જાનાતિ । શેષં સુગમમ્ ।

‘ઉદ્ઘં જાવ’ ઇત્યાદિ । ઊર્ધ્વં યાવત્ જ્યોતિશ્ચક્રસ્ય ઉપરિતનસ્તલઃ તિર્યગ્ યાવદન્તોમનુષ્ય ક્ષેત્રે=મનુષ્યલોકાન્ત ઇત્યર્થઃ । અસ્ય વ્યાખ્યામાહ—

અર્ધવૃત્તીયેષુ દ્વીપસમુદ્રેષુ, પશ્ચદશસુ કર્મભૂમિષુ, ત્રિંશતિ વા અકર્મભૂમિષુ, પદ્મ-  
પશ્ચાશત્સંખ્યેષુ ચાન્તરદ્વીપેષુ સંજ્ઞિનાં, તે ચાપાન્તરાલગતાવપિ તદાયુષ્કસંવેદના-  
દભિધીયન્તે એવ, ન ચ તૈરિહાધિકારઃ, અતો વિશેષણમાહ—‘પંચિદિયાણં’  
ઇત્યાદિ, પશ્ચેન્દ્રિયાણામિતિ । પશ્ચેન્દ્રિયાશ્રોપપાતક્ષેત્રમાગતા ઇન્દ્રિયપર્યાપ્તિપરિ-  
સમાપ્તૌ મનઃપર્યાપ્ત્યા અપર્યાપ્તા અપિ ભવન્તિ । ન ચ તૈઃ પ્રયોજનમિતિ વિશેષ-  
ણાન્તરમાહ—પર્યાપ્તાનામિતિ ।

અધસ્તન ક્ષુલ્લક પ્રતર હૈ । મનઃપર્યયજ્ઞાની ઉપરિતન ક્ષુલ્લક પ્રતરોં કો  
નો સૌ યોજન તક, નીચે અધસ્તન ક્ષુલ્લક પ્રતરોં કો એક હજાર યોજન  
તક જાનતા ઓર દેખતા હૈ । કહા ભી હૈ—

“ઈહાધોલૌકિકગ્રામાન્, તિર્યગ્લોકવિવર્તિનઃ ।

મનોગતાંસ્ત્વસૌ ભાવાન્, વેત્તિ તદ્વર્તિનામપિ” ॥ ૧ ॥

હસ પ્રકાર પ્રકટ કરકે કિ ઋજુમતિ મનઃપર્યયજ્ઞાની જઘન્ય સે  
અઙ્ગુલ કે અસંખ્યાતવેં ભાગ કો, તથા ઉત્કૃષ્ટ સે નીચે હસ રત્નપ્રભા-  
પૃથિવી કે ઉપરિતન ઓર અધસ્તન ક્ષુલ્લક પ્રતરોં તક કો જાનતા હૈ  
ઓર દેખતા હૈ । અબ સૂત્રકાર ઊર્ધ્વં મેં ઋજુમતિ મનઃપર્યયજ્ઞાનો કહાંતક  
જાનતા ઓર દેખતા હૈ વહ બતલાતે હૈ—‘ઉદ્ઘં જાવ’ ઇત્યાદિ ।

મનઃપર્યયજ્ઞાની ઉપરિતન ક્ષુલ્લક પ્રતરોને નવસો યોજન સુધી, નીચે અધસ્તન  
ક્ષુલ્લક પ્રતરોને એક હજાર યોજન સુધી જાણે છે અને દેખે છે—કહ્યું પણ છે—

“ઈહાધોલૌકિકગ્રામાન્, તિર્યગ્લોકવિવર્તિનઃ ।

મનોગતાંસ્ત્વસૌ ભાવાન્, વેત્તિ તદ્વર્તિનામપિ” ॥૧॥

આ પ્રમાણે “ઋજુમતિ મનઃપર્યયજ્ઞાની જઘન્યથી અંગુલના અસંખ્યા-  
તમાં ભાગને તથા ઉત્કૃષ્ટથી નીચે આ રત્નપ્રભા પૃથ્વીના ઉપરિતન અને અધસ્તન  
ક્ષુલ્લક પ્રતરોને પણ જાણે છે અને દેખે છે તે પ્રગટ કરીને હવે સૂત્રકાર  
ઋજુમતિ મનઃપર્યયજ્ઞાની ઉર્ધ્વમાં કયાં સુધી જાણે છે અને દેખે છે તે બતાવે  
છે—“ઉદ્ઘં જાવ” ઇત્યાદિ.

યદ્વા—સંજ્ઞિનાં પંચેન્દ્રિયાણાં પર્યાપ્તકાનામિતિ સ્વરૂપકથનમ્ । તેષાં મનો-  
ગતાન્ ભાવાન્ ઋજુમતિર્જાનાતિ પશ્યતિ ।

વિપુલમતિસ્તુ તદેવ, ઇહ તચ્છબ્દેન મનોલબ્ધિસમન્વિતજીવાધારક્ષેત્રં પરામૃ-  
શ્યતે, ઇહ ક્ષેત્રાધિકારસ્યૈવ પ્રાધાન્યાત્ । અર્ધતૃતીયૈરંગુલૈઃ—અર્ધ તૃતીયં યેષુ તાનિ  
અર્ધતૃતીયાનિ અંગુલાનિ, તાનિ ચ જ્ઞાનાધિકારાદુચ્છ્રયાંગુલાનિ દ્રષ્ટવ્યાનિ । તૈર્ધ-  
તૃતીયૈરંગુલૈરભ્યધિકતરં જાનાતિ પશ્યતીત્યન્વયઃ । તચ્ચૈકદેશમપિ ભવતિ, અતઃ  
આહ—વિપુલતરમિતિ—વિસ્તીર્ણતરમિત્યર્થઃ ।

ઋજુમતિ મનઃપર્યયજ્ઞાની ઉર્ધ્વમેં જહાંતક ડ્યોતિશ્ચક્ર કા ઉપરિતન  
તલ હૈ વહાં તક કે—અર્થાત્ વહાંતક કે સંજ્ઞી પંચેન્દ્રિય પર્યાપ્ત જીવોં કે  
મનોભાવોં કો જાનતા ઓર દેખતા હૈ । તથા તિર્યગ્રૂપ સે ઢાઈ દ્વીપતક  
કે સંજ્ઞેન્દ્રિય પર્યાપ્ત કે પ્રાણિયોં કે મનોભાવોં કો જાનતા ઓર દેખતા  
હૈ । ઢાઈદ્વીપ મેં પન્દ્રહ કર્મભૂમિયાં, ત્રીસ અકર્મભૂમિયાં તથા છપ્પન  
અન્તરદ્વીપ હૈ । જંબૂદ્વીપ, ધાતકીખંડ તથા પુષ્કરાર્ધ, યે ઢાઈદ્વીપ હૈ ।  
इनमें ये पूर्वोक्त कर्मभूमि एवं अकर्मभूमि तथा अन्तर द्वीप हॆ । अन्तर-  
द्वीप लवणसमुद्र मॆ आये हुए हॆ । यही बात सूत्रकारने “अड्ढाड्ज्जेसु  
दीवसमुद्देसु” इत्यादि सूत्रपदों द्वारा प्रकट की है । विपुलमति मनःपर्य-  
यज्ञानी पर्याप्तक संज्ञी पंचेन्द्रिय जीवों के आधारभूत क्षेत्र को—जिसको  
ऋजुमति देखता है उसी क्षेत्र को अढाई अंगुल प्रमाण अधिक जानता  
और देखता है । एवं विपुलतर विशुद्धतर और वितिमिरतर अत्यन्त  
स्पष्ट रूपमें जानता और देखता है । यहां अंगुल से ज्ञान का प्रकरण  
होने के कारण उच्छ्रयाङ्गुल समझना चाहिये ।

ઋજુમતિ મનઃપર્યયજ્ઞાની ઉર્ધ્વમાં જ્યાં સુધી જ્યોતિશ્ચક્રનું ઉપરિતનતલ  
છે ત્યાં સુધીના—એટલે કે ત્યાં સુધીના સંજ્ઞી પંચેન્દ્રિય પર્યાપ્ત જીવોના મનો-  
ભાવોને જાણે છે અને દેખે છે. તથા તિર્યગ્રૂપથી અઢીદ્વીપ સુધીના સંજ્ઞી પંચેન્દ્રિય  
પર્યાપ્ત પ્રાણીઓના મનોભાવોને જાણે છે અને દેખે છે. અઢીદ્વીપમાં પંદર  
કર્મભૂમિયો, ત્રીસ અકર્મભૂમિયો તથા છપ્પન અન્તરદ્વીપ છે. જંબૂદ્વીપ, ધાતકી  
ખંડ તથા પુષ્કરાર્ધ, એ અઢીદ્વીપ છે, તેમાં એ પૂર્વોક્ત કર્મભૂમિ, અકર્મભૂમિ  
અને અન્તર્દ્વીપ છે. અન્તર દ્વીપ લવણ સમુદ્રમાં આવેલાં છે. એજ વાત સૂત્રકારે  
“અડ્ઢાડ્જ્જેસુ દીવસમુદ્દેસુ” ઇત્યાદિ સૂત્રપદોદ્વારા પ્રગટ કરી છે. વિપુલમતિ  
મનઃપર્યયજ્ઞાની પર્યાપ્તક સંજ્ઞી પંચેન્દ્રિય જીવોના આધારભૂત ક્ષેત્રને—જેને ઋજુ-  
મતિ દેખે છે એજ ક્ષેત્રને અઢી અંગુલ પ્રમાણમાં વધારે જાણે અને દેખે છે.  
અને વિપુલતર, વિશુદ્ધતર તથા વિતિમિરતર—અત્યંત સ્પષ્ટ રૂપે જાણે અને દેખે  
છે. અઢી અંગુલથી જ્ઞાનનું પ્રકરણ હોવાથી ઉચ્છ્રયાંગુલ સમજવું જોઈ એ.

અથવા—આયામવિષ્કંભાભ્યામભ્યધિકતરં, વાહલ્યમાશ્રિત્ય વિપુલતરમ્—અધિકતરમ્ । અતિશુદ્ધતરં, વિતિમિરતરમ્, ઇતિ પ્રાગ્વ્યાख्याતમ્, જાનાતિ, પશ્યતિ ‘તાસ્સ્થ્યાત્ તદ્વ્યપદેશઃ’ ઇતિ । તાવત્ક્ષેત્રગતાનિ મનોદ્રવ્યાણિ જાનાતિ પશ્યતીત્યર્થઃ । ‘કાલતઃ સ્વલુ’ ઇત્યાદિ સુગમમ્ ।

અથવા—આયામ ઓર વિષ્કંભ કી અપેક્ષા ક્ષેત્ર મેં અધિકતરતા એવં વાહલ્ય કી અપેક્ષા વિપુલતરતા જાનની ચાહિયે । “ક્ષેત્ર કો જાનતા હૈ” ઇસકા તાત્પર્ય યહ હૈ કિ—વિપુલમતિ ઇતને પ્રમાણ ક્ષેત્રમેં રહે હુએ સંજી પંચેન્દ્રિય પર્યાસક જીવોં કે મનોભાવોં કો અધિકતર આદિ રૂપ સે જાનતા ઓર દેખતા હૈ ।

‘કાલઓ ણં’ ઇત્યાદિ । કાલ કી અપેક્ષા ઋજુમતિ જઘન્ય સે પલ્યોપમ કે અસંખ્યાતવેં ભાગરૂપ, તથા ઉત્કર્ષ સે ભી પલ્યોપમ કે અસંખ્યાતવેં ભાગરૂપ અતીત અનાગત કાલ કો જાનતા ઓર દેખતા હૈ । વિપુલમતિ ઉસી કાલ કો અધિકતર, વિપુલતર, વિશુદ્ધતર એવં વિતિમિરતરરૂપ સે જાનતા ઓર દેખતા હૈ ।

‘ભાવઓ ણં’ ઇત્યાદિ ।

ભાવ સે ઋજુમતિ અનન્ત ભાવોં કો જાનતા ઓર દેખતા હૈ, તથા સઘ ભાવોં કે અનન્ત ભાગ કો જાનતા ઓર દેખતા હૈ । ઓર વિપુલમતિ ઉન્હોં અનન્ત ભાવોં કો તથા સઘ ભાવોં કે અનન્ત ભાગ કો અધિકતર, વિપુલતર, વિશુદ્ધતર ઓર વિતિમિરતરરૂપ સે જાનતા ઓર દેખતા હૈ ॥

અથવા—આયામ અને વિષ્કંભની અપેક્ષાએ ક્ષેત્રમાં અધિકતરતા અને પુષ્કળતાની અપેક્ષાએ વિપુલતરતા જાણવી જોઈએ “ક્ષેત્રને જાણે છે” તેનું તાત્પર્ય એ છે કે વિપુલમતિ એટલા પ્રમાણમાં ક્ષેત્રમાં રહેલ સંજી પંચેન્દ્રિય પર્યાસક જીવોના મનોભાવોને અધિકતર આદિ રૂપે જાણે અને દેખે છે.

“કાલઓ” ઇત્યાદિ. કાળની અપેક્ષાએ ઋજુમતિ જઘન્યથી પલ્યોપમના અસંખ્યાતમાં ભાગરૂપ, તથા ઉત્કર્ષથી પણ પલ્યોપમના અસંખ્યાતમાં ભાગરૂપ ભૂત અને ભવિષ્ય કાળને જાણે અને દેખે છે. વિપુલમતિ એજ કાળને અધિકતર, વિપુલતર, વિશુદ્ધતર, અને વિતિમિરતર રૂપે જાણે અને દેખે છે.

“ભાવઓ” ઇત્યાદિ.

ભાવથી ઋજુમતિ અનંત ભાવોને જાણે અને દેખે છે. તથા બધા ભાવોના અંતભાગને જાણે અને દેખે છે અને વિપુલમતિ એજ અનંત ભાવોને તથા બધા ભાવોના અન્તભાગને અધિકતર વિપુલતર, વિશુદ્ધતર અને વિતિમિરતર રૂપે જાણે અને દેખે છે.

અથોપસંહરન્ ગાથામાહ—

મૂલમ્—મણપજ્જવનાણં પુન, જણમણપરિચિંતિઅત્થપાગડળં ।

માણુસલ્લિત્તનિબલ્લં, ગુણપચ્ચઇયં ચરિત્તવઓ ॥ ૧ ॥

સે તં મણપજ્જવનાણં ॥ સૂ૦ ૧૮ ॥

છાયા—મનઃ પર્યયજ્ઞાનંપુન, —ર્જનમનઃપરિચિન્તિતાર્થપ્રકટનમ્ ।

માનુષક્ષેત્રનિબલ્લં, ગુણપ્રત્યયિકં ચારિત્રવતઃ ॥ ૧ ॥

તદેતન્મનઃપર્યયજ્ઞાનમ્ ॥ સૂ૦ ૧૮ ॥

ટીકા—‘મણપજ્જવનાણં’ ઇત્યાદિ । મનઃપર્યયજ્ઞાનં પુનઃ—ઈહ પુનઃ—શબ્દો-  
ઽવધિજ્ઞાનાદ્ ભેદં સૂચયતિ । इदं मनःपर्ययज्ञानमवधिज्ञानतो रूपिद्रव्यविषयकत्व-  
क्षાયોपशમિકत्व—પ્રત્યક્ષત્વાદિભિઃ સામ્યેઽપિ સ્વામ્યાદિભેદાદ્ ભિન્નમિતિ ભાવઃ ।  
તદ્યથા—અવધિજ્ઞાનમવિરતસમ્યગ્દષ્ટેરપિ ભવતિ, મનઃપર્યયજ્ઞાનં તુ સંયતસ્યા-  
પ્રમત્તસ્ય ઋદ્ધિપ્રાપ્તસ્યૈવ ભવતીતિ ભેદઃ ૧ । અવધિજ્ઞાનં દ્રવ્યતોઽશ્વેષરૂપિ

અવ સૂત્રકાર ઉપસંહાર કરતે હુણ ગાથા કહતે હૈ—‘મણપજ્જવનાણં’  
ઈત્યાદિ । ગાથા મેં જો “પુનઃ” શબ્દ આયા હૈ વહ ઇસ મનઃપર્યયજ્ઞાન  
કી અવધિજ્ઞાન સે ભિન્નતા પ્રદર્શિત કરતા હૈ । ઇસકા તાત્પર્ય યહ હૈ  
કિ—યદ્યપિ અવધિજ્ઞાન ઔર મનઃપર્યયજ્ઞાન મેં રૂપી દ્રવ્ય કો વિષય કરને  
કી, ક્ષાયોપશમિક હોને કી તથા પ્રત્યક્ષત્વ આદિ કી અપેક્ષા સમાનતા  
હૈ તો ખી ઇન દોનોં મેં સ્વામી આદિ કે ભેદ સે ભિન્નતા હૈ । વહ ઇસ  
પ્રકાર સે—અવધિજ્ઞાન કા સ્વામી અવિરતસમ્યગ્દષ્ટિ ખી હોતા હૈ તથા  
કિ મનઃપર્યયજ્ઞાન કા સ્વામી અપ્રમત્ત સંયત સમ્યગ્દષ્ટિ હી હોતા હૈ ।  
ઉસમેં ખી જિસકો કોઈ ન—કોઈ—ઋદ્ધિ—લબ્ધિ પ્રાપ્ત હો ચુકી હો વહી  
હોતા હૈ । ૧ । દ્રવ્ય કી અપેક્ષા—અવધિજ્ઞાન સમસ્ત રૂપી દ્રવ્યોં કો વિષય

હવે સૂત્રકાર ઉપસંહાર કરતા ગાથા કહે છે—“મણપજ્જવનાણં” ઇત્યાદિ.  
ગાથામાં જે “પુનઃ” શબ્દ આવ્યો છે તે આ મનઃપર્યય જ્ઞાનની અવધિજ્ઞાનથી  
ભિન્નતા દર્શાવે છે. તેનું તાત્પર્ય એ છે કે—જે કે અવધિજ્ઞાન અને મનઃપર્યય-  
જ્ઞાનમાં રૂપી દ્રવ્યને વિષય કરવાની, ક્ષાયોપશમિક હોવાની તથા પ્રત્યક્ષત્વ  
આદિની અપેક્ષાએ સમાનતા છે તો પણ એ બંનેમાં સ્વામી આદિના તફાવતને  
કારણે ભિન્નતા છે. તે આ પ્રમાણે છે—(૧) અવધિજ્ઞાનનો સ્વામી અવિરત સમ્યગ્દષ્ટિ  
પણ હોય છે, ત્યારે મનઃપર્યય જ્ઞાનનો સ્વામી અપ્રમત્ત સંયત સમ્યગ્દષ્ટિ જ હોય  
છે તેમાં પણ જેને કોઈને કોઈ ઋદ્ધિ—લબ્ધિ પ્રાપ્ત થઈ ચૂકી હોય એજ હોય  
છે. (૨) દ્રવ્યની અપેક્ષાએ અવધિજ્ઞાન સમસ્ત રૂપી દ્રવ્યોને વિષય કરે છે,

દ્રવ્યવિષયમ્, મનઃપર્યયજ્ઞાનં તુ દ્રવ્યતઃ સંજ્ઞિમનોદ્રવ્યવિષયકમિતિ ભેદઃ ૨ ।  
અવધિજ્ઞાનં ક્ષેત્રતઃ-લોકવિષયં, કતિપયલોકપ્રમાણક્ષેત્રાપેક્ષયા સામર્થ્યવશાદ્ અલો-  
કવિષયં ચ, અલોકે યદિ રૂપિદ્રવ્યં સ્યાત્ તદા તદપિ દ્રષ્ટું શક્નોતિ, મનઃ-  
પર્યયજ્ઞાનં તુ ક્ષેત્રતઃ તિર્યગ્લોકાપેક્ષયા મનુષ્યક્ષેત્ર વિષયકમ્ ૩ । અવધિજ્ઞાનં  
કાલતોઽતીતાનાગતાઽસંખ્યેયોત્સર્પિણ્યવસર્પિણીવિષયકમ્, મનઃપર્યયજ્ઞાનં તુ  
કાલતોઽતીતાનાગતપલ્યોપમાઽસંખ્યેયભાગવિષયકમ્ ૪ । અવધિજ્ઞાનં ભાવતોઽશો-  
ષેષુ રૂપિદ્રવ્યેષુ પ્રતિદ્રવ્યમસંખ્યાતપર્યાયવિષયમ્, મનઃપર્યયજ્ઞાનં તુ  
ભાવતો-મનો દ્રવ્યગતાનન્તપર્યાયવિષયમ્ ૫ । અવધિજ્ઞાનં-ભવપ્રત્યયં ગુણપ્રત્યયં ચ

કરતા હૈ તબ કિ મનઃપર્યયજ્ઞાન સિર્ફ ઉસકે અનંતવેં ભાગ કો હી વિષય  
કરતા હૈ, અર્થાત્ માત્ર મનોદ્રવ્ય કો હી જાનતા હૈ ।૨। ક્ષેત્ર કી અપેક્ષા-  
અવિધિજ્ઞાન કા વિષય અંગુલ કે અસંખ્યાતવેં ભાગ સે લેકર સમ્પૂર્ણ  
લોક હૈ । તથા કતિપય લોકપ્રમાણ ક્ષેત્ર કી અપેક્ષા સે સામર્થ્યવશ  
અલોક કો ભી જાન સકતા હૈ, યદિ અલોક મેં રૂપી દ્રવ્ય હો તો વહ  
ઉસકો ભી ગ્રહણ કરને કી શક્તિ રખતા હૈ । મનઃપર્યયજ્ઞાન કા વિષય  
ક્ષેત્ર તિર્યગ્લોક કી અપેક્ષા ઢાઙ્ઘ્રીપ પર્યંત હી હૈ ।૩। કાલ કી અપેક્ષા  
અવધિજ્ઞાન અતીત અનાગત અસંખ્યાત ઉત્સર્પિણી અવસર્પિણી કાલ કો  
જાનતા હૈ । મનઃપર્યયજ્ઞાન કાલ કી અપેક્ષા અતીત અનાગત પલ્યોપમા  
કે અસંખ્યાતવેં ભાગ કો વિષય કરતા હૈ ।૪। ભાવ કી અપેક્ષા અવધિ-  
જ્ઞાન સમસ્ત રૂપી દ્રવ્યોં મેં સે પ્રત્યેક રૂપી દ્રવ્યોં કી અસંખ્યાત પર્યાયોં  
કો વિષય કરતા હૈ, તથા મનઃપર્યયજ્ઞાન મનોદ્રવ્ય કી અનંતપર્યાયોં કો  
વિષય કરતા હૈ ।૫। અવધિજ્ઞાન ભવપ્રત્યય ઓર ગુણપ્રત્યય દોનોં રૂપ

ત્યારે મનઃપર્યયજ્ઞાન ક્રિયા તેના અનંતમાં લાગને જ વિષય કરે છે, એટલે કે  
માત્ર મનોદ્રવ્યને જ જાણે છે. (૩) ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ અવધિજ્ઞાનનો વિષય  
અંગુલના અસંખ્યાતમાં લાગથી લઈને સંપૂર્ણ લોક છે. તથા કેટલાક લોકપ્રમાણ  
ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ સામર્થ્યવશ અલોકને પણ જાણી શકે છે. જે અલોકમાં રૂપી  
દ્રવ્ય હોય તો તે તેને પણ ગ્રહણ કરવાની શક્તિ ધરાવે છે. મનઃપર્યય જ્ઞાનનું  
વિષયક્ષેત્ર તિર્યગ્લોકની અપેક્ષાએ અઢી દ્વીપ સુધી જ છે. (૪) કાળની અપેક્ષાએ  
અવધિજ્ઞાન ભૂત, ભવિષ્ય અસંખ્યાત ઉત્સર્પિણી અવસર્પિણી કાળને જાણે છે.  
મનઃપર્યય જ્ઞાન કાળની અપેક્ષાએ ભૂત, ભવિષ્ય પલ્યોપમાના અસંખ્યાતમાં  
લાગને વિષય કરે છે. (૫) ભાવની અપેક્ષાએ સમસ્ત રૂપી દ્રવ્યોમાંથી પ્રત્યેક રૂપી  
દ્રવ્યની અસંખ્યાત પર્યાયોને વિષય કરે છે, તથા મનઃપર્યયજ્ઞાન મનોદ્રવ્યની  
અનંત પર્યાયોને વિષય કરે છે. (૬) અવધિજ્ઞાન ભવપ્રત્યય અને ગુણપ્રત્યય એ

भवति, मनःपर्ययज्ञानं तु गुणप्रत्ययमेवेति भेदः ६ । तस्मादवधिज्ञानान्मनः-  
पर्ययज्ञानं भिन्नम् । एतदेव संक्षेपेण सूत्रकारः प्राह—‘जणमण०’ इत्यादि । जनमनः-  
परिचिन्तितार्थप्रकटनं=जनानां मनांसि=जनमनांसि, तैः परिचिन्तितश्चासावर्थश्च  
जनमनःपरिचिन्तितार्थस्तं प्रकटयतिप्रकाशयतीति तथा भवति । तथा—मनुष्य-  
क्षेत्रनिवद्धं भवति, न तु तद्वहिर्यवस्थितप्राणिमनोद्रव्यविषयकमित्यर्थः । तथा—  
चारित्रवतः=अर्थात्—अप्रमत्तसंयतस्य आमशौषध्यादिक्लृप्तिप्राप्तस्य च मनः-  
पर्ययज्ञानं गुणप्रत्ययिकं भवति । तत्र गुणाःक्षान्त्यादयः, प्रत्ययःकारणं यस्य तद्  
गुणप्रत्ययं, तदेव गुणप्रत्ययिकम् । तदेतन्मनःपर्ययज्ञानं वर्णितम् ॥ सू० १८ ॥

मूलम्—से किं तं केवलनाणं?, केवलनाणं दुविहं पणत्तं ।  
તં જહા—भवत्थकेवलनाणं च, सिद्धकेवलनाणं च ॥

होता है । मनःपर्ययज्ञान केवल गुणप्रत्यय ही होता है । ६। इन्हीं निमित्तों  
से अवधिज्ञान और मनःपर्ययज्ञान में भिन्नता है । इसी को सूत्रकार इस  
गाथा में संक्षेपरूप से कहते हैं—“जणमण०” इत्यादि । मनुष्यों के मनद्वारा  
चिन्तित अर्थ को प्रकाशित करनेवाला, तथा मनुष्य क्षेत्र में ही रहे हुए  
संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्तक जीवों के मनोद्रव्यों को विषय करनेवाला—इसके  
बाहिर के प्राणियों के मनोद्रव्यों को विषय नहीं करनेवाला, ऐसा यह  
मनःपर्ययज्ञान आमशौषध्यादिलब्धिप्राप्त अप्रमत्तसंयमी सम्यग्दृष्टि  
जीव के होता है, और वह क्षान्त्यादिगुणकारण वाला है । इस तरह  
यहां तक यह मनःपर्ययज्ञान का कथन हुआ ॥ सू० १८ ॥

अब सूत्रकार केवलज्ञान का प्रकरण प्रारंभ करते हैं—‘से किं तं  
केवलनाणं’ इत्यादि ।

અને રૂપ હોય છે, પણ મનઃપર્યયજ્ઞાન ફક્ત ગુણપ્રત્યય રૂપ જ હોય છે. આ  
નિમિત્તોથી અવધિજ્ઞાન અને મનઃપર્યયજ્ઞાન વચ્ચે તફાવત છે. તેને સૂત્રકાર આ  
ગાથામાં સંક્ષિપ્ત રૂપે કહે છે—“જણમણ૦” ઇત્યાદિ.

મનુષ્યોનાં મનદ્વારા ચિન્તિત અર્થને પ્રકાશિત કરનાર, તથા મનુષ્યક્ષેત્રમાં  
જ રહેલ સંજ્ઞી પંચેન્દ્રિય પર્યાપ્તક જીવોનાં મનોદ્રવ્યોને વિષય કરનાર—તેની બહારના  
પ્રાણીઓના મનોદ્રવ્યોને વિષય નહીં કરનાર એવું આ મનઃપર્યયજ્ઞાન  
આમશૌષધ્યાદિલબ્ધિપ્રાપ્ત અપ્રમત્ત સંયત સમ્યગ્દૃષ્ટિ જીવને થાય છે.  
અને તે ક્ષાન્ત્યાદિગુણકારણવાળું હોય છે. આ પ્રમાણે અહીં સુધી આ  
મનઃપર્યયજ્ઞાનનું વર્ણન થયું. ॥ સૂ. ૧૮ ॥

હવે સૂત્રકાર કેવળજ્ઞાનનું પ્રકરણ શરૂ કરે છે—“સે કિં તં કેવલનાણં” ઇત્યાદિ.



છાયા—અથ કિં તત્ કેવલજ્ઞાનમ્ ?, કેવલજ્ઞાનં દ્વિવિધં પ્રજ્ઞપ્તમ્ । તદ્ યથા ભવસ્થકેવલજ્ઞાનં ચ, સિદ્ધકેવલજ્ઞાનં ચ ॥

ટીકા—શિષ્યઃ પૃચ્છતિ—‘સે કિં તં કેવલનાણં’ ઇતિ । અથ કિં તત્ કેવલજ્ઞાનમ્ ? હે ભદન્ત ! પૂર્વનિર્દિષ્ટસ્ય કેવલજ્ઞાનસ્ય કિં સ્વરૂપમિત્યર્થઃ । ઉત્તરમાહ ‘કેવલનાણં દુવિહં પળ્લત્તં’ ઇત્યાદિ । કેવલજ્ઞાનં, તત્ર કેવલં—૧ પરિપૂર્ણમ્ ૨ સમગ્રમ્, ૩ અસાધારણમ્, ૪ નિરપેક્ષમ્, ૫ વિશુદ્ધમ્, ૬ સર્વભાવપ્રજ્ઞાપકમ્, ૭ સંપૂર્ણલોકાલોકવિષયકમ્, ૮ અનન્તપર્યાયં ચેત્યર્થઃ, તથાવિધં યદ્ જ્ઞાનં તત્ કેવલજ્ઞાનમ્ । તત્ર—

૧-પરિપૂર્ણમ્—સકલ દ્રવ્યભાવપરિચ્છેદકત્વાત્ ।

૨-સમગ્રમ્—એકસ્ય જીવપદાર્થસ્ય યથા સર્વથા પરિચ્છેદકં, તથાઽપરસ્યાપીત્યાશયાત્ ।

મનઃપર્યાયજ્ઞાન કે સ્વરૂપ સુન શુકને વાદ અવ જવ શિષ્ય કેવલજ્ઞાન કે સ્વરૂપ કો પૂછતા હૈ—હે ભદન્ત । પૂર્વનિર્દિષ્ટ કેવલજ્ઞાન કા કયા સ્વરૂપ હૈ ? ઉત્તર—કેવલજ્ઞાન દો પ્રકાર કા પ્રરૂપિત કિયા હૈ, વે દો પ્રકાર યે હૈ—એક ભવસ્થ—કેવલજ્ઞાન ઓર દૂસરા સિદ્ધ કેવલજ્ઞાન । કેવલ—અર્થાત્—૧ પરિપૂર્ણ, ૨ સમગ્ર, ૩ અસાધારણ, ૪ નિરપેક્ષ, ૫ વિશુદ્ધ, ૬ સર્વભાવ-પ્રજ્ઞાપક, ૭ સંપૂર્ણલોકાલોકવિષયક, ૮ અનન્તપર્યાય, યે સવ કેવલ કે અર્થ હૈ । એસા જો જ્ઞાન હૈ વહ કેવલજ્ઞાન હૈ ।

૧ પરિપૂર્ણ—યહ જ્ઞાન સકલ દ્રવ્ય ઓર ડનકી સમસ્ત ત્રિકાલવર્તી પર્યાયોં કો જાનતા હૈ ઇસલિયે ઇસકો ‘પરિપૂર્ણ’ કહા હૈ ।

મનઃપર્યાયજ્ઞાનતું સ્વરૂપ સાંભળી લીધા પછી હવે શિષ્ય કેવલજ્ઞાનતું સ્વરૂપ પૂછે છે—હે ભદન્ત ! પૂર્વનિર્દિષ્ટ કેવલજ્ઞાનતું કેવું સ્વરૂપ છે ?

ઉત્તર—કેવલજ્ઞાન બે પ્રકારતું પ્રરૂપિત કરેલ છે તે બે પ્રકાર આ પ્રમાણે છે—(૧) ભવસ્થ—કેવલજ્ઞાન અને (૨) સિદ્ધ—કેવલજ્ઞાન. કેવલ એટલે કે—(૧) પરિપૂર્ણ, (૨) સમગ્ર, (૩) અસાધારણ, (૪) નિરપેક્ષ, (૫) વિશુદ્ધ, (૬) સર્વભાવપ્રજ્ઞાપક, (૭) સંપૂર્ણલોકાલોકવિષયક, (૮) અનન્તપર્યાય, આ બધાં “કેવલ” ના અર્થો છે. આવું જે જ્ઞાન હોય તે કેવલજ્ઞાન છે.

(૧) પરિપૂર્ણ—આ જ્ઞાન સમસ્ત દ્રવ્ય અને તેમની સમસ્ત ત્રિકાલવર્તી પર્યાયોને જાણે છે તેથી તેને પરિપૂર્ણ કહેલ છે.



૩-અસાધારણમ્—મત્યાદિજ્ઞાનૈરતુલ્યત્વાત્ ।

૪-નિરપેક્ષમ્—ઇન્દ્રિયાદ્યપેક્ષાયા અભાવાત્ ।

૫-વિશુદ્ધમ્—નિરવશેષજ્ઞાનદર્શનાવરણાયકર્મમલક્ષ્યાત્ ।

૬-સર્વભાવપ્રજ્ઞાપકમ્—સર્વજીવાદિભાવપ્રરૂપકત્વાત્ ।

નનુ કેવલજ્ઞાનં મૂકં, તત્ કથં પ્રરૂપકમુચ્યતે ? શબ્દો હિ પ્રરૂપણાં કર્તું શક્ના-  
તીતિ ચેત્ ? , ઉચ્યતે—ઉપચારાત્ પ્રરૂપકત્વં કેવલજ્ઞાનસ્ય સિધ્યતિ । યતઃ કેવલ-  
જ્ઞાનદૃષ્ટસર્વભાવાન્ શબ્દઃ પ્રરૂપયતિ, તસ્માત્ કેવલજ્ઞાનમેવ પ્રરૂપકમિતિ મન્યતે ।

૨ સમગ્ર—યહ જિસ પ્રકાર એક-જીવ પદાર્થ કો સર્વથા રૂપસે જાનતા  
હૈ ઉસી પ્રકાર વહ દૂસરે પદાર્થો કો भी સર્વથા રૂપ સે જાનતા હૈ ।  
કિસી भी પદાર્થ કે જાનને મેં હિસમેં ન્યૂનાધિકતા નહીં હૈ । હિસલિયે  
યહ ‘સમગ્ર’ હૈ ।

૩ સાધારણ—મત્યાદિક જો ઓર જ્ઞાન હૈં ઉનકી અપેક્ષા યહ વિશિષ્ટ  
હૈ, અદ્વિતીય હૈ હિસલિયે યહ ‘અસાધારણ’ હૈ ।

૪ નિરપેક્ષ—ઇન્દ્રિયાદિકોં કી સહાયતા સે યહ રહિત હૈ હિસલિયે  
‘નિરપેક્ષ’ હૈ ।

૫ વિશુદ્ધ—સમસ્ત જ્ઞાનાવરણ એવં દર્શનાવરણ કર્મ કે વિગમ (ક્ષય)  
સે યહ હોતા હૈ અતઃ હિસે ‘વિશુદ્ધ’ કહા હૈ ।

૬ સર્વભાવજ્ઞાપક—યહ સમસ્ત જીવાદિક પદાર્થોં કા પ્રરૂપક હૈ  
હિસલિયે યહ ‘સર્વભાવપ્રજ્ઞાપક’ હૈ ।

શંકા—કેવલજ્ઞાન કો તો મૂક બતલાયા ગયા હૈ, ફિર યહ જીવાદિક  
પદાર્થોં કા પ્રરૂપક કૈસે હો સકતા હૈ ?

(૨) સમગ્ર—જેમ એક જીવ પદાર્થને સર્વથા રૂપથી જાણે છે એજ રીતે  
આ જ્ઞાન બીજા પદાર્થોને પણ સર્વથારૂપથી જાણે છે. કોઈપણ પદાર્થને જાણવામાં  
તેમાં ઓછા-વધુ પાણું નથી, તેથી તે સમગ્ર છે.

(૩) અસાધારણ—મત્યાદિક જે બીજાં જ્ઞાન છે તેમના કરતાં આ જ્ઞાન  
વિશિષ્ટ છે, અદ્વિતીય છે, માટે તે અસાધારણ છે.

(૪) નિરપેક્ષ—ઈન્દ્રિયાદિકોની સહાયતા વિનાનું હોવાથી તે નિરપેક્ષ છે.

(૫) વિશુદ્ધ—સમસ્ત જ્ઞાનાવરણ અને દર્શનાવરણ કર્મના વિગમ (ક્ષય)  
થી તે ઉત્પન્ન થાય છે, તેથી તેને વિશુદ્ધ કહેલ છે.

(૬) સર્વભાવપ્રજ્ઞાપક—તે સમસ્ત જીવાદિક પદાર્થોનું પ્રરૂપક છે તેથી તે  
સર્વભાવપ્રજ્ઞાપક છે.

શંકા—કેવળજ્ઞાનને તો મૂક દર્શાવ્યું છે તો તે જીવાદિક પદાર્થોનું પ્રરૂપક  
કેવી રીતે હોઈ શકે ?

૭-સમ્પૂર્ણલોકાલોકવિષયક—ધર્માદીનાં દ્રવ્યાણાં વૃત્તિર્યત્ર ભવતિ તત્ ક્ષેત્રં લોકઃ, તદ્વિપરીતમનન્તાકાશાસ્તિકાયરૂપં ક્ષેત્રમલોકઃ । યત્ કિંચિત્ જ્ઞેયં લોકેઽલોકે વાઽસ્તિ, તસ્ય સર્વસ્ય દર્શકત્વાત્ ।

૮-અનન્તપર્યાયમ્—સ્વાપેક્ષયા જ્ઞેયાપેક્ષયા વાઽનન્તપર્યાયત્વાત્ ।

ઉત્તર—યહ વાત ઉપચાર સે ઉસમેં સિદ્ધ હોતી હૈ, અતઃ ઉસે પ્રરૂપક કહા હૈ, કયોં કિ સમસ્ત જીવાદિક ભાવોં કા સર્વરૂપ સે યથાર્થ દર્શી કેવલજ્ઞાન હૈ, ઓર શબ્દ, કેવલજ્ઞાન દ્વારા દેખે હુએ પદાર્થોં કી હી પ્રરૂપણા કરતા હૈ, ઇસલિયે ઉપચાર સે એસા માન લિયા જાતા હૈ કિ કેવલજ્ઞાન હી ઉનકા પ્રરૂપક હૈ ।

૭ સંપૂર્ણલોકાલોકવિષયક—ધર્માદિક દ્રવ્યોં કી જહાં વૃત્તિ હૈ ઉસકા નામ લોક હૈ । ઇસસે વિપરીત અલોક હૈ । ઇસમેં આકાશ કે સિવાય ઓર કોઈ દ્રવ્ય નહીં હૈ । યહ અનંત ઓર અસ્તિકાયરૂપ હૈ । લોક ઓર અલોક મેં જો કુછ જ્ઞેય પદાર્થ હોતા હૈ ઉસકા સર્વરૂપ સે પ્રકાશક હોને સે યહ ‘સમ્પૂર્ણલોકાલોકવિષયક’ કહા જાતા હૈ ।

૮ અનન્તપર્યાય—મત્યાદિકજ્ઞાન જિસ પ્રકાર સર્વ દ્રવ્યોં કો ઉનકી કુછ પર્યાયોં કો પરોક્ષ પ્રત્યક્ષરૂપ સે જાનતે હૈ ઇસ પ્રકાર યહ જ્ઞાન નહીં જાનતા હૈ કિન્તુ યહ તો સમસ્ત દ્રવ્યોં કો ઓર ઉનકી સમસ્ત પર્યાયોં કો યુગપત્ પ્રત્યક્ષ જાનતા હૈ ઇસલિયે યહ અનન્તપર્યાય કહા ગયા હૈ ।

ઉત્તર—આ વાત ઉપચારથી તેમાં સિદ્ધ થાય છે, તેથી તેને પ્રરૂપક કહેલ છે, કારણ કે સમસ્ત જીવાદિક ભાવોનું સર્વરૂપે યથાર્થદર્શી કેવલજ્ઞાન છે અને શબ્દ, કેવલજ્ઞાન દ્વારા જોયેલ પદાર્થોનીજ પ્રરૂપણા કરે છે તેથી ઔપચારિક રીતે એવું માની લેવાય છે કે કેવલજ્ઞાન જ તેનું પ્રરૂપક છે.

(૭) સમ્પૂર્ણલોકાલોકવિષયક—ધર્માદિક દ્રવ્યોની ન્યાં વૃત્તિ છે એનું નામ લોક છે. તેનાથી ઉલટો અલોક છે. તેમાં આકાશના સિવાય બીજું કોઈ દ્રવ્ય નથી. તે અનંત અને અસ્તિકાયરૂપ છે. લોક અને અલોકમાં જે કોઈ જ્ઞેય પદાર્થ હોય છે, તેનું સર્વરૂપથી પ્રકાશક હોવાથી તે સંપૂર્ણલોકાલોક વિષયક કહેવાય છે.

(૮) અનંતપર્યાય—મત્યાદિક જ્ઞાન જેમ સર્વે દ્રવ્યોને અને તેમની કેટલીક પર્યાયોને પરોક્ષ-પ્રત્યક્ષરૂપથી જાણે છે, એજ પ્રમાણે આ જ્ઞાન જાણતું નથી પણ આ (જ્ઞાન) તો સમસ્ત દ્રવ્યોને અને તેમની સમસ્ત પર્યાયોને યુગપત્ પ્રત્યક્ષ જાણે છે, તેથી આ જ્ઞાનને અનંત પર્યાય કહેલ છે.

તત્ કેવલજ્ઞાનં દ્વિવિધં પ્રજ્ઞપ્તમ્—તદ્યથા—ભવસ્થ-કેવલજ્ઞાનં, સિદ્ધ-કેવલજ્ઞાનં ચ ॥  
 મૂલમ્—સે કિં તં ભવત્થ-કેવલનાણં ? । ભવત્થ-કેવલનાણં  
 દુવિહંપણત્તં । તંજહા—સજોગિ—ભવત્થ-કેવલનાણં ચ, અજોગિ-  
 ભવત્થ-કેવલનાણં ચ ॥

છાયા—અથ કિં તદ્ ભવસ્થ-કેવલજ્ઞાનમ્ ? । ભવસ્થ-કેવલજ્ઞાનં દ્વિવિધં પ્રજ્ઞ-  
 પ્તમ્ । તદ્ યથા—સયોગિ-ભવસ્થ-કેવલજ્ઞાનં ચ અયોગિ-ભવસ્થ-કેવલજ્ઞાનં ચ ॥

ટીકા—શિષ્યઃ પૃચ્છતિ—‘ સે કિં તં ભવત્થ-કેવલનાણં ’ इति, पूर्वनिर्दिष्टस्य  
 भवस्थकेवलज्ञानस्य किं स्वरूप ? मित्यर्थः । उत्तरमाह—‘ भवत્थ-केवलनाणं दुविहं  
 पणत्तं ’ इत्यादि । भवस्थ-केवलज्ञानं—भवो=मनुष्यजन्म, तत्र तिष्ठतीति भवस्थः,  
 तस्य केवलज्ञानमिति विग्रहः । तद् द्विविधं प्रज्ञप्तं=तीर्थकैः कथितम् । तद् यथा-  
 सयोगि-भवस्थकेवलज्ञानम्, अयोगि-भवस्थ-केवलज्ञानमिति ॥

यह केवलज्ञान दो प्रकार का है—१ भवस्थ-केवलज्ञान और २ सिद्ध-  
 केवलज्ञान ॥

‘ સે કિં તં ભવત્થકેવલનાણં ’ इत्यादि ।

શિષ્ય પૂછતા હૈ—હે ભદ્રન્ત ! ભવસ્થ-કેવલજ્ઞાન કા કયા સ્વરૂપ હૈ ?  
 ઉત્તર—ભવસ્થ-કેવલજ્ઞાન દો પ્રકાર કા બતલાયા ગયા હૈ, વહ ઇસ પ્રકાર-  
 એક સયોગિ-ભવસ્થ-કેવલજ્ઞાન દૂસરા અયોગિ-ભવસ્થ-કેવલજ્ઞાન । મનુષ્ય  
 જન્મ કા નામ યહાં ભવ હૈ । ઇસ ભવ મેં રહનેવાલે કા જો કેવલજ્ઞાન હૈ વહ  
 ભવસ્થ-કેવલજ્ઞાન હૈ । વહ ભવસ્થ-કેવલજ્ઞાન દો પ્રકાર કા બતલાયા ગયા  
 હૈ । સયોગિ-ભવસ્થ-કેવલજ્ઞાન ઓર દૂસરા અયોગિ-ભવસ્થ-કેવલજ્ઞાન ।

આ કેવળજ્ઞાન બે પ્રકારનું છે—(૧) ભવસ્થ-કેવળજ્ઞાન અને (૨) સિદ્ધ-  
 કેવળજ્ઞાન.

“ સે કિં તં ભવત્થકેવલનાણં ” इत्यादि.

શિષ્ય પૂછે છે—હે ભદ્રન્ત ! ભવસ્થ-કેવળજ્ઞાનનું શું સ્વરૂપ છે ?

ઉત્તર—ભવસ્થ-કેવળજ્ઞાન બે પ્રકારનું બતાવેલ છે. તે આ પ્રમાણે છે.  
 (૧) સયોગિ-ભવસ્થ-કેવળજ્ઞાન અને (૨) અયોગિ-ભવસ્થ-કેવળજ્ઞાન. અહીં  
 મનુષ્યજન્મનું નામ ભવ છે. આ ભવમાં રહેનારનું જે કેવળજ્ઞાન છે તે ભવસ્થ-  
 કેવળજ્ઞાન કહેવાય છે. તે ભવસ્થ કેવળજ્ઞાન બે પ્રકારનું છે—સયોગિ-ભવસ્થ-  
 કેવળજ્ઞાન અને બીજું અયોગિ-ભવસ્થ-કેવળજ્ઞાન.

મૂલમ્—સે કિં તં સજોગિ-ભવત્થ-કેવલનાણં ? । સજોગિ-ભવત્થ-કેવલનાણં દુવિહં પપ્પત્તં । તં જહા—પઢમસમયસજોગિ-ભવત્થ-કેવલનાણં ચ, અપઢમસમયસજોગિભવત્થકેવલનાણં ચ । અહવા—ચરમસમયસજોગિભવત્થકેવલનાણં ચ અચરમસમય-સજોગિભવત્થકેવલનાણં ચ । સે ત્તં સજોગિભવત્થકેવલનાણં ॥

છાયા—અથ કિં તત્ સયોગિભવસ્થકેવલજ્ઞાનમ્ ? । સયોગિભવસ્થકેવલ-જ્ઞાનં દ્વિવિધં પ્રજ્ઞપ્તમ્ । તદ્ યથા—પ્રથમસમયસયોગિભવસ્થકેવલજ્ઞાનં ચ, અપ્રથમ-સમયસયોગિભવસ્થકેવલજ્ઞાનં ચ । અથવા—ચરમસમયસયોગિભવસ્થકેવલજ્ઞાનં ચ, અચરમસમયસયોગિભવસ્થકેવલજ્ઞાનં ચ । તદેતત્ સયોગિભવસ્થકેવલજ્ઞાનમ્ ॥

ટીકા—શિષ્યઃ પૃચ્છતિ—‘ સે કિં તં સજોગિભવત્થકેવલનાણં ? ’ ઇતિ । ઉત્તરમાહ—‘ સજોગિભવત્થકેવલનાણં ’ ઇત્યાદિ । સયોગિભવસ્થકેવલજ્ઞાનમ્—

‘ સે કિં તં સજોગિ-ભવત્થ-કેવલનાણં ’ ઇત્યાદિ ।

પ્રશ્ન—સયોગિ-ભવસ્થ-કેવલજ્ઞાન કા કયા સ્વરૂપ હૈ ? ઉત્તર—મન, વચન, ઔર કાયકી ક્રિયા કા નામ યોગ હૈ । યહ યોગ જિસકે હોતા હૈ વહ સયોગી કહલાતા હૈ । સયોગી હોકર જો ભવસ્થ હોતા હૈ વહ સયોગિ-ભવસ્થ હૈ । ઁસકા જો કેવલજ્ઞાન હોતા હૈ ઁસકા નામ સયોગિભવસ્થ-કેવલજ્ઞાન હૈ । વહ દો પ્રકાર કા વતલાયા ગયા હૈ—ઁક પ્રથમસમય-સયોગિ-ભવસ્થકેવલજ્ઞાન ઔર દૂસરા અપ્રથમસમય-સયોગિ-ભવસ્થ-કેવલજ્ઞાન । જિસ સયોગી ભવસ્થ આત્મા કો કેવલજ્ઞાન ઉત્પન્ન હોને મેં ઁક સમય હુઆ હો ઁસકા કેવલજ્ઞાન પ્રથમસમય સયોગિ-ભવસ્થ-કેવલ-

“ સે કિં તં સજોગિ-ભવત્થ-કેવલનાણં ” ઇત્યાદિ.

પ્રશ્ન—સયોગિ-ભવસ્થ-કેવલજ્ઞાનનુ શું સ્વરૂપ છે ?

ઉત્તર—મન, વચન અને કાયની ક્રિયાનું નામ યોગ છે, આ યોગ જેને થાય છે તે સયોગી કહેવાય છે. સયોગી થઈને જે ભવસ્થ હોય છે તે સયોગિ-ભવસ્થ છે. તેનું જે કેવલજ્ઞાન હોય છે તેને સયોગિ ભવસ્થ કેવલજ્ઞાન કહે છે. તે જે પ્રકારનું બતાવ્યું છે—(૧) પ્રથમસમય-સયોગિ-ભવસ્થ-કેવલજ્ઞાન અને (૨) અપ્રથમસમય સયોગિ-ભવસ્થ-કેવલજ્ઞાન. જે સયોગી ભવસ્થ આત્માને કેવલજ્ઞાન ઉત્પન્ન થવામાં એક સમય લાગ્યો હોય તેનું કેવલજ્ઞાન

તત્ર-યોગાઃ-વ્યાપારાઃ । તૈ સહ વર્તન્તે ચે, તે સયોગાઃ સવ્યાપારામનોવાક્યાયાઃ, તે વિદ્યન્તે યસ્ય સ સયોગી । સ ચાસૌ ભવસ્થશ્ચ સયોગિભવસ્થસ્તસ્ય કેવલજ્ઞાન-મિત્તિવિગ્રહઃ । તદ્ દ્વિવિધં પ્રજ્ઞપ્તમ્ , તદ્ યથા-પ્રથમસમયસયોગિભવસ્થકેવલજ્ઞાનં ચ । પ્રથમઃ સમયઃ સયોગિત્વે યસ્ય સ પ્રથમસમયઃ, કેવલજ્ઞાનપ્રાપ્તૌ પ્રથમઃ સમયો યસ્ય સ इत्यर्थઃ । સ ચાસૌ સયોગિભવસ્થશ્ચેતિ પ્રથમસમયસયોગિભવસ્થઃ, તસ્ય કેવલજ્ઞાનમિત્યર્થઃ । એવમપ્રથમઃ=દ્વિતીયાદિઃ સમયો યસ્ય સોઽપ્રથમસમયઃ, શેષં પ્રાગ્વત્ । અથવેત્યાદિ । ચરમઃ=અન્ત્યઃ સમયો યસ્ય સયોગ્યવસ્થાયાઃ, સ તથા, શેષં પ્રાગ્વત્ । એવમચરમઃ=ચરમાદન્યઃ સમયો યસ્ય સોઽચરમસમયઃ, પશ્ચાન્નુપૂર્વ્યાં ચરમાદારભ્ય સર્વે એવ આકેવલપ્રાપ્તેરચરમા इति । શેષં પ્રાગ્વત્ ॥

મૂલમ્-સે કિં તં અજોગિભવત્થકેવલનાણં ? । અજોગિભવ-ત્થકેવલનાણં દુવિહં પપ્પન્તં । તં જહા-પઠમસમયઅજોગિભવ-ત્થકેવલનાણં ચ, અપઠમસમયઅજોગિભવત્થકેવલનાણં ચ ।

જ્ઞાન હૈ । તથા જિસ કેવલજ્ઞાન કે ઉત્પન્ન હોને મેં દ્વિતીયાદિ સમય હો ગયે હોં વહ અપ્રથમસમય-સયોગિભવસ્થ-કેવલજ્ઞાન હૈ । અથવા ઇસ તરહ સે ભી કેવલજ્ઞાન કે દો ભેદ હોતે હૈં-ચરમસમય-સયોગિ-ભવસ્થ-કેવલજ્ઞાન એવં અચરમસમય-સયોગિ-ભવસ્થ-કેવલજ્ઞાન । સયોગી-અવસ્થા કે અન્ત્યસમય કા જો કેવલજ્ઞાન હૈ વહ ચરમસમય-સયોગિ-ભવસ્થ-કેવલજ્ઞાન હૈ । ઇસસે વિપરીત, અર્થાત્ પશ્ચાન્નુપૂર્વી કી અપેક્ષા સયોગી અવસ્થા કે ચરમસમય સે લેકર જિતને સમય કેવલજ્ઞાન કી પ્રાપ્તિ પર્યન્ત હો ગયે હૈં વે સવ અચરમસમય હૈં । ઊન સમયોં કા કેવલ-જ્ઞાન અચરમસમય-સયોગિ-ભવસ્થ-કેવલજ્ઞાન કહલાતા હૈ ॥

પ્રથમસમય-સયોગિ-ભવસ્થ-કેવલજ્ઞાન છે. તથા જે કેવલજ્ઞાન ઉત્પન્ન થવામાં બે વગેરે સમય લાગ્યા હોય તે અપ્રથમસમય-સયોગિ-ભવસ્થ-કેવલજ્ઞાન છે. અથવા કેવલજ્ઞાનના આ પ્રમાણે પણ બે ભેદ પડે છે-ચરમસમય-સયોગિ-ભવસ્થ-કેવલજ્ઞાન અને અચરમસમય-સયોગિ-ભવસ્થ-કેવલજ્ઞાન. સયોગી અવસ્થાના અન્ત્ય સમયનું જે કેવલજ્ઞાન છે તે ચરમસમય-સયોગિ-ભવસ્થ-કેવલજ્ઞાન છે. તેથી ઉલટું એટલે કે પશ્ચાન્નુપૂર્વીની અપેક્ષાએ સયોગી અવસ્થાના ચરમ સમયથી લઈને કેવલજ્ઞાનની પ્રાપ્તિ સુધી જેટલા સમયો થઈ ગયા હોય તે બધા અચરમ સમયો છે. તે સમયોનું કેવલજ્ઞાન અચરમસમય-સયોગિ-ભવસ્થ-કેવલજ્ઞાન કહેવાય છે.

અહવા-ચરમસમય-અજોગિભવત્થકેવલનાણં ચ, અચરમસમય-અજોગિભવત્થકેવલનાણં ચ । સે તં અજોગિભવત્થકેવલનાણં, સે તં ભવત્થકેવલનાણં ॥ સૂ૦ ૧૯ ॥

છાયા—અથ કિં તદ્ અયોગિભવસ્થકેવલજ્ઞાનમ્ ? । અયોગિભવસ્થકેવલજ્ઞાનં દ્વિવિધં પ્રજ્ઞપ્તમ્ । તદ્ યથા-પ્રથમસમયાડયોગિભવસ્થકેવલજ્ઞાનં ચ, અપ્રથમસમયાડયોગિભવસ્થકેવલજ્ઞાનં ચ । અથવા-ચરમસમયાડયોગિભવસ્થકેવલજ્ઞાનં ચ, અચરમસમયાડયોગિભવસ્થકેવલજ્ઞાનં ચ । તદેતદયોગિભવસ્થકેવલજ્ઞાનમ્, તદેતદ્ ભવસ્થકેવલજ્ઞાનમ્ ॥ સૂ૦ ૧૯ ॥

ટીકા—‘સે કિં તં અજોગિભવત્થકેવલનાણં’ ઇત્યાદિ । ન યોગી ઇત્યયોગી, શૈલેશ્યવસ્થામુપગતઃ । સ ચાસૌ ભવસ્થશ્ચ-અયોગિભવસ્થઃ તસ્ય કેવલજ્ઞાનમ્ । અયોગિભવસ્થકેવલજ્ઞાનમ્ । શેષં સુગમમ્ ॥ ૧૯ ॥

હસ પ્રકાર સયોગિ-ભવસ્થ-કેવલજ્ઞાન કા સ્વરૂપ બતલાયા, અવ અયોગિ-ભવસ્થ-કેવલજ્ઞાન કા સ્વરૂપ કહતે હૈં—‘સે કિં તં અજોગિભવત્થ-કેવલનાણં’ ઇત્યાદિ ।

શૈલેશી અવસ્થા કો જો પ્રાપ્ત હો ચુકે હૈં વે અયોગી હૈં, અયોગી હોકર ખી જો ભવસ્થ હૈં વે અયોગીભવસ્થ હૈં । ઇનકા જો કેવલજ્ઞાન હૈ વહ અયોગિ-ભવસ્થ-કેવલજ્ઞાન હૈ । વહ દો પ્રકાર કા હૈ, જૈસે-પ્રથમસમય-અયોગિ-ભવસ્થ-કેવલજ્ઞાન ઓર અપ્રથમસમય-અયોગિભવસ્થ-કેવલજ્ઞાન । ઊનમૈં જિન ભવસ્થ આત્મા કો શૈલેશી અવસ્થા પ્રાપ્ત કરને મૈં એક સમય હુવા હો, ઊનકા કેવલજ્ઞાન પ્રથમસમય-અયોગિ-ભવસ્થ-કેવલજ્ઞાન કહ-લાતા હૈ, ઓર જિનકો શૈલેશી અવસ્થા પ્રાપ્ત કરને મૈં દ્વિતીયાદિ સમય

આ પ્રમાણે સયોગિ-ભવસ્થ-કેવલજ્ઞાનનું સ્વરૂપ બતાવ્યું; હવે અયોગિ-ભવસ્થ-કેવલજ્ઞાનનું સ્વરૂપ કહે છે—“સે કિં તં અજોગિ ભવત્થ કેવલનાણ” ઇત્યાદિ.

શૈલેશી અવસ્થાને જે પામી ગયાં છે તે અયોગી છે. અયોગી હોવા છતાં પણ જે ભવસ્થ છે તેઓ અયોગિ ભવસ્થ છે. તેમનું જે કેવલજ્ઞાન છે તે અયોગિ-ભવસ્થ-કેવલજ્ઞાન છે. તે છે પ્રકારનું છે—(૧) પ્રથમસમય-અયોગિ-ભવસ્થ-કેવલજ્ઞાન અને (૨) અપ્રથમસમય-અયોગિ-ભવસ્થ-કેવલજ્ઞાન છે. તેમાં જે ભવસ્થ આત્માને શૈલેશી અવસ્થા પ્રાપ્ત કરવામાં એક સમય લાગ્યો હોય, તેમનું કેવલજ્ઞાન પ્રથમસમય-અયોગિ-ભવસ્થ-કેવલજ્ઞાન કહેવાય છે. અને જેમને શૈલેશી



મૂલમ્—સે કિં તં સિદ્ધકેવલનાણં ? । સિદ્ધકેવલનાણં દુવિહં  
પણ્ણતં । તં જહા—અણંતરસિદ્ધકેવલનાણં ચ, પરંપરસિદ્ધ-  
કેવલનાણં ચ ॥ સૂ. ૨૦ ॥

છાયા—અથ કિં તત્ સિદ્ધકેવલજ્ઞાનમ્ ? । સિદ્ધકેવલજ્ઞાનં દ્વિવિધં પ્રજ્ઞપ્તમ્ ।  
તદ્ યથા—અનંતરસિદ્ધકેવલજ્ઞાનં ચ, પરસ્પરસિદ્ધકેવલજ્ઞાનં ચ ॥ સૂ. ૨૦ ॥

ટીકા—શિષ્યઃ પૃચ્છતિ—‘ સે કિં તં સિદ્ધકેવલનાણં ’ इति । अथ किं तत्  
सिद्धकेवलज्ञानमिति । उत्तरमाह—सिद्धकेवलज्ञानं—सिद्धस्य=शैलेश्यवस्थाचरमसमय-  
प्राप्तसिद्धत्वस्य केवलज्ञानं, द्विविधं प्रज्ञप्तम् । तद् यथा—अनन्तरसिद्धकेवलज्ञानं च,  
परंपरसिद्धकेवलज्ञानं च ॥ सू. २० ॥

હો ગયે હૈં ઉનકે કેવલજ્ઞાન કો અપ્રથમસમય-અયોગિ-ભવસ્થ-કેવલજ્ઞાન  
કહતે હૈં । અથવા ચરમ અચરમ કે ભેદ સે યહ ફિર દો પ્રકાર કા હૈ-  
૧ મોક્ષ પહોંચને કે અન્તિમ સમય કા જો કેવલજ્ઞાન હૈ ચરમસમય-  
અયોગિ-ભવસ્થ-કેવલજ્ઞાન હૈ, ઓર ૨ જો મોક્ષ પહુંચને કે અન્તિમ સમય  
કે પહેલે પશ્ચાન્તુપૂર્વી સે શૈલેશી અવસ્થા કી પ્રાપ્તિ કે સમય તક કા જો  
કેવલજ્ઞાન હૈ વહ અચરમસમય-અયોગિ-ભવસ્થ-કેવલજ્ઞાન હૈ હસ પ્રકાર  
અયોગિ-ભવસ્થ-કેવલજ્ઞાન કી તથા ભવસ્થકેવલજ્ઞાન કી પ્રરૂપણા  
હુઈ ॥ સૂ. ૧૯ ॥

‘ સે કિં તં સિદ્ધકેવલનાણં ’ इत्यादि ।

પ્રશ્ન—સિદ્ધ-કેવલજ્ઞાન કા કયા સ્વરૂપ હૈ ? ઉત્તર—સિદ્ધ-કેવલજ્ઞાન  
દો પ્રકાર કા હૈ । ૧ અનંતરસિદ્ધ-કેવલજ્ઞાન ઓર ૨ પરસ્પરસિદ્ધ-કેવલ-

અવસ્થા પ્રાપ્ત કરવામાં બે વગેરે સમયો લાગ્યા હોય તેમના કેવળજ્ઞાનને અપ્રથમ-  
સમય-અયોગિ-ભવસ્થ-કેવળજ્ઞાન કહે છે. અથવા ચરમ-અચરમના ભેદથી વળી તે  
પ્રકારનું છે—(૧) મોક્ષ પહોંચવાના અંતિમ સમયનું જે કેવળજ્ઞાન છે તે ચરમ-  
સમય-અયોગિ-ભવસ્થ-કેવળજ્ઞાન છે, અને (૨) જે મોક્ષ પહોંચવાના અંતિમ  
સમયના પહેલાં પશ્ચાન્તુપૂર્વીથી શૈલેશી અવસ્થાની પ્રાપ્તિના સમય સુધીનું જે કેવળ-  
જ્ઞાન છે તે અચરમસમય-અયોગિ-ભવસ્થ-કેવળજ્ઞાન છે. આ પ્રમાણે અયોગિ-ભવસ્થ-  
કેવળજ્ઞાનની તથા ભવસ્થ કેવળજ્ઞાની પ્રરૂપણા થઈ ॥ સૂ. ૧૯ ॥

“ સે કિં તં સિદ્ધકેવલનાણં ” इत्यादि.

પ્રશ્ન—સિદ્ધ-કેવળજ્ઞાનનું શું સ્વરૂપ છે ? ઉત્તર—સિદ્ધ-કેવળજ્ઞાન બે  
પ્રકારનું છે. (૧) અનંતર-સિદ્ધ-કેવળજ્ઞાન અને (૨) પરસ્પર-સિદ્ધ-કેવળજ્ઞાન.  
સિદ્ધનું શૈલેશી અવસ્થાના ચરમ સમયમાં પ્રાપ્ત સિદ્ધત્વ અવસ્થાનું જે કેવળજ્ઞાન



मूलम्—से किं तं अणंतरसिद्धकेवलनाणं ? । अणंतरसिद्ध-  
केवलनाणं पन्नरसविहं पणत्तं । तं जहा—तिथसिद्धा १, अति-  
त्थसिद्धा २, तिथयरसिद्धा ३, अतिथयरसिद्धा ४, सयंबुद्धसिद्धा  
५, पत्तेयबुद्धसिद्धा ६, बुद्धबोहियासिद्धा ७, इत्थिलिंगसिद्धा ८,  
पुरिसलिंगसिद्धा ९, नपुंसकलिंगसिद्धा १०, सलिंगसिद्धा ११,  
अन्नलिंगसिद्धा १२, गिहिलिंगसिद्धा १३, एगसिद्धा १४, अणे-  
गसिद्धा १५, से तं अणंतरसिद्धकेवलनाणं ॥ सू० २१ ॥

छाया—अथ किं तदनन्तरसिद्धकेवलज्ञानम् ? अनन्तरसिद्धकेवलज्ञानं पञ्च-  
दशविधं प्रज्ञप्तं । तद् यथा—तीर्थसिद्धाः १, अतीर्थसिद्धाः २, तीर्थकरसिद्धाः ३,  
अतीर्थकरसिद्धाः ४, स्वयंबुद्धसिद्धाः ५, प्रत्येकबुद्धसिद्धाः ६, बुद्धबोधितसिद्धाः ७,  
स्त्रीलिङ्गसिद्धाः ८, पुरुषलिङ्गसिद्धाः ९, नपुंसकलिङ्गसिद्धाः १०, स्वलिङ्गसिद्धाः  
११, अन्यलिङ्गसिद्धाः १२, गृहिलिङ्गसिद्धाः १३, एकसिद्धाः १४, अनेकसिद्धाः १५,  
तदेतदनन्तरसिद्धकेवलज्ञानम् ॥ सू० २१ ॥

टीका—शिष्यः पृच्छति—‘से किं तं अणंतरसिद्धकेवलनाणं ?’ इति । अथ किं तद्  
अनन्तरसिद्धकेवलज्ञानम् ? । पूर्वनिर्दिष्टस्य अनन्तरसिद्धकेवलज्ञानस्य किं स्वरूपमिति  
प्रश्नः । उत्तरमाह—‘अणंतरसिद्धकेवलनाणं’ इत्यादि । अनन्तरसिद्धकेवलज्ञानम्  
न विद्यतेऽन्तरं=व्यवधानम् अर्थात्—समयेन येषां तेऽनन्तराः ते च ते सिद्धाश्चानन्तर-  
सिद्धाः=सिद्धत्वप्राप्ताः प्रथमसमयेवर्तमानाः सिद्धा अनन्तरसिद्धा इत्यर्थः । तेषां  
केवलज्ञानं पञ्चदशविधं प्रज्ञप्तम्, अनन्तरसिद्धाः पञ्चदशविधा भवन्ति, अतस्तेषां

ज्ञान । सिद्ध का शैलेशी अवस्था के चरमसमय में प्राप्त सिद्धत्व अवस्था  
का जो केवलज्ञान है वह सिद्ध-केवलज्ञान है । यह अनन्तर और परम्पर  
के भेद से दो प्रकार का है ॥ सू० २० ॥

‘से किं तं अणंतरसिद्ध-केवलनाणं’ ? इत्यादि ।

प्रश्न—अनन्तरसिद्ध-केवलज्ञान का क्या स्वरूप है ? उत्तर—अनन्तरसिद्ध  
केवलज्ञान पन्द्रह प्रकार का है । वे प्रकार ये हैं—१ तीर्थसिद्ध, २ अतीर्थ-

छे ते सिद्ध-केवलज्ञान छे, ते अनन्तर अने परम्परना लेहथी जे प्रकारनुं  
छे ॥ सू० २० ॥

“ से किं तं अणंतर-सिद्ध-केवलनाणं ? ” इत्यादि ।

प्रश्न—अनन्तर-सिद्ध-केवलज्ञाननुं शुं स्वरूप छे ? उत्तर—अनन्तर-सिद्ध-  
यकेवलज्ञान पंद्रह प्रकारनुं छे, ते आ प्रमाणे छे—(१) तीर्थसिद्ध, (२) अतीर्थ-

કેવલજ્ઞાનં પશ્ચદશવિધં ભવતીતિ ભાવઃ । કે તે પશ્ચદશ ભેદાઃ ? इत्याह—‘ तं जहा ’ इत्यादि । तद् यथा—‘ तीर्थसिद्धाः ’ इत्यादि । तत्र तीर्थसिद्धाः—यदाश्रित्य जीवा अनन्तसंसारसागरं तरन्ति तत् तीर्थम्, तच्च यथावस्थितसकलजीवाजीवादिपदार्थ-सार्थप्ररूपकं चतुस्त्रिंशदतिशयसमन्वितपरमगुरुतीर्थकरप्रणीतं प्रवचनम्, एतच्च निरा-धारं न भवतीति गणधरा वा चतुर्विधसंघो वा तदाधारो वेदितव्यः । ततश्च तस्मिन् तीर्थे—तीर्थकरशासने प्रवृत्ते सति ये सिद्धाः=निर्वृताः=निर्वाणं प्राप्तास्ते तीर्थसिद्धाः, यथा वृषभसेनगणधरादयः १ ।

સિદ્ધ, ૩ તીર્થકરસિદ્ધ, ૪ અતીર્થકરસિદ્ધ, ૫ સ્વયંબુદ્ધસિદ્ધ, ૬ પ્રત્યેક-બુદ્ધસિદ્ધ, ૭ બુદ્ધબોધિતસિદ્ધ, ૮ સ્ત્રીલિંગસિદ્ધ, ૯ પુરુષલિંગસિદ્ધ, ૧૦ નપુંસ-કલિંગસિદ્ધ, ૧૧ સ્વલિંગસિદ્ધ, ૧૨ અન્યલિંગસિદ્ધ, ૧૩ ગૃહલિંગસિદ્ધ, ૧૪ એકસિદ્ધ, ૧૫ અનેકસિદ્ધ, ૧૬ અનન્તરસિદ્ધ કેવલજ્ઞાન હૈ ।

ભાવાર્થ—સિદ્ધત્વ કો પ્રાપ્ત હુઆ સિદ્ધ આત્મા પ્રથમ સમય મેં જબ તક વર્તમાન હૈ વહ અનન્તરસિદ્ધ હૈ । સિદ્ધત્વ પદ પ્રાપ્ત આત્મા એક સમય કે ખીતર ૨ હી સિદ્ધ બન જાતા હૈ એક સમય કા ખી યહાં અન્તર-વ્યવધાન નહીં પડતા હૈ । ઇસ અનન્તરસિદ્ધ આત્મા કા જો કેવલજ્ઞાન હૈ વહ અનન્તરસિદ્ધ—કેવલજ્ઞાન હૈ । યહ પન્દ્રહ પ્રકાર કા બતલાયા ગયા હૈ । વે પન્દ્રહ ભેદ યે હૈ—જિસકા આશ્રય કર જીવ અનન્ત સંસાર કો પાર કર દેતે હૈ વહ તીર્થ હૈ । યહ તીર્થ યથાવસ્થિત સકલ જીવાદિક પદાર્થોં કે યથાર્થ સ્વરૂપ કા પ્રરૂપક જો પ્રવચન હૈ તત્સ્વરૂપ જ્ઞાના ગયા । ઇસ પ્રવચન કે પ્રણેતા ૩૪ ચૌતીસ અતિશયોં સે વિરાજમાન પરમગુરુ તીર્થ-

સિદ્ધ, (૩) તીર્થકરસિદ્ધ, (૪) અતીર્થકર-સિદ્ધ, (૫) સ્વયંબુદ્ધસિદ્ધ, (૬) પ્રત્યેકબુદ્ધસિદ્ધ, (૭) બુદ્ધબોધિતસિદ્ધ, (૮) સ્ત્રીલિંગસિદ્ધ, (૯) પુરુષલિંગસિદ્ધ, (૧૦) નપુંસકલિંગસિદ્ધ, (૧૧) સ્વલિંગસિદ્ધ, (૧૨) અન્યલિંગસિદ્ધ, (૧૩) ગૃહલિંગસિદ્ધ, (૧૪) એકસિદ્ધ, (૧૫) અનેકસિદ્ધ. આ અનન્તર સિદ્ધ કેવળજ્ઞાનનું સ્વરૂપ છે.

ભાવાર્થ:—સિદ્ધત્વ પામેલ સિદ્ધ આત્મા પ્રથમ સમયમાં જ્યાં સુધી વર્ત-માન છે તે અનન્તરસિદ્ધ છે. સિદ્ધત્વ પદ પામેલ આત્મા એક સમયની અંદર જ સિદ્ધ બની જાય છે. એક સમયનું પણ ત્યાં અન્તર-વ્યવધાન પડતું નથી. આ અનન્તર-સિદ્ધ આત્માનું જ કેવળજ્ઞાન છે તે અનન્તરસિદ્ધ—કેવળજ્ઞાન છે. એ પંદર પ્રકારનું બતાવ્યું છે. તે પંદર ભેદ આ પ્રમાણે છે—જેનો આશ્રય લઈને જીવ અનન્ત સંસારને પાર કરી નાખે છે તે તીર્થ છે. આ તીર્થ યથાવસ્થિત સઘળા જીવા-દિકે પદાર્થોના યથાર્થ સ્વરૂપનું પ્રરૂપક જે પ્રવચન છે તત્સ્વરૂપ માનેલ છે. આ પ્રવચનના પ્રણેતા ૩૪ ચૌત્રીસ અતિશયોથી વિરાજમાન પરમશુરુ તીર્થ-

અતીર્થસિદ્ધાઃ=તીર્થસ્યાભાવોઽતીર્થ, તીર્થસ્યાભાવશ્ચ-અનુત્પત્તિરૂપઃ, અપા-  
ન્તરાલે વ્યવચ્છેદો વા, તસ્મિન્ યે સિદ્ધાસ્તેઽતીર્થસિદ્ધાઃ । તત્ર મરુદેવ્યાદયોઽતીર્થ-  
સિદ્ધા ઉચ્યન્તે, તદા તીર્થાનુત્પત્તેઃ । તથા તીર્થસ્ય વ્યવચ્છેદશ્ચન્દ્રપ્રભસ્વામિ-સુવિ-  
ધિસ્વામ્યપાન્તરાલે, તત્ર યે જાતિસ્મરણાદિના મોક્ષમાર્ગ પ્રાપ્ય સિદ્ધાસ્તેતીર્થવ્યવ-  
ચ્છેદસિદ્ધા અતીર્થસિદ્ધા ઉચ્યન્તે ૨ । તીર્થકરસિદ્ધાઃ-તીર્થકરા એવ ૩ । અતીર્થ-  
કરસિદ્ધા અન્યે સામાન્યકેવલિનઃ ૪ । સ્વયંબુદ્ધસિદ્ધાઃ-યે સ્વયમ્=આત્મનૈવ  
બુદ્ધાસ્તત્ત્વં જ્ઞાતવન્તઃ । પરોપદેશં વિના સમ્યગ્વરવોધિપ્રાપ્ત્યા મિથ્યાત્વનિદ્રાપગ-  
મેન સમ્યગ્વોધં પ્રાપ્તાસ્તે સ્વયંબુદ્ધાઃ, તથાવિધાઃ સન્તો યે સિદ્ધાસ્તે સ્વયંબુદ્ધ-

કર હોતે હૈં । યહ પ્રવચનરૂપ તીર્થ નિરાધાર નહીં હોતા હૈં । ઇસકે  
આધાર-યા તો ગણધર હોતે હૈં યા ચતુર્વિધ સંઘ હોતા હૈં । ઇસતીર્થ કે  
પ્રવૃત્ત હોને પર, અર્થાત્ તીર્થકર કે શાસનકાલ કે ચાલૂ રહને પર જો  
સિદ્ધ હોતે હૈં-નિર્વાણપદ પાતે હૈં-વે તીર્થસિદ્ધ હૈં । જૈસે વૃષભસેન ગણ-  
ધર આદિ ૧ ।

તીર્થ કા અભાવ-અનુત્પત્તિ અથવા અન્તરાલકાલ મેં તીર્થ કા  
વ્યવચ્છેદ અતીર્થ હૈં । ઇસ અતીર્થ મેં જો સિદ્ધ હુએ હૈં વે અતીર્થસિદ્ધ  
હૈં, જૈસે મરુદેવી આદિ । ઇન્કે સમય તીર્થ કી ઉત્પત્તિ નહીં થી । તથા  
તીર્થ કા વ્યવચ્છેદ ચન્દ્રપ્રભસ્વામી એવં સુવિધિ સ્વામી કે અન્તરાલ મેં  
હુઆ થા । એસે સમય મેં જો જાતિસ્મરણ આદિ કે દ્વારા મોક્ષમાર્ગ કો  
પ્રાપ્તકર સિદ્ધ હુએ હૈં વે તીર્થવ્યવચ્છેદસિદ્ધ અતીર્થસિદ્ધ કહે ગયે હૈં ૨ ।  
તીર્થકરસિદ્ધ તીર્થકર હી હૈં ૩ । સામાન્યકેવલી અતીર્થકરસિદ્ધ હૈં ૪ ।  
જો સ્વયં હી તત્ત્વોં કે જ્ઞાતા બને હૈં, અર્થાત્ પર કે ઉપદેશ વિના હી

કરેા હોય છે. આ પ્રવચનરૂપ તીર્થ નિરાધાર હોતું નથી. તેનો આધાર કાંતો  
ગણધરો હોય છે કે ચતુર્વિધ સંઘ હોય છે. આ તીર્થ પ્રવૃત્ત થતાં, એટલે કે  
તીર્થકરનો શાસનકાળ ચાલુ રહેતાં જે સિદ્ધો થાય છે-નિર્વાણપદ પામે છે.  
તેઓ તીર્થસિદ્ધ છે-જેવાં કે વૃષભસેન ગણધર વગેરે (૧). તીર્થનો અભાવ-અનુ-  
ત્પત્તિ અથવા વચગાળાના કાળમાં તીર્થનો વ્યવચ્છેદ અતીર્થ છે. આ અતીર્થમાં  
જે સિદ્ધ થયા તેઓ અતીર્થસિદ્ધ છે, જેવાં કે મરુદેવી વગેરે. તેમના સમયમાં  
તીર્થની ઉત્પત્તિ થઈ ન હતી. તથા તીર્થનો વ્યવચ્છેદ ચંદ્રપ્રભસ્વામી અને સુવિધિ-  
સ્વામીના વચગાળાના સમયમાં થયો હતો. એવા સમયમાં જેઓ જાતિસ્મરણ  
વગેરે દ્વારા મોક્ષમાર્ગને પ્રાપ્ત કરીને સિદ્ધ થયાં છે, તેમને તીર્થવ્યવચ્છેદસિદ્ધ  
અતીર્થસિદ્ધ કહેવાય છે (૨). તીર્થકરસિદ્ધ તીર્થકર જ છે (૩). સામાન્ય કેવળી  
અતીર્થકરસિદ્ધ છે (૪). જેઓ જાતે જ તત્ત્વોના જાણકાર બન્યાં છે, એટલે કે

સિદ્ધાઃ ૫ । પ્રત્યેકબુદ્ધસિદ્ધાઃ—યે તુ એકં કિંચિદનિત્યત્વાદિભાવનાકારણં  
વૃષભાદિકં પ્રતીત્ય બુદ્ધાઃ—પરમાર્થ જ્ઞાતવન્તસ્તે પ્રત્યેકબુદ્ધાઃ । યે પ્રત્યેકબુદ્ધાઃ  
સિદ્ધાસ્તે પ્રત્યેકબુદ્ધસિદ્ધાઃ ૬ ।

નનુ સ્વયંબુદ્ધ—પ્રત્યેકબુદ્ધાનાં કો ભેદઃ ?, ઉચ્યતે—બોધ્યુપાધિશ્રુતલિજ્જ-  
કૃતો ભેદસ્તત્રાસ્તિ । તથાહિ—સ્વયંબુદ્ધાનાં બાહ્યનિમિત્તં વિનૈવ નિજજાતિસ્મરણા-  
દિના બોધિરુપજાયતે, પ્રત્યેકબુદ્ધાનાં તુ બાહ્યનિમિત્તાપેક્ષયા બોધિઃ, શ્રૂયતે ચ—

જિન્હેં સમ્યક્ વરબોધિ કી પ્રાપ્તિ હુઈ હૈ, ઓર इसीके प्रभाव से जिन्होंने  
मिथ्यात्वरूप निद्रा का अभाव किया है, और इसी कारण जिन्हें सમ्यक्  
बोध प्राप्त हो चुका है वे स्वयंबुद्ध हैं । इस स्वयंबुद्ध अवस्था में  
जो सिद्ध हुए हैं वे स्वयंबुद्धसिद्ध हैं ५ । जो किसी अनित्यत्वादि भावना  
के कारणभूत बाह्य किसी वस्तु—वृषभ आदि का निमित्त पाकर बुद्ध हो  
जाते हैं—परमार्थ के ज्ञाता बन जाता हैं वे प्रत्येकबुद्ध हैं । जो प्रत्येक  
बुद्ध होकर सिद्ध बन जाते हैं वे प्रत्येकबुद्धसिद्ध हैं ६ ।

શંકા—સ્વયંબુદ્ધ ઓર પ્રત્યેકબુદ્ધ મેં કયા ભેદ હૈ ?

ઉત્તર—બોધિ, ઉપધિ, શ્રુત એવં લિજ્જ કી અપેક્ષા ભેદ રહતા હૈ ।  
જો સ્વયંબુદ્ધ હુઆ કરતે હૈં ઉન્હેં બાહ્ય નિમિત્ત કે વિના હી બોધિ પ્રાપ્ત  
હો જાતી હૈ । इसमें अन्तरंग निमित्त जातिस्मरण आदि पड़ते हैं । प्रत्येक  
बुद्धों में ऐसा नहीं होता है । उन्हें बोधि की प्राप्ति बाह्यनिमित्ताधीन

બીજાના ઉપદેશ વિના જ જેમને સમ્યગ્વરબોધિની પ્રાપ્તિ થઈ છે, અને તેનાજ  
પ્રભાવથી જેમણે મિથ્યાત્વરૂપ નિદ્રાનો નાશ કર્યો છે, અને એજ કારણે જેમને  
સમ્યક્ બોધ પ્રાપ્ત થઈ ગયો છે તેઓ સ્વયંબુદ્ધ છે. આ સ્વયંબુદ્ધ અવસ્થામાં  
જેઓ સિદ્ધ થયાં છે તેઓ સ્વયંબુદ્ધ સિદ્ધ છે (૫). જે કોઈ અનિત્યત્વાદિ ભાવનાના  
કારણભૂત કોઈ વસ્તુ—વૃષભ આદિનું નિમિત્ત મેળવીને બુદ્ધ થઈ જાય છે—પર-  
માર્થના જાણકાર બની જાય છે, તેઓ પ્રત્યેકબુદ્ધ છે. જેઓ પ્રત્યેકબુદ્ધ થઈને  
સિદ્ધ થાય છે તેઓ પ્રત્યેકબુદ્ધ સિદ્ધ છે (૬).

શંકા—સ્વયંબુદ્ધ અને પ્રત્યેકબુદ્ધ વચ્ચે શો તફાવત છે ?

ઉત્તર—બોધિ, ઉપધિ, શ્રુત અને લિંગની અપેક્ષાએ ભેદ રહે  
છે. જેઓ સ્વયંબુદ્ધ થાય છે તેમને બાહ્ય નિમિત્ત વિના જ બોધિ પ્રાપ્ત થઈ  
જાય છે. તેમાં અંતરંગ નિમિત્ત જાતિસ્મરણ આદિ હોય છે. “પ્રત્યેક બુદ્ધોમાં”  
એવું થતું નથી—તેમને બોધિની પ્રાપ્તિ બાહ્ય નિમિત્તાધીન હોય છે. કરકંદૂ

કરકણ્ડવાદીનાં પ્રત્યેકબુદ્ધાનાં વૌધિર્વાહ્યવૃષભાદિજ્ઞાનસાપેક્ષા । પ્રત્યેકબુદ્ધાશ્ચ  
બાહ્યનિમિત્તમપેક્ષ્ય બુદ્ધાઃ સન્તો નિ ચમતઃ પ્રત્યેકમેવ વિહરન્તિ, ન તુ ગચ્છવાસિન  
ઇવ સંહતાઃ । ઉપધિઃ સ્વયંબુદ્ધાનાં દ્વાદશવિધ એવ પાત્રાદિઃ । પ્રત્યેકબુદ્ધાનાં તુ  
દ્વિધા-જઘન્યતઉત્કર્ષતશ્ચ, તત્ર જઘન્યતો દ્વિવિધઃ, ઉત્કર્ષતો નવવિધઃ પ્રાવરણવર્જઃ ૬ ।

તથા—સ્વયંબુદ્ધાનાં પૂર્વાધીતં શ્રુતં ભવતિ વા, ન વા ભવતિ । યદિ ભવતિ,  
તતો લિઙ્ગં દેવતા વા પ્રયચ્છતિ, ગુરુસંનિધૌ ગત્વા વા પ્રતિપઘતે । યદિ ચૈકાકી  
વિહર્તું સમર્થઃ, ઇચ્છાઽપિ તાદૃશી ભવેત્, તદા એકાકી વિહરતિ, અન્યથા  
ગચ્છાવાસેઽવતિષ્ઠતે ।

હોતી હૈ । કરકણ્ડુ આદિ પ્રત્યેકબુદ્ધોં કે જીવનચરિત્ર મેં ઇસ વાત કા  
કથન મિલતા હૈ । પ્રત્યેકબુદ્ધ બાહ્ય નિમિત્ત કે પ્રભાવ સે બુદ્ધ હોકર  
નિયમતઃ પ્રત્યેક-અકેલે ૨ હી વિહાર કરતે હૈ—ગચ્છવાસી સાધુઓં કી  
તરહ સમુદાયરૂપ મેં નહીં । સ્વયંબુદ્ધોં કી ઉપધિ પાત્ર આદિ બાહર પ્રકાર  
કી હૈ । પ્રત્યેકબુદ્ધોં કી દો પ્રકાર કી ઉપધિ હોતી હૈ—પ્રથમ જઘન્ય કી  
અપેક્ષા ઔર દૂસરી ઉત્કૃષ્ટ કી અપેક્ષા । જઘન્ય કી અપેક્ષા ઇનકે દો  
પ્રકાર કી ઉપધિ હોતી હૈ, તથા ઉત્કર્ષ કી અપેક્ષા નૌ પ્રકાર કી । ઇસમેં  
પ્રાવરણ છૂટ જાતા હૈ ।

તથા સ્વયંબુદ્ધોં મેં જો શ્રુત હોતા હૈ વહ પૂર્વ મેં અધીત કિયા હુઆ  
ભી હોતા હૈ અથવા નહીં ભી હોતા હૈ । પૂર્વાધીતશ્રુત ઇનમેં જબ હોતા હૈ  
તબ ઇનકે લિયે વેષ કી પ્રાપ્તિ યા તો દેવતા સે હોતી હૈ યા વે સ્વયં ગુરુ  
કે નિકટ જાકર ઇનસે પ્રાપ્ત કર લિયા કરતે હૈ । ઇનમેં યદિ અકેલે

આદિ પ્રત્યેકબુદ્ધોના જીવનચરિત્રમાં આ વાતનો ઉલ્લેખ મળે છે. પ્રત્યેકબુદ્ધ  
બાહ્યનિમિત્તના પ્રભાવથી બુદ્ધ થઈને નિયમતઃ પ્રત્યેકએ કલા જ વિહાર કરે છે—  
ગચ્છવાસી સાધુઓની જેમ સમુદાયમાં નહીં. સ્વયંબુદ્ધોની ઉપધિ પાત્ર  
આદિ બાર પ્રકારની છે. પ્રત્યેક બુદ્ધોની ઉપધિ બે પ્રકારની હોય છે—પહેલી જઘ-  
ન્યની અપેક્ષાએ અને બીજી ઉત્કૃષ્ટની અપેક્ષાએ. જઘન્યની અપેક્ષાએ તેમને બે  
પ્રકારની ઉપધિ હોય છે, તથા ઉત્કૃષ્ટની અપેક્ષાએ નવ પ્રકારની. તેમાં પ્રાવરણ  
છૂટી જાય છે.

તથા સ્વયંબુદ્ધોમાં જે શ્રુત હોય છે તે પૂર્વે અધીત કરેલ પણ હોય  
છે અથવા નથી પણ હોતું. તેમનામાં જ્યારે પૂર્વાધીત શ્રુત થાય છે ત્યારે તેમને  
માટે વેષની પ્રાપ્તિ કાંતો દેવ વડે થાય છે કે તે જાતે જ ગુરુની પાસે જઈને  
તેમની પાસેથી મેળવી લે છે. તેમનામાં એકલા વિહાર કરવાની બે શક્તિ હોય

યદિ પૂર્વાધીતં શ્રુતં ન ભવતિ, તર્હિ નિયમાદ્ ગુરુસંનિધૌ ગત્વા લિંગં પ્રતિ-  
પદ્યતે, ગચ્છં વાઽવશ્યં ન મુશ્ચતિ ।

પ્રત્યેકબુદ્ધાનાં તુ પૂર્વાધીતં શ્રુતં નિયમતો ભવતિ, તત્ત્વ જઘન્યતઃ એકાદ-  
શાંગ્ગાનિ, ઉત્કર્ષતઃ કિંચિન્ન્યૂનાનિ દશ પૂર્વાણિ । તેભ્યો દેવતા લિંગં પ્રયચ્છતિ ।  
લિંગવર્જિતા વા કદાચિદ્ ભવન્તિ ૬ ।

બુદ્ધવોધિતસિદ્ધાઃ—બુદ્ધા=આચાર્યદયસ્તૈર્વોધિતાઃ સન્તો યે સિદ્ધાસ્તે તથા ૭ ।  
સ્ત્રીલિંગસિદ્ધાઃ ૮ । પુલિંગસિદ્ધાઃ ૯ । નપુંસકલિંગસિદ્ધાઃ ૧૦ । તથા

હોકર વિહાર કરને કી શક્તિ હોતી હૈ, ઓર ઇચ્છા મી યદિ હસી પ્રકાર  
કી ઇનકી હો તો યે અકેલે હી વિહાર કરતે હૈ, નહીં તો ગચ્છાવાસ મેં  
રહતે હૈ । ઇનકા શ્રુત જબ પૂર્વાધીત નહીં હોતા હૈ તો યે નિયમતઃ ગુરુ કે  
નિકટ જાકર સાધુવેષ અંગીકાર કરતે હૈ, ઓર ગચ્છ કો નહીં છોડતે હૈ ।

પ્રત્યેકબુદ્ધોં કા શ્રુત નિયમ સે પૂર્વાધીત હોતા હૈ । જઘન્ય સે  
યે ગ્યારહ અંગ પર્યન્ત પઢે હુણ હોતે હૈ, તથા ઉત્કૃષ્ટરૂપ સે કુછ કમ દશ  
પૂર્વતક । ઇનકે લિયે સાધુવેષ દેવતા પ્રદાન કરતે હૈ । અથવા યે કમી ૨  
સાધુવેષ સે વર્જિત મી રહતે હૈ । ૬ ।

બુદ્ધવોધિતસિદ્ધ વે હૈ કિ જિન્હેં આચાર્ય આદિ બોધ દેતે હૈ । ઓર  
અનસે પ્રતિવોધિત હોકર હી જો સિદ્ધ અવસ્થા પ્રાપ્ત કરતે હૈ ૭ । સ્ત્રી-  
લિંગ સે, પુલિંગ સે તથા નપુંસકલિંગ સે યુક્ત હોકર જો સિદ્ધ હોતે હૈ  
વે સ્ત્રીલિંગ પુલિંગ ઓર નપુંસકલિંગ, સિદ્ધ ૮-૯-૧૦ કહલાતે હૈ । સ્વલિંગ-

અને તેમની એવી ઈચ્છા પણ હોય તો તેઓ એકલા જ વિહાર કરે છે, નહીં  
તો ગચ્છવાસમાં રહે છે. જે તેમનું શ્રુત પૂર્વાધીત ન હોય તો તેઓ નિયમતઃ  
ગુરુની પાસે જઈને સાધુ-વેષ સ્વીકારે છે. અને ગચ્છને છોડતાં નથી.

પ્રત્યેકબુદ્ધોનાં શ્રુત નિયમથી જ પૂર્વાધીત હોય છે. જઘન્યથી તેઓ  
અગિયાર અંગ સુધી ભણેલ હોય છે અને ઉત્કૃષ્ટરૂપથી દશ પૂર્વથી કંઈક  
ઓછું ભણેલ હોય છે. તેમને માટે દેવ સાધુવેષ આપે છે. અથવા તેઓ  
ક્યારેક ક્યારેક સાધુવેષથી વર્જિત પણ રહે છે ॥૬॥

જેમને આચાર્ય વગેરે બોધ આપે છે, અને તેમના દ્વારા પ્રતિબોધિત  
થઈને જેઓ સિદ્ધ અવસ્થા પ્રાપ્ત કરે છે, તેઓ બુદ્ધબોધિત સિદ્ધ છે ॥૭॥

નારીજાતિ, નરજાતિ અને નાન્યેતર જાતિથી યુક્ત થઈને જે સિદ્ધ થાય  
છે તેઓ સ્ત્રીલિંગ, પુલિંગ અને નપુંસકલિંગ સિદ્ધ કહેવાય છે. ॥૮-૯-૧૦॥



સ્વલિંગસિદ્ધાઃ=સ્વલિંગ-જિનશાસનવેષઃ સદોરકમુખવસ્ત્રિકારજોહરણાદિરૂપસ્ત્ર-  
-તસ્મિન્ વેષે યે સિદ્ધાસ્તે સ્વલિંગસિદ્ધાઃ ૧૧ । અન્યલિંગસિદ્ધાઃ-પરિવ્રાજ-  
કાદિલિંગે સિદ્ધાઃ ૧૨ । ગૃહલિંગસિદ્ધાઃ ૧૩ । એકસિદ્ધાઃ-એકસ્મિન્ સમયે  
એકે એવ સિદ્ધાઃ । એવંભૂતા યે સિદ્ધાસ્તે એકસિદ્ધાઃ ૧૪ । અનેકસિદ્ધાઃ  
એકસ્મિન્ સમયે અનેકે સિધ્ધ્યન્તિ સ્મ, તે અનેકસિદ્ધાઃ ૧૫ । ઉત્કર્ષતોઽષ્ટોત્તર-  
શતસંખ્યકા સિદ્ધા ભવન્તિ । ઉક્તञ્ચ—

વત્તીસા અડયાલા, સટ્ટી વાવત્તરી ય વોદ્ધવ્વા ।

ચુલસીઈ છન્નર્ડ, દુરહિય અટ્ટુત્તર સયં ચ ॥ ૧ ॥ ૧૫ ॥

સિદ્ધ વે છે કે જિનકે પાસ જિનશાસનકથિત મુનિવેષ હોતા છે, જૈસે-  
સદોરકમુખવસ્ત્રિકા કા હોના, રજોહરણ આદિ કા હોના । હસ વેષ  
મેં રહકર જો સિદ્ધિ પ્રાપ્ત કરતે છે ૧૧ । પરિવ્રાજક આદિ કે વેષ મેં  
રહકર જો સિદ્ધ હોતે છે વે અન્યલિંગસિદ્ધ કહલાતે છે ૧૨ । ગૃહી કે  
લિંગ મેં-ગૃહસ્થ કી પર્યાય મેં-રહકર હી સિદ્ધ જો હોતે છે વે ગૃહલિંગસિદ્ધ  
છે ૧૩ । તથા એક સમય મેં જો એક હી જો સિદ્ધ હોતે છે વે એકસિદ્ધ કહે  
ગયે છે ૧૪ । એક સમય મેં અનેક સિદ્ધ હોતે છે વે અનેક સિદ્ધ છે ૧૫ ।  
અનેકસિદ્ધ ઉત્કૃષ્ટ કી અપેક્ષા એક સમય મેં એક સૌ આઠ (૧૦૮)  
હોતે છે, કહા મી છે—

“વત્તીસા અડયાલા, સટ્ટી વાવત્તરી ય વોદ્ધવ્વા ।

ચુલસીઈ છન્નર્ડ, દુરહિય અટ્ટુત્તર સયં ચ” ॥૧॥

જેમની પાસે જિન શાસન કથિત મુનિવેષ હોય છે—જેમકે દોરા સાથેની  
મુહપત્તિ, રજોહરણ આદિનું હોવું—તેમને સ્વલિંગ સિદ્ધ કહે છે. આ વેષમાં  
રહીને જે સિદ્ધિ પ્રાપ્ત કરે છે તે સ્વલિંગ સિદ્ધ છે ॥૧૧॥ પરિવ્રાજક આદિના  
વેષમાં રહીને જે સિદ્ધ થાય છે તે અન્યલિંગ સિદ્ધ કહેવાય છે. ॥૧૨॥ ગૃહીનાં  
લિંગમાં-ગૃહસ્થની પર્યાયમાં-રહીને જ જે સિદ્ધ થાય છે તેઓ ગૃહીલિંગ સિદ્ધ  
છે ॥૧૩॥ તથા એક સમયમાં જે એકજ સિદ્ધ થાય છે તેઓ એકસિદ્ધ કહેવાય  
છે ॥૧૪॥ એક સમયમાં અનેક સિદ્ધ થાય છે તેઓ અનેકસિદ્ધ છે ॥૧૫॥  
અનેકસિદ્ધ ઉત્કૃષ્ટની અપેક્ષાએ એક સમયમાં એકસો આઠ (૧૦૮) થાય છે.  
કહેલ પણ છે—

“વત્તીસા અડયાલા, સટ્ટી વાવત્તરી ય વોદ્ધવ્વા ।

ચુલસીઈ છન્નર્ડ, દુરહિય અટ્ટુત્તર સયં ચ” ॥૧॥



છાયા—દ્વાત્રિંશત્ અષ્ટચત્વારિંશત્, ષષ્ઠિઃ દ્વાસપ્તતિશ્ચ વોદ્ધવ્યા ।

ચતુરશીતિઃ ષણ્ણવતિઃ, દ્વયધિકં ( દ્વયધિકશતં ) અષ્ટોત્તરં શતં ચ ॥૧॥

વ્યાખ્યા—પ્રથમસમયે જઘન્યત એકો દ્વૌ વા, ઉત્કર્ષતો દ્વાત્રિંશત્ સિધ્યન્તઃ ગ્રાપ્યન્તે । દ્વિતીયસમયે જઘન્યત એકો દ્વૌ વા, ઉત્કર્ષતો દ્વાત્રિંશત્ । એવં તૃતીય-સમયેઽપિ । એવં ચતુર્થસમયેઽપિ । એવં યાવદષ્ટમેઽપિ સમયે જઘન્યત એકો દ્વૌ વા ઉત્કર્ષતો દ્વાત્રિંશત્ । તતઃ પરમવશ્યમન્તરમ્ ।

તથા—ત્રયહિંશદાદય ઉત્કર્ષતોઽષ્ટચત્વારિંશત્પર્યન્તાઃ નિરન્તરં સિધ્યન્તઃ સપ્ત સમયાન્ યાવત્ પ્રાપ્યન્તે । તથાહિ—પ્રથમસમયે જઘન્યતસ્ત્રયત્રિંશચતુત્રિંશદ્ વા, ઉત્કર્ષતોઽષ્ટચત્વારિંશત્ સિધ્યન્તઃ ગ્રાપ્યન્તે, ઇતિ રીત્યા સપ્તમસમયાવધિ ભાવના કાર્યા

તથા—एकोनपञ्चादशदादय उत्कर्षतः षष्टिपर्यन्ता निरन्तरं सिध्यन्त षट्सम-  
मयान् यावदवाप्यन्ते । परतोऽवश्यमन्तरम् । तथा—एकषष्ट्यादय उत्कर्षतो द्विस-  
प्ततिपर्यन्ता निरन्तरं सिध्यन्तः—पञ्चसमयान् यावदवाप्यन्ते । ततः परमन्तरम् ।

પ્રથમ સમય મેં જઘન્ય સે એક યા દો જીવ, તથા ઉત્કૃષ્ટ સે બત્તીસ જીવ સિદ્ધ હોતે હૈં । દ્વિતીય સમય મેં ભી જઘન્ય સે એક યા દો જીવ, તથા ઉત્કૃષ્ટ સે બત્તીસ જીવ સિદ્ધ હોતે હૈં । હસી તરહ તૃતીય, ચતુર્થ, પંચમ, ષષ્ઠ, સપ્તમ ઓર અષ્ટમ સમય મેં ભી જઘન્ય ઓર ઉત્કૃષ્ટ કી અપેક્ષા સિદ્ધ હોનેવાલે જીવોં કા પ્રમાણ જાનના ચાહિયે । હસકે બાદ નિયમતઃ અન્તર હો જાતા હૈ । તથા તેતીસ સે લેકર ઉત્કૃષ્ટ અડતાલીસ પર્યન્ત જીવ નિરન્તર સિદ્ધ હોતે રહતે હૈં, ઓર યે સાત સમય તક સિદ્ધ હોતે હૈં । જૈસે—પ્રથમ સમય મેં જઘન્ય સે તેતીસ અથવા ચોતીસ, ઉત્કર્ષ સે અડતાલીસ સિદ્ધ હોતે હૈં, હસ રીતિ સે સાત સમય પર્યન્ત ભાવના કર લેની ચાહિયે । બાદમેં નિયમતઃ અન્તર હો જાતા હૈ । તથા

પ્રથમ સમયમાં જઘન્યથી એક કે બે જીવ, તથા ઉત્કૃષ્ટથી બત્તીસ જીવ સિદ્ધ થાય છે. બીજા સમયમાં પણ જઘન્યથી એક કે બે જીવ અને ઉત્કૃષ્ટથી બત્તીસ જીવ સિદ્ધ થાય છે. એજ પ્રમાણે ત્રીજા, ચોથા, પાંચમાં, છઠ્ઠાં, સાતમાં, અને આઠમાં સમયમાં જઘન્ય અને ઉત્કૃષ્ટની અપેક્ષાએ સિદ્ધ થનાર જીવોનું પ્રમાણ બીજુલું બેઠાયે. ત્યાર પછી નિયમથી જ અંતર પડી જાય છે. તથા તેત્રીસથી લઈને ઉત્કૃષ્ટ અડતાલીસ સુધી જીવ નિરંતર સિદ્ધ થતાં રહે છે, અને એ સાત સમય સુધી સિદ્ધ હોય છે. જેમકે પ્રથમ સમયમાં જઘન્યથી તેત્રીસ અથવા ચોત્રીસ, ઉત્કૃષ્ટથી અડતાલીસ સિદ્ધ હોય છે, આ રીતે સાત સમય સુધી સમજી લેવું બેઠાયે. પછી નિયમથી અંતર પડી જાય છે. તથા આગળ-

તથા—ત્રિસપ્તત્યાદય ઉત્કર્ષતશ્ચતુરશીતિપર્યન્તા નિરન્તરં સિધ્યન્તશ્ચતુરઃ સમયાન્ યાવત્ પ્રાપ્યન્તે । તત ઝર્ધ્વમન્તરમ્ । તથા—પચ્ચાશીત્યાદય ઉત્કર્ષતઃ ષણ્ણવતિપર્યન્તા નિરન્તરં સિધ્યન્તસ્ત્રીન્ સમયાન્ યાવદવાપ્યન્તે । પરતોઽવશ્યમન્તરમ્ ।

તથા—સપ્તનવત્યાદય ઉત્કર્ષતો દ્વ્યુત્તરશતપર્યન્તા નિરન્તરં સિધ્યન્તો દ્વૌ સમયૌ યાવદવાપ્યન્તે । પરતો નિયમાદન્તરમ્ ।

તથા—ત્ર્યુત્તરશતાદય ઉત્કર્ષતોઽષ્ટોત્તરશતપર્યાન્તાઃ સિધ્યન્તો નિયમાદેકમેવં સમયં યાવદવાપ્યન્તે, ન તુ દ્વિત્રાદિસમયાનિતિ ૧૫ ।

અનુચાસ ૪૯ સે લેકર ઉત્કૃષ્ટ સાઠ જીવોં તક નિરન્તર સિદ્ધ હોતે હૈં । યે છહ સમય તક સિદ્ધ હોતે હૈં । ઇસકે બાદ અન્તર અવશ્ય હો જાતા હૈં । તથા ઇકસઠ ૬૧ સે લેકર ઉત્કૃષ્ટ બહત્તર ૭૨ જીવ નિરન્તર સિદ્ધ હોતે હૈં, યે પાંચ સમય તક સિદ્ધ હોતે હૈં, બાદ મેં નિયમ સે અન્તર પડ જાતા હૈં । તથા તેહત્તર ૭૩ સે લગાકર ઉત્કૃષ્ટ ચોરાસી ૮૪ જીવ નિરન્તર સિદ્ધ હોતે હૈં, યે પાંચ સમયોં તક પાયે જાતે હૈં । ઇસકે બાદ નિયમતઃ અન્તર હો જાતા હૈં । પચાસી ૮૫ સે લેકર ઉત્કૃષ્ટ છયાનવે તક જીવ નિરન્તર સિદ્ધ હોતે હૈં । યે ત્રીન સમય તક પાયે જાતે હૈં । ઇસકે બાદ અન્તર હો જાતા હૈં । સન્તાનવે ૯૭ સે લેકર ઉત્કૃષ્ટ એકસૌ દો ૧૦૨ તક નિરન્તર સિદ્ધ હોતે હૈં, યે દો સમયોં તક પાયે જાતે હૈં । ઇસકે બાદ અન્તર પડજાતા હૈં । એકસૌ ત્રીન ૧૦૩ સે લેકર ઉત્કૃષ્ટ એકસૌ આઠ ૧૦૮ તક સિદ્ધ હોતે હૈં, યે એક હી સમય તક પાયે જાતે હૈં, દો ત્રીન આદિ સમય તક નહીં । ઇસ પ્રકાર ઇસ ગાથા કા અર્થ હૈં ।

પચાસ (૪૯) થી લઈને ઉત્કૃષ્ટ સાઠ જીવો સુધી નિરંતર સિદ્ધ હોય છે એ છ સમય સુધી સિદ્ધ થાય છે, ત્યાર બાદ અંતર અવશ્ય પડી જાય છે. તથા એકસઠ (૬૧) થી લઈને ઉત્કૃષ્ટ બોતેર (૭૨) જીવ નિરંતર સિદ્ધ થાય છે. તેઓ પાંચ સમય સુધી સિદ્ધ થાય છે, પછી નિયમથી અંતર પડી જાય છે. તથા તોતેર (૭૩) થી લઈને ઉત્કૃષ્ટ ચોરાસી (૮૪) નિરંતર સિદ્ધ થાય છે. એ પાંચ સમયો સુધી પ્રાપ્ત થાય છે. ત્યાર બાદ નિયમથી અંતર પડી જાય છે. પચાસી (૮૫) થી લઈને ઉત્કૃષ્ટ છાનવે (૯૬) સુધી જીવ નિરંતર સિદ્ધ થાય છે. તે ત્રણ સમય સુધી પ્રાપ્ત થાય છે. ત્યાર બાદ અંતર પડી જાય છે. સત્તાજીવો (૯૭) લઈને ઉત્કૃષ્ટ એકસો બે (૧૦૨) સુધી નિરન્તર સિદ્ધ થાય છે. તે બે સમયો સુધી પ્રાપ્ત થાય છે. ત્યાર બાદ અંતર પડી જાય છે. એકસો ત્રણ (૧૦૩) થી લઈને ઉત્કૃષ્ટ એકસો આઠ (૧૦૮) સુધી સિદ્ધ થાય છે, એ એક જ સમય સુધી પ્રાપ્ત થાય છે, બે ત્રણ આદિ સમય સુધી નહીં. આ પ્રમાણે આ ગાથાનો અર્થ છે.

## સ્ત્રીમોક્ષસમર્થન—

इह स्त्रीलिङ्गसिद्धा इति यदुक्तं, तत् केचिन्न मन्यन्ते । एवं हि ते प्रलपन्ति—‘स्त्रीणां न मोक्षः, पुरुषेभ्यो हीनत्वात्, नपुंसकादिवत्’ इति ।

अत्र ब्रूमः—सामान्येनात्र धर्मित्वेनोपात्ताः स्त्रियो विवादास्पदीभूता वा ? । आद्यपक्षे पक्षैकदेशसिद्धसाध्यता, असंख्यातवर्षायुष्कदुःषमादिकालोत्पन्न तिरश्ची-  
-देव्य-भव्यादिस्त्रीणां भूयसीनामस्माभिरपि मोक्षाभावस्याभिधानात्, द्वितीये

## સ્ત્રીમોક્ષસમર્થન—

यहां पर “स्त्रीलिङ्गसिद्धाः” यह जो कहा है इस बात को कई एक नहीं मानते हैं, वे इस प्रकार कहते हैं—‘स्त्रियों को मुक्ति नहीं होती है, कारण कि वे पुरुष की अपेक्षा हीन हैं, जैसे नपुंसक आदि’ । इसपर यह पूछना है कि आप किन स्त्रियों में मोक्ष का अभाव सिद्ध करते हैं ? क्या सामान्य स्त्रियों में, अथवा किन्हीं विशेष स्त्रियों में ? । यदि सामान्य स्त्रियों में मुक्तिप्राप्ति का अभाव आप सिद्ध करते हो तो यह बात हम भी मानते हैं कि असंख्यात वर्षकी आयुवाली अकर्म-भूमिज स्त्रियों को, दुष्पमादिकालोत्पन्न तिर्यश्चनियों को, एवं देवियों को, तथा अभव्य स्त्रियों को मुक्ति प्राप्त नहीं होती है, अतः पक्षैकदेश में यह हेतु सिद्धसाध्यवाला होने से यदि कहो कि कोई विशिष्ट स्त्रियां मुक्ति प्राप्ति के योग्य नहीं हैं तो यह बात पक्षभूत स्त्रीपद से ज्ञात नहीं

## સ્ત્રીમોક્ષસમર્થન—

અહીં આગળ “સ્ત્રીલિંગસિદ્ધાઃ” આમ જે કહેલ છે એ વાતને કેટલાક માનતા નથી, તેઓ આ પ્રમાણે કહે છે—“સ્ત્રીઓને મુક્તિ મળતી નથી, કારણ કે તેઓ પુરુષો કરતાં હીન છે. જેમ નપુંસક આદિ ” આ બાબતમાં એ પૂછવાનું છે કે આપ કઈ સ્ત્રીઓને મોક્ષ નથી મળતો એમ સિદ્ધ કરો છો ? શું સામાન્ય સ્ત્રીઓને કે કોઈ વિશિષ્ટ સ્ત્રીઓને ? . જો સામાન્ય સ્ત્રીઓને મુક્તિ પ્રાપ્ત થતી નથી એવું આપ સિદ્ધ કરતા હો તો એ વાત અમે પણ માનીએ છીએ કે અસંખ્યાત વર્ષના આયુવાળી અકર્મભૂમિજ સ્ત્રીઓને, દુષ્પમાદિ કાલોત્પન્ન તિર્યંચનિયોને અને દેવીઓને તથા અભવ્ય સ્ત્રીઓને મુક્તિ પ્રાપ્ત થતી નથી. તેથી પક્ષેકદેશમાં આ હેતુ સિદ્ધસાધ્યવાળો હોવાથી જો આપ કહો કે કોઈ વિશિષ્ટ સ્ત્રીઓ મુક્તિ પ્રાપ્ત કરવાને યોગ્ય નથી તો એ વાત પક્ષભૂત

તુ ન્યૂનતા પક્ષસ્ય, વિવાદાસ્પદીભૂતેતિ વિશેષણં વિના નિયતસ્ત્રીલાભાભાવાત્ ।  
યદિ તદુપાદીયતે, તદા તત્પ્રતિબોધાર્થં કિંચિદુચ્યતે—સ્ત્રિયો મુક્ત્યર્હાઃ, મુક્તિ-  
કારણાઽવૈકલ્યાત્, યથા પુમાંસઃ, યત્ર હિ યસ્ય નાસ્તિ સંભવસ્તત્ર તત્કારણવૈકલ્યં,  
યથા સિદ્ધશિલાયાં શાલ્યઙ્કુરસ્ય । ઇમાસ્તુ મુક્તિકારણવૈકલ્યરહિતાઃ, તસ્મા-  
ન્મુક્ત્યર્હા ઇતિ ।

હો સકતી હૈ, અતઃ ઇસ બાત કો સ્પષ્ટ કરને કે લિયે યદિ એસા કહા  
જાય કિ હમ ઉન્હેં હી મુક્તિ કી પ્રાપ્તિ નિષિદ્ધ કરતે હૈં જિન્હેં આપ મુક્તિ  
પ્રાપ્તિ કે યોગ્ય ગિનતે હો, તો ઇસ પર ભી હમારા યહી કહના હૈ કિ  
જિન્હેં તુમ મુક્તિપ્રાપ્તિ કે યોગ્ય નહીં કહતે હો ઉન્હેં હી હમ ઇસ પ્રકાર  
સે મુક્તિપ્રાપ્તિ કે યોગ્ય સિદ્ધ કરતે હૈં—“સ્ત્રિયો મુક્ત્યર્હાઃ, મુક્તિકાર-  
ણાવૈકલ્યાત્, યથા પુમાંસઃ” જૈસે પુરુષોં મેં મુક્તિ કે કારણોં કી અવિ-  
કલતા દેખી જાતી હૈ ઉસી પ્રકાર સે સ્ત્રિયોં મેં ભી મુક્તિ કે કારણોં કી  
અવિકલતા હોને સે વે ભી મુક્તિપ્રાપ્તિ કે યોગ્ય હૈં । જહાં પર જિસકી  
સંભવતા નહીં હોતી હૈ વહીં પર ઉસકે કારણોં કી વિકલતા રહતી હૈ,  
જૈસે સિદ્ધશિલા મેં શાલ્યઙ્કુર કી સંભવતા નહીં હૈ, અતઃ વહાં પર ઉસકે  
કારણોં કી ભી વિકલતા હૈ, પરન્તુ વિવક્ષિત સ્ત્રિયાં એસી નહીં હૈં,  
ઉનમેં તો મુક્તિ કે સબ કારણોં કા સદ્ભાવ હૈ, અતઃ વે મુક્તિ કે યોગ્ય

સ્રીપદ્મથી જાણી શકાતી નથી, તેથી આ વાતને સ્પષ્ટ કરવાને માટે જો એમ  
કહેવામાં આવે કે એમ તેમને જ મુક્તિની પ્રાપ્તિ નિષિદ્ધ કરીએ છીએ જેને  
તમે મુક્તિપ્રાપ્તિને યોગ્ય ગણો છો, તો એ બાળતમાં પણ અમારૂં એજ  
કહેવું છે કે જેમને તમે મુક્તિપ્રાપ્તિને યોગ્ય કહેતા નથી તેમને જ એમ આ  
રીતે મુક્તિ પ્રાપ્ત કરવાને લાયક સિદ્ધ કરીએ છીએ—“સ્ત્રિયો મુક્ત્યર્હાઃ,  
મુક્તિકારણવૈકલ્યાત્ યથા પુમાંસઃ” જેમ પુરુષોમાં મુક્તિનાં કારણોની અવિ-  
કલતા જોવામાં આવે છે તેમ સ્ત્રીઓમાં પણ મુક્તિનાં કારણોની અવિકલતા  
હોવાથી તેઓ પણ મુક્તિ પ્રાપ્ત કરવાને યોગ્ય છે. જ્યાં જેની સંભવતા હોતી  
નથી ત્યાંજ તેના કારણોની વિકલતા રહે છે, જેમ સિદ્ધશિલામાં શાલ્યઙ્કુરની  
સંભવતા હોતી નથી તેથી ત્યાં આગળ તેનાં કારણોની પણ વિકલતા છે, પણ  
વિવક્ષિત સ્ત્રીઓ એવી નથી, તેમનામાં તો મુક્તિનાં બધા કારણોનો સદ્ભાવ છે  
તેથી તેઓ મુક્તિને યોગ્ય છે. જો આ વિષે ફરી પણ એવું જ કહેવાય કે

નનુ સ્ત્રીષુ મુક્તિકારણાનામસદ્ભાવત્ તત્રાયં હેતુર્નાસ્તીત્યસિદ્ધોઽયં હેતુરિતિ ચેત્ ?  
 ઉચ્યતે—ઉક્તહેતોરસિદ્ધત્વં વદસિ, તત્ કિં સ્ત્રીणां પુરુષેભ્યોઽપકૃષ્ટત્વેન ૧,  
 કિમુત નિર્વાણસ્થાનાઘપ્રસિધ્ધત્વેન ૨, કિં વા મુક્તિસાધકપ્રમાણાભાવેન ૩ ?

તત્ર યદિ તાવત્ પુરુષેભ્યોઽપકૃષ્ટત્વેન સ્ત્રીષુ મુક્તિકારણાનામસદ્ભાવ इति વદસિ,  
 તર્હિં इदं ब्रूहि—ત્વદક્ષીકૃતં પુરુષેભ્યોઽપકૃષ્ટત્વં સ્ત્રીષુ કિં સમ્યગ્દર્શનાદિરત્નત્રયાભા-  
 વેન ૧, કિં વા વિશિષ્ટસામર્થ્યાભાવેન ૨, કિં વા પુરુષાનભિવન્ધ્યત્વેન ૩, કિં વા  
 સ્મરણાઘકર્તૃત્વેન ૪, કિં વા અમહર્દિકત્વેન ૫, કિમુત માયાદિપ્રકર્ષવચ્ચેન ૬,  
 इति विकल्पाः ।

हैं । यदि इस पर फिर भी ऐसा ही कहा जावे कि स्त्रियों में मुक्ति के कारणों की असद्भावता है अतः उनमें इस हेतु के असद्भाव से हेतु में असिद्धता आती है, सो ऐसा कहना भी ठीक नहीं है, कारण कि हमारा इस पर ऐसा पूछना है कि आप जो स्त्रियों में इस हेतु की असिद्धता प्रकट कर रहे हो सो किस कारण से ? क्या वे पुरुषों की अपेक्षा हीन हैं इसलिये, अथवा निर्वाणरूप स्थान की अप्रसिद्धि है इसलिये, या मुक्ति के साधक प्रमाण नहीं है इसलिये ? । यदि ऐसा कहा जाय कि स्त्रियां पुरुषों की अपेक्षा हीन हैं इसलिये उनमें मुक्ति के कारणों का सद्भाव नहीं है सो पुनः इसपर हम यह पूछते हैं कि आप जिन स्त्रियों को पुरुषों की अपेक्षा हीन बतलाते हैं वह किस कारण से बतलाते हैं ?, क्या उनमें सम्यग्दर्शनादिकरूप जो रत्नत्रय है उसका अभाव रहता है ? १, या उनमें विशिष्ट सामर्थ्य का अभाव है ? २, अथवा वे पुरुषों द्वारा

સ્ત્રીઓમાં મુક્તિનાં કારણોની અસદ્ભાવતા છે તેથી તેમનામાં તે હેતુના અસદ્-  
 ભાવથી હેતુમાં અસિદ્ધતા આવે છે તો એમ કહેવું તે પણ સાચું નથી, કારણ  
 કે અમારે એ બાબતમાં એવું પૂછવાનું છે કે આપ સ્ત્રીઓમાં આ હેતુની જે  
 અસિદ્ધતા પ્રગટ કરી રહ્યાં છો તે કયા કારણે ? શું તેઓ પુરુષો કરતાં હીન છે  
 તેથી, અથવા નિર્વાણરૂપ સ્થાનની અપ્રસિદ્ધિ છે તેથી, કે મુક્તિના સાધક પ્રમાણ  
 નથી તેથી ? ને એમ કહેવામાં આવે કે સ્ત્રીઓ પુરુષો કરતાં હીન છે તેથી  
 તેમનામાં મુક્તિનાં કારણોનો સદ્ભાવ નથી તો ફરી તે વિષે અમારો એ પ્રશ્ન  
 છે કે આપ જે સ્ત્રીઓને પુરુષો કરતાં હીન બતાવો છો તે શા કારણે બતાવો છો ?  
 (૧) શું તેમનામાં સમ્યગ્દર્શનાદિક રૂપ જે રત્નત્રય છે તેનો અભાવ રહેલ  
 છે ? કે (૨) શું તેમનામાં વિશિષ્ટ સામર્થ્યનો અભાવ છે ? (૩) અથવા તેઓ  
 પુરુષો દ્વારા અવધ છે ? કે સ્મરણ આદિ જ્ઞાન તેમનામાં રહેતું નથી ? (૫)

तत्र यदुच्यते स्त्रीषु रत्नत्रयाभाव इति तदयुक्तम्-सम्यग्दर्शनादीनि पुरुषाणामिव स्त्रीणा मप्यविकलानि दृश्यन्ते । तथाहि-दृश्यन्ते स्त्रियोऽपि सकलमपि प्रवचनार्थं श्रद्धाणाः, जानते च षडावश्यककालिकोत्कालिकादिभेदभिन्नं श्रुतम्, परिपालयन्ति सप्तदशविधं संयमम्, धारयन्ति च देवासुराणामपि दुर्धरं ब्रह्मचर्यम्, तप्यन्ते च तपांसि मासक्षपणादीनि ततः कथमिव न तासां मोक्षसंभवः । किं च-स्त्रीषु रत्नत्रयाभाव इति यदुच्यते, तत् किं रत्नत्रयस्य अवशिष्टस्य तत्राभावो विवक्षितः, किं वा प्रकर्षपर्यन्तप्राप्तस्य रत्नत्रयस्य तत्राभावः ? ।

अवश्य हैं ? ३, या स्मरण आदि ज्ञान उनमें नहीं रहता है ? ४, या उनमें कोई स्त्री महर्द्धिक नहीं है ? ५, अथवा मायादिक की उनमें प्रकर्षता पाई जाती है ? ६ । यदि इन छह विकल्पों में से यह विकल्प माना जाय कि स्त्रियों में रत्नत्रय का अभाव है अतः उनमें पुरुषों की अपेक्षा हीनता है सो ऐसा कहना युक्तियुक्त नहीं माना जाता है, क्योंकि कि सम्यग्दर्शनादिक रत्नत्रय पुरुषों की तरह उनमें भी अविकल देखे जाते हैं । स्त्रियां भी सकल प्रवचन के अर्थ की श्रद्धा करनेवाली, षडावश्यक कालिक उत्कालिक आदि के भेद से भिन्न श्रुत को जानने वाली, तथा सत्रह प्रकार के संयम को पालने वाली देखी जाती है । देव और असुरों द्वारा भी दुर्धर ऐसा ब्रह्मचर्य व्रत वे पालती हैं । मासक्षपण आदि विविध प्रकार की तपस्या वे करती हैं, इसलिये उनमें मुक्ति का संभव कैसे नहीं हो सकता है ? । तथा आप जो स्त्रियों में रत्नत्रय का अभाव कहते हो सो इनमें रत्नत्रय का अभाव कैसे विवक्षित है ?, क्या सामा-

के तेઓમાંથી કોઈ સ્ત્રી મહર્દિક નથી ? (૬) અથવા માયાદિકની તેમનામાં અધિકતા હોય છે ? . જો આ છ વિકલ્પોમાંથી આ વિકલ્પ માની લઈએ કે સ્ત્રીઓમાં રત્નત્રયનો અભાવ છે તેથી તેમનામાં પુરુષો કરતાં હીનતા છે, તો એમ કહેવું તે યુક્તિ યુક્ત માની શકાય નહીં કારણ કે સમ્યક્દર્શનાદિક રત્નત્રય પુરુષોની જેમ તેમનામાં પણ અવિકલ નજરે પડે છે. સ્ત્રીઓ પણ સકળ પ્રવચનના અર્થની શ્રદ્ધા કરનારી છ આવશ્યક કાલિક-ઉત્કાલિક આદિના ભેદથી શ્રુતને જાણનારી, તથા સત્તર પ્રકારના સંયમને પાળનારી જેવામાં આવે છે. દેવ અને અસુરો વડે પણ દુર્ધર એવું બ્રહ્મચર્યવ્રત તેઓ પાળે છે, માસક્ષપણ આદિ વિવિધ પ્રકારની તપસ્યા તેઓ કરે છે, તો પછી તેમનામાં યુક્તિનો સંભવ કેવી રીતે હોઈ શકે નહીં ?, તથા આપ જો સ્ત્રીઓમાં રત્નત્રયનો અભાવ કહેતા હો તો તેમનામાં રત્નત્રયનો અભાવ કેવી રીતે વિવક્ષિત છે, શું સામાન્યરૂપ રત્ન-



तत्र यदि अवशिष्टस्य रत्नत्रयस्य स्त्रीषु अभाव इत्युच्यते भवता, तर्हि कथय, अयं रत्नत्रयाभावश्चारित्रासंभवात् किम् ? उत ज्ञानदर्शनयोर्द्वयोरभावात् ? , किं वा सम्यग्दर्शनादीनां त्रयाणामभावात् ? ।

अथ—चारित्रासंभवेन रत्नत्रयाभाव इति पक्षस्य निराकरणम्—तत्र—यदि चारित्रस्या संभवाद् रत्नत्रयाभावो विवक्षितस्तर्हि सोऽपि चारित्रासंभवः किं सचेलत्वेन ? १, किं वा स्त्रीत्वस्यचारित्र विरोधित्वेन ? २, किं वा मन्दसत्त्वतया ? ३,

॥ चैलस्य चारित्राभावहेतुत्वनिराकरणम्—

तत्र यदि सचेलत्वेन चारित्रासंभव इत्युच्यते भवता, तर्हि तावत् कथय त्व-दङ्गीकृतमिदं चैलस्यापि चारित्राभाव हेतुत्वं किं चैलस्य परिभोगमात्रेण भवति ? १, किं वा चैलस्य परिग्रहरूपत्वेन ? २, ।

न्यरूप रत्नत्रय का अथवा प्रकर्षपर्यन्तप्राप्त रत्नत्रय का ? । यदि प्रथम पक्ष स्वीकार किया जाय तो हम इस पर पुनः यह पूछते हैं कि सामान्यतया रत्नत्रय का अभाव चारित्र के अभाव से कहते हो ? अथवा ज्ञानदर्शन, दोनों के अभाव से कहते हो ? अथवा सम्यग्दर्शनादिक तीनों के अभाव से कहते हो ? ।

यदि कहो कि चारित्र के असंभव से रत्नत्रय का अभाव है, ऐसा हम कहते हैं सो इसपर पुनः यह विकल्प होता है कि उनमें चारित्र की असंभवता क्या सवस्त्र होने से आती है ? या स्त्रीपने के चारित्र विरोधी होने से आती है ? अथवा मन्दसामर्थ्य होने की वजह से आती है ? । यदि कहा जाय कि वे वस्त्रसहित रहती हैं इसलिये उनमें चारित्र की असंभवता है सो क्या वस्त्र के परिभोगमात्र से चारित्राभाव के प्रति

त्रयनो के प्रकर्षपर्यन्तप्राप्त रत्नत्रयनो ? ने पड़ेतो पक्ष स्वीकारवामां आवे तो अमे ते भावतमां अे प्रश्न पूछीअे छीअे के सामान्यरीते रत्नत्रयनो अलाव अरित्रना अलावथी कडो छो अथवा ज्ञानदर्शन अे अन्नेना अलावथी कडो छो ? अथवा सम्यग्दर्शनादिक त्रयेना अलावथी कडो छो ?

ने आय अेम कडेता छो के अरित्रना असंभवथी रत्नत्रयनो अलाव छे अेषुं अमे कडीअे छीअे तो ते भावतमां वणी अे विकल्प डोय छे के तेम-नामां अरित्रनी असंभवता शुं सवस्त्र डोवाथी आवे छे ? के स्त्रीपणुं अरित्रनुं विरोधी डोवाथी आवे छे ? अथवा मंद सामर्थ्य डोवाने कारणे आवे छे ? ने अेम कडेवामां आवे के तेओ वस्त्रसहित रहे छे तेथी तेमनामां अरित्रनी असं-भवता छे तो शुं वस्त्रना परिभोगमात्रथी अरित्राभाव तरङ्ग डेतुता डोय छे ?



તત્ર યદિ પરિભોગમાત્રેણ ચૈલં ચારિત્રાભાવહેતુરિતિ મન્યસે તર્હિ વદ તાવદ્, અયં ચૈલપરિભોગઃ સ્ત્રીણાં કિં તત્પરિત્યાગાશક્તત્વેન ૧, કિં વા ગુરુપદિષ્ટત્વેન ૨, ચારિત્રાભાવહેતુર્વિવક્ષિતઃ ? ।

તત્ર યદિ સ્ત્રીણાં ચૈલપરિત્યાગાશક્તત્વેન ચૈલપરિભોગશ્ચારિત્રાભાવહેતુરિતિ સ્વી-કરોપિ, નૈતદ્ યુક્તમ્, યતઃ-યદ્વપિ ‘પ્રાણેભ્યો નાપરં પ્રિયં પ્રાણિનામ્’ તથાપિ-પ્રાણા-નપિ ત્યજન્ત્યઃ કાશ્ચિત્ સ્ત્રિયઃ પ્રદશ્યન્તે કિં પુનશ્ચલં પરિત્યક્તુમશક્તાસ્તાં ઇતિસંભાવના

અથ ગુરુપદિષ્ટત્વેન ચૈલપરિભોગઃ સ્ત્રીણામ્, ઇત્યંગીકરોપિ, તર્હિ કથય તાવત્ -કિં ચૈલસ્ય ચારિત્રોપકારિત્વેન ગુરુભિસ્તાસાં ચૈલપરિભોગોપદેશઃ કૃતઃ કિં વા અન્યથા ? ।

હેતુતા હોતી હૈ ? અથવા પરિગ્રહરૂપ હોને સે હોતી હૈ ?, યદિ પરિભોગ માત્ર સે ચૈલ (વસ્ત્ર) ચારિત્રાભાવ કા હેતુ હોતા હૈ, એસા માના જાય તો કહો યહ ચૈલ કા પરિભોગ સ્ત્રિયોં કે ઉસકે પરિત્યાગ કરને કી અશક્તિ હોને સે હૈ ? અથવા ગુરુપદિષ્ટ હોને સે હૈ ?, યદિ ઇસમેં એસા કહા જાય કિ સ્ત્રિયોં મેં વસ્ત્ર કા ત્યાગ કરને કી અશક્તિ હોને સે ચૈલપરિભોગ હોતા હૈ, ઓર યહ ચૈલપરિભોગ ઉનમેં ચારિત્રાભાવ કા હેતુહોતા હૈ, સો એસા કહના ઉચિત નહીં હૈ, કારણ કિ પ્રાણિયોં કો સબ સે અધિક પ્યારે પ્રાણ હોતે હૈં, જબ સ્ત્રિયાં પ્રાણોં કો ભી છોડ દેતી દેખી જાતી હૈં તો ફિર ઉનકે લિયે વસ્ત્રોં કો છોડને કી બાત કૌન કઠિન હૈ ?, ઇસલિયે યહ બાત તો જ્ઞાની નહીં જા સકતી હૈ કિ બે વસ્ત્ર કે છોડને મેં અસમર્થ હૈં । યદિ યહ કહા જાય કિ ગુરુ સે ઉપદિષ્ટ હોકર બે વસ્ત્ર કા પરિભોગ કરતી હૈં તો ઇસપર ભી હમ પૂછતે હૈં કિ

અથવા પરિગ્રહરૂપ હોવાથી હોય છે ? જો પરિભોગમાત્રથી ચૈલ ચારિત્રાભાવનો હેતુ હોય છે, એવું મની લઈએ તો કહો શું આ ચૈલનો પરિભોગ સ્ત્રીઓની તેનો પરિત્યાગ કરવાની અશક્તિ હોવાને લીધે છે ? અથવા ગુરુપદિષ્ટ હોવાથી છે ? જો તે વિષે એવું કહેવામાં આવે કે સ્ત્રીઓમાં વસ્ત્રનો ત્યાગ કરવાની અશક્તિ હોવાથી ચૈલ પરિભોગ થાય છે અને તે ચૈલપરિભોગ તેમનામાં ચારિત્રા ભાવનો હેતુ હોય છે, તો એમ કહેવું ઉચિત નથી, કારણ કે પ્રાણીઓને સૌથી વધારે વડાદો પ્રાણ હોય છે, જો સ્ત્રીઓ પ્રાણનું પણ બલિદાન દેતી નજરે પડે છે તો પછી તેમને માટે વસ્ત્રો છોડવાની વાત શી રીતે કઠિન કહી શકાય ? તેથી એ વાત તો મની શકાય તેમ નથી કે તેઓ વસ્ત્રનો ત્યાગ કરવાને અસમર્થ છે. જો એમ કહેવામાં આવે કે ગુરુવડે ઉપદિષ્ટ થઈને તેઓ વસ્ત્રનો પરિ-

यदि चारित्र्योपकारित्वेन तदुपदेशस्तर्हि किं न पुरुषाणामपि तदुपदेशो गुरुभिः क्रियते । अथैता अबला एव, यतो बलादपि पुरुषैः परिभुज्यन्ते इति चैलं विना तासां चारित्र्यभङ्गसंभवः, न तु पुरुषाणामिति न तेषां तदुपदेशः ।

एवं सति न चैलाचारित्र्याभावः, चैलस्य चारित्र्योपकारित्वात् । तथाहि—यद् यस्योपकारि, न तत् तस्याभावहेतुः, यथा घटस्य मृत्पिण्डादि, उपकारि चोक्तरीत्या चारित्र्यस्य चैलम्, तस्माच्चैलं न चारित्र्याभाव हेतुरिति ।

गुरुओंने उन्हें चारित्र्य में उपकारी जानकर वस्त्र के परिभोग का आदेश किया या और कोई रूप से जानकर वस्त्र के परिभोग करने का उपदेश दिया है ? । यदि यह कहा जाय कि गुरुओं ने वस्त्र पहिरने का उपदेश उन्हें इसलिये दिया है कि वह चारित्र्य का उपकारी है तो फिर उन्होंने वह उपदेश पुरुषों को क्यों नहीं दिया । यदि कहा जाय कि ये अबला हैं, यदि नग्न रहें तो पुरुष उनपर बलात्कार कर सकते हैं इसलिये चैल के विना चारित्र्यभंग होने की उनमें संभावना रहती है अतः गुरुओंने उन्हें चारित्र्य का उपकारी जानकर चैलपरिभोग की आज्ञा दी है । पुरुषों को नहीं दी । तो फिर इस प्रकार की मान्यता से यह बात तुम्हारे ही मुख से सिद्ध हो जाती है कि वस्त्र का उपभोग चारित्र्य का उपकारी है, इसके सद्भाव से चारित्र्य का अभाव सिद्ध नहीं होता है । “यद् यस्योपकारि न तत् तस्याभावहेतुः, यथा घटस्य मृत्पिण्डादि, उपकारि च उक्तरीत्या चारित्र्यस्य चैलम् तस्मान्न तत् चारित्र्याभावहेतुः”

ભોગ કરે છે તો તે વિષે પણ અમે પૂછીએ છીએ કે ગુરુઓએ ચારિત્રમાં ઉપકારી ગણીને તેમને વસ્ત્રના પરિભોગનો આદેશ આપ્યો કે કોઈ બીજાં કારણે વસ્ત્રનો પરિભોગ કરવાનો ઉપદેશ આપ્યો છે ? જો એમ કહેવામાં આવે કે ગુરુઓએ તેમને વસ્ત્ર પહેરવાનો ઉપદેશ એ કારણે આપ્યો છે કે તે ચારિત્ર માટે ઉપકારી છે, તો પછી તેમણે તે ઉપદેશ પુરૂષોને કેમ ન દીધો ? જો એમ કહેવામાં આવે કે તેઓ અબળા છે, તેથી જો નગ્ન રહે તો પુરૂષો તેમના ઉપર બળાત્કાર કરી શકે છે તેથી ચૈલ વિના તેમના ચારિત્રભંગ થવાની સંભાવના રહે છે તેથી ગુરુઓએ તેમને ચારિત્રનો ઉપકારી ગણીને ચૈલપરિભોગની આજ્ઞા આપી છે. પુરૂષોને આપી નથી તો પછી આ પ્રકારની માન્યતાથી તમારે મુખે જ એ વાત સિદ્ધ થઈ જાય છે કે વસ્ત્રનો ઉપભોગ ચારિત્રને માટે ઉપકારી છે, તેના સદ્ભાવથી ચારિત્રનો અભાવ સિદ્ધ થતો નથી. “યદ્ યસ્યોપકારિ ન તત્ તસ્યાભાવહેતુઃ, યથા ઘટસ્ય મૃત્પિણ્ડાદિ, ઉપકારિ ચ ઉક્તરીત્યા ચારિત્રસ્ય ચૈલમ્, તસ્માન્ન તત્ ચારિત્ર્યાભાવહેતુઃ” જે જેનું ઉપકારી હોય છે તે તેના અભા-

અથ ‘ અન્યથા ’ ઈતિ પક્ષસ્તવસંમતઃ ?, નાયમપિ યુક્તિસહઃ, યતઃ ‘ અન્યથા ’  
 હત્યનેન પક્ષદ્વયમિહોપસ્થિતં ભવતિ । કિં-ચારિત્રં પ્રતિ ચૈલમુદાસીનં, વાધકં વા ?  
 ઇતિ । અયમર્થઃ-ઉદાસીનં નામ નાસ્તિ ચારિત્રસ્ય સાધકં, નાસ્તિ વા તસ્ય વાધક-  
 મિતિ । કિં વા-ચારિત્રસ્ય વાધકમેવેતિ । ચારિત્રં પ્રતિ ઔદાસીન્યં વા વાધકત્વં  
 વા ઉભયમપિ નાત્ર વર્તતે । પુરુષકૃતાભિભવરક્ષકતયા ચૈલં સ્ત્રીણાં ચારિત્રોપકારક-  
 મસ્તીત્યનન્તરમેવોક્તત્વાદિતિ ।

અતઃ જો जिसका उपकारी होता है वह उसके अभाव का हेतु नहीं  
 होता है, जैसे मृत्पिंडादिक घटके अभाव का हेतु नहीं होता है । उक्त  
 रीति से चैल भी चारित्र का उपकारी होता है अतः वह उसके अभाव  
 का हेतु नहीं होता है । यदि “ अन्यथा ” यह पक्ष स्वीकार किया जाय  
 तो यह भी ठीक नहीं है, क्योंकि “ अन्यथा ” इस पद से दो पक्ष  
 उपस्थित होते हैं-क्या चारित्र के प्रति चैल उदासीन है ? अथवा वाधक  
 है ? यदि उदासीन है तो उदासीन का तात्पर्य होता है कि वह न तो  
 चारित्र का साधक होता है और न उसका वाधक ही होता है, अतः  
 यह पक्ष मान्य नहीं है । यदि कहो कि वह चारित्र का वाधक है सो  
 ऐसा कहना भी ठीक नहीं है, कारण कि जब वह चारित्र के प्रति उप-  
 कारी है तो फिर न उदासीन ही हो सकता है, न वाधक ही हो सकता है  
 अतः पुरुषकृत पराभव से रक्षा करनेवाला होने के कारण चैल चारित्र  
 का उपकारी है, ऐसा ही मानना चाहिये । अब जो कहा जाय कि चैल

વનું કારણ હોતું નથી, જેમ મૃત્પિંડાદિક ઘડાના અભાવનું કારણ હોતાં નથી.  
 કહેલ રીત પ્રમાણે ચૈલ પણ ચારિત્રનું ઉપકારી હોય છે તેથી તે તેના અભાવનું  
 કારણ હોતું નથી. જો “ અન્યથા ” આ પક્ષ સ્વીકાર કરવામાં આવે તો તે પણ  
 ખરાબર નથી, કારણ કે “ અન્યથા ” પદથી જો પક્ષ રજુ થાય છે-થું ચારિત્ર  
 પ્રત્યે ચૈલ ઉદાસીન છે? અથવા બાધક છે?, જો ઉદાસીન હોય તો ઉદાસીનનો  
 ભાવાર્થ એ છે કે તે ચારિત્રનું સાધક પણ થતું નથી અને તેનું બાધક પણ  
 હોતું નથી તેથી એ પક્ષ સ્વીકારી શકાય નહીં.

જો એમ કહો કે તે ચારિત્રનું બાધક છે તો એમ કહેવું તે પણ ખરા-  
 બર નથી, કારણ કે જો તે ચારિત્રને માટે ઉપકારી છે તે પછી ઉદાસીન પણ  
 હોઈ શકતું નથી અને બાધક પણ હોઈ શકતું નથી. તેથી પુરુષકૃત પરાભવથી  
 રક્ષા કરનાર હોવાને કારણે ચૈલ ચારિત્રને માટે ઉપકારી જ છે, એમ માનવું  
 જોઈએ. હવે જો એમ કહેવામાં આવે કે ચૈલ પરિગ્રહરૂપ હોવાથી ચારિત્રના

નાપિ ચૈલસ્ય પરિગ્રહરૂપત્વેન ચારિત્રાભાવહેતુત્વં સંભવતિ, યતો 'મુચ્છા પરિગ્રહો વુત્તો' ઇત્યાદિવચનેન 'મૂર્છૈવ પરિગ્રહઃ' ઇતિ દશવૈકાલિકે ષષ્ઠેઽધ્યયને નિર્ણીતમ્ । મૂર્છારહિતો ભરતચક્રવર્તી સાન્તઃપુરોઽપ્યાદર્શકગૃહેઽવતિષ્ઠમાનો નિષ્પરિગ્રહો ગીયતે । અન્યથા તસ્ય કેવલોત્પત્તિર્નસ્યાત્ । યદિ ચ ચૈલસ્ય પરિગ્રહરૂપત્વં સ્યાત્, તદા તથાવિધરોગાદિષુ પુરુષાણામપિ ચૈલસંભવે ચારિત્રાભાવેન મુક્ત્યભાવઃ સ્યાત્ । ઉક્તञ્ચ—

‘અર્શોભગન્દરાદિષુ ગૃહીતચીરો યતિર્ન મુચ્યેત’ । ઇતિ ।

કિञ્ચ—યદિ મૂર્છાયા અભાવેઽપિ વસ્ત્રસંસર્ગમાત્રં પરિગ્રહો ભવેત્ તતો જિનકલ્પપ્રતિપન્નસ્ય કસ્યચિત્ સાધોસ્તુષારકણાનુષક્તે પ્રપતતિ શીતે કેનાપિ ધર્માર્થિના પરિગ્રહરૂપ હોને સે ચારિત્ર કે અભાવ કા હેતુ હૈ સો એસા કહના મી ઠીક નહીં હૈ, ક્યોં કિ પરિગ્રહ કા લક્ષણ મૂર્છાભાવ કહા ગયા હૈ । યહ દશવૈકાલિક કે છઠવેં અધ્યયન મેં “મુચ્છા પરિગ્રહો વુત્તો” ઇસ વાક્ય સે ભગવાન્ ને ફરમાયા હૈ । આદર્શઘર મેં અન્તઃપુરસહિત મી બેઠે હુએ ભરતચક્રવર્તી મૂર્છાભાવરહિત હોને કે કારણ હી પરિગ્રહરહિત માને ગયે હૈં । યદિ એસી વાત નહીં હોતી તો ઉન્હેં કેવલજ્ઞાન કી ઉત્પત્તિ નહીં હો સકતી । યદિ ચૈલ કો પરિગ્રહરૂપ માના જાય તો તથાવિધ રોગાદિકોં મેં પુરુષોં કે મી ચૈલ કે સદ્ભાવ મેં ચારિત્રાભાવ હોને કી પ્રસક્તિ સે મુક્તિ કે અભાવ કી પ્રસક્તિ જ્ઞાનની પડેગી । કહા મી હૈ—

“અર્શોભગન્દરાદિષુ ગૃહીતચીરો યતિર્ન મુચ્યેત” ઇતિ ।

ઔર મી—મૂર્છાં કે અભાવ.મેં મી વસ્ત્ર કા માત્ર સંસર્ગ યદિ પરિગ્રહ માના જાય તો એસી હાલત મેં કિસી જિનકલ્પી સાધુ કે ઉપર તુષારપાત

અભાવનું કારણ છે તો એમ કહેવું તે પણ બરાબર નથી, કારણ કે પરિગ્રહનું લક્ષણ મૂર્છાભાવ કહેવાયું છે. આ દશવૈકાલિકના છઠા અધ્યયનમાં “મુચ્છા પરિગ્રહો વુત્તો” આ વાક્યથી લગવાને ફરમાવ્યું છે આદર્શઘરમાં અન્તઃપુર સહિત બેઠેલ ભરત ચક્રવર્તી મૂર્છાભાવરહિત હોવાને કારણે જ પરિગ્રહરહિત મનાયાં છે. જો એમ ન હોત તો તેમને કેવળજ્ઞાન ઉત્પન્ન થઈ શકત નહીં. જો ચૈલને પરિગ્રહરૂપ માનવામાં આવે તો તથાવિધ રોગાદિકોમાં પુરુષોના ચૈલના સદ્ભાવમાં ચારિત્રાભાવ હોવાના પ્રસંગથી મુક્તિના અભાવનો પ્રસંગ માનવો પડશે. કહ્યું પણ છે—

“અર્શોભગન્દરાદિષુ ગૃહીતચીરો યતિર્ન મુચ્યેત” ઇતિ.

વળી મૂર્છાના અભાવમાં પણ વસ્ત્રનો માત્ર સંસર્ગ જો પરિગ્રહ મનાય તો એવી હાલતમાં કોઈ જિનકલ્પી સાધુના ઉપર તુષારપાત પડતાં કોઈ ધર્માત્માપુરુષ

શિરસિ વસ્ત્રે પ્રક્ષિપ્તે તસ્ય સપરિગ્રહતા ભવેત્ । ન ચૈતદિષ્ટં, તસ્માન્ન વસ્ત્રસંસર્ગમાત્રં પરિગ્રહઃ, કિંતુ મૂર્છા । સા ચ સ્ત્રીणां વસ્ત્રાદિषુ ન વિद्यતે, ધર્મોપકરણમાત્રતયા તસ્યોપાદાનાત્ । ન खलु ता वस्त्रमंतरेणात्मानं रक्षयितुमीशते, ततो दीर्घतरसंयम-परिपालनाय यतनया वस्त्रं परिभुञ्जानास्ताः परिग्रहवत्यः कथं भवेयुः ? ।

કિન્ન—ચૈલસ્ય પરિગ્રહરૂપત્વે—“જો કપ્પડ્ડ જિગંગ્થીજ પક્કે તાલપલંબે—અભિન્ને પરિગ્રહિત્તે” ઇત્યેયંરૂપો નિર્ગન્થ્યા વ્યપદેશશ્ચાગમે ન શ્રૂયેત । અતો ન સચૈલત્વેન ચારિત્રાસંભવઃ ।

પડને પર ધર્માત્માપુરુષદ્વારા ડાલા ગયા વસ્ત્ર ભી પરિગ્રહરૂપ માના જાના ચાહિયે, પરન્તુ વહ એસા નહીં માના જાતા હૈ । ઇસલિયે વસ્ત્ર કા કેવલ સંસર્ગ પરિગ્રહરૂપ નહીં માના જા સકતા હૈ, કિન્તુ મૂર્છા હી પરિગ્રહ હૈ । જવ પરિગ્રહ કા યહ સુનિશ્ચિત લક્ષણ માન્ય હો જાતા હૈ તો યહ ઘાત માનની પડેગી કિ વહ મૂર્છા વસ્ત્રાદિકોં કે વિષય મેં સાધ્વી સ્ત્રિયોં કો નહીં હોતી હૈ । કેવલ વે તો ઉસે ધર્મ કા ઉપકરણ જાનકર હી ધારણ કરતી હૈં । વસ્ત્રકે વિના વે અપના રક્ષણ ભી નહીં કર સકતી હૈં, ઇસલિયે દીર્ઘતરસંયમ પાલને કે લિયે યતના સે વસ્ત્ર કા પરિભોગ કરતી હુઈ વે પરિગ્રહવાલી કૈસે માની જા સકતી હૈં ? । તથા—ચેલ કે પરિગ્રહરૂપ માનને પર “જો કપ્પડ્ડ જિગંગ્થીજ પક્કે તાલપલંબે અભિન્ને પરિગ્રહિત્તે” ઇસ પ્રકાર સે જો નિર્ગન્થિયોં કા વ્યપદેશ આગમ મેં સુનને મેં વા દેખને મેં આતા હૈ વહ નહીં આના ચાહિયે ઓર આયા હૈ, અતઃ ઇસ શાસ્ત્રીયવ્યપદેશ સે એસા હી જ્ઞાત હોતા હૈ કિ સચેલ હોને સે ચારિત્ર

દ્વારા નાખેલું વસ્ત્ર પણ પરિગ્રહરૂપ માનવું જોઈએ પણ એમ મનાવું નથી. તેથી વસ્ત્રનો ફક્ત સંસર્ગ જ પરિગ્રહરૂપ માની શકાતો નથી, પણ મૂર્છા જ પરિગ્રહ છે. જ્યારે પરિગ્રહવું આ ચોક્કસ લક્ષણ માન્ય થાય છે ત્યારે એ વાત સ્વીકારવી પડશે કે તે મૂર્છા વસ્ત્રાદિકોના વિષયમાં સાધ્વી સ્ત્રીઓને થતી નથી. તેઓ તો ફક્ત તેને ધર્મનું ઉપકરણ માનીને જ ધારણ કરે છે વસ્ત્ર વિના તેઓ પોતાનું રક્ષણ પણ કરી શકતી નથી, શીતકાળ આદિમાં સ્વાધ્યાય પણ કરી શકતી નથી, તેથી દીર્ઘતર સંયમ પાળવાને માટે યતનાપૂર્વક વસ્ત્રનો પરિભોગ કરતી એવી તેઓ પરિગ્રહવાળી કેવી રીતે માની શકાય ?

તથા—ચેલને પરિગ્રહરૂપ માનવાથી “જો કપ્પડ્ડ જિગંગ્થીજ પક્કે તાલપલંબે અભિન્ને પરિગ્રહિત્તે” આ પ્રકારનો નિર્ગન્થિયોનો જ વ્યપદેશ આગમમાં સાંભળવામાં અને જોવામાં આવે છે તે ન આવવો જોઈએ, અને આવ્યો છે, તેથી આ શાસ્ત્રીય વ્યપદેશથી એવું જ જાણવા મળે છે કે સચેલ હોવાથી

एवं च—“ नास्ति स्त्रीणां मोक्षः, परिग्रहवत्त्वात्, गृहस्थवत् ” इत्यनुमाने निराकृतं धर्मोपकरणवस्त्रस्यापरिग्रहत्वेन प्रसाधितत्वादिति ।

॥ इति चैलस्य चारित्राभावहेतुत्वनिराकरणम् ॥ १ ॥

સ્ત્રીત્વમેવ ચારિત્રવિરોધીત્યદ્વીકૃત્ય સ્ત્રીપુ ચારિત્રાસંભવ इत्यपि कथनं न युक्तम् । यतो—यदि स्त्रीत्वस्य चारित्रविरोधः स्यात्, तदा तासामविशेषेणैव प्रव्राजनं निषिध्येत ‘ इत्थीओ पन्वावेउं न कप्पइ ’ इत्येवं वदेत्, न तु विशेषेण, यथोच्यते—“ गर्भिणी बालवच्छा य पन्वावेउं न कप्पइ ” इति ।

॥ इति स्त्रीत्वमेव चारित्रविरोधीति पक्षस्य निराकरणम् ॥ २ ॥

का अभाव नहीं होता है, अतः जब वस्त्र में परिग्रहरूपता नहीं आती है तब ऐसा बोलना कि “स्त्रीणां न मोक्षः परिग्रहवत्त्वात् गृहस्थवत्” “गृहस्थ की तरह परिग्रहयुक्त होने से स्त्रियों को मोक्ष नहीं होता है” वह खण्डित हो जाता है, क्यों कि वस्त्र धर्म का उपकरण है अतः वह परिग्रहरूप नहीं है ।

इसी तरह ऐसा कि “स्त्रीत्वमेव चारित्रविरोधि” अर्थात् “स्त्रीपणा ही चारित्र का विरोधी है” सो ठीक नहीं है, कारण कि इस तरह यदि स्त्रीपने के साथ चारित्र का विरोध होता तो उन्हें बिना किसी विशेषता के दीक्षा देना ही निषिद्ध होता, परन्तु ऐसा तो है नहीं । शास्त्र में तो केवल ऐसा ही लिखा मिलता है कि “गर्भिणी बालवच्छा य पन्वावेउं न कप्पइ”—गर्भिणी को बालवत्सा को अर्थात् छोटे बच्चे वाली को दीक्षा नहीं देनी चाहिये । यदि सामान्यतः स्त्रियों के लिये दीक्षा का निषेध करना होता तो “इत्थीओ पन्वावेउं न कप्पइ” ऐसा कहते !

ચારિત્રનો અભાવ થતો નથી, તેથી જો વસ્ત્રમાં પરિગ્રહરૂપતા આવતી નથી તો એવું બોલવું કે “સ્ત્રીનાં ન મોક્ષઃ પરિગ્રહ વત્ત્વાત્ ગૃહસ્થવત્” “ગૃહસ્થની જેમ પરિગ્રહયુક્ત હોવાથી સ્ત્રીઓને મોક્ષ મળતો નથી” એ યુક્તિનું ખંડન થઈ જાય છે, કારણ કે વસ્ત્ર ધર્મનું ઉપકરણ છે, તેથી તે પરિગ્રહરૂપ નથી.

આ રીતે એમ કહેવું કે “સ્ત્રીત્વમેવ ચારિત્રવિરોધિ” એટલે કે સ્ત્રીપણું જ ચારિત્રનું વિરોધી છે” તે પણ ખરાબર નથી, કારણ કે આ પ્રમાણે જો સ્ત્રીપણું સાથે ચારિત્રનો વિરોધ હોત તો તેમને કોઈ પણ વિશેષતા વિના દીક્ષા આપવાનું જ નિષિદ્ધ હોત, પણ એવું તો છે નહીં. શાસ્ત્રમાં તો ફક્ત એવું જ લખેલું મળે છે કે “ગર્ભિણી બાલવચ્છા ય પન્વાવેઉં ન કપ્પઈ” સગર્ભાને તથા બાલવત્સાને એટલે કે નાનાં બાળકવાળીને દીક્ષા ન આપવી જોઈએ. જો સામાન્યતઃ સ્ત્રીઓને દીક્ષાનો નિષેધ કરવો હોત તો “इत्थीओ पन्वावेउं न कप्पइ”



સ્ત્રિયો મન્દસત્ત્વા ભવન્તીતિ મત્વા સ્ત્રીપુ ચારિત્રાસંભવ इति वदसि चेत् ? तदप्ययुक्तम्, इह सत्त्वं खलु व्रततपोधारणविषयकमेव वाच्यम्, अन्यविधस्य सत्त्वस्यानुपयोगित्वात्, तच्च दुर्धर्षशीलवतीषु स्ત્રીषु अनल्पं संभवति । तथाचोक्तम्—

“ ब्राह्मी सुन्दर्यार्या राजीमती चन्दना गणधराद्याः ।

अपि देवमनुजमहिताः, विख्याता शीलसत्त्वाभ्याम् ” ॥ १ ॥

॥ इति स्त्रियो मन्दसत्त्वा भवन्तीति पक्षस्य निराकरणम् ॥ ३ ॥

इत्येवं चારિત્રા સંભવેન સ્તનત્રયાભાવ इति तवपक्षो निराकृतो भवतीति ॥

परन्तु शास्त्रकारने ऐसा कहा नहीं; इससे स्पष्ट प्रतीत होना है कि स्त्रियों के लिये दीक्षा देनेका निषेध नहीं है । अतः स्त्रीत्व चारित्र का विरोधी नहीं है ।

इसी प्रकार यदि ऐसा कहा जाय कि स्त्रियां मन्द शक्ति वाली होती हैं अतः स्त्रियों में चारित्र की असंभवता है, सो ऐसा कहना भी ठीक नहीं है, कारण कि यहां व्रत, तप धारण करने योग्य ही शक्ति का ग्रहण किया गया है, उसके सिवाय (और शक्ति का नहीं, कारण कि अन्य शक्ति अनुपयोगी मानी गई है) जिसके द्वारा व्रत एवं तपों को धारण एवं उनका अनुष्ठान किया जाता है वह शक्ति दुर्धर्ष शील वाली स्त्रियों में खूब होती है । जैसे कहा भी है—

“ ब्राह्मी सुन्दर्यार्या, राजीमती चन्दना गणधराद्याः ।

अपि देवमनुजमहिता, विख्याताः शीलसत्त्वाभ्याम् ” ॥ १ ॥

એમ જ કહેત પણ શાસ્ત્રકારે તેમજ કહ્યું નથી જેથી એ સ્પષ્ટ થાય છે કે સ્ત્રીઓને સામાન્યતઃ દીક્ષાનો નિષેધ નથી એટલે કે સ્ત્રીત્વ એ ચારિત્રનું વિરોધી નથી.

એજ પ્રમાણે જો એમ કહેવામાં આવે કે સ્ત્રીઓ મંદ શક્તિવાળી હોય છે તેથી સ્ત્રીઓમાં ચારિત્રની અસંભવતા છે, તો એમ કહેવું તે પણ ઘરાબર નથી, કારણ કે અહીં વ્રત, તપ કરવા લાયક શક્તિ એવો અર્થ અહણ કરાયેલ છે, તેના સિવાયની બીજી શક્તિનો નહી, કારણ કે બીજી શક્તિ અનુપયોગી મનાયેલ છે. જેના દ્વારા વ્રત, અને તપ ધારણ કરાય છે અને તેમનું અનુષ્ઠાન કરાય છે તે શક્તિ દુર્ધર્ષ શીલવાળી સ્ત્રીઓમાં ખૂબ હોય છે, જેમકે કહ્યું પણ છે—

“ ब्राह्मी सुन्दर्यार्या राजीमती चन्दना गणधराद्याः ।

अपि देव-मनुज-महिताः, विख्याताः शीलसत्त्वाभ्याम् ” ॥ १ ॥



इत्थं च स्त्रीषु चारित्रस्य संभव इति निश्चिते सति ज्ञानदर्शनयोरपि संभवः सुतरां निश्चितो भवति, ज्ञानदर्शनपूर्वकत्वाच्चारित्रस्य । ज्ञानदर्शनाभ्यां विना चारित्रं न भवितुमर्हति । तथा चोक्तम्—

“पूर्वद्वयलाभः पुनरुत्तरलाभे भवति सिद्धः” इति ।

इत्येवं ‘स्त्रीषु ज्ञानदर्शनयोरभावः’ इति पक्षोऽपि निराकृतो भवति । ततश्च सम्यग्दर्शनादीनां त्रयाणां सिद्धौ सत्यां ‘रत्नत्रयाभावात् स्त्रियः पुरुषेभ्योपकृष्टाः’ इति प्रस्थापमात्रम् । दृश्यन्ते हि संप्रत्यपि ताः सम्यग्दर्शनादित्रितयमभ्यस्यन्ति ।

अर्थात् इस श्लोक में कही हुई ब्राह्मी, सुन्दरी, राजीमती, चन्दन-बाला आदि साध्वियां देव मनुष्यों से पूजित होकर शील और सत्त्व से विख्यात हैं । इस तरह “स्त्रियां मन्द शक्ति वाली होने से रत्नत्रय का अभाव स्त्रियों में है” ऐसा तुम्हारा पक्ष निराकृत हो गया है ॥

इस तरह जब स्त्रियों में चारित्र की संभवता निश्चित हो जाती है तब ज्ञानदर्शन की भी संभवता सुतरां निश्चित हो जाती है । क्यों कि चारित्र, ज्ञान एवं दर्शनपूर्वक होता है, इनके विना चारित्र नहीं होता है । “पूर्वद्वयलाभः पुनरुत्तरलाभे भवति सिद्धः” उत्तर के लाभ में चारित्र की प्राप्ति में—पूर्वद्वय का लाभ सिद्ध होता है, अर्थात् चारित्र के लाभ में सम्यग्ज्ञान सम्यग्दर्शन का लाभ सिद्ध होता है, अतः स्त्रियों में ज्ञानदर्शन का अभाव है, ऐसा कथन भी ठीक नहीं है, इसलिये ऐसा कहना कि सम्यग्दर्शनादिक रत्नत्रय का अभाव होने से स्त्रियां पुरुषों से

એટલે કે આ શ્લોકમાં કહેલ બ્રાહ્મી, સુન્દરી, રાજીમતી, ચન્દનબાળા આદિ સાધ્વીઓ દેવ મનુષ્યો વડે પૂજાઈને શીલ અને સત્ત્વ વડે વિખ્યાત છે. આ પ્રમાણે “સ્ત્રીઓ મંદ શક્તિવાળી હોવાથી સ્ત્રીઓમાં રત્નત્રયનો અભાવ છે” એવા તમારા પક્ષનું ખંડન થઈ જાય છે.

આ પ્રમાણે જો સ્ત્રીઓમાં ચારિત્રની સંભવતા નિશ્ચિત થઈ જાય છે તો જ્ઞાન દર્શનની પણ સંભવતા સારી રીતે નિશ્ચિત થઈ જાય છે. કારણ કે ચારિત્ર જ્ઞાન અને દર્શન સહિત હોય છે. તેમના વિના ચારિત્ર હોતું નથી “પૂર્વદ્વયલાભઃ પુનરુત્તરલાભે ભવતિ સિદ્ધઃ” ઉત્તરના લાભમાં—ચારિત્રની પ્રાપ્તિમાં—પૂર્વદ્વયનો લાભ સિદ્ધ થાય છે, એટલે કે ચારિત્રના લાભ સાથે જ સમ્યક્દર્શનનો લાભ પ્રાપ્ત થાય છે. તેથી “સ્ત્રીઓમાં જ્ઞાનદર્શનનો અભાવ છે” એવું કથન પણ ખરાબર નથી. તેથી એવું કહેવું કે “સમ્યગ્દર્શનાદિક રત્નત્રયનો અભાવ હોવાથી સ્ત્રીઓ પુરુષો કરતાં અપકૃષ્ટ-હીન છે” એ કથન પણ ફક્ત એક પ્રકારે જ

तथाचोक्तम्—

“ जानीते जिनवचनं, श्रद्धते चरति चार्थिकाऽशवलम् ” इति ।

नन्वस्तु नाम स्त्रीणामपि सम्यग्दर्शनादिकं रत्नत्रयम्, परं तु न तत् संभव-  
मात्रेण मुक्तिपदप्रापकं भवति, किं तु प्रकर्षप्राप्तम्, अन्यथा दीक्षानन्तरमेव सर्वेषा-  
मप्यविशेषेण मुक्तिपदप्राप्तिप्रसक्तिः, सम्यग्दर्शनादिरत्नत्रयप्रकर्षश्च स्त्रीणां न  
संभवति, तथा च—प्रकर्षपर्यन्तस्य रत्नत्रयस्याभाव इति मत्वा स्त्रियः पुरुषेभ्योऽप-  
कृष्टा इति चेत्, तदयुक्तम्—स्त्रीषु हि रत्नत्रयासंभवग्राहकं प्रमाणं नास्ति, देश-

अपकृष्ट-हीन हैं, सो यह कथन केवल एक प्रलापमात्र है । इस समय भी  
स्त्रियां सम्यग्दर्शनादिक त्रय का अभ्यास करती हुई देखने में आती है, जैसे  
कहा भी है—“ जानीते जिनवचनं श्रद्धते चरति चार्थिकाऽशवलम् । ”

प्रश्न—स्त्रियों में सम्यग्दर्शनादिकत्रिकके सद्भावमात्र से मुक्ति  
प्राप्ति संभवित नहीं होती है, अर्थात् सम्यग्दर्शनादिक का त्रिक केवल  
संभवमात्र से उन्हें मुक्तिपद का प्रापक नहीं बनता है किन्तु प्रकर्ष प्राप्त  
ही सम्यग्दर्शनादिक का त्रिक मुक्तिपद की प्राप्ति का हेतु होता है । यदि  
ऐसा न माना जाय तो दीक्षा लेने के बाद ही सब को मुक्ति की प्राप्ति  
हो जानी चाहिये, परन्तु ऐसा होता नहीं है । इससे यही मानना पड़ता  
है कि सम्यग्दर्शनादिकत्रिक जब प्रकर्षावस्था को प्राप्त हो जाता है  
तभी मुक्ति की प्राप्ति जीव को होती है, यह इनका प्रकर्ष स्त्रियों में नहीं  
है—पुरुषों में ही होता है, इससे सम्यग्दर्शनादिक के प्रकर्ष का अभाव  
होने से स्त्रियां पुरुषों की अपेक्षा अपकृष्ट मानी गई हैं ? ।

छे. आ समयमां पणु स्त्रीओ सम्यग्दर्शनादिक रत्नत्रयनो अभ्यास करती जेवामां  
आवे छे. जेम के कछुं पणु छे—जानीते जिनवचनं श्रद्धते चरति चार्थिकाऽशवलम् ”

प्रश्नः—स्त्रीओमां सम्यग्दर्शनादिक रत्नत्रयना सहलावथी मुक्तिनी प्राप्ति  
संभवित होती नथी, ओटले के सम्यग्दर्शनादिक रत्नत्रयना संभवमात्रथी  
ज तेमने मुक्तिपदनी प्राप्ति थती नथी पणु प्रकर्षप्राप्त ज सम्यग्दर्शनादिक  
रत्नत्रय ज मुक्तिपदनी प्राप्तिनुं कारण होय छे जे जेम न मानवामां आवे  
तो दीक्षा दीधा पछी ज सवेने मुक्ति प्राप्त थवी जेधजे, पणु जेवुं थतुं  
नथी. तेथी जेम मानवुं पडे छे के सम्यग्दर्शनादिक रत्नत्रय ज्यारे प्रकर्षाव-  
स्थाने पावे छे त्यारे ज जेवने मुक्ति प्राप्त थाय छे. तेमने आ प्रकर्ष  
स्त्रीओमां होतो नथी—पुरुषोमां ज होय छे, तेथी सम्यग्दर्शनादिकना प्रकर्षनो  
अभाव होवथी स्त्रीओ पुरुषो करतां अपकृष्ट-हीन बनाय छे.

कालविप्रकृष्टेषु प्रत्यक्षस्याप्रवृत्तेः, तदप्रवृत्तौ च अनुमानस्याप्यसंभवात् । नापि तासु रत्नत्रयप्रकर्षासंभवप्रतिपादकः कोऽप्यागमो विद्यते, प्रत्युत संभवप्रतिपादक एव स्थाने स्थानेऽस्ति. यथा—‘ इत्थीपुरिससिद्धाय ’ इति प्रस्तुतैव गाथा, ततो न तासां रत्नत्रयप्रकर्षासंभवः । किंच—कथय तावत्—स्त्रीषु उक्तरूपस्य रत्नत्रयस्याभावः किं कारणाभावेन, किं स्वभावत एव किं वा स्त्रीत्वस्य रत्नत्रयप्रकर्षविरोधित्वेन, तव संमतोऽस्तीति । तत्र न तावत् कारणाभावेन प्रकर्षपर्यन्तप्राप्तरत्नत्रयाभावः, यतः

उत्तर—ऐसा भी कहना ठीक नहीं है क्यों कि ऐसा कोई प्रमाण नहीं है जो स्त्रियों में सम्यग्दर्शनादिक त्रिक के प्रकर्ष की असंभवता सिद्ध कर सके । देशविप्रकृष्ट एवं कालविप्रकृष्ट पदार्थों में प्रत्यक्षप्रमाण की अप्रवृत्ति होने से वह तो इस बात का समर्थक होता नहीं । इसी तरह प्रत्यक्ष की अप्रवृत्ति होनेके कारण अनुमान की भी वहां प्रवृत्ति नहीं होती है, अर्थात् अनुमान भी यह नहीं बतला सकता है कि स्त्रियों में सम्यग्दर्शनादिक के प्रकर्ष की असंभवता है । रहा आगम, सो वह भी तो यहीस्थान स्थान पर प्रकट करता है कि स्त्रियों में इनका प्रकर्ष हो सकता है “ इत्थीपुरिससिद्धाय ” यह गाथा ही इसके लिये प्रमाणभूत है । इसलिये रत्नत्रय के प्रकर्ष की असंभवता से जो स्त्रियों में पुरुषों की अपेक्षा हीनता बतलाई जाती है वह ठीक नहीं है ।

और भी आप जो स्त्रियों में रत्नत्रय के प्रकर्ष का अभाव प्रतिपादन करते हो सो क्यों करते हो ? कहो, क्या उनमें उनके प्रकर्ष होने के कारणों का अभाव है ? अथवा स्त्रियों का स्वभाव ही ऐसा है जो उनके

उत्तर—એમ કહેવું પણ બરાબર નથી. એવું કોઈ પ્રમાણ નથી કે જે સ્ત્રીઓમાં સમ્યગ્દર્શનાદિક રત્નત્રયના પ્રકર્ષની અસંભવતા સિદ્ધ કરી શકે. દેશવિપ્રકૃષ્ટિ અને કાળવિપ્રકૃષ્ટ પદાર્થોમાં પ્રત્યક્ષ પ્રમાણની અપ્રવૃત્તિ હોવાથી તે તો આ વાતના સમર્થક થતાં નથી. એજ પ્રમાણે પ્રત્યક્ષની અપ્રવૃત્તિ હોવાને કારણે ત્યાં અનુમાનની પણ પ્રવૃત્તિ હોતી નથી, એટલે કે અનુમાન પણ એ બતાવી શકતું નથી કે સ્ત્રીઓમાં સમ્યગ્દર્શનાદિકના પ્રકર્ષની અસંભવતા છે. બાકી રહ્યાં આગમ, તો તે સ્થળે સ્થળે એજ પ્રગટ કરે છે કે સ્ત્રીઓમાં તેમનો પ્રકર્ષ હોઈ શકે છે “ ઇત્થી પુરિસ સિદ્ધાય ” આ ગાથા જ તે માટે પ્રમાણભૂત છે. તેથી રત્નત્રયના પ્રકર્ષની અસંભવતા વડે સ્ત્રીઓમાં પુરૂષો કરતાં જે હીનતા દર્શાવાય છે તે બરાબર નથી. વળી—આપ સ્ત્રીઓમાં રત્નત્રયના પ્રકર્ષનો જે અભાવ સિદ્ધ કરો છો તે કેમ કરો છો ? કહો કે શું તેમનામાં તેમનો પ્રકર્ષ હોવાનાં કારણોનો અભાવ છે ?

—રત્નત્રયાભ્યાસ એવ પ્રકર્ષપર્યન્તપ્રાપ્તરત્નત્રયસ્ય પ્રાપ્તિકારણમિતિશાસ્ત્રે પ્રરૂપિતમ્, રત્નત્રયાભ્યાસઃ સ્ત્રીષુ વર્તતે इति સમર્થિતમેવ । સ્ત્રીત્વં રત્નત્રયપ્રકર્ષસ્ય વિરોધીત્યપિ ન વક્તું યુક્તમ્, તથાહિ—રત્નત્રયપ્રકર્ષઃ સ ઉચ્યતે, યતોઽનન્તરં મુક્તિપદપ્રાપ્તિઃ, સ ચ રત્નત્રયપ્રકર્ષઃ સ્વલુ અયોગિનોઽવસ્થાયાં ભવતિ, સ હિ ચરમસમયભાવી । અયોગિનોઽસ્થા ચ છદ્મસ્થાનામપ્રત્યક્ષા, તર્હિ સ્ત્રીત્વં રત્નત્રયપ્રકર્ષસ્ય વિરોધીતિ જ્ઞાનં કથં ત્વયા પ્રાપ્તમ્ । ન હિ અદૃષ્ટેન સહ વિરોધો જ્ઞાતું શક્યતે । અદૃષ્ટવિરોધકલ્પને તુ પુરુષેષ્વપિ રત્નત્રયપ્રકર્ષવિરોધાપત્તિસ્તવ મતે પ્રસજ્યેત । એવં ચ ન રત્નત્રયાભાવેન સ્ત્રીણાં પુરુષેભ્યોઽપકૃષ્ટત્વમ્ ॥ ૧ ॥

પ્રકર્ષ કો નહીં હોને દેતા ? યા રત્નત્રય કા વિરોધી વહાં સ્ત્રીપના હૈ ?

પ્રથમ પક્ષ તો હસલિયે ઉચિત નહીં જ્ઞાના જા સકતા કિ જવ વે અભ્યાસ કરતી રહતી હૈ તો યહી અભ્યાસ ઉનકે પ્રકર્ષ કી પ્રાપ્તિ કા કારણ ઉન્હેં બન જાતા હૈ, એસા શાસ્ત્રોં મેં કહા હૈ । રત્નત્રય કા અભ્યાસ સ્ત્રિયોં મેં વર્તતા હૈ હસમેં તો વિવાદ હી નહીં હૈ ।

સ્ત્રીત્વ રત્નત્રય કે પ્રકર્ષ કા વિરોધી હૈ, યહ બી ઠીક નહીં હૈ, રત્નત્રય કા પ્રકર્ષ વહી હૈ કિ જિસકે અનન્તર મુક્તિપદ કી પ્રાપ્તિ હો જાવે । એસા વહ પ્રકર્ષ અયોગી અવસ્થા મેં હોતા હૈ, ઓર યહ ચરમ-સમય ભાવી હૈ । અયોગી કી અવસ્થા છદ્મસ્થોં કે અપ્રત્યક્ષ હોતી હૈ તવ ‘સ્ત્રીત્વ રત્નત્રય કે પ્રકર્ષ કા વિરોધી હૈ’ યહ કૈસે જાના જા સકતા હૈ ? ક્યોં કિ વહ પરમપ્રકર્ષ પ્રત્યક્ષ કા વિષય નહીં હોતા હૈ । જો દૃષ્ટ નહીં હૈ ઉસકે સાથ વિરોધી કી કલ્પના કરના ઠીક નહીં હોતા હૈ । યદિ

અથવા શું સ્ત્રીઓનો સ્વભાવ જ એવો છે કે જે તેમનો પ્રકર્ષ થવા દેતો નથી ? કે રત્નત્રયનું વિરોધી ત્યાં સ્ત્રીપણું છે ? પહેલો પક્ષ તો એ કારણે જ ઉચિત માની ન શકાય કે જ્યારે તેઓ અભ્યાસ કરતી રહે છે તો એજ અભ્યાસ તેમના પ્રકર્ષની પ્રાપ્તિનું કારણ તેમને માટે બની જાય છે, એવું શાસ્ત્રોમાં કહેલ છે. રત્નત્રયનો અભ્યાસ સ્ત્રીઓમાં હોય છે તે બાબતમાં તો વિવાદ છે જ નહીં.

સ્ત્રીત્વ રત્નત્રયના પ્રકર્ષનું વિરોધી છે, એ પણ બરાબર નથી. રત્નત્રયનો પ્રકર્ષ એજ છે કે જેના પછી મુક્તિપદની પ્રાપ્તિ થઈ જાય. એવો તે પ્રકર્ષ અયોગી-શુણ્યસ્થાન અવસ્થામાં હોય છે, અને તે ચરમસમયભાવી છે. અયોગીશુણ્યસ્થાન અવસ્થા છદ્મસ્થાને અપ્રત્યક્ષ હોય છે તો “સ્ત્રીત્વ રત્નત્રયના પ્રકર્ષનું વિરોધી છે” એકેવી રીતે બાણી શકાય છે ? કારણ કે તે પરમ પ્રકર્ષ પ્રત્યક્ષનો વિષય નથી જે દૃશ્યમાન નથી તેની સાથે વિરોધીની કલ્પના કરવી તે બરાબર નથી. જે

અથ વિશિષ્ટસામર્થ્યાસત્ત્વેન સ્ત્રિયઃ પુરુષેભ્યોઽપકૃષ્ટા इति चेत्-શૃણુ, સ્ત્રીणां કથમિદં વિશિષ્ટસામર્થ્યાસત્ત્વં ભવતિ ? કિં તાવત્ અસપ્તમનરકપૃથ્વીગમનત્વેન ૧, આહોશ્વિદ્ વાદાદિલબ્ધિરહિતત્વેન ૨, કિં વા અલ્પશ્રુતત્વેન ૩, કિં વા-અનુપસ્થાપ્યતા-પારાશ્રિકતા-શૂન્યત્વેન ૪, इति ।

નન્વસપ્તમનરકપૃથિવીગમનત્વેન સ્ત્રીणां વિશિષ્ટસામર્થ્યાભાવઃ, તથાહિ-इह जगति सर्वोत्कृष्टपदप्राप्तिः सर्वोत्कृष्टेनाध्यवसायेन भवति नान्यथेति द्वयोरप्यावयो रागमप्रामाण्यवलात् सिद्धं सर्वोत्કृष्टदुःखस्थानं, सर्वोत्કृष्टसुखस्थानं च । तत्र

અદૃષ્ટ પ્રકર્ષ કે સાથ વિરોધ માનતે હો તો ફિર પુરુષોં કે સાથ મો ઇસકા વિરોધ માન લેના ચાહિયે । ઇસ તરહ રત્નત્રય કે અભાવ સે સ્ત્રિયોં મેં પુરુષોં કી અપેક્ષા હીનતા નહીં માની જા સકતી હૈ ।

यदि कहौ कि विशिष्ट सामर्थ्य का अभाव होने से स्त्रियां पुरुषों की अपेक्षा अपकृष्ट हैं ऐसा कहना भी ठीक नहीं है, सुनो-उनमें विशिष्ट सामर्थ्य का असत्त्व है, यह किस कारण से आप कहते हैं? क्या वे सप्तम नरक में नहीं जाती हैं इसलिये?, अथवा वादादि लब्धि से वे रहित हैं इसलिये?, अथवा अल्पश्रुतज्ञान उन्हें होता है इसलिये?, अथवा अनुपस्थाप्यता पाराश्रित से शून्य होती है इसलिये? ।

यदि कहौ कि वे सप्तम पृथिवी में नहीं जानी है इसलिये उनमें विशिष्ट सामर्थ्य का अभाव है, जगत में सर्वोत्कृष्ट-पद-प्राप्ति सर्वोत्कृष्ट अध्यवसाय से होती है, अन्य प्रकार से नहीं होती है । ऐसी मान्यता

અદૃશ્ય પ્રકર્ષની સાથે વિરોધ માનતા હો તો પછી પુરુષોની સાથે પણ તેનો વિરોધ માની લેવો જોઈએ. આ પ્રમાણે રત્નત્રયના અભાવે સ્ત્રીઓમાં પુરુષો કરતાં હીનતા માની શકાય નહીં.

જો એમ કહો કે વિશિષ્ટ સામર્થ્યનો અભાવ હોવાથી સ્ત્રીઓ પણ પુરુષો કરતાં હીન છે તો એમ કહેવું તે પણ ખરાબર નથી. શા માટે? સાંભળો તેમનામાં વિશિષ્ટ સામર્થ્યનો અભાવ છે. એમ આપ કયા કારણે કહો છો? શું તેઓ સાતમી નરકે નથી જતી માટે?, અથવા વાદાદિલબ્ધિરહિત હોવાને કારણે? અથવા તેમને અલ્પ શ્રુતજ્ઞાન થાય છે તે માટે? અથવા અનુપશ્ય પ્યતા પારાંગિત રહિત હોય છે તે કારણે?

જો કહો કે તેઓ સપ્તમ પૃથ્વીમાં જતી નથી તેથી તેમનામાં વિશિષ્ટ સામર્થ્યનો અભાવ છે. જગતમાં સર્વોત્કૃષ્ટપદપ્રાપ્તિ સર્વોત્કૃષ્ટ અધ્યવસાયથી થાય છે. બીજી રીતે થતી નથી. એવી આપની તથા અમારી માન્યતા છે. કારણ

સર્વોત્કૃષ્ટદુઃસ્વસ્થાનં સપ્તમનરકપૃથ્વી, અતઃ પરં પરમદુઃસ્વસ્થાનસ્યાભાવાત્ । સર્વોત્કૃષ્ટ સુસ્વસ્થાનં તુ નિઃશ્રેયસમ્ । તત્ર સ્ત્રીણાં સપ્તમનરકપૃથ્વીગમનં શ્રુતે નિષિદ્ધમ્ । નિષેધસ્ય ચ કારણં તદ્ગમનયોગ્યતથાવિધસર્વોત્કૃષ્ટમનોવીર્યપરિણત્યભાવઃ । તતઃ સપ્તમનરકપૃથિવીગમનવત્ત્વાભાવાત્ સંમૂર્છિમાદિવત્ સ્ત્રીણાં સર્વોત્કૃષ્ટમનોવીર્યપરિણત્યભાવઃ, ઇતિચેત્ ,

તદયુક્તમ્—યદિ સ્ત્રીણાં સપ્તમનરકપૃથિવીગમનં પ્રતિ સર્વોત્કૃષ્ટમનોવીર્યપરિણત્યભાવસ્તદૈતત્ કથમવસીયતે નિઃશ્રેયસં પ્રત્યપિ તાસાં સર્વોત્કૃષ્ટમનોવીર્યપરિણત્યભાવઃ?, ન હિ યો ભૂમિકર્ષણાદિકં કર્મ કર્તું ન શક્નોતિ, સ શાસ્ત્રાણ્યપ્યવગન્તું ન શક્નોતીતિ પ્રત્યેતું શક્યં, પ્રત્યક્ષવિરોધાત્, નાપિ વા હસ્તી મૂચીમુત્થાપયિતું ન શક્નોતીતિ વૃક્ષશાખામપિ ત્રોટયિતું ન શક્નોતીતિ મન્તવ્યં ભવતિ પ્રત્યક્ષવિરોધાત્ ।

આપકી ઓર હમારી હૈ, ક્યોં કિ इस विषय को बतलाने वाला आगम प्रमाण अपन दोनों को मान्य है । सर्वोत्कृष्ट दुःख का स्थान सप्तमनरक है क्यों कि इससे आगे और कोई दुख का स्थान नहीं है । तथा सर्वोत्कृष्ट सुख का स्थान मोक्ष है । शास्त्र बतलाता है कि स्त्रियां सप्तमनरक में नहीं जाती हैं, कारण कि सप्तमनरक में जाने के योग्य तथाविध सर्वोत्कृष्ट मनोवीर्यरूप परिणति का उनमें अभाव है । इसलिये सप्तमनरक में जाने का अभाव होने से संमूर्च्छिम आदि की तरह स्त्रियों में सर्वोत्कृष्ट मनोवीर्यरूप परिणति का अभाव सिद्ध होता है ।

ऐसा कहना भी ठीक नहीं है, कारण कि यदि उनमें सप्तमनरक में जाने के योग्य सर्वोत्कृष्ट मनोवीर्य परिणति का अभाव है तो यह कैसे आप जानते हैं कि उनमें निःश्रेयस के प्रति सर्वोत्कृष्ट मनोवीर्यरूप

કે એ વાત દર્શાવનાર આગમ પ્રમાણ આપણને બંનેને માન્ય છે. સર્વોત્કૃષ્ટ દુઃખનું સ્થાન સાતમી નરક છે કારણ કે તેનાથી આગળ બીજું કોઈ દુઃખનું સ્થાન નથી. તથા સર્વોત્કૃષ્ટ સુખનું સ્થાન મોક્ષ છે. શાસ્ત્રો બતાવે છે કે સ્ત્રીઓ સાતમી નરકે જતી નથી, કારણ કે સાતમી નરકે જવાને યોગ્ય તથાવિધ સર્વોત્કૃષ્ટ મનોવીર્યરૂપ પરિણતિનો તેમનામાં અભાવ છે. આ રીતે સાતમી નરકમાં જવાનો અભાવ હોવાથી સંમૂર્છિમ આદિની જેમ સ્ત્રીઓમાં સર્વોત્કૃષ્ટ મનોવીર્યરૂપ પરિણતિનો અભાવ સિદ્ધ થાય છે.

એમ કહેવું તે પણ બરાબર નથી. કારણ કે જો તેમનામાં સાતમી નરકમાં જવાને યોગ્ય સર્વોત્કૃષ્ટ પરિણતિનો અભાવ છે તો આપ એમ કેવી રીતે બોલો છો કે તેમનામાં નિઃશ્રેયસ પ્રત્યે સર્વોત્કૃષ્ટ મનોવીર્યરૂપ પરિણતિનો પણ



અથ સંમૂર્છિમાદિષુ સર્વોત્કૃષ્ટદુઃસ્થાને સર્વોત્કૃષ્ટસુખસ્થાને ચેત્યુભયત્રાપિ તદ્મનયોગ્યતથાવિધસર્વોત્કૃષ્ટમનોવીર્યપરિણત્યભાવો દૃષ્ટસ્તતોઽત્રાપિ તાદૃશમનો-વીર્યપરિણત્યભાવો નિશ્ચેતવ્ય ઇતિ ચેત્, સંમૂર્છિમાદિષુ પ્રતિવન્ધવલેન તાદૃશ-મનોવીર્યપરિણત્યભાવઃ, ન ત્વત્ર પ્રતિવન્ધો વિદ્યતે, ન સ્વલુ સપ્તમપૃથિવીગમનં નિર્વાણ-ગમનસ્ય કારણમ્, નાપિ સપ્તમપૃથિવીગમનાવિનાભાવિ નિર્વાણગમનમ્, ચરમશ-રીરિણાં સપ્તમપૃથિવીગમનમન્તરેણૈવ નિર્વાણગમનદર્શનાત્ ।

પરિણતિ કા ખી અભાવ હૈ । યહ તો કોઈ વાત નહીં હૈ કિ જો પુરુષ ભૂમિકર્ષણાદિક કાર્ય કરને મેં અસમર્થ હોં વે શાસ્ત્રોં કે ખી પઢને મેં અથવા જાનને મેં સમર્થ નહીં હોં ? । ક્યોં કિ હસમેં પ્રત્યક્ષ સે વિરોધ આતા હૈ । જો હાથી એક સૂચી કો નહીં ઉઠા સકતા હૈ કયા વહ વૃક્ષ કી શાખાઓં કે તોડને મેં અસમર્થ હોતા હૈ ? નહીં હોતા હૈ । યદિ એસા માના જાય તો હસમેં પ્રત્યક્ષ સે વિરોધ આતા હૈ ।

યદિ કહા જાય કિ સંમૂર્છિમ આદિકોમેં સર્વોત્કૃષ્ટ દુઃસ્થાને સ્થાને મેં તથા સર્વોત્કૃષ્ટ સુખ કે સ્થાને મેં જાને યોગ્ય તથાવિધ સર્વોત્કૃષ્ટ મનો-વીર્યરૂપ પરિણતિ કા અભાવ દેખા જાતા હૈ ડસી તરહ સ્ત્રિયોં મેં ખી તાદૃશ-મનોવીર્યરૂપ પરિણતિ કા અભાવ નિશ્ચિત હોતા હૈ સો એસા કહના ઠીક હસલિયે નહીં વૈઠતા હૈ કિ સંમૂર્છિમ આદિકોં મેં જો તાદૃશ મનોવીર્યરૂપ પરિણતિ કા અભાવ હૈ હસકા કારણ વહાં પ્રતિબંધ હૈ, યહાં એસા કોઈ પ્રતિબંધ નહીં હૈ । તથા સપ્તમ પૃથિવી મેં ગમન કોઈ નિર્વાણ-

અભાવ છે. એવી તો કોઈ વાત નથી કે જે પુરુષો ભૂમિકર્ષણાદિક કાર્ય કર-વાને અસમર્થ હોય તેઓ શાસ્ત્રો લાણવાના અથવા જાણવામાં પણ અસમર્થ હોય ? કારણ કે તેમાં પ્રત્યક્ષથી વિરોધ આવે છે. જે હાથી એક સોયને ઉઠાવી ન શકતો હોય તે શું વૃક્ષની શાખાઓને તોડવાને અસમર્થ હોય છે ? હોતો નથી. જે એમ માનવામાં આવે તો એમાં પ્રત્યક્ષથી વિરોધ આવે છે.

જે એમ માની લઈએ કે સંમૂર્છિમ આદિકોમાં સર્વોત્કૃષ્ટ દુઃખના સ્થાનમાં તથા સર્વોત્કૃષ્ટ સુખના સ્થાનમાં જવાને યોગ્ય તથાવિધ સર્વોત્કૃષ્ટ મનોવીર્યરૂપ પરિણતિનો અભાવ જોવામાં આવે છે એ જ પ્રમાણે સ્ત્રીઓમાં પણ તાદૃશમનો-વીર્યરૂપ પરિણતિનો અભાવ નિશ્ચિત થાય છે તો એમ કહેવું તે એ કારણે ખરાખર લાંગતું નથી કે સંમૂર્છિમ આદિમાં જે તાદૃશ મનોવીર્યરૂપ પરિણતિનો અભાવ છે તેનું કારણ ત્યાં પ્રતિબંધ છે, અહીં એવો કોઈ પ્રતિબંધ નથી. તથા સાતમી પૃથ્વીમાં ગમન થવું એ કોઈ નિર્વાણ ગમનના પ્રતિ કારણ તો છે



કિન્ચ—યદિ અસપ્તમનરકપૃથિવીગમનત્વેન સ્ત્રીષુ વિશિષ્ટસામર્થ્યાભાવઃ, અતસ્તાઃ પુરુષેભ્યોઽપકૃષ્ટા इति वदसि, तर्हि ब्रूहि स सप्तमनरकगमनाभावः किं यत्रैव जन्मनि स्त्रियो मुक्तिगामिन्यस्तत्रैव विवक्षितः?, किं वा सामान्येन ? ।

તત્રાઘપક્ષાઙ્ગીકારે પુરુષાણામપિ મુક્ત્યભાવપ્રસન્નઃ, તેપામપિ હિ યત્ર જન્મનિ મુક્તિગામિતા, ન તત્રૈવ સપ્તમપૃથિવીગમનમિતિ ।

अथ सामान्येन सप्तमनरकपृथिवीगमनाभाव इति विवक्षितः, अत्रायमाशयः— “ छद्मि च इत्थियाओ, सच्छा मणुया य सत्तमि पुढ्वि ” इत्यागमवचनात् पुरुषाणामेव सप्तमनरकपृथिवीगमनयोग्यकर्माणार्जनसामर्थ्यं, न तु स्त्रीणाम् । एवं चाधोगतौ पुरुषतुल्यसामर्थ्याभावा दूर्ध्वगतावपि स्त्रीणां पुरुषतुल्यसामर्थ्याभाव इत्यनुमीयते ।

गमन के प्रति कारण तो है नहीं, और न निर्वाणगमन सप्तमपृथिवी गमन-अविनाभावी है, क्योंकि चरमशरीरी जो व्यक्ति हुआ करते हैं वे सप्तमपृथिवी गमन के बिना ही निर्वाण में जाते हुए देखे जाते हैं ।

तथा यदि तुम्हारी यही बात मानली जावे कि स्त्रियां सप्तम नरक में नहीं जाती हैं इसलिये उनमें विशिष्ट सामर्थ्य का अभाव है और इसीलिये वे पुरुषों से हीन मानी गई हैं सो इस पर हमारा तुम से ऐसा पूछना है कि यह जो उनमें सप्तम नरक में गमन का अभाव है सो वह क्या जिस भव में उन्हें मुक्ति प्राप्त होती है उसी भव की अपेक्षा से विवक्षित है ? या सामान्यरूप से विवक्षित है ?, यदि इसमें प्रथम पक्ष अंगीकार किया जाय तो इस तरह पुरुषों को भी मुक्ति की प्राप्ति नहीं हो सकती है, क्योंकि जिस जन्म में उन्हें मुक्ति जाना होता है उस जन्म में वे सप्तमनरक में नहीं जाते हैं ।

નહીં, અને ન નિર્વાણગમન સપ્તમપૃથ્વીગમનઅવિનાભાવી છે, કારણ કે ચરમ શરીરી જે વ્યક્તિઓ હોય છે તેઓ સપ્તમપૃથ્વીગમન વિના જ મોક્ષે જતાં જોવામાં આવે છે.

તથા તમારી આ વાત જો માની લઈએ કે સ્ત્રીઓ સાતમી નરકમાં જતી નથી તેથી તેમનામાં વિશિષ્ટ સામર્થ્યનો અભાવ છે અને તેથી જ તેઓને પુરુષો કરતાં હીન માનવામાં આવી છે તો એ બાબતમાં અમારો આપને એ પ્રશ્ન છે કે આ જે તેમનામાં સાતમી નરકે ગમનનો અભાવ છે તે શું જે ભવમાં તેમને મુક્તિ પ્રાપ્ત થાય છે એજ ભવની અપેક્ષાએ વિવક્ષિત છે ? કે સામાન્યરૂપે વિવક્ષિત છે ? . જો તેમાંનો પહેલો પક્ષ સ્વીકાર્ય ગણાય તો એ રીતે પુરુષોને પણ મુક્તિ મળી શકતી નથી, કારણ કે જે જન્મમાં તેમને મોક્ષે જવાનું થાય છે તે જન્મમાં તેઓ સાતમી નરકમાં જતા નથી.

અતસ્તાઃ પુરુષેભ્યોઽપકૃષ્ટા ઇતિ ચેત્ ? શૃણુ ।

અધોગતૌ યેષામતુલ્યં સામર્થ્યં, તેષામૂર્ધ્વગતાવપિ સામર્થ્યમતુલ્યમેવ ભવતીતિ નિયમો નાસ્તિ । તથા ચોક્તમ્—

સંમુચ્છિમ-મુયગ-સ્વગ, -ચઉપ્પય-સપ્પિ-ત્થિ-જલચરેહિંતો ।

સ નરેહિંતો સત્તસુ, કમોવવજ્જંતિ નરણ્ણુ ॥ ૧ ॥

યદિ કહો કિ યહ બાત સામાન્ય સે કહી હૈ કિ સ્ત્રિયોં મેં સસમ-નરક મેં જાને કા અભાવ હૈ, અર્થાત્ ઇસકા આશય યહ હૈ કિ—“છઠ્ઠિં ચ ઇત્થિયાઓ મચ્છા મણુયા ય સત્તમિં પુઢવિં” છઠવીં નરક તક સ્ત્રિયાં જાતી હૈં તથા મચ્છા એવં મનુષ્ય સસમ નરક તક જાતે હૈં, અતઃ સસમ નરક મેં જાને કે યોગ્ય કર્મોંકે ઉપાર્જન કરને કી શક્તિ પુરુષોં મેં હી હૈ પુરુષોં મેં નહીં હૈ, ઇસ પ્રકાર જવ સ્ત્રિયોં મેં અધોગમન કે લિયે પુરુષ-તુલ્ય સામર્થ્ય કા અભાવ હૈ તો ઉર્ધ્વગમન મેં મી પુરુષતુલ્ય સામર્થ્ય કા અભાવ ઉનમેં હૈ, યહ બાત મી અનુમતિ હોતી હૈ । ઇસીસે વે પુરુષોં કી અપેક્ષા હીન માની ગઈ હૈં ।

એસા કહના મી ઠીક નહીં હૈ । કારણ કિ એસા કોઈ નિયમ નહીં હૈ કિ જિનમેં અધોગતિ મેં જાને કા સામર્થ્ય નહીં હૈ ઉનમેં ઉર્ધ્વગતિ મેં મી જાને કા સામર્થ્ય નહીં હૈ । ફિર કહા મી હૈ—

“સમુચ્છિમ ૧-મુયગ ૨, સ્વગ ૩-ચઉપ્પય ૪-સપ્પિ ૫-ત્થિ ૬-જલચરેહિંતો ।

સનરેહિંતો ૭ સત્તસુ, કમોવવજ્જંતિ નરણ્ણુ ॥ ૧ ॥”

જો એમ કહો કે આ વાત સામાન્યરૂપે કહી છે કે સ્ત્રીઓમાં સાતમી નરકે જવાનો અભાવ છે એટલે કે તેનો આશય આ પ્રમાણે છે—“છઠ્ઠિં ચ ઇત્થિ-યાઓ મચ્છા મણુયા ય સત્તમિં પુઢવિં” છઠ્ઠી નરક સુધી સ્ત્રીઓ જાય છે, તથા મચ્છા અને માણસ સાતમી નરક સુધી જાય છે, તેથી સાતમી નરકમાં જવાને યોગ્ય કર્મોંનું ઉપાર્જન કરવાની શક્તિ પુરુષોમાં જ છે સ્ત્રીઓમાં નથી. આ પ્રમાણે જો સ્ત્રીઓમાં અધોગમનને માટે પુરુષ જેટલા સામર્થ્યનો અભાવ છે તો ઉર્ધ્વગમનમાં પણ પુરુષ જેટલા સામર્થ્યનો અભાવ તેમનામાં છે, એ વાતનું પણ અનુમાન કરી શકાય છે, તેથી તેમને પુરુષો કરતાં હીન ગણેલ છે.

એમ કહેવું તે પણ ખરાબર નથી કારણ કે એવો કોઈ નિયમ નથી કે જેમનામાં અધોગતિમાં જવાનું સામર્થ્ય ન હોય તેમનામાં ઉર્ધ્વગતિમાં જવાનું પણ સામર્થ્ય ન હોય વળી કહ્યું પણ છે—

“સંમુચ્છિમ ૧-મુયગ ૨-સ્વગ ૩-ચઉપ્પય ૪-સપ્પિ ૫-ત્થિ ૬-જલચરેહિંતો ।

સનરેહિં તો, સત્તસુ, કમોવવજ્જંતિ નરણ્ણુ” ॥ ૧ ॥

છાયા-સંમૂર્છિમ-ભુજગ-खग-चतुष्पद-सर्प-स्त्री-जलचरेभ्यः ।

सनरेभ्यः सप्तसु, क्रमश उपपद्यन्ते नरकेषु ॥ इति ॥

સંમૂર્છિમ (૧),-ભુજગ (૨),-खग (૩),-चतुष्पद (૪),-सर्प (૫),-स्त्री (૬),  
-जलचर (૭)-નરાણામધોગતૌ નાસ્તિ તુલ્યં સામર્થ્યમ્, ऊर्ध्वगतौ तु तुल्यमेव  
સામર્થ્યમ્ । તદુક્તમ્—

सन्नि-तिरिक्खेहिंतो, सहस्सारंतिएसु देवेषु ।

उपपज्जंति परेषुवि, सव्वेषु वि माणुसेहिंतो ॥ ૨ ॥

छाया—संज्ञि-तिर्यग्भ्यः, सहस्रारान्तिकेषु देवेषु ।

उत्पद्यन्ते परेष्वपि, सर्वेष्वपि मनुष्येभ्यः ॥ ૨ ॥

તથા ચોર્ધ્વગતૌ સ્ત્રીણાં પુરુષતુલ્યસામર્થ્યસદ્ભાવાન્ન વિશિષ્ટસામર્થ્યાસત્ત્વમ્ ।  
તતશ્ચ પુરુષવત્ સ્ત્રીણામપ્યુર્ધ્વગતિયોગ્યતાઽસ્ત્યેવેતિ ।

અર્થાત્ સંમૂર્છિમ ૧, ભુજગ ૨, खग ૩, चतुष्पद ૪, सर्प ૫, स्त्री ૬,  
जलचर और मनुष्य ૭ । इनकी अधोगति प्राप्ति में एक सी शक्ति नहीं  
है, फिर भी ऊर्ध्वगति प्राप्ति में एक सी शक्ति है । कहा भी है—

“ सन्नितिरिक्खेहिंतो, सहस्सारंतिएसु देवेषु ।

उपपज्जंति परेषु वि, सव्वेषु वि माणुसेहिंतो ” ॥ ૨ ॥

અર્થાત્-સંજ્ઞિતિર્યચ્ચ સે નિકલ કર જીવ સહસ્રાર નામકે આઠવે  
દેવલોક તક જાતા હૈ । મનુષ્યસે નિકલા હુઆ જીવ ઉસસે આગે સવ  
દેવલોકોં મેં જા સકતા હૈ । इसलिये ऊर्ध्वगतिमें स्त्रियों के पुरुषतुल्य  
सामर्थ्यका सद्भाव होनेसे उनमें विशिष्ट सामर्थ्यका असत्त्व नहीं है,  
अतः पुरुषकी तरह स्त्रियों में ऊर्ध्वगमनकी योग्यता है ही ।

એટલે કે (૧) સંમૂર્છિમ, (૨) ભુજગ, (૩) ખગ, (૪) ચતુષ્પદ, (૫) સર્પ,  
(૬) સ્ત્રી, (૭) જળચર અને મનુષ્ય, એમનામાં અધોગતિ પ્રાપ્તિની એક સરખી  
શક્તિ નથી, તેા પણ ઉર્ધ્વગતિની પ્રાપ્તિની એક સરખી શક્તિ છે. કહ્યું પણ છે—

“ सन्नितिरिक्खेहिंतो, सहस्सारंतिएसु देवेषु ।

उपपज्जंति परेषु वि, सव्वेषु वि माणुसे हिंतो ॥ ૨ ॥

એટલે કે સંજ્ઞિ તિર્યચ્ચમાંથી નીકળીને જીવ સહસ્રાર નામનાં આઠમાં  
દેવલોક સુધી જાય છે. મનુષ્યમાંથી નીકળેલ જીવ તેનાથી આગળ બધા દેવલો-  
કમાં જઈ શકે છે, તેથી ઉર્ધ્વગતિમાં સ્ત્રીઓને પુરુષતુલ્ય સામર્થ્યનો સદ્ભાવ  
હોવાથી તેમનામાં વિશિષ્ટ સામર્થ્યનો અભાવ નથી, તેથી પુરુષની જેમ સ્ત્રીઓમાં  
ઉર્ધ્વગમનની યોગ્યતા છે જ.

અથ વાદાદિલબ્ધિરહિતત્વેન વિશિષ્ટ સામર્થ્યાસત્ત્વમ્, સ્ત્રીणां हि वादलब्धौ विकुर्वणत्वादिलब्धौ पूर्वगतश्रुताधिगतौ च न सामर्थ्यगतिरस्तीत्य तस्तासां मोक्षगमनसामर्थ्यमपि न संभवति, इति चेन्न, वादादिलब्धिरहितस्यापि क्वचिद् विशिष्टसामर्थ्यं दृश्यते, वादविकुर्वणत्वादिलब्धिविरहेऽपि विशिष्टपूर्वगतश्रुताभावेऽपि मनुष्यादीनां निःश्रेयसपदप्राप्तिश्रवणात् । तथा—जिनकल्प—मनःपर्ययविरहेऽपि न सिद्धिविरहोऽस्ति । तथा च यत्र यत्र वादादिलब्धिमत्त्वं तत्रैव विशिष्टसामर्थ्यमिति नियमो नास्ति, कथं तर्हि वादादिलब्धिरहितत્वेन विशिष्टसामर्थ्याभाव इति वक्तुं प्रभवसीति । अपि च—वादादिलब्ध्यभाववद् यदि निःश्रेयसामावोऽपि स्त्रीणामभविष्यत् ततस्तथैव शास्त्रे प्रत्यपादयिष्यत्, न च प्रतिपाद्यते, तस्मादुपपद्यते स्त्रीणां निर्वाणमिति ।

यदि कहा जाय कि वादादिलब्धिरहित होनेसे उनमें विशिष्ट शक्ति का अभाव है । स्त्रियोंमें वादलब्धिका सामर्थ्य, वैक्रिय आदि लब्धिका सामर्थ्य, पूर्वगत श्रुताधिगमका सामर्थ्य नहीं होता है, इस लिये मोक्ष-गमन सामर्थ्य भी उनमें संभवित नहीं होता है । सो ऐसा कहना भी ठीक नहीं है । कारण कि वादादिलब्धिरहितके भी विशिष्ट सामर्थ्य देखा जाता है । शास्त्रोंमें ऐसी कई कथाएँ आती हैं जो इस बातको बतलाती हैं कि वादलब्धि विकुर्वणत्व आदि लब्धिके अभावमें भी, विशिष्ट पूर्वगत श्रुतके अभावमें भी मनुष्य आदिकों को मोक्षपदकी प्राप्ति हुई है । तथा जिनकल्प एवं मनःपर्ययके अभावमें भी सिद्धिका अभाव नहीं होता है । इसलिये इस पूर्वोक्त कथनसे यह बात सिद्ध हो जाती है कि ऐसा नियम नहीं बन

ને એમ કહેવામાં આવે કે વાદાદિલબ્ધિરહિત હોવાથી તેમનામાં વિશિષ્ટ શક્તિનો અભાવ છે, સ્ત્રીઓમાં વાદલબ્ધિનું સામર્થ્ય, વૈક્રિય આદિ લબ્ધિનું સામર્થ્ય, અને પૂર્વગતશ્રુતાધિગમનું સામર્થ્ય હોતું નથી તેથી મોક્ષ-ગમનનું સામર્થ્ય તેમનામાં સંભવિત હોતું નથી, તો એમ કહેવું તે પણ ખરાખર નથી. કારણ કે વાદાદિલબ્ધિરહિતમાં પણ વિશિષ્ટ સામર્થ્ય જેવામાં આવે છે. શાસ્ત્રોમાં એવી કેટલીએ કથાઓ આવે છે જે એ વાત દર્શાવે છે કે વાદલબ્ધિ, વિકુર્વણત્વ આદિ લબ્ધિના અભાવમાં અને વિશિષ્ટ પૂર્વગતશ્રુતના અભાવમાં પણ મનુષ્ય આદિને મોક્ષની પ્રાપ્તિ થઈ છે. તથા જિનકલ્પ અને મનઃપર્યવના અભાવમાં પણ સિદ્ધિનો અભાવ હોતો નથી, તેથી આ પૂર્વોક્ત કથનથી એ વાત સાબીત થઈ જાય છે કે એવો નિયમ થઈ શકતો નથી કે બધાં

યત્ર યત્રાલ્પશ્રુતત્વં, તત્ર તત્ર વિશિષ્ટસામર્થ્યાભાવ इति नियमो नास्ति । समिति पञ्चकमात्रस्य गुप्तित्रयमात्रस्य च ज्ञानसद्भावेऽपि चास्त्रिप्रकर्षबलात् केवलोत्पत्तिर्भवत्येवेति प्रवचने प्रसिद्धम् । तथा चाल्पश्रुतत्वेऽपि विशिष्टसामर्थ्यं संभवतीति तदभावो नोपपद्यते ॥

સકતા હૈ કિ જહાં ૨ વાદલબ્ધિમત્તા હૈ વહીં ૨ વિશિષ્ટ સામર્થ્ય હૈ, અતઃ જબ એસા નિયમ નહીં બન સકતા હૈ તો ફિર એસા કહના કિ વાદાદિલબ્ધિયોંસે રહિત હોનેકે કારણ સ્ત્રિયોંમેં વિશિષ્ટ સામર્થ્યકા અભાવ હૈ, યહ કૈસે ઉચિત માના જા સકતા હૈ ।

ફિર મી વાદાદિલબ્ધિકે અભાવકી તરહ યદિ મોક્ષકા અભાવ મી સ્ત્રિયોંમેં હોતા તો શાસ્ત્રકાર સિદ્ધાન્તમેં એસા હી કહતે કિ સ્ત્રિયોંકો મુક્તિકી પ્રાપ્તિ નહીં હોતી હૈ । પરન્તુ એસા તો વે શાસ્ત્રકાર કહતે નહીં હૈ, અતઃ ઇસસે યહી જાનના ચાહિયે કિ સ્ત્રિયોંકો નિર્વાણકી પ્રાપ્તિ હોતી હૈ ।

તથા-જહાં ૨ અલ્પશ્રુત જ્ઞાન હૈ વહાં ૨ વિશિષ્ટ સામર્થ્યકા અભાવ હૈ, એસા મી કોઈ નિયમ નહીં હૈ । સમિતિપૈચ્ચક માત્ર તથા ગુપ્તિત્રય માત્રકે જ્ઞાનકે સદ્ભાવમેં મી ચારિત્રકે પ્રકર્ષકે બલસે કેવલજ્ઞાનકી ઉત્પત્તિ હો જાતી હૈ, એસા પ્રવચનમેં સિદ્ધ હૈ । ઇસલિયે અલ્પશ્રુતજ્ઞાન હોને પર મી વિશિષ્ટ સામર્થ્ય સ્ત્રિયોંમેં સંભવિત હો સકતા હૈ, અતઃ ડસ વિશિષ્ટ સામર્થ્યકા અભાવ ડનમેં નહીં બનતા હૈ ।

વાદાદિલબ્ધિમત્તા છે ત્યાં ત્યાં વિશિષ્ટ સામર્થ્ય છે. તેથી જો આવો નિયમ થઈ શકતો નથી તો પછી એવું કહેવું કે વાદાદિલબ્ધિયોથી રહિત હોવાને કારણે સ્ત્રીઓમાં વિશિષ્ટ સામર્થ્યનો અભાવ છે, એ કેવી રીતે ઉચિત માની શકાય ? વળી વાદાદિલબ્ધિના અભાવની જેમ જો સ્ત્રીઓમાં મોક્ષનો અભાવ પણ હોત તો શાસ્ત્રકાર સિદ્ધાન્તમાં એવું જ કહેત કે ‘સ્ત્રીઓને મોક્ષ મળતો નથી.’ પણ એવું તો તે શાસ્ત્રકારે કહેતાં નથી, તેથી એમ જ માનવું જોઈએ કે સ્ત્રીઓને મોક્ષની પ્રાપ્તિ થાય છે.

તથા જ્યાં જ્યાં અલ્પશ્રુત જ્ઞાન છે ત્યાં ત્યાં વિશિષ્ટ સામર્થ્યનો અભાવ છે, એવો પણ કોઈ નિયમ નથી પાંચ સમિતિ માત્ર તથા ત્રણ ગુપ્તિ માત્રના જ્ઞાનના સદ્ભાવમાં પણ ચારિત્રના પ્રકર્ષના બળથી કેવળજ્ઞાન પેદા થાય છે, એવું પ્રવચનમાં સિદ્ધ થયેલ છે. તેથી અલ્પશ્રુત જ્ઞાન હોવા છતાં પણ સ્ત્રીઓમાં વિશિષ્ટ સામર્થ્ય સંભવિત હોઈ શકે છે, તેથી તે વિશિષ્ટ સામર્થ્યનો અભાવ તેમનામાં હોઈ શકે નહીં.

અનુપસ્થાપ્યતા-પારાશ્ચિકતા-શૂન્યત્વેન સ્ત્રીણાં વિશિષ્ટસામર્થ્યાસન્નમિતિચેત્-  
તદપ્યયુક્તમ્—યતસ્તન્નિષેધાત્ વિશિષ્ટસામર્થ્યાભાવો ન નિશ્ચેતું શક્યતે । કથમ્ ?  
અધિકારિણાં યોગ્યતાસ્પેક્ષયા શાસ્ત્રે નાનાપ્રકારકપ્રાયશ્ચિત્તોપદેશઃ શ્રૂયતે । તત્ર  
પુરુષા પેક્ષયાઽપિ યોગ્યતાનુસારેણ ગુરુલઘુપ્રાયશ્ચિત્તોપદેશઃ કૃતઃ । તત્ર લઘુપ્રાય-  
શ્ચિત્તવતાં પુરુષાણામપિ ચારિત્રપ્રકર્ષે કેવલોત્પત્તિર્ભવત્યેવ, ગુરુપ્રાયશ્ચિત્તવતામપિ  
ચારિત્રપ્રકર્ષાભાવે કેવલોત્પત્તિર્ન ભવતિ । કિંચ્ચ—નાનાવિધ તપસોવિધાનં શાસ્ત્રે  
શ્રૂયતે તત્ત્વપુરુષાણામિવ સ્ત્રીણામપ્યુપકારકં, તત્રોભયેષામધિકારાત્ પ્રાયશ્ચિત્ત વિધાનં  
તુ યોગ્યતાસ્પેક્ષયા કથિતમ્ ।

यदि कहो कि स्त्रियोंमें अनुपस्थाप्यता एवं पाराश्रित प्रायश्चित्तकी  
शून्यता है इससे उनमें विशिष्ट सामर्थ्यका अभाव है सो यह भी कहना  
ठीक नहीं है, कारण कि इनके निषेध होनेसे भी विशिष्ट सामर्थ्यका  
अभाव—निश्चित नहीं हो सकता है, क्यों कि अधिकारियों को योग्यता  
की अपेक्षा से शास्त्रों में नाना प्रकार के प्रायश्चित्तों का उपदेश सुना  
जाता है । पुरुषों की अपेक्षा भी योग्यता के अनुसार गुरु एवं लघु प्राय-  
श्चित्तों का वहां उपदेश हुआ है । जिन्हें लघु प्रायश्चित्त देने की बात  
कही गई है ऐसे पुरुषों को भी चारित्र के प्रकर्ष में केवलज्ञान की उत्पत्ति  
होती है । तथा जिन्हें गुरु प्रायश्चित्त का अधिकारी बतलाया गया है  
उनके भी यदि चारित्र का प्रकर्ष नहीं है तो केवलज्ञान की उत्पत्ति  
नहीं होती है ।

तथा—अनेक प्रकार के तपों का विधान शास्त्र में सुना जाता है ।

જે એમ કહેા કે સ્ત્રીઓમાં અનુપસ્થાપ્યતા અને પારાશ્રિત પ્રાયશ્ચિત્ત  
નો અભાવ છે તેથી તેમનામાં સામર્થ્યનો અભાવ છે, તો એમ કહેવું તે પણ  
ખરાખર નથી. કારણ કે તેમનો નિષેધ હોવાથી પણ વિશિષ્ટ સામર્થ્યનો અભાવ  
નિશ્ચિત થઈ શકતો નથી, કારણ કે અધિકારીઓની યોગ્યતાની અપેક્ષાએ  
શાસ્ત્રોમાં વિવિધ પ્રકારના પ્રાયશ્ચિત્તોનો ઉપદેશ સાંભળવામાં આવે છે.  
પુરુષોની અપેક્ષાએ પણ યોગ્યતા પ્રમાણે મોટાં અને નાનાં પ્રાયશ્ચિત્તોનો તેમાં  
ઉપદેશ અપાયો છે. જેમને નાના પ્રાયશ્ચિત્ત દેવાની વાત કહેલ છે એવાં પુરુષોને  
પણ ચારિત્રના પ્રકર્ષમાં કેવળજ્ઞાનની ઉત્પત્તિ થાય છે. તથા જેમને મોટાં પ્રાય-  
શ્ચિત્તના અધિકારી બતાવ્યા છે તેમને પણ જે ચારિત્રનો પ્રકર્ષ હોતો નથી તો  
કેવળજ્ઞાન ઉત્પન્ન થતું નથી.

તથા—શાસ્ત્રોમાં અનેક પ્રકારનાં તપોનું વિધાન સાંભળવામાં આવે છે. તે



તથા ચ સ્ત્રીणां विशिष्टसामर्थ्याभावः गुरुतरप्रायश्चित्तानधिकारित्वादिति कथनं न युक्तमिति ॥ २ ॥ ॥ इति स्त्रीणां विशिष्टसामर्थ्याभावनिराकरणम् ॥

अथ पुरुषानभिवन्द्यत्वेन स्त्रियः पुरुषेभ्योऽपकृष्टा इति चेत्, तदप्ययुक्तम्-यतः-तत् पुरुषानभिवन्द्यत्वं किं सामान्येन किं वा गुणाधिकपुरुषापेक्षया विवक्षितम्?, यदि सामान्येन तदा सामान्यतः सर्वासु स्त्रीषु पुरुषानभिवन्द्यत्वं नास्तीत्यतोऽसिद्धत्वदोषप्रसङ्गः । तीर्थकरस्य जननीं शक्रादयोऽपि प्रणमन्ति, अन्ये प्रणमन्तीति किं पुनर्वाच्यम् ।

वह जिस प्रकार पुरुषों का उपकारक होता है उसी तरह स्त्रियों का भी उपकारक होता है, क्यों कि दोनों का वहां अधिकार है । रहा प्रायश्चित्त का विधान सो वह योग्यता की अपेक्षा रखता है । इसी अपेक्षा को लेकर उसका विधान हुआ है । अतः गुरुतर प्रायश्चित्त की अधिकारिणी नहीं होने से स्त्रियों में विशिष्ट सामर्थ्य का अभाव है, यह कहना युक्ति युक्त नहीं है ।

यदि कहो कि पुरुषों से ये अनभिवंद्य हैं इसलिये ये उनसे अपकृष्ट हैं, सो ऐसा भी कथन उचित प्रतीत नहीं होता है । कारण कि यह अनभिवंद्यता किस रूप से आप कहते हैं-क्या सामान्य पुरुषों की अपेक्षा से या गुणाधिक पुरुषों की अपेक्षासे यदि कहो कि यह अनभिवंद्यता सामान्य पुरुषों की अपेक्षा से उनमें है सो ऐसा कहना उचित नहीं है, क्यों कि सामान्य पुरुष उन्हें वन्दन करते हैं । तीर्थकर की माता को तो शक्रादिक भी नमस्कार करते हैं, फिर दूसरे व्यक्ति की तो बात ही क्या कहना ।

જે રીતે પુરુષોને ઉપકારક થાય છે, એજ રીતે સ્ત્રીઓને પણ ઉપકારક થાય છે, કારણ કે બન્નેનો ત્યાં અધિકાર છે. હવે રહ્યું 'પ્રાયશ્ચિત્તનું' વિધાન તો તે યોગ્યતાની અપેક્ષા રાખે છે. એ અપેક્ષાને લઈને જ તેનું વિધાન થયું છે. તેથી ગુરુતર પ્રાયશ્ચિત્તની અધિકારિણી ન હોવાથી સ્ત્રીઓમાં વિશિષ્ટ સામર્થ્યનો અભાવ છે, એમ કહેવું તે યુક્તિયુક્ત નથી. જો એમ કહો કે પુરુષો વડે તેઓ અનભિવંદ્ય છે તેથી તેઓ તેમનાં કરતાં હીન છે, તો એવું કથન પણ ઉચિત લાગતું નથી, કારણ કે આપ કયા રૂપે તેને અનભિવંદ્યતા કહો છો? શું સામાન્ય પુરુષોની અપેક્ષાએ કે ગુણાધિક પુરુષોની અપેક્ષાએ? જો એમ કહેતા હો કે તે સામાન્ય પુરુષોની અપેક્ષાએ તે અનભિવંદ્યતા તેમનામાં છે તો એમ કહેવું તે યોગ્ય નથી, કારણ કે સામાન્ય પુરુષો તેમને વંદન કરે છે. તો એમ કહેવું તે યોગ્ય નથી, કારણ કે સામાન્ય પુરુષો તેમને વંદન કરે છે, તો બીજી વ્યક્તિઓની



यदि गुणाधिकपुरुषापेक्षया तदित्युच्यते-तदा तीर्थंकरा अपि गणधरान्  
नाभिवन्दन्ते इति गणधरा अपि पुरुषानभिवन्द्यतया मुक्त्यनर्हा भवेयुरिति । एवं  
गणधरा अपि स्वशिष्यान्नाभिवन्दन्ते, ततश्च तेषामपि न मोक्षः स्यात्, इति ।

अथ स्मरणाद्यकर्तृत्वेन स्त्रियः पुरुषेभ्योऽपकृष्टा इति चेत्, तन्न युक्तम्-  
तथाहि-एवं सति गुरुशिष्ययोः सम्यग्दर्शनादिरत्नत्रये समानेऽप्याचार्यस्यैव  
मुक्तिः स्यान्न तु शिष्यस्य, तस्य स्मरणाद्यकर्तृत्वेन पुरुषेभ्योऽपकृष्टत्वात् । न चागमे  
शिष्यस्य मोक्षश्रवणं नास्तीति वाच्यम्, चण्डरुद्राद्याचार्यशिष्याणामागमे मोक्ष  
श्रवणात् ।

यदि कहो कि गुणों से जो अधिक होते हैं वे स्त्रियों को नमन नहीं  
करते हैं, उनकी अपेक्षा वहां अनभिवंद्यता होने से वे उनकी अपेक्षा  
हीन मानी जाती हैं, सो ऐसा कहना भी ठीक नहीं है । गणधरों में भी  
गुणाधिक पुरुषों को अपेक्षा अनाभिवंद्यता आजाने से मुक्ति की प्राप्ति  
का अभाव मानना पड़ेगा । इसी तरह गणधर भी अपने शिष्यों को  
नहीं वंदते हैं अतः उन शिष्यों को भी मोक्ष प्राप्ति नहीं होना मानना पड़ेगा ।

यदि कहो कि स्मरणा आदि की अकर्ता होने से स्त्रियां पुरुषों की  
अपेक्षा हीन मानी गई हैं सो यह भी कोई युक्ति युक्त नहीं है, क्यों कि  
यदि इस तरह उनमें हीनता मानी जायगी तो गुरु को ही मुक्ति होगी,  
ऐसा मानने का प्रसंग आवेगा, शिष्यों को नहीं, कारण कि उनके  
सम्यग्दर्शनादिरत्नत्रय समान होने पर भी आचार्य ही उन्हें स्मरणा

તો વાત જ શી કરવી ? જો એવી દલીલ કરો કે જેઓ અધિક ગુણોવાળાં હોય છે  
તેઓ સ્ત્રીઓને નમન કરતા નથી, તેમની અપેક્ષાએ ત્યાં અનભિવંદ્યતા હોવાથી  
તેમને તે પુરુષો કરતાં હીન માનવામાં આવે છે, તો એમ કહેવું તે પણ  
ઉચિત નથી. કારણ કે એ રીતે તો તીર્થંકરો પણ ગણધરોને નમન કરતાં નથી  
ગણધરોમાં પણ ગુણાધિક પુરુષોની અપેક્ષાએ અનભિવંદ્યતા આવી જવાથી  
મોક્ષ પ્રાપ્તિમાં અભાવ માનવો પડે. એજ પ્રમાણે ગણધરો પણ પોતાના  
શિષ્યોને વંદન કરતાં નથી તો તે શિષ્યોને પણ મોક્ષપ્રાપ્તિ થઈ શકે નહીં  
એમ માનવું પડે. વળી જો એવી દલીલ કરો કે સ્મરણા આદિની અકર્તા હોવાથી  
સ્ત્રીઓ પુરુષો કરતાં હીન માનવામાં આવી છે, તો એ પણ કોઈ રીતે ઉચિત  
નથી, કારણ કે જો એ રીતે એમનામાં હીનતા માની લઈએ તો ગુરૂને જ  
મોક્ષ પ્રાપ્ત થાય છે, એવું માનવું પડશે. શિષ્યોને નહીં, કારણ કે તેમના  
સમ્યગ્દર્શનાદિરત્નત્રય સમાન હોવા છતાં પણ આચાર્ય જ તેમને સ્મરણા આદિ

અમહર્દિકત્વેનાપિ સ્ત્રીणां પુરુષેભ્યોऽપકૃષ્ટત્વં ન યુજ્યતે, યદ્યેવં સ્યાત્ તર્હિ કથય તાવત્, આધ્યાત્મિકીમૃદ્ધિમાશ્રિત્ય તદમહર્દિકત્વ મન્યસે, કિં વા બાહ્યામ્ ?, આદ્યપક્ષસ્તત્ર નિરાકૃત એવ સ્ત્રીणां રત્નત્રયરૂપાયા આધ્યાત્મિકયાઃ ઋદ્ધેઃ સમર્થિતત્વાત્ । નાપિ વાહ્યામૃદ્ધિમાશ્રિત્યામહર્દિકત્વેન સ્ત્રીणाં પુરુષેભ્યોऽપકૃષ્ટત્વાન્મુક્તિ કારણવૈકલ્યમિતિ વાચ્યમ્, યા મદ્વતી તીર્થકરાદીનામૃદ્ધિઃ સા ગણધરાદીનાં નાસ્તિ, ચક્રધરાદીનામપિ યા ઋદ્ધિઃ સા તદિતરેષાં ક્ષત્રિયાદીનાં નાસ્તીત્યેવં તેપામપ્યમહર્દિકત્વેનાપકૃષ્ટત્વાન્મુક્તિકારણવૈકલ્યપ્રસજ્ઞાત્ ।

આદિ કો કરાતે હૈં, શિષ્યે ઉન્હેં નહીં કરાતે હૈં, પરન્તુ આગમ મેં એસી ઘાત તો સુની નહીં જાતી હૈ કિ ગરુઓં કો હી મુક્તિ હોતી હૈ, શિષ્યોં કો નહીં હોતી હૈ । ચળ્ડરુદ્ર આદિ આચાર્ય કે શિષ્યોં કો મુક્તિ હુઈ સુની ગઈ હૈ ।

इसी तरह अहमर्द्विक होनेसे भी स्त्रियां पुरुषोंसे हीन हैं, ऐसा कहना भी ठीक नहीं जचता. कारण कि आप किस ऋद्विका अभाव उनमें बतलाते हैं ? आध्यात्मिक ऋद्विका या बाह्य ऋद्विका ? । आध्यात्मिक ऋद्विका तो उनमें अभाव है नहीं, क्यों कि रत्नत्रयरूप जो आध्यात्मिक ऋद्वि है वह उनमें समर्थित की ही जा चुकी है । इसी तरह बाह्य ऋद्विको आश्रित करके जो यह कहा जाय कि बाह्य ऋद्वि उनमें नहीं है अतः वे अमहर्द्विक होनेसे पुरुषोंकी अपेक्षा हीन हैं, और इसी लिये उनमें मुक्तिके कारण की विकलता है, सो ऐसा कहना भी ठीक नहीं है, कारण कि देखो जो बाह्यऋद्वि तीर्थकरों को होती है वह गणधरों को नहीं होती है, इसी तरह चक्रधरों की जो ऋद्वि होती है वह

કરાવે છે, શિષ્યે તેમને કરાવતા નથી પણ આગમમાં એવી ઘાત સાંભળવામાં આવતી નથી કે ગુરુઓને જ મોક્ષ મળે છે, શિષ્યોને મળતો નથી. ચંડરુદ્ર આદિ આચાર્યના શિષ્યોને મોક્ષ મળ્યાનું સાંભળવામાં આવ્યું છે.

એજ પ્રમાણે અમહર્દ્વિક હોવાથી સ્ત્રીઓ પુરુષોથી હીન છે એમ કહેવું તે પણ ઉચિત લાગતું નથી, કારણ કે આપ તેમનામાં કંઈ ઋદ્ધિનો અભાવ બતાવો છો ? આધ્યાત્મિક ઋદ્ધિનો કે બાહ્ય-ઋદ્ધિનો ? આધ્યાત્મિક ઋદ્ધિનો તે તેમનામાં અભાવ નથી, કારણ કે રત્નત્રયરૂપ જે આધ્યાત્મિક ઋદ્ધિ છે તે તેમનામાં હોવાનું સિદ્ધ કરાઈ ગયું છે. એજ પ્રમાણે બાહ્યઋદ્ધિનો અધાર લઈને જે એમ કહેવામાં આવે કે બાહ્યઋદ્ધિ તેમનામાં નથી તેથી તેઓ અમહર્દ્વિક ને એમ કહેવામાં આવે કે બાહ્યઋદ્ધિ તેમનામાં મોક્ષના કારણની વિકલ હોવાથી પુરુષો કરતાં હીન છે, અને તેથી જ તેમનામાં મોક્ષના કારણની વિકલતા છે, તો એમ કહેવું તે પણ યોગ્ય નથી, કારણ કે જે બાહ્યઋદ્ધિ તીર્થ-કરાવે છે, તો એમ કહેવું તે પણ યોગ્ય નથી, કારણ કે જે બાહ્યઋદ્ધિ તીર્થ-કરોને હોય છે તે ગણધરોને હોતી નથી, એજ પ્રમાણે ચક્રવર્તિઓને જે ઋદ્ધિ

અથ યાઽસૌ પુરુષવર્ગસ્ય મહતી સમૃદ્ધિસ્તીર્થકરત્વલક્ષણા સા સ્ત્રીષુ નાસ્તીત્ય-  
મહર્દિકમાસાં વિવક્ષ્યતે, તદાનીમપ્યસિદ્ધતા, સ્ત્રીણામપિ પરમપુણ્યપાત્રભૂતાનાં કા-  
સાંચિત્ તીર્થકરત્વાવિરોધાત્ તદ્વિરોધસાધકપ્રમાણસ્ય કસ્યાપ્યભાવાત્ ।

યદપિ માયાદિપ્રકર્ષવત્ત્વેન પુરુષેભ્યોઽપકૃષ્ટત્વમિત્યુચ્યતે, તદપ્યસત્-સ્ત્રિયઃ  
પુરુષા અપિ તુલ્યત્વેન માયાદિ પ્રકર્ષવન્ત્ इति લોકે લક્ષ્યતે, આગમેઽપિ શ્રૂયતે-  
ચરમશરીરિણામપિ નારદાદીનાં માયાદિપ્રકર્ષવત્ત્વમ્, અતો ન સ્ત્રીણાં પુરુષેભ્યો-  
ઽપકૃષ્ટત્વેન મુક્તિકારણાવૈકલ્યરૂપસ્ય હેતોરસિદ્ધત્વમિતિ ।

उनसे भिन्न अन्य क्षत्रियादिकों में नहीं होती है । इस लिये इनमें भी  
एक की अपेक्षा अमहर्दिकपना आनेसे अपकृष्टता आ जावेगी । इस  
तरह इनके भी मुक्तिकारणोंकी विकलता होनेका प्रसंग प्राप्त होगा ।

यदि कहो कि पुरुषवर्ग की जो बड़ी भारी तीर्थकरत्वरूप महाऋद्धि  
है वह उनमें नहीं है, इस अपेक्षा उनमें अमहर्दिकता पाई जाती है,  
सो ऐसा कहना भी ठीक नहीं है, कारण कि कितनीक परम पुण्य की  
भाजन स्त्रियों को तो तीर्थकरविभूति की भी प्राप्ति हुई है । इसकी प्राप्ति  
होने में वहां कोई विरोध नहीं आता है, कारण उसके विरोध के साधक  
कोई भी प्रमाण नहीं है ।

तथा जो ऐसा तुम कहते हो कि स्त्रियों में मायादिक की प्रकर्षता  
है अतः इस प्रकर्षता वाली होने से वे पुरुषों की अपेक्षा हीन हैं, सो  
ऐसा कहना भी ठीक नहीं है, कारण कि इस लोक में स्त्री और पुरुष

હોય છે તે તેનાથી જુદા જ પ્રકારના બીજાં ક્ષત્રિયાદિકોમાં હોતી નથી, તેથી  
તેઓમાં પણ એકના કરતાં અમહર્દિકપણું આવવાથી અપકૃષ્ટતા આવી જાય.  
આ રીતે તેમને પણ મોક્ષપ્રાપ્તિના કારણોની વિકલતા હોવાનો પ્રસંગ મળશે.

જો એવી દલીલ કરો કે પુરુષવર્ગની જે ઘણી જ ભારે તીર્થકરત્વરૂપ  
મહાઋદ્ધિ છે તે તેઓમાં નથી, આ અપેક્ષાએ તેમનામાં અમહર્દિકતા ગણાય  
છે. તે એમ કહેવું તે પણ ઉચિત નથી, કારણ કે કેટલીક મહાપુણ્યશાળી  
સ્ત્રીઓને તો તીર્થકરવિભૂતિની પણ પ્રાપ્તિ થઈ છે. તેની પ્રાપ્તિ થવામાં ત્યાં  
કોઈ વિરોધ નહોતો નથી, કારણ કે તેના વિરોધને સિદ્ધ કરનાર કોઈ પણ  
પ્રમાણ નથી.

તથા તમે એવી જે દલીલ કરો છો કે સ્ત્રીઓમાં માયાદિકની પ્રકર્ષતા  
છે તેથી એ પ્રકર્ષતાવાળી હોવાને કારણે તેઓ પુરુષો કરતાં હીન છે, તો એમ  
કહેવું તે પણ ઉચિત નથી, કારણ કે આ લોકમાં સ્ત્રી અને પુરુષ બન્ને સમાન-

નનુ સ્ત્રીणां मुक्तिस्थानादिप्रसिद्धिर्नास्ति, अतः स्त्रीणां मुक्तिर्नभवतीति । यदि स्त्रीणां मुक्तिकारणावैकल्यमभविष्यत् तदा मुक्तिरप्युदपत्स्यत्, तथा च-मुक्तिस्थानादिप्रसिद्धिरपि स्यात्, इति यदुक्तं, तन्न, यत्र यत्र मुक्तिस्थानादिप्रसिद्धिस्तत्रैव मुक्तिरिति चेत्तर्हि पुरुषाणामपि मुक्तिस्थानाद्यप्रसिद्धिः, 'इदं पुरुषाणामेव मोक्षस्थानम्', इति विशेष्य नोक्तं, किं तु 'भव्या मोक्षार्हा' इति प्रतिपादितम्, ततश्च स्वन्मते पुरुषाणामपि मोक्षो न स्यादिति ।

दोनों ही समानरूप से मायादिक के प्रकर्षवाले देखे जाते हैं । आगम भी ऐसा ही कहता है कि चरमशरीरी नारदादिकों के भी मायादिक प्रकर्षता है । इसलिये पुरुषों से अपकृष्ट होने से स्त्रियों के मुक्ति के कारणों की विकलता नहीं सधती है, अर्थात् मुक्ति के कारणों का स्त्रियों में सद्भाव है ।

यदि कहो कि स्त्रियों के मुक्तिस्थान आदि की प्रसिद्धि नहीं है इसलिये उसके अभाव से यही मालूम होता है कि उन्हें मोक्ष नहीं मिलता है । यदि स्त्रियों में मुक्ति के कारणों की अविकलता होती तो उन्हें मुक्ति भी होती, और इस कारण से उनके मुक्ति के स्थानों की भी प्रसिद्धि होती, अतः यह कुछ नहीं है, इससे साफ स्पष्ट मालूम होता है कि इन्हें मुक्ति प्राप्त नहीं होती है । सो ऐसा कहना भी ठीक नहीं है, कारण कि ऐसी कोई यह व्याप्ति तो है नहीं कि जिनर के मुक्तिस्थानों की प्रसिद्धि है उन्हें ही मुक्ति प्राप्त हुई हो । ऐसा तो शास्त्रों में विशेषरूप से कहा नहीं है कि यह पुरुषों का मोक्ष स्थान है, किन्तु ऐसा ही

इપે માયાના પ્રકર્ષવાળા દેખાય છે. આગમ પણ એવું જ કહે છે કે ચરમશરીર નારદાદિકૈમાં પણ મયાદિકની પ્રકર્ષતા હોય છે. તેથી પુરુષો કરતાં હીન હોવાથી સ્ત્રીઓના મોક્ષના કારણોની વિકલતા સિદ્ધ થતી નથી. એટલે કે મોક્ષનાં કારણોનો સ્ત્રીઓમાં સદ્ભાવ છે.

વળી તમે એવી ફલીલ કરો કે મુક્તિસ્થાન આદિની પ્રસિદ્ધિ નહીં હોવાથી તેના અભાવે એજ બાણવા મળે છે કે તેમને મોક્ષ મળતો નથી. જો સ્ત્રીઓમાં મોક્ષનાં કારણોની અવિકલતા હોત તો તેમને મોક્ષ પણ હોઈ શકત, અને એ કારણથી તેમનાં મુક્તિનાં સ્થાનોની પણ પ્રસિદ્ધિ થાત; એવું કંઈ પણ ન હોવાથી સ્પષ્ટ સમજાય છે કે તેમને મોક્ષ મળતો નથી. તો એમ કહેવું તે પણ ઉચિત નથી, કારણ કે એવી કોઈ આ વ્યાપ્તિ તો છે નહીં કે જેમના જેમના મુક્તિસ્થાનોની પ્રસિદ્ધિ છે તેમને જ મોક્ષ મળ્યો હોય છે ? એવું તો શાસ્ત્રોમાં વિશેષરૂપે કહેલ નથી કે આ પુરુષોનું મોક્ષ સ્થાન છે પણ એવું જ

અથ સ્ત્રીવિષયે મુક્તિસાધકપ્રમાણાભાવેન મુક્તિકારણાવૈકલ્યરૂપસ્ય હેતોરસિદ્ધ-  
ત્વમિતિ ચેત્, તર્હિ તાવત્ બ્રૂહિ-મુક્તિસાધકપ્રમાણાભાવ इत्यत्र कस्य प्रमाणस्या-  
भावस्त्वया विवक्षितः ?, किं प्रत्यक्षस्य, किं वाऽनुमानस्य, किं वा-आगमस्येति ? ।

તત્ર યદિ પ્રત્યક્ષસ્યાભાવ इति मन्यसे, तर्हि वद, किं स्वसम्बन्धिनः, किं वा  
सर्वसम्बन्धिनः ? यदि स्वसम्बन्धिनस्तदा किं बाह्यं यथाविहितप्रतिलेखनादिरूपं  
कारणावैकल्यं तद्विषयस्य ?, किं वाऽऽन्तरं चारित्रादिपरिणामरूपं तद्विषयस्येति ? ।

કહા છે કે મન્વ્ય હી મોક્ષ કે યોગ્ય હોતે હૈં, અતઃ મુક્તિસ્થાન આદિ કી  
અપ્રસિદ્ધિ સે જો સ્ત્રિયોં કો મોક્ષ ન માના જાવે તો તુસ્હારે મત સે  
પુરુષોં કો ભી મોક્ષ નહીં હોના યાદિયે ।

અવ યદિ કહો કે સ્ત્રી કે વિષય મેં મુક્તિસાધક પ્રમાણ કા અભાવ  
હોને સે મુક્તિકારણાઽવૈકલ્યરૂપ હેતુ કી અસિદ્ધિ હૈ, સો હમ તુમસે  
યહી પૂછતે હૈં કે કહો કૌન સે પ્રમાણ કા અભાવ આપ કો વિવક્ષિત  
હૈ ? કયા પ્રત્યક્ષ કા કિં વા અનુમાન કા અથવા આગમ કા ? ।

યદિ કહો કે પ્રત્યક્ષ કા અભાવ હૈ સો હસ પર પુનઃ યહ પૂછા જાતા  
હૈ કે સ્વસંબંધી પ્રત્યક્ષ કા અભાવ હૈ અથવા સર્વસંબંધી પ્રત્યક્ષ કા અભાવ  
હૈ ? । યદિ કહો કે સ્વસંબંધી પ્રત્યક્ષ કા અભાવ હૈ, તો હસ પર ભી  
યહ પ્રશ્ન હોતા હૈ કે યથાવિહિત પ્રતિલેખનાદિરૂપ બાહ્ય કારણકી  
અવિકલતાકો દેખનેવાલે પ્રત્યક્ષકા અભાવ હૈ ? અથવા અંતરચરિત્ર આદિ  
પરિણામરૂપ કારણકી અવિકલતાકો દેખનેવાલે પ્રત્યક્ષ કા અભાવ હૈ ? ।

કહેલ છે કે ભવ્ય જ મોક્ષને માટે યોગ્ય હોય છે. તેથી મુક્તિસ્થાન આદિની  
અપ્રસિદ્ધિથી જો સ્ત્રીઓને મોક્ષ માનવામાં ન આવે તો તમારા મત પ્રમાણે તો  
પુરુષોને પણ મોક્ષ મળવો ન જોઈએ.

હવે જો તમે એમ કહેતા હો કે સ્ત્રીઓની બાબતમાં મુક્તિસાધક પ્રમા-  
ણનો અભાવ હોવાથી મુક્તિકારણાઽવૈકલ્યરૂપ હેતુની અસિદ્ધિ છે, તો અમારો  
આપને એ પ્રશ્ન છે કે કયાં પ્રમાણોનો અભાવ આપને વિવક્ષિત છે ? શું પ્રત્યક્ષનો  
કે અનુમાનનો કે આગમનો ?

જો તમે પ્રત્યક્ષનો અભાવ કહેતા હો તો એ બાબતમાં અમારે વળી એ  
પૂછવાનું છે કે સ્વસંબંધી પ્રત્યક્ષનો અભાવ છે અથવા સર્વસંબંધી પ્રત્યક્ષનો  
અભાવ છે, ? જો આપ એમ કહેતા હો કે સ્વસંબંધી પ્રત્યક્ષનો અભાવ છે,  
તો એ વિષે પણ અમારો એ પ્રશ્ન છે કે યથાવિહિત પ્રતિલેખનાદિરૂપ બાહ્ય  
કારણની અવિકલતાને દેખનાર પ્રત્યક્ષનો અભાવ છે ? અથવા અંતર ચરિત્ર આદિ  
પરિણામરૂપ કારણની અવિકલતા દેખનાર પ્રત્યક્ષનો અભાવ છે ?

આદ્યપક્ષસ્તવ સંમતશ્ચેત્, નાસૌ યુક્તઃ, સ્ત્રીષ્વપિ યથોક્તપ્રતિલેખનાદેઃ સર્વથા દર્શનાત્ । યદિ દ્વિતીયઃ પક્ષસ્તદા છદ્મસ્થાપુરુષેષ્વપિચારિત્રાદિપરિણામં પ્રત્યક્ષતયા ન પશ્યન્તીતિ ત્વન્મતે પુરુષસ્યાપિ મોક્ષો ન સ્યાત્ ।

અથ સર્વસમ્બન્ધિનઃ પ્રત્યક્ષસ્યાભાવ ઇતિ ત્વત્સંમતશ્ચેત્, સોઽપ્યસંગત એવ । તથાહિ-અસર્વજ્ઞજનેન સકલજનસમ્બન્ધિપ્રત્યક્ષાત્મકં જ્ઞાનં ક્વચિદપિ ભવિતુમશક્યમ્, તથા સતિ પુરુષસ્યાપિ મોક્ષો ન સ્યાદિતિ ।

અથાનુમાનસ્યાભાવાત્ પ્રમાણાભાવ ઇત્યુચ્યતે, તર્હિ અનુમાનાભાવસ્ય પુરુષેષ્વપિ તુલ્યત્વેન મુક્તિકારણવૈકલ્યપ્રસંગઃ સ્યાત્ ।

યદિ ઇસમેં પ્રથમપક્ષ સ્વીકાર કિયા જાય તો યહ યુક્ત નહીં હૈ, ક્યોં કિ સ્ત્રિયોં મેં ભી યથોક્ત પ્રતિલેખનાદિ સર્વથા દેખે જાતે હૈં-વે ભી પ્રતિલેખનાદિક કરતી હૈં । યદિ દ્વિતીય પક્ષ માના જાય તો છદ્મસ્થ પ્રાણી પુરુષોં મેં ભી ચારિત્રાદિ પરિણામ કો પ્રત્યક્ષરૂપ સે નહીં દેખ સકતે હૈં, અતઃ તુમ્હારે મતમેં પુરુષોં કો ભી મુક્તિ નહીં હોની ચાહિયે ।

યદિ કહો કિ સર્વસંબંધી પ્રત્યક્ષ કા અભાવ હૈ સો એસા કહના ભી ઠીક નહીં હૈ, કારણ કિ અસર્વજ્ઞ કો એસા જ્ઞાન હી નહીં હો સકતા હૈ કિ સર્વસંબંધી પ્રત્યક્ષ કા અભાવ હૈ । એસા હોને પર પુરુષ કો ભી મોક્ષ નહીં હો સકતા હૈ ।

યદિ કહો કિ અનુમાન કા અભાવ હોને સે પ્રમાણ કા અભાવ હૈ સો અનુમાન કા અભાવ પુરુષોં મેં ભી તુલ્ય હૈ, ઇસલિયે વહાં ભી મુક્તિ કારણવૈકલ્ય કા પ્રસંગ પ્રાપ્ત હોગા ।

જો તેમાં પહેલો પક્ષ સ્વીકારવામાં આવે તો તે ઉચિત નથી, કારણ કે સ્ત્રીઓમાં પણ યથોક્ત પ્રતિલેખનાદિ સર્વથા જોવામાં આવે છે-તેઓ પણ પ્રતિલેખનાદિક કરે છે. જો બીજો પક્ષ માનવામાં આવે તો છદ્મસ્થપ્રાણી પુરુષોમાં પણ ચારિત્રાદિ પરિણામને પ્રત્યક્ષરૂપે જોઈ શકતા નથી, તેથી તમારા મત પ્રમાણે પુરુષોને પણ મુક્તિ ન મળવી જોઈ એ

જો એમ કહો કે સર્વસંબંધી પ્રત્યક્ષનો અભાવ છે તો એમ કહેવું તે પણ યોગ્ય નથી, કારણ કે અસર્વજ્ઞને એવું જ્ઞાન જ હોઈ શકતું નથી કે સર્વસંબંધી પ્રત્યક્ષનો અભાવ છે. એવું હોય તો પુરુષોને પણ મોક્ષ મળી શકે નહીં.

જો એમ કહો કે અનુમાનનો અભાવ હોવાથી પ્રમાણનો અભાવ છે તો અનુમાનનો અભાવ પુરુષોમાં પણ તુલ્ય છે. તેથી ત્યાં પણ મુક્તિકારણવૈકલ્યનો પ્રસંગ ઉત્પન્ન થશે.



અથ પુરુષેષ્વેવાનુમાનપ્રમાણમસ્તિ, તથાહિ-યદુત્કર્ષાપકર્ષાભ્યાં યસ્યાપકર્ષોત્કર્ષો, તસ્યાત્યન્તાપકર્ષે તદત્યન્તોત્કર્ષવદ્ દૃષ્ટમ્, યથાઽભ્રપટલાપગમે સૂર્યપ્રકાશઃ । એવં રાગાદ્યુત્કર્ષાપકર્ષાભ્યામપકર્ષોત્કર્ષવચ્ચ ચારિત્રાદિકં ભવતિ । રાગાદેરત્યન્તાપકર્ષઃ સ્ત્રીષુ ન ભવતીત્યતસ્તત્ર નાસ્તિ ચારિત્રોત્કર્ષ ઇતિ ચેત્, તદસત્-પુરુષેષ્વેવ રાગાદે-રત્યન્તાપકર્ષો ભવતિ, ન તુ સ્ત્રીષુ, ઇતિ નિયમો નાસ્તિ, પ્રત્યક્ષવિરોધાત્, દૃશ્યતે હિ સ્ત્રીષ્વપિ રાગાદેરત્યન્તાપકર્ષઃ ।

નાપ્યાગમપ્રમાણસ્યાભાવ ઇતિ વાચ્યં, તસ્યેદ્ ‘ઇત્થીપુરિસસિદ્ધાય’ ઇત્યાદિના પ્રસ્તુતસ્યાપિ સાક્ષાત્ સ્ત્રીમોક્ષાભિધાયકત્વેનાર્થતસ્તત્કારણાઽવૈકલ્યસાધકત્વાત્ ।

યદિ કહો કિ પુરુષોં મેં તો અનુમાન પ્રમાણ હૈં ઓર વહ્ ઇસ પ્રકાર હૈં-જિસકે ઉત્કર્ષ એવં અપકર્ષ મેં જિસકા અપકર્ષ ઓર ઉત્કર્ષ દેખા જાતા હૈં વહ્ ઉસકે અત્યંત અપકર્ષ મેં અત્યન્ત ઉત્કર્ષ વાલા હોતા હૈં । જૈસે-અભ્રપટલ કે અપગમ હોને પર સૂર્ય પ્રકાશ કા ઉત્કર્ષ હોતા દેખા જાતા હૈં । ઇસી તરહ રાગાદિકોં કે ઉત્કર્ષ મેં ચારિત્રાદિકોં કા અપકર્ષ ઓર ઉનકે અપકર્ષ મેં ઉનકા ઉત્કર્ષ હોતા હૈં । અતઃ ઇસ અનુમાન સે પુરુષોં મેં હી રાગાદિકોં કે અપકર્ષસે ચારિત્ર આદિ ગુણોંકા ઉત્કર્ષ સાબિત હોતા હૈં; સ્ત્રિયોંમેં નહીં, ક્યોં કિ ઉનમેં રાગાદિકોંકા અત્યંત અપકર્ષ સંભવિત નહીં હોતાહૈં, સો એસા કહના મી ટીકનહીં, કારણ કિ એસા કોઈ નિયમ નહીં હૈં જો પુરુષોં મેં હી રાગાદિકા અત્યન્ત અપકર્ષ હો, તથા સ્ત્રિયોંમેં ન હો, ક્યોં કિ એસા માનના પ્રત્યક્ષસે વાધિત હોતા હૈં । પ્રત્યક્ષ પ્રમાણ ઇસ વાતકા સમર્થક હૈં કિ રાગાદિકોંકા અત્યન્ત અપકર્ષ સ્ત્રિયોંમેં મી હોતા હૈં, ઇસ

જો એમ કહો કે પુરુષોમાં તો અનુમાન પ્રમાણ છે અને તે આ પ્રકારે છે-જેના ઉત્કર્ષ અને અપકર્ષમાં જેનો અપકર્ષ અને ઉત્કર્ષ જેવામાં આવે છે તે તેના અત્યંત અપકર્ષમાં અત્યંત ઉત્કર્ષવાળું હોય છે. જેમ-અભ્રપટલને અપગમ થતાં સૂર્યપ્રકાશનો ઉત્કર્ષ થતો નજરે પડે છે. એજ પ્રમાણે રાગાદિકોના ઉત્કર્ષમાં ચારિત્રાદિકોનો અપકર્ષ અને તેમના અપકર્ષમાં તેમનો (ચારિત્રાદિકોનો) ઉત્કર્ષ થાય છે, તેથી આ અનુમાનથી પુરુષોમાં જ રાગાદિકોના અપકર્ષથી ચારિત્ર આદિ ગુણોના ઉત્કર્ષ સાબિત થાય છે, સ્ત્રીઓમાં નહીં, કારણ કે તેઓમાં રાગાદિકોનો અત્યંત અપકર્ષ સંભવિત હોતો નથી, તો એમ કહેવું તે પણ ઉચિત નથી, કારણ કે એવો કોઈ નિયમ નથી કે પુરુષોમાં જ રાગાદિકોનો અત્યંત અપકર્ષ હોય, તથા સ્ત્રીઓમાં ન હોય કારણ કે એમ માનવું તે પ્રત્યક્ષથી વાધિત થાય છે. પ્રત્યક્ષ પ્રમાણ એ વાતનું સમર્થક છે કે રાગાદિકોનો અત્યંત અપકર્ષ સ્ત્રીઓમાં પણ હોય છે, એમાં આગમના પ્રમાણનો અભાવ પણ નથી,



ન ચેહ સ્ત્રીશબ્દસ્યાન્યાર્થકત્વં પરિકલ્પનીયમ્, તદ્વિલોકરુઢિતઃ, આગમપરિભાષાતો વા ભવેત્ । તત્ર લોકરુઢિતસ્તાવદન્યાર્થકત્વં ન સંભવતિ, લોકે દિયસ્મિન્નર્થે યઃ શબ્દોઽન્વયવ્યતિરેકાભ્યાં વાચકત્વેન દૃશ્યતે, સ તસ્યાર્થઃ, યથા ગવાદિશબ્દાનાં સાસ્નાદિવિશિષ્ટાદયઃ, સ્ત્રીશબ્દસ્ય લોકપ્રસિદ્ધમર્થમન્તરેણાન્યસ્ય ન વાચ્યત્વેન લોકે શાસ્ત્રે વા પ્રતીતિરસ્તિ ।

મેં આગમ પ્રમાણકા મ્હી અભાવ નહીં હૈ, દેસ્કો-“ ઇત્થીપુરિસસિદ્ધાય ” યહ વાક્ય સ્વયં આગમ પ્રમાણ હૈ । ઇસસે સાક્ષાત્ સ્ત્રીકે મોક્ષકી સિદ્ધિ હોતી હૈ, ક્યોં કિ યહ વાક્ય સ્ત્રિયોંમેં અર્થતઃ મોક્ષકે કારણોંકી અવિકલતાકો સિદ્ધ કરતા હૈ ।

યદિ કહો કિ યહાં “ સ્ત્રી ” શબ્દ અન્યાર્થક હૈ સો પેસા મ્હી કથન ઠીક નહીં હૈ, કારણ કિ યહ ‘ સ્ત્રી શબ્દ અન્યાર્થક હૈ ’ યહ વાત આપ ક્યા લોકરુઢિસે યા આગમકી પરિભાષાસે કહતે હો ? કિસસે કહતે હો ? સો કહો, યદિ લોકરુઢિસે કહતે હો સો યહ માન્યતા આપકી ઠીક નહીં હૈ, કારણ કિ લોકમેં તો યહી સાના જાતા હૈ કિ જિસ અર્થ મેં જા શબ્દ અન્વય-વ્યતિરેક સંબંધદ્વારા સંકેતિત હોતા હૈ વહ શબ્દ ઝસી અર્થ કો કહતા હૈ, ભિન્ન અર્થકો નહીં । “ સ્ત્રી ” યહ શબ્દ અન્વય-વ્યતિરેક દ્વારા સ્ત્રીરૂપ સાધ્ય અર્થમેં હી પ્રયુક્ત કિયા ગયા મિલતા હૈ, અતઃ સ્ત્રીરૂપ પદાર્થ હી ઇસ સ્ત્રી-શબ્દકા વાચ્ય હૈ । જૈસે ગો આદિ શબ્દોંકા વાચ્ય સાસ્ના ( ગલકંબલ ) આદિસે વિશિષ્ટ પદાર્થ હોતા હૈ । ઇસ સ્ત્રી

બુઝો-“ ઇત્થીપુરિસસિદ્ધા ય ” આ વાક્ય પોતે જ આગમપ્રમાણ છે, તેથી સાક્ષાત્ સ્ત્રીના મોક્ષની સિદ્ધિ થાય છે કારણ કે આ વાક્ય સ્ત્રીઓમાં અર્થતઃ મોક્ષનાં કારણોની અવિકલતાને સિદ્ધ કરે છે.

જો આપ એમ કહેતા હો કે અહીં “ સ્ત્રી ” શબ્દ અન્યાર્થક છે તો એવું કથન પણ ખરાબર નથી કારણ કે આ “ સ્ત્રી શબ્દ અન્યાર્થક છે ” એ વાત આપ શું લોકરુઢીથી કે આગમની પરિભાષાથી કહો છો ? સાથી કહો છો તે બતાવો. જો લોકરુઢીથી કહેતા હો તો આપની એ માન્યતા ખરાબર નથી, કારણ કે લોકોમાં તો એજ મનાય છે કે જે અર્થમાં જે શબ્દ અન્વયવ્યતિરેક સંબંધદ્વારા સંકેતિત હોય છે, તે શબ્દ એજ અર્થ દર્શાવે છે, બુદ્ધો નહીં “ સ્ત્રી ” આ શબ્દ અન્વયવ્યતિરેકદ્વારા સ્ત્રીરૂપ સાધ્ય અર્થમાં જ વપરાયેલ મળે છે, તેથી સ્ત્રીરૂપ પદાર્થ જ આ “ સ્ત્રી ” શબ્દનો વાચ્ય છે. જેમ “ ગો ” આદિ શબ્દોનો વાચ્ય સાસ્ના ( ગલકંબલ ) આદિથી વિશિષ્ટ પદાર્થ છે. આ

નાપ્યાગામપરિભાષાતોઽન્યાર્થત્વં સ્ત્રી-શબ્દસ્ય સંભવતિ, ક્વચિદપ્યાગમે દિ સ્ત્રીશબ્દસ્ય પરિભાષિતોઽર્થો નાસ્તીતિ । યથા-ચ્યાકરણે “વૃદ્ધિરાદૈચ્” ૧૧, ૧, ૧ ।” ઇતિ વૃદ્ધિ-શબ્દસ્યાદૈચ્ । દૃશ્યતે ચાગમેઽપિ લોકરૂઢ એવાર્થે સ્ત્રીશબ્દઃ પ્રયુક્તઃ । ‘ઇત્યીઓ જંતિ છટ્ઠિ’ ઇત્યાદૌ ।

ન ચ તત્રાપ્યર્થાન્તરકલ્પના કર્તુ શક્યેતિ વાચ્યમ્, વાધકં વિના તદનુપપત્તેઃ ।  
ઉક્તશ્ચ—પરિભાષિતો ન શાસ્ત્રે, મનુજી-શબ્દોઽથ લૌકિકોઽધિગતઃ ।

અસ્તિ ચ ન તત્ર વાધા, સ્ત્રી-નિર્વાણં તતો ન કુતઃ ॥ ૧ ॥

શબ્દકા લોક પ્રસિદ્ધ અર્થકે સિવાય અન્ય અર્થ હૈ, યહ વાત ન તો લોક મેં પ્રસિદ્ધ હૈ ઓર ન આગમમેં પ્રસિદ્ધ હૈ ।

इसी तरह आगमकी परिभाषासे ‘स्त्री शब्द अन्य अर्थका वाचक है’ ऐसा कहना ठीक नहीं है, कारण कि किसी भी आगममें कहीं पर भी स्त्री शब्दका अन्य अर्थ कथित नहीं हुआ है । जिस प्रकार व्याकरणमें वृद्धि शब्दका अर्थ ‘आत् ऐच्’ ( आ ऐ औ ) होता है । इसी प्रकार आगममें भी लोकरूढ ही अर्थ में स्त्री-शब्द प्रयुक्त हुआ हैं । जैसे—  
“ इत्थीओ जंति छट्ठि ” इत्यादिकी तरह ।

यदि कहो कि हम यहां भी अन्य अर्थकी कल्पना कर लेंगे, सो ऐसा कहना भी उचित नहीं है, कारण कि यह बात बाधकके विना नहीं बन सकती है । कहा भी है—

“ परिभाषितो न शास्त्रे, मनुजी-शब्दोऽथ लौकिकोऽधिगतः ।

अस्ति च तत्र न बाधा, स्त्री-निर्वाणं ततो न कुतः ” ॥ १ ॥

“સ્ત્રી” શબ્દનો લોકપ્રસિદ્ધ અર્થના સિવાય બીજો અર્થ છે, એ વાત લોકમાં પ્રસિદ્ધ નથી, અને આગમમાં પણ પ્રસિદ્ધ નથી.

આ રીતે આગમની પરિભાષાથી “ સ્ત્રી શબ્દ અન્ય અર્થ દર્શાવનાર છે ” એમ કહેવું તે ઉચિત નથી; કારણ કે કોઈ પણ આગમમાં કયાંય પણ સ્ત્રી શબ્દનો બીજો અર્થ કહેલ નથી. જે પ્રકારે વ્યાકરણમાં વૃદ્ધિ શબ્દનો અર્થ આત્ એચ્ ( આ એ ઔ ) થાય છે, એજ પ્રકારે આગમમાં પણ લોકરૂઢ અર્થમાં જ સ્ત્રી શબ્દ વપરાયો છે. જેમકે—“ ઇત્યીઓ જંતિ છટ્ઠિ ” ઇત્યાદિની જેમ.

જો આપ એમ કહો કે અમે અહીં પણ અન્ય અર્થની કલ્પના કરી દેશું, તો એમ કહેવું તે પણ ઉચિત નથી, કારણ કે આ વાત કોઈ પણ મુશ્કેલી વિના નિશ્ચિત થઈ શકે છે કહ્યું પણ છે—

“ પરિભાષિતો ન શાસ્ત્રે,—મનુજી-શબ્દોઽથ લૌકિકોઽધિગતઃ ।

અસ્તિ ચ તત્ર ન વાધા, સ્ત્રીનિર્વાણં તતો ન કુતઃ ” ॥૧॥

નનુ પુરુષાભિલાષાત્મનિ વેદાચ્ચે ભાવે સ્ત્રીશબ્દ આગમે પ્રયુક્તો દૃશ્યતે, ઇતિ શાસ્ત્રેઽર્થાન્તરદર્શનાદન્યોઽર્થસ્તત્ર કલ્પનીયઃ ઇતિ ચેત્, શૂણુ, પુરુષાભિલાષરૂપો વેદઃ સ્ત્રી-શબ્દસ્યાર્થ ઇતિ ત્વયા કથં નિશ્ચિતમ્ ? કિં 'સ્ત્રીવેદઃ' ઇતિ શબ્દશ્રવણમાત્રાદેવ સોઽર્થો નિશ્ચિતઃ ? કિં વા-સ્ત્રીત્વસ્ય પલ્ચશતપૃથક્ત્વાવસ્થાનાભિધાનાત્ ? ।

તાત્પર્ય યહ કિ-મનુજી-શબ્દ અર્થાત્ સ્ત્રી-શબ્દ પારિભાષિક નહીં હૈ, અતઃ વ્યાકરણમે વૃદ્ધિ શબ્દકે સમાન સ્ત્રી-શબ્દકા કોઈ આગમ-પરિભાષિત અર્થ નહીં હો સકતા । રહા લોકરુઢિપક્ષ ! ઉસમેં મી સ્ત્રી શબ્દકા લોકપ્રસિદ્ધ 'સ્ત્રી' અર્થસે ભિન્ન અર્થ નહીં હો સકતા । ક્યોં કિ એસા અર્થ ઉસી સ્થલમેં હોતા હૈ જહાં કિ મુખ્ય અર્થ વાધિત હોતા હો । જૈસે-'ગંગાયાં ઘોષઃ' યહાં પર ગંગાકે મુખ્ય અર્થ પ્રવાહમેં ઘોષકી સ્થિતિ અસંભવ હૈ, હસી લિયે વહાં પર 'ગંગા' શબ્દકા અર્થ લક્ષણાસે તીર હોતા હૈ । ઉસી પ્રકાર યહાં પર સ્ત્રી-શબ્દકે મુખ્યાર્થ મેં કોઈ વાધા નહી હૈ, હસ લિયે મુખ્યાર્થકો છોડ કર ગૌણ અર્થ નહાં લિયા જા સકતા, તવ સ્ત્રિયોંકો મોક્ષ પ્રાપ્તિમેં વાધા ક્યા ? ઉન્હેં મોક્ષ ક્યોં નહીં મિલેગા ? વસ્તુતઃ વે મી મોક્ષકે અધિકારવાલી હૈં ।

યદિ કહો કિ પુરુષાભિલાષાત્મક ભાવવેદમેં સ્ત્રી શબ્દ આગમમેં પ્રયુક્ત હુઆ હૈ અતઃ સ્ત્રી-શબ્દકા યહ ભાવવેદરૂપ સ્ત્રી-અર્થ હમ માન લેંગે, સો એસા કહના મી ઠીક નહીં હૈ, કારણ કિ 'સ્ત્રી-શબ્દકા પુરુ-

તાત્પર્ય એ કે મનુજી શબ્દ એટલે કે સ્ત્રી-શબ્દ પારિભાષિક નથી તેથી વ્યાકરણમાં 'વૃદ્ધિ' શબ્દના જેવો 'સ્ત્રી' શબ્દનો કોઈ આગમપરિભાષિત અર્થ હોઈ શકે નહીં. હવે રહ્યો લોકરૂઢ પક્ષ । તેમાં પણ 'સ્ત્રી' શબ્દનો લોકપ્રસિદ્ધ "સ્ત્રી" અર્થથી ભિન્ન અર્થ હોઈ શકે નહીં. કારણ કે એવો અર્થ એજ સ્થળે થાય છે કે જ્યાં મુખ્ય અર્થ વ્યાધિત થતો હોય. જેમકે-"ગંગાયાં ઘોષ" અહીં ગંગાનો મુખ્ય અર્થ પ્રવાહમાં ઘોષની સ્થિતિ અસંભવિત છે, તેથી તે સ્થાને "ગંગા" શબ્દનો અર્થ લક્ષણથી 'તીર' થાય છે. એ પ્રકારે અહીં સ્ત્રી શબ્દના મુખ્યાર્થમાં કોઈ વાધા નથી; તેથી મુખ્યાર્થને જતો કરીને ગૌણ અર્થ લઈ શકાય નહીં. તો સ્ત્રીઓને મોક્ષ પ્રાપ્તિમાં મુશ્કેલી શી ? તેમને શા માટે મોક્ષ ન મળે ? ખરી રીતે તો તેઓ પણ મોક્ષની અધિકારી છે.

જો આપ એમ કહો કે પુરુષાભિલાષાત્મક ભાવવેદમાં સ્ત્રી-શબ્દ આગમમાં વપરાયો છે તેથી સ્ત્રી-શબ્દનો આ ભાવવેદરૂપ સ્ત્રી-અર્થ અમે માની લઈશું તો એમ કહેવું તે પણ યોગ્ય નથી, કારણ કે "સ્ત્રી-શબ્દનો પુરુષાભિલાષરૂપ

न तावत् 'स्त्रीवेदः' इति शब्दश्रवणमात्रात् सोऽर्थो निश्चेतुं शक्यते, यद्यत्र स्त्री चासौ वेदश्च स्त्रीवेद इति समानाधिकरणसमासो भवेत् तदा स्त्रीशब्दस्यार्थान्तरे वृत्तिर्भवेत् । स च समानाधिकरणसमासः किं बाधकाभावेन कल्पनीयः ? किं वा समासान्तराऽसंभवेन ? ।

न तावद् बाधकाभावेन समानाधिकरणसमासः कल्पनीय इति वक्तुं युक्तम्, तत्र हि स्त्रीशब्दस्य पुरुषाभिलाषात्मको भाव एवार्थो भवेत्, तत् किं स एव साक्षादर्थः ?, किं वा तदुपलक्षितं शरीरम् ? ।

षाभिलाषरूप भाववेद 'यह अर्थ है, यह बात आप कैसे निश्चित करते हैं ? क्या 'स्त्रीवेद' इस शब्दके श्रवणमात्रसे ही, अथवा स्त्रीत्वके पल्यशतपृथक्त्वपर्यन्त अवस्थाके अभिधानसे ? ।

यदि प्रथमपक्ष अंगीकार करो सो ठीक नहीं है, कारण कि "स्त्रीवेद" इस शब्दके श्रवणमात्रसे भाववेदरूप स्त्री-अर्थ निश्चित नहीं होता है । हां यदि "स्त्री चासौ वेदः-स्त्रीवेदः" ऐसा समानाधिकरण समास होता तो स्त्री-शब्दकी अन्य अर्थमें वृत्ति हो सकती । यहां ऐसा समानाधिकरण समास बाधकाभावसे कल्पनीय हुआ है या अन्य समासके यहां अभावसे हुआ है । यदि कहो कि बाधकके अभावसे समानाधिकरण समास कल्पनीय हुआ है सो इस समासमें स्त्री शब्दका अर्थ पुरुषाभिलाषरूप भाववेद ही होगा सो यही अर्थ क्या इसका साक्षात् अर्थ होगा या इससे उपलक्षित 'शरीर' उसका अर्थ होगा । यदि कहो कि पुरुषा

भाववेद " ओ अर्थ छे, ओ बात आप केवी रीते नक्की करे छे ? शुं "स्त्रीवेद" आ शब्दना श्रवणमात्रथी न अथवा स्त्रीत्वना पल्यशतपृथक्त्वपर्यन्त अवस्थानना अभिधानथी ?

ओ पड़ेले पक्ष स्वीकारे तो ते उचित नथी, कारण के "स्त्रीवेद" आ शब्दना श्रवणमात्रथी भाववेदरूप 'स्त्री' अर्थ नक्की थतो नथी. डा, ओ "स्त्री चासौ वेदः-स्त्रीवेदः" ओवे समानाधिकरण समास होत तो स्त्री-शब्दनी भीन अर्थमां वृत्ति होई शकत. अही ओवे समानाधिकरण समास बाधकना अभावथी कल्पनीय थये छे के अन्य समासना अही अभावथी थये छे ? ओ ओम कहे के बाधकना अभावथी समानाधिकरण समास कल्पनीय थये छे तो आ समासमां स्त्री-शब्दना अर्थ पुरुषाभिलाषरूप भाव वेद न उशे, तो ओन अर्थ शु तेना साक्षात् अर्थ थशे के तेना वडे उपलक्षित शरीर तेना अर्थ

યદિ પુરુષાભિલાષરૂપો ભાવ એવ સાક્ષાદર્થ ઇતિ મન્યસે, તદા વ્રૂહિ-કિં તદૈવ તદ્ભાવસ્તવ સંમતઃ, કિં ભૂતપૂર્વગત્યા વા ? તત્ર યદિ તદૈવ સ પુરુષાભિલા-  
લાષાત્મકો ભાવઃ, સ્ત્રીશબ્દાર્થસ્તદા ભવદભિમત પુરુષ નિર્વાણાવસ્થાયામપિ  
વેદસંભવઃ સ્યાત્ । ન ચૈતદાગમપ્રસિદ્ધમિતિ તાદૃશાર્થસ્વીકારે આગમવિરોધઃ ।

યદિ ભૂતપૂર્વગત્યા પુરુષાભિલાષરૂપો ભાવઃ સ્ત્રીશબ્દાર્થઃ, ઇતિ સંમતસ્તદ્દિં દેવાદી-  
નામપિ નિર્વાણપ્રાપ્તિસંભવઃ સ્યાત્ । તથા ચ-“સુરણારણ્યસુ ચત્તારિ હોંતિ ” સુર-  
નારકેષુ ચત્તારિ ભવન્તિ ‘ગુણસ્થાનાનિ’ ઇત્યાદ્યાગમવિરોધઃ, તેષ્વપિ ભૂતપૂર્વગત્યા  
ચતુર્દશગુણસ્થાનસંભવાત્ ।

ભિલાષરૂપ ભાવ હી સાક્ષાત્ સ્ત્રી શબ્દકા અર્થ હોગા તો હમ પૂછતે હૈં  
કિ, કયા ઉસી સમય યહ ભાવ તુમ્હેં સંમત હૈં યા ભૂતપૂર્વગતિસે યહ ભાવ  
તુમ્હેં સંમત હૈં । યદિ કહો સ્ત્રી-શબ્દકા અર્થ ઉસો સમય-ઉસ પર્યાયમેં  
હી પુરુષાભિલાષરૂપ ભાવવેદ હૈં, એસા હમેં સંમત હૈં, સો એસી અવસ્થામેં  
આપકે અભિમત પુરુષનિર્વાણમેં ભી વેદકા સંભવ માના જાયેગા । પરન્તુ  
નિર્વાણ અવસ્થામેં તો વેદકી સંભવતા હોતી હી નહીં હૈં, યહ વાત  
આગમમેં પ્રસિદ્ધ હૈં, અતઃ સ્ત્રી શબ્દકા અર્થ ભાવવેદ સ્ત્રી માનના યહ  
ઠીક નહીં હૈં ।

યદિ કહો કિ ભૂતપૂર્વ ગતિસે પુરુષાભિલાષરૂપ ભાવ, સ્ત્રી-શબ્દકા  
વાચ્ય હૈં તો એસી સ્થિતિમેં દેવાદિકોંકે ભી નિર્વાણકી પ્રાપ્તિ હોને કા  
પ્રસંગ આતા હૈં, જો “સુરણારણ્યસુ ચત્તારિ હોંતિ ” અર્થાત્ દેવ ઓર

થશે ? ને એમ કહેતા હો કે પુરુષાભિલાષરૂપ ભાવ જ સાક્ષાત્ સ્ત્રી શબ્દનો  
અર્થ થશે તો અમે પૂછીએ છીએ કે શું એજ સમયે આ ભાવ તમને કબૂલ છે  
કે ભૂતપૂર્વગતિથી આ ભાવ તમને કબૂલ છે ? ને આપ એમ કહેતા હો કે  
સ્ત્રી-શબ્દનો અર્થ એજ સમયે-એ પર્યાયમાં-જ પુરુષાભિલાષરૂપ ભાવ વેદ છે  
એવું અમને મંજૂર છે તો એવી અવસ્થામાં આપના અભિમત પુરુષનિર્વાણમાં  
પણ વેદનો સંભવ મનાશે. પણ નિર્વાણ-અવસ્થામાં તો વેદની સંભવિતતા  
હોતી જ નથી, એ વાત આગમમાં પ્રસિદ્ધ છે, તેથી સ્ત્રી-શબ્દનો અર્થ ભાવવેદ  
સ્ત્રી માનવો ઉચિત નથી.

ને એમ કહેતા હો કે ભૂતપૂર્વ ગતિથી પુરુષાભિલાષરૂપ ભાવ, સ્ત્રી-શબ્દનો  
વાચ્ય છે તો એવી સ્થિતિમાં દેવાદિકોંકે પણ નિર્વાણની પ્રાપ્તિ થવાનો પ્રસંગ  
આવે છે, જેમ “સુરણારણ્યસુ ચત્તારિ હોંતિ ” એટલે કે દેવ અને નારકીમાં ચાર

અથ તદુપલક્ષિતં પુરુષશરીરં સ્ત્રીશબ્દાર્થં ઇતિ ચેત્, તદા કથય, પુરુષાભિલાષ-  
રૂપો ભાવઃ પુરુષશરીરોપલક્ષણતયા યદિ વિવક્ષિતસ્તત્રાસૌ કિં નિયતવૃત્તિઃ ? કિં વા  
અનિયતવૃત્તિઃ ? રિતિ ।

યદિ નિયતવૃત્તિસ્તદાઽઽગમવિરોધઃ ? પરિવર્તમાનતયૈવ પુરુષશરીરે વેદોદયસ્ય  
તત્રાભિધાનાત્, નિયતવૃત્તિતાયા અનુભવોઽપિ ન ભવતિ ।

અથાનિયતવૃત્તિશ્ચેત્, તદૈવં વદ-કથમસૌ તદુપલક્ષણમ્ ? અથૈવંરૂપમપિ ગૃહા-  
દિષુ કાકાદ્યુપલક્ષણં દૃશ્યતે ઇત્યત્રાપિ તથોચ્યતે,

નારકી મેં ચાર ગુણસ્થાન હોતે હૈં, ઇસ આગમવાક્યકા વિરોધક હોતા  
હૈ, કારણ કિ ભૂતપૂર્વગતિકી અપેક્ષાસે તો દેવ નારકોં મેં બી ચતુર્દશ  
ગુણસ્થાનોં કી સંભાવના હોગી ।

યદિ ‘સ્ત્રી-શબ્દકા અર્થ ભાવવેદસે ઉપલક્ષિત પુરુષકા શરીર હૈ’  
એસા કહો તો કહો-પુરુષાભિલાષરૂપ ભાવપુરુષ શરીરકે ઉપલક્ષણપનેસે  
યદિ વિવક્ષિત હૈ તો યહ કયા વહાં નિયત-વૃત્તિવાલા હૈ કિ અનિયત  
વૃત્તિવાલા હૈ ? ।

યદિ નિયત-વૃત્તિવાલા માના જાય તો આગમસે વિરોધ આતા હૈ,  
કયોં કિ પરિવર્તનપનેસે હી પુરુષશરીરમેં વેદકા ઉદય આગમમેં કહા હૈ ।  
તથા નિયતવૃત્તિરૂપસે તો અનુભવ બી નહીં હોતા હૈ ।

યદિ યહ વહાં “ કૌઆવાલા દેવદત્ત કા ઘર હૈ ” હસકે સમાન  
અનિયત-વૃત્તિવાલા હૈ, એસા કહતે હોતા સ્ત્રી-શરીરમેં બી કમીર પુરુષ-  
વેદકા ઉદય-સંભવિત હોતા હૈ, અતઃ તુમ્હારે મતમેં બી સ્ત્રિયોંકો નિર્વાણ

ગુણસ્થાન હોય છે, એ આગમવાક્યનું વિરોધક થાય છે, કારણ કે ભૂતપૂર્વ-  
ગતિની અપેક્ષાએ તો દેવ-નારકોમાં પણ ચૌદગુણસ્થાનોની સંભાવના હશે.

જો “ સ્ત્રી શબ્દનો અર્થ ભાવવેદથી ઉપલક્ષિત પુરુષનું શરીર છે ” એમ  
કહો તો પુરુષાભિલાષરૂપ ભાવપુરુષ-શરીરનાં ઉપલક્ષણપણાથી જો વિવક્ષિત છે  
તો તે શુ ત્યા નિયતવૃત્તિવાળો છે કે અનિયતવૃત્તિવાળો છે ?

જો નિયતવૃત્તિવાળો માનવામાં આવે તો આગમથી વિરૂદ્ધ ગણાય, કારણ  
કે પરિવર્તનપણાથી જ પુરુષશરીરમાં વેદનો ઉદય આગમમાં કહેલ છે. તથા  
નિયતવૃત્તિરૂપથી તો અનુભવ પણ થતો નથી

જો આ ત્યાં “ કાગડાવાળું દેવદત્તનું ઘર છે ” એના જેવો અનિયત-  
વૃત્તિવાળો છે, એમ કહેતા હો તો સ્ત્રી-શરીરમાં ક્યારેક ક્યારેક પુરુષવેદનો  
ઉદય સંભવિત હોય છે, તેથી તમારા મત પ્રમાણે પણ સ્ત્રીઓને નિર્વાણપ્રાપ્તિ



एवं सति स्त्रीशरीरेऽपि कदाचित् पुरुषवेदस्योदयसंभवात् स्त्रीणामपि त्वमते-  
निर्वाणापत्तिः, यथा हि पुरुषाणां भावतः स्त्रीत्वम्, एवं स्त्रीणामपि भावतः पुरु-  
षत्वसंभवोऽस्ति, भाव एव च मुख्यं मुक्तिकारणम् । तथा च-यद्यपकृष्टेनापि  
स्त्रीत्वेन पुरुषाणां निर्वाणम्, एवमुत्कृष्टेन भावपुरुषत्वेन स्त्रीणामपि कुतो निर्वाणं  
न स्यात् इति ।

न च समासान्तरासंभवेन ‘स्त्रीवेदः’ इत्यत्र समानाधिकरणसमासकल्पनं,  
स्त्रियावेदः स्त्रीवेद इति षष्ठी समासस्यापि संभवात् न चास्य स्त्रीशरीर-पुरुषाभि-  
लाषात्मक वेदयोः सम्बन्धाभावेनायुक्तत्वमिति वाच्यम्, यतस्तयोः सम्बन्धाभावः  
किं भिन्नकर्मोदय रूपत्वेन किं वा पुरुषवत् स्त्रिया अपि स्त्रियां प्रवृत्तिदर्शनेन ? ।

પ્રાપ્તિ હોનેકી આપત્તિ આતી હૈ । જૈસે પુરુષોંકે ભાવકી અપેક્ષા સ્ત્રીત્વ  
હૈ इसी तरह स्त्रियोंके भी भावकी अपेक्षा पुंस्त्व संभव है । तथा मुक्ति  
का कारण मुख्यतासे भाव ही बतलाया गया है, अतः जब अपकृष्टभाव  
स्त्रीपनेसे युक्त पुरुषोंको निर्वाण होता है तब स्त्रियोंको भी उत्कृष्ट भाव  
पुरुषत्वकी अपेक्षासे निर्वाण प्राप्त क्यों नहीं हो सकेगा ? अवश्य  
हो सकेगा ?

तथा समासान्तर के असंभव होने से “स्त्रीवेद” यहां ‘समाना-  
धिकरण समास हुआ है’ ऐसा नहीं मानना चाहिये, क्योंकि “स्त्रियो  
वेदः” इस तरह यहां षष्ठीतत्पुरुष समास भी बन सकता है ।

यदि कहो कि स्त्री-शरीर और पुरुषाभिलाषात्मक वेद, इन दोनों  
का संबंध नहीं बन सकता है इसलिये यह समास अयुक्त है, सो इन

હોવાની આપત્તિ આવે છે જેમ પુરુષોને ભાવની અપેક્ષાએ સ્ત્રીત્વ હોય છે એજ  
પ્રમાણે સ્ત્રીઓને પણ ભાવની અપેક્ષાએ સ્ત્રીત્વ હોય છે એજ પ્રમાણે સ્ત્રીઓને  
પણ ભાવની અપેક્ષાએ પુરુષત્વ સંભવિત છે, તથા મોક્ષનું કારણ મુખ્યત્વે  
ભાવ જ દર્શાવવામાં આવેલ છે, તેથી જો અપકૃષ્ટભાવ સ્ત્રીત્વથી યુક્ત પુરુષોને  
નિર્વાણ મળે છે તો સ્ત્રીઓને પણ ઉત્કૃષ્ટ ભાવ પુરુષત્વની અપેક્ષાએ નિર્વાણ  
પ્રાપ્ત કેમ ન થઈ શકે ? અવશ્ય થઈ શકે.

તથા સમાસાન્તરની અસંભવિતતા હોવાથી “સ્ત્રીવેદ ” અહીં “ સમાના-  
ધિકરણ સમાસ થયો છે ” એવું માનવું જોઈએ નહીં, કારણ કે “સ્ત્રીયો વેદઃ”  
એ રીતે અહીં ષષ્ઠીતત્પુરુષ સમાસ બની શકે છે.

જો એમ કહો કે સ્ત્રી અને પુરુષાભિલાષાત્મકવેદ, એ બન્નેનો સંબંધ  
બની શકતો નથી તેથી આ સમાસ અયોગ્ય છે તો એ વિષે અમારો એ પ્રશ્ન



ન તાવદ્ ભિન્ન કર્મોદયરૂપત્વેન, ભિન્નકર્મોદકરૂપાણામપિ પञ્ચેન્દ્રિયજાત્યા-  
દીનાં ચ સદા સમ્બન્ધદર્શનાત્ ।

નાપિ પુરુષવત્ સ્ત્રિયા અપિ સ્ત્રિયાં પ્રવૃત્તિદર્શનેન તયોઃ સમ્બન્ધાઽભાવ इति  
વક્તું યુક્તમ્ , इयं हि पुरुषाप्राप्ती स्ववेदोदयादपि संभवत्येव । उक्तञ्च—

“સા સ્વકવેદાત્ તિર્યગ્વદલાભે મત્તકામિન્યાઃ” इति ।

અથ સ્ત્રીત્વસ્ય પલ્પશતપૃથક્ત્વાવસ્થાનાભિધાનાત્ પુરુષાભિલાપરૂપે વેદાભ્યે  
ભાવે સ્ત્રીશબ્દ આગમે પ્રયુક્ત इत्यपि न वक्तुं युक्तम् , द्विसंख्यामारभ्य पृथक्त्वमि-

पर हम यह पूछते हैं कि इनमें परस्पर में संबंध का अभाव क्यों है ?  
क्या ये भिन्न २ कर्मोदयरूप हैं इसलिये ? अथवा पुरुष की तरह स्त्रियों  
के भी स्त्रियों में प्रवृत्ति देखी जाती है इसलिये ? । यदि प्रथम पक्ष अंगीकार  
किया जावे तो इससे भिन्नता सिद्ध नहीं होती है, क्योंकि भिन्न कर्मो-  
दयरूप भी पञ्चेन्द्रिय जाति आदि का, तथा देवगति आदि का सदा संबंध  
देखा जाता है । द्वितीय पक्ष भी उचित नहीं, कारण कि स्त्रीकी स्त्रीमें प्रवृत्ति,  
पुरुष की प्राप्ति न होने पर वेदोदय के कारण ही होती है । कहा भी है—

“સા સ્વકવેદાત્ તિર્યગ્વદલાભે મત્તકામિન્યાઃ” अर्थात् यह प्रवृत्ति  
स्त्रीवेद के उदय से पुरुष की प्राप्ति न होने पर तिर्यचनी में तिर्यचनी  
की तरह कामोन्मत्त स्त्रीकी स्त्रीमें होती है । “स्त्रीत्वका पल्लशतपृथक्त्व-  
तक अवस्थान कहा गया है, इससे यह पता चलता है कि पुरुष की  
अभिलाषारूप भाववेद में स्त्री-शब्द का प्रयोग आगम में प्रयुक्त हुआ  
है” सो ऐसा कहना भी युक्तियुक्त नहीं है । द्वि-संख्या से लेकर नव-

છે કે તેમનામાં પરસ્પરના સંબંધનો અભાવ શા માટે છે ? શું તેઓ ભિન્ન  
ભિન્ન કર્મોદયરૂપ છે તેથી ? અથવા પુરુષની જેમ સ્ત્રીઓની પણ સ્ત્રીઓમાં  
પ્રવૃત્તિ જોવામાં આવે છે તેથી ? જો પહેલો પક્ષ સ્વીકારવામાં આવે તો તેથી  
ભિન્નતા સિદ્ધ થતી નથી, કારણ કે ભિન્નકર્મોદયરૂપ પણ પંચેન્દ્રિય જાતિ  
આદિનો, તથા દેવગતિ આદિનો સંબંધ જોવામાં આવે છે, બીજો પક્ષ પણ  
ઉચિત નથી, કારણ કે સ્ત્રીની સ્ત્રીમાં પ્રવૃત્તિ, પુરુષની પ્રાપ્તિ ન થતાં વેદોદયને  
કારણે જ થાય છે. કહ્યું પણ છે—“સા સ્વકવેદાત્ તિર્યગ્વદલાભે મત્તકામિન્યાઃ”  
એટલે કે આ પ્રવૃત્તિ સ્ત્રીવેદના ઉદયથી પુરુષની પ્રાપ્તિ ન થતાં તિર્યચનીમાં  
તિર્યચનીની જેમ કામોન્મત્ત સ્ત્રીની સ્ત્રીમાં થાય છે. “સ્ત્રીત્વનું પલ્પશતપૃથક્ત્વ સુધિ  
અવસ્થાન કહેવાયું છે, તેથી એ જાણવા મળે છે કે પુરુષની અભિલાષારૂપ  
ભાવવેદમાં સ્ત્રી-શબ્દનો પ્રયોગ આગમમાં પ્રયુક્ત થયો છે” તો એમ કહેવું  
તે પણ ઉચિત નથી. દ્વિ-સંખ્યાથી લઈને નવ સંખ્યા સુધી પૃથક્ત્વ કહેવાય

त्यनेन नवसंख्यापर्यन्तं मुच्यते । नवशतपल्योपमपर्यन्तं स्त्रीत्वजात्यवस्थानं स्त्री शरीरे जन्म भवतोत्यर्थः । स्त्रीशरीरप्राप्तौ पुरुषाभिलाषात्मको वेदो न हेतुः, किं तु स्त्रीत्वप्राप्तिकारणभूतकर्मोदय एव कारणम् । पुरुषाभिलाषरूपस्य वेदस्य स्त्रीत्व-प्राप्तिहेतुत्वाभावात् स स्त्रीशब्दार्थो न भवितुमर्हति । तत्र पल्यशतपृथक्त्वावस्थानं स्त्रीत्वानुबन्ध एव हेतुत्वेन विवक्षितः, न तु वेदाख्यो भावः । संभवति हि मृत्युकाले स्याकारविच्छेदेऽपि तत्कारणकर्मोदयविच्छेदो न भवति, तद्विच्छेदाच्च पुंस्त्वा अव्यवधानेन पुनः स्त्रीग्रहणमिति ।

किञ्च—‘ मणुयर्गै चउदस गुणठाणाणि ह्येति । ’

संख्यातक पृथक्त्व कहलाता है । इसका तात्पर्य यह है कि नौ सौ पल्यतक स्त्रीत्व जाति में—स्त्री के शरीर में जन्म होता है । पुरुषाभिलाषात्मक भाववेद स्त्रीशरीर की प्राप्ति में हेतु नहीं है, किन्तु स्त्रीत्व की प्राप्ति में कारणीभूत मायादिकर्म का उदय ही कारण है, पुरुषाभिलाषरूप वेद स्त्री की प्राप्ति में हेतु नहीं है इसलिये वह स्त्री-शब्द का अर्थ नहीं होता है । वहां पल्यशतपृथक्त्वतक स्त्रीशरीर में जन्म लेने में स्त्रीत्व का अनुबन्ध ही हेतुरूप से विवक्षित हुआ है, किन्तु वेद नामका भाव नहीं, अर्थात् भाववेद नहीं । मृत्यु के समय स्त्री-आकार का विच्छेद होनेपर भी स्त्रीत्व की प्राप्तिमें कारणीभूत कर्मका विच्छेद नहीं होता है । कर्मके विच्छेद नहीं होने के कारण पुंस्त्व आदि के अव्यवधान से पुनः स्त्री-शरीरका ही ग्रहण होता है । तथा—“ मणुयर्गै चउदसगुण-ठाणाणि ह्येति ” मनुष्य गति में चौदह गुणस्थान होते हैं, तथा—“ पंचे

छे. तेनु तात्पर्यं એ છે કે નવ સો પલ્ય સુધી સ્ત્રીત્વ જાતિમાં—સ્ત્રીના શરીરમાં જન્મ થાય છે. પુરુષાભિલાષાત્મક ભાવવેદ સ્ત્રી-શરીરની પ્રાપ્તિમાં હેતુ નથી, પણ સ્ત્રીત્વની પ્રાપ્તિમાં માયાદિકર્મનો ઉદય જ કારણરૂપ છે પુરુષાભિલાષરૂપ વેદ સ્ત્રીત્વની પ્રાપ્તિમાં કારણ નથી, તેથી તે સ્ત્રી-શબ્દનો અર્થ થતો નથી. ત્યાં પલ્યશત પૃથક્ત્વ સુધી શરીરમાં જન્મ લેવામાં સ્ત્રીત્વનો અનુબંધ જ હેતુરૂપે વિવક્ષિત થયો છે, પણ વેદ નામનો ભાવ નહીં, એટલે કે ભાવવેદ નહીં. મૃત્યુ સમયે સ્ત્રીના આકારનો વિચ્છેદ થવા છતાં પણ સ્ત્રીત્વની પ્રાપ્તિને માટે કારણભૂત કર્મની વિચ્છેદ થતો નથી. કર્મનો વિચ્છેદ નહીં થવાને કારણે પુરુષત્વ આદિના અવ્યવધાનથી ફરીથી સ્ત્રી-શરીર જ ગ્રહણ થાય છે. તથા—“ મણુયર્ગૈચઉદસ ગુણઠાણાણિ હ્યેતિ ” મનુષ્યગતિમાં ચૌદ ગુણસ્થાન હોય છે.

તથા—‘ પંચિદિણ્ણુ ગુણઠાણાણિ હંતિ ચડદસ । ’

તથા—‘ ચડદસ તસેણુ ગુણઠાણાણિ હંતિ । ’

તથા—‘ ભવસિદ્ધિયા ય સવ્વઢ્ઠાણેણુ હોંતિ । ’

ઇત્યાદિ પ્રવચનં સ્ત્રીશબ્દરહિતમપિ સ્ત્રીનિર્વાણપ્રમાણમસ્તિ, સ્ત્રીણામપિ પુંવન્મનુષ્યગત્યાદિધર્મયોગાત્ ।

અથ સામાન્યવિષયકત્વાદિદં પ્રવચનં સ્ત્રીરૂપે વિષયવિશેષે પ્રમાણં ન સ્યાદિતિ ચેત્, શૃણુ ।

યદ્યેતત્ પ્રવચનં સ્ત્રીવિષયકં નાસ્તીતિ વદસિ, તર્હિ કથય તાવત્ પુરુષાણામપિ કિ મનુષ્યગતિવિશેષરૂપત્વં, પંચેન્દ્રિયવિશેષરૂપત્વં વા ત્રસવિશેષરૂપત્વં વા નાસ્તિ, અસ્તિ વેતિ ?

દિણ્ણુ ગુણઠાણાણિ હંતિ ચડદસ” પંચેન્દ્રિયોર્મેં ચૌદહ ગુણસ્થાન હોતે હેં, તથા “ચડદસ તસેણુ ગુણઠાણાણિ હંતિ” ત્રસોર્મેં ચૌદહ ગુણસ્થાન હોતે હેં, તથા—“ ભવસિદ્ધિયા ય સવ્વઢ્ઠાણેણુ હોંતિ ” સર્મી સ્થાનોર્મેં ભવસિદ્ધિક હોતે હેં । યહ પૂર્વોક્ત સમસ્ત સામાન્ય પ્રવચન મી સ્ત્રીનિર્વાણ કા સમર્થક હૈ, ક્યોં કિ સ્ત્રિયોં મેં મી પુરુષ કી તરહ મનુષ્યગતિ આદિ ધર્મકા સંબંધ રહતા હૈ ।

યદિ ઇસ પર યોં કહા જાય કિ યહ પ્રવચન તો સામાન્યરૂપ સે વસ્તુ કા પ્રતિપાદક હૈ અતઃ સ્ત્રીરૂપ વિશેષ કા નહીં । સુનો—

યદિ ‘ યહ પ્રવચન સ્ત્રીરૂપ વિશેષવિષયક નહીં હૈ ’ એસા માના જાય તો હમ પૂછતે હેં કિ પુરુષોં મેં મનુષ્યગતિરૂપ વિશેષતા, પંચેન્દ્રિયરૂપ વિશેષતા અથવા ત્રસરૂપ વિશેષતા હૈ યા નહીં ? ‘ નહીં હૈ ’ એસા તો

તથા—“ પંચિદિણ્ણુ ગુણ ઠાણાણિ હંતિ ચડદસ ” પંચેન્દ્રિયોર્મા ચૌદ ગુણસ્થાન હોય છે, તથા “ ચડદસ તસેણુ ગુણઠાણાણિ હંતિ ” ત્રસોર્મા ચૌદ ગુણસ્થાન હોય છે, તથા—“ ભવસિદ્ધિયા ય સવ્વઢ્ઠાણેણુ હોંતિ ” સઘણાં સ્થાનોર્મા ભવસિદ્ધિક હોય છે. આ પૂર્વોક્ત સમસ્ત સામાન્ય પ્રવચન પણ સ્ત્રીનિર્વાણનું સમર્થક છે, કારણ કે સ્ત્રીઓમાં પણ પુરુષની જેમ મનુષ્યગતિ આદિ ધર્મનો સંબંધ રહે છે.

જો તે વિષે એમ કહેવામાં આવે કે આ પ્રવચન તો સામાન્યરૂપે વસ્તુનું પ્રતિપાદક છે, તેથી સ્ત્રીય વિશેષનું નથી. સાલજો—

જો “ આ પ્રવચન સ્ત્રીય વિશેષ વિષયક નથી ” એમ માનવામાં આવે તો અમારો એ પ્રશ્ન છે કે પુરુષોમાં મનુષ્યગતિય વિશેષતા, પંચેન્દ્રિયય વિશેષતા અથવા ત્રસય વિશેષતા છે કે નથી ? “ નથી ” એમ તો કહી શકાય

નાસ્તીતિ વક્તું ન યુક્તમ્, તેષાં મનુષ્યગતિવિશેષરૂપત્વાત્ । અથ પુરુષા-  
નામપિ વિશેષરૂપતાઽસ્તીતિ ચેત્, તથા સતિ પુરુષેષ્વપિ કથમેતત્ પ્રવચનં પ્રમાણમ્ ?  
યથા ચ પુરુષેષુ પ્રમાણં તથા સ્ત્રીષ્વપિ પ્રમાણં સ્યાદિતિ ।

અથ પુરુષેષ્વેવ તત્ચરિતાર્થમિતિ સ્ત્રીષુ તસ્યાપ્રગૃહ્ણિઃ કલ્પનીયા સ્યાદિતિ ચેન્ન,  
એવં સતિ વિષયકલ્પનાઽપિ કિં ન સ્યાત્ ।

નન્વેવં તત્પ્રવચનસ્ય સામાન્યવિષયકત્વે અપર્યાપ્તકમનુષ્યાદીનાં દેવનારક-  
તિરશ્ચાં ચ નિર્વાણપ્રસન્નઃ, ઇતિ ચેન્ન, તેષામેતત્ પ્રવચનવાક્યાવિષયત્વાત્, એતદ-  
વિષયત્વં ચાપવાદવિષયત્વાત્ । ઉક્તં હિ—

કહા નહીં જા સકતા હૈ, કારણ કિ ઉનમેં મનુષ્યગતિ આદિરૂપ વિશે-  
ષતા હૈ હી । યદિ કહો કિ પુરુષોં મેં મનુષ્યગતિ આદિરૂપ વિશેષતા હૈ,  
તો પુરુષોં મેં મી યહ પ્રવચન કૈસે પ્રમાણ હોગા ?, ક્યોં કિ પુરુષ મી  
વિશેષરૂપ હી હૈં । ફિર મી યદિ આપ કહેં કિ યહ પ્રવચન પુરુષોં મેં  
પ્રમાણ હૈ, તો સમાન ન્યાયસે હસકો સ્ત્રિયોં મેં મી પ્રમાણ માનના  
હી ચાહિયે ।

યદિ કહો કિ પુરુષોં મેં હી હસ પ્રવચન કી ચરિતાર્થતા હૈ અતઃ યહ  
વહાં હી પ્રમાણ માના જાયગા, સ્ત્રિયોં મેં નહીં, એસે કહને મેં પ્રમાણ નહીં  
હૈ સિર્ફ કહના માત્ર હૈ । જિમ પ્રકાર તુમ એસા કહતે સો હમ મી એસા  
કહ સકતે હૈં કિ યહ પ્રવચન પુરુષોં મેં ચરિતાર્થ નહીં હૈ સ્ત્રિયોં મેં હી  
ચરિતાર્થ હૈ । અતઃ હસ પ્રવચન કો સામાન્ય વિષયક માનના ચાહિયે ।

શંકા—યદિ હસ પ્રવચન કો સામાન્યવિષયક માના જાવે તો

નહીં, કારણ કે તેમનામાં મનુષ્યગતિ આદિરૂપ વિશેષતા છે જ. જો આપ  
એમ કહેતા હો કે પુરુષોમાં મનુષ્યગતિ આદિરૂપ વિશેષતા છે, તો પુરુષોમાં  
પણ આ પ્રવચન કેવી રીતે પ્રમાણ ગણાશે ? કારણ કે પુરુષ પણ વિશેષરૂપ જ  
છે. છતાં પણ આપ જો એમ કહો કે આ પ્રવચન પુરુષોમાં પ્રમાણ છે, તો  
સમાન ન્યાયથી તેને સ્ત્રીઓમાં પણ પ્રમાણ માનવું જોઈએ.

જો એમ કહો કે પુરુષોમાં જ આ વચનની ચરિતાર્થતા છે તેથી તે ત્યાં જ  
પ્રમાણ માની શકાય, સ્ત્રીઓમાં નહીં. તો એવું કહેવામાં પ્રમાણ નથી પણ  
ફક્ત કથન જ છે. જે રીતે તમે એમ કહો છો એ રીતે અમે પણ એમ કહી  
શકીએ કે આ પ્રવચન પુરુષોમાં ચરિતાર્થ નથી, સ્ત્રીઓમાં જ ચરિતાર્થ છે  
તેથી આ પ્રવચનને સામાન્યવિષયક માનવું જોઈએ.

શંકા—જો આ પ્રવચનને સામાન્યવિષયક માનવામાં આવે તો અપર્યાપ્તક

“અપવાદં પરિહૃત્ય, ઉત્સર્ગશ્ચ પ્રવર્તતે ” ઇતિ ।

અપવાદશ્ચ—“મિચ્છાદિદ્વી અપજ્જત્તમે ” ।

તથા—“સુરનારણ્ણુ હોંતિ ચત્તારિ તિરિણ્ણુ જાણ પંચેવ ” ઇત્યાદિરાગમઃ ।

તથા ચોક્તમ્—

“મનુજગતૌ સન્તિ ગુણાશ્ચતુર્દશેત્યાદ્યપિ પ્રમાણં સ્યાત્ ।

પુંવત્ સ્ત્રીણાં સિદ્ધૌ, નાપર્યાસાદિવદ્વાધા ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

અપર્યાસક મનુષ્યાદિકોં મેં તથા દેવનારક એવં તિર્યંચોં મેં મી નિર્વાણપદ પ્રાપ્ત હોને કા પ્રસંગ માનના પડેગા । સો હસ પ્રકાર કી શંકા કરના મી ઠીક નહીં હૈ । કારણ કિ અપર્યાસ મનુષ્ય આદિ હસ પ્રવચન કે વિષય નહીં હૈં । વે તો અપવાદ કે વિષય હૈં । ઓર અપવાદ કો છોડકર ઉત્સર્ગ કી પ્રવૃત્તિ હોતી હૈ, કહા મી હૈ—“અપવાદં પરિહૃત્ય, ઉત્સર્ગશ્ચ પ્રવર્તતે ” ઇતિ । વહ અપવાદ “મિચ્છાદિદ્વીઅપજ્જત્તમે ” તથા—“સુરનારણ્ણુ હોંતિ ચત્તારિ તિરિણ્ણુ જાણ પંચેવ ” હસ પ્રકાર હૈ । હન મિથ્યાદૃષ્ટિ, અપર્યાસક, દેવ, નારક ઓર તિર્યંચકો છોડકર ઉપરોક્ત આગમવાક્ય ચરિનાર્થ હોતા હૈ । અર્થાત્—હનકો છોડકર સબ—મનુષ્ય માત્ર મુક્તિ કે અધિકારી હૈ । કહા મી હૈ—

“મનુજગતૌ સન્તિ ગુણાશ્ચતુર્દશેત્યાદ્યપિ પ્રમાણ સ્યાત્ ।

પુંવન્ સ્ત્રીણાં સિદ્ધૌ, નાપર્યાસાદિવદ્વાધા ॥ ૧ ॥ ” ઇતિ ।

મનુષ્યાદિકોમા તથા દેવ નારક અને તિર્યંચોમાં પણ નિર્વાણપદ પ્રાપ્ત થવાનો પ્રસંગ માનવો પડશે. તો આ પ્રકારની શંકા કરવી તે પણ યોગ્ય નથી. કારણ કે અપર્યાસ મનુષ્ય આદિ આ પ્રવચનનો વિષય નથી. તે તો અપવાદના વિષયો છે. અને અપવાદને જતો કરીને ઉત્સર્ગની પ્રવૃત્તિ થાય છે, કહું પણ છે—

“અપવાદં પરિહૃત્ય ઉત્સર્ગશ્ચ પ્રવર્તતે ” ઇતિ. તે અપવાદ “મિચ્છાદિદ્વીઅપજ્જત્તમે ” તથા “સુર નારણ્ણુ હોંતિ ચત્તારિ તિરિણ્ણુ જાણ પંચેવ ” આ પ્રકારે છે. એ મિથ્યાદૃષ્ટિ, અપર્યાસક, દેવ, નારક અને તિર્યંચને છોડીને ઉપરોક્ત આગમવાક્ય ચરિનાર્થ થાય છે. એટલે કે એમને છોડીને બધા મનુષ્યો મુક્તિના અધિકારી છે. કહેલ પણ છે—

“મનુજગતૌ સન્તિ ગુણાશ્ચતુર્દશેત્યાદ્યપિ પ્રમાણં સ્યાત્ ।

પુંવત્ સ્ત્રીણાં સિદ્ધૌ નાપર્યાસાદિવદ્વાધા ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ

તથાચાયં નિષ્કર્ષઃ—

મનુષ્યસ્ત્રી કાચિન્નિર્વાણં પ્રાપ્નોતિ, અવિકલતત્કારણવત્ત્વાત્ પુરુષવત્ । નિર્વાણસ્ય હિ કારણમવિકલં સમ્યગ્દર્શનાદિત્રયં, તત્ત્વ તાસુ વિદ્યતે એવેતિ પૂર્વમેવ પ્રોક્તમ્ । અપિ ચ—મનુષ્યસ્ત્રી કાચિદ્ મુક્ત્યવિકલકારણવિશિષ્ટા મોક્ષં પ્રાપ્નોતિ, પ્રવ્રજ્યાધિકારિત્વાત્ પુરુષવત્ । ન ચૈતદસિદ્ધં સાધનમ્, “ ગુન્ધિણી બાલવચ્છા ય પવ્વાવેઽં ન કપ્પઈ ” ઇતિ સિદ્ધાન્તેન તાસાં તદધિકારિત્વપ્રતિપાદનાદ્ વિશેષસ્ય શેષાભ્યનુજ્ઞાનનાન્તરીયકત્વાત્ ।

इस तरह इसका निष्कर्ष यह है—कोई २ मनुष्यस्त्री निर्वाण को पाती है कारण कि पुरुष की तरह वहां मुक्ति के कारणों की अविकलता रहती है । निर्वाण का कारण अविकल सम्यग्दर्शनादित्रय है यह अविकल सम्यग्दर्शनादिकों का त्रिक उनमें विद्यमान रहता ही है, यह बात हमने पहिले सिद्ध करदी है । इसलिये कोई २ मनुष्यस्त्री मुक्ति के कारणों की अविकलता से युक्त होने के कारण मुक्ति को प्राप्त करती है” यह हमारा कथन सर्वथा निर्दोष है ।

तथा जिस प्रकार प्रव्रज्या ग्रहण करने के अधिकारी पुरुष हैं उसी तरह वे भी हैं, अतः इससे भी यही बात पुष्ट होती है । कोई २ मनुष्य-स्त्री प्रव्रज्या की अधिकारिणी है यह हमारा कथन असिद्ध नहीं है, कारण कि—“ गुन्धिणी बालवच्छा य पव्वावेऽं न कप्पई ” इस सिद्धान्त वाक्यसे गर्भिणी एवं बालवत्सा को दीक्षा देने का निषेध है, अतः जय

આ પ્રમાણે તેનું તાત્પર્ય એ છે કે કોઈ કોઈ મનુષ્ય સ્ત્રી નિર્વાણ પામે છે કારણ કે પુરુષની જેમ ત્યાં મોક્ષનાં કારણોની અવિકલતા રહે છે. નિર્વાણનું કારણ અવિકલ સમ્યગ્દર્શનાદિ રત્નત્રય છે. આ અવિકલ સમ્યગ્દર્શનાદિ રત્નત્રય તેમનામાં વિદ્યમાન રહે છે, એ વાત અમે પહેલાં સિદ્ધ કરી છે. તેથી કોઈ મનુષ્ય સ્ત્રી મોક્ષનાં કારણોની અવિકલતાથી યુક્ત હોવાને કારણે મોક્ષ પ્રાપ્ત કરે છે, અમારું એ કથન તદ્દન નિર્દોષ છે.

તથા જેમ પુરુષો પ્રવ્રજ્યા ( દીક્ષા ) ગ્રહણ કરવાના અધિકારી છે એજ પ્રમાણે તેઓ પણ છે, તેથી તે વડે પણ એજ વાતને પુષ્ટી મળે છે. કોઈ કોઈ મનુષ્ય સ્ત્રી પ્રવ્રજ્યાની અધિકારિણી છે આ અમારું કથન સિદ્ધ થયાં વિનાનું નથી, કારણ કે “ ગુન્ધિણી બાલવચ્છા ય પવ્વાવેઽં ન કપ્પઈ ” આ સિદ્ધાન્ત વાક્યથી ગર્ભિણી તથા બાલવત્સાને દીક્ષા દેવાનો નિષેધ છે, તેથી જો તેમને



કિંચ—સ્ત્રીણામપિ તદ્ભવ એવ સંસારક્ષયો ભવતિ । સ્ત્રિયો હિ ઉત્તમધર્મસાધિકાઃ, તતશ્ચ કેવલજ્ઞાનપ્રાપ્તિ સંભવસ્તાસામ્ । સતિ ચ કેવલે નિયમાન્મોક્ષ ઇતિ ।

તથા ચોક્તમ્—

“જો સ્વલુ ઇત્થી અજીવો, જ યાસુ અભવ્વા, જ યાવિ દંસણવિરોહિણી, જો અમાણુસા, જો અણારિ ઉપ્પત્તી, જો અસંખેજ્જાડયા, જો અહ્કૂરમઈ, જો જ ઉવસંતમોહા, જો જ સુદ્ધાચારા, જો અસુદ્ધવોંદી, જો વવસાયવજ્જિયા, જો અપુવ્વકરણ વિરોહિણી, જો જવગુણઢાણરહિયા, કહં ન ઉત્તમધમ્મસાહિ ગત્તિ” ।

इन्हें दीक्षा देने का निषेध है तो इससे यह ज्ञात होता है कि इसके अतिरिक्त स्त्रियों को दीक्षित होने का अधिकार है, विशेष का निषेध अवशिष्ट में संमति का पोषक होता है ।

तथा-स्त्रियों का भी तद्भव में ही संसार का क्षय हो जाता है, क्यों कि-वे भी उत्तमधर्म को साधन करने वाली होती हैं । इसलिये इससे उनमें केवलज्ञान की उत्पत्ति होती है । केवलज्ञान के होने पर नियम से मुक्ति का लाभ होता ही है । कहा भी है—

“જો સ્વલુ ઇત્થી અજીવો, જ યાસુ અભવ્વા જ યાવિ દંસણવિરોહિણી, જો અમાણુસા જો અણારિઉપ્પત્તી, જો અસંખેજ્જાડયા, જો અહ્કૂરમઈ, જો જ ઉવસંતમોહા, જો જ સુદ્ધાચારા, જો અસુદ્ધવોંદી, જો વવસાયવજ્જિયા, જો અપુવ્વકરણવિરોહિણી, જો જવગુણઢાણરહિયા કહં ન ઉત્તમધમ્મસાહિ ગત્તિ”

દીક્ષા દેવાનો નિષેધ છે તો તેથી એ જાણવા મળે છે કે તે સિવાયની સ્ત્રીઓની દીક્ષા દેવાનો અધિકાર છે; વિશિષ્ટનો નિષેધ અવિશિષ્ટમાં સંમતિનો પોષક હોય છે.

તથા સ્ત્રીઓનો પણ તે ભવમાં સંસારનો ક્ષય થઈ જાય છે, કારણ કે તેઓ પણ ઉત્તમ ધર્મને સાધનારી હોય છે. તેથી તે વડે તેમનામાં કેવળજ્ઞાન પેદા થાય છે. કેવળજ્ઞાન થતાં નિયમ પ્રમાણે મુક્તિનો લાભ મળે જ છે. કહ્યું પણ છે—

“જો સ્વલુ ઇત્થી અજીવો, જ યાસુ અભવ્વા જ યાવિ દંસણવિરોહિણી, જો અમાણુસા, જો અણારિઉપ્પત્તી, જો અસંખેજ્જાડયા, જો અહ્કૂરમઈ, જો જ ઉવસંતમોહા, જો જ સુદ્ધાચારા, જો અસુદ્ધવોંદી, જો વવસાયવજ્જિયા, જો અપુવ્વકરણવિરોહિણી, જો જવગુણઢાણરહિયા, કહં ન ઉત્તમધમ્મ સાહિ ગત્તિ”



छाया—न खलु स्त्री अजीवः, न चासु अभव्या, न चापि दर्शनविरोधिनी, नो अनार्योत्पत्तिः, नो असंख्येयायुः, नो अतिक्रूरमतिः, नो न उपशान्तमोहा, नो न शुद्धाचारा, नो न अशुद्धशरीरा, नो व्यवसायवर्जिता, नो अपूर्वकरणविरोधिनी, नो नवगुणस्थानरहिता, कथं न उत्तमधर्मसाधिकेति ॥

व्याख्या—स्त्री खलु न अजीवः किं तु जीव एव, जीवस्य चोत्तमधर्मसाधकत्वेन सह विरोधो नास्ति तथैव लोके दर्शनादिति भावः ।

ननु सर्वोऽपि जीव उत्तमधर्मसाधको न भवति, अभव्यजीवानामुत्तमधर्मसाधकत्वाभावादत आह—‘ण यासु अभव्या’ इति, न चाऽऽसु अभव्येति । यद्यपि स्त्रीषु काचिदभव्या, तथापि सर्वैवाभव्या न भवति, संसारनिर्वेद-निर्वाधधर्माद्वैपश्चर्यादिदर्शनादिति भावः ।

छाया—न खलु स्त्री अजीवः, न चासु अभव्या न चापि दर्शनविरोधिनी, नो अमानुषी, न अनार्योत्पत्तिः, नो असंख्येयायुष्का, नो अतिक्रूरमतिः, नो न उपशान्तमोहा, नो न शुद्धाचारा, नो न अशुद्धशरीरा, नो व्यवसायवर्जिता, नो अपूर्वकरणविरोधिनी, नो नवगुणस्थानरहिता कथं न उत्तमधर्मसाधिकेति ।

तात्पर्य इसका इस प्रकार है—“नो खलु स्त्री अजीवः” स्त्री अजाव नहीं है किन्तु जीव ही है । अतः उसका उत्तमधर्मसाधन करने के साथ कोई विरोध नहीं है लोक में भी इसी तरह से देखा जाता है ।

शंका—जीव-मात्र को यदि उत्तमधर्म साधक माना जाय तो फिर अभव्यों को भी जीव होने से उत्तमधर्म का साधक मानना पड़ेगा । परन्तु उनमें तो उत्तमधर्मसाधकता मानी नहीं जाती है । इस प्रकार की आशंका की निवृत्ति के लिये सूत्रकार कहते हैं कि—“न चासु

छाया—न खलु स्त्री अजीवः, न चासु अभव्या, न चापि दर्शनविरोधिनी, नो अमानुषी, नो अनार्योत्पत्तिः, नो असंख्येयायुष्का, नो अतिक्रूरमतिः, नो न उपशान्तमोहा, नो न शुद्धाचारा, नो न अशुद्धशरीरा, नो व्यवसायवर्जिता, नो अपूर्वकरणविरोधिनी, नो नवगुणस्थानरहिता कथं न उत्तमधर्मसाधिकेति ।

तेन तात्पर्य आ प्रमाणे छे—“न खलु स्त्री अजीवः” स्त्री अजीव नहीं पण जीव है । तेनी तेनी उत्तमधर्मसाधन करवा साथे कोई विरोध नहीं । लोकमां पण ओ प्रमाणे न लेवा भणे छे शंका—ले जीव मात्रने उत्तमधर्म साधक मानवामां आवे तो पछी अलव्योने पण जीव होवाथी उत्तमधर्म साधक मानवा पडे, पण तेमनामा तो उत्तमधर्मसाधकता मनाती नहीं । आ प्रकारनी आशंका निवारवा भाटे सूत्रकार कहे छे के “न चासु अभव्या” अलव्य नहीं ।

ભવ્યોઽપિ કશ્ચિદ્ દર્શનવિરોધી સિદ્ધો ન ભવતિ, इत्यत आह—‘ण यावि दंसण-  
विरोहिणी’ इति, न चापि दर्शनविरोधिनी ’ इति । दर्शनमिह सम्यग्दर्शन-  
तत्त्वार्थश्रद्धानरूपं परिगृह्यते, न खलु तद्विरोधिनी, आस्तिक्यादिदर्शनादिति भावः॥

नन्वमानुष्यपि दर्शनाविरोधिनी, सा तु निर्वाणाय नो कल्पते, तस्मादाह—  
‘णो अमाणुसा ’ इति । ‘नो अमानुषी ’ इति, मनुष्यजातौ भवा मानुषी, तत्र  
विशिष्टकरचरणोरुग्रीवाद्यवयवसंनिवेशदर्शनादिति भावः ।

ननु मानુષ્યપિ અનાર્યોત્પન્નાઽનિષ્ટા તદપનોદાર્થમાહ—“ ણો અણારિઉપ્પત્તી ”  
इति ‘ नो अनार्योत्पत्तिः ’ अनार्येषु=अनार्यकुलेषु, उत्पत्तिर्यस्याः सा तथाविधा  
नास्तीति ।

અભવ્યા ” સ્ત્રી અભવ્ય નહીં હૈ । યદ્યપિ સ્ત્રિયોં મેં મી કિતનીક સ્ત્રિયાં  
અભવ્ય હોતી હૈ તથાપિ સર્વ અભવ્ય હી હૈં એસી વાત નહીં હૈ । સંસાર  
સે નિર્વેદ, ધર્મ સે અદ્વેષ તથા શુશ્રૂષા આદિ ગુણ ઉનમેં દેખે જાતે હૈં,  
“ ન ચાપિ દર્શનવિરોધિની ” ભવ્ય હોતે હુએ યે સમ્યગ્દર્શન કી વિરોધિની  
મી નહીં હોતી હૈ । કિતનેક પ્રાણી તો એસે હોતે હૈં જો ભવ્ય હોનેપર મી  
સમ્યગ્દર્શન સે વિરોધ રાખતે હૈં, પરન્તુ યે એસી નહીં હૈં, કયોં કિ  
ઇનમેં આસ્તિક્ય આદિ ગુણ દેખે જાતે હૈં । “ ન અમ્મનુષી ” મનુષ્યજાતિમેં  
યે ઉત્પન્ન હોતી હૈં, કયોં કિ ઇનમેં મનુષ્ય જાતિ કી રચના કે અનુસાર  
વિશિષ્ટ-કર, ચરણ, ઉરુ, એવં ગ્રીવા આદિ અવયવોં કી રચના દેખી  
જાતી હૈ । ઇસ લિયે યે “ અમાનુષી ” નહીં હૈં અર્થાત્ મનુષ્ય હૈં ।  
“ ન અનાર્યોત્પત્તિઃ ” કિતનીક માનુષી મી હોતી હૈં પરન્તુ યદિ વે  
અનાર્યા હૈં તો નિર્વાણ કે યોગ્ય નહીં માની જાતી હૈં અતઃ યે અનાર્ય-

ને કે સ્ત્રીઓમાં પણ કેટલીક સ્ત્રીઓ અભવ્ય હોય છે તો પણ સર્વે અભવ્યજ  
છે એવી વાત નથી. સંસારથી નિર્વેદ, ધર્મથી અદ્વેષ, તથા સેવા આદિ ગુણ  
તેમનામાં નજરે પડે છે. “ ન ચાપિ દર્શનવિરોધિની ” ભવ્ય હોઇને તેઓ  
સમ્યગ્દર્શનની વિરોધિની હોતી નથી. કેટલાક પ્રાણીઓ એવાં હોય છે કે તેઓ  
ભવ્ય હોવા છતાં પણ સમ્યગ્દર્શનથી વિરોધ રાખે છે, પણ તેઓ એવી નથી  
કારણ કે તેમનામાં આસ્તિકતા આદિ ગુણ ભેવા મળે છે. “ ન અમાનુષી ”  
મનુષ્યજાતિમાં તેઓ ઉત્પન્ન થાય છે કારણ કે તેમનામાં મનુષ્યજાતિની રચના  
પ્રમાણે વિશિષ્ટ-હાથ, પગ, છાતી, અને ગ્રીવા વગેરે અવયવોની રચના ભેવામાં  
આવે છે. માટે તેઓ “ અમાનુષી ” નથી “ નો અનાર્યોત્પત્તિઃ ” કેટલીક માનુષી પણ  
હોય છે પણ ને તેઓ અનાર્યા હોય તો નિર્વાણને યોગ્ય મનાતી નથી તેથી

નન્વાર્યકુલોત્પન્નાઽપ્યસંખ્યેયાયુષ્કા ન ભવતિ નિર્વાણયોગ્યેત્યત્ આહ—‘જ્ઞો અસંખ્યેજ્જાહ્યા ’ ઇતિ, ‘ નો અસંખ્યેયાયુષ્કા ’ ઇતિ, યા તુ અસંખ્યેયાયુષ્કા યુગલજન્મા ન ભવતિ, કિં તુ સંખ્યેયાયુષ્કા તથાવિધા નિર્વાણયોગ્યા ભવત્યેવેતિ ભાવઃ।

નનુ સંખ્યેયાયુષ્કાઽપિ ક્રૂરમતિર્નાધિકારિણી નિર્વાણસ્યેતિ તન્નિરાકરણાર્થમાહ— ‘ જ્ઞો અક્રૂરમર્ઈ ’ ઇતિ, ‘ નો અતિક્રૂરમતિઃ ’ ઇતિ । અતિક્રૂરમતિર્ન ભવતિ, સસમનરકાયુર્નિવન્ધનરૌદ્રધ્યાનાભાવાત્ । ન તુ તદ્વત્ પ્રકૃષ્ટશુભધ્યાનાભાવોઽપિ ન સ્યાત્તસ્યા ઇતિ ચેત્, ન, તેન તસ્ય પ્રતિવન્ધાભાવાત્ ।

કુલોં મેં ઉત્પન્ન નહીં હુઈ હેં કિન્તુ આર્યકુલોદ્ભવ હેં । હસી તરહ “ નો અસંખ્યેયાયુષ્કા ” યે આર્યકુલોત્પન્ન હોકર ફિર અસંખ્યાત વર્ષ કી આયુવાલી નહીં હેં, ક્યોં કિ અસંખ્યાત વર્ષ કી આયુવાલે ભોગ ભૂમિયા જીવ હોતે હેં, વે મોક્ષ કે અધિકારી નહીં હોતે હેં । યે સંખ્યાત વર્ષ કી આયુવાલી હેં, અતઃ નિર્વાણયોગ્ય હેં । સંખ્યાત વર્ષ કી આયુવાલી ભી કિતનીક અતિક્રૂર મતિવાલી સ્ત્રિયાં નિર્વાણ કી અધિકારિણી નહીં હોતી હેં અતઃ હસ દોષકો દૂર કરનેકે લિયે એસા કહા હૈ કિ યે અતિ ક્રૂર મતિવાલી નહીં હેં, હસલિયે યે સસમનરક કી આયુ કે વંધ કે કારણભૂત રૌદ્રધ્યાન સે રહિત હોતી હેં । જિસ તરહ હનમેં સસમનરક કી આયુ કે વંધ કે કારણભૂત રૌદ્રધ્યાન કા અભાવ, હૈ ઁસી તરહ હનમેં પ્રકૃષ્ટ શુભધ્યાન કા ભી અભાવ માનના ચાહિયે સો યહ વાત નહીં હૈ, કારણ અશુભ રૌદ્રધ્યાન કે સાથ હસકા કોઈ અવિનાભાવ-સંબંધરૂપ

તેઓ અનાર્યકુળોમાં ઉત્પન્ન થયેલ નથી પણ આર્યકુલમાં ઉત્પન્ન થયેલ છે. એજ પ્રમાણે “ નો અસંખ્યેયાયુષ્કા ” તે આર્યકુલોત્પન્ન થઈને અસંખ્યાત વર્ષના આયુષ્યવાળી નથી, કારણ કે અસંખ્યાત વર્ષનાં આયુવાળાં ભોગભૂમિયા જીવ હોય છે તે મોક્ષના અધિકારી હોતા નથી. તેઓ તો અસંખ્યાત વર્ષનાં આયુવાળી છે, તેથી નિર્વાણને યોગ્ય છે. સંખ્યાત વર્ષનાં આયુવાળી પણ કેટલીક અતિક્રૂરમતિવાળી સ્ત્રીઓ નિર્વાણની અધિકારિણી હોતી નથી તેથી એ દોષને દૂર કરવા માટે એવું કહેલ છે કે તેઓ “ નો અતિક્રૂરમતિ ” અતિક્રૂરમતિવાળી નથી, તેથી તેઓ સાતમી નરકના આયુષ્યને કારણભૂત રૌદ્રધ્યાનથી રહિત હોય છે. જેમ તેમનામાં સાતમી નરકના આયુષ્યના કારણરૂપ રૌદ્રધ્યાનનો અભાવ છે એજ પ્રમાણે તેમનામાં પ્રકૃષ્ટ શુભધ્યાનનો પણ અભાવ માનવો જોઈએ એવી આ વાત નથી, કારણ કે અશુભ રૌદ્રધ્યાનની સાથે તેનો કોઈ અવિનાશવ સંબંધરૂપ પ્રતિબંધ નથી. તે ધ્યાનના

અક્રૂરમતિરપિ યા રતિલાલસા સા ન ભવતિ નિર્વાણયોગ્યેત્યત આહ-‘જો જ ઉવસંતમોહા’ ઇતિ, ‘નો ન ઉપશાન્તમોહા’ ઇતિ । કાચિદુપશાન્તમોહાઽપિ સંભવતિ, તથાદર્શનાદિતિ ભાવઃ ।

ઉપશાન્તમોહાઽપિ યા સ્વલ્પશુદ્ધાચારા ગર્હિતા, સા ન ભવતિ નિર્વાણયોગ્યેત્યત આહ-“જો જ સુદ્ધાચારા” ઇતિ, ‘નો ન શુદ્ધાચારા’ ઇતિ । કાચિત્ શુદ્ધાચારોઽપિ ભવતિ, અતિચારવર્જનેન શુદ્ધાચારદર્શનાદિતિ ભાવઃ ।

શુદ્ધાચારાઽપિ કાચિદશુદ્ધવોન્દિર્ન નિર્વાણાધિકારિણીત્યત આહ-“જો અશુદ્ધવોન્દી” ઇતિ, ‘નો અશુદ્ધશરીરા’ ઇતિ । યા વજ્રર્પભનારાચસંઘનનરહિતા સા અશુદ્ધશરીરા, સા ન ભવતિ મોક્ષયોગ્યા સર્વેવ તથાવિધા ન ભવતીત્યર્થઃ । કાચિત્ શુદ્ધશરીરાઽપિ ભવતીતિ ભાવઃ ।

પ્રતિબંધ નહીં હૈ । ઉસ ધ્યાન કે અભાવ મેં મી પ્રકૃષ્ટ શુભ ધ્યાન હો સકતા હૈ । “નો ન ઉપશાન્તમોહા” કિતનીક સ્ત્રિયાં અતિક્રૂર મતિવાલી નહીં મી હોતી હૈ પરન્તુ ઉનમેં રતિ કી લાલસા રહતી હૈ અતઃ એસી સ્ત્રિયાં નિર્વાણયોગ્ય નહીં માની ગઈ હૈ સો હસ વાધાકી નિવૃત્તિ કે લિયે સૂત્રકાર કહતે હૈ કિ યે વિવક્ષિત સ્ત્રિયાં અક્રૂરમતિવાલી હોકર ઉપશાંત મોહવાલી હૈ । ઇનકી રતિલાલસારૂપ મોહપરિણતિ ઉપશાન્ત હો ચુકી હૈ । “નો ન શુદ્ધાચારા” કિતનીક સ્ત્રિયાં એસી મી હોતી હૈ જો ઉપશાંતમોહપરિણતિ વિશિષ્ટ હોને પર મી અશુદ્ધ આચારવાલી હોતી હૈ પરન્તુ જિન્હેં મુક્તિ પ્રાપ્ત કરની હૈ વે શુદ્ધ આચાર વિશિષ્ટ નહીં હોતો હૈ, યહ વાત નહીં હૈ અપિ તુ શુદ્ધાચાર વિશિષ્ટ હી હોતી હૈ, ક્યોં કિ યે અપને આચાર મેં દોષોં કો નહીં લગને દેતી હૈ, તથા લગને પર ઉનકી શુદ્ધિ કરતી હૈ । “નો અશુદ્ધશરીરા” શુદ્ધાચાર વિશિષ્ટ હોને

અભાવમાં પણ પ્રકૃષ્ટ શુભધ્યાન હોઈ શકે છે. “નો ન ઉપશાન્ત મોહા” કેટલીક સ્ત્રીઓ અક્રૂરમતિવાળી હોતી પણ તેઓમાં રતિની લાલસા રહે છે, તેથી એવી સ્ત્રીઓ નિર્વાણને પાત્ર મનાયેલ નથી. તે એ બાધાના નિવારણ માટે સૂત્રકાર કહે છે કે તે વિવક્ષિત સ્ત્રીઓ અક્રૂરમતિવાળી થઈને ઉપશાંત મોહવાળી છે. તેમની રતિલાલસારૂપ મોહપરિણતિ ઉપશાંત થઈ ગયેલ છે. “નો ન શુદ્ધાચારા” કેટલીક સ્ત્રીઓ એવી પણ હોય છે કે ઉપશાંતમોહપરિણતિ યુક્ત હોવા છતાં અશુદ્ધ આચારવાળી હોય છે, પણ જેને મોક્ષ પ્રાપ્ત કરવો છે તે શુદ્ધ આચારયુક્ત હોતી નથી એવી કોઈ વાત નથી, પણ શુદ્ધાચાર યુક્ત જ હોય છે, કારણ તેઓ પોતાના આચારમાં દોષો લાગવા દેતો નથી અને લાગે તેની શુદ્ધિ કરે છે. “નો અશુદ્ધ શરીરા” શુદ્ધ આચારયુક્ત કેટલીક

શુદ્ધશરીરાડપિ વ્યવસાયવર્જિતા નિન્દિતૈવેત્યત આહ—“જો વ્યવસાયવર્જિયા”  
 इति, ‘नो व्यवसायवर्जिता’ । शास्त्रोक्तार्थे श्रद्धालुतया काचित् परलोकव्यवसायिनी  
 भवति, परलोकार्थं तत्प्रवृत्तिदर्शनादिति भावः ।

ननु काचिद् व्यवसायसहिताऽपि अपूर्वकरणविरोधिन्वेव दृश्यते, इत्यत आह  
 “जो अपुर्वकरणविरोहिणी” इति, ‘नो अपूर्वकरणविरोधिनी’ इति स्त्रीजातावप्य-  
 पूर्वकरणसंभवस्य प्रतिपादितत्वात् ।

पर भी कितनीक स्त्रियां शरीर से अशुद्ध रहा करती हैं अतः वे निर्वाण  
 प्राप्ति की अधिकारिणी नहीं होती हैं सो इस शंका के समाधान निमित्त  
 सूत्रकार कहते हैं कि यह एकान्त नियम नहीं है, कितनीक स्त्रियां ऐसी  
 भी होती हैं कि जो शुद्ध आचारसंपन्न होने पर भी शरीर से अशुद्ध  
 नहीं भी रहती हैं । जिनके वज्रर्षभनाराच संहनन नहीं होता है वे ही  
 अशुद्ध शरीर होती हैं और मोक्ष प्राप्ति के योग्य नहीं होती हैं । समस्त  
 स्त्रियां ऐसी ही होती हैं सो बात नहीं है, कितनीक शुद्ध शरीर वाली  
 भी होती हैं । “नो व्यवसायवर्जिता” शुद्ध शरीर होने पर भी कितनीक  
 नारियां व्यवसाय से वर्जित होती हैं अर्थात् निन्दित होती हैं सो यह  
 भी नियम नहीं बन सकता, कारण कि शास्त्रोक्त अर्थ में श्रद्धालु होने  
 के कारण कितनीक स्त्रियां परलोक सुधारने में व्यवसाय से विहीन  
 नहीं भी होती हैं, इसीलिये उनकी प्रवृत्ति परलोक के निमित्त देखी  
 जाती है । ‘नो अपूर्वकरणविरोधिनी’ व्यवसायसहित होने पर भी

સ્ત્રીઓ શરીરે અશુદ્ધ રહ્યાં કરે છે તેથી તેઓ નિર્વાણ પ્રાપ્ત કરવાની અધિ-  
 કારિણી હોતી નથી, તે આ શંકાનું સમાધાન કરવાને માટે સૂત્રકાર કહે છે  
 કે આ એકાન્ત નિયમ નથી. કેટલીક સ્ત્રીઓ એવી પણ હોય છે કે જે શુદ્ધ-  
 ચારવાળી થઈને શરીરે અશુદ્ધ પણ રહેતી નથી. જેમને વજ્રર્ષભ નારાય સંહનન  
 હોતું નથી તેઓ જ અશુદ્ધ શરીરવાળી હોય છે અને મોક્ષ પામવાને પાત્ર હોતી  
 નથી. સઘળી સ્ત્રીઓ એવી જ હોય છે એવી વાત નથી, કેટલીક શુદ્ધ શરીર-  
 વાળી પણ હોય છે.

“ નો વ્યવસાયવર્જિતા ” શુદ્ધ શરીર હોવાં છતાં પણ કેટલીક સ્ત્રીઓ  
 વ્યવસાયથી વર્જિત હોય છે એટલે કે નિન્દિત હોય છે, તે એ પણ નિયમ  
 બની શકતો નથી, કારણ કે શાસ્ત્રોક્ત અર્થમાં શ્રદ્ધાલુ હોવાને કારણે કેટલીક  
 સ્ત્રીઓ પરલોક સુધારવામાં વ્યવસાયથી વિહીન હોતી નથી, તેથી તેમની  
 પ્રવૃત્તિ પરલોકનું નિમિત્ત બેવામાં આવે છે. “ નો અપૂર્વકરણવિરોધિની ”  
 વ્યવસાયયુક્ત હોવા છતાં પણ કેટલીક સ્ત્રીઓ એવી પણ હોય છે કે જે

નન્વપૂર્વકરણવત્યપિ નવગુણસ્થાનરહિતા નિર્વાણયોગ્યા ન સ્યાદિત્યત આહ-  
 “જો નવગુણસ્થાનરહિયા” ઇતિ, ‘નો નવગુણસ્થાનરહિતા’ ઇતિ । ષષ્ઠગુણસ્થાનમાદાય  
 ચતુર્દશગુણસ્થાનપર્યન્તાનિ નવસંખ્યકાનિ ગુણસ્થાનાનિ, તદ્રહિતાઃ સર્વાઃ સ્ત્રિયો ન  
 ભવન્તિ, કાચિત્ નવગુણસ્થાનયુક્તાપિ ભવતીત્યર્થઃ ।

કિતનીક સ્ત્રિયાં એસી ખી હોતી હૈં જો અપૂર્વકરણ કી વિરોધિની હોતી  
 હૈં સો યહ બાત ખી ઇકાન્તતઃ માન્ય નહીં હો સકતી, કારણ કિ કિતનીક  
 સ્ત્રિયાં એસી ખી તો હોતી હૈં જો અપૂર્વકરણ કી વિરોધિની નહીં ખી  
 હોતી હૈં, ક્યોં કિ સ્ત્રી-જાતિ મેં ખી અપૂર્વકરણ કા સંભવ પ્રતિપાદિત  
 હુઆ હૈ, અતઃ યે અપૂર્વકરણ કી વિરોધિની નહીં હોતી હૈં । “નો નવ-  
 ગુણસ્થાનરહિતા” ઇસી તરહ અપૂર્વકરણ-ગુણસ્થાનવાલી હોકર ખી  
 કિતનીક નૌ ગુણસ્થાનવાલી નહીં ખી હોતી હૈં સો ઇસ આશંકા કી  
 નિવૃત્તિ કે લિયે સૂત્રકાર કહતે હૈં કિ યહ બાત ખી ઇકાન્તતઃ નિયમિત  
 નહીં હૈ । કારણ કિ છઠવે ગુણસ્થાન સે લેકર નૌ ગુણસ્થાનતક અર્થાત્  
 ચૌદહ ગુણસ્થાનતક-સાતવાં, આઠવાં, નૌ વાં, દસવાં, ગ્યારવાં, બારહવાં,  
 તેરહવાં ઇવં ચૌદહવાં, યે નૌ ગુણસ્થાન ખી સ્ત્રિયોં મેં હોતે હૈં-ઇન નૌ  
 ગુણસ્થાનોં સે વે રહિત નહીં હોતી હૈ । અર્થાત્ કિતનીક સ્ત્રિયાં નવ ગુણ-  
 સ્થાન યુક્ત ખી હોતી હૈં । જવ યે સ્ત્રિયાં ઇસ તરહ કી હોતી હૈં તો ફિર  
 યે ઉત્તમ ધર્મકી સાધિકા ક્યોં નહીં હો સકતી હૈં । સારાંશ ઇસકા યહ

અપૂર્વકરણની વિરોધિની હોય છે, તો આ વાત પણ એકાન્તતઃ માન્ય થઈ  
 શકતી નથી કારણ કે કેટલીક સ્ત્રીઓ એવી પણ હોય છે જે અપૂર્વકરણની  
 વિરોધિની હોતી નથી, કારણ કે સ્ત્રીજાતિમાં પણ અપૂર્વકરણનો સંભવ  
 સાબિત થયેલ છે, તેથી તેઓ અપૂર્વકરણની વિરોધિની હોતી નથી. “નો નવ-  
 ગુણસ્થાનરહિતા” આ રીતે અપૂર્વકરણ ગુણસ્થાનવાળી હોવા છતાં પણ કેટલીક  
 નવ ગુણસ્થાનવાળી નથી પણ હોતી, તો આ શંકાનાં નિવારણ માટે સૂત્રકાર  
 કહે છે કે આ વાત પણ એકાન્તતઃ નિયમિત નથી. કારણ કે છઠાં ગુણસ્થાનથી  
 લઈને નવગુણસ્થાન સુધી એટલે કે ચૌદ ગુણસ્થાન સુધી-સાતમાં, આઠમાં,  
 નવમાં, દસમાં, અગીયારમાં, બારમાં, તેરમાં અને ચૌદમાં, એ નવ ગુણસ્થાન  
 પણ સ્ત્રીઓમાં હોય છે. એ નવગુણસ્થાનોથી તેઓ રહિત હોતી નથી. એટલે  
 કે કેટલીક સ્ત્રીઓ નવગુણસ્થાનયુક્ત પણ હોય છે. જે તે સ્ત્રીઓ આ પ્રકારની  
 હોય છે તો પછી તેઓ ઉત્તમધર્મની સાધક કેમ ન હોઈ શકે? તેનો સારાંશ



યત એવંભૂતા સા, અતઃ 'કથં નોત્તમધર્મસાધિકા' ઇતિ, ઉત્તમધર્મસાધિકૈ વેત્યર્થઃ । અયં ભાવઃ—તત્તત્કાલાપેક્ષયા પુરુષવદ્ એતાવદ્ગુણસંયમસમન્વિતૈવોત્તમધર્મસાધિકા, તથા ચેયં કેવલસાધિકા ભવતિ । સતિ ચ કેવલે નિયમાન્ મોક્ષ ઇતિ ॥

॥ ઇતિ સ્ત્રીમોક્ષસમર્થનમ્ ॥

નનુ સર્વ એવૈતે ભેદાસ્તીર્થસિદ્ધેષ્વતીર્થસિદ્ધેષુ ચૈવાન્તર્ભૂતાઃ સન્તિ । તથાહિ—યે તીર્થકરસિદ્ધાસ્તે તીર્થસિદ્ધા એવ, યે તુ તદ્વિનાસ્તે સર્વેઽપ્યતીર્થસિદ્ધા એવેતિ કિમેતાવદ્ધિર્ભૈદૈરિતિ ચેત્—

અત્રોચ્યતે=અન્તર્ભાવે સત્યપિ તીર્થસિદ્ધા તીર્થસિદ્ધભેદદ્વયાદેવ તદુત્તરોત્તરભેદાનાં જ્ઞાનં ન સ્યાત્, તસ્માદજ્ઞાતભેદજ્ઞાપનાર્થં તત્તદ્ભેદસ્ય વિશિષ્ય કથનમિતિ ॥

તદેતદનન્તરસિદ્ધકેવલજ્ઞાનં વર્ણિતમ્ ॥

હૈ—તત્તત્કાલ કી અપેક્ષા સે પુરુષ કી તરહ્ ઇતને ગુણ ઓર સંયમ સે સમન્વિત સ્ત્રી બી ઉત્તમધર્મ કી સાધિકા હોતી હૈ । જવ યહ ઉત્તમધર્મ કી સાધિકા હોતી હૈ તો કેવલજ્ઞાન કો પ્રાપ્ત કરતી હૈ, ઓર કેવલજ્ઞાન કે હોને પર નિયમ સે મોક્ષ ઇસકો પ્રાપ્ત હો જાતા હૈ ।

॥ ઇસ તરહ્ યહાં તક સ્ત્રીમુક્તિ કા સમર્થન કિયા ગયા હૈ ॥

શંકા—યે સમસ્ત ભેદ તીર્થસિદ્ધ ઓર અતીર્થસિદ્ધ, ઇન દોનોં મેં હી અન્તર્ભૂત હો જાતે હૈં, ક્યોં કિ જો તીર્થકરસિદ્ધ હૈં વે તીર્થસિદ્ધ હી હૈં તથા ઇનસે ભિન્ન જો સિદ્ધ હૈં વે સબ અતીર્થસિદ્ધ હૈં ફિર ઇતને ભેદોં સે કયા મતલબ ? ।

એ છે કે—તે તે કાળની અપેક્ષાએ પુરુષની જેમ આટલા ગુણ અને સંયમથી સમન્વિત સ્ત્રી પણ ઉત્તમધર્મની સાધિકા હોય છે. જે તે ઉત્તમ ધર્મની સાધિકા હોય છે તો કેવળજ્ઞાન પામે છે અને કેવળજ્ઞાન થતાં તેને નિયમ પ્રમાણે મોક્ષ મળે છે.

॥ આ પ્રમાણે આહીં સુધી સ્ત્રી મુક્તિનું સમર્થન કરાયું છે ॥

શંકા—એ સઘળા ભેદનો તીર્થસિદ્ધ અને અતીર્થસિદ્ધ એ બન્નેમાં સમાવેશ થઈ જાય છે, કારણ કે જે તીર્થકરો સિદ્ધ છે તેઓ તીર્થસિદ્ધ જ છે તથા એમનાથી ભિન્ન જે સિદ્ધો છે તે સર્વે અતીર્થસિદ્ધ છે તો પછી આટલા બધા ભેદોનો ઉદ્દેશ શો ?



મૂલમ્—સે કિં તં પરંપરસિદ્ધકેવલનાણં ? । પરંપરસિદ્ધકેવ-  
લનાણં અણેગવિહં પણ્ણત્તં । તં જહા—અપઢમસમયસિદ્ધા, દુસ-  
મયસિદ્ધા, તિસમયસિદ્ધા, ચડસમયસિદ્ધા, જાવ દસસમય-  
સિદ્ધા । સંઘિજ્જસમયસિદ્ધા, અસંઘિજ્જસમયસિદ્ધા, અણંત-  
સમયસિદ્ધા । સે તં પરંપરસિદ્ધકેવલનાણં । સે તં સિદ્ધકેવલનાણં ॥૨૧॥

છાયા—અથ કિં તત્ પરંપરસિદ્ધકેવલજ્ઞાનમ્ ? । પરંપરસિદ્ધકેવલજ્ઞાનમનેકવિધં  
પ્રજ્ઞપ્તમ્ । તદ્ યથા—અપ્રથમસમયસિદ્ધાઃ, દ્વિસમયસિદ્ધાઃ, ત્રિસમયસિદ્ધાઃ, ચતુઃસમ-  
યસિદ્ધાઃ, યાવદ્દશસમયસિદ્ધાઃ । સંખ્યેયસમયસિદ્ધાઃ । અસંખ્યેયસમયસિદ્ધાઃ । અન-  
ન્તસમયસિદ્ધાઃ । તદેતત્ પરંપરસિદ્ધકેવલજ્ઞાનમ્ । તદેતત્ સિદ્ધકેવલજ્ઞાનમ્ ॥૨૧॥

ટીકા—શિષ્યઃ પૃચ્છતિ—‘ સે કિં તં પરંપરસિદ્ધકેવલનાણં ’ ઇતિ । અથ  
કિં તત્ પરંપરસિદ્ધકેવલજ્ઞાનમ્ ? , પૂર્વનિર્દિષ્ટસ્ય પરંપરસિદ્ધકેવલજ્ઞાનસ્ય કિં સ્વરૂ-  
પમિતિ પ્રશ્નઃ । ઉત્તરમાહ—‘ પરંપરસિદ્ધ કેવલનાણં અણેગવિહં પણ્ણત્તં ’ ઇત્યાદિ ।

ઉત્તર—યદ્યપિ હસ તરહ સે હન સવ કા અન્તર્ભાવિ હો જાતા હૈ  
ફિર ભીજો હનકા પૃથક્ ૨ નિર્દેશ કિયા હૈ વહ ઉત્તરોત્તર ભેદોં કે  
સમજ્ઞાને કે લિયે હી કિયા હૈ । તીર્થસિદ્ધ અતીર્થસિદ્ધ કહને માત્ર સે હી  
હન ભેદોં કા જ્ઞાન નહીં હો સકતા હૈ, હસલિયે અજ્ઞાતભેદોં કે સમજ્ઞાને  
કે લિયે વિશેષરૂપ સે હન સવ ભેદોં કો પૃથક્ પૃથક્ ઉપાદાન કરકે  
સમજ્ઞાયા ગયા હૈ । યહ અનન્તરસિદ્ધકેવલજ્ઞાન કા વર્ણન હુઆ ॥

અવ પરંપરસિદ્ધકેવલજ્ઞાન કા વર્ણન કિયા જાતા હૈ—‘ સે કિં તં  
પરંપરસિદ્ધકેવલનાણં ૦ ’ ? ઇત્યાદિ ।

ઉત્તર—જો કે આ રીતે એ બધાનો સમાવેશ થઈ જાય છે છતાં પણ  
તેમનો જે અલગ અલગ નિર્દેશ કર્યો છે તે ઉત્તરોત્તર ભેદોને સમજાવવા માટે  
જ કર્યો છે. તીર્થસિદ્ધ કે અતીર્થસિદ્ધ કહેવા માત્રથી તે ભેદોનું જ્ઞાન થઈ શકતું  
નથી, તેથી અજ્ઞાત ભેદોને સમજાવવાને માટે વિશેષરૂપે એ બધા ભેદોને અલગ  
અલગ ઉપાદાન કરીને સમજાવ્યા છે. આ અનન્તર સિદ્ધ કેવલજ્ઞાનનું વર્ણન થયું.

હવે પરંપરસિદ્ધકેવલજ્ઞાનનું વર્ણન કરાય છે—“ સે કિં તં પરંપરસિદ્ધ  
કેવલનાણં ” ઇત્યાદિ.

પરંપરસિદ્ધકેવલજ્ઞાનમિતિ-પરંપરે ચ તે સિદ્ધાશ્ચ પરંપરસિદ્ધાઃ । સિદ્ધત્વપ્રાપ્તિ સમ-  
યાદ્ દ્વ્યાદિસમયવર્તિનઃ, તેષાં કેવલજ્ઞાનં પરંપરસિદ્ધકેવલજ્ઞાનમ્, તદનેકવિધં  
પ્રજ્ઞસમ્ । તદ્ યંથા-અપ્રથમસમયસિદ્ધાઃ=પ્રથમઃ સમયો યેષાં તે પ્રથમસમયાઃ, ત એવ  
સિદ્ધાઃ, પ્રથમસમયસિદ્ધાઃ, ન પ્રથમસમયસિદ્ધાઃ અપ્રથમસમયસિદ્ધાઃ । इत्येतत् सामा-  
न्यतोऽभिधाय विशेषतस्तदर्थमाह=‘ દુસમયસિદ્ધા ’ इत्यादि । तथा-द्विसमयसिद्धाः,  
द्वौ समयौ येषां ते द्विसमयाः, ते सिद्धाः द्विसमयसिद्धाः, शेषं सुगमम् ॥ सू० २१ ॥

પ્રશ્ન—પૂર્વકથિત પરંપરસિદ્ધ કેવલજ્ઞાન કા કયા સ્વરૂપ હૈ?

ઉત્તર—પરંપરસિદ્ધ કેવલજ્ઞાન અનેક પ્રકાર કા કહા ગયા હૈ ।  
સિદ્ધત્વપ્રાપ્તિ કે સમય સે દો આદિ સમયવર્તી સિદ્ધ પરંપરસિદ્ધ કહલાતે  
હૈ । इनका जो केवल ज्ञान है वह परंपरसिद्ध केवलज्ञान है । प्रथम समय  
में जो सिद्ध नहीं हुए हैं वे अप्रथमसमयसिद्ध हैं । इस प्रकार सामा-  
न्यरूप से परंपरसिद्ध केवलज्ञान का स्वरूप बतलाकर सूत्रकार उसे  
विशेषरूप से समझाने के अभिप्राय से “दुसमयसिद्धा” इत्यादि  
पदों द्वारा स्पष्ट करते हैं—जिनके सिद्ध होने के दो समय हैं वे द्विसमय-  
सिद्ध हैं, इसी तरह त्रिसमयसिद्ध, चतुःसमयसिद्ध से दशसमयसिद्ध-  
तक, एवं संख्यातसमयसिद्ध असंख्यातसमयसिद्ध और अनन्तसमय-  
सिद्ध जानलेना चाहिये । यह परंपरसिद्ध केवलज्ञान का वर्णन हुआ ।  
इसके वर्णन से सिद्धकेवलज्ञान का पूरा वर्णन हुआ ॥ सू० २१ ॥

પ્રશ્ન—પૂર્વોક્ત પરંપરસિદ્ધકેવળજ્ઞાનનું શું સ્વરૂપ છે ?

ઉત્તર—પરંપરસિદ્ધકેવળજ્ઞાન અનેક પ્રકારનું કહેલ છે. સિદ્ધત્વપ્રાપ્તિના  
સમયથી બે આદિ સમયવર્તી સિદ્ધપરંપરસિદ્ધ કહેવાય છે. તેમનું બે કેવળ-  
જ્ઞાન છે તે પરંપરસિદ્ધકેવળજ્ઞાન છે, પ્રથમ સમયમાં બે સિદ્ધ છે. આ પ્રમાણે  
સામાન્યરૂપે પરંપરસિદ્ધકેવળજ્ઞાનનું સ્વરૂપ બતાવીને સૂત્રકાર તેને વિશેષ  
રૂપે સમજાવવાના હેતુથી “દુસમયસિદ્ધા” ઇત્યાદિ પદો દ્વારા સ્પષ્ટ કરે છે-  
બેમને સિદ્ધ થવાના બે સમય છે તેઓ દ્વિસમયસિદ્ધ છે. એજ પ્રમાણે  
ત્રિસમયસિદ્ધ, ચતુઃસમય સિદ્ધથી દસસમયસિદ્ધ સુધી, અને સંખ્યાતસમય  
સિદ્ધ અસંખ્યાતસમયસિદ્ધ અને અનન્તસમયસિદ્ધ સમજી લેવા નોઈએ.

આ પરંપરસિદ્ધકેવળજ્ઞાનનું વર્ણન થયું. તેના વર્ણનથી સિદ્ધ કેવળજ્ઞાનનું  
સંપૂર્ણ વર્ણન થયું. ॥ સૂ. ૨૧ ॥

एवं भवस्थकेवलज्ञानं सिद्धकेवलज्ञानं चेति भेदद्वयमभिधाय पुनः प्रकारान्तरेण केवलज्ञानस्य भेदमाह—

मूलम्—तं समासओ चउव्विहं पणत्तं । तं जहा—दव्वओ, खित्तओ, कालओ, भावओ । तत्थ दव्वओणं केवलनाणी सव्वदव्वाइं जाणइ पासइ । खित्तओ णं केवलनाणी सव्वं खित्तं जाणइ पासइ । कालओ णं केवलनाणी सव्वं कालं जाणइ पासइ । भावओ णं केवलनाणी सव्वे भावे जाणइ पासइ । गाहा—“अह सव्वदव्वपरिणाम भावविण्णत्तिकारणमणंतं ।

सासयमप्पडिवाइ, एगविहं केवलं नाणं”॥१॥सू० २२॥

छाया—तत् समासतश्चतुर्विधं प्रज्ञप्तम् । तद् यथा—द्रव्यतः, क्षेत्रतः, कालतो, भावतः । तत्र द्रव्यतः खलु केवलज्ञानी सर्वद्रव्याणि जानाति पश्यति । क्षेत्रतः खलु केवलज्ञानी सर्वं क्षेत्रं जानाति पश्यति । कालतः खलु केवलज्ञानी सर्वं कालं जानाति पश्यति । भावतः खलु केवलज्ञानी सर्वान् भावान् जानाति पश्यति ।

गाथा—अथ सर्वद्रव्यपरिणामभावविज्ञप्तिकारणमनन्तम् ।

शाश्वतमप्रतिपाति, एकविधं केवलज्ञानम् ॥ सू० २२ ॥

टीका—‘तं समासओ’ इत्यादि । सामान्यतः केवलज्ञानं, समासतः=संक्षेपेण चतुर्विधं प्रज्ञप्तम् । तद् यथा—द्रव्यतः क्षेत्रतः कालतो भावतश्च । तत्र द्रव्यतः खलु केवलज्ञानी सर्वद्रव्याणि धर्मास्तिकायादीनि साक्षाज्जानाति पश्यति । क्षेत्रतः केव-

इस प्रकार भवस्थसिद्ध केवलज्ञान और सिद्ध केवलज्ञान के भेद से केवलज्ञान के दो भेदों का निरूपण कर सूत्रकार अब प्रकारान्तर से केवलज्ञानके भेदोंका निरूपण करते हैं—‘तं समासओ चउव्विहं’ इत्यादि ।

वह केवलज्ञान संक्षेप से चार प्रकारका कहा गया है । जैसे—द्रव्य की अपेक्षा, क्षेत्र की अपेक्षा, काल की अपेक्षा और भाव की अपेक्षा । द्रव्य की अपेक्षा केवलज्ञानी समस्त द्रव्यों को जानता और देखता है ।

આ રીતે ભવસ્થસિદ્ધકેવળજ્ઞાન અને સિદ્ધકેવળજ્ઞાનના ભેદથી કેવળજ્ઞાનના બે ભેદોનું નિરૂપણ કરીને હવે સૂત્રકાર પ્રકારાન્તરથી કેવળજ્ઞાનના ભેદોનું નિરૂપણ કરે છે—“તં સમાસઓ ચઉવ્વિહં” ઇત્યાદિ.

તે કેવળજ્ઞાનને સંક્ષેપમાં ચાર પ્રકારનું કહ્યું છે. જેવાં કે દ્રવ્યની અપેક્ષાએ, ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ, કાળની અપેક્ષાએ અને ભાવની અપેક્ષાએ દ્રવ્યની અપેક્ષાએ કેવળજ્ઞાની સર્વે દ્રવ્યોને જાણે છે અને દેખે છે. ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ કેવળજ્ઞાની

જ્ઞાની સર્વ ક્ષેત્ર-સંપૂર્ણ લોકમલોકં ચ સાક્ષાજ્ઞાનાતિ પश्यति । इह यद्यपि सर्व-  
द्रव्यग्रहणेन आकाशास्तिकायोऽपि गृह्यते, तथापि तस्य क्षेत्रत्वेन प्रसिद्धत्वाद् पृथक्  
कथनम्, एवमग्रेऽपि कालविषये बोध्यम् । कालतः केवलज्ञानी सर्वकालम्=अतीता-  
नागतवर्तमानभेदभिन्नं जानाति पश्यति । भावतः केवलज्ञानी सर्वान् जीवादिग-  
तान् भावान्=पर्यायान्-गतिकषायागुरुलघुप्रभृतीन् जानाति पश्यति ।

‘अहं’ इत्यादि । अथ-मनःपर्यायज्ञानानन्तरं केवलज्ञानं तीर्थकरैर्वर्णितम्,  
इति शेषः । तत् कीदृशम् ? इत्याह-‘सर्वद्रव्यं’ इत्यादि । सर्वद्रव्य-परि-

ક્ષેત્ર કી અપેક્ષા કેવલજ્ઞાની સમસ્ત લોકાકાશ ઓર અલોકાકાશરૂપ  
ક્ષેત્ર કો સાક્ષાત્ જાનતા ઓર દેખતા હૈ । યદ્યપિ “દ્રવ્ય કી અપેક્ષા  
કેવલજ્ઞાની સમસ્ત દ્રવ્યોં કો જાનતા ઓર દેખતા હૈ” એસા કહને સે  
હી આકાશાસ્તિકાય આદિ કા જાનના દેખના સિદ્ધ હો જાતા હૈ ફિર  
મી યહાં જો ક્ષેત્ર કી અપેક્ષા ઉસકા જાનના દેખના કહા હૈ વહ ક્ષેત્રરૂપ  
સે ઉસકી પૃથક્ પ્રસિદ્ધિ કા હોના હૈ । અર્થાત્ ‘લોકકા ક્ષેત્ર અલગ હૈ  
ઓર અલોક કા ક્ષેત્ર અલગ હૈ, ઇસ બાત કો સમજાને કે લિયે એસા કહા  
હૈ । ઇસી તરહ કાલ-દ્રવ્ય કે વિષયમેં મી યહી સમજના ચાહિયે । કાલ  
કી અપેક્ષા કેવલજ્ઞાની ભૂત, ભવિષ્યત્ ઓર વર્તમાન, ઇન ત્રીનોં કાલોં  
કો જાનતા ઓર દેખતા હૈ । ભાવ કી અપેક્ષા કેવલજ્ઞાની સમસ્ત જીવા-  
દિક પદાર્થગત ગતિ, કષાય, અગુરુલઘુ આદિ પર્યાયોં કો જાનતા ઓર  
દેખતા હૈ । “અહ સર્વદ્રવ્ય” ઇત્યાદિ ગાથા કા અર્થ—

इस गाथामें अथ-शब्द यह बात प्रदर्शित करने के लिये रखा गया  
है कि मनःपर्यय ज्ञान के बाद ही तीर्थकरों ने इस केवलज्ञान का वर्णन

સમસ્ત લોકાકાશ અને અલોકાકાશ રૂપ ક્ષેત્રને સાક્ષાત્ જાણે છે અને દેખે છે.

જો કે “દ્રવ્યની અપેક્ષાએ કેવળજ્ઞાની સમસ્ત દ્રવ્યોને જાણે છે અને દેખે છે”  
એમ કહેવાથી જ આકાશાસ્તિકાય આદિનું જાણવા દેખવાનું સિદ્ધ થઈ જાય છે  
છતાં પણ અહીં જે ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ તેનું જાણવા દેખવાનું કહ્યું છે તે ક્ષેત્રરૂપે  
તેની અલગ પ્રસિદ્ધિનું હોવું છે. એટલે કે “લોકનું ક્ષેત્ર અલગ છે અને  
અલોકનું ક્ષેત્ર અલગ છે” આ વાતને સમજાવવાને માટે એવું કહ્યું છે. એજ  
પ્રમાણે કાલ અને દ્રવ્યના વિષયમાં પણ એજ સમજવું જોઈએ. કાળની અપેક્ષાએ  
કેવળજ્ઞાની ભૂત, ભવિષ્ય અને વર્તમાન, એ ત્રણે કાળોને જાણે છે અને દેખે છે.  
ભાવની અપેક્ષાએ કેવળજ્ઞાની સમસ્ત જીવાદિક પદાર્થગત ગતિ, કષાય, અગુરુ  
લઘુ આદિ પર્યાયોને જાણે અને દેખે છે, “અહ સર્વદ્રવ્ય” ઇત્યાદિ ગાથાને  
અર્થ—આ ગાથામાં ‘અથ’ શબ્દ એ વાત દર્શાવવાને માટે મૂકયો છે કે મનઃ-

ણામભાવવિજ્ઞપ્તિકારણમ્=સર્વાણિ ચ તાનિ દ્રવ્યાણિ સર્વદ્રવ્યાણિ જીવાજીવરૂપાણિ, તેષાં પરિણામાઃ-પ્રયોગવિસ્તારરૂપા ઉત્પાદાદયઃ પર્યાયાઃ સર્વદ્રવ્યપરિણામાઃ, તેષાં ભાવઃ-સત્તા, સ્વલક્ષણં સ્વં સ્વમસાધારણં સ્વરૂપં, તસ્ય વિજ્ઞપ્તિઃ-વિશેષેણ જ્ઞાનમ્, તસ્યાઃ કારણં=હેતુઃ, તથા જ્ઞેયાનામનન્તત્વાદનન્તં, તથા=શાશ્વતં-નિત્યમ્, નિરન્તરોપયોગયુક્તમિત્યર્થઃ । તથા-અપ્રતિપાતિ-ન પ્રતિપતન શીલં, સદાઽવસ્થાયીત્યર્થઃ ।

નનુ યત્ ક્વલુ શાશ્વતં, તદપ્રતિપાત્યેવ સ્યાત્ કિં પુનરેતેન વિશેષણેને ?તિ, ઉચ્યતે-શાશ્વતં હિ નામ અનવરતં ભવદુચ્યતે, તત્ત્વ સ્વલ્પકાલેઽપિ નૈરન્તર્યેણ ભવનાદ્ ભવતિ, અપ્રતિપાતિવિશેષણોપાદાનં તુ સર્વકાલે કેવલજ્ઞાનમવતિષ્ઠતં, इति बोधनार्थमिति । नैरन्तर्येण सर्वस्मिन् काले केवलज्ञानं भवतीति भावः । तथा-एक-

કિયા હૈ । यह केवलज्ञान “सर्वद्रव्यपरिणामभावविज्ञप्तिकारणम्” अर्थात् समस्त जीव और अजीवरूप द्रव्योंमें जो उत्पादादिक परिणाम स्वनिमित्त एवं परनिमित्त से होते रहते हैं उनके अपने २ असाधारण-रूप की विज्ञप्ति का कारण है । अनन्त एवं शाश्वत है । अप्रतिपतनशील है-सदा अवस्थायी है । दूसरे ज्ञानों की तरह इसके भेद प्रभेद नहीं हैं ।

શંકા—જો શાશ્વત હોગા વહ અપ્રતિપાતી હી હોગા તો ફિર ગાથામેં “અપ્રતિપાતિ” યહ વિશેષણ સ્વતન્ત્રરૂપ સે કયોં રચ્વા ?

ઉત્તર—શાશ્વત-શબ્દ કા અર્થ નિરન્તર હોતે રહના હૈ । જો પદાર્થ સ્વલ્પકાલાવસ્થાયી હોતા હૈ વહ બી ઉતને સમય તક યદિ નિરન્તર હોતા રહતા હૈ તો વહ બી શાશ્વત કહા જાતા હૈ । “અપ્રતિપાતિ” વિશેષણ

પર્યયજ્ઞાનના પછી જ તીર્થંકરોએ આ કેવળજ્ઞાનનું વર્ણન કર્યું છે. આ કેવળજ્ઞાન “સર્વદ્રવ્યપરિણામભાવવિજ્ઞપ્તિકારણમ્” એટલે કે સમસ્ત જીવ અને અજીવ રૂપ દ્રવ્યોમાં જે ઉત્પાદાદિક પરિણામ સ્વનિમિત્ત અને પરનિમિત્તથી થતાં રહે છે તેમના પોત-પોતાના અસાધારણ રૂપની વિજ્ઞપ્તિનું કારણ છે અનન્ત અને શાશ્વત છે અપ્રતિપતનશીલ છે-સદા અવસ્થાયી છે. બીજાં જ્ઞાનોની જેમ તેના ભેદ પ્રભેદ નથી.

શંકા—જે શાશ્વત હોય તે અપ્રતિપાતી જ હોય તો પછી ગાથામાં “અપ્રતિપાતિ” એ વિશેષણ સ્વતંત્ર રૂપે શા માટે રાખ્યું છે ?

ઉત્તર—શાશ્વત શબ્દનો અર્થ “નિરંતર થતું રહેવું” એવો થાય છે. જે પદાર્થ સ્વલ્પકાલાવસ્થાયી હોય છે તે પણ એટલા સમય સુધી જે નિરંતર થતો રહે છે તો તે પણ શાશ્વત કહેવાય છે. “અપ્રતિપાતિ” વિશેષણ આ શાશ્વતમાં

વિધમ્=એકપ્રકારકં, ક્ષાયિકત્વાત્, તદાવરણક્ષયસ્યૈકરૂપત્વાત્ । યદ્યપિ કેવલજ્ઞાનસ્ય સ્વામ્યપેક્ષયા ભવસ્થસિદ્ધભેદમાશ્રિત્ય ભેદોઽસ્તિ, તથાપિ-જ્ઞાનાપેક્ષયા નાસ્તિ ભેદઃ, મતિજ્ઞાનાદીનાં ચતુર્ણાં તુ ક્ષાયોપશમિકત્વાત્, ક્ષયોપશમસ્ય ચ વૈચિત્ર્યાદનેકવિધત્વમિતિ બોધ્યમ્ ॥ સૂ. ૨૨ ॥

નનુ તીર્થકરઃ કેવલજ્ઞાને સમુત્પન્ને સતિ તીર્થકરનામકર્મોદયાત્ સર્વજીવાનુગ્રહાર્થં દેશનાં કરોતિ, તત્ર કેષાંચિદેવમાશઙ્કા ભવેત્-ભગવતોઽપિ તીર્થકૃતસ્તાવત્ દ્રવ્યશ્રુતમક્ષરધ્વનિરૂપં વર્તતે, દ્રવ્યશ્રુતં ચ ભાવશ્રુત પૂર્વકં, તસ્માદ્ ભગવાનપિ શ્રુતજ્ઞાનીતિ ચેત્, તત્રાહ—

હસ શાશ્વતમેં ઇતની વિશેષતા પ્રદર્શિત કરતા હૈ કિ કેવલજ્ઞાન એસા શાશ્વત નહીં હૈ કિન્તુ અપ્રતિપાતિ શાશ્વત હૈ, અર્થાત્ કિસી મી કાલમેં હસકા પતન નહીં હોતા હૈ । નિરન્તરરૂપ સે સર્વકાલમેં કેવલજ્ઞાન રહતા હૈ । કેવલજ્ઞાન ક્ષાયિક હૈ, જ્ઞાનાવરણ કર્મ કે ક્ષય સે હોતા હૈ, ઓર જ્ઞાનાવરણ કર્મકા ક્ષય એકરૂપ હોતા હૈ, અતઃ વહ મી એકરૂપ હી હૈ । યદ્યપિ સ્વામી કી અપેક્ષા ભવસ્થસિદ્ધ કા આશ્રય કરકે હસકે મી ભેદ બતલાયે ગયે હૈં ફિર મી જ્ઞાન કી અપેક્ષા હસમેં કોઈ ભેદ નહીં હૈ । મતિજ્ઞાન આદિ ચાર જ્ઞાન ક્ષાયોપશમિક હૈં, હસલિયે ઊનમેં ક્ષયોપશમકી વિચિત્રતા રહતી હૈ, ઓર હસી કારણ ઊનમેં અનેકવિધતા બતલાઈ ગઈ હૈ ॥ સૂ. ૨૨ ॥

તીર્થકર ભગવાન્ કેવલજ્ઞાન ઉત્પન્ન હોને પર તીર્થકરનામકર્મ કે ઉદય હોને સે સમસ્ત જીવોં કે અનુગ્રહ કે લિયે-કલ્યાણ કે લિયે દેશના

એટલી વિશેષતા દર્શાવે છે કે કેવળજ્ઞાન એવું શાશ્વત નથી પણ અપ્રતિપાતિ શાશ્વત છે, એટલે કે કોઈ પણ કાળે તેનું પતન થતું નથી. નિરંતર રૂપે સર્વકાળે કેવળજ્ઞાન રહે છે. કેવળજ્ઞાન ક્ષાયિક છે, જ્ઞાનાવરણ કર્મના ક્ષયથી થાય છે, અને જ્ઞાનાવરણ કર્મના ક્ષય એકરૂપ હોય છે, તેથી તે પણ એકરૂપ જ છે. જો કે સ્વામીની અપેક્ષાએ ભવસિદ્ધનો આધાર લઈને તેના પણ ભેદ બતાવવામાં આવેલ છે તો પણ જ્ઞાનથી તેમાં કોઈ ભેદ નથી. મતિજ્ઞાન આદિ ચાર જ્ઞાન ક્ષાયોપશમિક છે, તેથી તેમનામાં ક્ષયોપશમની વિચિત્રતા રહે છે, અને એજ કારણે તેમનામાં અનેકવિધતા બતાવવામાં આવેલ છે. ॥ સૂ. ૨૨ ॥

તીર્થકર ભગવાન્ કેવળજ્ઞાન ઉત્પન્ન થતાં તીર્થકર નામકર્મનો ઉદય હોવાથી સમસ્ત જીવોના અનુગ્રહને માટે દેશના આવે છે, તે વિષે કોઈ એવી આશંકા



મૂલમ્—ગાહા—કેવલનાળેણસ્થે, નાઠં જે તત્થ પળ્લવણજોગ્ગા ।  
 તે માસઙ્ગ તિત્થયરાં, વડ્ડજોગસુઅં હવડ્ડ સેસં ॥૧॥  
 સે તં કેવલનાળં, સે તં નોઙ્ગિદિયપચ્ચક્કવં । સે તં  
 પચ્ચક્કવનાળં ॥ સૂ૦ ૨૩ ॥

છાયા—કેવલજ્ઞાનેનાર્થાન્, જ્ઞાત્વા યે તત્ર પ્રજ્ઞાપનયોગ્યાઃ ।

તાન્ ભાષતે તીર્થકરો, વાગ્યોગશ્રુતં ભવતિ શેષમ્ ॥ ૧ ॥

તદેતત્ કેવલજ્ઞાનં, તદેતન્નોઙ્ગિદ્રિયપ્રત્યક્ષં, તદેતત્ પ્રત્યક્ષજ્ઞાનમ્ ॥ સૂ૦ ૨૩ ॥

ટીકા—‘કેવલનાળેણસ્થે૦’ ઇત્યાદિ । તીર્થકરઃ અર્થાન્=ધર્માસ્તિકાયાદીન્, મૂર્તામૂર્તાન્ ભાવાન્ કેવજ્ઞાનેન જ્ઞાત્વા ન તુ શ્રુતજ્ઞાને નેત્યર્થઃ, શ્રુતજ્ઞાનસ્ય ક્ષાયો-પશમિકત્વાત્, કેવલિનશ્ચ જ્ઞાનાવરણીયાદેઃ સર્વથા ક્ષયે સતિ દેશતઃ ક્ષયાભાવાત્

દેતે હૈં । ઇસ પર કોઈ એસી આશંકા કર સકતા હૈં કિ ભગવાન્ કી વહ દેશના અક્ષરધ્વનિરૂપ દ્રવ્યશ્રુત હૈં, ઓર દ્રવ્યશ્રુત ભાવશ્રુતપૂર્વક હોતા હૈં, ઇસલિયે ઇસ અક્ષરધ્વનિરૂપ દેશના કે સદ્ભાવ સે ઊનમેં ભી શ્રુતજ્ઞાનીપનેકા પ્રસંગ પ્રાપ્ત હોના હૈં । ઇસ પર સૂત્રકાર કહતે હૈં—‘કેવલ-નાળેણસ્થે૦’ ઇત્યાદિ ।

તીર્થકર પ્રભુ ધર્માસ્તિકાયાદિક સમસ્ત મૂર્ત અમૂર્ત પદાર્થોં કો કેવલજ્ઞાન સે જાન કરકે ઊનમેં જો પ્રરૂપણા કરને યોગ્ય હોતે હૈં ઊન પદાર્થોં કો કહતે હૈં । ઇસ તરહ કેવલી ભગવાન્ કા વહ વાગ્યોગ-અર્થા-ભિધાયક શબ્દસમૂહ-ભાવશ્રુતસ્વરૂપ નહીં હૈં કિન્તુ દ્રવ્યશ્રુત સ્વરૂપ હૈં ।

ભાવાર્થ—તીર્થકર પ્રભુ કેવલજ્ઞાન કે દ્વારા હી સમસ્ત રૂપી ઓર અરૂપી પદાર્થોં કો જાનતે હૈં, શ્રુતજ્ઞાન કે દ્વારા નહીં, કારણ કિ શ્રુતજ્ઞાન

કરી શકે છે કે ભગવાનની તે દેશના અક્ષરધ્વનિરૂપ દ્રવ્ય શ્રુત છે. અને દ્રવ્ય-શ્રુત, ભાવશ્રુતપૂર્વક હોય છે, તેથી આ અક્ષરધ્વનિરૂપ દેશનાના સહભાવથી તેમનામાં પણ શ્રુતજ્ઞાનીપણાનો પ્રસંગ પ્રાપ્ત થાય છે, તો તે વિષે સૂત્રકાર કહે છે—“કેવલનાળેણસ્થે૦” ઇત્યાદિ.

તીર્થકર ભગવાન ધર્માસ્તિકાયાદિક સમસ્ત મૂર્ત અમૂર્ત પદાર્થોંને કેવલજ્ઞાનથી જાણીને તેઓમાં જે પ્રરૂપણા કરવા લાયક હોય છે તે પદાર્થોંને કહે છે. આ રીતે કેવળી ભગવાનનો તે વાગ્યોગઅર્થાભિધાયક શબ્દસમૂહ-ભાવશ્રુતસ્વરૂપ નથી પણ દ્રવ્યશ્રુતસ્વરૂપ છે.

ભાવાર્થ—તીર્થકર પ્રભુ કેવલજ્ઞાન દ્વારા જ સમસ્ત રૂપી અને અરૂપી પદાર્થોંને જાણે છે, શ્રુતજ્ઞાન દ્વારા નહીં, કારણ કે શ્રુતજ્ઞાન ક્ષાયોપશમિક જ્ઞાન છે,



તીર્થંકરઃ કેવલજ્ઞાને નૈવ તત્ત્વં જાનાતીતિ ભાવઃ । તત્ર-તેપામર્થાનાં મધ્યે, યે પ્રજ્ઞાપનયોગ્યાઃ=પ્રરૂપણાયોગ્યાઃ, તાન્ ભાષતે નેતરાન્ । પ્રજ્ઞાપનીયેષ્વપિ ન સર્વાન્ પ્રજ્ઞાપનીયાન્ ભાષતે, તેષામનન્તત્ત્વેન સર્વેષાં ભાષિતુમ શક્યત્વાત્, આયુષસ્તુ પરિમિતત્વાત્ । કિં તુ કતિપયાનેવ અનન્તભાગમાત્રાન્ ગ્રહીતૃશક્યપેક્ષયા યોગ્યાનેવાર્થાન્ ભાષતે, યો ગ્રહીતા યાવતામર્થાનાં ગ્રહણે યોગ્ય ઇતિ બુદ્ધ્વા દેશનાં કરોતીતિ ભાવઃ । ‘વજ્રજોગસુયં હવઃ સેસં’ ઇતિ । ‘વાગ્યોગઃ શ્રુતં ભવતિ શેષમ્’ ઇતિચ્છાયા, અત્ર વાગ્યોગશબ્દેન ભગવતો વાગ્યોગો ગૃહ્યતે ।

ક્ષાયોપશમિક જ્ઞાન હૈ । હસ કેવલજ્ઞાન કી પ્રાપ્તિ જીવ કો તમ્હી હોતી હૈ કિ જબ સમસ્ત જ્ઞાનાવરણ આદિ ચાર ઘાતિ કર્મોં કા નાશ હો ચુકતા હૈ ક્ષાયોપશમિક જ્ઞાન કી પ્રાપ્તિ મેં તત્તત્કર્મોં કા દેશતઃ વિનાશ હોતા હૈ । હસ તરહ કેવલજ્ઞાન સે સમસ્ત પદાર્થોં કો જાન કર મ્હી કેવલી ઉન સમસ્ત પદાર્થોં કી પ્રરૂપણા નહીં કરતે હૈં, કિન્તુ ઇનમેં જો પ્રજ્ઞાપનીય પદાર્થ હોતે હૈં ઉન્હીં કી પ્રરૂપણા કરતે હૈં, અપ્રજ્ઞાપનીય પદાર્થોં કી નહીં । પ્રજ્ઞાપનીય પદાર્થોં મેં મ્હી સબ કી નહીં, કિન્તુ કિતનેક હી પદાર્થોં કી પ્રરૂપણા કરતે હૈં, કારણ વે અનન્ત હોને સે વચન દ્વારા કહે નહીં જા સકતે, ઓર આયુ પરિમિત હૈ, પરિમિત આયુમેં સમસ્ત પ્રજ્ઞાપનીય પદાર્થોં કી પ્રરૂપણા નહીં હો સકતી હૈ, હસલિયે પ્રજ્ઞાપનીયોંમેં સે કિતનેક અનન્તભાગમાત્ર કી-જો ગ્રહીતા ( ગ્રહણ કરનેવાલે ) કી શક્તિ કી અપેક્ષા ગ્રહણ કે યોગ્ય હોતે હૈં, અર્થાત્ ગ્રહીતા જિતને અર્થોં કે ગ્રહણ કરનેમેં યોગ્ય હો ઉતને અર્થોં કી વે દેશના કરતે હૈં । વાગ્યોગ કા

કેવળજ્ઞાન ક્ષાયિક જ્ઞાન છે. આ કેવળજ્ઞાનની પ્રાપ્તિ જીવને ત્યારે જ થાય છે કે જ્યારે સમસ્ત જ્ઞાનાવરણ આદિ ચાર ઘાતિ કર્મોંનો નાશ થઈ જાય છે. ક્ષાયોપશમિક જ્ઞાનની પ્રાપ્તિમાં તે તે કર્મોંનો દેશતઃ વિનાશ થાય છે. આ રીતે કેવળજ્ઞાનવડે સમસ્ત પદાર્થોંને જાણીને પણ કેવળી સમસ્ત પદાર્થોંની પ્રરૂપણા કરતાં નથી, પણ તેમનામાં જે પ્રજ્ઞાપનીય પદાર્થો હોય છે તેમની જ પ્રરૂપણા કરે છે, અપ્રજ્ઞાપનીય પદાર્થોંની નહીં, પ્રજ્ઞાપનીય પદાર્થોંમાં પણ બધાની નહીં, પણ કેટલાક પદાર્થોંની જ પ્રરૂપણા કરે છે, કારણ કે તે અનન્ત હોવાથી વચન દ્વારા કહી શકાતાં નથી અને આયુપરિમિત આયુમાં સમસ્ત પ્રજ્ઞાપનીય પદાર્થોંની પ્રરૂપણા થઈ શકતી નથી, તેથી પ્રજ્ઞાપનીયોંમાંથી કેટલાક અનન્તભાગ માત્રની, જે ગ્રહીતા ( ગ્રહણ કરનાર ) ની શક્તિની અપેક્ષાએ ગ્રહણને યોગ્ય હોય છે એટલે કે ગ્રહીતા જેટલા અર્થોંને ગ્રહણ કરવાને યોગ્ય હોય એટલા અર્થોંની તેઓ દેશના કરે છે. “વાગ્યોગ” નું તાત્પર્ય અહીં કેવળજ્ઞાનથી પ્રાપ્ત અર્થોંની

અયમર્થઃ—ભગવતઃ કેવલજ્ઞાનોપબધાર્થાભિધાયકઃ શબ્દરાશિઃ પ્રોચ્યમાનસ્તસ્ય ભગ-  
વતો વાગ્યોગ એવ ભવતિ, ન તુ શ્રુતમ્, વાગ્યોગસ્ય ભાષાપર્યાપ્ત્યાદિનામકર્મોદય-  
હેતુકત્વાત્, શ્રુતસ્ય તુ ક્ષાયોપશમિકત્વાદિતિ । સ ચ વાગ્યોગઃ । શેષં શ્રુતં ભવ-  
તીત્યન્વયઃ । શેષમ્=અપ્રધાનં શ્રુતં દ્રવ્યશ્રુતમિત્યર્થઃ । શ્રોતૃણાં ભાવશ્રુતકારણત્વાત્  
તદ્ભૂત્વાદપ્રધાનતયા દ્રવ્યશ્રુતમિતિ વ્યવહિયતે, ઇતિ ભાવઃ ॥

તદેતત્ કેવલજ્ઞાનં વર્ણિતમ્ । તદેતત્—અવધિજ્ઞાન—મનઃપર્યયજ્ઞાન—કેવલજ્ઞાન-  
રૂપં નોઈન્દ્રિયપ્રત્યક્ષં વર્ણિતમ્ । તદેતત્ પ્રત્યક્ષજ્ઞાનં—પ્રત્યક્ષાત્મકં જ્ઞાનં  
વર્ણિતમિત્યર્થઃ ॥ સૂ૦ ૨૩ ॥

અથ પરોક્ષજ્ઞાનં વર્ણયતે—‘સે કિં તં પરોક્ષનાણં૦’ ઇત્યાદિ ।

તાત્પર્ય યહાં કેવલજ્ઞાન સે ઉપલબ્ધ અર્થો કી અભિધાયિકા—કથન કર-  
નેવાલી—ભગવાન્ કે દ્વારા ઉચ્ચારિત હુઈ ઉસ શબ્દરાશિ સે હૈ । વહ  
શબ્દસમૂહ ભગવાન્ કા વાગ્યોગ હોતા હૈ, શ્રુતજ્ઞાન નહીં । ઇસ વાગ્યોગ  
કા કારણ ભાષાપર્યાપ્તિ આદિ નામકર્મ કા ઉદય હૈ । યહ વાગ્યોગ  
ભાવશ્રુતરૂપ ઇસલિયે નહીં માના જાતા હૈ કિ ભાવશ્રુત ક્ષાયોપશમિક  
હોતા હૈ । દ્રવ્યશ્રુત કા ઇસમેં વ્યવહાર ઇસલિયે કિયા જાતા હૈ કિ યહ  
શ્રોતાઓં કે ભાવશ્રુત કા કારણ હોતા હૈ, અતઃ ભાવશ્રુત કા કારણ હોને  
સે ઇસમેં દ્રવ્યશ્રુતતા હૈ । યહ કેવલજ્ઞાન કા વર્ણન હુવા । ઇસ તરહ  
યહાં તક અવધિજ્ઞાન, મનઃપર્યયજ્ઞાન ઔર કેવલજ્ઞાન રૂપ નોઈન્દ્રિય  
પ્રત્યક્ષ કા વર્ણન હુવા । યે ત્રીનો જ્ઞાન હી પ્રત્યક્ષજ્ઞાન હૈ । ઇસલિયે  
પ્રત્યક્ષ જ્ઞાન કા વર્ણન હો ચુકા હૈ ॥ સૂ૦ ૨૩ ॥

અવ પરોક્ષજ્ઞાન કા વર્ણન કિયા જાતા હૈ—‘સે કિં તં પરોક્ષ-  
નાણં ?’ ઇત્યાદિ ।

અભિધાયિકા—કથન કરનારી—ભગવાન દ્વારા ઉચ્ચારવામાં આવેલ તે શબ્દરાશિ છે.  
તે શબ્દરાશિ ભગવાનનો વાગ્યોગ હોય છે, શ્રુતજ્ઞાન નહીં. આ વાગ્યોગનું કારણ  
ભાષાપર્યાપ્તિ આદિ નામ-કર્મનો ઉદય છે. આ વાગ્યોગ તે કારણે ભાવશ્રુતરૂપ  
નથી મનાતો કે ભાવશ્રુત ક્ષાયોપશમિક હોય છે. દ્રવ્યશ્રુતનો તેમાં વહેવાર તે  
કારણે કરાય છે કે તે શ્રોતાઓના ભાવશ્રુતનું કારણ હોય છે, તેથી ભાવશ્રુતનું  
કારણ હોવાથી તેમાં દ્રવ્યશ્રુતતા છે. આ કેવળજ્ઞાનનું વર્ણન થયું. આ રીતે  
અહીં સુધી અવધિજ્ઞાન, મનઃપર્યયજ્ઞાન, અને કેવળજ્ઞાન નોઈન્દ્રિય પ્રત્યક્ષનું  
વર્ણન થયું. એ ત્રણેજ્ઞાન જ પ્રત્યક્ષજ્ઞાન છે. તેથી પ્રત્યક્ષ જ્ઞાનનું વર્ણન  
પૂરું થયું ॥ સૂ ૨૩ ॥

હવે પરોક્ષ જ્ઞાનનું વર્ણન કરવામાં આવે છે—‘સે કિં તં પરોક્ષનાણં ?’ ઇત્યાદિ.

મૂલમ્--સે કિં તં પરોક્ષનાણં? । પરોક્ષનાણં દુવિહં પળ્લત્તં ।  
તં જહા-આભિણિબોહિયનાણપરોક્ષં ચ, સુયનાણપરોક્ષં ચ ।  
જત્થ આભિણિબોહિયનાણં, તત્થ સુયનાણં, જત્થ સુયનાણં તત્થ  
આભિણિબોહિયનાણં, દોઽવિણ્યાઈં અળ્લમળ્લમળ્લગયાઈં, તહવિ  
પુળ્લ ઇત્થ આયરિયા નાળત્તં પળ્લવયંતિ । અભિણિબુજ્જઈ ત્તિ  
આભિણિબોહિયં, સુળેઈ-ત્તિ સુયં, મઈપુવ્વં જેણ સુયં ન મઈ  
સુયપુવ્વિયા ॥ સૂ. ૨૪ ॥

છાયા—અથ કિં તત્ પરોક્ષજ્ઞાનમ્ ? પરોક્ષજ્ઞાનં દ્વિવિધં પ્રજ્ઞપ્તમ્ । તદ્ યથા-  
આભિનિવોધિકજ્ઞાનપરોક્ષં ચ, શ્રુતજ્ઞાનપરોક્ષં ચ । યત્ર આભિનિવોધિકજ્ઞાનં તત્ર  
શ્રુતજ્ઞાનં, યત્ર શ્રુતજ્ઞાનં તત્રાભિનિવોધિકજ્ઞાનમ્, દ્વે અપ્યેતે અન્યોન્યમનુગતે, તથાપિ  
પુનરત્રાચાર્યા નાનાત્વં પ્રજ્ઞાપયન્તિ-અભિનિબુદ્ધ્યત ઇત્યાભિનિવોધિકમ્ । શૃણોતિ-  
ઈતિ શ્રુતમ્ । મતિપૂર્વં યેન શ્રુતં, ન મતિઃ શ્રુતપૂર્વિકા ॥ સૂ. ૨૪ ॥

‘ સે કિં તં પરોક્ષનાણં ’ ઇત્યાદિ ।

ટીકા—શિષ્યઃ પૃચ્છતિ—‘ સે કિં તં પરોક્ષનાણં ’ ઇતિ । અથ કિં તત્  
પરોક્ષજ્ઞાનમિતિ । પૂર્વનિર્દિષ્ટસ્ય પરોક્ષજ્ઞાનસ્ય કિં સ્વરૂપમિતિ પ્રશ્નઃ । ઉત્તરમાહ-  
‘ પરોક્ષનાણં દુવિહં પળ્લત્તં ’ ઇત્યાદિ । પરોક્ષજ્ઞાનં દ્વિવિધં પ્રજ્ઞપ્તમ્ । તત્ર પરોક્ષ-  
જ્ઞાનશબ્દાર્થ ઉચ્યતે—પરેભ્યોઽક્ષસ્ય યજ્જાયતે, તત્ પરોક્ષમ્ । અપૌદ્ગલિકત્વાદરૂપી  
જીવઃ, પૌદ્ગલિકત્વાત્ તુ રૂપીણિ દ્રવ્યેન્દ્રિયમનાંસિ, તતશ્ચ જીવાપેક્ષયા પરાણિ=

શિષ્ય પૂછતા હૈ—હે ભદ્રન્ત ! પૂર્વનિર્દિષ્ટ પરોક્ષજ્ઞાન કા કયા સ્વરૂપ  
હૈ ? ઉત્તર—પરોક્ષજ્ઞાન દો પ્રકાર કા બતલાયા ગયા હૈ ! વે દો પ્રકાર ચે  
હૈ—આભિનિવોધિક જ્ઞાન ઓર શ્રુતજ્ઞાન । આત્મા સે ભિન્ન દ્રવ્ય ઇન્દ્રિય  
ઓર મન સે જો જીવ કો જ્ઞાન હોતા હૈ વહ પરોક્ષજ્ઞાન કહલાતા હૈ ।  
જીવ સે ઇન્દ્રિયાં ઓર મન ઇસલિયે પર—ભિન્ન માની ગઈ હૈં કિ જીવ  
અરૂપી હૈં ઓર દ્રવ્ય—ઇન્દ્રિયાં તથા મન, રૂપી હૈં । જીવ અરૂપી ઇસલિયે

શિષ્ય પૂછે છે :—હે ભદ્રન્ત ! પૂર્વનિર્દિષ્ટ પરોક્ષ જ્ઞાનનું કેવું સ્વરૂપ છે ?  
ઉત્તર :—પરોક્ષજ્ઞાન બે પ્રકારનું બતાવ્યું છે, તે બે પ્રકાર આ પ્રમાણે છે—  
આભિનિવોધિક જ્ઞાન અને શ્રુતજ્ઞાન આત્માથી ભિન્ન દ્રવ્ય ઇન્દ્રિય અને મનથી  
ભવને જે જ્ઞાન થાય છે તે પરોક્ષજ્ઞાન કહેવાય છે. ભવથી ઇન્દ્રિયો અને મન  
તે કારણે ભિન્ન માનવામાં આવેલ છે કે ભવ અરૂપી છે, તથા દ્રવ્ય ઇન્દ્રિયો

અન્યાનિ દ્રવ્યેન્દ્રિયમનાંસિ, તેભ્યઃ પૌદ્ગલિકેભ્યઃ દ્રવ્યેન્દ્રિયમનોભ્યઃ અક્ષરસ્ય=જીવસ્ય યદ્ જ્ઞાનમુપજાયતે તત્ પરોક્ષજ્ઞાનમ્ । તદ્ દ્વિવિધં પ્રજ્ઞપ્તં=તીર્થકરૈઃ પ્રરૂપિતમ્ । તદ્ યથા—આભિનિબોધિકજ્ઞાનપરોક્ષં ચ, શ્રુતજ્ઞાનપરોક્ષં ચ, ઇહ ચકારદ્વયં સ્વાગતાનેકભેદસૂચકં પરસ્પરસહયોગ સૂચકં ચ, અનયોરેવં ક્રમેણ નિર્દેશે કારણં ‘નાણં પંચવિહં પળ્લન્તં’ ઇતિ સૂત્રસ્ય ટીકાયાં પ્રાગેવોક્તમ્ । સંપ્રતિ સ્વામ્યપેક્ષયા અભેદપ્રતિબોધનાર્થમાહ—‘જત્ય આભિણિવોહિયનાણં૦’ ઇત્યાદિ । યદ્વા-અનયોઃ પરસ્પરસહયોગં દર્શયતિ—‘જત્ય૦’ ઇત્યાદિ । યત્ર પુરુષે આભિનિબોધિકજ્ઞાનં, તત્રૈવ શ્રુતજ્ઞાનમપિ, તથા-યત્ર શ્રુતજ્ઞાનં તત્રાભિનિબોધિકજ્ઞાનમ્ ।

હૈ કિ વહ અપૌદ્ગલિક હૈ, તથા દ્રવ્ય-ઇન્દ્રિયાં ઔર મન પૌદ્ગલિક હૈ ઇસલિયે વે રૂપી હૈં । ઇસલિયે પર-જો દ્રવ્યેન્દ્રિય ઔર મન, ઇનસે જીવ કો જો જ્ઞાન ઉત્પન્ન હોતા હૈ વહ પરોક્ષજ્ઞાન હૈ । વહ દો પ્રકાર કા હોતા હૈ ૧-આભિનિબોધિકજ્ઞાન ઔર ૨-શ્રુતજ્ઞાન । સૂત્રમેં દો ચકાર યહ સૂચિત કરતે હૈં કિ ઇન દોનોં જ્ઞાનોં કે ઔર મી ભેદ હૈં, તથા ઇનકા પરસ્પરમેં સહયોગ હૈ । ઇનદોનોં કા ઇસ ક્રમ સે નિર્દેશ કરને કા કારણ “નાણં પંચવિહં પળ્લન્તં” ઇસ સૂત્ર કી ટીકામેં પહિલે પ્રદર્શિત કર દિયા હૈ । અવ ઇન દોનોંમેં સ્વામીકી અપેક્ષા સૂત્રકાર અભેદ પ્રદર્શિત કરને કે અભિપ્રાય સે કહતે હૈં કિ જિસ આત્મામેં આભિનિબોધિક જ્ઞાન હોતા હૈ ઉસ આત્મામેં શ્રુતજ્ઞાન હોતા હૈ, તથા જિસ આત્મામેં શ્રુતજ્ઞાન હોતા હૈ ઉસ આત્મામેં આભિનિબોધિકજ્ઞાન હોતા હૈ । ઇસ કથન સે ઇન દોનોંમેં સહયોગ હૈ યહ વાત મી જાની જાતી હૈ ।

અને મન, રૂપી છે. જીવ એ કારણે અરૂપી છે કે તે અપૌદ્ગલિક છે, તથા દ્રવ્ય-ઇન્દ્રિયો અને મન પૌદ્ગલિક છે તે કારણે તે રૂપી છે. તેથી જે દ્રવ્યઇન્દ્રિય અને મન વડે જીવને જે જ્ઞાન ઉત્પન્ન થાય છે તે પરોક્ષ જ્ઞાન છે. તે બે પ્રકારનું હોય છે (૧) આભિનિબોધિક જ્ઞાન અને (૨) શ્રુતજ્ઞાન. સૂત્રમાં બે ‘ચકાર’ એ સૂચિત કરે છે કે આ બન્ને જ્ઞાનનાં બીજા પણુ ભેદ છે, તથા તેમને પરસ્પરમાં સહયોગ છે, એ બન્નેનો આ પ્રકારે નિર્દેશ કરવાનું કારણ “નાણં પંચવિહં પળ્લન્તં” આ સૂત્રની ટીકામાં પહેલાં પ્રદર્શિત કરાઈ ગયું છે. હવે એ બન્નેમાં સ્વામીની અપેક્ષાએ અભેદ પ્રદર્શિત કરવાના ઉદ્દેશથી સૂત્રકાર કહે છે- જે આત્મામાં આભિનિબોધિક જ્ઞાન હોય છે તે આત્મામાં શ્રુતજ્ઞાન હોય છે તથા જે આત્મામાં શ્રુતજ્ઞાન હોય છે તે આત્મામાં આભિનિબોધિક જ્ઞાન હોય છે આ કથનથી એ બન્નેમાં સહયોગ છે તે વાત પણ બહુવા મળે છે.

નનુ ‘યત્રાભિનિબોધિકજ્ઞાનં તત્ર શ્રુતજ્ઞાનમ્’ ઇત્યુક્તે સતિ ‘યત્ર શ્રુતજ્ઞાનં તત્રાભિનિબોધિકજ્ઞાન’-મિતિ જ્ઞાતં ભવત્યેવ કિં પુનસ્તદુપાદાનેનેતિ ચેત્, અત્રો-  
ચ્યતે-નિયમતો ન જ્ઞાયતે તસ્માન્નિયમાવધારણાર્થ ‘યત્ર શ્રુતજ્ઞાનં તત્રાભિનિબોધિ-  
કજ્ઞાન’-મિત્યુચ્યતે । નિયમાવધારણમેવ સ્પષ્ટયતિ-‘દોવિ ઇયાઈ૦’ ઇત્યાદિ ।  
દ્વે અપ્યેતે આભિનિબોધિકશ્રુતે અન્યોન્યમનુગતે=પરસ્પરં સંબદ્ધે, અનયોર્નિયમેન  
સહભાવોઽસ્તીતિ ભાવઃ ।

નનુ યદ્યનયોઃ પરસ્પરં નિયમેન સહભાવસ્તર્હિ અનયોરભેદ એવાસ્તુ, કથં ભેદેન  
વ્યવહારો ભવતીત્યત આહ-‘તદ્ વિ૦’ ઇત્યાદિ । યદ્યપ્યેતે ઉભે જ્ઞાને અન્યોન્યાનુગતે

શંકા—“જત્થ આભિણિબોહિયનાણં તત્થ સુચનાણં” “જહાં આભિ-  
નિબોધિકજ્ઞાન હોતા હૈ વહાં શ્રુતજ્ઞાન હોતા હૈ, ઓર જહાં શ્રુતજ્ઞાન હોતા  
હૈ વહાં આભિનિબોધિકજ્ઞાન હોતા હૈ તો ફિર સૂત્રકાર કો હસ વાતકો  
પ્રકટ કરને કે લિયે સૂત્રમેં “જત્થ સુચનાણં તત્થ આભિણિબોહિયનાણં”  
ફિર હન પદોં કે રખને કી કયા આવશ્યકતા થી ?

ઉત્તર—નિયમ સે યહ વાત નહીં જાની જાતી હૈ હસલિયે હસ  
પ્રકાર કે નિયમ કે નિર્ણય કે લિયે “જત્થ સુચનાણં તત્થ આભિનિબોહિ-  
યનાણં” એસા કહા હૈ । હસી નિયમ કા નિર્ણય વે ‘દોઽવિ ઇયાઈ અણ્ણ-  
મણ્ણમણુગયાઈ’ હન પદોં સે કરતે હૈં । હસમેં વતલાયા ગયા હૈ કિ યે  
દોંનોં જ્ઞાન પરસ્પર સંબદ્ધ હૈં, અર્થાત્ નિયમતઃ હનકા સહયોગ હૈ ।

શંકા—યદિ હનકા પરસ્પર મેં નિયમતઃ સહભાવ હૈ તો ફિર હનમેં  
કોઈ ભેદ નહીં રહના ચાહિયે, ઓર ભેદ સે જો હનકા વ્યવહાર હોતા હૈ

શંકા—“જત્થ આભિણિબોહિયનાણં તત્થ સુચનાણં” જ્યા આભિનિબોધિક  
જ્ઞાન હોય છે ત્યાં શ્રુતજ્ઞાન હોય છે” આટલું કહેવાથી જ જ્યારે એ વાત બહી  
શકાય છે કે જ્યાં શ્રુતજ્ઞાન હોય છે ત્યાં આભિનિબોધિકજ્ઞાન હોય છે તો પછી  
સૂત્રકારને આ વાત પ્રગટ કરવા માટે સૂત્રમાં “જત્થ સુચનાણં તત્થ આભિણિ-  
બોહિયાણં” એ પદોને મૂકવાની જરૂર શી હતી ?

ઉત્તર—નિયમથી આ વાત બહી શકાતી નથી તેથી આ પ્રમાણેના નિય-  
મના નિર્ણય માટે “જત્થ સુચનાણં તત્થ આભિનિબોહિયાનાણં” એમ કહ્યું છે. એજ  
નિયમનો નિર્ણય તેઓ “દોઽવિ ઇયાઈ અણ્ણમણ્ણમણુગયાઈ” એ પદોથી કરે  
છે. તેમાં બતાવ્યું છે કે એ બંને જ્ઞાન પરસ્પર સંબદ્ધ છે, એટલે કે નિય-  
મતઃ તેમનો સહયોગ છે.

શંકા—જો તેમનો પરસ્પરમાં નિયમતઃ સહભાવ છે તો પછી તેમનામાં  
કોઈ ભેદ રહેવા બોધ્યો નહીં, અને ભેદથી જો તેમનો વ્યવહાર થાય છે તે નય

સ્તઃ તથાપિ પુનરત્ર=આભિનિવોધિકશ્રુતયોઃ, આચાર્યાઃ-તીર્થંકરગણધરાઃ, નાના-ત્વં ભેદં પ્રજ્ઞાપયન્તિ=પ્રરૂપયન્તિ । કથમિતિ ચેત્, ઉચ્યતે-પરસ્પરમનુગતયોરપિ લક્ષ-ણભેદાદ્ ભેદો દૃશ્યતે । યથા-एकाकाशस्थयोर्धर्माधर्मास्तिकाययोः, तथाहि-धर्मास्ति-कायाधर्मास्तिकायौ परस्परं लोलीभावेन एकस्मिन्नाकाशप्रदेशे स्थितौ, तथापि यो गतिपरिणामपरिणतयोर्जीवपुद्गलयोर्गत्युपष्टम्भहेतुर्जलमिव मत्स्यस्य, स खलु असं-वह लुप्त हो जाना चाहिये, परन्तु ऐसा नहीं होता है, भेदव्यवहार तो इनमें होता ही है सो यह भेदव्यवहार कैसे होता है ?

સમાધાન—इसका समाधान—“तह वि पुण इत्थ” इत्यादि सूत्रांश द्वारा सूत्रकार करते हैं, वे इसमें यह बतलाते हैं कि—यद्यपि ये दोनों ज्ञान अन्योन्यानुगत हैं—परस्पर संबद्ध हैं फिर आचार्य-तीर्थंकर गणधर इनमें भिन्नता की प्ररूपणा करते हैं । इस प्ररूपणा का कारण यह है कि परस्पर अनुगत होने पर भी इन दोनों में लक्षण की अपेक्षा भेद है, अतः लक्षणभेद से इनमें भेद आजाता है । जैसे एक आकाशरूप आधार में स्थित धर्मास्तिकाय और अधर्मास्तिकाय में—परस्पर अनुगत होने पर भी लक्षणभेद से भेद माना जाता है । ये दोनों द्रव्य एक आकाश-प्रदेश में परस्पर लोलीभाव से स्थित माने गये हैं फिर भी इनमें लक्षण-भेद से भिन्नता मानी जाती है । जिस प्रकार स्वयं गमन करने की शक्ति-संपन्न मछली को चलने में जल सहायक होता है उसी प्रकार स्वयं गमन

થવો જોઈએ, પણ એમ થતું નથી. ભેદવ્યવહાર તો તેમનામાં થાય છે જ તો તે ભેદવ્યવહાર કેવી રીતે થાય છે ?

સમાધાન:—તેનું સમાધાન “તહ વિ પુણ ઇત્થ” ઇત્યાદિ સૂત્રાંશ દ્વારા સૂત્રકાર કરે છે. તેઓ તેમાં એમ બતાવે છે કે—જે કે એ બન્ને જ્ઞાન અન્યોન્યા નુગત છે—પરસ્પર સંબદ્ધ છે તો પણ આચાર્ય—તીર્થંકર ગણધર તેમનામાં ભિન્નતાની પ્રરૂપણા કરે છે. આ પ્રરૂપણાનું કારણ એ છે કે પરસ્પર અનુગત હોવા છતાં પણ એ બન્નેમાં લક્ષણની અપેક્ષાએ ભેદ છે, તેથી લક્ષણભેદથી તેમનામાં ભેદ આવી જાય છે. જેમ એક આકાશરૂપ આધારમાં રહેલ ધર્માસ્તિકાય અને અધર્માસ્તિકાયમાં પરસ્પર અનુગત હોવા છતાં લક્ષણ—ભેદથી ભેદ મનાય છે તેમ તે બન્ને જ્ઞાન વિષે પણ ભેદ છે. એ બન્ને દ્રવ્ય એક આકાશપ્રદેશમાં પરસ્પર લોલીભાવથી રહેલ મનાય છે તો પણ તેમનામાં લક્ષણભેદથી ભિન્નતા માનવામાં આવે છે. જે પ્રકારે જાતે ચાલવાની શક્તિવાળી માછલીને ચાલવામાં જળ સહાયક થાય છે, એજ પ્રમાણે જાતે ગમન કરવાની શક્તિવાળા જીવ અને



સ્વયેયપ્રદેશાત્મકો રૂપરહિતો ધર્માસ્તિકાયઃ, તથા યઃ સ્થિતિપરિણામપરિણતયોર્જીવ-  
પુદ્ગલયોરેવસ્થિત્યુપપ્તમ્ભેતુઃ શ્રાન્તપથિકસ્ય છાએવ, સ સ્વલુ અસંસ્વયેયપ્રદેશાત્મ-  
કો રૂપરહિત એવાધર્માસ્તિકાયઃ, ઇતિ લક્ષણભેદાદ્ ભેદો ભવતિ । એવમાભિનિવોધિક  
શ્રુતયોરપિ લક્ષણભેદાદ્ ભેદો વિજ્ઞેયઃ । લક્ષણભેદમેવ દર્શયતિ-‘ અભિણિબુજ્જહં ’  
ઇત્યાદિ । અભિ=અભિમુખયોગ્યદેશાવસ્થિતં નિયતમર્થમિન્દ્રિયમનોદ્વારેણ બુદ્ધ્યતે=  
પરિચ્છિનન્તિ, આત્મા યેનપરિણામ વિશેષેણ સ પરિણામવિશેષો જ્ઞાનાપરપર્યાયઃ-અભિ-  
નિવોધઃ, સ એવ=આભિનિવોધિકમ્, તથા-શૃણોતિ-વાચ્યવાચકભાવપુરઃસરં શ્રવણ  
વિષયેણ શબ્દેન સહ સંસ્પૃષ્ટમર્થં પરિચ્છિનન્તિ આત્મા યેન પરિણામવિશેષેણ,  
સ પરિણામવિશેષઃ શ્રુતમ્ ।

કરને કી શક્તિસંપન્ન જીવ ઓર પુદ્ગલ કો જો ચલને મેં સહાયક હોતા  
હે વહ ધર્માસ્તિકાય હે । યહ દ્રવ્ય અરૂપી એવં અસંસ્વયાતપ્રદેશી માના  
ગયા હે । સ્થિતિક્રિયા કરને મેં સ્વયં ઉપાદાનભૂત જીવ પુદ્ગલ કો સ્થિત  
કરને મેં જો પથિક કો છાયા કી તરહ સહાયક હોતા હે વહ અધર્મા-  
સ્તિકાય હે । યહ દ્રવ્ય ભી અસંસ્વયાતપ્રદેશી ઓર અરૂપી માના ગયા  
હે । ઇસ પ્રકાર ધર્માસ્તિકાય ઓર અધર્માસ્તિકાય દ્રવ્ય કા લક્ષણ  
શાસ્ત્રકારીને માના હે । ઇસ લક્ષણ કી ભિન્નતા સે હી ઊન દોનોં દ્રવ્યોં  
મેં ભિન્નતા માની ગઈ હે । ઇસી પ્રકાર આભિનિવોધિક જ્ઞાન ઓર શ્રુતજ્ઞાન  
ન ભી લક્ષણભેદ સે ભિન્નતા માની હુઈ હે । અભિમુખ એવં યોગ્યદેશમેં  
સ્થિત નિયત અર્થકો ઇન્દ્રિય ઓર મન દ્વારા આત્મા જિસ પરિણામ-  
વિશેષ સે જાનતા હે વહ પરિણામ વિશેષ હી આભિનિવોધિક જ્ઞાન હે ।

પુદ્ગલને ચાલવામાં જે સહાયક થાય છે તે ધર્માસ્તિકાય છે. આ દ્રવ્ય અરૂપી  
અને અસંસ્વયાત પ્રદેશી મનાય છે. સ્થિતિક્રિયા કરવામાં સ્વયં ઉપાદાન ભૂતજીવ  
અને પુદ્ગલને સ્થિત કરવામાં જે મુસાફરને છાયાની જેમ સહાયક થાય છે તે  
અધર્માસ્તિકાય છે. આ દ્રવ્ય પણ અસંસ્વયાત પ્રદેશી અને અરૂપી મનાય છે આ  
પ્રમાણે ધર્માસ્તિકાય અને અધર્માસ્તિકાયનાં લક્ષણો શાસ્ત્રકારોએ માન્યાં છે. આ  
લક્ષણની ભિન્નતાને કારણે જ તે બંને દ્રવ્યોમાં ભિન્નતા માનવામાં આવી છે. એજ  
પ્રમાણે આભિનિવોધિક જ્ઞાન અને શ્રુતજ્ઞાનમાં પણ લક્ષણભેદથી ભિન્નતા માન-  
વામાં આવી છે. અભિમુખ અને યોગ્ય દેશમાં રહેલ નિયત અર્થને ઇન્દ્રિય  
અને મન દ્વારા આત્મા જે પરિણામવિશેષથી જાણે છે, તે પરિણામવિશેષ જ  
આભિનિવોધિક જ્ઞાન છે. શ્રવણ ઇન્દ્રિયના વિષયભૂત થયેલ શબ્દની સાથે સંસ્પૃષ્ટ



નનુ યદ્યેવં શ્રુતસ્ય લક્ષણં સ્યાત્ તર્હિ ય એવ શ્રોત્રેન્દ્રિયલબ્ધિમાન્ ભાષાલબ્ધિ-  
માન્ વા, તસ્યૈવ શ્રુતમુત્પદ્યેત, ન તુ તદન્યસ્યૈકેન્દ્રિયસ્ય । તથાહિ—યઃ શ્રોત્રેન્દ્રિય-  
લબ્ધિમાન્ ભવતિ, સ એવ વિવક્ષિતં શબ્દં શ્રુત્વા તેન શબ્દેન વાચ્યાર્થ જ્ઞાતું શક્નોતિ,  
ન તુ તદન્યઃ, તાદૃશશક્ત્યભાવાત્ । યોઽપિ ચ ભાષાલબ્ધિમાન્ ભવતિ, સોઽપિ  
દ્વીન્દ્રિયાદિરપિ પ્રાયઃ સ્વચેતસિ કિમપિ વિકલ્પ્ય ( તદનુસારતઃ ) તદભિધાનાનુ-  
માનતઃ શબ્દમુચ્ચારયતિ, નાન્યથા, તતસ્તસ્યાપિ શ્રુતં સંભાવ્યતે । યસ્તુ એકેન્દ્રિયઃ,  
સ ન શ્રોત્રેન્દ્રિયલબ્ધિમાન્, નાપિ ભાષાલબ્ધિમાન્, તતઃ કથં તસ્ય શ્રુતસંભવઃ ? ।  
અથ પ્રવચને તસ્યાપિ શ્રુતમિત્યુચ્યતે ઇતિ ચેત્, તર્હિ પ્રાગુક્તં શ્રુતલક્ષણં ન સંગચ્છતે ? ।

શ્રવણ ઇન્દ્રિય કે વિષયભૂત હુએ શબ્દ કે સાથ સંસ્પૃષ્ટ અર્થ કો આત્મા  
વાચ્ય વાચક સંબંધપૂર્વક જિસ પરિણામવિશેષ કે દ્વારા જાનતા હૈ વહ  
આત્મા કા પરિણામવિશેષ હી શ્રુતજ્ઞાન હૈ ।

શંકા—શ્રુત કા જો આપને ઇસ પ્રકાર લક્ષણ કિયા હૈ વહ લક્ષણ  
જો શ્રોત્ર-ઇન્દ્રિય લબ્ધિવાલા હૈ અથવા ભાષાલબ્ધિવાલા હૈ ઉસીમેં ઘટિત  
હોતા હૈ, એકેન્દ્રિયમેં નહીં, કારણ કિ જો શ્રોત્રેન્દ્રિયલબ્ધિવાલા હોતા હૈ,  
વહી વિવક્ષિત શબ્દ સુનકર ઉસ શબ્દ સે ઉસકે વાચ્ય અર્થ કો જાન  
સકતા હૈ, દૂસરા નહીં, ક્યોં કિ ઉસમેં એસી શક્તિ કા અભાવ હૈ ? । તથા  
જો ભાષાલબ્ધિસંપન્ન દ્વીન્દ્રિયારિક જીવ હૈં વે ભી પ્રાયઃ કરકે અપને ચિત્તમેં  
કુછ ભી વિકલ્પ કરકે ઉસી કે અનુસાર શબ્દોં કા ઉચ્ચારણ કરતે હૈં,  
ઇસસે ઉનમેં ભી શ્રુત કી સંભાવના હોતી હૈ । જો એકેન્દ્રિય જીવ હૈં વે ન  
તો શ્રોત્રેન્દ્રિય લબ્ધિવાલે હૈં ઓર ન ભાષાલબ્ધિવાલે હી, તો ફિર કૈસે

અર્થને આત્મા વાચ્ય-વાચકસંબંધપૂર્વક જે પરિણામવિશેષદ્વારા જાણે છે તે  
આત્માનો પરિણામવિશેષ જ શ્રુતજ્ઞાન છે.

શંકા—આપે શ્રુતનું જે આ પ્રમાણે લક્ષણ કહ્યું છે તે લક્ષણ જ શ્રોત્ર ઇન્દ્રિય  
લબ્ધિવાળો છે અથવા ભાષાલબ્ધિવાળો છે તેમાં જ ઘટાવી શકાય છે, એકેન્દ્રિયમાં  
નહીં, કારણ કે જે પ્રાણી શ્રોત્રેન્દ્રિય લબ્ધિવાળું હોય છે એજ વિવક્ષિત શબ્દ સાંભ-  
ળીને તે શબ્દથી તેનાં વાચ્ય અર્થને જાણી શકે છે, ખીજે નહીં, કારણ કે તેનામાં  
એવી શક્તિનો અભાવ છે ? તથા જે ભાષાલબ્ધિસંપન્ન દ્વીન્દ્રિયાદિક જીવ છે તેઓ પણ  
સામાન્ય રીતે પોતાનાં ચિત્તમાં કેઈ પણ વિકલ્પ કરીને તેના અનુસાર શબ્દોનું  
ઉચ્ચારણ કરે છે, તેથી તેમનામાં પણ શ્રુતની સંભાવના હોય છે. જે એકેન્દ્રિય  
જીવો છે તે શ્રોત્રેન્દ્રિય લબ્ધિવાળા પણ નથી અને ભાષાલબ્ધિવાળા પણ નથી, તો

અત્રોચ્યતે-इह हि तावदेकेन्द्रियाणामाहारादिसंज्ञा विद्यते, तथा सूत्रेऽनेक-  
शोऽभिधानात् । संज्ञा चाभिलाष उच्यते । उक्तञ्च—

“आहारसंज्ञा आहाराभिलाषः क्षुधेदनीयप्रभवः खलु आत्मपरिणामविशेषः”  
इति, अभिलाषश्च ‘ममैवंरूपं वस्तु पुष्टिकारि, तद् यदीदमवाप्यते, ततः समी-  
चीनं भवती’-त्येवं शब्दार्थोल्लेखानुविद्धः स्वपुष्टिनिमित्तभूत-प्रतिनियतवस्तु-  
प्राप्त्यध्यवसायः, स च श्रुतमेव, तस्य शब्दार्थपर्यालोचनात्मकत्वं च-‘ममैवंरूपं वस्तु

इनमें श्रुतकी संभावना हो सकती? सो फिर इस प्रकार की मान्यतामें  
यह पूर्वकथित श्रुतका लक्षण नहीं बनता है।

उत्तर—ऐसा कहना ठीक नहीं है, कारण कि एकेन्द्रिय जीवों के  
आहार आदिचार संज्ञाएँ हैं, यह बात सूत्रमें अनेक बार बतलाई गई है।  
जो संज्ञा है वही अभिलाषा है। कहा भी है—

“आहारसंज्ञा आहाराभिलाषः क्षुधेदनीयप्रभवः खलु आत्मपरिणाम  
विशेषः” । आहारसंज्ञा का तात्पर्य है आहार की अभिलाषा, यह जीवों  
के क्षुधावेदनीय के उदय से होती है। यह आत्मा का एक परिणाम  
विशेष है। ‘मेरे लिये इस प्रकार की वस्तु पुष्टिकारक है, वह वस्तु यदि  
मुझे मिल जाय तो अच्छा है’ इस प्रकार अपनी पुष्टि को निमित्त  
कर के जो शब्द और उसके अर्थ के उल्लेख से अनुविद्ध प्रतिनियत  
वस्तु की प्राप्ति का अध्यवसाय होता है यही तो अभिलाषा है, और यह  
अभिलाषा ही श्रुत है। इस श्रुतमें शब्द और उसके अर्थ की पर्यालोच-

પછી તેમનામાં શ્રુતની સંભાવના કેવી રીતે હોઈ શકે? ને એમ કહો કે શાસ્ત્રમાં  
તો તેમના પણ શ્રુતનો સદ્ભાવ બતાવ્યો છે તેથી અમે એમ કહીએ છીએ તો  
પછી એ પ્રકારની માન્યતામાં આ પૂર્વકથિત શ્રુતનું લક્ષણ બનતું નથી.

ઉત્તર—એમ કહેવું તે બરાબર નથી. કારણ કે એકેન્દ્રિય જીવોને આહાર  
આદિ ચાર સંજ્ઞાઓ છે, એ વાત સૂત્રમાં અનેકવાર બતાવવામાં આવેલ છે.  
ને સંજ્ઞા છે એજ અભિલાષા છે. કહ્યું પણ છે—“આહારસંજ્ઞા આહારાભિલાષઃ  
ક્ષુધેદનીયપ્રભવઃ ખલુ આત્મપરિણામવિશેષઃ” આહાર સંજ્ઞાનું તાત્પર્ય છે આહાર-  
રની અભિલાષા, તે જીવોને ક્ષુધાવેદનીયના ઉદયથી થાય છે. આ આત્માનું એક  
પરિણામવિશેષ છે, “મારે માટે આ પ્રકારની વસ્તુ પુષ્ટિકારક છે, તે વસ્તુ ને  
મને મળી જાય તો સારું.” આ પ્રમાણે યોતાની પુષ્ટિને નિમિત્ત બતાવીને જે  
શબ્દ અને તેના અર્થના ઉલ્લેખથી અનુવિદ્ધ પ્રતિનિયત વસ્તુની પ્રાપ્તિનો જે

પુષ્ટિકારિ, તદ્ યદીદમવાપ્યતે ' इत्येवमादीनां शब्दानामान्तरध्वनिरूपानामपि  
विवक्षितार्थवाचकतया प्रवर्तमानत्वात्, श्रुतस्य चैवं लक्षणात् । उक्तञ्च—

इंदियमणोनिमित्तं, जं विन्नाणं सुयाणुसारेणं ।

निययत्थो—त्ति समत्थं, तं भावसुयं मई सेसं ॥ १ ॥

છાયા—इन्द्रियमनो निमित्तं, यद् विज्ञानं श्रुतानुસारेण ।

नियतार्थ इति समस्तं, तद् भावश्रुतं मतिः शेषम् ॥ १ ॥

‘ सुयाणુસારેણ ’ इति । श्रुतानुસारेण=शब्दार्थपर्यालोचनानुસारेण, ‘शब्दार्थ  
पर्यालोचनं च नाम वाच्यवाचकभावपूर्वकं शब्दसंस्पृष्टस्यार्थस्य प्रतिपत्तिः, केवल-  
मेकेन्द्रियाणामव्यक्तमेव ।

નાત્મકતા યહી હૈ કિ ઉસકે ચિત્તમેં જો યહ આન્તરધ્વનિ ઉઠ રહી હૈ  
કિ—“ મુજે યહ વસ્તુ પુષ્ટિકારક હોગી, ઓર વહ યદિ મુજે મિલ જાય તો  
અચ્છા હો ” વહ શબ્દસ્વરૂપ હૈ, એવં ઇસ ધ્વનિ કા જો વિવક્ષિત અભિલ-  
ષિત અર્થ હૈ વહ ઉસકા વાચ્ય હૈ । યહી શ્રુત કા લક્ષણ હૈ । કહા મી હૈ—

“ इंदियमणोनिमित्तं, जं विन्नाणं सुयाणुसारेणं ।

निय यत्थो त्ति समत्थं, तं भावसुयं मई सेसं ” ॥ १ ॥

શ્રુત કે અનુસાર—શબ્દ ઓર અર્થ કી પર્યાલોચના કે અનુસાર અર્થાત્  
શબ્દ ઓર અર્થ કા વાચ્ય—વાચક સંબંધ હૈ ઓર ‘ ઇસ શબ્દ કા યહ  
અર્થ હૈ ’ ઇસ પ્રકાર વાચ્ય—વાચકભાવપૂર્વક શબ્દસંસ્પૃષ્ટ અર્થ કે જ્ઞાન  
કે અનુસાર જો કિ કેવલ એકેન્દ્રિય જીવોમેં અવ્યક્ત હૈ ઇન્દ્રિય ઓર  
મન કે દ્વારા જો અપને અર્થ કે કથન કરનેમેં સમર્થ જ્ઞાન હોતા હૈ વહ  
ભાવશ્રુત હૈ । ઇસસે શેષ મતિજ્ઞાન હૈ ॥ ૧ ॥

પ્રયત્ન થાય છે એજ અભિલાષા છે, અને એ અભિલાષાજ શ્રુત છે. આ શ્રુતમાં  
શબ્દ અને તેના અર્થની પર્યાલોચનાત્મકતા એજ છે કે તેનાં ચિત્તમાં જે  
આંતરધ્વનિ નીકળી રહ્યો છે કે “ મને આ વસ્તુ પુષ્ટિકારક થશે. અને તે જો  
મને મળી જાય તો સારું ” તે શબ્દસ્વરૂપ છે. અને આ ધ્વનિનો જે વિવક્ષિત  
અભિલષિત અર્થ છે તે તેનો વાચ્ય છે. એજ શ્રુતનું લક્ષણ છે. કહ્યું પણ છે—

“ इंदिय-मणो-निमित्तं, जं विन्नाणं सुयाणुसारेणं ।

निययत्थो—त्ति समत्थं, तं भावसुयं मईसेसं ॥ १ ॥ ”

શ્રુતના પ્રમાણે—શબ્દ અને અર્થની પર્યાલોચના પ્રમાણે એટલે કે શબ્દ અને  
અર્થનો વાચ્ય, વાચક સંબંધ છે. “ આ શબ્દનો આ અર્થ છે ” આ પ્રકારે  
વાચ્ય—વાચક—ભાવપૂર્વક શબ્દસંસ્પૃષ્ટ અર્થના જ્ઞાન પ્રમાણે જે કેવળ એકેન્દ્રિય  
જીવોમાં અવ્યક્ત છે, ઇન્દ્રિય અને મન દ્વારા જે પોતાના અર્થનું કથન કરવાને  
સમર્થ જ્ઞાન હોય છે તે ભાવશ્રુત છે. તે સિવાયનું મતિજ્ઞાન છે. -

કિન્ચ—એકેન્દ્રિયાણાં શ્રુતજ્ઞાનં નાપ્યનિર્વચનીયં, તથારૂપક્ષયોપશમજન્ય-  
ત્વાત્, અન્યથા—આહારાદિસંજ્ઞાનુપપત્તેઃ ।

યદપ્યુચ્યતે—યદ્યેવં શ્રુતસ્ય લક્ષણં સ્યાત્, તર્હિં ય એવ શ્રોત્રેન્દ્રિયલબ્ધિમાન્  
ભાષાલબ્ધિમાન્ વા, તસ્યૈવ શ્રુતમુત્પદ્યતે, ન તુ તદન્યસ્યૈકેન્દ્રિયસ્યેતિ, તદપ્યસમી-  
ક્ષિતાર્થકથનમ્, સમ્યક્પ્રવચનાર્થાંપરિજ્ઞાનાર્થાંપરિજ્ઞાનાત્, તથાહિ—વકુલાદીનાં  
સ્પર્શનેન્દ્રિયાતિરિક્તદ્રવ્યેન્દ્રિયલબ્ધ્યભાવેપિ તેષાં કિમપિ સૂક્ષ્મં ભાવેન્દ્રિયપન્ચ-  
કવિજ્ઞાનમભ્યુપગમ્યતે, તથા ભાષાશ્રોત્રેન્દ્રિયલબ્ધિવિકલત્વેપિ તેષાં કિમપિ સૂક્ષ્મં  
શ્રુતં ભવતિ, અન્યથા—આહારાદિસંજ્ઞાનુપપત્તેઃ ।

તથા—એકેન્દ્રિય જીવો કા શ્રુતજ્ઞાન અનિર્વચનીય મી નહીં હૈ ક્યોં  
કિ વહ્ ઇસી પ્રકાર કૈ ક્ષયોપશમ સૈ જન્ય માના ગયા હૈ । અન્યથા—યદિ  
વહાં શ્રુતજ્ઞાન કા સદ્ભાવ ન માના જાવૈ તો ઇનમૈં આહાર આદિ સંજ્ઞાં  
ઉત્પન્ન નહીં હો સકતી ।

જો ઇસા કહા હૈ કિ—‘શ્રુત કા લક્ષણ ઇસા માના જાવૈ તો જો શ્રોત્રે-  
ન્દ્રિયલબ્ધિવાલૈ ઇવં ભાષાલબ્ધિવાલૈ પ્રાણી હૈં ઁન્હીં કૈ શ્રુત કી ઉત્પત્તિ  
હોગી, ઁનસૈ ભિન્ન ઇકેન્દ્રિય જીવ કૈ નહીં ’ સો ઇસા કથન મી વિના  
વિચારૈ હી કહા ગયા હૈ, ક્યોં કિ ઇસ કથન સૈ યહી માલૂમ હોતા હૈ કિ  
કહનૈ વાલૈ કો પ્રવચન કૈ અર્થકા સમ્યક્ પરિજ્ઞાન નહીં હૈ । વકુલ  
આદિ વૃક્ષોં કૈ સ્પર્શન ઇન્દ્રિય સૈ અતિરિક્ત અન્ય દ્રવ્યેન્દ્રિયલબ્ધિ કા  
યદ્યપિ અભાવ હૈ તો મી ઁનમૈં સૂક્ષ્મ ભાવેન્દ્રિયપંચકરૂપ વિજ્ઞાન માના  
ગયા હૈ । ઇસસૈ ભાષા ઔર શ્રોત્રેન્દ્રિય લબ્ધિ કી વિકલતા હોનૈ પર મી

તથા—એકેન્દ્રિય જીવોનું શ્રુતજ્ઞાન અનિર્વચનીય પણ નથી, કારણ કે તે  
એ જ પ્રકારના ક્ષયોપશમથી ઉત્પન્ન થયેલ મનાયુ છે. અન્યથા—જો ત્યાં શ્રુત-  
જ્ઞાનનો સદ્ભાવ મનાય નહીં તો તેમનામાં આહારાદિ સંજ્ઞાઓ ઉત્પન્ન  
થઈ શકે નહીં.

જો એમ કહેવામાં આવે કે—“શ્રુતલક્ષણ એવું માનવામાં આવે તો જે  
શ્રોત્રેન્દ્રિય લબ્ધિવાળા અને ભાષાલબ્ધિવાળા પ્રાણી છે તેમને શ્રુતની ઉત્પત્તિ  
થશે, તેમનાથી ભિન્ન એકેન્દ્રિય જીવને નહીં” તો એવું કથન પણ વિચાર્યા  
વિના કરાયું છે, કારણ કે આ કથનથી એમજ લાગે છે કે કહેનારને પ્રવચનના  
અર્થનું સમ્યક્ પરિજ્ઞાન નથી. વકુલ આદિ વૃક્ષોમાં સ્પર્શન ઇન્દ્રિય સિવાયની  
બીજી દ્રવ્યેન્દ્રિયલબ્ધિનો જો કે અભાવ છે તો પણ તેમનામાં સૂક્ષ્મ ભાવેન્દ્રિય-  
પંચકરૂપ વિજ્ઞાન માનવામાં આવ્યું છે. તે કારણે ભાષા અને શ્રોત્રેન્દ્રિય લબ્ધિની

ઉક્તञ્ચ—જહ સુહુમં ભાવેદિય, —નાણં દર્વ્વેદિયાવરોહે વિ ।

તહ દર્વ્વસુયાભાવે, ભાવસુયં પત્થિવાઈણં ॥ ૧ ॥

છાયા—યથા સૂક્ષ્મં ભાવેન્દ્રિય-જ્ઞાનં દ્રવ્યેન્દ્રિયાપરોધેપિ ।

તથા દ્રવ્યશ્રુતાભાવે ભાવશ્રુતં પાર્થિવાદીનામ્ ॥ ૧ ॥

તસ્માત્ પૂર્વોક્તમેવ શ્રુતલક્ષણં સમીચીનં નાન્યદિતિ ।

તદેવં લક્ષણભેદાદ્ ભેદમભિધાય, સંપ્રતિ પ્રકારાન્તરેણ ભેદમાહ—‘ મહ્પુવ્વં ’  
 इत्यादि । ‘ मतिपूर्वं येन श्रुतं, न मतिः श्रुतपूर्विका ’ इति । इह पूर्वशब्दार्थः  
 कारणम्, ‘ पृ पालनपूरणयो ’—रित्यस्मादौणादिको वक्रप्रत्ययः, पूर्यते=प्राप्यते

उनमें सूक्ष्म श्रुत ज्ञान का सद्भाव सिद्ध होता है। जो ऐसा न हो तो  
 उनमें आहार आदि संज्ञाएँ नहीं बन सकती। कहा भी है—

“ जह सुहुमं भावेंदिय, —नाणं दर्व्वेदियावरोहे वि ।

तह दर्व्वसुयाभावे, भावसुयं पत्थिवाईणं ” ॥ १ ॥

इसलिये पूर्वोक्त ही श्रुत का लक्षण समीचीन है, इससे अन्य, श्रुत  
 का लक्षण समीचीन नहीं है ।

इस प्रकार सूत्रकार लक्षण के भेद से मतिज्ञान और श्रुतज्ञानमें  
 भेद का प्रतिपादन करके अब प्रकारान्तर से इन दोनोंमें भेद का प्रति-  
 पादन करते हैं—“ मહપુવ્વં જેણ સુયં, ન મઈ સુયપુવ્વિયા ” (મતિપૂર્વ-  
 યેન શ્રુતં, ન મતિઃ શ્રુતપૂર્વિકા) યહાં પૂર્વ શબ્દ કા અર્થ કારણપરક હૈ ।  
 “ પૃ પાલનપૂરણયોઃ ” પૃ ધાતુ સે ઔણાદિક વક્ર પ્રત્યય હોને પર પૂર્વ

વિકલતા હોવા છતાં પણ તેમનામાં સૂક્ષ્મ શ્રુતજ્ઞાનનો સદ્ભાવ સિદ્ધ થાય છે.  
 જો એમ ન હોય તો તેમનામાં આહાર આદિ સંજ્ઞાઓ સંભવેજ નહીં. કહ્યું પણ છે—

“ જહ સુહુમં ભાવેદિય, —નાણં દર્વ્વે દિયાવરોહે વિ ।

તહ દર્વ્વસુયાભાવે, ભાવસુયં પત્થિવાઈણં ” ॥ ૧ ॥

અર્થાત્—જેમ દ્રવ્યેન્દ્રિયના સ્વભાવમાં સૂક્ષ્મ ભાવેન્દ્રિયજ્ઞાન હોય છે તેમજ  
 પૃથ્વી આદિ જીવોમાં પણ દ્રવ્યશ્રુતના અભાવમાં ભાવશ્રુત હોય છે (૧).

તેથી પૂર્વોક્ત જ શ્રુતનું લક્ષણ સમીચીન છે, તેથી જુદું શ્રુતનું લક્ષણ  
 સમીચીન નથી.

આ પ્રમાણે લક્ષણના લેહથી મતિજ્ઞાન અને શ્રુતજ્ઞાનમાં લેહને સિદ્ધ કરીને  
 હવે સૂત્રકાર ખીજા પ્રકારે એ બન્નેના લેહનું પ્રતિપાદન કરે છે—“ મહપુવ્વં  
 જેણ સુયં, ન મઈ સુયપુવ્વિયા ” (મતિપૂર્વે યેન શ્રુતં, ન મતિઃ શ્રુતપૂર્વિકા)  
 અહીં પૂર્વ શબ્દનો અર્થ કારણપરક છે. “ પૃ પાલન-પૂરણયોઃ ” ‘પૃ’ ધાતુથી

કાર્યં येन तत् पूर्व=कारण-मित्यर्थः, मतिःपूर्वं यस्य तद् मतिपूर्वम्, श्रुतं-श्रुतज्ञानं, तथाहि-श्रुतज्ञानं मत्या पूर्यते=प्राप्यते पाल्यते वा । मतिज्ञानाभावे श्रुतज्ञानं विनश्यतीत्यर्थः । ‘न मतिः श्रुतपूर्विका’ इति । मतिः श्रुतपूर्विकानास्तीत्यर्थः, तस्मान्मतिश्रुतयोर्महान् भेदः ॥ १ ॥

यच्च यदुत्कर्षાપકર્ષવશાદુત્કર્ષાપકર્ષમાક, તત્ તસ્ય કારણમ્ । યથા ઘટસ્ય મૃત્પિણ્ડઃ । એવં મત્યુત્કર્ષાપકર્ષવશાચ્ચ શ્રુતસ્યોત્કર્ષાપકર્ષૌ, તસ્માન્મતિજ્ઞાનં શ્રુતજ્ઞાનસ્ય કારણમ્ । કિંચ-મત્યા શ્રુતં પાલ્યતેઽવસ્થિતિં પ્રાપ્યતે, ઇતિ શ્રુતસ્ય કારણં મતિઃ, યથા ઘટસ્ય મૃત્તિકા । તથાહિ-શ્રુતેષ્વપિ વહુષુ શાસ્ત્રેષુ યદ્વિપયકં સ્મરણમ્ ઝહાપોહાદિના અધિકતરં ભવતિ, તત્ શાસ્ત્રં સ્ફુટતરં પ્રતિભાતિ, ન ત્વન્યત્ । એતચ્ચ સ્વાનુભવસિદ્ધં સર્વેષાં પ્રાણિનામ્ । તતો યથા ઘટો મૃત્તિકાયા અભાવે ન ભવતિ, મૃત્તિકાયાં તિષ્ઠન્ત્યાભવતિષ્ઠતે ઇતિ મૃત્તિકા ઘટસ્ય કારણમ્, એવં શ્રુતસ્યાપિ મતિઃ કારણમ્ ।

શબ્દ નિષ્પન્ન હુઆ હૈ । મતિજ્ઞાન હૈ કારણ જિસકા એસા શ્રુતજ્ઞાન હોતા હૈ, હિસ પ્રકાર “મતિપૂર્વ શ્રુતમ્” હિસ પદકા અર્થ હોતા હૈ । શ્રુતજ્ઞાન મતિજ્ઞાન કે દ્વારા પૂરા કિયા જાતા હૈ, અર્થાત્ પ્રાપ્ત કિયા જાતા હૈ, અથવા પાલા જાતા હૈ । તાત્પર્ય યહ હૈ કિ મતિજ્ઞાન કે અભાવમેં શ્રુતજ્ઞાન નષ્ટ હો જાતા હૈ । મતિજ્ઞાન કે અભાવમેં શ્રુતજ્ઞાન કી ઉત્પત્તિ નહીં હોતી હૈ । જિસ પ્રકાર યહ નિયમ હૈ ઊસ પ્રકાર યહ નિયમ નહીં હૈ કિ શ્રુતજ્ઞાનપૂર્વક મતિજ્ઞાન હોતા હૈ, હિસલિયે મતિજ્ઞાન ઓર શ્રુતજ્ઞાન મેં બડા ભારી અન્તર હૈ ॥ ૧ ॥

શ્રુતજ્ઞાન કો જો મતિજ્ઞાનકારણવાલા માના ગયા હૈ ઊસકા કારણ યહ હૈ કિ મતિજ્ઞાન કી ઉત્કર્ષતા સે શ્રુતજ્ઞાનમેં ઉત્કર્ષતા એવં અપકર્ષતા આતી હૈ । જૈસે કારણભૂત મૃત્પિણ્ડ કી ઉત્કર્ષતા એવં અપકર્ષતા સે કાર્યરૂપ ઘટમેં ઉત્કર્ષતા એવં અપકર્ષતા આતી હૈ । હિસ કારણ કી અપેક્ષા સે

ઔણાદિક વક્ પ્રત્યય આવતા પૂર્વ શબ્દ બન્યો છે. જેનું કારણ મતિજ્ઞાન છે, એવું શ્રુતજ્ઞાન, મતિજ્ઞાન દ્વારા પૂરું કરાય છે એટલે કે પ્રાપ્ત કરાય છે, અથવા પાલન કરાય છે. તેનું તાત્પર્ય એ છે કે મતિજ્ઞાનના અભાવે શ્રુતજ્ઞાન નાશ પામે છે. મતિજ્ઞાનના અભાવે શ્રુતજ્ઞાનની ઉત્પત્તિ થતી નથી. જે રીતે આ નિયમ છે તે રીતે એવો નિયમ નથી કે શ્રુતજ્ઞાનપૂર્વક મતિજ્ઞાન હોય છે. તેથી મતિજ્ઞાન અને શ્રુતજ્ઞાન વચ્ચે ઘણો મોટો તફાવત છે. ॥૧॥

શ્રુતજ્ઞાનને જે મતિજ્ઞાનકારણવાળું માનેલું છે તેનું કારણ એ છે કે મતિજ્ઞાનની ઉત્કર્ષતા અને અપકર્ષતાથી શ્રુતજ્ઞાનમાં ઉત્કર્ષતા અને અપકર્ષતા આવે છે. જેવી રીતે કારણભૂત માટીના પિંડની ઉત્કર્ષતા અને અપકર્ષતાથી કાર્યશ્ય ઘડામાં ઉત્કર્ષતા અને અપકર્ષતા આવે છે તેવી રીતે મતિજ્ઞાનની



નનુ મતિશ્રુતયોર્યુગપદેવ સમ્યક્ત્વપ્રાપ્તૌ સમુત્પત્તિઃ, તદ્જ્ઞાનયોર્વિગમોઽપિ યુગપદેવ ભવતિ, કથં તર્હિ મતિપૂર્વં શ્રુત ? મિતિ કિઞ્ચ-શ્રુતજ્ઞાનસ્ય મતિપૂર્વકત્વ-સ્વીકારે મતિજ્ઞાને સમુત્પન્ને તત્સમકાલં શ્રુતજ્ઞાનેઽનભ્યુપગમ્યમાને શ્રુતાજ્ઞાનં જીવસ્ય પ્રસજ્યતે, શ્રુતજ્ઞાનાનુત્પાદેઽધ્યાપિ તદનિવૃત્તેઃ । ન ચૈતદિષ્ટમિતિ ।

શ્રુતજ્ઞાનમેં મતિપૂર્વકતા બતલાઈ છે. “મત્યા પાલ્યતે” ઇસ અપેક્ષા શ્રુતમેં મતિપૂર્વકતા ઇસ પ્રકાર છે-જિસ પ્રકાર ઘટ મૃત્તિકા કે અભાવમેં નહીં હોતા હૈ, કિન્તુ મૃત્તિકા કે સદ્ભાવમેં હી હોતા હૈ, અતઃમૃત્તિકા ઘટ કા કારણ હૈ । ડસી તરહ શ્રુતજ્ઞાન મી મતિ કે હોને પર હી હોતા હૈ, ડસકે અભાવમેં નહીં । યહ બાત પ્રત્યેક પ્રાણીકો સ્વાનુભવ સે સિદ્ધ હૈ કિ-અનેક શાસ્ત્રોં કે સુનને પર મી જિસ શાસ્ત્ર કે વિષય કા સ્મરણ રહતા હૈ, અથવા જિસકા અધિકતર ઝહાપોહ આદિ હોતા રહતા હૈ વહી શાસ્ત્ર સ્ફુટતર પ્રતિભાસિત હોતા હૈ, અન્ય શાસ્ત્ર નહીં । ઇસસે યહ બાત સિદ્ધ હો જાતી હૈ કિ શાસ્ત્ર કા-તદ્ગતવિષય કા-સ્ફુટતર પ્રતિભાસરૂપ શ્રુતજ્ઞાન સ્મરણાદિરૂપ મતિજ્ઞાન કે આધીન હૈ, જૈસે ઘટ કી સ્થિતિ મૃત્તિકા કે આધીન હૈ, ઇસસે શ્રુતમેં મતિપૂર્વકતા સ્પષ્ટ હૈ ।

પ્રશ્ન-જવ જીવ કો સમ્યક્ત્વકી પ્રાપ્તિ હોતી હૈ તવ મતિજ્ઞાન ઔર શ્રુતજ્ઞાન કી ઉત્પત્તિ ઇકસાથ હોતી હૈ, ક્યોં કિ સમ્યક્ત્વોત્પત્તિ સે

ઉત્કર્ષતા અને અપકર્ષતાથી શ્રુતજ્ઞાનમાં ઉત્કર્ષતા અને અપકર્ષતા આવે છે. આ કારણુની અપેક્ષાએ શ્રુતજ્ઞાનમાં મતિપૂર્વકતા દર્શાવી છે. “મત્યા પાલ્યતે” એ અપેક્ષાએ શ્રુતમાં મતિપૂર્વકતા આ પ્રકારે છે-જેમ માટીને અભાવે ઘડો હોઈ શકતો નથી, પણ માટીના સહભાવમાં જ થાય છે, તેથી માટી ઘડાનું કારણ છે. એજ પ્રમાણે શ્રુતજ્ઞાન પણ મતિજ્ઞાનના સહભાવમાં જ થાય છે, તેના અભાવમાં નહીં. એ વાત પ્રત્યેક પ્રાણીને સ્વાનુભવથી સિદ્ધ છે કે અનેક શાસ્ત્રોને સાંભળવા છતાં જે શાસ્ત્રના વિષયનું સ્મરણ રહે છે, અથવા જેનો વધારે ઉઠાપોહ આદિ થતો રહે છે, એજ શાસ્ત્ર અધિક સ્પષ્ટતાથી પ્રતિભાસિત થાય છે, અન્ય શાસ્ત્ર નહીં, તેથી એ વાત સિદ્ધ થાય છે કે શાસ્ત્રના-તેમાં રહેલ વિષયના સ્પષ્ટપ્રતિભાસરૂપ શ્રુતજ્ઞાન સ્મરણાદિરૂપ મતિજ્ઞાનને આધીન છે, જેમ ઘડાની સ્થિતિ માટીને આધીન છે તે પ્રમાણે શ્રુતજ્ઞાનની સ્થિતિ મતિને આધીન છે. આ કારણે શ્રુતમાં મતિપૂર્વતા સ્પષ્ટ છે.

પ્રશ્ન-જ્યારે જીવને સમ્યક્ત્વની પ્રાપ્તિ થાય છે ત્યારે મતિજ્ઞાન અને શ્રુતજ્ઞાનની ઉત્પત્તિ એક સાથે થાય છે, કારણ કે સમ્યક્ત્વની ઉત્પત્તિના પહેલાં



અત્રોચ્યતે—લબ્ધિ પ્રતિ મતિશ્રુતે યુગપદ્ ભવતઃ, ન તુ તયોરુપયોગો યુગપદ્ ભવતીતિ મતિપૂર્વ શ્રુતમ્ । અયં ભાવઃ—શ્રુતોપયોગો મત્યા જન્યતે, યદિ મત્યા ન ચિન્ત્યતે તદા શ્રુતોપયોગો ન જાયતે ।

પહિલે જો જીવ કે મતિઅજ્ઞાન એવં શ્રુતઅજ્ઞાન થેવે उसकी उत्पत्ति होने से एक ही साथ नष्ट हो जाते हैं। जब ऐसी स्थितिमें श्रुतमें मतिपूर्वकता कैसे आसकती है? दूसरी बात एक यह भी है कि जब श्रुतज्ञान को मतिपूर्वक माना जाय तो मतिज्ञान के उत्पन्न होने पर उसके समकाल में श्रुतज्ञान उत्पन्न नहीं हुआ तो उस अवस्था में जीव को श्रुतअज्ञान का प्रसङ्ग आवेगा, क्योंकि जबतक श्रुतज्ञान उत्पन्न नहीं हुआ है तबतक श्रुत अज्ञान का विगम भी नहीं हुआ है तो उस हालत में जीवको ज्ञान और अज्ञान की एक साथ उपस्थिति रहेगी, और ऐसा होना इष्ट नहीं है, क्योंकि अन्धकार और प्रकाश की तरह ज्ञान और अज्ञान एक साथ नहीं रह सकते ? ।

उत्तर—लब्धि की अपेक्षा मति और श्रुत ये दोनों एक साथ होते हैं, उपयोग की अपेक्षा नहीं, उपयोग की अपेक्षा तो ये दोनों भिन्नर समय में होते हैं, इसलिये श्रुतज्ञान मतिपूर्वक माना जाता है । तात्पर्य यह है कि यदि मतिज्ञान के द्वारा विचार न किया जावे तो श्रुतोपयोग उत्पन्न नहीं हो सकता है, अतः श्रुतोपयोग का जनक मतिज्ञान है ।

જીવમાં જે મતિઅજ્ઞાન અને શ્રુતઅજ્ઞાન હતાં તે તેની ઉત્પત્તિ થવાથી એક સાથે નાશ પામે છે. તો એવી સ્થિતિમાં શ્રુતમાં મતિપૂર્વકતા કેવી રીતે આવી શકે છે? બીજી એક વાત એ પણ છે કે જે શ્રુતજ્ઞાનને મતિપૂર્વક માનવામાં આવે તો જ્યારે મતિજ્ઞાન ઉત્પન્ન થતાં તેના સમકાળે શ્રુતજ્ઞાન ઉત્પન્ન ન થાય તો તે અવસ્થામાં જીવને શ્રુતજ્ઞાનનો પ્રસંગ આવશે, કારણ કે જ્યાં સુધી શ્રુતજ્ઞાન ઉત્પન્ન થયું નથી ત્યાં સુધી શ્રુતઅજ્ઞાનનો વિગમ પણ થયો નથી, તો એ સ્થિતિમાં જીવને જ્ઞાન અને અજ્ઞાનની એક સાથે હાજરી રહેશે, પણ એમ થવું તે ઈષ્ટ નથી, કારણ કે અંધકાર અને પ્રકાશની જેમ જ્ઞાન અને અજ્ઞાન એક સાથે રહી શકતા નથી ?

ઉત્તર—લબ્ધિની અપેક્ષાએ મતિ અને શ્રુત એ બન્ને એક સાથે થાય છે, ઉપયોગની અપેક્ષાએ નહીં. ઉપયોગની અપેક્ષાએ તો તે બન્ને ભિન્ન ભિન્ન સમયે થાય છે; તેથી શ્રુતજ્ઞાન મતિપૂર્વક મનાય છે. તાત્પર્ય એ છે કે—જે મતિજ્ઞાન દ્વારા વિચાર ન કરાય તો શ્રુતોપયોગ ઉત્પન્ન થઈ શકતો નથી, તેથી શ્રુતોપયોગનું જનક મતિજ્ઞાન છે.

નન્વેવં મતિરપિ શ્રુતપૂર્વા ભવત્યેવ । તથાહિ-શબ્દં શ્રુત્વા યા મતિરુત્પદ્યતે, સા શ્રુતપૂર્વેતિ પ્રસિદ્ધમ્ । અતો નાસ્તિ વિશેષઃ, યથા મતિપૂર્વં શ્રુતં, તથા મતિરપિ શ્રુતપૂર્વે ?-તિ ચેત્,

અત્રોચ્યતે—મતિઃ સ્વલ્પ શબ્દાત્મકેન દ્રવ્યશ્રુતેન જન્યતે, इह तु-‘ ન મતિઃ શ્રુતપૂર્વા ’ इत्यस्यायमर्थः—उपयोगरूपाद् भावश्रुतात् मतिर्न भवतीति । यद्वा-मति-र्भावश्रुतकार्यतया निषिध्यते, न तु क्रमेण, क्रमेण तु श्रुतोपयोगाच्च्युतस्य मत्पव-स्थानमिष्यते एवेति ।

શંકા—इस तरह तो मतिज्ञान भी श्रुतपूर्वक होता है, शब्द को सुन कर जो मतिज्ञान उत्पन्न होता है वह श्रुतपूर्वक मतिज्ञान है, यह बात प्रसिद्ध है, इसलिये जैसे मतिपूर्वक श्रुत होता है वैसे ही श्रुतज्ञानपूर्वक मतिज्ञान भी होता है फिर कार्य कारण आदि की अपेक्षा जो इनमें भेद का प्रदर्शन कर रहे हैं वह नहीं बनता है ।

उत्तर—यहां मतिज्ञान से श्रुतज्ञान की उत्पत्ति होती है” ऐसा जो कहा जाता है वह भावश्रुत की अपेक्षा लेकर कहा जाता है । भाव-श्रुतज्ञान उपयोगरूप माना गया है । वह उपयोगरूप भावश्रुतज्ञान मतिज्ञानपूर्वक ही होता है, अब रही बात श्रुत से मति के उत्पन्न होने की, सो शब्दात्मक द्रव्यश्रुत से वह उत्पन्न होती ही है, परन्तु जहां ऐसा कहा जाता है कि “ न मतिः श्रुतपूर्वा ” उसका तात्पर्य यह है कि उपयोगरूप भावश्रुत से मतिज्ञान उत्पन्न नहीं होता है । अथवा “ भाव-श्रुत का कार्य मति है ” यह बात निषिद्ध की गई है । इन दोनों के क्रम

શંકા—આ રીતે તો મતિજ્ઞાન પણ શ્રુતપૂર્વક હોય છે, શબ્દને સાંભળીને જે મતિજ્ઞાન ઉત્પન્ન થાય છે તે શ્રુતપૂર્વક મતિજ્ઞાન છે, એ વાત પ્રસિદ્ધ છે. તેથી જેમ મતિપૂર્વક શ્રુત થાય છે એજ રીતે શ્રુતપૂર્વક મતિજ્ઞાન પણ થાય છે, તો પછી કાર્યકારણ આદિની અપેક્ષાએ તેમનામાં ભેદનું પ્રદર્શન કરે છે તે સંભવે નહીં

ઉત્તર—અહીં “ મતિજ્ઞાનથી શ્રુતજ્ઞાનની ઉત્પત્તિ થાય છે ” એમ જે કહેવાય છે તે ભાવશ્રુતની અપેક્ષાએ કહેવાય છે. ભાવશ્રુતજ્ઞાન ઉપયોગરૂપ મનાયું છે. તે ઉપયોગરૂપ ભાવશ્રુતજ્ઞાન મતિજ્ઞાનપૂર્વક જ હોય છે. હવે શ્રુતથી મતિ ઉત્પન્ન થવાની વાત બાકી રહી, તો શબ્દાત્મક દ્રવ્યશ્રુતથી તે ઉત્પન્ન થાય છે જ. પણ જ્યાં એમ કહેવામાં આવે છે કે “ મતિઃ શ્રુતપૂર્વા ” તેનું તાત્પર્ય એ છે કે ઉપયોગરૂપ ભાવશ્રુતથી મતિજ્ઞાન ઉત્પન્ન થતું નથી. અથવા “ ભાવશ્રુતનું કાર્ય મતિ છે ” એ વાત નિષિદ્ધ કરાયેલ છે. એ બંનેના ક્રમનો નિષેધ કરાયો

ઇતથાપિ મતિશ્રુતયોર્ભેદઃ, ભેદભેદાત્ । તથાહિ-અવગ્રહાદિભેદાદષ્ટાવિંશતિવિધં મતિજ્ઞાનમ્, અઙ્ગપ્રવિષ્ટાઘનેકભેદભિન્નં ચ શ્રુતજ્ઞાનમ્ । ૨ ।

ઇન્દ્રિયોપલબ્ધિવિભાગાદપિ મતિશ્રુતયોર્ભેદઃ । તથા ચોક્તમ્—

“ સોઈન્દિયોવલદ્વી, હોઈ સુયં સેસયં તુ મહનાણં ।

મોત્તૂણં દવ્વસુયં, અક્કરલંભો ય સેસેસુ ” ॥ ૧ ॥

છાયા—શ્રોત્રેન્દ્રિયોપલબ્ધિઃ, ભવતિ શ્રુતં શેષકં તુ મતિજ્ઞાનમ્ ।

મુક્ત્વા દ્રવ્યશ્રુતમ્, અક્ષરલાભશ્ચ શેષેષુ ॥ ૧ ॥

વ્યાખ્યા—શ્રોત્રેન્દ્રિયેણોપલબ્ધિરેવ શ્રોત્રેન્દ્રિયોપલબ્ધિઃ શ્રુતં ભવતિ, સર્વં વાક્યં સાવધારણમિતિ ન્યાયાશ્રયણાત્ । ઇહ શ્રોત્રેન્દ્રિયોપલબ્ધિરપિ યા શ્રુતાઽનુસારિણી સૈવ શ્રુતમુચ્યતે, યા તુ અવગ્રહેહાવાયરૂપા સા મતિઃ । યદિ શ્રોત્રેન્દ્રિયેણોપલબ્ધિઃ શ્રુતમેવેત્યુચ્યતે, તર્હિ મતેરપિ શ્રુતત્વમાપદ્યતે, તત્ત્વાનિષ્ટમ્, અતઃ શ્રોત્રેન્દ્રિયેણોપલબ્ધિરેવ શ્રુતમિત્યવગન્તવ્યમ્ ।

કા નિષેધ નહીં કિયા ગયા હૈ, ક્યોં કિ શ્રુતોપયોગ સે ચ્યુત હુએ જીવ કા ક્રમ સે મતિ મેં અવસ્થાન માના હી જાતા હૈ ।

ભેદોં કી ભિન્નતા કી અપેક્ષા કો લેકર ભી મતિજ્ઞાન ઔર શ્રુતજ્ઞાન મેં ભિન્નતા આતી હૈ, ક્યોં કિ અવગ્રહ, ઈહા, અવાય ઔર ધારણા આદિકે ભેદ સે મતિજ્ઞાન અઠાઈસ પ્રકાર કા હૈ, તથા અંગપ્રવિષ્ટ ઔર અંગવાચ્ય આદિકે ભેદ સે શ્રુતજ્ઞાન અનેક પ્રકાર કા માના ગયા હૈ ॥ ૨ ॥

ઇન્દ્રિયોં કે દ્વારા જો ઉપલબ્ધિ હોતી હૈ સો ઉસ ઉપલબ્ધિ કે વિભાગ સે ભી મતિ ઔર શ્રુત મેં ભેદ હૈ । કહા ભી હૈ—

“ સોઈન્દિયોવલદ્વી, હોઈ સુયં સેસયં તુ મહનાણં ।

મોત્તૂણં દવ્વસુયં, અક્કરલંભો ય સેસેસુ ” ॥ ૧ ॥

નથી, કારણ કે શ્રુતોપયોગથી ચ્યુત થયેલ જીવના ક્રમથી મતિમાં અવસ્થાન બનાય છે જ.

ભેદોની ભિન્નતાની અપેક્ષાએ ગણુતાં પણ મતિજ્ઞાન અને શ્રુતજ્ઞાનમાં ભિન્નતા આવે છે કારણ કે અવગ્રહ ઈહા, અવાય અને ધારણા આદિના ભેદથી મતિજ્ઞાન અઠાવીસ પ્રકારનું, તથા અંગપ્રવિષ્ટ અને અંગવાચ્ય આદિના ભેદથી શ્રુતજ્ઞાન અનેક પ્રકારનું બનાય છે. ॥ ૨ ॥

ઇન્દ્રિયો દ્વારા જે ઉપલબ્ધિ થાય છે તે ઉપલબ્ધિના વિભાગથી પણ મતિ અને શ્રુતના ભેદ છે. કહ્યું પણ છે—

“ સોઈન્દિયોવલદ્વી, હોઈ સુયં સેસયં તુ મહનાણં ।

મોત્તૂણં દવ્વસુયં, અક્કરલંભો ય સેસેસુ ” ॥ ૧ ॥

તથા—શેષં યત્ ચક્ષુરાદીન્દ્રિયોપલબ્ધિરૂપં જ્ઞાનં તન્મતિજ્ઞાનં ભવતીત્યન્વયઃ ।  
તુ—શબ્દોઽનુક્તસમુચ્ચયાર્થઃ । તતશ્ચ—શ્રોત્રેન્દ્રિયોપલબ્ધિરપિ કાચિદ્ અવગ્રહેહાવાય-  
રૂપા મતિજ્ઞાનમ્, ઇતોઽન્યત્ સ્વલુ ચક્ષુરાદીન્દ્રિયોપલબ્ધિરૂપં મતિજ્ઞાનમસ્ત્યેવેતિ ભાવઃ ।

इस गाथा का तात्पर्य इस प्रकार है—जितने भी वाक्य होते हैं वे सब अवधारण सहित होते हैं, इस न्याय के अनुसार यहां जो उपलब्धि श्रोत्रेन्द्रियोपलब्धि, अवग्रह, ईहा और अवायरूप हो वह श्रुत नहीं है, वह तो मतिज्ञानरूप ही है, कारण कि अवग्रहादिरूप श्रोत्रेन्द्रियोपलब्धि श्रुतानुसारणी नहीं होती है । यदि ऐसा कहा जावे कि “श्रोत्रेन्द्रियोपलब्धिः श्रुतमेव” श्रोत्रेन्द्रियोपलब्धि श्रुत ही है तो इस प्रकार के कथन से मतिज्ञान में भी श्रुतज्ञानपने का प्रसंग प्राप्त हो सकता है, अतः ऐसा न कहकर जो ऐसा कहा है कि “श्रोत्रेन्द्रियोपलब्धिरेव श्रुतम्” श्रोत्र इन्द्रिय से उत्पन्न हुआ ज्ञान ही श्रुत है, यही निर्दोष है । इस कथन से यह बात भी सिद्ध हो जाती है कि जब श्रोत्रेन्द्रियोपलब्धि श्रुतानुसारिणी नहीं होती है तब तो वह मतिज्ञानरूप होती है, और जब वह श्रुतानुसारिणी होती है तब वह श्रुतज्ञानरूप होती है ।

( शेषकं तु मतिज्ञानम् ) जो उपलब्धि चक्षु आदि इन्द्रियों से उत्पन्न होती है वह उपलब्धिरूपज्ञान मतिज्ञान है, श्रुतज्ञान नहीं है । गाथा में

આ ગાથાનો ભાવાર્થ આ પ્રમાણે છે—જેટલા વાક્યો હોય છે તે બધા અવધારણસહિત હોય છે. આ ન્યાયાનુસાર અહીં જે ઉપલબ્ધિ શ્રોત્રેન્દ્રિયથી ઉત્પન્ન થઈ છે. એજ ઉપલબ્ધિ શ્રુતજ્ઞાન માનવામાં આવેલ છે. શ્રોત્રેન્દ્રિયોપલબ્ધિ પણ અહીં એજ શ્રુતજ્ઞાનરૂપ સમજવી કે જે શ્રુતાનુસારિણી હોય. જે શ્રોત્રેન્દ્રિયોપલબ્ધિ અવગ્રહ, ઈહા, અને અવાયરૂપ હોય તે શ્રુત નથી, તે તો મતિજ્ઞાનરૂપ જ છે, કારણ કે અવગ્રહાદિરૂપ શ્રોત્રેન્દ્રિયોપલબ્ધિ શ્રુતાનુસારિણી હોતી નથી. જે એમ કહેવામાં આવે કે “શ્રોત્રેન્દ્રિયોપલબ્ધિઃ શ્રુતમેવ” શ્રોત્રેન્દ્રિયોપલબ્ધિ શ્રુત જ છે તો આ પ્રકારના કથનથી મતિજ્ઞાનમાં પણ શ્રુતજ્ઞાનપણાનો પ્રસંગ પ્રાપ્ત થઈ શકે છે. તેથી એમ ન કહેતાં એમ જે કહેલ છે કે “શ્રોત્રેન્દ્રિયોપલબ્ધિરેવ શ્રુતમ્” શ્રોત્ર ઇન્દ્રિયથી ઉત્પન્ન થયેલ જ્ઞાનજ શ્રુત છે, એજ નિર્દોષ છે. આ કથનથી એ વાત પણ સિદ્ધ થઈ જાય છે કે જ્યારે શ્રોત્રેન્દ્રિયોપલબ્ધિ શ્રુતાનુસારિણી હોતી નથી ત્યારે તો તે મતિજ્ઞાનરૂપ હોય છે, અને જ્યારે તે શ્રુતાનુસારિણી હોય છે ત્યારે તે શ્રુતજ્ઞાનરૂપ હોય છે.

( શેષકંતુ મતિજ્ઞાનમ્ ) જે ઉપલબ્ધિ ચક્ષુ આદિ ઇન્દ્રિયોથી ઉત્પન્ન થાય છે તે ઉપલબ્ધિરૂપ જ્ઞાન મતિજ્ઞાન છે, શ્રુતજ્ઞાન નથી. ગાથામાં આવેલ “તુ”

તદેવં ચક્ષુરાદીન્દ્રિયોપલબ્ધેઃ સામાન્યતો મતિજ્ઞાનરૂપત્વં પ્રાપ્તમિત્યતસ્તદપવા-  
દમાહ—‘મોત્તૂળં દબ્વસુયં’ ઇતિ । મુક્ત્વા દ્રવ્યશ્રુતમિતિ । અયં ભાવઃ—દ્રવ્યશ્રુતં  
મુક્ત્વા=વિહાય, યઃ શેષેષુ—ચક્ષુરાદીન્દ્રિયેષુ અક્ષરલાભઃ—શબ્દાર્થપર્યાલોચનાત્મકઃ  
સોઽવિ શ્રુતમ્, ન તુ કેવલોઽક્ષરલાભઃ, ઈહાદિરૂપાયાં મતાવપિ કેવલસ્યાક્ષર-  
લાભસ્ય સંભવાત્ ।

નનુ યદિ શેષેન્દ્રિયેષુ અક્ષરલાભઃ શ્રુતં, તર્હિં યદવધારણં પૂર્વમુક્તં—‘શ્રોત્રેન્દ્રિ-  
યોપલબ્ધિરેવ શ્રુત’—મિતિ તદ્વિરુદ્ધયતે, શેષેન્દ્રિયોપલબ્ધેરપિ સંપ્રતિ શ્રુતત્વેન  
પ્રતિપન્નત્વાદિતિચેત્, ઉચ્યતે—ઈહ શેષેન્દ્રિયાક્ષરલાભઃ સ એવ ગૃહ્યતે યઃ—સ્વલુ શબ્દા-  
ર્થપર્યાલોચનાનુસારી ચાક્ષરલાભઃ શ્રોત્રેન્દ્રિયોપલબ્ધિકલ્પ ઇતિ ન કશ્ચિદોપઃ ॥૩॥

આયા હુઆ ‘તુ’ શબ્દ યહ બતલાતા હૈ કિ શ્રોત્ર ઇન્દ્રિય સે જન્ય ભી  
કોઈર ઉપલબ્ધિ જો અવગ્રહ, ઈહા એવં અવાયરૂપ હોતી હૈ વહ મતિજ્ઞાન  
હૈ । ઇસ પ્રકાર ચક્ષુરાદિ ઇન્દ્રિયજન્ય ઉપલબ્ધિ મેં સામાન્યરૂપ સે મતિ-  
જ્ઞાનરૂપતા પ્રાપ્ત હોને પર સૂત્રકાર ઇસમેં ભી સંશોધન ઉપસ્થિત કરતે  
હુએ કહતે હૈં કિ—“મોત્તૂળં દબ્વસુયં”—“મુક્ત્વા દ્રવ્યશ્રુતમ્” દ્રવ્યશ્રુત  
કો છોડકર શેષ ઇન્દ્રિયો મેં જો અક્ષરલાભ હોતા હૈ—શબ્દ ઓર ઉસકે  
અર્થકો પર્યાલોચના હોતી હૈ—વહ ભી શ્રુતજ્ઞાન હૈ, મતિજ્ઞાન નહીં હૈ ।  
માત્ર અક્ષર કા લાભ શ્રુતજ્ઞાન નહીં હૈ કિન્તુ શબ્દ ઓર ઉસકે અર્થકી  
પર્યાલોચનાત્મકતારૂપ જો અક્ષરલાભ હૈ વહી શ્રુત હૈ, કારણ કેવલ  
અક્ષરલાભ તો ઈહાદિરૂપ મતિજ્ઞાન મેં ભી સંભવિત હોતા હૈ ।

શંકા—યદિ શેષ ઇન્દ્રિયોં મેં અક્ષરલાભ શ્રુત હૈ તો પૂર્વ મેં જો  
એસા અવધારણ કિયા હૈ કિ—“શ્રોત્રેન્દ્રિયોપલબ્ધિરેવ શ્રુતમ્” વહ ઠીક

શબ્દ એ બતાવે છે કે શ્રોત્ર ઇન્દ્રિયથી જન્ય પણ કોઈ કોઈ ઉપલબ્ધિ જે  
અવગ્રહ, ઈહા, અને અવાયરૂપ હોય છે તે મતિજ્ઞાન છે. આ પ્રમાણે ચક્ષુ  
વગેરે ઇન્દ્રિયજન્ય ઉપલબ્ધિમાં સામાન્યરૂપે મતિજ્ઞાનરૂપતા પ્રાપ્ત હોવાથી  
સૂત્રકાર તેમાં પણ સંશોધન રજુ કરતા કહે છે કે—“મોત્તૂળં દબ્વસુયં”—“મુક્ત્વા,  
દ્રવ્યશ્રુતમ્” દ્રવ્યશ્રુતને છોડીને બાકીની ઇન્દ્રિયોમાં જે અક્ષરલાભ થાય છે—શબ્દ  
અને તેના અર્થની પર્યાલોચના થાય છે. તે પણ શ્રુતજ્ઞાન છે મતિજ્ઞાન નથી.  
માત્ર અક્ષરનો લાભ શ્રુતજ્ઞાન નથી પણ શબ્દ અને તેના અર્થની પર્યાલોચનાત્મ-  
કતારૂપ જે અક્ષરલાભ છે એજ શ્રુત છે, કારણ કે કેવળ અક્ષરલાભ તો ઈહાદિરૂપ  
મતિજ્ઞાનમાં પણ સંભવિત હોય છે.

શંકા—જો બાકીની ઇન્દ્રિયોમાં અક્ષરલાભ શ્રુત છે તો પહેલા જે એવું  
અવધારણ કયું છે કે “શ્રોત્રેન્દ્રિયોપલબ્ધિરેવ શ્રુતમ્” તે યોગ્ય લાગતું નથી.

અયમપિ મતિશ્રુતયોર્ભેદઃ—મતિજ્ઞાનં વલ્કલસમં કારણત્વાત્ । શ્રુતજ્ઞાનં તુ સુંબસમં—( વલ્કલનિષ્પન્નરજ્જુસમં ) તત્કાર્યત્વાત્ । તતશ્ચ યથા—વલ્કલસુંબ-યોર્ભેદસ્તથા મતિશ્રુતયોરપિ ॥ ૪ ॥

પુનરપ્યનયોરયં ભેદઃ—મતિજ્ઞાનમ્—અનક્ષરં સાક્ષરં ચ । શ્રુતજ્ઞાનં તુ સાક્ષરમેવ-અક્ષરાનુગતમેવ । તથાહિ—અવગ્રહજ્ઞાનમનક્ષરં, તસ્ય સામાન્યમાત્રપ્રતિભાસકતયા નિ-વિકલ્પત્વાત્ । ઈશાદિજ્ઞાનં તુ સાક્ષરં, તસ્ય પરમર્શાદિરૂપતયાઽવશ્યં વર્ણનિરૂપિત-ત્વાત્ । શ્રુતજ્ઞાનં તુ સાક્ષરમેવ, અક્ષરમન્તરેણ શબ્દાર્થપર્યાલોચનસ્યાનુપપત્તેઃ ॥ ૫ ॥

નહીં બેઠતા હૈ, કારણ કિ—આપ તો શેષેન્દ્રિયોપલબ્ધિ કો भी શ્રુતરૂપ સે અવ પ્રતિપાદિત કર રહે હૈં ।

ઉત્તર—શેષેન્દ્રિયોપલબ્ધિ કો શ્રુતજ્ઞાનપને કા પ્રતિપાદન નહીં કિયા ગયા હૈ, કિન્તુ શબ્દાર્થપર્યાલોચનરૂપ અક્ષરલાભ હી શ્રુતજ્ઞાન કહા હૈ । યહ શબ્દાર્થપર્યાલોચનરૂપ અક્ષરલાભશ્રોત્રેન્દ્રિયોપલબ્ધિ જૈસા હી હોતા હૈ, અતઃ ઇસમેં કોઈ દોષ નહીં હૈ ॥ ૩ ॥

મતિજ્ઞાન ઓર શ્રુતજ્ઞાન મેં એક યહ भी ભેદ હૈ કિ મતિજ્ઞાન વલ્કલ કે સમાન હૈ ઓર શ્રુતજ્ઞાન સુંબ કે સમાન હૈ । જિસ પ્રકાર વલ્કલ સે સુંબ ( વલ્કલ કી બની દોરી ) કી ઉત્પત્તિ હોતી હૈ ઉસી પ્રકાર મતિજ્ઞાન સે શ્રુતજ્ઞાન કી ઉત્પત્તિ હોતી હૈ, અતઃ કાર્ય ઓર કારણ કી અપેક્ષા ઇનમેં ભેદ બન જાતા હૈ ॥ ૪ ॥

મતિજ્ઞાન ઓર શ્રુતજ્ઞાન મેં ભેદ હોને કા કારણ એક યહ भी હૈ કિ મતિજ્ઞાન અક્ષર ઓર અનક્ષર દોનોં રૂપ હોતા હૈ તવ કિ શ્રુતજ્ઞાન અક્ષરા-ત્મક હી હોતા હૈ । મતિજ્ઞાન કે ભેદ જો અવગ્રહ આદિ હૈં ઇનમેં અવગ્રહ-

કારણ કે આપ તો શેષેન્દ્રિયોપલબ્ધિ પછે શ્રુતરૂપે હવે પ્રતિપાદન કરી રહ્યા છો.

ઉત્તર—શેષેન્દ્રિયોપલબ્ધિ થી શ્રુતજ્ઞાનપણાનુ પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું નથી, પણ શબ્દાર્થપર્યાલોચનરૂપ અક્ષરલાભ શ્રોત્રેન્દ્રિયોપલબ્ધિ જેવો જ હોય છે, તેથી તેમાં કોઈ દોષ નથી ॥ ૩ ॥

મતિજ્ઞાન અને શ્રુતજ્ઞાનમાં એક આ પણ ભેદ છે કે મતિજ્ઞાન વલ્કલનાં જેવું છે અને શ્રુતજ્ઞાન સુંબનાં જેવું છે. જે પ્રમાણે વલ્કલમાંથી સુંબ ( વલ્કલની વણેલી દોરી )ની ઉત્પત્તિ થાય છે, એજ રીતે મતિજ્ઞાનથી શ્રુતજ્ઞાનની ઉત્પત્તિ થાય છે, તેથી કાર્ય અને કારણની અપેક્ષાએ તેમનામાં ભેદ પડી જાય છે ॥ ૪ ॥

મતિજ્ઞાન અને શ્રુતજ્ઞાનમાં ભેદ હોવાનું એક કારણ એ પણ છે કે મતિજ્ઞાન અક્ષર અને અનક્ષર બન્નેરૂપ હોય છે, ત્યારે શ્રુતજ્ઞાન અક્ષરાત્મક જ હોય છે, મતિજ્ઞાનના અવગ્રહ આદિ જે ભેદ છે તેમનામાં અવગ્રહજ્ઞાન તો



પુનરપ્યયં મતિશ્રુતયોર્ભેદઃ-મૂકવત્ સ્વપ્રત્યાયકં મતિજ્ઞાનં, અમૂકવત્ સ્વપરપ્રત્યાયકં શ્રુતજ્ઞાનમ્ ॥ ૬ ॥

જ્ઞાન તો અનક્ષરાત્મક છે, ક્યોંકિ હિસમેં જો વસ્તુ કા પ્રતિભાસ હોતા હૈ વહ સામાન્યરૂપ સે હી હોતા હૈ, હિસલિયે હિસ જ્ઞાન મેં કિસી ખી પ્રકાર કા વિકલ્પ ઉત્પન્ન નહીં હોતા હૈ । ઈહા આદિ જ્ઞાન અક્ષરાત્મક હૈ, ક્યોંકિ અવગ્રહ સે ગૃહીત પદાર્થકા હી હિસમેં પરામર્શ આદિ હોતા હૈ । “શ્રુતજ્ઞાન સાક્ષર હી હૈ” હિસકા તાત્પર્ય યહ હૈ કિ જબતક શબ્દ કા શ્રવણ નહીં હોતા હૈ તબતક હસ શબ્દ ઓર હસકે અર્થ કે વિષય મેં પર્યાલોચન નહીં હો સકતા હૈ । શબ્દ ઓર અર્થ કે પર્યાલોચનસ્વરૂપ હી તો શ્રુતજ્ઞાન માના ગયા હૈ, હિસલિયે ‘શ્રુતજ્ઞાન સાક્ષર હી હૈ’ ંસા જાનનાં ઁાહિયે ॥ ૫ ॥

સ્વપ્રત્યાયક ંવં સ્વ-પરપ્રત્યાયક કી અપેક્ષા ખી મતિ ંવં શ્રુત મેં ભેદ હૈ । મતિજ્ઞાન મૂક કી તરહ સ્વપ્રત્યાયક હી હૈ । જિસ પ્રકાર વચન કા અભાવ હોને સે મૂક પરપ્રત્યાયક નહીં હોતા હૈ હસી પ્રકાર મતિજ્ઞાન ખી દ્રવ્ય શ્રુતરૂપ વચનાત્મક નહીં હોને સે પરપ્રત્યાયક નહીં હોતા હૈ । અપને પ્રત્યય કે હેતુભૂત વચનોં કે સદ્ભાવ હોને સે શ્રુત મેં સ્વ ંર પર-પ્રત્યાયકતા બોલનેવાલે કી તરહ સિદ્ધ હી હોતી હૈ । હિસ તરહ સે ખી મતિ ંર શ્રુતજ્ઞાન મેં ભેદ હૈ ॥ ૬ ॥

અનક્ષરાત્મક છે, કારણ કે તેમાં જે વસ્તુનો પ્રતિભાસ થાય છે તે સામાન્યરૂપે થાય છે, તેથી તે જ્ઞાનમાં કોઈ પણ પ્રકારનો વિકલ્પ ઉત્પન્ન થતો નથી. ઈહા આદિ જ્ઞાન અક્ષરાત્મક છે, કારણ કે અવગ્રહથી ગ્રહણ થયેલા પદાર્થનો જ તેમાં પરામર્શ આદિ થાય છે, “શ્રુતજ્ઞાન સાક્ષર જ છે” તેનું તાત્પર્ય એ છે કે જ્યાં સુધી શબ્દ સંભળાતો નથી ત્યાં સુધી તે શબ્દ અને તેના અર્થના વિષયમાં પર્યાલોચન થઈ શકતી નથી. શબ્દ અને અર્થના પર્યાલોચનસ્વરૂપ શ્રુતજ્ઞાન મનાયું છે, તે કારણે “શ્રુતજ્ઞાન સાક્ષર જ છે” એમ સમજવું જોઈએ ॥ ૫ ॥

સ્વપ્રત્યાયક અને સ્વ-પર-પ્રત્યાયકની અપેક્ષાએ પણ મતિ અને શ્રુતમાં ભેદ છે. મતિજ્ઞાન મૂક (મૂંગા)ની જેમ સ્વપ્રત્યાયક જ છે. જે પ્રમાણે વચનનો અભાવ હોવાથી મૂક પરપ્રત્યાયક હોતો નથી એજ પ્રમાણે મતિજ્ઞાન પણ દ્રવ્યશ્રુતરૂપ વચનાત્મક નહીં હોવાથી પરપ્રત્યાયક હોતું નથી. યોતાના પ્રત્યયના હેતુભૂત વચનોનો સદ્ભાવ હોવાથી શ્રુતમાં સ્વ અને પર પ્રત્યાયકતા બોલનારની જેમ સિદ્ધ જ હોય છે. આ રીતે પણ મતિ અને શ્રુતમાં ભેદ છે ॥ ૬ ॥



किञ्च—आवरणभेदाद् मतिश्रुतयोर्भेदः ॥ ७ ॥ सू० २४ ॥

यथा मतिश्रुतयोः कार्यकारणभावात् परस्परं भेदः, तथा—सम्यग्दर्शन—मिथ्या-  
दर्शन—परिग्रहभेदात् स्वरूपतोऽपि तयोर्भेद इति प्रदर्शयितुमाह—

मूलम्—अविसेसिया मई मइनानं च, मइ अन्नाणं च ।  
विसेसिया सम्मदिट्टिस्स मई मइनानं, मिच्छादिट्टिस्स मई  
मइ-अन्नाणं । अविसेसियं सुयं सुयनाणं च सुय-अन्नाणं च ।  
विसेसियं सुयं सम्मदिट्टिस्स सुयं सुयनाणं, मिच्छादिट्टिस्स  
सुयं सुय अन्नाणं ॥ सू० २५ ॥

छाया—अविशेषिता मतिर्मतिज्ञानं च, मत्यज्ञानं च । विशेषिता सम्यग्दृष्टेर्भ-  
तिर्मतिज्ञानं, मिथ्यादृष्टेर्भतिर्मत्यज्ञानम् । अविशेषितं श्रुतं—श्रुतज्ञानं च, श्रुताज्ञानं च ।  
विशेषितं श्रुतं—सम्यग्दृष्टेः श्रुतं श्रुतज्ञानं, मिथ्यादृष्टेः श्रुतं—श्रुताऽज्ञानम् ॥ सू० २५ ॥

टीका—‘अविसेसिया’ इत्यादि । अविशेषिता=स्वामिविशेषपरिग्रहरहिता  
सामान्यरूपेण विवक्षितेत्यर्थः, मतिज्ञानम्, मत्यज्ञानं चेत्युभयमुच्यते । विशेषिता=  
स्वामिविशेषपरिग्रहीता स्वामिना विशेष्यमाणा, विशेषरूपेण विवक्षिता मतिः  
स्वामिविशेषापेक्षया मतिः सम्यग्दृष्टेर्भतिज्ञानमुच्यते, सम्यग्दृष्टिर्भतेर्यथावस्थितार्थ-

मतिज्ञान का कारण मतिज्ञानावरणीय कर्म का क्षयोपशम, तथा श्रुत-  
ज्ञान का कारण श्रुतज्ञानावरणीय कर्म का क्षयोपशम है । इस आवरण  
के भेद से भी इन दोनों में भिन्नता आती है ॥ ७ ॥ सू० २४ ॥

जिस प्रकार मतिज्ञान और श्रुतज्ञान में कार्यकारणभाव को लेकर  
भेद प्रदर्शित किया गया है उसी प्रकार सम्यग्दृष्टि और मिथ्यादृष्टि  
के परिग्रह (स्वीकृति) के भेद से इन दोनों में स्वरूपतः भी भेद है,  
इस बात को सूत्रकार दिखलाते हैं—“अविसेसिया मई” इत्यादि ।

मतिज्ञाननुं कारण मतिज्ञानावरणीय कर्मना क्षयोपशम, तथा श्रुतज्ञाननुं  
कारण श्रुतज्ञानावरणीय कर्मना क्षयोपशम छे. आ आवरणना तक्षवतने दीधे  
पणु अे अन्नेमां लिन्नता छे. ॥ ७ ॥ सू. २४ ॥

ये रीते मतिज्ञान अने श्रुतज्ञानमां कार्यकारणभावने दीधे लेद दशावाये  
छे, अेअ रीते सम्यग्दृष्टि अने मिथ्यादृष्टिना परिग्रह (स्वीकृति) ना लेदथी  
अे अन्नेमां स्वरूपतः पणु लेद छे, अे वातने सूत्रकार अतावे छे-

“अविसेसिया मई०” इत्यादि.

ग्राहकत्वात्, निश्चयनयदर्शनेन स्वकार्यप्रसाधकत्वाच्च । मिथ्यादृष्टेस्तु मतिर्मत्यज्ञान-  
मुच्यते, मिथ्यादृष्टिमतेरेकान्तावलम्बितया यथावस्थितार्थग्रहणाभावात् तत्त्वतो  
मतिफलरहितत्वाच्च ।

विशेष स्वामी के द्वारा ग्रहण करने की अपेक्षा से अविशेषित मति  
मतिज्ञान और मत्यज्ञान, इन दोनों रूप मानी जाती है । अर्थात् सम्य-  
ग्दृष्टि मिथ्यादृष्टि की विवक्षा न करके सामान्यरूप से विवक्षित मति  
दोनों प्रकार को बतलाती है, परन्तु जब मति में सम्यग्दृष्टि और मिथ्या-  
दृष्टि के द्वारा परिगृहीत होने की अपेक्षा विशेषता आती है तब वही  
मति यदि सम्यग्दृष्टि के द्वारा परिगृहीत है तो वह मतिज्ञान कही जाती  
है, और जब वह यदि मिथ्यादृष्टिरूप स्वामी-विशेष से परगृहीत हुई  
है तो वही मति मतिअज्ञानरूप मानी जाती है । सम्यग्दृष्टि की मति  
मतिज्ञान इसलिये मानी जाती है कि वह यथावस्थित अर्थ की ग्राहक  
होती है, तथा निश्चयनय को साध्य बनाकर उसीके अनुसार अपने  
कार्यों की साधिका होती है, इस दृष्टि द्वारा व्यवहारधर्म का लोप नहीं  
क्रिया जाता है, परन्तु लक्ष्य कोटि में निश्चयनय रहता है । मिथ्यादृष्टि  
की मति मतिअज्ञानरूप इसलिये मानी जाती है कि वह एकान्त का  
अवलम्बन करके वस्तु का प्रतिपादन करती है, इसलिये उससे यथा-  
वस्थित अर्थ के ग्रहण के अभाव में वह मति तत्त्वविचारणारूप फल से  
रहित होती है ।

विशेष स्वामी द्वारा ग्रहण करवानी अपेक्षासे अविशेषित मति मतिज्ञान  
अने मत्यज्ञान, એ બન્ને રૂપ માનવામાં આવી છે. એટલે કે સમ્યગ્દૃષ્ટિ મિથ્યા  
દૃષ્ટિની વિવક્ષા ન કરીને સામાન્યરૂપે વિવક્ષિત મતિ બન્ને પ્રકારને દર્શાવે છે,  
પણ બ્યારે મતિમાં સમ્યગ્દૃષ્ટિ અને મિથ્યાદૃષ્ટિ દ્વારા પરિગૃહીત થવાની અપે-  
ક્ષાએ વિશેષતા આવે છે ત્યારે એજ મતિ બે સમ્યગ્દૃષ્ટિ દ્વારા પરિગૃહીત હોય  
તો તે મતિજ્ઞાન કહેવાય છે, અને બે તે મિથ્યાદૃષ્ટિરૂપ સ્વામી વિશેષથી પરિગૃહીત  
હોય તો એજ મતિ મતિઅજ્ઞાનરૂપ મનાય છે. સમ્યગ્દૃષ્ટિની મતિ મતિજ્ઞાન તે કારણે  
મનાય છે કે તે યથાવસ્થિત અર્થને ગ્રહણ કરનારી હોય છે તથા નિશ્ચયનયને  
સાધ્ય બનાવીને તેના અનુસાર પોતાના કાર્યોની સાધિકા થાય છે. આ દૃષ્ટિ  
દ્વારા વ્યવહાર ધર્મનો લોપ કરાતો નથી પણ લક્ષ્ય કોટિમાં નિશ્ચયનય રહે છે  
મિથ્યાદૃષ્ટિની મતિ મતિઅજ્ઞાનરૂપ તે કારણે માનવામાં આવી છે કે તે એકાન્તનું  
અવલંબન કરીને વસ્તુનું પ્રતિપાદન કરે છે, તેથી તેના વડે યથાવસ્થિત અર્થ  
ગ્રહણ થતો નથી. યથાવસ્થિત અર્થ ગ્રહણના અભાવે તે મતિ તત્ત્વવિચારણારૂપ  
ફળથી રહિત હોય છે.

યદ્યવિશેષિતં-સામાન્યરૂપેણ વિવક્ષિતં તદા-શ્રુતમિત્યનેન-શ્રુતજ્ઞાનં શ્રુતાજ્ઞાનં  
ચેત્યુભયમુચ્યતે । યદિ તુ શ્રુતં વિશેષિતં-સ્વામિવિશેષરૂપેણ વિવક્ષિતં, તર્હિ સમ્ય-  
ગ્દષ્ટેઃ શ્રુતં-શ્રુતજ્ઞાનમુચ્યતે, મિથ્યાદૃષ્ટેસ્તુ શ્રુતં શ્રુતાજ્ઞાનમુચ્યતે ।

નનુ મિથ્યાદૃષ્ટેર્મતિશ્રુતે કથમજ્ઞાનરૂપે ઉચ્યેતે?, યતઃ-ક્ષયોપશમાદિરૂપે કારણે  
નાસ્તિ ભેદઃ, નાપિ ચ લૌકિકે ઘટાદિ જ્ઞાનરૂપે કાર્યે ભેદો ભવતિ । ક્ષયોપશમા-  
દેવ મિથ્યાદૃષ્ટેરપિ મતિશ્રુતે ભવતઃ, ઇતિ ચેત્,

इसी तरह श्रुत भी जब सामान्यरूप से विवक्षित होता है तब वह  
श्रुतज्ञान एवं श्रुतअज्ञान दोनों का बोधक होता है, परन्तु जब यह विशेष-  
णविशिष्ट होता है तब यदि इसमें सम्यग्दृष्टिरूप विशेषण रहता है  
तो यह श्रुतज्ञान कहलाता है और जब इसमें 'मिथ्यादृष्टि' ऐसा विशेषण  
रहता है तब यही श्रुतअज्ञान कहलाता है ।

શંકા—મિથ્યાદૃષ્ટિ કે મતિજ્ઞાન ઓર શ્રુતજ્ઞાન અજ્ઞાનરૂપ ક્યોં હોતે  
હૈં? ક્યોં કિ મિથ્યાદૃષ્ટિ કે ભી યે દોનોં અપને ૨ આવરણ કે ક્ષયોપશમ  
સે હી હોતે હૈં, અતઃ इनकी उत्पत्ति का जो अपने २ आवरण का क्षयोप-  
शम आदि कारण हैं उनमें मिथ्यादृष्टि और सम्यग्दृष्टि को लेकर भेद  
नहीं है । तथा सम्यग्दृष्टि जिस प्रकार मतिज्ञान और श्रुतज्ञान से घटपट  
आदि पदार्थों को जानता है उसी प्रकार मिथ्यादृष्टि भी उन्हें वैसा ही  
जानता है, अतः इन दोनों के जाननेरूप कार्य में भी कोई भेद नहीं है? ।

એજ પ્રમાણે શ્રુત પણ જ્યારે સામાન્યરૂપે વિવક્ષિત થાય છે ત્યારે તે  
શ્રુતજ્ઞાન અને શ્રુતઅજ્ઞાન એ બન્નેનું બોધક થાય છે, પણ જ્યારે તે વિશેષણ-  
વિશિષ્ટ હોય છે ત્યારે જો તેમાં સમ્યગ્દૃષ્ટિરૂપ વિશેષણ રહે છે તો તે શ્રુત-  
જ્ઞાન કહેવાય છે. અને જ્યારે 'મિથ્યાદૃષ્ટિ' એવું વિશેષણ રહે છે ત્યારે એજ  
શ્રુતઅજ્ઞાન કહેવાય છે.

શંકા—મિથ્યાદૃષ્ટિનું મતિજ્ઞાન અને શ્રુતજ્ઞાન અજ્ઞાનરૂપ કેમ હોય છે?  
કારણ કે મિથ્યાદૃષ્ટિને પણ તે બન્ને પોત-પોતાનાં આવરણનાં ક્ષયોપશમથી જ  
થાય છે, તેથી તેમની ઉત્પત્તિનું પોત-પોતાનાં આવરણનો ક્ષયોપશમ આદિ  
જે કારણ છે તેમનામાં મિથ્યાદૃષ્ટિ અને સમ્યગ્દૃષ્ટિને લીધે ભેદ નથી. તથા  
સમ્યગ્દૃષ્ટિ જે પ્રમાણે મતિજ્ઞાન અને શ્રુતજ્ઞાનથી ઘટ પટ આદિ પદાર્થોને  
જાણે છે. એજ રીતે મિથ્યાદૃષ્ટિ પણ તેમને એવાં જ જાણે છે, તેથી એ બન્નેના  
જાણવારૂપી કાર્યમાં પણ ભેદ નથી ?

તત્રોચ્યતે—મિથ્યાદૃષ્ટેઃ સદસદ્વિવેકપરિજ્ઞાનાભાવાત્ । તથાહિ—મિથ્યાદૃષ્ટિઃ  
 સ્વલુ સર્વમપ્યેકાન્તવાદપુરઃસરં પ્રતિપદ્યતે, ન તુ સર્વજ્ઞભગવદુક્તસ્યાદ્વાદમાશ્રિત્ય,  
 તતશ્ચ મિથ્યાદૃષ્ટિર્યદા ‘ ઘટ એવાય ’—મિતિ વદતિ તદા તસમિન્ ઘટે ઘટત્વપર્યાયવ્ય-  
 તિરેકેણ શેષાન્ સત્ત્વ-જ્ઞેયત્વ-પ્રમેયત્વાદીન્ સતોઽપિ ધર્માનપલપતિ, અન્યથા—  
 ‘ ઘટ એવાય ’—મિત્યેકાન્તેનાઽવધારણાનુપપત્તેઃ । ‘ ઘટઃ સન્નેવ ’ ઇતિ યદા વ્રૂતે,  
 તદા પરરૂપેણ નાસ્તિત્વસ્યાનંધ્યુપગમાદસદ્ભૂતં પરરૂપમપિ તત્રાસ્તીતિ પ્રતિપદ્યતે ।  
 તતશ્ચ સન્તમસન્તં મન્યતે, અસન્તં ચ સન્તં મન્યતે, ઇતિ સદસદ્વિશેષપરિજ્ઞાનાભાવા-  
 ન્મિથ્યાદૃષ્ટેર્મતિશ્રુતે અજ્ઞાનરૂપે ભવતઃ ॥ ૧ ॥

ઉત્તર—મિથ્યાદૃષ્ટિ કો સત્ ઓર અસત્ કા વિવેકજ્ઞાન નહીં હૈ ।  
 સમસ્ત વસ્તુઓં કો વહ એકાન્તધર્મવિશિષ્ટ હી જાનતા હૈ, કારણ કિ  
 એકાન્તવાદ કા હી વહ અવલમ્બન કરતા હૈ, ભગવત્કથિત સ્યાદ્વાદ કા  
 નહીં । જબ વહ “ઘટ એવાયમ્” યહ ઘટ હી હૈ, એસા કહતા હૈ તબ ઉસ  
 ઘટમેં વર્તમાન સત્ત્વ, જ્ઞેયત્વ, પ્રમેયત્વ આદિ ધર્મોંકા વહ અપલાપ કરતા  
 હૈ । યદિ એસા વહ નહીં કરતા હૈ તો ફિર “ઘટ ઘટ હી હૈ” ઇસ પ્રકાર  
 કા વહ અવધારણ ક્યોં કરતા હૈ । તથા “ઘટઃ સન્નેવ” ઘટ સત્-  
 સ્વરૂપ હી હૈ, એસા જબ વહ કહતા હૈ તો ઉસકે ઇસ કથન સે પરરૂપ કી  
 અપેક્ષા ભી ઘટમેં અસ્તિત્વ ધર્મ હૈ, ઇસ વાત કો ભી ઉસે કવૂલ કરના  
 પડેગા, ક્યોં કિ પરરૂપ કી અપેક્ષા ઉસમેં નાસ્તિ-શબ્દ કા પ્રયોગ નહીં  
 કિયા હૈ । ઇસ તરહ વહ મિથ્યાદૃષ્ટિ સત્ કો અસત્ ઓર અસત્ કો  
 સત્ માનતા હૈ, અતઃ સત્ ઓર અસત્ મેં ઇસકી દૃષ્ટિ મેં કોઈ ન હોને સે  
 ઉસ મિથ્યાદૃષ્ટિ કા મતિજ્ઞાન ઓર શ્રુતજ્ઞાન અજ્ઞાનરૂપ માના જાતા હૈ ।

ઉત્તર—મિથ્યાદૃષ્ટિને સત્ અને અસત્ નું વિવેકજ્ઞાન હોતુ નથી. સમસ્ત  
 વસ્તુઓને તે એકાન્તધર્મવિશિષ્ટ જ જાણે છે, કારણ કે એકાન્તવાદનું જ તે  
 અવલંબન કરે છે, ભગવાને ભાંખેલ સ્યાદ્વાદનું નહીં જ્યારે તે “ઘટ એવાયમ્”  
 “આ ઘડો જ છે” એવું કથન કરે છે ત્યારે તે ઘટમાં રહેલ સત્ત્વ, જ્ઞેયત્વ,  
 પ્રમેયત્વ આદિ ધર્મોના તે અપલાપ કરે છે. જો તે એવું કરતો ન હોય તો પછી  
 “આ ઘડો જ છે” આ પ્રકારનું અવધારણ તે શા માટે કરે છે ? તથા “ઘટઃ  
 સન્નેવ” “ઘડો સત્સ્વરૂપ જ છે” એવું જ્યારે તે કહે છે ત્યારે તેના આ  
 કથનથી પરરૂપની અપેક્ષાએ પણ ઘડામાં અસ્તિત્વ ધર્મ છે એ વાત પણ તેને  
 કબૂલ કરવી પડશે, કારણ કે પરરૂપની અપેક્ષાએ તેમાં નાસ્તિ શબ્દનો પ્રયોગ  
 કર્યો નથી. આ રીતે તે મિથ્યાદૃષ્ટિ સત્ ને અસત્ અને અસત્ ને સત્ માને  
 છે, તેથી તેની દૃષ્ટિએ સત્ અને અસત્માં કોઈ ભેદ ન હોવાથી તે મિથ્યાદૃષ્ટિનું  
 મતિજ્ઞાન અને શ્રુતજ્ઞાન અજ્ઞાનરૂપ માનવામાં આવ્યું છે.

કિંચ—ઇતથ મિથ્યાદૃષ્ટેર્મતિશ્રુતે અજ્ઞાને, ભવહેતુત્વાત્, મિથ્યાદર્શનવત્ ।  
તથાહિ—મિથ્યાદૃષ્ટીનાં મતિશ્રુતે પશુવધમૈથુનાદીનાં ધર્મસાધકત્વેન પરિચ્છેદકે,  
તતો દીર્ઘતરસંસારપથપ્રવર્તકત્વાદજ્ઞાનરૂપત્વમ્ ॥ ૨ ॥

તથા—ઇતથાપિ મિથ્યાદૃષ્ટેર્મતિશ્રુતે અજ્ઞાનરૂપે ભવતઃ ?, યદૃચ્છોપલબ્ધેઃ,  
ઉન્મત્તકવિકલ્પવત્ । યથા હિ ઉન્મત્તકવિકલ્પમિથ્યાદૃષ્ટિયો વસ્તુ અનપેક્ષ્યૈવ યથા  
કથંચિત્ પ્રવર્તન્તે । યદ્યપિ ચ તે ક્વચિદ્ યથાવસ્થિતવસ્તુસંવાદિનસ્તથાપિ સમ્યગ્  
યથાવસ્થિતવસ્તુતત્ત્વપર્યાલોચનવિરહેણ પ્રવર્તમાનત્વાત્, પરમાર્થતોઽપરમાર્થિકાઃ । ૩ ।

કિં ચ—મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ કે મતિજ્ઞાન ઓર શ્રુતજ્ઞાન ઇસલિયે મી  
અજ્ઞાનસ્વરૂપ હોતે હૈં કિ યે દોનોં મિથ્યાદર્શન કી તરહ ભવભ્રમણ કે  
હેતુ હોતે હૈં । ભવ કે હેતુભૂત યે ઇસલિયે માને જાતે હૈં કિ પશુવધ,  
મૈથુન આદિ જૈસે કુકર્મોં કો “યે ધર્મ કે સાધનભૂત હૈં” એસા માને  
હૈં, ઇસલિયે દીર્ઘતરસંસારમાર્ગ કે પ્રવર્તક હોને કે કારણ યે દોનોં  
મિથ્યાદૃષ્ટિ કે અજ્ઞાનસ્વરૂપ હૈં ।

જિસ પ્રકાર ઉન્મત્ત કા જ્ઞાન સ્વેચ્છાનુસાર પદાર્થોં કા ગ્રાહક હોતા  
હૈં ઓર ઇસી લિયે વહ અજ્ઞાનરૂપ માના જાતા હૈં, ડસી પ્રકાર મિથ્યાદૃષ્ટિ  
કા જ્ઞાન મી અજ્ઞાનરૂપ હી માના ગયા હૈં, યદ્યપિ ઉન્મત્તજન જો વસ્તુ  
જૈસી હૈં ડસે વૈસી જાનતા હૈં, સોને કો સોના ઓર લોહે કો લોહા  
જાનકર યથાર્થજ્ઞાન લાભ કર લેતા હૈં, પર ઉન્માદ કે કારણ વહ સત્ય  
અસત્ય કા અન્તર જાનને મેં અસમર્થ હોતા હૈં, ઇસસે ડસકા સત્ત્વા  
झूठा सभी ज्ञान परमार्थतः विचारशून्य या अज्ञान ही कहलाता है,

તથા—મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવનું મતિજ્ઞાન અને શ્રુતજ્ઞાન તે કારણે પણ અજ્ઞાન  
સ્વરૂપ હોય છે કે એ બન્ને મિથ્યાદર્શનની જેમ ભવભ્રમણના કારણરૂપ હોય  
છે. ભવના કારણભૂત તેઓ એ કારણે મનાય છે કે પશુવધ, મૈથુન વગેરે જેવાં  
કર્મોને “એ ધર્મના સાધનભૂત છે” એવું માને છે, તેથી દીર્ઘતર સંસાર-  
માર્ગના પ્રવર્તક હોવાને કારણે એ બન્ને મિથ્યાદૃષ્ટિને માટે અજ્ઞાનસ્વરૂપ છે.

જે રીતે ઉન્મત્તનું જ્ઞાન સ્વેચ્છાનુસાર પદાર્થોનું ગ્રાહક થાય છે અને તે  
કારણે તે અજ્ઞાનરૂપ મનાય છે, એજ રીતે મિથ્યાદૃષ્ટિનું જ્ઞાન પણ અજ્ઞાનરૂપ  
મનાય છે. જો કે ઉન્મત્ત માણસ જે વસ્તુ જેવી છે એવી તેને બાળે છે. સોનાને  
સોનું અને લોહાને લોહું બાળીને યથાર્થજ્ઞાન લાભ કરી લે છે, પણ ઉન્માદને  
કારણે તે સત્ય અસત્યનો ભેદ બાળવાને અસમર્થ હોય છે, તેથી તેનું સાચું  
ખોટું સમસ્ત જ્ઞાન પરમાર્થતઃ વિચારશૂન્ય કે અજ્ઞાન જ કહેવાય છે. એજ પ્રમાણે

તથા—મિથ્યાદૃષ્ટીનાં મતિશ્રુતે યથાવસ્થિતં વસ્તુ અવિચાર્યૈવ પ્રવર્તેતે, તતો યદ્યપિ ચ તદ્વ્યં ક્વચિદ્ ‘રસોઽયં’ ‘સ્પર્શોઽયં’ इत्यादी अवधारणाध्यवसायाभावे संवादि, तथापि न तद्व्यं स्याद्वादपरिभावेनातस्तथा प्रवृत्तं किन्तु यथा कथंचित् । अतो मतिश्रुतरूपमेतद् द्वयम् अज्ञानम् ॥ ४ ॥

તથા—જ્ઞાનફલાભાવાત્ મિથ્યાદૃષ્ટેર્મતિશ્રુતે અજ્ઞાને ભવતઃ । જ્ઞાનસ્ય हि फलं हेयस्य हानिः, उपादेयस्य चोपादानम् । न च संसारात् परं किंचित् हेयमस्ति, न उसी प्रकार मिथ्यादृष्टि आत्मा कितना ही अधिक ज्ञानवाला क्यों न हो पर आत्मा के विषय में अंधेरा होने के कारण उसका सारा लौकिक ज्ञान शास्त्रदृष्टि से अज्ञान ही है । यही बात “मिथ्यादृष्टीनां मतिश्रुते यथावस्थितं वस्तु अविचार्यैव प्रवर्तते” इत्यादि पंक्तियों द्वारा स्पष्ट की गई है । इनमें बतलाया है कि मिथ्यादृष्टि जीव के मतिश्रुतज्ञान वस्तु के वास्तविक स्वरूप का विचार नहीं करके ही प्रवृत्त हुआ करते हैं । यद्यपि मिथ्यादृष्टि जीव का “यह रस है यह स्पर्श है” इस प्रकार का ज्ञान अवधारणारूप अध्यवसाय के बिना प्रवृत्त होता है, और वह इस तरह अपने विषयभूत पदार्थ का संवादक भी हो जाता है तो भी इसके इस ज्ञान में स्याद्वाद-सिद्धान्त की थोड़ी सी भी पुट नहीं होती है । वह तो यथाकथंचित् ही प्रवृत्त होता है ।

તથા—જ્ઞાન કે ફલ કા અભાવ હોને સે મિથ્યાદૃષ્ટિ કે મતિજ્ઞાન ઔર શ્રુતજ્ઞાન અજ્ઞાનસ્વરૂપ હોતે હૈં । જ્ઞાન કા ફલ હેય-છોડને યોગ્ય-પદાર્થ કા પરિત્યાગ કરના ઔર ઉપાદેય-ગ્રહણ કરને યોગ્ય-પદાર્થ કા

મિથ્યાદૃષ્ટિ આત્મા કેટલોય અધિકજ્ઞાની ભલે હોય પણ આત્માના વિષયમાં અંધારું હોવાને કારણે તેનું સમસ્ત લૌકિક જ્ઞાન શાસ્ત્રની દૃષ્ટિથી અજ્ઞાન જ છે. એજ વાત “મિથ્યાદૃષ્ટીનાં મતિશ્રુતે યથાવસ્થિત વસ્તુ અવિચાર્યૈવ પ્રવર્તેતે” ઇત્યાદિ પંક્તિઓ દ્વારા સ્પષ્ટ કરાઈ છે. તેમાં એ બતાવવામાં આવ્યું છે કે મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવનાં મતિશ્રુતજ્ઞાન વસ્તુનાં વાસ્તવિક સ્વરૂપનો વિચાર ન કરોને જ પ્રવૃત્ત થયા કરે છે. જો કે મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવનું “આ રસ છે, આ સ્પર્શ છે” આ પ્રકારનું જ્ઞાન અવધારણરૂપ અધ્યવસાય વિના પ્રવૃત્ત થાય છે, અને તે આ રીતે પોતાના વિષયભૂત પદાર્થનું સંવાદક પણ થઈ જાય છે તો પણ તેના તે જ્ઞાનમાં સ્યાદ્વાદ સિદ્ધાંતનો સહેજ પણ પટ હોતો નથી. તે તો યથા કથંચિત્ પ્રવૃત્ત હોય છે.

તથા—જ્ઞાનનાં ફળનો અભાવ હોવાથી મિથ્યાદૃષ્ટિનાં મતિજ્ઞાન અને શ્રુતજ્ઞાનઅજ્ઞાન સ્વરૂપ હોય છે. જ્ઞાનનું ફળ “હેય-ત્યાગવા લાયક પદાર્થને પરિત્યાગ કરવો અને ઉપાદેય-ગ્રહણ કરવા લાયક પદાર્થને ગ્રહણ કરવો,” એ



ચ મોક્ષાત્ પરં કિંચિદુપાદેયં, તતો ભવમોક્ષાવેકાન્તેન હેયોપાદેયૌ । તયોર્હેયોપાદે-  
યયોર્ભવમોક્ષયોશ્ચદ્વાન્યુપાદાને સર્વસંગવિરતેર્ભવતઃ, તતો વિરતિરવશ્યં કર્તવ્યા । સૈવ  
ચ પરમાર્થતો જ્ઞાનસ્ય ફલમ્ । સા ચ મિથ્યાદૃષ્ટેર્નાસ્તીતિ જ્ઞાનફલાભાવાદ્ મિથ્યા-  
દૃષ્ટેર્મતિશ્રુતે અજ્ઞાને ભવતઃ । ઉક્તञ્ચ—

“સદસદવિસેસણાઓ, ભવહેઉજહિચ્છિઓવલંભાઓ ।

નાળફલાભાવાઓ, મિચ્છદિદ્વિસ્સ અન્નાણં ” ॥ ૧ ॥

છાયા — સદસદવિશેષણાત્, ભવહેતુયદ્વચ્છિતો( મનઃકલ્પિતો )પલમ્ભાત્ ।

જ્ઞાનફલાભાવાત્, મિથ્યાદૃષ્ટેરજ્ઞાનમ્ ॥ ૧ ॥ ૫ ॥ સૂ. ૨૫ ॥

શ્રુતં મતિપૂર્વકં ભવતીત્યુક્તમ્ । સંપ્રતિ મતિજ્ઞાનમેવાધિકૃત્ય શિષ્યઃ પૃચ્છતિ—

ઉપાદાન કરના છે । સંસાર કે સિવાય ઓર કોઈ પદાર્થ હેય નહીં છે, તથા મોક્ષ કે સિવાય ઓર કોઈ ઉપાદેય નહીં છે । સંસાર હેય છે ઓર મોક્ષ એકાન્તતઃ ઉપાદેય છે, એ દોનોં વાતે સર્વપરિગ્રહ કી વિરતિવાલે સમ્યગ્દૃષ્ટિ જીવકે હી હોતી હૈં, ફસલિયે વિરતિ અવશ્ય અંગીકાર કરને યોગ્ય છે । યહી પરમાર્થતઃ જ્ઞાન કા ફલ છે । યહ સર્વસંગવિરતિરૂપ જ્ઞાન કા ફલ મિથ્યાદૃષ્ટિ કો પ્રાપ્ત નહીં છે, ફસલિયે મિથ્યાદૃષ્ટિ કે જ્ઞાન કે ફલ કા અભાવ હોને સે ઉસકે મતિશ્રુતજ્ઞાન અજ્ઞાનસ્વરૂપ હોતે હૈં । કહા મી છે—

“સદસદવિસેસણાઓ, ભવહેઉજ હિચ્છિઓવ લંભાઓ ।

નાળફલાભાવાઓ, મિચ્છદિદ્વિસ્સ અન્નાણં ” ॥ ૧ ॥ સૂ. ૨૫ ॥

શ્રુતજ્ઞાન મતિજ્ઞાનપૂર્વક હોતા છે યહ વાત યહાંતક કહ દી । અવ શિષ્ય મતિજ્ઞાન કે વિષય મેં પૂછતા છે ઓર સૂત્રકાર ઉસકા ઉત્તર દેતે હૈં—‘ સે કિં તં આભિણિવોહિયનાણં ’ ઇત્યાદિ ।

છે. સંસારના સિવાય બીજે કોઈ પદાર્થ હેય નથી તથા મોક્ષના સિવાય બીજું કોઈ ઉપાદેય નથી, સંસાર હેય છે અને મોક્ષ એકાન્તતઃ ઉપાદેય છે, એ બન્ને વાતો સર્વપરિગ્રહની વિરતિવાળા સમ્યગ્દૃષ્ટિ જીવને જ હોય છે. તે કારણે વિરતિ અવશ્ય અંગીકાર કરવા યોગ્ય છે. એજ પરમાર્થતઃ જ્ઞાનનું ફળ છે. આ સર્વ-સંગવિરતિરૂપ જ્ઞાનનું ફળ મિથ્યાદૃષ્ટિને પ્રાપ્ત નથી, તેથી મિથ્યાદૃષ્ટિને જ્ઞાનનાં ફળનો અભાવ હોવાથી તેનાં મતિશ્રુતજ્ઞાન અજ્ઞાનસ્વરૂપ હોય છે. કહ્યું પણ છે—

“સદસદ-વિસેસણાઓ, ભવહેઉજ હિચ્છિઓવલંભાઓ ।

નાળફલાભાવાઓ, મિચ્છદિદ્વિસ્સ અન્નાણં ” ॥ ૧ ॥ સૂ. ૨૫ ॥

શ્રુતજ્ઞાન મતિજ્ઞાન પૂર્વક હોય છે એ વાત અહીં સુધી કહી. હવે શિષ્ય મતિજ્ઞાન વિષે પૂછે છે અને સૂત્રકાર તેનો ઉત્તર આપે છે—“ સે કિં તં આભિણિવોહિયનાણં ” ઇત્યાદિ.



મૂલમ્--સે કિં તં આભિણિવોહિયનાણં ? । આભિણિવોહિ-  
યનાણં દુવિહં પપ્પણત્તં । તં જહા--સુયનિસ્સિયં ચ, અસુયનિસ્સિયં  
ચ । સે કિં તં અસુયનિસ્સિયં ? । અસુયનિસ્સિયં ચઠ્ઠિવિહં  
પપ્પણત્તં । તં જહા--

ગાહા--ઉપ્પત્તિયા ૧, વેણઙ્ગઆ ૨, કમ્મયા ૩, પરિણામિયા ૪ ।

બુદ્ધી ચઠ્ઠિવિહા વુત્તા, પંચમા નોવલલ્લભઈ ॥ ૧ ॥

છાયા—અથ કિં તદાભિનિવોધિકજ્ઞાનમ્ ? આભિનિવોધિકજ્ઞાનં દ્વિવિધં  
પ્રજ્ઞસમ્ । તદ્ યથા—શ્રુતનિશ્ચિતં ચ અશ્રુતનિશ્ચિતં ચ ।

અથ કિં તદ્ અશ્રુતનિશ્ચિતમ્ ? । અશ્રુત નિશ્ચિતં ચતુર્વિધં પ્રજ્ઞસમ્ । તદ્ યથા—  
ગાથા—ઔત્પત્તિકી ૧, વૈનયિકી ૨, કર્મજા ૩, પારિણામિકી ૪ ।

બુદ્ધિશ્ચતુર્વિધા ઉક્તા, પશ્ચમી નોપલભ્યતે ॥ ૧ ॥

ટીકા—‘સે કિં તં’ इत्यादि । अथ किं तदाभिनिवोधिकज्ञानम् ? पूर्वनि-  
र्दिष्टस्याभिनिवोधिकज्ञानस्य किं स्वरूपमित्यर्थः । उत्तरमाह—‘आभिणिवोहिय नाणं  
दुविहं पप्पणत्तं’ इत्यादि । आभिनिवोधिकज्ञानं द्विविधं प्रज्ञसम् । तद् यथा—श्रुत-  
निश्चितं च, अश्रुतनिश्चितं च । इह श्रुत शब्देन—सामायिकमारभ्य लोकविन्दुसारपर्यन्तं

પ્રશ્ન—पूर्वनिर्दिष्ट आभिनिवोधिकज्ञान का क्या स्वरूप है ? उत्तर—  
आभिनिवोधिकज्ञान दो प्रकार का कहा गया है । वे दो प्रकार ये  
हैं—१ श्रुतनिश्चित और २ अश्रुतनिश्चित । श्रुतशब्द से सामायिक से  
छेकर लोकविन्दुसारनामक चौदहवें पूर्वपर्यन्त द्रव्यश्रुत ग्रहण किया  
गया है । इस द्रव्यश्रुत के अभ्यास से जनित जो संस्कार, उस संस्कार  
से समन्वित जिसकी बुद्धि है ऐसे प्राणी को मति के उत्पत्ति के समय

પ્રશ્ન—पूर्वनिर्दिष्ट आभिनिवોધિકજ્ઞાનનું શું સ્વરૂપ છે ?

ઉત્તર—આભિનિવોધિકજ્ઞાન બે પ્રકારનું બતાવ્યું છે. એ બે પ્રકાર આ  
પ્રમાણે છે—(૧) શ્રુતનિશ્ચિત અને (૨) અશ્રુતનિશ્ચિત. શ્રુતશબ્દ વડે સામાયિકથી  
લઈને લોકવિન્દુસાર નામના ચૌદમાં પૂર્વ સુધીનું દ્રવ્યશ્રુત ગ્રહણ કરેલ છે.  
આ દ્રવ્યશ્રુતના અભ્યાસથી ઉત્પન્ન થયેલ બે સંસ્કાર, એ સંસ્કારથી સમન્વિત  
બેની બુદ્ધિ છે એવાં પ્રાણીને મતિની ઉત્પત્તિ સમયે શાસ્ત્ર અને તેના અર્થની

દ્રવ્યશ્રુતં ગૃહ્યતે, તદનુસારેણ શ્રુતાભ્યાસજનિતસંસ્કારસમન્વિતમતેરુત્પાદકાલે શાસ્ત્ર-  
ર્થપર્યાલોચનમપેક્ષ્યેવ યદુપજાયતે મતિજ્ઞાનં તત્ શ્રુતનિશ્ચિતમ્ । યથા—અવગ્રહાદિ ।  
રૂપરસાદિભેદૈરનિર્દેશ્યસ્ય સામાન્યમાત્રરૂપાર્થસ્ય ગ્રહણરૂપોઽવગ્રહઃ । યત્તુ સર્વથા  
શાસ્ત્રસંસ્પર્શરહિતસ્ય તથાવિધક્ષયોપશમસદ્ભાવાદેવમેવ યથાવસ્થિતવસ્તુસંસ્પર્શિ મતિ-  
જ્ઞાનમુપજાયતે, તત્ અશ્રુતનિશ્ચિતમ્ । યથા—ઔત્પત્તિકયાદિકમ્ ।

નતુ ઔત્પત્તિકયાદિકમપ્યવગ્રહાદિરૂપમેવ, તત્ કોઽનયોર્વિશેષઃ ?, इति चेत्,  
अत्रोच्यते—यद्यपि अवग्रहादिरूपमेव, परं तु शास्त्रमनपेक्षयोत्पद्यते, इत्येतावता  
भेदेनौत्पत्तयादिकं पृथगुपन्यस्तम् ।

મેં શાસ્ત્ર ઓર ઉસકે અર્થ કી પર્યાલોચના કી અપેક્ષા કરકે જો મતિ-  
જ્ઞાન હોતા હૈ વહ શ્રુતનિશ્ચિત મતિજ્ઞાન હૈ, જૈસે અવગ્રહ આદિ । રૂપ  
રસ આદિ ભેદોં સે અનિર્દેશ્ય—જિસકા નિર્દેશ ન હો સકે એસે પદાર્થ કા  
સામાન્યરૂપ સે જાનને કા નામ અવગ્રહ હૈ ૧। સર્વથા શાસ્ત્ર કે સંસ્પર્શ  
સે રહિત પ્રાણી કો તથાવિધ ક્ષયોપશમ કે સદ્ભાવ સે યથાવસ્થિત વસ્તુ  
કો જાનને વાલા જો મતિજ્ઞાન હોતા હૈ વહ અશ્રુતનિશ્ચિત મતિજ્ઞાન હૈ,  
જૈસે ઔત્પત્તિકી આદિ બુદ્ધિ ૨ ।

શંકા—ઔત્પત્તિ કી આદિ જો બુદ્ધિયાં હૈં વે ભી અવગ્રહ આદિરૂપ  
હી હૈં તો ફિર અવગ્રહ આદિ મેં ઓર ઔત્પત્તિકી આદિ બુદ્ધિયોં મેં  
કયા ભેદ હૈ ।

ઉત્તર—યદ્યપિ યે બુદ્ધિયાં અવગ્રહ આદિરૂપ હી હૈં, પરન્તુ ફિર ભી  
શાસ્ત્ર કી અપેક્ષા નહીં કરકે હી યે બુદ્ધિયાં ઉત્પન્ન હોતી હૈં, અતઃ इन्हें  
अवग्रह आदि से भिन्नरूप में माना है, और इसी अभिप्राय से सूत्रकारने  
इनका पृथक् रूप से प्रतिपादन किया है ।

પર્યાલોચનાની અપેક્ષા કરીને જે મતિજ્ઞાન થાય છે તે શ્રુતનિશ્ચિત મતિજ્ઞાન છે,  
જેમ કે અવગ્રહ આદિ ૧. રૂપ રસ આદિ ભેદોથી અનિર્દેશ્ય—જેનો નિર્દેશ ન  
થઈ શકે એવા પદાર્થને સામાન્યરૂપે જાણવાનું નામ અવગ્રહ છે. સર્વથા શાસ્ત્રના  
સંસર્ગથી રહિત પ્રાણીને તથાવિધ ક્ષયોપશમના સદ્ભાવથી યથાવસ્થિત વસ્તુને  
જાણનાર જે મતિજ્ઞાન થાય છે તે શ્રુતનિશ્ચિત મતિજ્ઞાન છે, જેમકે ઔત્પત્તિ કી  
આદિ બુદ્ધિ ૨.

શંકા—ઔત્પત્તિકી આદિ જે બુદ્ધિઓ છે તે પણ અવગ્રહ આદિ રૂપ જ છે,  
તો પછી અવગ્રહ આદિમાં ઔત્પત્તિકી આદિ બુદ્ધિઓમાં શો ભેદ છે ?

ઉત્તર—જે કે એ બુદ્ધિઓ અવગ્રહ આદિ રૂપ જ છે, તો પણ શાસ્ત્રની અપેક્ષા  
કર્યા વિના જ એ બુદ્ધિઓ ઉત્પન્ન થાય છે, તેથી તેને અવગ્રહ આદિથી ભિન્નરૂપે  
માની છે, અને એ કારણે જ સૂત્રકારે તેમનું અલગ રીતે પ્રતિપાદન કર્યું છે.

તત્રાશ્રુતનિશ્ચિતસ્ય સ્વલ્પવિષયકતયા પૂર્વં તદેવ પ્રસ્તૌતિ-‘ સે કિં તં ’ ઇત્યાદિ । અશ્રુતનિશ્ચિતસ્યાભિનિવોધિકસ્ય કિં સ્વરૂપમિતિ પ્રશ્નઃ । ઉત્તરમાહ—‘ અસ્મુય-નિસ્સિયં-ચઉચ્ચિહં પળ્લત્તં ’ ઇત્યાદિ । અશ્રુતનિશ્ચિતં ચતુર્વિધં પ્રજ્ઞપ્તમ્ । તદ્ યથા ઔત્પત્તિકી ૧, વૈનયિકી ૨, કર્મજા ૩, પારિણામિકી ૪ । ઇત્યેવં ચતુર્વિધા બુદ્ધિઃ પ્રોક્તા । ઔત્પત્તિકી-ઉત્પત્તિરેવ ન તુ શાસ્ત્રાભ્યાસકર્મપરિશીલનાદિકં પ્રયોજનં=કારણં યસ્યાઃ સા ઔત્પત્તિકી ।

નનુ સર્વસ્યાઃ બુદ્ધેઃ કારણં ક્ષયોપશમસ્તત્ કથમુચ્યતે ‘ ઉત્પત્તિરેવ પ્રયોજન-મસ્યાઃ ? ’ ઇતિ ચેત્, ઉચ્યતે-ક્ષયોપશમઃ સર્વબુદ્ધિસાધારણસ્તતો નાસૌ ભેદેન પ્રતિપત્તેઃ કારણં ભવતિ । અથ ચ બુદ્ધચન્તરાદ્ ભેદેન પ્રતિપત્ત્યર્થં વ્યપદેશાન્તરં કર્તુમારબ્ધં, તત્ર વ્યપદેશાન્તરનિમિત્તં ન કિમપિ વિનયાદિકં વિદ્યતે, કેવલમેવમેવ તથોત્પત્તિ-રિતિ સૈવ સાક્ષાન્નિર્દિષ્ટા । ૧ ।

અશ્રુતનિશ્ચિત કે વિષય કા વિવેચન અત્પ હૈ, इसलिये सूत्रकार पहिले श्रुतनिश्चित मतिज्ञान का विवेचन न करके पहिले अश्रुतनिश्चित मतिज्ञान का ही विवेचन करते हैं ‘ सै किं तं अस्मुयनिस्सियं ’ इत्यादि । प्रश्न-अश्रुतनिश्चित मतिज्ञान का क्या स्वरूप है ? । उत्तर-अश्रुतनिश्चित मतिज्ञान चार प्रकार का है वे उसके चार प्रकार ये हैं-औत्पत्तिकी १, वैनयिकी २, कर्मजा ३ एवं पारिणामिकी ४, ये चार बुद्धियां हैं । जो बुद्धि शास्त्राभ्यास आदि के करने से उत्पन्न नहीं होती है, किन्तु जीव को स्वतः ही उत्पन्न होती है-जिस को व्यवहार में “ हाजिरजचाव ” कहते हैं इसका नाम औत्पत्तिकी बुद्धि है ।

શંકા—સમસ્ત બુદ્ધિયોં કા કારણ ક્ષયોપશમ કહા ગયા હૈ, તો ફિર યહ બાત કૈસે માની જા સકતી હૈ કિ ઇસ બુદ્ધિ કા કારણ અપની ઉત્પત્તિ હી હૈ ।

અશ્રુતનિશ્ચિતના વિષયનું વિવેચન ટૂંકું છે. તેથી સૂત્રકાર પહેલાં શ્રુતનિ-શ્ચિતનું વિવેચન ન કરતાં અશ્રુતનિશ્ચિતનું જ વિવેચન કરે છે.

પ્રશ્ન—અશ્રુતનિશ્ચિત મતિજ્ઞાનનું શું સ્વરૂપ છે ?

ઉત્તર—૨ શ્રુતનિશ્ચિત મતિજ્ઞાન ચાર પ્રકારનું છે-(૧) ઔત્પત્તિકી, (૨) વૈનયિકી, (૩) કર્મજા અને (૪) પારિણામિકી, એ ચાર મતિ છે. જે મતિ શાસ્ત્રાભ્યાસ આદિ કરવાથી ઉત્પન્ન થતી નથી પણ આપોઆપ ઉત્પન્ન થાય છે-જેને પહેવારમાં “ હાજર જવાબ ” કહે છે. એનું નામ ઔત્પત્તિકી મતિ છે.

શંકા—સમસ્ત મતિનું કારણ ક્ષયોપશમ દર્શાવેલ છે, તો આ વાત કેવી રીતે માની શકાય કે એ મતિ સ્વતઃ ઉત્પન્ન થાય છે ?

વૈનયિકી-વિનયો-ગુરુશુશ્રૂષાલક્ષણઃ, સ પ્રયોજનં=કારણં યસ્યાઃ, સા તથા, યદ્વા-વિનયપ્રધાના બુદ્ધિર્વૈનયિકી । ૨ ।

તથા-કર્મજા-અનાચાર્યકં કર્મ, સાચાર્યકં શિલ્પમ્ । તત્ર કર્મણો જાતા કર્મજા । શિલ્પં તુ વિનયોત્પન્નમ્, તદુત્પન્ના બુદ્ધિર્વૈનયિક્યામન્તર્ભૂતા । ૩ ।

ઉત્તર—યહ તો ઠીક હૈ, પરન્તુ ક્ષયોપશમ इन बुद्धियों में भेद की प्रतिपत्ति (સમજાને) का कारण नहीं हो सकता है, क्योंकि क्क्षयोपशम सर्व बुद्धियों की उत्पत्ति में सर्वसाधारण रूप से कारण होता ही है, इसलिये वह पृथग्रूप से प्रतिपत्ति का कारण नहीं हो सकता, और जहां औत्पत्तिकी बुद्धि का अन्य वैनयिकी आदि बुद्धियों से पृथक् रूप प्रतिपत्ति (સમજાને) के लिये व्यपदेशान्तर करना प्रारंभ किया वहां पर व्यपदेशान्तर का निमित्त विनयादिक कोई नहीं है, केवल उस प्रकार की उसकी उत्पत्ति ही निमित्त है इसलिये यहां वही साक्षात् रूप से निर्दिष्ट की गई है । १ ।

गुरु की शुश्रूषा करना इसका नाम विनय है । इस विनयरूप कारण से जो बुद्धि होती है वह वैनयिकी बुद्धि है । अथवा जिसमें विनय-प्रधान हो वह भी वैनयिकी बुद्धि है २ । आचार्य के विना स्वयं प्राप्त हुई कला को कर्म कहते हैं, और आचार्य से प्राप्त हुई कला को शिल्प कहते हैं । इनमें कर्म से जो बुद्धि उत्पन्न होती है वह कर्मजा बुद्धि है । शिल्प,

ઉત્તર—એ તો બરાબર છે, પણ ક્ષયોપશમ એ મતિઓમાં ભેદની પ્રતિ-પત્તિ (સમજવા) તું કારણ હોઈ શકતું નથી, કારણ કે ક્ષયોપશમ સર્વે મતિ-ઓની ઉત્પત્તિમાં સર્વસધારણ રીતે કારણ હોય જ છે, તેથી તે અલગ રીતે પ્રતિપત્તિ તું કારણ હોઈ શકતું પ્રથી, અને જ્યાં ઔત્પત્તિકી મતિ તું અન્ય વૈનયિકી આદિ મતિઓથી અલગ રીતે પ્રતિપત્તિ (સમજવા) ને માટે વ્યપદે-શાન્તર કરવાનો પ્રારંભ કર્યો ત્યાં વ્યપદેશાન્તર તું નિમિત્ત વિનયાદિક હોઈ નથી, ફક્ત એ પ્રકારની તેની ઉત્પત્તિ જ નિમિત્ત છે તેથી અહીં એજ સાક્ષાતરૂપે નિર્દિષ્ટ કરવામાં આવી છે ॥૧॥

गुरुनी शुश्रूषा करवी तेनुं नाम विनय छे. आ विनयइय कारणुथी जे मति उत्पन्न थाय छे ते वैनयिक मति छे. अथवा जेमां विनय प्रधान होय ते पण वैनयिकी मति छे २. आचार्य विना स्वयं प्राप्त थयेल कलाने कर्म कहे छे, અને आचार्यથી प्राप्त थयेલ કળાને શિલ્પ કહે છે. એમાં કર્મથી જે મતિ ઉત્પન્ન થઈ હોય તે કર્મજા મતિ છે. શિલ્પ, વિનયથી પ્રાપ્ત થાય છે, શિલ્પથી ઉત્પન્ન

तथा—पारिणामिकी-परि=समन्तात् नमनं परिणामः सुदीर्घकालपूर्वापरार्थं पर्यालोचनजन्यः स्वात्मनो धर्मविशेषः, स प्रयोजनमस्याः सा पारिणामिकी । सा च-अनुमानकारणमात्रदृष्टान्तैः साध्यसाधिका, वयोविपाके च पुष्टीभूता, अभ्युदयमोक्षफला चेति । ४ ।

इत्येवं चतुर्विधा बुद्धिः—बुध्यते-ज्ञायतेऽनयेति बुद्धिः=मतिः, उक्ता=तीर्थ-करगणधरैः कथिता । कथं चतुर्विधैव कथिता ? यस्मात् पञ्चमी बुद्धिर्नोपलभ्यते, सर्वस्यापि अश्रुतनिश्चितमतिविशेषस्य औत्पत्तिक्यादिवुद्धिचतुष्टयमात्रेऽन्तर्भावतः पञ्चम्या बुद्धेरभावात् केवलिनाऽपि पञ्चमी बुद्धिर्न दृष्टेति भावः ॥ गा. १ ॥

तत्र ' यथोद्देशं निर्देशः ' इति न्यायमाश्रित्य पूर्वमौत्पत्तिकीलक्षणमाह—

मूलम्--गाहा-पुव्वमदिद्वस्सुय-मवेइय-तक्खण-विसुद्धगहियत्था ।

अव्वाहयफलजोगा, बुद्धी उत्पत्तिया नाम ॥२॥

छाया—पूर्वादृष्टाऽश्रुताऽविदित-तत्क्षणविशुद्धगृहीतार्था ।

अव्याहतफलयोगा, बुद्धिर्नोत्पत्तिकी नाम ॥ २ ॥

विनय से प्राप्त होता है, शिल्प से उत्पन्न हुई बुद्धि का वैनयिकी में अन्तर्भाव है ३ । सुदीर्घ कालतक पूर्वापर अर्थ के विचार से जन्य आत्म-धर्मविशेष जिस बुद्धि की उत्पत्ति में कारणभूत होता है वह पारिणामिकी बुद्धि अनुमान, कारण-मात्र एवं दृष्टान्त से साध्य को सिद्ध करनेवाली होती है, तथा जैसी २ अवस्था बीतती जाती है उसीके अनुसार पुष्ट होती हुई यह स्वर्ग और मोक्ष फल को देनेवाली होती है ४ । इस प्रकार की बुद्धिरूप मति तीर्थकर गणधरोंने कही है । इनके सिवाय बुद्धि का और कोई पांचवां प्रकार नहीं है, कारण कि जितना भी अश्रुतनिश्चित मतिज्ञान है वह सब इन चार बुद्धियों में ही अन्तर्भूत हो जाता है ॥ गा० १ ॥

थयेલ મતિનો વૈનયિકીમાં સમાવેશ થઈ બીજ છે ૩ ઘણા લાંબા કાળ સુધી પૂર્વાપર અર્થના વિચારથી જનિત આત્મધર્મવિશેષ જે મતિની ઉત્પત્તિમાં કારણભૂત હોય છે તે પારિણામિકી મતિ છે. આ પારિણામિકી મતિ અનુમાન, કારણમાત્ર અને દૃષ્ટાન્તથી સાધ્યને સિદ્ધ કરનારી હોય છે, અને જેમ જેમ અવસ્થા બીતતી બીજ છે તેમ તેમ પુષ્ટ થતી તે સ્વર્ગ અને મોક્ષ ફળને દેનારી છે ૪. આ પ્રકારે આ ચાર પ્રકારની મતિ તીર્થંકર, ગણધરોએ કહેલ છે. કારણ કે જેટલું અશ્રુત-નિશ્ચિત મતિજ્ઞાન છે તે બધું આ ચાર મતિઓમાં જ સમાવેશ પામી બીજ છે. ॥ ગા. ૧ ॥

ટીકા—‘પુવ્વ’ ઇત્યાદિ । પૂર્વાઽદૃષ્ટાશ્રુતાઽવિદિતતત્ક્ષણવિશુદ્ધગૃહીતાર્થા  
 પૂર્વ=બુદ્ધ્યુત્પત્તેઃ પ્રાક્, અદૃષ્ટઃ=સ્વયં ચક્ષુષા ન દૃષ્ટઃ, અશ્રુતઃ=ન ચાપ્યન્યતઃ શ્રુતઃ,  
 અવિદિતઃ=મનસાપ્યવિદિતઃ-અપર્યાલોચિતઃ, તત્ક્ષણે=તસ્મિન્ ક્ષણે-બુદ્ધ્યુત્પત્તિ-  
 કાલે, વિશુદ્ધઃ=યથાવસ્થિતઃ, ગૃહીતઃ=અવધારિતોઽર્થઃ યયા સા તથા । ‘પુવ્વમદિ-  
 દ્વમસ્સુયમવેદ્ય’ ઇત્યત્ર મકારત્રયમ્ આર્પત્વાત્ । તથા-અવ્યાહતફલયોગા-અવ્યાહતં  
 =વ્યાઘાતરહિતં ચ તત્ ફલં ચાવ્યાહતફલમ્, તેન યોગો યસ્યા સા અવ્યાહતફલ-  
 યોગા-અવાધિતાર્થવિષયકા બુદ્ધિઃ, ઔત્પત્તિકી નામ-નામ્ના ઔત્પત્તિકીત્યર્થઃ॥૨॥

સંપ્રતિ શિષ્યાનુગ્રહાર્થમૌત્પત્તિકયાઃ સ્વરૂપં પ્રતિબોધયિતુમુદાહરણાન્યાહ—

મૂલમ્—ગાહા--ભરહસિલ ૧, મિંઢ ૨, કુવ્વકુડ ૩, તિલ ૪,  
 વાલુય ૫, હત્થિ ૬, અગડ ૭, વળસંડે ૮ । પાયસ ૯, અદ્યા ૧૦,  
 પત્તે ૧૧, શાહિલા ૧૨, પંચપિયરો ૧૩, ય ॥ ૩ ॥

છાયા—ભરતશિલા, ૧, મેળ ૨, કુવ્વકુટ ૩, તિલ ૪, વાલુકા ૫, હસ્ત્ય-  
 ગડ ૬-૭, વળણ્ડાઃ ૮ । પાયસાતિગ ૯-૧૦, પત્રાણિ ૧૧, શાહિલા ૧૨,  
 પશ્વપિતરશ્ચ ૧૩ ॥ ૩ ॥

ટીકા—‘ભરહસિલ’ ઇત્યાદિ । અસ્યા અર્થઃ ત્રયોદશકથાનકેભ્યોઽવગન્તવ્યઃ ।  
 તાનિ ચ કથાનકાનિ ટીકાસમાપ્ત્યનન્તરં દ્રષ્ટવ્યાનિ ॥ ૩ ॥

અબ ઔત્પત્તિકી બુદ્ધિ કા કયા લક્ષણ હૈ ઇસે સૂત્રકાર નીચે કી  
 ગાથા દ્વારા વતલાતે હૈ—‘પુવ્વમદિદ્વ૦’ ઇત્યાદિ ।

જો પદાર્થ પહિલે કબી દેખા નહીં હૈ, કિસી દૂસરે સે સુના મી નહીં  
 હૈ, ઔર ન જિસકી મન સે મી કલ્પના કી ગઈ હૈ, એસે પદાર્થ કા ઉસી  
 સમય યથાવસ્થિતરૂપ સે જિસકે દ્વારા નિશ્ચય હો જાવે ઉસ બુદ્ધિ કા  
 નામ ઔત્પત્તિકી બુદ્ધિ હૈ । તાત્પર્ય કહને કા યહી હૈ કિ ઇસ બુદ્ધિ કા  
 વિષય અવાધિત હોતા હૈ । અર્થાત્—યહ બુદ્ધિ સમી વિષયોં કો નિસ્સન્દેહ  
 રૂપ સે સ્પષ્ટ કરતી હૈ ॥ ૨ ॥

હવે ઔત્પત્તિકી મતિનું શું લક્ષણ છે તે સૂત્રકાર નીચેની ગાથા દ્વારા  
 બતાવે છે.—“ પુવ્વમદિદ્વ૦ ” ઇત્યાદિ.

જે પદાર્થ પહેલાં કદી જોયો ન હોય, ખીજા કોઈની પાસેથી સાંભળ્યો  
 પણ ન હોય, અને મનથી જેની કલ્પના પણ કરી ન હોય, એવા પદાર્થનો એજ સમયે  
 યથાવસ્થિત રૂપે જેના દ્વારા નિશ્ચય થઈ જાય એ મતિનું નામ ઔત્પત્તિકી  
 મતિ છે તેનું તાત્પર્ય એ છે કે આ મતિનો વિષય અવાધિત હોય છે. એટલે  
 કે બુદ્ધિ સમસ્ત વિષયોને નિઃસંદેહ રૂપે સ્પષ્ટ કરે છે. ॥ ગા. ૨ ॥



ઔત્પત્તિકયા બુદ્ધેર્વાચનાન્તરેણ પુનરુદાહરણાનિ ગાથાદ્વયેનાહ—

મૂલમ્—ભરહસિલ ૧, પણિય ૨, સ્વસ્થે ૩, સુહુગ ૪, પડ ૫, સરડ ૬, કાય ૭, ઉચ્ચારે ૮ । ગય ૯, ઘયણ ૧૦, ગોલ ૧૧, સંભે ૧૨, સુહુગ ૧૩, મગ્ગિત્થિ ૧૪-૧૫, પડ ૧૬, પુત્તે ૧૭ ॥ ૪ ॥ મહુસિત્થ ૧૮, મુદ્ધિયં ૧૯, ડંકે ૨૦, નાણણ ૨૧, મિલ્લુ ૨૨, ચેટગનિહાણે ૨૩ । સિલ્લુયાય ૨૪, અત્થસત્થે ૨૫, ઇચ્છાયા મહં ૨૬, સયસહસ્સે ૨૬ ॥ ૫ ॥

છાયા—ભરતશિલા ૧, પણિત ૨, વૃક્ષાઃ ૩, ક્ષુલ્લક ૪, પટ ૫, સરટ ૬, કાકોચ્ચારાઃ ૭-૮ । ગજ ૯, ઘયણ ( માણડ ) ૧૦, ગોલક ૧૧, સ્તમ્ભાઃ ૧૨, ક્ષુલ્લક ૧૩, માર્ગ ૧૪, સ્ત્રી ૧૫, પતિ ૧૬, પુત્રાઃ ૧૭ ॥ ૪ ॥ મધુસિક્થ ૧૮, મુદ્રિકા ૧૯, અડ્ઢુઃ ૨૦, જ્ઞાયક ૨૧, મિશ્નુ ૨૨, ચેટકનિધાનાનિ ૨૩ । શિક્ષા ૨૪, ચ અર્થશાસ્ત્રમ્ ૨૫, ઇચ્છા ચ મહતી ૨૬, શતસહસ્રમ્ ૨૭ ॥ ૫ ॥

ટીકા—‘ ભરહસિલ ’ ઇત્યાદિ । અસ્ય ગાથાદ્વયસ્યાર્થઃ સપ્તવિંશતિકથાનકે-  
ભ્યોઽવગન્તવ્યઃ । તાનિ ચ કથાનકાનિ ટીકાસમાપ્ત્યનન્તરં દ્રષ્ટવ્યાનિ ॥ ૪-૫ ॥

વૈનયિકાલક્ષણમાહ—

મૂલમ્—ગાહા—ભરનિરત્થરણ સમત્થા, તિવગ્ગસુત્તત્થગહિયપેયાલા ।  
ઉભઓલોગફલવર્ડ, વિણાયસમુત્થા હવડ બુદ્ધી ॥૧॥

इसके उदाहरण निम्न प्रकार हैं—‘ भरहसिल १ ’ इत्यादि ।  
इन बारह उदाहरणों का स्पष्टरूप से खुलासा टीका के अन्तमें है ॥३॥  
वाचनान्तर से भी औत्पत्तिकी बुद्धि के सत्ताईस उदाहरण इस प्रकार हैं—‘ भरहसिल १, पणिय २ ’ इत्यादि ।  
इन सत्ताईस उदाहरणों का भी खुलासा टीका के अन्त में है ॥४॥५॥  
‘ अब वैनयिकी बुद्धि का लक्षण कहते हैं—‘ भरनित्थरणसमत्था ’ इत्यादि ।

तेनां ઉદાહરણો નીચે પ્રમાણે છે—“ ભરહસિલ ૧ ” ઇત્યાદિ એ બાર ઉદા-  
હરણોનો સ્પષ્ટ રીતે ખુલાસો ટીકાને અંતે છે. ॥ ગા. ૩ ॥

વાચનાન્તરથી પણ ઔત્પત્તિકી મતિના સત્તાવીસ ઉદાહરણ નીચે મુજબ  
છે—“ ભરહસિલ ૧ પણિય ૨ ” ઇત્યાદિ.

એ સત્તાવીસ ઉદાહરણોનો ખુલાસો પણ ટીકાને અંતે છે ॥ ગા. ૪ ॥ ૫ ॥  
હવે વૈનયિકી મતિનું લક્ષણ કહે છે—“ ભરનિત્થરણસમત્થા ” ઇત્યાદિ.



छाया—गाथा—भरनिस्तरणसमर्था, त्रिवर्गसूत्रार्थगृहीतपेयाला (प्रमाणा) ।

उभयलोकफलवती, विनयसमुत्था भवति बुद्धिः ॥ १ ॥

टीका—‘ भरनिस्तरणसमर्था ’ इत्यादि । भरनिस्तरणसमर्था=भर इव भर-स्तस्य निस्तरणे समर्था, गुरुकार्यसंपादनं कातराणां दुष्करं भवतीति गुरुकार्यमेव भारसादय्याद्भारस्तस्य वहने दक्षेत्यर्थः । तथा—त्रिवर्गसूत्रार्थगृहीतपेयाला=त्रयो वर्गास्त्रिवर्गाः, लोकरूढ्या धर्मार्थकामाः, तेषां सूत्रं—तदर्जनोपायप्रतिपादकं सूत्रम्, अर्थः—तदर्थश्च, तौ त्रिवर्गसूत्रार्थौ, तयोर्गृहीतं पेयालं—प्रमाणं सारो वा यया सा त्रिवर्गसूत्रार्थगृहीतपेयाला, नीतिशास्त्रनिपुणा—इत्यर्थः ।

ननु वैनयिक्या मतेस्त्रिवर्गसूत्रार्थगृहीतसारत्वे सत्यश्रुतनिश्चितत्वं नोपपद्यते, न हि श्रुताभ्यासमन्तरेण त्रिवर्गसूत्रार्थगृहीतसारत्वं संभवतीति चेत्,

कठिन कार्य का संपादन करना कातरों के लिये दुष्कर होता है अतः वह भारकी सदृशता से भार कहा गया है, उसके सम्पादन करने में दक्ष, तथा धर्म, अर्थ एवं काम के उपार्जन के उपाय बतलाने वाले सूत्र और उनके अर्थ का जिसके द्वारा सार ग्रहण किया जासके ऐसी, अर्थात् नीतिशास्त्र में निपुण, तथा इस लोक एवं परलोक में सुन्दर फल देनेवाली विनय से उत्पन्न वैनयिकी बुद्धि कहलाती है ।

शंका—जब आप वैनयिकी बुद्धि को त्रिवर्ग के उपाय को बतलाने वाले सूत्र अर्थ का सार ग्रहण करने वाली कहते हैं तो फिर यह अश्रुतनिश्चित कैसे मानी जा सकती है, क्योंकि कि श्रुत के अभ्यास के बिना त्रिवर्ग के स्वरूप का समझना संभवित नहीं हो सकता है ।

कठिन कार्योनुं संपादन करवुं ओ कायरोने भाटे दुष्कर होय छे तेथी ते ओज्ज समान होवाथी लार कहेल छे. तेनुं संपादन करवामां दक्ष, तथा, धर्म, अर्थ अने कामना उपार्जनने उपाय दर्शावनार सूत्रो अने तेमना अर्थनो जेना वडे सार ग्रहण करी शकय ओवी, ओटवे के नीतिशास्त्रमां निपुण, तथा आवोड अने परवोडना सुंदर इण देनेारी विनयथी उत्पन्न थयेवी भतिने वैनयिकी भति कहे छे.

शंका—जे आप वैनयिकी भतिने त्रिवर्गना उपायने बतावनारी सूत्र अर्थनो सार ग्रहण करनारी कहे छे तो पछी ते अश्रुतनिश्चित केवी रीते मानी शकय, कारण के श्रुतना अभ्यास बिना त्रिवर्गनां स्वरूपने समझवतुं संभवित होइ शकतुं नथी ?

ઉચ્યતે—ઇહ પ્રાયોવૃત્તિમાશ્રિત્યાશ્રુતનિશ્રુતત્વમુક્તમ્ , અતઃ સ્વલ્પશ્રુતનિશ્રિ-  
તત્વસદ્ભાવેઽપિ ન કોઽપિ દોષઃ ।

તથા—ઉભયલોકફલવતી=ઉભયલોકે-ઇહલોકે પરલોકે ચ, ફલવતી-ફલ-  
દાયિની, વિનયસમુત્થા=વિનયોદ્ભવા વૈનયિકો બુદ્ધિર્ભવતિ ॥ ૧ ॥

સંપ્રતિ શિષ્યાનુગ્રહાર્થં વૈનયિકીમતેઃ સ્વરૂપમુદાહરણૈઃ પ્રદર્શયતિ—

મૂલમ્—ગાહા—નિમિત્તે ૧, અત્થસત્થે ૨, ય, લેહે ૩, ગણિણ ૪,  
ય કૂવ ૫, અસ્સે ૬ ય । ગદ્ધમ ૭, લક્ષણ ૮, ગંઠી ૯,  
અગણ ૧૦, રહિણ ૧૧ ય ગણિયા ૧૨ ય ॥ ૨ ॥

છાયા—નિમિત્તમ્ ૧, અર્થશાસ્ત્રં ૨ ચ, લેખો ૩, ગણિતં ચ ૪, કૂપાશ્વૌ ચ  
૫-૬ । ગદ્ધમ ૭, લક્ષણ ૮, ગ્રન્થ્યગદાઃ ૯-૧૦, રથિકશ્ચ ૧૧, ગણિકા ૧૨ ચા ॥ ૨ ॥

તથા—

ગાહા—સીયા સાડી દીહં ચ તળં, અવસવ્વયં ચ કુંચસ્સ ૧૩ ।

નિવ્વોદણ ૧૪ ય ગોણે, ઘોડગપડણં ચ રુક્ખાઓ ૧૫ ॥ ૩ ॥

છાયા—શીતા શાટી દીર્ઘં ચ તળમ્ અપસવ્વયકં ચ ક્રોશ્વસ્ય ૧૩ ।

નીવ્વોદકં ૧૪ ચ ગૌઃ, ઘોટક-પતનં ( મરણં ) ચ વૃક્ષાત્ ૧૫ ॥ ૩ ॥

ટીકા—‘ નિમિત્તે ’ इत्यादिगाथाद्वयार्थः कथानकेभ्योऽवगन्तव्यः । तानि  
च कथानकानि टीकाऽन्ते द्रष्टव्यानि ॥ २-३ ॥

ઉત્તર—વૈનયિકી બુદ્ધિ મેં જો અશ્રુતનિશ્રિતતા બતલાઈ ગઈ છે તે  
પ્રાયોવૃત્તિ કો આશ્રિત કરકે બતલાઈ ગઈ છે, અર્થાત્ ઇસમેં પ્રાયઃ કરકે  
અશ્રુતનિશ્રિતતા છે, ઇસલિયે થોડે રૂપમેં યદિ શ્રુતનિશ્રિતતા રહતી મી  
છે તો મી ઇસમેં કોઈ દોષ નહીં છે ॥ ૧ ॥

ઉત્તર—વૈનયિકી મતિમા જે અશ્રુતનિશ્રિતતા બતાવવામાં આવી છે તે  
પ્રાયોવૃત્તિને આધારે બતાવાઈ છે, એટલે કે તેમાં પ્રાયઃ અશ્રુતનિશ્રિતતા છે,  
તેથી જો તેમાં થોડા પ્રમાણમાં શ્રુતનિશ્રિતતા પણ હોય તો તેમાં કોઈ  
દોષ નથી. ॥ ગા. ૧ ॥

कर्मजाया बुद्धेर्लक्षणमाह—

मूलम्—गाहा—उवओगदिट्टसारा, कम्मपसंगपरिघोलणविसाला ।  
साहुकारफलवई, कम्मसमुत्था हवइ बुद्धी ॥१॥

गाया—उपयोग दृष्टसारा, कर्मप्रसङ्गपरिघोलनविशाला ।

साधुकार फलवती, कर्मसमुत्था भवति बुद्धिः ॥ १ ॥

टीका—‘उवओगदिट्टसारा’ इत्यादि । उपयोगदृष्टसारा=उपयोगः विवक्षिते कर्मणि मनसोऽभिनिवेशः, तेन दृष्टः सारः=तस्यैव कर्मणः परमार्थो यया, सा उपयोगदृष्टसारा—अभिनिवेशोपलब्धकर्मपरमार्थेत्यर्थः । तथा—कर्मप्रसङ्गपरिघोलन-विशाला—कर्मणि प्रसङ्गः—कर्मप्रसङ्गः, प्रसङ्गोऽभ्यासः, परिघोलनं=विचारः, कर्म-प्रसङ्गपरिघोलनाभ्यां विशाला=विस्तारमुपगता । तथा—साधुकृतं=सुष्ठुकृतमिति वि-द्वद्भिः कृता=प्रशंसा साधुकारः, तेन फलवती=साधुकारपुरस्सरं ज्ञानादिलाभरूपं फलं यस्याः सेत्यर्थः । कर्मसमुत्था=कर्मजा बुद्धिर्भवति ॥ १ ॥

शिष्यानुग्रहार्थमुदाहरणैः कर्मजायाः स्वरूपं वर्णयति—

मूलम्—हेरणिणए १, करिसए २, कोलियं ३, डोवे ४, य मुत्ति ५, घय ६, पवए ७ । तुन्नाए ८, वड्डई ९, य, पूइय १०, घड ११, चित्तकारे १२ य ॥ २ ॥

छाया—हेरण्यकः १ कर्षकः ३, डोवश्च (दर्वीकारश्च) ४ मौक्तिक-घृत-प्लवकाः ५-६-७ । तुन्नागो ८, वड्दकिश्च ९, आपूपिकः १०, घट-चित्रकारौ च ११-१२ ॥ २ ॥

टीका—‘हेरणिणए’ इत्यादि । अस्या अप्यर्थः द्वादशकथानकेभ्योऽवगन्तव्यः । तानि च कथानकानि टीकाऽन्ते द्रष्टव्यानि ॥ २ ॥

अब बारह उदाहरणों द्वारा सूत्रकार इसका स्वरूप प्रतिपादन करते हैं—‘निमित्ते’ इत्यादि । तथा—‘सीया साडी’ इत्यादि ।

इन दोनों गाथाओंके सत्ताईस दृष्टान्तोंका स्पष्टीकरण टीका के अन्तमें है ॥ २-३ ॥

डोवे आर उदाहरणों द्वारा सूत्रकार तेनां स्वइयनुं प्रतिपादन करे छे—

“निमित्ते” इत्यादि. सीया साडी” इत्यादि.

आ अन्ते गाथाओंनां सत्तावीश दृष्टान्तानुं स्पष्टीकरण टीकाने अन्ते आधु छे. ॥ गा. २ ॥ ३ ॥

પારિણામિકયા લક્ષણમાહ—

મૂલમ્—ગાહા--અણુમાણહેડદિઢંતસાહિયા વયવિવાગપરિણામા ।

હિયનિસ્સેયસ ફલવર્ડ, બુદ્ધી પરિણામિયા નામ ॥૧॥

છાયા—અનુમાનહેતુદૃષ્ટાન્ત-સાધિકા, વયો વિપાકપરિણામા ।

હિતનિઃશ્રેયસફલવતી, બુદ્ધિઃ પારિણામિકી નામ ॥ ૧ ॥

ટીકા—‘અણુમાણ૦’ ઇત્યાદિ । અનુમાનહેતુદૃષ્ટાન્તસાધિકા—અનુમાન-મિહ સ્વાર્થમ્ । અનુમાનપ્રતિપાદકં વચો હેતુઃ—પશ્ચાવયવવાક્યરૂપઃ, પરાર્થાનુ-માનમિત્યર્થઃ ।

અવ સૂત્રકાર કર્મજા બુદ્ધિકા સ્વરૂપ વતલાતે હૈં—‘ઉવઓગદિઢ-સારા’ ઇત્યાદિ । જિસ બુદ્ધિકે દ્વારા કર્તવ્ય કર્મ-કાર્ય-કા મનની લગન પૂર્વક અચ્છી તરહસે સાર ગ્રહણ કર લિયા જાતા હૈ, તથા જો બુદ્ધિ, કાર્ય કે અભ્યાસ ઔર ઉસકે વિચારસે વિસ્તારકો પ્રાપ્ત હુઈ હો, એવં જિસ બુદ્ધિસે સંસારમેં પ્રશંસા હો વહ બુદ્ધિ કર્મજા કહલાતી હૈ ॥૧॥

કર્મજા બુદ્ધિકે બારહ ઉદાહરણ કહતે હૈં—‘હેરિણિણ’ ઇત્યાદિ ।

इन बारह दृष्टान्तोंका खुलासा टीकाके अन्तमें है ॥ २ ॥

અવ પારિણામિકી બુદ્ધિકા સ્વરૂપ કહતે હૈં—‘અનુમાણહેડ દિઢંત’ ઇત્યાદિ । અનુમાન, હેતુ એવં દૃષ્ટાન્તકે દ્વારા સાધ્ય અર્થકો સિદ્ધ કરને-વાલી, ઝમરકે અનુસાર પુષ્ટ હોનેવાલી, તથા અભ્યુદય એવં નિઃશ્રેયસરૂપ ફલવાલી બુદ્ધિ પારિણામિકી બુદ્ધિ હૈ ॥ ૧ ॥

હવે સૂત્રકાર કર્મજા મતિનુ સ્વરૂપ બતાવે છે—“ઉવઓગદિઢસારા” ઇત્યાદિ જે મતિ દ્વારા કર્તવ્ય કર્મ-કાર્યનો મનની લીનતા પૂર્વક સારી રીતે સાર ગ્રહણ કરાય છે, તથા જે મતિ કાર્યના અભ્યાસ અને વિચારથી વિસ્તાર પામી હોય; અને જે મતિને લીધે સંસારમાં પ્રશંસા થાય તે મતિને કર્મજા-મતિ કહે છે. ॥ ગા. ૧ ॥

કર્મજામતિનાં બાર ઉદાહરણો કહે છે—“હેરિણિણ” ઇત્યાદિ.

ये बार दृष्टान्तोंनुं स्पष्टीकरण टीकाने अंतें आभ्युं છે. ॥ ગા. ૨ ॥

હવે ચોથી પારિણામિકી મતિનું સ્વરૂપ કહે છે—“અણુમાણહેડદિઢંત”

ઇત્યાદિ. અનુમાન, હેતુ અને દૃષ્ટાન્ત દ્વારા સાધ્ય અર્થને સિદ્ધ કરનારી, ઝમરના પ્રમાણે પુષ્ટ થનારી, તથા અભ્યુદય અને નિઃશ્રેયસરૂપ ફળવાળી મતિને પારિ-ણામિકી મતિ કહે છે. ॥ ગા. ૧ ॥

હદમત્ર બોધ્યમ્—અનુમાનં દ્વિવિધં—સ્વાર્થં પરાર્થં ચ । તત્ર સ્વયમેવ નિશ્ચિતાત્ સાધનાત્ સાધ્યજ્ઞાનં સ્વાર્થાનુમાનમ્ । પરોપદેશમનપેક્ષ્ય સ્વયમેવ નિશ્ચિતાત્ પ્રાક્ તર્કાનુભૂતવ્યાપ્તિસ્મરણસહકૃતાદ્ ધૂમાદેઃ સાધનાદુત્પન્નં પર્વતાદૌ ધર્મિણિ અગ્ન્યાદેઃ સાધ્યસ્ય જ્ઞાનં સ્વાર્થાનુમાનમિત્યર્થઃ । યથા—પર્વતોઽયં વહ્નિમાન્ ધૂમવત્વાદિતિ । અયં હિ સ્વાર્થાનુમાનસ્ય જ્ઞાનરૂપસ્યાપિ શબ્દેનોલ્લેખઃ, યથા ‘અયં ઘટઃ’ ઇતિ શબ્દેન પ્રત્યક્ષસ્યોલ્લેખો ભવતિ ।

અનુમાન સ્વાર્થાનુમાન ઔર પરાર્થાનુમાનકે ભેદસે દો પ્રકારકા બતલાયા ગયા હૈ। યહાં પ્રકૃતમેં સ્વાર્થાનુમાન ગૃહીત હુઆ હૈ। સ્વાર્થાનુમાનકે પ્રતિપાદક જો પંચાવયવરૂપ વચન હૈ વહ હેતુ હૈ। યહ હેતુ પરાર્થાનુમાન હૈ। જહાં પરોપદેશ કી અપેક્ષા વિના હી મનુષ્ય કો સ્વયં નિશ્ચિત કિયે ગયે સાધન સે—જિસ સાધન કા સહાયક પૂર્વકાલીન તર્કાનુભૂત વ્યાપ્તિ કા સ્મરણ હોતા હૈ ઉસસે—સાધ્ય કા જ્ઞાન હોતા હૈ વહ સ્વાર્થાનુમાન હૈ। જૈસે—રસોઈઘર આદિ મેં બાર ૨ ધૂમ ઔર વહ્નિ કે દેખને સે અનુમાતા પુરુષ કો યહ દૃઢ ધારણા બન જાતી હૈ કિ જહાં ૨ ધૂમ હોગા વહાં ૨ અગ્નિ હોગી, કારણ કિ જિતના મી ધૂમ હોતા હૈ વહ અગ્નિ કે વિના ઉત્પન્ન નહીં હોતા। ઇસ તરહ ધૂમ ઔર વહ્નિ કી તર્કસે વ્યાપ્તિ ગ્રહણ કર જબ વહ કિસી પર્વતાદિક ધર્મી મેં ધૂમરૂપ સાધન કો દેખતા હૈ તો ઉસે શીઘ્ર હી પ્રાક્ તર્કાનુભૂત ધૂમ ઔર વહ્નિ કી વ્યાપ્તિ કા સ્મરણ હો આતા હૈ। ઇસકે બલ પર વહ ઉસ ધૂમરૂપ સાધન સે યહ જાન લેતા

અનુમાન સ્વાર્થાનુમાન અને પરાર્થાનુમાનના ભેદથી જે પ્રકારનું દર્શાવ્યું છે. અહીં પ્રકૃતિમાં સ્વાર્થાનુમાન ગ્રહણ કરાયું છે. સ્વાર્થાનુમાનનું પ્રતિપાદક જે પંચાવયવરૂપ વચન છે તે હેતુ છે. આ હેતુ પરાર્થાનુમાન છે. જ્યાં પરોપદેશની અપેક્ષા વિનાજ મનુષ્યને સ્વયં નિશ્ચિત કરેલ સાધનથી જે સાધનનું સહાયક પૂર્વકાલીન તર્કાનુભૂત વ્યાપ્તિનું સ્મરણ થયું છે તે વડે સાધ્યનું જ્ઞાન થાય છે તે સ્વાર્થાનુમાન છે. જેમ કે—રસોડાં આદિમાં વારંવાર ધુમાડો તથા અગ્નિને જોવાથી અનુમાન કરનાર પુરુષને એ મનુષ્યૂત અનુમાન થાય છે કે જ્યાં જ્યાં ધુમાડો હોય ત્યાં ત્યાં અગ્નિ હોય જ, કારણ કે જેટલો ધુમાડો થાય છે તે અગ્નિ વિના ઉત્પન્ન થતો નથી. આ રીતે ધુમાડો અને અગ્નિની તર્કથી વ્યાપ્તિ ગ્રહણ કરીને જ્યારે તે કોઈ પર્વતાદિક ધર્મીમાં ધુમાડારૂપ સાધનને જોવે છે તો તેને તરતજ આગળ તર્કાનુભૂત ધુમાડા તથા અગ્નિની વ્યાપ્તિનું સ્મરણ થઈ આવે છે. તેના આધારે તે ધુમાડારૂપ સાધન વડે એ જાણી લે છે કે આ

પરોપદેશમપેક્ષ્ય સાધ્યજ્ઞાનં, તત્ પરાર્થાનુમાનમ્ । યથા-પર્વતો વહ્નિમાન્ ,  
( પ્રતિજ્ઞા ૧ ), ધૂમાત્, ( હેતુઃ ૨ ), યથા મહાનસમ્ ( દૃષ્ટાન્તઃ ૩ ), તથા ચાયમ્,  
( ઉપનયઃ ૪ ), તસ્માત્ તથા ( નિગમનમ્ ૫ ), इत्यादि पञ्चावयववाक्यं यत्र प्रयु-  
ज्यते, तत् परार्थानुमानम् ।

है कि इस पर्वत में अग्नि है । यदि अग्नि नहीं होती तो यह अवि-  
च्छिन्न शाखावाला धूम जो दिख रहा है वह नहीं दिखता । स्वार्थानु-  
मान यद्यपि ज्ञानरूप होता है परन्तु समझाने के लिये ही वहां वह  
“पर्वतोऽयं वह्निमान् धूमवत्त्वात्” इस रूप से शब्दों द्वारा उल्लिखित  
किया गया है, जैसे प्रत्यक्ष का “अयं घटः ” इस शब्द द्वारा उल्लेख  
किया जाता है । जिस अनुमान में पर के उपदेश की अपेक्षा करके  
साधन से साध्य का ज्ञान होता है वह परार्थानुमान है । जैसे किसी से  
ऐसा जब कहा जाता है कि देखो भाई ! इस पर्वत में अग्नि है, क्यों  
कि धूम उठ रहा है, जैसे-रसोईघर में धूम उठता रहता है तो वहां  
अग्नि रहती है, उसी प्रकार पर्वत में भी ऐसा ही हो रहा है, इसलिये  
यहां भी अग्नि है । यह पञ्चावयव वाक्य है, क्यों कि पर्वत में अग्नि  
का सद्भाव स्थापित किया जा रहा है अतः वह पक्ष है, अग्नि साध्य  
है, पक्ष और हेतु का समुदायरूप कथन प्रतिज्ञा कहलाती है । इसलिये  
‘पर्वत अग्निवाला है’ ऐसा कथन प्रतिज्ञा हुई १ । ‘धूमवत्त्वात्’ यह पंच-  
म्यन्त साधन हुआ २ । महानस दृष्टान्त ३ । पक्षमें हेतु का उपसंहार

પર્વતમાં અગ્નિ છે. જે અગ્નિ ન હોત તો આ અવિચ્છિન્ન શાખાવાળો જે  
ધુમાડો દેખાય છે તે દેખાત નહીં. આ સ્વાર્થાનુમાન જે જ્ઞાનરૂપ હોય છે  
પણ સમજાવવાને માટે જ અહીં તેને “પર્વતોઽયં વહ્નિમાન્ ધૂમવત્ત્વાત્” આ  
રીતે શબ્દ દ્વારા ઉલ્લેખ કરાયો. છે જેવી રીતે પ્રત્યક્ષને “અયં ઘટઃ” આ  
શબ્દ દ્વારા ઉલ્લેખ કરવામાં આવે છે. જે અનુમાનમાં પરોપદેશની અપેક્ષા કરીને  
સાધનથી સાધ્યનું જ્ઞાન થાય છે તે પરાર્થાનુમાન છે. જેમકે જ્યારે કોઈ એવું  
કહે કે જુઓ ભાઈ ! આ પર્વતમાં અગ્નિ છે, કારણ કે ધુમાડો નીકળી રહ્યો છે,  
જેમ-રસોડામાંથી ધુમાડો નીકળતો હોય તો ત્યાં અગ્નિ રહેલ હોય છે, એજ  
પ્રમાણે પર્વતમાં પણ એવું થઈ રહ્યું છે તેથી ત્યાં પણ અગ્નિ છે. આ પચા-  
વયવ વાક્ય છે, કારણ કે પર્વતમાં અગ્નિના સદ્ભાવ સ્થાપિત કરાઈ રહ્યો છે  
તેથી તે પક્ષ છે ૧. અગ્નિ સાધ્ય છે ૨. પક્ષ અને હેતુના સમુદાયરૂપ  
કથનને પ્રતિજ્ઞા કહેવાય છે ૧. ધૂમવત્ત્વાત્ એ પંચમ્યન્ત સાધન થયું ૨.



અથવા-અનુમાન-જ્ઞાપકમ્, હેતુ:-કારકમ્-ઉત્પાદકમ્, દૃષ્ટાન્ત:-દૃષ્ટોઽન્તો-નિર્ણયો વસ્તુતત્ત્વસ્ય યત્ર સ દૃષ્ટાન્ત:-ઉદાહરણમ્, તેપામિતરેતરયોગદ્વન્દ્વઃ, અનુમાનહેતુદૃષ્ટાન્તાસૈઃ સાધિકા, અનુમાનહેતુદૃષ્ટાન્તૈઃ સાધ્યમર્થ સાધયતિ યા સેત્યર્થઃ । તથા-વયોવિપાકપરિણામા-વયઃ=કાલકૃતા દેહાવસ્થા, તસ્ય વિપાકેન=પ્રકર્ષેણ, પરિણામઃ=પુષ્ટતા યસ્યા સા તથા । અપિ ચ હિતનિઃશ્રેયસફલવતી-હિતમ્-અભ્યુદયઃ, તત્કારણં વા, નિઃશ્રેયસં-મોક્ષઃ, તત્કારણં વા, હિતનિઃશ્રેયસાભ્યાં ફલવતી=સફલા, અભ્યુદયમોક્ષસાધિકા યા બુદ્ધિઃ સા પારિણામિકી નામ-નામ્ના પારિણામિકીત્યર્થઃ ॥ ૧ ॥

શિષ્યાનુગ્રહાર્થમુદાહરણૈઃ પારિણામિક્યાઃ સ્વરૂપં દર્શયિતુમાદ—

મૂલમ્—અમણ૧, સિદ્ધિ૨, કુમારે૩, દેવી૪, ઉદિઓદણ હવઈ રાયા ૫ ।  
સાહૂ ય નંદિસેણે ૬, ધણદત્તે ૭, સાવગ ૮, અમચ્ચે ૯ ॥ ૨ ॥

ઉપનય ૪ ઔર સાધ્ય કા ઉપસંહાર નિગમન હુઆ ૫ । ઇસ તરહ શ્રોતા કો પંચાવયવરૂપ વાક્ય દ્વારા જો જ્ઞાન કરાયા જાતા હૈ વહ પરાર્થાનુમાન કહલાતા હૈ ।

અથવા-જો જ્ઞાપક હોતા હૈ વહ અનુમાન ૧, ંવં જો કારક હોતા હૈ વહ હેતુ ૨ । વસ્તુતત્ત્વ કા નિર્ણય જિસમં દેખાં જાતા હૈ વહ દૃષ્ટાન્ત હૈ ૩ । ગાથા મં “અનુમાન-હેતુ-દૃષ્ટાન્ત” યહાં ઇતરેતર દ્વન્દ્વ સમાસ હુઆ હૈ । કાલકૃત દેહાવસ્થા કા નામ વય હૈ । ઇસ તરહ અનુમાન, હેતુ, દૃષ્ટાન્ત દ્વારા સાધ્ય અર્થ કો સિદ્ધ કરને વાલી, વય કે વિપાક કે અનુરૂપ પરિણમનવાલી, ંવં હિત ઔર કલ્યાણરૂપ ફલવાલી બુદ્ધિ કા નામ પારિણામિકી બુદ્ધિ હૈ ૪ ।

મહાનસ દષ્ટાત ૩. પક્ષમાં હેતુનો ઉપસંહાર ૪. અને સાધ્યનો ઉપસંહાર નિગમન થયો ૫. આ રીતે શ્રોતાને પંચાવયવરૂપ વાક્ય દ્વારા જે જ્ઞાન કરાવાય છે તે પરાર્થાનુમાન કહેવાય છે. અથવા (૧) જે જ્ઞાપક હોય છે તે અનુમાન અને (૨) જે કારણ હોય છે તે હેતુ છે. (૩) વસ્તુતત્ત્વનો નિર્ણય જેમાં જેવામાં આવે છે તે દષ્ટાન્ત છે ગાથામાં “અનુમાન-હેતુ-દૃષ્ટાન્ત” અહીં ઇતરેતર દ્વન્દ્વ સમાસ થયો છે. કાલકૃત દેહાવસ્થાનું નામ વય છે. આ રીતે અનુમાન, હેતુ, દષ્ટાન્ત દ્વારા સાધ્ય અર્થને સિદ્ધ કરનારી, વયના વિપાક પ્રમાણે પરિણમનવાળી, અને હિત અને કલ્યાણરૂપ ફળવાળી મતિનું નામ પારિણામિકી મતિ છે ॥૪॥



અમૃત ૧૦, અમૃતપુત્ર ૧૧, ચાણક ૧૨, ચેવ શૂલભદ્ર ૧૩ ચ ।  
નાસિકસુંદરિનંદ ૧૪, વજ્ર ૧૫, પરિણામિયા બુદ્ધી ॥૩॥  
ચલનાહ ૧૬, આમંડે ૧૭, મણીય ૧૮, સર્પ ૧૯,  
ચલગિ ૨૦ શૂભિંદે ૨૧ ।

પરિણામિયબુદ્ધી, એવમાઈ ઉદાહરણા ॥ ૪ ॥

સે તં અસુયનિસ્સિયં ॥ સૂ૦ ૨૬ ॥

છાયા—અમયઃ ૧, શ્રેષ્ઠિકુમારૌ ૨-૩, દેવી ૪, ઉદિતોદયો ભવતિ રાજા ૫ ।

સાધુશ્ચ નન્દિષેણઃ ૬, ધનદત્તઃ ૭, શ્રાવકોઽમાત્યઃ ૮-૯ ॥ ૨ ॥

ક્ષપકોઽમાત્યપુત્રઃ—૧૦-૧૧, ચાણક્યશ્ચૈવ ૧૨, શૂલભદ્રશ્ચ ૧૩ ।

નાસિક્યસુંદરીનન્દઃ ૧૪, વજ્રઃ ૧૫ પારિણામિકી બુદ્ધિઃ ॥ ૩ ॥

ચલનાહ ૧૬, આમંડે—કૃત્રિમ આમલકઃ ૧૭, મણિશ્ચ ૧૮, સર્પશ્ચ ૧૯, ચલગિ ૨૦  
સ્તૂપેન્દ્રઃ ૨૧ । પારિણામિકયા બુદ્ધ્યા એવમાદીન્યુદાહરણાનિ ॥ ૪ ॥

તદેતદશ્રુતનિશ્ચિતમ્ ॥ સૂ૦ ૨૬ ॥

ટીકા—‘અમૃત’ ઇત્યાદિ । આસાં તિસ્રણાં ગાથાનામર્થ એકવિંશતિકથાન-  
કેભ્યોઽવગન્તવ્યઃ । તાનિ ચ કથાનકાનિ ટીકાન્તે દ્રષ્ટવ્યાનિ ॥ ૨-૩-૪ ॥

તદેતદશ્રુતનિશ્ચિતં મતિજ્ઞાનં વર્ણિતમ્ ॥

અથ શ્રુતનિશ્ચિતમતિજ્ઞાનમાહ—

મૂલમ્—સે કિં તં સુયનિસ્સિયં ? । સુયનિસ્સિયં ચત્તવિહં  
પણ્ણત્તં । તં જહા—ઉગ્ગહે, ઈહા, અવાઓ, ધારણા ॥ સૂ૦ ૨૭ ॥

इसके दृष्टान्त इस प्रकार हैं—‘अमृ’ इत्यादि गाथात्रयम् । इन  
तीन गाथाओं के इक्कीस उदाहरणों का खुलासा टीकाके अन्तमें है ॥४॥

इस प्रकार यहां तक अश्रुतनिश्चित मतिज्ञानका वर्णन किया  
गया है ॥ सू० २६ ॥

अब सूत्रकार श्रुतनिश्चित मतिज्ञानका वर्णन करते हैं—‘से किं तं  
सुयनिसिस्सियं ?’ इत्यादि ।

तेनां દૃષ્ટાંતો આ પ્રમાણે છે—‘અમૃ’ ઇત્યાદિ ત્રણ ગાથા. એ ત્રણ ગાથા-  
ઓનાં એકવીસ ઉદાહરણોનું સ્પષ્ટીકરણ ટીકાને અંતે છે ॥૪॥ આ રીતે અહીં  
સુધી અશ્રુતનિશ્ચિત મતિજ્ઞાનનું વર્ણન કર્યું છે ॥ સૂ. ૨૬ ॥

હવે સૂત્રકાર શ્રુતનિશ્ચિત મતિજ્ઞાનનું વર્ણન કરે છે—‘સે કિં તં સુયનિ-  
સ્સિયં ?’ ઇત્યાદિ.

છાયા—અથ કિં તત્ શ્રુતનિશ્ચિતં ? । શ્રુતનિશ્ચિતં ચતુર્વિધં પ્રજ્ઞપ્તમ્ । તદ્  
યથા—અવગ્રહઃ ૧, ઈદા ૨, અવાયઃ ૩, ધારણા ૪ ॥ સૂ૦ ૨૬ ॥

ટીકા—‘ સે કિં તં ’ ઇત્યાદિ । શિષ્યઃ પૂછતિ—અથ કિં તત્ શ્રુતનિશ્ચિ-  
તમિતિ । પૂર્વનિર્દિષ્ટસ્ય શ્રુતનિશ્ચિતસ્ય મતિજ્ઞાનસ્ય કિં સ્વરૂપમિત્યર્થઃ । ઉત્તરમાહ—  
‘ સુચનિસ્સિયં ’ ઇત્યાદિ । શ્રુતનિશ્ચિતં મતિજ્ઞાનં ચતુર્વિધં પ્રજ્ઞપ્તમ્ । તદ્ યથા—અવગ્રહઃ ૧,  
ઈદા ૨, અવાયઃ ૩, ધારણા ૪ । તત્રાવગ્રહણમવગ્રહઃ=સામાન્યાર્થપરિચ્છેદઃ । યદ્  
વિજ્ઞાનં સામાન્યસ્ય શબ્દરૂપરસાદિભિરનિર્દેશ્યસ્વરૂપકલ્પનારહિતસ્ય નામજાત્યાદિ-  
કલ્પનારહિતસ્ય ચ વસ્તુનઃ પરિચ્છેદકમેકસામાયિકં, સોઽવગ્રહઃ, અવ્યક્તં જ્ઞાનમિતિ

શિષ્ય પૂછતા હૈ—હે ભદ્રન્ત ! શ્રુતનિશ્ચિત મતિજ્ઞાનકા કયા સ્વરૂપ  
હૈ ? ઉત્તર—શ્રુતનિશ્ચિત મતિજ્ઞાન ચાર પ્રકારકા હૈ, વૈ ઉસકે ચાર પ્રકાર  
યે હૈ—અવગ્રહ ૧, ઈદા ૨, અવાય ૩, ઓર ધારણા ૪ । વસ્તુકા સામાન્ય  
રૂપસે જ્ઞાન હોના ઇસકા નામ અવગ્રહ હૈ । અવગ્રહ જ્ઞાનસે એસી વસ્તુ  
ગૃહીત હોતી હૈ કિં જિસમેં જબ તક વહ અવગ્રહકે વિષય ભૂતવાલી  
રહતી હૈ તબ તક નામ જાતિ આદિકી કલ્પના નહીં હોતી હૈ । અવગ્રહ  
કા કાલ એક સમય માત્ર હૈ । તાત્પર્ય—નામ જાતિ આદિકી વિશેષ  
કલ્પનાસે રહિત સામાન્ય માત્ર કા જ્ઞાન અવગ્રહ હૈ । જૈસે ગાઢ અંધ-  
કારમેં કુછ દૂર જાને પર ‘ યહ કુછ હૈ ’ એસા જ્ઞાન । ઇસ જ્ઞાનમેં યહ  
નહીં માલૂમ હોતા કિં કિસ चीजका स्पर्श है ?, ઇસ લિયે ઇસ અવ્યક્ત  
જ્ઞાનકા નામ અવગ્રહ હૈ । યહી વાત “ સામાન્યસ્ય શબ્દરૂપરસાદિભિ-  
રનિર્દેશ્યસ્ય ” ઇત્યાદિ પંક્તિયોં દ્વારા સ્પષ્ટ કી ગઈ હૈ । અવગ્રહ જ્ઞાનમેં

શિષ્ય પૂછે છે—હે ભદ્રન્ત ! શ્રુત નિશ્ચિત મતિજ્ઞાનનું શું સ્વરૂપ છે ?

ઉત્તર—શ્રુતનિશ્ચિત મતિજ્ઞાન નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકારનું છે—(૧) અવગ્રહ  
(૨) ઇદા (૩) અવાય અને (૪) ધારણા. વસ્તુનું સામાન્યરૂપથી જ્ઞાન થવું તેનું  
નામ અવગ્રહ છે. અવગ્રહ જ્ઞાનથી એવી વસ્તુ ગ્રહણ થાય છે કે જેમાં બધાં  
સુધી તે અવગ્રહના વિષયભૂત વાળી રહે છે ત્યાં સુધી નામ જાતિ આદિની  
કલ્પના થતી નથી. અવગ્રહનો કાળ માત્ર એક સમય જ છે. તાત્પર્ય—નામ જાતિ  
આદિની વિશેષ કલ્પનાથી રહિત સામાન્ય માત્રનું જ્ઞાન અવગ્રહ છે. જેમ કે  
ગાઢ અંધારામાં કોઈ વસ્તુનો સ્પર્શ થઈ જતાં “ આ કંઈક છે ” એવું જ્ઞાન.  
આ જ્ઞાનમાં એ બાબત પડતી નથી કે કંઈ ચીજનો સ્પર્શ છે ? તેથી આ અવ્યક્ત  
જ્ઞાનનું નામ અવગ્રહ છે. એજ વાત “ સામાન્યસ્ય શબ્દરૂપરસાદિભિરનિર્દેશ્યસ્ય ”

યાવત્ । ईहन्म्-वस्तुनिर्णयार्थं चेष्टा ईहा । नामजात्यादि विशेषकल्पनारहित-  
सामान्यज्ञानोत्तरं विशेषनिश्चयार्थं विचारणा । यथा-स्पर्शनेन्द्रियेण स्पर्शसामान्ये  
ज्ञाते सति, तदनु कीदृशोऽयं स्पर्शः ? कस्यायं स्पर्शः ? किमयं कमलनालस्पर्शः,  
उताहो भुजङ्गमस्पर्शः ? इति गाढान्धकारे चक्षुष्मतोऽपि विचारणा प्रवर्तते ।

ननु संशयस्य ईहायाश्च कः प्रतिविशेषः ? किमयं स्थाणुः आहोश्चित् पुरुषः ?  
तथा किमयं कमलनालस्पर्शः, उत भुजङ्गमस्पर्शः, इत्यनिश्चयात्मकस्य संशयरू-  
पत्वादिति चेत्,

वस्तु, रूप रस आदिके द्वारा अनिर्देश्य होती है, कारण कि यह ज्ञान  
अव्यक्त होता है ? ।

वस्तुके निर्णयके लिये जो चेष्टा होती है उसका नाम ईहा है ।  
अवग्रहके द्वारा नाम जाति आदि विशेष कल्पनासे रहित जो सामान्य  
मात्र ग्रहण किया गया है उसके उत्तरकालमें उसी सामान्यको विशेष-  
रूपसे निश्चित करनेके लिये जो विचारणा होती है वह ईहा ज्ञान है ।  
जैसे स्पर्शन इन्द्रियके द्वारा सामान्य रूपसे स्पर्श गृहीत होने पर ऐसी  
जो विचारणा होती है ‘ यह स्पर्श कैसा है ? किसका है ? क्या कमल-  
नालका है ? अथवा सर्पका है ’ इस प्रकारकी विचारणा गाढ अंधकारमें  
जो सूझते भी मनुष्य होते हैं उन्हें भी हो जाया करती है ।

શક્તા—સંશયમેં ઔર ईहा ज्ञानमें क्या भेद है ? ‘ यह स्थाणु है ?  
या पुरुष है ’ इस प्रकारका जैसे संशय होता है उसी प्रकारका ‘ क्या  
यह कमलनालका स्पर्श है अथवा सर्पका स्पर्श है ’ ऐसा अनिश्चयात्मक

એ પંક્તિઓ દ્વારા સ્પષ્ટ કરેલ છે. અવગ્રહ જ્ઞાનમાં વસ્તુ, રૂપ, રસ આદિ  
દ્વારા અનિર્દેશ્ય હોય છે, કારણ કે આ જ્ઞાન અવ્યક્ત હોય છે. (૧)

વસ્તુના નિર્ણયને માટે જે ચેષ્ટા થાય છે તેનું નામ ઈહા છે. અવગ્રહ દ્વારા  
નામ, જાતિ આદિ વિશેષ કલ્પનાથી રહિત જે સામાન્ય માત્ર ગ્રહણ કરાયેલ  
છે તેના ઉત્તર કાળમાં એજ સામાન્યને વિશેષરૂપે નિશ્ચિત કરવાને માટે જે વિચા-  
રણા થાય છે તે ઈહાજ્ઞાન છે. જેમ સ્પર્શન ઇન્દ્રિય દ્વારા સામાન્યરૂપથી સ્પર્શ-  
ગૃહીત થતાં એવી જે વિચારણા થાય છે કે “ આ સ્પર્શ કેવો છે ? કોનો છે ?  
શું કમળનાળનો છે ? અથવા સર્પનો છે ? ” આ પ્રકારની વિચારણા ગાઢ  
અંધકારમાં જે સૂજતા મનુષ્યો હોય છે તેમને પણ થયા કરે છે.

શંકા—સંશય તથા ઈહા જ્ઞાનમાં શો ભેદ છે ? “ આ સ્થાણુ છે કે પુરુષ  
છે ” આ પ્રકારનો જેમ સંશય થાય છે એજ પ્રમાણે “ શું આ કમળનાળનો

ઉચ્યતે—વસ્તુપ્રતિપત્તિરૂપત્વાદજ્ઞાનાત્મકઃ સંશયઃ । ईहा तु मतिज्ञानभेदः । इदमत्र तत्त्वम्—अवग्रहादुत्तरकालमवायात् पूर्वं सद्भूतार्थविशेषोपादानाभिमुखोऽस-  
द्भूतार्थविशेषपरित्यागाभिमुखश्च वस्तुधर्मविचारणारूपो मतिविशेष ईहा । यथा  
पूर्वं सामान्यतः शब्दे श्रुते सति, तदनु “ प्रायोऽत्र शब्दे मधुरत्वादयः शङ्कादि-  
शब्दधर्मा विद्यन्ते, न तु कर्कशनिष्ठुरतादयो धनुःशब्दधर्माः ” इति विचारणारूपो  
मतिविशेषः । यथा वा—रूपविषये ईहा—कश्चिदस्तंगते सवितरि वने स्थाणुं  
ईहा ज्ञान भी होता है तो फिर इस अनिश्चयात्मक ईहा ज्ञानमें संशय-  
रूपता आनेसे ईहा ज्ञान संशयरूप ही हो गया ।

उत्तर—ऐसा कहना ठीक नहीं है, कारण कि संशयज्ञानमें वस्तु  
की प्रतिपत्ति नहीं होती है इस लिये वह अज्ञानस्वरूप माना गया है,  
ईहा ऐसी नहीं है । कारण वह मतिज्ञानका भेद है । तात्पर्य इसका इस  
प्रकार है, अवग्रहज्ञान के बाद संशय होता है । उस संशयको दूर करने  
के लिये जो प्रयत्न होता है वह ईहा है । जब गाढ अंधकारमें किसी वस्तु  
का स्पर्श होता है तब ऐसा विचार होता है कि—‘ यह स्पर्श कमलनाल  
का है या सांपका है ? ’ यह विचार ही संशय है । इस संशयको दूर  
करनेके लिये जो उत्तरकालमें ऐसा विचार आता है कि ‘ यह स्पर्श  
कमलनालका होना चाहिये, कारण कि यदि सांपका स्पर्श होता तो वह  
ऐसी स्थितिमें फुफकार ’ किये बिना नहीं रहता । बस यही विचारणा ईहा

સ્પર્શ છે કે સર્પનો સ્પર્શ છે ” એવું અનિશ્ચયાત્મક ઇહાજ્ઞાન પછી હોય છે તો  
પછી આ અનિશ્ચયાત્મક ઇહાજ્ઞાનમાં સંશયરૂપતા આવવાથી આ ઇહાજ્ઞાન સંશ-  
યરૂપ થઈ ગયું.

ઉત્તર—એમ કહેવું તે ઉચિત નથી, કારણ કે સંશયજ્ઞાનમાં વસ્તુની  
સમજણ પડતી નથી તેથી તે અજ્ઞાનસ્વરૂપ મનાયું છે, ઇહા એવી નથી. કારણ  
કે તે મતિજ્ઞાનનો ભેદ છે. તેનું તાત્પર્ય આ પ્રમાણે છે—અવગ્રહજ્ઞાન પછી સંશય  
થાય છે. એ સંશયને દૂર કરવાને માટે જે પ્રયત્ન થાય છે તે ઇહા છે. જ્યારે  
ગાઢ અંધકારમાં કોઈ વસ્તુનો સ્પર્શ થાય છે ત્યારે એવો વિચાર થાય છે કે—  
“ આ સ્પર્શ કમળનાળનો છે કે સાપનો છે ” આ વિચાર જ સંશય છે. આ  
સંશયને દૂર કરવાને ઉત્તરકાળમાં જે એવો વિચાર આવે છે કે “ આ સ્પર્શ  
કમળનાળનો હોવો જોઈએ, કારણ કે જો સાપનો સ્પર્શ હોત તો તે એ પરિ-  
સ્થિતિમાં ફુંકાડો કર્યા વિના ન રહેત. ” એમ એજ વિચારણાને ઇહા કહે છે.

દૃષ્ટવાન્, તતસ્તસ્ય વિમર્શઃ સમુત્પન્નઃ-‘કિમયં સ્થાણુઃ પુરુષો વા’ ઇતિ । અયં વિમર્શઃ સંશયરૂપત્વાદજ્ઞાનમ્ । તતોઽસૌ તત્ર સ્થાણૌ વલ્લ્યારોહણં પક્ષિણાં નિલયનં ચ દૃષ્ટ્વા વિચારયતિ-‘સ્થાણુરયં સંભવતિ, વલ્લ્યુત્સર્પણકાકાદિ નિલયનોપલક્ષમાત્ ।

હૈં । इसी बातको टीकाकारने “अवग्रहादुत्तरकालम् अवायात् पूर्वम्” इत्यादि पंक्तियों द्वारा स्पष्ट किया है । इनके द्वारा वे बतला रहे हैं कि अवग्रह-ज्ञानसे उत्तरकालमें और अवायसे पहिले सदभूत अर्थ के उपादानके सन्मुख झुका हुआ और असदभूत अर्थ के परित्यागकी ओर रहा हुआ यह मतिज्ञानका विशेषरूप ईहा-ज्ञान होता है । जैसे-किसी व्यक्तिने पहिले सामान्यरूप से शब्द सुना, सुनने पर ऐसा खयाल होता है कि इस शब्दमें प्रायः मधुरता आदि शंखधर्म विद्यमान हैं, कर्कशता निष्ठुरता आदि धनुष-शब्दके धर्म विद्यमान नहीं हैं, इसलिये यह शंख का शब्द होना चाहिये । अथवा एक व्यक्तिको वनमें सूर्यके अस्त हो जाने पर जब स्थाणुके देखनेसे ऐसा खयाल होता है कि ‘क्या स्थाणु है या पुरुष है’ । इस खयालके होने पर न स्थाणुका निश्चय होता है और न पुरुषका ही, बस यही संशय है, परन्तु जब उसके देखनेमें यह आता है कि यहाँ पर तो वल्लीका आरोहण एवं पक्षियोंके घोसले हैं तो फिर विचारने लगता है कि यह स्थाणु होना चाहिये, क्योंकि इस पर वल्लियों का

એજ વાતને ટીકાકારે “અવગ્રહાદુત્તરકાલમ્ અવાયાત્ પૂર્વમ્” ઇત્યાદિ પંક્તિઓ દ્વારા સ્પષ્ટ કરેલ છે. તેમના દ્વારા તે બતાવે છે કે અવગ્રહ જ્ઞાનના ઉત્તરકાળમાં અને ‘અવાય’ના પહેલાં સદ્ભૂત અર્થના ઉપાદાનની તરફ ઝુકેલ, અને અસદ્ભૂત અર્થના પરિત્યાગની તરફ રહેલ આ મતિજ્ઞાનનું વિશેષરૂપ ઇહાજ્ઞાન હોય છે. જેમ કે-કોઈ વ્યક્તિએ પહેલાં સામાન્યરૂપે શબ્દ સાંભળ્યો, સાંભળતા એવું લાગે છે કે આ શબ્દમાં સામાન્યરીતે મધુરતા આદિ શંખધર્મ વિદ્યમાન છે, કર્કશતા નિષ્ઠુરતા આદિ ધનુષ-શબ્દના ધર્મ વિદ્યમાન નથી, તેથી તે શંખનો અવાજ હોવો જોઈએ. અથવા એક વ્યક્તિને વનમાં સૂર્યાસ્ત થઈ જવાથી જ્યારે સ્થાણુને જોવાથી એવું લાગે છે કે “શું આ સ્થાણુ છે કે પુરુષ છે” આ વિચાર આવતા સ્થાણુનો પણ નિર્ણય થતો નથી અને પુરુષનો પણ નિર્ણય થતો નથી. બસ એજ સંશય છે, પણ જ્યારે તેના જોવામાં એ આવે છે કે અહીંયા તો લતાઓ ચડેલી છે અને પક્ષીઓના માળા પણ છે ત્યારે તે વિચારવા લાગે છે કે આ સ્થાણુ હોવું જોઈએ કારણ કે તેના ઉપર લતાઓ

તથા સંભવસ્ય પર્યાલોચનં કરોતિ-અસ્તાચલાન્તરિતે સવિતરિ ઈષત્તમસિ પ્રસરતિ મહારણ્યેઽસ્મિન્ સ્થાણુરયંસંભાવ્યતે ન તુ પુરુષઃ, શિરઃકણ્ઠ્યનગ્રીવાચલનાદેસ્તદ્વથ-વસ્થાપકહેતોરભાવાદ્, ઈદૃશે ચ પ્રદેશેઽસ્યાં વેલાયાં પ્રાયસ્તસ્યા સંભવાત્ । તસ્માત્ સ્થાણુનાઽત્ર સદ્ભૂતેન ભાવ્યં ન તુ પુરુષેણ । તદુક્તમ્ ।

અરણ્યમેતત્ સવિતાઽસ્તમાગતો,

ન ચાધુના સંભવતીહ માનવઃ ।

પ્રાયસ્તદેતેન સ્વગાદિભાજા,

ભાવ્યં સ્મરારાતિ સમાનનામ્ના ॥ ૧ ॥

વ્યાખ્યા—પૂર્વાર્ધ સ્પષ્ટમ્ । તત્=તસ્માત્, એતેન=દૃશ્યમાનવસ્તુના, પ્રાયઃ સ્મ-રારાતિસમાનનામ્ના-સ્મરસ્ય=કામસ્ય, અરાતિઃ=શત્રુઃ શિવસ્તસ્ય સમાન નામ્ના, સમાનં નામ ‘સ્થાણુ’-રિતિ તેન નામ્ના ભાવ્યમ્ । તત્ર હેતું પ્રદર્શયન્ વિશેષણમાદ-સ્વગાદિભાજેતિ । પશ્યાદિનિવાસયુક્તેનેત્યર્થઃ ॥ ૧ ॥

ચઢના ઓર કૌણ આદિ પક્ષિયોં કે ઘોસલે સ્પષ્ટ દીઘ રહે હૈં । યહાં જબ સૂર્ય અસ્ત હો રહા હૈ ઓર થોડા ૨ અંધકાર છા રહા હૈ તો ઇસ મહારણ્ય મેં યહ સ્થાણુ કી હી સંભાવના હૈ, પુરુષ કી નહીં, કારણ કિ પુરુષ કે સદ્ભાવપક જો શિરકા યુજાના હાથ ગ્રીવા આદિ કા ચલાના આદિ ધર્મ હૈં વે નહીં હો રહે હૈં, અતઃ એસે પ્રદેશ મેં ઇસ સમય પ્રાયઃ મનુષ્ય કે સદ્ભાવના કી સંભાવના નહીં હોતી હૈ, ઇસલિયે યહ સ્થાણુ હી હોના ચાહિયે, પુરુષ નહીં । કહા ખી હૈ—

“અરણ્યમેતત્ સવિતાઽસ્તમાગતો, ન ચાધુના સંભવતીહ માનવઃ ।

પ્રાયસ્તદેતેન સ્વગાદિભાજા, ભાવ્યં સ્મરારાતિસમાનનામ્ના” ॥ ૧ ॥

ચડેલી છે, અને કાગડા વગેરે પક્ષીઓના માળા સ્પષ્ટ દેખાય છે. અહીં જ્યારે સૂર્ય અસ્ત પામી રહ્યો છે અને આછો આછો અંધકાર છવાઈ રહ્યો છે ત્યારે આ મહારણ્યમાં આ સ્થાણુની જ સંભાવના છે, પુરુષની નહીં, કારણ કે પુરુષનું અસ્તિત્વ દર્શાવનાર માથું ખંજવાળવું, હાથ ડોક આદિનું હલનચલન આદિ ધર્મ છે તે જણાતાં નથી, તેથી આવા પ્રદેશમાં આ સમયે સામાન્ય રીતે મનુષ્યના અસ્તિત્વની સંભાવના નથી, તેથી એ સ્થાણુ જ હોવું જોઈએ, પુરુષ નહીં. કહ્યું પણ છે—

“અરણ્યમેતત્ સવિતાઽસ્તમાગતો, ન ચાધુના સંભવતીહ માનવઃ ।

પ્રાયસ્તદેતેન સ્વગાદિભાજા, ભાવ્યં સ્મરારાતિસમાનનામ્ના” ॥ ૧ ॥



एतादृशं ज्ञानम् 'ईहा' इत्युच्यते, निश्चयाभिमुखत्वेन संशयादुत्तीर्णत्वात्, सर्वथा निश्चयेऽवायप्रसङ्गेन निश्चयादधोवर्तित्वाच्चेति संशयेहयोः प्रतिविशेषः ।

यथा वा-‘अयं मनुष्यः’ इत्यवगृहीते सति, तत्र सद्भूतविशेषार्थपर्यालोचनं भवति, यथा तत्र-‘किमयं दाक्षिणात्यः? किं वाऽयमौदीच्यः?’ इति संशयस्य निराकरणार्थं भवति । अयं दाक्षिणात्यो भवितुमर्हति, तद्देशीयवेपादिसमन्वितत्वात्, इति २।

अर्थात्-यह निर्जन अरण्य है, सूर्य भी अस्त हो गया है, इसलिये इस समय यहां मनुष्य की संभावना नहीं है, अतः घोसले और लताओं से युक्त यह स्थाणु ही होना चाहिये ॥ १ ॥

इस श्लोक में जो ‘स्मरारातिसमाननाम्ना’ यह पद है, उसका अर्थ है-स्मराराति=महादेव के नाम सदृश नामवाला अर्थात् स्थाणु ।

इस प्रकार जो वस्तु के निर्णय करने की ओर झुकता हुआ ज्ञान है उसी का नाम ईहा है । संशय में और ईहा में इस तरह भेद हो जाता है-संशय में निर्णय की तरफ झुकाव नहीं है तब कि ईहा में है । ईहा में सर्वथा निश्चय नहीं है । ऐसा निश्चय तो अवायज्ञान में है, इसीलिये ईहा को अवायज्ञान से पहिले माना है । इसी तरह जब अवग्रह-ज्ञान का विषय ‘यह मनुष्य है’ ऐसा होता है तब वहां पर भी सद्भूत विशेष अर्थ की पर्यालोचना होती है जैसे यह मनुष्य दक्षिण का है अथवा उत्तर का है । जब इस प्रकार का अवग्रह के पश्चात् संशयज्ञान होता है तब उसके निराकरण के लिये जो ऐसा ज्ञान होता है कि-‘यह

એટલે કે-આ નિર્જન વન છે, સૂર્ય પણ અસ્ત પામ્યો છે, તેથી આ સમયે અહીં મનુષ્યની સંભાવના નથી, તેથી માળાઓ અને લતાઓથી યુક્ત સ્થાણુ જ હોવું જોઈએ આ શ્લોકમાં જે “સ્મરારાતિ સમાનનામ્ના” એ પદ છે, તેનો અર્થ આ પ્રમાણે છે-સ્મરારાતિ=મહાદેવના નામ સમાન નામવાળું સ્થાણુ. આ રીતે વસ્તુના નિર્ણય કરવાની તરફ ઢળતું જે જ્ઞાન છે તેનું નામ ઈહા છે. સંશયમાં અને ઇહામાં આ રીતે તફાવત પડે છે-સંશયમાં નિર્ણયની તરફ ઝુકવાપણું નથી ત્યારે ઈહા માં છે. ઇહામાં તદ્દન નિશ્ચય નથી. એવો નિશ્ચય તો અવાયજ્ઞાન માં જ છે. તેથી ઈહા ને અવાયજ્ઞાન ની આગળ માનેલ છે. એજ રીતે ત્યારે અવગ્રહ જ્ઞાનનો વિષય “આ મનુષ્ય છે” એવો હોય છે ત્યારે તેમાં પણ સદ્ભૂત વિશેષ અર્થની પર્યાલોચના થાય છે, જેમકે “આ મનુષ્ય દક્ષિણનો છે કે ઉત્તરનો છે” ત્યારે આ પ્રકારના અવગ્રહ પછી સંશયજ્ઞાન થાય છે ત્યારે તેના નિવારણને માટે જે એવું જ્ઞાન થાય છે કે-“એ દક્ષિણ દેશનો હોવો જોઈએ, કારણ કે દક્ષિણદેશમાં



તથા—અવગૃહીતાર્થસ્ય નિર્ણયરૂપોઽધ્યવસાયોઽવાયઃ । અવાયઃ, નિર્ણયઃ, નિશ્ચયઃ, અવગમઃ, इति पर्यायाः । यथा—अयं शब्दः शंखस्यैव, इत्यादिनिश्चयात्मकोऽवबोधोऽवाय इत्युच्यते ३ ।

નિર્ણીતાર્થવિશેષસ્ય ધારણં ધારણા । સા ચ ત્રિધા—અવિચ્ચુતિઃ ૧, વાસના ૨, સ્મૃતિ ૩ શ્ચ । તત્ર તદુપયોગાદવિચ્ચવનમ્—અવિચ્ચુતિઃ । સા ચાન્તર્મુહૂર્તપ્રમાણા ॥૧॥ તતસ્તયા આહિતો યઃ સંસ્કારઃ સા વાસના । સા ચ સંખ્યેયમસંખ્યેયં વા કાલં

દક્ષિણ દેશ કા હોના ચાહિયે, કારણ દક્ષિણ દેશ મેં જિસ પ્રકાર કી વેષભૂષા હોતી હૈ ઉસ પ્રકાર કી વેષભૂષા સે યહ સુસજ્જિત હૈ ।’ તથા અવગ્રહ સે ગૃહીત અર્થ કા નિર્ણયરૂપ જો અધ્યવસાય હૈ વહ અવાય હૈ । જૈસે ‘યહ શબ્દ શંખ કા હી હૈ ।’ અથવા ‘યહ સ્થાણુ હી હૈ’ આદિ । ઇસ પ્રકાર નિશ્ચયાત્મક બોધ કા નામ અવાય હૈ । નિર્ણય, નિશ્ચય, અવગમ, યે સબ અવાય કે હી પર્યાયવાચી શબ્દ હૈ । અવાય—નિશ્ચય—કુછ કાલ તક કાયમ રહતા હૈ ફિર વિષયાન્તર મેં મન ચલા જાતા હૈ ઇસસે વહ નિશ્ચય લુપ્ત હો જાતા હૈ, વહ એસે સંસ્કાર કો ઢાલ જાતા હૈ કિ જિસસે આગે કમી કોઈ યોગ્ય નિમિત્ત મિલને પર ઉસ નિશ્ચિત વિષય કા સ્મરણ હો આતા હૈ । ઇસ નિશ્ચય કી સતત ધારા, તત્ત્વજન્યસંસ્કાર ઔર સંસ્કારજન્ય સ્મરણ, મતિ કે યે સબ વ્યાપાર ધારણા હૈ । ઇસી વાત કા ખુલાસા કરતે હુએ ટીકાકાર કહતે હૈ કિ—નિર્ણીત અર્થવિશેષ કા ધારણ હી ધારણા હૈ । ઇસ ધારણા કે અવિચ્ચુતિ, વાસના ઔર સ્મૃતિ, ઇસ તરહ ત્રીન ભેદ હૈ । અવાયદ્વારા નિશ્ચિત અર્થ

જે જાતનો પહેરવેશ હોય છે તે પ્રકારનો પહેરવેશ તેણે ધારણ કરેલ છે” તથા અવગ્રહથી ગ્રહણ કરેલ અર્થના નિર્ણયરૂપ જે અધ્યવસાય (પ્રયત્ન) છે તે અવાય છે. જેમ કે “આ શબ્દ શંખનો જ છે” અથવા “આ સ્થાણુ જ છે” આદિ. આ રીતે નિશ્ચયાત્મક બોધનું નામ અવાય છે. નિર્ણય, અવગમ, એ બધા અવાય નાંજ પર્યાયવાચી શબ્દો છે અવાય—નિશ્ચય કેટલોક સમય સુધી કાયમ રહે છે પછી મન વિષયાન્તરમાં ચાલ્યું જાય છે, તેથી તે નિશ્ચયનો લોપ થાય છે, પણ તે એવા સંસ્કાર મૂકી જાય છે કે જેથી આગળ કોઈ યોગ્ય નિમિત્ત મળતાં તે નિશ્ચિત વિષયનું સ્મરણ થઈ આવે છે. “આ નિશ્ચયની સતત ધારા, તેનાથી જનિત સંસ્કાર અને સંસ્કારજનિત સ્મરણ” મતિના એ સઘળા વ્યાપાર ધારણા છે. એજ વાતનું સ્પષ્ટીકરણ કરતા ટીકાકાર કહે છે કે—નિર્ણીત અર્થવિશેષનું ગ્રહણ જ ધારણા છે. આ ધારણાનાં આ રીતે ત્રણ

યાવદ્भवति ॥ ૨ ॥ તતઃકાલાન્તરે કુતશ્ચિત્ તાદૃશાર્થદર્શનાદિકારણાત્ સંસ્કારસ્યો-  
દ્વોધે યદ્ જ્ઞાનમુદયતે, યથા ‘તદેવેદં યન્મયા પ્રાગુપલબ્ધમ્’ इत्यादिरूपं सा स्मृतिः  
॥ ૩ ॥ एताश्च-अविच्युति-वासना-स्मृतयो धारणालक्षणसामान्यान्वर्थयोगाद्  
धारणाशब्दवाच्याः । उक्तंच—

“तयणंतरं तयत्था-ऽविच्चवणं जो य वासणा जोगो ।

कालंतरे य जं पुण, अणुसरणं धारणा सा उ” ॥१॥

છાયા—તદનન્તરં તદર્થાવિચ્ચવનં યથ વાસનાયોગઃ ।

કાલાન્તરે ચ યત્ પુનરનુસ્મરણં ધારણા સા તુ ॥ ૧ ॥

મેં અવાય કે બાદ જબતક ઉપયોગ કી ધારા કાયમ રહતી હૈ, इसका  
नाम अविच्युति है । अविच्युति का काल अन्तर्मूहूर्त का है । इस अवि-  
च्युति से जो संस्कार आत्मा में स्थापित कर दिया जाता है उसका नाम  
वासना है । वासना संख्यात असंख्यात काल तक रहती है । इस वासना  
से यह बात होती है कि कालान्तर में किसी तादृश अर्थ के देखनेरूप  
कारण से संस्कार की उद्भूति हो जाती है । उससे ऐसा ज्ञान होता है  
कि यह वस्तु वही है कि जिसको मैंने पहिले देखा था । इस तरह का  
ज्ञान ही स्मृति है । अविच्युति, वासना और स्मृति, इन तीनों में धारणा  
का सामान्य लक्षण रहता है, इसलिये ये तीनों भेद धारणास्वरूप माने  
गये हैं । कहा भी है—

“तयणंतरं तयत्थाऽविच्चवणं जो य वासणा जोगो ।

कालंतरे य जं पुण, अणुसरणं धारणा सा उ” ॥ १ ॥

લેદ છે-(૧) અવિચ્યુતિ (૨) વાસના અને (૩) સ્મૃતિ. ‘અવાય’ દ્વારા નિશ્ચિત  
અર્થમાં અવાયની પછી જ્યાં સુધી ઉપયોગની ધારા કાયમ રહે છે, તેનું નામ  
અવિચ્યુતિ છે. અવિચ્યુતિનો કાળ અન્તર્મૂહૂર્તનો છે. આ અવિચ્યુતિ વડે જે  
સંસ્કાર આત્મામાં સ્થાપિત કરાય છે તેનું નામ વાસના છે. સંખ્યાત અસંખ્યાત  
કાળ સુધી રહે છે. આ વાસનાથી એ વાત બને છે કે કાલાન્તરે કોઈ તાદૃશ  
અર્થને દેખવારૂપ કારણે સંસ્કારની ઉત્પત્તિ થઈ જાય છે. તેનાથી એવું જ્ઞાન  
થાય છે કે આ વસ્તુ એજ છે કે જેને મેં પહેલાં જોઈ હતી. આ પ્રકારનું  
જ્ઞાન જ સ્મૃતિ છે. અવિચ્યુતિ, વાસના અને સ્મૃતિ, એ ત્રણેમાં ધારણાનું સામાન્ય  
લક્ષણ રહે છે, તેથી તે ત્રણે લેદ ધારણાસ્વરૂપ માનવામાં આવ્યા છે. કહ્યું પણ છે—

“તયણતરં તયત્થાઽવિચ્ચવણં જોય વાસણા જોગો ।

કાલં તરે ય જં પુણ, અણુસરણં ધારણા સા ઉ” ॥૧॥

વ્યાખ્યા—તસ્માદવાયાદનન્તરં—તદનન્તરં યત્ તદર્થોદવિચ્ચવનમ્—ઉપયોગ-  
માશ્રિત્યાભ્રંશઃ ॥૧॥ તથા યથ્ જીવેન સહ વાસનાયા યોગઃ—સમ્બન્ધઃ ॥૨॥ તથા  
યચ્ચ તસ્યાર્થસ્ય કાલાન્તરે પુનરિન્દ્રિયૈરુપલબ્ધસ્ય, તથૈવ—ઇન્દ્રિયૈરનુપલબ્ધસ્ય વા મન-  
સાઽનુસ્મરણં—સ્મૃતિર્ભવતિ ॥૩॥ સેયં ત્રિવિધાઽપ્યર્થસ્યાવધારણરૂપા ધારણા વિજ્ઞેયા ।  
અયં ભાવાર્થઃ—અવાયેન નિશ્ચિતેઽર્થે તદનન્તરં યાવદદ્યાપિ તદર્થોપયોગઃ સાતત્યેન  
વર્તતે, ન તુ તસ્માન્નિવર્તતે તાવત્ તદર્થોપયોગાદવિચ્ચુતિર્નામ, સા ધારણાયાઃ  
પ્રથમભેદો ભવતિ ૧ । તતસ્તસ્યાર્થોપયોગસ્ય યદાવરણં કર્મ તસ્ય ક્ષયોપશમેન જીવો  
યુજ્યતે, યેન કાલાન્તરે ઇન્દ્રિયવ્યાપારાદિસામગ્રીવશાત્ પુનરપિ તદર્થોપયોગઃ  
સ્મૃતિરૂપેણ પ્રાદુર્ભવતિ, સા ચેયં તદાવરણક્ષયોપશમરૂપા વાસના નામ દ્વિતીયસ્ત-  
દ્ભેદો ભવતિ ૨ । કાલાન્તરે ચ વાસનાવશાત્ તદર્થસ્યેન્દ્રિયૈરુપલબ્ધસ્ય, અથવા  
તૈરનુપલબ્ધસ્યાપિ મનસિ યા સ્મૃતિરાવિર્ભવતિ, સા તૃતીયસ્તદ્ભેદ ૩ ઇતિ । एवं  
ત્રિભેદા ધારણા વિજ્ઞેયા । इह तु शब्दोऽवग्रहादिभ्यो विशेषद्योतनार्थः ॥૧॥ સૂ૦૨૬॥

॥ ઇતિ શ્રુતનિશ્ચિતમતિજ્ઞાનભેદાઃ ॥

इस गाथा का अर्थ इस प्रकार है—अवाय के बाद अवायगृहीत अर्थ  
में उपयोग की अपेक्षा को लेकर जो उपयोग की धारा का अविच्यवन  
होता है १ । तथा जीव के साथ वासना का जो संबंध होता है २ ।  
पश्चात् कालान्तर में इन्द्रियों द्वारा उपलब्ध होने पर अथवा नहीं होने  
पर मन से जो उस अर्थ की स्मृति होती है २ । इस तरह त्रिविधरूप  
से जो अर्थ का अवधारण होता है वही धारणा है ।

भावार्थ इस का इस प्रकार है—अवाय के द्वारा निश्चित हुए पदार्थ  
में उसके बाद जबतक निरन्तर उस पदार्थ का जो उपयोग बना रहता  
है सो इस उपयोग का बना रहना ही अविच्युति है । यह धारणा का

આ ગાથાનો અર્થ આ પ્રમાણે છે—(૧) ‘અવાય’ પછી અવાયગૃહીત  
અર્થમાં ઉપયોગની અપેક્ષાને લઈને જે ઉપયોગની ધારાનું અવિચ્ચવન થાય છે.  
તથા (૨) જીવની સાથે વાસનાનો જે સંબંધ થાય છે, (૩) પછી કાલાન્તરે  
ઇન્દ્રિયો દ્વારા ઉપલબ્ધ થતા અથવા ન થતા મન વડે તે અર્થની જે સ્મૃતિ  
થાય છે, આ રીતે ત્રિવિધરૂપે જે અર્થનું અવધારણ થાય છે એજ ધારણા છે.

તેનો ભાવાર્થ આ પ્રમાણે છે—અવાયદ્વારા નિશ્ચિત થયેલ પદાર્થમાં તેના  
પછી જ્યાં સુધી નિરંતર તે પદાર્થનો જે ઉપયોગ કાયમ રહે છે તે ઉપયોગનું  
કાયમ રહેવું તે અવિચ્ચુતિ છે. આ ધારણાનો પહેલો ભેદ છે ૧. આ અર્થો-

॥ અથ અવગ્રહભેદનિરૂપણમ્ ॥

મૂલમ્—સે કિં તં ઉગ્ગહે ? । ઉગ્ગહે દુવિહે પળ્લત્તે; તં જહા-  
અત્થુગ્ગહે ય, વંજણુગ્ગહે ય ॥૦ ૨૭ ॥

છાયા—અથ કઃ સોડ્વગ્રહઃ ? । અવગ્રહો દ્વિવિધઃ પ્રજ્ઞપ્તઃ । તદ્ યથા અર્થાવગ્રહ,  
વ્યક્તનાવગ્રહશ્ચ ॥ સૂ. ૨૭ ॥

ટીકા—‘ સે કિં તં ઉગ્ગહે ’ ઇત્યાદિ ।

અથ કઃ સોડ્વગ્રહઃ—અવગ્રહસ્ય કિ સ્વરૂપમિતિ શિષ્યપ્રશ્નઃ । ઉત્તરમાદ—  
‘ ઉગ્ગહે દુવિહે ’ ઇત્યાદિ । અવગ્રહો દ્વિવિધઃ પ્રજ્ઞપ્તઃ । તદ્ યથા—અર્થાવગ્રહઃ,

પ્રથમ ભેદ હૈ ૧ । इस अर्थोपयोग का जो आवरण करने वाला कर्म है  
उसका क्षयोपशम होना यह वासना है । वासना के बल पर ही कालान्तर  
में जीव उस अर्थ के उपयोग से वासित बना रहता है, और उस  
पदार्थ की स्मृति किया करता है यह वासना धारणा का द्वितीय भेद  
है २ । कालान्तर में जब उस दृष्ट पदार्थ के साथ इन्द्रियों का संबंध  
होता है अथवा नहीं होता तब भी जीव मन में जो उस पदार्थ का स्मरण  
करता है यह स्मृति धारणा का तृतीय भेद है ३ । इसका फलितार्थ  
केवल इतना ही है कि अवाय के बाद उस दृष्ट पदार्थ का आत्मा में  
जो उपयोग बना रहता है वह अविच्युति १, और इस अविच्युति से  
उसके आवारक कर्मका क्षयोपशम होना यह वासना २, और वासना  
के बल पर उस पदार्थ का स्मरण होना यह स्मृति है ३ । इस प्रकार  
से धारणा के तीन भेद हैं । इस तरह ये श्रुतनिश्चित मतिज्ञान के  
भेद हैं ॥ सू. २६ ॥

પયોગનું જે આવરણ કરનાર કર્મ છે તેનો ક્ષયોપશમ થવો તે વાસના છે.  
વાસનાના બળે જ કાળાન્તરે જીવ તે અર્થના ઉપયોગથી વાસિત બની રહે છે,  
અને એ પદાર્થની સ્મૃતિ કર્યા કરે છે. આ વાસના ધારણાનો બીજો ભેદ છે ૨.  
કાલાન્તરે જ્યારે તે જોયેલ પદાર્થની સાથે ઇન્દ્રિયોનો સંબંધ થાય છે કે થતો  
નથી ત્યારે પણ જીવ મનમાં એ પદાર્થનું જે સ્મરણ કરે છે એ સ્મૃતિ ધારણાનો  
ત્રીજો ભેદ છે ૩. તેનું તાત્પર્ય ક્ષત એટલું જ છે કે—(૧) અવાયની પછી તે  
જોયેલ પદાર્થનો આત્મામાં જે ઉપયોગ કાયમ રહે છે તે અવિચ્યુતિ, અને (૨)  
તે અવિચ્યુતિથી તેનું આવરણ કરનાર કર્મોનો ક્ષયોપશમ થવો તે વાસના,  
અને (૩) વાસનાને બળે તે પદાર્થનું સ્મરણ થવું તે સ્મૃતિ છે. આ રીતે ધાર-  
ણાના ત્રણ ભેદ છે. આ રીતે એ શ્રુતનિશ્ચિત મતિજ્ઞાનના ભેદ છે ॥સૂ. ૨૬॥

વ્યજ્ઞનાવગ્રહશ્ચેતિ । અર્થસ્યવસ્તુનોઽવગ્રહઃ—અવગ્રહણં સામાન્યજ્ઞાનમ્, અર્થાવગ્રહઃ, રૂપાદિસકલવિશેષનિરપેક્ષાઽનિર્દેશ્યસામાન્યમાત્રાર્થગ્રહણમેકસામક્રિયમિતિ ભાવાર્થઃ ॥૧॥ તથા—અર્થો વ્યજ્ઞયતે=પ્રકટીક્રિયતે ડનેન, ઘટઃ પ્રદીપેનેવેતિ વ્યજ્ઞનમ્ । તત્ત્વોપકરણેન્દ્રિયસ્ય શ્રોત્રાદેઃ શબ્દાદિપરિણતદ્રવ્યાણાં ચ પરસ્પરં સમ્બન્ધઃ, યતઃ સમ્બન્ધે સતિ સોઽર્થઃ શબ્દાદિરૂપઃ શ્રોત્રાદીન્દ્રિયેણ વ્યજ્ઞયિતું=જ્ઞાપયિતું શક્યતે, નાન્યથા, તતશ્ચ સમ્બન્ધો વ્યજ્ઞનમ્ । વ્યજ્ઞનેન=

અવ સૂત્રકાર અવગ્રહ કે ખેદોં કા નિરૂપણ કરતે હૈં—‘સે કિં તં ઝગ્ગહે’ ઇત્યાદિ ।

શિષ્ય પૂછતા હૈ—પૂર્વનિર્દિષ્ટ અવગ્રહ કા કયા સ્વરૂપ હૈ? ઉત્તર—અવગ્રહ દો પ્રકાર કા બતલાયા ગયા હૈ । અર્થાવગ્રહ ઓર વ્યજ્ઞનાવગ્રહ । જિસમેં વસ્તુ કા સામાન્યજ્ઞાન હોતા હૈ વહ અર્થાવગ્રહ હૈ । ઇસમેં રૂપાદિક સકલ વિશેષોં સે નિરપેક્ષ એસે અનિર્દેશ્ય સામાન્ય માત્ર અર્થ કા ગ્રહણ હોતા હૈ । ઇસકા કાલ એક સમય હૈ ૧ । જિસ પ્રકાર પ્રદીપ સે ઘટ પટાદિક અર્થોં કી અભિવ્યક્તિ હોતી હૈ ઊસી પ્રકાર જિસકે દ્વારા અર્થકી વ્યજ્ઞના-અભિવ્યક્તિ હોતી હૈ વહ વ્યજ્ઞન હૈ । યહ વ્યજ્ઞન ઉપકરણેન્દ્રિય જો શ્રોત્ર આદિક હૈં ઊનકા ઓર ઊનકે વિષયભૂત શબ્દાદિકોંકા પરસ્પર સમ્બન્ધ-સ્વરૂપ માના ગયા હૈ । અર્થાત્—ઉપકરણેન્દ્રિયકા વિષયકે સાથ સમ્બન્ધ હોના યહ વ્યજ્ઞન હૈ । ઇન્દ્રિય ઓર પદાર્થોં કા સમ્બન્ધ હોને પર હી ઇન્દ્રિયોંકા શબ્દાદિરૂપ વિષય, શ્રોત્રાદિક ઇન્દ્રિયોંદ્વારા જ્ઞાપિત ક્રિયા જા સકતા હૈ, અન્યથા નહીં, અતઃ સમ્બન્ધકા નામ વ્યજ્ઞન હૈ । ઇન્દ્રિય

હવે સૂત્રકાર અવગ્રહના લેહોનું નિરૂપણ કરે છે—“સે કિં તં ઝગ્ગહે” ઇત્યાદિ. શિષ્ય પૂછે છે—પૂર્વનિર્દિષ્ટ અવગ્રહનું શું સ્વરૂપ છે?

ઉત્તર—અવગ્રહ બે પ્રકારના દર્શાવ્યા છે—અર્થાવગ્રહ અને વ્યજ્ઞનાવગ્રહ જેમાં વસ્તુનું સામાન્ય જ્ઞાન થાય છે તે અર્થાવગ્રહ છે તેમાં રૂપાદિક સમસ્ત વિશેષાથી નિરપેક્ષ એવા અનિર્દેશ્ય સામાન્ય માત્ર અર્થનું ગ્રહણ થાય છે. તેનો કાળ એક સમય છે ૧. જે પ્રકારે દીવા વડે ઘટ, પટ આદિ અર્થોની અભિવ્યક્તિ થાય છે એજ રીતે જેના દ્વારા અર્થની વ્યજ્ઞના-અભિવ્યક્તિ થાય છે તે વ્યજ્ઞન છે, તે વ્યજ્ઞન શ્રોત્ર આદિ ઉપકરણેન્દ્રિયો અને તેમના વિષયભૂત શબ્દાદિનું પરસ્પર સંબંધસ્વરૂપ માનવામા આવેલ છે. એટલે કે ઉપકરણેન્દ્રિયનો વિષયની સાથે સંબંધ થવો તે વ્યજ્ઞન છે. ઇન્દ્રિય અને પદાર્થોનો સંબંધ થતા જ ઇન્દ્રિયોનો શબ્દાદિ રૂપ વિષય, શ્રોત્રાદિક ઇન્દ્રિયો-દ્વારા જાણી શકાય છે, ખીણ રીતે નહીં, તેથી સંબંધનું નામ વ્યજ્ઞન છે.

સમ્બન્ધેન અવગ્રહણં-સમ્બન્ધમાનસ્યશબ્દાદિ રૂપસ્યાર્થસ્યાવ્યક્તરૂપઃ પરિચ્છેદો વ્યજ્ઞનાવગ્રહઃ, અથવા વ્યજ્યન્તે=જ્ઞાયન્તે इति વ્યજ્ઞનાનિ, શબ્દાદિરૂપા અર્થાઃ, તેષામુપકરણેન્દ્રિયસંપ્રાપ્તાનામવગ્રહઃ=અવ્યક્તરૂપઃ પરિચ્છેદો વ્યજ્ઞનાવગ્રહઃ । અથવા -અર્થો વ્યજ્યતેऽનેન, ઘટઃ પ્રદીપેન ઇવેતિ વ્યજ્ઞનમ્-ઉપકરણેન્દ્રિયં, તેન સ્વસમ્બ-દ્ધસ્યાર્થસ્ય શબ્દાદેરવગ્રહણમ્ અવ્યક્તરૂપઃ પરિચ્છેદો વ્યજ્ઞનાવગ્રહઃ । ઉપકરણે-

और पदार्थके संबंधरूप व्यञ्जन द्वारा जो शब्दादिकरूप अर्थका सर्वप्रथम अति-अल्प मात्रामें अवग्रह-परिच्छेद होता है वह व्यञ्जनावग्रह है । तात्पर्य यह है कि-प्रारम्भमें ज्ञानकी मात्रा इतनी अल्प होती है कि उससे “यह कुछ है” ऐसा सामान्य बोध भी नहीं होने पाता है, इसी का नाम अव्यक्त परिच्छेद है, और यही व्यञ्जनावग्रह है । अथवा-“व्य-ज्यन्ते-ज्ञायन्ते इति व्यञ्जनानि-शब्दादिरूपाः” अर्थात्-इस व्युत्पत्तिके अनुसार व्यञ्जनका अर्थ शब्दादिकरूप अर्थ है, क्योंकि वे ही अव्यक्त-रूपसे व्यञ्जित किये जाते हैं । इस तरह इन व्यञ्जनोंका उपकरणेन्द्रियों के विषयभूत होने पर जो अव्यक्तरूपसे ग्रहण होता है वह व्यञ्जनावग्रह है । अथवा-“अर्थो व्यज्यते=प्रकटी क्रियतेऽनेन घटः प्रदीपेनेवेति व्य-ज्जनम्” इस व्युत्पत्तिके अनुसार व्यञ्जन शब्द का अर्थ उपकरण-इन्द्रिय भी होता है, कारण कि उपकरण-इन्द्रियके द्वारा शब्दादिक विषयरूप अर्थ अव्यक्तरूपसे ग्रहण किये जाते हैं । यही व्यञ्जनावग्रह है । उपक-

ઈન્દ્રિય અને પદાર્થના સંબંધરૂપ વ્યંજન દ્વારા જે શબ્દાદિક રૂપ અર્થનો સર્વપ્રથમ અતિઅલ્પમાત્રામાં અવગ્રહ-પરિચ્છેદ થાય છે તે વ્યંજનાવગ્રહ છે. તાત્પર્ય એ કે-પ્રારંભમાં જ્ઞાનાની માત્રા એટલી ઓછી હોય છે કે તેના વડે “આ કંઈક છે” એવો સામાન્ય બોધ પણ થવા પામતો નથી, એવું જ નામ અવ્યક્ત પરિચ્છેદ છે, અને એજ વ્યંજનાવગ્રહ છે. અથવા-“વ્યજ્યન્તે-જ્ઞાયન્તે इति વ્યજ્જનાનિ-શબ્દાદિ રૂપાઃ” એટલે કે આ વ્યુત્પત્તિપ્રમાણે વ્યંજનનો અર્થ શબ્દા-દિકરૂપ અર્થ છે, કારણ કે તેમને જ અવ્યક્તરૂપે વ્યંજિત કરાય છે. આ રીતે એ વ્યંજનોનું ઉપકરણેન્દ્રિયોને વિષયભૂત થઈને જે અવ્યક્તરૂપે ગ્રહણ થાય છે તે વ્યંજનાવગ્રહ છે. અથવા-“અર્થો વ્યજ્યતે=પ્રકટી ક્રિયતેऽનેન ઘટઃ પ્રદીપેને-વેતિ વ્યજ્જનમ્” આ વ્યુત્પત્તિ પ્રમાણે વ્યંજન શબ્દનો અર્થ ઉપકરણ ઇન્દ્રિય



ન્દ્રિય-શબ્દાદ્યર્થસમ્બન્ધે સતિ પ્રથમસમયાદારમ્ય, અર્થાવગ્રહાત્ પ્રાક્ યા સુષ્-  
મત્તમૂર્ચ્છિતાદિપુરુષાણામિવ શબ્દાદિદ્રવ્યસમ્બન્ધમાત્રવિષયા કાચિદવ્યક્તા જ્ઞાનમાત્રા  
સા વ્યજ્ઞનાવગ્રહઃ । સ ચાન્તર્મુહૂર્તપ્રમાણઃ ।

નનુ—વ્યજ્ઞનાવગ્રહકાલે કિમપિ સંવેદનં ન સંવેદ્યતે, તત્ કથમસૌ જ્ઞાનરૂપઃ  
સ્યાત્ ?, ઉચ્યતે—અવ્યક્તત્વાન્ન સંવેદ્યતે, તતો ન કશ્ચિદ્દોષઃ । તથાહિ—યદિ પ્રથમ-  
સમયેઽપિ શબ્દાદિપરિણતદ્રવ્યરૂપકરણેન્દ્રિયસ્ય સંબન્ધે કાચિદપિ જ્ઞાનમાત્રા ન  
ભવેત્, તતો દ્વિતીયેઽપિ સમયે ન ભવેત્ વિશેષાભાવાત્ । યાવચ્ચરમસમયેઽપિ ।  
અથ યદિ ચરમસમયે જ્ઞાનમર્થાવગ્રહરૂપં જાયમાનમુપલભ્યતે, તદા પ્રાગપિ ક્વાપિ  
કિયતી જ્ઞાનમાત્રા ભવતીતિ મન્તવ્યમ્ ।

રણ—ઇન્દ્રિયકા શબ્દાદિકરૂપ અપને વિષયકે સાથ સમ્બન્ધ હોનેપર પ્રથમ  
સમયસે લે કર અર્થાવગ્રહકે પહિલે ૨ જો ઉનકા બહુત હી કમ અલ્પ  
માત્રામેં જ્ઞાન હોતા હૈ, જૈસે—સુષ્, મત્ત એવં મૂર્ચ્છિત વ્યક્તિયોંકો પદાર્થ  
કા સમ્બન્ધ હોને પર અરૂપ માત્રામેં અવ્યક્ત બોધ હોતા હૈ ઉસકા નામ  
વ્યજ્ઞનાવગ્રહ હૈ । ઇસકા કાલ અન્તર્મુહૂર્તકા હૈ ।

શઙ્કા—વ્યજ્ઞનાવગ્રહકે સમયમેં જવ “યહ કુછ હૈ” એસા સામાન્ય  
બોધ બી નહીં હોને પાતા હૈ તો ફિર ઉસકો જ્ઞાનરૂપ ક્યોં કહા ? અર્થાત્  
જવ વ્યજ્ઞનાવગ્રહકે કાલમેં જ્ઞાનકા થોડાસા બી સંવેદન-અનુભવન નહીં  
હોતા હૈ તો ફિર વહ જ્ઞાનરૂપ કૈસે માના જા સકતા હૈ કિ જિસસે યહ  
મતિજ્ઞાનકા એક ભેદરૂપ માના જા સકે ? ।

દ્વારા શબ્દાદિક વિષયરૂપ અર્થ અવ્યક્તરૂપે ગ્રહણ થાય છે. એજ વ્યજ્ઞનાવગ્રહ  
છે. ઉપકરણ ઇન્દ્રિયનો શબ્દાદિક રૂપ પોતાના વિષયની સાથેસંબંધ થતા  
પ્રથમ સમયથી લઈને અર્થાવગ્રહના પહેલાં જે તેમનું બહુજ થોડાં પ્રમાણમાં  
જ્ઞાન થાય છે, જેમકે સુષ્, મત્ત અને મૂર્ચ્છિત વ્યક્તિઓને પદાર્થનો સંબંધ  
થતા થોડાં પ્રમાણમાં અવ્યક્ત બોધ થાય છે તેનું નામ વ્યજ્ઞનાવગ્રહ છે. તેનો  
કાળ અન્તર્મુહૂર્તનો છે.

શંકા—વ્યજ્ઞનાવગ્રહના સમયે જ્યારે “આ કંઈક છે” એવો સામાન્ય  
બોધ પણ થવા પામતો નથી. તો પછી તેને જ્ઞાનરૂપ કેમ કહ્યું ? એટલે કે જે  
વ્યજ્ઞનાવગ્રહના સમયે જ્ઞાનનું થોડું પણ સંવેદન (અનુભવ) થતું નથી તો  
પછી એ જ્ઞાનરૂપ કેવી રીતે માની શકાય કે જેથી તે મતિજ્ઞાનના એક ભેદરૂપ  
માની શકાય ?



ઉત્તર—વ્યક્તનાવગ્રહમેં જ્ઞાનકી માત્રા અતિ અલ્પ હૈ—અવ્યક્ત હૈ, ઇસ લિયે ઇસકા સંવેદન નહીં હોતા હૈ । સંવેદન ન હોનેસે ઇસમેં જ્ઞાનરૂપતા કા અભાવ નહીં આ સકતા હૈ । યદિ ઇસમેં જ્ઞાનાંશરૂપતા ન હોવે અર્થાત પ્રથમ સમયમેં ભી શબ્દાદિરૂપસે પરિણત દ્રવ્યોંકે સાથ ઉપકરણ-ઇન્દ્રિય કા સમ્બન્ધ હોને પર વ્યક્તનાવગ્રહ અનિર્વચનીય થોડી સી ભી જ્ઞાનમાત્રા નહીં સ્વીકૃત કી જાવે—તો ફિર દ્વિતીય સમયમેં ભી જ્ઞાનમાત્રા નહીં હોની ચાહિયે । ઇસ તરહ અન્તિમ સમયમેં ભી જ્ઞાન નહીં હોગા, અતઃ અર્થાવગ્રહ હો હી નહીં સકેગા । તાત્પર્ય ઇસકા ઇસ પ્રકાર હૈ કિ—પ્રથમ સમયમેં જ્ઞાનકી માત્રા અતિ અલ્પ હોતી હૈ પરન્તુ ડ્યોં ૨ વિષય ઔર ઇન્દ્રિયોંકા સમ્બન્ધ પુષ્ટ હોતા જાતા હૈ ત્યોં ૨ જ્ઞાનકી માત્રા ભી પુષ્ટ હોતી ચલી જાતી હૈ । જ્ઞાનકી માત્રાકી જબ ઇતની પુષ્ટિ હો જાતી હૈ કિ ઇસસે યહ માલૂમ હોને લગે કિ ‘યહ કુછ હૈ’ તબ યહા વ્યક્તનાવગ્રહ અર્થાવગ્રહકે રૂપમેં પરિણત હો જાતા હૈ । યદિ વ્યક્તનાવગ્રહમેં જ્ઞાન કી માત્રા જો કિ ઇસ સમય અવ્યક્તતમ, અવ્યક્તતર યા અવ્યક્ત રૂપમેં રહતી હૈ વહ નહીં માની જાવે તો ફિર વ્યક્તનાવગ્રહકી આગે ૨ કે સમયોં મેં પુષ્ટિ હોને પર જો અર્થાવગ્રહરૂપ મેં પરિણતિ હોતી હૈ વહ કસે હો સકતી

ઉત્તર—વ્યંજનાવગ્રહમાં જ્ઞાનની માત્રા ઘણી થોડી છે. અવ્યક્ત છે. તેથી તેનું સંવેદન થતું નથી. સંવેદન ન થવાથી તેમાં જ્ઞાનરૂપતાનો અભાવ આવી શકતો નથી જો તેમાં જ્ઞાનાંશરૂપતા ન હોય એટલે કે પ્રથમ સમયે પણ શબ્દાદિ રૂપે પરિણત દ્રવ્યોની સાથે ઉપકરણ ઇન્દ્રિયોનો સંબંધ થતા વ્યંજનાવગ્રહ અનિર્વચનીય થોડી પણ જ્ઞાનમાત્રાનો સ્વીકાર કરવામાં ન આવે તો પછી દ્વિતીય સમયમાં પણ જ્ઞાન માત્રા ન હોવી જોઈ એ. આ રીતે અંતિમ સમયે પણ જ્ઞાન નહીં હોય, તેથી અર્થાવગ્રહ થઈ નહીં શકે. તેનું તાત્પર્ય આ પ્રમાણે છે—પ્રથમ સમયમાં જ્ઞાનમાત્રા અતિ અલ્પ હોય છે, પણ જેમ જેમ વિષય અને ઇન્દ્રિયોનો સંબંધ પુષ્ટ થતો જાય છે તેમ તેમ જ્ઞાનની માત્રા પુષ્ટ થતી જાય છે. જ્ઞાનની માત્રા જ્યારે એટલી પુષ્ટ થાય કે તેના વડે એમ ખબર પડવા માંડે કે “આ કંઈક છે” ત્યારે એજ વ્યંજનાવગ્રહ અર્થાવગ્રહના રૂપે પરિણમે છે. જો વ્યંજનાવગ્રહમાં જ્ઞાનની માત્રા કે જે તે સમયે અવ્યક્તતર કે અવ્યક્ત રૂપે રહે છે એમ ન માનવામાં આવે તો પછી વ્યંજનાવગ્રહની પછીના પુષ્ટિ થતાં જે અવગ્રહરૂપે પરિણતિ થાય છે તે કેવી રીતે થઈ શકે વ્યંજનાવગ્રહની

અથ પ્રથમસમયાદિષુ શબ્દાદિવિપરિણતદ્રવ્યસમ્બન્ધેઽપિ કાચિદપિ જ્ઞાનમાત્રા માભૂત શબ્દાદિદ્રવ્યાણાં તેષુ સમયેષુ સ્તોકત્વેન ગ્રાહ્યત્વાત્, ચરમસમયે તુ જ્ઞાન-માત્રા સ્યાત્ શબ્દાદિરૂપપરિણતદ્રવ્યસમૂહસ્ય તદાનીં ભૂયસ્ત્વેન વિષયત્વાત્ । ઇતિ ચેત્, તદયુક્તમ્-યદિ હિ પ્રથમસમયાદિષુ શબ્દાદિદ્રવ્યાણાં સ્તોકત્વાત્ સંપૃક્તા વ્યવ્યક્તા કાચિદપિ જ્ઞાનમાત્રા ન સમુલ્લસેત્, તર્હિ પ્રભૂતસમુદાયસમ્પર્કેઽપિ

હૈ? । પરિપુષ્ટ વ્યંજનાવગ્રહ હી તો અર્થાવગ્રહ હોતા હૈ । અર્થા-વગ્રહસે હોનેવાલા વિષયકા માન જ્ઞાતાકે ધ્યાનમેં આ જાતા હૈ, ઓર વ્યંજનાવગ્રહસે હોનેવાલા અર્થકા બોધ જ્ઞાતાકે ધ્યાનમેં નહીં આતા હૈ, યહી તો इनमें भेद हॆ । જ્ઞાનકે અભાવકો લે કર इनमें भेद नहीं माना गया हॆ । इस लिये यह स्वीकार करना चाहिये कि व्यंजनावग्रहमें थोड़ी सी ज्ञान की मात्रा हैं ।

यहाँ शंकाकार कहता है यह कि प्रथमादि समयों में शब्दादिरूप से परिणत पुद्गल द्रव्यों का संबंध होने पर भी व्यंजनावग्रह में जो थोड़ी सी भी ज्ञानमात्रा नहीं होती है? उसका कारण यह है कि वे उन समयों में बहुत ही स्तोकरूप से-सूक्ष्मरूप से-ग्राह्य होते हैं, परन्तु अन्तिम समय में जो उनका ज्ञान होता है उसका कारण यह है कि उस समय शब्दा-दिरूप परिणत द्रव्यसमूह का भूयस्त्वरूप से ग्रहण होता है । तात्पर्य शंकाकार का यह है कि अभी सिद्धान्ती की ओर से जो व्यंजनावग्रह में ज्ञानरूपता प्रतिपादन करने के लिये ऐसा कहा गया है कि-‘यदि व्यंजनावग्रह में ज्ञानरूपता न मानी जावेगी तो अर्थावग्रह में ज्ञानरूपता

એક પુષ્ટ અંશ જ અર્થાવગ્રહ થાય છે. અર્થાવગ્રહથી થનારઅર્થનો બોધ બાણ-નારના ધ્યાનમાં આવતો નથી, એજ તેમની વચ્ચેનો ભેદ છે, જ્ઞાનના અભાવે કરીને તેમાં ભેદ મનાયા નથી તેથી એ સ્વીકારવું જોઈએ કે વ્યાંજનાવગ્રહમાં કેટલીક જ્ઞાનની માત્રા છે જ.

જો શંકા કરનારની તરફથી એમ કહેવામાં આવે કે પ્રથમાદિ સમયોમાં શબ્દાદિ રૂપે પરિણત પુદ્ગલ દ્રવ્યોનો સંબંધ થતા પણ જે થોડા પ્રમાણમાં પણ જ્ઞાનમાત્રા નથી હોવી તેનું કારણ એ છે કે તેઓ તે સમયોમાં બહુ જ સ્તોકરૂપે-સૂક્ષ્મરૂપે-ગ્રાહ્ય થાય છે, પણ અન્તિમ સમયે જે તેમનું જ્ઞાન થાય છે તેનું કારણ એ છે કે તે સમયે શબ્દાદિ રૂપ પરિણત દ્રવ્ય સમૂહનું ભૂયસ્ત્વરૂપે ગ્રહણ થાય છે. શંકાકરનારના કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે હમણાં જ સિદ્ધાંત દ્વારા વ્યાંજનાવગ્રહમાં જ્ઞાનરૂપતાનું પ્રતિપાદન કરવાને માટે એવું જે કહ્યું છે કે-“જો વ્યાંજનાવગ્રહમાં જ્ઞાનરૂપતા માનવામાં ન આવે તો અર્થાવગ્રહ-

નહીં આ સકતી હૈ, અર્થાત્-યદિ પ્રથમ સમય મેં ભી શબ્દાદિપરિણત દ્રવ્યો કે સાથ ઉપકરણેન્દ્રિય કા સંબંધ હોને પર થોડી ભી જ્ઞાનમાત્રા ન હોવે તો વહ દ્વિતીય સમય મેં ભા નહીં હોગી, હસ તરહ ચલતે ર વહ અન્તિમ સમયરૂપ અર્થાવગ્રહ મેં ભી નહીં આ સકેગી સો હસ પર યહ કહના હૈ કિ ચરમ સમય મેં જો જ્ઞાનરૂપતા કા વેદન હોતા હૈ ઉસકા કારણ યહ હૈ કિ ઉસ ચરમ સમયમેં શબ્દાદિરૂપ પરિણત દ્રવ્યસમૂહકા ભૂયસ્ત્વરૂપસે ગ્રહણ હોતા હૈ । એસા ગ્રહણ દ્વિતીયાદિ સમયોં મેં નહીં હોતા હૈ વહાં તો સ્તોકરૂપસે હી ઉનકા ગ્રહણ હોતા હૈ । હસલિયે વ્યજ્જનાવગ્રહ મેં જ્ઞાન માત્રા નહીં હોતી હૈ ।

હસ પર સિદ્ધાન્તીકા એસા ઉત્તર હૈ કિ-યદિ પ્રથમાદિ સમયોંમેં શબ્દાદિ દ્રવ્ય સ્તોક હોતે હૈં હસ રુયાલસે વહાં થોડી સી ભી જ્ઞાનમાત્રા નહીં હોતી હૈં, અર્થાત્-ઉન દ્રવ્યોંકા જો ગ્રહણ હોતા હૈ વહ જ્ઞાતાકે અનુભવમેં નહીં આતા હૈ-વે બહુત હી સૂક્ષ્મ હોતે હૈં, હસ લિયે ઉસ અવસ્થામેં ઉનકા જ્ઞાન “ યે કુછ હૈં ” હસ રૂપસે નિર્દેશ્ય નહીં હોતા હૈ, કારણ કિ ઉસ સમયકા ઇન્દ્રિય ઓર પદાર્થકા સમ્બન્ધ અપુષ્ટ રહતા હૈ, એસા કહકર ઉન સમયોં મેં થોડી ભી જ્ઞાનમાત્રા ન માની જાવે

હુમાં જ્ઞાનરૂપતા આવી શકતી નથી. એટલે કે જો પ્રથમ સમયમાં પણ શબ્દાદિ પરિણત દ્રવ્યોની સાથે ઉપકરણેન્દ્રિયનો સંબંધ થતા થોડી પણ જ્ઞાનામાત્રા ન હોય તો તે દ્વિતીય સમયમાં પણ નહીં હોય, આ રીતે આગળ વધતા વધતા તે અન્તિમ સમયરૂપ અર્થાવગ્રહમાં પણ આવી નહીં શકે ” તો તે બાબતમાં તેનું આ પૂર્વોક્ત કથન છે-તે કહે છે કે ચરમ સમયમાં જે જ્ઞાનરૂપતાનું સંવેદન થાય છે તેનું કારણ એ છે કે તે ચરમસમયમાં શબ્દાદિરૂપ પરિણત દ્રવ્ય સમૂહનું થતું નથી ત્યાં તો સૂક્ષ્મરૂપે જ તેમનું ગ્રહણ થાય છે ?

તેનો સૂત્રકાર તરફથી એવો જવાબ મળે છે કે-જો પ્રથમાદિ સમયોમાં શબ્દાદિ દ્રવ્ય સૂક્ષ્મ હોય છે તે માન્યતાથી ત્યાં થોડી પણ જ્ઞાનમાત્રા હોતી નથી, એટલે કે એ દ્રવ્યોનું જે ગ્રહણ થાય છે તે જ્ઞાતાના અનુભવમાં આવતું નથી-તેઓ બહુજ સૂક્ષ્મ હોય છે, તે કારણે તે પરિસ્થિતિમાં તેમનું જ્ઞાન “ એ કંઈક છે ” એ રૂપે નિર્દેશ્ય થતું નથી, કારણ કે તે સમયનો ઇન્દ્રિય અને પદાર્થનો સંબંધ અપુષ્ટ હોય છે, એમ કહીને તે સમયોમાં થોડી પણ જ્ઞાનમાત્રા માનવામાં ન આવે તો મોટા સમૂહાયનો સંપર્ક થતા પણ જ્ઞાનમાત્રા કેવી રીતે

ન ભવેત્, ન હિ સ્વલ્પ સિકતાક્રણેષુ પ્રત્યેકં તૈલાભાવે સમુદાયેऽપિ તૈલં સમુદ્ર-  
દુપલભ્યતે । અસ્તિ ચ ચરમસમયે પ્રભૂતશબ્દાદિદ્રવ્યસંપૃક્તૌ જ્ઞાનમ્, તતઃ પ્રાક્તનેષ્વપિ  
સમયેષુ સ્તોકસ્તોકતરૈરપિ શબ્દાદિ પરિણત દ્રવ્યૈઃ સમ્બન્ધે કાચિદવ્યક્તા જ્ઞાન-  
માત્રામન્તવ્યા, અન્યથા ચરમસમયેऽપિ જ્ઞાનાનુપપત્તેઃ । તથા ચ—‘વ્યજ્ઞનાવગ્રહો  
જ્ઞાનરૂપઃ’ ઇતિ સિદ્ધમ્ । તત્ત્વ જ્ઞાનમવ્યક્તમેવેતિ બોધ્યમ્ । સૂત્રે ચકારદ્વયં સ્વગ-  
તાનેકભેદસૂચકમ્ । તે ચ સ્વગતાનેકભેદાઃ સ્વયમેવ સૂત્રકૃતાઽગ્રે વક્ષ્યતે ।

નનુ પ્રથમં વ્યજ્ઞનાવગ્રહો ભવતિ, તતોઽર્થાવગ્રહઃ તર્હિ કથમિહાર્થાવગ્રહઃ પૂર્વ-  
મુક્તઃ ? ઇતિ ચેત્, ઉચ્યતે—સ્પષ્ટતયોપલભ્યમાન્ત્વાદર્થાવગ્રહઃ પૂર્વમુપન્યસ્તઃ ।

તો પ્રભૂત સમુદાયકે સમ્પર્ક હોને પર ખી જ્ઞાનમાત્રા કૈસી માની જા  
સકેગી ? । જવ સ્તોકરૂપમેં ઉનકે ગ્રહણકરને પર ઉનમેં જ્ઞાનમાત્રા નહીં  
હૈ તો વહ ભૂયસ્ત્વરૂપસે ઉનકે ગ્રહણ હોને પર ખી કહાંસે આયગી ? । યહ  
તો પ્રત્યક્ષ માલૂમ દેતા હૈ કિ બાલુકે ઇક ૨ કણમેં તૈલ નહીં હૈ, ઇસીલિયે  
વહ ઉસકે સમુદાયમેં ખી નહીં હૈ । ચરમ સમયમેં જવ જ્ઞાન હોના અનુભવ  
મેં આતા હૈ તો માનના ચાહિયે કિ પહિલેકે સમયોં મેં ખી જ્ઞાન હૈ, ખલે  
વહ સ્તોકતમ આદિ રૂપમેં હો, પર હૈ અવશ્ય । ઇસ લિયે વ્યજ્ઞનાવગ્રહ  
અજ્ઞાનરૂપ ન હોકર જ્ઞાનરૂપ હૈ, ઇસા માનનેમેં કોઈ બાધા નહીં આતી  
હૈ । વ્યજ્ઞનાવગ્રહમેં કિસરૂપમેં જ્ઞાનરૂપતા હૈ યહ વાત વહાં અવ્યક્ત હી હૈ ।

સૂત્રમેં દો ચકાર સ્વગત અનેક ભેદોં કી સૂચના દેતે હૈ । ઇન  
ભેદોંકા કથન સૂત્રકાર આગે ચલ કર કરેંગે ।

શઙ્કા—જવ વ્યજ્ઞનાવગ્રહ પહિલે હોતા હૈ વાદમેં અર્થાવગ્રહ હોતા હૈ  
તો સૂત્રકારને પહિલે અર્થાવગ્રહ કયોં કહા ?

માની શકાશે ? જો સૂક્ષ્મરૂપે તેમને ગ્રહણ કરતા તેમનામાં જ્ઞાનમાત્રા ન હોય  
તો તે ભૂયસ્ત્વરૂપે તેમનું ગ્રહણ કરતાં કયાથી આવશે ? આ તો પ્રત્યક્ષ  
અનુભવની વાત છે કે ત્રીજા પ્રત્યેક કણમાં તેલ નથી. તેથી તે તેમના સમુદા-  
યમાં પણ નથી. ચરમ સમયે જો જ્ઞાન થવાનો અનુભવ થાય છે તો એ સ્વી-  
કારવું જોઈ એ કે પહેલાંના સમયોમાં પણ જ્ઞાન હતું જ, ભલે તે સૂક્ષ્મતમ  
આદિરૂપે હોય, પણ છે અવશ્ય. તે કારણે વ્યંજનાવગ્રહ અજ્ઞાનરૂપ નથી પણ  
જ્ઞાનરૂપ છે, એમ માનવામાં કોઈ મુશ્કેલી રહેતી નથી. વ્યંજનાવગ્રહમાં કયાં  
રૂપે જ્ઞાનરૂપતા છે એ વાત ત્યાં અવ્યક્ત જ છે. સૂત્રમાં એ ચકાર સ્વગત અનેક  
લેહોનું સૂચન કરે છે. એ લેહોનું વર્ણન સૂત્રકાર આગળ જતાં કરશે.

શકા—જો વ્યંજનાવગ્રહ પહેલાં થાય છે અને ત્યાર બાદ અર્થાવગ્રહ થાય  
છે તો સૂત્રકારે પહેલાં અર્થાવગ્રહ કેમ કહ્યો ?

તથાહિ-સર્વૈરપિ જીવૈરર્થાવગ્રહઃ સ્પષ્ટરૂપતયા સંવેદ્યતે । શીઘ્રતરગમનાદો સકૃત્ ત્વરયોપલબ્ધે વસ્તુનિ “મયા કિંચિદ્ દૃષ્ટં, પરં ન પરિભાવિતં સમ્ય-” ગિતિ વ્યવહારદર્શનાત્ । અપિ ચ અર્થાવગ્રહઃ સર્વેન્દ્રિયમનોભાવી, વ્યક્તનાવગ્રહસ્તુ ન તથા ભવતીતિ પ્રાધાન્યાત્ પ્રથમમર્થાવગ્રહ ઉક્તઃ ॥ ૨૭ ॥ સૂ૦ ॥

અથ વ્યક્તનાવગ્રહાદનન્તરમર્થાવગ્રહો ભવતીત્યત ઉત્પત્તિક્રમમાશ્રિત્ય પ્રથમં વ્યક્તનાવગ્રહં વર્ણયતિ—

મૂલમ્—સે કિં તં વંજણુગ્ગહે ? । વંજણુગ્ગહે ચઽવિવિહે પળ્લણ્ણત્તે । તં જહા—સોઙ્ગંદિયવંજણુગ્ગહે, ઘાણિંદિયવંજણુગ્ગહે, જિઘ્ઘિંદિયવંજણુગ્ગહે, ફાસિંદિય વંજણુગ્ગહે, સે તં વંજણુગ્ગહે ॥ સૂ૦ ૨૮ ॥

છાયા—અથ કઃ સ વ્યક્તનાવગ્રહઃ ? વ્યક્તનાવગ્રહશ્ચતુર્વિધઃ પ્રજ્ઞપ્તઃ, તદ્ યથા—શ્રોત્રેન્દ્રિય વ્યક્તનાવગ્રહઃ, ઘ્રાણેન્દ્રિયવ્યક્તનાવગ્રહઃ, જિઘ્ઘેન્દ્રિયવ્યક્તનાવગ્રહઃ, સ્પર્શેન્દ્રિયવ્યક્તનાવગ્રહઃ, સ એવ વ્યક્તનાવગ્રહઃ ॥ સૂ૦ ૨૮ ॥

ટીકા—શિષ્યઃ પૃચ્છતિ—‘સે કિં તં વંજણુગ્ગહે ?’ ઇતિ । અથ કઃ સ વ્યક્તનાવગ્રહઃ ?, ઇતિ । ઉત્તરમાહ—‘વંજણુગ્ગહે—ચઽવિવિહે પળ્લણ્ણત્તે’ ઇત્યાદિ વ્યક્તનાવગ્રહશ્ચતુર્વિધઃ પ્રજ્ઞપ્તઃ, તદ્ યથા—શ્રોત્રેન્દ્રિયવ્યક્તનાવગ્રહઃ, ઘ્રાણેન્દ્રિયવ્યક્તનાવગ્રહઃ, જિઘ્ઘેન્દ્રિયવ્યક્તનાવગ્રહઃ, સ્પર્શેન્દ્રિયવ્યક્તનાવગ્રહઃ, સ એવ વ્યક્તનાવગ્રહ ઇતિ ।

ઉત્તર—અર્થાવગ્રહ અનુભવમેં આતા હૈ, વ્યક્તનાવગ્રહ નહીં, ફસલિયે સૂત્રકારને એસા કિયા હૈ । દેખો જવ હમ શીઘ્રાતિશીઘ્રરૂપસે ચલતે ફિરતે હૈં તો ઉસ સમય ઉપલબ્ધ વસ્તુમેં એસા ભાન હોતા હૈ કિ ‘યહ કુછ હૈ’ પર કયા હૈ ફસકા સ્પષ્ટ બોધ નહીં હોતા । દૂસરે — ચાત એક યહ હૈ કિ અર્થાવગ્રહ પાંચ ઇન્દ્રિયોંસે એવં મનસે હોતા હૈ । વ્યક્તનાવગ્રહ ચક્ષુ ઓર મનસે નહીં હોતા હૈ । ફસ લિયે વ્યક્તનાવગ્રહકી અપેક્ષા અર્થાવગ્રહમેં પ્રધાનતા આતી હૈ, અતઃ પ્રધાન હોનેસે સૂત્રકારને અર્થાવગ્રહ કા પહિલે ઉલ્લેખ કિયા હૈ, ઓર પીછે વ્યક્તનાવગ્રહ કા ॥ સૂ૦ ૨૭ ॥

ઉત્તર—અર્થાવગ્રહ અનુભવમાં આવે છે વ્યક્તનાવગ્રહ નહીં, તેથી સૂત્રકારે એમ કયું છે. એમ કે આપણે ઝડપીમાં ઝડપી રીતે ચાલતા હોઈએ ત્યારે ઉપલબ્ધ વસ્તુમાં એવું ભાન થાય છે કે “આ કંઈક છે” પણ શું છે તેનું સ્પષ્ટ ભાન થતું નથી. ખીજી વાત એ છે કે અર્થાવગ્રહ પાંચ ઇન્દ્રિયો અને મનથી થાય છે. વ્યક્તનાવગ્રહ આંખ અને મનથી થતો નથી. તે કારણે વ્યક્તનાવગ્રહ કરતા અર્થાવગ્રહમાં પ્રધાનતા આવે છે. તેથી મુખ્ય હોવાથી સૂત્રકારે અર્થાવગ્રહનો પહેલાં ઉલ્લેખ કર્યો છે, અને પાછળ વ્યક્તનાવગ્રહનો ॥ સૂ ૨૭ ॥

નનુ પન્થેન્દ્રિયાણિ સન્તિ પષ્ટં મનશ્ચાસ્તિ, કથં તર્હિ વ્યજ્જનાવગ્રહશ્ચતુર્વિધં  
 એવોક્તઃ ? इति चेत् उच्यते—इहोपकरणेन्द्रियस्य शब्दादिद्रव्याणां च परस्परं सम्बन्धो  
 व्यञ्जनमुच्यते, स च सम्बन्धश्चतुर्णामेव श्रोत्रेन्द्रियादीनां भवति, न तु चक्षुर्मनसोः,  
 तयोरप्राप्यकारित्वात् । चक्षुर्मनश्च हि रूपादिसम्बन्धेन विनैव ज्ञानमुत्पादयति ।

અવ સૂત્રકાર ઉત્પત્તિક્રમકી અપેક્ષાસે વ્યજ્જનાવગ્રહકા વર્ણન કરતે  
 હૈ—‘ સે કિં તં વંજણુગ્ગહે ’ इत्यादि ।

શિષ્ય પ્રશ્ન કરતા હૈ કિ-હે ભદન્ત ! પૂર્વનિર્દિષ્ટ વ્યજ્જનાવગ્રહ કા  
 કયા સ્વરૂપ હૈ ? उत्तर—व्यंजनावग्रह चार प्रकार का बतलाया गया है ।  
 जैसे—श्रोत्रेन्द्रिय—व्यंजनावग्रह १, घ्राणेन्द्रिय—व्यंजनावग्रह २, जिह्वेन्द्रिय  
 व्यंजनावग्रह २ और स्पर्शेन्द्रिय—व्यंजनावग्रह ४ । इस तरह यह चार  
 प्रकार का अवग्रह व्यंजनावग्रह है ।

શંકા—इन्द्रियां तो पांच बतलाई गई हैं तथा छठा मन भी बतलाया  
 गया है फिर व्यंजनावग्रह चार प्रकार ही होता है ऐसा क्यों कहा ? उसे  
 छह प्रकारका कहना चाहिये था ।

उत्तर—उपकरणेन्द्रिय का और शब्दादिक पौद्गलिक द्रव्यों का जो  
 परस्पर में संबंध होता है वह व्यंजन है, यह बात पीछे बतलाई जा  
 चुकी है ।

यह जो इन्द्रिय और पदार्थों का संबंध है वह इन चार इन्द्रियों से  
 ही होता है, चक्षु और मन में नहीं होता है, कारण ये दोनों अप्राप्य-

હવે સૂત્રકાર ઉત્પત્તિ ક્રમની અપેક્ષાએ વ્યંજનાવગ્રહનું વર્ણન કરે છે—  
 “ સે કિં તં વંજણુગ્ગહે ” इत्यादि.

પ્રશ્ન—હે ભદન્ત ! પૂર્વનિર્દિષ્ટ વ્યંજનાવગ્રહનું શું સ્વરૂપ છે ?

ઉત્તર—વ્યંજનાવગ્રહ ચાર પ્રકારનો બતાવ્યો છે (૧) શ્રોત્રેન્દ્રિય—વ્યંજ-  
 નાવગ્રહ, (૨) ઘ્રાણેન્દ્રિય—વ્યંજનાવગ્રહ (૩) જિહ્વેન્દ્રિય વ્યંજનાવગ્રહ અને (૪)  
 સ્પર્શેન્દ્રિય—વ્યંજનાવગ્રહ. આ રીતે આ ચાર પ્રકારનો અવગ્રહ—વ્યંજનાવગ્રહ છે.

શંકા—ઇન્દ્રિયો તો પાંચ દર્શાવી છે. તથા છઠું મન પણ બતાવ્યું છે,  
 તો પછી વ્યંજનાવગ્રહ ચાર પ્રકારનો જ હોય છે એમ શા માટે કહ્યું ? તે ૭  
 પ્રકારનો કહેવો ભેદતો હતો.

ઉત્તર—ઉપકરણેન્દ્રિયનો અને શબ્દાદિક પૌદ્ગલિક દ્રવ્યોનો જે પરસ્પ-  
 રમાં સંપર્ક થાય છે તે વ્યંજન છે. આ વાત પાછળ બતાવી દીધી છે. ઇન્દ્રિયો  
 અને પદાર્થોનો આ જે સંપર્ક છે તે એ ચાર ઇન્દ્રિયો વડે જ થાય છે, ચક્ષુ



નનુ કથમપ્રાપ્યકારિત્વં તયોરવસીયતે? ઉચ્યતે—વિષયકૃતાનુગ્રહોપઘાતાભા-  
વાત્ । તથાહિ—યદિ પ્રાપ્તમર્થં ચક્ષુર્મનો વા શૃણીયાત્ તદા યથા સ્પર્શનેન્દ્રિયં સ્પૃશ્-  
ન્દનાદિકસ્ય અજ્ઞારાદિકસ્ય ચ પ્રાપ્તસ્યાર્થસ્ય પરિચ્છેદં કુર્વત્ તત્કૃતાનુગ્રહોપઘાત-  
ભાગ્ ભવતિ, તથા ચક્ષુર્મનશ્ચાપિ સ્યાત્ વિશેષાભાવાત્, ન તુ તથા ભવતિ, તસ્માદે-  
તદ્વ્યમપ્રાપ્યકારીતિ સિદ્ધમ્ ।

કારી હૈં । અપને વિષય કે સાથ સંબંધ કિયે વિના હી યે દોનોંં ઇન્દ્રિયાં  
ઉસકા જ્ઞાન કરા દેતી હૈં । ઇસ તરહ વ્યંજનાવગ્રહ ચાર પ્રકાર કા હી  
હોતા હૈ, છહ પ્રકારકા નહીં ।

શંકા—ચક્ષુ ઓર મન અપ્રાપ્યકારી હૈં—વિષય કે સાથ સંબંધ કિયે  
વિના હી અપને વિષય કા જ્ઞાન કરા દેતે હૈં, યહ બાત કૈસે જાની જાતી હૈ ।

ઉત્તર—‘યે દોનોંં અપ્રાપ્યકારી હૈં’ યહ બાત ઇસ તરહ જાની જાતી  
હૈ કિ ઇનમેં અપને વિષય સે કૃત ઉપઘાત ઓર અનુગ્રહ નહીં હોતા હૈ ।  
યદિ પ્રાપ્ત અર્થ કો ચક્ષુ ઓર મન ગ્રહણ કરેં તો જિસ પ્રકાર પ્રાપ્ત અર્થ  
કો ગ્રહણ કરનેવાલી સ્પર્શેન્દ્રિય મેં અપને વિષયદ્વારા સ્પૃશ્, ચંદન-  
અંગાર આદિ દ્વારા—અનુગ્રહ ઓર ઉપઘાત દેખા જાતા હૈ ઉસી તરહ ઇન  
દો ઇન્દ્રિયોંં મેં યહ બાત દેખી જાની ચાહિયે, પરન્તુ એસી બાત ઇનમેં નહીં  
દેખી જાતી હૈ, ઇસલિયે યે દો અપ્રાપ્યકારી માને ગયે હૈં ।

અને મનમાં થતો નથી, કારણ કે એ બંને અપ્રાપ્યકારી છે. પોતાના વિષય  
સાથે સંપર્ક કર્યા વિના જ એ બંને ઇન્દ્રિયો તેનું જ્ઞાન કરાવી દે છે. આ  
રીતે વ્યંજનાવગ્રહ ચાર પ્રકારનો જ હોય છે, છ પ્રકારનો નહીં.

શંકા—ચક્ષુ અને મન અપ્રાપ્યકારી છે—વિષયની સાથે સંપર્ક કર્યા  
વિના જ પોતાના વિષયનું જ્ઞાન કરાવી દે છે, એ વાત કેવી રીતે બાણી શકાય ?

ઉત્તર—એ બંને અપ્રાપ્યકારી છે, એ વાત આ રીતે બાણી શકાય છે  
કે તેમનામાં પોતાના વિષય વડે કરાયેલ ઉપઘાત અને અનુગ્રહ હોતા નથી.  
જો પ્રાપ્ત અર્થને ચક્ષુ અને મન ગ્રહણ કરે તો જે રીતે પ્રાપ્ત અર્થને ગ્રહણ  
કરનારી સ્પર્શેન્દ્રિયમાં પોતાના વિષય દ્વારા સ્પૃશ્, ચંદન—અંગાર આદિ દ્વારા—  
અનુગ્રહ અને ઉપઘાત જોવા મળે છે, એજ રીતે એ બંને ઇન્દ્રિયોમાં આ  
વાત દેખાવી જોઈએ, પણ એવી વાત તેમનામાં દેખાતી નથી. તેથી એ બંને  
અપ્રાપ્યકારી માનવામાં આવી છે.



નન્વેવં ન દૃશ્યતે, ચક્ષુષોઽપિ હિ વિષયકૃતાવનુગ્રહોપઘાતૌ ભવતઃ । તથાહિ-  
મેઘરહિતે નભસિ પ્રચન્ડમાર્તન્ડમન્ડલં પશ્યતો ભવતિ ચક્ષુષો વિઘાતઃ, તથા ચન્દ્રમ-  
ન્ડલં તરન્ગમાલોપશોભિતં જલં શાઙ્ગલં હરિતતરુમન્ડલં ચ પશ્યતશ્ચક્ષુષોઽનુગ્રહો ભવ-  
તીતિ, તસ્માન્ચક્ષુષઃ પ્રાપ્યકારિત્વમેવ સિધ્યતીતિચેત્ ,

અત્રોચ્યતે-વિષયકૃતાનુગ્રહોપઘાતૌ ચક્ષુષઃ સર્વથા ન ભવતઃ, ઇતિ વયં ન  
બ્રૂમઃ કિં તુ એતાવદેવ બ્રૂમઃ-યદા વિષયં વિષયતયા ચક્ષુરવલમ્બતે, તદા

શંકા—આપ એસા કૈસે કહતે હૈં કિ ચક્ષુ મેં વિષયકૃત ઉપઘાત  
ઔર અનુગ્રહ નહીં દેખા જાતા હૈ । વિષયકૃત ઉપઘાત ઔર અનુગ્રહ ચક્ષુ  
ઇન્દ્રિય મેં દેખા જાતા હૈ, અતઃ ઉસમેં અન્ય ઇન્દ્રિયોં કી તરહ પ્રાપ્યકારિતા  
સિદ્ધ હોતી હૈ । મેઘરહિત આકાશ મેં જો વ્યક્તિ સૂર્યમંડલ કા નિરીક્ષણ  
કરતા હૈ ઉસકે ચક્ષુ કા વિઘાત હોતા હૈ, તથા ચન્દ્રમંડલ કા, તરન્ગ-  
માલા સે ઉપશોભિત જલ કા, હરિતઘાસ કા એવં હરે ૨ વૃક્ષોં કા જો  
નિરીક્ષણ કરતા હૈ ઉસકી આંખોં મેં શીતલતા આતી હૈ, યહ ચક્ષુ કા  
વિષયકૃત ઉપઘાત એવં અનુગ્રહ હૈ ।

ઉત્તર—ઇસ કથનસે ચક્ષુમેં પ્રાપ્યકારિતા સિદ્ધ નહીં હોતી હૈ ।  
ઇસસે તો કેવલ યહી વાત જાની જાતી હૈ કિ દ્રવ્યકે સંબંધસે ચક્ષુકા  
ઉપઘાત ઔર અનુગ્રહ હોતા હૈ । હમ ઇસ વાતકા નિષેધ થોડે હી કરતે  
હૈં કિ વિષય-પદાર્થ-કૃત ઉપઘાત ઔર અનુગ્રહ ચક્ષુમેં નહીં હોતા હૈ ?  
કિન્તુ હમ તો યહ બતલાતે હૈ કિ ચક્ષુ જબ પદાર્થકો વિષય કરતા હૈ

શંકા—આપ એમ કેવી રીતે કહો છો કે ચક્ષુમાં વિષયકૃત ઉપઘાત અને  
અનુગ્રહ દેખાતા નથી. વિષયકૃત ઉપઘાત અને અનુગ્રહ ચક્ષુ ઇન્દ્રિયમાં જોવા  
મળે છે, તેથી તેમાં ખીજ ઇન્દ્રિયોની જેમ પ્રાપ્યકારિતા સિદ્ધ થાય છે. મેઘ  
રહિત આકાશમાં જે વ્યક્તિ સૂર્યમંડળનું નિરીક્ષણ કરે છે તેનાં ચક્ષુનો વિઘાત  
થાય છે, તથા ચન્દ્રમંડળનું તરંગમાળાથી શોભતા જળનું, લીલાં ઘાસનું અને  
લીલાંછમ વૃક્ષોનું જે નિરીક્ષણ કરે છે તેની આંખોમાં શીતળતા આવે છે, આ  
ચક્ષુનો વિષયકૃત ઉપઘાત અને અનુગ્રહ છે.

ઉત્તર—આ કથનથી ચક્ષુમાં પ્રાપ્યકારિતા સાબીત થતી નથી. તેનાથી  
તો ફક્ત એજ વાત જાણવા મળે છે કે દ્રવ્યના સંપર્કથી ચક્ષુનો ઉપઘાત અને  
અનુગ્રહ થાય છે. અમે એ વાતનો નિષેધ થોડો કરીએ છીએ કે વિષય-પદાર્થકૃત  
ઉપઘાત અને અનુગ્રહ ચક્ષુમાં થતો નથી ? પણ અમે તો એ બતાવીએ છીએ કે  
ચક્ષુ જ્યારે પદાર્થને વિષય કરે છે ત્યારે તે વિષયભૂત પદાર્થને વિષય કરે છે

तत्कृतावनुग्रहोपघातौ तस्य न भवत इति, तस्मात् तदप्राप्यकारि । यदा तु विषयं विषयतया नावलम्बते किं तु यदा-चक्षुषि स्वोपघातकावयवाणुप्रवेशो भवति, तदोपघातः, अनुग्राहकावायवाणुप्रवेशे सति चानुग्रहो भवति । यथा-प्रचण्ड-मार्तण्डरश्मयः सर्वत्रापि प्रसरन्तो यदा चक्षुषि संप्राप्ता भवन्ति, तदा ते स्पर्शनेन्द्रियमिव चक्षुरुपगच्छन्ति, तथा चन्द्ररश्मयः चक्षुषि संप्राप्ताः सन्तः स्पर्शनेन्द्रियमिव चक्षुरनुगच्छन्ति, तथा-चक्षुषि जलकणसंस्पृष्टपवनसंस्पर्शादनुग्रहो भवति, तथा-शाङ्खलतरुच्छायासंपर्कशीतीभूतसमीरसंस्पर्शादनुग्रहो भवति । विषयतयाऽवलम्बने तु न भवति चक्षुषि तत्परमाणुप्रवेशस्तस्माद् विषयतया जलाद्यवलोकने

तब उस विषयभूत पदार्थसे चक्षुका उपघात और अनुग्रह नहीं होता है, इसलिये वह अप्राप्यकारी है । चक्षु का पूर्वोक्तकथन से जो उपघात अनुग्रह बतलाये गये हैं वे उसमें अपने द्वारा उन्हें गृहीत करने से नहीं हुए हैं किन्तु जब अपने उपघातक अवयवाणु का प्रवेश उसमें हो जाता है उस समय उसके द्वारा उसका उपघात होता है, इसी तरह अनुग्रह होता है । जैसे प्रचण्ड मार्तण्ड की किरणें फैलते समय जब चक्षु के साथ संबंध करती हैं उस समय वे स्पर्शनेन्द्रिय की तरह चक्षु का उपघात करती हैं । तथा चन्द्र की किरणें जब चक्षु के साथ संबंध करती हैं तो वे स्पर्शनेन्द्रिय की तरह उसका अनुग्रह करती हैं । इसी तरह जलकण-सिक्त वायु के संस्पर्श से उसका अनुग्रह होता है । परन्तु जब चक्षु इन्हें विषयरूप से अवलम्बन करता है तब चक्षु के भीतर इनके परमाणु का प्रवेश नहीं होता है । इस तरह विषयरूप से जलादिक के अवलो-

त्यारे ते विषयभूत पदार्थथी चक्षुनो उपघात अने अनुग्रह थतो नथी, तेथी ते अप्राप्यकारी छे. पूर्वोक्त कथनथी चक्षुनो जे उपघात अनुग्रह भताववामां आव्या छे. ते तेनामां पोताना द्वारा तेमने गृहीत करवाथी थयेल नथी, पणु न्यारे पोताना उपघातक अवयव आणुनो प्रवेश तेमां थछ नय छे ते समये तेमना द्वारा तेनो उपघात थाय छे. अेज रीते अनुग्रहक अवयव आणुनो न्यारे चक्षुमां प्रवेश थछ नय छे त्यारे तेमना द्वारा तेनो अनुग्रह थाय छे. जेम प्रयंड सूर्यनां किरणो इलांती वणते न्यारे चक्षुनी साथे संपर्क करे छे त्यारे तेओ स्पर्शनेन्द्रियनी जेम चक्षुनो उपघात करे छे. तथा चन्द्रनां किरणो न्यारे चक्षुनी साथे संपर्क करे छे त्यारे तेओ स्पर्शनेन्द्रियनी जेम तेनो अनुग्रह करे छे. अेज प्रमाणे जणकण युक्त वायुना संस्पर्शथी तेनो अनुग्रह थाय छे. पणु न्यारे चक्षु विषयइये तेमनुं अवलंणन करे छे त्यारे चक्षुनी अंदर तेमनां परमाणुनो प्रवेश थतो नथी. अेज रीते विषयइये जलादिकनुं

ઉપઘાતાભાવાદનુગ્રહોપચારો મન્તવ્યઃ । ઉપઘાતાભાવેઽનુગ્રહોપચારો લોકે દૃશ્યતે, યથાઽતિસૂક્ષ્માક્ષરનિરીક્ષણાદ્ વિનિવૃત્ય નીલહરિતવસનાદિનિરીક્ષણે યથામુલ્લંભ્ય લોકઃ પ્રવર્તતે તસ્માદુપઘાતાભાવેઽનુગ્રહોપચારો ભવતીતિ મન્તવ્યમ્ । પ્રાપ્યકારિત્વે તુ તુલ્યે સંપર્કે સૂર્ય પશ્યતઃ સૂર્યેણ યથોપઘાતો ભવતિ, તથા અગ્નિજલશૂલાદિનિ-

કન કરને પર તત્કૃત ઉપઘાત કા અભાવ હોને સે ડસમેં અનુગ્રહ કા ઉપચાર માના જાતા હૈ । ઉપઘાત કે અભાવ મેં અનુગ્રહ કા ઉપચાર લોક મેં દેખા જાતા હૈ, જૈસે અતિસૂક્ષ્મ અક્ષરોં કે દેખને સે મનુષ્ય જબ નિવૃત્ત હોકર નીલ, હરિત વસ્ત્ર આદિ કો દેખને મેં પ્રવૃત્ત હોતા હૈ તો ડસસે ડસકો આંખોં મેં ંક પ્રકાર કા સુખ કા અનુભવ હોતા હૈ । યહ સુખાભવ હી વ્યાઘાત કા અભાવ હૈ, ંર ડસીસે ડસકે દ્વારા અનુગ્રહ કા ઉપચાર વહાં હોતા હૈ । તાત્પર્ય ડસકા યહ હૈ કિ અતિસૂક્ષ્મ અક્ષરોં કે દેખને મેં આંખોં કો જોર પડતા હૈ, વહ જોર નીલ વસ્ત્રાદિક કે નિરીક્ષણ કરતે સમય નહીં હોતા હૈ અતઃ લોગ ડસસે દૃષ્ટિ કા ઉપઘાત ંર નીલ વસ્ત્રાદિક સે ડસકા અનુગ્રહ માન લેતે હૈ, પરન્તુ જબ ડસ પર વિચાર કિયા જાતા હૈ તો યહ અનુગ્રહ ઉપઘાતાભાવ હોને સે વહાં ઉપચરિત હૈ, વાસ્તવિક નહીં હૈ । ન તો વિષયીકૃત પદાર્થ સે ચક્ષુ કા ઉપઘાત હોતા હૈ ંર ન અનુગ્રહ હી હોતા હૈ । યદિ ચક્ષુ કો પ્રાપ્યકારી માના જાવે તો ડસ પ્રાપ્યકારિત્વ કી સમાનતા મેં પદાર્થ કે સાથ ડસકા સંપર્ક તુલ્ય રહતા હૈ । ંસી સ્થિતિ મેં જિસ પ્રકાર સૂર્ય કા નિરીક્ષણ કરતે

અવલોકન કરતા તેના વડે કરાયેલ. ઉપઘાતનો અભાવ હોવાથી તેમાં અનુગ્રહનો ઉપચાર માનવામાં આવે છે. ઉપઘાતના અભાવમાં અનુગ્રહનો ઉપચાર લોકમાં જોવા મળે છે, જેમકે અતિસૂક્ષ્મ અક્ષરો જોયા પછી મનુષ્ય જ્યારે ભૂરાં, લીલાં વસ્ત્ર આદિને જોવાને પ્રવૃત્ત થાય છે ત્યારે તેથી તેને આંખોમાં એક પ્રકારનાં સુખનો અનુભવ થાય છે. આ સુખનો અનુભવ જ વ્યાઘાતનો અભાવ છે, અને તેથી તેના વડે અનુગ્રહનો ઉપચાર ત્યાં હોય છે. તેનું તાત્પર્ય એ છે કે અતિસૂક્ષ્મ અક્ષરોને જોવામાં આંખોને જોર પડે છે, તે જોર નીલ વસ્ત્રાદિકનું નિરીક્ષણ કરતી વખતે પડતું નથી તેથી લોકો તે વડે દૃષ્ટિનો ઉપઘાત અને નીલવસ્ત્રાદિકથી તેનો અનુગ્રહ માની લે છે, પણ જ્યારે એના પર વિચાર કરવામાં આવે છે ત્યારે આ અનુગ્રહ ઉપઘાતાભાવ હોવાથી ત્યાં ઉપચરિત છે, વાસ્તવિક નથી. વિષયીકૃત પદાર્થથી ચક્ષુનો ઉપઘાત પણ થતો નથી અને અનુગ્રહ પણ થતો નથી. જો ચક્ષુને પ્રાપ્યકારી માનવામાં આવે તો આ પ્રાપ્યકારિત્વની સમાનતામાં પદાર્થની સાથે તેનો સંપર્ક તુલ્ય રહે છે. એવી પરિસ્થિતિમાં જે પ્રકારે

રીક્ષણે દાહ-ક્લેદ-પાટનાદયઃ કસ્માન્ન ભવન્તીતિ । તસ્માદ્વિષયદેશે ચક્ષુષો ગમનં ન ભવતિ, નાપિ ચ ચક્ષુષિ સ્વવિષયપ્રવેશો ભવતિ, તતથ વિષયતયાવલમ્બને ચક્ષુષસ્તત્કૃતોપઘાતાનુગ્રહો ન ભવતિ इति स्थितम् ।

अपि च—यदि चक्षुः प्राप्यकारि, तर्हि स्वदेशगतरजोमलाञ्जनशलाकादिकं किं न पश्यति ?, तस्माच्चक्षुरप्राप्यकार्येवास्तीति मन्तव्यम् ।

સમય उसका आपकी दृष्टि से उपघात होता है उसी प्रकार अग्नि, जल, शूल आदिके निरीक्षण करते समय इसका संपर्क रहेगा तो फिर उस समय इनके द्वारा चक्षुका दाह, क्लेदन, एवं पाटनादिक भी होना चाहिये, परन्तु ये बातें तो होती नहीं हैं, सो क्यों नहीं होती ? इस परसे विचारना चाहिये कि चक्षुमें प्राप्यकारिता नहीं है । अर्थात् चक्षु इन्द्रिय न तो विषयके पास जा कर उसका प्रकाशन करती है और न विषय ही चक्षुमें आ कर प्रविष्ट होता है, इस लिये विषयभूत ज्ञेयसे चक्षुका उपघात अनुग्रह कुछ भी नहीं होता है । यह सिद्धान्त ही ठीक है । दूसरी बात एक यह भी है कि यदि चक्षु प्राप्यकारी माना जावे तो फिर उसको अपनेमें पड़े हुए रजकण, मल एवं अंजनशलाका आदिका भी प्रकाशन करना चाहिये, परन्तु ऐसा नहीं होता है, अतः अप्राप्यकारी मन्तव्य ही निर्दोष है ।

સૂર્યનું નિરીક્ષણ કરતી વખતે તેનો આપણી દૃષ્ટિએ ઉપઘાત થાય છે. એજ પ્રકારે અગ્નિ, જળ શૂલ આદિનું નિરીક્ષણ કરતી વખતે તેનો સંપર્ક રહેશે તો પછી તે સમયે તેમના દ્વારા ચક્ષુને દાહ, ક્લેદન (પલળવું) અને પાટનાદિક પણ થવું જોઈએ પણ એ બાબતો બનતી નથી તેનું કારણ શું ?

આ ઉપરથી વિચારવું જોઈએ ચક્ષુમાં પ્રાપ્યકારિતા નથી. એટલે કે ચક્ષુ ઇન્દ્રિય વસ્તુની પાસે જઈને તેનું પ્રકાશન કરતી નથી અને વસ્તુ જ ચક્ષુમાં આવીને પ્રવેશ પણ કરતી નથી, તેથી વિષયભૂત જ્ઞેયથી ચક્ષુનો ઉપાઘાત અનુગ્રહ કંઈ પણ થતું નથી. આ સિદ્ધાંત જ બરાબર છે. બીજી એક વાત એ પણ છે કે જો ચક્ષુને પ્રાપ્યકારી માનવામાં આવે તો પછી તેણે પોતાની અંદર પડેલા રજકણ, મેલ અને અંજનશલાકા આદિનું પણ પ્રકાશન કરવું જોઈએ. પણ એમ થતું નથી તેથી અપ્રાપ્યકારી મન્તવ્ય જ નિર્દોષ છે.

નનુ યદિ ચક્ષુરપ્રાપ્યકારીતિ મન્યસે, તર્હિ મનોવદ્ વિશેષેણ સર્વાનપિ દૂર-વ્યવહિતાદીનર્થાન કુતો ન ગૃહ્ણાતિ ? । યદિ હિ પ્રાપ્તમેવ વિષયં ચક્ષુ ગૃહ્ણાતિ, તર્હિ યુક્તં, દેવાનામપિચક્ષુરનાવૃતમેવ અદૂરદેશમેવ અદૂરસ્થમેવ વસ્તુ વા ગૃહ્ણાતિ, નાવૃતં દૂરદેશં દૂરસ્થં વા, ઇતિ । તત્ર ચક્ષુષો રશ્મીનાં ગમનાસંભવેન સંપર્કાસંભવાત્, તસ્માચ્ચક્ષુઃ પ્રાપ્યકાર્યેવ મન્તવ્યમ્ । તથા યદિ હિ-ચક્ષુરપ્રાપ્યકારિ ભવેત્ તદા તદાવરણમુપઘાતકરણસમર્થં ન સ્યાત્, તતશ્ચાવરણસદ્ભાવેડનુપલબ્ધિરન્ય-થોપલબ્ધિરિતિ વ્યવસ્થા ન સ્યાત્ । પ્રાપ્યકારિત્વે તુ વ્યવહિતે તદાવરણ સદ્ભા-વાચ્ચક્ષુઃસંપર્કાસંભવઃ, અતિદૂરેડપિ ચક્ષુષો રશ્મીનાં ગમનાભાવાન્ન ચક્ષુઃસંપર્કસંભવ ઇતિ ચક્ષુઃ પ્રાપ્યકાર્યેવેતિ મન્તવ્યમિતિ ચેત્,

શંકા—યદિ ચક્ષુકો અપ્રાપ્યકારી આપ માનતે હો તો વહ મનકી તરહ વિના કિસી વિશેષતાકે દૂર વ્યવસ્થિત પદાર્થોં કા પ્રકાશન ક્યોં નહીં કરતા હૈ ? । અર્થાત્ જબ ચક્ષુ અપ્રાપ્ત અર્થકા પ્રકાશક માના જાતા હૈ તો યહ બાત સ્વાભાવિક હૈ કિ ઉસકે દ્વરા સમસ્ત દૂરસ્થિત પદાર્થોંકા ભી પ્રકાશન હોના ચાહિયે, મન જૈસે દૂરસ્થિત પદાર્થોંકા પ્રકાશક માના ગયા હૈ “ જબ ચક્ષુ અર્થકો પ્રાપ્ત હો કર ઉસકા પ્રકાશ કરતા હૈ તો એસી હાલતમેં ઉસસે દૂર વ્યવસ્થિત અથવા આવૃત પદાર્થકા પ્રકાશન નહીં હો સકતા, ક્યોં કિ ઉનકે સાથ ઉસકા સંબંધ નહીં હૈ । દેવોંકી આંખેં ભી અદૂરદેશસ્થ અનાવૃત પદાર્થોં કા હી પ્રકાશન કરતી હૈ, દૂર-દેશસ્થ, આવૃત પદાર્થકા નહીં, ક્યોં કિ વહાં તક ઉનકી કિરણેં જા નહીં સકતી હૈં, અતઃ ચક્ષુકિરણોંકે ગમનકે અભાવમેં ઉન પદાર્થોં કે સાથ અસંપર્ક હોનેકી વજહસે ઉન દૂરદેશસ્થ આવૃત પદાર્થોં કા ઉનકે

શંકા—જે આપ ચક્ષુને અપ્રાપ્યકારી માનતા હો તો તે મનની જેમ કોઈ વિશેષતા વિના દૂર રહેલ પદાર્થોનું પ્રદર્શન કેમ કરતી નથી ? એટલે કે જે ચક્ષુને અપ્રાપ્ત અર્થની પ્રકાશક માનવામાં આવે તો એ વાત સ્વાભાવિક છે, કે જેમ મન દૂર રહેલ પદાર્થોનું પ્રકાશક મનાય છે, તેમ તેના વડે પણ સમસ્ત દૂર પદાર્થોનું પ્રદર્શન થવું જોઈએ. જે ચક્ષુ અર્થને પામીને તેને બતાવે છે તો એવી સ્થિતિમાં તેનાથી દૂર રહેલ અથવા ઢંકાયેલ પદાર્થોનું પ્રકાશન થઈ શકતું નથી, કારણ કે તેની સાથે તેનો સંપર્ક નથી. દેવોની આંખો પણ દૂર નહીં એવા પ્રદેશમાં રહેલ અનાવૃત્ત પદાર્થોનું જ પ્રકાશન કરે છે, દૂર દેશસ્થ આવૃત્ત પદાર્થોનું નહીં, કારણ કે ત્યાં સુધી તેમનાં કિરણો જઈ શકતાં નથી, તેથી ચક્ષુ કિરણોના ગમનને અભાવે તે પદાર્થોની સાથે અસંપર્ક હોવાને કારણે

उच्यते—मनोवच्चक्षुरप्राप्यकार्येवास्ति । अप्राप्यकारित्वाङ्गीकारे दूरव्यवहिता-  
दीनर्थान् कुतो न गृह्णातीति यद् दूषणमुपन्यस्तं तस्य नास्त्यत्र प्रसङ्गः, यतः खलु  
मनोऽपि नाशेषान् विषयान् गृह्णाति, तस्यापि सूक्ष्मेष्वागमगम्यादिषु अर्थेषु मोह-  
दर्शनात् । तस्माद् यथा मनोऽप्राप्यकार्यपि स्वावरणक्षयोपशमसापेक्षत्वान्नियतविषयं,  
तथा—चक्षुरपि स्वावरणक्षयोपशमसापेक्षत्वादप्राप्यकार्यपि नियतविषयम्, अर्थात्-  
योग्यदेशवस्थितमात्रारूप विषयकम् । ततश्च न व्यवहितानामुपलब्धिप्रसङ्गः, नापि  
दूरस्थितानामपि ।

द्वारा प्रकाशन नहीं हो सकता है, अतः चक्षुद्वारा गृहीत पदार्थका ही  
जब प्रकाशन होता है तो यह माननेमें कोई बाधा नहीं है कि चक्षु  
प्राप्यकारी है ।

उत्तर—चक्षु मनकी तरह अप्राप्यकारी ही है । अप्राप्यकारी पक्षमें  
जो ये पूर्वोक्त बातें कही गई हैं कि वह मनकी तरह दूर, व्यवहित पदा-  
र्थोंका प्रकाशन क्यों नहीं करता है सो इन बातों के लिये यहां प्राप्त होने  
का अवसर ही नहीं है, कारण कि मन भी तो आगमगम्य आदि सूक्ष्म पदा-  
र्थोंका प्रकाशन नहीं करता है । इस लिये जैसे मन अप्राप्यकारी होने पर  
भी अपने आवरणके क्षयोपशमके अनुसार नियत विषयवाला माना गया  
है, अर्थात्—योग्य देशमें अवस्थित हुए पदार्थका ग्राहक माना गया है,  
अनियत पदार्थका नहीं, इसी तरह चक्षु भी अप्राप्यकारी होता हुआ  
अपने आवरण के क्षयोपशमानुसार नियत विषय का प्रकाशक होता है,

એ દૂર દેશસ્થ આવૃત પદાર્થોનું તેમના દ્વારા પ્રકાશન થઈ શકતું નથી, તેથી  
ચક્ષુ દ્વારા ગૃહીત પદાર્થોનું જ નો પ્રકાશન થાય છે તો એ માનવામાં કોઈ  
વાંધો નથી કે ચક્ષુ પ્રાપ્યકારી છે.

ઉત્તર—ચક્ષુ મનની જેમ અપ્રાપ્યકારી જ છે. અપ્રાપ્યકારીના પક્ષમાં  
એ પૂર્વોક્ત જે વાતો કહેવાઈ છે કે તે મનની જેમ દૂર રહેલ પદાર્થોનું પ્રકાશન  
કેમ કરતાં નથી તો એ વાતોને માટે અહીં પ્રાપ્ત થવાનો અવસર જ નથી,  
કારણ કે મન પણ આગમગમ્ય આદિ સૂક્ષ્મ પદાર્થોનું પ્રકાશન કરતું નથી.  
તેથી જેમ મન અપ્રાપ્યકારી હોવા છતાં પણ પોતાના આવરણોના ક્ષયોપશમ  
પ્રમાણે નિયતવિષયવાળું મનાયુ છે—એટલે કે યોગ્ય દેશમાં રહેલ પદાર્થનું  
ગ્રાહક મનાયું છે, અનિયત પદાર્થનું નહીં એજ રીતે ચક્ષુ પણ અપ્રાપ્યકારી  
હોવા છતાં પોતાના આવરણના ક્ષયોપશમ પ્રમાણે નિયત વિષયના પ્રકાશક



અપિ ચ-અપ્રાપ્યકારિત્વેઽપિ યોગ્યદેશાપેક્ષા તથાવિધસ્વભાવવિશેષાદ્ દૃશ્યતે, યથા-અયસ્કાન્તસ્ય (‘ચુંબક’ ઇતિ પ્રસિદ્ધમ્) । લોહસ્યાપ્રાપ્યસ્ય કર્ષણે પ્રવર્તમાનોઽયસ્કાન્તો ન ચ્વલુ સર્વસ્યાપિ જગદ્વર્તિનો લોહસ્યાકર્ષકો ભવતિ, કિં તુ પ્રતિનિયતસ્યૈવ ।

અનિયત વિષય કા નહીં, અર્થાત્-યોગ્ય દેશમેં રહે હુએ રૂપકા પ્રકાશન કરતા હૈ, અવિષયભૂત સ્થાન મેં રહે હુએ રૂપકા નહીં । ઇસ તરહ યહ બાત સમજ્ઞને મેં દેરી નહીં લગતી હૈ કિ ચક્ષુ વ્યવહિત પદાર્થોં કા તથા દૂરસ્થિત પદાર્થોં કા પ્રકાશન નહીં કરતા હૈ, અતઃ ઇસ પ્રકાર કા પ્રસંગ જો શંકાકાર ને અપ્રાપ્યકારિત્વ કી માન્યતા મેં દિયા હૈ વહ ઉચિત નહીં હૈ ।

તથા-તથાવિધસ્વભાવવિશેષ સે ચક્ષુ મેં યોગ્ય દેશ કી અપેક્ષા દેખી જાતી હૈ । તાત્પર્ય ઇસકા યહ હૈ કિ ચક્ષુ અપ્રાપ્યકારી હોને પર મી યોગ્ય દેશસ્થિત વસ્તુ કા હી પ્રકાશન કરેગા, કારણ ઉસકા એસા હી સ્વભાવ હૈ । અયોગ્ય દેશસ્થિત વસ્તુ કે પ્રકાશન કરને કા ઉસકા સ્વભાવ નહીં હૈ । જિસ પ્રકાર ચુંબક પથ્થર કા સ્વભાવ અપ્રાપ્ત લોહે કો આકર્ષણ કરને કા હૈ તો ઇસકા તાત્પર્ય યહ થોડે હી હોતા હૈ કિ વહ સંસારભર કે લોહે કા આકર્ષણ કરે । વહ તો યોગ્ય દેશસ્થિત લોહે કા હી આકર્ષણ કરેગા, કારણ કિ ઉસકા એસા હી સ્વભાવ હૈ । ઇસી તરહ ચક્ષુ કા મી

હોય છે, અનિયત વિષયના નહીં, એટલે કે યોગ્ય દેશમાં રહેલ રૂપનું પ્રકાશન કરે છે, વિષયભૂત સ્થાનમાં રહેલ રૂપનું નહીં. આ રીતે એ વાત સમજવામાં વાર થતી નથી કે ચક્ષુ વ્યવહિત પદાર્થોનું તથા દૂર રહેલ પદાર્થોનું પ્રકાશન કરતાં નથી, તેથી આ પ્રકારનો પ્રસંગ જે શંકા કરનારે અપ્રાપ્યકારીની માન્યતા માટે આપેલ છે તે યોગ્ય નથી.

તથા-તે પ્રકારના સ્વભાવ વિશેષથી ચક્ષુમાં યોગ્ય દેશની અપેક્ષા દેખાય છે. તેનું તાત્પર્ય એ છે કે ચક્ષુ અપ્રાપ્યકારી હોવા છતાં પણ યોગ્ય સ્થાનમાં રહેલ પદાર્થનું જ પ્રકાશન કરશે, કારણ કે તેનો એવો સ્વભાવ છે. અયોગ્ય સ્થાનમાં રહેલ વસ્તુનું પ્રકાશન કરવાનો તેનો સ્વભાવ જ નથી. જેમ લોહ-ચુંબકનો સ્વભાવ અપ્રાપ્ત લોહને આકર્ષવાનો છે તો તેનું તાત્પર્ય એ થોડું છે કે તે આખા સંસારના લોહને આકર્ષે ! તે તો યોગ્ય સ્થાનમાં રહેલ લોહનું આકર્ષણ કરશે, કારણ કે તેનો એવો જ સ્વભાવ છે. એજ પ્રમાણે, ચક્ષુનો



અત્ર કેચિત્-વદન્તિ અયસ્કાન્તોઽપિ પ્રાપ્યકારી ભવતિ અયસ્કાન્તંછાયાઽણુભિઃ સહ સમાકૃષ્યમાણવસ્તુનઃ સમ્બન્ધાત્, કેવલં તે છાયાણવઃ સૂક્ષ્મત્વાન્નોપલભ્યન્તે इति तदसत्, तद्ग्राहकप्रमाणाभावात्, नहि तत्र छायाणुसंभवग्राहकं प्रमाणमस्ति, प्रमाणरहितं न किमपि स्वीकर्तुं शक्नुमः ।

નન્વત્ર છાયાણુસંભવે પ્રમાણમનુમાનમસ્તિ, इह हि-‘यदाकर्षणं, तत् संसर्ग-पूर्वकं, यथाऽयोगोलोकस्याकर्षणं संदर्शेन वा अयस्कान्तेन वा भवति, तत्रायस्कान्ते साक्षात्संसर्गः क्वचिदपि न दृष्ट इति साक्षात्संसर्गः प्रत्यक्षवाधितः, ततश्च तत्र तच्छायाणुभिः संसर्गो मन्तव्य इति चेन्न, हेतोरनैकान्तिकत्वात् मन्त्रेण व्यभिचारात्, मन्त्रः स्मर्यमाणोऽपि विवक्षितं वस्तु आकर्षति, न च तत्र कोऽपि संसर्ग इति ।

ऐसा ही स्वभाव है कि वह अप्राप्यकारी होता हुआ भी योग्य देशस्थित पदार्थ का ही प्रकाशन करता है, देशभर के सब पदार्थों का नहीं ।

कोई २ ऐसा कहते हैं कि अयस्कान्त ( चुम्बक पत्थर ) अप्राप्यकारित्व की सिद्धि में दृष्टान्तभूत नहीं बन सकता है, कारण कि वह स्वयं प्राप्यकारी है । अयस्कान्त जो लोहे का आकर्षण करता है वह अप्राप्त होकर उसका आकर्षण नहीं करता है किन्तु आकृष्यमाण वस्तु के साथ में उसके छायाणुओं का संबंध होता है, इसी से वह उसका आकर्षण करता है । वे छायाणु अत्यन्त सूक्ष्म होनेसे देखे नहीं जाते हैं । ऐसा कथन भी ठीक नहीं है, कारण कि छायाणुका ग्राहक कोई प्रमाण नहीं है । जिसका ग्राहक प्रमाण नहीं होता है वह केवल कहने मात्रसे स्वीकार करने योग्य नहीं होता है ।

પણ એવો સ્વભાવ છે કે તે અપ્રાપ્યકારી હોવા છતાં પણ યોગ્ય પ્રદેશમાં રહેલ પદાર્થનું જ પ્રકાશન કરે છે, સમસ્ત દેશના સમસ્ત પદાર્થોનું નહીં.

કોઈ કોઈ એવું કહે છે કે અયસ્કાન્ત (ચુંબક પથ્થર) અપ્રાપ્યકારીત્વની સાબીતીમાં દષ્ટાંતરૂપ બની શકતો નથી, કારણ કે તે પોતે જ પ્રાપ્યકારી છે. ચુંબક પથ્થર જે લોહાનું આકર્ષણ કરે છે તે અપ્રાપ્ત થઈને તેનું આકર્ષણ કરતો નથી પણ આકર્ષાતી વસ્તુની સથે તેના છાયાણુઓનો સંબંધ હોય છે, તેથી તે તેનું આકર્ષણ કરે છે. એ છાયાણુ અત્યંત સૂક્ષ્મ હોવાથી દેખાતા નથી. એવું કથન પણ યોગ્ય નથી, કારણ કે છાયાણુનો ગ્રાહક કોઈ પ્રમાણ નથી જેનો ગ્રાહક ( ગ્રહણ કરનાર ) પ્રમાણ ન હોય તે ક્ષત કહેવા માનવી સ્વીકાર કરવામાં આવતું નથી.

શક્ટા—‘છાયાણુ હૈં’ इस बातका संवादक अनुमान प्रमाण है और वह इस तरहसे है “ जो २ आकर्षण होता है वह २ संसर्गपूर्वक होता है, जैसे अयोगोलकका आकर्षण संडासीसे होता है, अथवा अयस्कांत से होता है। संडासी से जो अयोगोलकका आकर्षण होता है उसमें संडासी और अयोगोलकका संसर्ग साक्षात् दिखता है, परन्तु अयस्कांतके द्वारा जब अयोगोलकका आकर्षण होता है उस समय अयस्कांतमें यह संसर्ग साक्षात् नहीं दिखता है, क्यों कि अयस्कांतमें साक्षात् संसर्ग कहीं पर भी देखा नहीं गया है, इस लिये साक्षात्संसर्ग वहां प्रत्यक्षसे बाधित होता है, परन्तु जब ऐसी व्याप्ति है कि जो २ आकर्षण होता है वह २ संसर्गपूर्वक होता है तब यह मानना पड़ता है कि अयस्कांतके छायाणुओंके साथ लोहेका संसर्ग है।

उत्तर—इस प्रकारका कथन भी ठीक नहीं है, कारण यह व्याप्ति युक्तियुक्त नहीं है। निर्दोष व्याप्तिसे उत्पन्न अनुमान ही प्रमाणकोटि में आता है। युक्तियुक्त नहीं होनेके कारण यह है कि—देखो मंत्रादिकों के द्वारा भी तो आकर्षण होता है, परन्तु आकर्षणीय वस्तुके साथ उसका कोई संसर्ग नहीं होता है। इस तरह साध्याभावमें हेतुके रहने से आकर्षक हेतु व्यभिचरित हो जाता है। इसमें समझाने जैसी कोई

શક્ટા—“છાયાણુ છે” આ વાતનું સંવાદક અનુમાન પ્રમાણ છે. અને તે આ પ્રમાણે છે—“ જે જે આકર્ષણ થાય છે તે તે સંસર્ગપૂર્વક થાય છે જેમકે અયોગોલક નું આકર્ષણ સંડાસીથી થાય છે, અથવા ચુંબક પથ્થરથી થાય છે. સંડાસીથી અયોગોલકનું જે આકર્ષણ થાય છે, તેમાં સંડાસી અને અયોગોલકનો સંસર્ગ પ્રત્યક્ષ દેખાય છે, પણ ચુંબક પથ્થરના દ્વારા જ્યારે અયોગોલકનું આકર્ષણ થાય છે તે સમયે ચુંબક પથ્થરમાં આ સંસર્ગ પ્રત્યક્ષ દેખાતો નથી, કારણ કે લોહકાન્તમાં સાક્ષાત્ સંસર્ગ કયાંય પણ જોવામાં આવ્યો નથી, તેથી ત્યાં સાક્ષાત્ સંસર્ગ ત્યાં પ્રત્યક્ષથી બાધિત થાય છે, પણ જ્યારે એવી વ્યાપ્તિ છે કે જે જે આકર્ષણ થાય છે તે તે સંસર્ગપૂર્વક થાય છે. ત્યારે તો એ માનવું પડે છે કે લોહકાન્તના છાયાણુઓની સાથે લોહનો સંસર્ગ છે.

ઉત્તર—એ પ્રકારનું કથન પણ ખરાબર નથી, કારણ કે આ વ્યાપ્તિ યુક્તિયુક્ત નથી. નિર્દોષ વ્યાપ્તિથી ઉત્પન્ન અનુમાન જે પ્રમાણ કોટિનું છે. યુક્તિયુક્ત ન હોવાનું કારણ એ છે કે—મંત્રાદિ દ્વારા પણ આકર્ષણ થાય છે. પણ આકર્ષણીય વસ્તુની સાથે તેનો કોઈ સંસર્ગ થતો નથી, આ રીતે સાધ્ય-ભાવમાં હેતુના રહેવાથી આકર્ષણ હેતુ વ્યભિચરિત થઈ જાય છે. તેમાં સમ-

અપિ ચ—યથા છાયાણવઃ પ્રાપ્તમેવ લોહં સમાકર્ષન્તિ, તથા કાષ્ઠાદિકમપિ પ્રાપ્તં કર્મમાત્ર સમાકર્ષન્તિ । યદિ પ્રતિનિયતશક્તિમત્ત્વાત્ કાષ્ઠાદિકં નાકર્ષન્તી-ત્યુચ્યતે, તર્હિ મનસોઽપિ શક્તિઃ પ્રતિનિયતૈવેતિ મનો યથા સૂક્ષ્મેષ્વર્થેષુ ક્વચિન્ન જ્ઞાનમુત્પાદયતિ, શક્તિપ્રતિનિયમાત્, તથા ચક્ષુરપિ વ્યવહિતદૂરદેશસ્થિતાન્ વિષ-યાન્ ગૃહ્ણતીતિ મન્તવ્યમ્, કિમનેન છાયાણુપરિકલ્પનેનેતિ ।

બાત નહીં હૈ કિ-મંત્રકા જવ માંત્રિક સ્મરણ કરતા હૈ તથા ઉસકે દ્વારા વિવક્ષિત વસ્તુકા આકર્ષણ હોતા હૈ ।

ફિર મી ઉત્તર યહ હૈ કિ-જિસ તરહ છાયાણુ, પ્રાપ્ત હુઅ લોહકા આપકે મન્તવ્યાનુસાર આકર્ષણ કરતે હૈ તો હસી તરહ વે પ્રાપ્ત કાષ્ઠાદિક કા આકર્ષણ ક્યોં નહીં કરતે હૈ ? યદિ હસકે સમાધાનમ્ એસા કહા જાય કિ ઉનકી શક્તિ પ્રતિ નિયત હૈ, પ્રતિ નિયત શક્તિવિશિષ્ટ હોનેસે હી વે પ્રાપ્ત કાષ્ઠાદિકકા આકર્ષણ નહીં કરતે હૈ તો ફિર યહી બાત મનમ્ મી માન લેની ચાહિયે, અર્થાત્ મનકી શક્તિ મી પ્રતિનિયત હી હૈ હસી લિયે વહ સૂક્ષ્માદિક અર્થોં મ્ જ્ઞાનકા ઉત્પાદક નહાં હોતા હૈ, અતઃ જિસ પ્રકાર પ્રતિનિયત શક્તિવાલા હોનેસે મન કહીં સૂક્ષ્માદિક પદાર્થોં મ્ જ્ઞાનકા ઉત્પાદક નહીં હોતા, ઉસી પ્રકાર ચક્ષુ મી વ્યવહિત અવં દૂર દેશસ્થિત વિષયોંકા પ્રકાશક નહીં હોતા હૈ ફિર અપની બાતકો સિદ્ધ કરનેકે લિયે અપ્રસિદ્ધ છાયાણુઓંકી કલ્પના કરનેસે કયા લાભ ? ।

જાવવા જેવી કોઈ વાત નથી કે-જ્યારે માંત્રિક મંત્રનું સ્મરણ કરે છે ત્યારે ત્યારે તેના દ્વારા વિવક્ષિત વસ્તુનું આકર્ષણ થાય છે.

વળી ખીજે જવાબ એ છે કે જેમ છાયાણુ, પ્રાપ્ત થયેલ લોહનું આપના મત પ્રમાણે આકર્ષણ કરે છે તો એ જ પ્રમાણે તે પ્રાપ્ત કાષ્ઠાદિકનું આકર્ષણ કેમ કરતા નથી ? જો તેના સમાધાનરૂપે એમ કહેવામાં આવે કે તેની શક્તિ પ્રતિનિયત છે. પ્રતિનિયત શક્તિવિશિષ્ટ હોવાથી તે પ્રાપ્ત કાષ્ઠાદિકનું આકર્ષણ કરતા નથી તો પછી એજ વાત મનની બાબતમાં પણ માનવી જોઈએ, એટલે કે મનની શક્તિ પણ પ્રતિનિયત જ છે તેથી તે સૂક્ષ્માદિક અર્થોમાં જ્ઞાનનું ઉત્પાદક થતું નથી, તેથી જેમ પ્રતિનિયત શક્તિવાળું હોવાને લીધે મન કોઈ સૂક્ષ્માદિક પદાર્થોમાં જ્ઞાનનું ઉત્પાદક થતું નથી એજ પ્રમાણે ચક્ષુ પણ વ્યવહિત અને દૂર સ્થાનમાં રહેલ વસ્તુનું પ્રકાશક થતું નથી, તો પોતાની વાત સિદ્ધ કરવાને માટે અપ્રસિદ્ધ છાયાણુઓની કલ્પના કરવાથી શો લાભ ?

યત્તુ-વ્યવહિતાર્થાનુપલબ્ધિર્દર્શનાચ્ચક્ષુઃ પ્રાપ્યકારીતિ મન્યતે તદયુક્તમ્-  
કાચા-અમ્રકપટલ-સ્ફટિકૈર્વ્યવહિતસ્યાપ્યુપલબ્ધિર્દર્શનેન હેતોરનૈકાન્તિકત્વાત્ ।

અથ નયનરશ્મયો નિર્ગત્ય તમર્થં ગૃહ્ણન્તિ, નયનરશ્મયથ તૈજસત્વાન્ન તેજોદ્રવ્યૈઃ  
પ્રતિસ્વલિતા ભવન્તીતિ ચક્ષુષઃ પ્રાપ્યકારિત્વસ્વીકારે નાસ્તિ કશ્ચિદ્દોષ इति चेत्,  
તદપિ ન સમીचीનમ્, મહાજ્વાલાદૌ સ્વલનોપલબ્ધેઃ, તસ્માચ્ચક્ષુરપ્રાપ્યકારીતિ  
સ્થિતમ્ ॥

एवं मनसोऽप्यप्राप्यकारित्वं विज्ञेयम् । तत्रापि विषयकृतानुग्रहोपघाताभावात् ।

‘વ્યવહિત અર્થની ઉપલબ્ધિ નહીં હોતી’ હસસે જો તુમ ચક્ષુમેં  
પ્રાપ્યકારિતા માનતે હો સો યહ વાત ઠીક નહીં હૈ, કારણ કિ કાચ,  
એવં મોડલ એવં સ્ફટિકમણિયોંસે ઢકે હુએ વ્યવહિત પદાર્થોં કી મી  
ઉપલબ્ધિ હોતી દેખી જાતી હૈ ।

यदि इस पर यह कहा जावे कि चक्षुकी किरणें निकल कर उस  
काच अम्रकपटल आदिसे व्यवहित पदार्थको ग्रहण करती हैं। ये रश्मियां  
तैजस हैं अतः तैजस द्रव्योंद्वारा इनकी प्रतिस्वलना-रूकावट नहीं होती  
है, इस लिये चक्षुको प्राप्यकारि माननेमें कोई दोष नहीं है, सो ऐसी  
धारणा भी युक्तियुक्त नहीं है, कारण कि महाज्वाला आदिमें इसकी  
स्वलना देखी जाती है। इस लिये यही मानना चाहिये की चक्षु  
अप्राप्यकारी है ।

इसी तरह विषयकृत अनुग्रह और उपघातका मनके साथ संपर्क  
न होनेसे उसको भी अप्राप्यकारी जानना चाहिये ।

“વ્યવહિત અર્થની પ્રાપ્તિ થતી નથી” તમે ચક્ષુમાં જે પ્રાપ્યકારિતા  
માનો છો તે વાત ખરાબર નથી, કારણ કે કાચ, અમ્રખ અને સ્ફટિકમણીઓમાં  
ઢંકાયેલ વ્યવહિત પદાર્થોની ઉપલબ્ધિ થતી દેખાય છે.

જે એ બાબતમાં એમ કહેવામાં આવે કે-ચક્ષુનાં કિરણો નીકળીને તે  
કાચ, અમ્રકપટલ, આદિથી આરંભાદિત પદાર્થને ગ્રહણ કરે છે. એ કિરણો  
તેજસ્વી છે તેથી તેજસ્વી દ્રવ્યો દ્વારા તેની રૂકાવટ થતી નથી, તેથી ચક્ષુને  
પ્રાપ્યકારી માનવામાં કોઈ દોષ નથી, તો એવી માન્યતા પણ યુક્તિયુક્ત નથી,  
કારણ કે અગ્નિ મહાજ્વાળા આદિમાં તેની રૂકાવટ દેખાય છે. તે કારણે એમ જ  
માનવું જોઈએ કે ચક્ષુ અપ્રાપ્યકારી છે. એજ રીતે વિષયકૃત અનુગ્રહ અને ઉપ-  
ઘાતનો મનની સાથે પણ સંપર્ક ન હોવાથી તેને પણ અપ્રાપ્યકારી  
માનવું જોઈએ.

નનુ મનસોઽપિ હર્ષાદિષ્વનુગ્રહઃ શરીરોપચયદર્શનાત્, તથાહિ-હર્ષપ્રકર્પવશાન્મ-  
નસઃ પુષ્ટતા ભવતિ, તદ્વશાન્ચ શરીરસ્યોપચયઃ । તથા-શોકાદિભિઃ શરીરદૌર્બલ્યોર-  
ક્ષતાદિદર્શનાત્, અતિશોકકરણેન મનસો વિઘાતઃ સંભવતિ તતશ્ચ શરીરદૌર્બલ્યમ્,  
અતિચિન્તાકરણેન તુ હૃદયરોગો ભવતીતિ ચેત્ ?

ઉચ્યતે—મનસોઽપ્રાપ્યકારિત્વં વર્તતે, વિષયકૃતાનુગ્રહોપઘાતાભાવાત્ । વિષ-  
યકૃતોઽનુગ્રહસ્તથોપઘાતશ્ચ મનસો ન ભવતિ, શરીરસ્યાનુગ્રહોપઘાતૌ મનઃ સ્વયં પુદ્ગ-  
લમયત્વાત્ કર્તું શક્નોતિ, યથા-દૃષ્ટરૂપ આહારઃ પરિભુજ્યમાનઃ શરીરસ્ય પુષ્ટિ  
કરોતિ, અનિષ્ટરૂપસ્તુ હાર્નિ કરોતિ, તથા મનોઽપીષ્ટપુદ્ગલોપચિતં હર્ષાદિકારણં  
સત્ પુષ્ટિં જનયતિ, અનિષ્ટપુદ્ગલોપચિતં ચ શોકાદિચિન્તાકારણં સત્ શરીરસ્ય  
હાર્નિં જનયતિ । તસ્માદ્ મનોઽપિ વિષયકૃતાનુગ્રહોપઘાતાભાવાદ્ અપ્રાપ્યકારીતિ  
સ્થિતમ્ ।

શંકા—વિષયકૃત ઉપઘાત ઔર અનુગ્રહકા સંબંધ મનમેં દેખા  
જાતા હૈ, જૈસે જબ હર્ષપરિણતિ હોતી હૈ તો મનમેં પુષ્ટતા આતી હૈ,  
ઔર હસ પુષ્ટતારૂપ પ્રસન્નતા કી વજહસે શરીરકા ઉપચય હોતા હૈ ।  
હસી તરહ જબ શોક આદિકા સંબંધ હોતા હૈ તો હસ સમય મનકા  
વિઘાત હોતા હૈ, હસસે શરીરમેં દુર્બલતા આતી હૈ । અતિ ચિન્તા કરને  
સે મનુષ્ય હૃદયરોગી હોતા હુઆ દેખા જાતા હૈ । હસસે હસી વાતકી  
પુષ્ટિ હોતી હૈ કિ મનકે ઉપર વિષયકૃત પદાર્થો કા અનુગ્રહ ઔર ઉપ-  
ઘાત હોતા હૈ, ફિર યહ મન અપ્રાપ્યકારી કૈસે હો સકતા હૈ ? ।

ઉત્તર—મનમેં પ્રાપ્યકારિતાકા નિષેધ હમ હસ લિયે કરતે હૈં કિ  
હસમેં વિષયકૃત અનુગ્રહ ઔર ઉપઘાત નહીં હોતે હૈં, કિન્તુ મન પુદ્ગલ-

શંકા—વિષયકૃત ઉપઘાત અને અનુગ્રહનો સંબંધ મનમાં દેખાય છે.  
જેમ કે જ્યારે હર્ષપરિણતિ થાય છે ત્યારે મનમાં પુષ્ટતા થાય છે, અને આ  
પુષ્ટતાશ્ચ પ્રસન્નતાને કારણે શરીરનો ઉપચય થાય છે. એજ રીતે જ્યારે શોક  
આદિનો સંબંધ થાય છે ત્યારે મનમાં વિઘાત થાય છે, તે કારણે શરીરમાં દુર્બ-  
ળતા આવે છે, અતિચિન્તા કરવાથી, માણસ હૃદયરોગી થતો લેવા મળે છે,  
તેથી એ વાતને પુષ્ટિ મળે છે કે મન ઉપર વિષયકૃત પદાર્થોનો અનુગ્રહ અને  
ઉપઘાત થાય છે, તો પછી આ મન કેવી રીતે અપ્રાપ્યકારી હોઈ શકે ?

ઉત્તર—એમ માનવામાં પ્રાપ્યકારિતાનો નિષેધ એ કારણે કરીએ છીએ કે  
તેમાં વિષયકૃત અનુગ્રહ અને ઉપઘાત થતાં નથી, પણ મન પુદ્ગલમય હોવાથી

इह सौगता आहुः—चक्षुः श्रोत्रं मनोऽप्राप्यकारीति, तन्न सम्यक्, तदेव हि अप्राप्यकारि भवितुमर्हति यस्य विषयकृतानुग्रहोपघाताभावौ भवतः, यथा—चक्षुर्मनसोः। श्रोत्रेन्द्रियस्य तु शब्दकृत उपघातो दृश्यते, यथा—सद्योजातशिशोः

મય હોનેસે શરીરકા અનુગ્રહ ઔર ઉપઘાત સ્વયં કર સકતા હૈ । જિસ તરહ ઇચ્છિત આહાર શારીરિક પુષ્ટિ કરતા હૈ ઔર અનિષ્ટ આહાર હાનિ કરતા હૈ ઁસી તરહ મન મી ઇષ્ટ પુદ્ગલોંસે ઉપચિત હો કર હર્ષાદિકકા કારણ હોતા હુઆ શરીરકી પુષ્ટિ કરતા હૈ, તથા અનિષ્ટ પુદ્ગલોંસે ઉપચિત હો કર શોકાદિ ચિન્તાકા કારણ હોતા હુઆ શરીરકી હાનિ કરતા હૈ, ઇસ લિયે મન મી વિષયકૃત અનુગ્રહ ઉપઘાતકા અભાવવાલે હોનેસે અપ્રાપ્યકારી હૈ, યહ વાત સિદ્ધ હો જાતી હૈ ।

બૌદ્ધોં કા ઁસા કહના હૈ કિ ‘ચક્ષુ શ્રોત્ર ઔર મન યે તીનોં અપ્રાપ્યકારી હૈં’ સો ‘ચક્ષુ ઔર મન અપ્રાપ્યકારી હૈં’ ઇસ વિષયમૈં તો હમૈં કોઈ વિવાદ નહીં હૈં પરન્તુ શ્રોત્રકો અપ્રાપ્યકારી માનના યહ વિષય ઇષ્ટ નહીં હૈ, કારણ અપ્રાપ્યકારી વહી હો સકતા હૈ, જિસમૈં વિષયકૃત અનુગ્રહ ઔર ઉપઘાત નહીં હોતે હૈં । વિષયકૃત ઉપઘાત ઔર અનુગ્રહ ચક્ષુ મનમૈં નહીં હોતે હૈં, ઇસ લિયે વે હી અપ્રાપ્યકારી હૈં, શ્રોત્ર ઇન્દ્રિય નહીં, કારણ ઁસમૈં વિષયકૃત ઉપઘાત ઔર અનુગ્રહ હોતે હૈં । સદ્યોજાત વાલકકે પાસ જવ બડે જોરસે ઢાલ્લરીકા

શરીરનો અનુગ્રહ અને ઉપઘાત પોતે જ કરી શકે છે. જેમ ઇચ્છિત આહાર શારીરિક પુષ્ટિ કરે છે અને અનિષ્ટ આહાર હાનિ કરે છે એજ પ્રમાણે મન પણ ઇચ્છિત પુદ્ગલોથી ઉપચિત થઈને હર્ષાદિકનું કારણ થઈને શરીરની પુષ્ટિ કરે છે, તથા અનિષ્ટ પુદ્ગલોથી ઉપચિત થઈને શોકાદિ ચિન્તાનું કારણ થઈને શરીરને હાનિ કરે છે, તે કારણે મન પણ વિષયકૃત અનુગ્રહ ઉપઘાતના અભાવવાળું હોવાથી અપ્રાપ્યકારી છે. એ વાત સિદ્ધ થાય છે.

બૌદ્ધોનું એવું કહેવું છે કે “ચક્ષુ, શ્રોત્ર, અને મન એ ત્રણે અપ્રાપ્યકારી છે” તો ચક્ષુ અને મન અપ્રાપ્યકારી છે, એ વિષયમાં તો અમારે કોઈ વિવાદ નથી પણ શ્રોત્રને અપ્રાપ્યકારી માનવી તે વાત ઇષ્ટ નથી, કારણ કે અપ્રાપ્યકારી એજ હોઈ શકે છે કે જેમાં વિષયકૃત અનુગ્રહ અને ઉપઘાત હોતા નથી. વિષયકૃત ઉપઘાત અને અનુગ્રહ ચક્ષુ અને મનમાં થતાં નથી તેથી એજ અપ્રાપ્યકારી છે શ્રોત્રેન્દ્રિય નહીં, કારણ કે તેમાં વિષયકૃત ઉપઘાત અને અનુગ્રહ થાય છે. તરતના જન્મેલા બાળકની પાસે જે ઘણા જોરથી અલર વગાડવામાં આવે, તો તેનાં



સમીપેડતિતાહિતજ્ઞહરીનાદશ્રવણતઃ, તથા વિદ્યુત્પાતપ્રત્યાસન્નદેશાવસ્થિતજનનાં વિદ્યુત્પાતનિર્ઘોષશ્રવણતો વધિરીભાવઃ પ્રજાયતે । શબ્દપરમાણ્વો હિ ઉત્પત્તિ-દેશાદારમ્ય સર્વતો જલતરજ્ઞન્યાયેન પ્રસરન્તઃ શ્રોત્રેન્દ્રિયદેશમાગચ્છન્તિ, તતઃ સંભવત્યુપઘાતઃ । અતઃ શ્રોત્રેન્દ્રિયસ્ય અપ્રાપ્યકારિત્વં ન સિધ્યતીતિ ।

નનુ યદિ શ્રોત્રેન્દ્રિયં સ્વદેશપ્રાપ્તમેવ શબ્દં ગૃહ્ણાતિ નત્વપ્રાપ્તં, તર્હિ યથા ગ્રાણેન્દ્રિયેણ ગન્ધે ગૃહ્યમાણે તત્ર દૂરાસન્નતયા ભેદપ્રતીતિર્ન ભવતિ, તથા શબ્દેડપિ ન સ્યાત્, પ્રાપ્તસ્યૈવ વિષયસ્ય ગ્રહણે સર્વોડપિ વિષયઃ સંનિહિત એવ સ્યાદિતિ દૂરાસ-સન્નતયા ભેદપ્રતીતિર્ન સંભવતિ, લોકે તુ પ્રતીયતે દૂરાસન્નતયા શબ્દઃ, યથા-‘ અયં દૂરવર્તી શબ્દઃ શ્રૂયતે ’ ઇતિ વદન્તિ લોકે ।

તાડન હોતા હૈ, તબ ઉસકે કાન બહિરે હો જાતે હૈં । હસી તરહ વિદ્યુત્પાત કે સમય મેં જો વ્યક્તિ ઉસકે પતન કે સ્થાન સે પાસ કે સ્થાન મેં રહતે હૈં ઉનકે કાનોં મેં ઉસકે નિર્ઘોષ કે શ્રવણ સે વધિરતા આજાતી હૈ । જિસ પ્રકાર જલ મેં ઉસકી તરજ્ઞે ઉત્પત્તિ સ્થાન સે લેકર તટ તક ફેલતી હુઈ આતી હૈં હસી પ્રકાર શબ્દ કે પરમાણુ ભી ઉત્પત્તિ સ્થાન સે લેકર શ્રોતા કે શ્રોત્રેન્દ્રિય પ્રદેશતક ફેલતે હુએ આતે હૈ, હસસે શ્રોત્રેન્દ્રિય મેં ઉસ શબ્દ કે દ્વારા ઉપઘાત હોતા હૈ । હસલિયે વિષયકૃત ઉપઘાત હોને સે શ્રોત્રેન્દ્રિય પ્રાપ્યકારી સિદ્ધ હોતી હૈ ।

શંકા—યદિ શ્રોત્રેન્દ્રિય મેં પ્રાપ્યકારિતા માની જાવે તો જિસ પ્રકાર પ્રાપ્યકારી ગ્રાણેન્દ્રિય દ્વારા ગન્ધ કે ગ્રહણ હોને પર ઉસ ગંધ મેં દૂર આસન્ન આદિ કા ભેદ વ્યવહાર નહીં હોતા હૈ, ઉસી પ્રકાર શબ્દ મેં ભી યહ ભેદ વ્યવહાર નહીં હોના ચાહિયે, કારણ વહ તો પ્રાપ્ત કો હી ગ્રહણ

કાન બહેરા થઈ જાય છે. એજ પ્રમાણે વિજળી પડવાને સમયે, જે વ્યક્તિઓ તેના પતનના સ્થાનની નજીકની જગ્યાએ હોય છે, તેમના કાનમા તેનો કડાકો સાંભળવાથી બહેરાશ આવી જાય છે. જેમ પાણીમાં તેનાં મોજાંઓ ઉત્પત્તિ સ્થાનથી માંડીને કિનારા સુધી ફેલાતાં ફેલાતા આવે છે એજ પ્રમાણે શબ્દના પરમાણુઓ પણ ઉત્પત્તિ સ્થાનથી લઈને સાંભળનારના કાન સુધી ફેલાતાં ફેલાતા આવે છે. તેથી શ્રોત્રેન્દ્રિયમાં એ શબ્દ દ્વારા ઉપઘાત થાય છે. તેથી વિષયકૃત ઉપઘાત હોવાથી શ્રોત્રેન્દ્રિય પ્રાપ્યકારી સિદ્ધ થાય છે.

શંકા—જે શ્રોત્રેન્દ્રિય દ્વારા ગંધ ગ્રહણ કરતા તે ગંધમાં ફર રહેલ વગેરેનો ભેદ વ્યવહાર થતો નથી, એજ પ્રમાણે શબ્દમાં પણ એ ભેદ વ્યવહાર હોવો ન જોઈએ. કારણ કે તે તો પ્રાપ્તને જ ગ્રહણ કરે છે, પ્રાપ્ત થયેલ પદાર્થ



અપિ ચ-શ્રોત્રેન્દ્રિયં પ્રાપ્તમેવ શબ્દં ગૃહ્ણતિ, તર્હિં ચાણ્ડાલભાષિતોઽપિ શબ્દઃ શ્રોત્રેન્દ્રિયેણ સ એવ ગૃહ્યતે, યઃ સ્વલુ શ્રોત્રેન્દ્રિયસંસ્પૃષ્ટો ભવતિ તતશ્ચ શ્રોત્રેન્દ્રિયસ્ય ચાણ્ડાલસ્પર્શદોષપ્રસન્નઃ સ્યાદિતિ ચેત્ ?

અત્રોચ્યતે—શ્રોત્રેન્દ્રિયસ્ય યદપ્રાપ્યકારિત્વં મન્યસે, તદેતન્મહામોહવિલસિતમ્, યદ્યપિ પ્રાપ્ત એવ શબ્દઃ શ્રોત્રેન્દ્રિયેણ ગૃહ્યતે, તથાપિ શબ્દે શક્તિવૈચિત્ર્ય-સંભવાદ્ દૂરાસન્નાદિભેદપ્રતીતિર્ભવતિ, તથાહિ-દૂરાદાગતઃ શબ્દઃ ક્ષીણશક્તિકતયા ક્ષીણોઽસ્પષ્ટરૂપો વા ઉપલક્ષ્યતે । તતશ્ચ લોકો વદતિ-‘દૂરે શબ્દઃ શ્રૂયતે’ ઇતિ, દૂરાદાગતઃ શબ્દઃ શ્રૂયતે, ઇતિ તદર્થઃ ।

કરતી હૈ, પ્રાપ્ત हुआ पदार्थ समीप में ही होता है, फिर इस व्यवहार के होने का वहाँ विरोध क्यों नहीं आवेगा ? परन्तु शब्द में दूर आसन्न आदि का भेद व्यवहार लोक में होता हुआ देखा ही जाता है । लोक कहते हैं—यह दूर का शब्द सुनने में आ रहा है, यह नजदीक का शब्द सुनने में आ रहा है ।

फिर भी-श्रोत्रेन्द्रिय प्राप्त हुए ही शब्द को ग्रहण करती है ऐसा मानने पर एक यह और आपत्ति आती है कि शब्द जब चाण्डाल के मुख से निर्गत होकर हमारे कान को प्राप्त होगा तो श्रोत्रेन्द्रिय में अस्पृश्यता आ जावेगी, क्यों कि उसने चाण्डाल के अस्पृश्य शब्द को ग्रहण किया है, अतः वह चाण्डाल के स्पर्श करने के दोष से मुक्त कैसे माना जा सकेगा ।

उत्तर—श्रोत्रेन्द्रिय में यह आप्राप्यकारिता की मान्यता महामोह का एक विलास है, क्यों कि यह जो कुछ कहा गया है वह विना विचारे

નજીકમાં જ હોય છે, તો પછી આ વ્યવહાર હોવામાં ત્યાં વિરોધ કેમ નહીં આવે ? પણ શબ્દમાં દૂર રહેલ આદિનો ભેદ વ્યવહાર લોકમાં થતો જોવામાં આવે છે જ. લોકો કહે છે કે—આ દૂરનો શબ્દ સંભળાઈ રહ્યો છે, આ નજીકનો શબ્દ સંભળાઈ રહ્યો છે.

વળી-શ્રોત્રેન્દ્રિય પ્રાપ્ત થયેલ શબ્દને ગ્રહણ કરે છે એવું માનવામાં આ એક ખીલ મુશ્કેલી પણ નકે છે કે શબ્દ જો ચાંડાળના મુખમાંથી નીકળીને અમારા કાને પડશે તો શ્રોત્રેન્દ્રિયમાં અસ્પૃશ્યતા આવી જશે, કારણ કે તેણે ચાંડાળના અસ્પૃશ્ય શબ્દને ગ્રહણ કર્યા છે, તેથી તે ચાંડાળના સ્પર્શ થવાના દોષથી મુક્ત કેવી રીતે માની શકાશે ?

ઉત્તર—શ્રોત્રેન્દ્રિયમાં આપ્રાપ્યકારિતાની માન્યતા મહામોહનો એક વિલાસ છે, કારણ કે આ જે કંઈ કહેવાયું છે તે વિચાર્યા વિનાજ કહેવાયું છે. પ્રાપ્ય-

નનુ સ્યાદેતત્, એવમેતદપિ વક્તું શક્યતે—‘દૂરે રૂપમુપલભ્યતે’ ઇતિ । દૂરા-  
દાગતં રૂપમુપલભ્યતે, ઇતિ તદર્થઃ । તતશ્ચ ચક્ષુરપિ પ્રાપ્યકારિ સ્યાત્, ન ચ  
તદિષ્યતે । તતશ્ચ શબ્દે શક્તિવૈચિત્ર્યકલ્પનં, શ્રોત્રેન્દ્રિયસ્ય ચ પ્રાપ્યકારિત્વકલ્પનં  
ન યુક્તમિતિ चेन्न ।

હી કહા ગયા હૈ । પ્રાપ્યકારી होने पर भी श्रोत्रेन्द्रिय द्वारा गृहीत शब्द  
में जो दूर और समीप आदिका भेद व्यवहार होता है, वह शब्दशक्ति  
की विचित्रता से होता है । जब शब्द दूर देश से आता है तो उसकी  
शक्ति क्षीण हो जाती है, उस समय वह अस्पष्टरूप से या मन्दरूप से  
सुनने में आता है, इसलिये लोक कहते हैं कि यह शब्द दूर से आया  
हुआ सुनाई दे रहा है ।

પ્રશ્ન यदि इस पर यह आक्षेप किया जाय कि जिस प्रकार “दूर से  
आया हुआ शब्द सुनाई दे रहा है” ऐसा बोध होने से श्रोत्रेन्द्रिय में  
प्राप्यकारिताका आप समर्थन करते हैं तो फिर “दूररूपमुपलभ्यते”  
दूरसे आये हुए रूपको चक्षु इन्द्रिय जानती है, इस प्रकारके बोधसे  
चक्षु इन्द्रिय को भी प्राप्यकारी मान लेना चाहिये, परन्तु इस तरहसे चक्षु  
इन्द्रिय प्राप्यकारी तो आपने मानी नहीं है, अतः शब्दमें विचित्रशक्ति  
की मान्यता, तथा श्रोत्रेन्द्रियमें प्राप्यकारिताकी कल्पना युक्तियुक्त नहीं  
कही जा सकती ?

કારી હોવા છતાં પણ શ્રોત્રેન્દ્રિય દ્વારા ગ્રહણ થયેલ શબ્દમાં દૂર અને સમીપ  
આદિનો જે ભેદવ્યવહાર થાય છે તે શબ્દશક્તિની વિચિત્રતાને લીધે થાય છે.  
જ્યારે શબ્દ દૂરના સ્થાનેથી આવે છે. ત્યારે તેની શક્તિ ક્ષીણ થઈ જાય છે;  
તે સમયે તે અસ્પષ્ટ રૂપે મન્દ રીતે સંભળાય છે, તેથી લોકો કહે છે કે આ  
શબ્દ દૂરથી આવતો સંભળાય છે.

શંકા—જો તે બાબતમાં એવો આક્ષેપ મૂકવામાં આવે કે જે પ્રકારે  
“દૂરથી આવતો શબ્દ સંભળાય છે” એવો બોધ થવાથી શ્રોત્રેન્દ્રિયમાં પ્રાપ્ય-  
કારિતાનું આપ સમર્થન કરો છો, તો પછી “દૂરે રૂપમુપલભ્યતે” “દૂરથી આવતા  
રૂપને ચક્ષુ ઇન્દ્રિય જાણે છે” આ પ્રકારના બોધથી ચક્ષુ ઇન્દ્રિયને પણ પ્રાપ્ય-  
કારી માનવી જોઈએ. પણ એ રીતે ચક્ષુ ઇન્દ્રિયને તો આપે પ્રાપ્યકારી માની  
નથી, તેથી શબ્દમાં વિચિત્ર શક્તિની માન્યતા, તથા શ્રોત્રેન્દ્રિયમાં પ્રાપ્યકારિ-  
તાની કલ્પના યુક્તિયુક્ત કહી શકાય નહીં ?

इह हि चक्षुषो रूपकृतावनुग्रहोपघातौ न भवतः, श्रोत्रेन्द्रियस्य तु शब्दकृत उपघातोऽस्ति, एतच्च प्रागेव प्रदर्शितम्, तस्मादतिप्रसङ्गापादनं नात्र संभवति ।

अपरं च—प्रत्यासन्नोऽपि जनः पवनस्य प्रतिकूलमवस्थितः शब्दं न शृणोति, पवनानुकूलवस्थाने तु दूरदेशवस्थितोऽपि शब्दं शृणोति, अतएव लोके जना वदन्ति—‘वयं प्रत्यासन्ना अपि त्वदीयं वचो न शृणुमः’ इति । यदि तु जना अप्राप्तमेव शब्दं रूपमिव गृहीयुस्तर्हि पवनप्रतिकूलवस्थानेऽपि जना रूपमिव शब्दं ग्रहीतुं शक्नुयुः, न च तथा शब्दं गृह्णन्ति, तस्मात् श्रोत्रेन्द्रियदेशे प्राप्ता एव शब्दपरमाणवः

उत्तर—यह बात अभी ही युक्तियों द्वारा सिद्ध की जा चुकी है, चक्षु में विषयकृत उपघात और अनुग्रह नहीं होते हैं तथा ये उपघात और अनुग्रह अपने विषय द्वारा श्रोत्रेन्द्रिय में होते हैं, इसलिये श्रोत्रेन्द्रिय के प्रसङ्ग को लेकर चक्षु में प्राप्यकारिता के प्रसंग का प्रतिपादन करना ठीक नहीं है, कारण कि उस प्रसंग का प्रतिपादन यहां संभवित ही नहीं होता है ।

फिर भी—मनुष्य जब प्रतिकूल वायु के समक्ष स्थित रहता है तब वह अपने पास के व्यक्ति द्वारा उच्चरित शब्द को भी नहीं सुन सकता है, तथा जब अनुकूल वायु के समक्ष उपस्थित होता है तब वह दूर देशमें भी क्यों न रहा हो उस समय वह शब्द को सुन लेता है, इसी लिये लोग ऐसा कहा करते हैं कि—हम तुम्हारे शब्द को पास में रहने पर भी इस प्रतिकूल पवन में रहने की वजह से सुन नहीं पा रहे हैं । चक्षु जिस प्रकार अप्राप्तरूप को ग्रहण करता है उसी प्रकार श्रोत्रे-

ઉત્તર—આ વાત હમણા જ યુક્તિઓ દ્વારા સિદ્ધ કરાઈ ગઈ છે કે ચક્ષુમાં વિષયકૃત ઉપઘાત અને અનુગ્રહ હોતા નથી, તથા એ ઉપઘાત અને અનુગ્રહ પોતાના વિષયદ્વારા શ્રોત્રેન્દ્રિયમાં થાય છે. તેથી શ્રોત્રેન્દ્રિયના પ્રસંગને લીધે ચક્ષુમાં પ્રાપ્યકારિતાના પ્રસંગનું પ્રતિપાદન કરવું તે યોગ્ય નથી, કારણ કે તે પ્રસંગનું પ્રતિપાદન અહીં સંભવિત જ થતું નથી.

વળી—માણસ જ્યારે પ્રતિકૂળ વાયુ સમક્ષ રહેલ હોય છે ત્યારે તે પોતાની પાસેની વ્યક્તિ દ્વારા ઉચ્ચારવામાં આવેલ શબ્દને પણ સાંભળી શકતો નથી, પણ જ્યારે તે અનુકૂળ વાયુ સમક્ષ રહેલ હોય છે ત્યારે દૂર સ્થાને પણ રહેવા છતાં તે શબ્દને સાંભળી શકે છે, તેથી લોકો એમ કહ્યા કરે છે કે—અમે પાસે રહેવા છતાં પણ તમારા શબ્દને પ્રતિકૂળ પવનમાં રહેવાને કારણે સાંભળી શકતા નથી. જેમ ચક્ષુ અપ્રાપ્ત રૂપને ગ્રહણ કરે છે એજ પ્રમાણે શ્રોત્રેન્દ્રિય

श्रोत्रेन्द्रियेण गृह्यन्ते, इत्यवश्यमङ्गीकरणीयम् । तथा स्वीकारे पवनप्रतिकूलवस्थाने शब्दपरमाणवो बाहुल्येन श्रोत्रेन्द्रियं न प्राप्नुवन्ति, तेषां प्रतिकूलपवनादन्यथा नीयमानत्वात्, अत एव पवनप्रतिकूलमवस्थिता न शृण्वन्तीति नास्माकं मते-  
काऽपि क्षतिः ।

यच्च चाण्डालस्पर्शदोषप्रसङ्गः स्यादित्युक्तं तदपि न सम्यक्, स्पर्शस्पर्श-  
व्यवस्थाया लोके काल्पनिकत्वात् । तथाहि न स्पर्शस्य व्यवस्था लोके पारमार्थिकी,  
यामेव भूमिमग्रे चाण्डालः स्पृशन् व्रजति, तामेव पृष्ठतः श्रोत्रियोऽपि स्पृशति,  
न्द्रिय भी अप्राप्त शब्द को यदि ग्रहण करती तो विचारो कि-प्रतिकूल  
वायु में रहने पर भी रूप की तरह शब्द का भी ग्रहण श्रोत्रेन्द्रिय द्वारा  
होना चाहिये, परन्तु ऐसा नहीं होता है, अतः यही-सिद्धांत निर्दोष है,  
कि शब्द के परमाणु जब श्रोत्रेन्द्रिय के पास आकर प्राप्त होते हैं तभी  
वे उसके द्वारा ग्रहण करने में आते हैं, अन्यथा नहीं । इसीसे यह बात  
भी बन जाती है कि जब श्रोता प्रतिकूल पवन की ओर उपस्थित रहता  
है, तब वह जो मन्दरूप से या बिलकुल शब्द को नहीं सुनता है, उसका  
कारण प्रतिकूल वायु के द्वारा शब्द के परमाणुओं का प्रायःकरके उडा  
ले जाना होता है, इसलिये वे श्रोत्रेन्द्रिय तक कम या बिलकुल नहीं  
आ सकते हैं ।

तथा श्रोत्रेन्द्रिय को प्राप्यकारी मानने पर, जो चाण्डाल के स्पर्श हा  
जानेका दोष दिया है, वह भी ठीक नहीं है. कारण कि-स्पर्श और अस्पर्श  
की व्यवस्था लोक में केवल काल्पनिक है । देखो-जिस भूमि को आगे २

पणु अप्राप्त शब्दने जे ग्रहण करती छैत तो विचारोना प्रतिकूल वायुमां  
रहेवा छतां पणु रुपनी जेम शब्दनुं ग्रहण पणु श्रोत्रेन्द्रिय द्वारा धवुं जेधजे,  
पणु जेवुं अननुं नथी; तेथी जेज सिद्धांत निर्दोष छे के शब्दनां परमाणु  
न्यारे श्रोत्रेन्द्रियनी पास आवीने भजे छे. त्यारे तेमनुं तेना द्वारा ग्रहण  
कराय छे, भीलु केधरीते नडीं. तेथी आ वात पणु निश्चित थाय छे के न्यारे  
श्रोता प्रतिकूल पवननी तरश् रहेल डोय छे त्यारे ते जे मन्दरूपे शब्दने  
सांलजे छे के जिलकुल सांलजतो नथी तेनुं कारण प्रतिकूल वायु द्वारा शब्दनां  
परमाणुजोनुं सामान्य रीते जेच्यी जवुं ते छे; तेथी तेजो श्रोत्रेन्द्रिय सुधी  
थोडां प्रमाणुमां जध शके छे के जिलकुल जध शकता नथी.

तथा श्रोत्रेन्द्रियने प्राप्यकारी मानवाथी जे चांणालने स्पर्श धर्ध जवाने  
दोष दीधो छे ते पणु योग्य नथी, कारण के स्पर्शस्पर्शनी व्यवस्था दोडोमां

તથા યામેવ નાવમારોહતિ સ્મ ચાણ્ડાલસ્તામેવારોહતિ શ્રોત્રિયોઽપિ । તથા સ એવ પવનશ્ચાણ્ડાલમપિ સ્પૃષ્ટ્વા શ્રોત્રિયમપિ સ્પૃશતિ, ન ચ તત્ર લોકે સ્પર્શદોષવ્યવસ્થા, તથા શબ્દપુદ્ગલસંસ્પર્શોઽપિ લોકે સ્પર્શદોષવ્યવસ્થા ન ભવતીતિ ન કોઽપિ દોષ इति ।

અપિ ચ—યદા ચાણ્ડાલઃ કેતકીપુષ્પનિચયં પદ્માદિપુષ્પનિચયં વા શિરસિ નિધાય શરીરે કસ્તૂરીચન્દનાદ્યનુલેપનં વિધાય વીથ્યામાગત્ય તિષ્ઠતિ, તદા તદ્ગતકેતકી-પુષ્પાદિગન્ધપુદ્ગલાઃ શ્રોત્રિયાદિનાસિકાસુ પ્રવિષ્ટા ભવન્તીતિ તત્રાપિ ચાણ્ડાલ-સ્પર્શદોષપ્રસંગઃ સ્યાત્, તસ્માત્ નાસિકેન્દ્રિયમપ્યપ્રાપ્યકારીતિ મન્તવ્યં, ન ચ તદ્ ભવતોઽપ્યાગમે ક્વચિત્ પ્રતિપાદિતમ્ । અતશ્ચાણ્ડાલસ્પર્શદોષપ્રસંગઃ સ્યાદિતિ કથનં વાલિશજલ્પિતમ્ ।

ચાણ્ડાલ સ્પર્શ કરતા હુઆ ચલતા હૈ ઉસી ભૂમિ કો પીછે સે સ્પર્શ કરતા હુઆ શ્રોત્રિય-બ્રાહ્મણ-બી ચલતા હૈ । જિસ નાવ મેં બૈઠકર ચાંડાલ નદી પાર પહુંચતા હૈ ઉસી નાવ મેં શ્રોત્રિય બ્રાહ્મણ બી સવાર હોકર નદી પાર કરતા હૈ । જો વાયુમંડલ ચાંડાલ કા સ્પર્શકર વહતા હૈ વહી પવન શ્રોત્રિયકો બી સ્પર્શ કરતા હૈ । હન વાતોં મેં લોકમેં જૈસે સ્પર્શ-દોષકી વ્યવસ્થા નહીં માની જાતી હૈ, ઇસી પ્રકાર શબ્દ પુદ્ગલકે સંસ્પર્શ હોને પર બી લોકમેં સ્પર્શદોષકી વ્યવસ્થા નહીં માની ગઈ હૈ, અતઃ યહ વ્યવસ્થા કાલ્પનિક હોનેસે પારમાર્થિક નહીં હૈ ।

ફિર બી—જિસ સમય ચાણ્ડાલ કેતકીકે પુષ્પોં કો અથવા કમલાદિ પુષ્પોંકો મસ્તક પર ધારણ કરકે અથવા શરીરમેં કસ્તૂરી આદિકા ઉવ-ટન કરકે રસ્તેમેં આકર સ્વહા હોતા હૈ ઉસ સમય વહાં રહે હુએ શ્રોત્રિય આદિ વ્યક્તિયોંકી નાસિકા મેં વે કેતકી એવં કમલાદિ પુષ્પોંકે ગંધ

કેવળ કાલ્પનિક છે જુઓ—જે ભૂમિને સ્પર્શ કરતો ચાંડાળ આગળને આગળ જાય છે એજ ભૂમિને પાછળથી સ્પર્શ કરતો શ્રોત્રિય-બ્રાહ્મણ ચાલે છે. જે હોડીમાં બેસીને ચાંડાલ નદી બોળંગે છે એજ નાવમાં બેસીને શ્રોત્રિય બ્રાહ્મણ પણ નદીને બોળંગે છે. જે વાયુ ચાંડાલને સ્પર્શ કરતો વાયુ છે એજ વાયુ શ્રોત્રિયને પણ સ્પર્શ કરે છે. એ બાળતોમાં જેમ લોકોમાં સ્પર્શદોષની વ્યવસ્થા માનવામાં આવતી નથી એજ પ્રકારે શબ્દપુદ્ગલને સંસ્પર્શ થવાથી લોકોમાં સ્પર્શદોષની વ્યવસ્થા માનવામાં આવી નથી; તેથી એ વ્યવસ્થા કાલ્પનિક હોવાથી પારમાર્થિક નથી.

વળી—જે સમયે ચાંડાલ કેતકીના પુષ્પોને અથવા કમલાદિ પુષ્પોને માથે ઉપાડીને અથવા શરીર પર કસ્તૂરી આદિને લેપ કરીને રસ્તામાં આવીને ઉભો રહે છે, તે સમયે ત્યાં રહેલ શ્રોત્રિય આદિ વ્યક્તિઓની નાસિકામાં કેતકી અને

કેચિત્તુ શ્રોત્રેન્દ્રિયસ્થાપ્રાપ્યકારિત્વં મન્યન્તે, શબ્દસ્ય ચાકાશગુણત્વમ્, તદ-  
યુક્તમ્-આકાશગુણત્વસ્વીકારે શબ્દસ્યામૂર્તત્વપ્રસજ્ઞાત્ । યો હિ યસ્ય ગુણઃ, સ  
તત્સમાનધર્મી ભવતિ, યથા-જ્ઞાનમાત્મનો ગુણઃ, તત્ત્રાત્મા સ્વલ્પમૂર્તસ્તતસ્તદ્ગુણો  
જ્ઞાનમપ્યમૂર્તમેવ । તથા-શબ્દોઽપિ યથાકાશગુણસ્તર્હિ આકાશસ્યામૂર્તત્વાત્ શબ્દ-  
સ્યાપિતદ્ગુણત્વેનામૂર્તતાપત્તિઃ સ્યાત્ । ન ચાસૌ યુક્તિઃ સમીचीना, તદ્વક્ષણાયોગાત્ ।  
મૂર્તત્વવિરહો હિ અમૂર્તતાયા લક્ષણમ્ । ન ચ શબ્દાનાં મૂર્તત્વવિરહઃ, સ્પર્શવત્ત્વાત્ ।

પરમાણુ ઘુસતે હૈં તો ફિર યહાં મી ચાળ્ડાલકે સ્પર્શ હોનેકે દોષકા  
પ્રસંગ પ્રાપ્ત હોગા, હસલિયે નાસિકા ઇન્દ્રિયકો અપ્રાપ્યકારી માનના  
ચાહિયે, પરંતુ એસી વ્યવસ્થા આપકે મી આગમમેં પ્રતિપાદિત નહીં હુઈ  
હૈ, હસ લિયે યહ ચાળ્ડાલકે સ્પર્શ હોનેકા દોષ યુક્તિયુક્ત નહીં હૈ ।

કિતનેક વ્યક્તિ શ્રોત્રેન્દ્રિયકો અપ્રાપ્યકારી હસલિયે માનતે હૈં કિ  
ઉસકા વિષય જો શબ્દ હૈ, વહ આકાશકા ગુણ હૈ, સો એસી માન્યતા મી  
ઠીક નહીં હૈ, કારણ કિ-શબ્દકો યદિ આકાશકા ગુણ માના જાવેગા  
તો ઉસમેં મૂર્તતા ન આકર અમૂર્તતા હી આવેગી, ક્યોં કિ જો જિસકા  
ગુણ હોતા હૈ વહ ઉસકે હી સમાન ધર્મવાલા હોતા હૈ, જૈસે-આત્માકા  
ગુણજ્ઞાન । આત્મા અમૂર્ત હૈ તો ઉસકા ગુણજ્ઞાન મી અમૂર્ત હી હૈ ।  
હસી તરહ યદિ આકાશકા ગુણ શબ્દ હૈ તો આકાશકે અમૂર્ત હોનેકી  
વજહસે ઉસકા ગુણ શબ્દ મી અમૂર્ત હી હોગા, પરંતુ શબ્દમેં અમૂર્તતા  
હૈ નહીં, ક્યોં કિ અમૂર્તતાકા લક્ષણ શબ્દમેં ઘટિત નહીં હોતા હૈ ।

કમલાદિ પુષ્પોનાં ગંધપરમાણુ પ્રવેશે છે તો પછી ત્યાં પણ ચાંડાલનો સ્પર્શ  
થવાના દોષનો પ્રસંગ પ્રાપ્ત થશે, તે માટે નાસિકા ઇન્દ્રિયને અપ્રાપ્યકારી  
માનવી જોઈએ, પણ એવી વ્યવસ્થાતું આપના આગમોમાં પણ પ્રતિપાદન થયું  
નથી. તે કારણે ચાંડાલનો સ્પર્શ થવાનો એ દોષ યુક્તિયુક્ત નથી.

કેટલીક વ્યક્તિઓ શ્રોત્રેન્દ્રિયને અપ્રાપ્યકારી એ કારણે માને છે કે તેનો  
વિષય જે શબ્દ છે તે આકાશનો ગુણ માનવામાં આવે તો તેમાં મૂર્તતા ન  
આવતા અમૂર્તતા જ આવશે, કારણ કે જે જેનો ગુણ હોય છે તે તેના સમાન  
ધર્મવાળો હોય છે. જેમકે- આત્માનો ગુણ જ્ઞાન. આત્મા અમૂર્ત છે, તો તેનો  
ગુણ ‘જ્ઞાન’ પણ અમૂર્ત જ છે. એજ પ્રમાણે જો આકાશનો ગુણ શબ્દ હોય તો  
આકાશ અમૂર્ત હોવાને કારણે તેનો ગુણ ‘શબ્દ’ પણ અમૂર્ત જ હોય, પણ  
શબ્દમાં અમૂર્તતા નથી, કારણ કે અમૂર્તતાતું લક્ષણ શબ્દમાં ઘટાવી શકાતું



તથાહિ-સ્પર્શવન્તઃ શબ્દાઃ, તત્સંપર્કાત્ ઉપઘાતદર્શનાત્ લોષ્ટવત્ । ન ચાયમસિદ્ધો  
 હેતુઃ, યતઃ સઘોજાતશિશૂનાં કર્ણાન્તિકાઽઽનીતગાઢાસ્ફાલિતઙ્ગલ્લરીશબ્દશ્રુવણતો  
 વધિરતા ભવતીતિ દૃશ્યતે । યત્ર સ્પર્શો નાસ્તિ, તત્રોપઘાતોઽપિ નાસ્તિ, યથાઽઽ-  
 કાશઃ । તતશ્ચ વિપક્ષે ઉપઘાતાઽભાવાન્નનૈકાન્તિકોઽપિ હેતુઃ ।

અપિ ચ-સ્પર્શવન્તઃ શબ્દાઃ, તૈરભિધાતે ગિરિગહ્વરાદિષુ શબ્દોત્થાનાત્, લોષ્ટ-  
 વત્ । તીવ્રપ્રયત્નોચ્ચારિતશબ્દાભિધાતે ગિરિગહ્વરાદિષુ પ્રતિશબ્દાઃ શ્રૂયન્તે પ્રતિદિક્ ।  
 તતશ્ચ સ્પર્શવત્ત્વાત્ મૂર્તા એવ શબ્દા इति स्थितम्, “રૂપસ્પર્શાદિસંનિવેશો મૂર્તિ”  
 -રિતિ વચનપ્રામાણ્યાત્ । અસ્માદાકાશગુણત્વં શબ્દાનાં નોપપન્નમિતિ ।

મૂર્તત્વકા વિરહ અમૂર્તતાકા લક્ષણ છે, પરન્તુ શબ્દમાં મૂર્તત્વકા વિરહ-  
 અભાવ નહીં છે, ક્યોં કે ઉસકા સ્પર્શ હોતા છે, અર્થાત્ શબ્દ સ્પર્શ  
 ગુણવાળા છે । યહ સ્પર્શ ગુણવાળા હસલિયે છે કે ઉસસે શ્રોત્રેન્દ્રિયમાં  
 ઉપઘાત હોતા દેખા જાતા છે । તુર્તકે જન્મે હુએ બાલકકે કાનકે પાસ  
 લાકર જબ ઙ્ગલ્લરી બડે જોરસે બજાનેમાં આતી છે તો ઉસકે શબ્દકે  
 સંપર્કસે ઉસકે કાનકી ઙ્ગિલી ફટ જાતી છે, ઓર વહ બહિરા હો જાતા  
 છે । જિસમાં સ્પર્શગુણ નહીં હોતા છે ઉસમાં ઉપઘાતકે ગુણ ભી નહીં હોતા  
 છે, જૈસે આકાશમાં । હસલિયે વિપક્ષ આકાશમાં ઉપઘાત કરનેકા અભાવ  
 હોનેસે હમારા હેતુ વિપક્ષમાં નહીં રહતા છે । વિપક્ષમાં વર્તમાન હેતુ સ્વ-  
 સાધ્યકા ગમક નહીં હોતા છે । યહાં સ્પર્શવત્ત્વકા વિપક્ષ આકાશ છે,  
 ઉસમાં યહ હેતુ નહીં રહતા અતઃ વહાં ઉપઘાત કરના રૂપ સાધ્ય ભી નહીં  
 રહતા । યહ તો અપને હેતુકે સાથ હી રહતા છે ।

નથી. અમૂર્તતાનો અભાવ અમૂર્તતાનું લક્ષણ છે, પણ શબ્દમાં મૂર્તતાનો અભાવ  
 નથી, કારણ કે તેનો સ્પર્શ થાય છે. એટલે કે શબ્દ સ્પર્શગુણવાળો છે. તે સ્પર્શ-  
 ગુણવાળો તે કારણે છે કે તેનાથી શ્રોત્રેન્દ્રિયમાં ઉપઘાત થતો દેખાય છે. તરતના  
 જન્મેલાં બાળકના કાન પાસે લઈ જઈને ત્યારે ઓલરને ઘણા જોરથી વગાડવામાં  
 આવે છે ત્યારે તેના શબ્દના સ્પર્શથી તેના કાનનો પડદો તૂટી જાય છે અને તે  
 બહેરો થઈ જાય છે. જેમાં સ્પર્શગુણ ન હોય તેમાં ઉપઘાતક ગુણ પણ હોતો  
 નથી. જેમકે આકાશમાં તથા વિપક્ષ આકાશમાં ઉપઘાત કરવાનો અભાવ હોવાથી  
 આપણો હેતુ વિપક્ષમાં રહેતો નથી. વિપક્ષમાં વર્તમાન હેતુ સ્વસાધ્યનો ગમક  
 થતો નથી. અહીં સ્પર્શત્વનો વિપક્ષ આકાશ છે, તેમાં તે હેતુ રહેતો નથી,  
 તેથી ત્યાં ઉપઘાત કરવાનું સાધ્ય પણ રહેતું નથી એ તો પોતાના હેતુની  
 સાથે જ રહે છે.

અપિ ચ-આકાશં કિમેકમ્ ? અનેકં વા ? , યદ્યેકં, તર્હિ દૂરતરાદપિ શબ્દઃ શ્રૂયેત, આકાશસ્યૈકત્વેન શબ્દસ્ય ચ તદ્ગુણતયા દૂરાસન્નાદિભેદાભાવમ્ । યદ્યનેકમ્, તર્હિ મુખદેશ એવ શબ્દો વિદ્યતે इति કથં ભિન્નદેશવર્તિભિઃ શ્રોતૃભિઃ શ્રૂયતે, મુખદેશાકાશગુણતયા શ્રોતૃગતશ્રોત્રેન્દ્રિયા કાશસંવન્ધાભાવાત્ !

ફિર મી-શબ્દ, સ્પર્શગુણવાલા છે, યહ વાત ઇસ કારણ માં સિદ્ધ હોતી છે કિ-જબ ગિરિગુફામાં શબ્દકા ઉચ્ચારણ કિયા જાતા છે, તો વહાં સે પ્રતિધ્વનિ હોતી છે । ઇસ તરહ સ્પર્શવત્તાસે શબ્દમાં સૂર્તતા સિદ્ધ હોતી છે, ઓર સૂર્તતાકી સિદ્ધિસે આકાશગુણત્વાભાવ સિદ્ધ હોતા છે । રૂપ રસ આદિ ગુણોંકા જહાં સદ્ભાવ હોતા છે ઉસકા નામ સૂર્ત છે । સૂર્ત હોને સે આકાશગુણતા શબ્દમાં નહીં આતી છે ।

ઔર મી-આકાશ એક છે અથવા અનેક છે ? યદિ ' આકાશ એક છે ' એસા માના જાય તો અત્યન્ત દૂરસે મી શબ્દ સુનનેમાં આના ચાહિયે, કયોં કિ સર્વત્ર આકાશ એક હી છે । શબ્દમાં દૂર આસન્ન આદિ એસા વ્યવહાર તો હો નહીં સકતા છે । તાત્પર્ય ઇસકા યહ છે કિ જબ આકાશ એક છે ઔર શબ્દ ઉસકા ગુણ છે તો આકાશકે સર્વત્ર એક હોનેસે જબ કે ગુણરૂપ શબ્દમાં- ' યહ દૂરકા શબ્દ છે યહ નજદીકકા શબ્દ છે ' એસા વ્યવહાર હી નહીં હો સકતા છે । યદિ આકાશ અનેક છે એસા માના જાવે તો ભિન્ન દેશવર્તી પ્રત્યયોં દ્વોરા શબ્દકા શ્રવણ કૈસે હો સકેગા ? કારણ કિ શબ્દ તો વક્તા કે મુખરૂપી આકાશ માં હી રહેગા । વહ વક્તા

વળી-શબ્દ સ્પર્શગુણવાળો છે, આ વાત એ કારણે પણ સિદ્ધ થાય છે કે-જ્યારે પર્વતની શુદ્ધમાં શબ્દ બોલવામાં આવે છે, ત્યારે ત્યાંથી પડે પડે છે. આ રીતે સ્પર્શવત્વથી શબ્દમાં મૂર્તતા સિદ્ધ થાય છે, અને મૂર્તતાની સિદ્ધિથી આકાશગુણત્વાભાવ સિદ્ધ થાય છે. રૂપ, રસ, આદિ ગુણોનો ન્યાં સદ્ભાવ હોય છે તેનું નામ મૂર્ત છે. મૂર્ત હોવાને લીધે શબ્દમાં આકાશગુણતા આવતી નથી.

વળી-આકાશ એક છે અથવા અનેક છે ? જો આકાશ એક છે એમ માનવામાં આવે તો અત્યંત દૂરથી પણ શબ્દ સંભળાવો જોઈએ, કારણ કે સર્વત્ર આકાશ એક જ છે. તો શબ્દમાં દૂરથી આવતો આદિ વ્યવહાર હોઈ શકે નહીં. તેનું તાત્પર્ય એ છે કે જો આકાશ એક છે. અને શબ્દ તેના ગુણ છે તો સર્વત્ર એક આકાશ હોવાથી તેના ગુણરૂપ શબ્દમાં- " આ દૂરનો શબ્દ છે, આ નજીકનો શબ્દ છે " એવો વ્યવહાર જ થઈ શકે નહીં. જો આકાશ અનેક છે એમ માનવામાં આવે તો ભિન્ન સ્થાનમાં રહેલ પ્રાણીઓ દ્વારા શબ્દનું શ્રવણ કેવી રીતે થઈ શકે ? કારણ કે શબ્દ તો વક્તાનાં મુખરૂપી આકાશમાં જ રહેશે. તે

અથ ચ શ્રોત્રેન્દ્રિયવિવરવર્ત્યાકાશસમ્બન્ધેન શબ્દસ્ય શ્રવણં ભવતીતિ સ્વીકારે શબ્દસ્યાકાશગુણત્વાભ્યુપગમો ન યુજ્યતે ।

નન્વાકાશગુણત્વમન્તરેણ શબ્દસ્યાવસ્થાનમેવ નોપપદ્યતે, સ્થિતિં વિના પદાર્થસ્ય સદ્ભાવ એવ ન સ્યાત્ તસ્માદવશ્યં પદાર્થેન સ્થિતિમતા ભવિતવ્યમ્, તત્ર રૂપરસ-સ્પર્શગન્ધાનાં પૃથિવ્યાદિમહાભૂતચતુષ્ટયમાશ્રયઃ, શબ્દસ્ય તુ આકાશમિતિ ચેત્, કે સુખરૂપી આકાશ કા જબ ગુણ હૈ તો ફિર વહ ભિન્નદેશવર્તી શ્રોતા કે શ્રોત્રેન્દ્રિયરૂપ આકાશ કે સાથ સંબંધ કૈસે કર સકતા હૈ કિ જિસસે વહ સુનાઈ પડ સકે ।

યદિ કહા જાવે કિ ‘શબ્દ કા સંબંધ શ્રોત્રેન્દ્રિય કે વિવર મેં રહે હુણ આકાશ કે સાથ હોતા હૈ હસલિયે વહ સુનને મેં આતા હૈ, તો ફિર હસ માન્યતા મેં ‘શબ્દ આકાશ કા ગુણ હૈ’ યહ બાત સિદ્ધ નહીં હોતી હૈ ।

યદિ હસ પર યહ કહા જાય કિ ‘શબ્દ કો આકાશ કા ગુણ ન માના જાવે તો ઉસકી સ્થિતિ હી નહીં બનતી હૈ, સ્થિતિ કે વિના પદાર્થ કા સદ્ભાવ માના નહીં જાતા હૈ, અતઃ જબ શબ્દ સ્થિતિવાળા પદાર્થ માના જાતા હૈ તો એસી હાલત મેં કહીં ન કહીં હસકી સ્થિતિ મી માનની ચાહિયે । પૃથિવ્યાદિક ભૂતોં મેં તો હસકી સ્થિતિ હોતી નહીં હૈ, કારણ કિ વે તો રૂપ રસાદિકોં કે હી આધારભૂત હૈં । અબ રહા આકાશ સો યહ આકાશ હી શબ્દ કા આશ્રય સિદ્ધ હોતા હૈં ।

વક્તાનાં મુખરૂપી આકાશનો જો ગુણ છે, તો પછી તે ભિન્ન સ્થાનમાં રહેલ શ્રોતાના શ્રોત્રેન્દ્રિયરૂપ આકાશની સાથે સંબંધ કેવી રીતે કરી શકે છે, કે જેથી તે સંભળાઈ શકે.

જો એમ કહેવામાં આવે કે “શબ્દનો સંબંધ કાનનાં પોલાણમાં રહેલ આકાશ સાથે થાય છે તેથી તે સંભળવામાં આવે છે,” તો પછી એ માન્ય-તાથી “શબ્દ આકાશનો ગુણ છે” એ વાત સિદ્ધ થતી નથી.

જો તે વિષે એમ કહેવામાં આવે કે “શબ્દને આકાશનો ગુણ માનવામાં ન આવે તો તેથી સ્થિતિ જ સંભવતી નથી. સ્થિતિ વિના પદાર્થનો સદ્ભાવ (અસ્તિત્વ) મનાતો નથી; તેથી જ્યારે શબ્દ સ્થિતિવાળા પદાર્થ મનાય છે ત્યારે એવી હાલતમાં તેની કોઈને કોઈ સ્થિતિ પણ માનવી જોઈએ. પૃથિવ્યાદિક પદાર્થોમાં તો તેની સ્થિતિ હોતી નથી, કારણ કે એ તો રૂપરસાદિકોનાં જ આધાર ભૂત છે, હવે રહ્યું આકાશ, તો એ આકાશ જ શબ્દનો આશ્રય વિના શ્રવણ કે

तदयुक्तम्, एवं सति पृथिव्यादीनामप्याकाशगुणत्वप्रसङ्गात्, तेषामप्याकाशाश्रित-  
त्वात्, न खल्व्वाकाशमन्तरेण पृथिव्यादीनामप्यन्यः कश्चिदाश्रयः ।

न च पृथिव्यादीनामगुणत्वादाकाशगुणत्वमनुपपन्नमिति वाच्यम्, आकाशा-  
श्रितत्वे सति पृथिव्यादीनां भवन्मते बलार्दाप तद्गुणत्वप्रसङ्गात् ।

नन्वाश्रयणमात्रं न तद्गुणत्वप्राप्तिकारणं, किं तु समवायः, स चास्ति शब्द-  
स्याकाशे, न तु पृथिव्यादीनामिति चेत्,

ऐसा कहना भी ठीक नहीं है, कारण कि इस तरह की मान्यता से  
पृथिव्यादिक भूतचतुष्टय में भा आकाशाश्रित होने से गुणत्वापत्ति आती  
है । आकाश के सिवाय और कोई तो इन भूतों का आश्रय है नहीं ।  
यदि कहा जाय कि 'पृथिव्यादिकभूत गुणरूप नहीं है कि जिसकी वजह  
से उनमें आकाशगुणता आसकें सो ऐसा कथन भी ठीक नहीं है,  
कारण कि—जब आप ऐसा कहते हैं कि 'शब्द आकाश के आश्रित  
रहता है अतः वह उसका गुण है' तो फिर इस कथन के अनुसार  
पृथिव्यादिकभूतों में तदाश्रयता होने से गुणत्वापत्ति का वारण कौन  
कैसे कर सकता है ? । इस मान्यता में तो गुणत्वापत्ति उनमें बलात्  
आ जाती है ।

यदि फिर भी ऐसा कहा जाय कि—'सामान्यरूप से आश्रित होने  
में गुणत्वापत्ति नहीं आती है किन्तु समवायसंबंध से आश्रित रहने में  
गुणरूपता आती है, पृथिव्यादिकभूत आकाश में समवायसंबंध से आश्रित

એમ કહેવું તે પણ ખરાબર નથી, કારણ કે એ પ્રકારની માન્યતાથી પૃથિવ્યા-  
દિક ચાર પદાર્થોમાં પણ આકાશાશ્રિત હોવાથી ગુણત્વાપત્તિ આવે છે આકાશ  
સિવાય બીજું કોઈ એ ભૂતોનો (પદાર્થોનો) આશ્રય નથી. જો એમ કહેવામાં  
આવે કે “પૃથિવ્યાદિકભૂત ગુણરૂપ નથી કે જેને કારણે તેમનામાં આકાશગુણતા  
આવી શકે” તો એવું કથન પણ ખરાબર નથી, કારણ કે ત્યારે આપ એમ  
કહો છો કે “શબ્દ આકાશને આશ્રિત રહે છે, તેથી તે ગુણ છે” તો પછી આ  
કથન પ્રમાણે પૃથિવ્યાદિક ભૂતોમાં તે આશ્રયતા હોવાથી ગુણત્વાપત્તિનું નિવારણ  
કોણ કેવી રીતે કરી શકે છે ? આ માન્યતાથી તો તેમનામાં ગુણત્વાપત્તિ  
ખળાત્કારે આવી જાય છે.

વળી જો એમ કહેવામાં આવે કે “સામાન્યરૂપે આશ્રિત થવામાં ગુણ-વા-  
પત્તિ આવતી નથી પણ સમવાયસંબંધથી આશ્રિત રહેવામાં ગુણરૂપતા આવે છે.  
પૃથિવ્યાદિક ભૂત આકાશમાં સમવાય સંબંધથી આશ્રિત રહેતા નથી, તેઓ તો

અત્રોચ્યતે—કોઽયં ભવદુક્તઃ સમવાયઃ ?, યદ્યેકત્રલોલીભાવેનાવસ્થાનં, યથા ઘટાદેસ્તદ્વતરૂપાદેશ્ચ યઃ સમ્બન્ધઃ સ સમવાય इत्यુચ્યતે, તર્હિ શબ્દસ્યાકાશગુણત્વં ન સંભવતિ, આકાશેન સર્હેકત્ર લોલીભાવેન તસ્યાનવસ્થાનાત્, ન દિ ઘટાદૌ રૂપાદિવત્ સદા નભસિ શબ્દસદ્ભાવોઽસ્તિ ।

અથાકાશે ઉપલભ્યમાનત્વાત્ તદ્ગુણત્વં શબ્દસ્યાસ્તીત્યુચ્યતે, તર્હિ ઉલ્કાદેર-પ્યાકાશ ઉપલભ્યમાનત્વાત્ તદ્ગુણત્વપ્રસન્નઃ સ્યાત્ ।

યદિ તુ ઉલ્કાદેઃ પરમાર્થતઃ સ્થાનં પૃથિવ્યાદિકમ્, આકાશે તદુપલબ્ધિસ્તુ પવનેન સંચાર્યમાણત્વાદિત્યુચ્યતે, તર્હિ તથૈવ શબ્દસ્યાપિ પરમાર્થતઃ સ્થાનમાકાશં નાસ્તિ, કિં તુ શ્રોત્રાદિકમિતિ બ્રૂમઃ । યત્તુ આકાશે તદવસ્થાનમુપલભ્યતે, તત્ પવનેન સંચાર્યમાણત્વાદિતિ બોધ્યમ્, તથાહિ યત્ર યત્ર પવનઃ સંચરતિ, તત્ર તત્ર શબ્દોઽપિ ગચ્છતિ, પવનપ્રતિકૂલગમનં શબ્દસ્ય નાસ્તિ । ઉક્તશ્ચ—

‘‘ નહીં રહતે હૈં, વે તો વહાં સંયોગસંબંધ સે આશ્રિત રહતે હૈં ’’ એસા કહના ઇસ પ્રશ્ન કો સ્થાન દેને કે લિયે બાધ્ય કરતા હૈં કિં યહ સમવાય ક્યા વસ્તુ હૈં ? ક્યા એકત્ર લોલીભાવ સે રહના યહી સમવાય હૈં જૈસા ઘટાદિક ઓર ઉસકે રૂપાદિકોં મેં હૈં ? । સો ઇસ કથન સે તો શબ્દ મેં આકાશગુણતા નહીં આતી હૈં, કારણ કિ—શબ્દ ઓર આકાશ મેં ઇસ પ્રકાર કા લોલીભાવરૂપ સમવાયસંબંધ નહીં હૈં । જિસ પ્રકાર ઘટાદિક મેં સદા રૂપાદિક કા એકત્ર લોલીભાવ રહા કરતા હૈં ઉસ પ્રકાર સે આકાશ મેં શબ્દ કા સદા લોલીભાવ નહીં રહતા હૈં ।

યદિ કહા જાવે કિં ‘આકાશ મેં શબ્દ કી ઉપલબ્ધિ હોતી હૈં અતઃ વહ ઉસકા ગુણ હૈં ’ સો એસી વાત તો ઉલ્કાદિક મેં ભી હોતી હૈં અતઃ ઉનમેં ભી આકાશગુણતા માનની પડેગી ।

ત્યાં સંયોગ સંબંધે આશ્રિત રહે છે ” એમ કહેવું તે આ પ્રશ્નને સ્થાન દેવા માટે ફરજ પાડે છે કે એ સમવાય શી વસ્તુ છે ? શું એકત્ર લોલીભાવથી રહેવું એજ સમવાય છે, જેવો ઘટાદિક અને તેના રૂપાદિકોમાં છે ? તો આ કથનથી તો શબ્દમાં આકાશગુણતા આવતી નથી, કારણ કે શબ્દ અને આકાશમાં આ પ્રકારનો લોલીભાવરૂપ સમવાય સંબંધ નથી. જે પ્રકારે ઘટાદિકમાં હંમેશાં રૂપાદિકને એક માત્ર લોલીભાવ રહ્યા કરે છે, તે પ્રકારે આકાશમાં શબ્દને હંમેશાં લોલીભાવ રહી શકતો નથી.

જે એમ કહેવામાં આવે કે “ આકાશમાં શબ્દની પ્રાપ્તિ થાય છે તેથી તે તેનો ગુણ છે ” તો એવી વાત તો ઉલ્કાદિકમાં પણ થાય છે તેથી તેમનામાં પણ આકાશ ગુણતા માનવી પડે.

यथा च पूर्यते तूल, - माकाशे मातरिश्वना ।

तथा शब्दोऽपि किं वायोः प्रतीपं कोऽपि शब्दवित् ॥ १ ॥

तस्मान्नाकाशगुणः शब्दः, किंतु पुद्गलमय इति स्थितम् । व्यञ्जनावग्रहस्य दृष्टान्तो मल्लक इति टीकान्ते द्रष्टव्यः ॥ सू० २८ ॥

॥ इति व्यञ्जनावग्रहप्रकरणम् ॥

यदि इस पर ऐसा कहा जावे कि 'उल्कादिकों का परमार्थतः स्थान तो पृथिवी आदिक ही हैं परन्तु वे जो आकाश में उपलब्ध होते हैं उसका कारण पवन द्वारा उनका वहां संचरण करवाना है' तो फिर इसी तरह से यह भी मान लेना चाहिये कि परमार्थतः शब्द का स्थान आकाश नहीं है किन्तु श्रोत्रादिक ही है, परन्तु आकाश में जो उसका अवस्थान मालूम पड़ता है वह पवन के द्वारा उसका वहां संचरण होना है । जहां जहां पवन का संचार होता है वहां वहां शब्द भी जाता है, शब्द का पवन के प्रतिकूल गमन नहीं होता है । कहा भी है—

“यथा च पूर्यते तूल, - माकाशे मातरिश्वना ।

तथा शब्दोऽपि किं वायोः, प्रतीपंकोऽपि शब्दवित्” ॥ १ ॥

अर्थ—जैसे पवन रूई को उड़ाकर आकाशमें भरदेता है, उसीतरह शब्द को भी आकाश में भरदेता है । क्या पवन की प्रतिकूलता में कोई भी मनुष्य किसीके शब्द को समझ पाता है ? अर्थात् कोई भी नहीं समझ पाता है ।

જે તે વિષે એમ કહેવામાં આવે કે “ઉલ્કાદિકોતું પરમાર્થતઃ સ્થાન તો પૃથ્વી આદિ જ છે, પણ આકાશમાં તેઓ જે પ્રાપ્ત થાય છે તેનું કારણ પવન દ્વારા તેમનું ત્યાં સંચરણ કરાવવાની ક્રિયા જ છે” તો પછી એજ રીતે એ પણ માની લેવું જોઈએ કે પરમાર્થતઃ શબ્દનું સ્થાન આકાશ નથી પણ શ્રોત્રાદિક જ છે. પણ આકાશમાં જે તેનું અવસ્થાન માલુમ પડે છે તે પવનના દ્વારા તેનું ત્યાં સંચરણ થવાની ક્રિયા છે, જ્યાં જ્યાં પવનનો સંચાર થાય છે ત્યાં ત્યાં શબ્દ પણ જાય છે. શબ્દનું ગમન પવનથી પ્રતિકૂળ હોતું નથી. કહ્યું પણ છે—

“યથા ચ પૂર્યતે તૂલ, માકાશે માતરિશ્વના

તથા શબ્દોઽપિ કિંવાયોઃ, પ્રતીપ કોઽપિ શબ્દવિત્” ॥ ૧ ॥

અર્થ—જેમ પવન રૂપે ઉડાડીને આકાશમાં ભરીદે છે, તેવી જ રીતે શબ્દને પણ આકાશમાં ભરી દે છે. શું ? પવનની પ્રતિકૂલતામાં કોઈ પણ માણસ કોઈના શબ્દને સમજી શકે છે ? અર્થાત્ કોઈપણ સમજી શકતા નથી



અર્થાવગ્રહઃ પ્રોચ્યતે—

મૂલમ્—સે કિં તં અત્યુગ્ગહે ? । અત્યુગ્ગહે છવિવહે પળ્ણત્તે; તં જહા-સોઙ્ગિદિય-અત્યુગ્ગહે ૧, ચક્કિંલ્લદિય-અત્યુગ્ગહે ૨, ઘાણિં-દિય-અત્યુગ્ગહે ૩, જિલ્લિંમદિય-અત્યુગ્ગહે ૪, ફાસિંદિય-અત્યુગ્ગહે ૫, નોઙ્ગિદિય-અત્યુગ્ગહે ॥ સૂ. ૨૯ ॥

છાયા—અથ કઃ સોઙ્ગિદિયઃ ? । અર્થાવગ્રહઃ षઙ્ગવિધઃ પ્રજ્ઞપ્તઃ । તદ્ યથા—શ્રોત્રેન્દ્રિયાર્થાવગ્રહઃ ૧, ચક્ષુરિન્દ્રિયાર્થાવગ્રહઃ ૨, ગ્રાણેન્દ્રિયાર્થાવગ્રહઃ ૩, જિહ્વેન્દ્રિયાર્થાવગ્રહઃ ૪, સ્પર્શેન્દ્રિયાર્થાવગ્રહઃ ૫, નોઙ્ગેન્દ્રિયાર્થાવગ્રહઃ ૬ ॥ સૂ. ૨૯ ॥

ટીકા—‘સે કિં તં અત્યુગ્ગહે’ । ઇત્યાદિ । કતિવિધોઽસાવર્થાવગ્રહ ઇતિ શિષ્યપ્રશ્નઃ । ઉત્તરમાહ—‘અત્યુગ્ગહે છવિવહે પળ્ણત્તે’ । ઇત્યાદિ । અર્થસ્યાવગ્રહ-ણમ્—અર્થાવગ્રહઃ । સકલરૂપાદિવિશેષનિરપેક્ષાઽનિર્દેશ્યસામાન્યમાત્રાઽર્થગ્રહણ-રૂપઃ । પ્રથમપરિચ્છેદનમર્થાવગ્રહ ઇતિ નિર્વિકલ્પકં જ્ઞાનં દર્શનરૂપમિત્યુચ્યતે । અયં ચ નૈશ્વર્યિક એકસામાયિકઃ, યસ્તુ વ્યાવહારિકઃ ‘શબ્દોઽયમ્’ ઇત્યાદ્યુલ્લેખ-વાન્ સ આન્તમૌહૂર્તિક ઇતિ । અર્થાવગ્રહશ્ચ—મનઃસહિતેન્દ્રિયપશ્ચકજન્યત્વાત્ ષોઢા

इसलिये शब्द आकाश का गुण नहीं है, किन्तु वह पुद्गल की एक पर्याय है, यह सिद्ध हो जाता है ।

व्यञ्जनावग्रह का दृष्टान्त मल्लक-मृत्तिका का नवीन सकारा-बतलाया गया है वह टीका के अन्त में दिया गया है अतः वहां से समझ लेना चाहिये ॥ सू. २८ ॥

॥ इस प्रकार यह व्यञ्जनावग्रह हुआ ॥

अब सूत्रकार अर्थावग्रहको कहते हैं—‘से किं तं अत્યुगगहे’ । इत्यादि । प्रश्न—हे भदन्त ! पूर्वनिर्दिष्ट अर्थावग्रहका क्या स्वरूप है ?

તેથી શબ્દ આકાશનો ગુણ નથી, પણ તે પુદ્ગલની એક પર્યાય છે. એ સિદ્ધ થઈ જાય છે.

વ્યંજનાવગ્રહનું દૃષ્ટાંત મલ્લક-માટીનું નવીન શકોરું—ખતાવવામાં આવેલ છે તે ટીકાને અતે આપેલ છે. તેથી ત્યાંથી સમજી લેવું ॥ સૂ. ૨૮ ॥

॥ આ પ્રકારે આ વ્યંજનાવગ્રહનું વર્ણન થયું ॥

હવે સૂત્રકાર અર્થાવગ્રહનું વર્ણન કરે છે—“સે કિં તં અત્યુગ્ગહે” । ઇત્યાદિ પ્રશ્ન—હે ભદન્ત ! પૂર્વનિર્દિષ્ટ અર્થાવગ્રહનું શું સ્વરૂપ છે ?

ભવતીત્યાહ—‘અત્યુગ્રહે’ इति । अर्थावग्रहः पञ्चविधः प्रज्ञप्तः । श्रोत्रेन्द्रियार्थावग्रहः श्रोत्रेन्द्रियेण, एवं चक्षुरिन्द्रियार्थावग्रहादिषु विज्ञेयम् । इदमत्र बोध्यम्—चक्षुर्मनसोस्तु व्यञ्जनावग्रहो न भवति, ततस्तयोरर्थावग्रह एव भवति । तत्र पृष्ठभेदमाह—‘नो इन्द्रिय-अत્યुग્રहे’ इति । नो इन्द्रियार्थावग्रहः—नो इन्द्रियेण=भावमनसाऽर्थावग्रहो द्रव्येन्द्रिय-व्यापारनिरपेक्षो घटाद्यर्थस्वरूपपरिभावनाऽभिमुखः प्रथममेकसामयिको रूपाद्यर्था-कारादिविशेषचिन्तारहितोऽनिर्देश्यसामान्यमात्रचिन्तात्मको बोधः—नो इन्द्रिया-र्थावग्रहः—नो इन्द्रियं हि मनः, तच्च द्विधा—द्रव्यरूपं भावरूपं च । तत्र मनःपर्याप्ति-नामकर्मोदयाद् यन्मनःप्रायोग्यवर्गणादलिकानादाय मनस्त्वेन परिणमति तद् द्रव्यरूपं मनः । तथा द्रव्यमनोऽवष्टम्भेन जीवस्य यो मननपरिणामः स भावमनः । तत्रेह भावमनो गृह्यते । तद्ग्रहणे हि द्रव्यमनसोऽपि ग्रहणं भवत्येव, द्रव्यमनो विना भावमनसोऽसंभवात्, भावमनो विनाऽपि च द्रव्यमनो भवति ॥ सू० २९ ॥

उत्तर—अर्थावग्रह छह प्रकारका बतलाया गया है, वे इस प्रकार हैं—१ श्रोत्रेन्द्रिय अर्थावग्रह, २ चक्षुरिन्द्रिय अर्थावग्रह, ३ जिह्वेन्द्रिय अर्थावग्रह, ४ घ्राणेन्द्रिय अर्थावग्रह, ५ स्पर्शेन्द्रियार्थावग्रह और ६ नो इन्द्रिय अर्थावग्रह । अर्थ का अवग्रह होना इसका नाम अर्थावग्रह है । सकल रूपादिक विशेष से निरपेक्ष होने की वजह से अनिर्देश्य सामान्य मात्र अर्थ का जानना, जैसे ‘यह कुछ है’ इसका नाम अर्थावग्रह है । नैश्चयिक और व्यावहारिक रूप से अर्थावग्रह दो प्रकार का होता है । नैश्चयिक अर्थावग्रह का काल एक समयमात्र है । यह निर्विकल्पकज्ञान-रूप होता है । निर्विकल्पकज्ञान, दर्शनरूप होता है । तथा जो व्यावहा-रिक अर्थावग्रह होता है, अर्थात्—‘यह शब्द है’ इत्यादि प्रकार के

उत्तर—अर्थावग्रહ છ પ્રકારના બતાવ્યા છે. તે આ પ્રમાણે છે—(૧) શ્રોત્રેન્દ્રિય અર્થાવગ્રહ (૨) ચક્ષુરિન્દ્રિય અર્થાવગ્રહ (૩) જિહ્વેન્દ્રિય અર્થાવગ્રહ (૪) ઘ્રાણેન્દ્રિય અર્થાવગ્રહ (૫) સ્પર્શેન્દ્રિયાઅર્થાવગ્રહ (૬) નો ઇન્દ્રિય અર્થાવગ્રહ અર્થનો અવગ્રહ થવો તેનું નામ અર્થાવગ્રહ છે. સકળ રૂપાદિક વિશેષથી નિરપેક્ષ હોવાને કારણે અનિર્દેશ્ય સામાન્યમાત્ર અર્થનું જાણવું, જેમકે “આ કંઈક છે” તેનું નામ અર્થાવગ્રહ છે. નૈશ્ચયિક અને વ્યાવહારિક રૂપે અર્થાવગ્રહ બે પ્રકારનો છે. નૈશ્ચયિક અર્થાવગ્રહનો કાળ એક સમયમાત્ર છે. એ નિર્વિકલ્પક-જ્ઞાનરૂપ હોય છે. નિર્વિકલ્પકજ્ઞાન દર્શનરૂપ હોય છે. તથા જે વ્યાવહારિક અર્થાવગ્રહ થાય છે, એટલે કે “આ શબ્દ છે” ઇત્યાદિ પ્રકારના ઉદ્દેશવાળો હોય છે, તેનો

ઉલ્લેખ વાળા હોતા હૈં ઉસકા કાલ અન્તર્મુહૂર્ત કા હૈં । યહ અર્થાવગ્રહ મન ઓર પાંચ ઇન્દ્રિયોં સે ઉત્પન્ન હોને કે કારણ છહ પ્રકાર કા બતલાયા ગયા હૈં । યહ વાત પહિલે વ્યંજનાવગ્રહ કે પ્રકરણ મેં કહી જા ચુકી હૈં કિ ચક્ષુ ઓર મન અપ્રાપ્યકારી હોને કે કારણ હનસે વ્યંજનાવગ્રહ નહીં હોતા હૈં. અર્થાત્ હનસે અર્થાવગ્રહ હી હોતા હૈં । સૂત્ર મેં “નો ઇન્દ્રિય” શબ્દ સે ભાવમન ગૃહીત હુઆ હૈં । મન દો પ્રકાર કા બતલાયા ગયા હૈં । એક દ્રવ્ય મન ઓર દૂસરા ભાવમન । ભાવમન કે દ્વારા જો અર્થ કા ગ્રહણ હોતા હૈં—જિસમેં કિ દ્રવ્યેન્દ્રિય કે વ્યાપાર કી અપેક્ષા નહીં હોતી હૈં, તથા ઘટાદિકરૂપ પદાર્થ કે સ્વરૂપ કી વિચારણા કે જો સન્મુખ હોતા હૈં, વિશેષ કા જિસમેં કોઈ વિચાર નહીં હોતા હૈં કિન્તુ અનિર્દેશ્ય સામાન્ય-માત્ર કા હી જિસમેં બોધ રહા કરતા હૈં—ઉસકા નામ નો ઇન્દ્રિયાર્થાવગ્રહ હૈં । મનઃપર્યાસિ નામ કર્મ કે ઉદય સે યુક્ત જીવ મનઃ પ્રાયોગ્ય વર્ગણાદલિકોં કો ગ્રહણ કરકે જો ઉન્હેં મનરૂપ સે પરિણમાતા હૈં હિસકા નામ દ્રવ્યમન હૈં । તથા દ્રવ્યમન કી સહાયતા સે જીવ કા જો મનનરૂપ પરિણામ હોતા હૈં વહ ભાવમન હૈં । તાત્પર્ય હિસકા હિસ પ્રકાર હૈં—મનો-વર્ગણાઓં કા મનરૂપ સે પરિણમન હાના હિસકા નામ દ્રવ્યમન, તથા હિસ દ્રવ્યમન કી સહાયતા સે જીવ કે જો ઉન ૨ પદાર્થોં કા વિચાર

કાળ અન્તર્મુહૂર્તનો છે. આ અર્થાવગ્રહ મન અને પાંચ ઇન્દ્રિયોથી ઉત્પન્ન થવાને કારણે છ પ્રકારનો બતાવ્યો છે. એ વાત પહેલાં વ્યંજનાવગ્રહના પ્રકરણમાં કહેવાઈ ગઈ છે કે ચક્ષુ અને મન અપ્રાપ્યકારી હોવાથી તેમના વડે વ્યંજનાવગ્રહ થતો નથી, એટલે કે તેમનાથી અર્થાવગ્રહ જ થાય છે. સૂત્રમાં “નો ઇન્દ્રિય” શબ્દથી ભાવ મન ગ્રહણ કરેલ છે. મન બે પ્રકારનું બતાવ્યું છે (૧) દ્રવ્ય મન, (૨) ભાવ મન.

“ભાવમનનાદ્વારા જે અર્થનું ગ્રહણ થાય છે, “જેમાં દ્રવ્યેન્દ્રિયના વ્યાપારની અપેક્ષા રહેતી નથી, તથા ઘટાદિકરૂપ પદાર્થના સ્વરૂપની વિચારણાની જે સમીપ હોય છે, વિશેષનો જેમાં કોઈ વિચાર થતો નથી, પણ અનિર્દેશ્ય સામાન્યમાત્રનો જ જેમા બોધ રહ્યા કરે છે” તેનું નામ નો ઇન્દ્રિયાર્થાવગ્રહ છે. મનઃપર્યાસિ નામકર્મના ઉદયથી યુક્ત જીવ મનઃપ્રાયોગ્ય વર્ગણાદલિકોને ગ્રહણ કરીને તેમને જે મનરૂપે પરિણમાવે છે, તેનું નામ દ્રવ્યમન છે. તથા દ્રવ્યમનની સહાયતાથી જીવનું જે મનનરૂપ પરિણામ આવે છે, તે ભાવમન છે. તેનું તાત્પર્ય એ છે કે—મનોવર્ગણાઓનું મનરૂપે પરિણમન થવું તેનું નામ દ્રવ્યમન, તથા તે દ્રવ્યમનની સહાયતાથી જીવને તે તે પદાર્થોનો જે વિચાર

મૂલમ્—તસ્સ ણં ઇમે એગદ્વિયા નાનાઘોષા નાનાવંજના પંચ નામધિજ્ઞા ભવંતિ, તં જહા-ઓગેળ્હણયા, ઉવધારણયા, સવળયા, અવલંબળયા, મેહા । સે તં ઉગ્ગહે ॥ સૂ૦ ૩૦ ॥

છાયા—તસ્સ સ્વલુ ઇમાનિ એકાર્થિકાનિ નાનાઘોષાણિ નાનાવ્યજ્ઞનાનિ, પશ્ચ- નામધેયાનિ ભવન્તિ, તત્થ યથા—અવગ્રહણતા, ઉપધારણતા, શ્રવણતા, અવલમ્બનતા, મેદા । સ એષોઽવગ્રહઃ ॥સ૦ ૩૦॥

ટીકા—‘ તસ્સ ણં ’ ઇત્યાદિ । તસ્ય=અવગ્રહસ્ય સ્વલુ ઇમાનિ=અનન્ત- સ્વક્ષ્યમાણાનિ, નાનાઘોષાણિ = નાના - અનેકવિધાઃ ઘોષા = ઉદાત્તાદયો યત્ર તાનિ । તથા નાનાવ્યજ્ઞનાનિ - નાના = અનેકવિધાનિ, વ્યજ્ઞનાનિ= વ્યજ્ઞનવર્ણાઃ કકરાદયો યત્ર તાનિ, પશ્ચ=પશ્ચસંખ્યકાનિ, નામધેયાનિ=નામાનિ એકાર્થિકાનિ=અવગ્રહસામાન્યાપેક્ષયા અભિન્નાર્થિકાનિ । અવગ્રહવિશેષાપેક્ષયા તુ

હુઆ કરતા હૈ વહ ભાવમન હૈ । યહાં ભાવમન કા ગ્રહણ હુઆ હૈ । હસીસે દ્રવ્ય મન કા ભી ગ્રહણ હો જાતા હૈ, કારણ કિ-દ્રવ્યમન કે વિના ભાવમન નહીં હોતા । ભાવમન કે વિના દ્રવ્યમન તો હો જાતા હૈ । હસી તરહ શ્રોત્ર ઇન્દ્રિય સે જો અર્થ કા અવગ્રહ હોતા હૈ વહ શ્રોત્રેન્દ્રિ- યાર્થાવગ્રહ, ચક્ષુ ઇન્દ્રિય સે જો અર્થ કા અવગ્રહ હોતા હૈ વહ ચક્ષુ- ઇન્દ્રિય અર્થાવગ્રહ હૈ, ઇત્યાદિ રૂપ સે શેષ ઇન્દ્રિયોં મેં ભી જાન લેના ચાહિયે ॥ સૂ૦ ૨૯ ॥

‘ તસ્સ ણં ’ ઇત્યાદિ ।

અવગ્રહ કે નાના ઉદાત્ત આદિ ઘોષ તથા અનેક વિધ વ્યંજન- કકાર આદિ વ્યંજન-વર્ણ વાલે એકાર્થક પાંચ નામ હૈં । અર્થાત્થ યે પાંચ

થયા કરે છે તે ભાવમન છે. અહીં ભાવમન ગ્રહણ કરેલ છે. તેથી દ્રવ્યમનનું પશુ ગ્રહણ થઈ જાય છે, કારણ કે દ્રવ્યમન વિના ભાવમન હોતું નથી ભાવ- મન વિના દ્રવ્યમન હોઈ શકે છે. એજ પ્રમાણે શ્રોત્રેન્દ્રિયથી જે અર્થનો અવગ્રહ થાય છે તે શ્રોત્રેન્દ્રિયાર્થાવગ્રહ, ચક્ષુર્દ્રિયથી જે અર્થનો અવગ્રહ થાય છે તે ચક્ષુર્દ્રિય અર્થાવગ્રહ છે, ઇત્યાદિ રીતે બાકીની ઇન્દ્રિયોમા પણ સમજી લેવું ॥ સૂ ૨૯ ॥

“ તસ્સ ણં ” ઇત્યાદિ—

અવગ્રહના અનેક ઉદાત્ત આદિ ઘોષ તથા અનેકવિધ વ્યંજન-કકાર આદિ. વ્યંજન-વર્ણવાળા એકાર્થક પાંચ નામ છે. એટલે કે એ પાંચ નામ અવ-

કથંચિદ્ ભિન્નાર્થકાનિ । તથાહિ-इह अवग्रहस्त्रिधा-व्यञ्जनावग्रहः, सामान्यार्था-  
वग्रहः, विशेषसामान्यार्थावग्रहश्चेति । तत्र विशेषसामान्यार्थावग्रह औपचारिकः,  
स चानन्तरमेवाग्रे प्रदर्शयिष्यते । अवग्रहस्य पञ्चनामानि प्रदर्शयितुमाह—‘ तं जहा ’  
इत्यादि । तद्यथा-तानि यथा-‘ अवग्रहणता ’ इति । अवग्रहणेऽनेनेत्यवग्रहणम्-  
व्यञ्जनावग्रह-प्रथमसमयप्रविष्ट-शब्दादि-पुद्गलाऽऽदानपरिणामः इत्यर्थः । अवग्रहण-  
मेव-अवग्रहणता । स्वार्थे तल् प्रत्यय आर्षत्वात् । एवमग्रेऽपि तल् प्रत्ययो बोध्यः ॥१॥

નામ અવગ્રહ સામાન્ય કી અપેક્ષા સે સમાન અર્થ વાળે હૈં । તથા અવગ્રહ  
વિશેષ કી અપેક્ષા યે પાંચીં હી નામ કથંચિત્ ભિન્નાર્થક ભી હૈં । અવગ્રહ  
ત્રીન પ્રકાર કા હૈ-વ્યજ્ઞનાવગ્રહ, સામાન્યાર્થાવગ્રહ તથા વિશેષ સામાન્ય-  
ર્થાવગ્રહ । હનમેં ત્રીનરા બેદ જો વિશેષ સામાન્યાર્થાવગ્રહ હૈ વહ ઓપ-  
ચારિક હૈ । યહ બાત અભી આગે પ્રદર્શિત કી જાવેગી । અવગ્રહ કે પાંચ  
નામ યે હૈં-અવગ્રહતા ૧, ઉપધારણતા ૨, શ્રવણતા ૩, અવલમ્બનતા ૪,  
મેધા ૫ । વ્યજ્ઞનાવગ્રહ કિ જિસકી સ્થિતિ અન્તર્મુહૂર્ત્ત કી હૈ ઉસકે  
પ્રથમ સમય મેં પ્રવિષ્ટ શબ્દાદિક પુદ્ગલોં કે ગ્રહણ કરને રૂપ પરિણામ  
કા નામ અવગ્રહણતા હૈ ૧ । વ્યજ્ઞનાવગ્રહ કે દ્વિતીય આદિ સમય સે  
લેકર વ્યજ્ઞનાવગ્રહ કી સમાપ્તિ પર્યન્ત પ્રતિસમય અપૂર્વ ૨ પ્રવિષ્ટ શબ્દા-  
દિક પુદ્ગલોં કે ગ્રહણ પૂર્વક પ્રાક્તન પ્રતિસમયગૃહીત શબ્દાદિક પુદ્ગલોં  
કા જો ધારણાપરિણામ હૈ વહ ઉપધારણા હૈ ૨ । તાત્પર્ય ઇસકા યહ હૈ  
કિ વ્યજ્ઞનાવગ્રહ કા અન્ત અર્થાવગ્રહ કે હોને કા પ્રથમ સમય પર્યન્ત

ગ્રહ સામાન્યની અપેક્ષાએ સમાન અર્થવાળા છે. તથા અવગ્રહવિશેષની અપેક્ષાએ  
પાંચે નામ કંઈક ભિન્નાર્થક પણ છે. અવગ્રહ ત્રણ પ્રકારના છે-વ્યંજનાવગ્રહ,  
સામાન્યાર્થાવગ્રહ, તથા વિશેષ સામાન્યાર્થાવગ્રહ. આમાં ત્રીજો ભેદ-વિશેષ સામા-  
ન્યાર્થાવગ્રહ ઔપચારિક છે. આ વાત હવે આગળ બતાવવામાં આવશે. અવગ્રહના  
આ પાંચ નામ છે-(૧) અવગ્રહણતા, (૨) ઉપધારણતા (૩) શ્રવણતા (૪)  
અવલંબનતા અને (૫) મેધા.

(૧) જે વ્યંજનાવગ્રહની સ્થિતિ અન્તર્મુહૂર્ત્તની છે, તેના પ્રથમસમયમાં  
પ્રવિષ્ટ શબ્દાદિક પુદ્ગલોને ગ્રહણ કરવારૂપ પરિણામનું નામ અવગ્રહણતા છે.

(૨) વ્યંજનાવગ્રહના દ્વિતીય આદિ સમયથી લઈને વ્યંજનાવગ્રહની  
સમાપ્તિ સુધી, પ્રતિ સમય અપૂર્વ અપૂર્વ પ્રવિષ્ટ શબ્દાદિક પુદ્ગલોના ગ્રહણ-  
પૂર્વક પ્રાક્તન પ્રતિસમયગૃહીત શબ્દાદિક પુદ્ગલોનું જે ધારણા પરિણામ છે, તે  
ઉપધારણા છે. તેનું તાત્પર્ય એ છે કે વ્યંજનાવગ્રહનો અંત અર્થાવગ્રહ થવાના

‘ઉપધારણતા’ इति । धार्यतेऽनेनेति धारणम् । उप=सामीप्येन धारणम् उपधारणम्, व्यञ्जनावग्रह-द्वितीयादि-समयेष्ववसानपर्यन्तं प्रतिसमयमपूर्वपूर्व-प्रविष्टशब्दादिपुद्गलग्रहणपुरस्सरप्राक्तनप्रतिसमयगृहीतशब्दादिपुद्गलधारणपरिणाम इत्यर्थः । तदेवोपधारणता । अवग्रहणतोपधारणता चेति द्वयं व्यञ्जनावग्रहरूपम् ॥ २ ॥

‘श्रवणता’ इति । श्रूयतेऽनेनेति श्रवणम्, एकसामायिकसामान्यार्थावग्रह-रूपो बोधपरिणाम इत्यर्थः । तदेव श्रवणता ॥ ३ ॥

‘अवलम्बनता’ इति । अवलम्ब्यत इत्यवलम्बनम् । विशेषसामान્યार्थावग्रह इत्यर्थः । तदेव अवलम्बनता ॥ ४ ॥

માના ગયા હૈ । यह पहिले बतलाया जा चुका है कि-अर्थावग्रह का पूर्ववर्तीज्ञानव्यापार व्यंजन से उत्पन्न होता है और उस व्यंजन की पुष्टि के साथ पुष्ट होता चला जाता है, अतः व्यंजनावग्रह का प्रथम क्षणवर्ती जितना भी ज्ञानव्यापार है वह अवग्रहणता १ और द्वितीय आदि समय से लेकर अन्त समय तक जो अपूर्व २ ज्ञानव्यापार है वह सब उपधारणता है २ । यह उपधारणता यह करती है कि व्यंजनावग्रह के इन द्वितीयादि समयों से लेकर जो अन्तसमय तक अपूर्व २ ज्ञानव्यापार पुष्ट होता जाता है उस सब को अपने में जमा करती जाती है । तथा द्वितीयादि समय के ज्ञानव्यापार को आगे २ के समयों में हुए ज्ञानव्यापार के साथ जोड़ती रहती है । इस तरह उन समयों के ज्ञानव्यापार की अन्ततक एक धारा चित्त में जमती चली जाती है । इसी का नाम उपधारणता है २ । इस उपधारणता के अनन्तर समय में ही

પ્રથમ સમય સુધી માનવામાં આવેલ છે. એ પહેલાં બતાવવામાં આવી ગયું છે કે-અર્થાવગ્રહનો પૂર્વવર્તી જ્ઞાનવ્યાપાર વ્યંજનથી ઉત્પન્ન થાય છે અને તે વ્યંજનની પુષ્ટિની સાથે જ પુષ્ટ થતો જાય છે, તેથી વ્યંજનાવગ્રહનો પ્રથમ ક્ષણવર્તી જોડેલો જ્ઞાન વ્યાપાર છે તે અવગ્રહણતા અને દ્વિતીય આદિ સમયથી લઈને અન્ત સમય સુધી જે અપૂર્વ અપૂર્વ જ્ઞાનવ્યાપાર છે તે બધી ઉપધારણતા છે. આ ઉપધારણતા એ કામ કરે છે કે વ્યંજનાવગ્રહનાં એ દ્વિતીયાદિ સમયેથી લઈને અન્ત સમય સુધી જે અપૂર્વ અપૂર્વ જ્ઞાન વ્યાપાર પુષ્ટ થતો જાય છે તે બધાને પોતાની અંદર જમા કરતી જાય છે. તથા દ્વિતીયાદિ સમયના જ્ઞાન વ્યાપારને આગળ આગળના સમયોમાં થયેલ જ્ઞાનવ્યાપારની સાથે જોડતી રહે છે. આ રીતે તે સમયોના જ્ઞાનવ્યાપારની અંત સુધી એક ધારા ચિત્તમાં જામતી જાય છે. એનું જ નામ ઉપધારણતા છે ૨. આ ઉપધારણતા બાદના સમયે જ



નનુ કથં વિશેષસામાન્યાર્થાવગ્રહોઽવલમ્બનમિતિ ચેત્, ઉચ્યતે—ઇહ ‘શબ્દોઽયમ્’ इत्यपि ज्ञानं विशेषावगमरूपत्वादवायज्ञानम् । तथाहि—शब्दोऽयं नाशब्दो रूपादिरिति शब्दस्वरूपावधारणं विशेषावगमः । अतो यत् पूर्वमनिर्देश्यसामान्य- मात्रग्रहणमेकसामायिकं स पारमार्थिकोऽर्थावग्रहः । ततः ऊर्ध्वं तु यत् ‘किमिद’ -मिति विमर्शनं सा ईहा । तदनन्तरं शब्दस्वरूपावधारणं ‘शब्दोऽयम्’ इति भवति

“यह कुछ है” ऐसा अर्थावग्रह होता है। अवग्रहता और उपधारणता ये दोनों प्रकाशरूपज्ञान व्यापार व्यंजनावग्रह स्वरूप होते हैं। एक सामयिक जो सामान्यरूप अर्थ का अवग्रहरूप बोध परिणाम होता है वह श्रवणता है ३। तथा विशेष और सामान्यरूप अर्थ का जो अवग्रहरूप बोध परिणाम होता है, अर्थात् जो विशेष सामान्यार्थावग्रह होता है उसका नाम अवलम्बनता है ४।

શંકા—વિશેષ સામાન્યાર્થાવગ્રહ કો આપ અવલમ્બન કૈસે કહતે હૈં?

ઉત્તર—‘શબ્દોઽયમ્’—યહ શબ્દ હૈ, ઇસ પ્રકાર કા જ્ઞાન વિશેષા-વગમરૂપ હોને સે અવાયજ્ઞાન હૈ, ક્યોં કિ યહ શબ્દ હૈ, અશબ્દ રૂપાદિ નહીં હૈ, ઇસ પ્રકાર શબ્દસ્વરૂપ કે અવધારક હોને સે યહ અવાયજ્ઞાન વિશેષાવગમ હૈ। અવાયજ્ઞાન વિશેષાવગમસ્વરૂપ ઇસ પ્રકાર હોતા હૈ। સર્વ પ્રથમ જો અનિર્દેશ્ય એક સમયપર્યન્ત સામાન્ય માત્ર કા ગ્રહણ હોતા હૈ વહ પારમાર્થિક અર્થાવગ્રહ હૈ। ઇસ પ્રકાર અર્થાવગ્રહ હોને કે વાદ જો ‘શબ્દોઽયમ્’—ઇસ પ્રકાર શબ્દસ્વરૂપ કા અવધારણ હોતા હૈ

“આ કંઈક છે” એવો અવગ્રહ થાય છે. અવગ્રહણતા અને ઉપધારણતા એ બન્ને પ્રકાશરૂપ જ્ઞાનવ્યાપાર વ્યંજનાવગ્રહસ્વરૂપ હોય છે. જે સામાન્યરૂપ અર્થના અવગ્રહરૂપ બોધ પરિણામ એક સામયિક હોય છે તે શ્રવણતા છે ૩, તથા વિશેષ-રૂપ અને સામાન્યરૂપ અર્થના જે અવગ્રહરૂપ બોધ પરિણામ હોય છે એટલે કે જે વિશેષસામાન્યાર્થાવગ્રહ થાય છે. તેનું નામ અવલંબનતા છે ૪.

શંકા—વિશેષ સામાન્યાર્થાવગ્રહને આપ અવલંબન કેવી રીતે કહો છો ?

ઉત્તર—“શબ્દોઽયમ્” આ શબ્દ છે. આ પ્રકારનું જ્ઞાન વિશેષાવગમરૂપ હોવાથી અવાયજ્ઞાન છે, કારણ કે આ શબ્દ છે, અશબ્દ રૂપાદિ નથી, આ પ્રકારે શબ્દસ્વરૂપનું અવધારક હોવાથી તે અવાયજ્ઞાન વિશેષાવગમ છે. અવાયજ્ઞાન વિશેષાવગમસ્વરૂપ આ પ્રકારે હોય છે. સર્વપ્રથમ જે અનિર્દેશ્ય એકસમય સુધી સામાન્ય માત્રનું ગ્રહણ થાય છે, તે પારમાર્થિક અર્થાવગ્રહ છે, આ રીતે અર્થા-વગ્રહ થયા પછી જે “શબ્દોઽયમ્” આ પ્રકારે શબ્દસ્વરૂપનું અવધારણ થાય છે, તે

‘ किमयं शब्दः शाङ्खः ?, किं वा शार्ङ्गः? ’ इतीहानन्तरं यत्-शाङ्ख एव, शार्ङ्ग एव ’ इति ज्ञानमुत्पद्यते, तदवायज्ञानम् । तदपि च ‘ किमयं शाङ्खोऽपि शब्दो वह अववायज्ञान है । यह अववायज्ञान शब्देतररूपादि की व्यावृत्ति करके शब्द का निश्चायक होता है, इसलिये यह विशेषावगम स्वरूप है । इस प्रकार ‘ यह शब्द है ’ इस अववायज्ञान के होने के बाद फिर उत्तरकालिक जिज्ञासा होती है-‘ यह शब्द शाङ्ख का है ? या शार्ङ्ग का है ? ’ । इस जिज्ञासा के बाद जो विशेषज्ञान होता है उसकी अपेक्षा ‘ यह शब्द है ’ यह ज्ञान सामान्यमात्रावलम्बन है, इसलिये यह अवग्रह शब्द से उपचरित होता है । वह अवग्रह सामान्यविशेषरूप अर्थावलम्बन वाला है इसलिये वह ‘ विशेषसामान्यार्थावग्रह ’ इस शब्द से उपचरित होता है, क्योंकि ‘ यह शब्द है ’-इस प्रकार के ज्ञान का अवलम्बन करके ‘ यह शब्द शंख का है या शृंग का है ? ’ इस प्रकार की ईहा रूपज्ञान उत्पन्न होता है, इसीलिये ‘ विशेषसामान्यार्थावग्रह अवलम्बन है ’ यह कहा है । यह शंख का शब्द है अथवा शृंग का ? इस प्रकार की ईहा के बाद जो ‘ यह-शंख का ही शब्द है अथवा शृंग का ही शब्द है ’ ऐसा जो

અવાયજ્ઞાન છે. આ અવાયજ્ઞાન શબ્દેતર રૂપાદિની વ્યાવૃત્તિ કરીને શબ્દનું નિશ્ચાયક હોય છે, તેથી તે વિશેષાવગમસ્વરૂપ છે. આ રીતે “આ શબ્દ છે” આ અવાયજ્ઞાન થયાં પછી વળી ઉત્તરકાલિકધર્મનીજિજ્ઞાસા થાય છે-” આ શબ્દ શંખનો છે કે ગંગાનો છે ? ” આ જિજ્ઞાસા બાદ જે વિશેષજ્ઞાન થાય છે તેના કરતાં “આ શબ્દ છે” એ જ્ઞાન સામાન્યમાત્રાવલંબન છે તેથી તે અવગ્રહ શબ્દથી ઉપચરિત થાય છે. તે અવગ્રહ સામાન્યવિશેષરૂપ અર્થાવલંબનવાળો છે તેથી તે “વિશેષસામાન્યાર્થાવગ્રહ” એ શબ્દથી ઉપચરિત થાય છે, કારણ કે “આ શબ્દ છે” આ પ્રકારનાં જ્ઞાનનું અવલંબન લઈને “આ શબ્દ શંખનો છે કે શ્રૃંગનો છે ? ” આ પ્રકારનું ઈહારૂપ જ્ઞાન ઉત્પન્ન થાય છે, તેથી “વિશેષ સામાન્યાર્થાવગ્રહ અવલંબન છે” એમ કહ્યું છે. “આ શંખનો શબ્દ છે કે શ્રૃંગનો ? ” આ પ્રકારની ઈહા પછી જે “આ શંખનો જ શબ્દ છે કે શ્રૃંગનો

મન્દ્રઃ (ગંભીરઃ) કિં વા તારઃ' इत्युत्तरविशेषजिज्ञासायां सामान्यावलम्बनमित्यवग्रह इत्युपचर्यते । किं मन्द्रः किं वा तारः ' इतीहानन्तरं ' मन्द्र एवायं, तार एवायं वे' -ति ज्ञानं यदुत्पद्यते, तदवायरूपम् । एवमुत्तरोत्तरविशेषजिज्ञासायां पूर्वं पूर्वमवा-  
वायज्ञानमुत्तरोत्तरविशेषावगमापेक्षया सामान्यार्थावलम्बनमित्यवग्रह इत्युपचर्यते ।  
यदा तूत्तरधर्मजिज्ञासा न भवति, तदा तदन्त्यं विशेषज्ञानमवायज्ञानमेव, न तत्रो-  
पचारः, उपचारकारणाभावात्, तदनन्तरं हि विशेषाकाङ्क्षाया अपगमात् । अतस्त-  
दनन्तरमविच्युतिरूपा धारणा प्रवर्तते । वासनारूपा स्मृतिरूपा तु धारणा सर्वेष्व-  
पि विशेषावगमेषु द्रष्टव्या ।

होता है वह अवायज्ञान है । उसके बाद 'यह शंख का शब्द मन्द्र (गंभीर) है अथवा तार है' इस प्रकार विशेष जिज्ञासा होने पर 'यह शंख का शब्द है' - यह अवायज्ञान सामान्यावलम्बन होने के कारण अवग्रह शब्द से उपचरित होता है । फिर 'मन्द्र है अथवा तार है ?' इस ईहा के बाद यह मन्द्र ही है अथवा तार ही है' इस प्रकार का जो निश्चयात्मक ज्ञान होता है वह अवायज्ञान है । इस प्रकार उत्तरोत्तर विशेष जिज्ञासा होने पर पूर्व पूर्व का अवायज्ञान उत्तरोत्तर विशेषावगम की अपेक्षा सामान्यार्थावलम्बन होने से अवग्रह शब्द से उपचरित होता है । जब उत्तर काल में जिज्ञासा नहीं होती तब वह अन्तिम विशेषज्ञान अवाय-  
ज्ञान ही रहता है, क्योंकि वहां उपचार नहीं होता । उपचार तो तब होता है जब उपचार का कारण रहे, अन्तिम विशेषज्ञान होने पर उपचार के कारण विशेषाकाङ्क्षा का अपगम हो जाता है, अत एव वहां

જ શબ્દ છે ” એવું જે જ્ઞાન થાય છે તે અવાયજ્ઞાન છે. ત્યાર બાદ “આ શંખનો શબ્દ મન્દ્ર (ગંભીર) છે કે મોટો છે ” આ રીતે વિશેષ જિજ્ઞાસા થતાં “આ શંખનો શબ્દ છે ” આ અવાયજ્ઞાન સામાન્યાવલંબન હોવાને કારણે અવગ્રહ શબ્દથી ઉપચરિત થાય છે. વળી “મંદ્ર છે કે મોટો છે ? ” આ ઇહા પછી આ મંદ્ર જ છે કે મોટો છે ” એવા પ્રકારનું જે નિશ્ચયાત્મક જ્ઞાન થાય છે તે અવાય જ્ઞાન છે. આ રીતે ઉત્તરોત્તર વિશેષ જિજ્ઞાસા થતા આગળ આગ-  
ળનું અવાય જ્ઞાન ઉત્તરોત્તર વિશેષાવગમની અપેક્ષાએ સામાન્યાર્થાવલંબન હોવાથી અવગ્રહ શબ્દથી ઉપચરિત થાય છે, ન્યારે ઉત્તર ધર્મમાં જિજ્ઞાસા થતી નથી ત્યારે તે અન્તિમ વિશેષજ્ઞાન અવાયજ્ઞાન જ રહે છે. કારણ કે ત્યાં ઉપચાર થતો નથી. ઉપચાર તો ત્યારે થાય છે કે ન્યારે ઉપચારનું કારણ રહે; અંતિમ વિશેષજ્ઞાન થતાં ઉપચારની કારણ વિશેષ આકાંક્ષાનો અપગમ થઈ નય

इदमत्र तत्त्वं बोध्यम्—उत्तरोत्तरधर्मजिज्ञासायां सत्यां शब्दादिज्ञानमेवावलम्ब्ये-  
हादयः प्रवर्तन्ते—‘किमयं शब्दः शाङ्खः किं वा शार्ङ्गः ?’ इत्यादि। अतः शब्दादि-  
ज्ञानान्तरमेव ईहादेः प्रवृत्तिर्भवतीत्यतो विशेषसामान्यार्थावग्रहोऽवलम्बन-  
मुच्यते । इति । ४ ।

इह शिष्याणां स्पष्टप्रतिपत्त्यर्थमुक्तमेवार्थं पुनर्विशदीकुर्मः—अर्थावग्रहो द्विविधः  
—नैश्चयिको व्यावहारिकश्च । तत्र प्रथमोऽर्थावग्रह एकसमयमात्रमानो निरुपचरितः  
पारमार्थिकः सामान्यवस्तुमात्रग्राहको भवति । सामयिकानि हि ज्ञानादिवस्तूनि  
परमयोगिन एव निश्चयवेदिनोऽवगच्छन्तीति नैश्चयिकोऽर्थावग्रह उच्यते । यस्तु

उपचार का कारण रहता ही नहीं । उपचार के कारण के अभावमें अन्तिम  
विशेषावगम अवायज्ञान स्वरूप ही रहता है । अन्तिम विशेषावगम के  
बाद अविच्युतिरूप धारणा प्रवृत्त होती है । वासनारूप स्मृतिरूप धारणा  
तो सभी विशेषावगमों में होती है ।

इस पूर्वोक्त सन्दर्भका अभिप्राय है कि—उत्तरोत्तर धर्म की जिज्ञासा  
होने पर शब्दादि ज्ञान का अवलम्बन करके ईहादि प्रवृत्त होते हैं, जैसे  
क्या यह शब्द शंख का है अथवा शृङ्ग का है ? इसलिये शब्दादि ज्ञान के  
बाद ही ईहादि की प्रवृत्ति होती है, अतएव—विशेषसामान्यार्थावग्रह  
को अवलम्बन कहा है ।

शिष्यों को स्पष्टरूपसे समझाने के लिये फिर भी इसको स्पष्ट करते हैं—

नैश्चयिक और व्यावहारिक के भेद से अर्थावग्रह दो प्रकार का है ।  
नैश्चयिक अर्थावग्रह एक समय का होता है । इसमें किसी भी प्रकार  
का उपचार नहीं होता है । अतः यह परमार्थिक है । इसका विषय केवल

છે, તેથી જ ત્યાં ઉપચારનું કારણ રહેતું જ નથી. ઉપચારના કારણના અભાવે  
અન્તિમ વિશેષાવગમ અવાય જ્ઞાન સ્વરૂપ જ રહે છે. અન્તિમ વિશેષાવગમની  
પછી અવિચ્યુતિરૂપ ધારણા પ્રવૃત્ત થાય છે, વાસનારૂપ અને સ્મૃતિરૂપ ધારણા  
તો સઘળા વિશેષાવગમોમાં હોય છે.

પૂર્વોક્ત કથનનું તાત્પર્ય એ છે કે—ઉત્તરોત્તર ધર્મની જિજ્ઞાસા થતા  
શબ્દાદિ જ્ઞાનનું અવલંબન લઈને ઇહાદિ પ્રવૃત્ત થાય છે, જેમ કે “ શું આ  
શબ્દ શંખનો છે કે શૃંગનો છે ? ” તે કારણે શબ્દાદિ જ્ઞાનની પછી જ ઇહાદિની  
પ્રવૃત્તિ થાય છે, તેથી વિશેષ સામાન્યાર્થાવગ્રહને અવલંબન કહેલ છે.

શિષ્યોને સ્પષ્ટ રીતે સમજાવવાને માટે ફરીથી પણ તેને સ્પષ્ટ કરે છે.  
નૈશ્ચયિક અને વ્યાવહારિકના ભેદથી અર્થાવગ્રહ બે પ્રકારનો છે. નૈશ્ચયિક અર્થો  
વગ્રહ એક સમયનો હોય છે, તેમાં કોઈ પણ પ્રકારનો ઉપચાર હોતો નથી, તેથી

છદ્મસ્થવ્યવહારિભિરપિ વ્યવહિયતે, સ વ્યાવહારિક ઉપચરિતોઽર્થાવગ્રહ ઉચ્યતે । નૈશ્વયિકાર્થાવગ્રહાદનન્તરમીહિતસ્ય વસ્તુવિશેષસ્ય યોઽવાયઃ સ પુનર્ભાવિનીમીહામ્ અવાયં ચાપેક્ષ્ય ઉપચરિતોઽર્થાવગ્રહઃ । ભાવિવિશેષાપેક્ષયા સામાન્યમવાયોઽપિ સન્ ગૃહ્ણતિ । યથ સામાન્યં ગૃહ્ણતિ, સોઽર્થાવગ્રહઃ, યથા પ્રથમો નૈશ્વયિકાર્થાવગ્રહઃ ।

इदमत्र तात्पर्यम् । प्रथमं नैश्वयिकेऽर्थावग्रहे रूपादिभ्योऽव्यावृत्तमव्यक्तं शब्द-सामान्यं वस्तु गृहीतं भवति । ततस्तस्मिन्नीहिते सति 'शब्द एवायम्' इत्यादि-

સામાન્ય હૈ સમયમાત્રાભવી જ્ઞાનાદિકોં કો નિશ્ચયવેદી પરમયોગી જન હી જાનતે હૈં, ઇસીલિયે ઇસકા નામ નૈશ્વયિક અર્થાવગ્રહ હૈ । તાત્પર્ય નૈશ્વયિક અર્થાવગ્રહ કો છદ્મસ્થજન નહીં જાનતે હૈં । છદ્મસ્થજનોં કો જો વ્યવહારમૈં આતા હૈ વહ વ્યાવહારિક અર્થાવગ્રહ હૈં ઓર યહ પારમાર્થિક નહીં હૈ ઉપચરિત હૈ, ક્યોં કિ નૈશ્વયિક અર્થાવગ્રહ કે અનન્તર જો ઈહિત વસ્તુ વિશેષ કા અવાયજ્ઞાન હોતા હૈ વહ પુનર્ભાવિની ઈહા ઓર અવાયકી અપેક્ષા કરકે ઉપચરિત અર્થાવગ્રહરૂપ સે માના જાતા હૈ । ડસ અવાયજ્ઞાન કા વિષય ભાવિવિશેષ કી અપેક્ષા સામાન્ય હો જાતા હૈ; ઓર ઇસ તરહ વહ અવાયજ્ઞાન ડસ સામાન્ય કો વિષય રઘતા હૈ, ઇસી લિયે સામાન્ય કો વિષય કરનેવાલા હોને સે અવાયજ્ઞાન અર્થાવગ્રહ ઉપચાર સે માન લિયા જાતા હૈ, ક્યોં કિ જો સામાન્ય કો વિષય કરતા હૈ વહ પ્રથમ નૈશ્વયિક અર્થાવગ્રહ કી તરહ અર્થાવગ્રહ હૈ ।

નિષ્કર્ષ ઇસકા યહ હૈ કિ-પ્રથમ નૈશ્વયિક અર્થાવગ્રહમૈં રૂપાદિકોં દ્વારા અનિર્દેશ્ય અવ્યક્ત ઇસી શબ્દસામાન્યરૂપ વસ્તુ ગૃહીત હોતી, હૈ

તે પરમાર્થિક છે. તેનો વિષય ફક્ત સામાન્ય છે. સમયમાત્રાભવી જ્ઞાનાદિકોને નિશ્ચયવેદી પરમયોગી જન જ જાણે છે, તેથી તેનું નામ નૈશ્વયિકઅર્થાવગ્રહ છે. તાત્પર્ય- નૈશ્વયિક અર્થાવગ્રહને છદ્મસ્થ જન જાણતા નથી. છદ્મસ્થજનોના વ્યવહારમાં જે આવે છે તે વ્યાવહારિક અર્થાવગ્રહ છે અને તે પારમાર્થિક નથી, ઉપચરિત છે, કારણ કે નૈશ્વયિકઅર્થાવગ્રહની પછી જે ઈહિત વસ્તુ વિશેષનું અવાયજ્ઞાન થાય છે, તે પુનર્ભાવિની ઈહા અને અવાયની અપેક્ષાએ કરીને ઉપચરિતઅર્થાવગ્રહરૂપે મનાય છે. તે અવાયજ્ઞાનનોવિષય ભાવિવિશેષની અપેક્ષાએ સામાન્યથઈ જાય છે, અને આ રીતે તે અવાયજ્ઞાન તે સામાન્યને વિષય કરે છે, તેથી સામાન્યને વિષયકરનાર હોવાથી અવાયજ્ઞાનઅર્થાવગ્રહ ઉપચારથી માની લેવાય છે, કારણ કે જે સામાન્યને વિષય કરે છે, તે પ્રથમ નૈશ્વયિક અર્થાવગ્રહની જેમ અર્થાવગ્રહ છે.

તેનો સાર એ છે કે-પ્રથમ નૈશ્વયિકઅર્થાવગ્રહમાં રૂપાદિકોંદ્વારા અનિ-

નિશ્ચયરૂપોઽવાયો ભવતિ । અર્થાવગ્રહેણ પ્રમાતા શબ્દમાત્રં રૂપરસાદિવ્યાવૃત્ત્યાઽન-  
વધારિત્વાત્ શબ્દતયા અનિશ્ચિતં ગૃહ્ણતીતિ । એતાવતાંઽશેન શબ્દોઽવગ્રહજ્ઞાનવિષયો  
ભવતિ, નતુ શબ્દબુદ્ધયા ‘શબ્દોઽયમ્’ इत्यध्यवसायेन શબ્દસ્ય ગ્રહણં ભવતિ,  
શબ્દનિશ્ચયસ્ય આન્તર્મૌહૃતિકત્વાત્, અર્થાવગ્રહસ્ય તુ એકસામયિકત્વાત્તદસંભવાત્ ।

અર્થાત્ નૈશ્ચયિક અર્થાવગ્રહ કા વિષય કેવલ અનિર્દેશ્ય સામાન્ય હૈ ।

જવ હસ સામાન્ય કો વિશેષરૂપમેં જાનને કી અભિલાષા જ્ઞાતા કે ચિત્ત  
મેં જગતી હૈ તવ વહ યહ નિશ્ચય કરતા હૈ કિ “યહ શબ્દ હી હૈ” હસી કા  
નામ અવાય હૈ । અર્થાવગ્રહ કે દ્વારા પ્રમાતા અનુભવ કરનેવાલા શબ્દ  
સામાન્ય રૂપ વસ્તુકો જાનતા હૈ, હસકા તાત્પર્ય યહ હૈ કિ વહ શબ્દ સામાન્ય  
રૂપ વસ્તુ, રૂપ રસાદિકોં કી વ્યાવૃત્તિ સે ઉસ સમય અનવધારિત હોતી હૈ  
હસી લિયે વહ શબ્દ રૂપસે નિશ્ચિત નહીં હોતી હૈ, કિન્તુ “યહ કુછ હૈ”  
એસા હી જ્ઞાન વહાં ઉસકો હોતા હૈ, અતઃ હનકે હી અંશ કો લેકર વહ  
શબ્દ અવગ્રહ જ્ઞાન કા વિષય માના જાતા હૈ । ઉસ સમય ‘યહ શબ્દ હૈ’  
હસ પ્રકાર કે અધ્યવસાય સે યુક્ત હોકર પ્રમાતા કે દ્વારા વહ શબ્દ  
ગૃહીત નહીં હોતા હૈ, કારણ કિ “યહ શબ્દ હૈ” હસ પ્રકાર કા નિશ્ચય  
તો પ્રમાતા કો અન્તર્મુહૃત કાલમેં હોતા હૈ । હતના કાલ અર્થાવગ્રહ કા  
માના નહીં ગયા હૈ । અર્થાવગ્રહ કા કાલ તો કેવલ એક સમય કા હૈ ।

દેશ્ય, અવ્યક્ત એવી શબ્દસામાન્યરૂપ વસ્તુ ગ્રહણ થાય છે, એટલે કે નૈશ્ચયિક  
અર્થાવગ્રહનો વિષય કેવળ અનિર્દેશ્યસામાન્ય છે.

જ્યારે આ સામાન્યને વિશેષરૂપે જાણવાની અભિલાષા જ્ઞાતાના ચિત્તમાં  
જાગે છે ત્યારે તે એ નિશ્ચય કરે છે કે “આ શબ્દ જ છે” એવું જ નામ  
અવાય છે. અર્થાવગ્રહદ્વારા પ્રમાતા શબ્દસામાન્યરૂપવસ્તુને જાણે છે, તેનું  
તાત્પર્ય એ છે કે તે શબ્દસામાન્યરૂપવસ્તુ, રૂપ, રસાદિકોની વ્યાવૃત્તિથી તે  
સમયે અનવધારિત હોય છે, તેથી જ તે શબ્દરૂપે નિશ્ચિત હોતી નથી. પણ  
“આ કંઈક છે” એવું જ જ્ઞાન ત્યાં તેને થાય છે, તેથી એટલા જ અંશને  
લઈને તે શબ્દ અવગ્રહ જ્ઞાનનો વિષય બનાય છે તે સમયે “આ શબ્દ છે”  
આ પ્રકારના અધ્યવસાયથી યુક્ત થઈને પ્રમાતા દ્વારા તે શબ્દ ગૃહીત થતો નથી,  
કારણ કે “આ શબ્દ છે” એ પ્રકારનો નિશ્ચય તો પ્રમાતાને અન્તર્મુહૃતમાં  
થાય છે. એટલો કાળ અર્થાવગ્રહનો માનવામાં આવ્યો નથી. અર્થાવગ્રહનો કાળ તો  
ફક્ત એક સમયનો છે.



નનુ પ્રથમસમય એવ રૂપાદિપરિહારેણ ‘શબ્દોડયમ્’ इति જ્ઞાનમર્થાવગ્રહત્વેન મન્યતામ્, શબ્દમાત્રત્વેન સામાન્યત્વાત્, તદુત્તરકાલં તુ પ્રાયો માધુર્યાદયઃ શબ્દ-શબ્દધર્મા અત્ર ઘટન્તે, ન તુ શાર્ઙ્ગધર્માઃ સ્વરકર્કશત્વાદય इति વિમર્શબુદ્ધિરીહા ભવિ-  
 પ્યતિ । તતશ્ચ ‘શાહ્વ એવાયં શબ્દઃ’ इति શબ્દવિશેષાવગમોડવાયોડસ્તુ? इति ચેત્, શ્રુણુ-  
 યદિ શબ્દબુદ્ધિમાત્રં ‘શબ્દોડયમ્’ इति નિશ્ચયજ્ઞાનમપિ ભવતાડર્થાવગ્રહો મન્યતે, શબ્દવિશેષજ્ઞાનમવાય इति ભેદોડ્જ્ઞીક્રિયતે, તર્હિ અવગ્રાહાભાવપ્રસન્નઃ સ્યાત્, અવગ્રહસ્થાનેડવાયસ્યૈવાડ્જ્ઞીકારાત્ ।

શંકા—રૂપરસાદિક કે પરિહાર સે પ્રથમ સમય મેં હી ‘યહ શબ્દ હૈ, અશબ્દ-રૂપાદિક નહીં હૈ,’ એસા જ્ઞાન અર્થાવગ્રહરૂપ સે માન લેના ચાહિયે, ક્યોં કિ અર્થાવગ્રહ કા વિષય આપ સામાન્ય કહતે હૈં ઓર “યહ શબ્દ હૈ” એસા જ્ઞાન માત્ર કી અપેક્ષા સામાન્ય પડ જાતા હૈ । અવ ઇસમેં ઈહાં ભી ઉત્તર કાલ મેં ઉત્પન્ન હો જાવેગી—જવ એસા વિમર્શ હોગા કિ શાર્ઙ્ગ શબ્દ કે ધર્મ સ્વર કર્કશતા આદિ ઇસમેં ઘટિત નહીં હોતે હૈં, કિન્તુ પ્રાયઃ માધુર્ય આદિ શંખ શબ્દ કે ધર્મ યહાં ઘટિત હો રહે હૈં । ઇસકે બાદ એસા શબ્દ વિશેષ કા નિર્ણય હોને પર કિ “યહ શંખ કા હી શબ્દ હૈ” અવાયજ્ઞાન માન લિયા જાયગા ।

ઉત્તર—એસા મન્તવ્ય ભી ઠીક નહીં માના જા સકતા હૈ ક્યોં કિ “શબ્દોડયમ્” યહ શબ્દ હૈ । એસી શબ્દબુદ્ધિ ભી યદિ અર્થાવગ્રહરૂપ સે માની જાવેગી, ઓર શબ્દ વિશેષ કા નિર્ણય અવાયરૂપ સે માના જાવેગા તો ફિર અવગ્રહ જ્ઞાન કયા હોગા—એસી કલ્પના મેં તો અવગ્રહ કા અભાવ

શંકા—રૂપરસાદિકનાપરિહારથી પ્રથમસમયમાં “આ શબ્દ છે, અશબ્દ-રૂપાદિક નથી,” એવું જ્ઞાન અર્થાવગ્રહ રૂપે માની લેવું જોઈએ. કારણ કે અર્થાવગ્રહનો વિષય આપ સામાન્ય કહો છે અને “આ શબ્દ છે” એવું જ્ઞાન શબ્દમાત્રની અપેક્ષાએ સામાન્ય જ લાગે છે. હવે તેમાં ઈહાં પણ ઉત્તરકાલમાં ઉત્પન્ન થઈ જશે, જ્યારે એવો અનુભવ થશે કે શ્રુંગ શબ્દના ધર્મ તીખા અને કઠોર આદિ તેમાં ઘટાવીશકાતા નથી, પણ સામાન્ય રીતે માધુર્ય આદિ શંખ શબ્દના ધર્મો તેમાં ઘટાવીશકાય છે. ત્યાર બાદ શબ્દ વિશેષનો “આ શંખનો જ અવાજ છે” એવો નિર્ણય થતા તેને અવાયજ્ઞાન માનીલેવાશે.

ઉત્તર—એવી માન્યતા પણ સાચીમાનીશકાયતેમનથી કારણ કે “શબ્દોડયમ્” આ શબ્દ છે. એવી શબ્દબુદ્ધિ પણ જો અર્થાવગ્રહરૂપે મનાય, અને શબ્દવિશેષનો નિર્ણય અવાયરૂપેમનાય તો પછી અવગ્રહજ્ઞાન શું હશે?—

નનુ ‘શબ્દોડ્ય’-મિતિ જ્ઞાનસ્ય કથમવાયત્વમિતિ चेद्, उच्यते-तस्यापि विशेषग्राहकत्वात्, विशेषज्ञानस्य चावायत्वात् ।

ननु ‘शाङ्ख एवायं शब्दः’ इति तदुत्तरकालभावि ज्ञानं विशेषार्थग्राहकं, शब्दज्ञाने तु शब्दसामान्यस्यैव प्रतिभासनात् कथं विशेषप्रतिभासः, येनावायप्रसङ्गः स्यादिति चेत्, उच्यते—शब्दोड्यमित्यपि ज्ञानं विशेषग्राहकमेव, तथाहि—‘शब्दो-  
ड्यं नाशब्दः’ इति विशेषप्रतिभास एव । यस्मात् न रूपादिरयं, तेभ्यो व्यावृ-  
त्तत्वेन गृहीतत्वात्, अतो ‘नाशब्दोड्य’-मिति निश्चीयते । यदि तु रूपादि-  
ही प्रसक्त होगા, कारण कि अवग्रह का स्थान अवाय ले लेता है । यदि  
कहो कि—‘यह शब्द है’ ऐसा सामान्य ज्ञान अवाय कैसे माना जावेगा ?  
इसका उत्तर इस प्रकार है—यह ज्ञान सामान्य नहीं है किन्तु विशेष है ।  
विशेषग्राहक ज्ञान अवाय माना गया है ।

प्रश्न—यदि फिर भी ऐसा कहा जाय कि “शंख का ही यह शब्द  
है” इस प्रकार का उत्तर कालभावीज्ञान ही शब्दविशेष का ग्राहक होने  
से विशेषग्राहक ज्ञान माना जावेगा, “यह शब्द है” ऐसा ज्ञान नहीं,  
अर्थात्—यह तो शब्द सामान्य का ग्राहक होने से सामान्य ज्ञान ही  
माना जावेगा, क्योंकि इसमें शब्द सामान्य का ही प्रतिभास होता है,  
विशेष का नहीं । अतः “यह शब्द है” ऐसा सामान्य प्रतिभासवाले  
ज्ञान को अवाय प्राप्त होने का प्रसंग कैसे प्रतिपादित किया है ।

એવી કલ્પનામાં તો અવગ્રહનો અભાવ જ પ્રસક્ત હશે, કારણ કે અવગ્રહનું  
સ્થાન અવાયલઈલે છે.

જો આપ એમકહો કે “આ શબ્દ છે” એવા સામાન્યજ્ઞાનને અવાય  
કેમ મનાય ? તેનો ઉત્તર આ પ્રમાણે છે—આ જ્ઞાન સામાન્ય નથી પણ વિશેષ  
છે. વિશેષ ગ્રાહક જ્ઞાનને અવાય માનવામાં આવેલ છે.

પ્રશ્ન—જો ફરીથી પણ એમ કહેવામાં આવેકે “શંખનો જ આ શબ્દ  
છે” આ પ્રકારનું ઉત્તર કાલભાવીજ્ઞાન જ શબ્દવિશેષનું ગ્રાહક હોવાથી વિશેષ  
ગ્રાહકજ્ઞાન માનીશકાશે, “આ શબ્દ છે” એવું જ્ઞાન નહીં, એટલે કે એ  
તો શબ્દ સામાન્યનું ગ્રાહક હોવાથી સામાન્યજ્ઞાન જ માનવામાં આવશે; કારણ  
કે તેમાં શબ્દ સામાન્યનો જ પ્રતિભાસ થાય છે, વિશેષનો નહીં. તેથી “આ  
શબ્દ છે” એવાં સામાન્ય પ્રતિભાસવાળાં જ્ઞાનને અવાય પ્રાપ્ત હોવાનો પ્રસંગ  
કેવી રીતે પ્રતિપાદિત કર્યો છે ?

મ્યોડપિ વ્યાવૃત્તિર્ગૃહીતા ન સ્યાત્, તદા 'શબ્દોડય'—મિતિ નિશ્ચયોડપિ ન સ્યાત્ । તસ્માત્ 'શબ્દોડયં નાશબ્દઃ' ઇતિ વિશેષજ્ઞાનમેવ । તથા ચ 'શબ્દોડય'—મિતિ જ્ઞાનસ્ય વિશેષગ્રાહકત્વાન્નિશ્ચયરૂપત્વાચ્ચાવાય એવ, ન તુ અવગ્રહ ઇતિ ।

ઉત્તર—“યહ શબ્દ હૈ” એસા જ્ઞાન મી વિશેષગ્રાહક હી માના જાવેગા, કારણ કિ—“યહ શબ્દ હૈ—અશબ્દ નહીં હૈ—અર્થાત્ યહ રૂપાદિક નહીં હૈ” એસા જ્ઞાન, વિશેષ કા પ્રતિભાસ સ્વરૂપ હોને સે વિશેષપ્રતિ-ભાસાત્મક હી હૈ, કારણ કિ—ઇસ જ્ઞાનમેં શબ્દ કો રૂપાદિક સે વ્યાવૃત્તિ-રૂપમેં—પૃથક્કરૂપ—ગ્રહણ કિયા ગયા હૈ, નહીં તો “યહ શબ્દ નહીં હૈ” ઇસ પ્રકાર કા નિશ્ચય શબ્દમેં કૈસે કિયા જા સકતા હૈ । રૂપાદિકોંસે ભિન્નતા જબ તક શબ્દમેં નહીં જાની જાવેગી જબ તક યહ કૈસે બોધ હો સકેગા કિ—“યહ અશબ્દ નહીં હૈ—શબ્દ હૈ” ઇસ પ્રકાર કી ભિન્નતાકા ઉસમેં બોધ હોને સે શબ્દ કા બોધ હોતા હૈ, તબ યહ જ્ઞાન સામાન્યપ્રતિભાસ વાલા ન હોકર વિશેષ પ્રતિભાસ વાલા હી માના ગયા હૈ । સામાન્યપ્રતિ-ભાસ વાલે જ્ઞાનમેં પર કી વ્યાવૃત્તિ પૂર્વક અપને વિષયકા નિશ્ચય નહીં હોતા હૈ, વહાં તો સામાન્યરૂપ સે હી બોધ રહા કરતા હૈ, અતઃ અશબ્દ વ્યાવૃત્તિ પૂર્વક હુઆ યહ શબ્દ કા નિશ્ચય અવાયજ્ઞાન હૈ એસા માન લેના ચાહિયે—અવગ્રહરૂપ નહીં માનના ચાહિયે ।

ઉત્તર—“આ શબ્દ છે” એવું જ્ઞાન પણ વિશેષ ગ્રાહક માની શકાય. કારણ કે “આ શબ્દ છે—અશબ્દ નથી. એટલે કે રૂપાદિક નથી” એવું જ્ઞાન વિશેષના પ્રતિભાસ સ્વરૂપ હોવાથી વિશેષ પ્રતિભાસાત્મક જ છે, કારણ કે—આ જ્ઞાનમાં—શબ્દને રૂપાદિકથી વ્યાવૃત્તિરૂપે પૃથક્કરૂપે—ગ્રહણ કરાયેલ છે, નહીં તો “આ અશબ્દ નથી” એ પ્રકારનો નિશ્ચય શબ્દમાં કેવી રીતે કરી શકાય છે. રૂપાદિકથી ન્યાં સુધી શબ્દમાં ભિન્નતા નહીં જાણવામાં આવે ત્યાં સુધી એવો બોધ કેવી રીતે થશે કે “આ અશબ્દ નથી” એ પ્રકારનો નિશ્ચય શબ્દમાં કેવી રીતે કરી શકાય છે. રૂપાદિકથી ન્યાં સુધી શબ્દમાં ભિન્નતા નહીં જાણવામાં આવે ત્યાં સુધી એવો બોધ કેવી રીતે થશે કે “આ અશબ્દ નથી, શબ્દ છે આ પ્રકારની ભિન્નતાનો તેમાં બોધ થવાથી શબ્દનો બોધ થાય છે, ત્યારે જ આ જ્ઞાન સામાન્ય પ્રતિભાસવાળું ન ગણતા વિશેષ પ્રતિભાસવાળું જ ગણાયું છે સામાન્ય પ્રતિભાસવાળાં જ્ઞાનમાં પરની વ્યાવૃત્તિ પૂર્વક પોતાના વિષયનો નિશ્ચય થતો નથી, ત્યાં તો સામાન્યરૂપે જ બોધરહ્યાકરે છે તેથી અશબ્દ વ્યાવૃત્તિ પૂર્વક થયેલ આ શબ્દનો નિશ્ચય અવાયજ્ઞાનરૂપ છે, એવું માની લેવું જોઈએ—અવગ્રહરૂપ ન માનવું જોઈએ.

ननु स्तोकविशेषग्राहकं ज्ञानमवग्रहोऽस्तु, बृहद्विशेषग्राहकं ज्ञानं तु अवायः इति, एवं सति शब्दमात्ररूपस्य विशेषस्य ग्राहकतया 'शब्दोऽयम्'—मिति ज्ञानमग्रहः, 'शाब्दोऽयंशब्दः' इत्यादिविशेषणविशिष्टं यद् ज्ञानं तदवायः, बृहद्विशेषावबोधकत्वात् ? इति चेत्,

उच्यते—'यत् यत् स्तोकं तत्तन्नावायः' इति स्वीकारे भवन्मतेऽवायाभावप्रसङ्गः, उत्तरोत्तरार्थविशेषग्रहणापेक्षया पूर्वपूर्वार्थविशेषावबोधस्य स्तोकत्वात् ।

प्रश्न—थोडे से विशेषको ग्रहण करनेवाला जो ज्ञान होगा वह अवग्रह मान लिया जावेगा, तथा अधिक विशेषको ग्रहण करने वाला जो ज्ञान होगा वह अवाय मान लिया जावेगा । इस तरह अवग्रह और अवाय का स्वरूप निर्धारण करलेने पर अब इस बात के समझनेमें देर नहीं लगेगी कि—“शब्दोऽयम्” यह ज्ञान अवग्रह और 'यह शंख का शब्द है' ऐसा ज्ञान अवाय होगा, कारण कि अवग्रहमें जो शब्द विषय हुआ है वह स्तोक विशेष को लेकर हुआ है । शब्द मात्र ही वहां अवग्रह का विषय है । जब 'यह शंख का शब्द है' ऐसा विशेषणविशिष्ट शब्द विषय होगा तो अधिक विशेष को विषय करनेवाला होने से यह ज्ञान अवाय मान लिया जावेगा ।

उत्तर—'जो जो थोड़े विशेष को ग्रहण करने वाला होगा वह अवाय नहीं होगा' इस प्रकार के मन्तव्यमें अवाय का अभावप्रसक्त-होगा, कारण कि—उत्तरोत्तर अर्थविशेष ग्रहण होने की अपेक्षा पूर्व पूर्वका अर्थविशेषका बोध सब ही स्तोक होने से अवग्रह रूप ही कहा जावेगा ।

प्रश्न—थोड़ासरभावविशेषनेग्रहणकरनाइं जे ज्ञानइशे ते अवग्रहभानी देवाशे तथा अधिकविशेषनेग्रहणकरनार जे ज्ञानइशे, तेने अवाय, भानी देवाशे. आ प्रमाणे अवग्रह अने अवायनुं स्वरूप नक्की कया पछी जे वातने समजवामा वार नही लागे के “शब्दोऽयम्” जे ज्ञान अवग्रह अने “आ शंखनो शब्द छे” जेवुं ज्ञान अवाय इशे, कारण के अवग्रहमां जे शब्द विषय थयो छे ते सूक्ष्म विशेषने दीधे थयो छे. शब्द मात्र जे त्यां अवग्रहने विषय छे. ज्यारे “आ शंखनो शब्द छे” जेवो विशेषणविशिष्टशब्द विषय थशे तो अधिकविषयने विषयकरनारहोवाथी जे ज्ञान अवाय भानी देवाशे.

उत्तर—“जे जे थोड़ा विषयने ग्रहण करनार इशे ते अवाय नही होय” आ प्रकारनां मन्तव्यमां अवायनो अभाव प्रसक्त इशे, कारण के उत्तरोत्तर अर्थविशेष ग्रहणथवानी अपेक्षाजे पूर्वपूर्वना अर्थविशेषनो बोध थयुं जे सूक्ष्म होवाथी अवग्रहइय जे उडेवाशे.

તથાહિ-શાહ્લશબ્દસ્ય યે ઉત્તરોત્તરભેદાઃ મન્દ્રમધુરત્યાદયઃ, તરુણમધ્યમવૃદ્ધસ્ત્રીપુરુષ-  
જન્યત્વાદયશ્ચ, તદપેક્ષાયાં સત્યામિદમપિ-‘શાહ્લોઽયં-શબ્દઃ’ ઇત્યાદિ જ્ઞાનં સ્તોક-  
વિશેષગ્રાહકમેવ-ઇતિ નાવાયઃ સ્યાત્ । એવમુત્તરોત્તરવિશેષગ્રાહિણામપિ જ્ઞાનાનાં તદુ-  
ત્તરોત્તરભેદાપેક્ષયા સ્તોકત્વાદવાયાભાવ એવ સ્યાદિતિ । તસ્માત્ ‘શબ્દોઽય’-મિતિ  
નિશ્ચયોઽવાય એવ મન્તવ્યઃ । તદનન્તરં તુ ‘શબ્દોઽયં કિં શાહ્લઃ, શાહ્લો વા’ ઇત્યાદિ-  
શબ્દવિશેષવિષયા પુનરીહા પ્રવર્તિષ્યતે । ‘શાહ્લ એવાયં શબ્દઃ’ ઇત્યાદિશબ્દ-

જવ એસા જ્ઞાન હોગા કિ-‘યહ શબ્દ શંખ કા હૈ’ તો યહ અવાય  
હસલિયે નહીં હો સકેગા કિ હસમેં ઉત્તરોત્તર મન્દ્રતા મધુરતા આદિ  
કી, તથા તરુણ મધ્યમ, વૃદ્ધ, સ્ત્રી આદિ કે દ્વારા બોલે ગયે આદિકી,  
અપેક્ષા રહેગી, અતઃ યહ સ્તોક વિશેષ કા ગ્રાહક માના જાવેગા, હસ-  
લિયે ‘જો જ્ઞાન સ્તોકવિશેષ કા ગ્રાહક હોગા વહ અવગ્રહ એવં જો વૃદ્ધ-  
વિશેષકાગ્રાહક હોગા વહ અવાય હૈ’ એસા નિયમ બનના કિસી પ્રકાર  
સે ભી ઉચિત નહીં માના જા સકતા । હસ તરહ કી એકાન્તમાન્યતામેં  
ઉત્તરોત્તર વિશેષગ્રાહી જિતને ભી જ્ઞાન હોંગે વે સબ ઉત્તરોત્તર ભેદોંકી  
અપેક્ષા સ્તોકવિષયવાલે રહેંગે, હસ તરહ અવાય કા સર્વથા અભાવ હી  
હોગા, અતઃ અવાય કા લોપ ન હો હસ તરહ “યહ શબ્દ હૈ” હસ જ્ઞાન  
કો અવાય માનના હી ઉચિત હૈ । હસકે બાદ-‘યહ શબ્દ શંખ કા હૈ યા  
શ્રૃંગ કા હૈ’ ઇત્યાદિ આકાંક્ષા કા જો કિ શબ્દ વિશેષ કો ઈહિત કરતી  
હૈં ઈહાજ્ઞાનરૂપસે પ્રવૃત્તિ હોગી । હસ પ્રવૃત્તિમેં જવ એસા નિર્ણય હો  
જાવેગા કિ “યહ શબ્દ શંખ કા હી હૈ” તો યહ શબ્દ વિશેષ કો વિષય

ન્યારે એવું જ્ઞાન થશે કે-“આ શબ્દશંખનો છે” ત્યારે તે અવાય તે  
કારણે નહીં હોઈશકે કે તેમાં ઉત્તરોત્તર ગંભિરતા, મધુરતા, આદિની, તથા  
તરુણ, મધ્યમ, વૃદ્ધ, સ્ત્રી, આદિ દ્વારા બોલાયા આદિની અપેક્ષા રહેશે, તેથી  
તે સ્તોકવિશેષનું ગ્રાહકમનાશે, તે કારણે “જે જ્ઞાન સ્તોકવિશેષનું ગ્રાહક  
થશે તે અવગ્રહ, અને જે બૃહદ્ વિશેષનું ગ્રાહક થશે તે અવાય છે.” એવો  
નિયમ કરવો તે કોઈ પણ રીતે ઉચિતમાનીશકાયનહીં. આ પ્રકારની એકાન્ત  
માન્યતામાં ઉત્તરોત્તર વિશેષગ્રાહી જેટલાંપણજ્ઞાનથશે તે બધાં ઉત્તરોત્તર  
લેદોની અપેક્ષાએ સૂક્ષ્મવિષયવાળાં રહેશે. આ રીતે અવાયનો સર્વથા અભાવ  
જ હશે; તેથી અવાયનો લોપ ન થાય એરીતે “આ શબ્દ છે” એ જ્ઞાનને  
અવાય માનવું એજ ઉચિત છે. ત્યારબાદ “આ શબ્દ શંખનો છે કે શ્રૃંગનો  
છે” ઇત્યાદિ આકાંક્ષાની કે જે શબ્દવિશેષને ઈહિત કરે છે. ઈહાજ્ઞાન રૂપે  
પ્રવૃત્તિ થશે. આ પ્રવૃત્તિમાં ન્યારે એવો નિર્ણય થઈ જશે કે “આ શબ્દ

વિશેષવિષયોઽવાયશ્ચ યો ભવિષ્યતિ, તદપેક્ષયા ‘શબ્દ એવાયમ્’ ઇતિ નિશ્ચયઃ પ્રથમોઽવાયોઽપિ સન્ ઉપચારાદર્થાવગ્રહ ઉચ્યતે । યદનન્તરમીહાઽવાયૌ પ્રવર્તેતે યશ્ચ સામાન્યં ગૃહ્ણતિ, સોઽર્થાવગ્રહઃ । યથા—આદ્યો નૈશ્ચયિકઃ । ‘શબ્દ એવાય’ મિત્યાદ્યવાયાનન્તરં પુનરીદાઽવાયૌ ચ પ્રવર્તેતે । ‘શાહ્લોઽય’—મિત્યાદિભાવિવિશેષાપેક્ષયા શબ્દઃ સામાન્યમ્, તસ્માદર્થાવગ્રહો ભાવિવિશેષાપેક્ષયા સામાન્યં ગૃહ્ણતીત્યુક્તમ્ ।

તતશ્ચ સામાન્યેન શબ્દનિશ્ચયરૂપાત્ પ્રથમાવાયાદનન્તરં ‘કિમયં શબ્દઃ શાહ્લઃ, શાહ્લો વા’ ઇત્યાદિરૂપા ઈહા પ્રવર્તેતે । તતઃ ‘શાહ્લ એવાયમ્’ ઇત્યાદિરૂપેણ શબ્દ-વિશેષસ્ય નિશ્ચયરૂપોઽવાયો ભવતિ । અયમપિ ચ પુનર્વિશેષાકાઙ્ક્ષાવતઃ પ્રમાતુર્ભાવિનીમીહામવાયં ચાપેક્ષ્ય ભાવિવિશેષાપેક્ષયા સામાન્યાલમ્બનત્વાચ્ચ અર્થાવગ્રહ ઇત્યુપચર્યતે ।

કરને વાલા જ્ઞાન અવાય હો જાવેગા । અબ્દેસ અવાય જ્ઞાન કી અપેક્ષા સે પહિલે જો એસા અવાય જ્ઞાન હુઆ હૈ કિ “યહ શબ્દ હી હૈ” વહ ઉપચાર સે અર્થાવગ્રહ કહા જાવેગા । જિસ કે વાદ ઈહા ઓર અવાય જ્ઞાન પ્રવૃત્ત હોતે હૈ, તથા જો સામાન્ય કો ગ્રહણ કરતા હૈ વહ અર્થાવગ્રહ હૈ, જૈસે આદિ કા નૈશ્ચયિક અર્થાવગ્રહ । “યહ શબ્દ હી હૈ” ઇત્યાદિ અવાયજ્ઞાન કે અનન્તર પુનઃ ઈહા ઓર અવાય પ્રવૃત્ત હોતે હૈ ઇસલિયે “યહ શબ્દ હી હૈ” યહ અવાયજ્ઞાન હોતે હુએ ખી ઉપચારસે અવગ્રહરૂપ માના જાવેગા, કારણ કિ ઇસમેં “યહ શબ્દ શંભકા હૈ” ઇત્યાદિરૂપસે ભાવી વિશેષોં કી આકાંક્ષા રહતી હૈ, અતઃ ઇસ અપેક્ષા સે શબ્દ, સામાન્ય બન જાતા હૈ, ઇસલિયે અર્થાવગ્રહ ભાવીવિશેષ કી અપેક્ષા સામાન્ય કો ગ્રહણ કરતા હૈ, એસા કહા હૈ ।

શંખનો જ છે” ત્યારે એ શબ્દ વિશેષને વિષયકરનાર જ્ઞાન અવાય થઈ જશે. હવે અવાયજ્ઞાનની અપેક્ષાએ પહેલાં જે એવું અવાયજ્ઞાન થયું છે કે “આ શબ્દ જ છે” તે ઉપચારથી અર્થાવગ્રહ કહેવાશે, જેના પછી ઈહા અને અવાય જ્ઞાન પ્રવૃત્ત થાય છે, તથા જે સામાન્યને ગ્રહણ કરે છે તે અર્થાવગ્રહ છે, જેમકે આદિનો નૈશ્ચયિક અર્થાવગ્રહ. “આ શબ્દ જ છે” ઇત્યાદિ અવાયજ્ઞાન બાદ ફરીથી ઈહા અને અવાય પ્રવૃત્ત થાય છે તેથી “આ શબ્દ જ છે” આ અવાયજ્ઞાન હોવાં છતાં પણ ઉપચારથી અવગ્રહરૂપ મનાશે કારણ કે તેમાં “આ શબ્દ શંખનો છે” ઇત્યાદિ રૂપે ભાવીવિશેષોની આકાંક્ષારહે છે. તેથી આ અપેક્ષાએ શબ્દ, સામાન્ય બની જાય છે, તે કારણે અર્થાવગ્રહ ભાવીવિશેષની અપેક્ષાએ સામાન્યને ગ્રહણ કરે છે. એમ કહ્યું છે.



इयं च सामान्यविशेषापेक्षा तावत् कर्तव्या, यावदन्त्यो वस्तुनो विशेषः । यस्माच्च विशेषात् परतोऽन्ये विशेषा न संभवन्ति, सोऽन्त्यः । अथवा—संभवत्स्वपि

फिर-सामान्यतः शब्द का निश्चय करने वाले प्रथम अवायज्ञान के बाद “ किमयं शब्दः शङ्खः शार्ङ्गोवा-क्या यह शब्द शंख का है अथवा शृङ्ग का है ” इत्यादि रूप से ईहा ज्ञानकी प्रवृत्ति होती हैं। इसके बाद “ शंख का ही यह शब्द है ” इत्यादि रूप से शब्दविशेष का निश्चयरूप अवाय ज्ञान होता है। इस तरह का यह अवायज्ञान भी उपचार से अर्थावग्रह रूप तब माना जाता है जब कि प्रमाता को उसमें और भी विशेष जानने की आकांक्षा होती है। इस आकांक्षामें अवाय के विषयभूत बने हुए उस शंख के शब्दमें प्रमाता को ईहा और अवाय पुनः होते हैं। इस तरह “ शंख का ही यह शब्द है ” यह अवायज्ञान होने पर भी उसमें भावि विशेष को जानने की आकांक्षा की अपेक्षा लेकर होनेवाली ईहा और अवायज्ञान की अपेक्षा से प्रमाता का वह अवायज्ञान सामान्य को विषय करनेवाला मान लिया जाता है, अतः उह उपचार से अर्थावग्रह कह दिया जाता है ।

यह सामान्यविशेष की अपेक्षा तबतक करनी चाहिये जबतक वस्तु का अन्त्य विशेष निर्णीत न हुआ हो । जिस विशेष को आगे फिर अन्यविशेष की संभावना नहीं होती हो वह विशेष अन्त्य है । अथवा-

તથા—સામાન્યરીતે શબ્દનો નિશ્ચયકરનારા પ્રથમ અવયજ્ઞાનના પછી “ કિમયં શબ્દઃ શંખઃ શાર્દંગોવા-શુ ” આ શબ્દ શંખનોછે કે શ્રંગનો છે ” ઇત્યાદિ રૂપે ઇહાજ્ઞાનની પ્રવૃત્તિથાયછે. ત્યારમાદ “ શંખનો જ આશબ્દછે ” ઇત્યાદિ રૂપે શબ્દવિશેષનાનિશ્ચયરૂપ અવાયજ્ઞાનથાયછે. આ પ્રકારનું આ અવાયજ્ઞાન-પણ ઉપચારથી અર્થાવગ્રહરૂપ ત્યારેમનાયછે કે ન્યારે પ્રમાતાને તેમાં હજી પણ વિશેષ જાણવાની આકાંક્ષા થાય છે. આ આકાંક્ષામાં અવાયના વિષયભૂત બનેલ તે શંખના શબ્દમાં પ્રમાતાને ઇહા અને અવાય ફરીથી થાય છે. આ રીતે “ શંખનોજ આ શબ્દ છે ” આ અવાયજ્ઞાન થવાં છતાં પણ તેમાં ભાવિવિશેષને જાણવાની આકાંક્ષાની અપેક્ષાએ થનારી ઇહા અને અવાયજ્ઞાનની અપેક્ષાએ પ્રમાતાનું તે અવાયજ્ઞાન સામાન્યને વિષય કરનાર માનવામાં આવે છે, તેથી તે ઉપચારથી અર્થાવગ્રહ કહી દેવાય છે.

આ સામાન્યવિશેષની અપેક્ષા ત્યાં સુધી કરવીજોઈએકે, ન્યાંસુધી વસ્તુનું અન્ત્યવિશેષ નિશ્ચિત ન થયું હોય. જે વિશેષથી આગળ ફરીથી અન્ય-વિશેષની સંભાવના ન રહેતી હોય તે વિશેષ અન્ત્ય છે, અથવા અન્યવિશેષોના

અન્યવિશેષેષુ યતો વિશેષાત્ પરતઃ પ્રમાતુસ્તજ્ઞિજ્ઞાસા નિવર્તતે સોઽન્યઃ । અન્ય-  
વિશેષાપેક્ષયા ચ વ્યાવહારિકાર્થાવગ્રહેહાઽવાયાર્થં સામાન્યવિશેષાઽપેક્ષા કર્તવ્યા ।  
તસ્માદુત્તરોત્તરવિશેષાકાઙ્ક્ષા યાવત્ પ્રવર્તતે, તાવત્ સર્વત્ર યો યોઽવાયઃ સ સ  
ઉપચારતોઽર્થાવગ્રહઃ । યદા તુ પ્રમાતુસ્તજ્ઞિજ્ઞાસા નિવર્તતે, તદા તદ્વિશેષાર્થનિશ્ચય-  
રૂપોઽવાયો નાવગ્રહ इति વિભાવનીયમ્ ॥ ૪ ॥

‘મેધા’ इति । શબ્દોઽયમિત્યાકારકં પ્રથમં વિશેષસામાન્યાર્થાવગ્રહં વિજ્ઞાય,  
ઉત્તરઃ સર્વોઽપિ વિશેષસામાન્યાર્થાવગ્રહો ‘મેધા’ इत्युच्यતે । યથા—‘શાદ્ધોઽયં

અન્ય વિશેષોં કે રહને પર ખી જિસ વિશેષ સે આગે પ્રમાતા કો ફિર  
વિશેષવિષયક જિજ્ઞાસા નહીં હોતી હો વહ અન્ય હૈ । અન્યવિશેષ  
અપેક્ષા સે હી વ્યાવહારિક અર્થાવગ્રહ ર્હા ઓર અવાય કે લિયે સામાન્ય  
વિશેષ કી અપેક્ષા કરની પડતી હૈ હસલિયે જવતક અપને વિષય મેં  
ઉત્તરોત્તર વિશેષ કી આકાંક્ષા ચાલૂ રહતી હૈ તવતક સર્વત્ર જો જો  
અવાયજ્ઞાન હોતા હૈ વહ ઉપચાર સે અર્થાવગ્રહ માન લિયા જાતા હૈ ।  
જૈસે હી પ્રમાતા કી અપને વિષય મેં વિશેષ કો જાનને કી આકાંક્ષા શાંત  
હો જાતી હૈ કિ વૈસે હી વહ અવાય અપને વિષય કો નિશ્ચય કરને ચાલા  
અવાય હી રહતા હૈ, અર્થાવગ્રહ નહીં હોતા હૈ ॥ ૪ ॥

“યહ શબ્દ હૈ” इत्याकारक जो प्रथम सामान्यविशेषरूप अर्था-  
वग्रह होता है उसको छोड़कर इसके बाद के जितने भी सामान्यविशेष-  
रूप अर्थावग्रह हैं वे सब मेधा शब्द वाच्य माने गये हैं । अर्थात्—“यह

રહેવા છતાં પણ જે વિશેષની આગળ પ્રમાતાને વિશેષવિષયક જિજ્ઞાસા થતીનથી  
તે અન્ય છે અન્યવિશેષની અપેક્ષાએ જે વ્યાવહારિક અર્થાવગ્રહ ઇહા અને  
અવાયને માટે સામાન્ય વિશેષની અપેક્ષાકરવીપડેછે. તે કારણે ન્યાં સુધી પોતાના-  
વિષયમાં ઉત્તરોત્તરવિશેષની આકાંક્ષા ચાલુરહેછે ત્યાંસુધી સર્વત્ર જે જે અવાય-  
જ્ઞાન થાય છે તે ઉપચારથી અર્થાવગ્રહ માનીલેવાયછે. જેવી પ્રમાતાની પોતાના  
વિષયમાં વિશેષ જાણવાની આકાંક્ષા શાન્તપડીનાય છે, એવું જે તે અવાય  
પોતાનાવિષયનેનિશ્ચિતકરનારું અવાયજરહેછે. અર્થાવગ્રહ થતો નથી. ॥ ૪ ॥

“આ શબ્દ છે” इत्याकारक જે પ્રથમ સામાન્યવિશેષરૂપઅર્થાવગ્રહ થાય છે,  
તેને છોડી દધને ત્યારબાદ જેટલાં સામાન્ય વિશેષરૂપ અર્થાવગ્રહ છે. એ મધા

શબ્દઃ ' ઇત્યારમ્યાન્ત્યવિશેષાત્ પ્રાક્ યો યો વિશેષસામાન્યાર્થાવગ્રહઃ સ સર્વોઽપિ ' મેધા ' ઇતિ વિશેષઃ । તથા ચ શ્રવણતાઽવલમ્બનતા મેધા ચેત્યેતત્ ત્રયમર્થાવગ્રહ-  
રૂપં बोध्यम् । ' અવગ્રહણતા, ઉપધારણતા ચેત્યેતદ્ દ્વયં વ્યજ્ઞનાવગ્રહરૂપમિતિ પ્રાગુ-  
ક્તમ્ ॥ ૫ ॥ અવગ્રહો વર્ણિત ઇત્યાહ—' સે તં ' ઇતિ । સ એષોઽવગ્રહ ઇતિ ॥ મૂ० ૩૦ ॥

મૂલમ્—સે કિં તં ઈહા ? । ઈહા છવ્વિહા પળ્લતા, તં જહા-  
સોઁંદિય-ઈહા । ચક્કિંલ્લદિય-ઈહા । ઘાણિંદિય-ઈહા । જિલ્લિંભ-  
દિય-ઈહા । ફાસિંદિય-ઈહા । નોઁંદિય-ઈહા । તીસે ણં ઇમે  
એગઢિયા નાનાઘોસા નાનાવંજણા પંચનામધિજ્જા ભવંતિ, તં  
જહા—આભોગણયા, મગ્ગણયા, ગવેસણયા, ચિંતા, વીમંસા ।  
સે તં ઈહા ॥ સૂ० ૩૧ ॥

છાયા—અથ કા સા ઈહા ? , ઈહા ષઢ્વિધા પ્રજ્ઞતા, તદ્ યથા—શ્રોત્રેન્દ્રિયેહા ।  
ચક્ષુરિન્દ્રિયેહા । ઘ્રાણેન્દ્રિયેહા, જિહ્વેન્દ્રિયેહા, સ્પર્શેન્દ્રિયેહા , નોઁન્દ્રિયેહા । તસ્યા  
ઈમાનિ—એકાર્થકાનિ નાનાઘોષાણિ નાનાવ્યજ્ઞનાનિ પશ્ચ નામધેયાનિ ભવન્તિ ।  
તદ્ યથા—આભોગનતા?, માર્ગનતા?, ગવેષણતા?, ચિન્તા?, વિમર્શઃ (મીમાંસા)।  
સા એષા ઈહા ॥ મૂ० ૩૧ ॥

ટીકા—શિષ્યઃ પૃચ્છતિ—' સે કિં તં ઈહા ? ઇત્યાદિ । અથ કા સા ઈહા ?  
ઉત્તરમાહ—' ઈહા છવ્વિહા પળ્લતા ' ઇત્યાદિ । વસ્તુનિર્ણયાર્થં વિચારણા ઈહા,

શંખ કા શબ્દ હૈ ” હસ પ્રકાર કે બોધ સે લગાકર અન્ત્યવિશેષ કે પહિલે  
પહિલે કા જો સામાન્યવિશેષરૂપ અર્થાવગ્રહ હૈ વહ સબ મેધા હૈ ॥ ૫ ॥  
હસ તરહ શ્રવણતા અવલમ્બનતા ઔર મેધા ચે તીન અર્થાવગ્રહરૂપ, તથા  
અવગ્રહતા, ઉપધારણતા ચે દો વ્યંજનાવગ્રહરૂપ હોતે હૈં એસા જાનના  
ચાહિયે ॥ હસ પ્રકાર યહ અવગ્રહ કા વર્ણન હૈ ॥ સૂ० ॥ ૩૦ ॥

મેધા શબ્દવાચ્યમનાયાછે. એટલે કે “ આ શંખનોશબ્દ છે ” આ પ્રકારના બોધથી  
લઈને અન્ત્યવિશેષનીઆગળ આગળનો બે સામાન્યવિશેષરૂપ અર્થાવગ્રહ છે તે  
સૌ મેધા છે. ॥૫॥ આ પ્રકારે શ્રવણતા અવલંબનતા અને મેધા એત્રણ અર્થાવ-  
ગ્રહરૂપ, તથા અવગ્રહણતા, ઉપધારણતા, એ બે વ્યંજનાવગ્રહરૂપ હોય છે એમ  
બોધાયું બોધ્યું. આ પ્રકારે આ અવગ્રહનું વર્ણન છે. ॥ સૂ.૩૦ ॥

સા ષડ્વિધા પ્રજ્ઞા । તદ્ યથા-શ્રોત્રેન્દ્રિયેહા-ઇત્યાદિ । શ્રોત્રેન્દ્રિયેણ ઈહા-શ્રોત્રેન્દ્રિયાર્થાવગ્રહમધિકૃત્ય યા પ્રવૃત્તા ઈહા સા શ્રોત્રેન્દ્રિયેહા, इत्यर्थः । एवं शेषाश्चक्षु-  
રિન્દ્રિયેહાદયોऽपि साधनीयाः । ‘ तीसे णं० ’ इत्यादि । तस्याः=ईहायाः । अन्यत्  
सुगमम् । नवरं सामान्यापेक्षया एकार्थकानि । विशेषचिन्तायां तु भिन्नार्थकानि ।

‘ સે કિં તં ઈહા ? ’ ઇત્યાદિ૦ ।

શિષ્ય પૂછતા હૈ કિ હે ભદંત ! પૂર્વનિર્દિષ્ટ ઈહા કા કયા સ્વરૂપ હૈ ?  
ઉત્તર-ઈહા છહ પ્રકાર કી બતલાઈ ગઈ હૈ । વહ ઇસ પ્રકાર હૈ-શ્રોત્ર  
ઇન્દ્રિય ઈહા ૧, ચક્ષુ ઇન્દ્રિય ઈહા, ઘ્રાણ ઇન્દ્રિય ઈહા ૩, જિહ્વા ઇન્દ્રિય  
ઈહા ૪, સ્પર્શઇન્દ્રિય ઈહા ૫, નો ઇન્દ્રિય ઈહા ૬ । ઉસકે યે નાના ઘોષ-  
વાલે તથા નાના વ્યંજનાવાલે એકાર્થક પાંચ નામ હૈ । જૈસે-આભોગનતા,  
માર્ગણતા ૨, ગવેષણતા ૩, ચિન્તા ૪, ઓર વિમર્શ ૫, ઇસ પ્રકાર યે  
પાંચ ઈહા કે નામ હૈ । વસ્તુ કે નિર્ણય કે લિયે જો વિચારણા હોતી હૈ  
‘ ઉસકા નામ ઈહા હૈ । શ્રોત્રેન્દ્રિય સે જન્ય અર્થાવગ્રહ કે વાદ જો વિચારણા  
ચલતી હૈ ઉસકા નામ શ્રોત્રેન્દ્રિય ઈહા હૈ । ઇસી તરહ અવશિષ્ટ ઇન્દ્રિયોં  
કી ઈહા બી ઉન ૨ ઇન્દ્રિયોં કે અર્થાવગ્રહ કે વાદ હુઈ વિચારણા સ્વરૂપ  
જાનની ચાહિયે । ઇસ ઈહા કે જો પાંચ નામ એકાર્થક બતલાયે ગયે હૈ  
વે સામાન્ય કી અપેક્ષા હી બતલાયે ગયે જાનના ચાહિયે, વિશેષ કી  
અપેક્ષા નહીં, કારણ-વિશેષ કી અપેક્ષા યે સબ ભિન્ન ૨ અર્થવાલે હો

“ સે કિં તં ઈહા ? ” ઇત્યાદિ—

શિષ્યપૂછેછે-હે ભદન્ત ! પૂર્વનિર્દિષ્ટ “ઈહા”નું શું સ્વરૂપ છે ?

ઉત્તર—ઈહા ના છ પ્રકારબતાવ્યાછે. તે આપ્રમાણે છે-(૧) શ્રોત્રેન્દ્રિય  
ઈહા, (૨) ચક્ષુઈન્દ્રિય ઈહા, (૩) ઘ્રાણેન્દ્રિય ઈહા, (૪) જિહ્વાઈન્દ્રિય ઈહા, (૫)  
સ્પર્શેન્દ્રિય ઈહા, અને (૬) નો ઈન્દ્રિય ઈહા. તેના વિવધઘોષવાળા તથા  
વિવિધવ્યંજનવાળા એકાર્થક પાંચનામછે. જેવાં કે (૧) આભોગનતા, (૨)  
માર્ગણતા, (૩) ગવેષણતા, (૪) ચિન્તા, અને (૫) વિમર્શ. આ પ્રકારે ઈહાના  
પાંચ નામ છે. વસ્તુનાનિર્ણયમાટે જે વિચારણાથાયછે તેનું નામ ઈહાછે.

શ્રોત્રેન્દ્રિયજનિતઅર્થાવગ્રહબાદ જે વિચારણાથાય છે તેનું નામ શ્રોત્રે-  
ન્દ્રિય ઈહાછે. એજરીતે બાકીનીઈન્દ્રિયોની ઈહા પણ તે તે ઈન્દ્રિયોના  
અર્થાવગ્રહ બાદ થયેલવિચારણાસ્વરૂપસમજાવેલી. આ ઈહાના જે પાંચ  
એકાર્થક નામ બતાવ્યાછે, તે સામાન્યનીઅપેક્ષાએ જ બતાવેલમાનવાનેઈએ,  
વિશેષની અપેક્ષાએનહીં, કારણ કે વિશેષનીઅપેક્ષાએ એ બધાં ભિન્નભિન્ન

તત્ર-આભોગનતા-આભોગ્યતે=આલોચ્યતેડનેનેતિ આભોગનમ્ - અર્થાવગ્રહસમય-સમનન્તરમેવ સદ્ભૂતાર્થવિશેષાભિમુખમાલોચનં, તદેવાભોગનતા ૧। તથા-મૃગ્યતે=અન્વિપ્યતેડનેન પરિણામકરણેનેતિ માર્ગણં-સદ્ભૂતાડર્થવિશેષાભિમુખમેવ તદ્ધર્મન્વ-યવ્યતિરેકધર્માન્વેષણમ્, તદેવ માર્ગતાર ૨। તથા-ગવેષ્યતે=અન્વિપ્યતેડનેનેતિ ગવેષણં-તત ઝર્ધ્વં સદ્ભૂતાર્થવિશેષાભિમુખમેવ વ્યતિરેકધર્મપરિહારેણાન્વયધર્માડ-ધ્યાસેન આલોચનમ્, તદેવ ગવેષણતા ૩। તથા-તતો મુહુર્મહુઃ ક્ષયોપશમવિશેષતઃ સ્વધર્માનુગતસદ્ભૂતાર્થવિશેષચિન્તનં ચિન્તા ૪। તત ઝર્ધ્વં ક્ષયોપશમવિશેષાત્ સ્પષ્ટતરં સદ્ભૂતાર્થવિશેષાડભિમુખમેવ વ્યતિરેકધર્મપરિત્યાગેન અન્વયધર્માપરિ-ત્યાગેન ચાન્વયધર્મવિમર્શનં વિમર્શઃ ૧। સા ણ્ણા ઈહા વર્ણિતા ॥ સૂ. ૩૧ ॥

જાતે હૈં । અર્થાવગ્રહ કે સમય કે સમનન્તર હી સદ્ભૂત અર્થવિશેષ કી તરફ ઝુકતા હુઆ જો વિચાર હૈં ઉસકા નામ આભોગનતા હૈં ૧ । ઇસ આભોગનતા કે બાદ જો ઉસ સદ્ભૂત અર્થવિશેષ કો લેકર વિચારણા ચલતી હૈં કિ જિસમેં ઉસ અર્થ કે સાથ અન્વય વ્યતિરેક ધર્મોં કા અન્વેષણ હોતા હૈં વહ માર્ગણતા હૈં ૨ । ઈસકે બાદ ઉસ અદ્ભૂત અર્થ-વિશેષ કી વ્યતિરેક ધર્મ કે પરિહાર સે ઇવં ઉસમેં અન્વયધર્મ કે અધ્યાસ સે જો ગવેષણા કી જાતી હૈં વહ ગવેષણતા હૈં ૩ । ઇસકે પશ્ચાત્ ક્ષયો-પશમ વિશેષ સે જો ઇસા વિચાર આતા હૈં કિ યહ સદ્ભૂત અર્થ અપને ધર્મ કે સાથ અનુગત હૈં, ઇસકા નામ ચિન્તા હૈં ૪ । ફિર જો ઇસા વિચાર હોના હૈં કિ ઇસ સદ્ભૂત અર્થ મેં યહ વ્યતિરેક ધર્મ નહીં હૈં કિન્તુ યહ અન્વયધર્મ હૈં અતઃ વ્યતિરેક ધર્મ કે પરિત્યાગ પૂર્વક જો યહ અન્વય ધર્મ કા વહાં વિચાર હોતા હૈં ઇસકા નામ વિમર્શ હૈં ।

અર્થવાળાથઈન્ય છે. (૧) અર્થાવગ્રહના સમયને સમનન્તર જ સદ્ભૂત અર્થ-વિશેષની તરફ ઢળતો જે વિચાર છે તેનુંનામ આભોગનતાછે. (૨) આ આભોગનતાબાદ તે સદ્ભૂતઅર્થવિશેષને લઈને જે વિચારણાથાય છે કે જેમાં તે અર્થની સાથે અન્વય વ્યતિરેક ધર્મોનું અન્વેષણથાયછે તેનું નામ માર્ગ-ણતા છે. (૩) ત્યારબાદ તે સદ્ભૂતઅર્થવિશેષનાવ્યતિરેક ધર્મોનાંપરિહારથી અને તેમાં અન્વયધર્મના અધ્યાસથી જે ગવેષણાકરાયછે તેનું નામ ગવેષ-ણતા છે (૪) ત્યારબાદ ક્ષયોપશમવિશેષથી જે એવોવિચારઆવેછે કે આ સદ્ભૂત અર્થ પોતાનાધર્મનીસાથે અનુગતછે, તેનુંનામ ચિન્તાછે. (૫) પછી જે એવોવિચારથાયછે કે આ સદ્ભૂતઅર્થમાં આ વ્યતિરેકધર્મનથી પણ આ અન્વયધર્મ છે; તેથી વ્યતિરેકધર્મના પરિત્યાગપૂર્વક જે આ અન્વ-યધર્મનો વિચારથાયછે તેનુંનામ વિમર્શ છે.

મૂલમ્-સે કિં તં અવાણ ? । અવાણ છવિવહે પળ્લન્તે, તં જહા-સોઈંદિય-અવાણ । ચર્વિંશદિય-અવાણ । ઘાણિંદિય-અવાણ । જિર્વિંમદિય-અવાણ । ફાસિંદિય-અવાણ । નોઈંદિય-અવાણ । । તસ્સ ણં ઇમે ઇગદ્ધિયા નાનાઘોસા નાનાવંજણા પંચ નામધિજ્ઞા ભવન્તિ, તં જહા-આઉટ્ટણયા ૧, પચ્ચાઉટ્ટણયા ૨, અવાણ ૩, બુદ્ધી ૪, વિણ્ણાણે ૫ । સેતં અવાણ ॥ સૂ. ૩૨ ॥

દૃષ્ટાન્ત દ્વારા ઇસ વિષય કો ઇસ પ્રકાર સમજના ચાહિયે-જવ એસા જ્ઞાન હોતા હૈ કિ ‘યહ કુછ હૈ’ તવ સ્વભાવતઃ યહ જિજ્ઞાસા હોતી હૈ કિ કયા યહ વક પંક્તિ હૈ અથવા પતાકા હૈ ? । પતાકા હોની ચાહિયે ઇસ વિચાર ધારા કા નામ હી આભોગનતા હૈ ? । ઇસકે વાદ જો એસા ચિત્તમેં વિચાર આતા હૈ કિ વહ હવા કે આને પર ઉપર કી ઓર ઉડતી હૈ, નહીં આને પર વૈઠ જાતી હૈ, અતઃ ઉપર ફડકના નીચે આના આદિ જો ઇસકે અન્વયરૂપ ધર્મ હૈં વે ઇસમેં પાચે જાતે હૈ, વક પંક્તિમેં યહ વાતે નહીં પાઈ જાતી હૈં, અતઃ યહ પતાકા હી હોનિ ચાહિયે, કયોં કિ ઇસમેં પતાકા કે ધર્મોં કા હી સંબંધ બૈઠતા હૈ વકપંક્તિ કે ધર્મોં કા નહીં । ઇસ તરહ માર્ગણતા, ગવેષણતા, ચિન્તા પવં વિમર્શ યે ર્હ્યા કે પ્રકાર સધ જાતે હૈં ॥ સૂ. ૩૧ ॥

દૃષ્ટાન્તદ્વારા આ વિષયને આરીતે સમજવીશકાય. જ્યારે એવુંજ ન થાયછે કે “આ કંઈકછે” ત્યારે સ્વાભાવિક રીતે જ એ જિજ્ઞાસાથાયછે કે “શું આ ખગલાનીહારછે અથવા પતાકા છે?” “પતાકાહોવીજોઈએ” આ વિચારધારાનુંનામજ આભોગનતાછે. ત્યારબાદ મનમાંએવો જે વિચાર આવેછે કે તે પવનઆવતા ઉપરનીતરફઉઠેછે, પવનન આવતા નીચીજ રહેછે, તેથી ઉપર ફરકવું નીચે આવવું આદિ જે તેના અન્વયરૂપ ધર્મ છે તે એમાં મળીઆવેછે, ખગલાનીહારમાં આવતા બનતીનથી, તેથી તે પતાકા જ હોવી જોઈએ, કારણ કે તેમાં પતાકાના ધર્મોનો સંબંધ જ બંધબેસતો થાય છે, ખગલાની હારનો નહીં. આ પ્રકારે માર્ગણતા, ગવેષણતા, ચિન્તા, અનેવિમર્શ એ ધહાના પ્રકારોનો નિશ્ચયથઈજાયછે. ॥ સૂ. ૩૧ ॥



छाया—अथ कः सोऽवायः ? । अवायः पञ्चविधः प्रज्ञप्तः । तद् यथा—श्रोत्रेन्द्रियावायः १ । चक्षुरिन्द्रियावायः २ । घ्राणेन्द्रियावायः ३ । जिह्वेन्द्रियावायः ४ । स्पर्शेन्द्रियावायः ५ । नोऽन्द्रियावायः ६ । तस्य खलु इमानि एकार्थकानि नानाघोषाणि । नानाव्यञ्जनानि, पञ्च नामधेयानि भवन्ति; तद् यथा—आवर्तनता १, प्रत्यावर्तनता २, अवायः ३, बुद्धिः ४, विज्ञानम् ५ । स एषोऽवायः ॥ भू० ३२ ॥

टीका—शिष्यः पृच्छति—‘से किं तं०’ इत्यादि । अथ कः सोऽवायः ? इति उत्तरमाह—‘अवाए छव्विहे पणत्ते०’ इत्यादि । अवायो निश्चयात्मकावबोधः । स पञ्चविधः प्रज्ञप्तः; तद् यथा—श्रोत्रेन्द्रियावाय—इत्यादि । श्रोत्रेन्द्रियेणावायः—श्रोत्रेन्द्रियावायः । श्रोत्रेन्द्रियेहामधिकृत्य यः प्रवृत्तोऽवायो—निश्चयः, स श्रोत्रेन्द्रियावाय इत्यर्थः । एवं चक्षुरिन्द्रियावायादयः साधनीयाः । तस्य=अवायस्य खलु इमानि एकार्थकानि नानाघोषाणि नानाव्यञ्जनानि पञ्च नामधेयानि भवन्ति । एतेषां व्याख्या प्राग्वत् । नवरं अवायसामान्यविवक्षया एकार्थकानि । तद्विशेषचिन्तायां तु नानार्थकानि । तत्र—आवर्तते—आ=मर्यादया वर्तते—ईहातो निवृत्त्या अवायभावं प्रति अभिमुखो वर्तते येन बोधपरिणामेन स आवर्तनः, स एवावर्तनता ॥ १ ॥

तथा—प्रत्यावर्तनता—आवर्तनं प्रति गतो योऽर्थविशेषेषु उत्तरोत्तरेषु विवक्षितावायप्रत्यासन्नतरो बोधविशेषः स प्रत्यावर्तनः, स एव प्रत्यावर्तनता ॥ २ ॥

‘से किं तं अवाए०’ इत्यादि ।

शिष्य पृच्छता है—पूर्वनिर्दिष्ट अवाय ज्ञान का क्या स्वरूप है ?

उत्तर—अवायज्ञान छह प्रकार का कहा गया है । वे प्रकार ये हैं—श्रोत्रइन्द्रिय से उत्पन्न हुआ अवाय, २ चक्षु इन्द्रिय से उत्पन्न हुआ अवाय २ घ्राणेन्द्रिय से उत्पन्न हुआ अवाय, ३ जिह्वा इन्द्रिय से उत्पन्न हुआ अवाय ४, स्पर्श इन्द्रिय से उत्पन्न हुआ अवाय ५ तथा नो इन्द्रिय से उत्पन्न हुआ अवाय ६ । उस अवाय के ये नाना घोषवाले तथा नाना व्यञ्जनवाले एकार्थक पांच नाम हैं ।

“से किं तं अवाए०” इत्यादि—

शिष्यपृच्छे—“पूर्वनिर्दिष्ट अवायज्ञानं शुं स्वरूपं ?

उत्तर—अवायज्ञान नीचेप्रमाणे छ प्रकारनुं कहेलछे—( १ ) श्रोत्रेन्द्रियथी पेदाथयेल अवाय ( २ ), चक्षुइन्द्रियथी पेदाथयेल अवाय, घ्राणेन्द्रियथी पेदाथयेल अवाय ( ४ ), जिह्वाइन्द्रियथी पेदाथयेल अवाय ( ५ ), स्पर्शेन्द्रियथी पेदाथयेल अवाय, तथा ( ६ ) नो इन्द्रियथी पेदाथयेल अवाय । ते अवायना अ विविध घोषवाणा तथा व्यञ्जनवाणा अकार्थक पांचनामछे, जेवांके ( १ )

તથા-અવાયઃ=નિશ્ચયઃ, સર્વથા ર્હાતો વિનિવૃત્તસ્યાવધારણાવધારિતમર્થમવગચ્છતો  
જીવસ્ય યો વોધવિશેષઃ સોઽવાયઃ ॥ ૩ ॥ તથા-બુદ્ધિઃ-તતસ્તમેવાવધારિતમર્થ  
ક્ષયોપશમવિશેષાત્ સ્થિરતયા પુનઃ પુનઃ સ્પષ્ટતરમવબુધ્યમાનસ્ય યા વોધપરિણતિઃ  
સા બુદ્ધિઃ ॥ ૪ ॥ તથા-વિજ્ઞાનં=વિશિષ્ટં જ્ઞાનં વિજ્ઞાનં, ક્ષયોપશમવિશેષાદેવ અવ-  
ધારિતાર્થવિષયક એવ તીવ્રતરધારણાદેતુર્વોધવિશેષ इत्यर्थः ॥૫॥ સ એવોઽવાયો  
વર્ણિતઃ ॥ સૂ૦ ૩૨ ॥

જैसे-આવર્તનતા ૧, પ્રત્યાવર્તનતા ૨, અવાય ૩, બુદ્ધિ ૪, ઔર  
વિજ્ઞાન ૫ । इस तरह पूर्वोक्त अवायज्ञान का यह स्वरूप है । श्रोत्रेन्द्रिय  
से उत्पन्न ईहाज्ञान के बाद जो ऐसा ज्ञान होता है कि ' यह शब्द अमुक  
का ही है ' इसका नाम श्रोत्रेन्द्रियजन्य अवाय है । जैसे यह शंख का  
ही शब्द है । इसी तरह शेष इन्द्रियों के विषयोंमें उत्पन्न ईहा के बाद  
जो उस उस विषय के निश्चयका ज्ञान होता है, वह तत्तत् इन्द्रियजन्य  
अवाय जानना चाहिये । आवर्तनता आदि पांच नामोंमें जो एकार्थकता  
बतलाई गई है, वह सामान्य अवाय की विवक्षासे बतलाई गई जाननी  
चाहिये । जिस बोध परिणाम द्वारा ईहा से निवृत्त होकर जीव अवाय-  
भाव की तरफ झुकाया जाता है उसका नाम आवर्तनता १ । इस आव-  
र्तन के प्रति जो बोध विशेष होता है कि जिस बोध से जीव उत्तरोत्तर  
अर्थविशेषोंमें विवक्षित अवाय के बिल्कुल समीप आ जाता है उसका  
नाम प्रत्यावर्तनता है २ । ईहा से हटकर जीव के लिये जो उस ईहित

આવર્તનતા, (૨) પ્રત્યાવર્તનતા, (૩) અવાય, (૪) બુદ્ધિ, અને (૫) વિજ્ઞાન. આ  
રીતે પૂર્વોક્ત અવાયજ્ઞાનનું આ સ્વરૂપ છે. શ્રોત્રેન્દ્રિયથીઉત્પન્નથયેલ ઈહાજ્ઞાન  
બાદ જે એવું જ્ઞાનથાયછે કે “ આ શબ્દ અમુકનોછે ” તેનુંનામ  
શ્રોત્રેન્દ્રિયજન્યઅવાય છે. જેમ કે આ શંખનોજ શબ્દછે. એજપ્રકારે  
બાકીની ઇન્દ્રિયોનાવિષયમાં ઉત્પન્નથયેલ ઇહાની પછી જે તે તે વિષયનાં  
નિશ્ચયનું જ્ઞાનથાયછે, તે જ્ઞાનને તે તે ઇન્દ્રિયજન્ય અવાયજ્ઞાન માનવું.  
આવર્તનતા આદિ પાંચનામોમાં જે એકાર્થતા બતાવેલછે તે સામાન્ય  
અવાયની વિવક્ષાથી બતાવાઈછે એમ સમજવું (૧) જે બોધ પરિણામદ્વારા  
ઈહાથી નિવૃત્તથઈને જીવ અવાયભાવ તરફ ઝુકાવાતો બન્ય છે તેનુંનામ  
આવર્તનતા છે. (૨) આ આવર્તનતા પ્રતિ જે બોધ વિશેષ થાય છે, અને જે  
બોધથી જીવ ઉત્તરોત્તર અર્થવિશેષોમાં વિવક્ષિત અવાયની બિલકુલ સમીપ  
આવેછે તેનુંનામ પ્રત્યાવર્તનતાછે. (૩) ઇહાથી દૂરજઈને જીવનેમાટે ને

અથ ધારણાસ્વરૂપમાહ—

મૂલમ્—સે કિં તં ધારણા ? । ધારણા છવિવિહા પળ્લન્તા; તં જહા—સોઈંદિયધારણા । ચર્કિંસ્વદિયધારણા । ઘાણિંદિયધારણા । જિર્બિંદિયધારણા । ફાસિંદિયધારણા । નોઈંદિયધારણા । તીસે ણં ઇમે એગટ્ટિયા નાનાઘોસા નાનાવંજણા પંચ નામધિજ્ઞા ભવંતિ, તં જહા—ધરણા ૧, ધારણા ૨, ઠવણા ૩, પઙ્કટ્ટા ૪, કોટ્ટે ૫ । સે તં ધારણા ॥ સૂ૦ ૩૩ ॥

છાયા—અથ કા સા ધારણા ? । ધારણા પઙ્કવિધા પ્રજ્ઞપ્તા; તદ્ યથા—શ્રોત્રેન્દ્રિયધારણા ૧ । ચક્ષુરિન્દ્રિયધારણા ૨ । ગ્રાણેન્દ્રિયધારણા ૩ । જિહ્વેન્દ્રિયધારણા ૪ । સ્પર્શેન્દ્રિયધારણા ૫ । નોઈંદ્રિયધારણા ૬ । તસ્યા ઇમાનિ એકાર્થકાનિ નાનાઘોષાણિ નાનાવ્યક્ષનાનિ પશ્ચ નામધેયાનિ ભવન્તિ; તદ્ યથા—ધરણા ૧, ધારણા ૨, સ્થાપના ૩, પ્રતિષ્ઠા ૪, કોષ્ઠઃ ૫ । સા એષા ધારણા ॥ સૂ૦ ૩૩ ॥

ટીકા—‘સે કિં તં ધારણા’ ઇત્યાદિ । શિષ્યઃ પૂછ્છતિ—અથ કા સા ધારણા ઇતિ । ઉત્તરમાહ—‘ધારણા છવિવિહા પળ્લન્તા’ ઇત્યાદિ । ધારણા—નિર્ણીતાર્થવિશેષપદાર્થ કા વિલક્ષુલ નિશ્ચિતજ્ઞાન હોતા હૈ વહ અવાય હૈ ૩ । હસ અવાય કે દ્વારા નિશ્ચિત કિયે ગયે પદાર્થ કા જો સ્થિરરૂપ સે પુનઃ પુનઃ સ્પષ્ટતર બોધ હોતા હૈ ઉસકા નામ બુદ્ધિ હૈ ૪ । હસ બુદ્ધિ કે બાદ જો એસા જીવ કો બોધ હોતા હૈ કિ જિસકે બલ પર જીવ ધારણા કે નિકટ પહુંચ જાતા હૈ—જો ધારણા કી ઉત્પત્તિમેં હેતુભૂત હોતા હૈ—ઉસ વિશિષ્ટ જ્ઞાન કા નામ વિજ્ઞાન હૈ ૫ । યહ અવાય કા સ્વરૂપ હુઆ ॥ સૂ૦ ૩૨ ॥

અવ ધારણાકા સ્વરૂપ કહા જાતા હૈ—‘સે કિં તં ધારણા૦’ ઇત્યાદિ

ઉદ્ધિત પદાર્થનુ જે તદ્ન નિશ્ચિત જ્ઞાન થાયછે તે અવાયછે. (૪) આ અવાય દ્વારા નિશ્ચિતકરાયેલ પદાર્થનો જે સ્થિરરૂપે ફરીને સ્પષ્ટતર બોધથાયછે તેનું નામ બુદ્ધિછે. (૫) એ બુદ્ધિની પછી જે એવા જીવને બોધ થાયછે કે જેના આધારે જીવ ધારણાની સમીપ પહોંચીજાયછે—જે ધારણાની ઉત્પત્તિમાં હેતુભૂત થાયછે—એ વિશિષ્ટજ્ઞાનનું નામ વિજ્ઞાનછે. આ અવાયનાં સ્વરૂપનું વર્ણન થયું ॥ સૂ. ૩૨ ॥

હવે ધારણાનું સ્વરૂપ બતાવવામા આવે છે—“સે કિં ત ધારણા૦” ઇત્યાદિ.

पस्य धारणम्=अविस्मरणम् । सा षड्विधा प्रज्ञप्ता, तद् यथा—‘श्रोत्रेन्द्रिय धारणा’ इत्यादि । श्रोत्रेन्द्रियेण या धारणा सा श्रोत्रेन्द्रियधारणा । एवं चक्षुरिन्द्रियधारणा-दयः साधनीयाः । तस्याः=धारणायाः । अन्यत् सुगमम् । अत्रापि सामान्यविवक्षया एकार्थकानि । विशेषार्थचिन्तायां तु भिन्नार्थानि । तत्रावायानन्तरमवगतस्यार्थ-स्याविच्युत्या अन्तर्मुहूर्तकालं यावत् धरणं धरणा ॥१॥ ततस्तस्यैवार्थस्योपयोगाच्च्यु-तस्य जघन्यतोऽन्तर्मुहूर्तमुत्कर्षतः संख्येयाऽसंख्येयकालपर्यन्तं यत् स्मरणं सा धारणा ॥२॥ तथा—स्थापनं—स्थापना । अवायवधारितस्यार्थस्य हृदि स्थापनं, जलपूर्ण-

प्रश्न—पूर्वनिर्दिष्ट धारणा का क्या स्वरूप है? उत्तर—धारणा छह प्रकार की कही गई है । उसके छह प्रकार ये हैं—श्रोत्रेन्द्रिय से होने वाली धारणा १, चक्षु इन्द्रिय से होने वाली धारणा २, घ्राणेन्द्रिय से होनेवाली धारणा ३, जिह्वा इन्द्रिय से होनेवाली धारणा ४, स्पर्शेन्द्रिय से होनेवाली धारणा ५, तथा नो इन्द्रिय से होनेवाली धारणा ६ । उस धारणा में ये पांच नानाघोष एवं नाना व्यंजनवाले एकार्थक नाम हैं । जैसे—धरणा १, धारणा २, स्थापना ३, प्रतिष्ठा ४, तथा कोष्ठ ५ ।

निर्णीत अर्थ का नहीं भूलना इसका नाम धारणा है । यह छह प्रकार की है । श्रोत्र इन्द्रिय के विषयभूत शब्दरूप पदार्थमें जो अवाय ज्ञान के बाद उस विषय की धारणा होती है कि जिसमें जीव उस विषय को कालान्तरमें भी नहीं भूलता है उसका नाम श्रोत्रेन्द्रिय धारणा है । इसी तरह उस २ इन्द्रिय के विषयभूत पदार्थोंमें अवाय ज्ञान के बाद जो उस २ विषय की धारणा जीव को होती है वह चक्षु आदि इन्द्रियों

प्रश्न—पूर्व निर्दिष्ट धारणानुं शुं स्वश्ये ? उत्तर—धारणा नीचेप्रमाणे छ प्रकारनी बतावेलेछे—(१) श्रोत्रेन्द्रियथी थनारी धारणा, (२) चक्षु इन्द्रियथी थनारी धारणा, (३) घ्राणेन्द्रियथी थनारी धारणा, (४) जिह्वा इन्द्रियथी थनारी धारणा, (५) स्पर्शेन्द्रियथी थनारी धारणा, अने (६) नो इन्द्रियथी थनारी धारणा । ते धारणाना आ पांच विविध घोषवाणां अने विविध व्यंजनवाणां एकार्थक नाम छे—(१) धरणा, (२) धारणा, (४) स्थापना, (४) प्रतिष्ठा, तथा (५) कोष्ठ ।

निर्णीत अर्थने न भूलवे । तेनुनाम धारणाछे । ते छ प्रकारनीछे श्रोत्रेन्द्रियना विषयभूत शब्दरूप पदार्थमां जे अवायज्ञाननी पछी ते विषयनी धारणा थायछे जे नथी छव ते विषयने कालान्तरे पणु भूलतो नथी तेनुं नाम श्रोत्रेन्द्रियधारणा छे । अजप्रमाणे ते ते इन्द्रियोना विषयभूत पदार्थोमा जे अवायज्ञाननी पछी ते ते विषयनी धारणा छवनेथायछे ते चक्षु आदि

ઘટસ્થાપનવત્, વાસનેત્યર્થઃ ॥૩॥ તથા-પ્રતિષ્ઠાનં-પ્રતિષ્ઠા-અવાયાવધારિતસ્યેવા-  
ર્થસ્ય હૃદિ પ્રભેદેન પ્રતિષ્ઠાપનમિત્યર્થઃ, યથા-જલે ઉપલપ્તક્ષેપપ્રતિષ્ઠા ભવતિ ॥૪॥  
'કોષ્ઠઃ' ઇતિ, કોષ્ઠ ઇવ કોષ્ઠઃ। અવિનષ્ટસૂત્રાર્થવીજ ધારણાત્ કોષ્ઠવદ્ યા ધારણા,  
સા કોષ્ઠ ઇત્યુચ્યતે ॥ ૫ ॥ સૂ૦ ૩૩ ॥

કે વિષયમેં મી સમજ લેના ચાહિયે । ધારણા કે પાંચ નામોમેં જો એકા-  
ર્થકતા બતલાઈ ગઈ હૈ વહ ધારણા સામાન્ય કી અપેક્ષા સે કહી ગઈ હૈ ।  
વૈસે તો વિશેષ-અર્થ કી અપેક્ષા સે इनમેં ભિન્નાર્થતા મી હૈ । અવાય કે  
દ્વારા નિર્ણીત પદાર્થ કે હો જાને પર ઉસ પદાર્થકી જો અવિચ્યુતિ દ્વારા  
અન્તર્મુહૂર્ત કાલ તક ધારણા બની રહતી હૈ ઉસકા નામ ધારણા હૈ ૧ ।  
અવાયજ્ઞાન દ્વારા નિર્ણીત પદાર્થ કી તરફ સે જીવ કા ઉપયોગ હટ જાને  
પર મી કસ સે કમ અન્તર્મુહૂર્તતક ઓર ડ્યાદા સંખ્યાત ઓર અસંખ્યાત  
કાલતક ઉસ પદાર્થકી જો સ્મૃતિ બની રહતી હૈ ઉસકા નામ ધારણા હૈ  
૨ । અવાય દ્વારા નિશ્ચિત કિયે ગયે અર્થકા હૃદયમેં જો જલપૂર્ણકુંભ કી  
તરહ સ્થાપન હો જાના હૈ વહ સ્થાપના હૈ, ઉસકા દૂસરા નામ વાસના  
મી હૈ ૩ । અવાય કે દ્વારા અવધારિત અર્થ કા જો હૃદયમેં ભેદપ્રભેદ સે  
સ્થાપન હોતા હૈ ઉસકા નામ પ્રતિષ્ઠા હૈ ૪ । અવિનષ્ટ સૂત્રાર્થરૂપ વીજ  
કે ધારણ સે જો ધારણા કોષ્ઠ કી તરહ હોતી હૈ વહ કોષ્ઠ હૈ ૫ । યહ  
ધારણા કા સ્વરૂપ હુઆ ॥ સૂ૦ ૩૩ ॥

ઇન્દ્રિયોનાવિષયમાપણુ સમજલેવીજેઇએ. ધારણાનાં પાંચનામોમાં જે એકા-  
ર્થતા બતાવવામાં આવેલ છે તે ધારણા સામાન્યની અપેક્ષાએ બતાવવામાં  
આવી છે. એમ તો વિશેષઅર્થનીઅપેક્ષાએ તેમનામાં ભિન્નતાપણુછે.  
(૧) અવાય દ્વારા પદાર્થ નિર્ણીતથઇજતા તે પદાર્થની જે અવિચ્યુતિ દ્વારા  
અન્તર્મુહૂર્તકાળ સુધી ધારણા બની રહેછે તેનું નામ ધારણાછે. (૨)  
અવાયજ્ઞાન દ્વારા નિર્ણીત પદાર્થની તરફથી જીવનો ઉપયોગ દૂર થતાં પણુ  
ઓછામાં ઓછી અન્તર્મુહૂર્ત સુધી અને વધારેમાંવધારે સંખ્યાત અને  
અસંખ્યાતકાળસુધી તે પદાર્થની જે સ્મૃતિ બનીરહેછે તેનું નામ ધારણા  
છે. (૩) અવાયદ્વારા નિશ્ચિત કરાયેલ અર્થનું હૃદયમાં જલપૂર્ણકુંભની જેમ  
સ્થાપન થયું તે સ્થાપના કહેવાય છે, તેનું બીજું નામ વાસનાપણુછે.  
(૪) અવાયદ્વારા અવધારિત અર્થનું હૃદયમાં જે ભેદપ્રભેદથી સ્થાપના થાય  
છે તેનું નામ પ્રતિષ્ઠા છે. (૫) અવિનષ્ટ સૂત્રાર્થરૂપ બીજનાં ધારણથી જે ધારણા  
કોષ્ઠની જેમ થાય છે તેનું નામ કોષ્ઠ છે. આ ધારણાનું સ્વરૂપ થયું ॥ સૂ. ૩૩ ॥

અવગ્રહાદીનાં કાલમાનમાહ—

મૂલમ્—ઉગ્ગહે ઇક્કસમઇએ, અંતોમુહુત્તિયા ઈહા, અંતોમુહુત્તિએ  
અવાએ, ધારણા સંખેજ્જં વા કાલં અસંખેજ્જં વા કાલં ॥સૂ૦ ૩૪॥

છાયા—અવગ્રહ એકસામાયિકઃ । આન્તમૌહૂર્તિકી ઈહા । આન્તમૌહૂર્તિકો-  
ઽવાયઃ । ધારણા—સંખ્યેયં વા કાલમ્, અસંખ્યેયં વા કાલમ્ ॥ સૂ૦ ૩૪ ॥

ટીકા—‘ ઉગ્ગહે ’ ઇત્યાદિ । અવગ્રહઃ=નૈશ્વયિકોઽર્થાવગ્રહઃ, સ એક સામ-  
યિકો ભવતિ । ઈહા આન્તમૌહૂર્તિકી ભવતિ । અવાય આન્તમૌહૂર્તિકો ભવતિ ।  
ધારણા ત્રિવિધા—અવિચ્યુતિ—વાસના — સ્મૃતિભેદાત્ । તત્ર—વાસનારૂપા ધારણા,  
સંખ્યેયં વા કાલં ભવતિ, અસંખ્યેયં વા કાલં ભવતિ । તત્ર સંખ્યેયવર્ષાયુષ્કાળાં  
સંખ્યેયકાલમ્, અસંખ્યેયવર્ષાયુષ્કાળામસંખ્યેયં કાલં યુગલાઘપેક્ષયા ભવતિ ।  
અવિચ્યુતિરૂપા, સ્મૃતિરૂપા ચ ધારણા પ્રત્યેકમન્તર્મુહૂર્ત ભવતિ ॥ મૂ૦ ૩૪ ॥

અવ એ અવગ્રહ આદિ જ્ઞાનોં કા કાલમાન કિતના હૈ યહ સૂત્રકાર  
સ્પષ્ટ કરતે હૈ—‘ ઉગ્ગહે૦ ’ ઇત્યાદિ ।

નૈશ્વયિક અર્થાવગ્રહ કા કાલ એક સમય કા હૈ । ઈહાજ્ઞાન કા કાલ  
અન્તર્મુહૂર્ત કા હૈ । અવાયજ્ઞાન કા મી કાલ ઇતના હી હૈ । અવિચ્યુતિ.  
વાસના ઓર સ્મૃતિ કે ભેદ સે ધારણા ત્રીન પ્રકાર કી હૈ । ઇનમેં વાસના-  
રૂપ ધારણા કા કાલ સંખ્યાત અથવા અસંખ્યાત કાલ હૈ । જિનકી સંખ્યાત  
વર્ષ કી આયુ હોતી હૈ ઇનકી અપેક્ષા સંખ્યાતકાલ, તથા જિન જીવોં કી  
અસંખ્યાતવર્ષ કી આયુ હોતી હૈ ઇનકી અપેક્ષા અસંખ્યાત કાલ જાનના  
ચાહિયે । અવિચ્યુતિ તથા સ્મૃતિરૂપ ધારણા કા કાલ અન્તર્મુહૂર્ત પ્રમાણ  
હૈ । ॥સૂ૦ ૩૪ ॥

હુવે એ અવગ્રહ આદિ જ્ઞાનોનું કાલમાન કેટલું છે તે સૂત્રકાર સ્પષ્ટ  
કરે છે—“ ઉગ્ગહે૦ ” ઇત્યાદિ,

નૈશ્વયિક અર્થાવગ્રહનો કાળ એક સમયનો છે. ઇહાજ્ઞાનનો કાળ અન્તર્મુ-  
હૂર્તનો છે. અવાયજ્ઞાનનો કાળ પણ એટલો જ છે અવિચ્યુતિ, વાસના અને  
સ્મૃતિ એ ત્રણ ભેદથી ધારણા ત્રણ પ્રકારની છે. તેમનામાં વાસનારૂપ ધારણાનો  
કાળ સંખ્યાત અથવા અસંખ્યાત સમય છે જેમની સંખ્યાત વર્ષની આયુ  
હોય છે તેમની અપેક્ષાએ સંખ્યાતકાળ, તથા જે જીવોની અસંખ્યાતવર્ષની  
આયુ હોય છે તેમની અપેક્ષાએ અસંખ્યાતકાળ સમજી લેવો જોઈએ. અવિ-  
ચ્યુતિ તથા સ્મૃતિરૂપ ધારણાનો કાળ અન્તર્મુહૂર્તપ્રમાણ છે ॥ સૂ. ૩૪ ॥

“ एवं अद्वावीसइ विहस्स ” ઇત્યાદિ.



मूलम्—एवं अट्टावीसइविहस्स आभिणिबोहियनाणस्स (परू-  
वणं करिस्सामि, तत्थ णं पढमं) वंजणुग्गहस्स परूवणं करिस्सा-  
मि पडिबोहगदिट्ठंतेणं, मल्लगदिट्ठंतेण य ।

से किं तं पडिबोहगदिट्ठंतेणं ? । पडिबोहगदिट्ठंतेणं-से जहा-  
नामए केइ पुरिसे कंचि पुरिसं सुत्तं पडिबोहिज्जा—अमुगा अमु-  
गत्ति । तत्थ चोयगे पन्नवगं एवं वयासी—किं एगसमयपविट्ठा  
पुग्गला ग्रहणमागच्छंति ?, दुसमयपविट्ठा पुग्गला ग्रहणमाग-  
च्छंति ? जाव दससमयपविट्ठा पुग्गला ग्रहणमागच्छंति ?  
संखिज्जसमयपविट्ठा पुग्गला ग्रहणमागच्छंति ? असंखिज्ज-  
समयपविट्ठा पुग्गला ग्रहणमागच्छंति ? । एवं वयंतं चोयगं  
पणवए एवं वयासी—नो एगसमयपविट्ठा पुग्गला ग्रह-  
णमागच्छंति, नो दुसमयपविट्ठा पुग्गला ग्रहणमागच्छंति, जाव  
नो दससमयपविट्ठा पुग्गला ग्रहणमागच्छंति, नो संखिज्ज-  
समयपविट्ठा पुग्गला ग्रहणमागच्छंति, असंखिज्जसमयपविट्ठा  
पुग्गला ग्रहणमागच्छंति । से तं पडिबोहगदिट्ठंतेणं ॥

छाया—एवमष्टाविंशतिविधस्य आभिनिबोधिकज्ञानस्य [ प्ररूपणं करिष्यामि  
तत्र खलु प्रथमं ] व्यञ्जनावग्रहस्य प्ररूपणं करिष्यामि प्रतिबोधकदृष्टान्तेन, मल्लक-  
दृष्टान्तेन च ।

अथ किं तत् प्रतिबोधकदृष्टान्तेन ? । प्रतिबोधकदृष्टान्तेन—स यथानामकः  
कश्चित् पुरुषः कंचित् पुरुषं सुप्तं प्रतिबोधयेत्—अमुक—अमुक ! इति । तत्र नोदकः  
प्रज्ञापकमेवमवादीत्—किमेकसमयप्रविष्टाः पुद्गला ग्रहणमागच्छन्ति ?, द्विसमयप्रविष्टाः  
पुद्गलाः ग्रहणमागच्छन्ति ? यावदशसमयप्रविष्टाः पुद्गला ग्रहणमागच्छन्ति ?, संख्येय-  
समयप्रविष्टाः पुद्गला ग्रहणमागच्छन्ति ?, असंख्येयसमयप्रविष्टाः पुद्गला ग्रहणमाग-

ચ્છન્તિ ? એવં વદન્તં નોદકં પ્રજ્ઞાપક એવમવાદીત્-નો એકસમયપ્રવિષ્ટાઃ પુદ્ગલા ગ્રહણ-  
માગચ્છન્તિ, નો દ્વિસમયપ્રવિષ્ટાઃ પુદ્ગલા ગ્રહણમાગચ્છન્તિ, યાવન્નો દશસમયપ્રવિષ્ટાઃ  
પુદ્ગલા ગ્રહણમાગચ્છન્તિ, નો સંખ્યેયસમયપ્રવિષ્ટાઃ પુદ્ગલા ગ્રહણમાગચ્છન્તિ, અસં-  
ખ્યેયસમયપ્રવિષ્ટાઃ પુદ્ગલા ગ્રહણમાગચ્છન્તિ । તદેતત્ ( પ્રરૂપણં ) પ્રતિવોધક-  
દૃષ્ટાન્તેન ॥

ટીકા—‘ એવં અઢાવીસઙ્ગિવિહસ્સ ’ इत्यादि । एवम्=पूर्वोक्तेन प्रकारेण,  
अष्टाविंशतिविधस्य=चतुर्द्धा व्यक्तेनावग्रहः, षड्विधोऽर्थावग्रहः षड्विधा ईहा,  
षड्विधोऽवायः, षड्विधा धारणा, इत्यष्टाविंशतिप्रकारकस्य, आभिनिबोधिक-  
ज्ञानस्य प्ररूपणं करिष्यामि । तत्र खलु प्रथमं=पूर्वं व्यक्तेनावग्रहस्य प्ररूपणं=वर्णनं

સૂત્રકાર કહેતે हैं-इस तरह आभिनिबोधिकज्ञान के अट्ठाईस भेद  
हो जाते हैं, उसकी मैं प्ररूपणा करूंगा । मतिज्ञान अट्ठाईस प्रकार का इस  
तरह होता है-व्यक्तेनावग्रह चार प्रकार का होता है । चक्षु एवं मन से  
यह अवग्रह होता नहीं है, शेष चार इन्द्रियों से ही होता है । तथा व्यंजन  
के ईहा, अवाय, एवं धारणा ये प्रकार होते नहीं हैं इसलिये व्यंजन का अव-  
ग्रह ही होता है, और यह अवग्रह चार इन्द्रियों से होता है, अतः व्यंज-  
नावग्रह चार प्रकारका होता है ४ । अर्थ का अवग्रह पांच इन्द्रिय और  
मन से होता है इसलिये वह छह प्रकार का होता है ६ । इसी तरह ईहा  
भी छह प्रकार की होती है १२ । अवाय भी छह प्रकार का १८, तथा  
धारणा भी छह प्रकार की २४, इस तरह ये सब चौबीस भेद होते हैं ।  
इस प्रकार मतिज्ञान अट्ठाईस प्रकार का होता है । सूत्रकार कहते हैं

एवं अट्ठावीसङ्गि विहस्स इत्यादि.

સૂત્રકાર કહે છે-આ રીતે આભિનિબોધિક જ્ઞાનનાં જે અઢાવીસ ભેદ પડે  
છે, તેની હું પ્રરૂપણા કરું છું. મતિજ્ઞાન આ રીતે અઢાવીસ પ્રકારનું થાય છે-  
વ્યંજનાવગ્રહ ચાર પ્રકારનો થાય છે. ચક્ષુ અને મનથી તે અવગ્રહ થતો નથી,  
બાકીની ચાર ઇન્દ્રિયોથીજ થાય છે. તથા વ્યંજનના ઇહા, અવાય અને  
ધારણા એ પ્રકાર પડતાં નથી; તે કારણે વ્યંજનનો અવગ્રહ જ થાય છે, અને તે  
અવગ્રહ ચાર ઇન્દ્રિયો વડે થાય છે, તેથી વ્યંજનાવગ્રહ ચાર પ્રકારનો હોય  
છે ૪. અર્થનો અવગ્રહ પાંચ ઇન્દ્રિયો અને મનથી થાય છે તે કારણે તે એ છ  
પ્રકારનો હોય છે. ૬. આજ પ્રકારે ઇહા પણ છ પ્રકારની હોય છે ૧૨. અવાય  
પણ છ પ્રકારનો ૧૮, તથા ધારણા પણ છ પ્રકારની ૨૪. આ રીતે એ બધા  
મળીને ચોવીસ ભેદ થાય છે. આ પ્રકારે મતિજ્ઞાન અઢાવીસ પ્રકારનું હોય છે.

કરિષ્યામિ । સ્પષ્ટતરસ્વરૂપપ્રતિબોધનાર્થમિતિ ભાવઃ । કથં તત્ પ્રરૂપણં કરિષ્યતી-  
ત્યાકાઙ્ક્ષાયમાહ—‘ પઙ્કિવોહગદિદ્વતેજં૦ ’ इत्यादि । પ્રતિબોધકદૃષ્ટાન્તેન,  
મલ્લકદૃષ્ટાન્તેન ચ । તત્ર-પ્રતિબોધયતીતિ પ્રતિબોધકઃ=સુપ્તસ્યોત્થાપકઃ, સ એવ  
દૃષ્ટાન્તઃ — પ્રતિબોધકદૃષ્ટાન્તસ્તેન । તથા મલ્લકં=શરાવં, તદેવ દૃષ્ટાન્તો  
મલ્લકદૃષ્ટાન્તસ્તેન ચ । ‘ સે કિં તં૦ ’ इत्यादि । અથ કિં તત્ પ્રતિબોધક-  
દૃષ્ટાન્તેન વ્યજ્ઞનાવગ્રહસ્ય પ્રરૂપણમિતિ પ્રશ્નઃ । ઉત્તરમાહ-પ્રતિબોધકદૃષ્ટાન્તેન  
વ્યજ્ઞનાવગ્રહપ્રરૂપણમેવં ભવતિ-સ યથાનામકઃ-યત્કિંચિન્નામધારકઃ-અનિર્દિષ્ટ-  
નામક इत्यर्थः, કશ્ચિત્ પુરુષઃ, યદ્વા-‘ સે ’ इति सः=दृष्टान्तरूपोऽर्थः, યથા=યેન  
પ્રકારેણ, ‘ નામ ’ સંભાવ્યતે, તં વર્ણયામીત્યર્થઃ । ‘ ઇ ’ इति वाक्यालंकारे ।  
કશ્ચિત્ પુરુષઃ કંચિત્=અનિર્દિષ્ટનામાનં યથાસંભવનામકં-દેવદત્તાદિકં પુરુષં સુપ્ત  
સન્તં પ્રતિબોધયેત્ । કથં પ્રતિબોધયેદિત્યાહ—‘ અમુક ! અમુક ! ’ इति ।  
તત્રૈવમુક્તે સતિ જ્ઞાનાવરણીયકર્મોદયાત્ કથિતમપિ સૂત્રાર્થમનવબુદ્ધ્યમાનો  
નોદકઃ = પ્રશ્નકર્તા શિષ્યઃ પ્રજ્ઞાપકં — યથાઽવસ્થિતસૂત્રાર્થં પ્રજ્ઞાપયતીતિ  
પ્રજ્ઞાપકસ્તં-ગુરુમ્, એવમ્=વક્ષ્યમાણપ્રકારેણ, અવાદીત્=અપૃચ્છત્ । इह भूतकाल-

કિં હસ અઘાઈસ પ્રકાર કે મતિજ્ઞાન કી પ્રરૂપણામેં હમ પહિલે સ્પષ્ટ-  
તર સ્વરૂપ સમજાને કે લિયે વ્યંજનાવગ્રહ કી પ્રરૂપણા કરેંગે । यह प्र-  
रू-  
पणा प्रतिबोधक तथा नवीनमल्लक (शरावा) के दृष्टान्त से की जावेगी ।  
प्रतिबोधक का दृष्टान्त इस प्रकार से है—

કોઈ એક પુરુષ ગાઢનિદ્રામેં સોયે હુએ કિસી પુરુષ કો પુકાર પુકાર  
કર જગાતા હૈ, પરન્તુ વહ શબ્દ ઉસકે કાનમેં નહીં પહુંચા હો જૈસા હો  
જાતા હૈ । तब इस पर ज्ञानावरणीय कर्म के उदय से कथित सूत्रार्थ को  
भी नहीं जानने वाला शिष्य सूत्रार्थ की यथावस्थित प्ररूपणा करनेवाले  
गुरु महाराज से प्रश्न करता है कि हे भदन्त ! यह जगाने पर भी क्यों

સૂત્રકાર કહે છે કે આ અઘાઈવીસ પ્રકારનાં મતિજ્ઞાનની પ્રરૂપણામાં અમે પહેલાં  
વધારે સ્પષ્ટસ્વરૂપે સમજાવવાને માટે વ્યંજનાવગ્રહની પ્રરૂપણા કરશું.

આ પ્રરૂપણા પ્રતિબોધક તથા નવીનમલ્લક (શરાવા) નાં દૃષ્ટાંતથી કરાશે.  
પ્રતિબોધકનું દૃષ્ટાંત આ પ્રમાણે છે—

કોઈ એક પુરુષ ગાઢનિદ્રામાં પડેલ કોઈ પુરુષને અવાજ કરીકરીને જગાડે છે,  
પણ તે શબ્દ તેના કાને પહોંચતો જ ન હોય એવું થાયછે. ત્યારે  
જ્ઞાનાવરણીયકર્મના ઉદયથી કહેલ સૂત્રાર્થને પણ ન જાણનાર શિષ્ય  
સૂત્રાર્થની યથાવસ્થિત પ્રરૂપણા કરનાર ગુરુમહારાજને પ્રશ્ન પૂછે છે કે-હે  
ભદન્ત ! તે જગાડવા છતાં પણ કેમ જાગતો નથી ? શું તેના કાનમાં એક-

નિર્દેશસ્તુ ' આગમોઽયમનાદિ '-રિતિ પ્રતિબોધનાર્થઃ । શિષ્યઃ કિમવાદો ? દિત્યાહ - ' કિં એગસમયપ્પવિટ્ઠાં ' इत्यादि । भदन्त ! किम् एकसमयप्रविष्टाः पुद्गलाः, ग्रहणमागच्छन्ति=ग्राह्या भवन्ति ?, यावत् असंख्येयसमयप्रविष्टाः पुद्गला ग्रहण-मागच्छन्ति=ग्राह्या भवन्तीति प्रश्नः । एवं वदन्तं नोदकं प्रज्ञापक एवमवादीत्- ' नो एगसमयपविट्ठां ' इत्यादि । एकसमयप्रविष्टाः पुद्गला यावत् संख्येयसमयप्र-विष्टा पुद्गला न ग्राह्या भवन्तीत्यर्थः । अयं प्रतिषेधः स्फुटप्रतिभासरूपार्थावग्रहल-क्षणविज्ञानग्राह्यतामधिकृत्य विज्ञेयः । यावता पुनः प्रथमसमयादारभ्य किंचिद् व्यक्तं ग्रहणमागच्छन्त्येवेति प्रतिपत्तव्यम् । ' असंखेज्जं ' इत्यादि । आदित आरभ्य प्रतिसमयप्रवेशनेन असंख्येयान् समयान् यावत् ये प्रविष्टास्ते असंख्येयसमयप्रविष्टाः न तु विंशत्याऽहोभिः पथिकगृहप्रवेशवदपान्तरालागमनसमयापेक्षयाऽसंख्येयस-मयप्रविष्टा इति । पुद्गलाः=शब्दद्रव्यविशेषाः, ग्रहणमागच्छन्ति=अर्थावग्रहज्ञानहे-तवो भवन्तीति भावः । पुद्गलेषु असंख्येयसमयप्रविष्टेषु चरमसमयेऽर्थावग्रहज्ञान-

नहीं जगता है ? क्या उसके कानमें एकसमयप्रविष्ट पुद्गलों से लगा-कर असंख्यात समय प्रविष्ट पुद्गल भरते नहीं हैं ? यदि भरते हैं तो उसको जग जाना चाहिये, फिर क्यों नहीं जगता ? आचार्य इसका उत्तर देते हैं कि एक समय से लेकर असंख्यात समय तक प्रविष्ट हुए पुद्गल उसके कानमें पड़ते हैं, पर वे लुप्त हो जाते हैं, यही कारण है कि वह दो तीन बार जगाने पर भी नहीं जागता है, परन्तु ज्यों ही वे मन्द २ रीति से चार-पांच बार जगाने पर उसके कानमें भर जाते हैं और लुप्त नहीं होते हैं तो वह व्यक्ति शीघ्र जग उठता है । इसका तात्पर्य यही है कि वे अधिक बोले गये शब्द जब उसके कानमें भर जाते हैं-उसके ग्रहण में आने लगते हैं-तो वह जग जाता है, अर्थात्-वे शब्द-

સમય-પ્રવિષ્ટ પુદ્ગલોથી માંડીને અસંખ્યાત સમય-પ્રવિષ્ટ-પુદ્ગલ ભરાતા નથી ? જો ભરાતા હોય તો તેણે જાગી જવું જોઈએ. છતાં પણ કેમ જાગતો નથી ? આચાર્ય તેના જવાબ આપે છે કે એક સમયથી માંડીને અસંખ્યાત સમય સુધી પ્રવિષ્ટ થયેલ પુદ્ગલ તેના કાનમાં પડે છે, પણ તે લુપ્ત થઈ જાય છે, એજ કારણે તે જો ત્રણવાર જગાડવા છતાં પણ જાગતો નથી, પણ જેવા તે મંદ મંદ રીતે ચાર પાંચ વાર જગાડતા તેના કાનમાં ભરાઈ જાય છે, અને લુપ્ત થતાં નથી તેવા જ તે માણસ જાગી ઉઠે છે. એનું તાત્પર્ય એ છે કે તે અધિક બોલાયેલ શબ્દો જ્યારે તેના કાનમાં ભરાઈ જાય છે. તેનાથી ગ્રહણ થવા માંડે છે, ત્યારે તે જાગી જાય છે. એટલે કે તે શબ્દ પુદ્ગલ અર્થાવગ્રહનું કારણ

મુપજાયતે इत्यर्थः । अर्थावग्रहविज्ञानाच्च प्राक् सर्वोऽपि व्यञ्जनावग्रहः । चरमसमये जायमानोऽर्थावग्रह एकसमयमानः परमयोगिनां स्फुटगम्यः । व्यञ्जनावग्रहस्य च कालो जघन्यत आवलिकाऽसंख्येयभागः, उत्कर्षतः संख्येया आवलिकाः । ता अपि संख्येया आवलिकाः प्राणापान ( उच्छ्वासनिःश्वास ) — पृथक्त्वकालमाना वे-  
दितव्याः । तदेतत् प्रतिबोधकदृष्टान्तेन व्यञ्जनावग्रहस्य प्ररूपणम् ॥

પુદ્ગલ અર્થાવગ્રહ કે કારણ હો જાતે હૈં । એક સમય સે લેકર અસંખ્યાત સમયતક કે શબ્દ પુદ્ગલ એસે હૈં જો ઉસકે અર્થાવગ્રહરૂપ જ્ઞાન કે હેતુ નહીં હોતે હૈં, કિન્તુ અન્તિમ સમય મેં હી યહ અર્થાવગ્રહરૂપ જ્ઞાન કા હેતુ હોતા હૈ, અતઃ એક સમય કે ઉન શબ્દ પુદ્ગલોં સે લેકર અસંખ્યાત સમય તક કે યે જિતને શબ્દપુદ્ગલ હૈં વે સ્પષ્ટ પ્રતિભાસજનક ન હો સકને કે કારણ વ્યંજનાવગ્રહરૂપ હી હૈં ।

જિસ અન્તિમ શબ્દ પુદ્ગલ કે ગ્રહણ મેં સ્પષ્ટજ્ઞાન હુઆ હૈં વહ અન્તિમ પુદ્ગલ હી અર્થાવગ્રહ કા જનક હુઆ હૈં । ઇસકા કાલ એક સમય પ્રમાણ હૈ, યહ પરમયોગિયોં કે જ્ઞાન કા વિષય હૈં । વ્યંજનાવગ્રહ કા જઘન્ય સમય આવલિકા કે અસંખ્યાતવેં ભાગ પ્રમાણ હૈ, તથા ઉત્કૃષ્ટરૂપ સે સંખ્યાત આવલિકા પ્રમાણ હૈં । વે સંખ્યાત આવલિકાએં પ્રાણાપાનપૃથક્ત્વ અર્થાત્-દોસે નવ તક ઉચ્છ્વાસ-નિઃશ્વાસ-પરિમિત કાલપ્રમાણ વાલી સમજનાં ચાહિયે । યહ વ્યંજનાવગ્રહ કા છુલાસા પ્રતિબોધક કે દૃષ્ટાન્ત સે હુઆ ॥

થઈ જાય છે, એક સમયથી માંડીને અસંખ્યાત સમય સુધીના શબ્દપુદ્ગલ એવાં છે જે તેના અર્થાવગ્રહ રૂપ જ્ઞાનનું કારણ થતાં નથી. પણ અંતિમ સમયમાં જ તે અર્થાવગ્રહરૂપ જ્ઞાનનું કારણ બને છે; તેથી એક સમયનાં તે શબ્દપુદ્ગલોથી માંડીને અસંખ્યાત સમય સુધીના એ જેટલાં શબ્દપુદ્ગલ છે તે સ્પષ્ટ પ્રતિભાસજનક હોઈ ન શકવાને કારણે વ્યંજનાવગ્રહરૂપ જ છે. જે અન્તિમ શબ્દપુદ્ગલના ગ્રહણથી સ્પષ્ટ જ્ઞાન થયું છે તે અન્તિમપુદ્ગલ જ અર્થાવગ્રહનું જનક થયું છે. તેનો કાળ એકસમયનો છે. તે પરમયોગીઓના જ્ઞાનનો વિષય છે. વ્યંજનાવગ્રહનો જઘન્ય સમય આવલિકાના અસંખ્યાતમાં ભાગનો છે; તથા ઉત્કૃષ્ટ રૂપથી સંખ્યાતઆવલિકાપ્રમાણ છે. તે સંખ્યાત-આવલિકાઓ પ્રાણાપાનપૃથક્ત્વ એટલે કે બેથી નવ સુધી ઉચ્છ્વાસ-નિઃશ્વાસ-પરિમિતકાલ-પ્રમાણવાળી સમજવાં જોઈ એ. વ્યંજનાવગ્રહનો આ ખુલાસો પ્રતિ-  
બોધકના દૃષ્ટાંતથી થયો.

मूलम्—से किं तं मल्लगदिदृतेणं ? । मल्लगदिदृतेण—से जहा—  
नामए केइ पुरिसे आवागसीसाओ मल्लगं गहाय तत्थेगं उद-  
गविंदुं पक्खेविज्जा से नट्टे, अण्णेऽवि पक्खित्ते सेऽवि नट्टे, एवं  
पक्खिप्पमाणेसु पक्खिप्पमाणेसु होही से उदगविंदू, जे णं तं  
मल्लगं रावेहिइत्ति, होही से उदगविंदू जे णं तंसि मल्लगंसि ठाहिति,  
होही से उदगविंदू जे णं तं मल्लगं भरिहिति, होही से उद-  
गविंदू जे णं मल्लगं पवाहेहिति । एवामेव पक्खिप्पमाणेहिं पक्खि-  
प्पमाणेहिं अणंतेहिं पुग्गलेहिं जाहे तं वंजणं पूरियं होइ ताहे  
'हुं' ति करेइ, नो चेव णं जाणइ के एस सदाइ ? । तओ ईहं  
पविसइ तओ जाणइ अमुगे एस सदाइ । तओ अवायं पविसइ  
तओ से उवगयं हवइ । तओ धारणं पविसइ । तओ णं धारेइ  
संखिज्जं वा कालं, असंखिज्जं वा कालं ॥

छाया—अथ किं तत् मल्लकदृष्टान्तेन ? । मल्लकदृष्टान्तेन—स यथानामकः  
कश्चित् पुरुषः आपाकशीर्षतो मल्लकं गृहीत्वा तत्रैकमुदकविन्दुं प्रक्षिपेत् स नष्टः,  
अन्योऽपि प्रक्षिप्तः सोऽपि नष्टः । एवं प्रक्षिप्यमाणेषु २ भविष्यति स उदक-  
विन्दुर्यो नु तं मल्लकम् आर्द्रयिष्यति, भविष्यति स उदकविन्दुर्यो नु तस्मिन् मल्लके  
स्थास्यति, भविष्यति स उदकविन्दुर्यो नु तं मल्लकं भरिष्यति, भविष्यति स  
उदकविन्दुर्यो नु तं मल्लकं प्रवाहयिष्यतीति, एवमेव प्रक्षिप्यमाणैः २ अनन्तैः  
पुद्गलैर्यदा तद् व्यञ्जनं पूरितं भवति, तदा 'हु'—मिति करोति, नो चैव खलु  
जानाति क एष शब्द ? इति । तत ईहां प्रविशति, ततो जानाति अमुक एष  
शब्द इति । ततोऽवायं प्रविशति, ततः स उपगतो भवति । ततो धारणां प्रवि-  
शति, ततः खलु धारयति संख्येयं वा कालमसंख्येयं वा कालम् ॥

टीका—शिष्यः पृच्छति—' से किं तं मल्लगदिदृतेणं० ' इत्यादि । अथ कि  
तत्=प्ररूपणं मल्लकदृष्टान्तेन ? इति । उत्तरमाह—मल्लकदृष्टान्तेन व्यञ्जनावग्रह-



પ્રરૂપણમેવં ભવતિ—સ યથાનામકઃ=યત્કિચ્ચિનામકઃ કથિત પુરુષઃ, આપાકશીર્ષતઃ—આપાકેઃ=કુમ્ભકારસ્ય માણ્ડપાકસ્થાને સ્થાપિતો માણ્ડરાશિઃ, તસ્ય શીર્ષતઃ—શીર્ષમિવ શીર્ષમ્=ઉપરિતનો ભાગસ્તસ્માત્, મલ્લકં=શરાવં ગૃહીત્વા, તત્રૈકમુદકવિન્દું પ્રક્ષિપેત્=પ્રક્ષિપ્તં કુર્યાત્, સ ઉદકવિન્દુર્નષ્ટઃ—સર્વથા નૂતનશરાવસ્ય રુક્ષત્વાત્ તત્રૈવ તદ્ભાવપરિણતિમાપન્ન इत्यर्थः । તદનન્તરમ્ અન્યોઽપિ જલવિન્દુઃ પ્રક્ષિપ્તઃ, સોઽપિ નષ્ટઃ, एवं પ્રક્ષિપ્યમાણેષુ પ્રક્ષિપ્યમાણેષુ ભવિષ્યતિ સ ઉદકવિન્દુર્યઃ खलु तं मल्लकं =શરાવં (રાવેહિતિ) આર્દ્રયિષ્યતિ—આર્દ્રં કરિષ્યતીતિ । ‘રાવેહિતિ’ इति ‘राव’ इति देशीयधातोर्भविष्यति रूपम् । ભવિષ્યતિ સ ઉદકવિન્દુર્યઃ खलु तस्मिन् मल्लके स्थास्यति । ભવિષ્યતિ સ ઉદક વિન્દુર્યઃ खलु तं मल्लकं भरिष्यति । ભવિષ્યતિ સ

અવ મલ્લક કે દૃષ્ટાન્ત સે ઇસકા ચુલાગા કરતે હૈં—‘સે કિં તં મલ્લગદિટ્ટેણં ?’ इत्यादि ।

શિષ્ય પૂછતા હૈ—હે ભદન્ત ! મલ્લકદૃષ્ટાન્ત કા કયા સ્વરૂપ હૈ ?  
ઉત્તર—મલ્લક દૃષ્ટાન્ત ઇસ પ્રકાર હૈ—જૈસે કોઈ પુરુષ કુંભાર કે આવા ઝેં સે એક નવીન મલ્લક—શરાવે કો લાવે, ઓર ડસમેં એક પાની કી વૂંદ ડાલે પરન્તુ વહ પાની કી એક વૂંદ ડસ પર ડાલતે હી નષ્ટ હો જાતી હૈ, ક્યોં કિ વહ સર્વથા રુક્ષ હોતા હૈ । ઇસી તરહ દૂસરી પાની કી વૂંદ બી ડસમેં ડાલી જાને પર નષ્ટ હો જાતી હૈ । ઇસ તરહ વાર ૨ ડાલી જાને પર ડન જલ કી વિન્દુઓં મેં કોઈ એક વૂંદ એસી હોતી હૈ જો ડસ શરાવે કો ગીલા કર દેતી હૈ । તથા કોઈ વૂંદ એસી હોતી હૈ જો ડસમેં ઠહરતી હૈ । કોઈ વૂંદ એસી હોતી હૈ જો ડસકો ભર દેતી હૈ । કોઈ વૂંદ

હવે મલ્લકનાં દૃષ્ટાન્ત તુ સ્પષ્ટીકરણ કરે છે—

“સે કિં તં મલ્લગદિટ્ટેણં ?” इत्यादि—

શિષ્ય પૂછે છે હે ભદન્ત ! મલ્લકદૃષ્ટાન્ત શું સ્વરૂપ છે ?

ઉત્તર—મલ્લકદૃષ્ટાન્ત આ પ્રમાણે છે—જેમકે કોઈ પુરુષ કુંભારના નિલાડા-માથી એક નવુંશકોરું લાવે અને તેમાં પાણીનું એક ટીપું નાખે; પણ તે પાણીનું એક ટીપું તેના પર નાખતા જ નાશ પામે છે, કારણકે તે તદ્દન સૂકું હોય છે. એજ પ્રમાણે તેમાં પાણીનું બીજું ટીપું પણ નાખતા તેનો પણ નાશ થાય છે. આ રીતે વારંવાર નાખતા તે પાણીના ટીપાઓમાંથી કોઈ એક ટીપું એવું હોય છે કે જે તે શકોરાને બીનું કરે છે. તથા કોઈ ટીપાં એવાં હોય છે કે જે તેમાં ટકે છે. કોઈ ટીપાં એવાં હોય છે કે જે તેને ભરી દે

उदकविन्दुर्यः खलु तं मल्लकं प्रवाहयिष्यति=शरावाद् बहिर्निर्गतो भविष्यतीत्यर्थः ।  
 एवमेव=उदकविन्दुभिरिव, निरन्तरं प्रक्षिप्यमाणैः प्रक्षिप्यमाणैरनन्तैः पुद्गलैः=शब्दरू-  
 पतया परिणतैर्यदा तद् व्यञ्जनं=श्रोत्ररूपमुपकरणेन्द्रियं पूरितं भवति, तदा-‘हुं’  
 इति करोति-अर्थावग्रहरूपेण ज्ञानेन तमर्थं गृह्णाति-नामजात्यादिकल्पनारहितमेव  
 जानाति; नत्वेवं जानाति ‘क एष शब्दः’ ? इति-‘कथंभूतोऽयं शब्दः, कस्य  
 वाऽयं शब्द’-इत्यादि न जानाति । स्वरूपद्रव्यगुणक्रियाविशेषकल्पनारहितमनिर्देश्यं  
 सामान्यमात्रमसंख्येयसमयेषु चरमसमये जानाति । अर्थावग्रहस्य एकसामायिक-  
 कत्वात् सामान्यमात्रग्रहणकारणत्वाच्च । अस्मात् प्राक् सर्वोऽपि व्यञ्जनावग्रह एव ।  
 तदेतत् मल्लकट्टण्टान्तेन व्यञ्जनावग्रहस्य प्ररूपणं कृतम् । इह हुंकारकरणं चार्थाव-  
 ग्रहजनितम् । ततः=तदनन्तरम्, ईहां प्रविशति=‘किमिदं किमिद’-मिति विमर्श-  
 करणे प्रवृत्तो भवति । ततः=ईहानन्तरम्, जानाति-‘अमुक एष शब्दः’ इति, तदा  
 क्षायोपशमविशेषोत्पत्तेरिति भावः । ततः=तदा-ईदृशे ज्ञानपरिणामे जाते सति  
 स पुरुषोऽवायं प्रविशति । ततः=तदा-अवायकालेऽन्तर्मुहूर्तकालं यावत् स शब्द उप-

ऐसी होती है जो उस शरावे को वहा देती है, अर्थात्-शरावे से जल  
 बाहर निकलने लगता है । इसी तरह प्रक्षिप्यमाण-भरे जाने वाले  
 अनंत पुद्गलों से जब वह श्रोत्रेन्द्रियरूप उपकरणेन्द्रिय भर जाती है तब  
 वह सोया हुआ पुरुष ‘हुं’ इस प्रकार के शब्द को करता है, अर्थात्  
 अर्थावग्रहरूप ज्ञान से नामजात्यादि की कल्पना से रहित ही उस अर्थ  
 को जानता है, पर वह यह नहीं जानता है कि यह शब्द क्या है ? इसके  
 बाद जब वह ईहा ज्ञान में प्रविष्ट होता है तब जान जाता है कि ‘यह  
 अमुक शब्द है’ बाद में विशेष निश्चय करने के लिये वह अवाय में  
 प्रविष्ट होता है तब वह उससे परिचित हो जाता है । बाद में वह जब

छे. કેઈ ટીપાં એવાં હોય છે કે જે તે શકેરાને છલકાવી નાખે છે. એજ  
 પ્રમાણે પ્રક્ષિપ્યમાણ-ભરાઈજનારાં અનંતપુદ્ગલોથી ન્યારે તે શ્રોત્રેન્દ્રિયરૂપ  
 ઉપકરણેન્દ્રિય ભરાઈ જાય છે ત્યારે તે સૂતેલો માણસ “હું” એવો શબ્દ  
 બોલીને, એટલે કે અર્થાવગ્રહરૂપ જ્ઞાનવડે નામ, જાતિઆદિની કલ્પનાથી  
 રહિત જ તે અર્થને જાણે છે, પણ તે એ નથી જાણતો કે આ શબ્દ શો  
 છે ? ત્યારબાદ જ્યારે તે ઈહાજ્ઞાનમાં પ્રવિષ્ટ થાય છે ત્યારે જાણી જાય છે કે  
 “આ અમુક શબ્દ જ છે”. ત્યારબાદ વિશેષ નિર્ણય કરવાને માટે તે અવાયમાં  
 પ્રવિષ્ટ થાય છે ત્યારે તે તેનાથી પરિચિત થઈ જાય છે. ત્યારબાદ તે જ્યારે ધારણાનો

ગતો ભવતિ=નિશ્ચયેન જ્ઞાતો ભવતિ-નિર્ણયાત્મકજ્ઞાનવિષયો ભવતીત્યર્થઃ । તતો ધારણાં પ્રવિશતિ । સા ચ ધારણા વાસનારૂપા દ્રષ્ટવ્યા । તતઃ=ધારણાયાં પ્રવેશાત્ સંખ્યેયં વા અસંખ્યેયં વા કાલં હૃદિ ધારયતિ । તત્ર સંખ્યેયવર્ષાયુષ્કઃ સંખ્યેયકાલમ્ , અસંખ્યેયવર્ષાયુષ્કસ્તુ અસંખ્યેયં કાલમિત્યર્થઃ ॥

સુપ્તં પુરુષમઙ્ગીકૃત્ય પૂર્વોક્તઃ સર્વોઽપિ પ્રકારઃ સંઘટ્ટે, જાગ્રતસ્તુ કથમવગ્રહાદીનાં ક્રમઃ સંઘટ્ટેત, જાગ્રદવસ્થાયાં શબ્દશ્રવણસમનન્તરમેવાવગ્રહેદાવ્યતિરેકેનાવાયજ્ઞાનમુપજાયતે, તથૈવ પ્રતિપ્રાણિ સંવેદનાદિત્યાશઙ્કાયા નિવારણાર્થં મલ્લકદૃષ્ટાન્તે-નૈવ પઙ્કવિધાનર્થાવગ્રહાદીન્ વર્ણયતિ—

ધારણા કા વિષય હોતા હૈ તવ નિશ્ચય સે વહ ઉસકો હસ તરહ કે હૃદય મેં ધારણ કર લેતા હૈ કિ જિસસે વહ સંખ્યાતકાલ અથવા અસંખ્યાત કાલતક વિસ્મૃત નહીં હોતા હૈ । હસ સૂત્ર કા તાત્પર્ય હસ પ્રકાર હૈ—

જિસ પ્રકાર કુંભાર કે આવા મેં પકા હુઆ ઉસી સમય કા નયા સકોરા એક વ્યક્તિ અપને ઘર પર લાવે ઓર ઉસમેં એક વૂંદ પાની કી ઢાલે તો સકોરા ઉસી વસ્ત ઉસકો સોચ લેગા, યહાં તક કિ ઉસકા વહાં નામોનિશાં તક નહીં રહેગા । હસી તરહ આગે બી એક ૨ કર ઢાલે ગયે અનેક જલચિન્દુઓં કો વહ સકોરા સોચલેગા, પર અન્તમેં એસા સમય આવેગા કિ જવ વહ જલચિન્દુઓં કો સોચનેમેં અસમર્થ બન જાયગા । ફિર વહ ઉન્હેં ન સોચકર ઉનસે મીલા હોને લેગેગા । તથા ઉસમેં ઢાલે ગયે જલકળ ઇકઢે હોકર દિશ્વલાઈ દેને લેગેગે । અચ યહાં પર વિચાર કરને કી વાત હૈ કિ શરાવે કી આર્દ્રતા જવ પહિલે-પહિલ

વિષય થાય છે ત્યારે નિશ્ચયથી તે તેને એ પ્રકારે હૃદયમાં ધારણ કરી લે છે કે બેથી તે સંખ્યાત કાળ અથવા અસંખ્યાત કાળ સુધી ભૂલાતો નથી. આ સૂત્રનું તાત્પર્ય આ પ્રમાણે છે.

બે પ્રકારે કુંભારના નિલાડામાં પકાવેલ એજ સમયનું નવું શકેડે એક માણસ પોતાને ઘેર લાવે અને તેમાં પાણીનું ટીપું નાખે તો શકેડે ત્યારે જ તેને શોષી લે છે, એટલે સુધી કે ત્યાં તેનું નામનિશાન પણ રહેશે નહીં. એજરીતે પછીપણ એકે એકે નાખવામાં આવેલ પાણીનાં ટીપાંઓને તે શકેડે શોષી લેશે, પણ છેવટે એવો સમય આવશે કે બ્યારે તે શકેડે પાણીનાં ટીપાંઓને શોષવાને અસમર્થ થશે. ત્યારે તે તેને શોષતાં ભીનું ન થવાં લાગશે. અને તેમા નાખેલાં ટીપાંઓ એકત્ર થઈને દેખાવાં લાગશે. હવે આ જગ્યાએ વિચારવાની વાત એ છે કે શકેડાની આર્દ્રતા બ્યારે પહેલ વહેલી

જ્ઞાત હોને લગતી है तो क्या यह आर्द्रता पहिले-पहिल ही उसमें आई है इसके पूर्वमें वह उसमें जलबिन्दुओं के डालने पर नहीं आई थी ? परन्तु ऐसा नहीं है, जब से उसमें जलबिन्दुओं का डालना प्रारंभ किया गया तब ही से उसमें आर्द्रता का आना प्रारंभ हो गया, परन्तु वह उसमें ज्ञात जो नहीं होती थी उसका कारण उसमें उसका तिरोभाव हो जाना था । जैसे २ जल की मात्रा बढी और सराबेमें पानी को सोखने की शक्ति कम होने लगी, तब कहीं उसमें आर्द्रता स्पष्ट ज्ञात होने लगी । इसी प्रकार जब किसी सुप्त व्यक्ति को पुकारा जाता है तब वह शब्द उसके कानमें लुप्त सा हो जाता है । दो चार बार पुकारने से उसके कानमें जब पौद्गलिक शब्दों की मात्रा काफी रूपमें भर जाती है तब जल-कणों से पहिले-पहिल आर्द्र होने वाले शराबे की तरह उस सुप्त व्यक्ति के कान भी शब्दों से परिपूरित होकर उनको सामान्यरूप से जाननेमें समर्थ हो जाते हैं ।

“ यह क्या है ? ”—यही सामान्यज्ञान है जो शब्द को पहिले-पहिल स्फुटतया जानता है । इस के बाद विशेषज्ञान का क्रम प्रारंभ होता है । इसमें ईहा, अवाय और धारणा का संबंध रहा हुआ है । धारणा से यहां पर उसका भेद रूप वासना का ग्रहण किया गया है । यदि

દેખાવા લાગે છે, ત્યારે જ શું પહેલ વહેલી જ તે તેમાં આવી છે, તેના પહેલાં પાણીના ટીપાં નાખતાં શું તે આવી ન હતી ? પણ એવું નથી, જ્યારથી તેમાં પાણીનાં ટીપાં નાખવાનું શરૂ કર્યું ત્યારથી જ તેમાં આર્દ્રતાનું આવવું શરૂ થયું, પણ તે તેમાં જણાતી ન હતી, તેનું કારણ તેમાં તેનો તિરોભાવ થઈ જતો તે હતું. જેમ જેમ પાણીનું પ્રમાણ વધ્યું, અને શકેરાની પાણી શોષવાની શક્તિ ઘટી, ત્યારે જ તેમાં ભીનાશ સ્પષ્ટરૂપે જણાવા લાગી. એજ રીતે જ્યારે કોઈ ઉંઘતી વ્યક્તિને ઝોલાવવામાં આવે છે ત્યારે તે શબ્દ તેના કાનમાં જાણે હુપ્ત થઈ જાય છે. જે ચાર વાર ઝોલાવવાથી જ્યારે તેના કાનમાં પૌદ્ગલિક શબ્દોની માત્રા પુરતાં પ્રમાણમાં ભરાઈ જાય છે ત્યારે જલકણોથી પહેલ વહેલા ભીનાં થતાં શકેરાની જેમ તે ઉંઘતી વ્યક્તિના કાન પણ શબ્દોથી પરિપૂરિત થઈને તેમને સામાન્યરૂપે જાણવાને સમર્થ થઈ જાય છે.

“ આ શું છે ” એજ સામાન્યજ્ઞાન છે, જે શબ્દને પહેલ વહેલા સ્પષ્ટ રીતે જાણે છે. ત્યાર બાદ વિશેષજ્ઞાનનો ક્રમ શરૂ થાય છે, તેમાં ઈહા, અવાય અને ધારણાનો સંબંધ રહેલ છે. ધારણાથી અહીં તેના લેક્ષ્ય વાસનાનું

મૂલમ્—સે જહાનામણ કેઈ પુરિસે અવ્વત્તં સદં સુણિજ્ઞા, તેણં સદોત્તિ ઉગ્ગહિણ, નો ચેવ ણં જાણઈ કે વેસ સદાઈ । તઓ ઈહં પવિસઈ । તઓ જાણઈ અમુગે એસ સદે । તઓ અવાયં પવિસઈ । તઓ સે ઉવગયં હવઈ । તઓ ધારણં પવિસઈ । તઓ ણં ધારેઈ—સંખેજ્ઞં વા કાલં, અસંખેજ્ઞં વા કાલં ।

સે જહાનામણ કેઈ પુરિસે અવ્વત્તં રૂવં પાસિજ્ઞા, તેણં રૂવેત્તિ ઉગ્ગહિણ, નો ચેવ ણં જાણઈ, કે વેસ રૂવત્તિ । તઓ

યહ વાસનારૂપ ધારણા સંખ્યાત વર્ષની આયુવાલે કે હૃદયમેં જમ ગઈ હૈ તો उसकी अपेक्षा यह संख्यातकाल की जाननी चाहिये, और यदि यह असंख्यातकाल वाले भोगभूमिया आदि जीवों के हृदयमें जमी है तो इस अपेक्षा यह असंख्यातकाल की जाननी चाहिये ।

યહ પૂર્વોક્ત અવગ્રહાદિક કા સમસ્ત પ્રકાર કા ક્રમ સુપ્ત પુરુષ કી અપેક્ષા લેકર તો ઠીક બેઠ જાતા હૈ, પરન્તુ જાગ્રત વ્યક્તિયોં મેં વહ અવગ્રહાદિક કા ક્રમ કિસ પ્રકાર ઘટિત હો સકતા હૈ ? કારણ—વહાં તો શબ્દશ્રવણ કે 'અનન્તર' હી અવગ્રહ ઈહા કો છોડકર અવાયજ્ઞાન હો જાતા હૈ । યહ વાત હરેક પ્રાણી જાનતા હૈ । ઈસ આશંકા કી નિવૃત્તિ કે લિયે સૂત્રકાર મલ્લક કે દૃષ્ટાન્ત સે હી છહ પ્રકાર કે અવગ્રહ આદિ કા પ્રદર્શન કરતે હૈ—‘સે જહાનામણ૦’ ઇત્યાદિ ।

અહણુ કરાયુ છે. જો આ વાસનારૂપ ધારણા સંખ્યાત વર્ષની આયુવાળાનાં હૃદયમાં જામી ગઈ હોય તો તેની અપેક્ષાએ તે સંખ્યાતકાળની જાણવી જોઈએ, અને જો તે અસંખ્યાતકાળવાળા ભોગભૂમિયા આદિ જીવોનાં હૃદયમાં જામી હોય તો તે અપેક્ષાએ તે અસંખ્યાતકાળની જાણવી જોઈએ.

આ પૂર્વોક્ત અવગ્રહાદિકના સમસ્ત પ્રકારનો ક્રમ સુપ્ત પુરુષની અપેક્ષાએ તો ખરાબર બંધ બેસતો આવે છે પણ જાગ્રત પુરુષોમાં આ અવગ્રહાદિકનો ક્રમ કેવી રીતે ઘટાવી શકાય ? કારણ કે ત્યાં તો શબ્દશ્રવણ પછી જ અવગ્રહ ધડાને છોડીને અવાયજ્ઞાન થઈ જાય છે. આ વાત હરેક પ્રાણી જાણે છે. આ અશંકાનાં નિવારણ માટે સૂત્રકાર શકોરાનાં દૃષ્ટાંતથી જ છ પ્રકારના અવગ્રહ આદિનું પ્રદર્શન કરે છે.—“સે જહાનામણ૦” ઇત્યાદિ.

ईहं पविसइ । तओ जाणइ-अमुगे एस रूवे । तओ अवायं पविसइ । तओ से उवगयं हवइ । तओ धारणं पविसइ । तओ णं धारेइ-संखेज्जं वा कालं, असंखेज्जं वा कालं ।

से जहानामए केइ पुरिसे अव्वत्तं गंधं अग्घाइज्जा, तेणं गंधंति उग्गहिए, नो चेव णं जाणइ-के वेस गंधेत्ति ? । तओ ईहं पविसइ । तओ जाणइ-अमुगे एस गंधे । तओ अवायं पविसइ । तओ से उवगयं हवइ । तओ धारणं पविसइ । तओ णं धारेइ-संखेज्जं वा कालं, असंखेज्जं वा कालं ।

से जहानामए केइ पुरिसे अव्वत्तं रसं आसाइज्जा, तेणं रसोत्ति उग्गहिए, नो चेव णं जाणइ के वेस रसेत्ति ? । तओ ईहं पविसइ । तओ जाणइ-अमुगे एस रसे । तओ अवायं पविसइ । तओ से उवगयं हवइ । तओ धारणं पविसइ । तओ णं धारेइ-संखेज्जं वा कालं असंखेज्जं वा कालं ।

से जहानामए केइ पुरिसे अव्वत्तं फासं पडिसंवेइज्जा, तेणं फासेत्ति उग्गहिए, नो चेव णं जाणइ-के वेस फासओत्ति ? । तओ ईहं पविसइ । तओ जाणइ-अमुगे एस फासे । तओ अवायं पविसइ । तओ से उवगयं हवइ । तओ धारणं पविसइ । तओ णं धारेइ-संखेज्जं वा कालं असंखेज्जं वा कालं ।

से जहानामए केइ पुरिसे अव्वत्तं सुमिणं पासिज्जा, तेणं सुमिणोत्ति उग्गहिए, नो चेव णं जाणइ-के वेस सुमिणेत्ति ? ।



तओ ईहं पविसइ । तओ जाणइ—अमुगे एस सुमिणे । तओ  
अवायं पविसइ । तओ से उवगयं हवइ । तओ धारणं पविसइ ।  
तओ णं धारेइ—संखेज्जं वा कालं असंखेज्जं वा कालं । से तं  
मल्लगदिट्ठेणं ॥ सू० ३५ ॥

छाया—स यथानामकः कश्चित् पुरुषोऽव्यक्तं शब्दं शृणुयात्, तेन शब्द  
इत्यवगृहीतम्, नो चैव खलु जानाति—को वैष शब्द इति? । तत ईहां प्रविशति । ततो  
जानाति—अमुक एष शब्दः । ततोऽवायं प्रविशति । ततः स उपगतो भवति । ततो  
धारणां प्रविशति । ततः खलु धारयति—संख्येयं वा कालम्, असंख्येयं वा कालम् ।

स यथानामकः कश्चित् पुरुषोऽव्यक्तं रूपं पश्येत्, तेन रूपमित्यवगृहीतम्,  
नो खलु चैव जानाति—किं वा एतद् रूपमिति । तत ईहां प्रविशति । ततो जानाति—अमु-  
कमेतद् रूपम् । ततोऽवायं प्रविशति । ततस्तदुपगतं भवति । ततो धारणां प्रविशति ।  
ततः खलु धारयति—संख्येयं वा कालम् असंख्येयं वा कालम् ।

स यथानामकः कश्चित् पुरुषोऽव्यक्तं गन्धमाजिघ्रेत्, तेन गन्ध इत्यवगृहीतम्,  
नो चैव खलु जानाति—को वैष गन्ध इति? । तत ईहां प्रविशति । ततो जानाति—अमुक  
एष गन्ध इति । ततोऽवायं प्रविशति, ततः स उपगतो भवति । ततो धारणां प्रवि-  
शति । ततः खलु धारयति—संख्येयं वा कालम् असंख्येयं वा कालम् ।

स यथानामकः कश्चित् पुरुषोऽव्यक्तं रसमास्वादयेत्, तेन रस इत्यवगृहीतम्,  
नो चैव खलु जानाति—को वैष रस इति । तत ईहां प्रविशति । ततो जानाति—अमुक  
एष रसः । ततोऽवायं प्रविशति । ततः स उपगतो भवति । ततो धारणां प्रविशति ।  
ततः खलु धारयति—संख्येयं वा कालम्, असंख्येयं वा कालम् ।

स यथानामकः कश्चित् पुरुषोऽव्यक्तं स्पर्शं प्रतिसंवेदयेत्, तेन स्पर्श इत्यव-  
गृहीतम्, नो चैव खलु जानाति को वैष स्पर्श इति? । तत ईहां प्रविशति । ततो जानाति  
—अमुक एष स्पर्शः । ततोऽवायं प्रविशति । ततः स उपगतो भवति । ततो धारणां  
प्रविशति । ततः खलु धारयति—संख्येयं वा कालम्, असंख्येयं वा कालम् ।

स यथानामकः कश्चित् पुरुषोऽव्यक्तं स्वप्नं पश्येत्, तेन स्वप्न इत्यवगृहीतम्,  
नो चैव खलु जानाति—को वैष स्वप्न इति? । तत ईहां प्रविशति । ततो जानाति—अमुक  
एष स्वप्नः । ततोऽवायं प्रविशति । ततः खलु धारयति—संख्येयं वा कालम् असं-  
ख्येयं वा कालम् । तदेतत् मल्लकदृष्टान्तेन ॥ सू० ३५ ॥

टीका—‘से जहानामए०’ इत्यादि । स यथानामकः कश्चित् पुरुषोऽव्यक्तं शब्दं शृणुयात्, अव्यक्तमित्यनेन नामजात्यादिकल्पनारहितमनिर्देश्यमिति गम्यते, तथा-चार्थावग्रहज्ञानमुक्तम् । अर्थावग्रहश्च श्रोत्रेन्द्रियसम्बन्धी व्यञ्जनावग्रहं विना न भवतीति पूर्वं व्यञ्जनावग्रहो भवतीत्यपि सूचितम् ।

नन्वेवं क्रमो नोपलभ्यते, किंतु प्रथमत एव शब्दस्यावायज्ञानं जायते, इह

जैसे कोई पुरुष जब नाम, जाति आदि की कल्पना से रहित शब्द को सुनता है तब उसे ऐसा सामान्य बोध होता है कि यह शब्द है । इसी बोध का नाम अर्थावग्रह है । इस बोध में उसको ऐसा ज्ञान नहीं होता है कि यह शब्द किस स्वरूप वाला, अथवा किसका है । कारण अर्थावग्रह में सामान्य बोध रहता है, विशेष नहीं । यहां जो शब्द का सामान्य बोध उस सुनने वाले को हुआ है वह श्रोत्रेन्द्रिय-संबंधी अर्थावग्रह है । यह नियम है कि अर्थावग्रह के पहिले व्यञ्जनावग्रह होता ही है, अतः अब श्रोत्रेन्द्रिय-संबंधी अर्थावग्रह हुआ है तो स्वतः सिद्ध हो जाता है कि उसको पहिले व्यञ्जनावग्रह हो चुका है । जब वह आगे जानने की आकांक्षा में प्रविष्ट होता है तो वह शब्दविषयक ईहा-ज्ञान में अपने को पाता है । तब वह यह जानने की तरफ झुकता है कि यह शब्द यह स्वरूपवाला होना चाहिये ।

शंका—जाग्रत अवस्था में पुरुष को ऐसा क्रम तो मालूम पड़ता नहीं है, किन्तु पहिले से ही उसको शब्द का अवायरूपज्ञान हो जाता है ।

जेम डोई पुरुष ज्यारे नाम, जाति आदिनी कल्पनाथी रहित शब्दने सांलणे छे, त्यारे जेवो सामान्य बोध थाय छे के आ शब्द छे. जेज बोधनुं नाम अर्थावग्रह छे. ते बोधमां तेने जेवुं ज्ञान नथी थतुं के आ शब्द कथां स्वरूप-वाणो अथवा डोना छे? कारण के अर्थावग्रहमां सामान्य बोध रहे छे. विशेष नही, ते सांलणनारने जे शब्दने सामान्य बोध थये छे ते श्रोत्रेन्द्रिय संभंधी अर्थावग्रह छे. जे नियम छे के अर्थावग्रहनां पड़ेलां व्यञ्जनावग्रह थाय ज छे; तेथी ज्यारे श्रोत्रेन्द्रियसंभंधी अर्थावग्रह थये छे, त्यारे जे आपोआप सिद्ध थाय छे के तेने पड़ेला व्यञ्जनावग्रह थय गये छे. ज्यारे ते आगण जणुवानी ध्विषां प्रवेश करे छे त्यारे ते शब्दविषयक ईहाज्ञानमां पोताने पाये छे. त्यारे ते जे जणुवा तरङ्ग जुके छे के आ शब्द आ स्वरूपवाणो डोवो जेई जे.

शंका—जाग्रत अवस्थां पुरुषने जेवो क्रम तो जणुतो नथी; पणु पड़े देखी ज तेने शब्दनुं अवायरूप ज्ञान थय जय छे. सूत्रमां शब्दनु “अव्यक्ता”

સૂત્રેऽપિ અવ્યક્તમિતિ વિશેષણં શબ્દસ્ય કૃતમ્, તસ્માદયમર્થો વ્યાખ્યેયઃ—  
અવ્યક્તમ્=અનવધારિતશાહ્વાશાઙ્ગીદિવિશેષં, પુરુષાદિશબ્દસંશયાક્રાન્તં વા શબ્દં  
શૃણુયાદિતિ। इदं च व्याख्यानमुत्तरवाक्यानुकूलम्, तथाहि—‘तेणं सदेत्ति उगगहिण’  
तेन=श्रोत्रा ‘शब्द’ इत्यवगृहीतं=ज्ञातम् इत्यनन्तरमेवोच्यते। किंतु ‘नो चेव णं  
जाणइ केवेस सदाइ’ नो चैव खलु जानाति कोवा एष शब्द इति—एष शब्दः शाह्वः

સૂત્ર મેં જો શબ્દ કા ‘અવ્યક્ત’ એસા વિશેષણ કિયા હૈ, ઉસસે એસા  
અર્થ લભ્ય હોતા હૈ કિ શબ્દ સુનને પર શબ્દ કા તો અવાયજ્ઞાન હી  
હોતા હૈ, કિન્તુ ‘યહ શબ્દ શંખ કા હૈ અથવા સીંગે કા હૈ યા કિસી પુરુષ  
આદિ કા હૈ’ ઇસ રૂપ સે નિશ્ચય નહીં હો સકને કે કારણ વહ અવ્યક્ત  
હૈ। એસા અર્થ કરને પર હી નીચે કે સૂત્રાંશ કે સાથ અર્થસંગતિ બૈઠ  
સકતી હૈ। વહ ઇસ પ્રકાર સે—જવ શ્રોતા શબ્દ કો સુનતા હૈ તો ઉસકો  
યહ નિશ્ચય હો જાતા હૈ કિ યહ શબ્દ હૈ, પરન્તુ વહ યહ નહીં જાનતા  
હૈ કિ યહ શબ્દ કિસકા હૈ? શંખ કા હૈ યા સીંગ કા હૈ? અથવા પુરુષ  
વગૈરહ કા હૈ? જવ ઇસ પ્રકાર સે વિશેષ જાનને કી આકાંક્ષા હોતી હૈ  
તો વહ ઈહાજ્ઞાનમેં પ્રવેશ કરતા હૈ। તો ફિર વહ યહ જાન લેતા હૈ કિ  
વહ શબ્દ અમુક કા હૈ।—ઇત્યાદિરૂપ સે વ્યાખ્યાન કરને પર હી અર્થ કી  
સુસંગતિ બૈઠતી હૈ?। શંકાકાર કી ઇસ શંકા કા તાત્પર્ય ઇસ પ્રકાર હૈ—  
શંકાકાર જાગ્રત અવસ્થામેં શબ્દ કા શ્રવણ હોને પર કેવલ ઉસકા

એવું જે વિશેષણ લગાડેલ છે, તેનાથી એવો અર્થ પ્રાપ્ત થાય છે, કે શબ્દ  
સાંભળતાં શબ્દનું તે અવાયજ્ઞાન જ થાય છે. પણ “આ શબ્દ શંખનો છે  
અથવા શિંગડોનો છે કે કોઈ પુરુષ આદિનો છે” તે રૂપે નિશ્ચય નહીં થઈ  
શકવાને કારણે તે અવ્યક્ત છે. એવો અર્થ કરતા જ નીચેના સૂત્રાંશની સાથે  
સુસંગતતા આવી શકશે. તે આ પ્રકારે—ન્યારે શ્રોતા શબ્દ સાંભળે છે ત્યારે  
તેને એ નિશ્ચય થઈ જાય છે કે આ શબ્દ છે, પણ તે એ નથી જાણતો કે  
આ શબ્દ કોનો છે? શંખનો છે કે શિંગડોનો છે? અથવા પુરુષ વગેરેનો છે?  
ન્યારે આ પ્રકારે વિશેષ જાણવાની આકાંક્ષા થાય છે, ત્યારે તે ઈહાજ્ઞાનમાં  
પ્રવેશ કરે છે. ત્યારપછી તે એ જાણી લે છે કે આ શબ્દ અમુકનો છે. આ  
પ્રકારે સમજાવવાથી જ અર્થની સુસંગતતા ઘટાવી શકાય છે. શંકા કરનારની  
આ શંકાનું તાત્પર્ય આ પ્રમાણે છે—શંકા કરનાર જાગૃત અવસ્થામાં શબ્દનું  
શ્રવણ થતાં કેવળ તેનું અવાયજ્ઞાન જ માને છે, અવગ્રહરૂપ જ્ઞાન નહીં, તે કારણે

શાર્દૂલો વા, પુરુષાદિસમુત્થો વા ઇતિ । તથા—‘તત્ત્વં ઇહાં પ્રવિશતિ’ ઇત્યાદ્યપિ સર્વં સમન્વિતં ભવતીતિ ચેત્,

તદયુક્તમ્—ઇહ હિ યત્ કિમપિ વસ્તુ નિશ્ચીયતે, તત્સર્વમીદાપૂર્વકમ્, ઇદા-વર્જિતસ્ય સમ્યગ્નિશ્ચિતત્વાયોગાત્ । ચક્ષુષિ ધૂમસંનિપાતે સતિ ધૂમાદર્શને પ્રથમતો યાવત્—‘કિમયં ધૂમઃ, કિં વા મશકવિશેષઃ?’ ઇતિ વિમૃશ્ય, ધૂમગતકઠક્ષરણ-કાલીકરણ-સોષ્મતાદિધર્મદર્શનાત્ સમ્યગ્ ધૂમં ધૂમત્વેન ન વિનિશ્ચિનોતિ, તાવત્ સ ધૂમો નિશ્ચિતો ન ભવતિ, સંશયો નિવૃત્ત્યા તસ્ય સમ્યગ્નિશ્ચિતત્વાયોગાત્ । તસ્મા-

અવાયજ્ઞાન હી માનતા હૈ, અવગ્રહજ્ઞાન નહીં; इसीलिये शंकाकारने इस-सूत्र के अर्थ को शब्द का अवायज्ज्ञान होने पर बादमें ‘यह शब्द किस का है’ इस विषय की जिज्ञासामें ईहा आदि के संबंध में बैठाया है ।

उत्तर—‘शंकाकार का ऐसा कहना’ उचित नहीं है, कारण जब भी जिस किसी भी वस्तु का निश्चय होता है तो वह निश्चय ईहाज्ञान-पूर्वक ही होता है, ऐसा नियम है । विना ईहाज्ञान हुए वस्तु का यथार्थ निश्चय नहीं हो सकता । देखो आँखें जब धुँआ से रूँध जाती हैं तब उस समय धुँआ दिखलाई नहीं पड़ता है, तब धुँआ से रूँधी हुई आँखोंवाला वह व्यक्ति इस सोच-विचारमें पड़ जाता है कि क्या यह धुँआ है अथवा कोई मच्छर विशेष है? इस प्रकार संदेहशील विचार के बाद जब तक वह धुँए से होने वाले कण्ठक्षरण, कालीकरण तथा सोष्मता आदि धर्मों का अनुभव नहीं कर लेता है तबतक वह धूम का धूमरूप से निश्चय नहीं करता है, कारण अभीतक उसका उस विषयमें

શંકા કરનારે આ સૂત્રના અર્થને શબ્દનું અવાયજ્ઞાન થયાં પછી “આ શબ્દ કોનો છે” તે વિષેની જિજ્ઞાસામાં ઈહા આદિના સંબંધમાં ઘટાવ્યો છે.

ઉત્તર—શંકાકરનારનું એમ કહેવું તે ઉચિત નથી, કારણ કે જ્યારે પણ જે કોઈ પણ વસ્તુનો નિશ્ચય થાય છે, ત્યારે તે ઈહાજ્ઞાનપૂર્વક જ થાય છે, એવો નિયમ છે. ઈહાજ્ઞાન થયાં વિના વસ્તુનો યથાર્થ નિશ્ચય થઈ શકતો નથી. જુવો આંખો જ્યારે ધુમાડાથી રૂંધાઈ જાય છે ત્યારે ધુમાડાથી રૂંધાયેલ આંખોવાળી તે વ્યક્તિ એવા વિચારમાં પડી જાય છે કે શું આ ધુમાડો છે કે કોઈ મચ્છરવિશેષ છે? આ રીતે સંદેહશીલ વિચાર પછી જ્યાં સુધી તે ધુમાડા વડે થતા કંઠક્ષરણ, કાલીકરણ, તથા સોષ્મતા આદિ ધર્મોનો અનુભવ કરતો નથી, ત્યાં સુધી તે ધુમાડાનો ધુમાડારૂપે નિર્ણય કરી શકતો નથી. કારણ

દવશ્યં યો વસ્તુવિશેષનિશ્ચયઃ સ ઈહાપૂર્વકઃ । શબ્દોઽયમિતિ ચ નિશ્ચયો રૂપાદિ  
વ્યવચ્છેદાત્ । તતોઽવશ્યમિતઃ પૂર્વમીહયા ભવિતવ્યમ્ । ઈહા ચ પ્રથમતઃ સામાન્ય-  
રૂપેणाવગૃહીતે સતિ ભવતિ, ન ત્વનવગૃહીતે । ન खलु सर्वथा निरालम्बनमीहं  
भवदुपलभ्यते । न चानुपलभ्यमानं प्रतिपत्तुं शक्नुमः, तस्मात् ईहायाः प्राग् अव-  
ग्रहोऽपि नियमेन भवतीति मन्तव्यम् । अवग्रहश्च ‘शब्दोऽय’-मिति ज्ञानात् पूर्वं  
प्रवर्तमानोऽनिर्देश्यसामान्यमात्रग्रहरूप एवोपपद्यते नान्यः । अत एवोक्तं भगवता  
-‘ अव्वत्तं सदं सुणिज्जा ’ इति । स हि परमार्थतઃ શબ્દ એવ, કિંતુ અવ્યક્તમિતિ-

સંશય बना हुआ है । धूमविषयक संशय की निवृत्ति होते ही ‘यह  
धूम है’ ऐसा उसको निश्चय हो जाता है, अतः यह मानना पड़ता है  
कि वस्तु का जो निर्णयज्ञान है वह ईहाज्ञानपूर्वक ही होता है । जब  
श्रोता “यह शब्द है” ऐसा निश्चयज्ञान कर लेता है तो इसका तात्पर्य  
यह है कि उसको यह निश्चय हो चुका है कि ‘यह शब्द ही है, रूपादिक  
नहीं है’ । इस प्रकार रूपादिक के व्यवच्छेद से जब वह शब्द का निश्चय  
कर लेता है तो यह ज्ञान उसको ईहापूर्वक हुआ ही माना जावेगा,  
और यह ईहाज्ञान बिना अवग्रह के होता नहीं है, अतः ईहा के सद-  
भाव से शब्द का अवग्रहरूपज्ञान उसको हुआ है, यह बात भी स्वीकार  
करनी पड़ेगी, क्योंकि ईहाज्ञान का आधार अवग्रहज्ञान होता है । अव-  
ग्रह का विषय सामान्य है, इसलिये “यह शब्द है,” ऐसा जो अवग्रह-  
ज्ञान का विषय शब्द हुआ है वह विशेषज्ञान रूप नहीं है, किन्तु अव्यक्त

કે હજી સુધી તેનો તે વિષે સંશય રહેલોજ છે. ધુમાડા વિષેના સંશયનું નિરા-  
કરણ થતાં જ “આ ધુમાડો છે” એવો તેનો નિર્ણય થઈ જાય છે, તેથી એ  
માનવું પડે છે કે વસ્તુનું જે નિર્ણયજ્ઞાન છે તે ઇહાજ્ઞાનપૂર્વક જ થાય છે. જે  
શ્રોતા “આ શબ્દ છે” એવું નિશ્ચયજ્ઞાન કરી દે છે, તો તેનું તાત્પર્ય એ છે કે  
તેને એ નિશ્ચય થઈ ચુક્યો છે કે “આ શબ્દ જ છે, રૂપાદિક નથી.” આ  
પ્રકારે રૂપાદિકના વ્યવચ્છેદથી બ્યારે તે શબ્દનો નિશ્ચય કરી દે છે, ત્યારે તેનું  
એ જ્ઞાન ઇહાપૂર્વક જ માની શકાશે, અને એ ઇહાજ્ઞાન અવગ્રહ વિના થતું  
નથી, તેથી ઇહાના સદ્ભાવથી તેને શબ્દનું અવગ્રહરૂપ જ્ઞાન થયું છે, એ વાત  
પણ સ્વીકારવી પડશે. કારણ કે ઇહાજ્ઞાનનો આધાર અવગ્રહજ્ઞાન હોય છે.  
અવગ્રહનો વિષય સામાન્ય છે, તે કારણે “આ શબ્દ છે” એવાં જે અવગ્રહ-  
જ્ઞાનનો વિષય શબ્દ થયો છે તે વિશેષજ્ઞાનરૂપ નથી; પણ અવ્યક્ત નામજાત્યા-

વ્યક્તં ન શૃણોતિ, કિંતુ સામાન્યમાત્રમનિર્દેશ્યં ગૃહ્ણતીત્યર્થઃ । યદપિ ચોક્તમ્-તેન શ્રોત્રા શબ્દ इत्यवगृहीतमिति, तदिदमवग्रहप्रतिपादनार्थमुक्तम्, न तु तेन श्रोत्रा 'शब्दः' इति निश्चयेन ज्ञातम्, अत एव तस्य विवरणं कुर्वन् भगवानाह—'नो चेव णं' इत्यादि । नो चैव जानाति-क एष शब्दः ? इति-शब्दतया तमर्थं न जाना-तीत्यर्थः, अर्थावग्रहस्य अनिर्देश्यसामान्यमात्रप्रतिभासकत्वात् । अर्थावग्रहश्च श्रोत्रे-न्द्रियघ्राणेन्द्रियादीनां व्यञ्जनावग्रहपूर्वक इति पूर्वं व्यञ्जनावग्रहोऽपि द्रष्टव्यः । तदेवं

નામજાત્યાદિક સે અનિર્દેશ્ય માત્ર સામાન્યરૂપ હી હૈ । યહી વાત સૂત્ર-કારને “ અવ્વત્તં સદ્દં સુણિજ્જા ” ઇસ સૂત્રાંશ સે પ્રકટ કી હૈ । શ્રોતા કે કાનમેં પડતે હી વહ યહ જાન લેતા હૈ કિ ‘ યહ પરમાર્થતઃ શબ્દ હી હૈ કિન્તુ અવ્યક્ત હૈ ’ વ્યક્તરૂપ-વિશેષરૂપ-સે વહ ઉસે ગ્રહણ નહીં કરતા હૈ-માત્ર સામાન્યરૂપ સે હી વહ ઉસે જાનતા હૈ । સૂત્રકારને જો એસા કહા હૈ કિ ઉસ શ્રોતા ને ‘ યહ શબ્દ હૈ ’ એસા જો જાના હૈ સો ઉસકા તાત્પર્ય યહી હૈ કિ ઉસને ઉસકો અવગ્રહજ્ઞાન કે દ્વારા હી જાના હૈ । ઇસ તરહ સૂત્રકાર કા યહ કથન અવગ્રહ કે પ્રતિપાદન નિમિત્ત જાનના ચાહિયે । ઇસકા તાત્પર્ય યહ નહીં હૈ કિ ઉસ શ્રોતા ને શબ્દ કા નિશ્ચય કર લિયા હૈ । ઇસી વાત કા વિવરણ કરતે હુણ સૂત્રકાર આગે કહ રહે હૈ-કિ “ નો ચેવ ણં ” ઇત્યાદિ । ‘ યહ શબ્દ કિસકા હૈ ’ અથવા ‘ કિસ સ્વરૂપ વાલા હૈ ’ યહ વાત ઉસ સમય શ્રોતા નહીં જાનતા હૈ । અવગ્રહ દો પ્રકાર કા હૈ-(૧) વ્યંજનાવગ્રહ (૨) અર્થાવગ્રહ । વ્યંજનાવગ્રહ કી હી

દિક્ષી અનિર્દેશ્ય માત્ર સામાન્યરૂપ જ છે. એજ વાત સૂત્રકારે “ અવ્વત્તં સદ્દં સુણિજ્જા ” આ સૂત્રાંશથી પ્રગટ કરેલ છે. શ્રોતાનાકાને પડતા જ તે એ જાણી લે છે કે “ આ પરમાર્થતઃ શબ્દ જ છે પણ અવ્યક્ત છે ” વ્યક્તરૂપ વિશેષરૂપે તે તેને ગ્રહણ કરતો નથી. માત્ર સામાન્યરૂપે જ તે તેને જાણે છે. સૂત્રકારે જે એમ કહ્યું કે શ્રોતાએ “ આ શબ્દ છે ” એવું જે જાણ્યું છે, તેનું તાત્પર્ય એજ છે કે તેણે તેને અવગ્રહજ્ઞાન દ્વારા જ જાણ્યો છે આ રીતે સૂત્રકારનું આ કથન અવગ્રહના પ્રતિપાદન નિમિત્ત જાણવું જોઈએ. તેનું તાત્પર્ય એ નથી કે શ્રોતાએ શબ્દનો નિશ્ચય કરી લીધો છે. એજ વાતનું વિવરણ કરતાં સૂત્રકાર આગળ કહે છે કે-“ નો ચેવ ણં ” ઇત્યાદિ. “ આ શબ્દ કોનો છે ” અથવા “ કયા સ્વરૂપવાળો છે ” આ વાત તે સમયે શ્રોતા જાણતો નથી. અવ-ગ્રહ બે પ્રકારનો છે-(૧) વ્યંજનાવગ્રહ, (૨) અર્થાવગ્રહ વ્યંજનાવગ્રહની જ પુષ્ટ-પર્યાય અર્થાવગ્રહ છે, આ વાત હમણાં જ બતાવાઈ ગઈ છે. અર્થાવગ્રહનો



સર્વત્રાપિ અવગ્રહેહાપૂર્વમવાયજ્ઞાનમુત્પદ્યતે, કેવલમભ્યાસદશામાપન્નસ્ય શીઘ્રતરમવ-  
ગ્રહાદયઃ પ્રવર્તન્તે ઇતિ કાલસૌક્ષ્મ્યાત્ તે સ્પષ્ટં ન સંવેદ્યન્તે। યથા ઉત્પલપત્રશત-  
ભેદને કાલભેદો દુર્લક્ષ્યસ્તથાઽવગ્રહેહાકાલસ્ય દુર્લક્ષ્યતયા સુસ્પષ્ટબોધો ન ભવતિ।

પુષ્ટપર્યાય અર્થાવગ્રહ હૈ, યહ વાત અમી વતલાઈ હી જા ચુકી હૈ। અર્થા-  
વગ્રહ કા વિષય માત્ર સામાન્ય હૈ ઓર યહ શ્રોત્રેન્દ્રિય જન્ય અર્થાવગ્રહ  
અથવા ઘ્રાણેન્દ્રિય આદિ જન્ય અર્થાવગ્રહ વ્યંજનાવગ્રહપૂર્વક હી હોતા હૈ।  
હસલિયે યહ વાત સર્વત્ર પદાર્થ કા જ્ઞાન હોતે સમય સ્વીકાર કરની  
ચાહિયે કિ અવાયજ્ઞાન અવગ્રહ તથા ઈહાપૂર્વક હી હોતા હૈ, વિના હનકે  
નહીં। હાં ! જો અભ્યાસદશાસંપન્ન વ્યક્તિ હૈં હનમૈં યે અવગ્રહાદિક શીઘ્રતર  
પ્રવર્તિત હોતે રહતે હૈં, અતઃ કાલ કી સૂક્ષ્મતા સે સ્પષ્ટરૂપ સે અનુભવમૈં નહીં  
આતે, ઓર એસા જ્ઞાન હોતા હૈ કિ અવગ્રહ ઈહા કે વિના મી અવાયજ્ઞાન હો  
ગયા હૈ। કમલ કે સૌ પતૌં કો એક પર એક રાખકર જબ કોઈ વ્યક્તિ  
હનૈં સુઈ સે છેદતા હૈ તો હસે એસા હી માલૂમ હોતા હૈ કિ યે સબ પત્તે  
એક હી સાથ છિદ ગયે હૈં, પરન્તુ યે સબ પત્તે એક સાથ નહીં છિદે હૈં,  
ક્રમશઃ હી છિદે હૈં, પરન્તુ કાલ કી સૂક્ષ્મતા એક સાથ છિદે હી જ્ઞાત હોતે  
હૈં। હસી તરહ અભ્યાસદશામૈં અવગ્રહ આદિ કા કાલ અતિસૂક્ષ્મ હોને  
સે દુર્લક્ષ્ય હોતા હૈ, અતઃ વહાં હનકા સમયભેદ અનુભવમૈં નહીં  
આતા હૈ।

વિષય માત્ર સામાન્ય છે, અને આ શ્રોત્રેન્દ્રિયજન્ય અર્થાવગ્રહ, અથવા ઘ્રાણેન્દ્રિય  
આદિ જન્ય અર્થાવગ્રહ, વ્યંજનાવગ્રહપૂર્વક જ થાય છે. તે કારણે આ વાત  
સર્વત્ર પદાર્થનું જ્ઞાન થતી વખતે સ્વીકારવી જોઈએ કે અવાયજ્ઞાન, અવગ્રહ  
તથા ઈહાપૂર્વક જ થાય છે, તેમના વિના નહીં. હા, જે અભ્યાસદશાસંપન્ન  
વ્યક્તિઓ છે તેમનામાં અવગ્રહાદિક વધારેઅડપથી પ્રવર્તિત થતાં રહે છે. તેથી  
કાળની સૂક્ષ્મતાથી તેઓ સ્પષ્ટરૂપે અનુભવવામાં આવતા નથી, અને એવું લાગે  
છે કે અવગ્રહ ઈહા વિના પણ અવાયજ્ઞાન થઈ ગયું છે. કમળનાં સો પાનને  
એક ઉપર એક ગોઠવીને જ્યારે કોઈ વ્યક્તિ તેમને સોય વડે છેદે છે, તો તેને  
એમ જ લાગે છે કે એ સઘળાં પાન એકજ સાથે છેદાઈ ગયાં છે. પણ તે બધાં  
પાન એકસાથે છેદાયાં નથી, વારા ફરતી છેદાયાં છે, તોપણ કાળની સૂક્ષ્મ-  
તાને લીધે તેઓ એકસાથે છેદાયાં હોય એવું લાગે છે. એજ રીતે અભ્યાસદશામાં  
અવગ્રહઆદિનો કાળ અતિસૂક્ષ્મ હોવાથી દુર્લક્ષ્ય થાય છે, તેથી ત્યાં તેમનો  
સમયભેદ અનુભવવામાં આવતો નથી.

ननु ईहाऽपि 'किमयं शाङ्खः, किं वा शार्ङ्गः?' इत्येवंरूपतया प्रवर्तते, संश-  
योऽपि चैवमेव, ततः कोऽनयोः प्रतिविशेषः ?

उच्यते—इह यद् ज्ञानं शाङ्खशार्ङ्गादिविशेषान् अनेकान् आलम्बते, न चा-  
सद्भूतं विशेषमपहातुं शक्नोति, किं तु सर्वात्मना शयानमिव वर्तते—कुण्ठीभूतं  
तिष्ठतीत्यर्थः, तदसद्भूतविशेषापर्युदासपरिकुण्ठितं संशयज्ञानमुच्यते । यत्तु ज्ञानं  
सद्भूतार्थविशेषविषये हेतूपपत्तिव्यापारतया सद्भूतार्थविशेषोपादानाभिमुखमसद्भू-  
तविशेषत्यागाभिमुखं च तदीहा । इह यदि वस्तु सुबोधं भवति, विशिष्टश्च मतिज्ञा-

शङ्का—“क्या यह शंख का शब्द है अथवा सींग का शब्द है”  
इसरूप से प्रवर्तित होने वाले ज्ञान को आप ईहा कह रहे हैं तो फिर संश-  
यमें और ईहामें क्या भेद रहेगा, कारण संशयज्ञान भी इसी तरह से  
प्रवर्तित होता है ?।

उत्तर—जो ज्ञान शंख और शार्ङ्ग आदि परस्पर विरुद्ध अनेक  
विशेषों को विषय करता है—उनका परित्याग नहीं करता है; किन्तु उन  
परस्पर विरुद्ध अनेक कोटियोंमें सोया हुआ जैसा रहता है—किसी भी  
विशेष का निश्चय नहीं कर सकता है, ऐसे ज्ञान का नाम संशय है ।  
ऐसा ज्ञान ईहा नहीं है, क्यों कि इस ज्ञानमें सद्भूतार्थविशेषविषयता  
रहती है, कारण यह ज्ञान हेतु आदि के व्यापार से सद्भूतार्थविशेष  
को उपादान करने की तर्फ झुका रहता है, तथा असद्भूतविशेष का  
इसमें परित्याग रहता है । तात्पर्य इसका यह है—संशयज्ञानमें ऐसा  
बोध रहता है कि ‘यह शंख का शब्द है अथवा सींगे का शब्द है’ ।

शङ्का—“शुं “आ शंखनो शब्द छे अथवा शिंगडानो शब्द छे” ओ इपे  
प्रवर्तित थनारां ज्ञानने आप धडा कडो छे, तो पछी संशयमां अने धडाभां  
शे। लेह डशे, कारण के संशयज्ञान पणु ओज रीते प्रवर्तित थाय छे ?

उत्तर—जे ज्ञान शंख अने शिंगडा आदि परस्परविरुद्ध अनेक  
विशेषाने विषय करे छे. तेमनो परित्याग करतुं नथी, पणु ओ परस्परविरुद्ध  
अनेक केटीओमां सुप्त डोय ओम रहे छे—केधपणु विशेषनो निष्पत्ति करी  
शकतुं नथी, ओवां ज्ञाननु नाम संशय छे. ओवुं ज्ञान धडा नथी, कारण के  
आ ज्ञानमां सद्भूतार्थविशेषविषयता रहे छे, कारण के आ ज्ञान डेतु आदिना  
व्यापारथी सद्भूतार्थविशेषने उपादान करवानी तरफ ओकेल रहेछे, तथा अस-  
द्भूतविशेषनो तेमां परित्याग रह्या करे छे. तेनुं तात्पर्य ओ छे के—संशय  
ज्ञानमां ओवो बोध रहे छे के “आ शंखनो शब्द छे के शिंगडानो शब्द छे.”

નાવરણક્ષયોપશમો વર્તતે, તતોऽન્તર્મુહૂર્તકાલેન નિયમાત્ તદ્વસ્તુ નિશ્ચિનોતિ । યદિ તુ વસ્તુ દુર્બોધં ભવતિ, ન ચ તથાવિધો વિશિષ્ટો મતિજ્ઞાનાવરણક્ષયોપશમસ્તત ઈહોપયોગાદચ્યુતઃ પુનરપ્યન્તર્મુહૂર્તકાલમીહતે । એવમીહોપયોગાવિચ્છેદેન પ્રભૂતાન્યન્તર્મુહૂર્તાનિ

इस तरह परस्पर विरुद्ध अनेक कोटियों को अवलंबन करनेवाला संशय ज्ञान होता है तब कि ईहामें ‘यह शंख का शब्द होना चाहिये अथवा सींग का शब्द होना चाहिये’ ऐसा ही एक तर्फ निर्णयाभिमुख बोध रहता है । ‘यह शंख का शब्द होना चाहिये; क्यों कि इसके ही माधुर्य आदि अमुक २ विशेष धर्म पाये जाते हैं, सींग का यह शब्द नहीं होना चाहिये, क्यों कि उसके कर्कशता, कठोरता आदि अमुक २ विशेष धर्म यहां उपलब्ध नहीं हो रहे हैं।’ इस तरह ईहाज्ञानमें विशेषार्थ के निर्णय के सन्मुख हुए तथा असद्भूतविशेष अर्थ के परित्याग की तरफ झुके हुए बोध का उदय रहता है । संशयमें ऐसा नहीं होता । इसलिये ईहाज्ञानमें और संशयज्ञानमें बड़ा अन्तर है । ईहित वस्तु यदि सुबोध होती है, तथा मतिज्ञानावरण कर्म का विशिष्ट क्षयोपशम उस जीव के होता है तो वह वस्तु अन्तर्मुहूर्तकालमें नियमसे निश्चित हो जाती है । यदि वह ईहित वस्तु दुर्ज्ञेय है, तथा ज्ञाता के मतिज्ञानावरणीयकर्म का विशिष्ट क्षयोपशम नहीं है तो वह ज्ञाता ईहारूप उपयोग से अच्युत बना हुआ ही

આ પ્રકારે પરસ્પરવિરુદ્ધ અનેક કોટીઓનું અવલંબન કરનાર સંશયજ્ઞાન હોય છે, ત્યારે ઇહામાં “ આ શંખનો શબ્દ હોવો જોઈએ. અથવા શિંગડાનો શબ્દ હોવો જોઈએ ” એવો એક તરફના નિર્ણય તરફ ઝુકતો બોધ રહ્યા કરે છે. ” આ શંખનોશબ્દ હોવોજોઈએ; કારણ કે તેમાં તેના જ માધુર્ય આદિ અમુક અમુક વિશેષગુણો મળે છે, શિંગડાનો આ શબ્દ ન હોવો જોઈએ, કારણ કે તેના કર્કશતા, કઠોરતા આદિ અમુક અમુક વિશેષગુણ અહીં પ્રાપ્ત થતા નથી. ” આ રીતે ઇહાજ્ઞાનમાં વિશેષાર્થના નિર્ણયનીતરફ અને અસદ્ભૂતવિશેષ અર્થના પરિત્યાગ તરફ ઝુકેલ બોધનો ઉદય રહે છે. સંશયમાં એવું થતું નથી. તે કારણે ઇહાજ્ઞાન અને સંશયજ્ઞાન વચ્ચે મોટો ભેદ છે. ઇહિત વસ્તું બે સુબોધ હોય છે. તથા તે જીવને મતિજ્ઞાનાવરણ કર્મનો વિશિષ્ટ ક્ષયોપશમ થાય છે, તો તે વસ્તુ અન્તર્મુહૂર્તકાળમાં નિયમથી નિશ્ચિત થઈ જાય છે. બે તે ઇહિત વસ્તુ દુર્જ્ઞેય હોય તથા જ્ઞાતાના મતિજ્ઞાનાવરણીયકર્મનો વિશિષ્ટક્ષયોપશમ ન થયો હોય, તો તે જ્ઞાતા ઇહારૂપ ઉપયોગથી અચ્યુત બનીને જ ક્ષરિથી અન્તર્મુ-

યાવદીહતે। તત્ ईहानन्तरं जानाति-‘अमुक एषोऽर्थः शब्दः’ इति-अयमर्थः शब्द एव न तु रूपादिरिति । इदं च ज्ञानमवायरूपम् । ततः=तदा सः=शब्दरूपोऽर्थः उपगतः=ज्ञातो भवति-तदवायज्ञानमात्मनि परिणतं भवतीति भावः । ततो धारणां प्रविशति, इह धारणा कालान्तरेऽप्यविस्मरणरूपा । ततः खलु धारयति-संख्येयं वा कालम्, असंख्येयं वा कालम् ।

चक्षुरिन्द्रियेण यथाऽवग्रहादयो भवन्ति, तथा वर्णयति-‘से जहानामए केइ पुरिसे अव्वत्तं रूवं पासिज्जा०’ इत्यादि । स यथानामकः कश्चित् पुरुषोऽव्यक्तं

પુનઃ અન્તર્મુહૂર્તકાલતક ઉસ વસ્તુ કા ईहाज्ञान का विषयभूत बनता है । इस तरह ईहारूप उपयोग के अविच्छेद से उसके अनेक अन्तर्मुहूर्त ईहा-ज्ञानमें निकल जाते हैं तब यह जानता है कि “अमुक एषोऽर्थः शब्दः” यह शब्द ही है, रूपादिक नहीं हैं। इसके बाद वह अवायज्ञानमें प्रविष्ट होता है, तब उसको वह शब्दरूप अर्थ उपगत-ज्ञात होता है । अवायज्ञान जिस समय आत्मामें परिणत हो जाता है तो वह ज्ञाता उस शब्दरूप अर्थ को हृदयमें धारण करने के लिये धारणारूप ज्ञानमें प्रवेश करता है । धारणा आत्मामें ऐसा संस्कार उत्पन्न कर देती है कि जिससे आत्मा उस वस्तु को कालान्तरमें भी नहीं भूलता है । संख्यातकाल तक अथवा असंख्यात काल तक वह वस्तु अवधारित बनी रहती है ॥

अब चक्षु इन्द्रिय से अवग्रहादिक जिस तरह से होते हैं सूत्रकार वह वर्णन करते हैं—‘से जहानामए०’ इत्यादि ।

હૂર્તકાળસુધી, એ વસ્તુને ઇહાજ્ઞાનના વિષયભૂત બનાવે છે. આરીતે ઇહારૂપ ઉપયોગના અવિચ્છેદથી તેનાં અનેક અન્તર્મુહૂર્ત ઇહાજ્ઞાનમાં વીતી જાય છે, ત્યારે તે જાણે છે કે “અમુક એષોર્થઃ શબ્દઃ” આ શબ્દજ છે રૂપાદિક નથી. ત્યારબાદ તે અવાયજ્ઞાનમાં પ્રવેશ કરે છે. તેને તે શબ્દરૂપ અર્થ ઉપગત-જ્ઞાત થાય છે. અવાયજ્ઞાન જે સમયે આત્મામાં પરિણત થઈ જાય છે, ત્યારે તે જ્ઞાતાવ્યક્તિ તે શબ્દરૂપ અર્થને હૃદયમાં ધારણકરવાને માટે ધારણારૂપ જ્ઞાનમાં પ્રવેશ કરે છે. ધારણા આત્મામાં એવા સંસ્કાર ઉત્પન્ન કરી નાખે છે કે જેથી આત્મા તે વસ્તુને કાળાન્તરે પણ ભૂલતો નથી. સંખ્યાતકાળ સુધી અથવા અસંખ્યાત કાળ સુધી તે વસ્તુ અવધારિત બની રહે છે.

હવે ચક્ષુ ઇન્દ્રિયથી અવગ્રહાદિક કેવી રીતે થાય છે તેનું સૂત્રકાર વર્ણન કરે છે.—“સે જહાનામએ” ઇત્યાદિ.

રૂપં પश्यેત્ । અસ્ય વ્યાખ્યા પ્રાગ્વત્ । નવરમ્-ઇહ વ્યજ્જનાવગ્રહો ન વ્યાખ્યેયઃ,  
ચક્ષુષોઽપ્રાપ્યકારિત્વાત્ । ઘ્રાણેન્દ્રિયાદિષુ તુ વ્યાખ્યેયઃ ।

ઘ્રાણેન્દ્રિયજનિતાનવગ્રહાદીન્ વર્ણયતિ-‘ સે જહાનામૅ ’ ઇત્યાદિ ।  
વ્યાખ્યા પ્રાગ્વત્ ।

રસનેન્દ્રિયજનિતાનવગ્રહાદીન્ વર્ણયતિ-‘ સે જહાનામૅ ’ ઇત્યાદિ । સુગમમ્ ।  
સ્પર્શેન્દ્રિયજનિતાનવગ્રહાદીન્ વર્ણયતિ-‘ સે જહાનામૅ ’ ઇત્યાદિ । સુગમમ્ ।

હસકા અર્થ શ્રોત્રેન્દ્રિયકે વિષયમેં કિયે ગયે અર્થકે સમાન હી હૈ ।  
પરન્તુ યહાં વિશેષતા યહ હૈ કિ શ્રોત્રેન્દ્રિયકે વિષયભૂત પદાર્થમેં શ્રો-  
ત્રેન્દ્રિયજન્ય અર્થાવગ્રહકે પહિલે જૈસા વ્યજ્જનાવગ્રહકા હોના કહા ગયા  
હૈ યહાં વહ વ્યજ્જનાવગ્રહ નહીં હોતા હૈ, હસકા કારણ યહ હૈ કિ યે દોનોં  
ઇન્દ્રિયાં અપ્રાપ્યકારી હૈં । શેષ ઇન્દ્રિયોંકે વિષયભૂત પદાર્થ મેં હી યહ  
વ્યજ્જનાવગ્રહકે પહિલે હોતા હૈ, કારણ યે ચાર ઇન્દ્રિયાં અપ્રાપ્યકારી હૈં,  
શેષ પદોં કા વ્યાખ્યાન શ્રોત્રેન્દ્રિયસમ્બન્ધી સૂત્રમેં રહે હુઅ પદોંકે અનુ-  
સાર જાનના ચાહિયે ।

અવ સૂત્રકાર ઘ્રાણેન્દ્રિયજનિત અવગ્રહાદિકોં કા વર્ણન કરતે હૈં-  
‘ સે જહા નામૅ ’ ઇત્યાદિ । ઇન પદોંકી વ્યાખ્યા બી પૂર્વવત્ જાનની  
ચાહિયે । હસી તરહ રસનેન્દ્રિયજનિત અવગ્રહાદિકોંકા, સ્પર્શેન્દ્રિયજનિત  
અવગ્રહાદિકોંકા, નોઇન્દ્રિયજનિત અવગ્રહાદિકોં કા વર્ણન બી જાનના

આનોઅર્થ શ્રોત્રેન્દ્રિયના વિષયમા કરાયેલ અર્થ સમાનજ છે, પણ અહીં,  
એ વિશેષતા છે કે શ્રોત્રેન્દ્રિયના વિષયભૂતપદાર્થમાં શ્રોત્રેન્દ્રિયજન્ય અર્થાવગ્રહના  
પહેલાં જેવો વ્યંજનાવગ્રહ થવાનું કહ્યું છે, એવો વ્યંજનાવગ્રહ અહીં થતો નથી.  
તેનું કારણ એ છે કે એ બન્ને ઇન્દ્રિયો અપ્રાપ્યકારી છે. શેષ ઇન્દ્રિયોના  
વિષયભૂત પદાર્થમાં જ આ વ્યંજનાવગ્રહ અર્થાવગ્રહના પહેલાં થાય છે, કારણ કે  
ચાર ઇન્દ્રિયો પ્રાપ્યકારી છે. બાકીનાં પદોનુ વ્યાખ્યાન શ્રોત્રેન્દ્રિ વિષેનાં સૂત્રમાં  
રહેલ પદોપમાણેજ સમજવાનુ છે

હવે સૂત્રકાર ઘ્રાણેન્દ્રિય જનિત અવગ્રહાદિકોંનુ વર્ણન કરે છે-“ સે જહા-  
નામૅ ” ઇત્યાદિ. આપદોની વ્યાખ્યા પણ પહેલાની જેમજ સમજવાની છે. એજ  
પ્રમાણે રસનેન્દ્રિય જનિત અવગ્રહાદિકોંનું, સ્પર્શેન્દ્રિયજનિત અવગ્રહાદિકોંનું  
અને નો ઇન્દ્રિયજનિત અવગ્રહાદિકોંનુ વર્ણન પણ સમજી લેવું જોઇએ. નો

નોઈન્દ્રિયજનિતાવગ્રહાદીન્ વર્ણયતિ-‘ સે જહાનામઅં ’ ઇત્યાદિ । સ યથા-  
નામકઃ કશ્ચિત્ પુરુષોઽવ્યક્તં સ્વપ્નં પश्येत् । અવ્યક્તં=સકલવિશેષરહિતમ્ , અનિ-  
ર્દેશ્યમિત્યર્થઃ । તેન સ્વપ્ન ઇત્યવગૃહીતમ્ , સ્વપ્નઃ પરમાર્થતયા યદ્યપિ દૃષ્ટઃ પરન્તુ  
વિશેષરહિતોઽનભિવ્યક્તઃ સામાન્યરૂપ એવ જ્ઞાત ઇત્યર્થઃ । તમેવાર્થમાહ-‘ નો ચેવ  
જાણઈ૦ ’ ઇત્યાદિ । નો ચૈવ જાનાતિ-‘ કો વા એષ સ્વપ્નઃ ’ ઇતિ, સ્વપ્નોઽયમિત્યપિ  
ન નિશ્ચિનોતીત્યર્થઃ । અત એવ પ્રાહ-‘ તઓ ર્હં પવિસઈ ’ ઇત્યાદિ । તત ર્હં  
પ્રવિશતીત્યાદિ । એવં સ્વપ્નમધિકૃત્ય જાગ્રદવસ્થાયાં નોઈન્દ્રિયસ્યાર્થાવગ્રહાદયો-  
બોધ્યાઃ । ર્હાપિ વ્યક્તનાવગ્રહો ન વ્યાખ્યેયઃ, મનસોઽપ્રાપ્યકારિત્વાત્ ।

સંપ્રતિ મલ્લકદૃષ્ટાન્તમુપસંહરન્ પ્રાહ-‘ સે તં મલ્લકદિદૃતેણ ’ ઇતિ । તદે-  
તત્ મલ્લકદૃષ્ટાન્તેનાષ્ટાવિંશતિવિધસ્યાઽઽભિનિવોધકજ્ઞાનસ્ય પ્રરૂપણં કૃતમિત્યર્થઃ ।

ચાહિયે । નોઈન્દ્રિયજનિત અર્થાવગ્રહકે પહિલે વ્યક્તનાવગ્રહ નહીં હોતા હૈ ।  
યહ બાત બતલાઈ જા ચુકી હૈ, ક્યોં કિ મન અપ્રાપ્યકારી હૈ ।

અવ સૂત્રકાર મલ્લકકે દૃષ્ટાન્તકા ઉપસંહાર કરતે હુએ કહતે હૈં કિ  
મલ્લકકે દૃષ્ટાન્તસે અઠાઈસ પ્રકારકે આભિનિવોધિક જ્ઞાનકી યહ પ્રરૂ-  
પણા કી હૈ । તાત્પર્ય ર્હસકા યહ હૈ કિ યદ આભિનિવોધિક જ્ઞાન પાંચ  
ઈન્દ્રિય ઓર છઠ્ઠે મનસે હોતા હૈ । પ્રત્યેક ઈન્દ્રિયસે જ્ઞાત પદાર્થ મેં અવગ્રહ,  
ર્હંહા, અવાચ ઓર ધારણા, યે સબ હોતે હૈં । ર્હસ તરહ અર્થાવગ્રહકી  
અપેક્ષા ચોઈસ ભેદ હોતે હૈં । તથા વ્યક્તનાવગ્રહકી અપેક્ષા ચાર ભેદ  
ઓર હોતે હૈં । ર્હસ તરહ આભિનિવોધિક જ્ઞાન અઠાઈસ પ્રકારકા યહ  
મલ્લકકે દૃષ્ટાન્તસે લેકર વર્ણિત હો ચુકા હૈ ।

ઈન્દ્રિયજનિત અર્થાવગ્રહની પહેલાં વ્યક્તનાવગ્રહ થતો નથી. આ વાત સમજવી  
દેવામાં આવી છે, કારણ કે મન અપ્રાપ્યકારી છે.

હવે સૂત્રકાર મલ્લક (શકેરા)નાં દૃષ્ટાંતનો ઉપસંહાર કરતા કહે છે કે  
મલ્લકનાં દૃષ્ટાંતથી અઠાવીસ પ્રકારના આભિનિવોધિક જ્ઞાનની આ પ્રરૂપણા કરી છે.  
તેનું તાત્પર્ય એ છે કે આ આભિનિવોધિકજ્ઞાન પાંચઈન્દ્રિય અને મનથી  
થાય છે. પ્રત્યેક ઈન્દ્રિયથી જ્ઞાત પદાર્થમાં અવગ્રહ, ઈહા, અવાચ, અને ધારણા  
એ બધું થાય છે. આરીતે અર્થાવગ્રહની અપેક્ષાએ ચોવીસ લેદપડે છે. તથા  
વ્યક્તનાવગ્રહની અપેક્ષાએ બીજા ચારલેદપડે છે આરીતે અઠાવીસપ્રકારના  
આભિનિવોધિકજ્ઞાનની પ્રરૂપણા મલ્લકનું દૃષ્ટાંત લઈને પૂર્ણ થઈ.



एते चावग्रहादयोऽष्टाविंशतिभेदाः प्रत्येकं बह्वादिभिस्तद्भिन्नैश्च द्वादशसंख्य-  
कैर्भेदैर्भिद्यमानाः षट्त्रिंशदधिकशतत्रय (३३६) संख्यका भवन्ति । तथाहि—अवग्र-  
हादयः खलु बहु-बहुविध-क्षिप्रा-ऽनिश्चिता-ऽसंदिग्ध-ध्रुव-भेदेन षड्विधानां  
तद्भिन्नानां च षट्विधानां शब्दाद्यर्थानां ग्राहका भवन्ति । बह्वर्थभिन्नः स्तोकार्थः ।  
बहुविध इत्यस्माद् भिन्नोऽर्थ एकविधः, क्षिप्रमित्यस्माद्भिन्नं चिरमिति । एवं चाव-  
ग्रहो बह्ववगृह्णाति १, अल्पमवगृह्णाति २, बहुविधमवगृह्णाति ३, एकविधमवगृह्णाति  
४, क्षिप्रमवगृह्णाति ५, चिरेणावगृह्णाति ६, अनिश्चितम्—(अनुमानागम्यम्)  
अवगृह्णाति ७, निश्चितम् (अनुमानागम्यम्) अवगृह्णाति ८ । असंदिग्धं (संदेह-  
रहितम्) अवगृह्णाति ९, संदिग्धम्—(संदेहयुक्तम्) अवगृह्णाति १०, ध्रुवमव-  
गृह्णाति ११, अध्रुवमवगृह्णाति १२, तस्मात्-बह्ववग्रहः १, अल्पावग्रहः २, बहुवि-

अब सूत्रकार આભિનિવોધિક જ્ઞાનકે-મતિજ્ઞાનકે-ત્રીસૌછત્તીસ  
( ૩૩૬ ) ભેદ કિસ પ્રકારસે હોતે હૈં યહ વાત પ્રકટ કરતે હૈં—બહુ ૧,  
બહુવિધ ૨, ક્ષિપ્ર ૩, અનિશ્ચિત ૪, અસંદિગ્ધ ૫ ઓર ધ્રુવ ૬, इन भेदों  
સે, તથા इनके उल्टे एक १, एकविध २, अक्षिप्र ३, निश्चित ४, संदिग्ध  
૫ ઓર અધ્રુવ ૬, इन भेदोंसे शब्दादिक पदार्थ बारह बारह प्रकार के  
હોતે હૈં ।

ये बारह बारह प्रकारके शब्दादि पदार्थ श्रोत्रेन्द्रियादि छ से यथा-  
योग्य गृहीत होते हैं । इस लिये बारहको छ से गुणा करने पर बहत्तर  
भेद होते हैं । इन बहत्तरमें भी प्रत्येक अवग्रह, ईहा, अवाय और धार-  
णाके भेदसे चार चार प्रकारका होता है । इस प्रकार सबको जोड़नेसे  
२८८ भेद होते हैं । तथा व्यञ्जनावग्रह चक्षु और मनके विषयोंमें नहीं

હવે સૂત્રકાર આભિનિવોધિકજ્ઞાનના-મતિજ્ઞાનના-ત્રણસો છત્રીસ (૩૩૬)  
ભેદ કઈ રીતે થાય છે એ વાત પ્રગટ કરે છે. (૧) બહુ, (૨) બહુવિધ, (૩) ક્ષિપ્ર,  
(૪) અનિશ્ચિત, (૫) અસંદિગ્ધ, અને (૬) ધ્રુવ. આ ભેદોથી તથા તેના ઉલટા  
(૧) એક, (૨) એકવિધ, (૩) અક્ષિપ્ર. (૪) નિશ્ચિત, (૫) સંદિગ્ધ, (૬) અધ્રુવ.  
એ ભેદોથી શબ્દાદિક પદાર્થ બાર બાર પ્રકારના હોય છે.

એ બાર બાર પ્રકારના શબ્દાદિપદાર્થ શ્રોત્રેન્દ્રિયાદિ છ વડે યથાયોગ્ય  
ગૃહીત થાય છે. તેથી બારને છ વડે ગુણતા બોતેર ભેદ થાય છે. એ બોતેરમાં  
પણ પ્રત્યેક અવગ્રહ, ઈહા, અવાય, અને ધારણના ભેદથી ચાર ચાર પ્રકારના  
હોય છે. આ પ્રકારે બધા મળીને બસો અઠ્ઠાસી (૨૮૮) ભેદ થાય છે. તથા

ધાગ્રહઃ ૩, એકવિધાઽવગ્રહઃ ૪, ક્ષિપ્રાવગ્રહ ૫, ચિરાવગ્રહઃ ૬, અનિશ્રિતાવગ્રહઃ ૭, નિશ્રિતાવગ્રહઃ ૮, અસંદિગ્ધાવગ્રહઃ ૯, સંદિગ્ધાવગ્રહઃ ૧૦, ધ્રુવાવગ્રહઃ ૧૧, અધ્રુવાવગ્રહશ્ચ ૧૨, इत्येवं श्रोत्रावग्रहस्य द्वादशभेदाः, एवं चक्षुरिन्द्रियावग्रहादेरपि द्वादश-द्वादशभेदा बोध्याः । उक्तभेदा मतिज्ञानावरणक्षयोपशमस्योत्कर्षादपकर्षाच्च भवन्तीति बोध्यम् ।

નન્વવગ્રહઃ શાસ્ત્રે એકસામાયિકઃ પ્રોક્તઃ, વહ્વવગ્રહાદેરેકસ્મિન્ સમયે નાસ્તિ સંભવસ્તસ્ય વિશેષગ્રાહકત્વાદિતિ ચેત્,

હોતા હૈ, કેવલ ચાર ઇન્દ્રિયોં કે વિષયોં મેં હી હોતા હૈ । इस लिये वह चार प्रकारका है । उन चार प्रकारों में प्रत्येक क्षिप्रादि भेदसे बारह बारह प्रकारके होते हैं । अतः सब भेदों के जोड़नेसे वह ४८ प्रकारका होता है । पूर्वोक्त २८८ अर्थावग्रहके भेदों में व्यञ्जनावग्रहके ४८ भेदोंको जोड़नेसे ३३६ भेद होते हैं । इस प्रकार आभिनिबोधिक ज्ञान तीनसौछत्तीस ( ३३६ ) भेदवाला होता है । ये भेद मतिज्ञानावरण कर्म के क्षयोपशमकी उत्कर्षता और अपकर्षताको ले कर होते हैं ।

શક્ટા—અવગ્રહકા કાલ શાસ્ત્રમેં એકસમય કહા હૈ । बहु, अवग्रह, बहुविध अवग्रह आदिरूप अवग्रह जो बारह प्रकारका अभी बतलाया गया है वह एक समय प्रमाणवाला कैसे हो सकता है, क्योंकि यह अवग्रह विशेषका ग्राहक होता है ।

વ્યંજનાવગ્રહ ચક્ષુ અને મનનાવિષયમાં થતો નથી. ફક્ત ચાર ઇન્દ્રિયોના વિષયમાં જ થાય છે. તેથી તે ચાર પ્રકારનો છે. તે ચારપ્રકારમાંના દરેક ક્ષિપ્રાદિભેદથી બાર બાર પ્રકારના હોય છે. તેથી બધા ભેદ મળીને તે અઠ-તાળીસ (૪૮) પ્રકારનો થાય છે. પૂર્વોક્ત ૨૮૮ અર્થાવગ્રહનાભેદોમાં વ્યંજનાવગ્રહના ૪૮ ભેદો ઉમેરતા કુલ ૩૩૬ ભેદ થાય છે. આ રીતે આભિનિબોધિક જ્ઞાન ત્રણસો છત્રીસ (૩૩૬) ભેદવાળું હોય છે. એ ભેદ મતિજ્ઞાનવરણ કર્મના ક્ષયોપશમની ઉત્કર્ષતા અને અપકર્ષતાને લીધે થાય છે.

શંકા—અવગ્રહનો કાળ શાસ્ત્રમાં એકસમય કહ્યો છે. બહુ અવગ્રહ, બહુવિધ અવગ્રહ, આદિરૂપ જે બાર પ્રકારના અવગ્રહ હમણા બતાવવામાં આવ્યા છે, તે એકસમયપ્રમાણવાળા કેવી રીતે હોઈ શકે છે, કારણ કે આ અવગ્રહવિશેષનો ગ્રાહક થાય છે?

ઉચ્યતે—સત્યમેવૈતત્, કિન્તુ અવગ્રહો દ્વિધા-નૈશ્વયિકો વ્યાવહારિકશ્ચ । તત્ર નૈશ્વયિકો નામ સામાન્યપરિચ્છેદઃ, સ ચૈકસામાયિકઃ પરમયોગિનાં સ્ફુટગમ્ય ઇતિ । તતો નૈશ્વયિકાદનન્તરમીદા પ્રવર્તતે । તદનન્તરમવાયો ભવતિ । અયં ચાવાયઃ—અવગ્રહ ઇત્યુપચર્યતે । ‘શબ્દોડયમ્’ ઇત્યવાયાનન્તરં પુનરીદા પ્રવર્તતે—‘શાક્ષોડયં શબ્દઃ, કિમુત શાર્દ્ધઃ ?’ ઇતિ । તદનન્તરં ‘શાક્ષ એવાયં શબ્દઃ’ ઇતિ શબ્દવિશેષ-વિષયકોડવાયો ભવતિ । તદપેક્ષયા શબ્દોડયમિત્યસ્ય સામાન્યવિષયત્વાત્ । અયમપિ

ઉત્તર—શક્ષા—ઠીક હૈ, કિન્તુ વિચાર કરનેસે સમાધાન મિલ જાતા હૈ । વહ ઇસ પ્રકાર હૈ—અવગ્રહ દો પ્રકાર કા કહા ગયા હૈ (૧) નૈશ્વયિક, (૨) વ્યાવહારિક । નૈશ્વયિક અવગ્રહકા હી કાલ એક સમયકા હૈ, ઇસકા વિષય સામાન્ય હૈ, ઓર યહ પરમ યોગિજ્ઞાન ગમ્ય હૈ । ઇસ નૈશ્વયિક અવગ્રહકે વાદ ઈદા, ઓર ઈદાકે વાદ અવાય પ્રવર્તિત હોતા હૈ । યહ જો અવાયજ્ઞાન હૈ વહ ઉપચારસે અવગ્રહરૂપ માન લિયા જાતા હૈ, ક્યોં કિ ઇસકે વાદ અન્યાન્ય વિશેષોં કી જિજ્ઞાસા હોતી હૈ । જબ “યહ શબ્દ હૈ” ઇસ પ્રકાર કા અવાયજ્ઞાન હો જાતા હૈ તબ યહ જિજ્ઞાસા હોતી હૈ કિ—“યહ શબ્દ કિસ કા હૈ—ક્યા શંખ કા હૈ અથવા સીંગે કા હૈ ? શંખ કા હોના ચાહિયે” ઇસ પ્રકાર નિર્ણયાભિમુખ જો બોધ હોતા હૈ વહ ઈદા હૈ । ઇસ ઈદા કે વાદ અવાય હોતા હૈ કિ “યહ શબ્દ શંખ કા હી હૈ ।” ઇસ પ્રકાર જબ યહ અવાયજ્ઞાન શબ્દ વિશેષ કો વિષય

ઉત્તર—શંકા બરાબર છે, પણ વિચારકરવાથી તેનું સમાધાન મળી જાય છે. તે આ પ્રકારે છે—અવગ્રહ બે પ્રકારના બતાવ્યા છે (૧) નૈશ્વયિક, (૨) વ્યાવહારિક. નૈશ્વયિક અવગ્રહનો જ કાળ એકસમયનો છે, તેનો વિષય સામાન્ય છે, અને તે પરમયોગિજ્ઞાનગમ્ય છે. આ નૈશ્વયિક અવગ્રહની પછી ધડા, અને ધડા પછી અવાય પ્રવર્તિત થાય છે. આ જે અવાયજ્ઞાન છે તે ઔપચારિક રીતે અવગ્રહરૂપ માની લેવાય છે, કારણ કે તેના પછી અન્યાન્ય વિશેષોની જિજ્ઞાસા થાય છે.

જ્યારે “આ શબ્દ છે” આ પ્રકારનું અવાયજ્ઞાન થાય છે ત્યારે એ જિજ્ઞાસા થાય છે કે “આ શબ્દ કોનો છે ? શું શંખનો છે અથવા શ્રૃંગનો છે ?” શંખનો હોવો જોઈએ” આ પ્રમાણે નિર્ણય તરફ ઢળતો જે બોધ થાય છે તે ધડા છે. આ ધડા પછી અવાય થાય છે કે “આ શબ્દ શંખનો જ છે” આ પ્રકારે જે આ અવાયજ્ઞાન શબ્દવિશેષને વિષય કરનાર હોય છે

આવાયઃ પુનરવગ્રહ इत्युपचर्यते । उत्तरोत्तरवर्तिनीमीहामवायं चाश्रित्य पूर्वपूर्वोऽवायः सामान्यગ્રાહકો ભવતીત્યતસ્તત્ર તત્રાવગ્રહત્વોપચારઃ । યદા તુ-અપરં વિશેષં નાકા-  
ક્ષતિ, તદાઽવાય એવ ભવતિ, ન તત્રોપચારઃ, તસ્યાવાયસ્ય સામાન્યરૂપત્વાભાવાત્ ।  
તસ્માદ્ બહ્વગ્રહાદિ રૌપચારિકો વિશેષસામાન્યાવગ્રહરૂપોઽવગ્રહઃ, ન ત્વેકસમયવર્તી  
નૈશ્ચયિકોઽવગ્રહ इति स्थितम् ।

કરને વાલા હોતા હૈ તો હસ અપેક્ષા “શબ્દોઽયમ્” યહ બોધ સામાન્ય-  
વિષયક માના જાતા હૈ । સામાન્ય વિષય કરનેવાલા અવગ્રહ હોતા હૈ,  
અતઃ હસ અવાય કો ઉપચાર સે અવગ્રહ માન લિયા હૈ । તાત્પર્ય હસકા  
યહ હૈ જો પહિલે પહિલ સામાન્યમાત્ર કો વિષય કરતા હૈ વહ નૈશ્ચયિક  
અવગ્રહ હૈ । તથા જિસ વિશેષગ્રાહી અવાયજ્ઞાન કે બાદ અન્યાન્ય વિશેષો  
કી જિજ્ઞાસા ઓર અવાય હોતે રહતે હૈં વે સામાન્યવિશેષગ્રાહી અવાય-  
જ્ઞાન વ્યાવહારિક અર્થાવગ્રહ હૈં । જિસકે બાદ અન્યવિશેષો કી જિજ્ઞાસા  
ન હો વહ અવાયજ્ઞાન વ્યવહારિક, અર્થાવગ્રહ નહીં માના ગયા હૈ । અન્ય  
સમી અવાયજ્ઞાન જો અપને બાદ નયે નયે વિશેષો કી જિજ્ઞાસા ઉત્પન્ન  
કરતે હૈં વે વ્યાવહારિક અર્થાવગ્રહ હૈં । યહી બાત ટીકાકાર ને “ઉત્તરો-  
ત્તરવર્તિનીમીહામવાયં ચાશ્રિત્યપૂર્વપૂર્વોઽવાયઃ સામાન્ય ગ્રાહકો ભવતીત્ય-  
તસ્તત્ર તત્રાવગ્રહત્વોપચારઃ । યદા તુ અપરં વિશેષં નાકાક્ષતિતદાઅવાય  
એવ ભવતિ ન તત્રોપચારઃ, તસ્ય અવાયસ્ય સામાન્યરૂપત્વાભાવાત્ । તસ્માત્  
બહ્વગ્રહાદિ રૌપચારિકો વિશેષસામાન્યાવગ્રહરૂપોઽવગ્રહઃ, નત્વેક સમય-

તો એ અપેક્ષાએ “શબ્દોઽયમ્” એ બોધ સામાન્યવિષયક મનાય છે. સામા-  
ન્યને વિષય કરનાર અવગ્રહ હોય છે. તેથી આ અવાયને ઔપચારિક રીતે અવગ્રહ  
માની લીધો છે. તેનું તાત્પર્ય એ છે કે જે પહેલપહેલું સામાન્ય માત્રને  
વિષય કરે છે, તે નૈશ્ચયિક અવગ્રહ છે. તથા જે વિશેષગ્રાહી અવાયજ્ઞાનની પછી  
અન્યાન્ય વિશેષોની જિજ્ઞાસા અને અવાય થતાં રહે છે, તે સામાન્ય વિશેષ-  
ગ્રાહી અવાયજ્ઞાન વ્યાવહારિક અર્થાવગ્રહ છે. જેનાં પછી અન્ય વિશેષોની  
જિજ્ઞાસા ન થાય, તે અવાયજ્ઞાનને વ્યાવહારિક અર્થાવગ્રહ માનેલ નથી. ખીજાં  
અર્થાં અવાયજ્ઞાન જે ચોતાના પછી નવા નવા વિશેષોની જિજ્ઞાસા ઉત્પન્ન કરે  
છે, તે વ્યાવહારિક અર્થાવગ્રહ છે. એજ વાત ટીકાકારે “ઉત્તરોત્તર વર્તિનીમીહા-  
મવાયં ચાશ્રિત્ય પૂર્વ પૂર્વોઽવાયઃ સામાન્ય ગ્રાહકો ભવતીત્યતસ્તત્રતત્રાવગ્રહત્વોપચારઃ ।  
યદા તુ અપરં વિશેષ નાકાક્ષતિ તદા અવાય એવ ભવતિ ન તત્રોપચારઃ, તસ્ય  
અવાયસ્ય સામાન્યરૂપત્વાભાવાત્ । તસ્માદ્ બહ્વગ્રહાદિ રૌપચારિકો વિશેષ સામાન્યા-

તત્ર બહવગ્રહાદિઃ શબ્દમધિકૃત્ય કથ્યતે—શબ્દસ્વપટહાદિનાનાશબ્દસમૂહં પૃથગે-  
કૈકં યદાઽવગૃહ્ણતિ, તદા બહવગ્રહઃ ૧। યદા તુ એકમેવ કંચિત્ શબ્દમવગૃહ્ણતિ, તદા  
અલ્પાવગ્રહઃ ૨। યદા શબ્દસ્વપટહાદિનાનાશબ્દસમૂહમધ્યે એકૈકં શબ્દમનેકૈઃ પર્યાયૈઃ  
સ્નિગ્ધગામ્ભીર્યાદિભિર્વિશિષ્ટં યથાવસ્થિતમવગૃહ્ણતિ, તદા સ બહુવિધાવગ્રહઃ ૩। યદા  
વર્તીનૈશ્ચયિકોઽવગ્રહ इति स्थितम् ” इन पंक्तियों द्वारा स्पष्ट की है । वे  
कहते हैं कि उत्तरोत्तरवर्ती ईहा, और अवाय, की अपेक्षा करके पूर्व पूर्व  
का अवायज्ञान सामान्याग्राहक हो जाता है । इसलिये सामान्यग्राहक  
होने की वजह से उस अवायज्ञान में अवग्रहरूपता का उपचार कर  
लिया जाता है । जब वह अवायज्ञान उत्तर काल में अपर विशेष की  
आकांक्षा नहीं करता है तो वह अवाय ही रहता है, उपचार से उसमें  
अवग्रहरूपता कल्पित नहीं की जाती है, कारण उसमें सामान्यरूपता  
उम समय नहीं आती है । इसलिये बहु आदि बारह प्रकार के पदार्थों  
अवग्रहरूप ज्ञान एक समयवर्ती नैश्चयिक अर्थावग्रहरूप नहीं माना गया  
है किन्तु व्यावहारिक अर्थावग्रहरूप ही माना गया है क्योंकि इसमें  
सामान्यविशेष का ज्ञान होता है, अतः यह अवायरूप होकर उपचार  
से अवग्रहरूप मान लिया गया है ।

अब यह स्पष्ट किया जाता है कि बहु आदिक पदार्थविषयक अव-  
ग्रह शब्द में किस प्रकार होते हैं ?—

वगृह रूपोऽवग्रहः, नत्वेक समयवर्ती नैश्चयिकोऽवग्रह इति स्थितम् ” આ પંક્તિઓ  
દ્વારા સ્પષ્ટ કરેલ છે. તેઓ કહે છે કે ઉત્તરોત્તરવર્તી ઈહા અને અવાયની  
અપેક્ષાએ કરીને પૂર્વ પૂર્વનુ અવાયજ્ઞાન સામાન્ય ગ્રાહક થઈ જાય છે. તેથી  
સામાન્ય ગ્રાહક હોવાને કારણે તે અવાય જ્ઞાનમાં અવગ્રહ રૂપતાનો ઉપચાર  
કરી લેવામાં આવે છે જ્યારે તે અવાયજ્ઞાન ઉત્તરકાળમાં અપર વિશેષની  
આકાંક્ષા કરતું નથી ત્યારે તે અવાય જ રહે છે, ઉપચારથી તેમાં અવગ્રહરૂપતા  
કલ્પવામાં આવતી નથી, કારણ કે તેમાં સામાન્યરૂપતા તે સમયે આવતી નથી.  
તે કારણે બહુ આદિ બાર પ્રકારના પદાર્થોનું અવગ્રહરૂપ જ્ઞાન એક સમયવર્તી  
નૈશ્ચયિક અર્થાવગ્રહરૂપ માનવામાં આવ્યું નથી, પણ વ્યાવહારિક અર્થાવગ્રહરૂપ જ  
માન્યું છે કારણ કે તેમાં સામાન્ય વિશેષનું જ્ઞાન થાય છે, તેથી તે અવાય-  
રૂપ હોવાથી ઉપચારથી અવગ્રહરૂપ માની લેવામાં આવેલ છે.

હવે એ સ્પષ્ટ કરવામાં આવે છે કે બહુ આદિક પદાર્થ વિષયક અવગ્રહ  
શબ્દમાં કેવી રીતે થાય છે ?

તુ એકમનેકં વા શબ્દમેકપર્યાયવિશિષ્ટમ્, અર્થાત્-ગામ્ભીર્યમાધુર્યાદિકમેક પર્યાયવિ-  
શિષ્ટમેવ જાનાતિ, તદા સ એકવિધાવગ્રહઃ ૪ । યદા તમેવ શબ્દં ક્ષિપ્રં-શીઘ્રં જા-  
નાતિ, તદા ક્ષિપ્રાવગ્રહઃ ૫ । યદા તુ બહુના કાલેન જાનાતિ, તદા ચિરાવગ્રહઃ ૬ ।

યહાં બહુ કા તાત્પર્ય અનેક સે હૈ । જબ શ્રોતા શંખ, પટહ, આદિ  
નાના શબ્દ સમૂહ મેં સે પૃથક્ ૨ એક એક કે શબ્દ કો અવગ્રહ  
જ્ઞાનકા વિષયભૂત કરતા હૈ ઇસ્કા નામ બહુકા અવગ્રહ । ક્રમશઃ દો યા  
ઇસસે અધિક શબ્દોંકા જ્ઞાન ઇસ બહુકે અવગ્રહમેં વિવક્ષિત હુઆ હૈ ૧ ।  
જબ શ્રોતા એક હી કિસી શબ્દકો સુનતા હૈ તો વહ ઇસ સે વિપરીત  
અલ્પકા અવગ્રહ જ્ઞાન માના જાતા હૈ ૨ । જિસ સમય શંખ પટહ આદિ  
કે અનેક શબ્દસમૂહમેં સે એક એક શબ્દકો સ્નિગ્ધ, ગાંભીર્ય આદિ અનેક  
પર્યાયોં સે વિશિષ્ટ જબ શ્રોતા જાનતા હૈ તબ ઇસ પ્રકારકા જ્ઞાન બહુવિધ  
કા અવગ્રહ કહલાતા હૈ ૩ । ઓર જબ શ્રોતા એક યા અનેક શબ્દોંકો  
એક હી પર્યાયસે વિશિષ્ટ જાનતા હૈ તબ વહ જ્ઞાન એકવિધકા અવગ્રહ  
કહલાતા હૈ ૪ । બહુવિધ મેં અપની પર્યાયોં મેં વિવિધતા રખનેવાલે અનેક  
પદાર્થોં કા જ્ઞાન વિવક્ષિત હુઆ હૈ । તબ કિ અપની પર્યાયોં મેં એક પ્રકાર-  
તા રખનેવાલે પદાર્થોં કા જ્ઞાન એકવિધમેં વિવક્ષિત હુઆ હૈ । શબ્દકો  
શીઘ્ર જાનના યહ ક્ષિપ્રકા અવગ્રહ હૈ ૫ । બહુકાલમેં શબ્દકા જ્ઞાન  
હોના ઇસ્કા નામ ચિરકા અવગ્રહ હૈ ૬ । યહ દેખા જાતા હૈ કિ ઇન્દ્રિય

આહીં બહુનું તાત્પર્ય અનેક છે. જ્યારે શ્રોતા શંખ, પટહ, આદિ વિવિધ શબ્દ  
સમૂહમાંથી એક એકના શબ્દને અવગ્રહજ્ઞાનના વિષયભૂત કરે છે, ત્યારે તેનું  
નામ 'બહુ'નો અવગ્રહ છે ક્રમશઃ જે કે તેથી વધુ શબ્દોનું જ્ઞાન આ બહુના  
અવગ્રહમાં વિવક્ષિત થયું છે ૧. જ્યારે શ્રોતા એક જ કોઈ શબ્દને સાંભળે છે  
ત્યારે તે તેનાથી 'અલ્પ'નું અવગ્રહજ્ઞાન મનાય છે ૨. જે સમયે શ્રોતા શંખ  
પટહ આદિના અનેક શબ્દસમૂહમાંથી એક એક શબ્દને સ્નિગ્ધ, ગાંભીર્ય  
આદિ અનેક પર્યાયોથી વિશિષ્ટ જાણે છે, ત્યારે તે પ્રકારનું જ્ઞાન બહુવિધનો  
અવગ્રહ કહેવાય છે ૩. અને જ્યારે શ્રોતા એક કે અનેક શબ્દોને એક જ  
પર્યાયથી વિશિષ્ટ જાણે છે ત્યારે તે જ્ઞાન એકવિધનો અવગ્રહ કહેવાય છે  
બહુવિધમાં પોતાની પર્યાયોમાં વિવિધતા રાખનાર અનેક પદાર્થોનું જ્ઞાન  
વિવક્ષિત થયું છે, ત્યારે પોતાની પર્યાયોમાં એક પ્રકારતા રાખનાર પદાર્થોનું  
જ્ઞાન એકવિધમાં વિવક્ષિત થયું છે ૪. શબ્દને જલ્દી જાણવો તે ક્ષિપ્રનો  
અવગ્રહ છે ૫. લાંબે કાળે શબ્દનું જ્ઞાન થવું તેનું નામ ચિરનો અવગ્રહ છે ૬.



તમેવ શબ્દં યદા સ્વરૂપેણ જાનાતિ, ન ત્વનુમાનેન, તદા અનિશ્રિતાવગ્રહઃ ૭ । યદા તુ અનુમાનેન જાનાતિ, તદા નિશ્રિતાવગ્રહઃ ૮ । યદા-અસંદિગ્ધં-નિઃસંદેહં ગૃહ્ણાતિ, તદા-અસંદિગ્ધાવગ્રહઃ ૯ । યદા તુ સંદિગ્ધમવગૃહ્ણાતિ, તદા સંદિગ્ધાવગ્રહઃ ૧૦ । સર્વદૈવ વહ્વાદિરૂપેણાવગૃહ્ણતો ધ્રુવાવગ્રહઃ ૧૧ । કદાચિદેવ તુ વહ્વાદિરૂપેણાવગૃહ્ણતોઽધ્રુવાવગ્રહ ૧૨ ઇતિ ॥ સૂ૦ ૩૬ ॥

વિષય આદિ સર્વ બાહ્ય સામગ્રી ચરાચર હોને પર ખી કેવલ ક્ષયોપશમ કી પટુતાકે કારણ એક મનુષ્ય ઉસ વિષયકા જ્ઞાન જલ્દી કર લેતા હૈ । ઓર ક્ષયોપશમકી મન્દતાકે કારણ દૂસરા મનુષ્ય દેરસે કરતા હૈ ૫-૬ । શબ્દ સ્વરૂપસે શબ્દકો જાનના, અનુમાનસે નહીં, ઇસકા નામ અનિશ્રિતાવગ્રહ હૈ ૭ । અનુમાનસે શબ્દકો જાનના ઇસકા નામ નિશ્રિતાવગ્રહ હૈ ૮ । સંદેહરહિત હો કર શબ્દકો જાનના અસંદિગ્ધાવગ્રહ હૈ ૯ । સંદેહયુક્ત શબ્દકા જ્ઞાન હોના ઇસકા નામ સંદિગ્ધાવગ્રહ હૈ ૧૦ । સદા વહુ આદિ રૂપસે શબ્દકા જાનના ધ્રુવાવગ્રહ ૧૧, ઓર કખી ૨ જાનના અધ્રુવાવગ્રહ હૈ ૧૨ । અસંદિગ્ધાવગ્રહકા તાત્પર્ય ઇસ પ્રકાર હૈ—જૈસે ‘યહ શબ્દ મનુષ્યકા હી અન્યકા નહીં’ । સંદિગ્ધાવગ્રહમેં ઇસ પ્રકાર જ્ઞાન હોગા કિ ‘યહ શબ્દ મનુષ્યકા હૈ અથવા ઓર કિસીકા હૈ’ । ધ્રુવકા તાત્પર્ય અવશ્યંભાવી ઓર અધ્રુવકા તાત્પર્ય કદાચિત્ ભાવી હૈ ॥ સૂ૦ ૩૬ ॥

એવું જોવામાં આવે છે કે ઇન્દ્રિય વિષય આદિ સઘળી બાહ્ય સામગ્રી બરાબર હોવા છતાં પણ ફક્ત ક્ષયોપશમની પટુતાને કારણે એક માણસ તે વિષયનું જ્ઞાન જલ્દી પ્રાપ્ત કરી લે છે, અને ક્ષયોપશમની મન્દતાને કારણે બીજો માણસ મોડું પ્રાપ્ત કરે છે ( ૫-૬ ). શબ્દસ્વરૂપથી શબ્દને જાણવો, અનુમાનથી નહીં, તેનું નામ અનિશ્રિતાવગ્રહ છે ૭. અનુમાનથી શબ્દને જાણવો તેનું નામ નિશ્રિતાવગ્રહ છે ૮. સંદેહરહિત થઈને શબ્દને જાણવો તેનું નામ અસંદિગ્ધાવગ્રહ છે ૯. સંદેહયુક્ત શબ્દનું જ્ઞાન થવું તેનું નામ સંદિગ્ધાવગ્રહ છે ૧૦. સદા બહુ આદિ રૂપથી શબ્દને જાણવો તેનું નામ ધ્રુવાવગ્રહ છે ૧૧. અને કોઈ કોઈ વાર જાણવો તેનું નામ અધ્રુવાવગ્રહ છે ૧૨. અસંદિગ્ધ અવગ્રહનું તાત્પર્ય આ પ્રમાણે છે. જેમકે “ આ શબ્દ મનુષ્યનો જ છે બીજાનો નહીં. સંદિગ્ધાવગ્રહમાં આ પ્રકારનું જ્ઞાન થશે કે “ આ શબ્દ મનુષ્યનો છે અથવા બીજા કોઈનો છે ” ધ્રુવનું તાત્પર્ય અવશ્ય બનનાર, અને અધ્રુવનું તાત્પર્ય કદાચ બનનાર છે. ॥ સૂ. ૩૫ ॥

સંપ્રતિ મતિજ્ઞાનસ્ય દ્રવ્યાદિભેદચતુઃપ્રકારતામાહ—

મૂલમ્—તં સમાસઓ ચઽઽવિહં પળ્લત્તં, તં જહા—દઽવઓ, યેત્તઓ, કાલઓ, ભાવઓ । તત્થ દઽવઓ ણં આભિણિબોહિ-  
યનાળી આણ્ણેણં સઽવાઈં દઽવાઈં જાણઈ, ન પાસઈ । યેત્તઓ  
ણં આભિણિબોહિયનાળી આણ્ણેણં સઽવં યેત્તં જાણઈ ન પાસઈ ।  
કાલઓ ણં આભિણિબોહિયનાળી આણ્ણેણં સઽવં કાલં જાણઈ,  
ન પાસઈ । ભાવઓ ણં આભિણિબોહિયનાળી આણ્ણેણં સઽવે  
ભાવે જાણઈ, ન પાસઈ ॥

છાયા—તત્સમાસતશ્ચતુર્વિધં પ્રજ્ઞપ્તમ્ । તદ્ યથા—દ્રવ્યતઃ ક્ષેત્રતઃ કાલતો ભા-  
વતઃ । તત્ર દ્રવ્યતઃ સ્વલુ આભિનિબોધિકજ્ઞાની આદેશેન સર્વાણિ દ્રવ્યાણિ જાનાતિ,  
ન પશ્યતિ । ક્ષેત્રતઃ સ્વલુ આભિનિબોધિકજ્ઞાની આદેશેન સર્વં ક્ષેત્રં જાનાતિ, ન  
પશ્યતિ । કાલતઃ સ્વલુ આભિનિબોધિકજ્ઞાની આદેશેન સર્વં કાલં જાનાતિ, ન  
પશ્યતિ । ભાવતઃ સ્વલુ આભિનિબોધિકજ્ઞાની આદેશેન સર્વાન્ ભાવાન્, ન પશ્યતિ ॥

ટીકા—‘તં સમાસઓ૦’ ઇત્યાદિ । તત્=મતિજ્ઞાનં, સમાસતઃ=સંક્ષેપેણ, ચતુ-  
ર્વિધં પ્રજ્ઞપ્તમ્=પ્રરૂપિતં તીર્થંકરાદિભિરિત્યર્થઃ । તદ્ યથા—દ્રવ્યતઃ ક્ષેત્રતઃ કાલતો  
ભાવતશ્ચ । તત્ર દ્રવ્યતઃ સ્વલુ આભિનિબોધિકજ્ઞાની=મતિજ્ઞાની, આદેશેન=આદેશઃ—

અવ સૂત્રકાર મતિજ્ઞાનકે દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર આદિકી અપેક્ષા ચાર ભેદ  
વતલાતે હૈ—‘તં સમાસઓ ચઽઽવિહં૦’ ઇત્યાદિ ।

દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાલ ઓર ભાવકી અપેક્ષા મતિજ્ઞાન સંક્ષેપસે ચાર પ્રકાર-  
કા કહા ગયા હૈ । इन द्रव्यकी अपेक्षा आभिनिवोधिक ज्ञानी-मति-  
ज्ञानी आत्मा-आदेशसे द्रव्य जातिरूप सामान्य प्रकारसे धर्मास्तिकाया-

હવે સૂત્રકાર મતિજ્ઞાનના દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, આદિની અપેક્ષાએ ચાર ભેદ  
બતાવે છે— “તં સમાસઓ ચઽઽવિહં૦” ઇત્યાદિ.

દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાળ અને ભાવની અપેક્ષાએ મતિજ્ઞાન સંક્ષિપ્તમાં ચાર  
પ્રકારનું કહેલ છે. એ દ્રવ્યની અપેક્ષાએ આભિનિવોધિકજ્ઞાની—મતિજ્ઞાની આત્મા-  
આદેશથી દ્રવ્ય જાતિરૂપ સામાન્ય પ્રકારે ધર્માસ્તિકાયા આદિક સમસ્ત દ્રવ્યોને

પ્રકારઃ, સ ચ દ્વિધા-સામાન્યરૂપો વિશેષરૂપશ્ચ, તત્રેહ પ્રાયઃ સામાન્યરૂપો ગ્રાહ્યઃ, તતશ્ચ-આદેશેન-દ્રવ્યજાતિરૂપસામાન્યપ્રકારેણ, સર્વદ્રવ્યાણિ=ધર્માસ્તિકાયાદીનિ જાનાતિ । કિંચિદ્ વિશેષતોઽપિ જાનાતિ । યથા-ધર્માસ્તિકાયં, ધર્માસ્તિકાયસ્ય પ્રદેશમ્, તથા-ધર્માસ્તિકાયો ગત્યુપ્લક્ષ્યમ્હેતુરમૂર્તો લોકાકાશ પ્રમાણ ઇત્યાદિ । ન પશ્યતિ=સર્વાત્મના, ધર્માસ્તિકાયાદીન્ ન પશ્યતિ, ઘટાદીંસ્તુ યોગ્યદેશાવસ્થિતાન્ પશ્યત્યપિ । અથવા-આદેશ ઇતિ સૂત્રાદેશઃ, તેન મૂત્રાદેશેન=સૂત્રાજ્ઞયા સર્વદ્રવ્યાણિ -ધર્માસ્તિકાયાદીનિ જાનાતિ, ન તુ સાક્ષાત્ પશ્યતિ ।

દિક સમસ્ત દ્રવ્યોંકો જાનતા હૈ । યહાં આદેશકા તાત્પર્ય પ્રકારસે હૈ । સામાન્ય ઔર વિશેષકી અપેક્ષા યહ પ્રકાર દો તરહકા કહા ગયા હૈ । યહાં સામાન્યરૂપ પ્રકાર વિવક્ષિત હુઆ હૈ । યદ્યપિ મતિજ્ઞાની આત્મા સમસ્ત ધર્માદિક દ્રવ્યોંકો સામાન્યરૂપસે હી જાનતા હૈ, ફિર મી વહ ઉનકે વિષયમેં કુછ ૨ વિશેષરૂપસે મી જાનતા હૈ । જૈસે-ધર્માસ્તિકાય કા કાર્ય જીવ પુદ્ગલોં કો ગમનમેં સહાયતા પ્રદાન કરના હૈ । યહ દ્રવ્ય અમૂર્તિક એવં લોકાકાશવ્યાપી હૈ । ઇસકે અસંખ્યાત પ્રદેશ હૈ । ઇસે યહ મતિજ્ઞાની આત્મા ધર્માદિક દ્રવ્યોંકો સામાન્યરૂપસે જાનતા હુઆ મી ઉન્હેં કુછ ૨ વિશેષરૂપસે મી જાનતા હૈ । જાનતા હૈ, પરન્તુ ઉન્હેં સાક્ષાત્ રૂપસે સર્વાત્મતા દેખતા નહીં હૈ । હાં, જો ઘટાદિક દ્રવ્ય યોગ્ય દેશાવસ્થિત હોતે હૈ ઉન્હેં યહ દેખતા મી હૈ । અથવા આદેશ શબ્દકા અર્થ સૂત્રાજ્ઞા હૈ । સૂત્ર-આગમ-કી આજ્ઞા કે અનુસાર મતિજ્ઞાની આત્મા ધર્માદિક દ્રવ્યોં કો કેવલ જાનતામાત્ર હૈ, ઉન્હેં સાક્ષાત્ દેખતા નહાં હૈ ।

જાણે છે અહીં આદેશનો ભાવાર્થ પ્રકાર છે. સામાન્ય અને વિશેષની અપેક્ષાએ આ પ્રકાર બે જાતનો બતાવ્યો છે. અહીં સામાન્યરૂપ પ્રકાર વિવક્ષિત થયો છે, જે કે મતિજ્ઞાની આત્મા સમસ્ત ધર્માદિક દ્રવ્યોને સામાન્યરૂપ જ જાણે છે, તો પણ તે તેમના વિષે કંઈક કંઈક વિશેષરૂપે પણ જાણે છે. જેમકે— ધર્માસ્તિકાયનું કાર્ય જીવ અને પુદ્ગલોને ગમનમાં સહાયતા આપવાનું છે. આ દ્રવ્ય અમૂર્તિક અને લોકાકાશવ્યાપી છે. તેનામાં અસંખ્યાત પ્રદેશ છે. આ રીતે તે મતિજ્ઞાની આત્મા ધર્માદિક દ્રવ્યોને સામાન્ય રૂપે જાણવા છતાં પણ તેમને થોડા થોડા વિશેષરૂપે પણ જાણે છે, જાણે છે, પણ તેમને પ્રત્યક્ષરૂપે સર્વાત્મના દેખતો નથી. હા, જે ઘડો આદિ દ્રવ્ય યોગ્ય સ્થાનમાં રહેલ હોય તેમને તે દેખે પણ છે. અથવા ‘આદેશ’ શબ્દનો અર્થ સૂત્રાજ્ઞા છે. સૂત્ર-આગમનની આજ્ઞા પ્રમાણે મતિજ્ઞાની આત્મા ધર્માદિક દ્રવ્યોને કેવળ જાણે જ છે, તેમને પ્રત્યક્ષ દેખતો નથી.

નનુ સૂત્રાદેશતો યદ્ જ્ઞાનમુપજાયતે, તત્ સ્વલુ શ્રુતજ્ઞાનં ભવતિ, તસ્ય શબ્દાર્થ-  
પરિજ્ઞાન રૂપત્વાત્, અત્ર તુ મતિજ્ઞાનમુચ્યતે, તત્ કથમિહ સૂત્રાદેશો વ્યાખ્યાયતે ?  
ઇતિ ચેત્, તદયુક્તમ્, સમ્યગ્વસ્તુતત્ત્વાપરિજ્ઞાનાત્ । ઇહ હિ શ્રુતભાવિતમતેઃ  
શ્રુતોપલબ્ધેષ્વપિ અર્થેષુ સૂત્રાનુસારમાત્રેણ યેઽવગ્રહેહાવાયાદયો જ્ઞાનવિશેષાઃ પ્રાદુર્ભ-  
વન્તિ, તે મતિજ્ઞાનમેવ, ન તુ શ્રુતજ્ઞાનં, સૂત્રાનુસારનિરપેક્ષત્વાત્ ? ।

एवं क्षेत्रादिष्वपि वाच्यम् । क्षेत्रं लोकालोकात्मकम् २ । कालः सर्वाद्वारूपः,  
अतीतानागतवर्तमानरूपो वा ३ । भावाश्च पञ्चसंख्यकाः—औदयिकादयः ४ ॥

શંકા—જબ આદેશ શબ્દ કા અર્થ સૂત્રાજ્ઞા હૈ, ઔર યહ કહા જાતા  
હૈ કિ મતિજ્ઞાની આત્મા આગમ કી આજ્ઞા કે અનુસાર ધર્માદિક દ્રવ્યો  
કો જાનતા હૈ, તો સૂત્ર સે જો જ્ઞાન હોતા હૈ વહ તો શ્રુતજ્ઞાન કહલાતા  
હૈ યહાં પ્રકરણ ચલ રહા હૈ મતિજ્ઞાન કા, ફિર વહ જ્ઞાન મતિજ્ઞાન  
કૈસે કહલાવેગા ? ।

ઉત્તર—યહ પ્રશ્ન તત્ત્વ કો નહીં સમજ્ઞકર હી કિયા ગયા હૈ, ક્યોં  
કિ જિસકી મતિ, શ્રુતજ્ઞાન સે પરિભાવિત હો રહી હૈ એસે પુરુષ કો શ્રુતો-  
પલબ્ધ પદાર્થોં મેં ભી સૂત્રાનુસારી જો અવગ્રહ ર્હા, અવાયજ્ઞાન હોતે હૈં  
વે મતિજ્ઞાન હી હૈં. શ્રુતજ્ઞાન નહીં, ક્યોં કિ ઉસ સમય વે સૂત્ર કે અનુ-  
સરણ કી અપેક્ષા સે નિરપેક્ષ હોતે હૈં । ઇસી તરહ કા સંબંધ ક્ષેત્ર આદિકોં  
મેં લગા લેના ચાહિયે । ક્ષેત્ર કી અપેક્ષા જબ વિચાર કિયા જાતા હૈ તો  
મતિજ્ઞાની આત્મા સામાન્યરૂપ સે અથવા સૂત્ર કી આજ્ઞા કે અનુસાર  
લોકાલોકાત્મક સમસ્ત ક્ષેત્ર કો જાનતા માત્ર હૈ, ઉસકો સાક્ષાત્ દેખતા

શંકા—જો ‘ આદેશ ’ શબ્દનો અર્થ સૂત્રાજ્ઞા હોય, અને એમ કહેવામાં  
આવે છે કે મતિજ્ઞાની આત્મા આગમની આજ્ઞા પ્રમાણે ધર્માદિક દ્રવ્યોને જાણે  
છે, તો સૂત્રથી જે જ્ઞાન થાય છે તે તો શ્રુતજ્ઞાન કહેવાય છે. અહીં મતિજ્ઞાનનું  
પ્રકરણ આવી રહ્યું છે, તો તે જ્ઞાન મતિજ્ઞાન કેવી રીતે કહેવાય ?

ઉત્તર—આ પ્રશ્ન તત્ત્વને સમજ્યા વિના કરાયો છે, કારણ કે જેમની મતિ  
શ્રુતજ્ઞાનથી પરિભાવિત થઈ રહી છે, એવા પુરુષોને શ્રુતોપલબ્ધ પદાર્થોમાં પણ  
સૂત્રાનુસારી જે અવગ્રહ, ઇહા, અવાયજ્ઞાન થાય છે, એ મતિજ્ઞાન જ છે, શ્રુત-  
જ્ઞાન નહીં. કારણ કે તે સમયે તેઓ સૂત્રને અનુસરવાની અપેક્ષાએ નિરપેક્ષ  
હોય છે. એજ પ્રકારનો સંબંધ ક્ષેત્ર આદિકોમાં સમજી લેવો જોઈએ, ક્ષેત્રની  
અપેક્ષાએ જ્યારે વિચાર કરાય છે ત્યારે મતિજ્ઞાની આત્મા સામાન્યરૂપે અથવા  
સૂત્રની આજ્ઞા અનુસાર લોકાલોકાત્મક સમસ્ત ક્ષેત્રને ઇક્ષ્તા જાણે જ છે, તેને

संप्रति मतिज्ञानविषये संग्रहगाथा आह—

मूलम्—

गाहा—उग्गह ईहाऽवाओ, य धारणा एव हुंति चत्तारि ।  
 आभिणिबोहियनाण,—स्स भेयवत्थू समासेण ॥ १ ॥  
 अत्थाणं उग्गहणं,—मि उग्गहो तह वियालणे ईहा ।  
 ववसायंमि अवायो, धरणं पुणं धारणं विंति ॥ २ ॥  
 उग्गह इक्के समयं, ईहावाया मुहुत्तमच्चं तु ।  
 कालमसंखं संखं, च धारणा होइ नायव्वा ॥ ३ ॥  
 पुट्ठं सुणेइ सद्दं, रूवं पुण पासइ अपुट्ठं तु ।  
 गंधं रसं च फासं, च बच्चपुट्ठं वियागरे ॥ ४ ॥  
 भासा समसेढीओ, सद्दं जं सुणइ मीसियं सुणइ ।  
 वीसेढी पुण सद्दं सुणेइ, नियमा पराघाए ॥ ५ ॥  
 ईहा—अपोह—वीमंसा, मग्गणा य गवेसणा ।  
 सन्ना सई मई पन्ना, सव्वं आभिणिबोहियं ॥ ६ ॥

नहीं हैं । काल की अपेक्षा मतिज्ञानी सामान्यरूप से अथवा आगम की आज्ञा के अनुसार सर्वाङ्गरूप निश्चयकाल को या भूत, भविष्यत, वर्तमानरूप व्यवहार काल को जानता मात्र है, उसे साक्षात् देखता नहीं है । इसी तरह भावकी अपेक्षा मतिज्ञानी सामान्यरूप से अथवा आगम की आज्ञा के अनुसार समस्त भावों को—पर्यायों को—जानतामात्र है, उन्हें देखता नहीं है ॥

प्रत्यक्ष देखतो नथी. डाणनी अपेक्षाअे मतिज्ञानी सामान्यइये अथवा आगमनी आज्ञा अनुसार सर्वाङ्गरूप निश्चय डाणने भूत, भविष्य वर्तमानइय व्यवहार डाणने मात्र न्हाए न छे, तेने प्रत्यक्ष देखतो नथी. अेन प्रभाए भावनी अपेक्षाअे मतिज्ञानी सामान्यइये अथवा आगमनी आज्ञानुसार समस्त भावोने पर्यायोने मात्र न्हाए न छे, तेमने देखतो नथी.

छाया—अवग्रह ईहाऽवायश्च, धारणा एवं भवन्ति चत्वारि ।  
 आभिनिबोधिकज्ञानस्य, भेदवस्तूनि समासेन ॥ १ ॥  
 अर्थानामवग्रहणे, अवग्रहस्तथा विचारणे ईहा ।  
 व्यवसायेऽवायः, धरणं पुनर्धारणां ब्रुवते ॥ २ ॥  
 अवग्रह एकं समयम् ईहाऽवायौ मुहूर्तमर्थं तु ।  
 कालमसंख्यं संख्यं, च धारणा भवति ज्ञातव्या ॥ ३ ॥  
 स्पृष्टं शृणोति शब्दं, रूपं पुनः पश्यत्यस्पृष्टं तु ।  
 गन्धं रसं च स्पर्शं च, बद्धस्पृष्टं व्यागृणीयात् ॥ ४ ॥  
 भाषासमश्रेणीतः, शब्दं यं शृणोति मिश्रितं शृणोति ।  
 विश्रेणि पुनः शब्दं, शृणोति नियमात् पाराधाते ॥ ५ ॥  
 ईहाऽपोहविमर्शाः, मार्गणा च गवेपणा ।  
 संज्ञा स्मृतिर्मतिः प्रज्ञा, सर्वमाभिनिबोधिकम् ॥ ६ ॥

से तं आभिनिबोहियनाणपरोक्खं । से तं मइनाणं ॥सू० ३६॥

तदेतत् आभिनिबोधिकज्ञानपरोक्षम् । तदेतन्मतिज्ञानम् ॥ सू० ३६ ॥

टीका—‘उगग्रह०’ इत्यादि । आभिनिबोधिकज्ञानस्य=मतिज्ञानस्य, समा-  
 सेन=संक्षेपेण, भेदवस्तूनि=भेदाः प्रकारास्त एव वस्तूनि-पदार्थाः, एवम्, अने  
 नैव क्रमेण चत्वारि=भवन्ति, तद् यथा—अवग्रहः १, ईहा २, अवायः ३, धारणा ४  
 च । चकारः समुच्चयार्थकः । नन्वेवं क्रमः कथमवग्रहादीना ? मिति चेत्—उच्यते—  
 यतोऽनवगृहीतस्येहा न भवति, अनीहितस्य चावायो न भवति, अनवगतस्य च

मतिज्ञान के विषय में संग्रह गाथाएं इस प्रकार हैं—‘उगग्रह ईहा०’  
 इत्यादि । गाथाओं का अर्थ—मतिज्ञान के संक्षेप से चार भेद हैं । वे इस  
 प्रकार हैं—अवग्रह १, ईहा २, अवाय ३ और धारणा ४ । इस प्रकार इनके  
 क्रम का कारण है कि—जबतक पदार्थ का अवग्रह ज्ञान नहीं होता है तबतक  
 उसकी ईहा नहीं होती है । ईहा के नहीं होने पर अवाय नहीं होता है

मतिज्ञानना विषयमां आ प्रमाणे संअड गाथाओ छे—“उगग्रह ईहा०”  
 इत्यादि गाथाओनो अर्थ—मतिज्ञानना संक्षेपथी आर लेह छे. ओ आ प्रकारे  
 छे अवग्रह १, ईहा २, अवाय ३, अने धारणा ४. तेमना आ प्रकारना कभनुं कारण  
 ओ छे के—न्यां सुधी पदार्थनुं अवग्रहज्ञान थतुं नथी त्यांसुधी तेनी ईहा थती  
 नथी. ईहा न थाय तो अवाय थतुं नथी तथा अवायज्ञानना अलावे धारणा



ધારણા ન ભવતીતિ ॥ ૧ ॥ અવગ્રહાદીનાં સ્વરૂપમાહ—‘અત્યાણં૦’ ઇત્યાદિ । અર્થાનાં=શબ્દાદીનામ્; અવગ્રહણે સતિ=પ્રથમદર્શનાન્તરમ્—વ્યંજનાવગ્રહાન્તર-મિત્યર્થઃ; અવગ્રહો ભવતિ । નનુ વસ્તુનઃ સામાન્યવિશેષાત્મકતયા વિશિષ્ટત્વાત્ કથં પ્રથમં દર્શનં તતો જ્ઞાન ? મિતિ ચેત્, ઉચ્યતે—જ્ઞાનસ્ય પ્રવલાવરણવત્ત્વાત્, દર્શનસ્ય ચાલ્પાવરણવત્ત્વાદિતિ । અર્થાનામિત્યસ્યાગ્રેડપિ સમ્બન્ધઃ । તથા અર્થાનાં વિચારણે=પર્યાલોચને ર્હા ભવતિ । તથા—અર્થાનાં વ્યવસાયે નિશ્ચયે અવાયો

તથા, અવાયજ્ઞાન કે અભાવ મેં ધારણા નહીં હોતી હૈ । અવગ્રહ આદિ જ્ઞાનોં કા સ્વરૂપ હસ પ્રકાર હૈ—શબ્દાદિક પદાર્થોં કા જો પ્રથમ દર્શનરૂપ વ્યંજનાવગ્રહ કે બાદ સામાન્ય બોધ હોતા હૈ ઉસકા નામ અવગ્રહ હૈ ? ।

શંકા—જબ વસ્તુ સામાન્ય વિશેષ ધર્માત્મક હૈ તો કયા કારણ હૈ જો ઉસકા સર્વ પ્રથમ દર્શન હી હોતા હૈ જ્ઞાન નહીં હોતા ? ઔર કયોં દર્શન કે બાદ જ્ઞાન હોતા હૈ ? ।

ઉત્તર—જ્ઞાન કા જો આવરણ હૈ વહ દર્શન કા આવરણ અલ્પ હૈ, હસલિયે પ્રવલ આવરણવાલા હોને સે દર્શન કે બાદ હી જ્ઞાન હોતા હૈ । દર્શન કા આવરણ જલ્દી હટ જાતા હૈ ઔર જ્ઞાન કા આવરણ દેર સે હટતા હૈ, હસલિયે જ્ઞાનકી અપેક્ષા દર્શન પહિલે હોતા હૈ, બાદ મેં જ્ઞાન ।

અર્થોં કી જો વિચારણા હોતી હૈ ઉસકા નામ ર્હા ૨ । ઔર ઉનકા

થતી નથી, અવગ્રહ આદિ જ્ઞાનોનું સ્વરૂપ આ પ્રમાણે છે—શબ્દાદિક પદાર્થોના પ્રથમદર્શનરૂપ વ્યંજનાવગ્રહની પછી જે સામાન્યબોધ થાય છે, તેનું નામ અવગ્રહ છે. (૧)

શંકા—જે વસ્તુ સામાન્ય વિશેષ ધર્માત્મક હોય છે, તો કયાં કારણે તેનું સર્વપ્રથમ દર્શન જ થાય છે, પણ જ્ઞાન થતું નથી ? અને શા કારણે દર્શન પછી જ્ઞાન થાય છે ?

ઉત્તર—જ્ઞાનનું જે આવરણ છે તે દર્શનનાં આવરણ કરતાં પ્રબળ છે. અને દર્શનનું આવરણ અલ્પ છે, તેથી પ્રબળ આવરણવાળું હોવાથી દર્શન પછી જ જ્ઞાન થાય છે. દર્શનનું આવરણ જલ્દી ખસી જાય છે, અને જ્ઞાનના આવરણને ખસતા વાર લાગે છે. તે કારણે જ્ઞાન કરતાં દર્શન પહેલું થાય છે, અને પછી જ્ઞાન થાય છે.

અર્થોની જે વિચારણા થાય છે તેનું નામ ઇહા. ૨. અને તેમનો જે

भवति । तथा-धरणम्=वासनादिरूपेण यद्धारणं, तत्, धारणां ब्रुवते=वदन्ति तीर्थंकरादय इत्यर्थः ॥ २ ॥

अवग्रहादीनां स्थितिमानमाह-‘उग्राह इक्के०’ इत्यादि । अवग्रहः-एकं समयं भवति । इहावग्रहशब्देन नैश्चयिकोऽर्थावग्रहो गृह्यते । सर्वजघन्यः कालविशेषः समयः । स च प्रवचनोक्तादुत्पलपत्रशतव्यतिभेदोदाहरणात्, जरत्पटशाटिकापाटनदृष्टान्ताच्च विज्ञेयः । तमेकं समयमवग्रहो वर्तते, न तु ततः परमित्यर्थः । व्यञ्जनावग्रह-व्यावहारिकार्थावग्रहौ च प्रत्येकमन्तर्मुहूर्तं भवत इति द्रष्टव्यम् । ईहावायौ तु अर्धं मुहूर्तं भवतः । मुहूर्तो घटिकाद्वयप्रमाणः कालविशेषः । अर्धं मुहूर्तमिति व्यवहारापेक्षया कथितम् । परमार्थतस्तु इह ‘मुहूर्तमद्वं’ इत्यनेनान्तर्मुहूर्तमेव मन्तव्यम् । तु शब्दः समुच्चये ।

જો નિશ્ચય હોતા હૈં उसका नाम अवाय ३ । तथा उन शब्दादिक पदार्थों का जो वासना आदि रूप से हृदय में धारण होता है उसका नाम धारणा है ४ । ऐसा तीर्थंकर गणधरों ने कहा है । इनका कालमान इस प्रकार हैं-

अवग्रह नैश्चयिक अर्थावग्रह-का काल एक समय मात्र है । कालका सबसे जघन्य भेद समय कहा है । उत्पलके शतपत्रोंको एक साथ छेदने में तथा जीर्ण वस्त्रादिकके फाड़नेमें असंख्यात समय हो जाते हैं, इससे जाना जाता है कि समय, कालका सबसे सूक्ष्म भेद है । नैश्चयिक अर्थावग्रह एक समय तक ही रहता है, इसके बाद नहीं । व्यञ्जनावग्रह तथा व्यावहारिक अर्थावग्रह, इनका काल प्रत्येकका अन्तर्मुहूर्त है । ईहा तथा अवाय, इनका काल आधा मुहूर्तका है । दो घड़ीका एक मुहूर्त होता है । यहां जो आधा मुहूर्तकाल बतलाया गया है वह व्यवहारकी अपेक्षा कहा

નિશ્ચય થાય છે તેનું નામ અવાય ૩. તથા એ શબ્દાદિક પદાર્થોનું જે વાસના આદિ રૂપે હૃદયમાં ધારણ થાય છે તેનું નામ ધારણ છે ૪. એવું તીર્થંકર ગણધરોએ કહ્યું છે. તેમનું કાળમાન આ પ્રમાણે છે-

અવગ્રહ-નૈશ્ચયિક અર્થાવગ્રહ-નો કાળ માત્ર એક સમયનો છે. કાળનો સૌથી જઘન્ય ભેદ સમય કહેવાય છે. ઉત્પલના સો પાનને એક સાથે છેદવામાં તથા જીર્ણ વસ્ત્રાદિકને ફાડવામાં અસંખ્યાત સમય લાગે છે; તેથી જાણી શકાય છે કે સમય, કાળનો સૌથી સૂક્ષ્મ ભેદ છે. નૈશ્ચયિક અર્થાવગ્રહ એક સમય સુધી જ રહે છે, ત્યારબાદ રહેતો નથી. વ્યજનાવગ્રહ તથા વ્યાવહારિક અર્થાવગ્રહ એ પ્રત્યેકનો કાળ અન્તર્મુહુર્ત છે, ઘડા તથા અવાયનો કાળ અર્ધા મુહુર્તનો છે. જે ઘડીનું એક મુહુર્ત થાય છે, અઢી જે અર્ધા મુહુર્તાકાળ બતાવ્યો

ધારણા-અસંખ્યં સંખ્યં ચ કાલં જ્ઞાતવ્યા ભવતિ । અસંખ્યં-ન વિદ્યતે સંખ્યા-પક્ષઃ-  
માસ-ઋતુ-અયન-સંવત્સરાદિકો યસ્યાસાવસંખ્યઃ-પલ્યોપમાદિલક્ષણસ્તં કાલમસં-  
ખ્યમ્, તથા-સંખ્યાયતે, इति संख्यः-પક્ષમાસર્ત્વયનાદિપ્રમિત इत्यर्थः । तं संख्यं,  
च शब्दादन्तर्मुहूर्तं च कालं धारणा भवतीत्यर्थः । इदमुक्तं भवति-अविच्युति-  
वासनास्मृतिभेदाद् धारणा त्रिविधा । तत्राविच्युतिरूपा स्मृतिरूपा च प्रत्येकमन्त-  
र्मुहूर्तं भवति । या तु तदर्थज्ञानावरणक्षयोपशमरूपा स्मृतिबीजरूपा वासनाख्या  
धारणा सा संख्येयवर्षायुषां प्राणिनां संख्येयकालम्, असंख्येयवर्षायुषां तु पल्यो-  
પમાદિજીવિનામસંખ્યેયં કાલં ભવતીતિ ॥ ૩ ॥

ગયા જાનના ચાહિયે । વૈસે તો વાસ્તવિક રૂપમેં इनका काल “मुहुत्तमद्धं”  
इस कथनसे अन्तर्मुहूर्तका ही मानना चाहिये । धारणा का समय  
संख्यात असंख्यात-कालरूप कहा गया है । पक्ष, मास, ऋतु, अयन,  
संवत्सर आदिरूप संख्या जिसमें नहीं होती है ऐसा जो पल्योपम आदि  
रूप काल है उसका नाम असंख्यात काल है, तथा जिसमें पक्ष मास  
ऋतु आदिका व्यवहार होता है वह संख्यातकाल है । तथा “च” शब्द  
से यह बात भी जानी जाती है कि इसका काल अन्तर्मुहूर्त भी है । इस  
का तात्पर्य यह है कि शास्त्रों में धारणा के (१) अविच्युति, (२) वासना  
तथा (३) स्मृति, इस तरह तीन भेद बतलाये हैं । इनमें अविच्युति तथा  
स्मृतिरूप धारण का काल प्रत्येक का अन्तर्मुहूर्त का है । तथा वासनारूप  
जो धारणा है, कि जिससे स्मृति होती है एवं जो तत्तत् अर्थ के ज्ञाना-  
वरण के क्षयोपशमरूप होती है, वह संख्यात वर्ष की आयुवाले प्राणियों

છે, તે વ્યવહારની અપેક્ષાએ કહેલ છે એમ સમજવાનું છે. આમ તો વાસ્તવિક  
રૂપે તેનો કાળ “ મુહુત્તમદ્ધં ” આ કથનથી અન્તર્મુહુર્ત જ માનવો જોઈએ.  
ધારણાનો કાળ અસંખ્યાત અને સંખ્યાતકાળરૂપ કહેવાય છે. પક્ષ, માસ, ઋતુ,  
અયન, સંવત્સર આદિરૂપ સંખ્યા જેમાં હોતી નથી એવો જે પલ્યોપમ આદિ  
રૂપ કાળ છે તેનું નામ અસંખ્યાત કાળ છે, તથા જેમાં પક્ષ, માસ, ઋતુ  
આદિનો વ્યવહાર થાય છે તે સંખ્યાત કાળ છે. તથા “ ચ ” શબ્દથી આ વાત  
પણ જાણવા મળે છે કે તેનો કાળ અન્તર્મુહુર્ત પણ છે. તેનું તાત્પર્ય એ છે કે  
શાસ્ત્રોમાં ધારણાના, (૧) અવિચ્યુતિ, (૨) વાસના, તથા (૩) સ્મૃતિ એ રીતે  
ત્રણ ભેદ બતાવ્યા છે. તેઓમાં અવિચ્યુતિ તથા સ્મૃતિરૂપ ધારણા એ પ્રત્યેકનો  
કાળ અન્તર્મુહુર્તનો છે. અને વાસનારૂપ જે ધારણા છે કે જેથી સ્મૃતિ થાય  
છે, અને જે તે તે અર્થનાં જ્ઞાનાવરણના ક્ષયોપશમરૂપ હોય છે, તે સંખ્યાત

તદેવમવગ્રહાદીનાં સ્વરૂપં કાલપ્રમાણં ચાભિધાય શ્રોત્રેન્દ્રિયાદીનાં પ્રાપ્તાપ્રાપ્ત-  
વિષયતામાહ—‘પુટ્ટં સુણેહં’ इत्यादि । स्पृष्ट=श्रोत्रेन्द्रियेण स्पृष्टमात्रं शब्दं शृणोति ।  
અયમર્થઃ—યથા શરીરોપરિ ધૂલિકણસંપાતસ્તથા શ્રોત્રેન્દ્રિયેણ સહ શબ્દસ્પર્શમાત્રં સતિ  
શબ્દં જાનાતીતિ ।

નનુ કથં સ્પૃષ્ટમાત્રં શબ્દં શૃણોતી ? તિ ચેત્ , ઉચ્યતે—इह शेषेन्द्रियगणापे-  
क्षया श्रोत्रेन्द्रियं प्रायः पटुतरम्, तथा गन्धादिद्रव्यापेक्षया शब्दद्रव्याणि सूक्ष्माणि  
કી અપેક્ષા સંખ્યાતવર્ષ પ્રમિત કાલવાલી માની જાતી હૈ, ઔર જો  
પલ્યોપમ આદિ અસંખ્યાતવર્ષ કી આયુવાલે જીવ હોતે હૈં ઉનકી અપેક્ષા  
અસંખ્યાતવર્ષ પ્રમિત કાલ વાલી માની જાતી હૈ । ઇસ અપેક્ષા ઇસકા  
કાલ સંખ્યાત તથા અસંખ્યાત વર્ષ કા વતલાયા હૈ ॥ ૩ ॥

इस प्रकार अवग्रह आदि का स्वरूप एवं काल प्रमाण वतलाकर  
अब श्रोत्र इन्द्रिय आदिकों में प्राप्यकारिता तथा अप्राप्यकारिता प्रकट  
करते हैं—“पुट्टं सुणेहं सहं” इत्यादि । जो श्रोत्र इन्द्रिय है वह स्पृष्टमात्र  
शब्द को सुनती है, इसलिये वह प्राप्यकारी है । जिस प्रकार शरीर के  
ऊपर धूलिकणों का संपात होता है उसी तरह श्रोत्र इन्द्रिय के साथ  
शब्द का स्पर्शमात्र होते ही वह उसे जान लेती है ।

શંકા—સ્પૃષ્ટમાત્ર હોને પર શ્રોત્રેન્દ્રિય શબ્દ કો કૈસે સુન લેતી હૈ ?

ઉત્તર—શેષ ઇન્દ્રિયોં કી અપેક્ષા શ્રોત્ર ઇન્દ્રિય પ્રાયઃ પટુતર હોતી હૈ,  
તથા ગંધ આદિ દ્રવ્ય કી અપેક્ષા શબ્દ, દ્રવ્ય, સૂક્ષ્મ, પ્રભૂત, ઔર માણુક

વર્ષના આયુષ્યવાળા પ્રાણીઓની અપેક્ષાએ સંખ્યાત વર્ષ પ્રમિત કાળવાળી  
મનાય છે, અને જે પલ્યોપમ આદિ અસંખ્યાત વર્ષના આયુષ્યવાળા જીવ હોય  
છે. તેમની અપેક્ષાએ અસંખ્યાત વર્ષ પ્રમિત કાળવાળી મનાય છે. તે અપેક્ષાએ  
તેનો કાળ અસંખ્યાત તથા સંખ્યાત વર્ષનો બતાવ્યો છે. ॥ ૩ ॥

આ રીતે અવગ્રહ આદિનું સ્વરૂપ અને કાળપ્રમાણ બતાવીને હવે  
શ્રોત્રેન્દ્રિય આદિમાં પ્રાપ્યકારિતા તથા અપ્રાપ્યકારિતા પ્રકટ કરે છે—  
“પુટ્ટં સુણેહં સહં” इत्यादि જે શ્રોત્ર ઇન્દ્રિય છે, તે માત્ર સ્પૃષ્ટ શબ્દને જ  
સંભળે છે. તે કારણે તે પ્રાપ્યકારી છે. જેમ શરીર ઉપર ધૂલિકણોનો સંપાત  
થાય છે એજ પ્રમાણે શ્રોત્રેન્દ્રિયની સાથે શબ્દનો સ્પર્શ માત્ર થતાં જ તે તેને  
જાણી લે છે.

શંકા—સ્પર્શમાત્ર થતાં જ શ્રોત્રેન્દ્રિય શબ્દને કેવી રીતે સંભળે છે ?  
ઉત્તર—જાકીની ઇન્દ્રિયો કરતાં શ્રોત્ર ઇન્દ્રિય સામાન્ય રીતે વધારે ચપલ  
હોય છે, તથા ગંધ આદિ દ્રવ્યની અપેક્ષાએ શબ્દદ્રવ્ય, સૂક્ષ્મ, પ્રભૂત અને

પ્રભૂતાનિ ભાવુકાનિ ચ, અર્થાત્-શ્રોત્રેન્દ્રિયસંસર્ગેણ તથાવિધપરિણમનશીલાનિ, શબ્દપુદ્ગલા એવ સર્વતસ્તદિન્દ્રિયં વ્યાપ્નુવન્તિ । તતઃ સ્પૃષ્ટમાત્રાણ્યપિ શબ્દદ્રવ્યાણિ શ્રોત્રેન્દ્રિયેણ ગ્રહીતું શક્યન્તે ।

રૂપં પુનરસ્પૃષ્ટમેવ=અસંવદ્ધમેવ પશ્યતિ=ગૃહ્ણતિ । પુનઃ શબ્દાદસ્પૃષ્ટમપિ યોગ્યદેશાવસ્થિતમેવ ગૃહ્ણતિ, નત્વયોગ્યદેશાવસ્થિતમધોલોકાદિસ્થિતમ્, ચક્ષુષોઽપ્રાપ્યકારિત્વાત્, પરિમિતદેશસ્થવિષયગ્રાહિત્વાચ્ચ । ‘તુ’ શબ્દ એવકારાર્થે વર્તતે । તથા

હોતે હૈં, અર્થાત્-શ્રોત્ર ઇન્દ્રિય કે સાથ શબ્દ દ્રવ્ય કા સંસર્ગ હોતે હી ઉસમેં તથાવિધ પરિણમન્ શીલતા આ જાતી હૈ । શબ્દ પુદ્ગલ હી સર્વ તરફ સે ઉસ ઇન્દ્રિય કો વ્યાપ્ત કર લેતે હૈં, ઇસલિયે સ્પૃષ્ટમાત્ર શબ્દ દ્રવ્ય શ્રોત્ર ઇન્દ્રિય દ્વારા ગ્રહણ કિયે જાતે હૈં, અતઃ વહ પ્રાપ્યકારી બત-લાઈ ગઈ હૈ । યહી વાત ગાથાકારને “પુદ્ગં સુણેઝસદ્” ‘સ્પૃષ્ટં શ્રુણોતિ શબ્દમ્’ ઇસ ગાથાંશ દ્વારા સ્પષ્ટ કી હૈ । ચક્ષુ ઇન્દ્રિય અસ્પૃષ્ટરૂપ કો દેખતી હૈ, અતઃ વહ અપ્રાપ્યકારી કહી ગઈ હૈ । ગાથા મેં પુનઃ શબ્દ ઇસ વાત કી સૂચના કે નિમિત્ત હૈ કિ યદ્યપિ ચક્ષુ ઇન્દ્રિય અસ્પૃષ્ટરૂપ કો હી જાનતી હૈ તો બી વહ યોગ્ય દેશ મેં અવસ્થિત હુએ હી ઉસ રૂપ કો ગ્રહણ કરતી હૈ, અધોલોક આદિ અયોગ્ય દેશ મેં સ્થિતરૂપ કો નહીં, ક્યોં કિ યહ અપ્રાપ્યકારી માની ગઈ હૈ । તથા ઇસ ઇન્દ્રિય કા સ્વભાવ હી કુછ એસા હૈ કિ જિસકી વજહ સે યહ પરિમિત દેશ મેં રહે હુએ વિષય કો ગ્રહણ કરતી હૈ । ગાથા મેં ‘તુ’ શબ્દ ‘એવ’ કે અર્થ મેં આચા હૈ । ઘ્રાણ-

ભાવુક હોય છે, એટલે કે-શ્રોત્ર ઇન્દ્રિયની સાથે શબ્દદ્રવ્યનો સંસર્ગ થતા જ તેમાં તે પ્રકારની પરિણમન શીલતા આવી જાય છે. શબ્દ પુદ્ગલ જ બધી તરફથી તે ઇન્દ્રિયને આવરી લે છે, તે કારણે શબ્દદ્રવ્યનો સ્પર્શમાત્ર શ્રોત્રેન્દ્રિય વડે ગ્રહણ થાય છે, તેથી તેને પ્રાપ્યકારી દર્શાવી છે. એજ વાત સૂત્રકારે “પુદ્ગં સુણેઝ સદ્”-સ્પૃષ્ટં શ્રુણોતિ શબ્દમ્” એ ગાથાંશ દ્વારા સ્પષ્ટ કરેલ છે. ચક્ષુ ઇન્દ્રિય અસ્પર્શ્ય રૂપને દેખે છે, તેથી તેને અપ્રાપ્યકારી કહેલ છે. ગાથામાં પુનઃ શબ્દ એ બાબતની સૂચનાને માટે છે. કે ચક્ષુ ઇન્દ્રિય અસ્પર્શ્ય રૂપને જ જાણે તો પણ તે યોગ્ય સ્થાનમાં રહેલ તે રૂપને જ ગ્રહણ કરે છે, અધોલોક આદિ અયોગ્ય સ્થાનમાં રહેલ રૂપને નહીં, કારણ કે તે અપ્રાપ્યકારી ગણેલ છે. તથા આ ઇન્દ્રિયનો સ્વભાવ જ કંઈક અવે છે કે જેને કારણ તે મર્યાદિત સ્થાનમાં રહેલ વિષયને ગ્રહણ કરે છે. ગાથામાં “તુ” શબ્દ “એવ”ના

ગન્ધં રસં ચ સ્પર્શં ચ વદ્વસ્પૃષ્ટં-વદ્વમ્=આશ્લિષ્ટમ્ આત્મપ્રદેશૈરાત્મીકૃતં-દુગ્ધે જલ-  
મિથેત્યર્થઃ, સ્પૃષ્ટં=સ્પૃષ્ટમાત્રમ્, શરીરે રજઃકણવત્ । આર્ષત્વાત્-‘વદ્વપુટ્ઠં’ इति ।  
અર્થસ્તુ સ્પૃષ્ટં વદ્વં ચ સ્પૃષ્ટવદ્વમિતિ બોધ્યમ્, પૂર્વં સ્પૃષ્ટં પશ્ચાદ્ વદ્વં સ્પૃષ્ટવદ્વમ્,  
સ્પર્શમાત્રાઽનન્તરમાત્મપ્રદેશૈરાગૃહીતમિત્યર્થઃ । ગ્રાણાદિભિરિન્દ્રિયૈર્જાનાતીતિ વ્યાઘ્ર-  
ણાતિ=તીર્થકરઃ કથયતિ ।

इह शब्दमुत्कर्षतो द्वादशयोजनेभ्य आगतं जीवः शृणोति । गन्धरसस्पर्श  
द्रव्याणि तु प्रत्येकमुत्कर्षतो नवभ्यो योजनेभ्य आगतानि घ्राणरसनस्पर्शनेन्द्रियै-  
र्जीवो गृह्णाति । जघन्यतस्त्वरूपं विहाय शब्दादिद्रव्याणि अङ्गुलासंख्येयभागादा-  
गतानि गृह्णाति । चक्षुषा तु जघन्यतो योग्यदेशस्थयोग्यविषयमङ्गुलसंख्येय-  
भागवर्ति द्रव्यं गृह्णाति । उत्कर्षतस्तु आत्माङ्गुलेन सातिरेकयोजनलक्षणवर्ति

इन्द्रिय, रसनाइन्द्रिय तथा स्पर्शइन्द्रिय, ये अश्लिष्ट एवं स्पृष्ट हुए अपने  
विषय को-गंध रस एवं स्पर्श को जानती हैं । “वद्व पुट्ठं” यह आर्षवाक्य  
है अतः यहां ‘पुट्ठं वद्व’ ऐसा समझना चाहिये, अर्थात् इन इन्द्रियों  
का विषय पहिले इन इन्द्रियोंके साथ स्पृष्ट होता है बादमें वद्व होता है ।  
ऐसा तीर्थकर गणधरोने कहा है ।

बारह योजनसे आये हुए शब्दको कर्ण इन्द्रियके द्वारा जीव उत्कृष्ट  
की अपेक्षा विषय कर लिया करता है । इसी तरह उत्कृष्टकी अपेक्षा  
नौ २ योजन तक के गंध, रस, और स्पर्श द्रव्यों को घ्राण आदि इन्द्रियों  
के द्वारा जीव विषय कर लिया करता है । जघन्यकी अपेक्षा रूपको  
छोड़ कर अंगुलके असंख्यातवें भागसे आये हुए शब्दादिक द्रव्योंको

અર્થમાં આવ્યો છે. ઘ્રાણેન્દ્રિય, રસનાઇન્દ્રિય તથા સ્પર્શઇન્દ્રિય, એ આશ્લિષ્ટ  
અને સ્પૃષ્ટ થયેલ પોતાના વિષયને-ગંધ, રસ અને સ્પર્શને જાણે છે. “વદ્વ  
પુટ્ઠં” એ આર્ષવાક્ય છે તેથી અહીં “પુટ્ઠં વદ્વ” એમ સમજવાનું છે.  
એટલે કે એ ઇન્દ્રિયોના વિષય પહેલાં એ ઇન્દ્રિયોની સાથે સ્પૃષ્ટ થાય છે, પછી  
વદ્વ થાય છે. એવું તીર્થકર ગણધરોએ કહ્યું છે.

બાર યોજનથી આવેલ શબ્દને જીવ કર્ણઇન્દ્રિય દ્વારા ઉત્કૃષ્ટની અપેક્ષાએ  
વિષય કરી લે છે. એજ પ્રમાણે ઉત્કૃષ્ટની અપેક્ષાએ નવ, નવ, યોજન સુધીના  
ગંધ, રસ અને સ્પર્શ દ્રવ્યોને ઘ્રાણેન્દ્રિય આદિ ઇન્દ્રિયો દ્વારા જીવ વિષય કરી  
લે છે. જઘન્યની અપેક્ષાએ રૂપને છોડીને અંગુલના અસંખ્યાતમાં ભાગથી



દ્રવ્યમ્ । એતદપિ ભાસ્વરદ્રવ્યમધિકૃત્યોચ્યતે । ભાસ્વરદ્રવ્યમેકવિંશતિયોજનલક્ષે-  
ભ્યોઽપિ પરતઃ પશ્યન્તિ । યથા પુષ્કરવરદ્વીપાર્ધે માનુષોત્તરપર્વતપ્રત્યાસન્નવર્તિનો  
મનુષ્યાઃ કર્કસંક્રાન્તૌ સૂર્યવિમ્બં પશ્યન્તીતિ વિજ્ઞેયમ્ । તથાચોક્તમ્—

લક્ષેહિ એગવીસા,—એ સાઈરેગેહિ પુક્કરવરદ્વમ્મિ ।

ઉદયે પેચ્છંતિ નરા, સૂરં ઉક્કોસણ દિવસે ॥ ૧ ॥

છાયા—લક્ષેરેકવિંશત્યા, સાતિરેકૈઃ પુષ્કરાર્ધે ।

ઉદયે પ્રેક્ષન્તે નરાઃ, સૂર્યમ્ ઉત્કર્ષકે દિવસે ॥૧॥ ઇતિ ॥૪॥

નનુ ‘સ્પૃષ્ઠં શૃણોતિ શબ્દ’—મિત્યુક્તમ્, તત્ર કિં શબ્દપ્રયોગનિઃસૃતાન્યેવ કેવ-  
લાનિ શબ્દ દ્રવ્યાણિ શૃણોતિ, ઉતાન્યાન્યેવ તદ્વાવિતાનિ, આહોશ્વિત મિશ્રાણીતિ? ।

જીવ જાન લેતા હૈ । જઘન્યકી અપેક્ષા ચક્ષુકે દ્વારા જીવ અંગુલકે સંખ્યા-  
તવે ભાગવર્તિ, યોગ્ય દેશસ્થિત એસે યોગ્ય વિષયરૂપ દ્રવ્યકો જાન લેતા  
હૈ । તથા ઉત્કૃષ્ટકી અપેક્ષા આત્માઙ્ગુલકે માપસે કુછ અધિક એક લાખ  
યોજનવર્તી દ્રવ્યકો જાન લેતા હૈ । યહ કથન ભાસ્વર—ચમકતા હુઆ દ્રવ્યકી  
અપેક્ષા કહા ગયા જાનના ચાહિયે । જીવ ચક્ષુ ઇન્દ્રિયકે દ્વારા ઇક્કીસ  
લાખ યોજનસે મી દૂર રહે હુએ ભાસ્વર દ્રવ્યકો દેખ લેતા હૈ, જૈસે—કર્ક  
સંક્રાન્તિમેં પુષ્કર દ્વીપાર્ધમેં રહે હુએ માનુષોત્તર પર્વતકે પ્રત્યાસન્નવર્તી—  
જીવ સૂર્ય કે વિમ્બકો દેખ લિયા કરતે હૈ । કહા મી હૈ—

“લક્ષેહિ એગવીસાણ, સાઈરેગેહિ પુક્કરવરદ્વમ્મિ ।

ઉદયે પેચ્છંતિ નરા, સૂરં ઉક્કોસણ દિવસે ” ॥ ૧ ॥

આવેલ શબ્દાદિક દ્રવ્યોને જીવ જાણી લે છે. જઘન્યની અપેક્ષાએ ચક્ષુ દ્વારા  
જીવ અંગુલના અસંખ્યાતમાં ભાગવર્તિ, યોગ્ય સ્થાનમાં રહેલ એવાં યોગ્ય  
વિષયરૂપ દ્રવ્યોને જાણી લે છે. તથા ઉત્કૃષ્ટની અપેક્ષાએ આત્માઙ્ગુલના માપથી  
કંઈન વધારે એક લાખ યોજનવર્તી દ્રવ્યને જાણી લે છે. આ કથન ભાસ્વર  
દ્રવ્યની અપેક્ષાએ કહેલ છે, એમ સમજવાનું છે. જીવ ચક્ષુઇન્દ્રિય દ્વારા એકવીસ  
લાખ યોજનથી પણ દૂર રહેલ ભાસ્વર દ્રવ્ય જોવે છે. જેમકે કર્ક સંક્રાન્તિમાં  
પુષ્કર દ્વીપાર્ધમાં રહેલ માનુષોત્તર પર્વતના પ્રત્યાસન્નવર્તી જીવ સૂર્યના બિંબને  
જોવે છે. કહ્યું પણ છે—

“લક્ષે હિ એગવીસાણ સાઈ રેગે હિ પુક્કર વરદ્વમ્મિ ।

ઉદયે પેચ્છંતિ નરા, સૂરં ઉક્કોસણ દિવસે ” ॥૧॥

ઉચ્યતે—ન કેવલાનિ શબ્દપ્રયોગનિઃસૃતાનિ શબ્દદ્રવ્યાણિ શૃણોતિ। યતઃ કેવલા-  
નિવાસકાનિ, તથા—શબ્દયોગ્યાનિ ચ દ્રવ્યાણિ સકલલોકવ્યાપ્તાનિ, અતસ્તદ્ભાવિતાનિ  
વિના કેવલાનામસત્ત્વાત્ કેવલાનિ ન શ્રોતું શક્યન્તે । કિંતુ તદ્ભાવિતાનિ મિશ્રાણિ  
વા શૃણોતિ । અમુમર્થે પ્રતિબોધયિતુમાહ—‘ ભાસા ’ ઇતિ । ભાષ્યતે ઇતિ ભાષા=  
વાક્ । શબ્દરૂપતયા નિસૃતા પુદ્ગલદ્રવ્યસંહતિરિત્યર્થઃ । સા ચ દ્વિવિધા—વર્ણાત્મિકા

શંકા—મનુષ્ય કર્ણ ઇન્દ્રિય દ્વારા સ્પૃષ્ટ શબ્દકો સુનતા હૈ એસા  
જો કહના હૈ ઉસ વિષયમેં યહ પ્રશ્ન હૈ કિ મનુષ્ય કર્ણ ઇન્દ્રિયદ્વારા શબ્દ  
પ્રયોગ કરતે સમય નિકલે હુએ એક માત્ર શબ્દ દ્રવ્યોંકો સુનતા હૈ ?  
અથવા इनसे जुदे तद्भाविता शब्दों को ? અથવા મિશ્ર શબ્દોંકો સુનતા હૈ ?

ઉત્તર—મનુષ્ય કર્ણ ઇન્દ્રિય દ્વારા કેવલ શબ્દ પ્રયોગ નિસૃત શબ્દ  
દ્રવ્યોંકો નહીં સુનતા હૈ, ક્યોં કિ વે ઉસ સમય વાસક ( સંસ્કારક )  
હોતે હૈ । તથા શબ્દ યોગ્ય દ્રવ્ય સકલ લોકમેં વ્યાપ્ત રહતે હૈ, ઇસ  
લિયે તદ્ભાવિત શબ્દોંકે વિના કેવલ શબ્દ દ્રવ્યોંકા કર્ણ ઇન્દ્રિયદ્વારા  
સુનના અસંભવ હૈ, અતઃ તદ્ભાવિત શબ્દોંકા અથવા મિશ્ર શબ્દોંકા હી  
સુનના સંભવ હૈ, ઇસ લિયે શ્રોતા એસે શબ્દોંકો હી સુનતા હૈ, કેવલ  
શબ્દ દ્રવ્યોંકો નહીં ॥ ૪ ॥ યહી વાત સૂત્રકાર અગલી ગાથાસે સ્પષ્ટ  
કરતે હૈ—‘ ભાસા સમસેઢીઓં ’ ઇત્યાદિ । શબ્દ રૂપસે પરિણત હો કર  
નિકલે હુએ પુદ્ગલ દ્રવ્ય સમૂહકો ભાષા કહતે હૈ । યહ ભાષા વર્ણસ્વરૂપ

શંકા—મનુષ્ય કર્ણેન્દ્રિય દ્વારા સ્પૃષ્ટ શબ્દને સાંભળે છે એમ જે કહેલું  
છે, તે વિષયમાં આ પ્રશ્ન છે કે—મનુષ્ય કર્ણેન્દ્રિય દ્વારા શબ્દ પ્રયોગ કરતી  
વખતે નિકળેલ એક માત્ર શબ્દ દ્રવ્યોને સાંભળે છે ? અથવા તેમનાથી જુદા  
તદ્ભાવિત શબ્દોને ? અથવા મિશ્ર શબ્દોને સાંભળે છે ?

ઉત્તર—મનુષ્ય કર્ણેન્દ્રિય દ્વારા ક્ષત શબ્દ પ્રયોગ નિસૃત શબ્દ દ્રવ્યોને  
સાંભળતો નથી, કારણે કે તેઓ તે સમયે વાસક (સંસ્કારક) હોય છે. તથા  
શબ્દયોગ્ય દ્રવ્ય સકળ લોકમાં વ્યાપ્ત રહ્યા કરે છે, તેથી તદ્ભાવિત શબ્દો  
વિના ક્ષત શબ્દ દ્રવ્યોનું કર્ણેન્દ્રિય દ્વારા સાંભળાવું તે અસંભવિત છે, તેથી  
તદ્ભાવિત શબ્દોનું અથવા મિશ્ર શબ્દોનું જ સાંભળાવું સંભવિત છે, તે કારણે  
શ્રોતા એવાં શબ્દોને જ સાંભળે છે, ક્ષત શબ્દ દ્રવ્યોને જ નહીં ॥ ૪ ॥ એ જ  
વાત સૂત્રકાર હવે પછીની ગાથામાં સ્પષ્ટ કરે છે—

“ ભાસા સમસેઢીઓં ” ઇત્યાદિ.

શબ્દરૂપે પરિણત થઈને નિકળેલ પુદ્ગલ દ્રવ્યસમૂહને ભાષા કહે છે.

અવર્ણાત્મિકા ચ । તત્ર વર્ણાત્મિકા લોકવ્યવહારરૂપા, અવર્ણાત્મિકા ચ ભેરીભાક્ષા-  
રાદિરૂપા । તસ્યાઃ સમાઃ શ્રેણયઃ-ભાષાસમશ્રેણયઃ । इह श्रैणयः क्षेत्रप्रदेशे पञ्चय  
उच्यन्ते । તાશ્ચ સર્વસ્યેવ ભાષમાણસ્ય ષટ્સુ દિક્ષુ વિઘ્નન્તે । યાસુ શ્રેણિષુ નિઃસૃતા  
સતી ભાષા પ્રથમસમય એવ લોકાન્તમનુધાવતિ, તા ઇતઃ=ગતઃ-પ્રાપ્તઃ-ભાષાસમ-  
શ્રેણીતઃ=ભાષાસમશ્રેણિવ્યવસ્થિત ઇત્યર્થઃ, યં શબ્દં=પુરુષાદિસમ્બન્ધિનં ભેર્યાદિ-  
સમ્બન્ધિનં વા શૃણોતિ=જાનાતિ, યત્તચ્છબ્દયોર્નિત્યસમ્બન્ધાત્ તં મિશ્રિતં શૃણોતિ-  
નિઃસૃતશબ્દ દ્રવ્યભાવિતાઽપાન્તરાલસ્થશબ્દદ્રવ્યમિત્યર્થઃ । વિશ્રેણિં પુનઃ ઇત ઇતિ  
યોજ્યમ્ । વિશ્રેણિમ્ ઇતઃ=ગતઃ-પ્રાપ્તઃ-વિશ્રેણિવ્યવસ્થિત ઇત્યર્થઃ । અથવા-વિશ્રે-  
ણિસ્થિતો વિશ્રેણિરિત્યુચ્યતે, પદેઽપિ પદાવયવપ્રયોગદર્શનાત્, યથા-‘ભીમસેનઃ  
સેનઃ, સત્યભામા ભામા’ ઇતિ । સ તુ નિયમાત્ પરાઘાતે સતિ શબ્દં શૃણોતિ । અયં ભાવઃ  
યાનિ વાસિતાનિ શબ્દદ્રવ્યાણિ તાન્યેવ નિઃસૃતશબ્દદ્રવ્યાભિઘાતે સતિ શૃણોતિ,  
ન તુ નિઃસૃતાનિ કેવલાનિ, તેષામનુશ્રેણિગમનાત્ પ્રતિઘાતાભાવાચ્ચેતિ ॥૫॥

और अवर्ण स्वरूपसे दो प्रकारकी होती है । जिस भाषामें लोकव्यवहार  
चलता है वह वर्णात्मक भाषा है, तथा भेरी आदिकी ध्वनिरूप भाषा  
अवर्णस्वरूप है । भाषाकी समश्रेणी का तात्पर्य है-भाषाके क्षेत्रप्रदेशमें  
समान पंक्तिका होना । ये श्रेण्यां बोलनेवाले व्यक्तिकी छहों दिशाओं  
में हुआ करती हैं । इन्हीं में से हो कर भाषा प्रथम समयमें ही लोकके  
अन्त तक पहुंच जाती है, अतः भाषाकी समश्रेणिमें व्यवस्थित हुआ  
जब किसी शब्दको चाहे वह पुरुष आदि संबंधी हो या भेरी आदि  
संबंधी हो सुनता है तो वह उसे मिश्रित ही सुनता है । तथा जो व्यक्ति  
भाषाकी समश्रेणीमें स्थित नहीं है किन्तु विश्रेणिमें स्थित है वह निय-  
मतः पराघात होने पर वासित शब्द द्रव्योंको ही सुनता है, केवल

એ ભાષા વર્ણસ્વરૂપ અને અવર્ણસ્વરૂપ એ બે પ્રકારની હોય છે. જે ભાષામાં  
લોકવ્યવહાર ચાલે છે તે વર્ણાત્મક ભાષા છે, તથા ભેરી આદિના ધ્વનિરૂપ  
ભાષા અવર્ણસ્વરૂપ છે. ભાષાની સમશ્રેણીનું તાત્પર્ય આ છે-

ભાષાના ક્ષેત્રપ્રદેશમાં સમાન પંક્તિનું હોવું. એ શ્રેણિઓ બોલનાર  
વ્યક્તિની છઠ્ઠે દિશાઓમાં થાય છે. તેમની અંદરથી ભાષા પ્રથમ સમયમાં જ  
લોકના અન્ત સુધી પહોંચી જાય છે, તેથી ભાષાની સમશ્રેણિમાં રહેલ શ્રોતા  
જ્યારે કોઈ શબ્દને-ભલે તે પુરુષ આદિ સંબંધી હોય કે ભેરી આદિ સંબંધી  
હોય-સાંભળે છે ત્યારે તે તેને મિશ્રિત જ સાંભળે છે. તથા જે વ્યક્તિ ભાષાની  
સમશ્રેણિમાં રહેલ નથી પણ વિશ્રેણિમાં રહેલ છે, તે નિયમતઃ પરાઘાત થતા  
વાસિત શબ્દદ્રવ્યોને જ સાંભળે છે. ફક્ત નિસૃત શબ્દોને નહીં, કારણ કે તે

સંપતિ મતિજ્ઞાનપર્યાયશબ્દાનાહ—‘ઈહા૦’ इत्यादि । ईहनम् ईहा=सदर्थ-पर्यालोचनम् । अपोहः=निश्चयः । विमर्शः=विमर्शनम्-अवायात् पूर्व ईहायाश्चो-त्तरः प्रायः ‘शिरःकण्डूयनादयः पुरुषधर्मा इह न घटन्ते’—इति संप्रत्ययः, ईहाऽ-वायमध्यवर्ती प्रत्यय इत्यर्थः । तथा-मार्गणा-अन्वयधर्मान्वेषणरूपा । च शब्दः समुच्चयार्थः । गवेषणा=व्यतिरेकधर्माऽऽलोचनम् । तथा-संज्ञा-संज्ञानं, व्यञ्जनाव-ग्रहोत्तरकालभावी मतिविशेष इत्यर्थः । स्मृतिः=स्मरणं-पूर्वानुभूतार्थालम्बनः प्रत्यय-

નિસૃત શબ્દોં કો નહીં, કારણ કે વે શ્રેણિકે અનુસાર ગમન કર જાતે હૈં  
ઔર उनमें प्रतिघातका उस समय अभाव रहता है ॥ ५ ॥

અચ મતિજ્ઞાનકે પર્યાયવાચી શબ્દોં કો સૂત્રકાર વતલાતે હૈં—  
‘ઈહા૦’ इत्यादि ।

મતિજ્ઞાનકે પર્યાયવાચી નૌ નામ ઇસ પ્રકાર હૈં—ઈહા ૧, અપોહ ૨, વિમર્શ ૩, માર્ગણા ૪, ગવેષણા ૫, સંજ્ઞા ૬, સ્મૃતિ ૭, મતિ ૮, પ્રજ્ઞા ૯ । સદર્થકા વિચાર કરના ઇસકા નામ ઈહા ૧, ડસ વસ્તુકા નિશ્ચય હો જાના અપોહ ૨, અવાય કે પહિલે ંવં ઈહાકે વાદ હોનેવાલે વિચારકે નામ વિમર્શ ૩, ંવં અન્વય ધર્મોં કા અન્વેષણ કરના માર્ગણા હૈ ૪ । વ્યત્તિરેક ધર્મોં કી આલોચના કરના ઇસકા નામ ગવેષણા હૈ ૫ । વ્યજ્ઞ-નાવગ્રહકે ડત્તરકાલમેં જો મતિવિશેષ હોતા હૈ વહ સંજ્ઞા હૈ ૬ । પૂર્વ મેં અનુભૂત અર્થકા સ્મરણ કરના ઇસકા નામ સ્મૃતિ હૈ ૭ । અર્થકા પરિ-ચ્છેદ હો જાને પર મી ડસ અર્થકે સૂક્ષ્મ ધર્મોં કા આલોચન કરના

શ્રેણિ પ્રમાણે ગમન કરે છે. અને તેમનામાં તે સમયે પ્રતિઘાતનો અભાવ રહે છે ॥ ૫ ॥

હવે મતિજ્ઞાનના પર્યાયવાચી શબ્દો સૂત્રકાર બતાવે છે—“ઈહા” इत्यादि  
મતિજ્ઞાનના પર્યાયવાચી નવ નામ આ પ્રમાણે છે—(૧) ઈહા, (૨) અપોહ,  
(૩) વિમર્શ, (૪) માર્ગણા, (૫) ગવેષણા, (૬) સંજ્ઞા, (૭) સ્મૃતિ, (૮) મતિ  
અને (૯) પ્રજ્ઞા. (૧) સદર્થનો વિચાર કરવો તેનું નામ ‘ઈહા’ (૨) તે વસ્તુનો  
નિશ્ચય થઈ જવો તેનું નામ “અપોહ” (૩) અવાયની પહેલાં અને ઈહાની  
પછી થનાર વિચારનું નામ “વિમર્શ” (૪) અને અન્વયધર્મોનું અન્વેષણ કરવું તે  
“માર્ગણા” છે. (૫) વ્યતિરેક ધર્મોની આલોચના કરવી તેનું નામ “ગવેષણા”  
છે. (૬) વ્યંજનાવગ્રહના ઉત્તર કાળમાં જે મતિવિશેષ થાય છે તેનું નામ “સંજ્ઞા”  
છે. (૭) પૂર્વે અનુભવેલ અર્થનું સ્મરણ કરવું તેનું નામ “સ્મૃતિ” છે. (૮)  
અર્થનો પરિચ્છેદ થઈ ગયા પછી પણ તે અર્થના સૂક્ષ્મધર્મોનું આલોચન કરવું



ટીકા—‘ સે કિં તં સુચનાણપરોક્ષં ’ ઇતિ । અથ કિં તન્ શ્રુતજ્ઞાનપરોક્ષ-મિતિ શિષ્યપ્રશ્નઃ । ઉત્તરમાહ—શ્રુતજ્ઞાનપરોક્ષં=શ્રુતજ્ઞાનરૂપં પરોક્ષજ્ઞાનં ચતુર્દશવિધ પ્રજ્ઞપ્તં=તીર્થકરૈઃ પ્રરૂપિતમ્ । તદ્ યથા—અક્ષરશ્રુતમ્ ૧, અનક્ષરશ્રુતમ્ ૨ ઇત્યાદિ । એતેષાં ભેદાનાં સ્વરૂપમગ્રે વક્ષ્યતે । અક્ષરશ્રુતાનક્ષરશ્રુતભેદદ્વયે સંજ્ઞીશ્રુતીનાં શેષભેદાનામન્તર્ભાવેऽપિ પૃથગુપન્યાસો મન્દમતીનાં શિષ્યાણામનુગ્રહાયકૃત ઇતિ ॥મૂં ૩૭॥

અથ સૂત્રકારઃ શ્રુતજ્ઞાનસ્ય ચતુર્દશ ભેદાન્ વર્ણયતિ—

મૂલમ્—સે કિં તં અક્ષરસુચં ? । અક્ષરસુચં તિવિહં પળ્લન્તં । તં જહા—સન્નક્ષરં ૧, વંજળક્ષરં ૨, લઘ્વિઅક્ષરં ૩ । સે કિં તં સન્નક્ષરં ? સન્નક્ષરં—અક્ષરસ્સ સંઠાળાગિર્ઠ્ઠિ, સે તં સન્ન-ક્ષરં । સે કિં તં વંજળક્ષરં ? । વંજળક્ષરં—અક્ષરસ્સ વંજ-ળાભિલાવો । સે તં વંજળક્ષરં । સે કિં તં લઘ્વિઅક્ષરં ? । લઘ્વિઅક્ષરં—અક્ષરલઘ્વિયસ્સ લઘ્વિ અક્ષરં સમુપ્પજ્જઈ । તં છત્તિવિહં પળ્લન્તં તં જહા—સોઠ્ઠિંદિયલઘ્વિ—અક્ષરં, ચત્તિંદિય-લઘ્વિ અક્ષરં, ઘાણિંદિયલઘ્વિ અક્ષરં, રસણિંદિયલઘ્વિ—અક્ષરં, ફાસિંદિયલઘ્વિ અક્ષરં, નોઠ્ઠિંદિયલઘ્વિ—અક્ષરં । સે તં લઘ્વિ-અક્ષરં, સે તં અક્ષરસુચં ।

‘ પૂર્વવર્ણિત શ્રુતજ્ઞાન કિં જિસકા પરોક્ષરૂપસે વર્ણન કિયા ગયા હૈં ઉસકા કયા સ્વરૂપ હૈં ? ઉત્તર—શ્રુતજ્ઞાન કિં જિસકો પરોક્ષ કહા ગયા હૈં વહ ચૌદહ પ્રકારકા કહા ગયા હૈં । વે ચૌદહ પ્રકાર યે હૈં—અક્ષરશ્રુત ૧, અનક્ષરશ્રુત ૨, સંજ્ઞીશ્રુત ૬, અસંજ્ઞીશ્રુત ૪, ઇત્યાદિ ॥ મૂં ૩૭ ॥

પૂર્વ વર્ણિત શ્રુતજ્ઞાન કે જેનું પરોક્ષરૂપે વર્ણન કરાયું છે, તેનું શું સ્વરૂપ છે ?

ઉત્તર—શ્રુતજ્ઞાન કે જેને પરોક્ષ કહેવાયું છે. તે ચૌદ પ્રકારનું છે તે ચૌદ પ્રકાર આ પ્રમાણે છે—(૧) અક્ષર શ્રુત, (૨) અનક્ષર શ્રુત, (૩) સંજ્ઞીશ્રુત, (૪) અસંજ્ઞીશ્રુત. ઇત્યાદિ. ॥ સૂ. ૩૭ ॥



સે કિં તં અણવચ્ચરસુચં ? । અણવચ્ચરસુચં અણેગવિહં  
પણ્ણત્તં । તં જહા—

ગાથા—ઊસસિયં નીસસિયં, નિચ્છૂઠં ચાસિયં ચ છીયં ચ ।

નિસ્સિધિયમણુસારં, અણવચ્ચરં છેલિયાઈયં ॥ ૧ ॥

સે ત્તંઅણવચ્ચરસુચં ॥ સૂ૦ ૩૮ ॥

છાયા—અથ કિં તદક્ષરશ્રુતમ્ ? । અક્ષરશ્રુતં ત્રિવિધં પ્રજ્ઞપ્તમ્ । તદ્ યથા—  
સંજ્ઞાક્ષરં ૧, વ્યજ્ઞનાક્ષરં ૨, લબ્ધ્યક્ષરં ૩ । અથ કિં તત્ સંજ્ઞાક્ષરમ્ ? । સંજ્ઞાક્ષરમ્—  
અક્ષરસ્ય સંસ્થાનાડક્રતિઃ । તદેતત્ સંજ્ઞાક્ષરમ્ । અથ કિં તદ્ વ્યજ્ઞનાક્ષરમ્ ? ।  
વ્યજ્ઞનાક્ષરમ્—અક્ષરસ્ય વ્યજ્ઞનાભિલાપઃ । તદેતત્ વ્યજ્ઞનાક્ષરમ્ । અથ કિં તલ્લ-  
બ્ધ્યક્ષરમ્ ? । લબ્ધ્યક્ષરમ્—અક્ષરલબ્ધિકરસ્ય લબ્ધ્યક્ષરં સમુત્પદ્યતે । તત્ ષડ્વિધં  
પ્રજ્ઞપ્તં, તદ્ યથા—શ્રોત્રેન્દ્રિયલબ્ધ્યક્ષરમ્ ૧, ચક્ષુરિન્દ્રિયલબ્ધ્યક્ષરમ્ ૨, ગ્રાણેન્દ્રિ-  
લબ્ધ્યક્ષરમ્ ૩, રસનેન્દ્રિયલબ્ધ્યક્ષરમ્ ૪, સ્પર્શેન્દ્રિયલબ્ધ્યક્ષરમ્ ૫, નોઽન્દ્રિયલબ્ધ્ય-  
ક્ષરમ્ ૬ । તદેતલ્લબ્ધ્યક્ષરમ્ । તદેતદક્ષરશ્રુતમ્ ।

અથ કિં તદનક્ષરશ્રુતમ્ ? અનક્ષરશ્રુતમનેકવિધં પ્રજ્ઞપ્તમ્ । તદ્ યથા—

ગાથા—ઉચ્છ્વસિતં નિઃશ્વસિતં, નિષ્ઠ્યૂતં કાસિતં ચ ક્ષુતં ચ ।

નિસ્સિદ્ધિતમનુસારઃ, અનક્ષરં ચેલિતાદિકમ્ ॥ ૧ ॥

તદેતદનક્ષરશ્રુતમ્ ॥ સૂ૦ ૩૮ ॥

ટીકા—‘ સે કિં તં અવચ્ચરસુચં ’ ઇતિ । અથ કિં તદ્ અક્ષરશ્રુતમિતિ । પૂર્વ-  
નિર્દિષ્ટસ્યાક્ષરશ્રુતસ્ય કિં સ્વરૂપમિત્યર્થઃ । ઉત્તરમાહ—‘ અવચ્ચરસુચં તિવિહં  
પણ્ણત્તં ’ ઇત્યાદિ । અક્ષરશ્રુતં ત્રિવિધં પ્રજ્ઞપ્તમ્ । તદ્ યથા—સંજ્ઞાક્ષરં, વ્યજ્ઞનાક્ષરં,

અવ સૂત્રકાર શ્રુતજ્ઞાનકે ચૌદહ ભેદોંકા વર્ણન કરતે હૈં—‘ સે કિં તં  
અવચ્ચર સુચં ? ’ ઇત્યાદિ ।

પ્રશ્ન—પૂર્વનિર્દિષ્ટ અક્ષરશ્રુતકા કયા સ્વરૂપ હૈ ? ઉત્તર—પૂર્વનિર્દિષ્ટ  
અક્ષરશ્રુત ત્રીન પ્રકારકા બતલાયા ગયા હૈ । ઉસકે ત્રીન પ્રકાર યે હૈ ।

હવે સૂત્રકાર શ્રુતજ્ઞાના ચૌદ ભેદનું વર્ણન કરે છે—“ સે કિં તં અવચ્ચર  
સુચં ? ” ઇત્યાદિ.

પ્રશ્ન—પૂર્વનિર્દિષ્ટ અક્ષરશ્રુતનું શું સ્વરૂપ છે ?

ઉત્તર—પૂર્વનિર્દિષ્ટ અક્ષરશ્રુત ત્રણ પ્રકારનું બતાવ્યું છે. તે ત્રણ પ્રકારો

લઘ્યક્ષરં ચ । નનુ અક્ષરશ્રુતમિત્યસ્ય કઃ શબ્દાર્થઃ ? , ઉચ્યતે—ન ક્ષરતિ—ન ચલ-  
ત્યનુપયોગેઽપિ ન વિનશ્યતિ—इत्यक्षरं—सामान्यज्ञानम् । तद्धि जीवस्वभावतयाऽनु-  
पयोगेऽपि तच्चतो न प्रच्यवते । यद्यपि मत्यादिकं सर्वं ज्ञानमविशेषेणाक्षरं भवति,  
तथापीह श्रुतज्ञानस्य प्रस्तावादक्षरं श्रुतज्ञानमेव द्रष्टव्यम् । अस्य श्रुतज्ञानरूपस्य भा-  
वाक्षरस्य कारणं चाकारादिवर्णवृन्दम् , ततोऽकारादिवर्णोऽप्युपचारादक्षरमुच्यते ।  
तस्मात्—अक्षरं—ज्ञानरूपं च तच्छ्रुतम् अक्षरश्रुतं—भावश्रुतमिત્યર્થઃ । तथा—अक्षरम्=  
अकारादिवर्णरूपं श्रुतम्—अक्षरश्रुतं, द्रव्यश्रुतमिત્યર્થઃ । अक्षरश्रुतमित्यनेन द्रव्य-  
श्रुतं, भावश्रुतमितिद्वयं बोध्यम् । तत्र द्रव्यश्रुतस्य द्वौ भेदौ । संज्ञाक्षरं, व्यञ्जनाक्षरं  
च । भावश्रुतं च लઘ્યક્ષરરૂપમિતિ બોધ્યમ્ ।

સંજ્ઞાક્ષરશ્રુત ૧, વ્યજ્ઞનાક્ષરશ્રુત ૨, એવં લઘ્યક્ષરશ્રુત ૩ । અક્ષર શબ્દકા  
કયા અર્થ હૈ ? અક્ષર શબ્દકા અર્થ હૈ—સામાન્ય જ્ઞાન । અનુપયોગ અવસ્થા  
મેં ભી જો નષ્ટ નહીં હોતા હૈ વહ અક્ષર હૈ, એસી અક્ષરકી વ્યુત્પત્તિ હૈ ।  
જ્ઞાન સામાન્ય જીવકા લક્ષણ હૈ, અતઃ અક્ષર શબ્દકા વાચ્યાર્થ સામાન્ય  
જ્ઞાન હોતા હૈ । યદ્યપિ મતિજ્ઞાન આદિ સમસ્ત વિશેષ જ્ઞાન સામાન્યરૂપ  
સે અક્ષર રૂપ હૈં તૌ ભી યહાં શ્રુતજ્ઞાનકા સંબંધ ચલ રહા હૈ અતઃ “અક્ષર”  
સે શ્રુતજ્ઞાન હી યહાં ગૃહીત હુઆ હૈ અન્ય જ્ઞાન નહીં । હસ શ્રુતજ્ઞાનરૂપ  
ભાવાક્ષરકા કારણ અકાર આદિ વર્ણસમૂહ હૈ, અતઃ અકાર આદિ વર્ણ  
ભી ઉપચારસે અક્ષરરૂપ માન લિયે ગયે હૈં, હસ લિયે જ્ઞાનરૂપ જો શ્રુત  
હૈ વહ અક્ષરશ્રુત—ભાવશ્રુત હૈ । ઔર હસ ભાવશ્રુતકા કારણ હોનેસે અકાર-  
રાદિ અક્ષર દ્રવ્યશ્રુત હૈં । અક્ષરશ્રુતપદસે દ્રવ્યશ્રુત ઔર ભાવશ્રુત હન

નીચે પ્રમાણે છે—(૧) સંજ્ઞાક્ષર શ્રુત, (૨) વ્યજ્ઞનાક્ષર શ્રુત, અને (૩) લઘ્યક્ષર  
શ્રુત અક્ષર શબ્દનો શો અર્થ છે ? અક્ષર શબ્દનો અર્થ “સામાન્ય જ્ઞાન” છે.  
અનુપયોગ અવસ્થામાં પણ જે નાશ પામતું નથી તે અક્ષર છે, એવી અક્ષરની  
વ્યુત્પત્તિ છે. જ્ઞાનસામાન્ય જીવનું લક્ષણ છે, તેથી અક્ષર શબ્દનો વાચ્યાર્થ  
સામાન્યજ્ઞાન થાય છે. જે કે મતિજ્ઞાન આદિ સમસ્ત વિશેષજ્ઞાન સામાન્યરૂપે  
અક્ષરરૂપ છે, તે પણ અહીં શ્રુતજ્ઞાનનો વિષય આવી રહ્યો છે, તેથી “અક્ષર”  
વડે અહીં શ્રુતજ્ઞાન જ ગ્રહણ કરાયું છે, બીજું જ્ઞાન જહીં. આ શ્રુતજ્ઞાનરૂપ  
ભાવાક્ષરનું કારણ અકાર આદિ વર્ણસમૂહ છે, તેથી આકાર આદિ વર્ણ પણ  
ઔપચારિક રીતે અક્ષરરૂપ માની લેવામાં આવ્યા છે, તે કારણે જ્ઞાનરૂપ જે શ્રુત  
છે તે અક્ષરશ્રુત—ભાવશ્રુત છે. અને આ ભાવશ્રુતનું કારણ હોવાથી આકારાદિ અક્ષર  
દ્રવ્યશ્રુત છે. અક્ષરશ્રુત પદથી દ્રવ્યશ્રુત અને ભાવશ્રુત એ બન્ને ગ્રહણ કરાયા

અથ કિં તત્ સંજ્ઞાક્ષરમ્ ? इति शिष्यप्रश्नः ? । उत्तरमाह—‘सन्नखरं०’ इत्यादि । संज्ञाक्षरम् — अक्षरस्य = अकारादेर्वर्णस्य संस्थानाऽऽकृतिः—अयमर्थः—संज्ञानम्—अवबोधः—संज्ञा, अथवा—संज्ञायतेऽनयेति संज्ञा, तत्कारणम्—अक्षरं संज्ञा-क्षरम् । संज्ञायाश्च — कारणमाकृतिविशेषः, आकृतिविशेष एव नाम्नः कारणाद् व्यवहरणाच्च । ततोऽक्षरस्य पट्टिकादौ लिखितस्य संस्थानाकृतिः संज्ञाऽक्षरमुच्यते । तच्च ब्राह्मचादिलिपिभेदतोऽनेकप्रकारम् । तच्च समवायाङ्गसूत्रेऽष्टादशे समवाये द्रष्टव्यम् । तदेतत् संज्ञाक्षरं वर्णितम् ।

दोनોં का ग्रहण हुआ है, इनमें द्रव्यश्रुतके संज्ञाक्षर एवं व्यञ्जनाक्षर, ये दो भेद हैं । तथा भावश्रुतका लब्ध्याक्षररूप एक भेद है, कारण—भावश्रुत लब्ध्याक्षररूप होता है ।

फिर शिष्य पूछता है—पूर्वनिर्दिष्ट संज्ञाक्षरका क्या स्वरूप है ? उत्तर—अकार आदि वर्णका जो संस्थाना कृति—रचना विशेष है वह संज्ञाक्षर है । संज्ञा शब्दका अर्थ—अवबोध—ज्ञान है, अथवा जिसके द्वारा पदार्थका भान होता है वह संज्ञा है, इसका जो कारण है वह संज्ञाक्षर है । संज्ञाका कारण आकृति विशेष होता है । आकृति विशेषमें ही तो नाम किया जाता है, और व्यवहारमें भी उसे ही काममें लिया जाता है, इसलिये पट्टिका आदिमें लिखित अक्षर की जो संस्थानाकृति है वह संज्ञा-क्षर है, ऐसा इसका फलितार्थ होता है । यह संज्ञाक्षर ब्राह्मी आदि लिपि के भेदसे अठारह प्रकारका बतलाया गया है । यह बात समवायाङ्गसूत्रमें अठारहवें समवायमें कही गई है, अतः जिज्ञासुओं को वहां देख लेना

છે, તેમનામાં દ્રવ્યશ્રુતના સંજ્ઞાક્ષર અને વ્યંજનાક્ષર એ બે ભેદ છે, તથા ભાવ-શ્રુતનો લબ્ધ્યાક્ષર રૂપ એક ભેદ છે. કારણ કે ભાવશ્રુત લબ્ધ્યાક્ષર રૂપ હોય છે.

વળી શિષ્ય પૂછે છે—પૂર્વનિર્દિષ્ટ સંજ્ઞાક્ષરનું શું રવરૂપ છે ?

ઉત્તર—અકાર આદિ વર્ણની જે સંસ્થાકૃતિ—રચના વિશેષ છે તે સંજ્ઞા-ક્ષર છે. સંજ્ઞા શબ્દનો અર્થ—અવબોધ—જ્ઞાન છે અથવા જેના દ્વારા પદાર્થનું ભાન થાય છે તે સંજ્ઞા છે. તેનું જે કારણ છે તે સંજ્ઞાક્ષર છે. સંજ્ઞાનું કારણ આકૃતિ વિશેષ હોય છે. આકૃતિવિશેષમાં જ તો નામ કરાય છે, અને વ્યવહારમાં પણ તેને જ કામમાં લેવાય છે. તે કારણે પાટી આદિમાં લખેલ અક્ષરની જે સંસ્થાનાકૃતિ છે તે સંજ્ઞાક્ષર છે. એવો તેનો ફલિતાર્થ થાય છે. આ સંજ્ઞાક્ષર બ્રાહ્મી આદિ લિપિના ભેદથી અનેક પ્રકારનો બતાવ્યો છે. આ વાત સમવાયાંગ સૂત્રના અઠારમા અધ્યયનમાં કહી છે, તેથી જિજ્ઞાસુઓએ ત્યાં ભેઠ લેવી.

અથ કિં તત્ વ્યંજનાક્ષરમ્ ? इति शिष्य प्रश्नः । उत्तरमाह ' वंजणक्खरं ' इत्यादि । व्यंजनाक्षरम्-अक्षरस्य व्यंजनाभिलाप इति । व्यज्यते-प्रकाश्यतेऽने-  
नार्थः प्रदीपेनेव घट इति व्यंजनम्-उच्चार्यमाणमकारादिकं वर्णजातम्, तस्य विव-  
क्षितार्थाऽभिव्यञ्जकत्वात् । व्यञ्जनं च तदक्षरं चेति व्यंजनाक्षरम् । अमुमर्थमाश्रि-  
त्याह ' वंजणक्खरं अक्खरस्स वंजणाभिलापो ' इति । व्यंजनाक्षरमक्षरस्य व्यंज-  
नाभिलापः । अक्षरस्य=अकारादेर्वर्णसमूहस्य, व्यंजनाभिलापः=व्यञ्जनेन=व्यञ्जक-  
त्वेन, अभिलापः=उच्चारणम् । अर्थव्यञ्जकत्वेनोच्चार्यमाणमकारादिवर्णजातमित्यर्थः ।

इह प्रसङ्गवशाद् व्यंजनाक्षरस्य भेदाः प्रदर्श्यन्ते —

अर्थाभिव्यञ्जकं तद् व्यंजनाक्षरं द्विविधम्-यथार्थनियतम्, अयथार्थनियतं च ।  
तत्र-यथार्थनियतम्-अन्वर्थयुक्तम् । यथा-क्षपयतीति क्षपणः=मुनिः, तपसा कर्म-

चाहिये । इस प्रकार यह संज्ञाक्षर है ? ।

प्रश्न—व्यंजनाक्षर क्या है ? उत्तर—दीपकके द्वारा जिस तरहसे  
घट प्रकाशित किया जाता है, उसी प्रकार जिसके द्वारा अर्थका प्रकाशन  
होता है वह व्यंजनाक्षर है । इस तरह उच्चार्यमाण अकार आदि समूह  
का नाम व्यंजनाक्षर कहा गया है, क्योंकि इसीके द्वारा ही विवक्षित  
अर्थका बोध हुआ करता है । व्यंजनाक्षर श्रुत यथार्थनियत १ और अय-  
थार्थनियत २ के भेदसे दो प्रकारका है । सार्थक नामसंपन्न जो अक्षर-  
होता है उसका नाम यथार्थनियत है जैसे क्षपण शब्द । यह शब्द “क्षप-  
यतीति क्षपणः” जो कर्मों को नष्ट करे वह क्षपण-मुनि कहलाता है,  
इस सार्थक नाम वाला है, इसलिये इस शब्द को अपने अर्थ के साथ  
नियत माना गया है । इसी तरह तपन-सूर्य आदि शब्द भी इसी तरह के

આ પ્રકારનું આ સંજ્ઞાક્ષર છે (૧).

પ્રશ્ન—વ્યંજનાક્ષર શું છે ? ઉત્તર—જે રીતે દીવા વડે ઘડાને પ્રકાશિત  
કરાય છે એજ રીતે જેના દ્વારા અર્થ પ્રકાશિત થાય છે, તે વ્યંજનાક્ષર છે. આ  
રીતે ઉચ્ચાર્યમાણ અક્ષર આદિ સમૂહનું નામ વ્યંજનાક્ષર કહેલ છે, કારણ કે  
તેના દ્વારા જ વિવક્ષિત અર્થનો બોધ થાય છે. વ્યંજનાક્ષરશ્રુતના જે ભેદ છે—(૧)  
યથાર્થ નિયત, અને (૨) અયથાર્થ—નિયત. સાર્થક નામ સંપન્ન જે અક્ષર હોય  
છે, તેનું નામ યથાર્થ નિયત છે. જેમકે ક્ષપણ શબ્દ. આ શબ્દ “ક્ષપયતીતિ  
ક્ષપણઃ” જે કર્મોનો ક્ષય કરે તે ક્ષપણ-મુનિ કહેવાય છે એ સાર્થક નામવાળો  
છે, તે કારણે એ શબ્દને પોતાના અર્થની સાથે નિયત માનેલ છે. એજ રીતે તપન  
આદિ શબ્દને પણ એજ પ્રકારના બાળવા. અયથાર્થનિયત તે છે કે જે સાર્થક

ક્ષપકત્વાત્ । તપતીતિ તપનઃ=સૂર્યઃ-ઇત્યાદિ । અયથાર્થનિયતં યથા-ઇન્દ્રં ન ગો-  
પાયતિ=ન પાલયતિ, તથાપીન્દ્ર-ગોપકઃ કીટવિશેષઃ । ન પલમશ્નાતિ=ન માંસં  
ભક્ષતિ તથાપિ પલાશઃ ઇત્યાદિ ।

અથવા-તદ્ વ્યંજનાક્ષરં દ્વિવિધમ્-એકપર્યાયમ્, અનેકપર્યાયં ચ । એકઃ  
પર્યાયોઽભિધેયો યસ્ય તદેકપર્યાયમ્ । યથા - અલોકઃ, સ્થણ્ડિલમ્-ઇત્યાદિ ।  
અલોકશબ્દેન હિ અલોકાકાશલક્ષણ એક એવ પર્યાયોઽભિધીયતે । સ્થણ્ડિલશબ્દેન  
ચ સ્થણ્ડિલરૂપ એક એવ પર્યાયઃ । અનેકે પર્યાયા અભિધેયા યસ્ય તદનેક-  
પર્યાયમ્ । યથા-લોક ઇતિ । જગત્, બ્રુવનમ્, સંસારઃ, ઇત્યનેકે પર્યાયા લોક-  
શબ્દસ્ય સન્તિ ।

જાનના ચાહિયે । અયથાર્થનિયત વહ હૈ જો સાર્થક નામવાલા નહીં હૈ-  
જૈસે-ઇન્દ્રગોપક શબ્દ । ઇન્દ્રગોપક કીટવિશેષ કા નામ હૈ । યહ શબ્દ  
અપને અર્થ સે સંપન્ન નહીં હૈ, કારણ વહ ઇન્દ્ર કી રક્ષા થોડે હી કરતા  
હૈ । કેવલ ઇસકા નામ હી નામ હૈ । એસે અર્થશૂન્ય શબ્દ અયથાર્થનિયત  
માને ગયે હૈ । ઇસી તરહ પલાશ આદિ શબ્દ ભી ઇસી શ્રેણી કે જાનના  
ચાહિયે, કારણ પલ-માંસ કો જો ખાતા હૈ ઇસકા નામ પલાશ હોતા હૈ,  
પરન્તુ પલાશ-ઢાંક માંસ કો ખાને કે કારણ પલાશ નહીં કહા ગયા હૈ  
કિન્તુ વહ તો ઇસકા નામ હી નામ હૈ ।

અથવા-દૂસરી તરહ સે ભી વ્યંજનાક્ષર દો પ્રકાર કા બતલાકા ગયા  
હૈ-એક પર્યાય જિસકા અભિધેય-નામ હોતા હૈ વહ એક પર્યાય વાલા  
વ્યંજનાક્ષર હૈ ઓર અનેક પર્યાય જિસકા અભિધેય નામ હોતે હૈ વહ  
અનેક પર્યાયવાલા વ્યંજનાક્ષર હૈ । એક પર્યાયવાલા વ્યંજનાક્ષર અલોક  
સ્થણ્ડિલ આદિ શબ્દ હૈ, ક્યોં કિ અલોક શબ્દ કા અભિધેય-વાચ્ય-

નામવાળું નથી. જેમકે ઇન્દ્રગોપક શબ્દ. ઇન્દ્રગોપક ખાસ પ્રકારનું જંતુ છે. તે  
શબ્દ પોતાના અર્થથી સંપન્ન નથી, કારણ તે ઇન્દ્રની રક્ષા થોડી જ કરે છે ।  
ફક્ત તેનું નામ જ એ પ્રકારનું છે. આવા અર્થશૂન્ય શબ્દ અયથાર્થનિયત મનાય  
છે. એજ રીતે પલાશ આદિ શબ્દ પણ એજ પ્રકારના બાળુવા, કારણ કે પલ  
માંસને જે ખાય છે તેનું નામ પલાશ છે, પણ પલાશ-ખાખરાને માંસ ખાવાને  
કારણે પલાશ કહેતા નથી, પણ એ તો ફક્ત તેનું નામ જ છે. અથવા ખીણ  
રીતે પણ વ્યંજનાક્ષર બે પ્રકારના બતાવ્યા છે-જેનું અભિધેય-નામ એક પર્યાય  
હોય છે તે એક પર્યાયવાળું વ્યંજનાક્ષર છે અને જેનું અભિધેય-નામ અનેક  
પર્યાય હોય છે તે અનેક પર્યાયવાળું વ્યંજનાક્ષર છે. એક પર્યાયવાળું વ્યંજના-  
ક્ષર અલોક સ્થણ્ડિલ આદિ શબ્દ છે. કારણ કે અલોક શબ્દનું અભિધેય-વાચ્ય

एवमेव एकाक्षरानेकाक्षभेदेन व्यञ्जनाक्षरं द्विविधम् । तत्रैकाक्षरं-धीः श्रीरित्यादि । अनेकाक्षरं-वीणा, लता, माला, इत्यादि । अथवा-संस्कृतप्राकृतभाषाभेदेन द्विविधम् । यथा-वृक्षः, रुक्खो-इति । तथा-नानादेशानाश्रित्य तद् व्यञ्जनाक्षरमनेकविधम् । यथा-मगधानाम्-ओदनः, 'चावल' इति भाषा प्रसिद्धः, लाटानां 'कूरः', द्राविडानां 'चौरः', आन्ध्राणाम्-'इडाकु'-रिति नाम प्रसिद्धम् ।

केवल एक अलोकाकाशरूप पर्याय ही है । इसी तरह स्थण्डिल शब्द का अभिधेय एक स्थण्डिलरूप पर्याय ही है ।

“ लोक ” यह व्यंजनाक्षर अनेक पर्यायवाला है, क्यों कि इसके जगत, भुवन, संसार आदि अनेक अभिधेय-नाम होते हैं ।

एकाक्षर, अनेकाक्षर, इस तरह से भी व्यंजनाक्षर दो प्रकार का बतलाया गया है । जिसमें केवल एक ही अक्षर होता है वह एकाक्षर व्यंजनाक्षर है-जैसे-धी, (बुद्धि) श्री आदि अक्षर । अनेक अक्षर जिसमें होते हैं वह अनेकाक्षर व्यंजनाक्षर है, जैसे-वीणा, लता, माला आदि शब्द ।

अथवा संस्कृत एवं प्राकृत आदि के भेद से भी यह व्यंजनाक्षर दो प्रकार का माना गया है-'वृक्ष' शब्द संस्कृत और 'रुक्ख' शब्द प्राकृत है । अथवा नाना देशों की अपेक्षा व्यंजनाक्षर अनेक प्रकार का भी बतलाया गया है-जैसे-मगधदेश में चावलों को 'ओदन' कहते हैं, लाटदेश में 'कूर' कहते हैं, द्राविडदेश में 'चौर' कहते हैं और आंध्रदेश में 'इडाकु' कहते हैं ।

કેવળ એક અલોકાકાશ રૂપ પર્યાય જ છે. એજ રીતે સ્થંડિલ શબ્દનું અભિધેય એક સ્થંડિલરૂપ પર્યાય જ છે.

“ લોક ” આ વ્યંજનાક્ષર અનેક પર્યાયવાળો છે. કારણ કે તેના જગત, ભુવન, સંસાર આદિ અનેક અભિધેય થાય છે.

એકાક્ષર, અનેકાક્ષર, આ રીતે પણ વ્યંજનાક્ષર બે પ્રકારનું બતાવ્યું છે. જેમાં ફક્ત એક જ અક્ષર હોય છે તે એકાક્ષર વ્યંજનાક્ષર છે જેમકે-ધી, શ્રી આદિ અક્ષર. જેમાં અનેક અક્ષર હોય છે તે અનેકાક્ષર વ્યંજનાક્ષર છે; જેમકે વિણા, લતા, માલા, આદિ શબ્દ.

અથવા સંસ્કૃત અને પ્રાકૃત આદિના ભેદથી પણ એ વ્યંજનાક્ષર બે પ્રકારનું મનાય છે. “વૃક્ષ” શબ્દ સંસ્કૃત અને “રુક્ખ” શબ્દ પ્રાકૃત છે, અથવા વિવિધ દેશોની અપેક્ષાએ વ્યંજનાક્ષર અનેક પ્રકારનું પણ બતાવ્યું છે જેમકે મગધ દેશમાં ચાખાને ‘ઓદન’ કહે છે, લાટમાં “કૂર” કહે છે. દ્રાવિડ દેશમાં “ચૌર” કહે છે અને આંધ્ર દેશમાં “ઇડાકુ” કહે છે.



તથા-વ્યંજનાક્ષરં સ્વામિધેયાદ્ ભિન્નમભિન્નં ચ । તત્ર તાદાત્મ્યાભાવાદ્  
ભિન્નમ્ । તથાહિ-ક્ષુરશબ્દોચ્ચારણે, અગ્નિશબ્દોચ્ચારણે મોદકશબ્દોચ્ચારણે ચ યથા-  
ક્રમં વદતો મુખસ્ય, શૃણ્વતઃ શ્રવણસ્ય ન હેદો, નાપિ દાહો, નાપિ પૂરણં ભવતિ,  
અતો જ્ઞાયતેસ્વામિધેયાદ્ભિન્નઃ શબ્દઃ । અન્યથા-તાદાત્મ્યસદ્ભાવે ક્ષુરાદયોઽપિ તત્ર  
‘સન્તીતિ મુખસ્ય શ્રવણસ્ય ચ હેદાદિપ્રસદ્ભઃ ।

અભિન્નત્વં=સમ્બદ્ધત્વમ્ । યઃ સ્વલુ સમ્બદ્ધઃ સ લોકેઽપ્યભિન્ન ઇત્યુચ્યતે ।  
યથા-યસ્ય યેન સહાશનપાનં સમ્બદ્ધં, સ તદભિન્ન ઇત્યુચ્યતે ‘અયમસ્માકમભિન્નઃ’

વ્યંજનાક્ષર અને અભિધેય સે કથંચિત્ ભિન્ન મી હૈ ઓર કથંચિત્  
અભિન્ન મી હૈ । ભિન્ન હસલિયે હૈ કિ શબ્દ ઓર ઉસકે અર્થ કા તાદા-  
ત્મ્ય સંબંધ નહીં હૈ । યદિ તાદાત્મ્ય સંબંધ હોતા તો ક્ષુર શબ્દ કે ઉચ્ચારણ  
કરને પર મુખ કટ જાના ચાહિયે, ઓર સુનને વાલે કે કાન મી કટ  
જાના ચાહિયે । હસી તરહ અગ્નિ શબ્દ કે ઉચ્ચારણ કરને પર ઉચ્ચારણ  
કર્તા કે મુખ મેં દાહ, ઓર સુનને વાલે કે કાનોં મેં જલન પૈદા હો જાની  
ચાહિયે. મોદક શબ્દ કે બોલને પર મુખ કા ભરના ઓર સુનને વાલે કે  
કાનોં કા ભરના હો જાના ચાહિયે, પરન્તુ એસા હોતા નહીં હૈ, અતઃ  
માલૂમ હોતા હૈ કિ શબ્દકા ઓર ઉસકે અર્થકા તાદાત્મ્ય સંબંધ નહીં હૈ,  
કિન્તુ શબ્દ ઓર ઉસકે અર્થ મેં પરસ્પર ભિન્નતા હૈ ।

અભિન્ન કા તાત્પર્ય હૈ અપને અર્થ કો વતલના-બોધ કરાના । અપને  
અર્થ કે સાથે શબ્દ કા સમ્બદ્ધ હોના । લોક મેં મી જિસકા જિસકે

વ્યંજનાક્ષર પોતાના વાચ્યથી કંઈકે લિન્ન પણ છે અને કંઈકે અલિન્ન  
પણ છે. લિન્ન એટલા માટે છે કે શબ્દ અને તેના અર્થનો તાદૃશ્ય સંબંધ  
નથી. જો તાદૃશ્ય સંબંધ હોત તો ક્ષુર શબ્દનું ઉચ્ચારણ કરતાં જ મોઢું કપાઈ  
જવું જોઈએ અને સાંભળનારના કાન પણ ફાટી જવા જોઈએ. એજ રીતે  
અગ્નિ શબ્દ બોલતા જ બોલનારનાં મુખમાં બળતરા અને શ્રોતાના કાનમાં  
પણ દાહ પેદા થવા જોઈએ. ‘લાડુ’ શબ્દ બોલતા જ બોલનારનું મોઢું ભરાઈ  
જવું જોઈએ, અને શ્રોતાના કાન ભરાઈ જવા જોઈએ, પણ એવું થતું નથી,  
તેથી એમ લાગે છે કે શબ્દનો અને તેના અર્થનો તાદૃશ્ય સંબંધ નથી, પણ  
શબ્દ અને તેના અર્થમાં અન્યોન્ય લિન્નતા છે.

અલિન્નનું તાત્પર્ય છે પોતાના અર્થને દર્શાવવો-બોધ કરાવવો-પોતાના  
અર્થની સાથે શબ્દનો સંબંધ હોવો. લોકમાં પણ જેનો જેની સાથે ખાવા

साथ खाना पीना सम्बद्ध रहता है वह उससे अभिन्न माना जाता है । जब उच्चारण कर्त्ता मोदक आदि शब्दों का उच्चारण करता है तो सुनने वाले को संकेत के वशसे मोदकरूप अर्थ का ही बोध होता है अन्य अर्थ का नहीं । यदि मोदकरूप अर्थ से मोदक (लड्डू) शब्द सर्वथा भिन्न तथा असंबद्ध माना जावे तो मोदक शब्द से मोदकरूप अर्थ की नियमतः प्रतीति नहीं हो सकती है । जब मोदकरूप अर्थ के साथ मोदक शब्द सम्बद्ध ही नहीं होगा तो फिर संबंध के अभाव से मोदक शब्द द्वारा अन्य पदार्थ का भी बोध होने लगेगा । इस तरह नियामक के अभाव में शब्द स्वाभिधेय का प्रत्यायक-बोधक नहीं हो सकने के कारण हर एक पदार्थ का प्रत्यायक-बोधक हो जावेगा तब विवक्षित अर्थ की प्रतीति उससे कैसे हो सकेगी । परन्तु व्यवहार में ऐसा नहीं होता है । विवक्षित शब्द से विवक्षित अर्थ की प्रतीति होती है, अतः यह मानना चाहिये कि शब्द से अर्थ कथंचित् अभिन्न भी है । इस अभिन्नता से ही शब्द और अर्थ का वाच्य वाचक संबंध सिद्ध होता है । शब्द और अर्थ का यह सम्बन्ध ही इन दोनों की अभिन्नता का कथंचित् प्रत्यायक-बोधक माना गया है ।

પીવાનો સંબંધ હોય છે, તે તેનાથી અભિન્ન મનાય છે. જ્યારે બોલનાર મોદક આદિ શબ્દનું ઉચ્ચારણ કરે છે ત્યારે સાંભળનારને સંકેતને કારણે મોદકરૂપ અર્થનો જ બોધ થાય છે, બીજા અર્થનો નહીં. બે મોદકરૂપ અર્થથી મોદક શબ્દ તદ્દન ભિન્ન તથા અસંબંધ માનવામાં આવે તો મોદક શબ્દથી મોદકરૂપ અર્થની નિયમતા પ્રતીતિ થઈ શકતી નથી બે મોદકરૂપ અર્થ સાથે મોદક શબ્દ સંબંધ જ ન હોય તો પછી સંબંધને અભાવે મોદક શબ્દ દ્વારા બીજા પદાર્થનો પણ બોધ થવા લાગશે. આ રીતે નિયામકને અભાવે શબ્દ સ્વાભિધેયનું પ્રત્યાયક-બોધક નહીં થઈ શકવાને કારણે દરેક પદાર્થનું બોધક થઈ જશે ત્યારે તેનાથી વિવક્ષિત અર્થની પ્રતીતિ કેવી રીતે થઈ શકશે ? પણ વ્યવહારમાં એવું થતું નથી. વિવક્ષિત શબ્દથી વિવક્ષિત અર્થની પ્રતીતિ થાય છે, તેથી એ માનવું જોઈએ કે શબ્દથી અર્થ ક્યારેક અભિન્ન પણ હોય છે આ અભિન્નતામાં જ શબ્દ અને અર્થનો વાચ્યવાચક સંબંધ સિદ્ધ થાય છે. શબ્દ અને અર્થનો આ સંબંધ જ એ બંનેની અભિન્નતાનો ક્યારેક બોધક મનાય છે.

તથા-વ્યંજનાક્ષરસ્યૈકૈકસ્ય દ્વિવિધાઃ પર્યાયા ભવન્તિ । યથા-સ્વપર્યાયાઃ, પરપર્યાયાશ્ચ । તત્રેત્યં સ્વપર્યાયા અવર્ણસ્ય ભવન્તિ, અવર્ણત્રિધા-હસ્વો દીર્ઘઃ પ્લુતશ્ચ । પુનરેકૈકત્રિધા-ઉદાત્તોઽનુદાત્તઃ સ્વરિતશ્ચ । પુનરેકૈકો દ્વિધા-અનુનાસિકો નિરનુનાસિકશ્ચ । એવમષ્ટાદશપ્રકારોઽવર્ણઃ । તથા યે એકૈકાક્ષરસંયોગતોઽક્ષરસંયોગત એવાવન્તઃ સંયોગા ઘટન્તે, તાવત્સંયોગવશતો યેઽવસ્થાવિશેષાઃ, યે ચ તત્તદર્થાભિધાયકત્વસ્વભાવાસ્તેઽપિ તસ્ય સ્વપર્યાયાઃ । યે તુ તત્રાસન્તસ્તે પરપર્યાયાઃ । એવમિવર્ણાદીનામપિ સ્વપર્યાયાઃ પરપર્યાયાઃ વક્તવ્યાઃ । યેઽપિ પરપર્યાયાસ્તેઽપિ તસ્યેતિ વ્યપદિશ્યન્તે, વ્યવચ્છેદ્યતયા તેષાં તદ્વિશેષકત્વાદ્ । યથાઽયં મે શત્રુરિતિ ।

તથા-એક એક વ્યંજનાક્ષરની દો ૨ પ્રકારની પર્યાયેં होती हैं । इनका नाम स्वपर्याय और परपर्याय है । अर्थात् स्वपर्याय और परपर्याय के भेदसे ये पर्यायें दो प्रकारकी होती हैं । जैसे-अकार यह अक्षर ह्रस्व दीर्घ और प्लुत के भेद से तीन प्रकार का कहा गया है, तथा ह्रस्व दीर्घ और प्लुत ये भी प्रत्येक उदात्त, अनुदात्त और स्वरित के भेद से तीन तीन प्रकारके बतलाये गये हैं, ऐसे ये नौ भेद हुए । ये भी सानुनासिक और निरनुनासिकके भेद से दो दो प्रकारके होनेसे अवर्ण अठारह (१८) प्रकारका हो जाता है । ये स्वपर्याय हैं । इसी तरह एक एक अक्षरके संयोग से जितने संयोग अक्षरोंके निष्पन्न होते हैं तथा इन संयोगोंके वश से जो अक्षरोंकी अवस्थाएँ होती हैं, तथा इन अवस्थाओं में वे वे शब्द जो अपने २ तत्तदर्थके अभिधायक स्वभाववाले होते हैं ये सब भी व्यंजनाक्षरकी स्वपर्यायें हैं । जो पर्यायें इनमें नहीं हैं वे सब पर पर्यायें हैं । इसी प्रकार इवर्ण आदि व्यंजनाक्षरों में भी स्वपर्याय और परपर्याय

તથા—એક એક વ્યંજનાક્ષરની બે બે પ્રકારની પર્યાયો થાય છે. તેમનું નામ સ્વપર્યાય અને પરપર્યાય છે. એટલે કે સ્વપર્યાય અને પરપર્યાયના લેદથી એ પર્યાયો બે પ્રકારની હોય છે. જેમકે—અકાર આ અક્ષર હ્રસ્વ, દીર્ઘ અને પ્લુતના લેદથી ત્રણ પ્રકારનો કહેલ છે, તથા હ્રસ્વ, દીર્ઘ, અને પ્લુત, એ પણ પ્રત્યેક ઉદાત્ત, અનુદાત્ત અને સ્વરિતના લેદથી ત્રણ ત્રણ પ્રકારના બતાવ્યા છે. એમ આ નવ લેદ થયા. એ પણ સાનુનાસિક, અને નિરનુનાસિકના લેદથી બે બે પ્રકારના હોવાથી અવર્ણ અઠાર પ્રકારનો થાય છે. એજ રીતે એક એક અક્ષરના સંયોગથી અક્ષરોના બેટલા સંયોગ પ્રાપ્ત થાય છે, તથા એ સંયોગોને કારણે અક્ષરોની જે અવસ્થાઓ થાય છે, તથા તે અવસ્થાઓમાં તે તે શબ્દો જે પોતપોતાના તે તે અર્થના અભિધાયક સ્વભાવવાળા હોય છે, એ સઘળી પણ વ્યંજનાક્ષરની સ્વપર્યાયો છે. જે પર્યાયો તેમનામાં નથી તે

તે સ્વપર્યાયાઃ પરપર્યાયઃ એકેકે દ્વિધા ભવન્તિ । તદ્ યથા-સમ્બદ્ધાઃ અસંબદ્ધાથા  
યે અકારસ્ય સ્વપર્યાયાસ્તે તત્રાસ્તિત્વેન સમ્બદ્ધા ભવન્તિ । નાસ્તિત્વેન પુનસ્ત એવ  
સર્વેઽપ્યસમ્બદ્ધાઃ । તત્ર તેષાં નાસ્તિત્વાભાવાત્ । એવમેવાસન્તઃ પરપર્યાયા અપિ ના-  
સ્તિત્વેન સમ્બદ્ધા ભવન્તિ । તે ચ પરપર્યાયા અસ્તિત્વેનાસમ્બદ્ધાઃ, તેષામસ્તિત્વસ્ય  
તત્રાભાવાત્ । યથા-ઘટશબ્દે ઘકારટકારાકારા યે પર્યાયાસ્ત એતે તત્રાસ્તિત્વેન સમ્બદ્ધા

જાન લેના યાહિયે । યે જો પરપર્યાયે હૈં વે ઉસ વ્યંજનાક્ષરકી હી સ્વપ-  
ર્યાયકી તરહ પર્યાયે હૈં । અર્થાત્-જિસ પ્રકાર સ્વપર્યાયે વ્યંજનાક્ષરકી  
નિજ પર્યાયે કહી ગઈ હૈં, ઉસી પ્રકાર પરપર્યાયે મી ઉસ વ્યંજનાક્ષર કી  
માની જાતી હૈં, ક્યોં કિ વે વહાં વ્યવચ્છેદ્ય હૈં ઓર હીસી લિયે ઉસ વિવ-  
ક્ષિત અકારાદિ અક્ષરકી વે વિશેષક હોતી હૈં, જૈસે-કહા જાતા હૈ કિ-  
'યહ મેરા જાતુ હૈ ।'

સ્વપર્યાય ઓર પરપર્યાય યે દોનોં દો ૨ પ્રકારકી બતલાઈ ગઈ હૈ  
એક સંબદ્ધ ઓર દૂસરી અસંબદ્ધ । વિવક્ષિત શબ્દકી જો સ્વપર્યાયે હુઆ  
કરતી હૈં વે વહાં અસ્તિત્વ ધર્મસે સંબંધિત રહા કરતી હૈં, ઓર જો પર-  
પર્યાયે હુઆ કરતી હૈં વે વહાં નાસ્તિત્વ ધર્મસે સંબંધિત રહા કરતી હૈં ।  
સ્વપર્યાયે નાસ્તિત્વ ધર્મ સે સંબંધિત નહીં હોતી હૈં, ક્યોં કિ વસ્તુ કી  
સ્વપર્યાયે વસ્તુ મેં અસ્તિત્વ ધર્મ સે સંબંધિત ઓર નાસ્તિત્વ ધર્મ સે  
અસંબંધિત માની ગઈ હૈં । હીસી તરહ પર પર્યાયે વસ્તુ મેં નાસ્તિત્વ ધર્મ

બધી પરપર્યાયો છે. એ જ પ્રકારે ઇવર્ણ આદિ વ્યંજનાક્ષરોમાં પણ સ્વપર્યાય  
અને પરપર્યાય સમજાવેલી જોઈએ. એ જે પરપર્યાયો છે તે તે વ્યંજનાક્ષરની જ  
સ્વપર્યાયના જેવી પર્યાયો છે. એટલે કે જેમ સ્વપર્યાયો વ્યંજનાક્ષરની પોતાની  
પર્યાયો કહેવામાં આવી છે તેમ પર પર્યાયો પણ તે વ્યંજનાક્ષરની માનવામાં  
આવે છે, કારણ કે તેઓ ત્યાં વ્યવચ્છેદ્ય છે અને તેથી તે વિવક્ષિત અકારાદિ  
અક્ષરની તેઓ વિશેષક હોય છે, જેમકે “આ મારો જાતુ છે” એમ  
કહેવામાં આવે છે.

સ્વપર્યાય અને પરપર્યાય એ બન્ને બે બે પ્રકારની બતાવી છે. એક  
સંબદ્ધ અને બીજી અસંબદ્ધ. વિવક્ષિત શબ્દની જે પર્યાયો થયા કરે છે તેઓ  
ત્યાં અસ્તિત્વધર્મથી સંબંધિત રહ્યા કરે છે, અને જે પરપર્યાયો હોય છે તેઓ  
ત્યાં નાસ્તિત્વધર્મથી સંબંધિત રહ્યા કરે છે. સ્વપર્યાયો નાસ્તિત્વધર્મથી સંબંધિત  
હોતી નથી, કારણ કે વસ્તુની સ્વપર્યાયો વસ્તુમાં અસ્તિત્વધર્મથી સંબંધિત અને  
નાસ્તિત્વધર્મથી અસંબંધિત માનવામાં આવી છે. એ જ પ્રમાણે પરપર્યાયો  
નાસ્તિત્વધર્મથી અસંબંધિત અને અસ્તિત્વધર્મથી અસંબંધિત બતાવવામાં

भवन्ति, तेषां तत्र विद्यमानत्वात् । त एव घकारटकाराकारपर्याया रथशब्दादिषु अस्तित्वेनाऽसम्बद्धा भवन्ति, तेषां तत्राभावात् । तदेवं स्वपर्याया अस्तित्वेन तत्र सम्बद्धा अन्यत्र चाऽसम्बद्धा भवन्ति । त एव स्वपर्याया नास्तित्वेन तत्रासम्बद्धाः, अन्यत्र तु सम्बद्धा भवन्ति ।

तथा—ये रथशब्दस्य स्वपर्यायास्ते तत्रास्तित्वेन सम्बद्धाः, तेषां तत्र विद्यमानत्वात् । घटशब्दे त्वसम्बद्धाः, तेषां तत्रासत्त्वात् । त एव च रथशब्दे नास्तित्वेनासम्बद्धाः, घटशब्दे तु सम्बद्धा इति तदेतद् वज्रनाक्षरं वर्णितमिति शेषः ।

સે સંબંધિત ઔર અસ્તિત્વ ધર્મ સે અસંબંધિત કહી ગઈ હૈં । જૈસે-ઘટ શબ્દ મેં “ઘ, ટ, અ” રૂપ અર્થાત્-ઘકાર, ટકાર, અકારરૂપ જો પર્યાયે હૈં, યે વહાં (ઘટ મેં) અસ્તિત્વ ધર્મ સે સંબંધ રચને વાલી હૈં, કયોં કિં ઇનકી યહાં વિદ્યમાનતા હૈ । તથા રથ આદિ શબ્દોં મેં ઇનકી વિદ્યમાનતા નહીં હોને કે કારણ યે વહાં રથ આદિ મેં અસ્તિત્વ ધર્મ સે અસંબંધિત હૈં । ઇસ તરહ સ્વપર્યાય વહાં (ઘટ શબ્દ મેં) અસ્તિત્વ સે સંબદ્ધ હૈ ઔર અન્યત્ર રથ આદિ મેં અસ્તિત્વ સે વહ સંબદ્ધ નહીં હૈ, તથા યહી સ્વપર્યાય નાસ્તિત્વ સે વહાં અસંબદ્ધ હૈ, ઔર અસ્તિત્વ સે સંબદ્ધ હૈ । ઇસી તરહ રથ આદિ શબ્દોં કી જો સ્વપર્યાયે હૈં વે વહાં અસ્તિત્વ ધર્મ સે સુસંબંધિત હૈં, કારણ ડનકી હી વહાં વિદ્યમાનતા હૈ, ઘટ શબ્દ મેં ઇનકી વિદ્યમાનતા નહીં હોને સે યે વહાં અસંબંધિત હૈં । રથ શબ્દ મેં યે નાસ્તિત્વ ધર્મ સે અસંબદ્ધ ઇસ લિયે માની ગઈ હૈં કિં વહાં ડનકી (ર, થ, અ) કી વિદ્યમાનતા હૈ ઔર ઘટ શબ્દ મેં નાસ્તિત્વ ધર્મસે સંબંધિત ઇસલિયે

આવેલ છે. જેમકે ‘ઘટ’ શબ્દમાં “ઘ, ટ, અ,” રૂપ એટલે કે ઘકાર, ટકાર, અકાર રૂપ જે પર્યાયો છે તેઓ ત્યાં (ઘટમાં) અસ્તિત્વધર્મથી સંબંધ રાખનારી છે, કારણ કે તેમની ત્યાં હોજરી છે તથા ‘રથ’ આદિમાં તેમની વિદ્યમાનતા (હોજરી) ન હોવાને કારણે તેઓ ત્યાં (રથ આદિમાં) અસ્તિત્વધર્મથી અસંબંધિત છે. આ રીતે સ્વપર્યાય ત્યાં (ઘટ શબ્દમાં) અસ્તિત્વથી સંબદ્ધ છે અને અન્યત્ર (રથ આદિમાં) અસ્તિત્વથી તે સંબદ્ધ નથી, તથા એજ સ્વપર્યાય નાસ્તિત્વથી ત્યાં અસંબદ્ધ છે અને અસ્તિત્વથી સંબદ્ધ છે. એજ પ્રમાણે રથ આદિ શબ્દોની જે સ્વપર્યાયો છે તેઓ ત્યાં અસ્તિત્વધર્મથી સુસંબંધિત છે, કારણ કે તેમની જ ત્યાં વિદ્યમાનતા છે, ‘ઘટ’ શબ્દમાં તેમની વિદ્યમાનતા ન હોવાથી તેઓ ત્યાં અસંબંધિત છે. ‘રથ’ શબ્દમાં તેઓ નાસ્તિત્વધર્મથી અસંબદ્ધ તે કારણે માની છે કે ત્યાં તેમની (ર, થ, અ) વિદ્યમાનતા છે અને ઘટ શબ્દમાં નાસ્તિત્વધર્મથી સંબંધિત તે કારણે મનેલી

શિષ્યઃ પૂછતિ—‘ સે કિં તં ’ ઇત્યાદિ । અથ કિં તદ્ લઘ્વ્યક્ષરમિતિ ।  
ઉત્તરમાહ—‘ લઘ્વિઅક્ષરં ’ ઇત્યાદિ । લઘ્વ્યક્ષરમ્-લઘ્વિઃ=ઉપયોગરૂપા, સા ચેહ  
પ્રસ્તુત્વાત્ શબ્દાર્થપર્યાલોચનાનુસારિણી ગૃહ્યતે । લઘ્વિરૂપમક્ષરં લઘ્વ્યક્ષરં ભાવશ્રુત-  
મિત્યર્થઃ, અક્ષરલઘ્વિક્સ્ય-અક્ષરે=અક્ષરોચ્ચારણે અક્ષરાવબોધે વા લઘ્વિઃ=ઉપયોગો  
યસ્ય સોઽક્ષરલઘ્વિક્સ્ય-અકારાદ્યક્ષરાનુગતશ્રુતલઘ્વિસમન્વિતસ્યેત્યર્થઃ, લઘ્વ્ય-  
ક્ષરં=ભાવશ્રુતં સમુત્પદ્યતે-શબ્દાદિગ્રહણસમનન્તરમિન્દ્રિયમનોનિમિત્તં શબ્દાર્થ-  
પર્યાલોચનાનુસારિ ‘ શાહ્લોઽયમ્ ’ ઇત્યાદ્યક્ષરાનુગતં વિજ્ઞાનમુપજાયતે ઇત્યર્થઃ ।

માની ગઈ છે કે જ્યાં તેમની ( ર, થ, અ, કી ) અવિદ્યમાનતા છે । આ રીતે સ્વપર્યાય અને  
પરપર્યાય, એ બંને પ્રકારની પર્યાયો પોતપોતાના વ્યંજનાક્ષરોમાં સંબદ્ધ અને  
અસંબદ્ધ ભેદવાળી સિદ્ધ થાય છે । આ પ્રકારે અહીં સુધી વ્યંજનાક્ષરનું  
વર્ણન થયું.

શિષ્ય લઘ્વ્યક્ષરના વિષયમાં પૂછતા છે—‘ સે કિં તં લઘ્વિ-અક્ષરં ’  
ઇત્યાદિ ।

લઘ્વ્યક્ષરના કયા સ્વરૂપ છે ? ઉત્તર—લઘ્વિ નામ છે ઉપયોગકા,  
યહ ઉપયોગ, શબ્દ અને અર્થના જો પર્યાલોચનરૂપ વ્યાપાર હોતા છે  
તેના સ્વરૂપ જ્યાં ગ્રહણ કરવામાં આવ્યું છે । આ રીતે લઘ્વિરૂપ જો અક્ષર  
છે તે લઘ્વ્યક્ષર છે, અને આ ભાવશ્રુતરૂપ છે । અક્ષરલઘ્વિક-અર્થાત્  
અક્ષરના ઉચ્ચારણ કરવામાં અથવા અક્ષરના અવબોધ કરવામાં ઉપયોગયુક્ત-  
વ્યક્તિને આ ભાવશ્રુત ઉત્પન્ન થાય છે । આકારાદિ અક્ષરાનુગતશ્રુત-  
લઘ્વિ સમન્વિત પ્રાણીને શબ્દાદિ ગ્રહણના બાદ મિન્દ્રિય અને મન નિમિ-

છે કે ત્યાં તેમની ( ર, થ, અની ) અવિદ્યમાનતા છે. આ રીતે સ્વપર્યાય અને  
પરપર્યાય, એ બંને પ્રકારની પર્યાયો પોતપોતાના વ્યંજનાક્ષરોમાં સંબદ્ધ અને  
અસંબદ્ધ ભેદવાળી સિદ્ધ થાય છે. આ પ્રકારે અહીં સુધી વ્યંજનાક્ષરનું  
વર્ણન થયું.

શિષ્ય લઘ્વ્યક્ષરના વિષયમાં પૂછે છે—‘ સે કિં તં લઘ્વિઅક્ષરં ’ ઇત્યાદિ  
લઘ્વ્યક્ષરનું શું સ્વરૂપ છે ? ઉત્તર—લઘ્વિ ઉપયોગનું નામ છે, આ ઉપયોગ  
શબ્દ અને અર્થના જે પર્યાલોચનરૂપ વ્યાપાર હોય છે તેનું સ્વરૂપ અહીં  
ગ્રહણ કરેલ છે. આ રીતે લઘ્વિરૂપ જે અક્ષર છે તે લઘ્વ્યક્ષર છે, અને તે  
ભાવશ્રુતરૂપ છે. અક્ષરલઘ્વિક-એટલે કે અક્ષરનું ઉચ્ચારણ કરવામાં અથવા  
અક્ષરના અવબોધ કરવામાં ઉપયોગ-યુક્ત વ્યક્તિને આ ભાવશ્રુત ઉત્પન્ન થાય  
છે. આકારાદિ અક્ષરાનુગત-શ્રુતલઘ્વિ સમન્વિત પ્રાણીને શબ્દાદિ ગ્રહણ કર્યા



નન્વિદં લબ્ધ્યક્ષરં સંજિનામેવ પુરુષાદીનાં સમ્ભવતિ, નત્વસંજિનામેકેન્દ્રિયા-  
દીનામ્, તેષામકારાદિવર્ણાનામવગમે ઉચ્ચારણે વા લબ્ધ્યસમ્ભવાત્ । નહિ તેષાં  
પરોપદેશશ્રવણં સમ્ભવતિ, યેનાઽકારાદિવર્ણાનામવગમાદિર્ભવેત્ । અથ ચ-એકેન્દ્રિ-  
યાદીનામપિ ભાવશ્રુતરૂપં લબ્ધ્યક્ષરમિષ્યતે । તથાહિ-પૃથિવ્યાદીનામપિ ભાવશ્રુતં  
વર્ણિતમ્—

તથા ચોક્તમ્—‘ દ્રવ્યસુયાભાવંમિ વિ, ભાવસુયં પત્થિવાઈણં ’ ઇતિ ।

છાયા—‘ દ્રવ્યશ્રુતાભાવેઽપિ ભાવશ્રુતં પાર્થિવાદીનામ્ ’ ઇતિ ।

ત્તક જો શબ્દ ઔર અર્થકી પર્યાલોચનાકે અનુસાર જ્ઞાન ઉત્પન્ન હોતા હૈ  
યહી ભાવશ્રુત હૈ । જૈસે શંખકા શબ્દ જબ કાનમેં પડતા હૈ તબ શ્રોતા  
કો એસા જો વિચાર હોતા હૈ કિ ‘ યહ અન્યકા શબ્દ નહીં હૈ યહ તો  
શંખકા શબ્દ હૈ ’ ઇસીકા નામ ભાવશ્રુત હૈ ।

શંકા—લબ્ધ્યક્ષરરૂપ ભાવશ્રુતકા જો એસા આપ સ્વરૂપ પ્રકટ  
કર રહે હૈં વહ તો સંજી પંચેન્દ્રિય પ્રાણીકે હી ઘટિત હો સકતા હૈ, અ-  
સંજી એકેન્દ્રિયાદિકોં કે નહીં, ક્યોં કિ ડનમેં એસી લબ્ધિ નહીં હૈ, કિ  
જિસસે વે અકાર આદિ અક્ષરોંકા અવગમ, અથવા ઉચ્ચારણ કર સકેં ।  
અકાર આદિ અક્ષરોંકા જો અવગમ આદિ હોતા હૈ, વહ પરકે ઉપદેશ  
શ્રવણપૂર્વક હોતા હૈ । ડનમેં કર્ણ ઇન્દ્રિય ઔર મનકા અભાવ હોનેસે  
પરોપદેશ શ્રવણતા આતી નહીં હૈ, પરન્તુ લબ્ધ્યક્ષરરૂપ યહ ભાવશ્રુત તો  
એકેન્દ્રિય આદિ પ્રાણિયોં મેં ભી શાસ્ત્રકારોંને બતલાયા હૈ । જૈસે કહા હૈ—

પછી, ઇન્દ્રિય અને મન નિમિત્તક જે શબ્દ અને અર્થની પર્યાલોચના અનુસાર  
જ્ઞાન ઉત્પન્ન થાય છે એજ ભાવશ્રુત છે. જેમકે શંખનો શબ્દ ત્યારે કાને પડે  
છે, ત્યારે શ્રોતાને એવો જે વિચાર થાય છે કે “ આ ખીજનો શબ્દ નથી,  
આ તો શંખનો શબ્દ છે ” એનું નામ ભાવશ્રુત છે.

શંકા—લબ્ધ્યક્ષરરૂપ ભાવશ્રુતનું આપ જે સ્વરૂપ પ્રગટ કરો છો, તે તો  
સંજીપંચેન્દ્રિય પ્રાણીમાં જ ઘટાવી શકાય છે, અસંજી એકેન્દ્રિયાદિકોમાં નહીં,  
કારણ કે તેમનામાં એવી લબ્ધિ નથી કે જેથી તેઓ અકાર આદિ અક્ષરોનો  
અવગમ અથવા ઉચ્ચારણ કરી શકે. અકાર આદિ અક્ષરોનું જે અવગમ  
આદિ થાય છે તે પરના ઉપદેશ શ્રવણ પૂર્વક થાય છે. તેમનામાં કોઈન્દ્રિય  
અને મનનો અભાવ હોવાથી પરોપદેશ શ્રવણતા આવતી નથી. પણ લબ્ધ્યક્ષરરૂપ  
આ ભાવશ્રુત તો એકેન્દ્રિય આદિ પ્રાણિઓમાં પણ શાસ્ત્રકારોએ બતાવ્યું છે.  
જેમકે કહ્યું છે કે—

ભાવશ્રુતં ચ શબ્દાર્થ પર્યાલોચનાનુસારિ વિજ્ઞાનમ્ । શબ્દાર્થપર્યાલોચનં ચાક્ષરં વિના ન સમ્ભવતીતિ ચેત્ ?,

સત્યમેતત્—કિંતુ યદ્યપિ તેષામેકેન્દ્રિયાદીનાં પરોપદેશશ્રવણાઽસમ્ભવરતથાપિ તેષાં તથાવિધક્ષયોપશમભાવતઃ કાચિદવ્યક્તાઽક્ષરલઘ્વિર્ભવતિ, યદ્વશાદક્ષરાનુષક્તં શ્રુતજ્ઞાનમુપજાયતે । इत्थं चैतदङ्गीकर्तव्यम्, तथाहि—तेषामप्याहाराद्यभिलाष उपजायते, अभिलाषश्च प्रार्थना, सा च ‘ यदीदमहं प्राप्नोमि, ततो भव्यं भवती’—त्याद्यक्षरानुगतैव ।

“દ્રવ્યસુયાભાવંમિ વિ, ભાવસુયં પત્થિવાઈણં” इति द्रव्यश्रुतके अभावमें भी पृथिव्यादि एकेन्द्रियादिक जीवोंमें भावश्रुत होता है, परन्तु जब भावश्रुतका अर्थ “ शब्द और अर्थका पर्यालोचन करना भावश्रुत है” ऐसा किया जाता है, तब उनमें भावश्रुतका सद्भाव कैसे सिद्ध हो सकता है, ? क्योंकि कि शब्द और अर्थका पर्यालोचनरूप भावश्रुत अक्षरके विना संभवित नहीं होता है ।

उत्तर—शङ्का ठीक है । परन्तु जब इसका विचार किया जाता है तो यह बात समझमें आ ही जाती है । हां यह उचित है कि उन एकेन्द्रियादिक जीवों में परोपदेश श्रवण की संभवता नहीं है, परन्तु फिर भी उनमें इस प्रकार का क्षयोपशम अवश्य है कि जिससे उनमें अव्यक्त अक्षरलघ्वि होती है, और इसीसे अक्षरानुसंबद्ध श्रुतज्ञान उनके होता है । यह बात इस तरह से उनमें जानी जाती है कि आहार, भय, मैथुन और

“દ્રવ્યસુયાભાવંમિ વિ, ભાવસુયં પત્થિવાઈણં” इति. द्रव्यश्रुतना अभावमां पणु पृथिव्यादि—एकेन्द्रियादिक जीवोमा भावश्रुत थाय छे, पणु जे भावश्रुतनो अर्थ “ शब्द अने अर्थनुं पर्यालोचन करवुं ते भावश्रुत छे ” ओ प्रमाणे कराय तो तेमनामां भावश्रुतनो सद्भाव केवी रीते सिद्ध थर्छ शके छे, कारण के शब्द अने अर्थना पर्यालोचनइय भावश्रुत अक्षरना विना संभवित होतुं नथी.

उत्तर—शंका भराभर छे, पणु जे तेना पर विचार करवामा आवे तो ओ बात समझवामा आवी न नय छे. हा, ओ उचित छे के ओ एकेन्द्रियादिक जीवोमां परोपदेश श्रवणनी संभवितता नथी, छता पणु तेमनामा ओ प्रकारनो क्षयोपशम अवश्य छे, के जेथी तेमनामां अव्यक्त अक्षरलघ्वि होय छे, अने तेथी न अक्षरानुषक्त श्रुतज्ञान तेमने थाय छे. ओ बात आ रीते तेमनामा नाली शकय छे के आहार, भय, मैथुन अने परिग्रह, ओ चार प्रकारनी जे

તતસ્તેષામપિ કાચિદન્યક્તાઽક્ષરલઘ્વિરવશ્યમઙ્ગીકર્તવ્યા । તતસ્તેષામપિ લઘ્વ્યક્ષરં ભવતીતિ ન કશ્ચિદ્દોષઃ ।

તત્ત્વ લઘ્વ્યક્ષરં પદ્ધિવિધં પ્રજ્ઞપ્તમ્ । તદ્ યથા-શ્રોત્રેન્દ્રિયલઘ્વ્યક્ષરમિત્યાદિ ।  
 इह यत् श्रोत्रेन्द्रियेण शब्दश्रवणे सति 'शाब्दोऽयम्' इत्याद्यक्षरानुगतं शब्दार्थपर्या-  
 लोचनानुसारि विज्ञानं, तत् श्रोत्रेन्द्रियलघ्व्यक्षरम्, तस्य श्रोत्रेन्द्रियनिमित्तत्वात् ।

પરિગ્રહ, એ ચાર પ્રકાર કી જો ઝંજાઈ શાસ્ત્રકારોં ને વતલાઈ હૈં વે इन एकेन्द्रियादि जीवों में भी होती हैं । ये आहार आदि संज्ञाएँ अभिलाषा स्वरूप मानी गई हैं । अभिलाषा का तात्पर्य यहां इस प्रकार का है कि-“यदि मैं इसे प्राप्त कर लेता हूं तो यह बहुत अच्छी बात होती है” । जब इस प्रकार की अभिलाषा उनमें है तो यह मानना ही पड़ता है कि उनमें अक्षरानुषक्त श्रुतज्ञान भी है, क्योंकि कि यह प्रार्थना रूप अभिलाषा अक्षरानुसंबद्ध ही है, इसलिये उनमें भी थोड़ी बहुत अव्यक्त अक्षरलघ्वि अवश्य अंगीकार करना चाहिये । जब यह बात मान ली जाती है तो उनके भी लघ्व्यक्षररूप आवश्रुत है, यह सिद्धान्त संगत बैठ जाता है ।

यह लघ्व्यक्षर छह प्रकार का बतलाया गया है-श्रोत्रेन्द्रिय लघ्व्यक्षर, चक्षु इन्द्रिय लघ्व्यक्षर इत्यादि । श्रोत्र इन्द्रिय से शब्दसुनने पर जब ऐसा भान होता है कि “यह शब्द शंख का है” तब यह ज्ञान अक्षरा नुगत शब्द और अर्थ की पर्यालोचना के अनुसार उद्भूत होने के कारण

સંજ્ઞાઓ શાસ્ત્રકારોએ બતાવી છે, તે એ એકેન્દ્રિયાદિ જીવોમાં પણ હોય છે. એ આહાર આદિ સંજ્ઞાઓ અભિલાષા સ્વરૂપ માનવામાં આવી છે અભિલાષાનું તાત્પર્ય અહીં એ પ્રકારની પ્રાર્થના છે કે “જો હું તેને પ્રાપ્ત કરું તો એ ઘણી સરસ વાત છે” જ્યારે આ પ્રકારની અભિલાષા તેઓમાં છે, ત્યારે એ માનવું જ પડે છે કે તેમનામાં અક્ષરાનુષક્ત શ્રુતજ્ઞાન પણ છે. કારણ કે એ પ્રાર્થના રૂપ અભિલાષા અક્ષરાનુગત જ છે, તે કારણે તેઓમાં પણ થોડી ઝાઝી અવ્યક્ત અક્ષરલઘ્વિ અવશ્ય અંગીકાર કરવી જોઈએ. જો એ વાત સ્વીકારીએ તો તેમનામાં પણ લઘ્વ્યક્ષરરૂપ ભાવશ્રુત છે. આ સિદ્ધાંત સુસંગત થઈ જાય છે.

આ લઘ્વ્યક્ષર છ પ્રકારનું બતાવ્યું છે-શ્રોત્રેન્દ્રિય લઘ્વ્યક્ષર, ચક્ષુ ઇન્દ્રિય લઘ્વ્યક્ષર ઇત્યાદિ. શ્રોત્રેન્દ્રિયથી શબ્દ સભગતા જ્યારે એવું ભાન થાય છે કે “આ શબ્દ શખનો છે” ત્યારે તે જ્ઞાન અક્ષરાનુગત શબ્દ અને અર્થની પર્યાલોચના અનુસાર ઉત્પન્ન થવાને કારણે શ્રોત્રેન્દ્રિય લઘ્વ્યક્ષર છે, કારણ કે

યત્તુ ચક્ષુષા આમ્રફલાદિકમુપલભ્ય ‘આમ્રફલમ્’ इत्याद्यक्षरानुगतं शब्दार्थपर्यालोचनात्मकं विज्ञानं, तच्चक्षुरिन्द्रियलब्ध्यक्षरम् । एवं शेषेन्द्रियलब्ध्यक्षरमपि बोध्यम् ।

શિષ્યઃ પૂછતિ—‘ સે કિ તં ’ इति । अथ किं तदनक्षरश्रुतमिति । उत्तरमाह—‘ अणक्खरसुयं० ’ इत्यादि । अनक्षरात्मकम्-अक्षररहित श्रुतम्-अनक्षरश्रुतम्, तत् अनेकविधं प्रज्ञप्तम्; तद् यथा-उच्छ्वसितमित्यादि । उच्छ्वसितम्=उच्छ्वसनम् । निःश्वसितं=निःश्वसनम् । निष्ठयूतं निष्ठीवनम् । कासितम्=कासनम् । च शब्दः समुच्चयार्थः । क्षुतं=क्षवणम्-‘ छीक ’ इति भाषाप्रसिद्धम् । निःसिद्धितम्=निःसिद्धनम्-नासिकाजन्यः शब्दः, अनुसारः=अनुसरणम्-अधोवायोर्निरसरणं, तज्जनितः

શ્રોત્રેન્દ્રિય લબ્ધ્યક્ષર હૈ, કારણ યહ શ્રોત્રેન્દ્રિય કે નિમિત્ત સે ઉત્પન્ન હુઆ હૈ । આંખ સે આમ્રફલ આદિ કો દેખકર જો એસા વિચાર હોના હૈ કિ “ યહ આમ્ર કા ફલ હૈ ” યહ ચક્ષુઈન્દ્રિય લબ્ધ્યક્ષર હૈ, કયોં કિ “ યહ આમ્ર કા ફલ હૈ ” ઇસ પ્રકાર કે અક્ષર સે યહ જ્ઞાન મિલા હુઆ હૈ ઔર ઇસમેં શબ્દ એવં ઉસકે અર્થ કી પર્યાલોચના હો રહી હૈ । ઇસી તરહ સે શેષઈન્દ્રિય લબ્ધ્યક્ષર બી જાન લેના ચાહિયે ।

फिर शिष्य पूछता है-‘ से किं तं अणक्खर सुयं० ’ इत्यादि ।

અનક્ષરરૂપ શ્રુતજ્ઞાન કા કયા સ્વરૂપ હૈ ? उत्तर-अनक्षररूप श्रुतज्ञान अनेक प्रकार का बतलाया गया है-(१) उच्छ्वसित, (२) निःश्वसित (३) निष्ठयूत, (४) कासित, (५) क्षुत, (छींक) (६) निःसिद्धित, (७) अनुसार, (८) खेलित, आदि (श्लेष्मित, चीत्कार आदि) । नासिकाजन्य शब्द

તે શ્રોત્રેન્દ્રિયના નિમિત્તથી ઉત્પન્ન થયું છે આંખથી અમ્રફળ આદિને જોઈને જે એવો વિચાર આવે છે કે “ આ આમ્રફળ છે ” એ ચક્ષુઈન્દ્રિયલબ્ધ્યક્ષર છે, કારણ કે “ આ આમ્રફળ છે ” આ પ્રતારના અક્ષરથી આ જ્ઞાન મળેલું છે, અને તેમાં શબ્દ અને તેના અર્થની પર્યાલોચના થઈ રહી છે. એજ પ્રકારે બાકીની ઈન્દ્રિયોનું લબ્ધ્યક્ષર પણ સમજી લેવું.

વળી શિષ્ય પૂછે છે-“ સે કિ તં અણક્ખર સુયં૦ ” इत्यादि.

અનક્ષરરૂપ શ્રુતજ્ઞાનનું શું સ્વરૂપ છે ।

ઉત્તર—અનક્ષરરૂપ શ્રુતજ્ઞાન અનેક પ્રકારનું બતાવ્યું છે-(૧) ઉચ્છ્વસિત (૨) નિશ્વસિત, (૩) નિષ્ઠયૂત, (૪) કાસિત, (૫) ક્ષુત (છીંક), (૬) નિસિદ્ધિત, (૭) અનુસાર (૮) ખેલિત આદિ (શ્લેષ્મિત, ચીત્કાર, આદિ) નાસિકા-

અન્યર્થઃ । खेलितादिकम्-खेलितमादिर्यस्य तत् खेलितादिकम्, खेलितम्=श्लेषितं-  
श्लेषशब्दः, आदिशब्देन चीत्कारादिकम्, एतत्सर्वम् अनक्षरम्=अनक्षरश्रुतं बोध्यम्।

इहोच्छ्वसितादिकं द्रव्यश्रुतं द्रष्टव्यम्, ध्वनिमात्रत्वात् भावश्रुतजनकत्वात् भा-  
वश्रुतकार्यत्वाच्च । तथा हि-यदाऽन्यं कंचित् पुरुषं प्रति कमप्यर्थं बोधयितुमभिस-  
न्धिपूर्वकं सविशेषतरमुच्छ्वसितादिकं क्रियते, तदा तदुच्छ्वसितादिकं प्रयोक्तुर्भाव-  
श्रुतरयं फलम्, श्रोतुश्च भावश्रुतरयं कारणं भवति । तस्माद् द्रव्यश्रुतमित्युच्यते ।

नन्वेवं तर्हि करादिचेष्टाया अपि द्रव्यश्रुतत्वप्रसङ्गः, साऽपि हि बुद्धिपूर्विका  
क्रियते, सा च कर्तुर्भावश्रुतस्य फलं, द्रष्टुश्च भावश्रुतस्य कारणम् ? इति चेन्न,

का नाम निःसिद्धિः है । तथा अधोवायु के निःसरण होते समय जो  
शब्द होता है उसका नाम अनुसार-अनुसरण है । ये सब अनक्षरात्मक  
श्रुत हैं । ये उच्छ्वसित आदि सब ध्वनिमात्र होने से भावश्रुत के जनक  
होनेसे एवं भावश्रुतके कार्य होनेसे द्रव्यश्रुत माने गये हैं । तात्पर्य इसका  
यह है कि-जब कोई प्रयोक्ता किसी विशेष बातको समझानेके लिये  
इच्छापूर्वक किसीके प्रति इन उच्छ्वसित आदिका प्रयोग करता है, तब  
ये उच्छ्वसित आदि उस प्रयोक्ता के भावश्रुत का फलरूप होते हैं,  
और श्रोता के ये ज्ञान के-भावश्रुत के-जनक होते हैं, इसलिये इन्हें  
द्रव्यश्रुतरूप बतलाया गया है ।

शंका—इस तरह यदि उच्छ्वसित आदि को आप द्रव्यश्रुतरूप  
मानते हैं, तो फिर हस्तादि की चेष्टा को भी द्रव्यश्रुतरूप मानना चाहिये.  
कारण यह भी प्रयोक्ता के द्वारा बुद्धिपूर्वक ही की जाती है, तथा चेष्टा

અન્ય શબ્દનું નામ નિઃસિદ્ધિ છે. તથા અધોવાયુનું નિઃસરણ થતી વખતે જે  
શબ્દ થાય છે તેનું નામ અનુસાર-અનુસરણ છે એ બધા અનક્ષરાત્મક શ્રુત  
છે એ ઉચ્છ્વસિત આદિ બધા ધ્વનિમાત્ર હોવાથી ભાવશ્રુતના જનક હોવાથી  
અને ભાવશ્રુતના કાર્ય હોવાથી દ્રવ્યશ્રુતરૂપ માનવામાં આવ્યાં છે તેનું તાત્પર્ય  
એ છે કે-જ્યારે કોઈ પ્રયોક્તા કોઈ વિશેષ વાતને સમજાવવાને માટે ઉચ્છ્વા-  
પૂર્વક કોઈના તરફ એ ઉચ્છ્વસિત આદિનો પ્રયોગ કરે છે, ત્યારે એ ઉચ્છ્વ-  
સિત આદિ તે પ્રયોક્તાના ભાવશ્રુતના ફળરૂપ હોય છે, અને શ્રોતાના એ  
જ્ઞાનનું-ભાવશ્રુતનું જનક હોય છે, તે કારણે તેમને દ્રવ્યશ્રુતરૂપ બતાવ્યું છે.

શંકા—આ રીતે જો આપ ઉચ્છ્વસિત આદિને દ્રવ્યશ્રુતરૂપ માને છે  
તો પછી હસ્તાદિની ચેષ્ટાને પણ દ્રવ્યશ્રુતરૂપ માનવી જોઈએ, કારણ કે એ  
પણ પ્રયોક્તા દ્વારા બુદ્ધિપૂર્વક જ કરાય છે, તથા એ ચેષ્ટાથી પ્રયોક્તાના હાર્દિક

શ્રુતમિત્યત્ર શ્રુતશબ્દાર્થશ્રયણાત્ । તથાહિ-શ્રૂયતે યત્ તચ્છ્રુતમિત્યુચ્યતે । કરા-  
દિચેષ્ટા તુ ન શ્રૂયતે, તતો ન તત્ર દ્રવ્યશ્રુતત્વપ્રસન્નઃ । ઉચ્છ્રવસિતાદિકં તુ શ્રૂયતે,  
અનક્ષરાત્મકં ચ । અતસ્તદનક્ષરશ્રુતમિત્યુક્તમ્ । તદેતદનક્ષરશ્રુતં વર્ણિતમ્ ॥ સૂ. ૩૮ ॥

અથ સચ્ચિદ્રશ્રુતં વર્ણયતિ ।

મૂલમ્—સે કિં તં સણિસુયં ? । સણિસુયં તિવિહં પણત્તં;  
તં જહા-કાલિઓવણ્ણેણં, હેઊવણ્ણેણં, દિઢિવાઓવણ્ણેણં । સે  
કિં તં કાલિઓવણ્ણેણં ? । કાલિઓવણ્ણેણં-જસ્સ ણં અત્થિ ઈહા,  
અવોહો, મગ્ગણા, ગવેસણા, ચિંતા, વીમંસા, સે ણં સણ્ણીતિ  
લબ્ભઈ । જસ્સ ણં નત્થિ ઈહા, અવોહો, મગ્ગણા, ગવેસણા,  
ચિંતા, વીમંસા, સે ણં અસણ્ણીતિ લબ્ભઈ । સેત્તં કાલિઓવણ્ણેણં ।

સે પ્રયોક્તા કે હાર્દિક ભાવોંકા પતા લગ જાતા હૈ, એવં પ્રયોક્તા ઈસે જાન-  
બૂઝકર કહતા હૈ અતઃ ઉચ્છ્રવસિત આદિ કી તરહ યહ ભી ભાવશ્રુત  
કા કાર્ય એવં ભાવશ્રુત કા જનક હૈ ।

ઉત્તર—ઈસ પ્રકાર કી શંકા ઠીક નહીં હૈ, કારણ—“શ્રુત” યહાં  
શ્રુતશબ્દ કે અર્થ કા આશ્રય લિયા ગયા હૈ, ઓર ઈસકા તાત્પર્ય યહ હૈ  
કિ—“શ્રૂયતે યત્તદિતિ શ્રુતમિત્યુચ્યતે” અર્થાત્ જો સુના જાવે વહ શ્રુત  
હૈ । હસ્તાદિ કી ચેષ્ટા સુની નહીં જાતી હૈ વહ તો દેખી જાતી હૈ ઈસલિયે  
વહ દ્રવ્યશ્રુતરૂપ નહીં માની ગઈ હૈ । યે ઉચ્છ્રવસિત આદિ સુને જાતે હૈ  
ઓર સ્વયં અક્ષર સે રહિત હૈ ઈસલિયે યે અનક્ષરશ્રુતરૂપ માને ગયે હૈ ।  
ઈસ તરહ અનક્ષરશ્રુત કા વર્ણન હુઆ ॥ સૂ. ૩૮ ॥

ભાવની ખબર પડી નય છે. અને પ્રયોક્તા અને જાણી જોઈને કરે છે, તેથી  
ઉચ્છ્રવસિત આદિની જોમ, એ પણ ભાવશ્રુતનું કાર્ય અને ભાવશ્રુતનું જનક છે.

ઉત્તર—આ પ્રકારની શંકા યોગ્ય નથી, કારણ કે “શ્રુત” અહીં શ્રુત  
શબ્દના અર્થનો આધાર લેવાયો છે. અને તેનું તાત્પર્ય એ છે કે “શ્રૂયતે યત્ત-  
દિતિશ્રુતમિત્યુચ્યતે” એટલે કે જે સંભળાય છે તે શ્રુત છે. હસ્તાદિની ચેષ્ટા  
સંભળાતી નથી, તે તો જોવાય છે, તે કારણે તે દ્રવ્યશ્રુતરૂપ મનાઈ નથી. એ  
ઉચ્છ્રવસિત આદિ સંભળાય છે અને સ્વયં અક્ષર રહિત છે તેથી, તેને અનક્ષર-  
શ્રુતરૂપ માન્યા છે. આ રીતે આ અનક્ષરશ્રુતનું વર્ણન થયું છે. ॥ સૂ. ૩૮ ॥



સે કિં તં હેઝવણ્ણેણં ? । હેઝવણ્ણેણં—જસ્સ ણં અત્થિ અભિસં-  
ધારણપુઠ્ઠિવયા કરણસત્તી સે ણં સણ્ણીતિ લબ્ભઈ । જસ્સ ણં  
નત્થિ અભિસંધારણપુઠ્ઠિવયા કરણસત્તી સે ણં અસણ્ણીતિ લબ્ભઈ ।  
સે તં હેઝવણ્ણેણં । સે કિં તં દિઢ્ઠિવાઓવણ્ણેણં ? દિઢ્ઠિવાઓ-  
વણ્ણેણં—સણ્ણિસુયસ્સ યઓવસમેણં સણ્ણી લબ્ભઈ, અસણ્ણિ-  
સુયસ્સ યઓવસમેણં અસણ્ણી લબ્ભઈ । સે તં દિઢ્ઠિવાઓવણ્ણ-  
ેણં । સે તં સણ્ણિસુયં । સે તં અસણ્ણિસુયં ॥ સૂ. ૩૯ ॥

છાયા—અથ કિં તત્ સંજ્ઞિશ્રુતમ્ ? । સંજ્ઞિશ્રુતં ત્રિવિધં પ્રજ્ઞતમ્ ; તદ્ યથા-  
કાલિક્યુપદેશેન, હેતૂપદેશેન, દૃષ્ટિવાદોપદેશેન । અથ કોઽસૌ કાલિક્યુપદેશેન  
(સંજ્ઞી) ? કાલિક્યુપદેશેન—યસ્ય ચ્છલુ અસ્તિ ર્ઘા, અપોહઃ, માર્ગણા, ગવેષણા,  
ચિન્તા, વિમર્શઃ, સ સંજ્ઞીતિ લભ્યતે । યસ્ય ચ્છલુ નાસ્તિ ર્ઘા, અપોહઃ, માર્ગણા,  
ગવેષણા, ચિન્તા, વિમર્શઃ, સોઽસંજ્ઞીતિ લભ્યતે । સ એષ કાલિક્યુપદેશેન (સંજ્ઞી) ।  
અથ કોઽસૌ હેતૂપદેશેન (સંજ્ઞી) ? । હેતૂપદેશેન—યસ્ય ચ્છલુ અસ્તિ અભિસંધારણપૂર્વિકા  
કરણશક્તિઃ, સ સંજ્ઞીતિ લભ્યતે, યસ્ય ચ્છલુ નાસ્તિ અભિસંધારણપૂર્વિકા કરણ-  
શક્તિઃ સોઽસંજ્ઞીતિ લભ્યતે । સ એષ હેતૂપદેશેન (સંજ્ઞી) ।

અથ કોઽસૌ દૃષ્ટિવાદોપદેશેન (સંજ્ઞી) ? । દૃષ્ટિવાદોપદેશેન—સંજ્ઞિશ્રુતસ્ય ક્ષયો-  
પશમેન સંજ્ઞી લભ્યતે, અસંજ્ઞિશ્રુતસ્ય ક્ષયોપશમેન અસંજ્ઞી લભ્યતે । સ એષ દૃષ્ટિવા-  
દોપદેશેન (સંજ્ઞી) । તદેતત્ સંજ્ઞિશ્રુતમ્ । તદેતદસંજ્ઞિશ્રુતમ્ ॥ સૂ. ૩૯ ॥

ટીકા—શિષ્યઃ પૃચ્છતિ—‘ સે કિં તં સણ્ણિસુયં ’ ઇતિ । અથ કિં તત્ સંજ્ઞિ-  
શ્રુતમ્ ? ઇતિ । ઉત્તરમાહ—‘ સણ્ણિસુયં ૦ ’ ઇત્યાદિ । સંજ્ઞિશ્રુતં ત્રિવિધં પ્રજ્ઞતં, તદ્  
યથા—કાલિક્યુપદેશેન, હેતૂપદેશેન, દૃષ્ટિવાદોપદેશેન ।

અવ સંજ્ઞિશ્રુત કા વર્ણન કરતે હૈં—‘ સે કિં તં સણ્ણિસુયં ૦ ’ ઇત્યાદિ ।

શિષ્ય પૃચ્છતા હૈં—હે ભદન્ત ! પૂર્વવર્ણિત સંજ્ઞિશ્રુત કા કયા સ્વરૂપ હૈં ।

ઉત્તર—સંજ્ઞિશ્રુત ત્રીન પ્રકાર કા કહા હૈં । વે ઇસ પ્રકાર—કાલિકી ઉપદેશ  
સે ૧, હેતુ ઉપદેશ સે ૨, તથા દૃષ્ટિવાદ કે ઉપદેશ સે ૩ ।

હવે સંજ્ઞિશ્રુતનું વર્ણન કરે છે—સે કિં તં સણ્ણિસુયં ૦ ” ઇત્યાદિ—

શિષ્ય પૂછે છે—હે ભદન્ત ! પૂર્વવર્ણિત સંજ્ઞિશ્રુતનું શું સ્વરૂપ છે ?

ઉત્તર—સંજ્ઞિશ્રુત ત્રણ પ્રકારનું કહ્યું છે. તે આ પ્રકારે છે—(૧) કાલિકી  
ઉપદેશથી, (૨) હેતુ ઉપદેશથી, અને (૩) દૃષ્ટિવાદના ઉપદેશથી.

નનુ યદિ સંજ્ઞાયાઃ સમ્બન્ધાત્ સંજ્ઞી ભવતીત્યુચ્યતે, તર્હિ સંજ્ઞાસમ્બન્ધેન સર્વે-  
ડપ્યેકેન્દ્રિયાદયો જીવાઃ સંજ્ઞિનઃ સ્યુઃ, ન તુ કેડપ્યસંજ્ઞિનઃ, તથા હિ સર્વજીવાના-  
મેકેન્દ્રિયાદીનામપિ પ્રજ્ઞાપનાદૌ દશવિધા સંજ્ઞા પ્રરૂપિતા; તદ્ યથા—

“એર્ગિંદિયાણં મંતે ! કઙ્કિવિહા સળ્ળા પળ્ળત્તા ? । ગોયમા ! દસવિહા પળ્ળ-  
ત્તા; તં જહા—આહારસળ્ળા ૧, ભયસળ્ળા ૨, મેહુણસળ્ળા ૩, પરિગ્રહસળ્ળા ૪,  
ક્રોહસળ્ળા ૫, માણસળ્ળા ૬, માયાસળ્ળા ૭, લોહસળ્ળા ૮, ઓહસળ્ળા ૯,  
લોગસળ્ળા ૧૦ ।”

છાયા—એકેન્દ્રિયાણાં ભદન્ત ! કતિવિધા સંજ્ઞા પ્રજ્ઞા ? ગૌતમ ! દશવિધા  
પ્રજ્ઞા; તદ્ યથા—આહારસંજ્ઞા ૧, ભયસંજ્ઞા ૨, મૈથુનસંજ્ઞા ૩, પરિગ્રહસંજ્ઞા ૪,  
ક્રોધસંજ્ઞા ૫, માનસંજ્ઞા ૭, લોભસંજ્ઞા ૮, ઓઘસંજ્ઞા ૯, લોકસંજ્ઞા ૧૦ ।

શંકા—યદિ સંજ્ઞા કે સંબંધ સે જીવ સંજ્ઞી માના જાય તો ફિર ઇસ  
પ્રકાર સે કોઈ મી પ્રાણી અસંજ્ઞી નહીં માના જાસકતા હૈ, કારણ પ્રજ્ઞાપ-  
નાદિ સૂત્રો મેં સમસ્ત એકેન્દ્રિયાદિ જીવોં કે મી દશપ્રકાર કી સંજ્ઞાઈ પ્રરૂ-  
પિત કી ગઈ હૈ, અતઃ વે મી સંજ્ઞા કે સંબંધ સે સંજ્ઞી સિદ્ધ હો જાતે હૈ । જૈસે—

“એર્ગિંદિયાણં મંતે ! કઙ્કિવિહા સળ્ળા પળ્ળત્તા ? ગોયમા ! દસવિહા  
પળ્ળત્તા” ઇત્યાદિ ઇસ પાઠ સે કિ જિસમેં યહીં બતલાયા હુઆ હૈ કિ  
એકેન્દ્રિય જીવોં કે આહારસંજ્ઞા ૧, ભયસંજ્ઞા ૨, મૈથુનસંજ્ઞા ૩, પરિગ્રહ-  
સંજ્ઞા ૪, ક્રોધસંજ્ઞા ૫, માનસંજ્ઞા ૬, માયાસંજ્ઞા ૭, લોભસંજ્ઞા ૮, ઓઘ-  
સંજ્ઞા ૯, ઓર લોકસંજ્ઞા ૧૦, યે દશ પ્રકાર કી સંજ્ઞાઈ હૈ । ઇસી પ્રકાર  
દ્વીન્દ્રિય આદિ જીવોં મેં મી યે હી દસ પ્રકાર કી સંજ્ઞાઈ જાનની ચાહિયે,  
અતઃ જબ યહ વાત હૈ તબ ‘સંજ્ઞા કે સંબંધ સે જીવ સંજ્ઞી હૈ’

શંકા—જો સંજ્ઞાના સંબંધથી જીવ સંજ્ઞી ગણાય તો પછી એ પ્રકારે  
તો કેાઈ પણ પ્રાણી અસંજ્ઞી માની શકાય નહીં, કારણ કે પ્રજ્ઞાપન આદિમાં  
સમસ્ત એકેન્દ્રિયાદિ જીવોને પણ દસ પ્રકારની સંજ્ઞાઓ પ્રરૂપિત કરેલ છે,  
તેથી તેઓ પણ સંજ્ઞાના સંબંધથી સંજ્ઞી સિદ્ધ થઈ જાય છે. જેમકે—

“એર્ગિંદિયાણં મંતે ! કઙ્કિવિહા સળ્ળા પળ્ળત્તા ? ગોયમા ! દસવિહા પળ્ળત્તા”  
ઈત્યાદિ. આ પાઠથી કે જેમાં એજ બતાવ્યું છે કે એકેન્દ્રિય જીવોને  
(૧) આહાર સંજ્ઞા, (૨) ભય સંજ્ઞા, (૩) મૈથુન સંજ્ઞા, (૪) પરિગ્રહ સંજ્ઞા,  
(૫) ક્રોધ સંજ્ઞા, (૬) માન સંજ્ઞા, (૭) માયા સંજ્ઞા, (૮) લોભ સંજ્ઞા, (૯) ઓઘ  
સંજ્ઞા, અને (૧૦) લોક સંજ્ઞા. એ દસ પ્રકારની સંજ્ઞાઓ હોય છે. એજ  
પ્રમાણે દ્વીન્દ્રિય આદિ જીવોમાં પણ એજ દસ પ્રકારની સંજ્ઞાઓ જાણવી  
જોઈએ, તેથી જ્યારે આમ વાત છે ત્યારે “સંજ્ઞાના સંબંધથી જીવ સંજ્ઞી છે”

एवं द्वीन्द्रियादीनां वाच्यम् । तत् कथं जीवा असंज्ञिनः प्रोक्ताः ? इति चेत् ।

उच्यते—अत्र सा दशविधा संज्ञा नाधिक्रियते । यतस्तत्र काचित् स्वल्पा भवति, यथा—ओघसंज्ञेति । तथा संज्ञया संज्ञीति व्यपदेशो न युज्यते । नहि कार्षापण-मात्रसद्भावे धनवानित्युच्यते लोके । आहार-भय-परिग्रह-मैथुनादिसंज्ञा अप्याश्रित्य संज्ञीति निर्देशः कर्तुमशक्यः, तासां मोहादिजन्यत्वेन सामान्यरूपत्वादशो-भनत्याच्च । लोकेऽप्यविशिष्टेन रूपमात्रेण रूपवानिति न व्यवह्रियते । तस्मात्

इस कथन में कोई भी जीव असंज्ञी नहीं सिद्ध होता है फिर “असंज्ञी जीव है” यह बात केवल असंबद्ध ही मानी जानी चाहिये, क्यों कि इस तरह कोई भी असंज्ञी जीव नहीं होता है ? ।

उत्तर—कथन को नहीं समझने के कारण इस प्रकार की शंका उपस्थित की गई है । संज्ञी शब्द के अर्थ का जहां विचार किया गया है वहां इन दश प्रकार की संज्ञा का संबंध विवक्षित नहीं है, कारण कि कोई २ संज्ञाएँ वहां अल्प भी होती हैं, जैसे—ओघसंज्ञा । यदि इन संज्ञाओं को लेकर संज्ञी जीव माने जाते तो ओघ संज्ञा की अल्पता में संज्ञीपना वहां नहीं आ सकता । कोड़ी मात्र धन के होने पर कोई जीव संसार में धनी नहीं माना जाता है । आहार, भय, परिग्रह, मैथुन आदि संज्ञाओं के संबंध को लेकर भी जीव में “संज्ञी” इस प्रकार का निर्देश नहीं किया गया है, क्यों कि ये संज्ञाएँ मोहादिजन्य होने से सामान्यरूप हैं, तथा अशोभन हैं । जैसे—लोक में सामान्यरूप को लेकर कोई प्राणी रूपवान् नहीं कहा जाता है उसी प्रकार सामान्यरूप वाली—समानरूप

આ કથનથી કોઈ પણ જીવ અસંજી સિદ્ધ થતો નથી તો “અસંજી જીવ છે” એ વાત કેવળ અસંબંધ જ માનવી બેઠએ, કારણ કે આ રીતે કોઈ પણ અસંજી જીવ હોતા નથી ?

ઉત્તર—કથનને નહીં સમજવાને કારણે આ પ્રકારની શંકા ઉઠાવવામાં આવી છે. સંજી શબ્દના અર્થને ત્યાં વિચાર કરાયો છે, ત્યાં આ દશ પ્રકારની સંજ્ઞાનો સંબંધ વિવક્ષિત નથી. કારણ કે કોઈ કોઈ સંજ્ઞાઓ ત્યાં અલ્પ પણ હોય છે, જેમકે ઓઘ સંજ્ઞા. જો આ સંજ્ઞાઓને લીધે સંજી જીવ માનવામાં આવે તો ઓઘસંજ્ઞાની અલ્પતામાં ત્યાં સંજીપણું આવી શકે નહીં. માત્ર એક કોડી ધન હોય તો એવો કોઈ જીવ સંસારમાં ધનિક મનાય નહીં. આહાર, ભય, પરિગ્રહ, મૈથુન આદિ સંજ્ઞાઓના સંબંધને લીધે પણ જીવમાં “સંજી” એવા પ્રકારનો નિર્દેશ કરાયો નથી, કારણ કે એ સંજ્ઞાઓ મોહાદિજન્ય હોવાથી સામાન્યરૂપ છે, તથા અશોભન છે. જેમ લોકમાં સામાન્યરૂપને લીધે કોઈ પ્રાણી

યથા લોકે બહુદ્રવ્ય એવ ધનવાનિત્યુચ્યતે, પ્રશસ્તરૂપ એવ રૂપવાનિતિ વ્યપદિશ્યતે, તથાઽત્રાપિ મહત્યા શોભનયા ચ સંજ્ઞયા જ્ઞાનાવરણીકર્મક્ષયોપશમજન્યમનોજ્ઞાનરૂપયા સંજ્ઞી વ્યપદિશ્યતે । સંજ્ઞાનં-સંજ્ઞા, મનોજ્ઞાનમિતિ તદર્થઃ । મનોજ્ઞાનરૂપા સંજ્ઞા મહતી શોભના ચાસ્તીતિ સૈવ ગૃહ્યતે, ન ત્વન્યા । તતથ મનોજ્ઞાનરૂપા સંજ્ઞા યેપામસ્તિ ત એવ સંજ્ઞિન ઇતિ બોધ્યમ્ ।

અથ કોઽસૌ કાલિક્યુપદેશેન સંજ્ઞી ?-તિ શિષ્ય પ્રશ્નઃ । દીર્ઘકાલિકી સંજ્ઞા કાલિકીત્યુચ્યતે, તસ્યા ઉપદેશઃ=કથનં તેન સંજ્ઞી કીદૃશો ભવતી ?તિ ભાવઃ ।

સે સવ જીવોં મેં પાઈ જાનેવાલી इन आहार आदि संज्ञाओं के संबंध से कोई भी जीव संज्ञी नहीं बतलाया गया है, अतः जिस प्रकार बहुत द्रव्य के सद्भाव में प्राणी धनशाली माना जाता है, तथा प्रशस्तरूप के होने पर रूपसंपन्न गिना जाता है उसी प्रकार यहां भी महती-विशिष्ट एवं शोभन-सुन्दरसंज्ञा से अर्थात् ज्ञानवरणीय कर्मके क्षयोपशमजन्य जो मनोज्ञानरूप संज्ञा है उससे जो जीव युक्त होता है वह संज्ञी कहा गया है । यह मनोज्ञानरूप संज्ञा महती एवं शोभनीय है, इसलिये यह संज्ञा जिन जीवों के पाई जाती है वे ही शास्त्रकारों की दृष्टि में संज्ञीरूप से व्यपदिष्ट हुए हैं, अन्य संज्ञाओं के संबंध से नहीं ।

શિષ્ય સંજ્ઞિશ્રુત કે ભેદ પૂછતા હૈ-હે ભદ્રન્ત ! કાલિક્યુપદેશ કે સંબંધ સે સંજ્ઞી જીવ કા કયા સ્વરૂપ હૈ ? શિષ્ય કે હસ પ્રશ્ન કા તાત્પર્ય યહ હૈ કિ દીર્ઘકાલિકી સંજ્ઞા કા નામ કાલિકી હૈ, હસ કાલિકી કે કથન સે જો સંજ્ઞી જીવ કહેં ગયે હૈં ઉનકા કયા સ્વરૂપ હૈ-વે કૈસે હોતે હૈં ? ।

इपाणुं कडेवातुं नथी, ओज प्रकारे सामान्यरूपवाणी-समानरूपे सधणा लवोमां देणाती ओ आहार आदि संज्ञाओना संबंधथी केअ पणु लवने संज्ञी भताव्यो नथी, तेथी जेम वधारे द्रव्यना सद्भावथी प्राणी धनवान भनाय छे, तथा प्रशस्तरूप होवाथी इपाणे गणाय छे ओज प्रकारे अडीं पणु महती-विशिष्ट अने शोभन-सुंदर संज्ञाथी ओटले के ज्ञानावरणीय कर्मना क्षयोपशम जन्य जे मनोज्ञानरूप संज्ञा छे तेना वडे जे लव युक्त होय छे तेने संज्ञी कडेल छे. आ मनोज्ञानरूप संज्ञा महती अने शोभनीय छे, तेथी ते संज्ञा जे लवोमां जेवा भणे छे ते लवो जे शास्त्रकारनी दृष्टिओ संज्ञी रूपे प्रणीत थयां छे, भील संज्ञाओना संबंधथी नडीं.

શિષ્ય સંજ્ઞિશ્રુતના ભેદ પૂછે છે-હે ભદ્રન્ત ! કાલિકી ઉપદેશના સંબંધથી સંજ્ઞી લવનું શું સ્વરૂપ છે ? શિષ્યના આ પ્રશ્નનું તાત્પર્ય એ છે કે-દીર્ઘકાલિની સંજ્ઞાનું નામ કાલિકી છે, એ કાલિકીના કથનથી જો સંજ્ઞી લવ કહેવાયા છે તેમનું શું સ્વરૂપ છે-તેઓ કેવાં હોય છે ?

ઉત્તરમાહ—‘કાલિઓવદેસેણં જસસ ણં૦’ ઇત્યાદિ । કાલિક્યુપદેશેન સંજી સ ઉચ્યતે, યસ્ય પ્રાણિનઃ સ્વલુ ર્ઇહા=સદર્થં પર્યાલોચનરૂપા, અસ્તિ-વિદ્યતે । તથા-અપોહઃ=નિશ્ચયઃ, માર્ગણા=અન્વયધર્માન્વેષણમ્, ગવેષણા = વ્યતિરેકધર્મસ્વરૂપ પર્યાલોચનમ્, તથા-ચિન્તા=‘ઇદં કેન પ્રકારેણ જાતં, ઇદં સંપ્રતિ કેન પ્રકારેણ વર્તતે, કેન પ્રકારેણ ચૈતદ્ ભવિષ્યતી’-તિ પર્યાલોચનમ્, તથા-વિમર્શઃ=વિમર્શનમ્-‘ઇદમિત્યમેવ ઘટતે, ઇત્યં વા તદ્ ભૂતમ્, ઇત્યમેવ વા તદ્ ભવિષ્યતી’-તિ યથાઽવસ્થિતવસ્તુસ્વરૂપનિર્ણયઃ, અસ્તિ=વિદ્યતે સ પ્રાણી સંજીતિ લભ્યતે । સ ચ ગર્ભવ્યુત્ક્રાન્તિકો મનુષ્યાદિઃ ઔપપાતિકશ્ચ દેવાદિર્મનઃપર્યાપ્તિયુક્તો વિજ્ઞેયઃ । તસ્યૈવ ત્રિકાલવિષયચિન્તાવિમર્શાદિસમ્ભવાત્ ।

ઉત્તર-કાલિકી કે ઉપદેશ કે સંબંધ સે સંજી જીવ વહ હૈ કિ જિસકે ર્ઇહા આદિ જ્ઞાન હોતે હૈં । સદર્થ કી પર્યાલોચના કા નામ ર્ઇહા હૈ ૧ । અપોહ વસ્તુ કા નિશ્ચય હોના ૨ । ‘માર્ગણા’-શબ્દ કા અર્થ હૈ વસ્તુ મેં અન્વય ધર્મ કી ગવેષણા કરના, જૈસે-‘યહ અમુક વસ્તુ હી હૈ, ક્યોં કિ ઇસમેં ઇનકે સાથ સંબંધ રાખને વાલે અમુક ૨ ધર્મ પાવે જાતે હૈં’ ૩ । ગવેષણા શબ્દ કા અર્થ હૈ વ્યતિરેક ધર્મોં કે સ્વરૂપ કી વસ્તુ મેં પર્યાલોચના કરના ૪ । “યહ કિસ તરહ સે હુઆ હૈ, ઇસ સમય યહ કિસ તરહ હૈ, આગે કિસ તરહ સે હોગા” ઇસ પ્રકાર કી વિચાર ધારા કા નામ ચિન્તા હૈ ૫ । “યહ ઇસી તરહ સે ઘટિત હોતા હૈ, પહિલે ભી યહ ઇસી તરહ સે ઘટિત હુઆ થા, આગે ભી યહ ઇસી રૂપ સે ઘટિત હોગા” ઇસ તરહ વસ્તુ કા જો સ્વરૂપ હૈ ઉસકા નિર્ણય હોના સો વિમર્શ હૈ ૬ । યે સવ વાતે જિન મેં પાઈ જાતી હૈ વે સંજી જીવ ગર્ભજન્મવાલે

ઉત્તર—કાલિકીના ઉપદેશના સંબંધથી સંજી જીવ તે છે કે જેમને ઇહા આદિ જ્ઞાન હોય છે. (૧) સદર્થની પર્યાલોચનાનું નામ ઇહા છે. (૨) વસ્તુનો નિર્ણય થવો તે અપોહ છે (૩) “માર્ગણા” શબ્દનો અર્થ છે-વસ્તુમાં અન્વય-ધર્મની ગવેષણા કરવી જેમકે-“આ અમુક વસ્તુ જ છે, કારણ કે તેમાં તેની સાથે સંબંધ રાખનાર અમુક અમુક ધર્મ મળે છે. (૪) “ગવેષણા” શબ્દનો અર્થ છે-વ્યતિરેક ધર્મોનાં સ્વરૂપની વસ્તુમાં પર્યાલોચના કરવી. “આ કેવી રીતે થયું છે, આ સમયે આ કયા પ્રકારનું છે, આગળ કેવી રીતે હશે. આ પ્રકારની વિચાર ધારાનું નામ ચિન્તા છે. (૫) આ રીતે ઘટાવી શકાય છે, પહેલાં પણ આ રીતે જ ઘટિત થયું હતું, આગળ પણ તે આ રીતે જ ઘટાવી શકાશે” આ રીતે વસ્તુનું જે સ્વરૂપ છે તેનો નિર્ણય થવો તે “વિમર્શ” છે (૬) એ બધી વાત જેમનામાં જોવા મળે છે તેઓ સંજીજીવ છે. એ સંજીજીવ

एष च प्रायः सर्वमप्यर्थं स्फुटरूपमुपलभते । तथाहि—यथा चक्षुष्मान् प्रदी-  
पादिप्रकाशेन स्फुटमर्थमुपलभते, तद्वदयं मनोलब्धिसम्पन्नो मनोद्रव्याऽऽलम्बन  
समुत्पन्नविमर्शवशात् पूर्वापरानुसंधानेन यथावस्थितं स्फुटमर्थमुपलभते ।

अयं भावः—यः कश्चिन्मनोज्ञानावार कर्मक्षयोपशमाद् मनोलब्धिसंपन्नो मनो-  
योग्याननन्तान् स्कन्धान् मनोवर्गणाभ्यो गृहीत्वा मनस्त्वेन परिणमय्य चिन्तनीयं  
वस्तुजानाति, स कालिक्युपदेशेन संज्ञी विज्ञेयः । स च गर्भजस्तिर्यग् मनुष्यो वा  
देवो नारकश्चेति ।

પુરુષ તથા તિર્યંચ એવં ઔપપાતિક જન્મવાલે દેવ ઔર નારકી હોતે હૈં ।  
इन सब के मनःपर्याप्ति होती है और इसीसे ये भूत, भविष्यत् और  
वर्तमान काल संबंधी वस्तु का विचार आदि कर सकते हैं ।

यह संज्ञी जीव प्रायः समस्त पदार्थों को स्फुटरूप से जान लेता है ।  
जैसे अच्छी दृष्टि वाला व्यक्ति दीपादि के प्रकाश की सहायता से  
पदार्थों को जैसे का तैसा जान लेता है उसी प्रकार मनोलब्धि संपन्न  
प्राणी मनोद्रव्य के अवलम्बन से उत्पन्न विमर्श के वश से पूर्वापरानु-  
संधानपूर्वक यथावस्थित पदार्थ को स्फुटरूप से जान लिया करता है ।

તાત્પર્ય इसका यह है कि जो प्राणी मनोज्ञान को आवरण करने  
वाले कर्मके क्षयोपशम के वशसे मनोलब्धियुक्त होता हुआ मनोयोग्य  
अनंत स्कन्धों को मनोवर्गणाओं से ग्रहण करके उन्हें मनरूप से परि-  
णमाकर चिन्तनीय जानने योग्य वस्तु को जानता है वह कालिकी-उप-  
देश के संबंध से संज्ञीजीव कहा गया है । ऐसे जीव गर्भजन्म वाले  
मनुष्य एवं तिर्यंच तथा देव एवं नारकी हैं ।

ગર્ભજન્મવાળા પુરુષ તથા તિર્યંચ અને ઔપપાતિક જન્મવાળા દેવ અને  
નારકી હોય છે. એ બધાને મનઃપર્યાપ્તિ હોય છે, અને તે વડે તેઓ ભૂત,  
ભવિષ્ય અને વર્તમાનકાળ સંબંધી વસ્તુનો વિચાર આદિ કરી શકે છે.

એ સંજ્ઞીજીવ સામાન્ય રીતે સમસ્ત પદાર્થોને સ્ફુટરૂપે જાણી લે છે. જેમ સારી  
નજરવાળી વ્યક્તિ પ્રદીપાદિના પ્રકાશની મદદથી પદાર્થોને તાદૃશ્ય સ્વરૂપે જાણી  
લે છે એજ પ્રકારે લબ્ધિસંપન્ન પ્રાણી મનોદ્રવ્યને આધારે ઉત્પન્ન વિમર્શને  
કારણે પૂર્વાપરાનુ સંધાનપૂર્વક યથાવસ્થિત પદાર્થને સ્ફુટરૂપે જાણે છે તેનું તાત્પર્ય  
એ છે કે જે પ્રાણી મનોજ્ઞાનનું આવરણ કરનાર કર્મના ક્ષયોપશમને કારણે  
મનોલબ્ધિયુક્ત થઈને મનોયોગ્ય અનંત સ્કંધોને મનોવર્ગણાઓથી ગ્રહણ કરીને  
તેમને મનરૂપથી પરિણમાવીને ચિન્તનીય જાણવાયોગ્ય-વસ્તુને જાણે છે તે  
કાલિકી-ઉપદેશના સંબંધથી સંજ્ઞીજીવ કહેલ છે. એવા જીવ ગર્ભજન્મવાળા  
મનુષ્ય અને તિર્યંચ તથા દેવ અને નારકી છે.



યસ્ય તુ ઈહાઽપોહો માર્ગણા ગવેષણા ચિન્તા વિમર્શશ્ચ નાસ્તિ સ સ્વલુ અસંજીતિ લભ્યતે । સ ચાલ્પમનોલબ્ધિત્વાત્ સંમૂર્ચ્છિમપચ્ચેન્દ્રિયોઽસ્ફુટમર્થં જાનાતિ । તતોઽપ્યસ્ફુટં ચતુરિન્દ્રિયો જાનાતિ । તતોઽપ્યસ્ફુટતરં ત્રીન્દ્રિયઃ । તતોઽપ્યસ્ફુટતમં દ્વીન્દ્રિયઃ । તતોઽપ્યસ્ફુટતમમેકેન્દ્રિયો જાનાતિ, તસ્ય હિ દ્રવ્યમનો નાસ્તિ, કિં તુ અલ્પતરમવ્યક્તં ભાવમનો વિદ્યતે, યદ્વશાદાહારાદિસંજ્ઞા અવ્યક્તરૂપાઃ પ્રાદુર્ભવન્તિ । સ એષ કાલિક્યુપદેશેન સંજ્ઞી વર્ણિતઃ । અસંજ્યપિ વર્ણિતઃ ॥

જિસ જીવ કે ઈહા, અપોહ, માર્ગણા, ગવેષણા ચિન્તા તથા વિમર્શ, યે નહીં હોતે હૈં વે અસંગી હૈં, એસા જાનના ચાહિયે । એસા જીવ અલ્પ-મનોલબ્ધિવાલા હોતા હૈ, ઓર વહ સંમૂર્ચ્છિમ પંચેન્દ્રિય યહાં ગ્રહણ કિયા ગયા હૈ । યહ પદાર્થ કો સ્ફુટરૂપ સે નહીં જાનતા હૈ, કિન્તુ અસ્ફુટરૂપ સે જાનતા હૈ । ઇસકી અપેક્ષા ચતુરિન્દ્રિયવાલા જીવ પદાર્થ કો અસ્ફુટરૂપ સે જાનતા હૈ, તથા ચતુરિન્દ્રિયવાલે જીવ કી અપેક્ષા તાન ઇન્દ્રિય વાલા જીવ પદાર્થ કો ઓર અધિક અસ્ફુટરૂપ સે, તથા ત્રીન ઇન્દ્રિયવાલે જીવ કી અપેક્ષા દો ઇન્દ્રિય વાલા જીવ પદાર્થ કો ઓર અધિક અસ્ફુટરૂપ સે, એવં દો ઇન્દ્રિય વાલે જીવ કી અપેક્ષા એકેન્દ્રિય જીવ પદાર્થ કો ઓર અધિક અસ્ફુટરૂપ સે જાનતા હૈ । ઇસ અસંજ્ઞી જીવ કે દ્રવ્ય મન નહીં હોતા હૈ, કિન્તુ અત્યલ્પ અવ્યક્ત ભાવ મન હોતા હૈ, ઇસીસે આહાર આદિ સંજ્ઞાએ અવ્યક્તરૂપ મેં ઇસકે હુઆ કરતી હૈં । ઇસ તરહ યહ કાલિકી-ઉપદેશ કે સંબંધ સે સંજ્ઞી કા ઓર તદ્વિપરીત અસંજ્ઞી કા યહાં તક કથન-વર્ણન હુઆ ।

જે જીવને ઇહા, અપોહ, માર્ગણા, ગવેષણા, ચિન્તા તથા વિમર્શ હોતાં નથી તે અસંજ્ઞી છે, એમ સમજવું. એવો જીવ અલ્પમનોલબ્ધિવાળો હોય છે, અને તે સંમૂર્ચ્છિમ પચ્ચેન્દ્રિય અહીં ગ્રહણ કરવામાં આવેલ છે. એ પદાર્થને સ્ફુટરૂપે જાણતા નથી પણ અસ્ફુટરૂપે જાણે છે, તેનાં કરતાં ચતુરિન્દ્રિય જીવ પદાર્થને અસ્ફુટરૂપે જાણે છે તથા ચતુરિન્દ્રિયવાળા જીવ કરતાં ત્રણ ઇન્દ્રિયવાળો જીવ પદાર્થને તેનાથી પણ વધારે અસ્ફુટરૂપે તથા ત્રણ ઇન્દ્રિયવાળા કરતાં બે ઇન્દ્રિયવાળો જીવ પદાર્થને વધારે અસ્ફુટરૂપે અને બે ઇન્દ્રિયવાળા જીવ કરતાં એકેન્દ્રિય જીવ પદાર્થને તેના કરતાં પણ વધારે અસ્ફુટરૂપે જાણે છે, આ અસંજ્ઞી જીવને દ્રવ્યમન હોતું નથી, પણ અલ્પ અલ્પ અવ્યક્ત ભાવમન હોય છે, તેથી તેમને આહાર આદિ સંજ્ઞાઓ અવ્યક્તરૂપે થયા કરે છે. આ રીતે આ કાલિકી-ઉપદેશના સંબંધથી સંજ્ઞીનું અને તેનાથી વિપરીત અસંજ્ઞીનું વર્ણન અહીં સુધી થયું.

અથ કોઽસૌ હેતુપદેશેન સંજ્ઞીતિ શિષ્યપ્રશ્નઃ । ઉત્તરમાહ-‘હેઙ્ગવણ્ણેણં ૦’  
 ઇત્યાદિ । હેતુપદેશેન-હેતુઃ=કારણં, તસ્યોપદેશઃ=કથનં, હેતુપદેશસ્તેન-કારણોપદે-  
 શેનેત્યર્થઃ । કાલિક્યુપદેશેનાઽસંજ્ઞયપિ યઃ સંજ્ઞિત્વકારણમુપલભ્ય સંજ્ઞીતિ વ્યપદિ-  
 શ્યતે, સ એવં ભવતિ-યસ્ય પ્રાણિનઃ સ્વલુ અભિસંધારણપૂર્વિકા=અભિસંધારણમ્=  
 અવ્યક્તેન વ્યક્તેન વા વિજ્ઞાનેન આલોચનં, તત્પૂર્વિકા=તત્કારણિકા, કરણશક્તિઃ-  
 કરણં=ક્રિયા, તસ્યાં શક્તિઃ=પ્રવૃત્તિઃ, અસ્તિ=વિદ્યતે, સ પ્રાણી સ્વલુ હેતુપદેશેન  
 સંજ્ઞીતિ લભ્યતે । અયં ચ દ્વીન્દ્રિયાદિઃ સંમૂર્ચ્છિમપચ્ચેન્દ્રિયપર્યન્તો વિજ્ઞેયઃ ।

ફિર શિષ્ય પૂછતા હૈ-હે ભદન્ત ! હેતુપદેશ સે સંબંધ સે સંજ્ઞી કા  
 કયા સ્વરૂપ હૈ ? ઉત્તર-જિસ જીવ મેં અભિસંધારણપૂર્વિકા કારણ શક્તિ  
 હોતી હૈ વહ જીવ હેતુપદેશ કે સંબંધ સે સંજ્ઞી માના ગયા હૈ । તાત્પર્ય  
 હસકા યહ હૈ-યદ્યપિ એસા જીવ કાલિકી ઉપદેશ કી અપેક્ષા સંજ્ઞી નહીં  
 માના જાતા હૈ, પરન્તુ સંજ્ઞિપને કે કારણોં સે ઉસે સંજ્ઞી કહદિયા જાતા  
 હૈ । અભિસંધારણપૂર્વિકા કરણશક્તિ કા તાત્પર્ય હસ પ્રકાર હૈ-વ્યક્ત  
 તથા અવ્યક્ત વિજ્ઞાન સે જો આલોચના હોતી હૈ-વિચાર ધારા ચલતી  
 હૈ-ઉસકા નામ અભિસંધારણ હૈ, ક્રિયામેં જો પ્રવૃત્તિ હોતી હૈ વહ  
 કરણશક્તિ હૈ । અભિસંધારણપૂર્વક જો ક્રિયામેં પ્રવૃત્તિ હોતી હૈ વહ  
 અભિસંધારણ પૂર્વિકા કરણ શક્તિ હૈ । યહ અભિસંધારણ પૂર્વિકાકરણ-  
 શક્તિ હી યહ હેતુપદેશ હૈ । યહાં હેતુપદેશ કી અપેક્ષા સંજ્ઞીપના અસંજ્ઞી  
 સંમૂર્ચ્છિમ પંચેન્દ્રિય જીવ સે લેકર દ્વીન્દ્રિય જીવોં તક માના ગયા હૈ ।

તાત્પર્ય હસકા યહ હૈ, જો જીવ અપને શરીર કે પાલન કે લિયે

વળી શિષ્ય પૂછે છે-હે ભદન્ત ! હેતુપદેશના સંબંધથી સંજ્ઞીનું શું  
 સ્વરૂપ છે ?

ઉત્તર-જે જીવમાં અભિસંધારણ પૂર્વિકા કારણ શક્તિ હોય છે તે  
 જીવ હેતુપદેશના સંબંધથી સંજ્ઞી માનવામાં આવ્યો છે. તેનું તાત્પર્ય એ છે  
 કે એવો જીવ કાલકી ઉપદેશની અપેક્ષાએ સંજ્ઞી માનવામાં આવતો  
 નથી, પણ સંજ્ઞીપણના કારણથી તેને સંજ્ઞી કહી દેવાય છે. અભિસંધારણ  
 પૂર્વિકા કરણ શક્તિનું તાત્પર્ય આ પ્રમાણે છે-વ્યક્ત તથા અવ્યક્ત વિજ્ઞાનથી  
 જે આલોચના થાય છે-વિચારધારા ચાલે છે તેનું નામ અભિસંધારણ છે, ક્રિયામાં  
 જે પ્રવૃત્તિ થાય છે તે કરણશક્તિ છે. અભિસંધારણ પૂર્વક જે ક્રિયામાં પ્રવૃત્તિ  
 થાય છે તે અભિસંધારણ પૂર્વિકા કારણશક્તિ છે. આ અભિસંધારણપૂર્વિકા  
 કરણશક્તિ જ આહીં હેતુપદેશ છે. આ હેતુપદેશની અપેક્ષાએ સંજ્ઞીપણું અસંજ્ઞી  
 સંમૂર્ચ્છિમ પંચેન્દ્રિય જીવથી લઈને દ્વીન્દ્રિયજીવો સુધી માનવામાં આવેલ છે.

અર્થ ભાવ:-યો બુદ્ધિપૂર્વકં સ્વદેહપરિપાલનાર્થમિષ્ટેષ્વાહારેષુ વસ્તુષુ પ્રવર્તતે, અનિષ્ટેભ્યશ્ચ નિવર્તતે, સ હેતૂપદેશેન સંજી । સ ચ દ્વીન્દ્રિયાદિરપિ વેદિતવ્યઃ । તથાહિ-ઈષ્ટાનિષ્ટવિષયપ્રવૃત્તિનિવૃત્તિચિન્તનં, ન મનોવ્યાપારમન્તરેણ સમ્ભવતિ । મનસા ચ પર્યાલોચનં સંજ્ઞા । સા ચ દ્વીન્દ્રિયાદેરપિ વિદ્યતે, તસ્યાપિ પ્રતિનિયતેષ્ટા-નિષ્ટવિષયપ્રવૃત્તિનિવૃત્તિદર્શનાત્ । તતો દ્વીન્દ્રિયાદિરપિ હેતૂપદેશેન સંજી લભ્યતે । નવરમ્-અસ્ય સંચિન્તનં પ્રાયો વર્તમાનકાલવિષયં ભવતિ, ન તુ ભૂતભવિષ્યદ્વિ-ષયમ્, અસ્ય ભાવમનસ્કત્વાદિતિ ન કાલિક્યુપદેશેન સંજી લભ્યતે ।

બુદ્ધિપૂર્વક ઇષ્ટ આહારમેં પ્રવર્તિત હોતા હૈ તથા અનિષ્ટ આહાર સે નિવર્તિત હોતા હૈં વહ હેતૂપદેશ કી અપેક્ષા સંજી કહા ગયા હૈ । એસા પ્રાણી દ્વીન્દ્રિયાદિક જીવ મી હૈ, ક્યોં કિ હસકે જો ઇષ્ટ એવં અનિષ્ટ પદાર્થોંમેં પ્રવૃત્તિ તથા નિવૃત્તિ યા ચિન્તન હોંતા હૈ વહ માનસિક વ્યાપાર કે વિના નહીં હોતા હૈ । માનસિક વ્યારકા નામ હી સંજ્ઞા હૈ । જબ હસ પ્રકાર કી સંજ્ઞા યહાં હૈ તો ફિર યે મી સંજી હી હૈં, અર્થાત્ હસ તરહ હેતૂપદેશ કી અપેક્ષા અસંજી જીવ મી સંજી માન લિયે જાતે હૈં, ક્યોં કિ હન જીવોંમેં મી પ્રતિનિયત વિષયોં કે પ્રતિ પ્રવૃત્તિ ઓર નિવૃત્તિ લક્ષિત હોતી હૈ । દ્વીન્દ્રિયાદિક જીવોંમેં જો ઇષ્ટાનિષ્ટ વિષયોં કે પ્રતિ ચિન્તન હોતા હૈ વહ વર્તમાન કાલિક હી હોતા હૈ-ભૂત ભવિષ્યત કાલીન વિષ-યોંકો લેકર નહીં હોતા । હસ હેતૂપદેશ કી અપેક્ષા સંજીપને કે વિચારમેં ભાવમન કી અપેક્ષા રચી ગઈ હૈ, ઓર કાલિકી ઉપદેશ કી અપેક્ષા સે

તેનું તાત્પર્ય એ છે કે જે જીવ પોતાનાં શરીરના પાલનને માટે બુદ્ધિપૂર્વક ઇષ્ટ આહારમાં પ્રવર્તિત થાય છે તથા અનિષ્ટ આહારથી નિવર્તિત થાય છે તે હેતૂપ-દેશની અપેક્ષાએ સંજી કહેલ છે. એવું પ્રાણી દ્વીન્દ્રિયાદિક જીવ પણ છે, કારણ કે તેની જે ઇષ્ટ અને અનિષ્ટ પદાર્થોમાં પ્રવૃત્તિ તથા નિવૃત્તિ કે ચિન્તન થાય છે તે માનસિક વ્યાપાર વિના થતું નથી. માનસિક વ્યાપારનું નામ જ સંજ્ઞા છે. જે આ પ્રકારની સંજ્ઞા અહીં છે તે એવા પણ સંજી જ છે, એટલે કે આ રીતે હેતૂપદેશની અપેક્ષાએ અસંજી જીવ પણ સંજી માની લેવાય છે, કારણ કે એ જીવોમાં પણ પ્રતિનિયત વિષયોની તરફ પ્રવૃત્તિ અને નિવૃત્તિ લક્ષિત હોય છે. દ્વીન્દ્રિયાદિક જીવોમાં જે ઇષ્ટાનિષ્ટ વિષયોનું ચિન્તન થાય છે તે વર્તમાન કાલિક જ હોય છે-ભૂત ભવિષ્ય વિષયોને લઈને થતું નથી. આ હેતૂપદેશની અપેક્ષાએ સંજીપણના વિચારમાં ભાવમનની અપેક્ષા રાખેલ છે, અને કાલિકી ઉપદેશની અપેક્ષાએ સંજીપણના વિચારમાં દ્રવ્યમનની એ રીતે

યસ્ય તુ સ્વલુ નાસ્ત્યભિસંધારણપૂર્વિકા કરણશક્તિઃ સ પ્રાણી સ્વલુ હેતૂપદેશે-  
નાપ્યસંજીતિ લભ્યતે । સ ચ પૃથિવ્યાદિરેકેન્દ્રિયો વિજ્ઞેયઃ । તસ્યાભિસન્ધિપૂર્વક-  
મિષ્ટાનિષ્ટપ્રવૃત્તિનિવૃત્ત્યસંભવાત્ । યાશ્ચાહારાદિસંજ્ઞાઃ પૃથિવ્યાદીનાં વર્તન્તે, તા-  
અપ્યત્યન્તમવ્યક્તરૂપા इति तदपेक्षयाऽपि न तेषां संज्ञित्वव्यपदेशः ।

સ એષ હેતૂપદેશેન સંજી વર્ણિતઃ, અસંજ્યપિ વર્ણિતઃ ।

અથ કોઽસૌ દૃષ્ટિવાદેન સંજી ? इति शिष्य प्रश्नः । उत्तरमाह—‘दिङ्मि-  
ઓવણ્ણેણં’ इत्यादि । દૃષ્ટિવાદોપદેશેન-દૃષ્ટિર્દર્શનં સમ્યક્ત્વાદિઃ, દૃષ્ટીનાં વાદો  
દૃષ્ટિવાદઃ, તદુપદેશેન=તદપેક્ષયા સંજી સ ભવતિ યઃ સંજિશ્રુતસ્ય ક્ષયોપશમેન

સંજીપને કે વિચારમેં દ્રવ્યમનની । इस तरह भावमन की अपेक्षा से जो  
कि आत्मस्वरूप होता है द्वीन्द्रियादिक असंजी जीव संजी कह दिये जाते  
हैं । जिन जीवोंमें अभिसंधारणपूर्वक कारणशक्ति नहीं है वे हेतूपदेश  
की अपेक्षा से भी संजी नहीं हैं किन्तु असंजी ही हैं । ऐसे जीव पृथि-  
व्यादिक एकेन्द्रिय माने गये हैं, क्योंकि इन जवों की जो इष्टानिष्ट  
पदार्थोंमें प्रवृत्ति निवृत्ति होती है वह अभिसंधारण पूर्वक नहीं होती  
हैं । तथा जो आहार आदि संज्ञाएँ इन पृथिव्यादिकोंमें हैं वे भी अत्यन्त  
अव्यक्तरूपमें हैं, अतः इस अपेक्षा से भी उनमें संजीपने का व्यपदेश  
नहीं बन सकता है । इस तरह यहां तक हेतूपदेश की अपेक्षा संजी जीव  
का वर्णन हुआ । तथा इसके संबंध से असंजी जीव का भी वर्णन हुआ ।

फिर शिष्य पूछता है—हे भदन्त ! दृष्टिवाद की अपेक्षा से संजी  
जीव का क्या स्वरूप है ?

उत्तर—दृष्टिवाद की अपेक्षा से संजी जीव का स्वरूप यह है—जो

ભાવમનની અપેક્ષાએ જો કે આત્મસ્વરૂપ હોય છે દ્વીન્દ્રિયાદિક અસંજી જીવ સંજી  
કહેવાય છે. જે જીવોમાં અભિસંધારણપૂર્વક કરણશક્તિ હોતી નથી તેઓ હેતૂ  
પદેશની અપેક્ષાએ પણ સંજી નથી પણ અસંજી જ છે. એવા જીવ પૃથિવ્યા-  
દિક એકેન્દ્રિય માનવામાં આવ્યાં છે, કારણ કે તે જીવોની જે ઇષ્ટાનિષ્ટ  
પદાર્થોમાં પ્રવૃત્તિ નિવૃત્તિ થાય છે તે અભિસંધારણપૂર્વક થતી નથી. તથા જે  
આહારાદિ સંજ્ઞા તે પૃથિવ્યાદિકોમાં છે તે પણ અત્યંત અવ્યક્તરૂપમાં છે, તેથી  
એ અપેક્ષાએ પણ તેમનામાં સંજીપણાનું આરોપણ શક્ય નથી. આ રીતે અહીં  
સુધી હેતૂપદેશની અપેક્ષાએ સંજી જીવનું વર્ણન થયું. તથા તેના સંબંધથી  
અસંજીજીવનું પણ વર્ણન થયું.

શિષ્ય પૂછે છે—હે ભદન્ત ! દૃષ્ટિવાદની અપેક્ષાએ સંજીજીવનું શું સ્વરૂપ છે ?

ઉત્તર—દૃષ્ટિવાદની અપેક્ષાએ સંજીજીવનું સ્વરૂપ આ પ્રમાણે છે—

સંજીતિ લભ્યતે । અયમર્થઃ—સંજ્ઞા=સમ્યગ્જ્ઞાનં, સાઽસ્યાસ્તીતિ સંજ્ઞી=સમ્યગ્દૃષ્ટિઃ, તસ્ય શ્રુતં સંજ્ઞિશ્રુતં—સમ્યક્શ્રુતમિત્યર્થઃ । તસ્ય=તદાવરકરસ્ય કર્મણઃ, ક્ષયોપશમ-ભાવેન સંજ્ઞીતિ લભ્યતે । અયં ભાવઃ—યઃ સમ્યગ્દૃષ્ટિઃ ક્ષાયોપશમિકજ્ઞાનયુક્તઃ, સ દૃષ્ટિવાદોપદેશેન સંજ્ઞીતિ વ્યપદિશ્યતે । સ ચ યથાશક્તિ રાગાદિનિગ્રહપરો મહાપુરુષો વિજ્ઞેયઃ, સ હિ સમ્યગ્દૃષ્ટિઃ યઃ સમ્યગ્જ્ઞાનીવ રાગાદીન્ નિગૃહ્ણાતિ, અન્યથા હિતા-હિતેષુ પ્રવૃત્તિનિવૃત્ત્યભાવાત્ સમ્યગ્દૃષ્ટિત્વાયોગાત્ । ઉક્તञ્ચ—

સંજી શ્રુત કે આવારક કર્મ કે ક્ષયોપશમ સે જીવ ‘સંજી’ ઇસ તરહ કે વ્યપદેશ સે યુક્ત હૈ । સમ્યક્જ્ઞાન કા નામ સંજ્ઞા હૈ । યહ સંજ્ઞા જિસ જીવ મેં પ્રાપ્ત હૈં વહ સંજી માના ગયા હૈ । ઇસ અપેક્ષા સમ્યગ્દૃષ્ટિ જીવ હી યહાં સંજીપદ સે વ્યવહત હુઆ હૈ । સમ્યગ્દૃષ્ટિ જીવ કા જો શ્રુત હૈ વહ, સંજી-શ્રુત સમ્યક્શ્રુત હૈ । ઇસ સંજ્ઞિશ્રુત કે આવારક કર્મ—શ્રુતજ્ઞાનાવરણીય કર્મ—કે ક્ષયોપશમ સે જિસ જીવમેં “સંજી” ઇસ તરહ કા વ્યપદેશ હુઆ હૈ વહ દૃષ્ટિવાદ કી અપેક્ષા સે સંજી માના ગયા હૈ । ક્ષાયોપશમિક જ્ઞાન શાલી સમ્યક્ દૃષ્ટિ જીવ હી દૃષ્ટિવાદ કી દૃષ્ટિ સે સંજીપદ કા વાચ્યાર્થ કહા ગયા હૈ । યહ જીવ અપની શક્તિ કે અનુસાર રાગાદિક દોષોં કો દૂર કરનેમેં તત્પર રહતા હૈ, ઓર ઇસકી આત્મા અન્ય સાધારણ જીવોં કી અપેક્ષા વિશેષ મહત્વશાલી હુઆ કરતી હૈ । સમ્યગ્જ્ઞાની જીવ જિસ તરહ અનંતસંસાર કે કારણભૂત રાગાદિકોં કો સર્વથા વિલીન કરનેમેં ઉદ્યોગ શાલી રહતા હૈ ઁસી તરહ યહ સમ્યગ્દૃષ્ટિ જીવ ઁહી વિચાર કિયા કરતા હૈ કિમેં ઁહી રાગાદિકોં કે નિગ્રહ કરનેમેં જબ તત્પર રહુંગા તબ

સંજીશ્રુતના આવારક કર્મના ક્ષયોપશમથી જીવ “સંજી” એ પ્રકારના વ્યપદેશથી યુક્ત છે. સમ્યક્જ્ઞાનનું નામ સંજ્ઞા છે. આ સંજ્ઞા જે જીવને પ્રાપ્ત છે તે સંજી મનાય છે. એ અપેક્ષાએ સમ્યગ્દૃષ્ટિ જીવ જ આહીં સંજી પદથી વ્યવહૃત થયેલ છે. સમ્યગ્દૃષ્ટિ જીવનું જે શ્રુત છે તે સંજીશ્રુત સમ્યક્શ્રુત છે. આ સંજીશ્રુતના આવારક કર્મ—શ્રુતજ્ઞાનાવરણીય કર્મના ક્ષયોપશમથી જે જીવમાં “સંજી” આ પ્રકારનો વ્યપદેશ થયો છે તે દૃષ્ટિવાદની અપેક્ષાએ સંજી મનાયો છે. ક્ષાયોપશમિક જ્ઞાનવાળો સમ્યક્દૃષ્ટિ જીવ જ દૃષ્ટિવાદની દૃષ્ટિએ સંજીપદનો વાચ્યાર્થ કહેલ છે. એ જીવ પોતાની શક્તિ પ્રમાણે રાગાદિક દોષોને દૂર કરવાને તત્પર રહે છે, અને તેનો આત્મા ખીજ સાધારણ જીવો કરતાં વિશેષ મહત્વવાળો હોય છે. સમ્યગ્જ્ઞાની જીવ જે રીતે અનંત સંસારના કારણભૂત રાગાદિકોનો સર્વથા નાશ કરવામાં ઉદ્યોગી રહે છે, એજ રીતે આ સમ્યગ્દૃષ્ટિ જીવ પણ એજ વિચાર કર્યા કરે છે કે હું પણ રાગાદિકોનો નિગ્રહ કરવાને

તજ્ઞાનમેવ ન ભવતિ, યસ્મિન્નુદિતે વિભાતિ રાગગણઃ ।

તમસઃ કુતોઽસ્તિ શક્તિ, -ર્દિનકરકિરણાગ્રતઃ સ્થાતુમ્ ॥ ૧ ॥

અન્યસ્તુ મિથ્યાદૃષ્ટિરસંજ્ઞી વિજ્ઞેય इत्याह-‘असणिसुयस्स०’ इत्यादि । असंज्ञिश्रुतस्य=मिथ्याश्रुतस्य, क्षयोपशमेनाऽसंज्ञीति लभ्यते । स एष दृष्टिवादोप-  
देशेन संज्ञी वर्णितः, असंज्ञी च वर्णितः ।

નનુ પ્રથમં હેતૂપદેશેન સંજ્ઞી વક્તું યુજ્યતે, હેતૂપદેશેન અલ્પમનોલબ્ધિસંપન્નસ્યાપિ  
દ્વીન્દ્રિયાદેઃ સંજ્ઞિત્વેન સ્વીકારાત્, તસ્ય ચાવિશુદ્ધતરત્વાત્, હેતૂપદેશેન યઃ સંજ્ઞી  
જીવસ્તદપેક્ષયા કાલિક્યુપદેશેન સંજ્ઞિનો મનઃપર્યાપ્તિયુક્તતયા વિશુદ્ધત્વાત્, તત્  
કિમર્થમુત્ક્રમેણોપન્યાસઃ કૃત ? इति चेत्,

હી મેરે સમ્યગ્દૃષ્ટિત્વ કી શોભા હૈ, અન્યથા-હિતમેં પ્રવૃત્તિ ઔર અહિતમેં  
નિવૃત્તિ કા અભાવ હોને સે મુઝમેં યથાર્થતઃ સમ્યગ્દૃષ્ટિત્વ કા અયોગ હી  
માના જાયગા ।

કહા મી હૈ-“તજ્ઞાનમેવ ન ભવતિ, યસ્મિન્નુદિતે વિભાતિ રાગગણઃ ।

“તમસઃ કુતોઽસ્તિ શક્તિ, -ર્દિનકર કિરણાગ્રતઃ સ્થાતુમ્ ” ॥૧॥

ઉસ જ્ઞાન સે જીવ કો લાભ હી ક્યા હો સકતા હૈ કિ જિસકે હોને  
પર મી રાગાદિકોં કા સદ્ભાવ આત્મામેં બના રહતા હૈ । સૂર્ય કે સદ્ભાવમેં  
અન્ધકાર કા સદ્ભાવ કૈસે હો સકતા હૈ ॥ ૧ ॥

અસંજ્ઞી-શ્રુત કે ક્ષયોપશમ સે-મિથ્યાશ્રુત કે સદ્ભાવ સે-જીવ અસંજ્ઞી  
માના ગયા હૈ । તાત્પર્ય યહ હૈ કિ દૃષ્ટિવાદ કી અપેક્ષા સે સમ્યગ્દૃષ્ટિ  
જીવ સંજ્ઞી તથા મિથ્યા દૃષ્ટિ જીવ અસંજ્ઞી કહા ગયા હૈ ।

જે તત્પર રહું તોજ મારાં સમ્યગ્દૃષ્ટિત્વની શોભા છે. અન્યથા હિતમાં પ્રવૃત્તિ  
અને અહિતમાં નિવૃત્તિનો અભાવ હોવાથી મારામાં વાસ્તવિક રીતે સમ્યગ્-  
દૃષ્ટિત્વનો અયોગ જ માનવામાં આવશે. કહ્યું પણ છે—

“તજ્ઞાનમેવ ન ભવતિ, યસ્મિન્નુદિતે વિભાતિ રાગગણઃ ।

તમઃ કુતોઽસ્તિ શક્તિ, -ર્દિનકર કિરણાગ્રતઃ સ્થાતુમ્ ” ॥૧॥

તે જ્ઞાનથી જીવને લાભ જ શો હોઈ શકે કે જે હોવા છતાં પણ તે  
આત્મામાં રાગાદિકોનો સદ્ભાવ ટકી રહે. સૂર્યના સદ્ભાવમાં અંધકારનો  
સદ્ભાવ કેવી રીતે હોઈ શકે ? ॥ ૧ ॥

અસંજ્ઞી-શ્રુતના ક્ષયોપશમથી-મિથ્યાશ્રુતના સદ્ભાવથી-જીવ અસંજ્ઞી મનાયો  
છે. તેનું તાત્પર્ય એ છે કે દૃષ્ટિવાદની અપેક્ષાએ સમ્યગ્દૃષ્ટિ જીવ સંજ્ઞી તથા  
મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ અસંજ્ઞી કહેવાયો છે.



ઉચ્ચતે—ઇહ સર્વત્ર સૂત્રે યત્ર ક્વચિત્ સંજી અસંજી વા પરિગૃહ્યતે, તત્ર સર્વ-  
ત્રાપિ પ્રાયઃ કાલિક્યુપદેશેન ગૃહ્યતે, ન હેતૂપદેશેન, નાપિ દૃષ્ટિવાદોપદેશેન । તસ્મા-

શંકા—સૂત્રકારકો સૂત્રમેં સર્વપ્રથમ હેતૂપદેશસે સંજી જીવકા કથન  
કરના चाहिये था, कारण कि इस कथनकी दृष्टि से अल्पमनोलब्धि  
संपन्न द्वीन्द्रियादिक जीव भी संजीरूप से सिद्ध हो जाते हैं । यह बात  
सूत्रकार ने भी मानी है । हेतूपदेशकी अपेक्षा जो जीव संजी स्वीकार  
किया गया है उसको अविशुद्धतर माना गया है, कारण कि वह मनः-  
पर्याप्तियुक्त नहीं होता है । इसकी अपेक्षा कालिकी उपदेश से जो जीव  
संजी कहा गया है वह विशुद्धतर माना गया है, कारण यह मनःपर्याप्ति  
युक्त बतलाया गया है, अतःसूत्रकार ने ऐसा क्रम न रखकर जो कालिकी  
उपदेश से संजी जीव का प्रथम कथन किया है वह उत्क्रम है । ऐसा  
क्यों किया ?

उत्तर—शंका ठीक है परन्तु यहां सूत्रमें जो सूत्रकार ने ऐसा कथन  
किया है, उसका अभिप्राय यह है कि संजी और असंजी का कथन जहां  
भी हुआ है वहां इसी कालिकी उपदेशकी अपेक्षा से हुआ है । हेतूपदेश  
तथा दृष्टिवाद के उपदेश से संजी तथा असंजी पनेका विचार नहीं हुआ है ।

शंका—सूत्रकार सूत्रમાં સૌથી પહેલાં હેતૂપદેશથી સંજી જીવનું કથન  
કરવું જોઈતું હતું, કારણ કે આ કથનની દૃષ્ટિએ અલ્પમનોલ્લભિયુક્ત દ્વીન્દ્ર-  
યાદિક જીવ પણ સંજી રૂપે સિદ્ધ થઈ જાય છે. આ વાત સૂત્રકારે પણ માન્ય  
કરી છે. હેતૂપદેશની અપેક્ષાએ જે જીવ સંજી તરીકે સ્વીકાર્યા છે તેમને  
અવિશુદ્ધતર માન્યા છે, કારણ કે તે મનઃપર્યાપ્તિયુક્ત હોતા નથી. તેના કરતાં  
કાલિકી ઉપદેશથી જે જીવ સંજી કહેવાયા છે તે વિશુદ્ધતર માન્ય છે, કારણ  
કે તે મનઃપર્યાપ્તિયુક્ત બતાવેલ છે, તેથી સૂત્રકારે આવો ક્રમ ન રાખતા જે  
કાલિકી ઉપદેશથી સંજી જીવનું પ્રથમ કથન કર્યું તે ઉત્ક્રમ છે. એવું  
કેમ કર્યું ?

उत्तर—शंका ठीक છે, પણ અહીં સૂત્રમાં સૂત્રકારે જે એવું કથન કર્યું  
છે, તેનો ભાવાર્થ એ છે કે સંજી અને અસંજીનો ઉદ્વેગ જ્યાં થયો હોય  
ત્યાં એજ કાલિકી ઉપદેશની અપેક્ષાએ થયેલ છે. હેતૂપદેશ તથા દૃષ્ટિવાદના  
સંજી તથા અસંજીપણાનો વિચાર કરાયો નથી.

દેતત્પ્રતિબોધનાર્થં પ્રથમં કાલિક્યુપદેશેન સંજ્ઞિનો ગ્રહણમ્ । તદનન્તરમપ્રધાનત્વાદ્દે-  
તૂપદેશેન સંજ્ઞિનો ગ્રહણં, તતઃ સર્વપ્રધાનત્વાદન્તે દૃષ્ટિવાદોપદેશેન સંજ્ઞિનો ગ્રહણમિતિ ।

તદેતત્ સંજ્ઞિશ્રુતં વર્ણિતમ્ । અસંજ્ઞિશ્રુતમપિ વર્ણિતમિત્યાશયેનાહ—‘ સે તં  
અસણિસુયં ’ ઇતિ । તદેતત્ અસંજ્ઞિશ્રુતં વર્ણિતમિત્યર્થઃ ॥ સૂ. ૩૯ ॥

સંપ્રતિ સૂત્રકારઃ સમ્યક્શ્રુતં વર્ણયતિ—

મૂલમ્—સે કિં તં સમ્મસુયં ? સમ્મસુયં જં ઇમં અરિહંતેહિ  
ભગવંતેહિં ઉપ્પણનાણદંસણધરેહિં તેલુક્કનિરિક્ખિયમહિયપૂઢ-  
ણહિં તીયપહુપ્પણમણાગયજાણણહિં સવ્વણૂહિં સવ્વદારિસાહિં  
પણીયં દુવાલસંગં ગણિપિડગં; તં જહા—આયારો ૧, સૂયગહે ૨,  
ઠાણં ૩, સમવાઓ ૪, વિવાહપણ્ણત્તી ૫, નાયાધમ્મકહાઓ ૬,  
ઉવાસગદસાઓ ૭, અંતગહદસાઓ ૮, અણુત્તરોવવાડ્યદસાઓ ૯,  
પણ્ણાવાગરણાઈ ૧૦, વિવાગસુયં ૧૧, દિઢ્ઠિવાઓ ૧૨, ઇચ્છેયં  
દુવાલસંગં ગણિપિડગં ચોદ્દસપુઠ્ઠિવિસ્સ સમ્મસુયં, અભિણ્ણદસપુ-  
ઠ્ઠિવિસ સમ્મસુયં, તેણ પરંભિણ્ણેસુ ભયણા । સે તં સમ્મસુયં ॥ સૂ. ૪૦ ॥

અર્થાત્—જહાં પર ભી જીવ કો સંજ્ઞી તથા અસંજ્ઞી માના ગયા હૈ વહ  
કાલિ કી ઉપદેશ સે હી માના ગયા જાનના ચાહિયે, હેતૂપદેશ તથા  
દૃષ્ટિવાદ કી અપેક્ષા સે નહીં । इसी बात को समझाने के लिये सूत्रकार  
ने सूत्रमें सर्वप्रथम कालिकी उपदेश की अपेक्षा संज्ञी जीव का कथन किया  
है । पश्चात् अप्रधान होने से हेतूपदेश की अपेक्षा से और सर्वप्रधान  
होने से अन्तमें दृष्टिवाद की अपेक्षा से संज्ञी जीव का कथन किया है ।  
इस प्रकार यहांतक संज्ञिश्रुत और उसके संबंध से असंज्ञिश्रुतका वर्णन  
हुआ ॥ सू. ३९ ॥

એટલે કે જે કોઈ જગ્યાએ જીવને સંજ્ઞી તથા અસંજ્ઞી માનવામાં આવ્યો  
છે, તે કાલિકી ઉપદેશથી જ માનવામાં આવ્યો છે તેમ સમજવું. હેતૂપદેશ તથા  
દૃષ્ટિવાદની અપેક્ષાએ નહીં. એજ વાતને સમજાવવાને માટે સૂત્રકારે સૂત્રમાં સૌથી  
પહેલાં કાલિકી ઉપદેશની અપેક્ષાએ સંજ્ઞી જીવનું વર્ણન કર્યું છે. ત્યાર બાદ અપ્ર-  
ધાન હોવાથી હેતૂપદેશની અપેક્ષાએ અને સર્વપ્રધાન હોવાથી અન્તે દૃષ્ટિવાદની  
અપેક્ષાએ સંજ્ઞી જીવનું કથન કર્યું છે. આ રીતે અહીં સુધી સંજ્ઞીશ્રુત અને તેના  
સંબંધથી અસંજ્ઞીશ્રુતનું વર્ણન થયું. ॥ સૂ. ૩૯ ॥

छाया—अथ किं तत् सम्यक्श्रुतम् ? सम्यक्श्रुतं—यदिदम् अर्हद्भिर्भगवद्भि-  
रुत्पन्नज्ञानदर्शनधरैस्त्रैलोक्यनिरीक्षितमहितपूजितैः, अतीतप्रत्युत्पन्नानागतज्ञायकैः  
सर्वज्ञैः सर्वदर्शिभिः प्रणीतं द्वादशाङ्गं गणिपिटकः, तद्यथा—आचारः १, सूत्रकृतम् २,  
स्थानम् ३, समवायः ४, विवाहप्रज्ञप्तिः ५, ज्ञाताधर्मकथाः ६, उपासकदशाः ७,  
अन्तकृदशाः ८, अनुत्तरोपपातिकदशाः ९, प्रश्नव्याकरणानि १०, विपाकश्रुतम् ११,  
दृष्टिवादः १२, इत्येष द्वादशाङ्गगणितकश्चतुर्दशपूर्विणः सम्यक्श्रुतम् । अभिन्नदश-  
पूर्विणः सम्यक्श्रुतम् । ततः परं भिन्नेषु भजना । तदेतत् सम्यक्श्रुतम् ॥ सू० ४० ॥

टीका—शिष्यः पृच्छति—‘से किं तं सम्मसुयं’ इति । अथ किं तत्  
सम्यक्श्रुतमिति । सम्यक्श्रुतस्य किं स्वरूपं ? मिति प्रश्नः । उत्तरमाह—‘सम्मसुयं०’  
इत्यादि । सम्यक्श्रुतं तदुच्यते, यदिदम् अर्हद्भिः=तीर्थकरैः, भगवद्भिः=भगः=  
समग्रैश्वर्यादिः, उक्तञ्च—

“एश्वर्यस्य समग्रस्य, रूपस्य यशसः श्रियः ।

धर्मस्याथ प्रयत्नस्य, षण्णां भग इतीज्जना” ॥ १ ॥ इति ।

भगो विद्यते येषां ते भगवन्तस्तैः=समग्रैश्वर्यसमग्ररूपादियुक्तैः, तथा उत्पन्न-  
ज्ञानदर्शनधरैः=उत्पन्ने ज्ञानदर्शने=केवलज्ञानकेवलदर्शने, उत्पन्नज्ञानदर्शने तयोर्धराः,  
उत्पन्नज्ञानदर्शनधरास्तैः, तथा त्रैलोक्यनिरीक्षितमहितपूजितैः—निरीक्षिताश्च महितश्च

अब सूत्रकार सम्यक्श्रुत का वर्णन करते हैं—‘से किं तं सम्म-  
सुयं ?’ इत्यादि—

शिष्य पूछता है—हे भदन्त ! पूर्ववर्णित सम्यक्श्रुत का क्या स्वरूप है ?

उत्तर—पूर्ववर्णित सम्यक्श्रुत वह है जो भगवान्—समग्रऐश्वर्य १,  
रूप २, यश ३, लक्ष्मी ज्ञानादिलक्ष्मी ४, धर्म ५, और प्रयत्न ६, इन छहों  
अर्थों से संपन्न तथा अनंतज्ञान अनंतदर्शन शाली, तथा त्रैलोक्यद्वारा-  
भवनपति, व्यन्तर, नर, विद्याधर, ज्योतिष्क एवं वैमानिक देवों द्वारा-  
निरीक्षित—अर्थात्—मनोरथों से परिपूर्ण होने के निश्चय से समुत्पन्न

इसे सूत्रकार सम्यक्श्रुतनुं वर्णन करे छे—से किं तं सम्मसुयं ? इत्यादि

शिष्य पूछे छे—हे भदन्त ! पूर्ववर्णित सम्यक्श्रुतनुं शुं स्वरूप छे ?

उत्तर—पूर्ववर्णित सम्यक्श्रुत ओ छे जे भगवान्—(१) समग्र ऐश्वर्य,  
(२) रूप (३) यश (४) लक्ष्मी (ज्ञानादि लक्षि) (५) धर्म अने (६) प्रयत्न  
ओ छे अर्थोथी युक्त तथा अनंत ज्ञान अनंत दर्शनशाली, तथा त्रैलोक्य द्वारा-  
भवनपति, व्यन्तर, नर, विद्याधर, ज्योतिष्क अने वैमानिक देवों द्वारा—निरीक्षित  
ओटवे छे मनोरथोना परिपूर्ण थवाना निश्चयथी प्राप्त आनंद—विकसित दोय-

पूजिताश्चेति समासः । त्रिलोक्येन निरीक्षितमहितपूजिताः-त्रैलोक्यनिरीक्षितमहित-  
पूजितास्तैरिति विग्रहः । त्रैलोक्यशब्देन भवनपति १-व्यन्तर-नर-विद्याधर-ज्यो-  
तिष्क २-वैमानिकानां ३ ग्रहणम् । तत्र निरीक्षिताः=मनोरथपरंपरासंपत्तिसंभव-  
विनिश्चयसमुत्थसंमदविकाशिलोचनैर्भक्तिनम्रैरालोकिताः, महिताः=अनन्यसाधा-  
रणगुणोत्कीर्तनेन प्रशंसिताः, पूजिताः=प्रशस्तभावेन कायेन नमस्कृताः वीतरा-  
गाणां पुष्पादिभिः सावद्यपूजाया निषिद्धत्वात् । तथा-अतीतप्रत्युत्पन्नानागत  
ज्ञायकैः-अतीतं=भूतकालिकं, प्रत्युत्पन्नं=वर्तमानकालिकम्, अनागतं-भविष्यत्का-  
लिकं तेषां ज्ञायकाः=ज्ञातारस्तैः, तथा सर्वज्ञैः-सर्वं=समस्तं द्रव्यप्रदेशपर्यायरूपं वस्तु  
जानन्तीति सर्वज्ञास्तैः, तथा सर्वदर्शिभिः=सर्वप्राणिगणमात्मवत् पश्यन्तीति सर्वदर्शि-  
नस्तैः, प्रणीतम्=अर्थकथनद्वारेण प्ररूपितम्, द्वादशाङ्गं=द्वादश अङ्गानि आचारादीनि  
यस्मिंस्तत् द्वादशाङ्गम् । गणिपिटकः=गणो गच्छः, गुणगणो वाऽस्यास्तीति गणी  
आचार्यस्तस्य पिटकः=मञ्जूषा, पिटक इव पिटकः-सर्वस्वमित्यर्थः । सर्वज्ञैः सर्व-  
दर्शिभिस्तीर्थकरैर्यद् गणिपिटकरूपं द्वादशाङ्गं प्रणीतं तत् सम्यक्श्रुतमिति निष्कर्षः ।

आनन्द-विकसित लोचनों के आलोकित, महित=अनन्य साधारण गुणो-  
त्कीर्तन पूर्वक प्रशंसित पूजित=वीतरागों की पुण्यादि सामग्री से की गयी  
सावद्यपूजा निषिद्ध होने के कारण प्रशस्त भाव युक्त शरीर से नमस्कृत,  
ऐसे अरिहंत प्रभु द्वारा अर्थकथन-पूर्वक प्ररूपित हुआ है । ये अर्हंत प्रभु  
अतीत-भूत, प्रत्युत्पन्न-वर्तमान, तथा अनागत-भविष्यत्काल संबंधी  
समस्त पदार्थों के ज्ञाता, तथा सर्वज्ञ-समस्त-द्रव्यों के तथा उनकी  
समस्त पर्यायों के वेत्ता, एवं सर्वदर्शी-त्रिलोक-वर्ती समस्त जीव  
राशि को अपने तुल्य देखनेवाले होते हैं । सर्वज्ञ एवं सर्वदर्शी तीर्थ-  
कर प्रभुने जिसका अर्थतः प्ररूपण किया है वह द्वादशाङ्गगणिपिटक है ।

मोक्षी आलोकित, महित=अनन्य साधारण गुणोत्कीर्तन पूर्वक प्रशंसित,  
पूजित=वीतरागों की पुण्यादि सामग्री से की गयी सावद्य पूजा निषिद्ध होवाने  
कारण प्रशस्त भावयुक्त शरीर से नमस्कृत, ऐसे अरिहंत प्रभु द्वारा अर्थ-  
कथन प्ररूपित થયું છે. તે અર્હંત પ્રભુ ભૂત, વર્તમાન તથા ભવિષ્યકાળ સંબંધી  
સઘળા પદાર્થોના જ્ઞાતા, તથા સર્વજ્ઞ-સમસ્ત દ્રવ્યોના પ્રદેશોના તથા તેમની  
પર્યાયોના જાણનારા, અને સર્વદર્શી-ત્રિલોકવર્તી સમસ્ત જીવરાશિને પોતાની  
જેમ દેખનારા હોય છે. સર્વજ્ઞ અને સર્વદર્શી તીર્થંકર પ્રભુએ જેનું અર્થપૂર્વક  
પ્રરૂપણ કર્યું છે તે દ્વાદશાંગગણિ પિટક છે. તેને ગણિપિટક તે કારણે કહ્યું છે

કાનિ તાનિ દ્વાદશાંગનીતિ જિજ્ઞાસાયામાહ—‘તં જહા૦’ ઇત્યાદિ । તદ્ યથા—તાનિ દ્વાદશાંગાનિ યથા સન્તિ તથા વર્ણયામીત્યર્થઃ । આચારઃ=આચારાંગમ્ ૧ । સૂત્રકૃતં=સૂત્રકૃતાંગમ્ ૨ । સ્થાનં=સ્થાનાંગમ્ ૩ । સમવાયઃ=સમવાયાંગમ્ ૪ । વિવાહપ્રજ્ઞપ્તિઃ=ભગવતીસૂત્રમ્ ૫ । જ્ઞાતાધર્મકથાઃ=જ્ઞાતાધર્મકથાઽંગમ્ ૬ । ઉપાસકદશાઃ=ઉપાસકદશાંગમ્ ૭ । અન્તકૃદશાઃ=અન્તકૃદશાંગમ્ ૮ । અનુત્તરોપપાતિકદશાઃ=અનુત્તરોપપાતિકદશાંગમ્ ૯ । પ્રશ્નવ્યાકરણાનિ=પ્રશ્નવ્યાકરણસૂત્રમ્ ૧૦ । વિપાકશ્રુતં=વિપાકશ્રુતસૂત્રમ્ ૧૧ । દૃષ્ટિવાદઃ ૧૨ । ઇત્યેતદ્ દ્વાદશાંગં ગણિપિટકરૂપં ચતુર્દશપૂર્વિણઃ સમ્યક્શ્રુતમ્ । યશ્ચતુર્દશપૂર્વી, તસ્ય સકલમપિ સામાયિકાદિ-વિન્દુસારપર્યન્તં શ્રુતં નિયમાત્ સમ્યક્શ્રુતમ્ । તતોઽધોમુખપરિહાન્યા નિયમતઃ સર્વં સમ્યક્શ્રુતં તાવદ્ વક્તવ્યં યાવદભિન્નદશપૂર્વિણઃ=સંપૂર્ણદશપૂર્વધરસ્યાપિ સમ્યક્શ્રુતમ્ । સંપૂર્ણદશપૂર્વધ-

ગણિપિટક ઇસે ઇસ લિયે કહા ગયા હૈ કિ યહ ગણી-આચાર્યકા પિટક મંજૂષાકે સમાન માના ગયા હૈ । વહ ઇસ પ્રકાર હૈ—૧ આચારાંગ, ૨ સૂત્રકૃતાંગ, ૩ સ્થાનાંગ, ૪ સમવાયાંગ, ૫ વિવાહપ્રજ્ઞપ્તિ-ભગવતીસૂત્ર, ૬ જ્ઞાતાધર્મકથાંગ, ૭ ઉપાસકદશાંગ, ૮ અન્તકૃતદશાંગ, ૯ અનુત્તરોપપાતિકદશાંગ, ૧૦ પ્રશ્નવ્યાકરણસૂત્ર, ૧૧ વિપાકશ્રુત, ૧૨ દૃષ્ટિવાદ । યહ ચતુર્દશપૂર્વધારીકા ગણિપિટકરૂપ દ્વાદશાંગ સમ્યક્શ્રુત હૈ । તાત્પર્ય યહ હૈ કિ ચૌદહ પૂર્વપાઠીકા જિતના મી સામાયિક આદિસે લે કર વિન્દુસાર પર્યન્ત શ્રુત હૈ, વહ સમસ્ત સમ્યક્શ્રુત હૈ । ઇસ પ્રકાર પશ્ચાન્તુ-પૂર્વીસે કમ સે કમ અભિન્નદશપૂર્વધારીકા-સમસ્ત દશપૂર્વપાઠીકાશ્રુત હૈ વહ મી સમ્યક્શ્રુત હૈ, કારણ યે સમ્પૂર્ણ દશપૂર્વ નિયમતઃ સમ્યગ્દૃષ્ટિ જીવકે હોતે હૈ—મિથ્યાદૃષ્ટિકે નહીં । તાત્પર્ય કહનેકા યહ હૈ કિ પૂરે દશ

કે તે ગણી-આચાર્યનું પિટક-પેટીના સમાન ગણાય છે. તે આ પ્રમાણે છે—

(૧) આચારાંગ, (૨) સૂત્રકૃતાંગ (૩) સ્થાનાંગ (૪) સમવાયાંગ (૫) વિવાહપ્રજ્ઞપ્તિ ભગવતી સૂત્ર, (૬) જ્ઞાતા ધર્મકથાંગ (૭) ઉપાસક દશાંગ (૮) અન્તકૃત દશાંગ (૯) અનુત્તરોપપાતિક દશાંગ (૧૦) પ્રશ્ન વ્યાકરણ સૂત્ર (૧૧) વિપાકશ્રુત સૂત્ર (૧૨) દૃષ્ટિવાદ. આ ચૌદ પૂર્વધારિકા ગણિપિટક રૂપ દ્વાદશાંગ સમ્યક્શ્રુત છે. તેનું તાત્પર્ય એ છે કે ચૌદ પૂર્વપાઠીના સામાયિક આદિથી લઈને વિન્દુસાર સુધી જેટલાં શ્રુત છે તે સમ્યક્શ્રુત છે. આ પ્રકારે પશ્ચાન્તુપૂર્વીથી આઠમાં આઠ અભિન્ન દશ પૂર્વધારીના-સમસ્ત દશ પૂર્વપાઠીનું શ્રુત છે તે પણ સમ્યક્શ્રુત છે, કારણ કે એ સંપૂર્ણ દશપૂર્વ નિયમથી સમ્યગ્દૃષ્ટિ જીવને હોય છે-મિથ્યાદૃષ્ટિને નહીં. તેનું તાત્પર્ય એ છે કે પૂરા દશ પૂર્વશ્રુતને જેણે

રત્વાદિકં हि नियमतः सम्यग्दृष्टेरेव, न तु मिथ्यादृष्टेः, तथा स्वाभाव्यात् । तथा हि—यथा अभव्यो ग्रन्थिदेशमुपागतोऽपि तथास्वभावत्वान्न ग्रन्थिभेदमाधातुं समर्थः, एवं मिथ्यादृष्टिरपि श्रुतमवगाहमानः प्रकर्षतोऽपि तावदवगाहते, यावत् किंचि-  
न्यूनानि दशपूर्वाणि भवन्ति, परिपूर्णानि तु तानि नावगाहितुं शक्नोति, तथा-  
स्वभावत्वादिति ।

તતઃ પરં=સંપૂર્ણદશપૂર્વધરત્વાત્ પશ્ચાન્નુપૂર્વ્યાઃ પરં મિન્નેપુ=ન્યૂનેપુ દશસુ  
પૂર્વેષુ, મજના=વિકલ્પના । કદાચિત્ સમ્યક્શ્રુતં, કદાચિત્ મિથ્યાશ્રુતમિત્યર્થઃ ।

પૂર્વશ્રુતકો જિસને પઢ લિયા હૈ એસા જીવ નિયમસે સમ્યગ્દૃષ્ટિ હી હોતા  
હૈ, મિથ્યાદૃષ્ટિ નહી, ક્યોં કિ મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ સમ્પૂર્ણ દશ પૂર્વોં કા  
અધ્યેતા નહીં હો સકતા હૈ, યહ નિયત હૈ । જિસ પ્રકાર અભવ્ય જીવ  
રાગદ્વેષરૂપી ગ્રન્થિદેશતક આકર મી ઉસે ભેદ નહીં સકતા,—કારણ  
ઉસકા સ્વભાવ હી કુછ એસાં હોતા હૈ કિ, જિસ કારણસે ઉસસે ઉસ  
ગ્રન્થિકા ભેદ કરના નહીં બન સકતા હૈ । રાગદ્વેષરૂપી હસ ગ્રન્થિકા  
ભેદ-વિનાશ તો જો સમ્યગ્દૃષ્ટિ જીવ હુઆ કરતે હૈં । હસી તરહ મિથ્યા-  
દૃષ્ટિ જીવ મી શ્રુતકા અધ્યયન કરતા હુઆ મી ઉસે યહાં તક પઢ લેતા  
હૈ કિ જિસસે વહ કુછ કમ દશપૂર્વકા પાઠી બન જાતા હૈ, પરન્તુ ફિર  
મી ઉસકા મિથ્યાત્વ નહીં જાતા, અતઃ ઉસ કારણસે વહ સમ્પૂર્ણ દશ-  
પૂર્વકા પાઠી નહીં બન સકતા હૈ । જો સમ્પૂર્ણ દશ પૂર્વકે પાઠી નહીં હોતે  
હૈં ઉનમેં સમ્યક્શ્રુતકી મજના હૈ અર્થાત્ ઉનમેં કમી સમ્યક્શ્રુત ઔર  
કમી મિથ્યાશ્રુત હોતા હૈ । હસકા તાત્પર્ય યહ હૈ કિ જિન સમ્યગ્દૃષ્ટિ

વાંચી લીધા છે એવો જીવ નિયમથી સમ્યગ્દૃષ્ટિ જ હોય છે, મિથ્યાદૃષ્ટિ નહીં.  
કારણ કે મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ સંપૂર્ણ દશપૂર્વનો અભ્યાસી થઈ શકતો નથી, એ  
નિયત છે. જે પ્રકારે અભવ્યજીવ રાગદ્વેષરૂપી ગ્રન્થિદેશ સુધી આવીને પણ તેને  
લેહી શકતો નથી, કારણ કે તેનો સ્વભાવજ કંઈક એવો હોય છે કે જે કારણે  
તેનાથી તે ગ્રન્થિને લેહવાનું બની શકતું નથી. રાગદ્વેષરૂપી આ ગ્રન્થિનો નાશ  
તો જે જીવ સમ્યગ્દૃષ્ટિ હોય છે તેઓજ કરે છે. આ રીતે મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ  
પણ શ્રુતનું અધ્યયન કરવા છતાં પણ તેનો ત્યાં સુધી અભ્યાસ કરી લે છે કે  
જેથી તે દશપૂર્વના પાઠી કરતાં કંઈક ન્યૂન થઈ શકે છે, પણ તે છતાં તેનું  
મિથ્યાત્વ જતું નથી, તેથી તે કારણે તે સંપૂર્ણ દશપૂર્વનો પાઠી બની શકતો  
નથી. જે સંપૂર્ણ દશપૂર્વના પાઠી હોતા નથી, તેમનામાં સમ્યક્શ્રુતની લજના  
છે. એટલે કે તેમનામાં ક્યારેક સમ્યક્શ્રુત અને ક્યારેક મિથ્યાશ્રુત હોય છે.



અર્થ ભાવઃ—સમ્યક્દષ્ટેઃ પ્રશમાદિગુણગણોપેતસ્ય સમ્યક્શ્રુતં ભવતિ, યથાવસ્થિતાર્થ-  
તયા તસ્ય સમ્યક્ પરિણમનાત્ । મિથ્યાદષ્ટેસ્તુ મિથ્યાશ્રુતં ભવતિ, વિપરીતાર્થતયા  
તસ્ય પરિણમનાત્ । તદેતત્ સમ્યક્શ્રુતમ્ ।

અથ ‘ભગવંતેહિં૦’ ઇત્યાદિ વિશેષણાનાં સાર્થક્યમુચ્યતે—અર્હદ્ધિરિત્યુક્ત્યૈવ  
ભગવદ્રૂપાર્થસ્ય વોધઃ સંભવતિ, પુનઃ ‘ભગવદ્ધિ’રિતિ વિશેષણોપાદાનં કિમર્થમિતિ  
જીવોં મેં પ્રશમ આદિ ગુણ મૌજૂદ હોં વે યદ્યપિ સમ્પૂર્ણ દશપૂર્વકે પાઠી  
ન મી હોં તો મી ઉનકા જિતના મી શ્રુત હૈ વહ સમ્યક્ શ્રુત હૈ તથા જિન  
જીવોં મેં મિથ્યાત્વ ભરા હુઆ હૈ એસે જો મિથ્યાદષ્ટિ જીવ હૈ ઉનકા  
જિતના મી શ્રુત હૈ વહ સબ મિથ્યાશ્રુત હૈ । સમ્યક્દષ્ટિ જીવ કે શ્રુત  
કો સમ્યક્ શ્રુત કહને કા કારણ યહ હૈ કિ વહ પદાર્થ કે સ્વરૂપ કો  
યથાર્થરૂપ સે જાનતા હૈ । તથા મિથ્યાદષ્ટિ જીવ પદાર્થ કે સ્વરૂપ કો  
મિથ્યાત્વ કે પ્રભાવ સે યથાર્થરૂપ સે નહીં જાનતા, અતઃ કિશ્ચિત્ ન્યૂન  
દશપૂર્વ કે પાઠી દો જીવોં મેં એક કા શ્રુત સમ્યક્શ્રુત, તથા દૂસરે કા  
શ્રુત મિથ્યાશ્રુત કહા ગયા હૈ । હસીલિયે કિશ્ચિત્ ન્યૂન દશપૂર્વપાઠી  
જીવોં મેં સમ્યક્શ્રુત કી ભજના બતલાઈ ગઈ હૈ । હસ તરહ યહાં તક  
સમ્યક્શ્રુત કા વર્ણન હુઆ ॥

અવ ટીકાકાર સૂત્ર મેં રહે હુએ “ભગવંતેહિં૦” આદિ વિશેષણપદોં  
કી સાર્થકતા પ્રકટ કરતે હૈ—

તેનું તાત્પર્ય એ છે કે જે સમ્યક્દષ્ટિ જીવોમાં પ્રશમ આદિ ગુણ મૌજૂદ  
હોય તેઓ કદાચ સંપૂર્ણ દશપૂર્વના પાઠી ન હોય તો પણ તેમનું જેટલું  
પણ શ્રુત છે તે બધું સમ્યક્શ્રુત છે. તથા જે જીવોમાં મિથ્યાત્વ ભરેલ છે  
એવા જે મિથ્યાદષ્ટિ જીવ છે તેમનું જેટલું પણ શ્રુત છે તે બધું મિથ્યાશ્રુત છે.  
સમ્યક્દષ્ટિ જીવના શ્રુતને સમ્યક્શ્રુત કહેવાનું કારણ એ છે કે તે પદાર્થનાં  
સ્વરૂપને યથાર્થ રૂપે જાણે છે. તથા મિથ્યાદષ્ટિ જીવ પદાર્થનાં સ્વરૂપને  
મિથ્યાત્વના પ્રભાવે યથાર્થરૂપે જાણતો નથી, તેથી દશપૂર્વ કરતાં થોડા ન્યૂનનાં  
પાઠી એ જીવોમાં એકનું શ્રુત સમ્યક્શ્રુત, તથા બીજાનું શ્રુત મિથ્યાશ્રુત કહ્યું  
છે. તેથી દશપૂર્વ કરતાં કંઈક ન્યૂનના પાઠી જીવોમાં સમ્યક્શ્રુતની ભજના  
દર્શાવવામાં આવી છે. આ રીતે અહીં સુધી સમ્યક્શ્રુતનું વર્ણન થયું. હવે  
સૂત્રકાર સૂત્રમાં આવેલ “ભગવંતેહિં” આદિ વિશેષણપદોની સાર્થકતા  
પ્રગટ કરે છે—

ચેત્, ઉચ્યતે—શુદ્ધદ્રવ્યાસ્તિકનયમતાનુસારિભિઃ કૈશ્વિદનાદિસિદ્ધા મુક્તા અર્હ-  
ત્ત્વેન સ્વીક્રિયન્તે । ઉક્તશ્ચ તૈઃ—

“જ્ઞાનમપ્રતિઘં યસ્ય, વૈરાગ્યં ચ જગત્પતેઃ ।

ऐश्वर्यं चैव धर्मश्च, सहसिद्धं चतुष्टयम्” ॥ ૧ ॥

इत्यादि । तेषामिह ग्रहणं नास्तीति बोधयितुं भगवद्भिरिति विशेषणम् ।

શંકા—સૂત્ર મેં જવ “અર્હદ્ભિઃ” એસા પદ સૂત્રકાર ને રચ્યા હૈ તવ  
इस एक पद से ही भगवद्रूप अर्थ का बोध हो जाता है तो फिर  
“भगवद्भिः” इस विशेषण का स्वतन्त्ररूप से सूत्र में ग्रहण क्यों  
किया गया है ? ।

उत्तर—कितनेक ऐसे भी प्राणी हैं जो शुद्धद्रव्यास्तिकनय की  
मान्यता को लेकर ऐसा कहते हैं कि मुक्त जीव अनादि काल से सिद्ध  
हैं और वे अर्हत पद वाच्य माने गये हैं । जैसे—

“જ્ઞાનમપ્રતિઘં યસ્ય, વૈરાગ્યં ચ જગત્પતેઃ ।

ऐश्वर्यं चैव धर्मश्च, सह सिद्धं चतुष्टयम्” ॥ ૧ ॥

અપ્રતિઘ-અનંત-જ્ઞાન, વૈરાગ્ય, ઐશ્વર્ય એવં ધર્મ યે ચાર વાતે જગ-  
ત્પતિ પ્રભુ મેં સ્વાભાવિકરૂપ સે સિદ્ધ હૈં સો એસે અનાદિસિદ્ધ પરમાત્મા  
का यहां “भगवन्तेहि” पद से ग्रहण नहीं हुआ है, इस बात को प्रकट  
करने के लिये सूत्रकार ने सूत्र में “भगवन्तेहि” यह पद रखा है ।

શંકા—સૂત્રમાં જો “અર્હદ્ભિઃ” એવું પદ સૂત્રકારે મૂક્યું છે, તો એ એક  
પદથી જ ભગવદ્રૂપ અર્થનો બોધ થઈ જાય છે. તો પછી “ભગવદ્ભિઃ” આ  
વિશેષણને સ્વતંત્રરૂપે સૂત્રમાં કેમ ગ્રહણ કર્યું છે ?

ઉત્તર—કેટલાક એવાં પ્રાણીઓ છે જે શુદ્ધ દ્રવ્યાસ્તિક નયની માન્યતાને  
લીધે એવું કહે છે કે મુક્તજીવ આનાદિ કાળથી સિદ્ધ છે અને તેમને અર્હત  
પદવાચ્ય માન્ય છે. જેમ કે—

“જ્ઞાનમપ્રતિઘં, યસ્ય, વૈરાગ્યં ચ જગત્પતેઃ ॥

ऐश्वर्यं चैव, धर्मश्च सह सिद्धं चतुष्टयम्” ॥ ૧ ॥

અપ્રતિઘ-અનંત-જ્ઞાન, વૈરાગ્ય, ઐશ્વર્ય અને ધર્મ એ ચાર વાત જગ-  
ત્પતિ પ્રભુમાં સ્વાભાવિક રીતે સિદ્ધ છે, તો એવા અનાદિ સિદ્ધ પરમાત્માનું  
અહીં “ભગવન્તેહિ” પદથી ગ્રહણ થયું નથી, એ વાતને પ્રગટ કરવા માટે  
સૂત્રકારે સૂત્રમાં “ભગવન્તેહિ” એ પદ મૂક્યું છે. “ભગવન્ત” પદથી એવા પર-

અનાદિસિદ્ધા અર્હન્તો હિ રૂપાભાવાદેવ સમગ્રરૂપવન્તો ન ભવન્તિ, અશરીરિત્વાત્, શરીરસ્ય ચ રાગાદિકાર્યત્વાત્, તેષાં ચ રાગાદ્યભાવાદિતિ તેષાં ભગવત્ત્વં નોપપદ્યતે ।

નનુ પરસમ્મતા અપિ સિદ્ધાઃ સ્વેચ્છયા શરીરં નિર્માતું શક્નુવન્તીતિ તેઽપિ ભગવન્તઃસ્યુરતો વિશેષણાન્તરમાહ—‘ઉપ્પણનાણદંસણધરેહિ’—ઉત્પન્નજ્ઞાન-દર્શનધરૈ રિતિ । તેઽનાદિસિદ્ધા જ્ઞાનવૈરાગ્યાદિચતુષ્ટયસ્ય નિત્યસિદ્ધત્વાદ્ ઉત્પન્નજ્ઞાનદર્શનધરા ન ભવન્તીતિ નેહ તેષાં ગ્રહણમ્ ।

“ભગવંત” પદ સે એસે પરમાત્મા કા પાર્થક્ય ઇસલિયે હો જાતા હૈ કિ અનાદિસિદ્ધ અર્હંત મેં શરીર કે અભાવ સે સમગ્રરૂપશાલિતા નહીં આતી હૈ, કારણ જો અનાદિસિદ્ધ અર્હંત હોંગે ઉનમેં રાગાદિક કા કાર્યરૂપ શરીર કા સદ્ભાવ કૈસે બન સકતા હૈ । યદિ શરીર ઉનમેં માના જાય તો ઉનમેં રાગાદિક કા અભાવ એવં અનાદિસિદ્ધતા નહીં માની જા સકતી, પરન્તુ એસી માન્યતા તો હૈ નહીં, વહાં તો રાગાદિક કા અભાવ માના હી ગયા હૈ, અતઃ યહ નિશ્ચય હૈ કિ અનાદિસિદ્ધ અર્હંત, ભગવન્ત નહીં બન સકતે હૈ, કિન્તુ જો સાદિ સિદ્ધ અર્હંત હોંગે વે હી ભગવંત બન સકેંગે, ઇસ વાત કો પ્રકટ કરને કે લિયે સૂત્રકાર ને સૂત્ર મેં “ભગવંતેહિ” યહ પદ સ્વતંત્રરૂપ સે નિવેશિત કિયા । ૧ ।

શંકા—જો અનાદિસિદ્ધ અર્હંત પરમાત્મા દૂસરોં ને માને હૈં વે ભગવંત મી બન સકતે હૈં, કારણ ઉનમેં જવ શરીર નિર્માણ કરને કી ઇચ્છા હોતી હૈં તવ વે શરીર કા મી નિર્માણ કર લિયા કરતે હૈં, ફિર ઉનમેં ભગ-

માત્માનું પાર્થક્ય એ કારણે થઈ જાય છે કે અનાદિ સિદ્ધ અર્હંતમાં શરીરને અભાવે સમગ્ર રૂપશાલીતા આવતી નથી, કારણ કે જે અનાદિ સિદ્ધ અર્હંત હશે તેમનામાં રાગાદિકનાં કાર્યરૂપ શરીર કેવી રીતે હોઈ શકે! જે તેઓને શરીર હોય છે એમ માનવામાં આવે તો તેઓમાં રાગાદિકનો અભાવ અને અનાદિ સિદ્ધતા માની શકાય નહીં, પણ એવી માન્યતા તો નથી, ત્યાં તો રાગાદિકનો અભાવ માનવામાં આવ્યો જ છે, તેથી તે નક્કી થાય છે કે અનાદિ સિદ્ધ અર્હંત ભગવન્ત બની શકતા નથી, પણ જે સાદિ સિદ્ધ અર્હંત હશે તેઓ જ ભગવંત બની શકશે, એ વાતને પ્રગટ કરવાને માટે સૂત્રકારે સૂત્રમાં “ભગવંતેહિ” આ પદ સ્વતંત્ર રીતે મૂક્યું છે ॥૧॥

શંકા—જે અનાદિસિદ્ધ અર્હંત પરમાત્મા બીજા લોકોએ માન્યા છે તેઓ ભગવંત પણ બની શકે છે, કારણ કે તેમને જ્યારે શરીર નિર્માણ કરવાની ઇચ્છા થાય છે; ત્યારે તેઓ શરીરનું નિર્માણ કરી લે છે, છતાં આપ તેમનામાં ભગવ-

નનુ તર્હિ 'ઉત્પન્નજ્ઞાનદર્શનધરૈઃ' ઇત્યેતાવન્માત્રં વિશેષણમસ્તુ અલં 'ભગવદ્ભિઃ'

વસ્તા કા અભાવ આપ કૈસે કહ સકતે હૈં । ઇસ પ્રકાર કી દૂસરી શંકા કી નિવૃત્તિ કે લિયે સૂત્રકારને સૂત્ર મેં “ઉત્પન્નનાણ દંસણધરે હિં” યહ પદ રખા હૈ । ઇસ પદ દ્વારા સૂત્રકાર યહ પ્રમાણિત કરતે હૈં કિ જો અનાદિસિદ્ધ માને ગયે હૈં વે ઉત્પન્ન હુએ જ્ઞાન એવં દર્શન કો ધારણ કરને વાલે નહીં હોતે હૈં, કિન્તુ વે તો નિત્યસિદ્ધ જ્ઞાન વૈરાગ્ય આદિ કે અધિપતિ હોતે હૈં, અતઃ યહાં એસે હી અર્હંતપ્રભુ કા ગ્રહણ કિયા ગયા હૈ, જો ભગવંત હોં તથા ઉત્પન્ન હુએ જ્ઞાન દર્શન કો ધારણ કરનેવાલ હોં । તાત્પર્ય ઇસકા ઇસ પ્રકાર હૈ કિ પર સંમત અનાદિસિદ્ધ પરમાત્મા ભલે હી અપને શરીર કા સ્વેચ્છા સે નિર્માણ કરલેં એતાવતા ઉનમેં ભગવત્તા ભલે હી આજાવે પરન્તુ ઇતને માત્ર સે ઉનમેં અર્હંતતા નહીં આસકતી હૈ, કિન્તુ અર્હંતતા આનેકે લિયે સૂત્રકાર કી દૃષ્ટિ મેં ઉત્પન્ન હુએ જ્ઞાન ઓર દર્શન કો ધારણ કરનાપના ભી આવશ્યકીય હૈ । અનાદિસિદ્ધોં મેં યહ વાત બનતી નહીં હૈ, અતઃ ઉનમેં અર્હંતતા ઘટિત નહીં હોતી । ૨ ।

શંકા—જબ એસી વાત હૈ તો ફિર “અર્હંતતા” પ્રકટ કરને કે લિયે “ઉત્પન્ન જ્ઞાનદર્શનધરૈઃ” યહી એક પદ કાફી હૈ । વ્યર્થ મેં “ભગવદ્ભિઃ” ઇસ પદ કા ન્યાસ ક્યોં કિયા ગયા હૈ ?

તાનેા અભાવ કેવી રીતે કહી શકે છે? આ પ્રકારની બીજી શંકાની નિવૃત્તિને માટે સૂત્રકારે સૂત્રમાં “ઉત્પન્નનાણદંસણધરે હિં” આ પદ મૂક્યું છે. આ પદ દ્વારા સૂત્રકાર એ સાબિત કરે છે કે જે અનાદિ સિદ્ધ માનાય છે. તેઓ ઉત્પન્ન થયેલ જ્ઞાન અને દર્શનને ધારણ કરનાર હોતા નથી, પણ તેઓ તો નિત્યસિદ્ધ જ્ઞાન વૈરાગ્ય આદિના અધિપતિ હોય છે, તેથી અહીં એવા જ અર્હંત પ્રભુ ગ્રહણ કરવામાં આવ્યા છે કે જે ભગવંત હોય અને ઉત્પન્ન થયેલ જ્ઞાનદર્શનને ધારણ કરનાર હોય તેનું તાત્પર્ય એવું છે કે પર સંમત અનાદિ સિદ્ધ પરમાત્મા ભલે પોતાનાં શરીરનું સ્વેચ્છાથી નિર્માણ કરી લે, એટલા પ્રમાણમાં તેમનામાં ભલે ભગવત્તા આવી જાય પણ માત્ર એટલાથી જ તેમનામાં અર્હંતતા આવી શકતી નથી, પણ અર્હંતતા આવવાને માટે સૂત્રકારની દૃષ્ટિએ ઉત્પન્ન થયેલ જ્ઞાન અને દર્શનને ધારણ કરવું તે પણ આવશ્યક છે. અનાદિ સિદ્ધોમાં આ વાત બનતી નથી, એટલા માટે એમનામાં અર્હંતતા ઘટતી નથી ॥૨॥

શંકા—જો એવી વાત છે તો પછી “અર્હંતતા” પ્રગટ કરવાને માટે “ઉત્પન્ન જ્ઞાન દર્શનધરૈઃ” એજ એક પદ પુરતું છે. “ભગવદ્ભિઃ” એ પદનો ઉપયોગ શા માટે કર્યો છે ?

इति विशेषणोपन्यासेन ? इति चेत्, उच्यते—सामान्यकेवलिनोऽपि हि—उत्पन्नज्ञान-दर्शनधरा भवन्ति किन्तु तेषां समग्रैश्वर्यरूपाद्यभावात्ते तीर्थकरवद् भगवन्तो न भवन्ति, तस्मात् समग्रैश्वर्यादिगुणप्रतिबोधनार्थं ‘भगवद्भिः’ इति विशेषणोपादानमावश्यकमिति ।

उक्तविशेषणैः शुद्धद्रव्यास्तिकनयमतानुसारिपरिकल्पितानामनादिसिद्धानां व्यवच्छेदः कृतः । संप्रति पर्यायास्तिकनयमतानुसारिपरिकल्पिताः ये मुक्तास्ते-ऽप्युत्पन्नज्ञानदर्शनधरा भवन्तीत्यतस्तद्व्यावृत्त्यर्थमाह—‘तेल्लुकनिरिक्खियमहिय-

उत्तर—अर्हंतता आने के लिये उत्पन्न हुए ज्ञान और दर्शन को धारण करना मात्र कारण नहीं माना गया है, किन्तु साथ में भगवत्ता भी कारण है । यही बात प्रकट करने के लिये सूत्रकार ने सूत्र में दोनों पद स्थापित किये हैं । उत्पन्नज्ञानदर्शनधरत्व सामान्यकेवलियों में भी होता है, परन्तु वहां समग्ररूपादिमत्ता नहीं होती, इसलिये वे तीर्थकर प्रभु की तरह भगवान् नहीं होते हैं, अतः अर्हंत बनने में समग्र ऐश्वर्यादिगुण चाहिये यह बात “भगवद्भिः” इस पद से सूत्रकार ने स्थापित की है । ३ ।

इस तरह इन विशेषणों द्वारा शुद्ध द्रव्यार्थिकनय की मान्यता को लेकर जो अनादिसिद्ध मुक्त मानने वाले हैं, उनका व्यवच्छेद हो जाता है । अब पर्यायार्थिक नयकी मान्यता को लेकर के जिन व्यक्तियों ने साद्वि सिद्ध मुक्त माने हैं वे यद्यपि उत्पन्न दर्शन ज्ञानधारी होते हैं परन्तु उनमें अर्हंतता नहीं आती है, कारण अर्हंतता आनेमें “तेल्लुकक निरिक्खियमहिय पुइएहि” कारण माना गया है । तात्पर्य इसका इस प्रकार—जो

ઉત્તર—અર્હંતતા આવવાને માટે ફક્ત ઉત્પન્નજ્ઞાન, અને દર્શનને ધારણ કરવું એજ કારણ મનાયું નથી, પણ સાથે ભગવત્તા પણ કારણ છે. એજ વાત પ્રગટ કરવાને માટે સૂત્રકારે સૂત્રમાં બંને પદ મૂક્યાં છે. ઉત્પન્ન જ્ઞાન દર્શન ધારકતા સામાન્ય કેવળીઓમાં પણ હોય છે. પણ ત્યાં સમગ્ર રૂપાદિમત્તા હોતી નથી તેથી તેઓ તીર્થંકર પ્રભુની જેમ ભગવાન થતા નથી, તેથી અર્હંત બનવામાં સમગ્ર ઐશ્વર્યાદિ ગુણ બેઠે એ એ વાત “ભગવદ્ભિઃ” આ પદથી સૂત્રકારે સ્થાપિત કરી છે. (૩).

આ રીતે એ વિશેષણો દ્વારા શુદ્ધ દ્રવ્યાર્થિક નયની માન્યતાને લીધે જે અનાદિ સિદ્ધ મુક્ત માનનારા છે, તેમનું ખંડન થઈ જાય છે. હવે પર્યાયાર્થિક નયની માન્યતાને લીધે જે વ્યક્તિઓએ સાદ્વિ સિદ્ધ મુક્ત માન્યા છે તેઓ જો કે ઉત્પન્ન દર્શન જ્ઞાનધારી હોય છે પણ તેમનામાં અર્હંતતા આવતી નથી, કારણ કે અર્હંતતા આવવામાં “તેલુક નિરિક્કિય મહિયપુઇએહિ” કારણ મનાયું

પૂજાદિ 'ઈતિ' । ત્રૈલોક્યનિરીક્ષિતમહિતપૂજિતૈરિતિ । ન ચ તે તથા ભવન્તીતિ ।

નનુ સૌગતમતેઽપિ પર્યાયાસ્તિકનયમતાનુસારિભિઃ સુગતાત્ત્રૈલોક્યનિરીક્ષિત-મહિતપૂજિતા એવ સ્વીક્રિયન્તે, તતશ્ચ તતુલ્યતાપત્તિઃ સ્યાદત આહ—'ત્રીયપદુષ્પણ-મણાગયજાણદિ' 'ઈતિ' । અતીતપ્રત્યુત્પન્નાનાગતજ્ઞાયકૈરિતિ । સુગતાઃ સ્વલુઅતીત-પ્રત્યુત્પન્ના નાગતજ્ઞા ન સંભવન્તિ, તેષામેકાન્તક્ષણિકત્વાભ્યુપગમેન સર્વથાઽતીતાના-ગતયોરસત્ત્વાત્, અસતાં ચ ગ્રહણાઽસમ્ભવાત્ । નનુ વ્યવહારનયમતાનુસારિભિસ્તુ

જીવ સાદિસિદ્ધ હોતે હૈં ડનમેં અનંતજ્ઞાન ઓર અનન્તદર્શન ઉત્પન્ન હો જાતા હૈં પરન્તુ ંસે સવ જીવ અર્હત નહીં હોતે હૈં । અર્હત પ્રભુ હી ત્રૈલોક્ય દ્વારા નિરીક્ષિત, મહિત ંવં પૂજિત હુઆ કરતે હૈં, કારણ ંનકે તીર્થકર પ્રકૃતિ કા ઉદય રહતા હૈં, અન્ય કે નહીં । ૪ ।

શંકા—યદિ અર્હત બનનેમેં ત્રૈલોક્ય નિરીક્ષિત, મહિત ંવં પૂજિ-તપના કારણ હો તો બૌદ્ધસિદ્ધાન્ત દ્વારા કિ જો પર્યાયાસ્તિક નય મતાનુ-સારી હૈં કલ્પિત બુદ્ધ ંહી અર્હત માને જાવેંગે કારણ વે ંહીં ત્રૈલોક્ય દ્વારા નિરીક્ષિત, મહિત ંવં પૂજિત માને ગયે હૈં, ંસ તરહ ઉભયત્રતુલ્યતા કી આપત્તિ આતી હૈં ।

ઉત્તર—ંસ તરહ તુલ્યતા કી આપત્તિ નહીં આસકતી હૈં, કારણ અર્હત બનનેમેં જિસ તરહ ત્રૈલોક્ય નિરીક્ષિત મહિત પૂજિતતા કારણ હૈં ંસી પ્રકાર "ત્રીય પદુષ્પણ મણાગય જાણદિ" અતીત પ્રત્યુત્પન્ન ંવં અના-ગત વિષયોંકા જ્ઞાપકપના ંહી કારણ હૈં । બુદ્ધ ંલે હી ંનકેમાનને વાલોં દ્વારા

છે. તેનું તાત્પર્ય આ પ્રમાણે છે—જે જીવ સાદિસિદ્ધ હોય છે, તેમનામાં અનંત જ્ઞાન અને અનંત દર્શન ઉત્પન્ન થઈ જાય છે, પણ એવા બધા જીવ અર્હત થતા નથી. અર્હત પ્રભુ જ ત્રૈલોક્ય દ્વારા નિરીક્ષિત, મહિત અને પૂજિત થાય છે, કારણ કે તેમની તીર્થકર પ્રકૃતિનો ઉદય રહે છે. અન્યનો નહીં. (૪).

શંકા—જે અર્હત બનવામાં ત્રૈલોક્ય નિરીક્ષિત, મહિત અને પૂજિતપણું કારણ હોય તો બૌદ્ધ સિદ્ધાન્ત દ્વારા કે જે પર્યાયાસ્તિક નય મતાનુસારી છે, કલ્પિત બુદ્ધ પણ અર્હત મનાશે કારણ કે તેઓ પણ ત્રલોક્ય દ્વારા નિરીક્ષિત, મહિત અને પૂજિત મનાયા છે, આ રીતે ઉભયત્ર તુલ્યતાની મુશ્કેલી આવે છે.

ઉત્તર—આ રીતે તુલ્યતાની મુશ્કેલી આવી શકતી નથી, કારણ કે અર્હત બનવામાં જે રીતે ત્રૈલોક્ય નિરીક્ષિત, મહિત પૂજિતતા કારણરૂપ છે એજ પ્રકારે "ત્રીય પદુષ્પણ મણાગય જાણદિ" ભૂત, વર્તમાન અને ભવિષ્યના વિષયોની જાણકારી પણ કારણરૂપ છે. બુદ્ધને ભલે તેમને માનનારાઓએ ત્રલોક્ય નિરી-



કૈશ્વિદિવ્યન્તેસ્તીતાનાગતવર્તમાનાર્થજ્ઞાયકા ઋષયઃ । ઉક્તશ્ચ—

“ઋષયઃ સંયતાત્માનઃ ફલમૂલાનિલાશનાઃ ।

તપસૈવ પ્રપશ્યન્તિ, ત્રૈલોક્યં સચરાચરમ્ ॥ ૧ ॥

અતીતાનાગતાન્ ભવાન્, વર્તમાનાંશ્ચ ભારત ! ।

જ્ઞાનાલોકેન પશ્યન્તિ, ત્યક્તસંગા જિતેન્દ્રિયાઃ ” ॥ ૨ ॥ ઇત્યાદિ ।

ત્રૈલોક્ય નિરીક્ષિત મહિત એવં પૂજિત સ્વીકૃત કિયે ગયે હોં, પરન્તુ ઉનમેં અતીત, પ્રત્યુત્પન્ન એવં અનાગત વિષયોં કી જ્ઞાપકતા નહીં હૈ, કારણ ઉનકે સિદ્ધાન્તાનુસાર અતીત ઔર અનાગતતા સિદ્ધ હી નહીં હોતી । યહ સિદ્ધાન્ત એકાન્તતઃ ક્ષણિક વાદી હૈ, અતઃ ઇસમેં એકાન્ત વર્તમાન ક્ષણ કા હી અસ્તિત્વ સ્વીકાર કિયા ગયા હૈ । ઇસ તરહ અતીત ઔર અનાગત ક્ષણોં કા અસત્ત્વ હોને સે ઉનકા ગ્રહણ ઉનકે દ્વારા નહીં હો સકતા હૈ । ઇસ પ્રકાર તુલ્યતા કી આપત્તિ હટ જાતી હૈ । ૫ ।

શંકા—વ્યવહારનય કી માન્યતા કો માનનેવાલે કિતનેક વ્યક્તિ ઇસ વાત કો સ્વીકાર કરતે હૈં કિ ઋષિજન અતીત, અનાગત એવં પ્રત્યુત્પન્ન વિષયોં કે જ્ઞાતા હોતે હૈં । કહા ઓ હૈ—

“ઋષયઃ સંયતાત્માનઃ, ફલ મૂલા નિલાશનાઃ ।

તપસૈવ પ્રપશ્યન્તિ, ત્રૈલોક્યં સચરાચરમ્ ॥ ૧ ॥

અતીતાનાગતાન્ ભવા, વર્તમાનાંશ્ચ ભારત ! ।

જ્ઞાનાલોકેન પશ્યન્તિ, ત્યક્તસંગા જિતેન્દ્રિયાઃ ” ॥ ૨ ॥

ક્ષિત મહિત અને પૂજિત તરીકે સ્વીકાર્યા હોય, પણ તેમનામાં ભૂત, વર્તમાન અને ભવિષ્યના વિષયોની બાબુકારી નથી. કારણ કે તેમના સિદ્ધાંત પ્રમાણે ભૂત અને ભવિષ્યતા સિદ્ધજ નથી થતી. એ સિદ્ધાંત એકાન્તતઃ ક્ષણિકવાદી છે, તેથી તેમાં એકાન્ત વર્તમાન ક્ષણનું જ અસ્તિત્વ સ્વીકાર્યું છે. આ રીતે અતીત (ભૂત) અને અનાગત (ભવિષ્ય) ક્ષણોનું અસત્ત્વ હોવાથી તેમનું ગ્રહણ તેમના દ્વારા થઈ શકતું નથી. આ રીતે તુલ્યતાની મુશ્કેલી દૂર થાય છે. (૫).

શંકા—વ્યવહાર નયની માન્યતાને માનનારી કેટલીક વ્યક્તિ એ વાતનો સ્વીકાર કરે છે કે ઋષિજન ભૂત, ભવિષ્ય અને વર્તમાન વિષયોના બાબુકાર હોય છે. કહું પણ છે—

“ઋષયઃ સંયતાત્માનઃ ફલમૂલા નિલાશનાઃ ।

તપસૈવ પ્રપશ્યન્તિ, ત્રૈલોક્યં સચરાચરમ્ ॥ ૧ ॥

“અતીતા નાગતાન્ ભવાન્, વર્તમાનાંશ્ચ ભારત ?

જ્ઞાનાલોકેન પશ્યન્તિ, ત્યક્તસંગા જિતેન્દ્રિયાઃ ” ॥ ૨ ॥

अतस्तत्तुल्यतापत्तिः स्यादत आह—‘सर्ववर्णूहिं सर्वदरिसीहिं’—सर्वज्ञैः सर्वदर्शिभिरिति । ते तु ऋषयो न भवन्ति सर्वज्ञाः—सर्वद्रव्यप्रदेशपर्यायज्ञानाभावात्, तथा ते सर्वदर्शिनोऽपि न भवन्ति, फलमूलानिलाद्याहारकरणेन सर्वप्राणिज्वात्म-तुल्यदृष्ट्यभावात् ।

तदेवं द्रव्यास्तिकपर्यायास्तिकनयमतानुसारिपरिकल्पितमुक्तेभ्यो भिन्नास्तीर्थ-करा इत्युक्तम् ॥ सू० ४० ॥

यदि अतीत, अनागत एवं प्रत्युत्पन्नविषयों का जानना अर्हत होने में कारण माना जाय तो व्यवहारनय की मान्यता के अनुसार चलने वाले कितनेक व्यक्तियों द्वारा कल्पित ऋषियों में भी अर्हतता आ जावेगी । इस तरह इनके साथ तुल्यता की आपत्ति खड़ी ही रहती ? ।

उत्तर—इस तरह से भी तुल्यता की आपत्ति नहीं आती है, कारण सूत्र में इस बात की निवृत्ति के लिये “सर्ववर्णूहिं सर्वदरिसीहिं” ये पद रक्खे गये हैं । ये पद यह स्पष्ट करते हैं कि तीर्थंकर अर्हत ही सर्वज्ञ और सर्वदर्शी हैं, ये ऋषिजन नहीं । इनमें सर्वज्ञता इसलिये नहीं आती है कि ये समस्त जीवादिक द्रव्यों के प्रदेश और उनकी पर्यायों के ज्ञाता नहीं होते हैं । तथा सर्वदर्शित्व इसलिये नहीं आता है कि ये फलमूल आदि का आहार करते हैं । फलमूल आदि के आहार करने वालों में समस्त प्राणियों के साथ आत्मतुल्यता की दृष्टि नहीं रहती है । इस तरह द्रव्यार्थिक एवं पर्यायार्थिकनय की मान्यता के अनुसार परिकल्पित

जे भूत, लविण्य अने वर्तमान विषयेने ज्ञाणुवा ते अर्हंत थवाभां कारणरूप मनाय ते। व्यवहार नयनी मान्यता प्रमाणे आलनार डेटलीक व्यक्ति-ओ द्वारा कल्पित ऋषियोंभां पणु अर्हंतता आवी नशे. आ रीते तेमनी साथे तुल्यतानी मुश्केली आवी न पडे छे ?

उत्तर—आ रीते पणु तुल्यतानी मुश्केली आवती नथी कारण के सूत्रभां ते वातना निराकरण भाटे “सर्ववर्णूहिं सर्वदरिसीहिं” ओवा पढो भूक्यां छे. ओ पढो ओ स्पष्ट करे छे के तीर्थंकर अर्हंत न सर्वज्ञ अने सर्वदर्शी छे, ओ ऋषिजन नथी. तेमनाभां सर्वज्ञता ओ कारणे आवती नथी के तेओ समस्त जीवादिक द्रव्योना प्रदेश अने तेमनी पर्यायोना ज्ञाणुकार डोता नथी. तथा सर्वदर्शित्व ते कारणे आवतु नथी के तेओ क्षणभूण आदिना आहार करे छे. क्षणभूण आदिना आहार करनारभां समस्त प्राणीओनी साथे आत्मतुल्यतानी दृष्टि रहेती नथी. आ रीते द्रव्यार्थिक अने पर्यायार्थिक नयनी मान्यता प्रमाणे

અથ મિથ્યાશ્રુતં વર્ણયતિ—

મૂલમ્—સે કિં તં મિચ્છાસુયં ? । મિચ્છાસુયં જં ઇમં અળ્ળા-  
ળિણ્ણિં મિચ્છાદિદ્વિણ્ણિં સચ્છંદબુદ્ધિમદ્વિગપ્પિયં, તં જહા—  
ભારહં ૧, રામાયણં ૨, ભીમાસુરુક્કં ૩, કોડિલ્લયં ૪, સગડભદ્દિ-  
યાઓ ૫ ટ્વોડ—(ઘોડગ) મુહં ૬, કપ્પાસિયં ૭, નાગસુહુમં ૮,  
કળગસત્તરી ૯, વડ્ડસેસિયં ૧૦, બુદ્ધવયણં ૧૧, તેરાસિયં ૧૨,  
કાવિલિયં ૧૩, લોગાયયં ૧૪, સદ્ધિતંતં ૧૫, માઠરં ૧૬, પુરાણં ૧૭,  
વાગરણં ૧૮, ભાગવયં ૧૯, પાયંજલી ૨૦, પુસ્સદેવયં ૨૧, લેહં ૨૨,  
ગણિયં ૨૩, સડળસુયં ૨૪, નાડયાઈં ૨૫, અહવા બાવત્તરિ-  
કલાઓ, ચત્તારિ ય વેયા સંગોવંગા । ણ્યાઈં મિચ્છાદિદ્વિસ્સ  
મિચ્છત્તપરિગ્ગહિયાઈં મિચ્છાસુયં । ણ્યાઈં ચેવ સમ્મદિદ્વિસ્સ  
સમ્મત્તપરિગ્ગહિયાઈં સમ્મસુયં । અહવા—મિચ્છાદિદ્વિસ્સ વિ  
ણ્યાઈં ચેવ સમ્મસુયં, કમ્મહા ? સમ્મત્તહેઉત્તળઓ, જમ્મહા તે  
મિચ્છાદિદ્વિયા તેહિં ચેવ સમણ્ણિં ચોડયા સમાણા કેદ્દ સપક્કલ-  
લિદ્વિઓ ચયંતિ । સે તં મિચ્છાસુયં ॥ સૂ. ૪૧ ॥

છાયા—અથ કિં તન્મિથ્યાશ્રુતમ્ ? । મિથ્યાશ્રુતં યદિદમત્ત તનિકૈર્મિથ્યાદ્વિષ્ટિકૈઃ  
સ્વચ્છંદબુદ્ધિમતિવિકલ્પિતમ્, તદ્ યથા—ભારતમ્ ૧, રામાયણમ્ ૨, ભીમાસુરોક્તમ્  
૩, કૌટિલ્યકમ્ ૪, શકટભદ્રિકાઃ ૫, ટ્વોડા (ઘોટક) મુલમ્ ૬, કાર્પાસિકમ્ ૭,  
નાગમુક્ષમ્ ૮, કનકસપ્તતિઃ ૯, વૈશેષિકમ્ ૧૦, બુદ્ધવચનમ્ ૧૧, ત્રૈરાશિકમ્ ૧૨,

મુક્ત જીવોં સે ભિન્ન તીર્થંકર અર્હંત પ્રભુ હૈં, યહ વાત ઇન વિશેષણોં દ્વારા  
પ્રતિપાદિત કી ગઈ હૈ ૬ ॥ સૂ. ૪૦ ॥

પરિકલ્પિત મુક્ત જીવોથી ભિન્ન તીર્થંકર અર્હંત પ્રભુ છે, એ વાત એ વિશે-  
ષણો દ્વારા સિદ્ધ કરવામાં આવી છે. (૬) ॥ સૂ. ૪૦ ॥

કાપિલિકમ્ ૧૩, લૌકાયતિકમ્ ૧૪, પૃથિતન્ત્રમ્ ૧૫, માઠરમ્ ૧૬, પુરાણમ્ ૧૭, વ્યાકરણમ્ ૧૮, ભાગવતમ્ ૧૯, પાતંજલમ્ ૨૦, પુણ્યદૈવતમ્ ૨૧, લેખમ્ ૨૨, ગણિતમ્ ૨૩, શકુનરુતમ્ ૨૪, નાટકાનિ ૨૫, અથવા-દ્વાસપ્તતિઃ કલાઃ, ચત્વા-રશ્ચ વેદાઃ સાંજ્ઞોપાંજ્ઞાઃ, એતાનિ મિથ્યાદૃષ્ટેર્મિથ્યાત્વપરિગૃહીતાનિ મિથ્યાશ્રુતમ્ । એતાનિ ચૈવ સમ્યગ્દૃષ્ટેઃ સમ્યક્ત્વપરિગૃહીતાનિ સમ્યક્શ્રુતમ્ । અથવા મિથ્યાદૃષ્ટે-રપ્યેતાનિ ચૈવ સમ્યક્શ્રુતમ્, કસ્માત્ ? સમ્યક્ત્વહેતુત્વાત્, યસ્માત્તે મિથ્યાદૃષ્ટ-યસ્તૈશ્ચૈવ સમયૈર્નોદિતાઃ સન્તઃ કેચિત્ સ્વપક્ષદૃષ્ટીસ્ત્યજન્તિ । તદેતન્મિથ્યાશ્રુતમ્ ॥

ટીકા—શિષ્યઃ પૃચ્છતિ—‘ સે કિં તં મિચ્છાસુયં ’ ઇતિ । અથ કિં તન્મિ-થ્યાશ્રુતમ્ ઇતિ । ઉત્તરમાહ—મિચ્છાસુયં ’ ઇત્યાદિ । તત્ સ્વલ્પ મિથ્યાશ્રુતં ભવતિ, યદિદમ્ અજ્ઞાનિકૈઃ=અલ્પમતિભિઃ મિથ્યાદૃષ્ટિભિઃ=મિથ્યાત્વિભિઃ, સ્વચ્છન્દબુદ્ધિ-મતિવિકલ્પિતમ્, તત્ર બુદ્ધિઃ=અવગ્રહેહારૂપા, મતિઃ=અવાયધારણારૂપા, સ્વચ્છન્દેન=સ્વાભિપ્રાયેણ, ન તુ સર્વજ્ઞપ્રણીતાર્થાનુસારેણ, બુદ્ધિમતિભ્યાં વિકલ્પિતમ્, સ્વબુદ્ધિ

અવ સૂત્રકાર મિથ્યાશ્રુત કા વર્ણન કરતે હૈ—‘ સે કિં તં મિચ્છાસુયં ’ ઇત્યાદિ । શિષ્ય પૂછતા હૈ—હે ભદન્ત ! મિથ્યાશ્રુત કા કયા સ્વરૂપ હૈ ! ઉત્તર—મિથ્યાશ્રુત વહ હૈ કિ જિસે અજ્ઞાની—અલ્પમતિયુક્ત—મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવોં ને અપની સ્વચ્છંદ મતિ એવં બુદ્ધિ દ્વારા પરિકલ્પિત કિયા હૈ । યહાં જો “ સ્વચ્છંદ મતિ બુદ્ધિ ” એસા કહા હૈ ઉસકા અભિપ્રાય યહ હૈ કિ જો મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ હુઆ કરતે હૈં વે સર્વજ્ઞ પ્રણીત અર્થકે અનુસાર પદાર્થોં કી પ્રરૂપણા નહીં કરતે, કિન્તુ અપને અભિપ્રાય કે અનુસાર જો અપની બુદ્ધિ ઓર મતિમેં આતા હૈં ઉસે હી સત્ય કલ્પિત કર લિયા કરતે હૈં । યહાં અવગ્રહ એવં ઈહારૂપ માન્યતા કા નામ બુદ્ધિ હૈ, તથા અવાય એવં ધારણારૂપ માન્યતા કા નામ મતિ હૈ । ઇસ તરહ બુદ્ધિ ઓર મતિમેં ભેદ

હવે સૂત્રકાર મિથ્યાશ્રુતવુ વર્ણન કરે છે—“સે કિ ત મિચ્છાસુયં ” ઇત્યાદિ શિષ્ય પૂછે છે—હે ભદન્ત ! મિથ્યાશ્રુતનું શું સ્વરૂપ છે ?

ઉત્તર—મિથ્યાશ્રુત તે છે કે જેને અજ્ઞાની—અલ્પમતિવાળા—મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવોએ પોતાની સ્વચ્છંદ મતિ અને બુદ્ધિ દ્વારા પરિકલ્પિત કર્યું છે. અહીં જે “ સ્વચ્છંદ મતિ બુદ્ધિ ” એમ કહ્યું છે તેનું તાત્પર્ય એ છે કે જે મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ હોય છે તેઓ સર્વજ્ઞ પ્રણીત અર્થ પ્રમાણે પદાર્થોની પ્રરૂપણા કરતા નથી, પણ પોતાના અભિપ્રાય પ્રમાણે જે પોતાની બુદ્ધિ અને મતિમાં આવે છે એને જ સત્ય કલ્પી લે છે. અહીં અવગ્રહ અને ઇહારૂપ માન્યતાનું નામ બુદ્ધિ છે,

પરિકલ્પિતમિત્યર્થઃ; તદ્ યથા-તત્=મિથ્યાશ્રુતં, યથા=યેન પ્રકારેણ ભગવતા કથિતં તથા કથયામીત્યર્થઃ । ભારતં ૧, રામાયણમ્ ૨, ભીમાસુરોક્તં=ભીમાસુરેણ રચિતં શાસ્ત્રમ્ ૩, કૌટિલ્યકં-કૌટિલ્યેન=ચાણક્યેન નિર્મિતમ્ અર્થશાસ્ત્રમ્ ૪, શકટભદ્રિકાઃ ૫, ઘોટકમુખં=ઘોટકમુખનામકં શાસ્ત્રં ૬, કાર્પાસિકં ૭, નાગસૂક્ષ્મમ્ ૮, કનકસપ્તતિઃ ૯, વૈશેષિકં=કળાદર્શનમ્ ૧૦, બુદ્ધવચનં=ત્રિપિટકરૂપં ૧૧ ત્રૈરાશિકં-ત્રૈરાશિકસમ્પ્રદાયસમ્બન્ધી ગ્રન્થવિશેષઃ ૧૨, કાપિલકં=સાંખ્યશાસ્ત્રમ્ ૧૩, લૌકાયતિકં=ચાર્વાકદર્શનમ્ ૧૪, પષ્ટિતન્ત્રં=સાંખ્યશાસ્ત્રગ્રન્થવિશેષઃ ૧૫, માઠરં-માઠરનિર્મિતં શાસ્ત્રં પોઢશતન્ત્રસ્થાપકો ન્યાયશાસ્ત્રવિશેષઃ ૧૬, પુરાણં ૧૭, વ્યાકરણં ૧૮, ભાગવતં ૧૯, પાતંજલં ૨૦, પુષ્પદૈવતં ૨૧, લેખઃ ૨૨, ગણિતં ૨૩, શકુનરુતમ્ ૨૪, નાટકાનિ ૨૫ इति । અથવા-અથ ચેત્યર્થઃ । દ્વાસપ્તતિઃ કલાઃ, ચત્વારો વેદાઃ સાંગોપાંગાઃ । એતાનિ ભારતાદીનિ શાસ્ત્રાણિ, યદા મિથ્યાદૃષ્ટેર્મિથ્યાત્વેન પરિગૃહીતાનિ ભવન્તિ, તદા વિપરીતાભિનિવેશદૃઢિહેતુત્વાન્મિથ્યાશ્રુતં

જાનના ચાહિયે । વે મિથ્યાશ્રુત યે હૈં-ભારત ૧, રામાયણ ૨, ભીમાસુર કેદ્વારા રચિત શાસ્ત્ર, ચાણક્ય કે દ્વારા વનાયા હુઆ અર્થશાસ્ત્ર ૪, શકટભદ્રિકા ૫, ઘોટકમુખ નામકા શાસ્ત્ર ૬, કાર્પાસિક ૭, નાગસૂક્ષ્મ ૮, કનકસપ્તતિ ૯, વૈશેષિકદર્શન ૧૦, પિટકત્રય ૧૧, ત્રૈરાશિકસંપ્રદાય સંવંધી ગ્રન્થવિશેષ ૧૨, સાંખ્યશાસ્ત્ર ૧૩, ચાર્વાક દર્શન ૧૪, પષ્ટિતંત્ર સાંખ્યોં કા ગ્રન્થ વિશેષ ૧૫, માઠર-સોલહ તત્ત્વોં કી સ્થાપના કરનેવાલા ન્યાયશાસ્ત્ર કા ગ્રન્થવિશેષ ૧૬, પુરાણ ૧૭, વ્યાકરણ ૧૮, ભાગવત ૧૯, પાતંજલ ૨૦, પુષ્પદૈવત ૨૧, લેખ ૨૨, ગણિત ૨૩, શકુનરુત ૨૪, એવં નાટક ૨૫, । તથા વહત્તર કલાઈ સાંગોપાંગ ચારોંવેદ । યે ભારતાદિકશ્રુત જવ મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવોં દ્વારા મિથ્યાત્વપૂર્વક પરિગૃહીત

તથા અવાય અને ધારણારૂપ માન્યતાનું નામ મતિ છે. આ રીતે મતિ અને બુદ્ધિ વચ્ચે ભેદ સમજવાનો છે. એ મિથ્યાશ્રુત આ પ્રમાણે છે-(૧) ભારત, (૨) રામાયણ (૩) ભીમસુર દ્વારા રચિત શાસ્ત્ર (૪) ચાણક્યે બનાવેલું અર્થ-શાસ્ત્ર, (૫) શકટ ભદ્રિકા. (૬) ઘોટકમુખ નામનું શાસ્ત્ર, (૭) કાર્પાસિક, (૮) નાગસૂક્ષ્મ. (૯) કનક સપ્તક, (૧૦) વૈશેષિક દર્શન, (૧૧) પિટકત્રય, (૧૨) ત્રૈરાશિક સંપ્રદાય સંબંધી ગ્રન્થવિશેષ, (૧૩) સાંખ્યશાસ્ત્ર, (૧૪) ચાર્વાકદર્શન, (૧૫) પષ્ટિતંત્ર-સાંખ્યોના ગ્રન્થવિશેષ, (૧૬) માઠર-સોળ તત્ત્વોની સ્થાપના કરનાર ન્યાયશાસ્ત્રનો ગ્રન્થવિશેષ, (૧૭) પુરાણ, (૧૮) વ્યાકરણ, (૧૯) ભાગવત, (૨૦) પાતંજલ, (૨૧) પુષ્પદૈવત, (૨૨) લેખ, (૨૩) ગણિત, (૨૪) શકુનરુત અને (૨૫) નાટક તથા બોંતેર કળાઓ સાંગોપાંગ ચારે વેદ. એ ભારતાદિક શ્રુત ન્યાયે મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવો દ્વારા મિથ્યાત્વપૂર્વક પરિગૃહીત કરાય છે,

भवन्ति । एतान्येव च भारतादीनि शास्त्राणि, सम्यग्दृष्टेः सम्यक्त्वपरिगृहीतानि-सम्यक्त्वेन=यथावस्थिताऽसारतापरिभावेन रूपेण परिगृहीतानि भवन्ति, तस्य सम्यक्श्रुतम्, तद्गताऽसारतादर्शनेन स्थिरतरसम्यक्त्वपरिणामजनकत्वात् ।

अथवेत्यादि । अथवा-मिथ्यादृष्टेरपि कस्यचित्, एतानि-भारतादीनि शास्त्राणि सम्यक्श्रुतं भवति । शिष्यः पृच्छति—‘कम्हा?’ इति । कस्मात्? सम्यक्त्वहेतुत्वात् । सम्यक्त्वहेतुत्वमेव दर्शयति—‘जम्हा०’ इत्यादि ।

यस्मात् ते मिथ्यादृष्टयस्तैश्चैव समयैः=भारताद्युक्तैरेव स्वसिद्धान्तैः, पूर्वापर-विरोधेन, यद्वा रागादिपरीतः पुरुषस्तावन्नातीन्द्रियमर्थमवबुध्यते, रागादिपरीत-

કિયે જાતે હૈં उस समय ये विपरीत अभिनिवेश को बढाने के कारण होने से मिथ्याश्रुत माने जाते हैं । तथा जिस समय ये सम्यग्दृष्टि जीवों द्वारा सम्यक्त्वपूर्वक गृहीत किये जाते हैं उस समय ये उसे अपने भीतर रही हुई असारता के प्रदर्शक होते हैं इससे उसकी आत्मामें सम्यक्त्व परिणाम स्थिरतर हो जाता है अतः उस सम्यग्दृष्टि की अपेक्षा ये सम्यक्श्रुत रूपसे भी माने जाते हैं । अथवा-किसी मिथ्यादृष्टि जीव के लिये भी ये भारतादिकश्रुत सम्यक्श्रुतरूप से परिणमित हो जाते हैं, कारण किये उस आत्मामें सम्यक्त्व के कारण बन जाते हैं । सम्यक्त्व के कारण ये उसको किस तरह से बनते हैं? यही बात यहां स्पष्ट की जाती है-मिथ्यादृष्टि जीव जब भारतादि शास्त्रोंमें प्रतिपादित सिद्धान्तों का अवलोकन करता है, तो जब उसे वहां पूर्वापरविरोध दृष्टिगत होता है. अथवा वह ऐसा भी विचार करता है कि इन वेदादिक शास्त्रोंमें प्रायः

તે વખતે તે વિપરીત અભિનિવેશને વધારવાનું કારણ હોવાથી મિથ્યાશ્રુત મનાય છે. તથા જે સમયે એ સમ્યગ્દૃષ્ટિ જીવો દ્વારા સમ્યક્ત્વપૂર્વક ગ્રહણ કરાય છે, ત્યારે તેઓ તેને પોતાની અંદર રહેલ અસારતાના પ્રદર્શક થાય છે. તેથી તેના આત્મામાં સમ્યક્ત્વ પરિણામ વધારે સ્થિર થાય છે. તેથી તે સમ્યગ્દૃષ્ટિની અપેક્ષાએ તેમને સમ્યક્શ્રુતરૂપે પણ મનાય છે. અથવા કોઈ કોઈ મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવને માટે પણ એ ભારતાદિક શ્રુત સમ્યક્શ્રુતરૂપે પરિણુ-ભિત થાય છે, કારણ કે તેઓ તે આત્મામાં સમ્યક્ત્વનું કારણ બને છે. તેઓ તેને માટે સમ્યક્ત્વનું કારણ કેવી રીતે બને છે? એજ વાત અહીં સ્પષ્ટ કરવામાં આવે છે-મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ જ્યારે ભારતાદિક શાસ્ત્રોમાં પ્રતિપાદિત સિદ્ધાંતોનું અવલોકન કરે છે ત્યારે જો તેને પૂર્વાપર વિરોધ નજરે પડે છે અથવા તે એવો



ત્વાદસ્માદશક્ત । વેદેષુ ચાતીન્દ્રિયા અર્થાઃ પ્રાયો વર્ણિતાઃ । પરન્ત્વતીન્દ્રિયાર્થદર્શી  
 ચ વીતરાગઃ સર્વજ્ઞઃ, સ ચ તદ્વક્તા નાસ્તિ તત્ર પરસ્પરવિરુદ્ધાર્થદર્શનાત્, તત્  
 કથં વેદાર્થપ્રતીતિરિત્યેવં નોદિતાઃ સન્તઃ કેચિદ્ વિવેકેનઃ સત્યક્યાદય इव स्व-  
 क्षદृષ્ટીઃ=સ્વદર્શનાનિ ત્યજન્તિ અર્હતો ભગવતઃ સર્વજ્ઞસ્ય શાસનં સ્વીકુર્વન્તિ ।  
 તદેવં સમ્યક્ત્વ હેતુત્વાદ્ વેદાદીન્યપિ શાસ્ત્રાણિ કસ્યચિન્મિથ્યાદૃષ્ટેરપિ સમ્યક્શ્રુતં  
 ભવતિ । તદેતન્મિથ્યાશ્રુતં વર્ણિતમ્ ॥ સૂ૦ ૪૧ ॥

અતીન્દ્રિયાર્થોં કા પ્રતિપાદન કિયા ગયા હૈ, પરન્તુ इनके प्रतिपादन करने  
 वाले वीतराग सर्वज्ञ नहीं हैं, जिन्होंने उन्हें प्रतिपादन किया है वेतो  
 हमारे जैसे रागादिक दोषों से ही दूषित व्यक्ति हैं, अतः इनके द्वारा  
 अतीन्द्रिय अर्थों का प्रतिपादन समीचीन रूप से नहीं हो सकता है कारण  
 ये उस विषय को पूर्णरूपसे समझ ही नहीं सके हैं, इसी लिये इन शास्त्रोंमें  
 परस्पर विरुद्धार्थ प्ररूपणता देखी जाती है, अतः जब ऐसी बात है तो  
 फिर वेदादिकों द्वारा वास्तविक अर्थ की प्रतीति भी कैसे हो सकती  
 है? इस तरह पूर्वापर विरोध के विचार से प्रेरित हुए कितनेक-  
 विवेकी मिथ्यादृष्टि जीव अपने २ दर्शनों का परित्याग कर देते हैं  
 और अर्हत भगवान सर्वज्ञ के शासन को अंगीकार कर लेते हैं । इस  
 तरह किसी २ मिथ्यादृष्टि जीव में सम्यग्दृष्टि जगाने में कारण होनेसे  
 वेदादिक शास्त्र उसकी अपेक्षा सम्यक्श्रुत भी मान लिये जाते हैं । इस  
 प्रकार यहां तक मिथ्याश्रुत का वर्णन हुआ ॥ सू० ४१ ॥

પણ વિચાર કરે છે કે આ વેદાદિક શાસ્ત્રોમાં મોટે ભાગે અતીન્દ્રિયાર્થોનું સમર્થન  
 કર્યું છે પણ તેનું સમર્થન કરનારા વિતરાગ સર્વજ્ઞ નથી, જેમણે તેમનું સમ-  
 ર્થન કર્યું છે તેઓ તો અમારા જેવી રાગાદિક દોષોથી દૂષિત વ્યક્તિ છે, તેથી  
 તેમના દ્વારા અતીન્દ્રિય અર્થોનું પ્રતિપાદન સમીચીન રીતે થઈ શકે નહીં કારણ  
 કે તેઓ એ વિષયને પૂર્ણ રીતે સમજી જ શક્યા નથી, તે કારણે એ શાસ્ત્રોમાં  
 પરસ્પર વિરુદ્ધાર્થ પ્રરૂપણતા નજરે પડે છે, તેથી જો વાત એ પ્રમાણે છે તો  
 પછી એ વેદાદિકો દ્વારા વાસ્તવિક અર્થની પ્રતીતિ કેવી રીતે થઈ શકે? આ  
 પ્રમાણે પૂર્વાપર વિરોધના વિચારથી પ્રેરાતા કેટલાક વિવેકી મિથ્યદૃષ્ટિ જીવ  
 પોતા પોતાનાં દર્શનોનો પરિત્યાગ કરે છે અને અર્હત ભગવાન સર્વજ્ઞના શાસનને  
 અંગીકાર કરે છે. આ રીતે કોઈ કોઈ મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવમાં સમ્યગ્દૃષ્ટિ પેદા કર-  
 વાને કારણરૂપ હોવાથી વેદાદિક શાસ્ત્ર તેની અપેક્ષાએ સમ્યગ્શ્રુત પણ માની  
 લેવામાં આવે છે. આ રીતે કોઈ કોઈ મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવમાં સમ્યગ્દૃષ્ટિ પેદા થાય છે. ॥ સૂ. ૪૧ ॥

सम्प्रति सम्यक्त्वतस्य सादिसपर्यवसिततामनाद्यपर्यवसिततां च वर्णयति—

मूलम्—से किं तं साइयं सपज्जवसियं ? । अणाइयं अपज्जवसियं च ? इच्चेइयं दुवालसंगं गणिपिडगं वुच्छित्तिनयट्ठयाए साइयं सपज्जवसियं, अव्वुच्छित्तिनयट्ठयाए अणाइयं अपज्जवसियं, तं समासओ चउव्विहं पणत्तं; तं जहा—दव्वओ, खित्तओ, कालओ, भावओ ।

तत्थ दव्वओ णं सम्मसुयं एगं पुरिसं पडुच्च साइयं सपज्जवसियं, बहवे पुरिसे य पडुच्च अणाइयं अपज्जवसियं । खित्तओ णं पंच भरहाइं पंचेरवयाइं पडुच्च साइयं सपज्जवसियं, पंचमहाविदेहाइं पडुच्च अणाइयं अपज्जवसियं । कालओ णं उस्सप्पिणिं ओसप्पिणिं च पडुच्च साइयं सपज्जवसियं, नो उस्सप्पिणिं नो ओसप्पिणिं च पडुच्च अणाइयं अपज्जवसियं । भावओ णं जे जया जिणपन्नत्ता भावा आघविज्जंति, पणविज्जंति, परूविज्जंति, दंसिज्जंति, निदंसिज्जंति, उवदंसिज्जंति तथा ते भावे पडुच्च साइयं सपज्जवसियं, खाओवसमियं पुण भावं पडुच्च अणाइयं अपज्जवसियं, अहवा भवसिद्धियस्स सुयं साइयं सपज्जवसियं च अभवसिद्धियस्स सुयं अणाइयं अपज्जवसियं । सव्वागासपएसग्गं सव्वागासपएसोहिं अणंतगुणियं पज्जवग्गक्खरं—निप्फज्जइ । सव्वजीवाणं पि इ णं अक्खरस्स अणंतभागो निच्चुग्घाडिओ चिट्ठइ । जइ पुण सोऽवि आवरिज्जा ते णं जीवो अजीवत्तं पाविज्जा—

“સુદ્ધુ વિ મેહસમુદયે, હોઈ પમાચંદસૂરાણં ।”

સે તં સાઙ્યં સપજ્જવસિયં, સે તં અણાઙ્યં અપજ્જવસિયં ॥ સૂ. ૪૨ ॥

છાયા—અથ કિં તત્ સાદિકં સપર્યવસિતમ્ ? । અનાદિકમપર્યવસિતં ચ ?  
 इत्येतद् द्वादशाङ्गं गणिपिटकं व्यवच्छिन्नितिनयार्थतया सादिकं सपर्यवसितम् ।  
 अव्यवच्छिन्नितिनयार्थतयाऽनादिकमपर्यवसितम्, तत् समासतश्चतुर्विधं प्रज्ञप्तम् । तद्  
 यथा—द्रव्यतः, क्षेत्रतः, कालतो, भावतः ।

તત્ર દ્રવ્યતઃ સ્વલુ સમ્યક્શ્રુતમ્—એકં પુરુષં પ્રતીત્ય સાદિકં સપર્યવસિતમ્,  
 बहून् पुरुषांश्च प्रतीत्य अनादिकमपर्यवसितम् । क्षेत्रतः स्वलु पञ्च भरतानि पञ्चैरव-  
 तानि प्रतीत्य सादिकं सपर्यवसितम्, पञ्चमहाविदेहान् प्रतीत्यानादિકमपर्यवसितम् ।  
 कालत उत्सर्पिणीमवसर्पिणीं च प्रतीत्य सादिकं सपर्यवसितम्, नो उत्सर्पिणीं नो  
 अवसर्पिणीं च प्रतीत्यानादिकमपर्यवसितम् । भावतः स्वलु ये यदा जिनप्रज्ञप्ता भावा  
 आख्यायन्ते, प्रज्ञाप्यन्ते, प्ररूप्यन्ते, दर्श्यन्ते, निदर्श्यन्ते, उपदर्श्यन्ते, तदा तान्  
 भावान् प्रतीत्य साદિકં સપર્યવસિતમ્, ક્ષાયોપશમિકં પુનર્ભાવં પ્રતીત્યાનાદિકમપ-  
 ર્યવસિતમ્ । અથવા ભવસિદ્ધિકસ્ય શ્રુતં સાદિકં સપર્યવસિતં ચ । અભવસિદ્ધિકસ્ય  
 શ્રુતમનાદિકમપર્યવસિતં ચ । સર્વાકાશપ્રદેશાગ્રં સર્વાકાશપ્રદેશૈરનન્તગુણિતં પર્યવા-  
 ગ્રાક્ષરં નિષ્પદ્યતે, સર્વજીવાનામપિ ચ અક્ષરસ્યાનન્તભાગો નિત્યમુદ્ઘાટિતઃ તિષ્ઠતિ,  
 यदि पुनः सोऽपिआत्रियेत, तेन जीवोऽजीवत्वं प्राप्नुयात् ।

‘સુષ્ઠ્વપિ મેઘસમુદયે ભવતિ પ્રમાચન્દ્રસૂર્યણામ્ ।’

તદેતત્ સાદિકં સપર્યવસિતમ્, તદેતદનાદિકમપર્યવસિતમ્ ॥ સૂ. ૪૨ ॥

ટીકા—શિષ્યઃ પૃચ્છતિ—‘સે કિં તં’ । હે ભદન્ત ! અથ કિં તત્  
 સાદિકમ્—આદિસહિતં, સપર્યવસિતમ્—અન્તસહિતં સમ્યક્શ્રુતમ્, તથા અનાદિકમ્—  
 આદિરહિતમ્, અપર્યવસિતમ્—અન્તરહિતં સમ્યક્શ્રુતં કિમિતિપ્રશ્નઃ ।

અવ સમ્યક્શ્રુત કા સાદિપર્યવસિત ઔર અનાદિ અપર્યવસિત રૂપ  
 સે વર્ણન કરતે હૈ—‘સે કિં તં સાઙ્યં સપજ્જવસિયં’ ?’ इत्यादि ।

શિષ્ય પૂછતા હૈ—હે ભદન્ત ! આદિ એવં અન્ત સહિત સમ્યક્શ્રુત કા  
 કયા સ્વરૂપ હૈ ? તથા અનાદિ એવં અન્તરહિત સમ્યક્શ્રુત કા કયા સ્વરૂપ હૈ ?

હવે સમ્યક્શ્રુતનું સાદિપર્યવસિત અને અનાદિ અપર્યવસિત રૂપે વર્ણન  
 કરે છે—“સે કિં તં સાઙ્યં સપજ્જવસિયં” ?” इत्यादि

શિષ્ય પૂછે છે—હે ભદન્ત આદિ અને અન્ત સહિત સમ્યક્શ્રુતનું શું  
 સ્વરૂપ છે ? તથા અનાદિ અને અન્તરહિત સમ્યક્શ્રુતનું શું સ્વરૂપ છે ?

ઉત્તરમાહ—‘ ઇચ્છે ઇયં દુવાલસંગં ’ ઇત્યાદિ । ઇત્યેતત્-પૂર્વોક્તમેતત્ દ્વાદશાંગં ગણિપિટકઃ=આચારાઙ્ગાદિરુપઃ યદ્ ગણિનઃ સર્વસ્વં, તદેવ વ્યવચ્છિત્તિનયાર્થતયા=વ્યવચ્છિત્તિ બોધકો નયઃ-વ્યવચ્છિત્તિનયઃ પર્યાયાર્થિક ઇત્યર્થઃ, તસ્યાર્થઃ-વ્યવચ્છિત્તિનયાર્થઃ, તદ્ભાવઃ-વ્યવચ્છિત્તિ નયાર્થતા, તયા, પર્યાયાર્થિકનયા પેક્ષયેત્યર્થઃ, સાદિકં-સપર્યવસિતમ્=આદિસહિતમ્, અન્તસહિતં ચ સમ્યક્શ્રુતમ્ । તથા-અવ્યવચ્છિત્તિનયાર્થતયા=અવ્યવચ્છિત્તિપ્રતિપાદનપરોનયઃ-અવ્યવચ્છિત્તિનયઃ, દ્રવ્યાર્થિક ઇત્યર્થઃ, તસ્યાર્થઃ-અવ્યવચ્છિત્તિનયાર્થઃ, તદ્ભાવઃ-અવ્યવચ્છિત્તિનયાર્થતા, તયા દ્રવ્યાર્થિકનયાપેક્ષયેત્યર્થઃ । અનાદિકમપર્યવસિતમ્=અનાઘનન્તં ચ સમ્યક્શ્રુતમ્ ।

ઉત્તર—યહ પૂર્વોક્ત ગણિપિટકસ્વરુપ દ્વાદશાંગશ્રુત પર્યાયાર્થિકનય કી અપેક્ષા સે આદિ અન્ત સહિત હૈ । વ્યવચ્છિત્તિ શબ્દ કા અર્થ હૈ પર્યાય । ઇસ પર્યાય કા બોધક જો નય હૈ ઉસકા નામ વ્યવચ્છિત્તિનય હૈ । તથા દ્રવ્યાર્થિકનય કી અપેક્ષા સે યહ અનાદિ અનંતરુપ હૈ । યહાં અવ્યવચ્છિત્તિ શબ્દ કા અર્થ દ્રવ્ય હૈ । ઇસ દ્રવ્ય કો જો નય, પ્રધાનતયા વિષય કરતા હૈ વહ દ્રવ્યાર્થિનય અવ્યવચ્છિત્તિનય હૈ । તાત્પર્ય કહને કા યહ હૈ કિ જબ સમ્યક્શ્રુત કા પર્યાયાર્થિકનય કી અપેક્ષા વિચાર કિયા જાતા હૈ તો યહ ગણિપિટકરુપ સમ્યક્શ્રુત સાદિ ઓર સાંત હોતા હૈ, કારણ-પર્યાયાર્થિકનય દ્રવ્ય કો પ્રધાનપને વિષય નહીં કરતા-પર્યાય કો હી પ્રધાનતયા વિષય કરતા હૈ । પર્યાય કોઈ મી નિત્ય નહીં હોતી હૈ । સબ હી પર્યાયે સાદિ ઓર સાંત હોતી હૈ । ઇસ તરહ જબ ગણિપિટકરુપ યહ દ્વાદશાંગ સમ્યક્શ્રુત પર્યાયરુપ માના જાયગા તો ઇસમેં

ઉત્તર—આ પૂર્વોક્ત ગણિપિટક રૂપ દ્વાદશાંગશ્રુત પર્યાયાર્થિકનયની અપેક્ષાએ આદિ અન્ત સહિત છે. વ્યવચ્છિત્તિ શબ્દનો અર્થ છે “ પર્યાય ”. આ પર્યાયનો બોધક જે નય છે તેનું નામ વ્યવચ્છિત્તિનય છે. તથા દ્રવ્યાર્થિક નયની અપેક્ષાએ તે અનાદિ અનંતરૂપ છે. અહીં અવ્યવચ્છિત્તિ શબ્દનો અર્થ દ્રવ્ય છે. એ દ્રવ્યને જે નય મુખ્યત્વે વિષય કરે છે તે દ્રવ્યાર્થિનય અવ્યવચ્છિત્તિનય છે. કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે જ્યારે સમ્યક્શ્રુતનો પર્યાયાર્થિકનયની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે છે ત્યારે એ ગણિપિટકરૂપ સમ્યક્શ્રુત સાદિ અને અંતસહિત હોય છે, કારણ કે પર્યાયાર્થિકનય દ્રવ્યને મુખ્યત્વે વિષય કરતો નથી. પર્યાયને જ મુખ્યત્વે વિષય કરે છે. કોઈ પણ પર્યાય નિત્ય હોતી નથી. સઘળી પર્યાયો સાદિ ( આદિ સહિત ) અને સાંત ( અંત સહિત ) હોય છે. આ રીતે જે ગણિપિટકરૂપ એ દ્વાદશાંગ સમ્યક્શ્રુત પર્યાયરૂપ માનવામાં

તત્-સમ્યક્શ્રુતં સમાસતઃ-સંક્ષેપતઃ, ચતુર્વિધં પ્રજ્ઞપ્તમ્, તદ્ યથા-દ્રવ્યતઃ  
ક્ષેત્રતઃ કાલતો ભાવતશ્ચ ।

તત્ર દ્રવ્યતઃ સ્વલુ સમ્યક્શ્રુતમ્ એકં પુરુષં પ્રતીત્ય, સાદિ સપર્યવસિતમ્ । તથા  
હિ-સમ્યક્ત્વ પ્રાપ્તૌ, તત્પ્રથમપાઠતો વા સાદિ, પુનર્મિથ્યાત્વપ્રાપ્તૌ, સમ્યક્ત્વે વા  
સતિ પ્રમાદવશાત્ ગ્લાનત્વાદ્વા પરલોકગમનસંભવાદ્ વા વિસ્મૃતિમુપાગતે સતિ, તથા  
-કેવલજ્ઞાનોત્પત્ત્યા સર્વથા વિનષ્ટે ચ સતિ સપર્યવસિતં=સપર્યવસાનં સાન્તં ભવતિ ।

સાદિ ઔર સાંતતા આતી હૈ । તથા જબ હસકા દ્રવ્યાર્થિકનય કી અપેક્ષા  
વિચાર કિયા જાતા હૈ તો દ્રવ્ય અનાદિ અનંત હોતા હૈ । દ્રવ્યાર્થિકનય  
પ્રધાનનયા દ્રવ્ય કો હી વિષય કરતા હૈ । હસ અપેક્ષા સમ્યક્શ્રુત અનાદિ  
ઔર અપર્યવસિત-અન્તરહિત માના જાતા હૈ । દ્રવ્ય કા મૌલિક સ્વરૂપ  
હી અનંત અનંતરૂપ હૈ ।

યહ સમ્યક્શ્રુત સંક્ષેપ સે ચાર પ્રકાર કા વર્ણિત કિયા ગયા હૈ ?  
ઉસકે ચાર પ્રકાર યે હૈ-એક પ્રકાર દ્રવ્ય કી અપેક્ષા, દૂસરા પ્રકાર ક્ષેત્ર કી  
અપેક્ષા, તીસરા પ્રકાર કાલ કી અપેક્ષા, એવં ચૌથા પ્રકાર ભાવ કી અપેક્ષા ।

દ્રવ્ય કી અપેક્ષા જો પ્રથમ પ્રકાર હૈ ઉસકા તાત્પર્ય યહ હૈ, કિ જબ એક  
પુરુષ કી અપેક્ષા સમ્યક્શ્રુત કા વિચાર કિયા જાતા હૈ, તો ઉસમેં ઉસકી  
અપેક્ષા સાદિ સાંતતા હી આતી હૈ. કારણ જબ યહ સમ્યક્ત્વ પ્રાપ્ત પુરુષ  
કો હોગા, તબ હી ઉસકે દ્વારા ગૃહીત ઉસ શ્રુત મેં સમ્યક્પના આજાવેગા,

આવે તો તેમાં સાદિ અને સાંતતા આવે છે. તથા જો તેનો દ્રવ્યાર્થિકનયની  
અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે તો દ્રવ્ય અનાદિ અનંત હોય છે. દ્રવ્યાર્થિક  
નય મુખ્યત્વે દ્રવ્યને જ વિષય કરે છે. આ અપેક્ષાએ સમ્યક્શ્રુત અનાદિ અને  
અપર્યવસિત-અન્તરહિત મનાય છે. દ્રવ્યનું મૌલિક સ્વરૂપ જ અનંત  
અનંતરૂપ છે.

આ સમ્યક્શ્રુત સંક્ષિપ્તમાં ચાર પ્રકારનું વર્ણવેલું છે. તે ચાર પ્રકાર આ  
પ્રમાણે છે-એક પ્રકાર દ્રવ્યની અપેક્ષાએ, બીજો પ્રકાર ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ, ત્રીજો  
પ્રકાર કાળની અપેક્ષાએ, અને ચોથો પ્રકાર ભાવની અપેક્ષાએ.

દ્રવ્યની અપેક્ષાએ જે પહેલો પ્રકાર છે તેનું તાત્પર્ય એ છે કે જ્યારે  
એક પુરુષની અપેક્ષાએ સમ્યક્શ્રુતનો વિચાર કરાય છે ત્યારે તેમાં તેની અપે-  
ક્ષાએ સાદિ સાંતતા જ આવે છે, કારણ કે જ્યારે તે સમ્યક્ત્વ પુરુષને પ્રાપ્ત થશે  
ત્યારે જ તેના દ્વારા ગૃહિત તે શ્રુતમાં સમ્યક્પણું આવશે, અથવા તે સમ્યક્-

વહૂન્ પુરુષાન્-કાલત્રયવર્તિ નઃ પુનઃ પ્રતીત્ય અનાદ્યપર્યવસિતમ્ પ્રવાહરૂપેણ પ્રવૃત્ત-  
ત્વાત્ કાલવદિતિ ભાવઃ ।

અથવા વહ સમ્યક્ દૃષ્ટિ જીવ જબ ઉસકા સર્વ પ્રથમ પાઠ કરેગા તબ  
વહ સમ્યક્શ્રુત કહલાવેગા । ઇસ તરહ સમ્યક્દૃષ્ટિ એક જીવ કી અપેક્ષા  
ઉસમેં સાદિતા આતી હૈ । જબ જીવ કો સમકિત હોકર છૂટ જાતા હૈ  
ઔર વહ મિથ્યાત્વદશા સંપન્ન બન જાતા હૈ તબ અથવા સમ્યક્ત્વ કી  
પ્રાપ્તિ હોને પર ભી યદિ પ્રમાદ સે યા ગ્લાન અવસ્થામેં પતિત હો જાને કે  
કારણ, યા મૃત્યુ કી સંભાવનામેં આજાને કે કારણ સે વહ જીવ જબ ઇસે  
ભૂલ જાતા હૈ યા કેવલજ્ઞાન કી ઉત્પત્તિ હોને સે જબ યહ નષ્ટ હો  
જાતા હૈ, તબ યહ સમ્યક્શ્રુત અંત સહિત ભી માના ગયા હૈ । ઇસ  
અવસ્થામેં ઉસ જીવ કી અપેક્ષા સમ્યક્શ્રુત કા અસ્તિત્વ નહીં રહતા હૈ ।  
ઇસ પ્રકાર એક સમ્યક્દૃષ્ટિ જીવ કી અપેક્ષા ઉસ શ્રુત કી ઉસે પ્રાપ્તિ  
હોને કે કારણ, ઔર ઉસકે દ્વારા મિથ્યાત્વ આદિ અવસ્થામેં  
પરિત્યક્ત હોને કે કારણ સમ્યક્શ્રુતમેં સાદિ સાન્તતા હોતી હૈ ।  
અબ સૂત્રકાર સમ્યક્શ્રુતમેં નાના જીવોં કી અપેક્ષા અનાદિ અનંતતા  
પ્રકટ કરતે હુએ કહતે હૈ-જબ સમ્યક્ શ્રુતકા વિચાર નાના પુરુષોં કી  
અપેક્ષા કિયા જાતા હૈ, તો ઇસમેં અનાદિ અનંતતા હી આતી હૈ । વહ

દૃષ્ટિ જીવ જ્યારે તેનો સર્વ પ્રથમ પાઠ કરશે ત્યારે તે સમ્યક્શ્રુત કહેવાશે.  
આ રીતે સમ્યક્દૃષ્ટિ એક જીવની અપેક્ષાએ તેમાં સાદિતા આવે છે. જ્યારે  
જીવને સમકિત થઈને છૂટી જાય છે, અને તે મિથ્યાત્વ દશાવાળો બની જાય  
છે ત્યારે, અથવા સમ્યક્ત્વની પ્રાપ્તિ થવા છતાં પણ જો પ્રમાદથી કે ગ્લાન  
અવસ્થામાં પતિત થઈ જવાને કારણે, કે મૃત્યુની સંભાવનામાં આવી જવાને  
કારણે તે જીવ જ્યારે તેને ભૂલી જાય છે, કે કેવળજ્ઞાન પેદા થવાથી જ્યારે  
તે નષ્ટ થઈ જાય છે, ત્યારે તે સમ્યક્શ્રુત અંત સહિત પણ માનવામાં આવ્યું  
છે. તે અવસ્થામાં તે જીવની અપેક્ષાએ સમ્યક્શ્રુતનું અસ્તિત્વ રહેતું નથી.  
આ પ્રકારે એક સમ્યક્દૃષ્ટી જીવની અપેક્ષાએ તે શ્રુતની પ્રાપ્તિ થવાને કારણે  
અને તેના દ્વારા મિથ્યાત્વ આદિ અવસ્થામાં પરિત્યક્ત થવાને કારણે સમ્યક્-  
શ્રુતમાં સાદિ સાન્તતા હોય છે. હવે સૂત્રકાર સમ્યક્શ્રુતમાં વિવિધ જીવોની  
અપેક્ષાએ અનાદિ અનંતતા પ્રગટ કરતા કહે છે-જ્યારે સમ્યક્શ્રુતનો વિચાર  
વિવિધ પુરુષોની અપેક્ષાએ કરવામાં આવે છે ત્યારે તેમાં અનાદિ અનંતતા જ



તથા—ક્ષેત્રતઃ સ્વલુ પશ્ચ ભરતાનિ, પશ્ચ ઐરવતાનિ પ્રતીત્ય, સાદિ સપર્યવ-  
સિતમ્ । તથાહિ—તેષુ ક્ષેત્રેષુ અવસર્પિણ્યાં સુષમદુઃષમાપર્યવસાને, ઉત્સર્પિણ્યાં તુ  
દુઃષમસુષમાપારમ્ભે તીર્થકરધર્મસંઘાનાં તત્પ્રથમતયોત્પત્તેઃ સાદિ ભવતિ, એકાન્તદુઃષ-  
માદૌકાલે ચ તદભાવાત્ સપર્યવસિતં—અન્તસહિતં ભવતિ । તથા—મહાવિદેહાન્  
પ્રતીત્ય અનાદ્યપર્યવસિતં, તત્ર પ્રવાહરૂપેણ તીર્થકરાદીનાં વ્યવચ્છેદાભાવાદિત્તિ ભાવઃ  
'મહાવિદેહાઈ' इत्यत्र सौत्रत्वान्नपुंसत्वम् ।

इस प्रकार से—भूत, भविष्यत् एवं वर्तमानकालमें कोई न कोई पुरुष  
इस सम्यक्श्रुत का धारक बना ही रहता है, अतः प्रवाहरूप से वर्तमान  
रहने के कारण काल की तरह यह अनादि अनंत रूप माना जाता है।  
इस तरह द्रव्य की अपेक्षा सम्यक्श्रुतमें कथंचित् सादि सांतता और  
कथंचित् अनादि अनंतता सूत्रकारने प्रकट की है ? ।

अब क्षेत्र की अपेक्षा वे इसे स्पष्ट करते हैं—पांच भरतक्षेत्र, एवं  
पांच ऐरवत क्षेत्रमें अवसर्पिणीकाल के सुषमदुष्षमा आरा के अन्तमें,  
तथा उत्सर्पिणी के दुष्षम सुषमा आरा के प्रारंभमें तीर्थकर, धर्म एवं  
संघ की सर्वप्रथम उत्पत्ति होती है, इस अपेक्षा यह सम्यक्श्रुत सादि  
है और एकान्ततः दुःखस्वरूप दुष्षमादि कालमें तीर्थकर आदिका सर्वथा  
अभाव हो जाता है इस कारण यह सम्यक्श्रुत—पर्यवसित—अन्त सहित  
भी है। तथा पांच महाविदेह क्षेत्रोंमें सदाचतुर्थकाल वर्तमान रहता है।  
इस अपेक्षा वहां तीर्थकर आदिका सदा सद्भाव माना गया है, इसलिये

આવે છે. તે આ પ્રકારે—ભૂત, ભવિષ્ય અને વર્તમાનકાળમાં કોઈને કોઈ પુરુષ  
આ સમ્યક્શ્રુતનો ધારક બની રહે છે જ, તેથી પ્રવાહરૂપે વર્તમાન રહેવાને  
કારણે કાળની જેમ તે અનાદિ અનંતરૂપ મનાય છે. આ રીતે દ્રવ્યની અપે-  
ક્ષાએ સમ્યક્શ્રુતમાં કંઈક સાદિ સાંતતા અને કંઈક અનાદિ અનંતતા સૂત્રકારે  
પ્રગટ કરી છે. ( ૧ )

હવે ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ તેને સ્પષ્ટ કરે છે—પાંચ ભરતક્ષેત્ર અને પાંચ  
ઐરવત ક્ષેત્રમાં અવસર્પિણીકાળના સુષમદુષ્ષમા આરાના અંતે, તથા ઉત્સર્પિ-  
ણીના દુષ્ષમ સુષમા આરાના પ્રારંભમાં તીર્થકર, ધર્મ અને સંઘની સર્વ પ્રથમ  
ઉત્પત્તિ થાય છે, તે અપેક્ષાએ આ સમ્યક્શ્રુત સાદિ છે. અને એકાન્તતઃ દુઃખ  
સ્વરૂપ દુષ્ષમાદિ કાળમાં તીર્થકર આદિનો સર્વથા અભાવ થઈ જાય છે. તે કારણે  
આ સમ્યક્શ્રુત—પર્યવસિત—અંત સહિત પણ છે, તથા પાંચ મહાવિદેહ ક્ષેત્રોમાં  
સદા ચતુર્થકાળ વર્તમાન રહે છે. એ અપેક્ષાએ ત્યાં તીર્થકર આદિનો સદા

કાલતઃ સ્વલુ ઉત્સર્પિણીમવસર્પિણીં ચ પ્રતીત્ય સાદિકમ્-આદિસહિતમ્-સપર્ય-  
વસિતમ્-અન્તસહિતં ભવતિ । તથાહિ-ઉત્સર્પિણ્યાં દ્વયોઃ સમયોઃ-દુઃષમસુષમા-સુષમ-  
દુઃષમા રૂપયોર્ભવતિ, ન પરતઃ । અવસર્પિણ્યાં તુ તિસૃજ્વેવ સમાસુ સુષમદુઃષમા-દુષમ-  
સુષમા દુષમારૂપાસુ ભવતિ તસ્માત્ સાદિ સપર્યવસિતમ્ । નો ઉત્સર્પિણીં નો અવસર્પિણીં  
ચ પ્રતીત્યાનાદિકમપર્યવસિતમ્ । મહાવિદેહેષુ હિ ઉત્સર્પિણીરૂપસ્તથાઽવસર્પિણી  
રૂપશ્ચકાલો નાસ્તિ, તત્ર ચ સદૈવાવસ્થિતં સમ્યક્શ્રુતમ્, તસ્માદનાઘપર્યવસિતમ્ ।

પ્રવાહરૂપ સે વહાં તીર્થકર આદિ કા અસ્તિત્વ હોને કે કારણ સમ્યક્શ્રુતમેં  
ઉસ અપેક્ષા અનાદિ અનંતતા ઘટિત હોતી હૈ ૨ ।

કાલ કી અપેક્ષા જબ સમ્યક્શ્રુતમેં સાદિ સાંતતા એવં અનાદિ-  
અનંતતા કા વિચાર કિયા જાતા હૈ, તો ફલિતાર્થ યહ નિકલતા હૈ કિ  
ઉત્સર્પિણી કાલકે દુષ્ષમ સુષમા તથા સુષમદુષમા, ઇન દો આરોં મેં  
હોતા હૈ, બાકી મેં નહીં । ઇસી તરહ અવસર્પિણી કે સુષમદુષ્ષમા, દુષ્ષમ-  
સુષમા, તથા દુષ્ષમા, ઇન ત્રીન આરોં મેં હોતા હૈ, અવશિષ્ટ આરોં મેં  
નહીં । ઇસ તરહ ઇન દોનોં ઉત્સર્પિણી ઓર અવસર્પિણી કાલ કી અપેક્ષા  
ઇસમેં સાદિ સાંતતા આતી હૈ । જહાં પર ઉત્સર્પિણી એવં અવસર્પિણી-  
રૂપ કાલ નહીં હૈ એસે મહાવિદેહ ક્ષેત્ર કી અપેક્ષા ઇસમેં સદા અવસ્થિત  
હોને કે કારણ ઇસકી અનાદિ અનંતતા માની જાતી હૈ । યહી વાત સૂત્ર-  
કાર “ નો ઉત્સર્પિણિં નો ઓ સર્પિણિં ચ પદુચ્ચ અણાદ્યં અપજ્જવસિયં ”

સદ્ભાવ માનવામાં આવ્યો છે, તે કારણે પ્રવાહરૂપે ત્યાં તીર્થકર આદિનું  
અસ્તિત્વ હોવાને કારણે સમ્યક્શ્રુતમાં તે અપેક્ષાએ અનાદિ અનંતતા ઘટાવી  
શકાય છે. ( ૨ )

કાળની અપેક્ષાએ જ્યારે સમ્યક્શ્રુતમાં સાદિ સાંતતા અને અનાદિ  
અનંતતાનો વિચાર કરવામાં આવે છે ત્યારે ફલિતાર્થ એ નિકળે છે કે ઉત્સ-  
ર્પિણી કાળના દુષ્ષમસુષમા તથા સુષમદુષમા, એ બે આરામાં થાય છે,  
બાકીનામાં નહીં. એ જ રીતે અવસર્પિણીના સુષમદુષ્ષમા, દુષ્ષમસુષમા, તથા  
દુષમા એ ત્રણે આરામાં થાય છે, બાકીના આરામાં નહીં. આ રીતે એ બન્ને  
ઉત્સર્પિણી અને અવસર્પિણીકાળની અપેક્ષાએ તેમાં સાદિ સાંતતા આવે છે.  
જ્યાં ઉત્સર્પિણી અને અવસર્પિણી રૂપકાળ કાળ નથી એવાં મહાવિદેહ ક્ષેત્રની  
અપેક્ષાએ તેમાં સદા અવસ્થિત હોવાને કારણે તેની અનાદિ અનંતતા મનાય  
છે. એજ વાત સૂત્રકાર “ નો ઉત્સર્પિણિં નો ઓ સર્પિણિં ચ પદુચ્ચ અણાદ્યં ”

ભાવતઃ સ્વલુ યે કેચિત્-પૂર્વાહ્લાદૌ જિનપ્રજ્ઞતા ભાવાઃ=જીવાદયઃ પદાર્થાઃ, આરુચ્યાયન્તે-સામાન્યરૂપતયા, વિશેષરૂપતયા વા દેશનારૂપેણ કથ્યન્તે इत्यर्थः । પ્રજ્ઞાપ્યન્તે-ભેદકથનેનારુચ્યાયન્તે, પ્રરૂપ્યન્તે-ભેદાનાં સ્વરૂપકથનેન પ્રરુચ્યાયન્તે । તથા-દર્શ્યન્તે-ઉપમાનમાત્રપ્રદર્શનેન પ્રકટીક્રિયન્તે, યથા 'ગૌરિવ ગવયઃ' इत्यादि । નિદર્શ્યન્તે-હેતુદૃષ્ટાન્તોપદર્શનેન સ્પષ્ટતરી ક્રિયન્તે । ઉપદર્શ્યન્તે-ઉપનય-નિગમનાભ્યાં નિઃશંકું શિષ્યબુદ્ધૌ સ્થાપ્યન્તે । તાન્ ભાવાન્ તદા-તસ્મિન્કાલે, પ્રતીત્ય સાદિ સપર્યવસિતમ્, પ્રજ્ઞાપકોપયોગસ્વરપ્રયત્નાસનભેદાત્ પ્રતિસમયમન્યથા ચાન્યથા ચ ભવનાદિતિ ભાવઃ । ક્ષાયોપશમિકં ભાવં પુનઃ પ્રતીત્ય અનાગ્રપર્યવસિ-  
 “ નો ઉત્સર્પિણીં નો અવસર્પિણીં ચ પ્રતીત્ય અનાદિકમ્ અપર્યવસિતમ્ ”  
 इन पदों द्वारा प्रकट की है ।

ભાવની અપેક્ષા સાદિ સાંતતા તથા અનાદિ અનંતતા યહાં ઇસ પ્રકાર આતી હૈ કિ જો પરંપરારૂપ સે જિન દેવોં દ્વારા પ્રજ્ઞસ જીવાદિક પદાર્થ વિવક્ષિત કિસી તીર્થંકર આદિ દ્વારા પૂર્વાહ્લ આદિ જિસ સમય મેં સામાન્ય વિશેષરૂપ સે કથિત કિયે જાતે હૈં, ભેદકથનપૂર્વક સમજાયે જાતે હૈં, ભેદોં કા સ્વરૂપ સ્પષ્ટ કરતે હુએ બતલાયે જાતે હૈં, તથા ઉપમાન ઉપમેય ભાવપુરસ્સર સ્પષ્ટરૂપ સે જ્વલકા દિયે જાતે હૈં, ઓર હેતુ, દૃષ્ટાન્ત દ્વારા સમર્થિત કિયે જાતે હૈં, તથા ઉપનય એવં નિગમન દ્વારા શિષ્ય કી બુદ્ધિ મેં દૃઢતરરૂપ સે સ્થાપિત કર દિયે જાતે હૈં ઉસ સમય ઉન પદાર્થોં કી પ્રરૂપણા કરનેમેં પ્રજ્ઞાપક કે ઉપયોગ, સ્વર, પ્રયત્ન, એવં આસન આદિ ભાવોમેં ભેદ આજાને કે કારણ તથા પ્રતિસમયમેં ઉન પ-

अपज्जवसियं ( नो उत्सर्पिणी नो अवसर्पिणीं च प्रतीत्य अनादिकम् अपर्यवसितम् ”)  
 આ પદો દ્વારા પ્રગટ કરી છે.

ભાવની અપેક્ષાએ સાદિ સાંતતા તથા અનાદિ અનંતતા અહીં આ રીતે આવે છે કે જે પરંપરારૂપે જિનદેવો દ્વારા પ્રજ્ઞસ જીવાદિક પદાર્થ વિવક્ષિત કોઈ તીર્થંકર આદિ દ્વારા પૂર્વાહ્લ આદિ જે સમયમાં સામાન્ય વિશેષરૂપ કહેવાય છે, ભેદકથન સહિત સમજાવાય છે, ભેદોનું સ્પષ્ટ કરીને બતાવાય છે, તથા ઉપમાન ઉપમેય ભાવપૂર્વક સ્પષ્ટરૂપે પ્રકાશિત કરાય છે, અને હેતુ, દૃષ્ટાંત દ્વારા સમર્થિત કરાય છે, તથા ઉપનય અને નિગમન દ્વારા શિષ્યની બુદ્ધિમાં દૃઢતર રીતે ઠસાવવામાં આવે છે ત્યારે તે પદાર્થોની પ્રરૂપણા કરવામાં પ્રજ્ઞાપકના ઉપયોગ, સ્વર, પ્રયત્ન અને આસન આદિ ભાવોમાં ભેદ આવી જવાને કારણે તથા પ્રતિસમય એ પદાર્થોમાં પણ પરિવર્તન થતું રહેતું હોવાથી

તમ્ , પ્રવાહરૂપેણ ક્ષાયોપશમિકભાવસ્ય અનાદ્યપર્યવસિતત્વાત્ । યદ્વા-અત્ર ચતુર્ભક્તિકા-સાદિસપર્યવસિતં ૧, સાદ્યપર્યવસિતં ૨, અનાદિસપર્યવસિતમ્ ૩, અનાદ્યપર્યવસિતમ્ ૪ । તત્ર પ્રથમભક્ત્યપ્રદર્શનાયાહ—‘ અહવા૦ ’ ઇત્યાદિ । અથવા-ભવસિદ્ધિકસ્ય=ભવ-સિદ્ધિકો ભવ્યસ્તસ્ય શ્રુતં=સમ્યક્શ્રુતં સાદિકં સપર્યવસિતં ચ, સમ્યક્ત્વલાભે તદુત્પત્તેઃ, પુનર્મિથ્યાત્વપ્રાપ્તૌ કેવલોત્પત્તૌ વા તદ્વિનાશાત્ । દ્વિતીયસ્તુ ભક્તિઃશૂન્યઃ,

દાર્થોમેં મી પરિવર્તન હોતા રહને કે કારણ સમ્યક્શ્રુતમેં સાદિ સાંતતા હોતી હૈ, ઓર પ્રવાહરૂપ સે અનાદિ ઓર અપર્યવસિતરૂપ ક્ષાયોપશમિક ભાવ કો લેકર સમ્યક્શ્રુતમેં અનાદિ અનંતતા હોતી હૈ । અથવા યહાં ચતુર્ભક્તી મી બનતી હૈ, જો ઇસ પ્રકાર સે હૈ-૧ સાદિસાંત, ૨ સાદિ અનંત, ૩ આનાદિ સાંત તથા ૪ અનાદિ અનંત । પ્રથમ ભંગ કિસ પ્રકાર ઘટિત હોતા હૈ યહ સૂત્રકાર કહતે હૈ-‘અહવા૦’ ઇત્યાદિ । જો જીવ ભવસિદ્ધિક ( એક ભવસે અથવા અનેક ભવો સે સિદ્ધિકો પ્રાપ્ત કરનેવાલા ) હૈ ડસમેં સમ્યક્શ્રુત કી ઉત્પત્તિ સમ્યક્ત્વ કે લાભ હોને પર હોતી હૈ, ઇસ અપેક્ષા સમ્યક્શ્રુત કી પ્રારંભતા વહાં આતી હૈ, તથા જલ્લ વહ મિથ્યાત્વ-દશામેં આ જાતા હૈ, અથવા કેવલજ્ઞાન કી ઉત્પત્તિ સે વિશિષ્ટ બન જાતા હૈ તો ઇસ અવસ્થામેં સમ્યક્શ્રુત વહાં નહીં રહતા-ડસકા ડસમેં અભાવ હો જાતા હૈ, ઇસલિયે ઇસ રૂપસે સમ્યક્શ્રુત કા વહાં અંત માન લિયા જાતા હૈ । યહ પ્રથમ ભંગ હૈ ૧ । દ્વિતીયભંગ શૂન્ય હૈ, કારણ વાહે મિથ્યા-

સમ્યક્શ્રુતમાં સાદિ સાંતતા હોય છે, અને પ્રવાહરૂપે અનાદિ અને અપર્યવસિત રૂપ ક્ષાયોપશમિક ભાવને લીધે સમ્યક્શ્રુતમાં અનાદિ અનંતતા હોય છે. અથવા અહીં ચતુર્ભક્તી પણ બને છે જે આ પ્રમાણે છે—(૧) સાદિ સાંત (૨) સાદિ અનંત (૩) અનાદિ સાંત તથા (૪) અનાદિ અનંત. પ્રથમ ભંગ કેવી રીતે ઘટિત થાય છે તે સૂત્રકાર કહે છે—“અહવા૦” ઇત્યાદિ

જે જીવ ભવસિદ્ધિક ( એક ભવે અથવા અનેક ભવે સિદ્ધિને પ્રાપ્ત કરનાર ) છે તેનામાં સમ્યક્શ્રુતની ઉત્પત્તિ સમ્યક્ત્વનો લાભ થતા થાય છે, એ અપેક્ષાએ સમ્યક્શ્રુતની પ્રારંભતા ત્યાં આવે છે, તથા ન્યારે તે મિથ્યાત્વ દશામાં આવી જાય છે, અથવા કેવલજ્ઞાનની ઉત્પત્તિથી વિશિષ્ટ બની જાય છે ત્યારે એ અવસ્થામાં ત્યાં સમ્યક્શ્રુત રહેતું નથી, તેનો તેનામાં અભાવ થઈ જાય છે, તે કારણે તે રૂપે સમ્યક્શ્રુતનો ત્યાં અંત માની લેવાય છે. આ પહેલો ભંગ છે. ( ૧ )

નહિ સમ્યક્શ્રુતં મિથ્યાશ્રુતં વા સાદિ ભૂત્વા અપર્યવસિતં સંભવતિ, મિથ્યાત્વપ્રાપ્તૌ કેવલોત્પત્તૌ વા નિયમેન સમ્યક્શ્રુતસ્ય વિનાશાત્ । મિથ્યાશ્રુતસ્યાપિ ચ સાદેરવશ્યં કાલાન્તરે સમ્યક્ત્વ પ્રાપ્તૌ તસ્ય પર્યવસિતત્વાત્ । તૃતીયભંગસ્તુ મિથ્યાશ્રુતાપેક્ષ્યા-વોદ્યઃ—ભવ્યસ્યાનાદિમિથ્યાદૃષ્ટેર્મિથ્યાશ્રુતમનાદિ ભવતિ, સમ્યક્ત્વ પ્રાપ્તૌ ચ તદપયાતીતિ સપર્યવસિતં ભવતિ । અથ ચતુર્થભંગમુદર્શયતિ—‘અભવસિદ્ધિયસ્સ૦’ इत्यादि । अभवसिद्धिकस्य=अभवसिद्धिकोऽभव्यस्तस्य श्रुतं—मिथ्याश्रुतम्, अना-

શ્રુત હો યા સમ્યક્શ્રુત હો, એસા કોઈ મી શ્રુત નહીં હૈ જો સાદિ હોકર અપર્યવસિત હો જાય । સમ્યક્શ્રુત મિથ્યાત્વ કી પ્રાપ્તિ હોને પર, અથવા કેવલજ્ઞાન કી ઉત્પત્તિ હોને પર નિયમ સે નષ્ટ હો જાતા હૈ । મિથ્યાશ્રુત મી જીવ કો જબ સમ્યક્શ્રુત પ્રાપ્ત હો જાતા હૈ તબ ચલા જાતા હૈ ૨ । તૃતીયભંગ મિથ્યાશ્રુત કી અપેક્ષા જાનનાં ચાહિયે, જેસે કોઈ અનાદિ મિથ્યાદૃષ્ટિ ભવ્યજીવ કો જવતક સમ્યક્ત્વ કા લાભ નહીં હુઆ હૈ તબ-તક ઉસકે સાથ લગા હુઆ મિથ્યાશ્રુત અનાદિ હી માના ગયા હૈ, પરંતુ જ્યોં હી ઇસ આત્મા કે સમકિત હો જાતા હૈ તો વહ મિથ્યાશ્રુત નષ્ટ હો જાતા હૈ । ઇસ અપેક્ષા અનાદિ સાંત યહ તૃતીય ભંગ થન જાતા હૈ ૩ । અવ ચતુર્થભંગ કહતે હૈ—‘અભવસિદ્ધિયસ્સ૦’ इत्यादि । जो अभव्य जीव हुआ करते हैं उनका मिथ्याश्रुत अनादि अनंत हुआ करता है, कारण-इन अभव्य जीवोंमें किसी भी समयमें सम्यक्त्व आदि गुणों का लाभ नहीं होता है अतः इस अपेक्षा मिथ्याश्रुत की इनमें अनादिताके साथ २

ખીલે ભંગ શૂન્ય છે, કારણ કે ભલે મિથ્યાશ્રુત હોય કે સમ્યક્શ્રુત હોય, પણ એવું કોઈ શ્રુત નથી જે સાદિ હોવા છતાં અપર્યવસિત થઈ જાય. સમ્યક્શ્રુત મિથ્યાત્વની પ્રાપ્તિ થતાં, અથવા કેવળજ્ઞાન પેદા થતાં નિયમથી જ નાશ પામે છે. જ્યારે જીવને સમ્યક્શ્રુત પ્રાપ્ત થાય છે ત્યારે મિથ્યાશ્રુત પણ વાદ્યુ જાય છે. (૨) ત્રીજો ભંગ મિથ્યાશ્રુતની અપેક્ષાએ સમજવો, જેમકે કોઈ અનાદિ મિથ્યાદૃષ્ટિ ભવ્ય જીવને જ્યાં સુધી સમ્યક્ત્વનો લાભ થયો નથી ત્યાં સુધી તેને લાગેલું મિથ્યાશ્રુત અનાદિ જ માનવામાં આવ્યું છે, પણ જેવું તે આત્માને સમકિત પ્રાપ્ત થાય છે કે તરત જ તે મિથ્યાશ્રુત નાશ પામે છે. તે અપેક્ષાએ એ ત્રીજો ભંગ અનાદિ સાંત બની જાય છે. (૩) હવે ચોથો ભંગ કહે છે—“અભવસિદ્ધિયસ્સ૦” इत्यादि. જે અભવ્યજીવ હોય છે તેમનું મિથ્યા-શ્રુત અનાદિ અનંત હોય છે; કારણ કે તે અભવ્ય જીવોમાં કોઈ પણ સમયે સમ્યક્ત્વ આદિ ગુણોનો લાભ થતો નથી. તેથી તે અપેક્ષાએ તેમનામાં મિથ્યાશ્રુતની

ધર્પર્યવસિતં તસ્ય સદૈવ સમ્યક્ત્વાદિગુણહીનત્વાત્ । एषा चतुर्भङ्गिका यथा श्रुतस्यो-  
क्ता, तथा मतेरपि द्रष्टव्या, मतिश्रुतयोरन्यानुगतत्वात्, परंत्विह श्रुतमेव प्रकान्तं,  
ततस्तस्यैव चतुर्भङ्गी प्रदर्शिता ।

નનુ તૃતીયભંગે ચતુર્થભંગે વા શ્રુતસ્યાનાદિભાવ ઉક્તઃ સ ચ કિં જઘન્યઃ, ઉત  
મધ્યમઃ, આહોશ્વિત્ ઉત્કૃષ્ટઃ ? इति ।

ઉચ્યતે—જઘન્યો મધ્યમો વા નતૂત્કૃષ્ટઃ, યતસ્તસ્યેદં માનમિત્યાહ—  
सव्वागासपएसर्गं सव्वागासपएसेहिं अणंतगुणिय पञ्जवग्गक्खरं निप्फज्जइ” इति  
सर्वाकाशप्रदेशाग्रं=सर्वं च तत् आकाशं च सर्वाकाशं—लोकालोकाकाशमित्यर्थः तस्य

અનંતતા ખી સુઘટિત હો જાતી હૈ ૪ । यह चतुर्भङ्गी जिस प्रकार सामा-  
न्यरूप से श्रुतमें घटितकर बतलाई गई है उसी प्रकार से मतिज्ञानमें भी  
घटित कर लेना चाहिये, कारण मति और श्रुत ये दोनों साथ २ ही जीवोंमें  
रहते हैं परन्तु फिर भी यहां पर श्रुतज्ञान का प्रकरण चल रहा है अतः  
उसोमें यह चतुर्भङ्गी प्रदर्शित करनेमें आई हैं ।

यहां कोई शंका करता है—तृतीयभंगमें अथवा चतुर्थभंगमें श्रुतमें  
जो अनादिता प्रकट करनेमें आई है वह जघन्यरूप से है या मध्यमरूप  
से है अथवा उत्कृष्ट रूप से है ?

उत्तर—श्रुतकी अनादिता उत्कृष्टरूप से नहीं है किन्तु वह जघन्य  
एवं मध्यमरूप से है, क्योंकि इसका मान इस प्रकार है—

“सव्वागासपएसर्गं सव्वागासपएसेहिं अणंतगुणियं पञ्जवग्गक्खरं  
निप्फज्जइ” तात्पर्य यह है कि सर्वाकाश से लोकाकाश और अलोका-

અનાદિતાની સાથે સાથે અનંતતા પણ સુઘટિત થઈ જાય છે. (૪) આ ચતુ-  
ર્ભંગી જે પ્રકારે સામાન્યરૂપે શ્રુતમાં ઘટિત કરી બતાવાઈ છે એજ પ્રકારે મતિ-  
જ્ઞાનમાં પણ ઘટિત કરી દેવી, કારણ કે જીવોમાં મતિ અને શ્રુત સાથે જ રહે  
છે, છતાં પણ અહીં શ્રુતજ્ઞાનનું પ્રકરણ ચાલે છે તેથી તેમાં જ આ ચતુર્ભંગી  
દર્શાવવામાં આવી છે.

અહીં કોઈ શંકા કરે છે કે—તૃતીયભંગમાં અને ચતુર્થભંગમાં શ્રુતમાં જે  
અનાદિતા પ્રગટ કરવામાં આવી છે, તે જઘન્યરૂપે છે કે મધ્યમરૂપે છે કે  
ઉત્કૃષ્ટરૂપે છે ?

ઉત્તર—શ્રુતની અનાદિતા ઉત્કૃષ્ટરૂપે નથી પણ તે જઘન્ય અને મધ્યમ  
રૂપે છે, કારણ કે તેનું માન (પ્રમાણ) આ પ્રમાણે છે—

“સવ્વાગાસપેસર્ગં સવ્વાગાસપેસેહિં અણંતગુણિય પજ્જવગ્ગક્ખરં  
નિપ્ફજ્જઈ” તાત્પર્ય એ છે કે સર્વાકાશથી લોકાકાશ અને અવલોકાકાશ, એ બંનેને



પ્રદેશાઃ=નિર્વિભાગા ભાગાઃ, સર્વાકાશપ્રદેશાસ્તેષામગ્રં-પરિમાણં, સર્વાકાશપ્રદેશૈઃ, અનન્તગુણિતમ્-અનન્તશોગુણિતમ્, એકૈકસ્મિન્નાકાશપ્રદેશેઽનન્તાગુરુલઘુપર્યાયમા-વાત્, પર્યાયાગ્રાક્ષરં=પર્યાયપરિમાણામ્-અક્ષરં-નિષ્પદ્યતે સર્વદ્રવ્યપર્યાયપરિમાણં ભવતીત્યર્થઃ । इदमत्र बोध्यम्-सर्वाकाशप्रदेशपरिमाणं सर्वाकाशप्रदेशैरनन्तशोगुणितं यावत् परिमाणं भवति, तावत् परिमाणं सर्वाकाशप्रदेशपर्यायाणामग्रं-परिमाणं भवति । एकैकस्मिन् आकाशप्रदेशे यावन्तोऽगुरुलघुपर्यायास्ते सर्वेऽपि एकत्र पि-ण्डिता यावन्तो भवेयुः, एतावत्प्रमाणं चाक्षरं भवति । इह स्तोकत्वाद् धर्मास्तिका-यादयः साक्षात् सूत्रे नोक्ताः । अर्थतस्तु तेऽपि गृहीता एव । अयमर्थः-सर्वद्रव्यप्र-

કાશ, इन दोनों का ग्रहण हुआ है । इस सर्वाकाश के जो निर्विभाग भाग हैं उनका नाम प्रदेश है । इन प्रदेशों के परिमाण का नाम अग्र है । इस तरह 'सर्वाकाश प्रदेशाग्रम्' इस पदका "समस्त आकाशके प्रदेशों का परिमाण" ऐसा वाच्यार्थ होता है । यह समस्त आकाश के प्रदेशोंका परिमाण समस्त आकाश के प्रदेशों से अनन्तगुणित करने पर पर्यायाग्राक्षर-पर्यायपरिमाण अक्षर निष्पन्न होता है, कारण एक २ आकाश के प्रदेश पर अनन्त २ अगुरुलघु पर्यायों का सङ्भाव माना गया है । इस तरह समस्त आकाश के प्रदेशोंकी पर्यायों का यह परिमाण निकल आता है । और इतना ही प्रमाण अक्षर का बतलाया गया है । तात्पर्य इसका यह है कि एक २ आकाश के प्रदेश ऊपर जितनी भी अगुरुलघु पर्याये हैं वे सब एकत्र जोड़ली जाने पर जितना उनका प्रमाण आवे उतना ही प्रमाण अक्षर का है । यद्यपि सूत्रमें सूत्रकारने आकाश

અહીં કહેલ છે. આ સર્વાકાશના જે નિર્વિભાગ ભાગ છે તેમનું નામ પ્રદેશ છે. એ પ્રદેશોના પરિમાણનું નામ અગ્ર છે. આ રીતે "સર્વાકાશ પ્રદેશાગ્રમ્" આ પદનો "સમસ્ત આકાશના પ્રદેશોનો પરિમાણ" એવો વાચ્યાર્થ થાય છે. આ સમસ્ત આકાશના પ્રદેશોનો પરિમાણ સમસ્ત આકાશના પ્રદેશોથી અનંત ગણી કરતા પર્યાયાગ્રાક્ષર-પર્યાયપરિમાણ અક્ષર નિષ્પન્ન થાય છે, કારણ કે એક એક આકાશના પ્રદેશ પર અનંત અનંત અગરુલઘુ પર્યાયોનો સંભાવ માનવામાં આવ્યો છે. આ રીતે સમસ્ત આકાશના પ્રદેશોની પર્યાયોનું આ પરિમાણ નીકળે છે. અને એટલું જ પ્રમાણ અક્ષરનું બતાવવામાં આવ્યું છે. તેનું તાત્પર્ય એ છે કે એક એક આકાશના પ્રદેશ ઉપર જેટલી અગરુલઘુ પર્યાયો છે તે બધી એકઠી કરતાં જેટલું તેમનું પ્રમાણ આવે એટલું જ પ્રમાણ અક્ષરનું છે.

દેશાગ્રં સર્વદ્રવ્યપ્રદેશૈરનન્તશોગુણિતં યાવત્ પરિમાણં ભવતિ તાવત્ પરિમાણં સર્વદ્રવ્ય-  
પર્યાય પરિમાણં, એતાવત્ પરિમાણં ચાક્ષરં ભવતિ । તદપિ ચાક્ષરં દ્વિધા-જ્ઞાનમ્,  
અકારાદિ વર્ણજાતં ચ । ઉભયત્રાપ્યર્થેપ્યક્ષરશબ્દપ્રવૃત્તેરૂઢત્વાત્, દ્વિવિધમપિ ચેહ  
ગૃહ્યતે વિરોધાભાવાત્, ઇતિ ।

નનુ સર્વદ્રવ્યપર્યાયપરિમાણમક્ષરં ભવતીત્યુક્તં, તત્રાક્ષરશબ્દેન જ્ઞાનમકારાદિ વ-  
ર્ણજાતં ચેત્યુભયં ગૃહ્યતે ઇતિ યદુક્તં તન્નોપપદ્યતે, તથાહિ-યદ્યપિ જ્ઞાનં સર્વદ્રવ્યપર્યાય  
પદકા હી સાક્ષાત્ ઉપાદાન ક્રિયા હૈ-ધર્માસ્તિકાય આદિકા નહીં. સો  
હસકા કારણ યહ હૈ કિ યે આકાશ કો અપેક્ષા સ્તોક હૈં, પરન્તુ અર્થતઃ  
સૂત્રકારને ધર્માસ્તિકાય આદિ કા મી ગ્રહણ ક્રિયા હી હૈ । હસ અપેક્ષા  
અર્થ કી સંગતિ હસ પ્રકાર હોતી હૈ-સમસ્ત દ્રવ્યોં કે પ્રદેશોં કા પરિ-  
માણ ઉનકે સમસ્ત પ્રદેશોં સે અનંતગુણિત હૈ, ઓર હતના હી પરિમાણ  
ઉન સમસ્ત દ્રવ્યોંકો પર્યાયોં કા આતા હૈ । હસ તરહ સમસ્ત દ્રવ્યોંકી  
જિતની પર્યાયેં હૈં ઉતના પ્રમાણ એક અક્ષર કા ચતલાયા ગયા હૈં । યદ્યપિ  
સમસ્ત દ્રવ્યોં કા પર્યાય પ્રમાણ એક અક્ષર કા પ્રમાણ કહા ગયા હૈ, ફિર  
મી જ્ઞાન ઓર અકાર આદિ વર્ણ સમૂહ કે ભેદ સે અક્ષર દો પ્રકાર કા  
મી કહા હૈ । અક્ષર કે યે દોનોં હી પ્રકાર યહાં ગૃહીત હુએ હૈં । હસમેં  
કોઈ વિરોધ નહીં આતા હૈ ।

શંકા—જ્ઞાન ઓર અકાર આદિવર્ણ કે ભેદ સે જોં આપને અક્ષર

જો કે સૂત્રકારે સૂત્રમાં આકાશપદનું જ પ્રત્યક્ષ ઉપાદાન કર્યું છે, ધર્માસ્તિકાય  
આદિનું નહીં તો તેનું કારણ એ છે કે તેઓ આકાશની અપેક્ષાએ સૂક્ષ્મ છે,  
પણ અર્થતઃ સૂત્રકારે ધર્માસ્તિકાય આદિને પણ ગ્રહણ કરેલ છે. એ અપેક્ષાએ  
અર્થની સંગતતા આ પ્રમાણે થાય છે-સમસ્ત દ્રવ્યોના પ્રદેશોનું પરિમાણ  
તેમના સમસ્ત પ્રદેશોથી અનંતગણું છે, અને એટલું જ પરિમાણ તે સમસ્ત  
દ્રવ્યોની પ્રયાયોનું આવે છે. આ રીતે સમસ્ત દ્રવ્યોની જેટલી પર્યાયો છે  
એટલું પ્રમાણ એક અક્ષરનું બતાવવામાં આવ્યું છે. જો કે સમસ્ત દ્રવ્યોનું  
પર્યાય પ્રમાણ એક અક્ષરનું પ્રમાણ કહેવામાં આવ્યું છે તો પણ જ્ઞાન અને  
અકાર આદિ વર્ણસમૂહના ભેદથી અક્ષર બે પ્રકારના કહ્યા છે. અક્ષરના એ  
બન્ને પ્રકાર અહીં ગ્રહણ કરવામાં આવ્યા છે. તેમાં કોઈ વિરોધ આવતો નથી.

શંકા—જ્ઞાન અને અકાર આદિ વર્ણના ભેદથી આપે બે અક્ષર શબ્દ

પરિમાણં સંભવતિ, યતો જ્ઞાનમિહાવિશેષોક્ત્યા સર્વદ્રવ્યપર્યાયપરિમાણતુલ્યતામિ-  
ધાનાત્ પ્રક્રમાદ્ વા કેવલજ્ઞાનં ગ્રહીષ્યતે, તચ્ચ સર્વદ્રવ્યપર્યાયપરિમાણં ઘટતે એવં ।  
તથાહિ=યાવન્તો જગતિ રૂપિ દ્રવ્યાણામરૂપિ દ્રવ્યાણાં વા યે ગુરુલઘુપર્યાયાસ્તાન્  
સર્વાનપિ ભગવાન્ સાક્ષાત્ કરતલકલિતમુક્તાફલમિવ કેવલાલોકેન પ્રતિક્ષણમવલો-  
કતે । યેન સ્વભાવેનૈકં પર્યાયં જાનાતિ, તે નૈવ સ્વભાવેન પર્યાયાન્તરં ન જાનાતિ  
તયોઃ પર્યાયયોરેકત્વપ્રસક્તેઃ તથાહિ-ઘટપર્યાયપરિચ્છેદન સ્વભાવં યદ્ જ્ઞાનં, તદ્

શબ્દ દ્વારા દ્વિવિધ અક્ષર કા સૂત્રમેં ગ્રહણ હુઆ વતલાયા હૈ સો યહ વાત  
સમજ્ઞમેં નહીં આતી, કારણ અકારાદિ અક્ષરમેં સર્વદ્રવ્ય પર્યાયપ્રમાણતા  
કા વિરોધ આતા હૈ । જ્ઞાનમેં યહ વાત ઘટ સકતી હૈ, કારણ જ્ઞાન સે  
અન્ય મતિ આદિ જ્ઞાનોં કા ગ્રહણ ન હોકર પ્રકરણવશ કેવલજ્ઞાન કા  
હી જબ ગ્રહણ હોગા તો ઉસ અપેક્ષા ઉસમેં યહ સર્વે દ્રવ્યપર્યાય પ્રમા-  
ણતા ઘટિત હોનેમેં કોઈ વાધા નહીં આતી હૈ, કારણ-જગતમેં રૂપિદ્રવ્યોં  
કી તથા અરૂપીદ્રવ્યોં કી જિતની બી ગુરુલઘુપર્યાયેં એવં અગુરુલઘુપર્યાયેં  
હૈં ઉન સવ કો કેવલજ્ઞાની ભગવાન્ સાક્ષાત્ કરતલ મેં રખે હુએ મોતી  
કે સમાન કેવલજ્ઞાનરૂપ આલોક સે પ્રતિક્ષણ જાનતે ઓર દેખતે હૈં ।  
અવ ઇસ કેવલજ્ઞાનરૂપ આલોક મેં સર્વદ્રવ્ય પર્યાય પ્રમાણતા ઇસ પ્રકાર  
ઘટ જાતી હૈ કિ પ્રભુ જબ જિસ સ્વભાવ સે એક પર્યાય કો-જાનતે હૈં  
ઉસી સ્વભાવ સે દૂસરી પર્યાય કો નહીં જાનતે હૈં, કિન્તુ ઉસ સમય

દ્વારા દ્વિવિધ અક્ષરનું સૂત્રમાં ગ્રહણ થયેલ દર્શાવ્યું છે. એ વાત સમજવામાં  
આવતી નથી, કારણ કે અકાર આદિ અક્ષરમાં સર્વદ્રવ્ય પર્યાય પ્રમાણતાનો  
વિરોધ નહોતો છે. જ્ઞાનમાં એ વાત બંધબેસતી થતી નથી કારણ કે જ્ઞાનથી  
અન્ય મતિ આદિ જ્ઞાનોનું ગ્રહણ ન થતા પ્રકરણવશ કેવળજ્ઞાનનું જ નો ગ્રહણ  
થશે તો તે અપેક્ષાએ આ સર્વદ્રવ્ય પર્યાય પ્રમાણતા ઘટાવવામાં કોઈ મુશ્કેલી  
નહોતી નથી, કારણ કે જગતમાં રૂપીદ્રવ્યોની તથા અરૂપીદ્રવ્યોની જેટલી ગુરુ  
લઘુ પર્યાયો અને અગુરુલઘુ પર્યાયો છે તે બધીને કેવળજ્ઞાની ભગવાન પ્રત્યક્ષ  
હોયેલીમાં રાખેલ મોતી સમાન કેવળજ્ઞાનરૂપ આલોકથી પ્રતિક્ષણ બાંધે  
અને દેખે છે. હવે તે કેવળજ્ઞાનરૂપ આલોકથી પ્રતિક્ષણ બાંધે અને દેખે  
છે. હવે તે કેવળજ્ઞાનરૂપ આલોકમાં સર્વદ્રવ્ય પર્યાય પ્રમાણતા આ પ્રકારે  
ઘટિત થાય છે કે પ્રભુ જ્યારે જે સ્વભાવથી એક પર્યાયને બાંધે છે એજ  
સ્વભાવથી બીજી પર્યાયને બાંધતા નથી, પણ ત્યારે તેને બાંધવામાં ભિન્ન

યદા પટપર્યાયપરિચ્છેદનં કુર્યાત્, તદા પટપર્યાયસ્યાપિ ઘટપર્યાયરૂપતાપત્તિઃ સ્યાત્  
અન્યથા-તસ્ય તત્પરિચ્છેદકત્વાનુપપત્તેઃ, તથારૂપસ્વભાવાત્ । તતો યાવન્તઃ પરિ-  
ચ્છેદ્યાઃ પર્યાયાસ્તાવન્તઃ પરિચ્છેદકાજ્ઞાનપર્યાયાસ્તસ્ય કેવલજ્ઞાનસ્ય સ્વભાવા  
વિજ્ઞેયાઃ । સ્વભાવાશ્ચ પર્યાયાઃ । તસ્માત્ પર્યાયાનધિકૃત્ય સર્વદ્રવ્યપર્યાયપરિમાણં  
જ્ઞાનમુપપદ્યતે, પરં તુ યદકારાદિકં વર્ણજાતં તત્ કથં સર્વદ્રવ્યપર્યાયપરિમાણં ભવિ-  
તુમર્હતિ, વર્ણપર્યાયરાશેઃ સર્વદ્રવ્યપર્યાયાણામનન્તતમે ભાગે વર્તમાનત્વાદિતિ ચેત્ ?,

ઉસકો જાનને મેં ભિન્ન સ્વભાવતા આજાતી હૈ । યદિ એસા નહીં માના  
જાતા હૈ તો ફિર એક સ્વભાવાધિગત હોને સે ડન દોનોં મેં એકત્વાપત્તિ  
કા પ્રસંગ હોગા । ઘટ પ્રર્યાય કો જાનને કે સ્વભાવવાલા વહ જ્ઞાન ડસી  
સ્વભાવ દ્વારા યદિ પટપર્યાય કો જાનેગા તો પટપર્યાય મેં ઘટપર્યાયરૂપતા  
કે આને મેં બાધક હી કૌન હો સકતા હૈ । યદિ એસા નહીં હોગા તો ફિર  
ડસકે દ્વારા પટપર્યાય કા અધિગમ હો હી નહીં સકેગા, ડસલિયે યહ  
અવશ્ય માનના પડતા હૈ કિ જગત મેં જિતને પરિચ્છેદ્ય-પદાર્થ હૈ-પર્યાયે  
હૈ-ડતની હી ડન્હે જાનને વાલી ડસ જ્ઞાન કી પર્યાયે હૈ । યે સમસ્તપર્યા-  
યે ડસ કેવલજ્ઞાન કી સ્વભાવભૂત પર્યાયે હૈ । ડસલિયે પર્યાયોં કી અપેક્ષા  
સમસ્તદ્રવ્યોં કી પર્યાયોં કે પ્રમાણાનુસાર જ્ઞાનમેં સર્વદ્રવ્ય પર્યાય પ્રમાણતા  
આજાતી હૈ । પરન્તુ જો અકાર આદિ વર્ણ સસૂહ હૈ ડસમેં સર્વદ્રવ્ય  
પર્યાય પ્રમાણતા કૈસે આ સકતી હૈ, કારણ જો વર્ણ પર્યાયરાશિ હૈ વહ  
સર્વદ્રવ્યપર્યાયોં કે અનંતતમભાગમેં વર્તમાન કહી ગઈ હૈ ।

સ્વભાવતા આવી જાય છે. જે એમ માનવામાં ન આવે તો એક સ્વભાવા  
ધિગત હોવાથી તે બંનેમાં એકત્વ આપત્તિનો પ્રસંગ આવશે. ઘટ પર્યાયને  
જાણવાના સ્વભાવવાળો તે જ્ઞાની એજ સ્વભાવ દ્વારા જે પટ પર્યાયને જાણશે  
પટ પર્યાયમાં ઘટ પર્યાયરૂપતા આવવામાં બાધક જ કોણ થઈ શકે છે. જે એમ  
ન થાય તો પછી તેના દ્વારા પટપર્યાયની સમજણ પડી જ ન શકે, તે કારણે  
એ અવશ્ય માનવું પડે છે કે જગતમાં જેટલા પરિચ્છેદ્ય-પદાર્થ છે-પર્યાયો છે.  
એટલી જ તેને જાણનારી તે જ્ઞાનની પર્યાયો છે. એ સમસ્ત પર્યાયો તે કેવળ-  
જ્ઞાનની સ્વભાવભૂત પર્યાયો છે. તેથી પર્યાયોની અપેક્ષાએ સમસ્ત દ્રવ્યોની  
પર્યાયોના પ્રમાણાનુસાર જ્ઞાનમાં સર્વદ્રવ્ય પર્યાય પ્રમાણતા આવી જાય છે પણ  
જે અકાર આદિ વર્ણસમૂહ છે તેમાં સર્વદ્રવ્ય પર્યાય પ્રમાણતા કેવી રીતે આવી  
શકે છે, કારણ કે જે વર્ણપર્યાય રાશિ છે તે સર્વદ્રવ્ય પર્યાયોના અનંતતમ  
ભાગમાં વર્તમાન કહેવામાં આવી છે.

ઉચ્યતે—અકારાદેરપિવર્ણસ્ય સ્વપરપર્યાયભેદભિન્નતયા સર્વદ્રવ્યપર્યાયપરિમાણ તુલ્યત્વાદકારાદિવર્ણજાતમપિ સર્વદ્રવ્યપર્યાયપરિમાણં ભવતીતિ ।

નન્વકારાદેર્વર્ણસ્ય સ્વપરપર્યાયાપેક્ષયા સર્વદ્રવ્યપર્યાયરાશિતુલ્યતા કેન પ્રકારેણ ભવતી ? તિ ચેત્,

ઉચ્યતે—ઇહ ‘ અ, અ, અ, ’ ઇત્યકાર ઉદાત્તોऽનુદાત્તઃ સ્વરિતઃ । સ પુનરેકૈકો દ્વિધા—સાનુનાસિકો નિરનુનાસિકશ્ચેત્યકારસ્ય ષડ્ભેદાઃ । એવં હ્રસ્વો દીર્ઘપ્લુતશ્ચ । તદેવમષ્ટાદશપ્રભેદાન્ કેવલોઽકારો લભતે । તથા—અન્યવર્ણસહિતોઽપ્યકારોઽનેકાન્ ભેદાન્ લભતે । તથાહિ—કકારેણ સંયુક્તોઽકારોઽષ્ટાદશભેદાન્ લભતે । એવં સ્વકારેણ ।

ઉત્તર—ઠીક છે, પરન્તુ અકાર આદિ જો વર્ણ છે, અનેકે માં સ્વપર્યાય અને પરપર્યાયની અપેક્ષા અનેક ભેદ થઈ જાય છે, આથી તેમાં માં સર્વદ્રવ્યપર્યાયપ્રમાણતા સુઘટિત થઈ જાય છે, આથી તેમાં કોઈ વાધા નથી આવતી છે ।

શંકા—અકાર આદિ વર્ણોમાં સ્વ અને પરપર્યાયની અપેક્ષા સર્વદ્રવ્યપર્યાય રાશિતુલ્યતા કેવી ઘટતી છે ?

ઉત્તર—સુનો—અકાર—ઉદાત્ત, અનુદાત્ત અને સ્વરિતના ભેદોથી તેને ત્રણ પ્રકારના કહેવાય છે । ઉદાત્ત અકાર, અનુદાત્ત અકાર, અને સ્વરિત અકારના સાનુનાસિક અને નિરનુનાસિક, આવી રીતે બે ભેદો થઈ જાય છે, આથી તેમાં માં સર્વદ્રવ્યપર્યાયપ્રમાણતા સુઘટિત થઈ જાય છે, આથી તેમાં કોઈ વાધા નથી આવતી છે । આવી રીતે અન્યવર્ણોમાં પણ સર્વદ્રવ્યપર્યાયપ્રમાણતા સુઘટિત થઈ જાય છે, આથી તેમાં કોઈ વાધા નથી આવતી છે । આથી તેમાં કોઈ વાધા નથી આવતી છે । આથી તેમાં કોઈ વાધા નથી આવતી છે ।

ઉત્તર—શંકા બરાબર છે પણ અકાર આદિ જે વર્ણ છે તેમાં પણ સ્વપર્યાય અને પરપર્યાયની અપેક્ષાથી અનેક ભેદ થઈ જાય છે, તે કારણે તેમાં માં પણ સર્વદ્રવ્યપર્યાયપ્રમાણતા સુઘટિત થઈ જાય છે, આથી તેમાં કોઈ વાધા નથી આવતી છે ।

શંકા—અકાર આદિ વર્ણોમાં સ્વ અને પરપર્યાયની અપેક્ષાથી સર્વદ્રવ્યપર્યાય રાશિતુલ્યતા કેવી રીતે ઘટાવી શકાય છે ?

ઉત્તર—ઉદાત્ત, અનુદાત્ત અને સ્વરિતના ભેદથી અકાર ત્રણ પ્રકારના કહેવાય છે. ઉદાત્ત અકારના, અનુદાત્ત અકારના અને સ્વરિત અકારના સાનુનાસિક અને નિરનુનાસિક, આ રીતે બે ભેદો થઈ જાય છે. આથી તેમાં માં સર્વદ્રવ્યપર્યાયપ્રમાણતા સુઘટિત થઈ જાય છે. આવી રીતે અન્યવર્ણોમાં પણ સર્વદ્રવ્યપર્યાયપ્રમાણતા સુઘટિત થઈ જાય છે. આથી તેમાં કોઈ વાધા નથી આવતી છે । આથી તેમાં કોઈ વાધા નથી આવતી છે । આથી તેમાં કોઈ વાધા નથી આવતી છે ।

एवं यावत् हकारेण । एवमेकैक केवल व्यञ्जन संयोगे इव सजातीय विजातीय व्यञ्जन-  
द्विक संयोगेऽपि । तथा स्वरान्तर संयुक्त तत्तद्व्यञ्जनसहितोऽप्यनेकान् भेदान्  
लभते । अपि चैकैकोऽप्युदात्तादिको भेदो वक्तुः स्वर विशेषादनेक भेदो भवति ।  
वाच्यभेदादपि च समानवर्णश्रेणीकस्यापि शब्दस्य भेदो जायते । तथाहि-करशब्दो  
हस्तरूपमर्थं येन स्वभावेन बोधयति, नहि तेनैव स्वभावेन किरणरूपमर्थम्, किंतु  
स्वभावभेदेन । तथा-अकारोऽपि तेन तेन ककारादिना संयुज्यमानस्तं तमर्थं

અઠારહ પ્રકાર કા બન જાતા હૈ, હસી પ્રકાર “ઁ” મેં મિલા હુઆ તથા  
“ગ” સે લેકર “હ” તક મિલા હુઆ “અ” મી અઠારહ પ્રકાર કા બન  
જાતા હૈ । જિસ તરહ યહ “અ” કેવલ ઇક ૨ વ્યંજનોં કે સાથ મિલને  
પર અનેક પ્રકાર કા પ્રકટ કિયા ગયા હૈ ઁસી પ્રકાર જબ યહ સજાતીય  
ઁવં વિજાતીય દો દો વ્યંજનોં કે સાથ તથા સ્વરાન્તરસંયુક્ત ઁન ૨ વ્યંજ-  
નોં કે સાથ મિલતા હૈ તબ અનેક ભેદ વાલા હો જાતા હૈ, યહ જાનના  
ચાહિયે-અધિક ઁર કયા કહા જાય ઇક ૨ મી ઉદાત્તાદિક ભેદ વક્તા  
કે સ્વરોં કે ભેદ સે અનેક ભેદવાલા બન જાયા કરતા હૈ । વાચ્યભેદ સે  
મી સમાનવર્ણ શ્રેણી વાલે શબ્દમેં મી ભેદ આ જાતા હૈ, જૈસે ‘કર’ શબ્દ  
જિસ સ્વભાવ સે હસ્તરૂપ અર્થ કા બોધન કરતા હૈ ઁસી સ્વભાવ સે વહ  
કિરણરૂપ અર્થ કા બોધન નહીં કરતા હૈ, કિન્તુ સ્વભાવ ભેદ સે હી કરતા  
હૈ । તાત્પર્ય કહને કા યહ હૈ કિ-કરશબ્દ કા અર્થ હાથ હૈ, કિરણ હૈ,  
પરન્તુ જિસ સ્વભાવ સે ‘કર’ શબ્દ અપને હાથ રૂપ વાચ્યાર્થ કા પ્રતિપાદન

અઠાર પ્રકારનો બની જાય છે, એજ પ્રમાણે “ઁ”માં મળેલ તથા “ગ”થી  
લધને “હ” સુધી મળેલો ‘અ’ પણ અઠાર પ્રકારનો થઈ જાય છે. જે રીતે  
આ ‘અ’ ફક્ત એક એક વ્યંજનની સાથે મળતા અનેક પ્રકારનો પ્રગટ કર્યો  
છે એજ પ્રકારે જ્યારે તે સજાતીય અને વિજાતીય બંને વ્યંજનોની સાથે  
તથા સ્વરાન્તર સંયુક્ત તે તે વ્યંજનોની સાથે મળે છે ત્યારે અનેક ભેદવાળો  
થઈ જાય છે, એમ સમજવું. વધારે શું કહેવું ! એક એક પણ ઉદાત્તાદિક  
ભેદ બોલનારના સ્વરોના ભેદથી અનેક ભેદવાળો બની જાય છે. વાચ્યભેદથી  
પણ સમાનવર્ણ શ્રેણીવાળા શબ્દમાં પણ ભેદ આવી જાય છે, જેમકે “કર”  
શબ્દ જે સ્વાભાવથી હસ્તરૂપ અર્થનો બોધ કરે છે એજ સ્વાભાવથી તે કિરણ  
રૂપ અર્થનો બોધ કરતો નથી, પણ સ્વાભાવ ભેદથી જ કરે છે. કહેવાનું  
તાત્પર્ય એ છે કે-“કર” શબ્દનો અર્થ હાથ છે, કિરણ છે, પણ જે સ્વાભા-  
વથી “કર” શબ્દ બોલતાના હાથરૂપ વાચ્યાર્થનું પ્રતિપાદન કરે છે એજ



બોધયન્ ભિન્નસ્વભાવો વેદિતવ્કઃ । તે ચ સ્વભાવા અનન્તા ભવન્તિ, ઉચ્ચાર્યમાણ-  
શબ્દસ્ય પરમાણુદ્વચણુકાદિભેદેનાઽનન્તત્વાત્ । ધ્વનેશ્ચ તથા તથાઽભિધાયકત્વપરિ-  
ણામે સત્યેવ તત્તદર્થપ્રતિપાદકત્વાત્ । એતે ચ સર્વેઽપ્યકારસ્ય સ્વપર્યાયાઃ શેષાસ્તુ-  
સર્વેઽપિ ઘટાદિપર્યાયાઃ પરપર્યાયાઃ । તે ચ સ્વપર્યાયેભ્યોઽનન્તગુણાઃ । પરપર્યાયા  
અપ્યકારસ્ય સમ્બન્ધિતયા વિજ્ઞેયાઃ

કરતા હૈં उसी स्वभाव से वह किरणरूप अर्थका नहीं, कारण अपने २  
वाच्यार्थ के प्रतिपादन करनेमें शब्दोंमें भिन्न २ स्वभावता मानी गई है ।  
इसी तरह अकार भी भिन्न २ ककार आदि शब्दों के साथ संगत होकर  
भिन्न २ स्वभाव से भिन्न २ अर्थों का प्रत्यायक होता है । इस तरह एक  
ही अकेले अकारमें अनंत स्वभाव समाविष्ट हुए माने गये हैं । जो शब्द  
उच्चरित होता है उसमें परमाणु तथा द्वयाणुक आदि के भेद से अनं-  
तता आती है । तात्पर्य इसका यह है कि शब्द पौद्गलिक है, अतः पुद्गल-  
जन्य इस शब्दमें परमाणुक द्वयाणुक आदि की भिन्नता से भिन्नता आती  
है । और यह भिन्नता अनंतरूपमें परिणत हो जाती है । इसी तरह पदार्थ  
अनंत है और उन पदार्थों को प्रतिपादन करने का परिणाम ध्वनी-शब्द-  
में रहा हुआ है तभी जाकर वह उन २ पदार्थों का प्रतिपादन किया  
करता है । इस तरह से समस्त अकार की निज पर्याये हैं तथा इनसे  
भिन्न जो घटादि पर्याय हैं वे इस की पर पर्याय हैं । ये पर पर्याये अपनी

સ્વભાવથી તે કિરણરૂપ અર્થનું પ્રતિપાદન કરતો નથી, કારણ કે ચોતપોતાના  
વાચ્યાર્થનું પ્રતિપાદન કરવામાં શબ્દોમાં ભિન્ન ભિન્ન સ્વભાવતા માનવામાં આવી  
છે. એજ રીતે ‘અકાર’ પણ ભિન્ન ભિન્ન કકાર આદિ શબ્દોની સાથે સંગત  
થઈને ભિન્ન ભિન્ન સ્વભાવથી ભિન્ન ભિન્ન અર્થોનો પ્રત્યાયક થાય છે. આ  
રીતે એકલા અકારમાં જ અનંત સ્વભાવનો સમાવેશ થયેલ મનાયો છે. જે  
શબ્દ બોલાય છે તેમાં પરમાણુ તથા દ્વયાણુક આદિના ભેદથી અનંતતા આવે  
છે. તેનું તાત્પર્ય એ છે કે શબ્દ પૌદ્ગલિક છે તેથી પુદ્ગલજન્ય તે શબ્દમાં  
પરમાણુ, દ્વયાણુક આદિની ભિન્નતાથી ભિન્નતા આવે છે, અને તે ભિન્નતા  
અનંતરૂપે પરિણમે છે. આ રીતે પદાર્થ અનંત છે અને તે પદાર્થોનું પ્રતિ-  
પાદન કરવાનો પરિણામ ધ્વનિ-શબ્દમાં રહેલ છે ત્યારે જ જઈને તે, તે તે  
પદાર્થોનું પ્રતિપાદન કર્યા કરે છે. આ રીતે સમસ્ત અકારની ચોતાની પર્યાયો છે  
તથા તેમનાથી ભિન્ન જે ઘટાદિ પર્યાય છે એ તેની પરપર્યાય છે. એ પર-

નનુ ये स्वपर्यायास्ते तस्य सम्बन्धिनो भवन्तु, ये तु परपर्यायास्ते भिन्नव-  
स्त्वाश्रयत्वात् कथं तस्य सम्बन्धिनः स्थिरिति चेत् ?,

उच्यते—इह द्विधा सम्बन्धो भवति, अस्तित्वेन नास्तित्वेन च । तत्रास्तित्वेन  
सम्बन्धः स्वपर्यायैः सह भवति, यथा-घटस्य रूपादिभिः नास्तित्वेन संबन्धः  
परपर्यायैः सह भवति तेषां तत्रासंभवात् । यथा-घटावस्थायां मृत्पिण्डाकारेण  
पर्यायों से अनंतगुणी हैं । स्वपर्यायें जिस प्रकार अकार की संबंधी  
मान जाती हैं उसी प्रकार पर पर्यायें भी इसकी संबंधी मानी गई हैं ।

शंका—यह तो ठीक है कि अकार की जितनी भी निज पर्यायें हैं  
वे सब इसकी संबंधी मानी जावें—पर जो परपर्यायें हैं वे इसकी संबंधी  
कैसे मानी जा सकती हैं ? । कारण—ये परपर्यायें भिन्न वस्तु के साथ रही  
हुई होती हैं । अतः उसीकी संबंधी मानी जावेगी ?—

उत्तर—संबंध दो प्रकार से हुआ करता है—एक अस्तित्व मुख से,  
और दूसरा नास्तित्वमुख से । अस्तित्वमुख से जो संबंध होता है, वह  
अपनी पर्यायों के साथ पर्यायी का होता है । जैसे रूपादिकों के साथ घट  
का होता है । नास्तित्वमुख से जो संबंध हुआ करता है वह परपर्यायों का  
पर्यायी के साथ हुआ करता है । कारण ये परपर्यायें उसमें रहती नहीं  
हैं । जैसे मिट्टी से जब घट बन कर तैयार हो जाना है, तब उसमें पिण्डाकार

પર્યાયો પોતાની પર્યાયોથી અનેકગણી છે. સ્વપર્યાયો જેમ અકારની સંબંધી  
માનવામાં આવે છે એજ પ્રકારે પરપર્યાયો પણ તેની સંબંધી માનવામાં  
આવી છે.

શંકા—એ તો બરાબર છે કે અકારની જેટલી સ્વપર્યાયો છે તે બધી  
તેની સંબંધી મનાય, પણ જે પરપર્યાયો છે તે તેની સંબંધી કેવી રીતે માની  
શકાય ? કારણ કે એ પરપર્યાયો ભિન્ન વસ્તુની સાથે રહેલ હોય છે. તેથી  
તેની જ સંબંધી માની શકાશે.

ઉત્તર—સંબંધ બે રીતે થયા કરે છે—એક અસ્તિત્વમુખથી અને બીજો  
નાસ્તિત્વમુખથી. અસ્તિત્વમુખથી જે સંબંધ થાય છે તે સ્વપર્યાયોની સાથે  
પર્યાયોનો હોય છે. જેમ રૂપાદિકોની સાથે ઘડાનો હોય છે. નાસ્તિત્વમુખથી  
જે સંબંધ થયા કરે છે તે પરપર્યાયોનો પર્યાયોની સાથે થયા કરે છે. કારણ  
કે તે પર્યાયો તેમાં રહેતી નથી. જેમકે માટીમાંથી ન્યારે ઘડો તૈયાર થાય

પર્યાયેણ સહ સમ્બન્ધો નાસ્તિત્વ સમ્બન્ધેન । યતોઽસૌ પિણ્ઠાકારઃ પર્યાયસ્તસ્યતદાનીં  
નાસ્તીતિ નાસ્તિત્વ સમ્બન્ધેન સમ્બન્ધઃ । અત એવ ચ સ પરપર્યાય ઇતિ વ્યપદિશ્યતે ।  
અન્યથા તસ્યાપિ તત્રાસ્તિત્વ સ્વીકારે સોઽપિ સ્વપર્યાય એવ સ્યાત્ ।

નનુ યે યત્ર ન વિદ્યન્તે તે કથં ‘તસ્યે’—તિ વ્યપદિશ્યન્તે । ધનં દરિદ્રસ્ય  
નાસ્તીતિ ‘ધનં તસ્ય સમ્બન્ધી’—તિ વ્યપદેષ્ટું ન શક્યમ્, અન્યથા પરપર્યાયસ્યાપિ  
સમ્બન્ધિત્વે લોકવ્યવહારાતિક્રમ પ્રસજ્ઞઃ ? ઇતિ ચેન્ન,

યદિ નામ તે—પરપર્યાયા નાસ્તિત્વ સમ્બન્ધમધિકૃત્ય ‘તસ્યે’—તિ ન વ્યપ-  
પર્યાય નહીં રહતી હૈ । અતઃ ઉસ ઘટ કે સાથ પિણ્ઠાકાર પર્યાય કા સંબંધ  
નાસ્તિત્વમુખ્ય સે માના જાયગા । હસીલિયે વહ પિણ્ઠાકાર પર્યાય પરપ-  
ર્યાય હોને સે નિજ પર્યાય નહીં હૈ । અન્યથા ઘટમેં ઉસકા અસ્તિત્વ હોને  
સે વહ ઉસકી નિજપર્યાય માની જાવેગી । અતઃ યહ અવશ્ય સ્વીકાર  
કરના ચાહિયે કિ પર્યાયોંકા સંબંધ પદાર્થમેં નાસ્તિત્વમુખ્ય સે હી  
રહા કરતા હૈ ।

શંકા—દરિદ્ર કે પાસ ધન જિસ પ્રકાર નહીં હોને સે વહ ઉસકા  
સંબંધી નહીં કહા જાતા હૈ, ઉસી પ્રકાર જો જહાં નહીં હૈ વહ ઉસકા સંબંધી  
કૈસે કહા જા સકેગા ? પરપર્યાય પર પદાર્થમેં હોતી હૈ વહ વિવક્ષિત  
પદાર્થ કી સંબંધી કૈસે માની જા સકતી હૈ યદિ હસ પ્રકાર કા વ્યવહાર  
હોને લગે તો ફિર લોક વ્યવહાર કા હી અતિક્રમ કરના કહલાયેગા ।

ઉત્તર—પરપર્યાયે વિવક્ષિત પદાર્થ કી સંબંધી હૈં હસકા તાત્પર્ય યહ

છે ત્યારે તેમાં પિંડાકાર પર્યાય રહેતી નથી. તેથી તે ઘડાની સાથે પિંડાકાર  
પર્યાયનો સંબંધ નાસ્તિત્વમુખથી માનવામાં આવશે. તે કારણે તે પિંડાકાર  
પર્યાય પરપર્યાય હોવાથી સ્વપર્યાય નથી. નહીં તો ઘડામાં તેનું અસ્તિત્વ  
હોવાથી તે તેની સ્વપર્યાય માનવામાં આવે તેથી એ અવશ્ય સ્વીકારવું જોઈએ  
કે પરપર્યાયોનો સંબંધ પદાર્થમાં નાસ્તિત્વમુખથી રહ્યા કરે છે.

શંકા—જેમ દરિદ્રની પાસે ધન ન હોવાથી તે તેનો સંબંધી કહેવાતો  
નથી એજ પ્રકારે જે જ્યાં નથી તે તેનું સંબંધી કેવી રીતે કહી શકાય ?  
પરપર્યાય પર પદાર્થમાં હોય છે તે વિવક્ષિત પદાર્થની સંબંધી કેવી રીતે માની  
શકાય, જો આ પ્રકારનો વ્યવહાર થવા લાગે તો પછી લોક વ્યવહારનો જ  
અતિક્રમ કયોં કહેવાય.

ઉત્તર—પરપર્યાયો વિવક્ષિત પદાર્થની સંબંધી છે તેનું તાત્પર્ય એવું

દિશ્યન્તે, તર્હિ સામાન્યતો ન સન્તીતિ પ્રાપ્તમ્ । તથા ચ તે સ્વરૂપેણાઽપિ ન ભવેયુઃ, ન ચૈતદ્ દૃષ્ટં શ્રુતં વા તસ્માદવશ્યં તે નાસ્તિત્વ સમ્બન્ધમઙ્ગીકૃત્ય 'તસ્યે'—તિ વ્યપદેશ્યાઃ । ધનમપિ ચ નાસ્તિત્વ સમ્બન્ધમધિકૃત્ય 'દરિદ્રસ્યે'—તિ વ્યપદિશ્યતે એવ । તથા—' ધનમસ્ય દરિદ્રસ્ય ન વિઘટે ' ઇતિ લોકવાદઃ ।

યદપિ ચોક્તં 'તત્ તસ્યે'—તિ વ્યપદેષ્ટું ન શક્યમિતિ, તત્રાપિ તદસ્તિત્વેન તસ્યેતિ વ્યપદેષ્ટું ન શક્યં, ન તુ નાસ્તિત્વેનાપિ । તતો ન કશ્ચિત્ લૌકિક વ્યવહારાતિક્રમઃ ।

નહીં હૈ કિ વે ડસમેં અસ્તિત્વ મુખ સે સંબંધિત હૈં । યહ શંકા તો ડચિત ડસ સમય મોની જાતી કિ જબ ડસે વિવક્ષિત પદાર્થમેં અસ્તિત્વમુખ સે સંબંધિત કી જાતી । યહાં તો એસા કહા જાતા હૈ કિ—પદાર્થમેં એક દૂસરે પદાર્થ કી પર્યાયોં કા જો ઇતરેતરાભાવ—અન્યોન્યાભાવ રૂપ સે સંબંધ હૈ વહ વહાં નાસ્તિત્વમુખ સે હૈ । યદિ નાસ્તિત્વમુખ સે વે પરપર્યાયે વિવક્ષિત પદાર્થ કી સંબંધી હૈં તો ઇસમેં કયા આપતિ હો સકતી હૈ । યદિ નાસ્તિત્વ કે સંબંધસે વે પર પર્યાયે વિવક્ષિત પદાર્થ કી સંબંધી ન માની જાવેં તો ઇસકા તાત્પર્ય યહ હોતા હૈ કિ યે સામાન્યરૂપ સે મી અસ્તિત્વ વિશિષ્ટ નહીં હૈં । ઇસ તરહ સ્વરૂપતઃ મી ઇનકા કોઈ અસ્તિત્વ નહીં બન સકેગા । નાસ્તિત્વ સંબંધ સે ધન મી દરિદ્ર કા સંબંધી માનનેમેં કોઈ વાધા નહીં હૈ । એસા વ્યપદેશ હોતા હી હૈ । નાસ્તિત્વ સંબંધ સે ધન દરિદ્રવ્યક્તિ કા હૈ ઇસકા તાત્પર્ય યહી હૈ કિ દરિદ્ર કે પાસ ધન નહીં હૈ ।

નથી કે તેઓ તેમાં અસ્તિત્વમુખથી સંબંધિત છે. આ શંકા તો ત્યારે થોડી મનાય કે જ્યારે તેને વિવક્ષિત પદાર્થમાં અસ્તિત્વમુખથી સંબંધિત કરવામાં આવે. અહીં તો એવું કહેવામાં આવે છે કે—પદાર્થમાં એક બીજા પદાર્થની પર્યાયોનો જે ઇતરેતરા ભાવ રૂપે સંબંધ છે તે ત્યાં નાસ્તિત્વમુખથી છે. જે નાસ્તિત્વમુખથી તે પર્યાયો વિવક્ષિત પદાર્થની સંબંધી હોય તો તેમાં શી મુશ્કેલી હોઈ શકે છે ? જે નાસ્તિત્વના સંબંધથી તે પર પર્યાયો વિવક્ષિત પદાર્થની સંબંધી મનાય નહીં તો તેનું તાત્પર્ય એ થાય છે કે તેઓ સામાન્ય રૂપ પણ અસ્તિત્વ વિશિષ્ટ નથી. આ રીતે સ્વરૂપથી પણ તેમનું કોઈ અસ્તિત્વ બની શકશે નહીં. નાસ્તિત્વ સંબંધથી ધનને પણ દરિદ્રનું સંબંધી માનવામાં કોઈ વાધો નથી. એવો વ્યપદેશ હોય છે જ. નાસ્તિત્વ સંબંધથી ધન દરિદ્ર વ્યક્તિનું છે તેનું તાત્પર્ય એ છે કે દરિદ્રની પાસે ધન નથી. આ રીતે પર-

નનુ નાસ્તિત્વમભાવરૂપમ્, અભાવશ્ચ સ્વરૂપશૂન્યસ્તેન સહ કથં સમ્બન્ધઃ, શૂન્યસ્ય સકલશક્તિ વિકલતયા સમ્બન્ધશક્તેરભાવાત્ ।

અન્યચ્ચ—યદિ પરપર્યાયાણાં તત્ર નાસ્તિત્વં, તર્હિ નાસ્તિત્વેન સહ સમ્બન્ધો ભવતુ, પરપર્યાયૈસ્તુ કથં સમ્બન્ધઃ ? । ઘટઃ પટાભાવેન સંવદ્ધઃ ઇતિ ન પટેનાપિ સહ સમ્બદ્ધો ભવિતુમર્હતિ, તથા પ્રતીતેરભાવાત્ ? ।

इसी तरह परपर्यायें नास्तित्वसंबंध से विवक्षित पदार्थ की संबंधी हैं इसका भी तात्पर्यार्थ यही है कि ये उसमें नहीं हैं । “परपर्यायें विवक्षित पदार्थ की हैं” इस रूपसे उनका व्यापदेश नहीं हो सकता है, ऐसा जो कहना है सो इसमें कोई आपत्ति नहीं है । शास्त्र भी तो यही कहते हैं कि अस्तित्व मुख से परपर्यायें विवक्षित पदार्थ की हैं ऐसा व्यापदेश नहीं हो सकता है । परन्तु नास्तित्वमुख से वहां उनका व्यपदेश होनेमें कोई लौकिक व्यवहार का अतिक्रम नहीं होता है ।

શંકા—નાસ્તિવ અભાવરૂપ હોતા હૈ । અભાવ કા તાત્પર્ય હોતા હૈ સ્વરૂપશૂન્યતા । તો ફિર પદાર્થ કા હિસ સ્વરૂપશૂન્યરૂપ નાસ્તિત્વ કૈ સાથ સંવંધ કૈસૈ બન સકતા હૈ । ક્યોં કિ શૂન્યમૈં સકલ શક્તિ કી વિકલતા હોને સૈ સંવંધ સ્થાપિત કરને કી શક્તિ કા સદ્ભાવ માના હી કૈસૈ જા સકતા હૈ । દૂસરી વાત ઇક યહ બી હૈ કિ “વિવક્ષિત પદાર્થમૈં પરપર્યાયોંકા નાસ્તિત્વ હૈ” હિસ પ્રકાર કૈ કથનમૈં યહી ફલિતાર્થ નિકલતા હૈ કિ પદાર્થ કા ઊન પર્યાયાં કૈ સાથૈ સંવંધ નહીં હૈ કિન્તુ નાસ્તિત્વ કૈ સાથ

પર્યાયો નાસ્તિત્વ સંબંધથી વિવક્ષિત પદાર્થની સંબંધી છે તેનું તાત્પર્ય પણ એજ છે કે એ તેમાં નથી. “ પરપર્યાયો વિવક્ષિત પદાર્થની છે ” આ રૂપે તેમનો વ્યપદેશ થઈ શકતો નથી, એમ જે કહેવું છે તેમાં કોઈ આપત્તિ નથી. શાસ્ત્રો પણ એજ કહે છે કે અસ્તિત્વમુખથી પરપર્યાયો વિવક્ષિત પદાર્થની છે એવો વ્યાપદેશ થઈ શકતો નથી. પણ નાસ્તિત્વમુખથી ત્યાં તેવો વ્યપદેશ થવામાં કોઈ લૌકિક વ્યવહારનો અતિક્રમ થતો નથી.

શંકા—નાસ્તિત્વ અભાવરૂપ હોય છે. અભાવનું તાત્પર્ય છે. સ્વરૂપશૂન્યતા તો પછી પદાર્થનો આ સ્વરૂપ શૂન્યરૂપ નાસ્તિત્વની સાથે સંબંધ કેવી રીતે બની શકે ? કારણ કે શૂન્યમાં સકળ શક્તિની વિકલતા હોવાથી સંબંધ સ્થાપિત કરવાની શક્તિનો સદ્ભાવ માની જ કેવી રીતે શકાય ? બીજી એક વાત એ પણ છે કે વિવક્ષિત પદાર્થમાં પરપર્યાયોનું નાસ્તિત્વ છે આ પ્રકારના કથનમાં એજ ફલિતાર્થ નીકળે છે કે પદાર્થનો એ પર્યાયો સાથે સંબંધ નથી પણ નાસ્તિત્વની સાથે છે. જેમકે “ઘટ પરાભવથી સંબંધ

ઉચ્યતે—અયુક્તમેતત્, સમ્યગ્ વસ્તુતત્ત્વાપરિજ્ઞાનાત્ । તથાહિ—નાસ્તિત્વં નામ તેન તેન રૂપેણાઽભવનમિષ્યતે, તત્ત્વ તેન તેન રૂપેણાઽભવનં વસ્તુધર્મસ્તતો નૈકાન્તેન તત્ત્વશૂન્યરૂપમિતિ ન સહ સમ્બન્ધાભાવઃ । તદપિ ચ તેન રૂપેણાઽભવન તં તં પર્યાયમપેક્ષ્ય ભવતિ, નાન્યથા । તથાહિ—યો યો ઘટાદિગતઃ પર્યાયસ્તેન તેન રૂપેણ હૈ । જૈસે—“ ઘટ પરાભાવ સે સંબંધ હૈ ” હસ પ્રકાર કે વાચ્યાર્થ મેં યહ તાત્પર્ય થોડે હી નિકલ સકતા હૈ કિ ઘટ પટ કે સાથ સંબંધિત હૈં । કિન્તુ ઘટ પટાભાવ સે હી યુક્ત હૈ, પટ સે નહીં, યહી બોધ હોતા હૈ । હસી પ્રકાર પરપર્યાયોં કા અભાવ વિવક્ષિત પદાર્થ મેં હૈ હસકા ભી યહી તાત્પર્ય નિકલતા હૈ કિ પરપર્યાયોં કા અભાવ હી વિવક્ષિત પદાર્થ કે સાથ સંબંધ હૈ—પરપર્યાયોં નહીં ।

ઉત્તર—વસ્તુતત્ત્વ કા સમીચીન પરિજ્ઞાન નહીં હોને સે યહ શંકા કી ગઈ હૈ । જબ નાસ્તિત્વ કા “ ઉસ ઉસ રૂપ સે નહીં હોના ” એસા તાત્પર્ય હૈ તો ફિર યહ વસ્તુ કા હી નિજધર્મ હૈ । નિજધર્મ જો હોતા હૈ વહ એકાન્તતઃ શૂન્યરૂપ નહીં હોતા હૈ । હસ તરહ નાસ્તિત્વ કે સાથ સંબંધ હોને મેં કોઈ વિરોધ નહીં હૈ । તાત્પર્ય હસકા યહ હૈ કિ શંકાકાર ને “ નાસ્તિત્વ ” કા તાત્પર્ય “ સ્વરૂપશૂન્ય ” માનકર જો ઉસકા પદાર્થ કે સાથ સંબંધાભાવ સ્થાપિત કિયા થા ઉસકા યહાં યહ ઉત્તર દિયા ગયા હૈ । નાસ્તિત્વ કા ભાવ સ્વરૂપશૂન્યતા નહીં હૈ કિન્તુ ઉસ ઉસ રૂપ

છે” આ પ્રકારના વાચ્યાર્થમાં એ તાત્પર્ય થોડું જ નીકળે છે કે ઘટ ( ઘડો ) પટની સાથે સંબંધિત છે, પણ ઘટ પટાભાવથી જ યુક્ત છે, પટથી નહીં, એજ બોધ થાય છે. એજ પ્રકારે પરપર્યાયોનો અભાવ વિવક્ષિત પદાર્થમાં છે એનું પણ એજ તાત્પર્ય નીકળે છે કે પરપર્યાયોનો અભાવ જ વિવક્ષિત પદાર્થની સાથે સંબંધ છે—પરપર્યાયો નહીં.

ઉત્તર—વસ્તુતત્ત્વનું સંપૂર્ણ પરિજ્ઞાન ન હોવાથી આ શંકા ઉઠાવવામાં આવી છે. જો નાસ્તિત્વનું “ તે તે રૂપે ન હોવું ” એવું તાત્પર્ય છે તો એ વસ્તુનો જ પોતાનો ધર્મ છે. જે પોતાનો ધર્મ હોય છે તે એકાન્તતઃ શૂન્યરૂપ હોતો નથી. આ રીતે નાસ્તિત્વની સાથે સંબંધ હોવામાં કોઈ વિરોધ નથી. તેવું તાત્પર્ય એ છે કે શંકાકારે “ નાસ્તિત્વ ” નું તાત્પર્ય “ સ્વરૂપશૂન્ય ” માનીને તેનો પદાર્થની સાથે જે સંબંધાભાવ સ્થાપિત કર્યો હતો તેનો અહીં આ ઉત્તર આપવામાં આવ્યો છે. નાસ્તિત્વનો અર્થ સ્વરૂપશૂન્યતા નથી પણ “ તે તે



પટાદૌં ન ભવિતવ્યમિતિ સામથ્યાત્ તં તં પર્યાયમપેક્ષતે, इति सुप्रतीतमेतत् । तत-  
स्तेन तेन पर्यायेणाऽभवनस्य तं तं पर्यायमपेक्ष्य संभवात् । तेऽपि परपर्यायास्तस्यो  
पयोगिन इति 'तस्ये'—ति व्यपदिश्यन्ते । एवं रूपायां च विवाक्षायां पटोऽपि  
घटस्य परपर्याय सम्बन्धेन सम्बन्धी भवत्येव, पटमपेक्ष्य घटे पटरूपेण अभवनस्य  
सद्भावात् । तथा च—लौकिका अपि घटपटादीन् परस्परमन्योन्याभावमधिकृत्य  
सम्बन्धिनो व्यवहरन्तीति सुप्रसिद्धमेतत् । १ ।

સે નહીં હોના હૈ । અવ યહ ઉસ ૨ રૂપ સે નહીં હોના રૂપ જો નાસ્તિત્વ  
હૈ વહ પદાર્થ મેં પ્રતીત હી હૈ । અતઃ યહ વસ્તુ કા હી ધર્મ હૈ । જો વસ્તુ  
કા ધર્મ હોતા હૈ વહ એકાન્તતઃ અભાવરૂપ-તુચ્છાભાવરૂપ નહીં માના  
જાતા હૈ । વિવક્ષિત પદાર્થ “ઉસ ઉસ રૂપવાલા નહીં હૈ” એસા જો  
કહા જાતા હૈ વહ ભિન્ન ૨ પરપર્યાય કી અપેક્ષા લેકર હી કહા જાતા  
હૈ । અર્થાત્-ઘટ મેં પટરૂપતા નહીં હૈ એસા જો કહા જાતા હૈ ઉસકા  
તાત્પર્ય યહ હૈ કિ પટાદિગત જો પર્યાય હૈ વહ ઘટ મેં નહીં હૈ ઇસલિયે  
વહ પર્યાય અપેક્ષિત હોકર ઘટ મેં અભાવરૂપ સે પ્રતિપાદિત કી જાતી  
હૈ । યહી પરપર્યાય કા વહાં નાસ્તિત્વરૂપ સંબંધ હૈ । યહ નાસ્તિત્વરૂપ  
અભવન ઉસ ઉસ પર્યાય કી અપેક્ષા વિના બનતા નહીં હૈ ઇસલિયે ઉસ  
ઉસ પર્યાય કી અપેક્ષા પડતી હૈ । ઇસ તરહ યે પરપર્યાયે ઉસ વિવક્ષિત  
પદાર્થ કી સ્થિતિ મેં ઉપયોગી હોતી હૈ ઇસલિયે “યે ઉસકી હૈ” એસા  
વ્યપદેશ હોતા હૈ । ઇસ તરહ કી માન્યતા મેં-વિવક્ષા મેં-પટ ભી ઘટકા

इये न डोवुं” छे. डवे ते ते इये नडीं डोवा इय ओ न नास्तित्व छे ते  
पदार्थमां प्रतीत न छे. तेथी ते वस्तुनो न धर्म छे. ने वस्तुनो धर्म डोय  
छे ते ऐकान्ततः अलावइय-तुच्छलावइय मानी शकतो नथी. विवक्षित पदार्थ  
ते ते इयवाणे नथी ” ऐवुं ने डडेवामा आवे छे ते भिन्न भिन्न परपर्यायनी  
अपेक्षाओ न डडेवाय छे. ओटवे के घडामां पटइयता नथी ऐवुं ने डडेवाय छे  
तेनु तात्पर्य ओ छे के पटादिगत ने पर्याय छे ते घडामां नथी. ते काण्हे ते  
पर्याय अपेक्षित थईने घडामां अलावइये प्रतिपादित कराय छे. ओ न परपर्या-  
यनो त्यां नास्तिवइय संभंध छे ओ नास्तित्वइय अलवन ते ते पर्यायनी  
अपेक्षा विना बनतुं नथी, ते कारण्हे ते ते पर्यायनी आवश्यकता रहे छे. आ  
रीते ओ पर्यायो ते विवक्षित पदार्थनी स्थितिमां उपयोगी थाय छे ते कारण्हे  
“ते तेनी छे” ओवो व्यपदेश थाय छे. आ प्रकारनी मान्यतामा-विवक्षां पट

કિન્ન—અસ્માદપિ કારણાત્ તે પરપર્યાયાઃ ‘તસ્યે’—તિ વ્યપદિશ્યન્તે, સ્વપર્યાય વિશેષણત્વેન તેષામુપયોગાત્ । ઇહ યે યસ્ય સ્વપર્યાય—વિશેષણત્વેન ઉપ-યુજ્યન્તે, તે તસ્ય પર્યાયાઃ [ યથા ઘટસ્ય રૂપાદયઃ પર્યાયાઃ પરસ્પર વિશેષકતયા ઘટાદિ પર્યાયાઃ, ] તાનન્તરેણ તેષાં સ્વપર્યાયવ્યપદેશાસંભવાત્ । તથાહિ—યદિ તે પરપર્યાય કે સંબંધ સે સંબંધી હો જાતા હૈ । ક્યોં કિ પટકી અપેક્ષા ઘટ મેં પટરૂપતા કે અભાવ કા સદ્ભાવ પાયા જાતા હૈ । લોક મેં મી ઘટપટ આદિ પદાર્થોં કો પરસ્પર સેં અન્યોન્યાભાવ કો લેકર સંબંધીરૂપ સે કહતે હી હૈ । ૧ ।

ઔર મી યે પરપર્યાયેં વિવક્ષિત પદાર્થ કી સંબંધી ઇસલિયે મી માની જાતી હૈ કિ યે સ્વપર્યાય કી વિશેષણ હોતી હૈં । “જો પર્યાયેં જિસ પદાર્થ કી સ્વપર્યાયોં કી વિશેષણરૂપ સે હોતી હૈં વે ઉસ પદાર્થ કી સંબંધી હૈં” એસા માના જાતા હૈ જૈસે રૂપાદિક ઘટકી પર્યાયેં માની જાતી હૈં । તાત્પર્ય કહને કા યહ હૈ કિ યે પરપર્યાયેં સ્વપર્યાયોં કી સ્થિતિ હોને મેં વિશેષણરૂપ સે વ્યવહૃત હુઆ કરતી હૈં, ઇસલિયે ઉન્હેં વિવક્ષિત પદાર્થોં કી સંબંધિની માન લી જાતી હૈં । જૈસે રૂપાદિક પર્યાયેં ઘટકી સ્થિતિ મેં વિશેષણરૂપ સે હોતી હૈ ઔર વે ઉસકી સંબંધી માની જાતી હૈં । વિશેષણરૂપ સે હોને કા તાત્પર્ય યહ હૈ કિ સ્વપર્યાયોં મેં જો યહ સ્વશબ્દ હૈ વહ “પર” ઇસ શબ્દ કી અપેક્ષા વાલા હૈ । સ્વ કી કીમત “પર” ઇસ પર રહી હુઈ હૈં । “પર” હૈ તમી જાકર “સ્વ” કી શોભા હૈ ।

પણુ ઘટનો પરપર્યાયના સંબંધથી સંબંધી થઈ જાય છે. કારણ કે પટની અપેક્ષાએ ઘટમાં પટરૂપતાના અભાવનો સદ્ભાવ જોવા મળે છે. લોકમાં પણ ઘટપટ આદિ પદાર્થોને પરસ્પરમાં અન્યોન્યાભાવને લીધે સંબંધી રૂપે કહે જ છે. (૧)

અને એ પરપર્યાયો વિવક્ષિત પદાર્થની સંબંધી તે કારણે પણ મનાય છે કે તેઓ સ્વપર્યાયની વિશેષણ હોય છે. “જે પર્યાયો જે પદાર્થની સ્વપર્યાયોના વિશેષણરૂપે હોય છે તેઓ તે પદાર્થની સંબંધી છે” એમ મનાય છે. જેમ રૂપાદિક ઘટાની પર્યાયો મનાય છે. કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે એ પરપર્યાયો સ્વપર્યાયોની સ્થિતિ થવામાં વિશેષણરૂપે વ્યવહૃત થયા કરે છે, તે કારણે તેમને વિવક્ષિત પદાર્થોની સંબંધિની માની લેવામાં આવે છે. જેમ રૂપાદિક પર્યાયો ઘટની સ્થિતિમાં વિશેષણરૂપે હોય છે અને તે તેની સંબંધી મનાય છે. વિશેષણરૂપે હોવાનું તાત્પર્ય એ છે કે—સ્વપર્યાયોમાં જે આ સ્વશબ્દ છે તે “પર” એ શબ્દની અપેક્ષાવાળો છે સ્વની કીમત “પર” એના ઉપર રહી છે. “પર”

પરપર્યાયા ન ભવેયુસ્તર્હિ 'અકારસ્ય સ્વપર્યાયાઃ' ઇતિ ન વ્યપદિશ્યેરન્, પરા-  
પેક્ષયા સ્વવ્યપદેશસ્ય સંભવાત્ । તતઃ સ્વપર્યાયવ્યપદેશકારણતયા તેપિ પરપર્યાયા-  
સ્તસ્યોપયોગિન ઇતિ 'તસ્યે' તિ વ્યપદિશ્યન્તે । ૨ ।

અપિ ચ — સર્વ વસ્તુ પ્રતિનિયતસ્વભાવં, પ્રતિનિયતસ્વભાવતા ચ પ્રતિયોગ્યભા-  
વાત્મકતાનિવન્ધના । તતો યાવન્ન પ્રતિયોગિવિજ્ઞાનં ભવતિ, તાવન્નાધિકૃતં વસ્તુ  
તદભાવાત્મકં તત્ત્વતો જ્ઞાતું શક્યતે । તથા ચ સતિ ઘટાદિ પર્યાયાણામપિ અભાવ  
પ્રતિયોગિત્વાત્ તદવિજ્ઞાનં યાવદ્ ભવતિ. તાવન્નાધિકૃતં વસ્તુ તદભાવાત્મકં પરિ-  
જ્ઞાતમિતિ નાકારો યથાત્મનાઽવગન્તું શક્યતે, ઇતિ ઘટાદિપર્યાયા અપ્યકારસ્ય પર્યાયાઃ

ચદિ વે પરપર્યાયે ન હોં તો યે અકાર કી સ્વપર્યાયેં હેં એસા વ્યપદેશ  
હી નહીં હો સકેગા । કારણ સ્વ વ્યપદેશ પરાપેક્ષ હૈ । ઇસલિયે પર્યાયોં  
મેં સ્વ વ્યપદેશ કા કારણ હોને સે વે પરપર્યાયેં ભી ઉસ વિવક્ષિત પદાર્થ  
કી ઉપયોગી હેં અતઃ ઉનમેં “તસ્ય” એસા વ્યપદેશ હોતા હૈ ॥ ૨ ॥

ફિર ભી—સંસાર કી જિતની ભી વસ્તુએં હેં વે સવ પ્રતિનિયત સ્વ-  
ભાવ વાલી હેં । ઓર યહ પ્રતિનિયત સ્વભાવતા ઉનમેં પ્રતિયોગી પદાર્થ  
કે અભાવ કો લેકરં હી આઈ હુઈ હૈ । ઇસલિયે યહ ધ્રુવ સત્ય હૈ કિ  
વસ્તુ અપને સ્વભાવ મેં પ્રતિનિયત હૈ યહ વાત સ્પષ્ટરૂપ સે જાનને કે  
લિયે પ્રતિયોગી પદાર્થ કા જ્ઞાન હોના ચાહિયે । તભી જાકર વિવક્ષિત  
વસ્તુ મેં “પ્રતિયોગી પદાર્થ કા અભાવ રહા હુઆ હૈ” એસા કહા જા  
સકતા હૈ ।

ઓર ભી “અકાર કી યે નિજ પર્યાયેં હેં” એસા બોધ અકાર પર્યાયોં

છે ત્યારે જ “સ્વ” ની શોભા છે. જો એ પરપર્યાયો ન હોત તો એ આકારની  
સ્વપર્યાયો છે. એવો વ્યપદેશ જ થઈ શકત નહીં. કારણ કે સ્વ વ્યપદેશ  
પરાપેક્ષ છે. તે કારણે પર્યાયોમાં સ્વ વ્યપદેશનું કારણ હોવાથી એ પરપર્યાયો  
પણ તે વિવક્ષિત પદાર્થને ઉપયોગી થાય છે, તેથી તેમનામાં “તસ્ય” એવો  
વ્યપદેશ થાય છે. ॥ ૨ ॥

વળી સંસારની જેટલી વસ્તુઓ છે તે બધી પ્રતિનિયત સ્વભાવવાળી છે.  
અને એ પ્રતિનિયત સ્વભાવતા તેમનામાં પ્રતિયોગી પદાર્થના અભાવને લીધે જ  
આવેલી છે. તે કારણે એ ધ્રુવ સત્ય છે કે વસ્તુ યોતાના સ્વભાવમાં પ્રતિનિયત  
છે એ વાત સ્પષ્ટરૂપે સમજવાને માટે પ્રતિયોગી પદાર્થનું જ્ઞાન હોવું જોઈએ.  
ત્યારે જ વિવક્ષિત વસ્તુમાં “પ્રતિયોગી પદાર્થનો અભાવ રહેલ છે” એમ  
કહી શકાય છે.

વળી—“અકારની એ સ્વપર્યાયો છે” એવો બોધ અકાર પર્યાયોમાં ત્યારે

તથા ચાત્ર પ્રયોગઃ—યદનુપલબ્ધૌ યસ્યાનુપલબ્ધિઃ સ તસ્ય સમ્બન્ધી । યથા ઘટસ્ય રૂપાદયઃ । ઘટાદિ પર્યાયાનુપલબ્ધૌ આકારસ્ય ન યથાવસ્થિત સ્વરૂપેણોપલબ્ધિરિતિ તે તસ્ય સમ્બન્ધિનઃ ।

ન ચાયમસિદ્ધો હેતુઃ, ઘટાદિ પર્યાયરૂપપ્રતિયોગ્યપરિજ્ઞાનાત્ તદભાવાત્મક-સ્યાકારસ્ય તત્ત્વતો જ્ઞાતત્વાયોગાત્ ।

મેં તમી હો સકતા હૈ કિ જબ ઉસમેં પર કે-ઘટાદિ પર્યાયોં કે-અભાવ કા બોધ હો । જબ તક ઇનકા ઉનમેં અભાવ કા બોધ નહીં હોગા તબ તક અકાર કા વાસ્તવિકરૂપ સે પરિજ્ઞાન નહીં હો સકેગા । ઇસ તરહ અકાર કા યથાર્થબોધ હોને કે લિયે ઘટાદિ પર્યાયોં કા બોધ હોના આવશ્યક હૈ । ઇસ દૃષ્ટિ સે ઘટાદિ પર્યાય મી અકાર કે સંબંધી હૈં એસા કહા જાતા હૈ ।

યહાં પ્રયોગ ઇસ પ્રકાર હૈ—જિસકી અનુપલબ્ધિ હોને પર જિસકી અનુપલબ્ધિ હોતી હૈ, વહ ઉસકા સંબંધી હોતા હૈ—જેસે રૂપાદિક કી અનુપલબ્ધિ હોને પર ઘટ કી અનુપલબ્ધિ હોતી હૈ । ઇસી પ્રકાર સે ઘટાદિપર્યાયોં કી અનુપલબ્ધિ મેં અકાર કી યથાવસ્થિતરૂપ સે ઉપલબ્ધિ નહીં હોતો હૈ ઇસલિયે વે ઉસકી સંબંધિની હૈં એસા માના જાતા હૈ । ઇસ અનુમાન પ્રયોગ મેં હેતુ અસિદ્ધ નહીં હૈ કારણ ઘટાદિપર્યાયરૂપ જો પ્રતિયોગી પદાર્થ હૈ વહ જબતક પરિજ્ઞાત નહીં હો જાતા હૈ જબતક ઉસકે અભાવરૂપ અકાર કા તત્ત્વતઃ જ્ઞાન નહીં હો સકતા હૈ । ઇસલિયે યહ

જ થઈ શકે છે કે જ્યારે તેમાં પરના-ઘટાદિ પર્યાયોના-અભાવનો બોધ થાય. જ્યાં સુધી તેમનામાં તેમના અભાવનો બોધ નહીં થાય ત્યાં સુધી આકારનું વાસ્તવિકરૂપે પરિજ્ઞાન થઈ શકશે નહીં. આ રીતે આકારનો યથાર્થ બોધ થવાને માટે ઘટાદિ પર્યાયોનો બોધ થવો તે આવશ્યક છે. આ દૃષ્ટિએ ઘટાદિ પર્યાય પણ અકારની સંબંધી છે એમ કહેવામાં આવે છે.

અહીં પ્રયોગ આ પ્રકારે છે—જેની અનુપલબ્ધિ થતા જેની અનુપલબ્ધિ થાય છે તે તેનું સંબંધી હોય છે જેમકે રૂપાદિકની અનુપલબ્ધિ (અભાવ) થતા ઘટાની અનુપલબ્ધિ હોય છે; એજ પ્રમાણે ઘટાદિ પર્યાયોની અનુપલબ્ધિમાં અકારની યથાવસ્થિત રૂપે ઉપલબ્ધિ થતી નથી તે કારણે તેઓ તેની સંબંધિની છે એમ માનવામાં આવે છે આ અનુમાન પ્રયોગમાં હેતુ અસિદ્ધ નથી કારણ કે ઘટાદિ પર્યાયરૂપ જે પ્રતિયોગી પદાર્થ છે. તે જ્યાં સુધી પરિજ્ઞાત થઈ જતો નથી ત્યાં સુધી તેના અભાવરૂપ અકારનું તત્ત્વતઃ જ્ઞાન થઈ શકતું નથી. તે

તસ્માદ્ ઘટાદિપર્યાયા અપ્યકારસ્ય સમ્બન્ધિન इति स्वपर्यायापेक्षयाऽकारः  
सर्वद्रव्य पर्याय परिमाणः ।

एवमाकारादयोऽपि वर्णाः सर्वे प्रत्येकं सर्वं द्रव्यपर्याय परिमाणा वेदितव्याः।  
एवं घटादिकमपि प्रत्येकं सर्वं वस्तु जातं परिभावनीयं, न्यायस्य समानत्वात् । न  
चैतदनार्थं, यत उक्तमाचाराङ्गे—

“ जे एगं जाणइ, से सव्वं जाणइ । जे सव्वं जाणइ, से एगं जाणइ । ”

अयमर्थः—य एकं वस्तु सर्वपर्यायैः सह जानाति, स नियमेन सर्वं वस्तु  
जानाति । सर्वोपलब्धिमन्तरेण विवक्षितस्यैकस्य स्वपर्यायभेदभिन्नतया सर्वात्मना-  
ऽवगन्तुमशक्यत्वात् यश्च सर्वं सर्वात्मनासाक्षाद् जानाति, स एकं स्वपर्यायभेद-  
भिन्नं जानाति ।

માનના ચાહિયે કિ ઘટાદિ પરપર્યાયેંં બી અકાર કી સંબંધી હૈં । હસ  
તરહ અકાર સર્વદ્રવ્ય પર્યાય બી પરિમાણવાલા સિદ્ધ હો જાતા હૈં ।  
હસ તરહ ઔર બી આકાર આદિ જો વર્ણ હૈં વે બી પ્રત્યેક સર્વદ્રવ્ય-  
પર્યાયપ્રમાણાનુરૂપ હૈં યહ સિદ્ધ હો જાતા હૈં । ઘટાદિક જો વસ્તુએં હૈં  
ઊનમેં બી હસ ન્યાય કે સમાન હોને સે સર્વપર્યાયપ્રમાણતા ઘટિત હો  
જાતી હૈં । હમારા હસ પ્રકાર કા યહ કથન આગમ સે પ્રતિકૂલ નહીં  
પડતા હૈં, કારણ આચારાઙ્ગ મેં એસા હી કહા હૈં—“ જે એગં જાણइ સે  
સવ્વં જાણइ, જે સવ્વં જાણइ સે એગં જાણइ ” इति । હસકા ભાવ યહ  
હૈં કિ જો એક જીવાદિક વસ્તુ કો અપની ૨ સમસ્ત પર્યાયોં સહિત જાનતા  
હૈં વહ નિયમ સે સમસ્ત વસ્તુઓં કો જાનતા હૈં । વિવક્ષિત એક વસ્તુ  
કા “ યહ અપની સમસ્ત પર્યાયોં સે સહિત હૈં તથા પરપર્યાયોં કા હસમેં

કારણે એમ માનવું જોઈએ કે ઘટાદિ પરપર્યાયો પણ અકારની સંબંધી છે. આ  
રીતે અકાર સર્વદ્રવ્યપર્યાય પરિણામવાળો સિદ્ધ થઈ જાય છે. એજ રીતે બીજાં  
પણ અકાર આદિ જે વર્ણન છે તેઓ પણ પ્રત્યેક સર્વદ્રવ્યપર્યાય પ્રમાણાનુરૂપ  
છે તે સિદ્ધ થઈ જાય છે. ઘટાદિક જે વસ્તુઓ છે તેમનામાં પણ આ ન્યાયથી  
સમાનતા હોવાથી સર્વપર્યાય પ્રમાણતા ઘટિત થઈ જાય છે. અમારું એ પ્રકારનું  
આ કથન આગમથી વિરૂદ્ધ જતું નથી. કારણ કે આચારાંગમાં એવું જ કહ્યું  
છે—“ જે એગં જાણइ સે સવ્વં જાણइ, જે સવ્વં જાણइ સે એગં જાણइ ” તેનું  
તાત્પર્ય એ છે કે જે એક જીવાદિક વસ્તુને યોત યોતાની સમસ્ત પર્યાયો  
સહિત જાણે છે તે નિયમથી સમસ્ત વસ્તુઓને જાણે છે. વિવક્ષિત એક વસ્તુને  
“ આ યોતાની સમસ્ત પર્યાયોયુક્ત છે તથા પરપર્યાયોનો તેમાં અભાવ છે ”

અન્યત્રાપ્યુક્તમ્—

“ એકો ભાવઃ સર્વથા યેન દૃષ્ટઃ,  
સર્વે ભાવાઃ સર્વથા તેન દૃષ્ટાઃ ।

સર્વે ભાવાઃ સર્વથા યેન દૃષ્ટાઃ,  
એકો ભાવઃ સર્વથા તેન દૃષ્ટઃ ” ॥ ૧ ॥

તદેવમકારાદિકર્માપિ 'વર્ણજાતં કેવલજ્ઞાનવત્ સર્વદ્રવ્યપર્યાયિ પરિમાણમિતિ  
ન કશ્ચિદ્વિરોધઃ ।

અપિ ચ—કેવલજ્ઞાનપિ સ્વપરપર્યાયભેદભિન્નં ભવતિ । તત્ત્વાત્મસ્વભાવરૂપં ન  
અભાવ હૈ ” એસા બોધ જવતક નહીં હોગા તવતક વહ વસ્તુ સર્વાત્મના  
જાની હુઈ નહીં કહલા સકેગી । અતઃ જબ વહ ઇસ રૂપ સે જાન લી  
જાતી હૈ તો ઇસકા તાત્પર્ય હી યહ હૈ કિ ઇસ જાનને વાલે કો સર્વ  
પદાર્થ કી ઉપલબ્ધિ હો ચુકી હૈ તમી વહ વિવક્ષિત વસ્તુ કો સર્વ પર્યાયોં  
સહિત જાન સકા હૈ । ઇસી તરહ જો સર્વ વસ્તુ કો સર્વાત્મના સાક્ષાત્  
જાનતા હૈ વહ એક વસ્તુ કો સ્વપરપર્યાય કે ભેદરૂપ સે જાનતા હૈ ।  
અન્યત્ર મી ઇસી વાત કી પુષ્ટિ ઇસ પ્રકાર સે કી હૈ—

“ એકો ભાવઃ સર્વથા યેન દૃષ્ટઃ, સર્વે ભાવાઃ સર્વથા તેન દૃષ્ટાઃ ।

સર્વે ભાવાઃ સર્વથા યેન દૃષ્ટાઃ એકો ભાવઃ સર્વથા તેન દૃષ્ટઃ ॥૧॥ ” ઇતિ ।

ઇસ તરહ અકાર આદિ સમસ્ત વર્ણ સસૂહ કેવલજ્ઞાન કી તરહ  
સર્વદ્રવ્યપર્યાયોં કે પ્રમાણાનુરૂપ હૈ ઇસ કથન મેં કોઈ વિરોધ નહીં આતા હૈ ।

એવો બોધ બ્યાં સુધી નહીં થાય ત્યાં સુધી તે વસ્તુ સર્વાત્મના જાણેલી કહી  
શકાશે નહીં. તેથી જો તે એ રૂપે જાણી લેવાય છે તો તેનું તાત્પર્ય જ એ છે  
કે તે જાણનારને સર્વ પદાર્થની ઉપલબ્ધિ થઈ ગઈ છે ત્યારે જ તે વિવક્ષિત  
વસ્તુને સર્વપર્યાયી સહિત જાણી શકે છે. આ રીતે જ સર્વવસ્તુને સર્વાત્મના  
પ્રત્યક્ષ પામે છે તે એક વસ્તુને સ્વરૂપ પર્યાયના લેહરૂપથી જાણે છે. અન્યત્ર  
પણ એજ વાતની પુષ્ટિ આ રીતે કરી છે—

“ એકો ભાવઃ સર્વથા યેન દૃષ્ટઃ, સર્વે ભાવાઃ સર્વથા તેન દૃષ્ટાઃ ।

સર્વે ભાવાઃ સર્વથા યેન દૃષ્ટાઃ, એકો ભાવઃ સર્વથા તેન દૃષ્ટઃ ॥૧॥ ”

આ રીતે અકાર આદિ સમસ્ત વર્ણસમૂહ કેવલજ્ઞાનની જેમ સર્વદ્રવ્ય  
પર્યાયોના પ્રમાણાનુરૂપ છે આ કથનમાં કોઈ વિરોધ નહોતો નથી.



તુ ઘટાદિવસ્તુસ્વભાવાત્મકમ્ । તસ્માદ્ યે ઘટાદિવસ્તુનઃ સ્વભાવાસ્તે કેવલજ્ઞા-  
નસ્ય પરપર્યાયાઃ, યે તુ પરિચ્છેદકત્વ સ્વભાવાસ્તે સ્વપર્યાયાઃ । પરપર્યાયા અપિ  
પૂર્વોક્તયુક્તેસ્તસ્ય સમ્બન્ધિન ઇતિ સ્વપરપર્યાયભેદભિન્નં ભવતિ ।

તતઃ સ્વપર્યાયપરિમાણચિન્તાયાં પરમાર્થતો ન કશ્ચિદકારાદિં સંયુક્તશ્રુત-  
કેવલજ્ઞાનયોર્વિશેષઃ । એતાવાનેવ વિશેષઃ—કેવલજ્ઞાનં સ્વપર્યાયૈરેવ સર્વદ્રવ્યપર્યાય-  
પરિમાણતુલ્યમ્ । અકારાદિકં તુ સ્વપર્યાયૈઃ । તથાહિ—અકારસ્ય સ્વપર્યાયાઃ—

ફિર મી—કેવલજ્ઞાન મેં મી સ્વપર્યાય કી ભિન્નતા સે ભેદ સિદ્ધ હોતા  
હૈ । આત્મસ્વભાવરૂપતા યહ કેવલજ્ઞાનકી નિજ પર્યાય હૈ । તથા ઘટાદિ-  
રૂપ જો વસ્તુએં હૈં તદાત્મકતા ઉસમેં નહીં હૈં યહ કેવલજ્ઞાન કી પરપર્યાય  
હૈં । કેવલજ્ઞાન મેં આત્મસ્વભાવરૂપતા જો નિજપર્યાય હૈં ઉસકા તાત્પર્ય  
પદાર્થ પરિચ્છેદક સ્વભાવ સે હૈં । જિસ પ્રકાર નિજપર્યાય કેવલજ્ઞાન કી  
સંબંધી માની ગઈ હૈં ઉસી પ્રકાર પૂર્વોક્તયુક્તિ કે અનુસાર પરપર્યાય મી  
ઉસકી સંબંધી હોતી હૈં । ઇસ તહર કેવલજ્ઞાન મેં ઇન દોનોં પર્યાયોં કી  
ભિન્નતા સે ભેદ આ જાતા હૈં ।

જવ ઇસ પ્રકાર સે સ્વપર્યાયપરિમાણ કા વિચાર ક્રિયા જાતા હૈં તવ  
પરમાર્થતઃ અકારાદિ સંયુક્ત શ્રુતજ્ઞાન મેં ઓર કેવલજ્ઞાન મેં યદ્યપિ કોઈ  
ભેદ નહીં પ્રતીત હોતા હૈં । પરન્તુ ફિર મી કેવલજ્ઞાન મેં જો સર્વદ્રવ્ય-  
પર્યાય પરિમાણ તુલ્યતા કહી ગઈ હૈં વહ સ્વપર્યાયોં સે હી જાનની ચાહિયે ।  
પરપર્યાયોં દ્વારા નહીં । ઓર અકારાદિકોં મેં યહ સર્વદ્રવ્યપર્યાયપરિમાણતા

તથા—કેવળજ્ઞાનમાં પણ સ્વપર્યાય અને પરપર્યાયની ભિન્નતાથી ભેદ સિદ્ધ  
થાય છે. આત્મસ્વભાવરૂપતા એ કેવળજ્ઞાનની સ્વપર્યાય છે. તથા ઘટાદિરૂપ જે  
વસ્તુઓ છે તેમાં તદાત્મકતા નથી, તે કેવળજ્ઞાનની પરપર્યાય છે. કેવળજ્ઞાનમાં  
આત્મસ્વભાવરૂપતા જે સ્વપર્યાય છે તેનું તાત્પર્ય પદાર્થ પરિચ્છેદક સ્વભાવ છે.  
જેમ સ્વપર્યાય કેવળજ્ઞાનની સંબંધી માનવામાં આવી છે એમ પૂર્વોક્ત યુક્તિ  
પ્રમાણે પરપર્યાય પણ તેની સંબંધી હોય છે. આ રીતે એ બંને પર્યાયોની  
ભિન્નતાથી કેવળજ્ઞાનમાં ભેદ આવી જાય છે.

જ્યારે આ રીતે સ્વપર્યાય પરિમાણનો વિચાર કરવામાં આવે છે ત્યારે  
પરમાર્થતઃ આકારાદિ સંયુક્ત શ્રુતજ્ઞાનમાં અને કેવળજ્ઞાનમાં જે કે કોઈ ભેદ  
દ્રાગતો નથી, છતાં પણ કેવળજ્ઞાનમાં જે સર્વદ્રવ્યપર્યાય પરિમાણ તુલ્યતા કહેલ  
છે તે સ્વપર્યાયોથી જ જાણવી જોઈએ, પરપર્યાયો દ્વારા નહીં. અને અકારાદિકોમાં  
આ સર્વદ્રવ્યપર્યાય પરિમાણતા સ્વ અને પરપર્યાયો દ્વારા જાણવી જોઈએ અકાર

સર્વદ્રવ્યપર્યાયાણામનન્તભાગકલ્પાઃ, પરપર્યાયાસ્તુ સ્વપર્યાયરૂપાનન્તતમભાગોનાઃ સર્વદ્રવ્યપર્યાયાઃ । તસ્માદકારાદિકં સ્વપરપર્યાયૈરેવ સર્વદ્રવ્યપર્યાયપરિમાણં ભવતિ ।

યથા ચાઽકારાદિકં સર્વદ્રવ્યપર્યાયપરિમાણં તથા મત્યાદીન્યપિ જ્ઞાનાનિ દ્રષ્ટ-  
વ્યાનિ, ન્યાયસ્ય સમાનત્વાત્ ।

इह यद्यपि सर्वं ज्ञानमविशेषेणाक्षरं मुच्यते, सर्वद्रव्यपर्यायपरिमाणं च भवति, तथापि श्रुताधिकारादिहाक्षरं श्रुतज्ञानं ग्राह्यम् । श्रुतज्ञानं च मतिज्ञानाविनाभूतं, ततो मति ज्ञानमपि । तदेवं श्रुतज्ञानमकारादिकं चोत्कर्षतः सर्वद्रव्यपर्यायपरिमाणं,

स्व और परपर्यायों द्वारा जाननी चाहिये । अकार आदि वर्णों में जो स्वपर्याय हैं वे तो सर्व द्रव्यपर्यायों के अनन्तवें भाग प्रमाण हैं, तथा जो परपर्याय हैं वे वहां स्वपर्यायरूप अनन्तवें भागहीन सर्वद्रव्यपर्याय-प्रमाण हैं । इसलिये अकारादि में स्व एवं परपर्यायों द्वारा ही सर्वद्रव्य-पर्यायप्रमाणता सिद्ध होती है ।

जिस प्रकार अकारादि सर्व द्रव्यपर्याय परिमाणवाले प्रकट किये गये हैं उसी प्रकार मति आदि ज्ञानों में भी यह सर्व द्रव्यपर्यायप्रमाणता जान लेनी चाहिये । क्योंकि न्याय सर्वत्र समान होता है ।

यहां पर यद्यपि सामान्यरूपसे समस्त ज्ञान अक्षररूपसे कहा गया है और वह सर्वद्रव्यपर्याय परिमाणरूप बतलाया गया है, तो भी श्रुत का अधिकार होनेसे यहां अक्षर शब्दसे श्रुतज्ञानका ग्रहण करना चाहिये । श्रुतज्ञान मतिज्ञानका अविनाभावी होता है इस अपेक्षासे उसमें भी सर्व द्रव्यपर्याय प्रमाणता सिद्ध हो जाती है । इस तरह श्रुतज्ञान

આદિ વર્ણોમાં જે સ્વપર્યાયો છે તે તો સર્વદ્રવ્યપર્યાયોના અનંતમાંભાગ પ્રમાણ છે, તથા જે પરપર્યાયો છે તે ત્યાં સ્વપર્યાયરૂપ અનંતમાં ભાગહીન સર્વદ્રવ્ય-પર્યાયપ્રમાણ છે. તે કારણે અકારાદિમાં સ્વ અને પરપર્યાયો દ્વારા જ સર્વદ્રવ્ય-પર્યાય પ્રમાણતા સિદ્ધ થાય છે.

જે રીતે અકારાદિ સર્વદ્રવ્યપર્યાયવાળા પ્રકટ કરેલ છે એજ રીતે મતિ આદિ જ્ઞાનોમાં પણ એ સર્વદ્રવ્યપર્યાયપ્રમાણતા સમજી લેવી કારણ કે સર્વત્ર ન્યાય સમાન જ હોય છે.

અહીં જો કે સામાન્યરૂપે સમસ્તજ્ઞાન અક્ષરરૂપે કહેવામાં આવ્યું છે અને તે સર્વદ્રવ્યપર્યાયપરિમાણરૂપ બતાવવામાં આવ્યું છે, તો પણ શ્રુતનો અધિકાર હોવાથી અહીં અક્ષર શબ્દથી શ્રુતજ્ઞાનને ગ્રહણ કરવું જોઈએ. શ્રુતજ્ઞાન મતિ-જ્ઞાનનું અવિનાભાવી હોય છે તે અપેક્ષાએ તેમાં પણ સર્વદ્રવ્યપર્યાયપ્રમાણતા

તત્ત્વ સર્વોત્કૃષ્ટ શ્રુતકેવલિનો દ્વાદશાઙ્ગવિદઃ સંભવતિ. ન તુ શેષસ્ય । તસ્માત્ અનાદિભાવઃ શ્રુતસ્ય જન્તૂનાં જઘન્યો મધ્યમો વા દ્રષ્ટવ્યો ન તૂત્કૃષ્ટ ઇતિ સ્થિતમ્ ।

નનુ શ્રુતસ્યાનાદિભાવ એવકથમુપસપદ્યતે—યદા હિ સર્વોત્કૃષ્ટ શ્રુતજ્ઞાનાવરણ-સ્ત્યાનર્દિનિદ્રારૂપદર્શનાવરણોદયઃ—સંભવતિ, તદા સાકલ્યેન શ્રુતસ્યાવરણં સંભા-વ્યતે, યથાઽવધ્યાદિ જ્ઞાનસ્ય । તસ્માદવધ્યાદિજ્ઞાનમિવ શ્રુતમપિ—આદિમદિતિકથં તૃતીય ચતુર્થભંગસંભવસ્તત આહ—‘ સર્વ જીવાણપિ૦ ’ ઇત્યાદિ । સર્વજીવાનામપિ ચ

ઔર અકાર આદિ અક્ષરોંમેં જો યહ ઉત્કૃષ્ટરૂપસે સર્વદ્રવ્ય પર્યાયપ્રમા-ળતા પ્રકટ કી ગઈ હૈ વહ દ્વાદશાંગકે પાઠી સર્વોત્કૃષ્ટ શ્રુતકેવલી કી અપેક્ષાસે હી જાનની ચાહિયે । ક્યોં કિ વહીં પર યહ ઉત્કૃષ્ટતા સંભવિત હોતી હૈ અન્ય જીવોં કે શ્રુતજ્ઞાન આદિમેં નહીં । કારણ કિ વહાં પર શ્રુતકા અનાદિભાવ જઘન્ય યા મધ્યમરૂપસે વતલાયા ગયા હૈ । ઉત્કૃષ્ટ રૂપસે નહીં ।

શંકા—શ્રુતમેં જો અનાદિતા પ્રકટ કી ગઈ હૈ વહ સમજમેં નહીં આતી હૈ । કારણ જવ જીવ કે સર્વોત્કૃષ્ટ શ્રુત જ્ઞાનાવરણકા સ્ત્યાનર્દિકા એવં નિદ્રારૂપ દર્શનાવરણ કર્મકા ઉદય હોતા હૈ તવ ઉસ સ્થિતિમેં સંપૂર્ણ રૂપસે શ્રુતકા આવરણ હો જાતા હૈ । જિસ પ્રકાર કિ અવધિજ્ઞાનાવરણી કે ઉદયમેં અવધિ જ્ઞાનકા આવરણ હો જાતા હૈ । અતઃ યહ કૈસે માના જા સકતા હૈ કિ શ્રુતજ્ઞાન અનાદિ હૈ । અવધિજ્ઞાન આદિ કી તરહ વહ ભી સાદિ હી હૈ ઔર હસ તરહ ઉસમેં યે તૃતીય ઔર ચતુર્થ ભંગ સંભવિત નહીં હોતે હૈ ।

સિદ્ધ થઈ જાય છે. આ રીતે શ્રુતજ્ઞાન અને અકારાદિ અક્ષરોમાં જે આ ઉત્કૃષ્ટ રૂપે સર્વદ્રવ્યપર્યાયપ્રમાણતા પ્રગટ કરવામાં આવી છે તે દ્વાદશાંગના પાઠી સર્વો-ત્કૃષ્ટ શ્રુતકેવળીની અપેક્ષાએ જ જાણવી જોઈએ. કારણ કે ત્યાં જ તે ઉત્કૃષ્ટતા સંભવિત હોય છે અને જીવોનાં શ્રુતજ્ઞાન આદિમાં નહીં. કારણ કે ત્યાં શ્રુતનો અનાદિ ભાવ જઘન્ય કે મધ્યમરૂપે બતાવવામાં આવ્યો છે, ઉત્કૃષ્ટ રૂપે નહીં.

શંકા—શ્રુતમાં જે અનાદિતા પ્રગટ કરવામાં આવી છે તે સમજાતી નથી. કારણ કે જ્યારે જીવના સર્વોત્કૃષ્ટ શ્રુત જ્ઞાનાવરણના સ્ત્યાનર્દિકા અને નિદ્રારૂપ દર્શનાવરણ કર્મનો ઉદય થાય છે ત્યારે તે સ્થિતિમાં સંપૂર્ણરૂપે શ્રુતનું આવરણ થઈ જાય છે, જેમ અવધિજ્ઞાનવરણીના ઉદયમાં અવધિજ્ઞાનનું આવરણ થઈ જાય છે. તેમ શ્રુતમાં પણ થાય છે. તેથી શ્રુતજ્ઞાન અનાદિ છે એમ કેવી રીતે માની શકાય! અવધિજ્ઞાન આદિની જેમ તે પણ સાદી જ છે અને આ રીતે તેમાં એ ત્રીજો અને ચોથો ભંગ સંભવિત હોતો નથી.

અક્ષરસ્ય શ્રુતજ્ઞાનસ્ય, શ્રુતજ્ઞાનં ચ મતિજ્ઞાનાવિનાભાવિ, અતો મતિજ્ઞાનસ્યાપીત્યર્થઃ, અનન્તભાગઃ-અનન્તમો ભાગઃ, નિત્યોદ્ઘાટિતઃ-સદાઽનાવૃત્તસ્તિષ્ઠતીત્યર્થઃ । સ પુનરનન્તતમભાગોઽપ્યનેકવિધઃ । તત્ર સર્વજઘન્યોભાગશ્ચૈતન્યમાત્રમ્ । તત્પુનઃ સર્વોત્કૃષ્ટ શ્રુતાવરણ-સ્ત્યાનર્દ્ધિનિદ્રોદયભાવેઽપિ ના ત્રિયતે, તથા જીવસ્વભાવત્વાત્, તદેવાહ -‘જહ્નુપુણ૦’ ઇત્યાદિ । યદિ પુનઃ સોઽપિ આત્રિયેત, તેન-આવરણેન, જીવઃ-ચૈતન્યલક્ષણઃ, અજીત્વં પ્રાપ્નુયાત્-સ્વલક્ષણપરિત્યાગાદિતિ ભાવઃ । ન ચૈતદ્ દૃષ્ટ મિદં

ઉત્તર—સમસ્ત જીવોંકા જો ૩ તજ્ઞાન હૈ તથા મતિજ્ઞાન હૈ વહ સદા અપને અનન્તવેં ભાગ મેં અનાવૃત્ત હીં રહા કરતા હૈ અતઃ ઉસકા આવરણ નહીં હોતા હૈ । તાત્પર્ય ઇસકા યહ હૈ કિ જો શંકાકારને શ્રુતજ્ઞાનમેં અનાદિતા કા આવરણ દશામેં અસદ્ભાવ પ્રકટ કિયા હૈ ઉસકા ઉત્તર દેતે હુએ સૂત્રકાર કહતે હૈં કિ ઠીક હૈ આવરણ દશામેં યદ્યપિ અવધિ આદિ જ્ઞાન બિલકુલ આવૃત્ત હો જાતે હૈં પરન્તુ મતિજ્ઞાન એવં શ્રુતજ્ઞાનમેં એસા નહીં હૈ । વે તો અપની આવૃત્તદશામેં ભી અનન્તવેં ભાગ મેં સદા અનાવૃત્ત રહા કરતે હૈં । મતિજ્ઞાન શ્રુતજ્ઞાનકા જો અનન્તવાં ભાગ હૈ વહ અનેક પ્રકારકા બતલાયા ગયા હૈ । ઉસમેં સર્વ જઘન્ય જો ભાગ હૈ વહ માત્ર ચૈતન્યરૂપ પડતા હૈ । યહ ચૈતન્યરૂપ સર્વ જઘન્ય ભાગ સર્વોત્કૃષ્ટ શ્રુતાવરણ, સ્ત્યાનર્દ્ધિ એવં નિદ્રાવરણ કર્મકે ઉદયમેં ભી આવૃત્ત નહીં હોતા હૈ કારણ જીવકા સ્વભાવ હી એસા હૈ । યદિ યહ સ્વભાવ ભી આવૃત્ત માના જાવે તો ઇસ દશામેં ચૈતન્ય લક્ષણ જીવમેં અપને લક્ષણકે પરિત્યાગકે

ઉત્તર—સમસ્ત જીવોંકા જો શ્રુતજ્ઞાન તથા મતિજ્ઞાન છે, તે સદા પોતાના અનંતમાં ભાગમાં અનાવૃત્ત જ રહ્યા કરે છે તેથી તેનું આવરણ હોતું નથી. તેનું તાત્પર્ય એ છે કે શંકાકરનારે જે શ્રુતજ્ઞાનમાં અનાદિતાનો આવરણ દશામાં અસદ્ભાવ પ્રગટ કર્યો છે તેનો જવાબ આપતા સૂત્રકાર કહે છે કે આવરણ દશામાં જે કે અવધિ આદિ જ્ઞાન બિલકુલ આવૃત્ત થઈ જાય છે પણ મતિજ્ઞાન અને શ્રુતજ્ઞાનમાં એવું થતું નથી. તે તો પોતાની આવૃત્ત દશામાં પણ અનંતમાં ભાગમાં સદા અનુવૃત્ત રહ્યા કરે છે. મતિજ્ઞાન શ્રુતજ્ઞાનનો જે અનેકમો ભાગ છે તે અનેક પ્રકારનો બતાવ્યો છે. તેમાં સર્વજઘન્ય જે ભાગ છે તે માત્ર ચૈતન્યરૂપ પડે છે. આ ચૈતન્યરૂપ સર્વજઘન્ય ભાગ સર્વોત્કૃષ્ટ શ્રુતાવરણ, સ્ત્યાનર્દ્ધિ અને નિદ્રાવરણ કર્મના ઉદયમાં પણ આવૃત્ત થતો નથી, કારણ કે જીવનો સ્વભાવ જ એવો છે. જે તે સ્વભાવ પણ આવૃત્ત માનવામાં આવે તો એ દશામાં ચૈતન્યલક્ષણ જીવમાં પોતાના લક્ષણના પરિત્યાગને કારણે અજીવત્વની પ્રસક્તિ

वा सर्वस्य जीवादिपदार्थस्य सर्वथा स्वभावपरिहारासंभवात् । अत्र दृष्टान्तमाह—  
'सुदृढं वि०' इत्यादि । सुष्ठु अपि मेघसमुदये—चन्द्रसूर्यप्रभा पटलाच्छादके सति  
चन्द्रसूर्ययोः प्रभा=प्रकाशः, भवति=तिष्ठति । अयं भावः—यथा निविडतरमेघपट-  
लैराच्छादितयोरपि चन्द्रसूर्ययोनैकान्तेन तत्प्रभानाशो भवति, सर्वस्य सर्वथास्वभावाप-  
नयनस्य कर्तुमशक्यत्वात् । एवमनन्तानन्तरपि ज्ञानदर्शनावरणकर्मपरमाणुभिरेकैकस्या-  
त्मप्रदेशस्य समाच्छादितस्यापि नैकान्तेन चैतन्यमात्रस्याऽभावो भवति । यतः सर्व-  
जघन्यं तन्मतिश्रुतात्मकम्, अतोऽक्षरस्यानन्ततमोभागो नित्योद्घाटित इति सिद्धम् ।  
तथा च सति मतिज्ञानस्य श्रुतज्ञानस्य वाऽनादि भावो न विरुध्यते, इति स्थितम् ।

कारण अजीवत्वकी प्रसक्ति आवेगी परंतु ऐसी स्थिति जीव पदार्थ की न  
कभी देखी गई है और न किसी को यह इष्ट ही है, क्यों कि समस्त  
जीवादि पदार्थों के अपने २ स्वभाव का सर्वथा परिहार होना असंभव  
है । अब सूत्रकार इसी विषय को दृष्टान्त द्वारा स्पष्ट करते हैं—जिस  
प्रकार निविडतर मेघपटलों द्वारा चंद्र और सूर्य आवृत्त हो जाते हैं,  
परन्तु इनकी प्रभा एकान्ततः आवृत्त नहीं होती है—नष्ट नहीं होती है,  
कारण उन मेघपटलों में ऐसी शक्ति नहीं है, जो वे चंद्र सूर्य के प्रभा-  
स्वरूप स्वभाव का सर्वथा अपनयन कर सकें । इसी प्रकार भले ही  
अनंतानंत भी ज्ञान दर्शनावरण कर्मपरमाणुओं द्वारा एक एक आत्मा  
का प्रदेश ढक दिया जावे तो भी एकान्ततः चैतन्य मात्र का उस अवस्था  
में अभाव नहीं हो सकता है । यह जो सर्व जघन्य चैतन्यमात्र अवस्था  
है यही मतिश्रुतज्ञान का अनंतवां भाग है । इसलिये अक्षर का अनंतवां

आवशे પણ જીવપદાર્થની એવી સ્થિતિ કદી જોવામાં આવી નથી અને કોઈને  
તે ઈષ્ટ પણ નથી. કારણ કે સમસ્ત જીવાદિ પદાર્થોના પોતપોતાના સ્વભાવનો  
ત્યાગ થવો અસંભવિત છે. હવે સૂત્રકાર એજ વિષયને દૃષ્ટાંત દ્વારા સ્પષ્ટ કરે  
છે—જે રીતે ઘાડ વાહણો દ્વારા ચંદ્ર અને સૂર્ય ઢંકાઈ જાય છે પણ તેમનું તેજ  
એકાન્તતઃ ઢંકાતું નથી. નાશ પામતું નથી કારણ કે તે મેઘપટલોમાં એવી  
શક્તિ હોતી નથી કે તેઓ ચંદ્ર સૂર્યના પ્રભાસ્વરૂપ સ્વભાવનો સર્વથા નાશ  
કરી શકે, એજ રીતે ભલે અનંતાનંત જ્ઞાન દર્શનાવરણ કર્મપરમાણુઓ દ્વારા  
એક આત્માનો પ્રદેશ ઢાંકી દેવાય તો પણ એકાન્તતઃ ચૈતન્ય ભાવનો તે  
અવસ્થામાં અભાવ હોઈ શકતો નથી. આ જે સર્વજઘન્ય ચૈતન્ય માત્ર અવસ્થા  
છે એજ મતિશ્રુત જ્ઞાનનો અનંતમો ભાગ છે. તે કારણે અક્ષરનો અનંતમો

‘સે તં૦’ इत्यादि । तदेतत् सादिकं सपर्यवसितं श्रुतं वर्णितम् । तथा—तदेतदनादिक-  
मपर्यवसितं च श्रुतं वर्णितम् ॥ सू० ४२ ॥

મૂલમ્—સે કિં તં ગમિયં ? । ગમિયં દિદ્વિવાઓ । સે કિં તં  
અગમિયં ? । અગમિયં કાલિયં સુયં । સે તં ગમિયં । સે તં  
અગમિયં ॥

છાયા—અથ કિં તદ્ ગમિકમ્ ? । ગમિકં દૃષ્ટિવાદઃ । અથ કિં તદગમિ-  
કમ્ ? અગમિકં કાલિકં શ્રુતમ્ । તદેતદ્ ગમિકમ્ । તદેતદ્ અગમિકમ્ ॥

ટીકા—શિષ્યઃ પૃચ્છતિ—‘સે કિં તં ગમિયં૦’ इति । अथ कितद् गमिकम् ?  
इति शिष्य प्रश्न ? । उत्तरमाह—‘गमियं०’ इत्यादि । गमिकं दृष्टिवाद इति । गमो  
नाम आदि मध्यावसानेषु किञ्चिद् विशेषतो भूयोभूयस्तस्यैव पाठस्योच्चारणम् ।  
यथासूत्रादौ—सुयं मे आ उसंतेणं भगवया एव मक्खायं इह खलु इत्यादि । एवं  
मध्येऽवसाने वा यथा संभवं द्रष्टव्यम् । गमोऽस्य विद्यते, इति गमकम् । तच्च

भाग नित्य उद्धाटित सिद्ध होता है । इस तरह मतिज्ञान एवं श्रुतज्ञान  
में अनादिता का कथन विरुद्ध नहीं पड़ता है । इस तरह यहां तक  
सादिसांत और अनादि अनंत श्रुतज्ञान का यह वर्णन हुआ ॥ सू० ४२ ॥

‘સે કિં તં ગમિયં ?૦’ इत्यादि ।

શિષ્ય પૂછતા હૈ—મદન્ત ! ગમિક શ્રુતકા કયા લક્ષણ હૈ ? ઉત્તર—  
વારહવે દૃષ્ટિવાદકા નામ ગમિક હૈ । આદિ મધ્ય ઓર અન્તમેં કુછ ૨  
વિશેષતાસે જો ડસી પાઠકા પુનઃ ૨ ઉચ્ચારણ કિયા જાતા હૈ ડસકા  
નામ ગમ હૈ । જૈસે સૂત્રકી આદિમેં “સુયં મે આ ડસંતેણં મગવયા  
ઁવ મક્ખાયં ઇહ સ્વલુ૦” इत्यादि, ऐसा पाठ कह दिया जाता है ।

ભાગ સદા ઉદ્ઘાટિત સિદ્ધ થાય છે. એ રીતે મતિજ્ઞાન અને શ્રુતજ્ઞાનમાં અના-  
દિતાનું કથન વિરુદ્ધ પડતું નથી. આ રીતે અહીં સુધી સાદિસાંત અને અનાદિ  
અનંત શ્રુતજ્ઞાનનું આ વર્ણન થયું ॥ સૂ. ૪૨ ॥

“સે કિં તં ગમિયં૦” इत्यादि

શિષ્ય પૂછે છે—હે ભદન્ત ! ગમિક શ્રુતનું શું લક્ષણ છે ?

ઉત્તર—આરમાં દૃષ્ટિવાદનું નામ ગમિક છે. આદિ મધ્ય અને અન્તમાં  
કોઇક કોઇક વિશેષતાથી જે એજ પાઠનું ફરી ફરીને ઉચ્ચારણ કરાય છે તેનું  
નામ ગમ છે. જેમ કે સૂત્રના પ્રારંભે “સુયં મે આડસંતેણં મગવયા ઁવમક્ખાયં ઇહ  
સ્વલુ” इत्यादि, એવો પાઠ કહેવામાં આવે છે. એ રીતે મધ્ય અને અન્તમાં



પ્રાયો દૃષ્ટિવાદ ઇતિ । અથ પુનઃ શિષ્યઃ પૃચ્છતિ—‘ સે કિં તં ’ ઇત્યાદિ । અથ કિં તદ્ અગમિક ? મિતિ । ઉત્તરમાહ—‘ અગમિયં ’ ઇત્યાદિ । અગમિકં કાલિકં શ્રુતમ્ । અગમિકં-ગમિકાદ્ ભિન્નમ્ । તત્ચ કાલિકં-પ્રાયઃ આચારાદિશ્રુતમ્, આદૌ યથા પાઠોઽસ્તિ—‘ સુયં મે આઊસંતેણ ’ ઇતિ, તથા મધ્યેઽવસાને ચ પુનઃ પાઠોનાસ્તીતિ ગમિકત્વાભાવાત્ । તદેતદ્ ગમિકંશ્રુતમ્ અગમિકં ચ શ્રુતં વર્ણિતમ્ ॥

મૂલમ્—અહવા તં સમાસઓ દુવિહં પપ્પણત્તં । તં જહા-અંગ-પવિટ્ટં, અંગવાહિરં ચ । સે કિં તં અંગવાહિરં ? । અંગવાહિરં દુવિહં પપ્પણત્તં । તં જહા-આવસ્સયં ચ આવસ્સય-વઙ્ગરિત્તં ચ । સે કિં તં આવસ્સયં ? । આવસ્સયં છવ્વિહં પપ્પણત્તં । તં જહા-સામાઙ્ગ્યં ૧, ચઊવીસત્થઓ ૨, વંદણયં ૩, પઢિક્કમણં ૪, કાઊ-સ્સગ્ગો ૫, પચ્ચક્કલાણં ૬ । સે ત્તં આવસ્સયં ॥

इसी तरहसे मध्य एवं अवसानमें भी इसी प्रकारके पाठका उच्चारण यथासंभव जान लेना चाहिये । इस प्रकारका गम जिस श्रुतमें होता है उसका नाम गमिकश्रुत है । यह गमिकश्रुत-प्रायः बारहवां दृष्टिवाद अंग है । शिष्य पुनः पूछता है । हे भदन्त ! आगमिक श्रुत क्या है ? उत्तर—कालिक श्रुतका नाम आगमिक श्रुत है, क्योंकि यह गमिक श्रुतसे भिन्न पड़ता है । यह प्रायः आचारादि श्रुतरूप होता है । गमिक श्रुतमें सूत्र की आदिमें “सुयं मे आ उसंतेणं” यह पाठ उच्चरित होता है उसी तरह से मध्य और आदिमें पुनः इस पाठका उच्चारण अगमिक श्रुतमें नहीं किया है, अतः अगमिक श्रुतमें गमिकश्रुतसे भिन्नता आ जाती है । यह गमिकश्रुत और अगमिक श्रुतका वर्णन हुआ ॥

પણ એજ પ્રકારના પાઠનું ઉચ્ચારણ યથાસંભવ સમજી લેવું જોઈએ એ પ્રકારનો ગમ જે જે શ્રુતમાં થાય છે તેનું નામ ગમિકશ્રુત છે. આ ગમિકશ્રુત-પ્રાયઃ બારમાં દૃષ્ટિવાદ અંગ છે. શિષ્ય ફરીથી પૂછે છે—હે ભદન્ત ! અગમિક શ્રુત શું છે ? ઉત્તર—કાલિક શ્રુતનું નામ અગમિક શ્રુત છે, કારણ કે તેમાં ગમિક શ્રુતથી ભિન્નતા રહેલ છે. તે સામાન્ય રીતે આચારાદિ શ્રુતરૂપ હોય છે. ગમિક શ્રુતમાં સૂત્રને પ્રારંભે “સુય મે આ ઊસંતેણ” આ પાઠ ઉચ્ચારાય છે એજ પ્રમાણે મધ્ય અને આદિમાં ફરીથી આ પાઠનું ઉચ્ચારણ અગમિક શ્રુતમાં કરાતું નથી, તેથી અગમિક શ્રુતમાં ગમિક શ્રુત કરતાં ભિન્નતા આવે છે. આગમિક શ્રુત અને અગમિક શ્રુતનું વર્ણન થયું.

છાયા—અથવા તત્ સમાસતો દ્વિવિધં પ્રજ્ઞસમ્ । તદ્ યથા—અંગપ્રવિષ્ટમ્, અંગવાહ્યં ચ । અથ કિં તદ્ અંગવાહ્યમ્ ? । અંગવાહ્યં દ્વિવિધં પ્રજ્ઞસમ્ । તદ્ યથા—આવશ્યકં ચ, આવશ્યકવ્યતિરિક્તં ચ । અથ કિં તદાવશ્યકમ્ । આવશ્યકં પદ્ધિવિધં પ્રજ્ઞસમ્—તદ્ યથા સામાયિકં ૧, ચતુર્વિંશતિસ્તવઃ ૨, વન્દનકં ૩, પ્રતિક્રમણં ૪, કાયોત્સર્ગઃ ૫, પ્રત્યાખ્યાનમ્ ૬ । તદેતદ્ આવશ્યકમ્ ॥

ટીકા—‘અહવા૦’ ઇત્યાદિ । અથવા તત્ શ્રુતમ્ અર્હદુપદેશાનુસારિ શ્રુતમિત્યર્થઃ સમાસતઃ—સંક્ષેપેણ દ્વિવિધં પ્રજ્ઞસમ્ । તત્ યથા—અંગપ્રવિષ્ટમ્, અંગવાહ્યં ચ । નનુ પૂર્વમેવ ચતુર્દશભેદકથનાધિકારે ત્રયોદશચતુર્દશભેદરૂપેણ અંગપ્રવિષ્ટમનંગપ્રવિષ્ટમિત્યુપન્યસ્તમ્, તત્ કિમર્થમિહ—“અહવા તં સમાસઓ દુવિહં પળ્ળત્તં” ઇત્યાદ્યુપન્યાસેન તદેવ પુનરુચ્યતે ? ઇતિ ચેત્ ?

ઉચ્યતે—ઈહ સર્વે શ્રુતભેદા અંગપ્રવિષ્ટાનંગપ્રવિષ્ટરૂપભેદદ્વય એવાન્તર્ભવન્તિ ।

“અહવા તં સમાસઓ૦” ઇત્યાદિ ।

અથવા—અર્હન્ત ભગવાનકે ઉપદેશકા અનુસરણ કરનેવાલા વહ શ્રુત સંક્ષેપસે દો પ્રકારકા ખી કહા ગયા હૈ, વે દો પ્રકાર ચે હૈ—૧ અંગપ્રવિષ્ટ—૨ અંગવાહ્ય ।

શંકા—પહિલે હી ચૌદહ ભેદોં કે કથનકે અધિકારમેં તેરહ ઓર ચૌદહ ભેદોંકે રૂપસે અંગપ્રવિષ્ટ તથા અનંગપ્રવિષ્ટ એસા કહ દિયા ગયા હૈ ફિર યહાં દુવારા “અહવા તં સમાસઓ દુવિહં પળ્ળત્તં” ઇસ પ્રકાર કે કથન કી કયા આવશ્યકતા થી ? ।

ઉત્તર—ઈસ તરહ જો યહાં પર પુનઃ પ્રગટ કરનેમેં આયા હૈ ઉસકા કારણ યહ હૈ કિ સૂત્રકાર યહ કહના ચાહતે હૈં કિ જિતને ખી સમસ્ત શ્રુતકે ભેદ હૈં વે સબ ઇન્હોં દો ભેદોંમેં અન્તર્ભૂત હો જાતે હૈં । તથા

“અહવા તં સમાસ ઓ૦” ઇત્યાદિ.

અથવા—અર્હન્ત લગવાનના ઉપદેશને અનુસારના તે શ્રુત સંક્ષિપ્તમાં આ પ્રમાણે બે પ્રકારનું કહેલ છે—(૧)અંગ પ્રવિષ્ટ, (૨) અંગ બાહ્ય.

શંકા—પહેલાં જ ચૌદ લેદોનાં કથનનાં અધિકારમાં તેર અને ચૌદ લેદોના રૂપે અંગપ્રવિષ્ટ તથા અનંગપ્રવિષ્ટ એમ કહેવાઈ ગયું છે તો પછી અહીં બીજી વાર “અહવા તં સમાસઓ દુવિહં પળ્ળત્તં” આ પ્રકારનાં કથનની શી આવશ્યકતા હતી ?

ઉત્તર—આ રીતે જે અહીં ફરીથી પ્રગટ કરવામાં આવેલ છે તેનું કારણ એ છે કે સૂત્રકાર એ કહેવા માગે છે કે જેટલા સમસ્ત શ્રુતના લેદ છે તે બધાનો

एतमर्थं बोधयितुं पुनरुपन्यासः । अथवा सर्वेषु श्रुतभेदेष्वङ्गप्रविष्टानङ्गप्रविष्टभेदयो-  
रर्हदुपदेशानुसारित्वात् प्राधान्यमस्तीति बोधयितुं पुनस्तदुपादानमिति न दोषः ।

अङ्गप्रविष्टमिति । इह यथा पुरुषस्य द्वादशाङ्गानि भवन्ति, “ द्वौ चरणौ, द्वे  
जङ्घे, द्वे ऊरुणी, द्वे गात्रार्धे, द्वौ बाहू, ग्रीवा, शिरश्च ।

तथा चोक्तम्—

पाददुग्ं जंघोरू, गातदुगद्धं तु दो य बाहूओ ।

ग्रीवा सिरं च पुरिसो, बारस अंगो सुयविसिद्धो ॥ १ ॥

छाया—पादद्विकं जङ्घोरू गात्र द्विकार्धं तु द्वौ च बाहू ।

ग्रीवा शिरश्च पुरुषो द्वादशाङ्गः श्रुतविशिष्टः ॥ १ ॥

तथा श्रुतरूपस्यापि परमपुरुषस्य द्वादशाङ्गानि आचारादीनि सन्तीति वेदि-  
तव्यम् । श्रुतપુરુષસ્યાઙ્ગેષુ પ્રવિષ્ટમ્ અઙ્ગભાવેન વ્યવસ્થિતમિત્યર્થઃ । અઙ્ગવાહ્યમિતિ ।  
યત્તુ તસ્યૈવ દ્વાદશાઙ્ગાત્મકસ્ય શ્રુતપુરુષસ્યાર્થાવગમે પરમોપકારકત્વેન સ્થિતં શ્રુતં  
તદઙ્ગવાહ્યમ્ તદેવાનઙ્ગપ્રવિષ્ટમિતિ ।

તત્રાલ્પવક્તવ્યતયા પ્રથમમઙ્ગવાહ્યમધિકૃત્ય પૃચ્છતિ—‘ સે કિં તં૦ ’ ઇત્યાદિ ।  
અથ કિં તદ્ અઙ્ગવાહ્ય ? મિતિ શિષ્ય પ્રશ્નઃ । ઉત્તરમાહ—‘ અંગવાહિરં૦ ’ ઇત્યાદિ ।

સમસ્ત શ્રુતકે ભેદોં મેં ઇન્હીં દો ભેદોંકી પ્રધાનતા હૈ, કારણ ઇનમેં હી  
અર્હન્ત પ્રશ્નકે ઉપદેશ કી અનુસારિતા રહતી હૈ । જિસ પ્રકાર પુરુષકે ચે  
દો પૈર ૨, દો જાંઘે ૪, દો ઉરૂ ૬, દો પાર્શ્વભાગ ૮, દો બાહુ ૧૦, ગ્રીવા  
૧૧ ઓર શિર ૧૨, ચે બારહ અંગ હોતે હૈં ઊસી પ્રકારસે શ્રુતરૂપ પરમ  
પુરુષકે ભી ચે આચારાંગ આદિ બારહ અંગ હોતે હૈં । ઇન બારહ અંગોંમેં  
જો શ્રુતનિબદ્ધ હુઆ હૈ વહ અંગપ્રવિષ્ટ શ્રુત હૈ । તથા જો શ્રુત દ્વાદશાં-  
ગાત્મકશ્રુત પુરુષકે અર્થાવગમમેં પરમ સહાયક હોતા હૈ વહ અંગવાહ્ય-  
શ્રુત હૈ । અંગવાહ્યશ્રુતકા ડુસરા નામ અનઙ્ગપ્રવિષ્ટ ભી હૈ ।

આ બે લેદોમાં સમાવેશ થઈ જાય છે. તથા શ્રુતના સમસ્ત લેદોમાં એ બે  
લેદોની પ્રધાનતા છે, કારણ કે તેમનામાં જ અર્હન્ત ભગવનાનના ઉપદેશની  
અનુસારિતા રહે છે. જે પ્રકારે પુરુષના બે પગ ૨, બે જંઘા ૪, બે ઉરૂ ૬,  
બે પાર્શ્વભાગ ૮, બે ભૂજ ૧૦, ગ્રીવા ૧૧, અને શિર ૧૨, એ બાર અંગ  
હોય છે. એ બાર અંગોમાં જે શ્રુત નિબદ્ધ થયું છે તે અંગપ્રવિષ્ટ શ્રુત છે.  
તથા જે શ્રુત દ્વાદશાંગાત્મકશ્રુત પુરુષના અર્થાવગમમાં પરમ સહાયક થાય છે તે  
અંગવાહ્યશ્રુત છે. અંગવાહ્ય શ્રુતનું બીજું નામ અનંગપ્રવિષ્ટ પણ છે.

અઙ્ગબાહ્યં શ્રુતં દ્વિવિધં પ્રજ્ઞસમ્ । તદ્ યથા-આવશ્યકં ચ આવશ્યકવ્યતિરિક્તં ચ ।  
પુનઃ પૃચ્છતિ—‘ સે કિં તં ’ ઇત્યાદિ । અથ કિં તદાવશ્યક ? મિતિ । પ્રશ્નઃ ।  
ઉત્તરમાહ—‘ આવસ્સયં ’ ઇત્યાદિ । આવશ્યકમિતિ । અવશ્યં કર્તવ્યમ્ આવશ્યકમ્,  
શ્રમણાદિભિરવશ્યમુભયકાલં યત્ ક્રિયતે તદિત્યર્થઃ । યદ્વા-આ-સમન્તાદ્, વશ્યા  
ઇન્દ્રિયકષાયાદિ ભાવશત્રવો યસ્માત્ તદાવશ્યકમ્ । યદ્વા-જ્ઞાનાદિગુણકદમ્બકં મોક્ષો  
વા આ-સમન્તાદ્, વશ્યઃ ક્રિયતેડનેત્યાવશ્યકમ્ । આવશ્યકપ્રતિપાદકં યત્ શ્રુતં તદ-  
પ્યાવશ્યકમ્ । આવશ્યકં ષડ્વિધં પ્રજ્ઞસમ્ । તદ્ યથા-સામાયિકમ્ ૧, ચતુર્વિં-  
શતિસ્તવઃ ૨, વન્દનક ૩, પ્રતિક્રમણ ૪, કાયોત્સર્ગઃ ૫, પ્રત્યાખ્યાનમ્ ૬, સામા-

અંગપ્રવિષ્ટ ઓર અઙ્ગબાહ્ય इन दोनों भेदों में से अल्पवक्तव्यता होनेके कारण शिष्य प्रथम अङ्गबाल्यके विषयमें पूछता है—हे भदन्त! अङ्गबाल्यश्रुतका क्या स्वरूप है ? उत्तर—अङ्गबाल्यश्रुतज्ञान दो प्रकारका कहा गया है, वे दो प्रकार ये हैं—आवश्यकश्रुत १, आवश्यक व्यतिरेकश्रुत २ । साधु श्रावक आदि जो कृत्य उभयकालमें अवश्य करते हैं वह आवश्यक है, अथवा जिससे इन्द्रिय, कषाय आदि भावश्रुत अच्छी तरहसे वशमें किये जाते हैं वह आवश्यक है, अथवा जिसके द्वारा ज्ञानादि गुणोंका समूह व मोक्ष भले प्रकारसे स्वाधीन किया जा सकता है वह आवश्यक है । इस आवश्यक बाल्यार्थ का प्रतिपादक जो श्रुत है वह आवश्यक श्रुत है । यह आवश्यक छह प्रकारका बतलाया है, वे छह प्रकार ये हैं—सामायिक १, चतुर्विंशतिस्तव २, वन्दनक ३, प्रतिक्रमण ४, कायोत्सर्ग ५ और प्रत्याख्यान ६ । इन छह आवश्यकों की

અંગપ્રવિષ્ટ અને અંગબાહ્ય એ બંને ભેદોમાંથી અલ્પવક્તવ્યતા હોવાને કારણે શિષ્ય પ્રથમ અંગબાહ્યને વિષે પૂછે છે—હે ભદન્ત! અંગબાહ્ય શ્રુતનું શું સ્વરૂપ છે ?

ઉત્તર—અંગબાહ્ય શ્રુતજ્ઞાન નીચે પ્રમાણે બે પ્રકારનું છે. (૧) આવશ્યક શ્રુત, (૨) આવશ્યક વ્યતિરિક્ત શ્રુત. સાધુ, શ્રાવક આદિ જે ક્રિયા બંને કાળે અવશ્ય કરે છે તે આવશ્યક છે. અથવા જે વડે ઈન્દ્રિય, કષાય આદિ ભાવશ્રુત સારી રીતે કાબુમાં લેવાય છે તે આવશ્યક છે. અથવા જેના દ્વારા જ્ઞાનાદિ ગુણોનો સમૂહ અથવા મોક્ષ સારી રીતે પ્રાપ્ત કરી શકાય છે તે આવશ્યક છે. આ આવશ્યક વાચ્યાર્થનું પ્રતિપાદક જે શ્રુત છે તે આવશ્યક શ્રુત છે. એ આવશ્યક છ પ્રકારના બતાવ્યા છે—તે છ પ્રકાર આ પ્રમાણે છે—(૧) સામાયિક, (૨) ચોવીસ સ્તવ, (૩) વંદણા, (૪) પ્રતિક્રમણ, (૫) કાયોત્સર્ગ, અને (૬) પ્રત્યાખ્યાન. એ છ આવશ્યકોની વ્યાખ્યા અમે ઉત્તરાધ્યાન સૂત્રની પ્રિય-

યિકાદીનાં વ્યાખ્યાઝ્માભિરુત્તરાધ્યયન સૂત્રસ્ય પ્રિયદર્શની ટીકાયામેકોનત્રિશત-  
માધ્યયને કૃતેતિ તત્ર દ્રષ્ટવ્યા જિજ્ઞાસુભિઃ । તદેતદાવશ્યકં વર્ણિતમ્ ॥

મૂલમ્—સે કિં તં આવસ્સયવઙ્ગરિત્તં ? । આવસ્સયવઙ્ગરિત્તં  
દુવિહં પળ્લવ્વત્તં । તં જહા—કાલિયં ચ, ઉક્કાલિયં ચ । સે કિં તં  
ઉક્કાલિયં ? । ઉક્કાલિયં અળેગવિહં પળ્લવ્વત્તં । તં જહા—દસવેયા-  
લિયં ૧, કપ્પિયાકપ્પિયં ૨, ચુલ્લકપ્પસુયં ૩, મહાકપ્પસુયં ૪,  
ઉવવાઙ્ગયં ૫, રાયપસેણિયં ૬, જીવાભિગમો ૭, પળ્લવ્વણા ૮,  
મહાપળ્લવ્વણા ૯, પમાયપ્પમાયં ૧૦, નંદી ૧૧, અણુઓગદારાઙ્ગં ૧૨,  
દેવિંદસ્થઓ ૧૩, તંદુલવેયાલિયં ૧૪, ચંદાવિજ્ઞયં ૧૫, સૂરપ-  
ળ્લવ્વત્તી ૧૬, પોરિસિમંડલં ૧૭, મંડલપવેસો ૧૮, વિજ્ઞાચરણ-  
વિણિચ્છઓ ૧૯, ગણિવિજ્ઞા ૨૦, જ્ઞાણવિભત્તી ૨૧, મરણવિ-  
ભત્તી ૨૨, આયવિસોહી ૨૩, વીયરાગસુયં ૨૪, સંલેહણાસુયં ૨૫,  
વિહારકપ્પો ૨૬, ચરણવિહી ૨૭, આઊરપચ્ચક્કલાણં ૨૮, મહા-  
પચ્ચક્કલાણં ૨૯, એવમાઙ્ગ । સે તં ઉક્કાલિયં ॥

છાયા—અથ કિં તદાવશ્યકવ્યતિરિક્તમ્ ? આવશ્યકવ્યતિરિક્તં દ્વિવિધં  
પ્રજ્ઞપ્તમ્ । તદ્ યથા—કાલિકં ચ, ઉત્કાલિકં ચ । અથ કિં તદુત્કાલિકમ્ ? ।  
ઉત્કાલિકમનેકવિધં પ્રજ્ઞપ્તમ્ । તદ્ યથા—દશવૈકાલિકમ્ ૧, કલ્પિકાકલ્પિકમ્,  
( કલ્પાકલ્પમ્ ) ૨, ચુલ્લ—( છુલ્લ ) કલ્પશ્રુતમ્ ૩, મહાકલ્પશ્રુતમ્ ૪, ઔપપાતિકં  
૫, રાજપ્રશ્નીયમ્ ૬, જીવાભિગમઃ ૭, પ્રજ્ઞાપના ૮, મહાપ્રજ્ઞાપના ૯, પ્રમાદાપ્રમાદં  
૧૦, નન્દિઃ ૧૧, અનુયોગદ્વારાણિ ૧૨, દેવેન્દ્રસ્તવઃ ૧૩, તંદુલવૈચારિકં ૧૪,

વ્યાખ્યા હમને ઉત્તરાધ્યયન સૂત્રકી પ્રિયદર્શની ટીકામેં ઉનતીસવેં અધ્ય-  
યનમેં કી હૈ અતઃ જિજ્ઞાસુજન ઇસ વિષયકો વહાંસે જાન સકતે હૈ ।  
ઇસ પ્રકાર આવશ્યકકા યહ છહ ભેદ રૂપ કથન હૈ ॥

દર્શની ટીકામાં ઓગણત્રીસમાં અધ્યયનમાં કરી છે તે જિજ્ઞાસુઓ એ વિષયને  
તેમાંથી સમજી શકે છે. આ રીતે આવશ્યકનું આ છ ભેદરૂપ કથન છે.

ચન્દ્રકવેધ્યં ૧૫, સૂર્યપ્રજ્ઞપ્તિઃ ૧૬, પૌરુષીમણ્ડલમ્ ૧૭, મણ્ડલપ્રવેશઃ ૧૮, વિદ્યા-  
ચરણ વિનિશ્ચયઃ ૧૯, ગણિવિદ્યા ૨૦, ધ્યાનવિમક્તિઃ ૨૧, મરણવિમક્તિઃ ૨૨,  
આત્મવિશોધિઃ ૨૩, વીતરાગશ્રુતમ્ ૨૪, સંલેખનાશ્રુતમ્ ૨૫, વિહારકલ્પઃ ૨૬,  
ચરણવિધિઃ ૨૭, આતુરપ્રત્યાખ્યાનમ્ ૨૮, મહાપ્રત્યાખ્યાનમ્ ૨૯, એવમાદિ ।  
તદેતદુત્કાલિકમ્ ॥

ટીકા—શિષ્યઃ પૃચ્છતિ—‘સે કિં તં’ ઇત્યાદિ । અથ કિં તદાવશ્યકવ્ય-  
તિરિક્તમ્ ?, ઇતિ શિષ્ય પ્રશ્નઃ । ઉત્તરમાહ—‘આવસ્સયવહરિત્તં’ ઇત્યાદિ । આવ-  
શ્યકવ્યતિરિક્તં દ્વિવિધં પ્રજ્ઞપ્તમ્ । તદ્ યથા—કાલિકમ્, ઉત્કાલિકં ચ । તત્ર યદ્  
દિવસે રાત્રૌ ચ પ્રથમ ચરમપૌરુષી દ્વયે એવ પઠ્યતે, તત્ કાલિકમ્, કાલેન નિર્વૃત્તં  
કાલિક મિતિ વ્યુત્પત્તેઃ । યત્તુ કાલવેલાવર્જં પઠ્યતે, તદુત્કાલિકમ્ । તત્રાલ્પવક્ત-  
વ્યતયા પ્રથમમુત્કાલિકમધિકૃત્ય શિષ્યઃ પૃચ્છતિ—‘સે કિં તં’ ઇત્યાદિ । અથ  
કિં તદુત્કાલિકં શ્રુત ?—મિતિ શિષ્યપ્રશ્નઃ । ઉત્તરમાહ—‘ઉકાલિયં’ ઇત્યાદિ ।

‘સે કિં તં આવસ્સયવહરિત્તં’ ઇત્યાદિ ।

શિષ્ય પૂછતા હૈ—હે ભદન્ત ! આવશ્યક વ્યતિરિક્તશ્રુત કા કયા  
સ્વરૂપ હૈ ? ઉત્તર—આવશ્યક વ્યતિરિક્તશ્રુત દો પ્રકાર કા બતલાયા ગયા  
હૈ, વે ઉસકે દો પ્રકાર યે હૈ—૧ કાલિક ૨ ઉત્કાલિક । દિન તથા રાત્રિ  
મૈં જો પ્રથમ ચરમપૌરુષીદ્વય મૈં હી પઠિત હોતા હૈ વહ કાલિક, એવં જો  
અસ્વાધ્યાયરૂપ કાલ કો છોડકર પઠિત હોતા હૈ વહ ઉત્કાલિક હૈ ।

શિષ્ય પૂછતા હૈ—હે ભદન્ત ! ઉત્કાલિકશ્રુત કા કયા સ્વરૂપ હૈ ?  
યહાં પર ભી શિષ્ય ને જો યહ પ્રશ્ન વ્યતિક્રમ સે કિયા હૈ ઉસકા તાત્પર્ય  
યહી હૈ કિ સૂત્રકાર કો ઉત્કાલિક કૈ વિષય મૈં અલ્પરૂપ સે કહના હૈ  
અતઃકાલિક કૈ વિષય મૈં શિષ્ય કૈ પ્રશ્ન કા ઉદ્ઘાવન કરકે ઉત્કાલિક  
કૈ વિષય મૈં હી સર્વપ્રથમ સૂત્રકાર ને પ્રશ્ન કા ઉદ્ઘાવન કિયા હૈ ।

“સે કિં તં આવસ્સયવહરિત્તં” ઇત્યાદિ.

શિષ્ય પૂછે છે—હે ભદન્ત ! આવશ્યક વ્યતિરિક્ત શ્રુતનું શું સ્વરૂપ છે ?

ઉત્તર—આવશ્યક વ્યતિરિક્ત શ્રુત બે પ્રકારનું બતાવ્યું છે તે આ પ્રમાણે છે—  
(૧) કાલિક, (૨) ઉત્કાલિક, દિવસ તથા રાત્રે જેનો પ્રથમ ચરમ પૌરુષીદ્વયમાં  
જ પાઠ થાય છે તે કાલિક, અને જેનો કાળને છોડીને પાઠ કરાય છે તે ઉત્કાલિક છે.

શિષ્ય પૂછે છે—હે ભદન્ત ! ઉત્કાલિક શ્રુતનું શું સ્વરૂપ છે ? અહીં યદ્ય  
શિષ્યે જે આ પ્રશ્નવ્યતિક્રમથી કર્યો છે તેનું તાત્પર્ય એ છે કે સૂત્રકારને ઉત્કા-  
લિકને વિષે થોડાં પ્રમાણમાં જ કહેવાનું છે તેથી કાલિકના વિષે શિષ્યનો પ્રશ્ન  
ઉભો ન કરતાં ઉત્કાલિકના વિષયમાં જ સૌથી પહેલાં સૂત્રકારે પ્રશ્ન ઉભો કર્યો છે ?



ઉત્કાલિકં શ્રુતમનેકવિધં પ્રજ્ઞસમ્ । તદ્ યથા—‘દશવૈકાલિકમ્’<sup>૦</sup>’ ઇત્યાદિ । તત્ર દશવૈકાલિકં સુપ્રસિદ્ધમ્ ? । તથા—કલ્પિકાકલ્પિકમ્—કલ્પાકલ્પપ્રતિપાદકં સૂત્રમિત્યર્થઃ ૨ । તથા—ચુલ્લકલ્પશ્રુતં ૩, મહાકલ્પશ્રુતમિતિ । કલ્પઃ—સ્થવિરાદિકલ્પઃ । તત્પ્રતિપાદકં શ્રુતં—કલ્પશ્રુતમ્ । તત્ત્વ દ્વિવિધં—ચુલ્લકલ્પશ્રુતં મહાકલ્પશ્રુતમિતિ ।

ઉત્તર—ઉત્કાલિકશ્રુત અનેક પ્રકાર કા કહા ગયા હૈ, જૈસે-દશ-વૈકાલિક ૧, કલ્પિકાકલ્પિક-કલ્પાકલ્પપ્રતિપાદકસૂત્ર ૨, ચુલ્લકલ્પ-શ્રુત ૩, મહાકલ્પશ્રુત ૪, ઔપપાતિક ૫, રાજપ્રશ્નીય ૬, જીવાભિગમ ૭, પ્રજ્ઞાપના ૮, મહાપ્રજ્ઞાપના ૯, પ્રમાદાપ્રમાદ ૧૦, નંદિ ૧૧, અનુયોગદ્વાર ૧૨, દેવેન્દ્રસ્તવ ૧૩, તન્દુલ વૈચારિક ૧૪, ચન્દ્રકવેદ્ય ૧૫, સૂર્યપ્રજ્ઞસિ ૧૬, પૌરુષીમણ્ડલ ૧૭, મણ્ડલપ્રવેશ ૧૮, વિદ્યાચરણવિનિશ્ચય ૧૯, ગણિ-વિદ્યા ૨૦, ધ્યાનવિભક્તિઃ ૨૧, મરણવિભક્તિ ૨૨, આત્મવિશોધિ ૨૩, વીતરાગશ્રુત ૨૪, સંઘેલનાશ્રુત ૨૫, વિહારકલ્પ ૨૬, ચરણવિધિ ૨૭, આતુરપ્રત્યાખ્યાન ૨૮, મહાપ્રત્યાખ્યાન ૨૯, ઇત્યાદિ, યે સમસ્ત શ્રુત ઉત્કાલિક હૈ ।

इनमें दशवैकालिक प्रसिद्ध है १ । कलपाकल्प का प्रतिपादकश्रुत कल्पिकाकल्पिक है २ । स्थविर आदि के कल्प का प्रतिपादक जो श्रुत है वह कल्पसूत्र है । यह चुल्लकल्पश्रुत तथा महाकल्पश्रुत के भेद से दो प्रकार का बतलाया गया है । जो श्रुत, ग्रंथ एवं अर्थ की अपेक्षा अल्प

ઉત્તર—ઉત્કાલિકશ્રુત અનેક પ્રકારનાં કહેલ છે, જેવાં કે (૧) દશવૈકાલિક, (૨) કલ્પિકા કલ્પિક-કલ્પાકલ્પ પ્રતિપાદક સૂત્ર, (૩) ચુલ્લકલ્પશ્રુત, (૪) મહા-કલ્પ શ્રુત, (૫) ઔપપાતિક, (૬) રાજપ્રશ્નીય, (૭) જીવાભિગમ, (૮) પ્રજ્ઞા-પના, (૯) મહાપ્રજ્ઞાપના, (૧૦) પ્રમાદપ્રમાદ, (૧૧) નંદી, (૧૨) અનુયોગદ્વાર, (૧૩) દેવેન્દ્રસ્તવ, (૧૪) તન્દુલ વૈચારિક, (૧૫) ચન્દ્રક વેદ્ય, (૧૬) સૂર્ય પ્રજ્ઞસિ, (૧૭) પૌરુષી મંડલ, (૧૮) મંડલ પ્રવેશ, (૧૯) વિદ્યાચરણ વિનિશ્ચય, (૨૦) ગણિવિદ્યા, (૨૧) ધ્યાનવિભક્તિ, (૨૨) મરણ વિભક્તિ, (૨૩) આત્મ-વિશોધિ, (૨૪) વીતરાગ શ્રુત, (૨૫) સંઘેલના શ્રુત, (૨૬) વિહાર કલ્પ, (૨૭) ચરણવિધિ, (૨૮) આતુર પ્રત્યાખ્યાન. મહાપ્રત્યાખ્યાન ઇત્યાદિ આ સઘળા ઉત્કાલિક શ્રુત છે.

તેઓમાં દશવૈકાલિક પ્રસિદ્ધ છે. ૧ કલ્પાકલ્પનું પ્રતિપાદક શ્રુત કલ્પિકા-કલ્પિક છે. ૨ સ્થવિર આદિના કલ્પનું પ્રતિપાદક જે શ્રુત છે તેકલ્પસૂત્ર છે. તે ચુલ્લકલ્પશ્રુત તથા મહાકલ્પશ્રુત એ ભેદથી બે પ્રકારનું દર્શાવ્યું છે. જે શ્રુત

તત્ર યદલ્પગ્રન્થમલ્પાર્થ ચ તત્ ચુલ્લકલ્પશ્રુતમ્ ૩, યત્તુમહાગ્રન્થં-મહાર્થ ચ તન્મહા-  
કલ્પશ્રુતમિતિ ૪, કલ્પિકાકલ્પિકાદિકં ત્રયં વિચ્છિન્નમ્ । ઔપપાતિકં ૫; રાજ-  
પ્રશ્નીયં ૬, જીવાભિગમઃ ૭, એતત્રયં પ્રસિદ્ધમ્, ' પ્રજ્ઞાપના, મહાપ્રજ્ઞાપના ' ઇતિ ।  
જીવાદીનાં પદાર્થાનાં પ્રજ્ઞાપનં પ્રજ્ઞાપના, તત્ત્વ સૂત્રં પ્રજ્ઞાપનાસૂત્રમ્ । એતદુપલભ્યતે ૮,  
સૈવબૃહત્તરા મહાપ્રજ્ઞાપના, તત્ત્વ સૂત્રં મહાપ્રજ્ઞાપનાસૂત્રં તદ્વિચ્છિન્નમ્ ૯ । તથા-  
પ્રમાદાપ્રમાદમ્=પ્રમાદાપ્રમાદસ્વરૂપ ભેદફલ પ્રતિપાદકં સૂત્રમિત્યર્થઃ । તત્ર પ્રમાદ  
સ્વરૂપં ચૈવમુક્તમ્-પ્રચુરકર્મેન્ધન પ્રભવ-નિરન્તરાઽવિધ્માતશારીરમાનસાનેકદુઃખહુત-  
વહ્જ્વાલાકલાપપરીતમશેષમેવસંસારવાસગૃહં પશ્યંસ્તન્મધ્યવર્ત્યપિ, સતિ ચ તન્નિર્ગ-

હૈ વહ ચુલ્લકલ્પશ્રુત હૈ ૩, એવં જો શ્રુત, ગ્રન્થ ઔર અર્થ કી અપેક્ષા મહાન્  
હૈ વહ મહાકલ્પ શ્રુત હૈ ૪ । યે કલ્પિકા કલ્પિક આદિ ત્રીન વિચ્છિન્ન  
હો ગયે હૈં । ઔપપાતિક સૂત્ર ૫, રાજપ્રશ્નીય સૂત્ર ૬ ઔર જીવાભિગમ  
સૂત્ર ૭, યે ત્રીન પ્રસિદ્ધ હૈં । જીવાદિક પદાર્થોં કે સ્વરૂપકા પ્રતિપાદક જો  
સૂત્ર હૈ વહ પ્રજ્ઞાપના સૂત્ર હૈ । યહ સૂત્ર અભી ઉપલબ્ધ હોતા હૈ ૮ । મહા  
પ્રજ્ઞાપના સૂત્ર વિચ્છિન્ન હો ગયા હૈ ૯ । જિસ સૂત્રમેં પ્રમાદ તથા અપ્રમા-  
દકે સ્વરૂપકા ઉનકે ભેદોંકા તથા ફલકા પ્રતિપાદન હુઆ હૈ વહ પ્રમાદા-  
પ્રમાદ સૂત્ર હૈ, ઇસ સૂત્રમેં પ્રમાદકા સ્વરૂપ ઇસ પ્રકારસે કહા હૈ-" યહ  
સંસારી જીવ અચ્છી તરહ સે દેખ રહા હૈ કિ મૈં જિસ સંસારરૂપી નિવા-  
સગૃહકે ભીતર રહતા હું વહ પ્રચુર કર્મરૂપી ઇન્ધનસે ઉત્પન્ન હુઈ અનેક  
પ્રકારકે શારીરિક તથા માનસિક દુઃખરૂપી અગ્નિજ્વાલાસે કિ જો કમ્પી  
બુઝ્ઝનેવાલી નહીં હૈ વહુત કુરી તરહ ચારોં ઓર સે ઘીરા હુઆ હૈ, તથા

ગ્રંથ અને અર્થની અપેક્ષાએ અલ્પ છે તે ચુલ્લકલ્પશ્રુત છે. (૩) તેમજ જે શ્રુત,  
ગ્રન્થ અને અર્થની અપેક્ષાએ મહાન છે તે મહાન કલ્પશ્રુત છે. (૪) એ કલ્પિકા-  
કલ્પિક આદિ ત્રણ વિચ્છિન્ન થઈ ગયાં છે. ઔપપાતિક સૂત્ર, (૫) રાજપ્રશ્નીય સૂત્ર (૬)  
અને જીવાભિગમ સૂત્ર (૭) એ ત્રણ પ્રસિદ્ધ છે. જીવાદિક પદાર્થોના સ્વરૂપનું પ્રતિ-  
પાદક જે સૂત્ર છે તે પ્રજ્ઞાપનાસૂત્ર છે. આ સૂત્ર અત્યારે ઉપલબ્ધ છે. ૮ મહા-  
પ્રજ્ઞાપના સૂત્ર વિચ્છિન્ન થઈ ગયું છે. ૯ જે સૂત્રમાં પ્રમાદ તથા અપ્રમાદનાં સ્વરૂ-  
પનું, તેમના ભેદોનું તથા ફળનું પ્રતિપાદન થયું છે તે પ્રમાદા પ્રમાદ સૂત્ર  
છે, તે સૂત્રમાં પ્રમાદનું સ્વરૂપ આ પ્રમાણે કહેલ છે-" આ સંસારી જીવ સારી  
રીતે જોઈ રહ્યો છે કે હું જે સંસારરૂપી નિવાસગૃહની અંદર રહું છું તે અપાર  
કર્મરૂપી ઇન્ધનથી ઉત્પન્ન થયેલ અનેક પ્રકારના શારીરિક તથા માનસિક દુઃખ-  
રૂપી અગ્નિજ્વાળાથી, કે જે કદી બુઝાતી નથી, ઘણી " ખરાબ રીતે આરે  
આગ્રથી ઘેરાયેલ છે, તથા તેમાંથી નીકળવાનો ઉપાય જો કે વીતરાગ પ્રણીત

મનોપાયે વીતરાગપ્રણીતચિન્તામણી યતો વિચિત્રકર્મોદયસાહાય્યજનિતાત્ પરિણામ-  
વિશેષાદપશ્યન્નિવ તદ્વ્યયમવિગણ્ય વિશિષ્ટ પરલોકક્રિયાવિમુક્તિવાદસ્ય જીવઃ,  
સ खलु प्रमादः । तस्य च प्रमादस्य ये हेतवो मद्यादयस्तेऽपि प्रमादाः,  
तत्कारणत्वात् । उक्तञ्च—

“मज्जं विसय कसाया, निदा विगहा य पंचमा भणिया ।

ए ए पंच पमाया, जीवं पाडेंति संसारे ॥ १ ॥”

एतस्य च पञ्चविधस्यापि प्रमादस्य फलं चतुर्गतिक संसारपतनम् ।

किञ्च—

इससे निकलनेका उपाय यद्यपि वीतरागप्रणीत धर्मरूपी चिन्तामणि है सो वह मेरी दृष्टिमें नहीं आ रहा है, कारण मेरे भीतर कुछ ऐसा विचित्र कर्मोदयकी सहायतासे परिणाम विशेष आ गया है कि जिसका वजह से मेरी दृष्टि उस ओर जाती ही नहीं है, और न इस संसार निवासगृहमें रहते हुए मुझे कोई भय ही प्रतीत होता है, इसी लिये मैं विशिष्ट परलोककी क्रियाओंसे पराङ्मुख हो रहा हूँ” इस तरहकी परिस्थितिको बनानेवाला एक प्रमाद है । तात्पर्य यह कि जानबूझ कर भी जीव प्रमादके कारण ही आत्मकल्याणके मार्गसे पराङ्मुख बना रहता है । इस प्रमादके जो कारण मद्यादिक बतलाये गये हैं वे भी प्रमाद में ही परिगणित होते हैं । कहा भी है—

“मज्जं विसयकसाया, निदा विगहा य पंचमा भणिया ।

ए ए पंच पमाया, जीवं पाडेंति संसारे ” ॥ १ ॥

ધર્મરૂપી ચિન્તામણી છે તે મારી નજરે પડતું નથી કારણ કે મારી અંદર કોઈ એવા વિચિત્ર કર્મોદયની સહાયતાથી પરિણામ વિશેષ આવી ગયું છે કે જેને કારણે મારી નજર તેની તરફ થતી જ નથી, અને આ સંસારરૂપી નિવાસગૃહમાં રહેતા એવા મને કોઈ ભય પણ લાગતો નથી; તે કારણે હું વિશિષ્ટ પરલોકની ક્રિયાઓથી વિમુખ રહ્યો છું” આ પ્રકારની પરિસ્થિતિને ઉત્પન્ન કરનાર પ્રમાદ છે. તાત્પર્ય એ કે જાણવા છતાં જીવ પ્રમાદને કારણે જ આત્મ-કલ્યાણના માર્ગથી વિમુખ રહે છે. આ પ્રમાદના મદ્યાદિક જે કારણો બતાવ્યા છે. તે પણ પ્રમાદમાં જ પરિગણિત થયા છે. કહ્યું પણ છે—

“मज्जं विसय कसाया, निदा विगहा य पंचमा भणिया ।

ए ए पंच पमाया, जीवं पाडेंति संसारे ” ॥ १ ॥

“શ્રેયો વિષમુપભોક્તું, ક્ષમં ભવેત્ ક્રીડિતું હુતાશેન ।  
 જીવૈરિહ સંસારે, ન તુ પ્રમાદઃ ક્ષમઃ કર્તુમ્ ॥ ૧ ॥  
 અસ્યામેવ હિ જાતૌ, નરમુપહન્યાદ્ વિષં હુતાશો વા ।  
 આસેવિતઃ પ્રમાદો, હન્યાજ્જન્માન્તરશતાનિ ॥ ૨ ॥  
 યન્ન પ્રયાન્તિ પુરુષાઃ, સ્વર્ગં યચ્ચ પ્રયાન્તિ વિનિપાતમ્ ।  
 તત્ર નિમિત્તમનાર્યઃ, પ્રમાદ ઇતિ નિશ્ચિતમિદં મે ॥ ૩ ॥

મધ ૧, વિષય ૨, કષાય ૩, નિદ્રા ૪ તથા વિકથા ૫, એ પાંચ પ્રમાદ હૈં, ઓર એ જીવકો સંસારમેં ગિરાતે હૈં યહી હનકે સેવનકા ફલ હૈં । હસ પ્રમાદકા સ્વરૂપ હસ પ્રકાર કહા હૈં—

“શ્રેયો વિષમુપભોક્તું, ક્ષમં ભવેત્ ક્રીડિતું હુતાશેન ।  
 જીવૈરિહ સંસારે, ન તુ પ્રમાદઃ ક્ષમઃ કર્તુમ્ ” ॥ ૧ ॥

વિષ સ્વા લેના અચ્છા હૈં, અગ્નિકે સાથ ક્રીડા કરના ટીક હૈં પરન્તુ મનુષ્યોંકો હસ સંસારમેં એક ક્ષણકા ખી પ્રમાદ કરના ડચિત નહીં હૈં । ૧ ।

“અસ્યામેવ હિ જાતૌ, નરમુપહન્યાદ્ વિષં હુતાશો વા ।  
 આસેવિતઃ પ્રમાદો, હન્યાજ્જન્માન્તર શતાનિ ” ॥ ૨ ॥

કારણ સ્વાયા હુઆ વિષ અથવા સેવિત હુઈ અગ્નિ પ્રાણીકો હસી પર્યાયમેં જીવિતસે વિમુક્ત કર દેતી હૈં, પરન્તુ સેવિત કિયા ગયા પ્રમાદ જન્મ, જન્માન્તર તકમેં ખી હસ જીવકો મારતા રહતા હૈં ॥ ૨ ॥

(૧) મધ, (૨) વિષય, (૩) કષાય, નિદ્રા (૪) તથા (૫) વિકથા એ પાંચ પ્રમાદ છે, અને તે જીવને સંસારમાં પાડે છે એજ એમનાં સેવનનું ફળ છે. તે પ્રમાદનું સ્વરૂપ આ પ્રમાણે કહ્યું છે—

“શ્રેયો વિષમુપભોક્તું, ક્ષમં ભવેત્ ક્રીડિતું હુતાશેન ।  
 જીવૈરિહ સંસારે, ન તુ પ્રમાદઃ ક્ષમઃ કર્તુમ્ ” ॥ ૧ ॥

ઝેર ખાવું સાઈ છે, અગ્નિની સાથે ખેલવું પણ સાઈ છે પરન્તુ મનુષ્યે આ સંસારમાં એક ક્ષણનો પણ પ્રમાદ કરવો તે યોગ્ય નથી. ॥૧॥

“અસ્યામેવ હિ જાતૌ, નરમુપહન્યાદ્ વિષં હુતાશો વા ।  
 આસેવિતઃ પ્રમાદો, હન્યાજ્જન્માન્તર શતાનિ ” ॥ ૨ ॥

કારણ કે ખાવામાં આવેલ ઝેર અથવા સેવવામાં આવેલ અગ્નિ પ્રાણીએ એજ પર્યાયમાં જીવનથી વિમુક્ત કરી નાખે છે પણ સેવવામાં આવેલ પ્રમાદ જન્મ, જન્માન્તર સુધીમાં પણ આ જીવને મારતો રહે છે. ॥ ૨ ॥

સંસાર બન્ધનગતો, જાતિ જરાવ્યાધિ મરણ દુઃખાર્તઃ ।  
 યન્નો દ્વિજતે સત્ત્વઃ, સોઽપ્યપરાધઃ પ્રમાદસ્ય ॥ ૪ ॥  
 અજ્ઞાપ્યતે યદવશ, સ્તુલ્યોદર પાણિપાદવદનેન ।  
 કર્મં ચ કરોતિ બહુવિધ, મેતદપિ ફલં પ્રમાદસ્ય ॥ ૫ ॥

“યન્ન પ્રયાન્તિ પુરુષાઃ, સ્વર્ગં યચ્ચ પ્રયાન્તિ વિનિપાતમ્ ।  
 તત્ર નિમિત્તમનાર્યઃ, પ્રમાદ ઇતિ નિશ્ચિતમિદંમે ” ॥૩॥

પુરુષ-આત્મા જો સ્વર્ગ કો પ્રાપ્ત નહીં કરતે હૈં તથા કેવલ અધોગતિ  
 કે હી પાત્ર બનતે હૈં હસમેં પ્રધાનકારણ એક યહ અનાર્ય પ્રમાદ હી હૈં યહ  
 નિશ્ચિત વાત હૈ ॥ ૩ ॥

“સંસારબન્ધનગતો, જાતિ જરા વ્યાધિ મરણ દુઃખાર્તઃ ।

યન્નોદ્વિજતે સત્ત્વઃ, સોઽપ્યપરાધઃ પ્રમાદસ્ય ” ॥ ૪ ॥

હસ સંસારરૂપી કારાગારમેં પડા હુઆ યહ પ્રાણી જો જન્મ, જરા  
 એવં મરણકે દુઃખોં સે સંત્રસ્ત હો રહા હૈં, તથા એસી પરિસ્થિતિકો ભોગતા  
 હુઆ ભી જો યહાં સે ઉદ્વિગ્ન ચિત્ત નહીં હોતા હૈં હસમેં યદિ કોઈ  
 અપરાધી હૈં તો વહ એક પ્રમાદ હી હૈં ॥ ૪ ॥

“અજ્ઞાપ્યતે યદવશ, -સ્તુલ્યોદર પાણિપાદવદનેન ।

કર્મં ચ કરોતિ બહુવિધ, -મેતદપિ ફલં પ્રમાદસ્ય ” ॥૫॥

“યન્ન પ્રયાન્તિ પુરુષાઃ, સ્વર્ગં યચ્ચ પ્રયાન્તિ વિનિપાતમ્ ।

તત્ર નિમિત્તમનાર્યઃ પ્રમાદ ઇતિ નિશ્ચિતમિદંમે ” ॥ ૩ ॥

પુરુષ-આત્મા, જે સ્વર્ગ પ્રાપ્ત કરતા નથી તથા ફક્ત અધોગતિને જ  
 પાત્ર થાય છે તેમાં એક મુખ્ય કારણ આ અનાર્ય પ્રમાદ જ છે એ વાત  
 નિશ્ચિત છે. ॥૩॥

“સંસાર બન્ધનગતો, જાતિ જરાવ્યાધિ મરણ દુઃખાર્તઃ ।

યન્નો દ્વિજતે સત્ત્વઃ, સોઽપ્યપરાધઃ પ્રમાદસ્ય ” ॥ ૪ ॥

આ સંસારરૂપી કારાગારમાં પડેલ આ પ્રાણી જે જન્મ, જરા, અને  
 મરણના દુઃખોથી ત્રાસી ગયેલ છે, તથા એવી પરિસ્થિતિને ભોગવતા ભોગવતા  
 પણ જે અહીંથી ઉદ્વિગ્ન ચિત્ત નથી થતા તેમાં જે કોઈ અપરાધી હોય તો  
 એક પ્રમાદ જ છે ॥૪॥

“અજ્ઞાપ્યતે યદવશ-સ્તુલ્યોદર પાણિ પાદ વદનેન ।

કર્મં ચ કરોતિ બહુ વિધ, -મેતદપિ ફલં પ્રમાદસ્ય ” ॥ ૫ ॥

इह हि प्रमत्तमनसः, सोन्मादवदनिभृतेन्द्रियाश्चपलाः ।

यत् कृत्यं तदकृत्वा, सततमकार्येष्वभिपतन्ति ॥ ६ ॥

तेषामभिपतितानા-મુદ્ભ્રાન્તાનાં પ્રમત્તહૃદયાનામ્ ।

વર્ધન્ત એવ દોષાઃ, વનતરવશ્ચામ્બુસેકેન ॥ ૭ ॥

માનવ પર્યાયકી દૃષ્ટિસે હાથ પૈર આદિ અવયવોં કી સમાનતા હોને પર ખી જો પ્રાણી એક દૂસરેકી પરાધીનતા ભોગ રહા હૈ-નાના પ્રકાર કી દાસવૃત્તિ કર રહા હૈ-યહ સબ પ્રમાદકા હી ફલ હૈ ॥ ૬ ॥

“इह हि प्रमत्तमनसः, सोन्मादवदनिभृतेन्द्रियाश्चपलाः ।

यत् कृत्यं तदकृत्वा, सततमकार्येष्वभिपतन्ति” ॥ ६ ॥

યહ કિતને દુઃખકી વાત હૈ કિ યહ પ્રાણી પ્રમત્ત ચિત્ત હો કર ઉન્માદી પુરુષકી તરહ ઇન્દ્રિયોંકા દાસ બન કર જો કર્તવ્ય કાર્ય હૈ ઉસે તો કરતા નહીં હૈ તથા જો નહીં કરને યોગ્ય હૈ ઉસે હી રાત દિન કરતા રહતા હૈ ॥ ૬ ॥

“तेषामभिपतिताना, -मुद्भ्रान्तानां प्रमत्तहृदयानाम् ।

वर्धन्त एव दोषाः, वनतरवश्चाम्बुसेकेन” ॥ ७ ॥

જિસ પ્રકાર જલકે સિંચન સે જંગલકે વૃક્ષ વઢ જાતે હૈં ઉસી પ્રકાર પ્રમત્ત હૃદયવાલે વ્યક્તિયોં મેં ખી ઉદ્ભ્રાન્ત ચિત્તતા એવં વિષયકષાયોંમેં પતનશીલતા આદિ અનેક પ્રકારકે દુર્ગુણ વઢ જાતે હૈં ॥ ૭ ॥

માનવ પર્યાયની દૃષ્ટિએ હાથ, પગ આદિ અવયવોની સમાનતા હોવા છતાં પણ જે પ્રાણી એક બીજાની પરાધીનતા ભોગવી રહ્યાં છે. વિવિધ પ્રકારની શુભાખી કરી રહ્યા છે. આ બધું પ્રમાદનું જ ફળ છે ॥ ૫ ॥

“इह हि प्रमत्तमनसः, सोन्मादवदनिभृतेन्द्रियाश्चपलाः ।

यत् कृत्यं तदकृत्वा, सततमकार्येष्वभिपतन्ति” ॥ ६ ॥

એ કેટલા દુઃખની વાત છે કે આ પ્રાણી પ્રમત્ત ચિત્ત થઈને ઉન્માદી પુરુષની જેમ ઇન્દ્રિયોનું શુભાખ બનીને જે કર્તવ્ય બજાવવાનું છે તે તો બજાવતુ નથી પણ જે કરવા યોગ્ય નથી એજ રાતદિન કરતું રહે છે. ॥ ૬ ॥

“तेषामभिपतितानामुद्भ्रान्तानां प्रमत्तहृदयानाम् ।

वर्धन्त एव दोषाः वनतरवश्चाम्बुसेकेन” ॥ ७ ॥

જેમ જળના સિંચનથી જંગલનાં વૃક્ષ વધી જાય છે એજ પ્રકારે પ્રમત્ત હૃદયવાળી વ્યક્તિઓમાં પણ ઉદ્ભ્રાન્ત ચિત્તતા અને વિષય કષાયોમાં પતનશીલતા આદિ અનેક પ્રકારના દુર્ગુણ વધી જાય છે ॥ ૭ ॥



દૃષ્ટ્વાऽऽપ્યાલોકં નૈવ વિશ્રમ્ભિતવ્યં, તીરં નીતા બ્રામ્યતે વાયુના નૌઃ ।

લઙ્ઘ્વા વૈરાગ્યં ભ્રષ્ટયોગઃ પ્રમાદાત્, ભૂયો ભૂયઃ સંસૃતૌ વમ્ભ્રમીતિ ॥ ૮ ॥

एवं प्रमादप्रतिपक्षस्याऽप्रमादस्य स्वरूपादयो वाच्याः १० । नन्दिः ११, अनुयोगद्वाराणि एतत् सूत्रद्वयमुपलभ्यते १२ । देवेन्द्रस्तवः १३, तन्दुलवैचारिकं १४, चन्द्रकवेध्यम् १५, एतत् त्रयं नोपलभ्यते । यत्तु तन्दुलवैचारिकनाम्नाक्वचिदिदानीमुपलभ्यते, तदन्यदेवेति विज्ञेयम् । सूर्यप्रज्ञप्तिः—सूर्यचरित प्रज्ञापनं

“દૃષ્ટ્વાऽऽપ્યાલોકં નૈવ વિશ્રમ્ભિતવ્યં, તીરં નીતા બ્રામ્યતે વાયુના નૌઃ ।

લઙ્ઘ્વા વૈરાગ્યં ભ્રષ્ટયોગઃ પ્રમાદાત્, ભૂયો ભૂયઃ સંસૃતૌ વમ્ભ્રમીતિ ॥ ૮ ॥

जिस तरह तीर पर आई हुई भी नौका वायुके झोकोंसे कंपित हो उठती है उसी प्रकार प्रमादी जीव आलोक पाकर भी-गुर्वादिकका उपदेश प्राप्त कर भी संसारकी वासनाओंसे ही कंपित होता रहता है । वैराग्यका समय पा कर भी वह उस योगसे प्रमादके कारण वंचित हो जाता है । इस तरह यह अभाग बार २ संसारमें ही चक्कर काटा करता है ॥ ८ ॥

इससे विपरीत अप्रमादका स्वरूप समझ लेना चाहिये ॥ १० ॥ नन्दि ११ तथा अनुयोगद्वारा १२ ये दोनों सूत्र अब भी उपलब्ध होते हैं । देवेन्द्रस्तव १३, तन्दुल वैचारिक १४ एवं चन्द्रकवेध्य १५, ये तीन सूत्र नहीं मिलते हैं । अब भी जो तन्दुल वैचारिक नामसे कहीं २ सूत्र उपलब्ध होता है यह वह तन्दुल वैचारिक सूत्र नहीं है—यह तो उससे जुदा ही है । जिस आगमपद्धतिमें सूर्य सम्बन्धी चरित की प्रज्ञा-

“દૃષ્ટ્વાऽऽપ્યાલોકં નૈવ વિશ્રમ્ભિતવ્યં, તીરં નીતા બ્રામ્યતે વાયુના નૌઃ ।

લઙ્ઘ્વા વૈરાગ્યં ભ્રષ્ટયોગઃ પ્રમાદાત્, ભૂયો ભૂયઃ સંસૃતૌ વમ્ભ્રમીતિ ॥ ૮ ॥

જે રીતે કાંઠે આવેલી હોડી પણ વાયુની લહેરથી ડોલી ઉઠે છે એજ પ્રકારે પ્રમાદી જીવ આલોક પામીને પણ—શુરુ આદિનો ઉપદેશ પ્રાપ્ત કરીને પણ સંસારની વાસનાઓથી ડોલાયમાન થયા કરે છે. વૈરાગ્યનો સમય પામવા છતાં પણ તે પ્રમાદને કારણે તે તકથી વંચિત થાય છે. આ રીતે તે અભાગીયો વારંવાર સંસારમાં અટવાયા કરે છે ॥ ૮ ॥

એનાથી વિપરીત જુદા અપ્રમાદનું સ્વરૂપ સમજી લેવું જોઈએ. ૧૦ નંદિ ૧૧ તથા અનુયોગ દ્વારા ૧૨ એ બંને સૂત્રો હજી પણ ઉપલબ્ધ છે. દેવેન્દ્રસ્તવ ૧૩, તન્દુલવૈચારિક ૧૪ અને ચન્દ્રકવેદ્ય ૧૫ એ ત્રણ સૂત્રો મળતાં નથી. હાલમાં પણ તન્દુલ વૈચારિક નામનું સૂત્ર કોઈ કોઈ સ્થાને મળી આવે છે, તે અસલ તન્દુલવૈચારિકસૂત્ર નથી તે તો તેના કરતાં જુદું જ છે. જે આગમ-

યસ્યામાગમપદ્ધતૌ સા સૂર્યપ્રજ્ઞપ્તિઃ ૧૬ । તથા-પૌરુષીમણ્ડલમ્-પુરુષઃ-શઙ્કુઃ શરીરં  
વા, તસ્માન્નિષ્પન્ના પૌરુષી । અયં ભાવઃ-યદા સર્વસ્ય વસ્તુનઃ સ્વપ્રમાણા છાયા  
જાયતે તદા પૌરુષી ભવતિ, इत्येतच्च पौरुषीमानमुत्तरायणान्ते दक्षिणायनादौ-  
वैकदिनं भवति, तत ऊर्ध्वमङ्गुलस्याष्टावेकषष्टिभागा दक्षिणायने वर्धन्ते उत्तरा-  
यणे च ह्रसन्तीति । एवं पौरुषी, मण्डले २ अन्यार प्रतिपाद्यते यत्र तदध्ययनमिति  
१७ । इतः प्रभृति महाप्रत्याख्यान पर्यन्तानि सर्वाणि सूत्राणि विच्छिन्नानि,  
तथापि तानि नामतः प्रदर्श्यन्ते—

મણ્ડલપ્રવેશઃ-યત્ર ચન્દ્રસૂર્યયોર્દક્ષિણોત્તરેષુ મણ્ડલેષુ પ્રવેશો વર્ણ્યતે તદધ્યયન-  
મિતિ । ૧૮ । વિદ્યાચરણવિનિશ્ચય इति-विद्या-ज्ञानं, तच्च सम्यग्दर्शनसहितं  
पना बतलाई गई है वह सूर्य प्रज्ञप्ति सूत्र है । १६ । पौरुषी मण्डल, यह  
एकाध्ययनात्मक एक शास्त्रका नाम है । पुरुष नाम शङ्कु अथवा शरीर  
का है, उससे जो निष्पन्न हो उसका नाम पौरुषी है । इसका अभिप्राय  
यह है-जिस कालमें सभी पदार्थों की अपने प्रमाण परिमित छाया होती  
है । यह पौरुषीमान उत्तरायणके अन्तमें और दक्षिणायनके आदिमें एक  
दिनका होता है । उसके बाद दक्षिणायनमें अङ्गुलका एकसठिया आठ  
भाग बढ़ता है और उत्तरायण में उतना ही कम होता है । इस प्रकार  
मण्डल मण्डलमें भिन्न भिन्न पौरुषीका प्रतिपादन जहां किया गया है  
वह अध्ययन पौरुषी मण्डल कहलाता है १७ । यहांसे लेकर महाप्रत्या-  
ख्यान तकके समस्त सूत्र विच्छिन्न हो चुके हैं तो भी वे नामसे दिख-  
लाये जाते हैं-मण्डल प्रवेश, जहां चन्द्र और सूर्य के दक्षिण और उत्तर

પદ્ધતિમાં સૂર્ય વિષેના ચરિતની પ્રજ્ઞાપના બતાવી છે તે સૂર્યપ્રજ્ઞપ્તિ સૂત્ર છે. ૧૬  
પૌરુષી મંડલ, એ એકાધ્યયનાત્મક એક શાસ્ત્રનું નામ છે. પુરુષ શંકુ અથવા  
શરીરનું નામ છે, તેનાથી જે પ્રતિપાદિત થાય તેનું નામ પૌરુષી છે તેનું  
તાત્પર્ય આ છે-જે કાળે સમસ્ત પદાર્થોની પોતાના પ્રમાણ જેટલી છાયા હોય  
છે ત્યારે પૌરુષી થાય છે. આ પૌરુષી પ્રમાણ ઉત્તરાયણને અન્તે અને દક્ષિણા-  
યણને પ્રારંભે એક દિનનું થાય છે. ત્યાર બાદ દક્ષિણાયણમાં અંગુલના એક-  
સઠમાં આઠ ભાગ જેટલું વધે છે અને ઉત્તરાયણમાં એટલું જ ઘટે છે. આ  
પ્રકારે મંડળે મંડળે ભિન્ન ભિન્ન પૌરુષીનું પ્રતિપાદન જ્યાં કરવામાં આવ્યું છે  
તે અધ્યયનને પૌરુષી મંડલ કહે છે. ૧૭ અહીંથી લઈને મહાપ્રત્યાખ્યાન સુધીના  
સઘળા સૂત્ર વિચ્છિન્ન થઈ ગયાં છે તો પણ તેમને નામથી બતાવવામાં આવે છે-



छाया—ज्योतिष निमित्त ज्ञानं, गणिना प्रवाजनादि कार्येषु ।

उपयुज्यते तिथिकरणा,—दि ज्ञानार्थं मन्यथा दोषः ॥ १ ॥ २० ॥

ध्यानविभक्तिरिति, ध्यानानि—आर्तध्यानादीनि, तेषां विभक्तिः—विभागो यस्या-  
मागमपद्धतौ सा ध्यानविभक्तिः २१। तथा—मरणविभक्तिरिति, मरणानि-प्राणत्यागल-  
क्षणानि, तानि द्विविधानि भवन्ति—प्रशस्तानि, अप्रशस्तानि । तेषां विभक्तिः विभागः,  
पार्थक्येन स्वरूपप्रकटनं यस्यामागमपद्धतौ सा मरणविभक्तिः २२ । आत्मविशोधि-  
रिति, आत्मनोविशोधिः—आलोचनाप्रायश्चित्तप्रतिपत्त्यादि प्रकारेण कर्ममलापगमल-  
क्षणा यत्र प्रतिपाद्यते सा आत्मविशोधिः २३ । तथा वीतरागश्रुतमिति, सराग-  
प्रतिषेधेन वीतरागस्वरूपं प्रतिपाद्यते यत्र श्रुते तद् वीतरागश्रुतम् २४ । तथा—  
संलेखनाश्रुतमिति, द्रव्यभाव संलेखना यत्र श्रुते प्रतिपाद्यते तत् संलेखनाश्रुतम्

“ जोइस निमित्तनाणं, गणिणा पव्वायणा इ कज्जेसु ।

उवजुज्जइ तिहिकरणा,—इ जाणणट्ठञ्जहा दोसो ” ॥ १ ॥ इति । २० ।

ध्यानविभक्तिनामक सूत्र में आर्तध्यान, रौद्रध्यान आदि चार प्रकार  
के ध्यानों का विभाग बतलाया गया है । २१ । मरणविभक्तिनामक सूत्र  
में प्रशस्तमरण एवं अप्रशस्तमरण का पृथक् २ रूप से स्वरूप प्रकट किया  
गया है २२ । आत्मविशोधिसूत्र में—“ आलोचना प्रतिक्रमण आदि  
प्रायश्चित्तों के द्वारा यह आत्मा अपने साथ लगे हुए कर्ममल का अभाव  
कैसे कर सकता है ” यह विषय प्रतिपादित हुआ है २३ । वीतरागश्रुत  
में—यह विषय समझाया गया है कि सरागता का त्याग कर वीतरागता  
को धारण करना चाहिये । तथा वीतराग का स्वरूप अमुक २ प्रकार से  
है २४ । संलेखनाश्रुत में—द्रव्य एवं भाव की अपेक्षा द्विविध संलेखना

“ जोइस निमित्तनाणं, गणिणा पव्वायणा इ कज्जेसु ।

उवजुज्जइ तिहि करणा,—इ जाणणट्ठञ्जहा दोसो ” ॥ १ ॥ इति । २० ।

ध्यान निमित्त नामनां सूत्रमां आर्तध्यान, रौद्रध्यान, आदि चार प्रकारनां  
ध्यानानां विलाग ज्ञानाव्यो छे (२१). मरण विलक्षित नामनां सूत्रमां प्रशस्त  
मरण अने अप्रशस्त मरणनु अलग अलग रीते स्वरूप प्रकट कर्तुं छे (२२).  
आत्मविशोधि सूत्रमां “ आलोचना प्रतिक्रमण आदि प्रायश्चित्तों द्वारा आ  
आत्मा पोताने लागेला कर्ममलाने अभाव केवी रीते करी शके छे ” अने विष-  
यनुं प्रतिपादन थयुं छे (२३). वीतरागश्रुतमां अने विषय समझाव्यो छे के सरा-  
गताने त्याग करीने वीतरागने धारण करवो लेईअने. तथा वीतरागनुं स्वरूप  
अमुक अमुक प्रकारे छे (२४). संलेखना श्रुतमां द्रव्य अने भावनी अपेक्षाअने

૨૫ । તથા-વિહારકલ્પ इति, विहारस्यकल्पो व्यवस्था-स्थविरकल्पादिरूपा यत्रा-  
गमेवर्ण्यते स विहारकल्पः २६ । तथा-चरणविधिः=चरणं-चारित्रं तस्य विधिर्यत्र  
वर्ण्यते स चरणविधिः २७ । तथा-आतुर प्रत्याख्यानमिति, आतुरः-व्याधितः  
तस्य या चिकित्सा तस्याः प्रत्याख्यानं यत्र विधिपूर्वकं मुपवर्ण्यते तदातुरप्रत्याख्या-  
नम्, तत्रायं विवेकः-जिनकल्पिकस्य सर्वथा चिकित्सा प्रत्याख्यानम् । स्थविर-  
कल्पिकस्य तु सावध्य चिकित्सा प्रत्याख्यानमिति २८ । तथा-महाप्रत्याख्यान-  
मिति, महच्च तत् प्रत्याख्यानं चेति समासः । चरम प्रत्याख्यानमित्यर्थः । अयं  
भावः-स्थविरकल्पेन जिनकल्पेन वा विहृत्यान्ते स्थविरकल्पिका द्वादशवर्षाणि  
संलेखनां कृत्वा, जिनकल्पिकाः पुनर्विहारेणैव संलेखनायुक्ताः, तथापि यथा युक्तं

કા કથન કિયા ગયા હૈ ૨૫ । સ્થવિરકલ્પાદિરૂપ વિહાર કી વ્યવસ્થા  
જિસ આગમ મેં વર્ણિત હુઈ હૈ વહ વિહારકલ્પ હૈ ૨૬ । તથા ચારિત્ર કી  
વિધિ કા જહાં પર વર્ણન હુઆ હૈ વહ ચરણવિધિ હૈ ૨૭ । વ્યાધિ સે  
યુક્ત હુએ સંયમી કી ચિકિત્સા કે પ્રત્યાખ્યાન કા સવિધિ કથન જિસ  
આગમ મેં આયા હૈ વહ આતુર પ્રત્યાખ્યાન સૂત્ર હૈ । જિનકલ્પિ સાધુઓં  
કે લિયે તો ચિકિત્સા કરવાને કા સર્વથા નિષેધ હી હૈ, સ્થવિરકલ્પિયોં  
કે લિયે એસા નહીં હૈ પર વે સાવધ્ય ચિકિત્સા નહીં કરવા સકતે હૈ  
નિરવધ્ય ચિકિત્સા હી કરવા સકતે હૈ । ઇસ પ્રકાર કા વિધાન આતુર  
પ્રત્યાખ્યાન સૂત્ર મેં બતલાયા ગયા હૈ ૨૮ । મહાપ્રત્યાખ્યાન-મહાપ્રત્યા-  
ખ્યાન કા અર્થ હૈ-ચરમ પ્રત્યાખ્યાન । મુનિ દો પ્રકાર કે હોતે હૈ  
સ્થવિરકલ્પિક ઓર જિનકલ્પિક । ડનમેં સ્થવિરકલ્પિક મુનિ બારહ  
વર્ષ તક સંલેખના કરકે અન્તમેં સચેષ્ટ અર્થાત્ સાવધાન હી વ્યાઘાત-

દ્વિવિધ સંલેખનાનુ વર્ણન કરેલ છે (૨૫). સ્થવિર કલ્પાદિ રૂપ વિહારની વ્યવ-  
સ્થાનું જે આગમમાં વર્ણન થયું છે તે વિહારકલ્પ છે (૨૬), તથા ચારિત્રની  
ન્યાં વર્ણન થયું છે તે ચરણવિધિ સૂત્ર છે (૨૭) વ્યાધિથી યુક્ત થયેલ સંયમીની  
ચિકિત્સાના પ્રત્યાખ્યાનનું વિધિપૂર્વકનું વર્ણન જે આગમમાં આવે છે તે આતુર  
પ્રત્યાખ્યાન સૂત્ર છે. જિન કલ્પિક સાધુઓને માટે તો ચિકિત્સા કરાવવાનો તદ્દન  
નિષેધ છે; સ્થવિર કલ્પીઓને માટે એવું નથી, પણ તેઓ સાવધ ચિકિત્સા  
કરાવી શકતા નથી નિરવધ ચિકિત્સા જ કરાવી શકે છે. આ પ્રકારનું વિધાન  
આતુર પ્રત્યાખ્યાન સૂત્રમાં બતાવવામાં આવ્યું છે (૨૮). મહાપ્રત્યાખ્યાન-મહા-  
પ્રત્યાખ્યાનનો અર્થ છે ચરમ પ્રત્યાખ્યાન. મુનિ બે બે પ્રકારના હોય છે.  
સ્થવિર કલ્પિક અને જિન કલ્પિક. તેઓમાં સ્થવિર કલ્પિક મુનિ બાર વર્ષ

સંલેખનાં કૃત્વા નિર્વ્યાધાતં સચેષ્ટા એવ ભવ ચરમં પ્રત્યાખ્યાન્તિ, એતત્ સવિસ્તરં યત્રાધ્યયને વર્ણ્યતે તદધ્યયનં મહાપ્રત્યાખ્યાનમિતિ । ૨૯ । એવમાદિ । એવમન્યદપિ ઉત્કાલિકં શ્રુતં बोध्यम्, उपलक्षणमेतदिति भावः । इह पौरुषी मण्डल सूत्रादारभ्य महाप्रत્યાख्यान पर्यन्तं सूत्रत्रयोदशकमपि नोपलभ्यते । उक्तमर्थं निगमयति—‘से तं०’ इत्यादि । तदेतदुत्कालिक श्रुतं वर्णितमिति ॥ सू० ४३ ॥

अथ कालिक श्रुतमाह—

मूलम्—से किं तं कालियं ? । कालियं अणैगविहं पण्णत्तं । तं जहा—उत्तरज्झयणं १, दसाओ २, कप्पो, ३, ववहारो ४, निसीहं ५, महानिसीहं ६, इसिभासियं ७, जंबूदीवपन्नत्ती ८, दीवसागरपन्नत्ती ९, चंदपन्नत्ती १०, खुड्डियाविमाणपविभत्ती ११, महल्लियाविमाणपविभत्ती १२, अंगचूलिया १३, वग्गचूलिया १४, विवाहचूलिया १५, अरुणोववाए १६, वरुणोववाए १७, गरुलो-ववाए १८, धरणोववाए १९, वेसमणोववाह २०, वेलंधरोववाए २१, देविंदोववाए २२, उट्ठाणसुयं २३, समुट्ठाणसुयं २४, नागपरि-

વર્જિત ચરમ ભવકા પ્રત્યાખ્યાન કરતે હૈં । જિનકલ્પિક મુનિ તો યદ્યપિ વિહારસે હી સંલેખના યુક્ત હોતે હૈં તથાપિ વે યથાયુક્ત સંલેખના કરકે અન્તમૈં સચેષ્ટ અર્થાત્ સાવધાન હી વ્યાધાતવર્જિત ચરમ ભવકા પ્રત્યાખ્યાન કરતે હૈં । ઇસ વિષયકા જિસ અધ્યયનમૈં વર્ણન ક્રિયા ગયા હૈ વહ અધ્યયન મહાપ્રત્યાખ્યાન હૈ ૨૯ । ઇસ તરહ સે ઔર મી અનેક ઉત્કાલિક સૂત્ર હૈં । યહ ઉત્કાલિક સૂત્રકા વર્ણન હુઆ ॥સૂ૦૪૨॥

સુધી સંલેખના કરીને અન્તે સચેષ્ટ એટલે કે સાવધાન જ વ્યાધાત વર્જિત ચરમ ભવનું પ્રત્યાખ્યાન કરે છે. જિન કલ્પિક મુનિતો જો કે વિહારથી જ સંલેખના યુક્ત થાય છે છતાં પણ તેઓ યથાયોગ્ય સંલેખના કરીને અન્તે સચેષ્ટ એટલે કે સાવધાન જ વ્યાધાત વર્જિત ચરમ ભવનું પ્રત્યાખ્યાન કરે છે. આ વિષયનું જો અધ્યયનમાં વર્ણન કરાયું છે તે અધ્યયનનું નામ મહાપ્રત્યાખ્યાન છે (૨૯). આ રીતે બીજાં પણ અનેક ઉત્કાલિક સૂત્ર છે. આ ઉત્કાલિક સૂત્રનું વર્ણન થયું ॥ સૂ. ૪૨ ॥



यावणियाओ २५, निरयावलियाओ-कप्पियाओ २६, कप्पवडं-  
 सियाओ २७, पुप्फियाओ २८, पुप्फचूलियाओ २९, वणिह-  
 दसाओ ३०, आसीविसभावणं १, दिट्ठिविसभावणं २, सुमिण-  
 भावणं ३, महासुमिणभावणं ४, तेयग्गिनिसग्गं ५, एवमाइ-  
 याइं चउरासीइं पइन्नगसहस्साइं भगवओ अरहओ उसहसा-  
 मिस्स आइतित्थयरस्स । तहा संखिज्जाइं पइन्नगसहस्साइं  
 मज्झिमगणं जिणवराणं । चोदसपइन्नगसहस्साइं भगवओ वद्ध-  
 माणसामिस्स । अहवा जस्स जत्तिया सीसा उप्पत्तियाए वेण-  
 इयाए कम्मयाए परिणामियाए चउव्विहाए बुद्धीए उववेया,  
 तस्स तत्तियाइं पइन्नगसहस्साइं, पत्तेयबुद्धा वि तत्तिया चेव । से तं  
 कालियं । से तं आवस्सयवइरित्तं । से तं अणंगपविट्ठं ॥ सू० ४३ ॥

छाया—अथ किं तत् कालिकम् ? । कालिकमनेकविधं प्रज्ञप्तम् । तद् यथा—  
 उत्तराध्ययनम् १, दशाः २, कल्पः ३, व्यवहारः ४, निशीथम् ५, महानिशीथम् ६,  
 ऋषिभाषितम् ७, जम्बूद्वीपप्रज्ञप्तिः ८, द्वीपसागरप्रज्ञप्तिः ९, चन्द्रप्रज्ञप्तिः १०, क्षुल्लि-  
 काविमानप्रविभक्तिः ११, महल्लिका (महा) विमानप्रविभक्तिः १२, अङ्गचूलिका  
 १३, वर्गचूलिका १४, विवाहचूलिका १५, अरुणोपपातः १६, वरुणो-  
 पपातः १७, गरुडोपपातः १८, धरुणोपपातः १९, वै श्रमणोपपातः २०,  
 वेलंधरोपपातः २१, देवेन्द्रोपपातः २२, उत्थानश्रुतं २३, समुत्थानश्रुतं  
 २४, नागपरिज्ञापनिकाः २५, निरयावलिकाः—कल्पिकाः २६, कल्पाव-  
 तंसिकाः २७, पुष्पिताः २८, पुष्पचूलिकाः २९, वृष्णिदशाः ३० । आशीविषभा-  
 वनम् १, दृष्टिविषभावनम् २, स्वप्नभावनम् ३, महास्वप्नभावनम् ४, तेजोऽग्नि-  
 निसर्गम् ५, एवमादिकानि चतुरशीति प्रकीर्णक सहस्राणि भगवतोऽर्हत ऋषभस्वा-  
 मिन आदि तीर्थकरस्य । तथा—संख्येयानि प्रकीर्णकसहस्राणि मध्यमकानां जिन-  
 वराणाम् । चतुर्दश प्रकीर्णक सहस्राणि भगवतो वर्धमानस्वामिनः । अथवा—यस्य  
 यावन्तः शिष्या औत्पत्तिक्या वैनयिक्या कर्मजया पारिणामिक्या चतुर्विधया बुद्धयो-  
 पपेताः तस्य तावन्ति प्रकीर्णकसहस्राणि प्रत्येकबुद्धा अपि तावन्तश्चैव । तदेतत्  
 कालिकम् । तदेतदावश्यक्यतिरिक्तम् । तदेतदनङ्गप्रविष्टम् ॥ सू० ४३ ॥

ટીકા-શિષ્ય: પૂછતિ—‘સે કિં તં’ ઇત્યાદિ । અથ કિં તત્ કાલિકમિતિ શિષ્ય પ્રશ્ન: । ઉત્તરમાહ—‘કાલિયં’ ઇત્યાદિ । કાલિકં શ્રુતમનેકવિધં પ્રજ્ઞપ્તમ્ । તદ્યથા-ઉત્તરાધ્યયનમ્ = ઉત્તરાધ્યયનસૂત્રમ્ ૧, દશા: = દશાશ્રુતસ્કન્ધસૂત્રમ્ ૨, કલ્પ: = બૃહત્કલ્પસૂત્રમ્ ૩, વ્યવહાર: = વ્યવહારસૂત્રમ્ ૪, નિશીથં = નિશીથસૂત્રમ્ ૫ । મહાનિશીથં = મહાનિશીથસૂત્રં સંપ્રતિ નોપલભ્યતે, યત્તુ મહાનિશીથસૂત્રં ક્વચિદુપલભ્યમાનં તદન્યદેતદ્ બોધ્યમ્ ૬ । ઋષિભાષિતમ્ = ઋષિભાષિતસૂત્રમ્ ૭ । એતદપિ નોપલભ્યતે । તથા-જમ્બૂદ્વીપપ્રજ્ઞપ્તિ: = જમ્બૂદ્વીપપ્રજ્ઞપ્તિસૂત્રમ્ ૮ । દ્વીપસાગરપ્રજ્ઞપ્તિ: = દ્વીપસાગરપ્રજ્ઞપ્તિસૂત્રં વિચ્છિન્નમ્ ૯ । ચંદ્રપ્રજ્ઞપ્તિ: ૧૦, ક્ષુદ્રિકાવિમાનપ્રવિભક્તિ: ૧૧, મહાવિમાનપ્રવિભક્તિ: ૧૨, અંગચૂલિકા ૧૩, વર્ગચૂલિકા ૧૪, વિવાહચૂલિકા ૧૫, અરુણોપપાત: ૧૬, વરુણોપપાત: ૧૭, ગરુડોપપાત: ૧૮, ધરણોપપાત: ૧૯,

અવ કાલિક સૂત્રકા વર્ણન કરતે હૈં—‘સે કિં તં કાલિયં’ ઇત્યાદિ ।

શિષ્ય પૂછતા હૈ—હે ભદ્રન્ત ! કાલિકશ્રુતકા કયા સ્વરૂપ હૈ ?

ઉત્તર—કાલિકશ્રુત અનેક પ્રકારકા કહા ગયા હૈ જૈસે—ઉત્તરાધ્યયનસૂત્ર ૧, દશાશ્રુતસ્કન્ધસૂત્ર ૨, બૃહત્કલ્પસૂત્ર ૩, વ્યવહારસૂત્ર ૪, નિશીથસૂત્ર ૫, યે પાંચ સૂત્ર ઉપલબ્ધ હૈં । મહાનિશીથસૂત્ર, યહ સૂત્ર ઉપલબ્ધ નહીં હૈ । યદ્યપિ કહીં ૨ હસ નામકા સૂત્ર અવ ભી મિલતા હૈ પરન્તુ યહ વહ નહીં હૈ ૬ । ઋષિભાષિતસૂત્ર યહ ઉપલબ્ધ નહીં હૈ ૭ । જમ્બૂદ્વીપપ્રજ્ઞપ્તિ સૂત્ર, યહ ઉપલબ્ધ હૈ ૮, દ્વીપસાગર-પ્રજ્ઞપ્તિસૂત્ર—યહ ઉપલબ્ધ નહીં ૯, ચંદ્રપ્રજ્ઞપ્તિ યહ ઉપલબ્ધ હોતા હૈ ૧૦ । ક્ષુદ્રિકાવિમાનપ્રવિભક્તિ ૧૧, મહાવિમાનપ્રવિભક્તિ, ૧૨, અંગચૂલિકા ૧૩, વર્ગચૂલિકા ૧૪, વિવાહચૂલિકા ૧૫, અરુણોપપાત ૧૬, વરુણોપપાત ૧૭, ગરુડોપપાત ૧૮, ધરણોપપાત,

હવે કાલિક સૂત્રનું વર્ણન કરે છે—“સે કિં તં કાલિયં” ઇત્યાદિ.

શિષ્ય પૂછે છે—હે ભદ્રન્ત ! કાલિકશ્રુતનું શું સ્વરૂપ છે ?

ઉત્તર—કાલિકશ્રુત અનેક પ્રકારનું કહેલ છે, જેવાં કે (૧) ઉત્તરાધ્યાયન

સૂત્ર, (૨) દશાશ્રુત સ્કન્ધ સૂત્ર, (૩) બૃહત્કલ્પસૂત્ર, (૪) વ્યવહાર સૂત્ર, (૫) નિશીથ સૂત્ર, આ પાંચ સૂત્ર ઉપલબ્ધ છે. (૬) મહાનિશીથ સૂત્ર, આ ઉપલબ્ધ નથી. છતાં પણ કોઈ કોઈ સ્થળે એ નામનું સૂત્ર હાલમાં પણ મળે છે પણ તે અસલ નથી. (૭) ઋષિભાષિત સૂત્ર—તે ઉપલબ્ધ નથી. (૮) જમ્બૂદ્વીપ પ્રજ્ઞપ્તિ સૂત્ર, તે ઉપલબ્ધ છે, (૯) દ્વીપસાગર પ્રજ્ઞપ્તિ સૂત્ર—તે ઉપલબ્ધ નથી. (૧૦) ચંદ્ર પ્રજ્ઞપ્તિ—તે ઉપલબ્ધ છે. (૧૧) ક્ષુદ્રિકા વિમાન પ્રવિભક્તિ, (૧૨) મહાવિમાન પ્રવિભક્તિ, (૧૩) અંગચૂલિકા, (૧૪) વર્ગચૂલિકા, (૧૫) વિવાહ ચૂલિકા, (૧૬) અરુણોપપાત, (૧૭) વરુણોપપાત, (૧૮) ગરુડોપપાત, (૧૯) ધરણોપપાત, (૨૦)

વૈશ્રવણોપપાતઃ ૨૦, વેલન્ધરોપપાતઃ ૨૧, દેવેન્દ્રોપપાતઃ ૨૨, ઉત્થાનશ્રુતં ૨૩, ક્ષુદ્રિકાવિમાનપ્રવિભક્તિસૂત્રાદારમ્યોત્થાનશ્રુતપર્યન્તં નોપલભ્યતે । સમુત્થાનશ્રુતમ્ ૨૪, इदमिदानीमुपलभ्यते । ‘નાગપરિજ્ઞાપનિકાઃ’ ઇતિ, નાગાઃ-નાગકુમારાસ્તેષાં પરિજ્ઞાપનં યસ્યાસાગમપદ્ધતૌ સા નાગપરિજ્ઞાપનિકા, इदं सूत्रं નોપલભ્યતે ૨૫ । નિરયાવલિકાઃ=આવલિકાપ્રવિષ્ટાઃ શ્રેણિરૂપેણ વ્યવસ્થિતાઃ, નરકાવાસાઃ પ્રસજ્જતસ્તદ્વામિનોનરાસ્તિર્યશ્ચ વર્ણ્યન્તે યત્ર તા નિરયાવલિકાઃ । એકસ્મિન્નાગમે વાચ્યે વહુવચનપ્રયોગઃ શક્તિસ્વાભાવ્યાત્, યથા ‘પશ્ચાલાઃ’ ઇત્યાદૌ । ‘કલ્પિકાઃ’ ઇતિ, નિરયાવલિકા સૂત્રસ્ય નામાન્તરમ્ । નરકાવાસમધિકૃત્ય ‘નિરયાવલિકાઃ’ ઇત્યુચ્યતે । ચેટકમધિકૃત્ય ‘કલ્પિકાઃ’ ઇત્યુચ્યતે । ચેટકો હિ કલ્પસમુત્પન્ન ઇતિ તત્ર વર્ણ્યતે । સૂત્રમિદમ્ અન્તકૃદશાંગસ્યોપાંગમ્ ૨૬ । તથા-કલ્પાવતંસિકા ઇતિ । યત્ર કલ્પાવતંસકાદેવવિમાનાનાં વર્ણનં વિદ્યતે તાઃ કલ્પાવતંસિકાઃ । અનુત્ત-

૧૯, વૈશ્રમણોપપાત ૨૦, વેલંધરોપપાત ૨૧, દેવેન્દ્રોપપાત ૨૨, ઉત્થાન શ્રુત ૨૩, ક્ષુદ્રિકાવિમાનપ્રવિભક્તિસૂત્ર સે લે કરે સ ઉત્થાનશ્રુત તકકે તેરહ સૂત્ર ઉપલબ્ધ નહીં હૈં ૨૩, સમુત્થાનશ્રુત યહ સ સમય ઉપલબ્ધ હૈ ૨૪, નાગપરિજ્ઞાપનિકા સ સૂત્રમેં નાગકુમાર જાતિકે દેવોંકા વર્ણન કિયા ગયા હૈ, યહ સ સમય ઉપલબ્ધ નહીં હૈ ૨૫, નિરયાવલિકા સ સમેં શ્રેણિ રૂપસે વ્યવસ્થિત નરકોંકા, પ્રસજ્જતઃ ઉનમેં જાનેવાલે મનુષ્ય એવં તિર્યંચોંકા વર્ણન કિયા ગયા હૈ । કલ્પિકા યહ નિરયાવલિકા સૂત્રકા હી દૂસરા નામ હૈ । નરકાવાસકી અપેક્ષા સકા નામ નિરયાવલિકા તથા કલ્પસમુત્પન્ન ચેટકકા સ સમેં વર્ણન હોનેસે ‘કલ્પિકા’ એસા નામ પ્રથિત હુઆ હૈ । યહ સૂત્ર અન્તકૃત દશાંગકા ઉપાંગ હૈ ૨૬ । જિસ સૂત્ર

વૈશ્રમણોપપાત, (૨૧) વેલંધરોપપાત, (૨૨) દેવેન્દ્રોપપાત, (૨૩) ઉત્થાનશ્રુત.

ક્ષુદ્રિકાવિમાન પ્રવિભક્તિ સૂત્રથી લધને ઉત્થાનશ્રુત સુધીના તેર સૂત્ર ઉપલબ્ધ નથી (૨૪) સમુત્થાનશ્રુત. એ અત્યારે ઉપલબ્ધ છે. (૨૫) નાગપરિજ્ઞાપનિકા-આ સૂત્રમાં નાગકુમાર જાતિના દેવોનું વર્ણન કરેલ છે. તે હાલમાં ઉપલબ્ધ નથી. (૨૬) નિરયાવલિકા-તેમાં શ્રેણીરૂપે વ્યવસ્થિત નરકોનું, પ્રસંગતઃ તેમાં જનાર મનુષ્ય અને તિર્યંગોનું વર્ણન કરેલ છે. આ નિરયાવલિકા સૂત્રનું ખીલું નામ કલ્પિકા છે. નરકાવાસની અપેક્ષાએ તેનું નામ નિરયાવલિકા તથા કલ્પસમુત્પન્ન ચેટકનું તેમાં વર્ણન હોવાથી “કલિકા” એવું નામ પ્રચલિત થયું છે. આ સૂત્ર અન્તકૃત દશાંગનું ઉપાંગ છે.

રોપપાતિકદશાઙ્ગસ્યોપાઙ્ગમ્ ૨૭ । તથા-‘પુષ્પિતા:’ ઇતિ । યત્રાગમપદ્ધતૌ ગૃહવા-  
સમુકુલનપરિત્યાગેન પ્રાણિનઃ સંયમભાવપુષ્પિતાઃ સુખિતાઃ, પુનઃ સંયમભાવપરિત્યા-  
ગતો દુઃસ્વપ્રાપ્તિમુકુલિતાઃ, પુનસ્તત્પરિત્યાગાદેવ પુષ્પિતાઃ પ્રતિપાદ્યન્તે, તાઃ  
પુષ્પિતા ઉચ્યન્તે । પુષ્પિતા સૂત્રં પ્રશ્ન વ્યાકરણસૂત્રસ્યોપાઙ્ગમ્ ૨૮ । તથા-‘પુષ્પચૂ-  
લિકાઃ’ ઇતિ, અધિકૃતાર્થ્ય વિશેષપ્રતિપાદિકાઃ પુષ્પચૂલિકાઃ । પુષ્પચૂલિકાસૂત્રં  
વિપાકસૂત્રસ્યોપાઙ્ગમ્ ૨૯ । તથા-‘વૃષ્ણિદશાઃ’ ઇતિ, અન્ધકવૃષ્ણિ નરાધિપકુલેયે  
જાતાસ્તેઽપિ અન્ધકવૃષ્ણયઃ, ઇહ વૃષ્ણિ શબ્દેન તદેવ ગૃહ્યન્તે । તેષાં દશા-અવસ્થા-  
શ્રિતગતિ સિદ્ધિગમનલક્ષણા યાસુ વર્ણ્યન્તે તા વૃષ્ણિ દશાઃ । અથવા-અન્ધકવૃષ્ણિ  
ચરિતપ્રતિપાદિકા દશાઃ-અધ્યયનાનિ વૃષ્ણિદશાઃ । વૃષ્ણિદશાસૂત્રં દૃષ્ટિવાદ સૂત્રસ્યો-  
પાઙ્ગમ્ ૩૦ । આશીવિષભાવનમ્ ૧, દૃષ્ટિવિષભાવનમ્ ૨, સ્વપ્નભાવનમ્ ૩, મહાસ્વ-

મેં કલ્પાવતંસક દેવવિમાનોં કા વર્ણન કિયા ગયા હૈ વહ કલ્પાવતંસિકા  
સૂત્ર હૈ । યહ સૂત્ર અનુત્તરોપપાતિક દશાંગકા ઉપાઙ્ગ હૈ ૨૭ । જિસ આગમ  
મેં ગૃહવાસ કા પરિત્યાગ કર પ્રાણી સંયમભાવકો ગ્રહણ કર સુખી હુએ  
વર્ણિત કિયે ગયે હૈ, તથા ‘સંયમભાવકા પરિત્યાગ કર દુઃસ્વ પ્રાપ્ત કરને  
વાલે બને હૈ, તથા યદિ સુખી હુએ હૈ તો વે સંયમભાવ સે હી હુએ હૈ’  
એસા વર્ણન કિયા ગયા હૈ વહ પુષ્પિતા સૂત્ર હૈ । યહ સૂત્ર પ્રશ્ન વ્યાકરણ  
સૂત્રકા ઉપાઙ્ગ હૈ । ૨૮ । પુષ્પિતા સૂત્ર કથિત વિષય કો જો વિશેષરૂપસે  
પ્રતિપાદન કરતા હૈ વહ પુષ્પ ચૂલિકા સૂત્ર હૈ । યહ સૂત્ર વિપાક સૂત્ર કા  
ઉપાઙ્ગ હૈ ૨૯ । અન્ધકવૃષ્ણિ રાજા કે કુલ મેં જો ઉત્પન્ન હુએ હૈ વે ભી  
અન્ધકવૃષ્ણિ માને ગયે હૈ । યહાં વૃષ્ણિ શબ્દ સે અન્ધકવૃષ્ણિ રાજા કે

(૨૭) જે સૂત્રમાં કલ્પાવતંસક દેવવિમાનોનું વર્ણન કરેલ છે તે કલ્પા-  
વતંસિકા સૂત્ર છે. આ સૂત્ર અનુત્તરોપપાતિક દશાંગનું ઉપાંગ છે.

(૨૮) જે આગમમાં “ગૃહવાસનો પરિત્યાગ કરીને પ્રાણી સંયમ ભાવને  
ગ્રહણ કરવાથી સુખી થતાં વર્ણવ્યું છે, તથા સંયમ ભાવનો પરિત્યાગ કરીને  
દુઃખ પ્રાપ્ત કરનાર બને છે, અને જે સુખી થયાં છે તો તેઓ સંયમ ભાવથી  
જ થયાં છે” એવું વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે તે પુષ્પિતાસૂત્ર છે. આ સૂત્ર  
પ્રશ્ન વ્યાકરણ સૂત્રનું ઉપાંગ છે. (૨૯) પુષ્પિતાસૂત્રમાં કથિત વિષયનું જે  
વિશેષરૂપે પ્રતિપાદન કરે છે, તે પુષ્પચૂલિકા સૂત્ર છે આ સૂત્ર વિપાક સૂત્રનું  
ઉપાંગ છે.

(૩૦) અન્ધકવૃષ્ણિ રાજાના કુળમાં જેઓ ઉત્પન્ન થયા છે તેઓ પણ  
અન્ધક વૃષ્ણિ મનાયા છે. અહીં વૃષ્ણિ શબ્દથી અન્ધક વૃષ્ણિ રાજાના કુળમાં  
જન્મેલાનું જ ગ્રહણ થયું છે. તેમની આવસ્થાઓનું-ચરિતગતિનું, ચરિત  
નં ૬૯

પ્તભાવનમ્ ૪, તેજોઽગ્નિનિસર્ગમ્ ૫, એવમાદિકાનિ-એતત્પ્રભૃતીનિ-‘ચૌરાસીશ્વર-  
નગસહસ્સાઈ’ ઇતિ । ચતુરશીતિ પ્રકીર્ણક સહસ્રાણિ ભગવતોઽર્હત-ઋષભસ્વામિન  
આદિ તીર્થદ્વરસ્યેતિ । અયમર્થઃ-પ્રથમતીર્થદ્વરસ્ય ભગવતઃ શ્રી ઋષભદેવસ્વામિનઃ  
પ્રકીર્ણકાનિ ચતુરશીતિ સહસ્ર સંખ્યકાનિ વશૂબુઃ । તથા-મધ્યમકાનાં-દ્વિતીય  
તીર્થદ્વરદારમ્ય ત્રયોવિંશતિતમતીર્થદ્વરપર્યન્તાનાં, જિનવરાણાં પ્રકીર્ણકાનિ સંખ્યાત  
સહસ્ર સંખ્યકાનિ વશૂબુઃ । તથા-ભગવતઃ શ્રી વર્ધમાનસ્વામિનઃ પ્રકીર્ણકાનિ ચતુ-  
ર્દશસહસ્રસંખ્યકાનિ આસન્ । ‘અહવા૦’ ઇત્યાદિ સુગમમ્ । તદેતત્ કાલિકશ્રુતં  
વર્ણિતમ્ । તથા-આવશ્યકવ્યતિરિક્ત વર્ણિતમ્ । તથા-અનજ્ઞપ્રવિષ્ટશ્રુતં વર્ણિતમ્ ॥૪૩॥

કુલ મેં જન્મ લેને વાળોં કા હી ગ્રહણ કિયા ગયા હૈ । इनकी अवस्थाओं  
का-चरितगतिका-चारित्र प्राप्ति का मुक्ति प्राप्ति का-जिस सूत्र में वर्णन  
हुआ है वह वृष्णिदशा सूत्र है । अथवा जिस सूत्र में अंधकवृष्णि की  
अवस्थाओं का वर्णन करने वाले अध्ययन हों वह भी वृष्णिदशासूत्र  
है । यह दृष्टिवाद सूत्र का उपाङ्ग है ३० । ये तथा इनसे अतिरिक्त और  
भी जो श्रुत हैं वे सब कालिक श्रुत हैं । जैसे-आशीविषभावन १, दृष्टि  
विषभावन २, स्वप्नभावन ३, महास्वप्नभावन ४, तेजोऽग्निनिसर्ग ५  
इत्यादि । प्रथमतीर्थकर श्रीऋषभदेव स्वामी के चौरासी हजार प्रकीर्णक  
श्रुत थे । तथा द्वितीयतीर्थकर श्री अजितनाथ से लेकर तेईसवेंतीर्थकर  
श्रीपार्श्वनाथस्वामी पर्यन्त बाईस तीर्थकरों के प्रकीर्णक श्रुतसंख्यात हजार  
थे । तथा श्रीवर्धमानस्वामी के प्रकीर्णक चौदह हजार थे । अथवा  
औत्पत्तिकी, वैनयिकी, कर्मजा एवं पारिणामिकी, इन चार प्रकार की

પ્રાપ્તિનું મોક્ષ પ્રાપ્તિનું જેમાં વર્ણન થયું છે તે વૃષ્ણિ દશાસૂત્ર છે. અથવા જે  
સૂત્રમાં અંધક વૃષ્ણિની અવસ્થાઓનું વર્ણન કરનારા અધ્યયન હોય તે પણ  
વૃષ્ણિ દશાસૂત્ર છે. તે દૃષ્ટિવાદ સૂત્રનું ઉપાંગ છે. એ તથા તેમના સિવાયનાં  
બીજાં પણ જે શ્રુત છે તે બધાં કાલિકશ્રુત છે. જેવાં કે (૧) આશીવિષ ભાવન,  
(૨) દૃષ્ટિ વિષભાવન, (૩) સ્વપ્ન ભાવન, મહાસ્વપ્ન ભાવન, તેજો અગ્નિનિ-  
સર્ગ વગેરે. પહેલાં તીર્થકર શ્રી ઋષભદેવ સ્વામીના ચોર્યાસી હજાર પ્રકીર્ણક  
શ્રુત હતાં. તથા બીજા તીર્થકર અજિતનાથથી માંડીને ત્રેવીસમાં તીર્થકર શ્રી.  
પાર્શ્વનાથ સ્વામી સુધીના બાવીસ તીર્થકરોના પ્રકીર્ણક સંખ્યાત હજાર શ્રુત  
હતાં તથા શ્રી. વર્ધમાન સ્વામીનાં પ્રકીર્ણક ચૌદ હજાર શ્રુત હતાં, અથવા  
ઔત્પત્તિકી, વૈનયિકી, કર્મજા અને પરિમાયિકી, એ ચાર પ્રકારની મતિથી

સામ્પ્રતમંગ્ગપ્રવિષ્ટશ્રુતમાહ—

મૂલમ્—સે કિં તં અંગપવિટ્ઠં ? । અંગપવિટ્ઠં દુવાલસવિહં  
પણ્ણત્તં । તં જહા—આચારો ૧ સૂચગહો ૨ ઠાણં ૩ સમવાયો ૪,  
વિવાહપણ્ણત્તી ૫, નાયાધમ્મકહાઓ ૬ ઉપાસગદસાઓ ૭,  
અંતગુદસાઓ ૮, અણુત્તરોવવાહ્યદસાઓ ૯, પળ્ણહાવાગરણં ૧૦,  
વિવાગસુચં ૧૧, દિટ્ઠિવાઓ ૧૨ ॥ સૂ. ૪૪ ॥

છાયા—અથ કિં તદ્ અંગપ્રવિષ્ટમ્ ? અંગપ્રવિષ્ટં દ્વાદશવિધં પ્રજ્ઞતમ્ । તદ્ યથા  
આચારઃ ૧, સૂત્રકૃતમ્ ૨, સ્થાનમ્ ૩, સમવાયઃ ૪, વિવાહપ્રજ્ઞપ્તિઃ ૫, જ્ઞાતાધર્મ-  
કથાઃ ૬, ઉપાસકદશાઃ ૭, અન્તકૃદ્દશાઃ ૮, અનુત્તરોપપાતિકદશાઃ ૯, પ્રશ્નવ્યાક-  
રણમ્ ૧૦, વિપાકશ્રુતમ્ ૧૧, દૃષ્ટિવાદઃ ૧૨ ॥ સૂ. ૪૪ ॥

ટીકા—સુગમમ્ ॥ સૂ. ૪૪ ॥

બુદ્ધિયોં સે સમન્વિત જિતને શિષ્યજન જિન ૨ તીર્થકરોં કે થે ઉન કે  
વારે મેં ઉતને હી હજાર પ્રકીર્ણક થે । તથા પ્રત્યેક બુદ્ધ ખી ઉતને હી થે ।  
યહ આવશ્યક વ્યતિરિક્ત કે ભેદરૂપ કાલિક શ્રુતકા વર્ણન હુવા । યહાં  
તક અનંગપ્રવિષ્ટ કા કથન હુવા ॥ સૂ. ૪૩ ॥

અવ અંગપ્રવિષ્ટ શ્રુત કહતે હૈં—‘સે કિં તં અંગપવિટ્ઠં’ ॥ ૧ ॥

શિષ્ય પૂછતા હૈં—હે ભદ્રન્ત ! અંગપ્રવિષ્ટ શ્રુત કા કયા સ્વરૂપ હૈં ।

ઉત્તર—અંગપ્રવિષ્ટ શ્રુત બારહ પ્રકાર કા કહા ગયા હૈં, જૈસે—આચા-  
રાંગ ૧, સૂત્રકૃતાંગ ૨, સ્થાનાંગ ૩, સમવાયાંગ ૪, વિવાહપ્રજ્ઞપ્તિ ૫,

સુક્ત બેટલા શિષ્યજન, બે બે તીર્થકરોના હતાં તેમના પણ એટલા જ  
હજાર પ્રકીર્ણક શ્રુત હતાં. તથા પ્રત્યેક બુદ્ધ પણ એટલાં જ હતા. આ આવ-  
શ્યક વ્યતિરિક્તના ભેદરૂપ કાલિક શ્રુતનું વર્ણન થયું. અહીં સુધી અનંગ-  
પ્રવિષ્ટનું વર્ણન થયું. ॥ સૂ. ૪૩ ॥

હવે અંગ પ્રવિષ્ટ સૂત્રનું વર્ણન કરે છે—“સે કિં તં અંગપવિટ્ઠં” ॥ ૧ ॥

શિષ્ય પૂછે છે—હે ભદ્રન્ત ! અંગપ્રવિષ્ટ સૂત્રનું શું સ્વરૂપ છે ?

ઉત્તર—અંગપ્રવિષ્ટ શ્રુત બાર પ્રકારનું કહેલ છે—(૧) આચારાંગ, (૨)  
સૂત્રકૃતાંગ, (૩) સ્થાનાંગ, (૪) સમવાયાંગ, (૫) વિવાહ પ્રજ્ઞપ્તિ, (૬) જ્ઞાતા



अथैषां पृथक् पृथक् स्वरूपं वर्णयितुकामः प्रथममाचाराङ्गस्वरूपं दर्शयति—

मूलम्—से किं तं आयारे? आयारे णं समणाणं निगंथाणं  
आयार—गोयर—विणय—वेणइय—सिक्खा—भासा—भासा—चरण  
—करण—जाया—माया—वित्तीओ आघविज्जंति ।

से समासओ पंचविहे पणत्ते, तं जहा—नाणाथारे, दंस-  
णाथारे, चरित्ताथारे, तवाथारे, वीरियाथारे । आयारे णं परित्ता  
वायणा, संखेज्जा अणुओगदारा, संखिज्जावेढा, संखेज्जा सिलोगा,  
संखिज्जाओ निज्जुत्तीओ, संखिज्जाओ पडिवत्तीओ । से णं अंग-  
इयाए पढमे अंगे, दो सुयक्खंधा, पणवीसं अज्झयणा, पंचा-  
सीई उद्देसणकाला, पंचासीइ समुद्देसणकाला, अट्टारस—पय—  
सहस्साइ पयग्गेणं, संखिज्जा अक्खरा, अणंता गमा, अणंता  
पज्जवा, परित्ता तसा, अणंता थावरा, सासय—कड—निबद्ध  
निकाइया जिणपणत्ता भावा आघविज्जंति, पन्नविज्जंति,  
परूविज्जंति, दंसिज्जंति, निदंसिज्जंति, उवदंसिज्जंति । से एवं  
आया, एवं नाया, एवं विण्णाया, एवं चरण करण परूवणा  
आघविज्जइ, पणविज्जइ, परूविज्जइ, दंसिज्जइ, निदंसिज्जइ,  
उवदंसिज्जइ । से तं आयारे ॥ सू० ४५ ॥

छाया—अथ कः स आचारः ? । आचारे खलु श्रमणानां निर्ग्रन्थानामाचार-  
गोचर विनयवैनयिक शिक्षा भाषाभाषाचरणकरणयात्रामात्रावृत्तय आख्यायन्ते ।

स समासतः पञ्चविधः प्रज्ञप्तः । तद् यथा—ज्ञानाचारः १, दर्शनाचारः २,  
ज्ञाताधर्मकथांग ६, उपासकदशांग ७, अन्तकृतदशांग ८, अनुत्तरोप-  
पातिकदशांग ९, प्रश्नव्याकरण १०, विपाकश्रुत तथा ११ दृष्टिवाद २२,  
॥ सू० ४४ ॥

धर्मकथांग, (७) उपासकदशांग, (८) अन्तकृतदशांग, (९) अनुत्तरोपपातिक  
दशांग, (१०) प्रश्न व्याकरण, (११) विपाकश्रुत, तथा दृष्टिवाद. ॥ सू. ४४ ॥

ચારિત્રાચારઃ ૩, તપ આચારઃ ૪, વીર્યાચારઃ ૫ । આચારે સ્વલુ પરીતા (પરિમિતા) વાચના, સંખ્યેયાનિ—અનુયોગદ્વારાણિ, સંખ્યેયા વેષ્ટકાઃ, સંખ્યેયાઃ શ્લોકાઃ, સંખ્યેયા નિર્યુક્તયઃ, સંખ્યેયાઃ પ્રતિપત્તયઃ । સ સ્વલુ અજ્ઞાર્થતયા પ્રથમમજ્ઞમ્, દ્વૌ શ્રુતસ્કન્ધૌ, પશ્ચવિંશતિરધ્યયનાનિ, પશ્ચાશીતિરુદ્દેશનકાલાઃ, પશ્ચાશીતિઃ સમુદ્દેશનકાલાઃ, અષ્ટાદશ પદસહસ્રાણિ પદાગ્રેણ, સંખ્યેયાન્યક્ષરાણિ, અનન્તાગમાઃ, અનન્તાઃ પર્યવાઃ, પરીતાસ્ત્રસાઃ અનન્તાઃ સ્થાવરાઃ, શાશ્વતકૃતનિવદ્ધ નિકાચિતા જિનપ્રજ્ઞપ્તા ભાવા આખ્યાયન્તે, પ્રજ્ઞાપ્યન્તે, પ્રરૂપ્યન્તે, દર્શ્યન્તે નિદર્શ્યન્તે, ઉપદર્શ્યન્તે । સ એવમાત્માજ્ઞાતા, એવં વિજ્ઞાતા, એવં ચરણકરણપ્રરૂપણા આખ્યાયતે, પ્રજ્ઞાપ્યતે, પ્રરૂપ્યતે, દર્શ્યતે, નિદર્શ્યતે, ઉપદર્શ્યતે, સ એષ આચારઃ ॥ સૂ. ૪૫ ॥

ટીકા—શિષ્યઃ પૃછતિ—‘ સે કિં તં આચારે ૦ ’ ઇતિ ।

અથ કઃ સ આચાર ઇતિ । હે ભદન્ત ! યો ભવતા દ્વાદશાંગશ્રુતપુરુષસ્ય પ્રથમાજ્ઞતયાઽઽચારોઽનુપદમેવોક્તઃ સ આચારઃ કીદૃક્ સ્વરૂપઃ ? ઇતિ પ્રશ્નઃ । ઉત્તરમાહ—આચારેણં ૦ ’ ઇત્યાદિ । હે શિષ્ય ! આચારે=આચારાંગસૂત્રે સ્વલુ શ્રમણાનાં=સાધૂનામ્, કીદૃશાનામિત્યાહ—‘ નિર્ગન્થાણં ’ ઇતિ । નિર્ગન્થાનાં=વાહ્યાભ્યન્તરગ્રન્થરહિતાનામ્, इदं વિશેષણં શાક્યાદિશ્રમણનિવૃત્ત્યર્થમ્ । શ્રમણા હિ પશ્ચવિધા ભવન્તિ । ઉક્તશ્ચ—

અવ હન સવકા સ્વરૂપ સૂત્રકાર ભિન્ન ૨ સૂત્રોં દ્વારા સ્પષ્ટ કરતે હૈ—‘ સે કિં તં આચારે ૦ ’ ઇત્યાદિ—

શિષ્ય પૂછતા હૈ— હે ભદન્ત ! આપને અમી જો દ્વાદશાંગ શ્રુત પુરુષ કા પ્રથમ અંગ આચારાંગસૂત્ર બનલાયા હૈ ઉસકા કયા સ્વરૂપ હૈ ?

ઉત્તર—આચારાંગસૂત્રમેં નિર્ગન્થ શ્રમણોં કૈ આચાર, ગોચર, વિનય, વૈનયિક, ભાષા, અભાષા, ચરણ, કરણ, યાત્રા, માત્રા, એવં વૃત્તિ કા કથન કિયા ગયા હૈ । ગ્રન્થ નામ પરિગ્રહ કા હૈ । વહ વાહ્ય ઔર આભ્ય-

હવે એ બધાંનું સ્વરૂપ સૂત્રકાર અલગ અલગ સૂત્રો દ્વારા સ્પષ્ટ કરે છે— ‘ સે કિં તં આચારે ૦ ’ ઇત્યાદિ.

શિષ્ય પૂછે છે—હે ભદન્ત ! આપે હમાણા જ જે દ્વાદશાંગશ્રુત પુરુષનું પહેલું અંગ આચારાંગસૂત્ર બતાવ્યું છે તેનું શું સ્વરૂપ છે ?

ઉત્તર—આચારાંગસૂત્રમાં નિર્ગન્થ શ્રમણોના આચાર, ગોચર, વિનય, વૈનયિક, ભાષા, અભાષા, ચરણ, કરણ, યાત્રા માત્રા અને વૃત્તિનું વર્ણન કરાયું છે. પરિગ્રહનું નામ ગ્રન્થ છે. તે ગાહ્ય અને આભ્યન્તરના ભેદથી બે પ્રકારનો

“ નિર્ગ્રન્થસક્તાવસગેરુય આજીવ પંચહા સમણા ” ।

છાયા—નિર્ગ્રન્થ—શાક્ય—તાપસ—ગૈરિકા જીવાઃ પશ્ચધા શ્રમણઃ । ઇતિ ॥

આચારગોચર વિનયવૈનયિક શિક્ષાભાષાઽભાષાચરણકરણયાત્રામાત્રાવૃત્તય આ-  
સ્થાયન્તે । તત્રાચારઃ—જ્ઞાનાચારાદ્યનેકભેદમિત્રઃ, ગોચરઃ=ભિક્ષાગ્રહણવિધિઃ—યથા  
ગૌઃ પરિચિતાપરિચિતોભયક્ષેત્રે ગ્રાસાય પ્રવર્તતે તથા સાધુરપિ પરિચિતા પરિચિતો-  
ભયકુલે ભિક્ષાર્થ ચરતીતિ ભાવઃ । વિનયઃ—વિનીયતે અપનીયતે કર્માનેનેતિ વિનયઃ  
જ્ઞાનાદિ રૂપઃ, વૈનયિકમ્—વિનયજન્યં કર્મક્ષયાદિરૂપં ફલમ્, શિક્ષા—ગ્રહણશિક્ષા

ન્ટર કે ભેદ સે દો પ્રકાર કા બતલાયા ગયા હૈ । શ્રમણોં કા જો યહ  
નિર્ગ્રન્થપદ વિશેષણરૂપ સે સૂત્રમ્ રહ્યા ગયા હૈ । ડસકા તાત્પર્ય યહ હૈ  
કિ જૈન મુનિ ઇસ દોનોં પ્રકાર કે ગ્રન્થ સે રહિત હુઆ કરતે હૈ ।  
શાક્યાદિ શ્રમણ એસે નહીં હોતે । પાંચ પ્રકાર કે શ્રમણ બતલાયે  
ગયે હૈ—નિર્ગ્રન્થ ૧, શાક્ય ૨, તાપસ ૩, ગૈરિક ૪, આજીવક ૫,  
इनमें निर्ग्रन्थ जैन श्रमण ही होते हैं । मुनिजन जिसे अपने दैनिक  
आचरणमें लाते हैं वह आचार है, यह ज्ञानाचार आदि के भेद से  
अनेक प्रकार का होता है । भिक्षा ग्रहण करने की जो विधि है वह  
गोचर है । जैसे गाय परिचित एवं अपरिचित उभयप्रकार के खेतमें  
चरती है उसी प्रकार निर्ग्रन्थमुनिजन भी परिचित एवं अपरिचित उभ-  
यप्रकार के घरोंमें भिक्षा के लिये जाते हैं । इस प्रकार जी भिक्षा की  
विधि है वह गोचर है । कर्मरूप मैल जिसके द्वारा दूर किया जाता है  
वह विनय है । ज्ञानादिरूप से विनय भी अनेकप्रकार का बतलाया गया

ખતાવેલ છે. શ્રમણોતું જે આ નિર્ગ્રન્થપદ વિશેષણરૂપે સૂત્રમાં મૂકવામાં આવ્યું  
છે તેનું તાત્પર્ય એ છે કે જૈન મુનિ એ બંને પ્રકારના ગ્રન્થથી રહિત હોય  
છે. શાક્યાદિ શ્રમણ એવાં હોતાં નથી. પાંચ પ્રકારના શ્રમણ ખતાવવામાં  
આવ્યા છે—(૧) નિર્ગ્રન્થ, (૨) શાક્ય, (૩) તાપસ, (૪) ગૈરિક, અને (૫) આજી-  
વક. એમનામાં જૈનશ્રમણ જે નિર્ગ્રન્થ હોય છે. મુનિઓ જેનો પોતાના દૈનિક  
આચરણમાં ઉપયોગ કરે છે તે આચાર છે, તે જ્ઞાનાચાર આદિના ભેદથી અનેક  
પ્રકારનો હોય છે. ભિક્ષાગ્રહણ કરવાની જે વિધિ છે તે ગોચર કહેવાય છે. જેમ  
ગાય પરિચિત અને અપરિચિત બંને પ્રકારનાં ખેતરોમાં ચરે છે એજ પ્રકારે  
નિર્ગ્રન્થ મુનિ પણ પરિચિત અને અપરિચિત બંને પ્રકારનાં ઘરે ભિક્ષાને માટે  
જાય છે. આ રીતે ભિક્ષાની જે વિધિ છે તેને ગોચર કહે છે. જેના દ્વારા કર્મરૂપ  
મેલ દૂર કરાય છે તે વિનય છે. જ્ઞાનાદિરૂપે વિનય પણ અનેક પ્રકારનો ખતાવ્યો છે.

આસેવનશિક્ષા ચ, યદ્વા-શિષ્યશિક્ષા, ભાષા-સત્યા અસત્યા મૃષા ચ, અભાષા-અસત્યા સત્યમૃષા ચ, ચરણં-વ્રતાદિકં, કરણં-પિણ્ડ-વિશુદ્ધ્યાદિકમ્ । ઉક્તञ્ચ—

(૫) (૧૦) (૧૭) (૧૦) (૯)  
 વય સમણધમ્મ સંજમ, વેયાવચ્ચં ચ વંમગુત્તીઓ ।  
 (૩) (૧૨) (૪) (૭૦)  
 ણાણાઇતિયં તવ કોહનિગ્ગહાર્દ્રં ચરણમેયં ॥૭૦॥  
 (૪) (૬) (૧૨) (૧૩) (૫)  
 પિંડવિસોહી સમિદ્દં, ભાવણ પહિમા ય ઇંદિયનિરોહો ।  
 (૨૫) (૩) (૪) (૭૦)  
 પહિલેહ્ણ ગુત્તીઓ, અભિગ્ગહા ચેવ કરણં તુ ॥

હૈ । વિનય જન્ય કર્મક્ષેપાદિ રૂપ ફલ કા નામ વૈનયિક હૈ । ગ્રહણશિક્ષા તથા આસેવનશિક્ષા કે ભેદ સે શિક્ષા દો પ્રકાર કી બતલાઈ ગઈ હૈ । અથવા મુનિજન જો અપને શિષ્યવર્ગ કોં શિક્ષા દેતે હૈં વહ શિક્ષા ભી શિક્ષા શબ્દ સે યહાં ગૃહીત હુઈ હૈ । ભાષા-સત્ય, અસત્યામૃષારૂપ, અભાષા-અસત્ય, સત્યમૃષારૂપ હૈ । વ્રતાદિકકા આચરણ યહ ચરણ હૈ । પિણ્ડવિશુદ્ધિ આદિ કરણ હૈ । કહા ભી હૈ—

(૫) (૧૦) (૧૭) (૧૦) (૯)  
 “વય સમણધમ્મ સંજમ, વેયાવચ્ચં ચ વંમગુત્તીઓ ।  
 (૩) (૧૨) (૪)  
 ણાણાઇતિયં તવ કોહ નિગ્ગહાર્દ્રં ચરણમેયં (૭૦) ॥૧॥

વિનયજન્ય કર્મક્ષેપાદિ રૂપ ફળનું નામ વૈનયિક છે. શિક્ષા બે પ્રકારની બતાવી છે—(૧) ગ્રહણ શિક્ષા, તથા (૨) આસેવન શિક્ષા. અથવા મુનિજન પોતાના શિષ્યોને જે શિક્ષા આપે છે તે પણ શિક્ષા શબ્દથી ગણી ગ્રહણ કરવામાં આવેલ છે. ભાષા-સત્ય, અસત્યામૃષારૂપ, અભાષા-અસત્ય, સત્યમૃષારૂપ છે. વ્રતાદિકનું આચરણ તે ચરણ કહેવાય છે. પિંડવિશુદ્ધિ આદિ કરણ છે. કહ્યું પણ છે—

૫ ૧૦ ૧૭ ૧૦ ૯  
 “વય સમણધમ્મ સંજમ, વેયાવચ્ચં ચ વંમગુત્તીઓ ।  
 ૩ ૧૨ ૪  
 ણાણાઇતિયં તવ કોહ નિગ્ગહાર્દ્રં ચરણમેયં (૭૦) ॥૧॥

છાયા—વ્રત—શ્રવણધર્મ સંયમ—વૈયાવૃત્ત્યં ચ બ્રહ્મગુપ્તયઃ ।

જ્ઞાનાદિત્રિકં તપઃ ક્રોધનિગ્રહાદિ ચરણમેતત્ ॥

પિંડવિશુદ્ધિઃ સમિતિઃ ભાવના પ્રતિમા ચ ઇન્દ્રિયનિરોધઃ ।

પ્રતિલેખના ગુપ્તયઃ અભિગ્રહાશ્ચૈવ કરણં તુ ॥ ઇતિ ॥

તથા—યાત્રા—સંયમયાત્રા—રત્નત્રયારાધનલક્ષણા, માત્રા—તન્નિર્વાહાર્થમેવ પરિ-  
મિતાહારગ્રહણલક્ષણા, વૃત્તિઃ—વિવિધૈરભિગ્રહવિશેષૈર્વર્તનમ્, આચારાદિવૃત્તિપર્યન્તાનાં

(૪) પિંડવિસોહી (૫) સમિર્ઘ, (૧૨) ભાવણ (૧૩) પડિમા ય (૫) ઇન્દિયનિરો હો ।

(૨૫) પડિલેહણ (૩) ગુત્તીઓ, (૪) અભિગ્રહા ચેવ કરણં (૭૦) તુ ॥૨॥

પાંચ પ્રકારના મહાવ્રત દસ પ્રકારના શ્રમણ ધર્મ, સત્તર પ્રકાર  
ના સંયમ, દસ પ્રકારના વૈયાવૃત્ત્ય, નવ પ્રકારની બ્રહ્મચર્યગુપ્તિ, જ્ઞાનાદિ  
ત્રણ, ચાર પ્રકારના તપ, ચાર પ્રકારના ક્રોધાદિકોના નિગ્રહ ૭૦,  
આમ તરફ આ ચરણ સત્તરી છે । આ ચરણ સત્તરીના જ આહીં ચરણ  
શબ્દથી ગ્રહણ થયેલ છે । ચાર પ્રકારની પિંડવિશુદ્ધિ, પાંચ પ્રકારની  
સમિતિ, ચાર પ્રકારની ભાવના, ચાર પ્રકારની પ્રતિમા, પાંચ પ્રકારના  
ઇન્દ્રિયનિરોધ, પચીસ પ્રકારની પ્રતિલેખના, ત્રણ ગુપ્તિ તથા ચાર  
પ્રકારના અભિગ્રહ ૭૦, આ સર્વ કરણ સત્તરી છે । આના ગ્રહણ આ  
કરણ શબ્દથી થયેલ છે । રત્નત્રયરૂપ સંયમના નિર્વાહ કરના આ સંય-

પિંડ વિસોહી સમિર્ઘ ભાવણ પડિમા ય ઇન્દિય નિરોહો ।

પડિલેહણ ગુત્તીઓ, અભિગ્રહા ચેવ કરણં (૭૦) તુ ॥૨॥

પાંચ પ્રકારના મહાવ્રત, દસ પ્રકારના શ્રમણ ધર્મ, સત્તર પ્રકારના સંયમ  
દસ પ્રકારના વૈયાવૃત્ત્ય, નવ પ્રકારની બ્રહ્મચર્ય ગુપ્તિ, જ્ઞાનાદિ ત્રણ, ચાર પ્રકાર-  
ના તપ, ચાર પ્રકારના ક્રોધાદિકોના નિગ્રહ, (૭૦) આ રીતે આ ચરણસત્તરી છે.  
આ ચરણ સત્તરીનું જ આહીં ચરણ શબ્દથી ગ્રહણ થયેલ છે. ચાર પ્રકારની  
પિંડ વિશુદ્ધિ, પાંચ પ્રકારની સમિતિ, ચાર પ્રકારની ભાવના, ચાર પ્રકારની  
પ્રતિમા, પાંચ પ્રકારના ઇન્દ્રિયનિરોધ, પચીસ પ્રકારની પ્રતિલેખના, ત્રણ ગુપ્તિ  
તથા ચાર પ્રકારના અભિગ્રહ (૭૦) આ બધાં કરણ સત્તરી છે. આહીં કરણ  
શબ્દથી તેનું ગ્રહણ કરવામાં આવ્યું છે. રત્નત્રયરૂપ સંયમના નિર્વાહ કરવો તે

શબ્દાનાં દ્વન્દ્વઃ । આચારાદિ વૃત્ત્યન્તાઃ અત્રાચારાઙ્ગસૂત્રે કથ્યન્તે ઇતિ ભાવઃ । સ પૂર્વોક્ત આચારઃ સમાસતઃ—સંક્ષેપતઃ પશ્ચવિધઃ પ્રજ્ઞપ્તઃ, પશ્ચવિધત્વમેવાહ—‘તં જહાં’ ઇત્યાદિના । તત્ર પ્રથમે આચારો જ્ઞાનાચારઃ—સ હિ શ્રુતજ્ઞાનત્રિપયઃ કાલ-વિનયવહુમાનોપધાનાનિહ્વ વ્યજ્ઞનાર્થ તદુભયરૂપોઽષ્ટવિધઃ, વ્યજ્ઞનશબ્દોઽત્ર પદ-વાચકઃ, તત્ત્વ સૂત્રસ્થપદાનાં સમ્યગુચ્ચારણમ્ । ઉક્તશ્ચ જ્ઞાનાચારસ્વરૂપમ્—

“કાલે વિણયે વહુમાણે ઉવહાણે તથા અનિહ્વણે ।

વંજણ તત્થ તદુભયે અટ્ટવિહો ણાણમાયારો” ॥ ૧ ॥

છાયા—કાલો વિનયો વહુમાન ઉપધાનં તથા અનિહ્વનમ્ ।

વ્યજ્ઞનમર્થસ્તદુભયમ્ અટ્ટવિધો જ્ઞાનાચારઃ ॥ ઇતિ ।

મયાત્રા હૈ । તથા ઇસ રત્નત્રયરૂપ સંયમ્ન કે નિર્વાહ નિમિત્ત જો પરિમિ-તમાત્રામેં આહાર ગ્રહણ કિયા જાતા હૈ વહ માત્રા હૈ । તથા અનેક પ્રકાર કે અભિગ્રહોં કા ધારણ કરના યહ વૃત્તિશબ્દ કા અર્થ હૈ । તાત્પર્ય ઇસકા યહ હૈ કિ ઇન સાધુ કે આચાર આદિ સમસ્ત કર્તવ્યોં કા આચારાંગસૂત્રમેં વર્ણન કિયા ગયા હૈ ।

વહ આચાર સંક્ષેપ સે પાંચ પ્રકાર કા કહા ગયા હૈ, જૈસે-જ્ઞાનાચાર ૧, દર્શનાચાર ૨, ચારિત્રાચાર ૩, તપ આચાર ૪, ઔર વીર્યાચાર ૫ । ઇનમેં જ્ઞાનાચાર શ્રુતજ્ઞાન કે વિષયમેં હોતા હૈ । યહ-કાલ ૧, વિનય ૨, વહુમાન ૩, ઉપધાન (ઉપવાસાદિતપ) ૪, અનિહ્વ ૫, વ્યંજન ૬, અર્થ ૭, એવં તદુભય ૮, ઇસ રૂપ સે આઠ પ્રકાર કા બતલાયા ગયા હૈ । સુત્રસ્થિત પદોં કા અચ્છી તરહ સે ઉચ્ચારણ કરના ઇસકા નામ વ્યંજન હૈ ૧ ।

સંયમયાત્રા છે. તથા તે રત્નત્રયરૂપ સંયમના નિર્વાહ માટે જે પરિમિતમાત્રામાં આહાર ગ્રહણ કરાય છે તેનું નામ માત્રા છે. તથા અનેક પ્રકારના અભિગ્રહોને ધારણ કરવો એવો વૃત્તિ શબ્દનો અર્થ છે. તેનું તાત્પર્ય એ છે કે એ સાધુ-ઓના આચાર આદિ સમસ્ત કર્તવ્યોનું આચારાંગ સૂત્રમાં વર્ણન કરવામાં આવેલ છે.

એ આચાર સંક્ષિપ્તમાં પાંચ પ્રકારના કહેલ છે—(૧) જ્ઞાનાચાર, (૨) દર્શનાચાર, (૩) ચારિત્રાચાર, (૪) તપ આચાર, અને (૫) વીર્યાચાર. તેઓમાં જ્ઞાનાચાર શ્રુતજ્ઞાનના વિષયમાં થાય છે. એ (૧) કાળ, (૨) વિનય, (૩) બહુમાન, (૪) ઉપધાન, (૫) અનિહ્વ, (૬) વ્યંજન, (૭) અર્થ અને (૮) તદુભય, એમ આઠ પ્રકારનો બતાવ્યો છે. સૂત્રમાં રહેલ પદાર્થોનું સારી રીતે ઉચ્ચારણ કરવું તેનું નામ વ્યંજન છે (૧) દર્શનાચાર. સમ્યક્ત્વિયોનો આચાર. તે આઠ



દર્શનાચારઃ—સમ્યક્ત્વવતાં નિઃશક્લિત ૧, નિષ્કાક્લિત ૨, નિર્વિચિકિત્સા ૩  
અમૂઢદૃષ્ટિ ૪ ઉપબ્રંહા ૫, સ્થિરીકરણ ૬—વાત્સલ્ય ૭—પ્રભાવના ૮ રૂપઃ ઉપબ્રંહા  
સાધર્મિણાં વૃદ્ધિકરણં પોષણં ચ ।

ઉક્તશ્ચ દર્શનાચાર સ્વરૂપમ્—

નિસ્સંક્રિય નિક્લંક્રિય નિવિવિતિગિચ્છા અમૂઢદિટ્ટી ય ।

ઉવબ્રૂહ સ્થિરીકરણે, વચ્છલ્લપભાવણે અટ્ટ ॥

છાયા—નિઃશક્લિતં ૧ નિષ્કાક્લિતં ૨ નિર્વિચિકિત્સા ૩ અમૂઢદૃષ્ટિશ્ચ ૪ ।

ઉપબ્રંહા ૫ સ્થિરીકરણં ૬ વાત્સલ્યં ૭ પ્રભાવના ૮ અટ્ટ ॥ ઇતિ ॥

ચારિત્રાચારઃ—ચારિત્રવતાં સમિતિગુપ્ત્યાદિ પાલનરૂપો વ્યવહારઃ । ઉક્તશ્ચ—

“ પણિદાણ જોગજુત્તો, પંચહિં સમિતિહિં તિહિં ય ગુત્તીહિં ।

એસ ચરિત્તા યારો, અઢ્ઢવિહો હોઈ ણાયવ્વો ॥

છાયા—પ્રણિધાનયોગયુક્તઃ પશ્વભિઃ સમિતિભિસ્તિસૃભિશ્ચ ગુપ્તિભિઃ ।

એષ ચારિત્રાચારઃ, અઠ્ઠવિધો ભવતિ જ્ઞાતવ્યઃ ॥ ઇતિ ॥

તપ આચારઃ—અનશનાદિ દ્વાદશવિધતપઃ—સમાચરણલક્ષણઃ । ઉક્તશ્ચ—

“ વારસવિહમ્મિ વિ તવે, સઠ્ઠિમત્તર વાહિરે જિણુવદિટ્ઠે ।

અગિલાએ આણાજીવી, ણાયવ્વો સો તવાયારો ” ॥

છાયા—દ્વાદશવિધેઽપિ તપસિ સામ્યન્તર વાહ્યે જિનોપદિષ્ટે ।

અગ્લાનઃ અનાજીવી, જ્ઞાતવ્યઃ સ તપ આચારઃ ॥ ઇતિ ।

દર્શનાચાર-સમ્યક્ત્વવર્ગોં કા આચાર, યહ આઠ પ્રકાર કા કહા ગયા હૈ  
જૈસે-નિઃશંકિત ૧, નિષ્કાંક્ષિત ૨, નિર્વિચિકિત્સા ૩, અમૂઢદૃષ્ટિ ૪,  
ઉપબ્રંહા ૫, સ્થિરીકરણ ૬, વાત્સલ્ય ૭, ઓર પ્રભાવના ૮ । સાધર્મી-  
જનોં કી વૃદ્ધિ કરના તથા ઉનકા પોષણ કરના યહ ઉપબ્રંહા હૈ । યે સમ્ય-  
ક્ત્વ કે આઠ અંગ હૈ । ઇન્હે સમ્યગ્દૃષ્ટિ જીવ પાલન કરતા હૈ ૨ । ચારિત્ર  
શાલી જીવોં કા ગુપ્તિ, સમિતિ આદિ કા પાલન કરને રૂપ જો વ્યવહાર  
હૈ ઉસકા નામ ચારિત્રાચાર હૈ । ૩ । અનશન આદિ બારહ પ્રકાર કે  
તપોં કા પાલન કરના યહ તપ આચાર હૈ । તપ બાહ્ય ઓર અભ્યન્તર કે

પ્રકારનો ઠહેલ છે, જેવાં કે-(૧) નિઃશંકિત, (૨) નિષ્કાંક્ષિત, (૩) નિર્વિચિકિત્સા,  
(૪) અમૂઢ દૃષ્ટિ, (૫) ઉપબ્રંહા, (૬) સ્થિરીકરણ, (૭) વાત્સલ્ય અને પ્રભાવના  
સાધર્મી જેનોનો વધારો કરવો તથા તેમનું પોષણ કરવું તે ઉપબ્રંહા છે. એ  
સમ્યક્ત્વનાં આઠ અંગ છે. સમ્યગ્દૃષ્ટિજીવ તેમને પાળે છે (૨) ચારિત્રશાળી  
જીવોનો ગુપ્તિ, સમિતિ આદિનું પાલન કરવારૂપ જે વ્યવહાર છે તેનું નામ ચારિ-  
ત્રાચાર છે (૩). અનશન આદિ બાર પ્રકારનાં તપનું પાલન કરવું તે તપ

વીર્યાચાર:-જ્ઞાનદર્શનાધારાધને બાહ્યાભ્યન્તર વીર્યસ્યાગોપનમ્ । ઉક્તશ્ચ—

અણિગૂહિયવલવિરિઓ, પરકમઈ જો જહુત્તમાડઓ ।

જુંજઈ ય જહા થામં, ણાયવ્વો વીરિયારો ॥

છાયા-અણિગૂહિતવલવીર્યઃ પરાક્રમતિ યો યથોક્તમાયુક્તઃ ।

યુનક્તિ ચ યથાસ્થામ, જ્ઞાતવ્યો વીર્યાચારઃ ॥ ઇતિ ॥

एवं पञ्चविध आचारः प्ररूपितः । तथा-आचारे=आचाराङ्गे खलु वाचनाः=सूत्रार्थाध्यापनलक्षणाः परीताः संख्याताः सन्ति । आचाराङ्गस्य आद्यन्तोपलब्ध्या वाचनाः संख्येया विज्ञेयाः । इदमवसर्पिणी कालमाश्रित्योक्तम् । अवसर्पिष्युत्सर्पिणीकालोभयमाश्रित्य तु कालत्रयापेक्षया अनन्ता अपि वाचना भवेयुः । तथा-अनुयोगद्वाराणि सूत्रार्थस्य कथनविधिरनुयोगः, द्वाराणीव द्वाराणि, अनुयोगस्य द्वाराणि-अनुयोग द्वाराणि=उपक्रमनिक्षेपाधिगम नय रूपाणि संख्येयानि=संख्या-

ભેદ સે બારહ પ્રકાર કા બતલાયા ગયા હૈ । ઇસ કો મુનિજન આચરણમેં લાતે હૈ । ૪ । જ્ઞાન એવં દર્શન કે આરાધનમેં બાહ્ય ઔર અભ્યન્તર વીર્યકા ગોપન નહીં કરના, અર્થાત્ શક્તિ કે અનુસાર જ્ઞાન દર્શન આદિ કી આરાધનામેં લગના યહ વીર્યાચાર હૈ । ઇસ તરહ પાંચ પ્રકાર કા આચાર કહા હૈ । ઇસ આચારાંગમેં નિશ્ચય સે સૂત્ર ઔર અર્થ કે અધ્યાપનરૂપ વાચનાઈ સંખ્યાત હૈ । યહ કથન અવસર્પિણી કાલ કી અપેક્ષા સે કહા ગયા જાનના ચાહિયે । ઉત્સર્પિણી ઔર અવસર્પિણી ઇન દોનોં કાલો કો લેકર તો કાલત્રય કી અપેક્ષા સે ઇસકી અનન્ત વાચનાઈ હો સકતી હૈ । સૂત્ર ઔર અર્થ કે કહને કી વિધિ કા નામ અનુયોગ હૈ । દ્વાર સદૃશ હોને સે દ્વાર હૈ અનુયોગ કે જો દ્વાર હૈ ઉન્હેં અનુયોગ દ્વાર કહતે હૈ । યે દ્વાર ઉપક્રમ, નિક્ષેપ, અધિગમ એવં નયરૂપ હોતે હૈ । યે ઉપક્રમ આદિ

આચાર છે. બાહ્ય અને આભ્યન્તરના લેદથી તપ બાર પ્રકારનું બતાવ્યું છે. તેને મુનિજન આચરણમાં મૂકે છે (૪) જ્ઞાન અને દર્શનનાં આરાધનમાં બાહ્ય અને આભ્યન્તર વીર્યનું ગોપન ન કરવું એટલે કે શક્તિ અનુસાર જ્ઞાન દર્શન આદિની આરાધનામાં લાગવું તે વીર્યાચાર છે. આ રીતે પાંચ પ્રકારના આચાર છે. આ આચારાંશમાં નિશ્ચયથી સૂત્ર અને અર્થના અધ્યાપનરૂપ વાચનાઓ સંખ્યાત છે. આ કથન અવસર્પિણી કાળની અપેક્ષાએ કહેલ માંનવું લેઈએ. ઉત્સર્પિણી અને અવસર્પિણી એ બન્ને કાળોને લઈને તો કાળાત્રયની અપેક્ષાએ તેની અનન્ત વાચનાઓ થઈ શકે છે. સૂત્ર અને અર્થને કહેવાની વિધિનું નામ અનુયોગ છે. દ્વાર સમાન હોવાથી, અનુયોગના બે દ્વાર છે તેમને અનુયોગ દ્વાર કહે છે. એ દ્વારા ઉપક્રમ, નિક્ષેપ, અધિગમ અને નયરૂપ હોય છે. એ

તાનિ-પરિમિતાનિ સન્તિ । તથા-વેષ્ટકાઃ=જ્ઞાનાદ્યન્યતમવિષય પ્રતિપાદકવચન સન્દર્ભરૂપાઃ, આર્યોપગીત્યાદિચ્છન્દો વિશેષા વા સંખ્યેયાઃ સન્તિ । તથા-શ્લોકાઃ-અનુષ્ટુપાદયઃ સંખ્યેયાઃ સન્તિ । તથા-નિર્યુક્તયઃ-નિર્યુક્તનાં સૂત્રાભિમતાર્થાનાં યુક્તયઃ=સંયોજનાનિ નિર્યુક્તયઃ, અત્ર આર્ષત્વાદ્ યુક્ત શબ્દલોપો દ્રષ્ટવ્યઃ, યદ્વા-નિશ્ચયેન અર્થ પ્રતિપાદિકા યુક્તયઃ-નિર્યુક્તયઃ સંખ્યેયાઃ સન્તિ । તથા-પ્રતિપત્તયઃ-પરમતપદાર્થ પ્રદર્શનરૂપા ભિક્ષુપ્રતિમાદ્યભિગ્રહવિશેષા વા સંખ્યેયાઃ સન્તિ । સ આચારઃ સ્વલુ અજ્ઞાર્થતથા=શ્રુતપુરુષસ્યાજ્ઞરૂપતયા પ્રથમસજ્ઞમ્ । અજ્ઞાનાં રચનાનન્તરં યસ્તેષાં ક્રમસ્તમપેક્ષ્યેદમાચારાજ્ઞં પ્રથમસમજ્ઞમુક્તમ્ । રચનાપેક્ષયા તુ દ્વાદશં દૃષ્ટિ-

અનુયોગ દ્વાર આચારાંગમ્ સંખ્યાત હૈં । જ્ઞાન આદિરૂપ કિસી એક વિષયકો પ્રતિપાદન કરને વાલે જો વાક્ય હૈં ઉત્તકા નામ વેષ્ટક હૈં । અથવા-આર્યા, ઉપગીતિ આદિ છંદ વિશેષોં કા નામ ભી વેષ્ટક હૈં । યે ભી ઉત્તમેં સંખ્યાત હૈં । તથા અનુષ્ટુપ્ આદિ શ્લોક ભી સંખ્યાત હૈં । નિર્યુક્તિયાં ભી સંખ્યાત હી હૈં । સૂત્ર અભિમત અર્થ કા સંયોજન કરના હિસકા નામ નિર્યુક્તિ હૈં । અથવા-નિશ્ચયસે અર્થપ્રતિપાદન કરને વાલી જો યુક્તિ હૈં વહ નિર્યુક્તિ હૈં । હિસ પ્રકારકી નિર્યુક્તિયાં આચારાંગસૂત્રમેં સંખ્યાત હો હૈં । તથા પ્રતિપત્તિયાં ભી સંખ્યાત હૈં । અન્યવાદિ સંમત પદાર્થોં કા પ્રદર્શન કરના અથવા ભિક્ષુ પ્રતિમા આદિકે અભિગ્રહોં કા કથન કરના યે સબ પ્રતિપત્તિ શબ્દ કે વાચ્યાર્થ હૈં । હિસ આચારાંગ કો જો પ્રથમ અંગ કહા ગયા હૈં ઉત્તકા કારણ યહ હૈં કિ યહ શ્રુતપુરુષ કા સર્વપ્રથમ અંગ હૈં । જબ અંગોં કી રચના હુઈ તબ ઉત્તકે ક્રમ કો લેકર હિસકો પ્રથમ અંગરૂપ સે પ્રકટ

ઉપક્રમ આદિ અનુયોગ દ્વાર આચારાંગમાં સંખ્યાત છે. જ્ઞાન આદિ રૂપ કોઈ એક વિષયનું પ્રતિપાદન કરનાર જે વાક્યો હોય છે તેમનું નામ વેષ્ટક છે. એ પણ તેમાં સંખ્યાત છે તથા અનુષ્ટુપ્ આદિ શ્લોક પણ સંખ્યાત છે. નિર્યુક્તિઓ પણ સંખ્યાત છે. સૂત્ર અભિમત અર્થનું સંયોજના કરવું. તેનું નામ નિર્યુક્તિ છે. અથવા-નિશ્ચયથી અર્થનું પ્રતિપાદન કરનારી જે યુક્તિ છે તે નિર્યુક્તિ છે. આચારાંગ સૂત્રમાં એ પ્રકારની સંખ્યાત નિર્યુક્તિઓ છે. તથા પ્રતિપત્તિઓ પણ સંખ્યાત છે. અન્યવાદિ સંમત પદાર્થોનું સમર્થન કરવું, અથવા ભિક્ષુપ્રતિમા આદિના અભિગ્રહોનું કથન કરવું એ બધા પ્રતિપત્તિ શબ્દના વાચ્યાર્થ છે. આ આચારાંગને જે પહેલું અંગ કહેવામાં આવેલ છે તેનું કારણ એ છે કે તે શ્રુતપુરુષનું સૌથી પહેલું અંગ છે. બ્યારે અંગોની રચના થઈ ત્યારે તેમના ક્રમને

વાદાઙ્ગ પ્રથમમ્, તસ્ય સર્વપ્રવચનાપેક્ષયા પૂર્વમુક્તત્વાત્ । અસ્ય દ્વૌ શ્રુતસ્કન્ધૌ= અધ્યયનસમૂહૌ, પશ્ચવિંશતિરધ્યયનાનિપ્રથમે શ્રુતસ્કન્ધે નવ, દ્વિતીયે પોઢશ, ઇતિ પશ્ચવિંશતિઃ । एषां नामानि एवं विज्ञेयानि-શસ્ત્રપરિજ્ઞા ૧, લોકવિજયઃ ૨, શીતો- ણીયમ્ ૩, સમ્યક્ત્વમ્ ૪, આવન્તી ૫, દ્યુતં ૬, વિમોહઃ ૭, મહાપરિજ્ઞા ૮, ઉપ- ધાનશ્રુતમ્ ૯, ઇતિ પ્રથમ શ્રુતસ્કન્ધે નવાધ્યયનાનિ । पिण्डैषणा ૧, શય્યૈષણા ૨, ઈર્યૈષણા ૩, ભાષૈષણા ૪, વરત્રૈષણા ૫, પાત્રૈષણા ૬, અવગ્રહપ્રતિમા ૭, સસપ્તૈ- કિકા-અસ્યાં સ્થાનસપ્તૈકક ૧-નૈષેધિકી સપ્તૈકક ૨-સ્થણ્ડિલ સપ્તૈકક ૩-શબ્દ- સપ્તૈકક ૪-રૂપસપ્તૈકક ૫-પરક્રિયા સપ્તૈકક ૬-ન્યોન્યક્રિયાસપ્તૈકક ૭-તિ સપ્તા-

ક્રિયા ગયા છે । વૈસે રચના કી અપેક્ષા તો બારહવાં જો દૃષ્ટિવાદ અંગ હૈ વહી પ્રથમ અંગમાના ગયા હૈ, કયોં કિ સર્વપ્રવચન કી અપેક્ષા ઉસકો પહિલે કહા ગયા હૈ । इस आचारांगमूत्र के दो श्रुतस्कंध-अध्ययन समूह हैं । प्रथम श्रुतस्कंधमें नव अध्ययन तथा द्वितीय श्रुतस्कंधमें सोलह अध्य- यन, इस प्रकार दोनों श्रुतस्कंधोंमें पचीस अध्ययन हैं । प्रथम श्रुतस्कंधमें कहे गये नौ अध्ययनों के नाम ये हैं—शास्त्रपरिज्ञा ૧, लोकविजय ૨, शीतोष्णीय ૩, सम्यक्त्व ૪, आवन्ती ૫, द्युत ૬, विमोह ૭, महापरिज्ञा ૮, तथा उपधानश्रुत ૯ । दूसरे श्रुतस्कंधमें कहे गये सोलह अध्ययनों के ये नाम हैं—पिण्डैषणा ૧, शय्यैषणा ૨, ईर्यैषणा ૩, भाषैषणा ૪, वस्त्र- षणा ૫, पात्रैषणा ૬, अवग्रह प्रतिमा ૭, तथा ससप्तैकिका ૧૪, यथा स्थानसप्तैकक ૮, नैषेधिकी-सप्तैकक ૯, स्थण्डिल सप्तैकक ૧૦, शब्द सप्तैकक ૧૧, रूपसप्तैकक ૧૨, परक्रिया सप्तैकक ૧૩, अन्योन्यक्रिया

લક્ષને આને પ્રથમ અંગ રૂપે પ્રગટ કરવામાં આવેલ છે. આમ તો રચનાની અપેક્ષાએ તો બારમું જે દૃષ્ટિવાદ અંગ છે એને જ પ્રથમ અંગ માનેલ છે, કારણ કે સર્વ પ્રવચનની અપેક્ષાએ તેને પહેલું કહ્યું છે. આ આચારાંગ સૂત્રના બે શ્રુત સ્કંધ-અધ્યયન સમૂહ છે. પહેલા શ્રુત સ્કંધમાં નવ અધ્યયન અને બીજા શ્રુતસ્કંધમાં સોળ અધ્યય, આ રીતે બન્ને શ્રુતસ્કંધોમાં મળીને પચીસ અધ્યયન છે. પહેલા શ્રુતસ્કંધમાં આ નવ અધ્યયનો છે-(૧) શાસ્ત્રપરિજ્ઞા (૨) લોક વિજય, (૩) શીતોષ્ણીય, (૪) સમ્યક્ત્વ, (૫) આવન્તી, (૬) દ્યુત. (૭) વિમોહ, (૮) મહાપરિજ્ઞા તથા, (૯) ઉપધાન શ્રુત. બીજા શ્રુતસ્કંધમાં આવતા સોળ અધ્યયનોનાં નામ આ પ્રમાણે છે-(૧) પિંડૈષણા, (૨) શય્યૈષણા, (૩) ઈર્યૈષણા, (૪) ભાષૈષણા, (૫) વસ્ત્રૈષણા, (૬) પાત્રૈષણા, (૭) અવગ્રહ પ્રતિમા, (૮) યથા-સ્થાનસપ્તૈકક, (૯) નૈષધિકી, સપ્તૈકક, (૧૦) સ્થણ્ડિલ સપ્તૈકક, (૧૧) શબ્દ સપ્તૈકક, (૧૨) રૂપસપ્તૈકક, (૧૩) પરક્રિયા સપ્તૈકક, (૧૪) અન્યો-

ધ્યયનાનિ સન્તિ ૧૪, તથા-ભાવના ૧૫, વિમુક્તિઃ ૧૬, इति षोडशाध्ययनानि  
 द्वितीय શ્રુતસ્કન્ધે । एवमेतानि निशीथाध्ययनवर्जितानि पञ्चविंशतिरध्ययनानि ।  
 पञ्चाशीतिरुद्देशनकालाः=सूत्राध्यापनकालाः । उद्देशनकालस्य पञ्चाशीतिसंख्यकत्वमेवं  
 विज्ञेयम्-शस्त्रपरिज्ञाधारभ्य अवग्रहप्रतिमापर्यन्तेषु षोडशाध्ययनेषु क्रमेण-सप्त १,  
 षट् २, चत्वारः ३, चत्वारः ४, षट् ५, पञ्च ६, अष्ट ७, सप्त ८, चत्वारः ९, एका-  
 सप्तैक १४, भावना १५ तथा विमुक्तिः १६ ये निशीथाध्ययनवर्जित  
 सोलह अध्ययन दूसरे શ્રુતસ્કન્ધमें हैं । इस तरह ये सब मिलकर पचीस  
 अध्ययन आचारांग सूत्र के दोनों श्रुतस्कंधों के हैं । सूत्राध्यापनरूप जो  
 उद्देशन काल हैं वे पचासी ८५ हैं, गणना उनकी इस प्रकार से है-पहले  
 श्रुतस्कन्धमें नौ अध्ययन हैं, उनमें प्रथम शस्त्रपरिज्ञा अध्ययन के सात  
 ७ उद्देशनकाल हैं, दूसरे लोकविजय के छह ६, तीसरे शीतोष्णीय अध्य-  
 यन के चार ४, चौथे सम्यक्त्व अध्ययन के चार ४, पांचवे लोकसार  
 अध्ययन के छह ६ छठे द्युत अध्ययन के पांच ५, सातवें विमोह अध्य-  
 यन के आठ ८, आठवें महापरिज्ञा अध्ययन के सात ७, और नौवें  
 उपधान श्रुत अध्ययन के चार ४ उद्देशन काल हैं । इस प्रकार प्रथमश्रुत-  
 स्कन्ध के नौ अध्ययनोंमें सब एकावन (५१) उद्देशनकाल होते हैं ।

दूसरे श्रुतांकन्ध के सोलह (१६) अध्ययनों के उद्देशनकाल इस  
 प्रकार हैं-प्रथम पिण्डैषणा अध्ययन के ग्यारह ११ उद्देशन काल हैं,

न्यङ्किया सप्तैक, (१५) भावना, तथा (१६) विमुक्ति ये निशीथाध्ययन वर्जित  
 सोल अध्ययन भीજ સ્કન્ધશ્રુતમાં છે. આ રીતે આચારાંગ સૂત્રના બન્ને સ્કન્-  
 ધોના મળીને પચીસ અધ્યયન છે. સૂત્રાધ્યાપનરૂપ જે ઉદ્દેશનકાલ છે તે પચાસી  
 (૮૫) છે. તેમની ગણતરી આ પ્રમાણે છે. પહેલા શ્રુતસ્કન્ધમાં નવ અધ્યયન છે  
 તેમાં પ્રથમ શસ્ત્રપરિજ્ઞા અધ્યયનના સાત (૭) ઉદ્દેશનકાલ છે, બીજા લોક-  
 વિજયના છે. ત્રીજા શીતોષ્ણીય અધ્યયનના ચાર, ચોથા સમ્યક્ત્વ અધ્યયનના  
 ચાર, પાંચમાં લોકસાગર અધ્યયનના છ, છઠ્ઠા દ્યુત અધ્યયનના પાંચ, સાતમાં  
 વિમોહ અધ્યયનના આઠ, આઠમાં મહા પરિજ્ઞા અધ્યયનના સાત, અને નવમાં  
 ઉપધાનશ્રુત અધ્યયનના ચાર ઉદ્દેશનકાલ છે. આ પ્રકારે પહેલા શ્રુતસ્કન્ધના નવ  
 અધ્યયનોના કુલ એકાવન (૫૧) ઉદ્દેશનકાલ છે.

બીજા શ્રુતસ્કન્ધના સોળ (૧૬) અધ્યયનોના ઉદ્દેશનકાલ આ પ્રમાણે છે-  
 પહેલા પિંડૈષણા અધ્યયનના અગીયાર (૧૧) ઉપદેશન કાલ છે, બીજા શચૈષણા

દશ ૧૦, ત્રયઃ ૧૧, ત્રયઃ ૧૨, દ્વૌ ૧૩, દ્વૌ ૧૪, દ્વૌ ૧૫, દ્વૌ ૧૬, ઇતિ પદ સપ્તિ રુદેશનકાલાજાતાઃ । અવશિષ્ટેષુ સપ્તમૈકિકા-ભાવના-વિમુક્તિનામકેષુ નવસ્વધ્ય-યનેષુ પ્રત્યેકસ્મિન્ અધ્યયને એકૈકોદેશનકાલસ્ય સદ્ભાવાન્નવોદેશનકાલા જાતા ઇતિ સર્વસંકલનયાપન્નાશીતિરુદેશનકાલા ભવન્તિ । એવં પન્નાશીતિઃ સમુદેશનકાલાઃ સૂત્રાર્થાધ્યાપનકાલા અવગન્તવ્યાઃ । અષ્ટાદશપદસહસ્રાણિ = અષ્ટાદશસહસ્રાણિ પદાનિ પદાગ્રેણ=પદપરિમાણેન સન્તિ । ઇહ પદમર્થવદ્ વિજ્ઞેયમ્ ।

દૂસરે શયૈષણા અધ્યયન કે ત્રીન ૩, ત્રીસરે ઈર્યૈષણા અધ્યયન કે ત્રીન ૩, ચૌથે ભાષૈષણા અધ્યયન કે દો ૨ પાંચવે વસૈષણા અધ્યયન કે દો ૨, છઠે પાત્રૈષણા અધ્યયન કે દો ૨, સાતવે અવગ્રહ પ્રતિમા અધ્યયન કે દો ૨, આઠવે સ્થાન સપ્તૈકક અધ્યયન કા એક ૧, નૌવે નૈષેધિકી સપ્તૈકક અધ્યયન કા એક ૧, દશવે સ્થપિલ સપ્તૈકક અધ્યયન કા એક ૧, ગ્યારહવે શબ્દ સપ્તૈકક અધ્યયન કા એક ૧, બારહવે રૂપ સપ્તૈકક અધ્ય-યન કા એક ૧, તેરહવે પરક્રિયા સપ્તૈકક અધ્યયન કા એક ૧, ચૌદહવે અન્યોન્યક્રિયા સપ્તૈકક અધ્યયન કા એક ૧, પંદ્રહવે ભાવના અધ્યયન કા એક ૨ ઓર સોલહવે વિમુક્તિ અધ્યયન કા એક ૧ । ઇસ પ્રકાર દૂસરે શ્રુતસ્કન્ધ કે સોલહ (૧૬) અધ્યયનોં કે ચોતીસ ૩૪ ઉદેશનકાલ હોતે હૈં । ઇસ તરહ આચારાંગ સૂત્રકે દોનોં શ્રુતસ્કન્ધોં કે પચીસ અધ્યયનોંમેં સમી ઉદેશનકાલ પચાસી (૮૫) હોતે હૈં । તથા સૂત્ર ઓર અર્થ કો પઢાને રૂપ જો સમુદેશન કાલ હૈં વે મી પચાસી ૮૫ હૈં ઓર ડનકી ગણના મી

અધ્યયનના ત્રણ ૩, ત્રીજા ઈર્યૈષણા અધ્યયનના ત્રણ ૩, ચોથા ભાષૈષણા અધ્યયનના બે ૨, પાંચમાં વસૈષણા અધ્યયનના બે ૨, છઠ્ઠા પાત્રૈષણા અધ્યયનના બે ૨, સાતમાં અવગ્રહ પ્રતિમા અધ્યયનના બે ૨, આઠમાં સપ્તૈકક અધ્યયનનો એક ૧, નવમાં નૈષેધિકી સપ્તૈકક અધ્યયનનો એક, દસમાં સ્થપિલ સપ્તૈકક અધ્યયનનો એક, અગીયારમાં શબ્દ સપ્તૈકક અધ્યયનનો એક, બારમાં રૂપસપ્તૈકક અધ્યયનનો એક, તેરમાં પરક્રિયા સપ્તૈકક અધ્યયનનો એક, ચૌદમાં અન્યોન્ય ક્રિયા સપ્તૈકક અધ્યયનનો એક, પંદરમાં ભાવના અધ્યયનનો એક અને સોળમાં વિમુક્તિ અધ્ય-યનનો એક. આ પ્રમાણે બીજા શ્રુતસ્કંધના સોળ (૧૬) અધ્યયનોના કુલ ચોત્રીસ (૩૪) ઉદેશન કાળ થાય છે. આ રીતે આચારાંગ સૂત્રના બંને શ્રુત સ્કંધોના પચીસ અધ્યયનોમાં બધા મળીને પંચાશી (૮૫) ઉદેશનકાળ થાય છે. તથા સૂત્ર અને અર્થને લાણાવવા રૂપ બે સમુદેશનકાળ છે તે પણ પંચાશી (૮૫) છે.



નનુ અષ્ટાદશ સહસ્રાત્મકં પદ પરિમાણમુક્તમ્, તત્પરિમાણં યદિ પશ્ચવિશત્ય-  
ધ્યયનાત્મકસ્ય શ્રુતસ્કન્ધદ્વયસ્ય, તદા 'નવવંભચેરમહો અઢારસપય સહ સ્સિઓ-  
વેઓ' ઇતિ યદુક્તં તદ્વિરુદ્ધયતે ? ઇતિવેદુચ્યતે—

‘દો સુયક્તંધા, પળવીસં અજ્ઞયણા, પંચાસીઈં ઉદ્દેસણકાલા પંચાસીઈં સમુદ્દેસ-  
ણકાલા’ ઇતિ યદુક્તં તદાચારાંગસ્ય પ્રમાણમુક્તમ્, યત્પુનરુક્તમ્ ‘અઢારસ પય-  
સહસ્સાઈં ‘પયગ્ગેણ’ ઇતિ, તદ્ નવવ્રહ્મચર્યાધ્યયનાત્મકસ્ય પ્રથમશ્રુતસ્કન્ધસ્ય  
પ્રમાણં વિજ્ઞેયમ્ ।

ઉક્ત પ્રકાર સે હી હોતી હૈ । આચારાંગ સૂત્રમેં પદોં કી સંખ્યા અઠારહ  
૧૮ હજાર હૈ । અર્થાત્-આચારાંગ સૂત્રમેં અઠારહ ૧૮ હજાર પદ હૈ ।  
સાર્થક શબ્દોં કા નામ પદ હૈ ।

શંકા—આચારાંગસૂત્રમેં અઠારહ ૧૮ હજાર પદ જો કહે જાતે હૈંવે  
યદિ સંપૂર્ણ પચીસ અધ્યયનવાલે આચારાં સૂત્ર કે પદ હૈં તો “નવ વંભ-  
ચેર મહ ઓ અઢારસ પય સહસ્સિઓ વે ઓ” હસ કથન સે ડસકા  
વિરોધ આતા હૈ ? ।

ઉત્તર—યહ વાત નહીં હૈ । કારણ જો ઁસા કહા ગયા હૈ કિ આચા-  
રાંગમેં દો શ્રુતસ્કંધ, પચીસ અધ્યયન, પચાસી ૮૫ ઉદ્દેશનકાલ,  
પચાસી ૮૫ સમુદ્દેશનકાલ હૈં વહ તો સમસ્ત આચારાંગ સૂત્ર કા પ્રમાણ  
કહા હૈ । તથા ઁસા જો કહા હૈ કિ આચારાંગમેં અઠારહ ૧૮ હજાર પદ  
હૈં યહ કથન વ્રહ્મચર્યાત્મક પ્રથમ શ્રુતસ્કન્ધ કા હૈ ઁસા જાનના ચાહિયે ।  
અતઃ હસ કથનમેં કોઈ વિરોધ નહીં આતા હૈ ।

અને તેમની ગણતરી પણ ઉપર કહ્યા પ્રમાણે થાય છે. આચારાંગ સૂત્રમાં પદોની  
સંખ્યા અઠાર (૧૮) હજાર છે. એટલે કે આચારાંગ સૂત્રમાં અઠાર હજાર પદ છે.  
સાર્થક શબ્દોનું નામ પદ છે.

શંકા—આચારાંગ સૂત્રમાં અઠાર હજાર પદ ને કહેવામાં આવે છે તે  
ને સંપૂર્ણ પચીસ અધ્યયનવાળા આચારાંગ સૂત્રના પદ હોય તો “નવ વંભચેર  
મહો અઢારસ પયસહસ્સિ ઓ વે ઓ” આ કથનથી તે વિરુદ્ધ નથી છે ?

ઉત્તર—એમ વાત નથી. કારણ કે ને એમ કહેવામાં આવ્યું છે કે  
આચારાંગમાં બે શ્રુતસ્કંધ, પચીસ અધ્યયન, પંચાસી અધ્યયનકાળ, પંચાસી  
સમુદ્દેશનકાળ છે તે તો સમસ્ત આચારાંગ સૂત્રનું પ્રમાણ કહ્યું છે તથા એવું  
ને કહ્યું છે કે આચારાંગમાં અઠાર હજાર પદ છે તે કથન બ્રહ્મચર્યાત્મક પ્રથમ  
શ્રુતસ્કંધનું છે એમ સમજવું જોઈએ. તેથી તે કથનમાં કોઈ વિરોધ લાગતો નથી.

न० ७१

સુધર્માસ્વામી જમ્બૂસ્વામિનં પ્રત્યાહ—“સુયં મે આડસં તેણં ભગવયા એવમ-  
ક્ષાયં” ઇતિ । તત્રાયમર્થઃ—શ્રુતં મયા હે આયુષ્મન્ ! તેન ભગવતાવર્ધમાનસ્વામિના  
એવમાખ્યાતમ્ (૧) । અથવા શ્રુતં મયા આયુષ્મદન્તે—આયુષ્મતો ભગવતો વર્ધમાન-  
સ્વામિનોઽન્તે—સમીપે, ‘જં’ ઇતિ વાક્યાલંકારે, તથાચ—ભગવતા એવમાખ્યા-

યહી ગમ હૈ ઓર એસે ગમ હસ આચારાંગ શ્રુતમેં અનંત હૈ । અથવા-  
હસકા તાત્પર્ય યહ બી હોતા હૈ કિ અભિધાન તથા અભિધેય કે  
અનુસાર હી ગમ અર્થ બોધ હોતા હૈ ઓર વહ અનંત રૂપમેં હોતા હૈ—એક  
રૂપમેં નહીં । જૈસે—સુધર્માસ્વામી ને જંબૂસ્વામી સે કહા—“સુયંમે આડસં  
તેણં ભગવયા એવમક્ષાયં” “શ્રુતંમયા આયુષ્મન્ ! તેન ભગવતા એવમ્  
આખ્યાતમ્” હે આયુષ્મન્ ! જમ્બૂ મૈને સુના હૈ કિ ઉન ભગવાન  
વર્ધમાન સ્વામીને એસા કહા હૈ એક તો હન પદોં કા યહ તાત્પર્ય હોતા  
હૈ ૧ । દૂસરા અર્થ હસ પ્રકાર હોતા હૈ કિ “સુયં મે આડસંતેણં ભગ-  
વયા એવમક્ષાયં” “શ્રુતં મયા આયુષ્મદન્તે ભગવતા એવમ્ આખ્યાતમ્”  
મૈને આયુષ્માન્ ભગવાન્ મહાવીર સ્વામી કે પાસ સુના હૈ કિ ઉન્હોને  
એસા કહા હૈ । હસ પ્રકાર કે વાચ્યાર્થમેં “જં” યહ શબ્દ વાક્યાલંકાર રૂપ  
સે પ્રયુક્ત માન લિયા જાવેગા ૨ । પહિલે અર્થમેં “આડસં” યહ પદ જંબૂ-  
સ્વામી કા “આયુષ્મન્” રૂપ સે વિશેષણરૂપમેં પ્રયુક્ત હુઆ થા, અબ હસ  
દ્વિતીય અર્થમેં “આયુષ્મદન્તે” યહ પદ ભગવાન વર્ધમાન સ્વામીકા

“ગમ” છે અને એવાં ‘ગમ’ આ આચારાંગસૂત્રમાં અનેક છે. અથવા તેનું  
તાત્પર્ય એ પણ થાય છે કે અભિધાન તથા અભિધેયના અનુસાર જ ગમ-  
અર્થબોધ થાય છે, અને તે અનંતરૂપે થાય છે, એક રૂપે નહીં જેમ કે સુધર્મા  
સ્વામીએ જંબૂસ્વામીને કહ્યું—“સુયં મે આડસં તેણં ભગવયા એવમક્ષાયં”  
“શ્રુતં મયા આયુષ્માન્ ! તેન ભગવતા એવમ્ આખ્યાતમ્” “હે આયુષ્મન ! મેં  
સંભળ્યું છે કે તે ભગવાન વર્ધમાન સ્વામીએ એવું કહ્યું છે” એક તો એ  
પહેલું આ તાત્પર્ય થાય છે. (૧) બીજો અર્થ આ પ્રકારે થાય છે “સુયં મે  
આડસંતેણં ભગવયા એવમક્ષાયં” “શ્રુતં મયા આયુષ્મદન્તે ભગવતા એવં આખ્યાતમ્”  
મેં આયુષ્માન્ ભગવાન મહાવીર સ્વામી પાસે સંભળ્યું છે કે તેમણે આમ કહ્યું  
છે. આ પ્રકારના વાચ્યાર્થમાં “જં” આ શબ્દ વાક્યાલંકારરૂપે વપરાયેલ માની  
લેવાશે (૨) પહેલા અર્થમાં “આડસં” એ પદ જંબૂસ્વામીના “આયુષ્મન્”  
રૂપથી વિશેષણરૂપે વપરાયું હતું, હવે આ બીજા અર્થમાં “આયુષ્મદન્તે” આ

તમ્ ૨, અથવા શ્રુતં મયા આયુષ્મતા ૩, અથવા શ્રુતં મયા ભગવત્પાદારવિન્દયુગ-  
લમામૃશતા ૪, અથવા શ્રુતં મયા ગુરુકુલમાવસતા ૫, અથવા શ્રુતં મયા હે આયુ-  
ષ્યમન્ ! ‘ તેણં ’ તત્ , પ્રથમાર્થે તૃતીયા, ભગવતા એવામાખ્યાતમ્ ૬, અથવા-શ્રુતં  
મયા હે આયુષ્મન્ ! ‘ તેણં ’ તદા ભગવતા એવામાખ્યાતમ્ ૭, અથવા-શ્રુતં મયા  
બોધક હો જાતા હૈ ૨ । ત્રીસરા અર્થબોધ હિસ પ્રકાર સે હૈ “ શ્રુતં મયા  
આયુષ્મતા ” મુજ્જ આયુષ્માન્ દ્વારા સુના ગયા હૈ ” હિસ કથનમેં યહ  
“ આયુષ્મતા ” વિશેષણ સુધર્માસ્વામી કે સાથ પ્રયુક્ત હોતા હુઆ  
પ્રતીત હોતા હૈ ૩ । “ શ્રુતં મયા આમૃશતા ” યહાં “ આઽસંતેણં ” કી છાયા  
“ આમૃશતા ” હુઈ હૈ, હિસલિયે ચતુર્થ અર્થ એસાં હોતા હૈ કિ “ ભગવાન્ કે  
પાદારવિન્દયુગલ કો સ્પર્શ કરને વાલેમેં સુના હૈ ” ૪ । અથવા-“ આઽ-  
સંતેણં ” કી છાયા ‘ આવસતા ’ મી હોતી હૈ જિસકા અર્થ હોતા હૈ કિ  
“ ગુરુકુલમેં નિવાસ કરતે હુએ મેં સુના હૈ ” ૫ । “ તેણં ” યહ પદ જબ  
પ્રથમા કે અર્થમેં તૃતીયારૂપ સે પ્રયુક્ત હુઆ માના જાવેગા તબ “ તેણં ” કી  
છાયા “ તત્ ” હોગી, તબ એસા અર્થ બોધ હોગા કિ-“ શ્રુતં મયા આયુષ્મન્ ।  
તત્ ભગવતા એવામાખ્યાતમ્ ” હે આયુષ્મન્ ! મેં ને સુના હૈ જિન જીવાદિ-  
વસ્તુઓં કો ભગવાન્ ને હિસ પ્રકાર સે પ્રતિપાદિત કિયા હૈ ૬ । અથવા-  
“ તેણં ” યહ પદ “ તદા ” કે રૂપમેં પ્રયુક્ત હુઆ જબ માના જાવેગા તબ  
“ શ્રુતં મયા આયુષ્મન્ તદા ભગવતા એવામાખ્યાતમ્ ” એસા અર્થ બોધ હોગા  
અર્થાત્-હે આયુષ્મન્ ! જંબૂ ! મેં ને તબ સુના થા જબ ભગવાન્ ને એસા

પદ લગવાન મહાવીર સ્વામીનું બોધક બની જાય છે (૨) ત્રીજો અર્થબોધ આ  
પ્રમાણે છે-“ શ્રુતં મયા આયુષ્મતા ” “ આયુષ્માન્ એવા મારા દ્વારા સાંભળાયું  
છે ” આ કથનમાં આ “ આયુષ્મતા ” વિશેષણ સુધર્માસ્વામીની સાથે વપરાયું  
હોય તેમ લાગે છે (૩) શ્રુતં મયા આમૃશતા ” અહીં “ આઽસંતેણં ” ની છાયા  
“ આમૃશતા ” થઈ છે, તેથી એવો અર્થ એવો થાય છે કે “ લગવાનના પાદાર-  
વિન્દયુગલનો સ્પર્શ કરનાર મેં સાંભળ્યું છે. ” (૪) અથવા “ આઽસંતેણં ” ની  
છાયા “ આવસતા ” પણ થાય છે જેનો એવો અર્થ થાય છે કે “ ગુરુકુલમાં  
નિવાસ કરતા એવા મેં સાંભળ્યું છે ” (૫). “ તેણં ” આ પદ જો પ્રથમાના  
અર્થમાં તૃતીયારૂપે વપરાયેલ માનવામાં આવે તો “ તેણં ” ની છાયા “ તત્ ” થશે,  
ત્યારે આ પ્રમાણે અર્થનો બોધ થશે કે-“ શ્રુતં મયા આયુષ્મન્ ! તત્ ભગવતા  
એવામાખ્યાતમ્ ” હે આયુષ્માન્ ! જે જીવાદિ વસ્તુઓને લગવાને આ પ્રકારે પ્રતિ-  
પાદિત કરેલ છે તે મેં સાંભળ્યું હતું. (૬) અથવા “ તેણં ” આ પદ તદા ના  
રૂપે વપરાયેલું જો માની લેવાય તો “ શ્રુતં મયા આયુષ્મન્ તદા ભગવતા એવામા-

હે આયુષ્યમન્ ! 'તેણં' તત્ર=પઢ્જીવનિકાય વિષયે ૮, તત્ર વા સમવસરણે સ્થિ-  
તેન ભગવતા એવાખ્યાતમ્ ૯, અથવા-શ્રુતં મમ હે આયુષ્યમન્ ! વર્તતે, યતસ્તેન  
ભગવતા એવાખ્યાતમ્ ૧૦, એવાદયસ્તં તમર્થમધિકૃત્ય ગમા ભવન્તિ ।

અભિધાનવશાત્પુનરેવં ગમા ભવન્તિ-‘સુયં મે આડસંતેણં’ ‘આડસં સુયં મે’  
‘મે સુયં આડસં’ । અર્થભેદેન પદાનાં તથા તથા સંયોજને અભિધાનગમા

કહા ૭ । અથવા-“તેણં” કી છાયા ‘તત્ર’ કે રૂપમેં જવ કી જાવેગી તવ એસા  
અર્થ વોધ હોગા કિ-“શ્રુતં મયા આયુષ્યમન્ તત્ર-પઢ્જીવનિકાયવિષયે”,  
હે આયુષ્યમન્ જમ્બૂ । મૈને સુના હૈ જો ભગવાન્ ને પઢ્જીવનિકાય કે  
વિષય મેં એસા કહા હૈ ૮. અથવા-“તત્ર-સમવસરણે ભગવતા એવ-  
માખ્યાતમ્” મૈને સુના હૈ જો સમવસરણ મેં સ્થિત હુએ ભગવાન્ ને  
એસા કહા હૈ ૯ । અથવા “મે” કી છાયા તૃતીયા વિભક્તિ “મયા” કે  
રૂપ મેં ન કરકે જવ “મે” કી છાયા “મમ” કે રૂપ મેં કી જાવેગી  
તવ એસા અર્થવોધ હોગા-“શ્રુતં મમ આયુષ્યમન્ ! વર્તતે યતસ્તેન ભગવતા  
એવાખ્યાતમ્” ઉન ભગવાન્ ને જો એસા કહા હૈ વહ મૈને સુન હી  
રક્ષા હૈ” ૧૦ ।

હસ તરહ મિત્ર ૨ અર્થ કો લેકર હન પદોં સે જો વોધ હોગા વહ  
અભિધેય કે વશ સે હુએ ગમ જાનને ચાહિયે ।

અભિધાન અર્થાત્નામ કે વશ સે જો ગમ હોતે હૈં વે હસ પ્રકાર હૈં—

ખ્યાતમ્” એવો અર્થબોધ થશે એટલે કે-“હે આયુષ્યમન્ ! જમ્બૂ ! જ્યારે ભગ-  
વાને આમ કહ્યું ત્યારે મેં સાંભળ્યું હતું” (૭). અથવા “તેણં” ની છાયા “તત્ર”  
ના રૂપે જ્યારે વપરાય ત્યારે એવો અર્થ બોધ થશે કે “શ્રુતં મયા આયુષ્યમન્  
તત્ર-પઢ્જીવ નિકાય વિષયે” હે આયુષ્યમાન્ જમ્બૂ ! મેં સાંભળ્યું છે કે ભગ-  
વાને છ જીવ નિકાયના વિષયમા આ પ્રમાણે કહ્યું છે (૮). અથવા “સમવસરણે  
ભગવતા એવાખ્યાતમ્” મેં સાંભળ્યું છે કે સમવસરણમા રહેલ ભગવાને આમ  
કહ્યું છે” (૯). અથવા “મે” ની છાયા તૃતીય વિભક્તિ “મયા” ના રૂપે ન  
કરતાં બે “મે” ની છાયા “મમ” ના રૂપે કરાય તો આ પ્રમાણે અર્થબોધ થશે  
“શ્રુતં મમ આયુષ્યમન્ ! વર્તતે યતસ્તેન ભગવતા એવાખ્યાતમ્” એ ભગવાને બે  
એવું કહ્યું છે તે મેં સાંભળી જ રાખ્યું છે (૧૦).

આ રીતે ભિન્ન ભિન્ન અર્થને લીધે એ પદોથી જે બોધ થશે તે અભિ-  
ધેયના વશથી થયેલ ગમ બાણવા બોધશે.

અભિધાનને કારણે જે ગમ થાય છે તે આ પ્રમાણે છે—

भवन्ति । एवं भूता गमा अनन्ता भवन्ति । तथा-पर्यवाः=पर्यायाः=पदार्थधर्माः अनन्ता भवन्ति, ते च स्वपरभेदभिन्ना अक्षरार्थगोचरा वेदितव्याः । तथा-त्रसाः त्रस्यन्ति उष्णाद्यभिसंतप्ताः स्वाधिष्ठितोष्णादि स्थानात् उद्विजन्ते गच्छन्ति च छायाद्यासेवनार्थं स्थानान्तरमिति त्रसाः-द्वीन्द्रियादयः परीताः=असंख्याताः सन्ति

‘सुयं मे आउसंतेणं’ ‘आउसं सुयं मे’ ‘मे सुयं आउसं’ इत्यादि । इस तरह अर्थ के भेद से पदों का उस उस रूप से संयोजन हो जायगा ये अभिधान के अनुसार गम कहे जायेंगे । इस तरह के गम अनंत होते हैं ।

‘अनंता पज्जवा’-आचारांगसूत्र में पर्यव-पर्याये-पदार्थधर्म-अनंत होते हैं यह दिखलाया गया है । स्वपर्याय एवं परपर्याय, इस तरह से पर्यायों के ये दो भेद कहे गये हैं, और ये पदार्थ के ही धर्मरूप से प्रतिपादित हुए हैं । यह अभी कहा जा चुका है कि निजपर्यायों का संबंध पदार्थ के साथ अस्तित्व धर्म द्वारा होता है, तथा परपर्यायों का संबंध वहां नास्तित्वधर्म के द्वारा होता है । हर एक पदार्थ स्वपर्यायों से युक्त है एवं परपर्यायों से विहीन है । ‘परित्ता तप्सा’ त्रस नामकर्म के उदय से युक्त जो जीव उष्ण आदि से संतप्त होकर दुःखी होते हैं एवं उष्णादि समन्वित स्वस्थान का परित्याग कर छाया से समन्वित हुए दूसरे स्थान में छाया के सेवन के लिये चले जाते हैं वे त्रस जीव हैं । द्वीन्द्रिय, त्रैन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय एवं पंचेन्द्रिय, इस तरह इनके अनेक भेद हैं ।

“सुयं मे आउસંતેણં” “આઉસં સુયં મે” “મે સુયં આઉસં” ઇત્યાદિ. આ રીતે અર્થના ભેદથી પદોનું તે તે રૂપે સંયોજન થઈ જશે. તે અભિધાન અનુસાર ગમ કહેવાશે. આ પ્રકારના ગમ અનંત હોય છે.

“અનંતા પજ્જવા” આચારાંગ સૂત્રમાં પર્યવ-પર્યાયો-પદાર્થ-ધર્મ-અનંત હોય છે તે બતાવવામાં આવ્યું છે. સ્વપર્યાય અને પરપર્યાય, આ રીતે પર્યાયોના બે ભેદ બતાવ્યા છે, અને એ પદાર્થના જ ધર્મરૂપે પ્રતિપાદિત થયાં છે. એ હમણા જ બતાવવામાં આવ્યું છે કે નિજપર્યાયોનો સંબંધ પદાર્થની સાથે અસ્તિત્વ ધર્મ દ્વારા થાય છે, તથા પરપર્યાયોનો સંબંધ ત્યાં નાસ્તિત્વ ધર્મ દ્વારા થાય છે. દરેક પદાર્થ સ્વપર્યાયો વાળો છે અને પરપર્યાયો વિનાનો છે. “પરિત્તા તપ્સા” ત્રસ નામકર્મના ઉદયથી યુક્ત જે જીવ ઉષ્ણ આદિથી ત્રાસીને દુઃખી થાય છે અને ઉષ્ણાદિ સમન્વિત પોતાના સ્થાનનો પરિત્યાગ કરીને છાયાથી સમન્વિત એવા બીજાં સ્થાને છાયાના સેવનને માટે ચાલ્યાં જાય છે તે ત્રસ જીવ છે. દ્વીન્દ્રિય, ત્રીન્દ્રિય, ચતુરિન્દ્રિય અને પંચેન્દ્રિય, આ રીતે તેમના અनेક ભેદ પડે છે.



નત્વનન્તાઃ। તથા-સ્થાવરાઃ-તિષ્ઠન્ત્યેવં-શીલાઃ સ્થાવરાઃ-શીતાતપાદ્યભિભૂતા અપિ સ્થાનાન્તરં ગન્તુમસમર્થાઃ પૃથિવ્યપ્તેજોવાયુવનસ્પતિકાયલક્ષણા અનન્તાઃ સન્તિ। વનસ્પતેરાનન્યાત્સ્થાવરાણામાનન્ત્યં વોધ્યમ્। ઉપરિ નિર્દિષ્ટા એતે સર્વે-શાશ્વતકૃત-નિબદ્ધનિકાચિતાઃ, તત્ર-શાશ્વતાઃ-દ્રવ્યાર્થિકનયાપેક્ષયા નિત્યાઃ, કૃતાઃ=પર્યાયા-ર્થતયા પ્રતિસમયમન્યથાત્વાવાપ્ત્યાકૃતાઃ-અનિત્યા इत्यर्थः, નિબદ્ધાઃ=સૂત્ર એવ ગ્રથિતા ન તુ ઇતસ્તતો વિકીર્ણાઃ, નિકાચિતાઃ-નિર્યુક્તિહેતુદાહરણાદિભિઃ પ્રતિષ્ઠિતાઃ શાશ્વતાદીનાં ચતુર્ણાં પદાનામિતરેતસ્યોગદ્વન્દ્વઃ, જિનપ્રજ્ઞાઃ=તીર્થંકર પ્રરૂપિતા

ये त्रस जीव परीत-असंख्यात हैं, अनंत नहीं। तथा-‘अणंता थावरा’ स्थावर जीव अनंत हैं। स्थावर नामकर्म का जिनके उदय हैं वे एकेन्द्रिय जीव स्थावर जीव कहे गये हैं। वे शीत तथा आतप से पीड़ित होकर भी एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाने के लिये असमर्थ होते हैं। पृथिवीकाय, अप्काय, तेजस्काय, वायुकाय तथा वनस्पतिकाय, इस प्रकार इनके ये पांच भेद हैं। स्थावर काय जीव अनंत हैं इसका कारण यह है कि वनस्पति कायिक जीव अनंत हैं इसलिये स्थावर जीवोंमें अनंतता प्रकट की गई है। और पृथ्वी, अप्, तेजो वायु प्रत्येक में असंख्यात असंख्यात जीव है ये सब जीव-त्रसजीव एवं स्थावर जीव ‘शाश्वत’ द्रव्यार्थिकनय की अपेक्षा से नित्य हैं, ‘कृत’ पर्यायार्थिक नयकी अपेक्षा से अनित्य हैं, ‘निबद्ध’-सूत्रमें ही ग्रथित होने से ये निबद्ध हैं तथा ‘निकाचित’-निर्युक्ति, हेतु, उदाहरण आदि के द्वारा ये अच्छी तरह से प्रतिष्ठित हैं इसलिये ये निकाचित हैं। ‘जिनप्रज्ञा भावा आख्यायन्ते’

એ ત્રસ જીવ પરીત-અસંખ્યાત છે, અનંત નથી. તથા-“અણંત થાવરા” સ્થા-વર જીવ અનંત છે. સ્થાવર નામ કર્મનો જેમને ઉદય છે એ એકેન્દ્રિય જીવોને સ્થાવર જીવ કહેલ છે. તેઓ શીત તથા આતપથી ત્રાસીને એક સ્થાનેથી બીજે સ્થાને જવાને માટે અસમર્થ હોય છે. પૃથિવીકાય, અપ્કાય, તેજસ્કાય, વાયુકાય તથા વનસ્પતિકાય, આ રીતે તેમના પાંચ ભેદ છે. સ્થાવર કાય જીવ અનંત છે, તેનું કારણ એ છે કે વનસ્પતિકાયિક જીવ અનંત છે તે કારણે સ્થાવર જીવોમાં અનંતતા પ્રગટ કરવામાં આવેલ છે. એ બધાં જીવ-ત્રસજીવ અને સ્થાવર જીવ “શાશ્વત” દ્રવ્યાર્થિક નયની અપેક્ષાએ નિત્ય છે, “કૃત” પર્યાયાર્થિક નયની અપેક્ષાએ અનિત્ય છે, “નિબદ્ધ” સૂત્રમાં જ ગ્રથિત હોવાથી નિબદ્ધ છે તથા “નિકાચિત” નિર્યુક્તિ; હેતુ, ઉદાહરણ આદિ દ્વારા તે સારી રીતે પ્રતિષ્ઠિત છે તેથી તેઓ નિકાચિત છે. “જિન પ્રજ્ઞા ભાવા આખ્યાયન્તે” એ સમસ્ત જીવા

ભાવાઃ=જીવાદયઃ પદાર્થાઃ અત્રાચારાંગસૂત્રે આખ્યાયન્તે=સામાન્યતયા વિશેષતયા વા કથ્યન્તે, પ્રજ્ઞાપ્યન્તે=વચન પર્યાયાદિભેદેન નામાદિભેદેન વા કથ્યન્તે, પ્રરૂપ્યન્તે=સ્વરૂપતઃ કથ્યન્તે, દર્શ્યન્તે=ઉપમાનોપમેયભાવાદિભિઃ કથ્યન્તે, નિદર્શ્યન્તે=પરાનુકમ્પયા ભવ્યકલ્યાણાપેક્ષયા વા નિશ્ચયેન પુનઃ પુનર્દર્શ્યન્તે, ઉપદર્શ્યન્તે=ઉપનય નિગમનાભ્યાં સકલનયાભિપ્રાયતો વા નિશ્ચિન્ન શિષ્યબુદ્ધૌ વ્યવસ્થાપ્યન્તે।

સમ્પ્રત્યાચારાંગાધ્યયનફલમાહ—‘સે૦’ ઇત્યાદિ। સઃ=આચારાંગસ્વાધ્યેતા

યે સમસ્ત જીવાદિક પદાર્થ જિસરૂપમેં તીર્થકર પ્રભુને પ્રરૂપિત કિયે હૈં उसी रूपसे इस आचारांगसूत्रमें सामान्यरूप से अथवा विशेषरूप से कहे गये हैं। ‘प्रज्ञाप्यन्ते’ वचनपर्याय अदि के भेद से अथवा नाम आदि के भेद से प्रज्ञापित हुए हैं। ‘प्ररूप्यन्ते’ प्ररूपित हुए हैं—स्वरूप कथन-पूर्वक प्रतिपादित हुए हैं। ‘दर्श्यन्ते’ उपमान उपमेय भाव प्रदर्शन पुरस्सर दिखलाये गये हैं। ‘निदर्श्यन्ते’ निदर्शित किये गये हैं—दूसरे जीवों की दया से अथवा भव्य जीवों के कल्याण की भावना से पुनः पुनः कहे गये हैं, ‘उपदर्श्यन्ते’ उपनय तथा निगमन द्वारा अथवा समस्तनयों द्वारा शिष्यजनों की बुद्धिमें निश्चित रूपसे व्यवस्थापित किये गये हैं।

अब सूत्रकार इस आचारांग श्रुत के अध्ययन के फल को प्रकट करने के अभिप्राय से कहते हैं—‘से एवं आया०’ इत्यादि। जो प्राणी इस

દિક પદાર્થ જે રૂપે તીર્થકર પ્રભુએ પ્રરૂપિત કર્યા છે એજ રૂપે આ આચારાંગ સૂત્રમાં સામાન્ય રીતે અથવા વિશેષરૂપે કહેલ છે. “પ્રજ્ઞાપ્યન્તે” વચન, વચન પર્યાય આદિના ભેદથી અથવા નામ આદિના ભેદથી પ્રજ્ઞાપિત થયાં છે. “પ્રરૂપ્યન્તે” પ્રરૂપિત થયાં છે—સ્વરૂપ કથનપૂર્વક પ્રતિપાદિત થયાં છે. “દર્શ્યન્તે” ઉપમાન ઉપમેય ભાવ પ્રદર્શન સહિત દર્શાવવામાં આવ્યાં છે. “નિદર્શ્યન્તે” નિદર્શિત કરાયા છે—બીજાં જીવોની દયાથી અથવા ભવ્ય જીવોનાં કલ્યાણની ઇચ્છાથી ફરી ફરીને કહેવાયા છે. “ઉપદર્શ્યન્તે” ઉપનય તથા નિગમ દ્વારા અથવા સમસ્ત નયોદ્વારા શિષ્યજનોની બુદ્ધિમાં નિશ્ચિતરૂપે કસાવવામાં આવેલ છે.

હવે સૂત્રકાર આ આચારાંગ સૂત્રના અધ્યયનના ફળને પ્રગટ કરવાના હેતુથી કહે છે કે—“સે એવં આયા૦” ઇત્યાદિ. જે પ્રાણી આ આચારાંગ સુત્રનો

एवमात्मा=अस्मिन् भावतः सम्यग्धीते सति एवमात्मा भवति, तदुक्तक्रियापरिणामपरिणमनादात्मरवरूपो भवतीत्यर्थः । एव क्रियासारमेवज्ञान श्रेयस्करमितिख्यापयितुं क्रिया परिणाममभिधाय साम्प्रतं ज्ञानमधिकृत्याह—‘एवं ज्ञाता’ इति । स एवं ज्ञाता भवति—इदमधीत्य सर्वपदार्थसार्थज्ञायको भवतीति भावः । तथा—एवं विज्ञाता

આચારાંગસૂત્રકા ભાવપૂર્વક અધ્યેતા હોતા હૈ વહ સત્ત્વા આત્મા બન જાતા હૈ । તાત્પર્ય કહને કા યહ હૈ કિ શાસ્ત્ર કે અધ્યયન કા ફલ હોતા હૈ—ઉસકે દ્વારા પ્રતિપાદિત આચરણ કો—ઉપદેશ કો અપને જીવનમેં ઉતારના । યહી ભાવપૂર્વક ઉસકા પઠન કહલાતા હૈ । ભાવશ્રુત ડમ્મી કા નામ હૈ, અતઃ જવ આત્મા હસ આચારાંગ સૂત્રકા અધ્યેતા સમ્યક્ક્રીતિ સે બન જાતા હૈ તો વહ નિયમતઃ ઉસકે દ્વારા પ્રતિપાદિત શુદ્ધ ક્રિયાઓં કા અપને મનુષ્યજીવનમેં આચરણ કરને વાલા બન જાતા હૈ । ઇન ક્રિયાઓં કો અપને જીવનમેં ઉતારના હસકા અર્થ યહી હૈ કિ આત્મા સત્ત્વે અર્થમેં આત્મા બન ગયા હૈ—સમીચીન આચરણ કરના યહી જ્ઞાન કા ફલ હૈ ઔર એસા જ્ઞાન હી શ્રેયસ્કર હોતા હૈ, ક્રિયા હીન જ્ઞાન કી કોઈ કીમત નહીં, એસા જાનકર વહ આત્મા—પ્રાણી આત્મા કી પરભાવ પરિણતિરૂપ અસદાચરણ કા પરિત્યાગ કર આત્મા કા નિજ સ્વભાવરૂપ જો સદાચરણ હૈ ઉસકા આચરિત કરને વાલા બન જાતા હૈ, યહી આત્મા કા આત્મા બનના હૈ । ‘ એવં જાયા ’ જવ આત્મા સત્ત્વે અર્થમેં આત્મા

ભાવપૂર્વક અભ્યાસ કરે છે તે સાચો આત્મા બને છે. કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે શાસ્ત્રના અધ્યયનનું ફળ હોય છે—તેના દ્વારા પ્રતિપાદિત આચરણને—ઉપદેશને પોતાના જીવનમાં ઉતારવો. એજ ભાવપૂર્વકનું તેનું પઠન કહેવાય છે. ભાવશ્રુત તેનું જ નામ છે તેથી જો આત્મા આ આચારાંગ સૂત્રનો અભ્યાસક સમ્યક્ રીતે બની જાય છે તો તે નિયમપૂર્વક તેના દ્વારા પ્રતિપાદિત શુદ્ધ ક્રિયાઓને પોતાના જીવનમાં આચરનાર બની જાય છે. એ ક્રિયાઓને પોતાના જીવનમાં ઉતારવી તેનો અર્થ એજ છે કે આત્મા સાચા અર્થમાં આત્મા બની ગયો છે. સમીચીન આચરણ કરવું એજ જ્ઞાનનું ફળ છે અને એવું જ્ઞાન જ કલ્યાણકારી હોય છે, ક્રિયાશૂન્ય જ્ઞાનની કંઈ જ કીમત નથી, એમ સમજીને તે આત્મા—પ્રાણી આત્માની પરભાવ પરિણતિરૂપ અસદાચરણનો પરિત્યાગ કરીને આત્માના નિજ સ્વભાવરૂપ જે સદાચરણ છે તેને આચારનારો બની જાય છે, એજ આત્માનું આત્મા બનવું છે. “એવં જાયા” જ્યારે આત્મા સાચા અર્થમાં આત્મા

भवति—एवं विध विविधज्ञानवान् भवति । अयं भावः यथा आचाराङ्गे परसमयनिराकरणपुरस्सरं स्वसमयः स्थापितो वर्तते तथैव अस्याचाराङ्गस्याध्ययनशीलः स्वसमयज्ञः परसमयज्ञश्च भूत्वा परसमयं निराकृत्य स्वसमयस्थापनेन विशिष्टतरो भवति । वक्तव्यमुपसंहरन्नाह—‘ एवं० ’ इत्यादि । एवम्—अनेन प्रकारेण अर्थाद्—आचार-गोचरविनयादि कथनेन अस्मिन्नाचाराङ्गे चरण—करण प्ररूपणा, चरणं=व्रतश्रमणधर्म-संयमादिकं सप्तति संख्यकम्, करणं=पिण्ड-विशुद्धि समित्यादि सप्तति संख्यकम्, तयोः प्ररूपणा आख्यायते प्रज्ञाप्यते प्ररूप्यते दर्श्यते, निदर्श्यते उपदर्श्यते । एषा-

બન જાતા હૈ તવ વહ જ્ઞાતા હો જાતા હૈ—ઇસ શાસ્ત્ર કા અધ્ય-યન કર વહ સમસ્ત જીવાદિક પદાર્થોં કા તથા ઉનકે સત્ત્વે સ્વરૂપ કા જાનનેવાલા હોતા હૈ । ‘ એવં વિણ્ણાયા ’ વિજ્ઞાતા હો જાતા હૈ—વિવિધ જ્ઞાનવાલા બન જાતા હૈ, તાત્પર્ય યહ હૈ કિ જિસ પ્રકાર આચારાંગસૂત્રમેં પરસમય નિરાકરણ પુરસ્સર સ્વસમય સ્થાપિત કિયા ગયા હૈ, અવ જો મોક્ષાભિલાષી ઇસકા અધ્યેતા બન જાયગા વહ ઉસ તરહ સ્વસમય એવં પરસમયકા જ્ઞાતા અવર્ય બન જાયગા । ઇસ તરહ વહ પ્રાણી પરસમય કા નિરાકરણ કરકે જલ્લ સ્વસમયકી સ્થાપના કરતા હૈ તો ઇસસે વહ વિશિષ્ટતર હી કહા જાતા હૈ । અવ વક્તવ્યકા ઉપસંહાર કરતે હુએ સૂત્ર-કાર કહતે હૈં કિ—ઇસ તરહ આચાર, ગોચર, વિનય આદિકે કથનસે ઇસ આચારાંગસૂત્રમેં ચરણસત્તરી એવં કરણસત્તરી કી પ્રરૂપણા કી ગઈ હૈ, પ્રજ્ઞાપિત હુઈ હૈ, દિશ્વલાઈ ગઈ હૈ, નિર્દર્શિત કી ગઈ હૈ, તથા ઉપદ-

બની જાય છે ત્યારે તે જ્ઞાતા બની જાય છે—આ શાસ્ત્રનું અધ્યયન કરીને તે સમસ્ત જીવાદિક પદાર્થોને તથા તેમના સાચા સ્વરૂપને જાણનાર થઈ જાય છે. “એવં વિણ્ણાયા” વિજ્ઞાતા થઈ જાય છે—વિવિધ જ્ઞાનવાળો બની જાય છે, તાત્પર્ય એ છે કે જે પ્રકારે આચારાંગ સૂત્રમાં પર સમય નિરાકરણપૂર્વક સ્વસમય સ્થાપિત કરા-યેલ છે, હવે જે મુમુક્ષુ તેનો પાઠી બને તે એ રીતે સ્વસમય અને પરસમયનો જ્ઞાતા અવશ્ય બનશે. આ રીતે તે પ્રાણી પરસમયનું નિરાકરણ કરીને ત્યારે સ્વસમ-યની સ્થાપના કરે છે, ત્યારે તે વડે તે વિશિષ્ટતર જ કહેવાય છે. હવે વક્તવ્યનો ઉપસંહાર કરતા સૂત્રકાર કહે છે કે—આ રીતે આચાર, ગોચર, વિનય આદિના કથનથી આ આચારાંગ સૂત્રમાં ચરણસત્તરી અને કરણસત્તરીની પ્રરૂપણા કર-વામાં આવી છે—પ્રજ્ઞાપિત થઈ છે, દેખાડવાણું આવી છે, નિર્દર્શિત કરાઈ છે,

મર્થ પૂર્વવદ્ બોધ્યઃ । આચારાઙ્ગસ્વરૂપમુક્ત્વાઽઽચાર્યઃ શિષ્યમાહ—‘સે તં આચારે’  
 इति । स एष आचारः—हे जम्बू ! यत्त्वयाऽऽचाराङ्गभावः पृष्टः स ज्ञानाचारादि-  
 लक्षण आचारोऽयमनन्तरोक्तो विज्ञेयः ॥ सू० ४५ ॥

આચારાઙ્ગસ્વરૂપમભિધાય સામ્પ્રતં દ્વિતીયસૂત્રકૃતાઙ્ગસૂત્રસ્ય સ્વરૂપમાહ—‘સે કિં  
 તં સૂચગદે૦’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—સે કિં તં સૂચગદે ? સૂચગદે ણં લોએ સૂઝજ્જઈ,  
 અલોએ સૂઝજ્જઈ, લોયાલોએ સૂઝજ્જઈ, જીવા સૂઝજ્જંતિ, અજીવા  
 સૂઝજ્જંતિ, જીવાજીવા સૂઝજ્જંતિ, સસમએ સૂઝજ્જઈ, પરસમએ  
 સૂઝજ્જઈ, સસમયપરસમએ સૂઝજ્જઈ, સૂચગદે ણં અસીયસ્સ  
 કિરિવાઈ સયસ્સ, ચતરાસીએ અકિરિયાવાઈણં, સત્તઢ્ઠીએ, અણ્ણા-  
 ણિયવાઈણં વત્તીસાએ, વેણઈયવાઈણં, તિણ્ણં તેસઢ્ઠાણં પાસણિડય-  
 સયાણં બૂહં કિચ્ચા સસમએ ઠાવિજ્જઈ । સૂચગદે ણં પરિત્તા  
 વાયણા, સંઘિજ્જા અણુઓગદારા, સંઘેજ્જા વેઢા, સંઘેજ્જા  
 સિલોગા, સંઘિજ્જાઓ નિજ્જુત્તીઓ, (સંઘિજ્જાઓ સંગહણીઓ)

શિત હુઈ હૈ । ( इन सबका अर्थ पहिले की तरह ही है ) । इस तरह  
 આચારાંગકે સ્વરૂપકો કહ કર અબ સુધર્માસ્વામી—જંબૂસ્વામીસે કહતે  
 હૈં કિ હે જમ્બૂ ! જો તુમને આચારકે સ્વરૂપકે વિષયમેં પ્રશ્ન કિયા થા  
 વહ આચાર જ્ઞાનાચાર આદિકે ભેદસે इस प्रकारका है कि जिसके विषय  
 મેં યહાં તક કથન કિયા ગયા હૈ ॥ સૂ૦ ૪૫ ॥

તથા ઉપદર્શિત થઈ છે. ( આ બધાનો અર્થ આગળ આપ્યા પ્રમાણે છે ) આ  
 રીતે આચારાંગનાં સ્વરૂપને કહીને હવે સુધર્માસ્વામી જંબૂસ્વામીને કહે છે કે  
 હે જંબૂ ! તમે આચારનાં સ્વરૂપના વિષયમાં જે પ્રશ્ન કર્યો હતો, તે આચાર  
 જ્ઞાનાચાર આદિના ભેદથી કેવા પ્રકારનો છે તેના વિષે અહીં સુધી વર્ણન કર-  
 વામાં આવ્યું છે. ॥ સૂ. ૪૫ ॥

संखिज्जाओ पडिवत्तीओ । से णं अंगट्ठयाए बिईए अंगे, दो-  
सुयक्खंधा, तेवीसं अज्झयणा, तिच्चीसं उद्देसणकाला तिच्चीसं  
समुद्देसणकाला, छत्तीसं पयसहस्साइं पयग्गेणं, संखिज्जा अक्खरा,  
अणंता गमा, अणंता पज्जवा, परित्ता तसा, अणंता थावरा,  
सासय-कड-निबद्ध-निकाइया जिणपण्णत्ता भावा आघविज्जंति  
पण्णविज्जंति परूविज्जंति दंसिज्जंति निदंसिज्जंति उवदंसिज्जंति ।  
से एवं आया, एवं ण्हाया एवं विण्णाया । एवं चरण करणपरूवणा  
आघविज्जइ, पण्णविज्जइ, दंसिज्जइ, निदंसिज्जइ, उवदंसिज्जइ ।  
से तं सूयगडे ॥ सू० ४६ ॥

छाया—अथ किं तत् सूत्रकृतम् ? सूत्रकृते खलु लोकः सूच्यते, अलोकः  
सूच्यते, लोकालोकं सूच्यते, जीवाः सूच्यन्ते, अजीवाः सूच्यन्ते, जीवाजीवाः  
सूच्यन्ते, स्वसमयः सूच्यते, परसमयः सूच्यते, स्वसमय-परसमयं सूच्यते । सूत्र-  
कृते खलु अशीत्यधिकस्य क्रियावादिकशतस्य, चतुरशीतेरक्रियावादिनां, सप्तषष्ट्या  
अज्ञानिक वादिनाम्, द्वात्रिंशतो वैयर्थिकवादिनां, त्रयाणां त्रिषष्ट्यधिकानां पाष-  
ण्डिक शतानां व्यूहं कृत्वा स्वसमयः स्थाप्यते । सूत्रकृते खलु परीता वाचनाः,  
संख्येयानि अनुयोगद्वाराणि, संख्येयाः वेष्टकाः, संख्येयाः श्लोकाः, संख्येया  
निर्युक्तयः, ( संख्येयाः संग्रहण्यः ) संख्येयाः प्रतिपत्तयः तत्खलु अङ्गार्थतया द्विती-  
यमङ्गम्, द्वौ श्रुतस्कन्धौ, त्रयोविंशतिरव्ययनानि त्रयस्त्रिंशदुद्देशनकालाः, त्रयस्त्रिंश-  
त्समुद्देशनकालाः, षट्त्रिंशत् पदसहस्राणि पदाग्रेण, संख्येयानि अक्षराणि, अनन्ता  
गमाः, अनन्ताः पर्यवाः, परीतास्त्रसाः, अनन्ताः स्थावराः, शाश्वत-कृत-निबद्ध-  
निकाचिता-जिनप्रज्ञप्ता भावा आख्यायन्ते, प्रज्ञाप्यन्ते, परूष्यन्ते, दर्श्यन्ते, निद-  
श्यन्ते, उपदर्श्यन्ते । स एवमात्मा, एवं ज्ञाता, एवं विज्ञाता । एवं चरण करणप्ररूपणा  
आख्यायते प्रज्ञाप्यते परूष्यते दर्श्यते निदर्श्यते उपदर्श्यते । तदेतत् सूत्रकृतम्  
॥ सू० ४६ ॥



ટીકા—‘ સે કિં તં ’ ઇત્યાદિ—

અથ કિં તત્ સૂત્રકૃતમ્=સૂત્રકૃતાઙ્ગમ્ ? સૂચનાત્=જીવા-જીવાદિપદાર્થાનાં પ્રતિવોધનાત્ સૂત્રમ્, યદ્વા-સર્વદ્રવ્યપર્યાયનયાદ્યર્થ સૂચનાત્ સૂત્રમ્, અથવા-સુપ્તમિવ સૂત્રમ્, યથા-સુપ્તઃ પુરુષઃ પ્રતિવોધિતઃ સન્નભીષ્ટં કાર્યં સાધયતિ, તથૈવેદમર્થેન પ્રતિવોધિતં સન્નિઃશ્રેયસં સાધયતિ । તથા સૂત્રં=તન્તુઃ, તદિવ સૂત્રમ્, યથા તન્તુના દ્વે ત્રીણિ તદધિકાનિ વા વસ્તૂનિ એકત્ર સંયોજ્યતે, તથૈવ એકેન સૂત્રેણ વહ્વોઽર્થા નિવધ્યન્તે ઇતિ સૂત્રમ્ । અથવેદમપિ સૂત્રલક્ષણમ્—

સૂત્રકાર આચારાંગકા સ્વરૂપ કહ કર અવ દૂસરે અઙ્ગ સૂત્રકૃતાઙ્ગ કા સ્વરૂપ કહતે હૈ—‘ સે કિં તં સૂચગડે૦ ’ ઇત્યાદિ ।

શિષ્ય પ્રશ્ન—હે ભદન્ત ! દ્વિતીય અઙ્ગ સૂત્રકૃતાઙ્ગકા કયા સ્વરૂપ હૈ ?

ઉત્તર—જો સૂત્રરૂપસે રચા ગયા હૈ વહ “ સૂત્રકૃત ” હૈ । યદ્યપિ સૂત્રરૂપસે હી સમસ્ત અંગોંકી રચના હુઈ હૈ, ફિર સી ઇસે “ જો સૂત્ર રૂપસે રચા ગયા વહ સૂત્રકૃત હૈ ” એસા જો કહા ગયા હૈ વહ સ્થિતીકી અપેક્ષા સે જાનના ચાહિયે । “ સૂચનાત્ સૂત્રમ્ ” સમસ્ત જીવાદિક પદાર્થોં કા જો પ્રતિવોધક હોતા હૈ વહ સૂત્ર હૈ અથવા-દ્રવ્યાર્થિક એવં પર્યાયાર્થિકનયકે વિષયભૂત સમસ્ત જીવાદિક પદાર્થોંકા જો પ્રરૂપક હોતા હૈ વહ સૂત્ર હૈ અથવા “ સુપ્તમિવ સૂત્રમ્ ” જૈસે સોયા હુઆ કોઈ પુરુષ જબ જગા દિયા જાતા હૈ તો વહ અપને અભીષ્ટ કાર્યકો કરને મેં લગ જાતા હૈ ઉસી પ્રકાર અર્થ સે પ્રતિવોધિત હુઆ સૂત્ર નિઃશ્રેયસ આત્મ-

સૂત્રકાર આચારાંગનું સ્વરૂપ કહીને બીજા અંગ-સૂત્રકૃતાંગનું સ્વરૂપ કહે છે—“ સે કિં તં સૂચગડે૦ ” ઇત્યાદિ—

શિષ્ય પૂછે છે—હે ભદન્ત ! દ્વિતીય અંગ સૂત્રકૃતાંગનું શું સ્વરૂપ છે ?

ઉત્તર—જે સૂત્રરૂપે રચવામાં આવેલ છે તે “ સૂત્રકૃત ” છે. જે કે સમસ્ત અંગોની રચના સૂત્રરૂપે જ થઈ છે તેા પણ તેને “ જે સૂત્રરૂપે રચવામાં આવેલ છે તે સૂત્રકૃત છે ” એવું જે કહેલ છે તે રીતીની અપેક્ષાએ બાણુવું બેઈ એ. “ સૂચનાત્ સૂત્રમ્ ” સમસ્ત ભવાદિક પદાર્થોંનું જે પ્રતિબોધક હોય છે તે સૂત્ર છે. અથવા દ્રવ્યાર્થિક અને પર્યાયાર્થિક નયના વિષયભૂત સમસ્ત ભવાદિક પદાર્થોંનું જે પ્રરૂપક હોય છે તે સૂત્ર છે. અથવા “ સુપ્તમિવ સૂત્રમ્ ” જેમ સુતેલા કોઈ પુરુષને બ્યારે જગાડવામાં આવે છે ત્યારે તે પોતાના અભીષ્ટ કાર્ય કરવાને મંડી બાય છે એજ પ્રકારે અર્થથી પ્રતિબોધિત થયેલ સૂત્ર

“અલ્પાક્ષરમસંદિગ્ધં, સારવત્ત્વિશ્વતોમુખમ્ ।

અસ્તોમમનવદ્યં ચ, સૂત્રં સૂત્રવિદો વિદુઃ ” ॥૧૬॥

કલ્યાણકી સિદ્ધિ કર લેતા હૈ । “સૂત્રમિવ સૂત્રમ્ ” જિસ પ્રકાર તન્તુ કેદ્વારા દો, ત્રીન અથવા અધિક ભી વસ્તુએં એક જગહ બાંધ દી જાતી હૈં ઉસી પ્રકાર એક હી સૂત્રદ્વારા વહુતસે અર્થ ભી બાંધે જાતે હૈં હસ લિયે સૂત્રકી તરહ યહ સૂત્ર કહા ગયા હૈ । અથવા સૂત્રકા યહ ભી-લક્ષણ કહા ગયા હૈ—

“અલ્પાક્ષર મસંદિગ્ધં, સારવત્ત્વિશ્વતોમુખમ્ ।

અસ્તોમમનવદ્યં ચ, સૂત્રં સૂત્રવિદો વિદુઃ ” ॥૧૭॥

અલ્પાક્ષર—જિસમેં અક્ષર અલ્પ હોં, તથા—અસંદિગ્ધ—સન્દેહરહિત, અર્થાત્ જો સન્દેહ કો ઉત્પન્ન કરને વાલે અનેકાર્થક શબ્દોસે રહિત હો, સારવત્—સારયુક્ત, અર્થાત્ અનેક પર્યાયોં સે યુક્ત હો અથવા વહુત અર્થકો કહને વાલા હો, વિશ્વતોમુખ—અર્થાત્ ચારોં અનુયોગો સે યુક્ત હો અસ્તોમ—અર્થાત્—‘વા, વૈ, હિ’ આદિ સ્તોમોં—નિર્અર્થક નિપાતોં સે રહિત હોં, અનવદ્ય—ગર્હા રહિત અર્થાત્ હિંસા કા પ્રતિપાદક ન હો, હસ પ્રકાર કે લક્ષણોં સે યુક્ત કો હી સૂત્ર કે જાનને વાલોંને સૂત્ર કહા હૈ ॥૧૮॥

નિઃશ્રેયસ—આત્મકલ્યાણની સિદ્ધિ કરી લે છે. “સૂત્રમિવ સૂત્રમ્ ” જેમ સૂત્ર (દોરી) દ્વારા બે, ત્રણ અથવા વધારે વસ્તુઓ પણ એક જગ્યાએ બાંધી દેવાય છે તેમ એક જ સૂત્ર દ્વારા બહુ જ અર્થો પણ બાંધી શકાય છે, તે કારણે આ સૂત્રને સૂત્ર (દોરી) જેવું કહેલ છે. અથવા સૂત્રનું આ પણ લક્ષણ કહેલ છે—

“અલ્પાક્ષર મસંદિગ્ધં, સારવત્ત્વિશ્વતોમુખમ્ ।

અસ્તોમ મનવદ્યંચ, સૂત્રં સૂત્રવિદો વિદુઃ ” ॥૧૯॥

અલ્પાક્ષર—જેમાં થોડા અક્ષર હોય, તથા અસંદિગ્ધ—સંદેહ રહિત એટલે કે જે સંદેહ ઉત્પન્ન કરનારા અનેકાર્થક શબ્દોથી રહિત હોય, સારવત્—સારયુક્ત એટલે કે અનેક પર્યાયોથી યુક્ત અથવા ઘણા અર્થને કહેનાર હોય, વિશ્વતોમુખ—એટલે કે ચારે અનુયોગોવાળું હોય, અસ્તોમ—એટલે કે “વા, વૈ, હિ” આદિ સ્તોમો—નકામા નિપાતો વિનાનું હોય, અનવદ્ય—ગર્હારહિત એટલે કે હિંસાનું પ્રતિપાદક ન હોય, આ પ્રકારનાં લક્ષણોવાળાને જ સૂત્રના બાણકારોએ સૂત્ર કહેલ છે. ॥૧૯॥

સૂત્રેણ=સૂત્રરૂપતયા કૃતં=રચિતમ્, સૂત્રકૃતમ્ । યદ્યપિ સર્વાણ્યજ્ઞાનિ સૂત્રરૂપ-  
તયૈવ વિહિતાનિ, તથાપિ રુઢિવશાદિદમેવાજ્ઞં સૂત્રકૃતાજ્ઞશ્વદેન પ્રોચ્યતે । ઇતિ ।  
ઉત્તરયતિ-સૂત્રકૃતે સ્વલુ લોકઃ-લોક્યતે=કેવલાલોકેન દૃશ્યતે ઇતિ લોકઃ-પञ्चाસ્તિ-  
કાયાત્મકઃ સ સૂચ્યતે । તથા-અલોકઃ=લોકભિન્નઃ સ સૂચ્યતે । લોકાલોક લક્ષણં ચેદમ્-

“ધર્માદીનાં વૃત્તિ, દ્રવ્યાણાં ભવતિ યત્ર તત્ ક્ષેત્રમ્ ।

તૈર્દ્રવ્યૈઃ સહલોક,-સ્તદ્વિપરીતં હલોકાખ્યમ્ ” ॥ ઇતિ ।

તથા-લોકાલોકં=લોકશ્ચ અલોકશ્ચ-લોકાલોકં તત્ સૂચ્યતે । તથા-જીવાઃ=ચેતનાલ-  
ક્ષણાઃ સૂચ્યન્તે, અજીવાઃ=જીવવિપરીતસ્વરૂપાઃ ધર્માધર્માકાશપુદ્ગલાસ્તિકાયાદ્વાસમયાઃ

इस तरह जो सूत्ररूप से रचा गया है वह सूत्रकृत अंग है और यह  
द्वितीय अंग है । इसी विषय को जानने के लिये यह प्रश्न उपस्थित  
हुआ है । उत्तररूपमें अब सूत्रकार कहते हैं-‘सूयगडेणं०’ इत्यादि ।

સૂત્રકૃતાજ્ઞ મેં પञ્ચાસ્તિકાયાત્મક ઇસ લોક કી પ્રરૂપણા કી ગયી હૈ ।  
‘લોક્યતે ઇતિ લોકઃ’ ઇસ વ્યુત્પત્તિ કે અનુસાર જો કેવલજ્ઞાનરૂપી  
આલોકપ્રકાશ સે દેખા જાવે વહ લોક હૈ । યહ પાંચ અસ્તિકાયોં સે યુક્ત હૈ ।  
ઇસ પ્રકાર કે લોક કી પ્રરૂપણા હુઈ હૈ । લોક સે ભિન્ન અલોક હૈ, ઇસ  
અલોકાકાશ કી ભી વહાં પ્રરૂપણા હુઈ હૈ । લોકાકાશ ઓર અલોકાકાશ  
કા સ્વરૂપ ઇસ પ્રકાર બતલાયા હૈ-‘જિતને ક્ષેત્ર મેં ધર્માદિક દ્રવ્યોં કા  
અસ્તિત્વ પાયા જાતા હૈ ઉતના ક્ષેત્ર લોકાકાશ, એવં જહાં કેવલ આકાશ  
હી આકાશ હૈ વહ અલોકાકાશ હૈ ।’ ઇસી तरह ઇસમેં જીવ, અજીવ  
ઓર જીવાજીવ વર્ણિત હુએ હૈ । ચેતના જિસકા એક માત્ર લક્ષણ હૈ વહ

આ પ્રકારે જે સૂત્રરૂપે રચાયું છે તે સૂત્રકૃત અંગ છે, અને તે બીજું  
અંગ છે. એજ વિષયને બાણવાને માટે આ પ્રશ્ન ઉદ્ભવ્યો છે. ઉત્તરરૂપે હવે  
સૂત્રકાર કહે છે-“સૂયગડે ણં” ઇત્યાદિ.

સૂત્રકૃતાંગમાં પંચાસ્તિકાયરૂપ આ લોકની પ્રરૂપણા કરી છે, ‘લોક્યતે ઇતિ  
લોકઃ’ આ વ્યુત્પત્તિ અનુસાર, જે કેવલજ્ઞાનરૂપી આલોકપ્રકાશથી ભેવાય તે લોક  
છે. એ પાંચ અસ્તિકાયોથી યુક્ત છે. આ પ્રકારના લોકની પ્રરૂપણા આ સૂત્રમાં  
કરાઈ છે. લોકથી બુદ્ધે અલોક છે આ અલોકાકાશની પણ ત્યાં પ્રરૂપણા થઈ છે.  
લોકાકાશ, અને અલોકાકાશનું સ્વરૂપ આ પ્રકારે બતાવ્યું છે. જેટલાં ક્ષેત્રમાં  
ધર્માદિક દ્રવ્યોનું અસ્તિત્વ હોય છે. એટલું ક્ષેત્ર લોકાકાશ તેમજ જ્યાં કેવળ  
આકાશ જ આકાશ છે, તે અલોકાકાશ છે. એજ રીતે એમાં જીવ અજીવ અને  
જીવાજીવનું વર્ણન થયું છે. ચેતના જેનું એકમાત્ર લક્ષણ છે. તે જીવ છે.

ते सूच्यन्ते, जीवा जीवाः=जीवाजीवादि द्रव्याणि सूच्यन्ते । तथा-स्वसमयः=अहंन्म-  
तानुसारिसिद्धान्तः सूच्यते, परसमयः=इतर दर्शनसिद्धान्तः सूच्यते, स्वसमय पर-  
समयं=स्वस्य परस्य च सिद्धान्तः सूच्यते । तथा-सूत्रकृते खलु 'असीअस्स'  
अशीत्यधिकस्य क्रियावादिक शतस्य-क्रियांवदितुं शीलं येषां ते क्रियावादिनस्त  
एव क्रियावादिकास्तेषां शतं तस्य, अशीत्यधिकशतसंख्यकानां क्रियावादिनां व्यूहं  
कृत्वा स्वसमयः स्थाप्यते-इत्यग्रेण संबन्धः । एवं सर्वत्र । क्रियावाद्यादीनां विस्तर  
स्वरूपं समवायाङ्गसूत्रस्य भावबोधिनी टीकातोऽवसेयम् । एवं त्रयाणां त्रिषष्ट्यधि-  
कानां पाषण्डिकशतानाम्=उपरि निर्दिष्टानां सर्वेषां मीलने त्रिषष्ट्यधिकत्रिशतानि  
पाषण्डिकमतानि तेषां व्यूहम्=प्रतिक्षेपं कृत्वा=सर्वाणि मतानि दूषयित्वा स्वसमयः

जीव है । इस लक्षण से विपरीत अजीव हैं । धर्मास्तिकाय, अधर्मास्ति-  
काय, आकाशास्तिकाय, पुद्गलास्तिकाय तथा काल, ये सब अजीव हैं ।  
तथा इस सूत्रकृताङ्ग में स्वसमय सूचित हुए हैं । वीतराग, सर्वज्ञ, हितो-  
पदेशी अहंन्त प्रभु द्वारा जिन सिद्धान्तों की प्ररूपणा की गयी है, वे  
स्वसमय हैं । अन्य दर्शनों के जो सिद्धान्त हैं वे परसमय हैं । इनकी  
सूचना भी सूत्रकृताङ्ग में है । तथा स्वपर सिद्धान्त की सूचना भी इस  
सूत्रकृताङ्ग में की गयी है ।

तथा-सूत्रकृताङ्गमें एकसौ अस्सी १८० भेद क्रियावादियों के चोरासी,  
८४ भेद अक्रियावादियों के, सडसठ ६७ भेद अज्ञानवादियों के, तथा  
बत्तीस ३२ भेद विनयवादियों के इस प्रकार तीनसौ तेसठ ३६३ पाखंडियों  
के मत का निरसन करके स्वसमय-स्वसिद्धान्त की स्थापना की गई है ।

એ લક્ષણથી ભિન્ન અજીવ છે. ધર્માસ્તિકાય, અધર્માસ્તિકાય, આકાશાસ્તિકાય,  
પુદ્ગલાસ્તિકાય તથા કાલ, એ બધા અજીવ છે તથા આ સૂત્રકૃતાંગમાં સ્વસમય  
સૂચિત થયેલ છે. વિતરાગ, સર્વજ્ઞ, હિતોપદેશી અહંન્ત પ્રભુ દ્વારા જીન સિદ્ધાં-  
તોની પ્રરૂપણા કરાઈ છે. તે સ્વ સમય છે. અન્ય દર્શનોનો જે સિદ્ધાંત છે, તે  
પર સમય છે. તેની સૂચના પણ “સૂત્રકૃતાંગ”માં છે. તથા સ્વ, પર સિદ્ધાંતની  
સૂચના પણ એ “સૂત્રકૃતાંગ”માં કરવામાં આવી છે.

સૂત્રકૃતાંગમાં એકસોએસી ૧૮૦ ભેદો ક્રિયાવાદીઓના, ચોરાસી (૮૪)  
ભેદો અક્રિયાવાદીઓના, સડસઠ (૬૭) ભેદો અજ્ઞાનવાદીઓના તથા બત્રીસ (૩૨)  
ભેદો વિનયવાદીઓના, આ પ્રકારે ત્રણસોતેસઠ (૩૬૩) પાખંડીઓના મતનું નિરસન  
કરીને સ્વસમય-સ્વસિદ્ધાંતની સ્થાપના કરવામાં આવી છે.

જૈનસિદ્ધાન્તઃ સ્થાપ્યતે । તથા—સૂત્રકૃતે સ્વલુ પરીતાઃ=સંખ્યાતાઃ વાચનાઃ, સંખ્યે-  
યાનિ અનુયોગદ્વારાણિ, સંખ્યેયાઃ વેષ્ટકાઃ, સંખ્યેયાઃ શ્લોકાઃ, સંખ્યેયાઃ નિર્યુ-  
ક્તયઃ, ( સંખ્યેયાઃ સંગ્રહણ્યઃ ), સંખ્યેયાઃ પ્રતિપત્તયઃ । એતાનિ પદાનિ અત્રૈવ આ-  
ચારાઙ્ગ નિરૂપણાવસરે વ્યાખ્યાતાનિ । ‘સે ણં’ તત્સ્વલુ અઙ્ગાર્થતયા=અઙ્ગસ્વરૂપ  
વસ્તુતયા દ્વિતીયમઙ્ગમસ્તિ, તત્ર દ્વૌ શ્રુતસ્કન્ધૌ, ત્રયોવિંશતિરવ્યયનાનિ, પ્રથમ  
શ્રુતસ્કન્ધે ષોડષાવ્યયનાનિ, દ્વિતીયે સપ્તાધ્યયનાનિ, ઇતિ સર્વસંકલનયા ત્રયોવિંશતિ  
રવ્યયનાનિ, ત્રયસ્ત્રિંશદુદ્દેશનકાલાઃ ।

તદુક્તમ્—

“ચતુર્તિય ચતુરો દો દો, એકારસ ચેવ હંતિ એકસરા ।

સત્તેવ મહજ્જયણા, એગસરા વીયસુય સંધે ” ॥ ૧ ॥

છાયા—ચત્વારસ્યયશ્ચત્વારો દ્વૌ દ્વૌ એકાદશ ચૈવ ભવન્તિ એકસરકાઃ ।

સત્તૈવ મહાધ્યયનાનિ એકસરાણિ દ્વિતીય શ્રુતસ્કન્ધે ॥ ઇતિ ।

અયં ભાવઃ—પ્રથમ શ્રુતસ્કન્ધસ્ય પ્રથમેઽધ્યયને ચત્વાર ઉદ્દેશનકાલાઃ દ્વિતીયે

તથા—ઈસ સૂત્રકૃતાંગ સૂત્રકે સૂત્ર ઔર અર્થ યહ હૈં । તથા ઈસ દ્વિતીય  
અંગમેં સંખ્યાતી વાચનાએં હૈં, સંખ્યાતે અનુયોગ દ્વાર હૈં, સંખ્યાતી પ્રતિ-  
પત્તિયાં હૈં, સંખ્યાતે વેષ્ટક હૈં, સંખ્યાતે શ્લોક હૈં, તથા સંખ્યાતી નિર્યુ-  
ક્તિયા હૈં । વાચના આદિ શબ્દોં કા અર્થ આચારાંગસૂત્ર કે ૪૫ પૈતાલિસ  
સૂત્ર મેં વ્યાખ્યાનમેં લિખા જા ચુકા હૈં । અંગાર્થપને સે યહ દૂસરા અંગ હૈં ।  
ઈસમેં દો શ્રુતસ્કન્ધ હૈં । તે ઈસ અધ્યયન હૈં—પ્રથમ શ્રુતસ્કન્ધમેં સોલહ તથા  
દ્વિતીય શ્રુતસ્કન્ધ મેં સાત । તેત્રીસ ઉદ્દેશનકાલ હૈં, વે ઈસ તરહ સે હૈં—

“ચતુર્તિય ચતુરો દો દો, એકારસ ચેવ હંતિ એકસરા ।

સત્તેવ મહજ્જયણા, એગસરા વીય સુચસંધે ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

પ્રથમશ્રુતસ્કન્ધ કે પહિલે અધ્યયનમેં ચાર ઉદ્દેશનકાલ હૈં, દ્વિતીય

આ સૂત્રકૃતાંગ સૂત્રનાં સૂત્ર અને અર્થ છે. તથા આ દ્વિતીય અંગમાં  
સંખ્યાત વાચનાઓ છે, સંખ્યાત અનુયોગ દ્વાર છે, સંખ્યાત પ્રતિપત્તિઓ છે,  
સંખ્યાત વેષ્ટક છે, સંખ્યાત શ્લોક છે, તથા સંખ્યાત નિર્યુક્તિઓ છે. વાચના  
આદિ શબ્દોનો અર્થ આચારાંગના ૪૫ પિસ્તાલીસ સૂત્રનાં વ્યાખ્યાનમાં લખાઈ  
ગયો છે, અંગાર્થપણથી આ બીજું અંગ છે. તેમાં બે શ્રુતસ્કન્ધ છે. તેવીસ  
અધ્યયન છે—પ્રથમ શ્રુતસ્કન્ધમાં સોળ તથા દ્વિતીય શ્રુતસ્કન્ધમાં સાત. તેત્રીસ  
ઉદ્દેશકાળ છે તે આ પ્રમાણે છે—

“ચતુર્તિય ચતુરો દો દો, એકારસ ચેવ હંતિ એકસરા ।

સત્તેવ મહજ્જયણા, એગસરા વીયસુચસંધે ” ॥ ૧ ॥

પ્રથમ શ્રુત સંક્ર્ધના પહેલા અધ્યયનમાં ચાર ઉદ્દેશનકાળ છે, બીજા અધ્ય-

ત્રયઃ, તૃતીયે ચત્વારઃ, ચતુર્થે દ્વૌ, પચ્ચમે દ્વૌ, અવશિષ્ટેષુ એકાદશસ્વધ્યયનેષુ પ્રત્યે-  
કત્ર એકૈક ઉદ્દેશનકાલઃ ઇતિ એકાદશ ઉદ્દેશનકાલાઃ, તથા-દ્વિતીય શ્રુતસ્કન્ધસ્ય સપ્ત-  
સ્વધ્યયનેષુ પ્રત્યેકત્ર એકૈક ઉદ્દેશનકાલ, ઇતિ સપ્તોદ્દેશનકાલાઃ, એવં સર્વ સંકલનયા ત્રય-  
સ્ત્રિંશદુદ્દેશનકાલાઃ, ત્રયસ્ત્રિંશત્સમુદ્દેશનકાલાઃ, તથા-ષટ્ત્રિંશત્પદસહસ્રાણિ ૩૬૦૦૦  
પદાગ્રેણ=પદપરિમાણેન પ્રજ્ઞપ્તાનિ । ‘પ્રજ્ઞપ્તાનિ’ ઇત્યસ્ય લિઙ્ગવચન વિપરિણામેન સર્વ-  
ત્રાન્વયઃ કાર્યઃ । તથા-અત્ર-સંખ્યેયાનિ અક્ષરાણિ, અનન્તાગમાઃ, અનન્તાઃ પર્યાયાઃ,  
પરીતાઃ=અસંખ્યાતાસ્ત્રસાઃ, અનન્તાઃ સ્થાવરાઃ સન્તિ । ઉપરિ નિર્દિષ્ટાઃ સર્વે જિન  
પ્રજ્ઞપ્તા ભાવાઃ સન્તિ । કીદૃશા એતે ? ઇત્યાહ-‘સાસયા’ શાશ્વતાઃ, કૃતાઃ, નિબદ્ધાઃ  
પુનઃ નિકાચિતાઃ । ત એતે ભાવા અત્ર-આખ્યાયન્તે, પ્રજ્ઞાપ્યન્તે, પ્રરૂપ્યન્તે, દર્શ્યન્તે,

અધ્યયનમેં ત્રીન, ત્રીસરે અધ્યયનમેં ચાર, ચૌથે અધ્યયન મેં દો, પાંચવે  
અધ્યયનમેં દો, ઇસ તરહ પાંચ અધ્યયનોમેં પન્દરહ ઉદ્દેશનકાલ હુએ ।  
તથા અવશિષ્ટ ગ્યારહ અધ્યયનોમેં પ્રત્યેક મેં એક ઉદ્દેશનકાલ હોને સે  
ગ્યારહ ઉદ્દેશન કાલ હુએ, ઇસ પ્રકાર પ્રથમ શ્રુતસ્કંધકે યે છાઈસ ઉદ્દેશ-  
નકાલ હુએ । દ્વિતીય શ્રુતસ્કંધકે જો સાત અધ્યયન હૈં ઉનમેં પ્રત્યેક મેં  
એક-એક ઉદ્દેશનકાલ હોનેસે સાત ઉદ્દેશનકાલ હુએ, ઇસ પ્રકાર દોનો  
શ્રુતસ્કંધોં કે ઉદ્દેશનકાલ તૈંતીસ ૩૩ હો જાતે હૈં । ઇસી પ્રકાર સમુદ્દે-  
શનકાલ ભી તૈંતીસ હૈં । ઓર છત્તીસ હજાર પદ હૈં । સંખ્યાત અક્ષર હૈં,  
અનંતગમે હૈં, અનંતપર્યાયે હૈં, પરીતા-અસંખ્યાતે ત્રસ હૈં, અનંત સ્થાવર  
હૈં । યે જીવ શાશ્વત હૈં-દ્રવ્યાર્થિક નયકી અપેક્ષાસે, કૃત-અશાશ્વત  
હૈં-પર્યાયાર્થિક નયકી અપેક્ષા સે, નિબદ્ધ હૈં-સૂત્રમેં ગ્રથિત હોનેસે, નિ-  
કાચિત હૈં-નિર્યુક્તિ હેતુ ઉદાહરણ આદિકે દ્વારા યે અચ્છી તરહસે

યનમાં ત્રણ, ત્રીજા અધ્યયનમાં ચાર, ચોથા અધ્યયનમાં બે, પાંચમાં અધ્યયનમાં  
બે, આ રીતે પાંચ અધ્યયનોમાં પંદર ઉદ્દેશનકાળ થયાં. તથા બાકીના અગ્ની-  
ચારમાંના પ્રત્યેકમાં એક એક ઉદ્દેશનકાળ હોવાથી, તેમનાં આગીચાર ઉદ્દેશનકાળ  
થયાં, આ રીતે પ્રથમશ્રુત સ્કંધના કુલ છવીશ ઉદ્દેશનકાળ થયાં. દ્વિતીયશ્રુત  
સ્કંધના બે સાત અધ્યયન છે તે પ્રત્યેકમાં એક એક ઉદ્દેશનકાળ હોવાથી તેના  
સાત ઉદ્દેશનકાળ થયાં. આ રીતે બન્ને શ્રુત સ્કંધોના મળીને કુલ તેત્રીસ (૩૩)  
ઉદ્દેશનકાળ થાય છે. એજ પ્રમાણે સમુદ્દેશનકાળ પણ તેત્રીસ છે, અને છત્રીસ  
હજાર પદ છે. સંખ્યાત અક્ષર છે, અનંત ગમ છે, અનંત પર્યાયો છે, અસં-  
ખ્યાત ત્રસ છે. અનંત સ્થાવર છે. એ જીવ શાશ્વત છે, દ્રવ્યાર્થિકનયની અપેક્ષા એ  
નિબદ્ધ છે-સૂત્રમાં ગ્રથિત હોવાથી, નિકાચિત છે-નિર્યુક્તિ હેતુ ઉદાહરણ  
આદિ દ્વારા સારી રીતે પ્રતિષ્ઠિત હોવાથી. એ જીવાદિક પદાર્થ બે રૂપે તીર્થ-



નિદર્શ્યન્તે, ઉપદર્શ્યન્તે । ‘સે’ સઃ=ય એતદ્ગમધીતે સ જનઃ એવમાત્મા-અત્રોક્ત ગુણ વિશિષ્ટઃ સન્ આત્મસ્વરૂપો ભવતિ । એવં જ્ઞાતા ભવતિ, એવં વિજ્ઞાતા ભવતિ । અનેન પ્રકારેણાઽત્ર સૂત્રકૃતાન્ને ચરણકરણ પ્રરૂપણા આખ્યાયતે, પ્રજ્ઞાપ્યતે, પ્રરૂપ્યતે, દર્શ્યતે, નિદર્શ્યતે, ઉપદર્શ્યતે । અત્રાઽવ્યાખ્યાતપદાનાં વ્યાખ્યા આચારાન્ન નિરૂપણાવસરે ગતા । આચાર્યઃ સૂત્રકૃતસ્વરૂપમુક્તવા શિષ્યમાહ—‘સે ત્તં સૂચ્યગદે’-તદેતત્ સૂત્રકૃતમ્=સૂત્રકૃતસ્વરૂપમેવં વિજ્ઞેયમિતિ ॥ સૂ. ૪૬ ॥

પ્રતિષ્ઠિત હોનેસે । યે જીવાદિક પદાર્થ જિસ રૂપસે તીર્થઢૂર પ્રભુને પ્રતિપાદિત કિયે હૈં उसी रूपसे यहां सूत्रकृतांग सूत्रमें प्रतिपादित किये गये हैं, प्रज्ञापित किये गये हैं, प्ररूपित किये गये हैं, दिखलाये गये हैं, निदर्शित किये गये हैं, उपदर्शित किये गये हैं । जो प्राणी इस द्वितीय अंगका अध्ययन करता है वह पूर्वोक्त गुण विशिष्ट हो कर आत्मस्वरूप बन जाता है, ज्ञाता हो जाता है तथा विज्ञाता हो जाता है । इस प्रकार से इस सूत्रकृतांगमें चरण और करणकी प्ररूपणा की गई है, प्रज्ञापित की गई है, प्ररूपित की गई है, दिखलाई गई है, निदर्शित की गई है तथा उपदर्शित की गई है । यहां जिनपदोंकी व्याख्या नहीं की गई है उन पदोंकी व्याख्या आचारांगसूत्रके निरूपणमें की गई है अतः वहांसे जान लेनी चाहिये । श्रीसुधर्मास्वामी जम्बूस्वामीसे कहते हैं—हे आयुष्मन् ! इस प्रकारसे यह सूत्रकृतांगका स्वरूप है ॥ सू. ४६ ॥

કર પ્રભુએ પ્રતિપાદિત કર્યા છે, એજ રૂપે અહીં સૂત્રકૃતાંગ સૂત્રમાં પ્રતિપાદિત કરેલ છે, પ્રજ્ઞાપિત કરેલ છે, પ્રરૂપિત કરેલ છે, બતાવવામાં આવેલ છે, નિદર્શિત કરેલ છે, ઉપદર્શિત કરાયેલ છે. જે પ્રાણી આ દ્વિતીય અંગનું અધ્યયન કરે છે તે પૂર્વોક્ત ગુણયુક્ત થઈને આત્મસ્વરૂપ બની જાય છે, જ્ઞાતા થઈ જાય છે અને વિજ્ઞાતા થઈ જાય છે. આ રીતે આ સૂત્રકૃતાંગમાં ચરણ અને કરણની પ્રરૂપણા કરવામાં આવી છે, પ્રજ્ઞાપિત કરાઈ છે, પ્રરૂપિત કરાઈ છે, દર્શાવવામાં આવી છે, નિદર્શિત થઈ છે તથા ઉપદર્શિત કરવામાં આવી છે. અહીં જે સૂત્રોની વ્યાખ્યા આપી નથી તે પદોની વ્યાખ્યા આચારાંગ સૂત્રના નિરૂપણમાં આપવામાં આવી છે તેથી ત્યાંથી જાણી લેવી. શ્રી. સુધર્મા સ્વામી જમ્બૂ સ્વામીને કહે છે—“હે આયુષ્મન્ ! આ પ્રકારનું આ સૂત્રકૃતાંગનું સ્વરૂપ છે ” ॥ સૂ. ૪૬ ॥

मूलम्—से किं तं ठाणे ? ठाणे णं जीवा ठाविज्जंति, अजीवा  
ठाविज्जंति, जीवाजीवा ठाविज्जंति, ससमए ठाविज्जइ, परसमए  
ठाविज्जइ, ससमयपरसमए ठाविज्जइ, लोए ठाविज्जइ, अलोए  
ठाविज्जइ, लोयालोए ठाविज्जइ । ठाणेणं टंका, कूडा, सेला,  
सिहरिणो, पम्भारा, कुण्डाई, गुहाओ, आगरा, दहा, नईओ  
आघविज्जंति । ठाणे णं एगाइयाए एगुत्तरियाए बुड्ढीए दस-  
ट्ठाणगविवडिद्वयाणं भावाणं परूवणा आघविज्जइ । ठाणे णं  
परित्ता वायणा, संखेज्जा अणुओगदारा, संखेज्जा वेढा, संखेज्जा  
सिलोगा, संखेज्जाओ निज्जुत्तीओ, संखेज्जाओ संगहणीओ  
संखेज्जाओ पडिवत्तीओ । से णं अंगद्वयाए तईए अंगे, एगे  
सुयक्खंधे, दस अज्झयणा, एगवीसं उद्देसणकाला, एगवीसं  
समुद्देसणकाला बावत्तरिपयसहस्सा पयग्गेणं, संखेज्जा अक्खरा,  
अणंता गमा, अणंता पज्जवा, परित्ता तसा, अणंता थावरा,  
सासयकड णिबद्ध णिकाइया जिणपन्नत्ता भावा आघविज्जंति,  
परूविज्जति, दंसिज्जंति निदंसिज्जंति, उवदंसिज्जंति । से एवं  
आया एवं णाया, एवं विण्णयाया । एवं चरण करण परूवणा  
आघविज्जइ ६ । से त्तं ठाणे ॥ सू० ४७ ॥

छाया—अथ किं तत् स्थानम् ? स्थाने खलु जीवाः स्थाप्यन्ते, अजीवाः  
स्थाप्यन्ते, जीवाजीवाः स्थाप्यन्ते, स्वसमयः स्थाप्यते, परसमयः स्थाप्यते, स्व-  
समय परसमयं स्थाप्यते, लोकः स्थाप्यते, अलोकः स्थाप्यते, लोकालोकं स्थाप्यते ।  
स्थाने खलु टङ्काः कूटाः शिलाः शिखरिणः प्राग्भाराः कुण्डानि गुहाः आकराः  
हृदाः नद्यः आख्यायन्ते । स्थाने खलु एकादिक्रिया एकोत्तरिक्रिया वृद्धया दशस्था-

નકવિવર્દિતાનાં ભાવાનાં પ્રરૂપણા આખ્યાયતે । સ્થાને સ્વલુ પરીતા વાચનાઃ, સંખ્યેયાનિ અનુયોગદ્વારાણિ, સંખ્યેયા વેષ્ટકાઃ સંખ્યેયાઃ શ્લોકાઃ, સંખ્યેયાઃ નિર્યુક્તયઃ, સંખ્યેયાઃ સંગ્રહણયઃ, સંખ્યેયાઃ પ્રતિપત્તયઃ । તત્ સ્વલુ અઙ્ગાર્થતયા તૃતીયમઙ્ગમ્, એકઃ શ્રુતસ્કન્ધઃ દશ અધ્યયનાનિ, એકવિંશતિરુદ્દેશનકાલાઃ, એકવિંશતિઃ સમુદ્દેશન કાલાઃ, દ્વિસપ્તતિઃ પદ સહસ્રાણિ પદાગ્રેણ, સંખ્યેયાન્યક્ષરાણિ, અનન્તાઃ ગમાઃ, અનન્તાઃ પર્યાયાઃ, પરીતાસ્ત્રસાઃ, અનન્તાઃ સ્થાવરાઃ, શાશ્વતકૃત નિચદ્ધ નિકાચિતાઃ જિનપ્રજ્ઞાસાઃ ભાવાઃ આખ્યાયન્તે, પ્રજ્ઞાપ્યન્તે, પ્રરૂપ્યન્તે, દર્શ્યન્તે, નિદર્શ્યન્તે, ઉપદર્શ્યન્તે । સ એવમાત્મા, એવં જ્ઞાતા, એવં વિજ્ઞાતા, એવં ચરણકરણ પ્રરૂપણા આખ્યાયતે ૬ । તત્ એતત્ સ્થાનમ્ ॥ સૂ. ૪૭ ॥

ટીકા—‘ સે કિં તં ઠાણે ’ ઇત્યાદિ—

અથ કિં તત્સ્થાનમ્ ? = તિષ્ઠન્તિ-વિદ્યન્તે પ્રતિપાદ્યતયા જીવાદિપદાર્થા યસ્મિન્-સ્તત્સ્થાનં, તત્કિમ્ ? ઇતિ પ્રશ્નઃ ? ઉત્તરયતિ-સ્થાને=સ્થાનાઙ્ગે સ્વલુ અથવા ‘ ઠાણેણ ’ ઇતિ તૃતીયામાશ્રિત્ય સ્થાનેન=સ્થાનાઙ્ગેન જીવાઃ સ્થાપ્યન્તે । અજીવાઃ સ્થાપ્યન્તે,

અવ ત્રીસરે અંગ સ્થાનાઙ્ગસૂત્રકી પ્રરૂપણા કરતે હૈં—

‘ સે કિં તં ઠાણે ? ’ ઇત્યાદિ—

શિષ્ય પૂછતા હૈ—હે ભદ્રન્ત ! સ્થાન નામ કા જો ત્રીસરા અંગ હૈ ઉસકા કયા ભાવ હૈ ?

ઉત્તર—જિસમેં જીવાદિક પદાર્થોં કે સ્વરૂપ કા કથન કિયા ગયા હૈ વહ સ્થાન હૈ, ઇસ વ્યુત્પત્તિ કે અનુસાર ઇસ તૃતીય અંગ સ્થાનાંગમેં પ્રતિપાદ્ય હોને કી વજહ સે જીવ આદિ પદાર્થોં કે સ્વરૂપ કી વ્યવસ્થા કહી ગઈ હૈ । ઇસી વિષય કો સૂત્રકાર સ્પષ્ટ કરને કે લિયે કહતે હૈ—ઇસ તૃતીય અંગ સ્થાનાંગમેં જીવ કી સ્થપના કી ગઈ હૈ, અથવા ઇસ તૃતીય

હવે ત્રીજા અંગ સ્થાનાંગ સૂત્રની પ્રરૂપણા કરે છે. “ સે કિં તં ઠાણે ? ” ઇત્યાદિ.

શિષ્ય પૂછે છે—હે ભદ્રન્ત ! સ્થાન નામનું જે ત્રીજું અંગ છે તેનું શું તાત્પર્ય છે ?

ઉત્તર—જેમાં જીવાદિક પદાર્થોનાં સ્વરૂપનું કથન કરવામાં આવ્યું છે તે ‘ સ્થાન ’ છે, આ વ્યુત્પત્તિ પ્રમાણે આ ત્રીજું અંગ સ્થાનાંગમાં પ્રતિપાદ્ય હોવાને કારણે જીવ આદિ પદાર્થોનો સ્વરૂપની વ્યવસ્થા કહેવાનાં આવી છે. આજ વિષયને સ્પષ્ટ કરવાને માટે સૂત્રકાર કહે છે—આ ત્રીજા અંગ-સ્થાનાંગમાં જીવની સ્થાપના કરવામાં આવી છે, અથવા આ ત્રીજા અંગ-સ્થાનાંગ દ્વારા જીવની

જીવા જીવાઃ સ્થાપ્યન્તે । સ્વસમયઃ સ્થાપ્યતે=પરમત નિરાકરણપૂર્વકં સ્વસિદ્ધાન્ત-  
સ્થાપનાક્રિયતે, પરસમયઃ સ્થાપ્યતે, સ્વસમય પરસમયં સ્થાપ્યતે । તથા-લોકઃ સ્થા-  
પ્યતે, અલોકઃ સ્થાપ્યતે, લોકાલોકં સ્થાપ્યતે । પુનશ્ચ-સ્થાને=સ્થાનાન્ગે સ્વલુ ટટ્કાઃ=  
પર્વતવિચ્છિન્નતટાઃ, કૂટાઃ=શિખરાણિ, શૈલાઃ=હિમવદાદિપર્વતાઃ, શિખરિણઃ=શિખ-  
રયુક્તાઃ પર્વતાઃ, પ્રાગ્ભારાઃ=ઇષદવનતાઃ કૂટાઃ, અથવા-પર્વતોપરિ ભાગે વિનિર્ગતા  
હસ્તિકુમ્ભાકૃતિકા પર્વતવિભાગાઃ, અથવા પ્રાગ્ભારાઃ=સિદ્ધશિલા, કુણ્ડાનિ=ગંગાપ્રપાત-  
કુણ્ડપ્રમૃતીનિ, ગુહાઃ કન્દરાઃ, આકરાઃ=લોહાદિધાતૂત્પત્તિસ્થાનાનિ, હ્રદાઃ=જલા-  
શયાઃ, નદ્યઃ=ગંગાદ્યાનદ્યશ્ચ આખ્યાયન્તે । તથા-સ્થાને=સ્થાનાન્ગે સ્વલુ એકાદિકયા-

અંગ સ્થાનાંગ કે દ્વારા જીવ કી સ્થાપના કી ગઈ હૈ । અજીવ કી સ્થાપના  
કી ગઈ હૈ તથા જીવ અજીવ કી સ્થાપના કી ગઈ હૈ । હસી તરહ પરમત  
નિરાકરણપૂર્વક સ્વમત કી સ્થાપના કી ગઈ હૈ, પરમત કી સ્થાપના કી  
ગઈ હૈ એવં પરમત ઓર સ્વમત ઇન દોનોં કી સ્થાપના કી ગઈ હૈ । તથા  
લોક કી સ્થાપના કી ગઈ હૈ, અલોક કી સ્થાપના કી ગઈ હૈ; ઓર લોક  
એવં અલોક કી સ્થપના કી ગઈ હૈ ।

હસી તરહ ઇસ સૂત્રમેં ટટ્કા-અર્થાત્ પર્વત કે વિચ્છિન્ન તટકા  
કૂટકા અર્થાત્ શિખર કા, શૈલોં કા હિમવાન્, મહાહિમવાન્, નિષધ,  
નીલ, રુક્મી ઓર શિખરી ઇન છહ પર્વતોં કા, શિખરિયોં કા-શિખરયુક્ત  
પર્વતોં કા, પ્રાગ્ભાર કા-કુછ ૨ ઇલુકે હુએ શિખરોં કા, અથવા પર્વત કે  
ઝપરી ભાગમેં નિકલે હુએ હાથી કે મસ્તકોં કે આકાર સદશ પર્વત  
વિભાગોં કા, કુણ્ડોં કા-ગંગા પ્રપાત આદિ કુણ્ડોં કા, ગુહાઓં કા, લોહ

સ્થાપના કરવામાં આવી છે, અણ્વની સ્થાપના કરાઈ છે. તથા જીવ અને  
અણ્વની સ્થાપના કરેલ છે. આ રીતે પરમતના નિરાકરણ પૂર્વક સ્વમતની  
સ્થાપના કરેલ છે, પરમતની સ્થાપના કરેલ છે, સ્વમત અને પરમતની સ્થાપના  
કરેલ છે. તથા લોકની સ્થાપના કરેલ છે, અને અલોકની સ્થાપના કરેલ છે લોક  
અને અલોકની સ્થાપના કરેલ છે.

એજ રીતે આ સૂત્રમાં ટંકનું-પર્વતનાં વિચ્છિન્નતટનું, કૂટનું-શિખરનું,  
શૈલોનું-હિમવાન્, મહાહિમવાન્, નિષધ, નીલ, રુક્મી અને શિખરી આ છ  
પર્વતોનું, શિખરિયોનું-શિખરયુક્ત પર્વતોનું, પ્રાગ્ભારનું-ક્યાંક ક્યાંક ઝુકેલા શિખ-  
રોનું અથવા-પર્વતના ઉપરી ભાગમાં નિકળેલા હાથીના મસ્તક જેવા પર્વત  
વિભાગોનું, કુંડોનું-ગંગાપ્રપાત આદિ કુંડોનું, ગુહાઓનું, લોહ આદિ ધાતુઓના

एक आदौ=प्रारम्भे यस्यां सा एकादिका तथा, एकोत्तरिकया=क्रमेणैकैकसंख्यारूपया वृद्ध्या दशस्थानकविवर्द्धितानां=दशस्थानक पर्यन्तं वृद्धिमुपगतानां भावानां पदार्थानां प्ररूपणा आख्यायते=कथ्यते । अयं भावः-स्थानाङ्गसूत्रे-एक स्थानकत्वेनारभ्य क्रमेणैकैकस्थानवृद्ध्या वृद्धिमुपगतानां दशस्थानक पर्यन्तानां भावानां प्ररूपणा क्रियते-इति । तथा-स्थाने=स्थानाङ्गे खलु परोताः=संख्याता वाचनाः, संख्येयानि अनुयोगद्वाराणि, संख्येयाः वेष्टकाः, संख्येयाः श्लोकाः, संख्येया निर्युक्तयः, संख्येयाः संग्रहण्यः, संख्येयाः प्रतिपत्तयः । तत्खलु अङ्गार्थतया=अङ्गापेक्षया तृतीयमङ्गम् । अत्र-एकः श्रुतस्कन्धः, दश अध्ययनानि, एकविंशतिरुद्देशनकालाः-द्वितीय तृतीय चतुर्थेषु स्थानेषु चत्वारश्चत्वार उद्देशकाः पञ्चमे त्रयः तथा-प्रथम पष्ठ सप्तमाष्टमनवमदशमेषु स्थानेषु प्रत्येकत्रैकैकोद्देशसत्वात् षट् इत्येवमेकविंशति रुद्देशनकालाः, एकविंशतिः समुद्देशनकालाः, तथा-पदाग्रेण=पदपरिणामेन द्विसप्ततिः पदसहस्राणि=द्वि सप्तति-

आदि धातुओं के उत्पत्ति स्थान, आकरो-खानोका हूदों का-जलाशयों का, और गङ्गा आदि महानदियों का, कथन किया गया है ।

तथा एकविधवक्तव्यता का द्विविधवक्तव्यताका यावत् दशविधवक्तव्यता तक का भी यहां कथन किया गया है । तथा जीवादिको की, पुद्गलोंकी एवं धर्मास्तिकाय आदिकों की यहां प्ररूपणा की गई है । इस स्थानांगसूत्र की संख्याती वाचनाएँ हैं, संख्याते अनुयोग द्वार हैं, संख्याते वेष्टक है संख्याते श्लोक हैं संख्याती नियुक्तियाँ हैं प्रतिपत्तियाँ हैं, तथा संख्याती संग्रहणि गाथाएं हैं । यह स्थानांगसूत्र अंगों की अपेक्षा तीसरा अंग है । इस तीसरे अंगमें एक श्रुतस्कन्ध है । दश अध्ययनस्थान हैं । इक्कीस उद्देशनकाल तथा इक्कीस ही समुद्देशनकाल

ઉત્પત્તિ સ્થાન આકરો (ખાણો)નું (હૂદોનું-જલાશયોનું) અને ગંગા આદિ મહાનદિયોનું કથન કરવામાં આવ્યું છે.

તથા એકવિધ વક્તવ્યતાનું, દ્વિવિધ વક્તવ્યતાનું તે પ્રમાણે દશ-વિધવક્તવ્યતા સુધીનું પણ તેમાં વર્ણન કર્યું છે. તથા જીવાદિકોની, પુદ્ગલોની, અને ધર્માસ્તિકાય આદિકોની તેમાં પ્રરૂપણા કરવામાં આવી છે. આ સ્થાનાંગસૂત્રની સંખ્યાત વાચનાઓ છે, સંખ્યાત અનુયોગ દ્વાર છે, સંખ્યાત વેષ્ટક છે, સંખ્યાત શ્લોક છે, સંખ્યાત નિર્યુક્તિઓ છે, સંખ્યાત પ્રતિપત્તિઓ છે, તથા સંખ્યાત સંગ્રહણિ ગાથાઓ છે. અંગોની અપેક્ષાએ આ સ્થાનાંગસૂત્ર ત્રીજું અંગ છે. આ ત્રીજા અંગમાં એક શ્રુતસ્કન્ધ છે. દસ અધ્યયનસ્થાન છે. એકવીશ ઉદ્દેશનકાળ અને એકવીસ જ સમુદ્દેશનકાળ છે.

સહસ્રાણિ ૭૨૦૦૦ પદાનિ, સખ્યેયાન્યક્ષરાણિ, અનન્તાગમાઃ, અનન્તાઃપર્યાયાઃ, પરીતાઃ=એકત આરમ્બ અસંખ્યાતાદ્ધસાઃ, અનન્તાઃ સ્થાવરાઃ સન્તિ । ઉપરિ નિર્દિષ્ટા એતે શાશ્વતકૃતનિવદ્ધનિકાચિતાઃ જિનપ્રજ્ઞપ્તા ભાવા આખ્યાયન્તે, પ્રજ્ઞાપ્યન્તે, પ્રરૂપ્યન્તે, દર્શ્યન્તે, નિદર્શ્યન્તે, ઉપદર્શ્યન્તે । ‘સે’ સઃ=એતદજ્ઞાધ્યયન શીલોજનઃ, એવમાત્મા=અત્રોક્તગુણવિશિષ્ટઃ સન્ આત્મ સ્વરૂપો ભવતિ । એવં જ્ઞાતા ભવતિ, એવ વિજ્ઞાતા ભવતિ, એવમ્=અનેન પ્રકારેણાઽત્ર સ્થાનાંગેચરણકરણ પ્રરૂપણા આખ્યાયતે ૬ । ‘આખ્યાયતે’ इत्यारम्भ्य ‘उपदर्श्यते’ इत्यन्तं पदपट्कमाचाराङ्गप्रकरण-वदत्रापि विज्ञेयम् । अक्षरगमादीनामर्थोऽत्रैव पञ्चचत्वारिंशत्तमसूत्रे व्याख्यातो विज्ञेयः ॥सू०४७॥

મૂલમ્—સે કિં તં સમવાણં જીવા સમાસિજ્જંતિ, અજીવા સમાસિજ્જંતિ, જીવાજીવા સમાસિજ્જંતિ, સસમણ સમાસિજ્જઈ, પરસમણ સમાસિજ્જઈ, સસમયપરસમણ સમાસિજ્જઈ, લોણ સમાસિજ્જઈ, અલોણ સમાસિજ્જઈ, લોયાલોણ સમાસિજ્જઈ । સમવાણં એગાઈયાણં એગુત્તરિયાણં ઠાણ સય વિવહ્ઠિયાણં ભાવાણં પરૂવણા આઘવિજ્જઈ, દુવાલસ વિહસ્સ ય ગણિપિઠગસ્સ પહ્લવગ્ગો સમાસિજ્જઈ । સમવાયસ્સ ણં પરિત્તા વાયણા, સંઘિજ્ઞા હેં । इक्कीस उद्देशन काल इस प्रकार हैं—दूसरे तीसरे और चौथे स्थानोंमें चार चार तथा पांचवेंमें तीन एवं अवशिष्ट छह अध्ययनोंमें प्रत्येक में एक एक । इसमें बहत्तर हजार (७२०००) पद हैं । ‘संखेज्जा अक्खरा’ इत्यादि पदों की व्याख्या यहीं सूत्र ४५ पेंतालीसमें की जा चुकी है—सो उसी के अनुसार जानना चाहिये । यह स्थानांग का कथन हुआ ॥मू०४७॥

એકવીસ ઉદ્દેશનકાળ આ પ્રમાણે છે—ખીન્તં, ત્રીન્તં અને ચોથા સ્થાનામાં ચાર ચાર, તથા પાંચમાંમાં ત્રણ અને બાકીના છ અધ્યયનોમાં પ્રત્યેકમાં એક એક ઉદ્દેશનકાળ છે. તેમાં બોતેરહત્તર (૭૨૦૦૦) પદ છે. “સંખેજ્જા અક્કરા” ઇત્યાદિ પદોની વ્યાખ્યા અહીં પીસ્તાલીસમાં (૪૫) સૂત્રમાં કરાઈ ગઈ છે તે તે પ્રમાણે સમજી લેવી. આ સ્થાનાંગનું વર્ણન થયું ॥ સૂ૦ ૪૭ ॥



अणुओगदारा, संखिज्जा वेढा, संखिज्जा सिलोगा, संखिज्जाओ  
 निज्जुत्तीओ, संखिज्जाओ संगहणीओ, संखिज्जाओ पडिवत्तीओ ।  
 से णं अंगद्वयाए चउत्थे अंगे, एगे सुयक्खंधे, एगे अज्झयणे,  
 एगे उद्देसणकाले, एगे समुद्देसणकाले, एगे चोयाले सयसहस्से-  
 पयग्गेणं, संखेज्जा अवखरा, अणंता गमा, अणंता पज्जवा,  
 परित्ता तसा, अणंता थावरा, सासयकडनिबद्धनिकाइयाजिणप-  
 णत्ता भावा आघविज्जंति, पणविज्जंति, परूविज्जंति,  
 दंसिज्जंति, निदंसिज्जंति उवदंसिज्जंति । से एवं आया, एवं  
 नाया, एवं विण्णाया, एवं चरणकरणपरूवणा आघविज्जइ ६ ।  
 से त्तं समवाए सू० ४८ ॥

छाया—अथ कोऽसौ समवायः ? समवाये खलु जीवाः समाश्रीयन्ते, अजीवाः  
 समाश्रीयन्ते, जीवाजीवाः समाश्रीयन्ते । स्वसमयः समाश्रीयते, परसमयः समा-  
 श्रीयते, स्वसमयपरसमयं समाश्रीयते, लोकः समाश्रीयते, अलोकः समाश्रीयते,  
 लोकालोकं समाश्रीयते । समवाये खलु एकादिकानाम् एकोत्तरिकाणाम् स्थान-  
 शतविवर्द्धितानां भावानां प्ररूपणा आख्यायते, द्वादशविधस्य च गणिपिटकस्य  
 पर्यवाग्रः समाश्रीयते । समवायस्य खलु परीता वाचनाः, संख्येयानि अनुयोगद्वा-  
 राणि, संख्येया वेष्टकाः, संख्येयाः श्लोकाः, संख्येया निर्युक्तयः, संख्येयाः  
 संग्रहण्यः, संख्येयाः प्रतिपत्तयः स खलु अङ्गार्थतया चतुर्थम् अङ्गम्, एकः श्रुत-  
 स्कन्धः, एकम् अध्ययनम्, एक उ शनकालः, एकः समुद्देशनकालः, एकं चतुश्चत्वा-  
 रिंशदधिकं शतसहस्रं पदाग्रेण, संख्येयान्यक्षराणि, अनन्ता गमाः, अनन्ताः पर्यवाः,  
 परीतास्त्रसाः, अनन्ताः स्थावराः, शाश्वतकृतनिबद्धनिकाचिता जिनप्रज्ञप्ता भावा  
 आख्यायन्ते, प्रज्ञाप्यन्ते, प्ररूप्यन्ते, दर्श्यन्ते, निदर्श्यन्ते उपदर्श्यन्ते । स एवमात्मा,  
 एवंज्ञाता एवं विज्ञाता, एवं चरणकरणप्ररूपणाआख्यायते ६ । स एष समवायः  
 ॥ सू० ४८ ॥

ટીકા—‘ સે કિં તં ’ ઇત્યાદિ ।

અથ કોઽસૌ સમવાયઃ ? સમવાયનમ્-જીવાજીવાદિભાવાનામ્ એકાદિવિભાગેન સમાવેશનં-સમવાયઃ, યદ્વા-સમવયન્તિ=સમવતરન્તિ-સંમિલન્તિ નાનાવિધા આત્માદયો ભાવા અભિધેયતયા યસ્મિન્સૌ સમવાયઃ, તત્કારણમાગમોઽપિ કારણે કાર્યોપચારાત્ સમવાય ઉચ્યતે, સ કઃ ? ઇતિ પ્રશ્નઃ । ઉત્તરયતિ—સમવાયે=સમવાયાક્રમુત્રે સ્વલુ જીવાઃ સમાશ્રીયન્તે=યથાઽવસ્થિતરૂપેણ નિરૂપ્યન્તે, અજીવાઃ સમાશ્રીયન્તે, જીવાજીવાઃ સમાશ્રીયન્તે, સ્વસમયઃ સમાશ્રીયતે, પરસમયઃ સમાશ્રીયતે, સ્વસમયપરસમયં સમાશ્રીયતે, લોકઃ સમાશ્રીયતે, અલોકઃ સમાશ્રીયતે, લોકાલોકં સમાશ્રીયતે । તથા-સમવાયે સ્વલુ એકાદિકાનામ્-

અવ ચૌથે અંગ સમવાયાંગ સૂત્રકી પ્રરૂપણા કરતે હૈં—

‘ સે કિં તં સમવાય ? ’ ઇત્યાદિ ।

શિષ્ય પૂછતા હૈ—હે ભદન્ત ! સમવાય કા કયા સ્વરૂપ હૈ ?

ઉત્તર—જીવ અજીવ આદિ પદાર્થોં કા એક આદિ વિભાગરૂપ સે જહાં સમાવેશ કિયા ગયા હૈ, અથવા પ્રતિપાદ્ય રૂપ સે જહાં નાનાવિધ આત્મા આદિ પદાર્થોં કા વર્ણન હુઆ હૈ વહ સમવાય હૈ । ઇસ વ્યુત્પત્તિ કે અનુસાર સમવાય નામ કે ઇસ ચતુર્થ અંગમેં જીવ કા સમાવેશ કિયા ગયા હૈ, અજીવ કા સમાવેશ કિયા ગયા હૈ, અર્થાત્ યહ સમજાયા ગયા હૈ કિ જીવ કયા હૈ ? તથા અજીવ કયા હૈ ? । ઇસ તરહ ઇસ ચતુર્થ અંગમેં જીવ ઓર અજીવ ઇન દોનોં કા ભી પ્રતિપાદ્યરૂપ સે સમાવેશ કિયા ગયા હૈ । સ્વસમય, પરસમય, એવં સ્વસમય-પરસમય, લોક, અલોક, તથા લોકાલોક, ઇન સબ કા ભી યહાં પર પ્રતિપાદ્ય કે રૂપમેં સમાવેશ હુઆ

હવે ચોથા અંગ સમવાયાંગ સૂત્રની પ્રરૂપણા કરે છે.

“ સે કિં તં સમવાય ? ” ઇત્યાદિ—

શિષ્ય પૂછે છે—હે ભદન્ત સમવાયનું શું સ્વરૂપ છે ?

ઉત્તર—જીવ અજીવ આદિ પદાર્થોનો એક આદિ વિભાગરૂપે જ્યાં સમાવેશ કરાયો છે. અથવા પ્રતિપાદ્યરૂપે જ્યાં વિવિધ આત્મા આદિ પદાર્થોનું વર્ણન થયું છે તે “ સમવાય ” છે. આ વ્યુત્પત્તિ પ્રમાણે સમવાય નામના આ ચોથા અંગમાં જીવનો સમાવેશ કરાયો છે, અજીવનો સમાવેશ કરાયો છે એટલે કે એ સમજાવ્યું છે કે જીવ શું છે ? તથા અજીવ શું છે ? આ રીતે આ ચોથા અંગમાં જીવ અને અજીવ એ બન્નેનો પણ પ્રતિપાદ્યરૂપે સમાવેશ કરવામાં આવ્યો છે. સ્વસમય, પરસમય, અને સ્વપરસમય, લોક, અલોક તથા લોકાલોક, એ બધાનો પણ તેમા પ્રતિપાદ્યરૂપે સમાવેશ નો ૭૪

एक आदिर्येषां तेषाम्, तथा-एकोत्तरिकाणाम्=क्रमेणैकैकसंख्यावृद्ध्या वृद्धिमुपग-  
तानाम्, क्रियत्पर्यन्तं वृद्धिमुपगतानाम्? इत्याह—स्थानशतवर्द्धितानाम्=स्थानश-  
तवृद्ध्या वृद्धिमुपगतानां भावानां=पदार्थानाम् प्ररूपणा आख्यायते=क्रियते, उप-  
लक्षणादनेकोत्तरिका वृद्धिरपि विज्ञेया । तत्र शतपर्यन्तमेकोत्तरिका वृद्धिस्तत ऊर्ध्व-  
मनेकोत्तरिका वृद्धिः । तथा-द्वादशविधस्य=द्वादशप्रकारस्य गणिपिटकस्य पर्यवाग्रः=  
पर्यायपरिमाणम्-अभिधेयादितद्वर्मसंख्यानम्, 'पल्लवाग्रः' इतिच्छायापक्षे तु  
पल्लवा इव पल्लवा अवयवास्तेषां परिमाणम् समाश्रीयते=यथाऽवस्थितरूपेण निरू-

है। तथा यहां एकादिक-एकार्थक कितनेक जीवादिक पदार्थों की तथा  
गणिपिटकरूप द्वादशांग की एकोत्तरिक वृद्धि द्वारा पर्यायों के परि-  
माण का निरूपण किया गया है। तात्पर्य कहने का यह है कि यहां एक,  
दो, तीन, चार आदि से लेकर सौ तक तथा कोटी कोटी तक के किन-  
नेक जीवादिक पदार्थों की एक, दो, तीन, चार, पांच आदि पर्यायों का  
क्रमशः एक एक पर्यायकी वृद्धिपूर्वक, तथा अनेक पर्यायोंकी वृद्धिपूर्वक  
विचार किया गया है। एक, दो, तीन आदि से लेकर सौ अंक तक के  
पदार्थों की पर्यायों का तो यहां क्रमशः एक २ पर्याय की वृद्धि करते  
हुए विचार किया गया है। तथा उनमें इससे आगे की पर्यायों का जो  
विचार किया गया है वह अनेक पर्यायों की वृद्धि करते हुए किया गया  
है। इसी तरह से गणिपिटक रूप द्वादशांग की पर्यायों के परिमाण के  
विषयमें भी जानना चाहिये। यह अर्थ “पल्लवगणे” की छाया-पर्यवाग्र

થયો છે. તથા અહીં એકાદિક-એકાર્થક કેટલાક જીવાદિક પદાર્થોની તથા  
ગણિપિટકરૂપ દ્વાદશાંગની એકોત્તરિક તથા અનેકોત્તરિક વૃદ્ધિ દ્વારા પર્યાયોના  
પરિમાણનું નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું છે. કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે અહીં  
એક, બે, ત્રણ, ચાર આદિથી માંડીને સો સુધી તથા કોટી કોટી સુધીના કેટ-  
લાક જીવાદિક પદાર્થોની એક, બે, ત્રણ, ચાર, પાંચ આદિ પર્યાયોનો ક્રમશઃ  
એક એક પર્યાયોની વૃદ્ધિપૂર્વક, તથા અનેક પર્યાયોની વૃદ્ધિપૂર્વક વિચાર કરવામાં  
આવ્યો છે. એક, બે, ત્રણ આદિથી લઈને સો અંક સુધીના પદાર્થોની પર્યા-  
યોનો તો અહીં ક્રમશઃ એક એક પર્યાયની વૃદ્ધિ કરતા કરતા વિચાર કરેલ  
છે. તથા તેમનામાં તેથી આગળની પર્યાયોનો જે વિચાર કરાયો છે તે અનેક  
પર્યાયોની વૃદ્ધિ કરતા કરતા કરાયો છે. આ પ્રકારે ગણિપિટકરૂપ દ્વાદશાંગની  
પર્યાયોના પરિમાણના વિષયમાં પણ બાણુનું બોધ એ. આ અર્થ “પલ્લવગો”.

પ્યતે । સમવાયસ્ય સ્વલુ પરીતા વાચનાઃ, 'પરીતા વાચનાઃ' ઇત્યારમ્બ્ય 'સંખ્યેયાઃ પ્રતિપત્તયઃ' ઇત્યન્તં પૂર્વવદ્ વ્યાખ્યેયમ્ । તથા સ સમવાયઃ સ્વલુ અજ્ઞાર્થતયા ચતુર્થમ્ અજ્ઞમ્ । તથા-અત્ર એકઃ શ્રુતસ્કન્ધઃ, એકમ્ અધ્યયનમ્, એક ઉદ્દેશનકાલઃ, એકઃ સમુદ્દેશનકાલઃ । તથા-એકં ચતુશ્ચત્વારિંશં શતસહસ્રમ્=ચતુશ્ચત્વારિંશત્સહસ્રાધિકમ્ એકં લક્ષં પદાનિ પદાગ્રેણ=પદપરિમાણેનાત્ર સૂત્રે વિજ્ઞેયાનિ । તથા-અત્ર સંખ્યેયાનિ અક્ષરાણિ સન્તિ । 'સંખ્યેયાનિ અક્ષરાણિ' ઇત્યારમ્બ્ય 'એવં ચરણકરણપ્રરૂપણા આખ્યાયતે' ઇત્યન્તં સર્વં પૂર્વવદ્ વ્યાખ્યેયમ્ । પ્રકૃતમુપસંહરન્નાહ-'સે તં સમવાય' સ એષ સમવાય ઇતિ ॥ સૂ૦ ૪૮ ॥

માનકર કિયા હૈ । પરન્તુ જબ इसकी छाया "पल्लवाग्र" होगी तब वहां अर्थ होगा अवयवों का परिमाण ।

इस समवायांग सूत्र की संख्याती वाचनाएँ हैं । यावत् शब्द से संख्यात अनुयोगद्वार हैं संख्यात वेष्टक हैं, संख्यात श्लोक हैं, संख्यात निर्युक्तियां हैं, संख्यात प्रतिपत्तियां हैं, इन वाक्यों का यहां ग्रहण हुआ है । इन सब का अर्थ पहले आचारांग के वर्णनमें सूत्र ४५ पैंतालीसमें हो चुका है । इस तरह यह अंगों की अपेक्षा चतुर्थ अंग है । इसमें एक अध्ययन है, एक श्रुतस्कंध है, एक उद्देशनकाल है, और एक ही समुद्देशनकाल है । इसमें पदों की संख्या एक लाख चवालीस ४४ हजार है । इसमें संख्यात अक्षर हैं । तथा अनंत गम हैं, अनंत पर्यायें हैं, असंख्यात त्रस हैं, अनंत स्थावर हैं । ये सब द्रव्यार्थिकनय की अपेक्षा से शाश्वत हैं, पर्यायार्थिकनय की अपेक्षा से कृत-अशाश्वत हैं, सूत्र में

ની છાયા-"પર્યવાગ્ર" માનીને કર્યો છે. પણ જો તે ની છાયા "પલ્લવાગ્ર" થાય તો ત્યાં અવયવોનું પરિમાણ એવો અર્થ થશે."

આ સમવાયાંગ સૂત્રની સંખ્યાત વાચનાઓ છે, યાવત્ શબ્દથી સંખ્યાત અનુયોગદ્વાર છે સંખ્યાત વેષ્ટક છે, સંખ્યાત શ્લોક છે, સંખ્યાત નિર્યુક્તિઓ છે, સંખ્યાત પ્રતિપત્તિઓ છે, જે વાક્યોને અહીં વાપર્યા છે તે બધાનો અર્થ આગળ આચારાંગના વર્ણનમાં આપી દેવામાં આવ્યો છે. આ રીતે તે અંગોની અપેક્ષાએ થોડું અંગ છે. તેમાં એક અધ્યયન છે, એક શ્રુતસ્કંધ છે, એક ઉદ્દેશનકાલ છે, અને એક જ સમુદ્દેશનકાલ છે. તેમાં પદોની સંખ્યા એક લાખ ચુ માળીસ હજાર (૧૪૪૦૦૦) છે. તેમાં સંખ્યાત અક્ષર છે. તથા અનંત ગમ છે અનંત પર્યાયો છે, અસંખ્યાત ત્રસ છે, અનંત સ્થાવર છે. એ બધા દ્રવ્યાર્થિક નયની અપેક્ષાએ શાશ્વત છે, પર્યાયાર્થિક નયની અપેક્ષાએ

અથ પશ્ચમાઙ્ગસ્વરૂપમાહ—

મૂલમ્—સે કિં તં વિવાહે ? વિવાહે ણં જીવા વિયાહિજ્જંતિ, અજીવા વિયાહિજ્જંતિ, જીવાજીવા વિયાહિજ્જંતિ, સસમણ વિયાહિજ્જઈ, પરસમણ વિયાહિજ્જઈ, સસમયપરસમણ વિયાહિજ્જઈ, લોણ વિયાહિજ્જઈ, અલોણ વિયાહિજ્જઈ, લોયાલોણ વિયાહિજ્જઈ । વિવાહસ્સ ણં પરિત્તા વાયણા, સંખિજ્જા અણુઓગદારા, સંખિજ્જા વેઢા, સંખિજ્જા સિલોગા, સંખિજ્જાઓ નિજ્જુત્તીઓ, સંખિજ્જાઓ સંગહણીઓ, સંખિજ્જાઓ પઢિવત્તીઓ । સે ણં અંગટ્ઠયાણ પંચમે અંગે, એગે સુયક્ખંધે, એગે સાહરેગે અજ્ઞયણસણ, દસ ઉદેસગસહસ્સાઈં દસ સમુદેસગસહસ્સાઈં, છત્તીસં વાગરણસહસ્સાઈં, દો લક્ખા અટ્ઠાસીઈં પયસહસ્સાઈં પયગ્ગેણં, સંખિજ્જા અક્ખરા, અણંતા ગમા, અણંતા ષજ્જવા, પરિત્તા તસા, અણંતા થાવરા, સાસયકહનિવહ્છણિકાઈયા જિણપણત્તા ભાવા આઘવિજ્જંતિ પણવિજ્જંતિ પરૂવિજ્જંતિ દંસિજ્જંતિ નિદંસિજ્જંતિ ઉવદંસિજ્જંતિ । સે એવં આયા, એવં ણાયા, એવં વિણ્ણાયા । એવં ચરણકરણપરૂવણા આઘવિજ્જઈ ૬ । સે સં વિવાહે ॥ સૂ૦ ૪૯ ॥

ગ્રથિત હોને સે નિબદ્ધ હૈં, નિર્યુક્તિ હેતુ ઉદાહરણ આદિ સે પ્રતિષ્ઠિત હોને સે નિકાચિત હૈં, યે સવ યહ્ઠાં સામાન્યરૂપ સે કહે ગયે હૈં । ઇન સમસ્ત પદોં કા અર્થ આચારાંગ કે વર્ણન મેં વર્ણિત હો ચુકા હૈ । ઇસ તરહ ઇસ સૂત્ર મેં ચરણ કરણ કી પ્રરૂપણા હુઈ હૈ । યહ સમવાયાઙ્ગ કા વર્ણન હુઆ ॥ સૂ૦ ૪૮ ॥

અવ પાંચવેં અંગ વ્યાખ્યાપ્રજ્ઞપ્તિ કા વર્ણન કિયા જાતા હૈ—

કૃત—અશાશ્વત છે, સૂત્રમાં ગ્રથિત હોવાથી નિબદ્ધ છે, નિર્યુક્તિ હેતુ ઉદાહરણ આદિથી પ્રતિષ્ઠિત હોવાથી નિકાચિત છે, આ બધા અહીં સામાન્યરૂપે કહેવાયેલ છે. એ બધાં પદોનો અર્થ આચારાંગના વર્ણનમાં વર્ણિત થઈ ગયો છે. આ રીતે આ સૂત્રમાં ચરણકરણની પ્રરૂપણા થઈ છે. આ સમવાયાંગ સૂત્રનું વર્ણન થયું ॥ સૂ. ૪૮ ॥

હવે પાંચમાં અંગ વ્યાખ્યાપ્રજ્ઞપ્તિ નું વર્ણન કરવામાં આવે છે—

છાયા—અથ કા સા વ્યાખ્યા ? વ્યાખ્યાયાં સ્વલુ જીવા વ્યાખ્યાયન્તે, અજીવા વ્યાખ્યાયન્તે, જીવાજીવા વ્યાખ્યાયન્તે, સ્વસમયો વ્યાખ્યાયતે, પરસ-સમયો વ્યાખ્યાયતે, સ્વસમયપરસમયં વ્યાખ્યાયતે, લોકો વ્યાખ્યાયતે, અલોકો વ્યાખ્યાયતે, લોકાલોકં વ્યાખ્યાયતે । વ્યાખ્યાયાઃ સ્વલુ પરીતા વાચનાઃ, સંખ્યેયાનિ અનુયોગદ્વારાણિ, સંખ્યેયા વેષ્ટકાઃ, સંખ્યેયા શ્લોકાઃ, સંખ્યેયાઃ નિર્યુક્તયઃ, સંખ્યેયાઃ સંગ્રહણ્યઃ, સંખ્યેયાઃ પ્રતિપત્તયઃ, સા સ્વલુ અજ્ઞાર્થ-તયા પશ્ચમમજ્ઞમ્, એકઃ શ્રુતસ્કન્ધઃ, એકં સાતિરેકમધ્યયનશતં, દશ ઉદ્દેશકસહ-સ્રાણિ, દશ સમુદ્દેશકસહસ્રાણિ, ષટ્ત્રિંશત્ વ્યાકરણસહસ્રાણિ, દ્વે લક્ષે અષ્ટાશીતિઃ પદસહસ્રાણિ પદાગ્રેણ, સંખ્યેયાનિ અક્ષરાણિ, અનન્તા ગમાઃ, અનન્તાઃ પર્યવાઃ, પરીતાસ્ત્રસાઃ, અનન્તાઃ સ્થાવરાઃ, શાશ્વતકૃતનિબદ્ધનિકાચિતાઃ જિનપ્રજ્ઞસા ભાવા આખ્યાયન્તે, પ્રજ્ઞાપ્યન્તે, પ્રરૂપ્યન્તે, દર્શ્યન્તે નિદર્શ્યન્તે, ઉપદર્શ્યન્તે । સ એવમાત્મા, એવં જ્ઞાતા, એવં વિજ્ઞાતા, એવં ચરણકરણપ્રરૂપણા આખ્યાયતે । સૈષા વ્યાખ્યા ॥મૂ૦૪૯॥

ટીકા—‘ સે કિં તં ’ ઇત્યાદિ ।

અથ કા સા વ્યાખ્યા ઇતિ પ્રશ્નઃ । ‘ વિચાહે ’ ઇતિ પુંલિંગનિર્દેશઃ પ્રાકૃતત્વાત્ । વ્યાખ્યા=વ્યાખ્યાપ્રજ્ઞાતિઃ, નામૈકદેશેન નામગ્રહણાત્ । ઉત્તરયતિ—વ્યાખ્યાયાં—વ્યાખ્યાયન્તેઽર્થા યસ્યાં સા વ્યાખ્યા તસ્યાં વ્યાખ્યાપ્રજ્ઞાપ્ત્યાં=ભગવત્યામિતિ યાવત્, સ્વલુ=નિશ્ચયેન જીવા વ્યાખ્યાયન્તે=સવિસ્તારં પ્રતિપાદ્યન્તે । અજીવા વ્યાખ્યાયન્તે । જીવાજીવા વ્યાખ્યાયન્તે । સ્વસમયો વ્યાખ્યાયતે । પરસમયો વ્યાખ્યાયતે । સ્વસ-મયપરસમયં વ્યાખ્યાયતે । લોકો વ્યાખ્યાયતે । અલોકો વ્યાખ્યાયતે । લોકાલોકં

‘ સે કિં તં વિચાહે૦ ’ ઇત્યાદિ ।

શિષ્ય પ્રશ્ન—હે ભદ્રન્ત ! વ્યાખ્યા પ્રજ્ઞાતિ કા કયા સ્વરૂપ હૈ ? ઉત્તર—હસ વ્યાખ્યાપ્રજ્ઞાતિ મેં જીવ કા વ્યાખ્યાન કિયા ગયા હૈ, અજીવ કા વ્યાખ્યાન કિયા ગયા હૈ, એવં જીવ ઔર અજીવ, હન દોનોં કા વ્યાખ્યાન કિયા ગયા હૈ । તથા સ્વસમય, પરસમય ઔર સ્વપરસમય કા, તથા લોક અલોક ઔર લોકાલોક કા ભી વ્યાખ્યાન કિયા ગયા હૈ ।

“ સે કિં તં વિચાહે૦ ” ઇત્યાદિ—

શિષ્યનો પ્રશ્ન—હે ભદ્રન્ત ! ‘ વ્યાખ્યા પ્રજ્ઞાતિ ’ નું શું સ્વરૂપ છે ?

ઉત્તર—આ વ્યાખ્યા પ્રજ્ઞાતિમાં જીવનું વ્યાખ્યાન કરાયું છે, અજીવનું વ્યાખ્યાન કરાયું છે. અને જીવ તથા અજીવ બન્નેનું વ્યાખ્યાન કરાયું છે. તથા સ્વસમય, પરસમય અને સ્વપરસમયનું, તથા લોક, અલોક અને લોકાલોકનું પણ વ્યાખ્યાન કરાયું છે.



વ્યાખ્યાયતે । વ્યાખ્યાયાઃ સ્વલુ પરીતાઃ=સંખ્યાતાવાચનાઃ, સંખ્યેયાનિ અનુયો-  
ગદ્વારાણિ, સંખ્યેયા વેષ્ટકાઃ, સંખ્યેયાઃ શ્લોકાઃ, સંખ્યેયા નિર્યુક્તયઃ, સંખ્યેયાઃ  
સંગ્રહણ્યઃ, સંખ્યેયાઃ પ્રતિપત્તયઃ । સા સ્વલુ અજ્ઞાર્થતયા પશ્ચમમજ્ઞમ્ । અત્ર એકઃ  
શ્રુતસ્કન્ધઃ, એકં સાતિરેકમધ્યયનશતમ્—કિંચિદધિકાનિ એકશતમધ્યયનાનિ, દશ  
ઉદ્દેશકસહસ્રાણિ, દશ સમુદ્દેશકસહસ્રાણિ, ષટ્ત્રિંશદ્ વ્યાકરણસહસ્રાણિ=ષટ્ત્રિ-  
શત્સહસ્રાણિ વ્યાકરણાનિ, દ્વે લક્ષે અષ્ટાશીતિઃ પદસહસ્રાણિ=અષ્ટાશીતિસહસ્રા-  
ધિકદ્વિલક્ષપરિમિતાનિ પદાનિ પદાગ્રેણ=પદપરિમાણેન કથિતાનિ । તથાઽત્ર-  
સંખ્યેયાનિ અક્ષરાણિ, અનન્તા ગમાઃ, અનન્તાઃ પર્યવાઃ=પર્યાયાઃ, પરીતાઃ=અસં-  
ખ્યાતાઃ ત્રસાઃ અનન્તાઃ સ્થાવરાશ્ચ સન્તિ । એતે ઉપરિનિર્દિષ્ટાઃ શાશ્વત-કૃત-નિબદ્ધ-  
નિકાચિતા જિનપ્રજ્ઞસા ભાવા અત્ર આખ્યાયન્તે, પ્રજ્ઞાપ્યન્તે, પ્રરૂપ્યન્તે, દર્શ્યન્તે,  
નિદર્શ્યન્તે, ઉપદર્શ્યન્તે । ય એતાં વ્યાખ્યાં યથાવદધોતે, સ એવમ્ આત્મસ્વરૂપો

इस पंचम अंगरूप व्याख्याप्रज्ञप्ति की वाचनाएँ संख्यात हैं । संख्यात  
अनुयोय द्वार हैं, संख्यात वेष्टक हैं । संख्यात श्लोक हैं । संख्यात निर्यु-  
क्तियां हैं । संख्यात संग्रहणियां हैं । संख्यात प्रतिपत्तियां हैं । यह व्या-  
ख्याप्रज्ञप्ति अंगों की अपेक्षा पांचमा अंग है । इसमें एक श्रुतस्कंध है ।  
इसमें कुछ अधिक एक सौ अध्ययन हैं । दशहजार उद्देशक हैं । छत्तीस  
हजार प्रश्नोत्तर हैं । दो लाख अठासी हजार पद हैं । संख्यात अक्षर हैं ।  
अनंत गम हैं । अनंत पर्याये हैं । असंख्यात त्रस हैं । अनंत स्थावर हैं ।  
ये त्रसादि पदार्थ जो ऊपर बतलाये गये हैं वे शाश्वत, कृत, निबद्ध एवं  
निकाचित हैं इसमें जिनप्रज्ञप्त समस्त भावों का आख्यान हुआ है,  
प्रज्ञापन हुआ है, प्ररूपण हुआ है, दर्शन हुआ है, निदर्शन हुआ है

આ પાંચમાં અંગરૂપ વ્યાખ્યા પ્રજ્ઞપ્તિની વાચનાઓ સંખ્યાત છે સંખ્યાત  
અનુયોગ દ્વાર છે, સંખ્યાત વેષ્ટક છે, સંખ્યાત શ્લોક છે. સંખ્યાત નિર્યુક્તિઓ  
છે, સંખ્યાત સંગ્રહણીઓ છે, સંખ્યાત પ્રતિપત્તિઓ છે.

આ વ્યાખ્યા પ્રજ્ઞપ્તિ અંગોની અપેક્ષાએ પાંચમું અંગ છે. તેમાં એક  
શ્રુતસ્કંધ છે. તેમાં એકસોથી થોડાં વધારે અધ્યયન છે. દશ હજાર ઉદ્દેશક છે.  
છત્રીસ હજાર પ્રશ્નોત્તર છે. બે લાખ અઠ્યાસી હજાર પદ છે, સંખ્યાત અક્ષર  
છે. અનંત ગમ છે. અનંત પર્યાયો છે. અસંખ્યાત ત્રસ છે. અનંત સ્થાવર છે.  
તે ત્રસાદિ પદાર્થો જે ઉપર બતાવવામાં આવ્યા છે તેઓ શાશ્વત, કૃત, નિબદ્ધ  
અને નિકાચિત છે. તેમાં જિનપ્રજ્ઞપ્ત સમસ્ત ભાવોનું આખ્યાન થયું છે, પ્રજ્ઞાપન  
થયું છે, પ્રરૂપણ થયું છે, દર્શન કરાયું છે, નિદર્શન કરાયું છે, તથા ઉપદર્શન

भवति, एव ज्ञाता भवति, एव विज्ञाता भवति । एवम्=उपर्युक्तप्रकारेण चरण-  
करणप्ररूपणाऽत्र आख्यायते ६ । ‘परीता वाचनाः’ इत्याभ्य ‘चरण करणप्ररूपणा  
आख्यायते’ इत्यन्तानां पदानां व्याख्या आचाराङ्गस्वरूपनिरूपणावसरे कृता, ततो  
ऽवसेया । प्रकृतमुपसंहरन्नाह—‘से तं विवाहे’ सैषा व्याख्या इति ॥ सू० ४९ ॥

अथ षष्ठाङ्गज्ञाताधर्मकथास्वरूपमाह—

मूलम्—से किं तं नायाधम्मकहाओ ? नायाधम्मकहासु णं  
नायाणं नगराईं १, उज्जाणाईं २, चेइयाईं ३, वणसंडा ४, समो-  
सरणाईं ५, रायाणो ६, अम्मापियरो ७, धम्मायरिया ८, धम्म-  
कहाओ ९, इहलोइयपरलोइया इद्ढिविसेसा १०, भोगपरिच्चा-  
या ११, पव्वज्जाओ १२, परिआया १३, सुयपरिग्गहा १४, तवोव-  
हाणाईं १५, संलेहणाओ १६, भत्त पच्चक्खाणाईं १७, पाओवगम-

तथा उपदर्शन हुआ है । जो व्यक्ति इस अंग का अच्छी तरह से अध्य-  
यन करता है वह प्राणी आत्मस्वरूप हो जाता है, ज्ञाता हो जाता है,  
एवं विज्ञाता हो जाता है । इस तरह से इस अंगमें उपर्युक्त प्रकार से  
चरण और करण की प्ररूपणा आख्यात हुई है, प्रज्ञापित हुई है, प्ररूपित  
हुई है, दर्शित हुई है निदर्शित हुई है, उपदर्शित हुई है । इस प्रकार यह  
व्याख्याप्रज्ञाति अंग का स्वरूप है ।—“परीता वाचनाः” इन पदों से लेकर  
“चरण करण प्ररूपणा आख्यायते” यहां तक के ये जितने भी पद हैं  
उन सब की व्याख्या आचारांग के स्वरूप निरूपण करते समय सूत्र  
४५ में की जा चुकी है अतः वहां से जान लेना चाहिये ॥ सू० ४९ ॥

થયું છે. જે વ્યક્તિ આ અંગનું સારી રીતે અધ્યયન કરે છે તે વ્યક્તિ આત્મ-  
સ્વરૂપ થઈ જાય છે, જ્ઞાતા થાય છે અને વિજ્ઞાતા થાય છે. આ રીતે આ અંગમાં  
ઉપર પ્રમાણે ચરણ અને કરણની પ્રરૂપણા થઈ છે, પ્રજ્ઞાપિત થઈ છે, પ્રરૂપિત  
થઈ છે, દર્શિત કરાઈ છે, નિદર્શિત થઈ છે, ઉપદર્શિત થઈ છે આ પ્રમાણે આ  
વ્યાખ્યા પ્રજ્ઞાતિ અંગનું સ્વરૂપ છે. “પરીતાવાચનાઃ” એ પદોથી લઈને “ચરણ  
કરણ પ્રરૂપણા આખ્યાયતે” સુધીના જેટલાં પદ છે તે બધાની વ્યાખ્યા આચાર-  
ાંગનું સ્વરૂપ નિરૂપણ કરતી વખતે ૪૫માં સૂત્રમાં કરી નાખેલ છે, તે  
ત્યાંથી સમજીલેવી. ॥ સૂ० ૪૯ ॥

णाइं १८, देवलोगगमणाइं १९, सुकुलपच्चायाईओ २०, पुणवो-  
 हिलाभा २१, अंतकिरियाओ २२, य आघविज्जंति । दस धम्मक-  
 हाणं वग्गा, तत्थ णं एगमेगाए धम्मकहाए पंच पंच अक्खा-  
 इयासयाइं, एगमेगाए अक्खाइयाए पंच पंच उवक्खाइयासयाइं,  
 एगमेगाए उवक्खाइयाए पंच पंच अक्खाइय-उवक्खाइया सयाइं,  
 एवमेव सपुव्वावरेणं अद्ध्युट्ठाओ कहाणगकोडीओ हवंतीति स म-  
 क्खायं । नायाधम्मकहाणं परित्ता वायणा, संखिज्जा अणुओगदारा,  
 संखिज्जा वेढा, संखिज्जा सिलोगा, संखिज्जाओ निज्जुत्तीओ,  
 संखिज्जाओ संगहणीओ, संखिज्जाओ पडिवत्तीओ । से णं  
 अंगट्ठयाए छट्ठे अंगे, दो सुयक्खंधा, एगूणवीसं अज्झयणा,  
 एगूणवीसं उद्देसणकाला, एगूणवीसं समुद्देसणकाला, संखेज्जाइं  
 पयसहस्साइं पयग्गेणं, संखेज्जा अक्खरा, अणंता गमा, अणंता,  
 पज्जवा, परित्ता तसा, अणंता थावरा, सासयकडनिबद्धनिकाइया  
 जिणपणत्ता भावा आघविज्जंति, पणविज्जंति, परूविज्जंति, दंसि-  
 ज्जंति, णिदंसिज्जंति उवदंसिज्जंति, से एवं आया, एवं णाया,  
 एवं विण्णाया, एवं चरणकरणपरूवणा आघविज्जइ ६ । से तं  
 नायाधम्मकहाओ ॥ सू० ५० ॥

छाया—अथ कास्ता ज्ञाताधर्मकथाः ? ज्ञाताधर्मकथासु खलु ज्ञातानां नग-  
 राणि १, उद्यानानि २, चैत्यानि ३, वनपण्डाः ४, समवसरणानि ५, राजानः ६,  
 मातापितरौ ७, धर्माचार्याः ८, धर्मकथाः ९, ऐहलौकिकपारलौकिका ऋद्धि-  
 विशेषाः १०, भोगपरित्यागाः ११, प्रव्रज्याः १२, पर्यायाः १३, श्रुतपरिग्रहाः  
 १४, तपउपधाननि १५, संलेखनाः १६, भक्तप्रत्याख्यानानि १७, पादपोषगम-

નાનિ ૧૮, દેવલોકગમનાનિ ૧૯, સુકુલપ્રત્યાયાતયઃ ૨૦, પુનર્વૌધિલાભાઃ ૨૧, અન્તક્રિયાશ્ચ ૨૨, આખ્યાયન્તે । દશ ધર્મકથાનાં વર્ગાઃ તત્ર સ્વલુ એકૈકસ્યાં ધર્મ-કથાયાં પશ્ચ પશ્ચ આખ્યાયિકાશતાનિ, એકૈકસ્યામ્ આખ્યાયિકાયાં પશ્ચ પશ્ચ ઉપા-ખ્યાયિકાશતાનિ, એકૈકસ્યામુપાખ્યાયિકાયાં પશ્ચ પશ્ચ આખ્યાયિકોપાખ્યાયિકા-શતાનિ, એવમેવ સપૂર્વાપરેણ અર્ધચતુર્થા આખ્યાયિકાકોઢ્યો ભવન્તીતિસમાખ્યાતમ્ । જ્ઞાતાધર્મકથાનાં સ્વલુ પરીતા વાચનાઃ, સંખ્યેયાનિ અનુયોગદ્વારાણિ સંખ્યેયાઃ વેષ્ટકાઃ સંખ્યેયાઃ શ્લોકાઃ સંખ્યેયા નિર્યુક્તયઃ સંખ્યેયાઃ સંગ્રહણ્યઃ, સંખ્યેયાઃ પ્રતિપત્તયઃ । તાઃ સ્વલુ અજ્ઞાર્થતયા ષષ્ઠમજ્ઞમ્, દ્વૌ શ્રુતસ્કન્ધૌ, એકોનવિંશતિરધ્ય-યનાનિ, એકોનવિંશતિરુદ્દેશનકાલાઃ, એકોનવિંશતિઃ સમુદ્દેશનકાલાઃ, સંખ્યેયાનિ પદસહસ્રાણિ પદાગ્રેણ, સંખ્યેયાનિ અક્ષરાણિ, અનન્તા ગમાઃ, અનન્તાઃ પર્યવાઃ, પરીતાસ્ત્રસાઃ, અનન્તાઃ સ્થાવરાઃ, શાશ્વતકૃતનિવદ્વનિકાચિતા જિનપ્રજ્ઞા ભાવા આખ્યાયન્તે, પ્રજ્ઞાપ્યન્તે, પ્રરૂપ્યન્તે, દર્શ્યન્તે, નિદર્શ્યન્તે, ઉપદર્શ્યન્તે । સ એવમ્ આત્મા, એવં જ્ઞાતા, એવં વિજ્ઞાતા, એવં ચરણકરણપ્રરૂપણા આખ્યાયતે ૬ । તા એતા જ્ઞાતાધર્મકથાઃ ॥ સૂ૦ ૫૦ ॥

ટીકા—‘ સે કિં તં ’ ઇત્યાદિ ।

અથ કાસ્તા જ્ઞાતાધર્મકથાઃ—પ્રવચનસ્ય ષષ્ઠમજ્ઞં જ્ઞાતાધર્મકથાજ્ઞસૂત્રં કિંવિધમ્ ? ઇતિ પ્રશ્નઃ । ઉત્તરયતિ—જ્ઞાતાધર્મકથાસુ જ્ઞાતાનિ=ઉદાહરણાનિ, તત્પ્રધાના ધર્મકથાઃ, અથવા—પ્રથમશ્રુતસ્કન્ધો જ્ઞાતાભિધાયકત્વાત્ જ્ઞાતાનિ, દ્વિતીયસ્તુ ધર્મકથાઃ, જ્ઞાતાનિ

‘ સે કિં તં જ્ઞાતા ધર્મકથાઃ ? ’ ઇત્યાદિ ।

શિષ્ય પ્રશ્ન—હે ભદ્રન્ત ! જ્ઞાતા ધર્મકથા નામક છઠવેં અંગ કા કયા સ્વરૂપ હૈં ? ઉત્તર—જ્ઞાતા ધર્મકથા નામ કે છઠવેં અંગ કા સ્વરૂપ હિસ પ્રકાર હૈં—જ્ઞાતા નામ ઉદાહરણોં કા હૈં । જિસમેં ઉદાહરણ પ્રધાન ધર્મ-કથાઈ હૈં વહ જ્ઞાતાધર્મ કથા હૈં । અથવા—હિસકે દો શ્રુતસ્કંધ હૈં । હનમેં પ્રથમ શ્રુતસ્કંધ કા નામ જ્ઞાતા હૈં ઓર દૂસરે કા નામ ધર્મકથા હૈં । હિસ

“ સે કિં તં જ્ઞાતા ધર્મકથાઃ ? ” ઇત્યાદિ—

શિષ્યનો પ્રશ્ન—હે ભદ્રન્ત ! જ્ઞાતા ધર્મકથા નામના છઠાં અંગનાું શું સ્વરૂપ છે ?

ઉત્તર—જ્ઞાતાધર્મકથા નામના છઠાં અંગનાું સ્વરૂપ આ પ્રમાણે છે—

જ્ઞાતા નામ ઉદાહરણનાું છે. જેમાં ઉદાહરણ પ્રધાન ધર્મકથાઓ છે તે જ્ઞાતાધર્મકથા છે. અથવા તેના જે શ્રુતસ્કંધ છે તેમના પહેલા શ્રુતસ્કંધનાું નામ જ્ઞાતા છે, અને બીજાનાું નામ ધર્મકથા છે. આ રીતે એ બન્ને મળવાથી

ચ ધર્મકથાશ્ચ જ્ઞાતાધર્મકથાઃ, ' જ્ઞાતા ' इत्यत्राकारागम आर्षत्वात्, तासु खलु ज्ञा-  
 तानाम्=उदाहरणत्वेनोपन्यस्तानां मेघकुमारादीनां नगराणि १, उद्यानानि=परिवृ-  
 तवस्त्राभरणाः गृहीतासनाहारा जना यत्र क्रीडार्थमुद्यान्ति=गच्छन्ति तानि उद्या-  
 नानि २, चैत्यानि=षड्ऋतुपुष्पफलसमृद्धानि वनानि ३, वनषण्डाः=एकजातीयवृ-  
 क्षयुक्तानि उद्यानानि, नानाजातीयवृक्षसम्पन्नानि वा ४, समवसरणानि ५, राजानः  
 ६, मातापितरौ ७, धर्माचार्याः ८, धर्मकथाः ९, ऐहलौकिकपारलौकिका ऋद्धि-  
 विशेषाः=ऐहलौकिकपारलौकिकसंपदः १०, भोगपरित्यागाः ११, प्रव्रज्याः १२,  
 पर्यायाः=नवीनप्रव्रज्याप्रदानलक्षणाः पूर्वावस्थात्यागेनावस्थान्तरगमनलक्षणा वा  
 १३, श्रुतपरिग्रहाः=श्रुताध्ययनानि १४, तपउपधानानि=उत्कृष्ट तपः करणानि १५,

तरહ इन दोनों के मिलने से इसका “ ज्ञाता धर्मकथा ” यह नाम पड़  
 गया है । इस ज्ञाता धर्मकथा नामके छठवे अंग में उदाहरणरूप से  
 उपन्यस्त हुए मेघकुमार आदि के नगरों का १, उद्यानों का-वस्त्र एवं  
 आभरण आदि से सुसज्जित होकर तथा भोजन आदि सामग्री लेकर  
 लोग जिसमें क्रीडा करने के लिये जाते हैं उस स्थान का नाम उद्यान  
 है, २, वनोंका-अर्थात् छहों ऋतुओं में पुष्प एवं फल से समृद्ध हुए  
 वनों का ३, वनषण्डों का-एक जातीय वृक्षों से युक्त, अथवा नाना  
 जातीय वृक्षों के युक्त हुए बगीचों का ४, राजाओं का ५, मातापिता का ६,  
 समवसरण का ७ धर्माचार्यों का ८, धर्मकथाओं का ९, ऐहलौकिक तथा  
 पारलौकिक ऋद्धि विशेषों का १०, भागों के परित्याग का ११, प्रव्रज्या  
 का १२, श्रुतपरिग्रह-श्रुताध्ययन का १३, उत्कृष्ट तप के विधानों का १४,

તેનું નામ “ જ્ઞાતાધર્મકથા ” પડયું છે. આ જ્ઞાતાધર્મકથા નામના છઠ્ઠા અંગમાં  
 ઉદાહરણરૂપે ઉપન્યસ્ત થયેલ મેઘકુમાર આદિના નગરોનું (૧), ઉદ્યાનોનું-વસ્ત્ર  
 અને આભૂષણ આદિથી સુસજ્જિત થઈને તથા ભોજન આદિ સામગ્રી લઈને  
 લોકોં જ્યાં ક્રીડા કરવાને માટે જાય છે તે સ્થાનનું નામ ઉદ્યાન છે (૨).  
 ચૈત્યોનું. એટલે કે છએ ઋતુઓનાં પુષ્પ અને ફળથી સમૃદ્ધ વનોનું (૩),  
 વનષંડોનું એક જ જાતનાં વૃક્ષોવાળાં, અથવા વિવિધ જાતનાં વૃક્ષોવાળાં બગી-  
 ચાઓનું (૪); રાજાઓનું (૫), માતાપિતાનું (૬); સમવસરણનું (૭); ધર્મા-  
 ચાર્યોનું (૮) ધર્મકથાઓનું (૯); આ લોક તથા પરલોકની ઋદ્ધિ વિશેષોનું  
 (૧૦); ભોગોનાં પરિત્યાગનું (૧૧); પ્રવ્રજ્યાનું (૧૨) શ્રુતરિગ્રહ-શ્રુતાધ્યયનનું (૧૩)  
 ઉત્કૃષ્ટ તપના વિધાનોનું (૧૪); નવીન દીક્ષા પર્યાયનું અથવા પૂર્વ અવસ્થાના  
 ત્યાગપૂર્વક ઉત્તર અવસ્થાને ગ્રહણ કરવારૂપ, પર્યાયનું (૧૫); સંલેખનાનું કાય

સંલેખનાઃ=શરીરકષાયાદિશોષણલક્ષણાઃ ૧૬, ભક્તપ્રત્યાખ્યાનાનિ=મરણવિશેષાઃ ૧૭, પાદપોપગમનાનિ-પાદપસ્યેવ=તરોરિવ ઉપગમનાનિ નિશ્ચલતયાઽવસ્થાનાનિ -યથાપતિતચ્છિન્નતરુશાસ્વાવન્નિશ્ચલાનાં ચતુર્વિધાહારપરિત્યાગપૂર્વકમરણાનીત્યર્થઃ ૧૮, દેવલોકગમનાનિ ૧૯, સુકુલપ્રત્યાયાતયઃ=ઉત્તમકુલજન્માનિ ૨૦, પુનર્બોધિ-લાભાઃ=જિનપ્રણીતધર્મપ્રાપ્તિરૂપાઃ ૨૧, અન્તક્રિયાઃ=સકલકર્મક્ષયલક્ષણા-૨૨ શ્વેતિ આખ્યાયન્તે । તથા-‘દસ ધમ્મકહાણં વગ્ગા’ ઇતિ, ધર્મકથાનાં=ધર્મકથાખ્યે દ્વિ-તીયે શ્રુતસ્કન્ધે-અહિંસાદિરૂપધર્મકથાનાં દશ=દશસંખ્યકાઃ વર્ગાઃ=સમૂહાઃ સન્તિ । અત્ર હિ-અર્થાધિકારસમૂહાત્મકાનિ અધ્યયનાન્યેવ વર્ગા વિજ્ઞેયાઃ, તત્ર ચલુ એકૈક-સ્યાં ધર્મકથાયાં પશ્ચ પશ્ચ આખ્યાયિકાશતાનિ=કથાશતાનિ સન્તિ । તથા એકૈક-

નવીન દીક્ષાપર્યાય કા અથવા પૂર્વ અવસ્થા કે ત્યાગપૂર્વક ઉત્તર અવસ્થા કે ગ્રહણ કરને રૂપ પર્યાય કા ૧૬, સંલેખના કા-કાચ ઓર કષાયોં કો કૃશ કરને રૂપ સંલેખના કા ૧૬, ભક્ત પ્રત્યાખ્યાન કા ૧૭, પાદપોપગમન સંથારે કા-જિસમેં ગિરે હુએ વૃક્ષ કી તરહ પ્રાણી નિશ્ચલ રહતા હૈ ઓર ચારોં પ્રકાર કે આહાર કા પરિત્યાગ કર દેતા હૈ એસે મરણ કા ૧૮, દેવલોક મેં ઉત્પન્ન હોને કા ૧૯, ઉત્તમકુલ મેં જન્મ લેને કા ૨૦, જિન-પ્રણીત ધર્મ કી પ્રાપ્તિરૂપ બોધિલાભ કા ૨૧, તથા સકલકર્મક્ષયરૂપ અન્તક્રિયા ૨૨ કા વર્ણન કિયા ગયા હૈ ।

યહાં જો અન્ત મેં ધર્મકથા નામક દ્વિતીય શ્રુતસ્કન્ધ મેં અહિંસાદિ રૂપ ધર્મકથાઓં કે દસ વર્ગ, અર્થાત્ દસ સમૂહ હૈ । અર્થાધિકાર સમૂહરૂપ અધ્યયન હી વર્ગ કહે જાતે હૈ । ઇન ધર્મકથાઓં કે એક ૨ ધર્મકથા મેં પાંચસૌ પાંચસૌ આખ્યાયિકાયે-કથાયે હૈ એક ૨ આખ્યાયિકા મેં પાંચસૌ પાંચસૌ ઉપાખ્યાયિકાયે-અવાન્તર કથાયે હૈ । એક એક ઉપાખ્યાયિકા

અને કષાયોનો ક્ષય કરવારૂપ સંલેખનાતું (૧૬); ભક્ત પ્રત્યાખ્યાનતું (૧૭); પાદપોપગમન સંથારાતું-જેમાં પડેલાં વૃક્ષની જેમ પ્રાણી નિશ્ચલ રહે છે અને ચારે પ્રકારના આહારનો પરિત્યાગ કરી દે છે એવાં મરણતું (૧૮); દેવલો-કમાં ઉત્પન્ન થવાતું (૧૯); ઉત્તમ કુળમાં જન્મ લેવાતું (૨૦); જિન પ્રણીત ધર્મની પ્રાપ્તિરૂપ બોધિલાભતું (૨૧); તથા સર્વકર્મક્ષયરૂપ અન્તક્રિયાતું (૨૨), “આખ્યાયન્તે” વર્ણન કરાયું છે.

ધર્મકથાનમક ખીજ શ્રુતસ્કન્ધમાં અહિંસાદિ રૂપ ધર્મકથાઓના દશ વર્ગો એટલે દશ સમૂહો છે. અર્થાધિકાર સમૂહરૂપ અધ્યયનને જ વર્ગ કહેવામાં આવે છે. આ ધર્મકથાઓની એક એક ધર્મકથામાં પાંચસો પાંચસો આખ્યાયિ-



સ્યામાખ્યાયિકાયાં પञ્ચ પञ્ચ ઉપાખ્યાયિકા શતાનિ=અવાન્તરકથાશતાનિ । એક-  
કસ્યામુપાખ્યાયિકાયાં પञ્ચ પञ્ચ આખ્યાયિકોપાખ્યાયિકાશતાનિ સન્તિ । એવ-  
મેવ=અનેનપ્રકારેણ સપૂર્વાપરેણ=પૂર્વાપરસંયોજનયા અર્થચતુર્થા કથાનકાકોઢ્યઃ=  
આખ્યાયિકાનાં સાર્ધત્રિકોટયો (૩૫૦૦૦૦૦૦) ભવન્તીતિ સમાખ્યાતં ભગવતા  
મહાવીરેણ ।

નતુ ધર્મકથાસુ આખ્યાયિકાનામ્ ઉપાખ્યાયિકા નામ્ આખ્યાયિકોપાખ્યા-  
યિકાનાં ચ તિસૃણાં સંખ્યા સપાદશતકોટિપરિમિતા (૧૨૫૦૦૦૦૦૦૦) ભવતિ,  
તર્હિ કથમત્ર આખ્યાયિકાદીનાં સાર્ધત્રિકોટિસંખ્યાઽભિહિતા ? इति चेत्, આહ,  
નવાનાં જ્ઞાતાનાં પञ્ચાશલ્લક્ષાધિકૈકવિંશતિકોઢ્યધિકૈકશતકોટિસંખ્યકા  
(૧૨૧૫૦૦૦૦૦૦) યા આખ્યાયિકાદય ઉક્તાસ્તાદૃશ્ય એવ આખ્યાયિકાદયો  
દશસુ ધર્મકથાસ્વપ્યુક્તાઃ, અતો દશધર્મકથોક્તાઽઽખ્યાયિકાદિ-(૧૨૫૦૦૦૦૦૦૦)

પાંચસૌ પાંચસૌ આખ્યાયિકા-ઉપાખ્યાયિકાએ' હૈં । इन सभी आख्या-  
यिकायों को जोड़ने से इनकी संख्या साढ़े तीन करोड़ (३५००००००)  
होती है ऐसा भगवान् महावीर स्वामीने कहा है ।

यहां यह शंका होती है कि-‘ धर्मकथा में आई हुई आख्यायिका-  
उपाख्यायिका और आख्यायिकोपाख्यायिकाओं की सम्मिलित संख्या  
एकसौ पच्चीस करोड़ (१२५०००००००) होती है, तो फिर यहाँ पर  
उनकी संख्या साढ़ेतीन करोड़ (३५०००००००) कैसे कही गई है ?’  
इसका समाधान इस प्रकार है-नव ज्ञातों में जो आख्यायिकादिकों की  
एक सौ साढ़े इक्कीस करोड़ (१२१५००००००) संख्या टीका में उपर

કાઓ-કથાઓ છે. એક એક આખ્યાયિકામાં પાંચસો પાંચસો ઉપાખ્યાયિકાઓ-  
અવાન્તરકથાઓ છે. એક એક ઉપાખ્યાયિકામાં પાંચસો પાંચસો આખ્યાયિકા-  
ઉપાખ્યાયિકાઓ છે. આ બધી આખ્યાયિકાઓને મેળવવાથી સાડા ત્રણ કરોડ  
(૩૫૦૦૦૦૦૦) થાય છે. એમ ભગવાન મહાવીર સ્વામીએ કહ્યું છે.

અહીં એ શંકા થાય છે કે “ ધર્મકથાઓમાં આવેલ આખ્યાયિકાઓ,  
ઉપાખ્યાયિકાઓ અને આખ્યાયિકોપાખ્યાયિકાઓની કુલ સંખ્યા એક સો પચીસ  
કરોડ (૧૨૫૦૦૦૦૦૦૦) થાય છે તો પછી અહીં તેમની સંખ્યા સાડા ત્રણ  
કરોડ (૩૫૦૦૦૦૦૦૦) કેવી રીતે કહેવામાં આવી છે ? ” તેનું સમાધાન આ  
પ્રમાણે કરી શકાય-નવા જ્ઞાતોમાં આખ્યાયિકા આદિની એકસો સાડી એકવીસ  
કરોડ (૧૨૧૫૦૦૦૦૦૦) ની સંખ્યા ટીકામાં ઉપર કહેવામાં આવી છે, એજ

સંખ્યામધ્યાત્ નવજ્ઞાતોક્તાઽઽખ્યાયિકાદિસંખ્યામ્ (૧૨૧૫૦૦૦૦૦૦) અપકૃષ્ય  
પુનરુક્તિવર્જિતા યા આખ્યાયિકાદયોઽવશિષ્યન્તે તાસાં સંખ્યા સાર્દ્ધત્રિકોટિપરિ-  
મિતૈવ (૩૫૦૦૦૦૦૦) ભવતિ । પુનરુક્તિવર્જિતાઽઽખ્યાયિકાદિસંખ્યા  
હૃદિકૃત્યૈવ ભગવતા-એવમેવ સપુન્વાવરેણં અદ્યુદ્ધાઓ-કહાણગકોડીઓ ભવંતીતિ  
સમક્ષાયં' इत्युक्तम् । अतो नात्र कश्चिद्दोष इति । अत्र विषये गाथाद्वयमप्युक्तम् ।

“ પળવીસં કોડિસયં, एत्थ य समलक्षणाइया जम्हा ।

नवनाययसम्बद्धा, अक्खाइयमाइया तेणं ॥ १ ॥

ते सोहिज्जंति फुडं, इमाउ रासीउ वेग्गलणं तु ।

पुनरुक्तवज्जियाणं, प्रमाणमेयं विणिदिट्ठं ” ॥ २ ॥

છાયા—પશ્ચવિંશં કોટિ શતમ્, અત્ર ચ સમલક્ષણાદિકા યસ્માત્ ।

नव ज्ञातक सम्बद्धा, आख्यायिकादिकास्तेन ॥ १ ॥

ताः शोध्यन्ते स्फुटम्, अस्माद् राशेर्विविक्तानां तु ।

पुनरुक्तवर्जितानां, प्रमाणमेतद् विनिर्दिष्टम् ॥ २ ॥ इति ।

સ્થાપના ચાત્રેત્યમ્—

કહી ગઈ હૈ, उसी तरह की आख्यायिकादिक दस धर्मकथाओं में भी  
कही गई हैं, इसलिये नवज्ञातों में कहे जाने के कारण दस धर्मकथाओं  
में ये एक सौ साठे इक्कीस करोड़ आख्यायिकादिक पुनरुक्त होती हैं ।  
इन पुनरुक्त आख्यायिकादिकों को छोड़कर अवशिष्ट आख्यायिकादिकों  
की संख्या साठे तीन करोड़ (३५००००००) ही बचती है । इन अपुनरुक्त  
आख्यायिकादिकों को मनमें रखकर ही भगवान ने 'एवमेव सपुन्वा-  
वरेणं अद्युद्विओ कहांणगकोडीओ भवन्तीतिमक्खाओ '-ऐसा कहा है ।  
इसलिये यहां पर कोई दोष नहीं है ।

પ્રકારની સંખ્યા આખ્યાયિકાદિક દસ ધર્મકથાઓમાં પણ કહેવામાં આવેલ છે,  
આ કારણે નવજ્ઞાતોમાં કહેવાયાને કારણે દસ ધર્મકથાઓમાં એ એકસો સાડી  
એકવીસ કરોડ આખ્યાયિકા આદિક પુનરુક્ત થાય છે. એ પુનરુક્ત આખ્યાયિકા  
આદિકોને છોડીને બાકી રહેતી આખ્યાયિકાઓની સંખ્યા સાડા ત્રણ કરોડ  
(૩૫૦૦૦૦૦૦) રહે છે. એ પુનરુક્ત આખ્યાયિકાદિકોને મનમાં રાખીને જ  
લગવાને “ એવમેવ સપુન્વાવરેણં અદ્યુદ્ધાઓ કહાણગકોડીઓ ભવંતીતિ મક્ખાઓ ”  
એમ કહેલ છે. તેથી અહીં કોઈ દોષ નથી.

ધર્મકથાસ્થિતાઽઽખ્યાયિકાદિ સંખ્યા ૧૨૫૦૦૦૦૦૦૦  
શોધ્યાનાં જ્ઞાતાસ્થિતાઽઽખ્યાયિકાદીનાં સંખ્યા ૧૨૧૫૦૦૦૦૦૦

इस विषय में दो गाथायें हैं—

“ पणवीसंकोडिसयं, एत्थयसमलक्खणाइया जम्हा ।

नवनायय संबद्धा, अक्खा इयमा इया तेणं ॥ १ ॥

ते सोहिज्जंति फुडं, इमा उरासी उ वेग्गलाणं (विविक्तानां) तु ।

पुणरुत्त वज्जियाणं, पमाणमेयं विणिहिदं ” ॥ २ ॥ इति ।

इसका भाव यह है—धर्मकथा में आई हुई आख्यायिकादिकों की संख्या एक सौ पच्चीस करोड़ है । इनमें से नौ ज्ञातों में कही हुई समानलक्षणवाली—समानस्वरूपवाली एक सौ साठे एक्कीस करोड़ आख्यायिकादिकाँ निकाल ली जाती हैं तब पूर्वोक्त राशि से बची हुई पुनरुक्तिवर्जित आख्यायिकादिकों की संख्या साठे तीन करोड़ होती है । यही साठे तीन करोड़ प्रमाणमूल में आख्यायिकादिकों का कहा है ।

यहां पर स्थापना इस प्रकार है—

धर्मकथा में आई हुई आख्यायिकादिकों की संख्या— १२५०००००००

शोधनीय ज्ञातास्थित आख्यायिकादिकों की संख्या— १२१५००००००

આ વિષયમાં બે ગાથાઓ છે—

“પણવીસં કોડિસયં, એત્થય સમલક્ખણાઇયા જમ્હા ।

નવનાયયસંબદ્ધા, અક્ખાઇયમાઇયા તેણં ॥ ૧ ॥

તે સોહિજ્જંતિ ફુડં, ઇમાઉ રાસીઉવેગ્ગલાણં (વિવિક્તાનાં) તુ ।

પુણરુત્ત વજ્જિયાણં, પમાણમેયં વિણિહિદં ” ॥ ૨ ॥ ઇતિ ।

તેનો ભાવાર્થ આ પ્રમાણે છે—ધર્મકથામાં આવેલ આખ્યાયિકાદિકોની સંખ્યા એકસો પચીસ કરોડ છે. તઓમાંથી નવજ્ઞાતોમાં કહેલ સમાન લક્ષણોવાળી—સમાન સ્વરૂપવાળી એકસો સાડી એકવીસ કરોડ આખ્યાયિકાદિકોને બાદ કરવામાં આવે તો પૂર્વોક્ત રાશિથી બચેલ પુનરુક્તિ રહિત આખ્યાયિકાદિકોની સંખ્યા સાડા ત્રણ કરોડ થાય છે. મૂળમાં એજ સાડાત્રણ કરોડ આખ્યાયિકાદિકોનું પ્રમાણ કહેલ છે.

અહીં આ પ્રમાણે સ્થાપના છે—

ધર્મકથામાં આવેલ આખ્યાયિકાદિકોની સંખ્યા ૧૨૫૦૦૦૦૦૦૦

શોધનીય જ્ઞાતાસ્થિત આખ્યાયિકાદિકોની સંખ્યા ૧૨૧૫૦૦૦૦૦૦

34000000

આ જ્ઞાતાધર્મકથા નામના અંગમાં સંખ્યાત વાચનાઓ છે, સંખ્યાત અનુયોગ દ્વાર છે, શબ્દથી સંખ્યાત વેષ્ટક છે. સંખ્યાત શ્લોક છે, સંખ્યાત નિર્ચુકિતયો છે. સંખ્યાત સંગ્રહણિયો છે, અને સંખ્યાત પ્રતિપત્તિયો છે. આ બધાં અંગોમાંનું છઠ્ઠું અંગ છે. આ છઠ્ઠાં અંગમાં બે શ્રુતસ્કંધ છે. પહેલા શ્રુતસ્કંધમાં ઓગણીસ અધ્યયન છે. ઓગણીસ (૧૯) ઉદ્દેશનકાળ છે. અને ઓગણીસ (૧૯) સમુદ્દેશનકાળ છે.

અત્ર-एकोनविंशतिरुद्देशनकलाः, एकोनविंशतिः समुद्देशनकालाः । संख्येयानि पदसहस्राणि=षट्सप्तति सहस्राधिकपञ्चलक्षपदानि ( ५७६००० ) पदग्रेण=पद-परिमाणेन प्रज्ञप्तानि । तथाऽत्र-संख्येयानि अक्षराणि सन्ति । अनन्ता गमाः, अनन्ताः पर्यायाः, परीतास्त्रसाः, अनन्ताः स्थावराः, शाश्वत-कृत-निबद्ध-निकाचिता जिनप्रज्ञप्ता भावा आख्यायन्ते, प्रज्ञाप्यन्ते, प्ररूप्यन्ते, दर्श्यन्ते, निदर्श्यन्ते, उपदर्श्यन्ते । स एवमात्मा भवति, एवं ज्ञाता, एवं विज्ञता भवति । इत्येवं प्रकारेण अत्र चरणकरणप्ररूपणा आख्यायन्ते ६ । ता एता ज्ञाता धर्मकथाः ॥ सू० ५० ॥

अथ सप्तमाङ्गस्य उपासकदशाङ्गस्य स्वरूपमाह—

मूलम्—से किं तं उवासगदसाओ ? । उवासगदसासु णं समणोवासयाणं नगराइं १, उज्जाणाइं २, चेइयाइं ३, वणसंडाइं ४, समोसरणाइं ५, रायाणो ६, अम्मापियरो ७, धम्मापियरो ८, धम्मकहाओ ९, इहलोइयपरलोइयाइड्ढिविसेसा १०, भोगपरि-च्चाया ११, पव्वज्जाओ १२, परियाया १३, सुयपरिग्गहा १४, तवोवहाणाइं १५, सीलव्वयवेरमणगुणपच्चक्खाणपोसहोववास-पडिवज्जणया १६, पडिमाओ १७, उवसग्गा १८, संलेहणाओ १९, भत्तपच्चक्खाणाइं २०, पाओवगमणाइं २१, देवलोगगमणाइं २२,

इसमें पाँच लाख छिहत्तर हजार ५७६००० पद हैं । इसमें संख्यात अक्षर हैं अनन्त गम हैं, अनंत पर्याये हैं, असंख्यात त्रस हैं, अनंत स्थावर हैं—इत्यादि पदों की व्याख्या आचारांग सूत्रका स्वरूप निरूपण करते समय सूत्र ४५में कीया जा चुकी है । इस प्रकार यह ज्ञाताधर्मकथा अंग का स्वरूप है ॥ सू० ५० ॥

આ અંગમાં પાંચ લાખ છોતેર હજાર (૫૭૬૦૦૦) પદો છે. એમાં સંખ્યાત અક્ષર છે. અનન્ત ગમ છે, અનંત પર્યાયો છે, અસંખ્યાત ત્રસ છે. અનંત સ્થાવર છે, વગેરે પદોની વ્યાખ્યા આચારાંગ સૂત્રનું સ્વરૂપ-નિરૂપણ કરતી વખતે સૂત્ર ૪૫માં કરવામાં આવી છે. આ પ્રમાણે આ “જ્ઞાતાધર્મકથા” અંગનું સ્વરૂપ છે. ॥ સૂ. ૫૦ ॥

सुकुलपञ्चायाईओ २३, पुणो बोहिलाभा २४, अंतकिरियाओय,  
आघविज्जंति । उवासयदसा णं परित्ता वायणा, संखेज्जाअणु-  
ओगदारा संखेज्जावेढा, संखेज्जा सिलोगा, संखेज्जाओ निज्जु-  
त्तीओ संखेज्जाओ संगहणीओ संखेज्जाओ पडिवत्तीओ । से  
णं अंगट्टयाए सत्तमे अंगे, एगे सुयक्खंधे, दस अज्झयणा, दस  
उद्देसणकाला, दस समुद्देसणकाला, संखेज्जाइं पयसहस्साइं पय-  
ग्गेणं, संखेज्जा अक्खरा अणंतागमा, अणंता पज्जवा, परित्ता  
तसा, अणंता थावरा, सासय-कड-निबद्ध-निकाइया जिणपणत्ता  
भावा आघविज्जंति, पणविज्जंति, परूविज्जंति, दंसिज्जंति,  
निदंसिज्जंति, उवदंसिज्जंति । से एवं आया, एवं नाया, एवं  
विण्णाया, एवं चरणकरणपरूवणा आघविज्जइ ६ । से त्तं  
उवासगदसाओ ॥ सू० ५१ ॥

छाया—अथ कास्ता उपासकदशाः ? उपासकदशासु खलु श्रमणोपासकानां  
नगराणि १, उद्यानानि २, चैत्यानि ३, वनषण्डाः ४, समवसरणानि ५, राजानः ६,  
अम्बापितरौ ७, धर्माचार्याः ८, धर्मकथाः ९, ऐहलौकिक पारलौकिका ऋद्धि-  
शेषाः १०, भोगपरित्यागाः ११, प्रव्रज्याः १२, पर्यायाः, १३, श्रुतपरिग्रहाः १४,  
तपउपधानानि १५, शीलव्रत विरमणगुणप्रत्याख्यानपोषधोपवासप्रतिपादनताः १६,  
प्रतिमाः १७, उपसर्गाः १८, संलेखना १९, भक्तप्रत्याख्यानानि २०, पादपोष-  
गमनानि २१, देवलोकगमनानि २२, सुकुलप्रत्यायातयः २३, पुनर्वोधिभाः २४,  
अन्तक्रियाश्चआख्यायन्ते २५, उपासकदशानां परीतावाचनाः संख्येयानि अनुयोग-  
द्वाराणि, संख्येया वेष्टकाः, संख्येयाः श्लोकाः, संख्येया निर्युक्तयः संख्येयाः  
संग्रहण्यः, संख्येयाः प्रत्तिपत्तयः । ताः खलु अङ्गार्थतया सप्तममङ्गम्, एकः श्रुतस्क-



ન્ધઃ, દશ અધ્યયનાનિ, દશ ઉદ્દેશનકાલાઃ, દશસમુદ્દેશનકાલાઃ, સંખ્યેયાનિ પદ-  
સહસ્રાણિ પદાગ્રેણ, સંખ્યેયાનિ અક્ષરાણિ, અનન્તા ગમાઃ, અનન્તાઃ પર્યવાઃ, પરી-  
તાસ્ત્રસાઃ, અનન્તાઃ સ્થાવરાઃ, શાશ્વત-કૃત-નિવદ્ધ-નિકાચિતા જિનપ્રજ્ઞા ભાવા  
આખ્યાયન્તે પ્રજ્ઞાપ્યન્તે, પ્રરૂપ્યન્તે, દર્શ્યન્તે, નિદર્શ્યન્તે ઉપદર્શ્યન્તે । સ એવાત્મા,  
એવં જ્ઞાતા, એવં વિજ્ઞાતા, એવં ચરણકરણપ્રરૂપણા આખ્યાયતે ૬ । તા એતા  
ઉપાસકદશાઃ ॥ સૂ૦ ૫૧ ॥

અથ સપ્તમાઙ્ગસ્વરૂપં કથયતિ—

ટીકા—‘સે કિં તં’ ઇત્યાદિ ।

અથ કાસ્તા ઉપાસકદશાઃ ? ઉત્તરયત્તિ—ઉપાસકદશાસુ=ઉપાસકાઃ=શ્રાવકાઃ  
તેષામુપાસકત્વ બોધિકા દશાધ્યયન પ્રતિવદ્ધાદશાઃ=અવસ્થાઃ—ઉપાસકદશાસ્તાસુ  
સ્વલુ ઉપાસકાનાં=શ્રાવકાણાં નગરાણિ ૧, ઉદ્યાનાનિ ૨, ચૈત્યાનિ ૩, વનષણ્ડાઃ  
૪, સમવસરણાનિ ૫, રાજાનઃ ૬, અમ્બાપિતરૌ ૭, ધર્માચાર્યાઃ ૮, ધર્મકથાઃ ૯,

અવ સપ્તમ અંગ ઉપાસક દશાંગ કા સ્વરૂપ કહતે હૈં—‘સે કિં તં  
‘ઉવાસગદસાઓ’ ઇત્યાદિ ।

શિષ્ય પ્રશ્ન—સાતવાં અંગ જો ઉપાસકદશા હૈં ઉસકા કયા સ્વરૂપ હૈં ?

ઉત્તર—ઉપાસકો—શ્રાવકોં કી ઉપાસકત્વ બોધક જો અવસ્થાઈ  
હૈં, વે ઉવાસક દશાઈ હૈં દશ અધ્યયનોં દ્વારા इन દશાઓં કા પ્રતિબોધક  
જો અંગ હૈં વહ ઉપાસકદશાંગ હૈં । इस ઉપાસકદશાંગમેં શ્રાવકોં કે નગરોં  
કા કથન કિયા ગયા હૈં, તથા ઉદ્યાનોં કા, ચૈત્યોં—વ્યન્તરા યતનોં કા, વન-  
ષંડોં કા, उन શ્રાવકોં કે સમય કે સમવસરણોં કા, उनके राजाओं कા, उनके  
मातापिताओं कા, उनके धर्माचार्यों कા, धर्मकथाओं कા, उनकी ऐहलौकिक

હેવે સાતમાં અંગ—ઉપાસક દશાંગતું સ્વરૂપ કહે છે—“સે કિં તં ઉવાસગ  
દસાઓ ?” ઇત્યાદિ—

શિષ્યનો પ્રશ્ન—સાતમું અંગ જે ઉપાસક દશા છે તેતું શું સ્વરૂપ છે ?

ઉત્તર—ઉપાસકો—શ્રાવકોની ઉપાસકત્વ બોધક જે અવસ્થાઓ છે તે  
ઉપાસક દશાઓ છે. દશ અધ્યયનો દ્વારા એ દશાઓતું પ્રતિબોધક જે અંગ  
તે “ઉપાસક દશાંગ” છે. આ ઉપાસક દશાંગમાં શ્રાવકોનાં નગરોતું વર્ણન  
કરાયું છે. તથા ઉદ્યાનોતું ચૈત્યો—વ્યન્તરાયતનોતું, વનષંડોતું, તે શ્રાવકોના  
સમયના સમવસરણોતું, રાજાઓતું, તેમના માતાપિતાઓતું, તેમના ધર્માચાર-  
્યોતું, ધર્મકથાઓતું, તેમની આલોક અને પરલોકની ઋદ્ધિવિશેષોતું લોગ

એહલૌકિકપારલૌકિકઋદ્ધિવિશેષાઃ ૧૦, ભોગપરિત્યાગાઃ ૧૧, પ્રવ્રજ્યાઃ ૧૨, પર્યાયાઃ ૧૩, શ્રુતપરિગ્રહાઃ=શ્રુતાધ્યયનનિ ૧૪, તપઉપધાનનિ=ઉગ્રતપશ્ચરણનિ ૧૫, શીલવ્રતવિરમણગુણપ્રત્યાખ્યાનપોષધોપવાસપ્રતિપાદનતાઃ ૧૬-તત્ર-શીલવ્રતાનિ=અણુવ્રતાનિ, વિરમણનિ=રાગાદિવિરતયઃ, ગુણાઃ=ગુણવ્રતાનિ, પ્રત્યાખ્યાનનિ=નમસ્કાર સહિતાદીનિ, પોષધોપવાસઃ પોષ=પુષ્ટિ ધત્તે યદાહારપરિત્યાગાદિકં કુશલાનુષ્ઠાનં તત્પોષધં, તેન સહ ઉપવાસઃ=ભવસ્થાનમ્ અહોરાત્રં યાવદિતિ પોષધોપવાસઃ, એતેષાં દ્વન્દ્વઃ, તેષાં પ્રતિપાદનતાઃ=પ્રતિપત્તયઃ-સ્વીકરણાનિ, પ્રતિમાઃ=૧૭, ઉપસર્ગાઃ=દેવાદિકૃતોપદ્રવાઃ ૧૮, સંલેખનાઃ=શરીર-

તથા પારલૌકિક ઋદ્ધિવિશેષોં કા ભોગપરિત્યાગ કા, પ્રવ્રજ્યા કા, પર્યાય કા, શ્રુતપરિગ્રહ કા-શ્રુતાધ્યયન કા, તપઉપધાન કા-તપશ્ચરણ કા મી કથન કિયા ગયા હૈ। સાથમેં યહ મી બતલાયા ગયા કિ શીલવ્રત-અણુવ્રત કયા હૈ-इनका क्या स्वरूप है, और ये किस तरह धारण किये जाते हैं विरमण-रागादिक भावोंसे विरक्ति कया है और यह किस तरह धारण की जाती हैं तथा इसका स्वरूप क्या है-गुण-गुण-व्रत क्या तथा कितने है, और ये किस तरह धारण किये जाते हैं ?

પંચ નમસ્કાર સહિત પ્રત્યાખ્યાન કયા-કૈસે હોતે હૈં ઓર યે કબ કૈસે ધારણ કિયે જાતે હૈં ? પોષધોપવાસ-પોષ-પુષ્ટિકો જો ધારણ કરે-વહ આહાર-પરિત્યાગ આદિ પોષધ કહલાતા હૈ, ઉસકે સાથ જો અહોરાત્ર રહના વહ પોષધોપવાસ હૈ। તથા શ્રાવકોં કે ગ્યારહ ૧૧ પ્રકાર કી પ્રતિમા, તથા દેવાદિકૃત-ઉપદ્રવ રૂપ ઉપસર્ગ, સંલેખના-શરીર તથા કષાય આદિ

પરિત્યાગનું, પ્રવ્રજ્યાનું, પર્યાયનું, શ્રુતપરિગ્રહનું-શ્રુતાધ્યયનનું, તપઉપધાનનું-તપશ્ચરણનું પણ વર્ણન કરાયું છે. વળી એ પણ બતાવ્યું છે કે શીલવ્રત-અણુવ્રત શું છે? તેમનું શું સ્વરૂપ છે? અને તે કેવી રીતે ધારણ કરાય છે? વિરમણ-રાગાદિક ભાવોથી વિરક્તિ શું છે? અને તે કેવી રીતે ધારણ કરાય છે? તથા તેનું શું સ્વરૂપ છે, ગુણ-ગુણવ્રત શું છે અને કેટલાં છે, અને તે કેવી રીતે ધારણ કરાય છે? પંચ નમસ્કાર સહિત પ્રત્યાખ્યાન કેવાં હોય છે અને તેમને ક્યારે અને કેવી રીતે ધારણ કરાય છે? પોષધોપવાસ પોષ-પુષ્ટિને જે ધારણ કરે-આપે તે આહાર પરિત્યાગ આદિને પોષધ કહેવાય છે, તેની સાથે જે રાતદિવસ રહેવું તે પોષધોપવાસ કહેવાય છે. તથા શ્રાવકોનાં અગીયાર પ્રકારની પ્રતિમા, તથા દેવાદિકૃત ઉપદ્રવરૂપ ઉપસર્ગ, સંલેખના-શરીર તથા કષાય

કષાયાદિશોષણલક્ષણાઃ ૧૯, ભક્તપ્રત્યાખ્યાનાનિ ૨૦, પાદપોષગમનાનિ ૨૧, દેવલોકગમનાનિ ૨૨, દેવલોકાત્ પુનઃ સુકુલપ્રત્યાયાતયઃ સુકુલજન્માનિ ૨૩, પુનર્બોધિલાભાઃ ૨૪, અન્તક્રિયાશ્ચ આખ્યાયન્તે ૨૫ ।

ઉપાસકદશાનાં પરીતાઃ=સંખ્યાતા વાચનાઃ સંખ્યેયાનિ અનુયોગદ્વારાણિ, સંખ્યેયા વેષ્ટકાઃ, સંખ્યેયાઃ શ્લોકાઃ, સંખ્યેયા નિર્યુક્તયઃ, સંખ્યેયાઃ સંગ્રહણ્યઃ, સંખ્યેયાઃ પ્રતિપત્તયશ્ચ સન્તિ । એકઃ શ્રુતસ્કન્ધઃ દશ અધ્યયનાનિ, તા સ્વલ્પ અઙ્ગાર્થતયા સપ્તમમઙ્ગમ્ દશ ઉદ્દેશનકાલાઃ, દશ સમુદ્દેશનકાલાઃ, સંખ્યેયાનિ—પદ સહસ્રાણિ=એકાદશલક્ષાણિ દ્વિપચ્ચાશત્સહસ્રાણિ (૧૧૫૨૦૦૦) ચ પદાનિ પદાગ્રેણ=પદપરિમાણેન પ્રજ્ઞસાનિ । તથાઽત્ર સંખ્યેયાનિ અક્ષરાણિ, અનન્તાઃ ગમાઃ, અનન્તાઃ પર્યવાઃ ત્રસાઃ, અનન્તાઃ સ્થાવરાઃ, શાશ્વતકૃત નિવદ્ધ નિકાચિતા જિન-

કા શોષણ કરના, ભક્તપ્રત્યાખ્યાન, પાદપોષગમન, દેવલોક ગમન વહાં સે ચ્યવ કર ઉનકા સુકુલમેં જન્મલાભ પુનઃબોધિ કી પ્રાપ્તિ તથા અન્તક્રિયા, ઇન સવકા ખી ઇસમેં અખ્યાન હુઆ હૈ ।

ઇસ અંગમેં સંખ્યાત વાચનાઈ હૈ, સંખ્યાત અનુયોગ દ્વાર હૈ, સંખ્યાત વેષ્ટક હૈ, સંખ્યાત શ્લોક હૈ, સંખ્યાત નિર્યુક્તિયાં હૈ, સંખ્યાત સંગ્રહ-ગિયાં હૈ તથા સંખ્યાત પ્રતિપત્તિયાં ઇન સવકા અર્થ આચારાંગ કે સ્વરૂપ નિરૂપણ કરતે સમય સૂત્ર ૪૫મેં લિખા જા ચુકા હૈ । યહ અંગ સાતવાં અંગ હૈ । ઇસમેં એક શ્રુતસ્કન્ધ ઓર દશ અધ્યયન હૈ । તથા દશ ઉદ્દેશન કાલ ઓર દશ હી સમુદ્દેશનકાલ હૈ । ઇસકે પદોં કા પ્રમાણ ગ્યારહ લાખ વાવન હજાર (૧૧૫૨૦૦૦) હૈ । ઇસમેં સંખ્યાત અક્ષર હૈ, ‘અનન્તા ગમાઃ’ યહાં સે લેકર “એવં વિજ્ઞાતા” તક કે પદોં કા અર્થ આચારાંગ કે સ્વરૂપ

આદિતું શોષણ કરવું, ભક્તપ્રત્યાખ્યાન, પાદપોષગમન, દેવલોકગમન, ત્યાંથી આવીને તેમને સારાં કુળમાં જન્મલાભ, પુનઃબોધિની પ્રાપ્તિ તથા અન્તક્રિયા, એ બધાનું પણ તેમાં વર્ણન થયું છે.

આ અંગમાં સંખ્યાત વાચનાઓ છે, સંખ્યાત અનુયોગ દ્વાર છે, સંખ્યાત વેષ્ટક છે, સંખ્યાત શ્લોક છે, સંખ્યાત નિર્યુક્તિયો છે, તથા સંખ્યાત સંગ્રહ-ણીઓ છે, સંખ્યાત પ્રતિપત્તિયો છે. એ બધાનો અર્થ આચારાંગનું સ્વરૂપનિરૂપણ કરતી વખતે સૂત્ર ૪૫માં લખાઈ ગયો છે. આ અંગ સાતમું અંગ છે. તેમાં એક શ્રુતસ્કન્ધ અને દસ અધ્યયન છે, તથા દસ ઉદ્દેશનકાળ અને દસ જ સમુદ્દેશનકાળ છે. તેમાં અગીયાર લાખ વાવન હજાર (૧૧૫૨૦૦૦) પદ છે. તેમાં સંખ્યાત અક્ષર છે. “અનન્તા ગમાઃ” થી માંડીને “એવં વિજ્ઞાતા”

प्रज्ञप्ता भावा आख्यायन्ते प्रज्ञाप्यन्ते प्ररूप्यन्ते दर्श्यन्ते निदर्श्यन्ते उपदर्श्यन्ते । स एवमात्मा, एवं ज्ञाता, एवं विज्ञाता, एवं चरणकरणप्ररूपणा आख्यायते । संख्येयानि अक्षराणि ' इत्यादीनामर्थाः पूर्ववद्वोध्याः । उपसंहरन्नाह—ता एता उपासकदशा इति ॥ सू० ५१ ॥

अष्टमाङ्गस्य स्वरूपमाह—

मूलम्—से किं तं अंतगडदसाओ ?, अंतगडदसासु णं अंतगडाणं नगराईं उज्जाणाईं चेइयाईं वणसंडाईं समोसरणाईं रायाणो अम्मापियरो धम्मायरिया धम्मकहा इहलोइयपरलोइय-इइढिविसेसा भोगपरिच्चाया पव्वज्जाओ परियाया सुयपरिग्गहा तवोवहाणाईं संलेहणाओ भत्तपच्चक्खाणाईं पाओवगमणाईं, अंतकिरियाओ आघविज्जंति । अंतगडदसासु णं परित्ता वायणा, संखिज्जा अणुओगदारा संखेज्जा वेढा संखेज्जा सिलोगा संखेज्जाओ निज्जुत्तीओ संखेज्जाओ संगहणीओ संखेज्जाओ पडिवत्तीओ, से णं अंगट्टयाए अट्टमे अंगे । एगे सुयक्खंधे, अट्टवग्गा, अट्ट उद्देसणकाला, अट्ट समुद्देसणकाला, संखेज्जाईं

निरूपण करते समय सूत्र ४५में लिखा जा चुका है। इस प्रकार यहां यह चरण करण का आख्यान प्रज्ञापन आदि किया गया है। यहां “प्रज्ञाप्यन्ते” आदि पांच पदों का संग्रह समझ लेना चाहिये। इनका अर्थ पहले कहा जा चुका है। यह उपासकदशांग के स्वरूप का वर्णन हुआ ॥ सू० ५१ ॥

सुधीनां पढोने। अर्थ आचारांगनुं स्वइपनिइपणु करती वणते दणाध गये। छे. आ रीते तेमां यरणु करणुनुं आग्यान, प्रज्ञापन आदि करायुं छे. अड्डीं “प्रज्ञाप्यन्ते” आदि पांच पढोने। संग्रह समझ लेवे। तेमने। अर्थ पडेदां डडेवाध गये। छे. आ उपासक दशांगनां स्वइपनुं वणुन थयु ॥ सू. ५१ ॥

पयसहस्साङ् पयग्गेणं, संखिज्जा अक्खरा । अणंता गमा; अणंता,  
पज्जवा, परित्ता तसा, अणंता थावरा, सासयकडनिवद्धनिका-  
इया जिणपण्णत्ता भावा आघविज्जंति; पन्नविज्जंति परूविज्जंति  
दंसिज्जंति निदंसिज्जंति उवदंसिज्जंति । से एवं आया, एवं  
नाया, एवं विण्णाया, एवं चरणकरणपरूवणा आघविज्जइ ६ ।  
से त्तं अंतगडदसाओ ॥ सू० ५२ ॥

छाया—अथ कास्ता अन्तकृतदशाः ? अन्तकृतदशासु खलु अन्तकृतानां नगराणि  
उद्यानानि चैत्यानि वनपण्डाः समवसरणानि राजानः अम्बापितरौ धर्माचार्याः धर्म-  
कथाः ऐहलौकिक पारलौकिक ऋद्धिविशेषाः भोगपरित्यागाः प्रव्रज्याः पर्यायाः  
श्रुतपरिग्रहाः तप उपधानानि संलेखनाः भक्तप्रत्याख्यानानि पादपोषगमनानि अन्त-  
क्रिया आख्यायन्ते । अन्तकृतदशासु खलु परीताः वाचनाः संख्येयानि अनुयोग-  
द्वाराणि यावत् संख्येया वेष्टकाः, संख्येयाः श्लोकाः, संख्येया निर्युक्तयः, संख्येयाः  
संग्रहण्यः, संख्येयाः प्रतिपत्तयः । ताः खलु अङ्गार्थतया अष्टममङ्गम्, एकः श्रुत-  
स्कन्धः, अष्ट वर्गाः, अष्ट उद्देशनकालाः, अष्ट समुद्देशनकालाः, संख्येयानि पदसह-  
स्राणि पदग्रेण, संख्येयानि अक्षराणि, अनन्ता गमाः, अनन्ताः पर्यवाः, परीताः  
त्रसाः, अनन्ताः स्थावराः शाश्वतकृतनिवद्धनिकाचिता जिनप्रज्ञप्ता भावा आख्या-  
यन्ते, प्रज्ञाप्यन्ते, प्ररूप्यन्ते, दर्श्यन्ते, निदर्श्यन्ते, उपदर्श्यन्ते । स एवम् आत्मा,  
एवं ज्ञाता, एवं विज्ञाता, एवं चरणकरणप्ररूपणा आख्यायते ६ । ता एता  
अन्तकृतदशाः ॥ सू० ५२ ॥

टीका—‘से किं तं’ इत्यादि ।

अथ कास्ता अन्तकृतदशाः ? इति प्रश्नः । उत्तरयति—अन्तकृतदशासु—अन्तः=  
कर्मणस्तत्फलस्य संसारस्य वाऽन्तसमये विनाशः कृतो यैस्ते—अन्तकृतास्तेषां दशाः

अथ अष्टम अंग अन्तकृतदशांगका स्वरूप कहा जाता है—“से किं तं  
अंतगडदसाओ ?” इत्यादि ।

हुवे आठमां अंग अंतकृतदशांगतुं स्वइय कडेवाभां आवे छे—

“से किं तं अंतगडदसाओ ?” इत्यादि.

=અવસ્થા:-તત્પ્રતિપાદકા વર્ગા યાસુ તાઃ, યદ્વા-અન્તકૃતવક્તવ્યતાપ્રતિવદ્વા  
દશા:=દશાધ્યયનરૂપા ગ્રન્થપદ્ધતયોઽન્તકૃતદશાઃ । इयं व्युत्पत्तिः प्रथमवर्गे दशा-  
ध्ययनानि सन्ति-इत्युपलक्ष्य क्रियते, તાસુ=અન્તકૃતદશાસુ અન્તકૃતાનાં મુનીનાં  
નગરાણિ, ઉદ્યાનાનિ, ચૈત્યાનિ, વનષણ્ડાઃ, સમવસરણાનિ, રાજાનઃ, અમ્બાપિતરૌ,  
ધર્માચાર્યાઃ, ધર્મકથાઃ, ऐहलौकिकपारलौकिक ऋद्विविशेषाः, ભોગપરિત્યાગાઃ,  
પ્રવ્રજ્યાઃ, પર્યાયાઃ, શ્રુતપરિગ્રહાઃ=શ્રુતાધ્યયનનિ, તપઉપધાનાનિ, સંલેખનાઃ, ભક્ત-  
પ્રત્યાખ્યાનાનિ, પાદપોષગમનાનિ, ઉપધાનાનિ, અન્તક્રિયા આખ્યાયન્તે । અન્તકૃતદશાસુ

પ્રશ્ન—હે ભદ્રન્ત ! આઠવેં અંગ અન્તકૃતદશાંગ કા કયા સ્વરૂપ હૈ ?

ઉત્તર—ઇસકા સ્વરૂપ ઇસ પ્રકાર હૈ—જિન્હોને કર્મ કા અથવા કર્મ  
કે ફલભૂત સંસાર કા અંતસમયમેં વિનાશ અભાવ કર દિયા હૈ વે હૈ  
અન્તકૃત । इन अन्तकृतों की अवस्थाओं का प्रतिपादन करनेवाले वर्ग-  
अध्ययन जिसमें हैं वह अन्तकृतदशांग है । तात्पर्य यह है कि-इस  
अंतकृतदशांगमें दश अध्ययन हैं, इनमें अन्तकृतों की अवस्थाओं का  
वर्णन किया गया है इसलिये, अथवा-अन्तकृतों की वक्तव्यता से प्रति-  
बद्ध इसमें दश अध्ययन रूप ग्रन्थपद्धतियां हैं इसलिये इसका नाम  
अन्तकृतदशांग हुआ है । यह व्युत्पत्ति प्रथमवर्गमें कथित दश अध्य-  
यनों की अपेक्षा को लेकर की गई है । इस अंगमें-अन्तकृत, मुनियों के  
नगरों का; उद्यानों का, चैत्यों-व्यन्तरायतनों का; वनषण्डों का; 'समव-  
सरणों का; राजाओं का, मातापिता का; धर्माचार्यों का, धर्मकथाओं का  
ऐहलौकिक तथा परलौकिक ऋद्विविशेषों का, भोगों के परित्याग का

પ્રશ્ન—હે ભદ્રન્ત ! આઠમાં અંગ અન્તકૃતદશાંગનું શું સ્વરૂપ છે ?

ઉત્તર—તેનું સ્વરૂપ આ પ્રમાણે છે-જેમણે કર્મનો અથવા કર્મ ફળરૂપ  
સંસારનો અંત સમયે વિનાશ-અભાવ કરી નાખ્યો છે તેઓ અન્તકૃત કહેવાય  
છે. એ અન્તકૃતોની અવસ્થાઓનું પ્રતિપાદન કરનાર અધ્યયનો જેમાં છે તે  
અંતકૃત દશાંગ છે. તાત્પર્ય એ છે કે-આ અંતકૃત દશાંગમાં દસ અધ્યયન છે,  
તેમાં અંતકૃતોની અવસ્થાઓનું વર્ણન કરવામાં આવેલ છે તેથી, અથવા અન્ત-  
કૃતોની વક્તવ્યતા વડે પ્રતિબદ્ધ દસ અધ્યયનરૂપ ગ્રન્થપદ્ધતિયો તેમાં છે તે  
કારણે તેનું નામ અંતકૃત દશાંગ પડ્યું છે. આ અંગમાં, અંતકૃત મુનિઓનાં  
નગરોનું, ઉદ્યાનોનું, ચૈત્યો-વ્યન્તરાયતનોનું, વનષણ્ડોનું, સમવસરણોનું, રાજા-  
ઓનું, માતા-પિતાનું, ધર્માચાર્યોનું, ધર્મકથાઓનું, આલૌકિક તથા પરલૌકિક ઋદ્ધિ



खलु परीताः=संख्याता वाचनाः, संख्येयानि अनुयोगद्वाराणि, संख्येया वेष्टकाः, संख्येया श्लोकाः, संख्येयाः निर्युक्तयः, तथा-संख्येयाः संग्रहण्यः, संख्येयाः प्रतिपत्तयः । ताः खलु अज्ञार्थतया अष्टममङ्गम् । अत्र-एकः श्रुतस्कन्धः, अष्टवर्गाः, अष्ट उद्देशनकालाः, अष्ट समुद्देशनकालाः । संख्येयानि पदसहस्राणि=त्रयोविंशति लक्षाणि चतुः सहस्राणि च पदानि पदाग्रेण=पदपरिमाणेन प्रज्ञप्तानि । संख्येयानि अक्षराणि अनन्ता गमाः, अनन्ता पर्यवाः, परीताः=असंख्याताः त्रसाः, अनन्ताः स्थावराः, एते उपरिनिर्दिष्टाः शाश्वत कृत निबद्ध निकाचिता जिनप्रज्ञप्ता भावा अत्र आख्यायन्ते, प्रज्ञाप्यन्ते, प्ररूप्यन्ते, दर्श्यन्ते, निदर्श्यन्ते, उपदर्श्यन्ते । स एवमात्मा भवति, स एव ज्ञाता, स एवं विज्ञाता च भवति । एवम्=उपरिनिर्दिष्ट प्रकारेणात्र अन्तकृतानां मुनीनां चरणकरण प्ररूपणा आख्यायते । उपसंहरति-‘से तं०’ इत्यादि । ता एता अन्तकृतदशाः - अन्तकृतदशाङ्गस्वरूपमेवंविज्ञेयमिति भावः ॥ सू० ५२ ॥

પ્રવ્રજ્યા કા પર્યાયો કા, શ્રુતોં કે અધ્યયન કા, તપ ઉપધાનોં કા, સંલેખના કા, ભક્તપ્રત્યાખ્યાનોં કા પાદપોપગમન કા ઔર અન્તક્રિયા કા વર્ણન કિયા ગયા હૈં ।

इस अंगमें संख्यात वाचनार्थ हैं, संख्यात अनुयोग द्वार हैं, संख्यात वेष्टक हैं, संख्यात श्लोक हैं, संख्यात निर्युक्तियाँ, संख्यात संग्रहणियाँ हैं एवं संख्यात प्रतिपत्तियाँ हैं । यह अंगों की अपेक्षा आठमाँ अंग है । इसमें एक श्रुतस्कंध है । आठ वर्ग हैं । आठ उद्देशनकाल और आठ समुद्देशन काल हैं ।

તેઈસ લાખ ચાર હજાર (૨૩૪૦૦૦) ઇસમેં પદ હૈં । સંખ્યાત અક્ષર હૈં । ઇસસે આગે “અણંતા ગમા, અણંતા પજ્જવા, પરીતા તસા, અણંતા

વિશેષાનું, લોગોનાં પરિત્યાગનું પ્રવ્રજ્યાનું પર્યાયોનું, શ્રુતોનાં અધ્યયનનું, તપ ઉપધાનોનું, સંલેખનાનું, ભક્ત પ્રત્યાખ્યાનોનું, પાદપોપગમનનું અને અંતક્રિયાનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે,

આ અંગમાં સંખ્યાત વાચનાઓ છે, સંખ્યાત અનુયોગ દ્વાર છે. સંખ્યાત વેષ્ટક છે, સંખ્યાત શ્લોક છે, સંખ્યાત નિર્યુક્તિયો, સંખ્યાત સંગ્રહણિયો અને સંખ્યાત પ્રતિપત્તિયો છે. અંગોની અપેક્ષાએ આ આઠમું અંગ છે. તેમાં એક શ્રુતસ્કંધ છે. આઠ વર્ગ છે. આઠ ઉદ્દેશનકાળ અને આઠ સમુદ્દેશન કાળ છે. તેમાં તેવીસ લાખ ચાર હજાર (૨૩૪૦૦૦) પદ છે, સંખ્યાત અક્ષર છે. અહીંથી લઈને “અણંતા ગમા, અણંતા પજ્જવા, પરીતા તસા અણંતા થાવરા સાસય-કહ-નિબ્ધ-

नवमाङ्गस्वरूपमाह—

मूलम्—से किं तं अणुत्तरोववाइयदसाओ ? अणुत्तरोववाइ-  
दयासु णं अणुत्तरोववाइयाणं नगराईं उज्जाणाईं चेइयाईं वण-  
संडाईं समोसरणाईं रायाणो अम्मापियरो धम्मायरिया धम्मक-  
हाओ इहलोगपरलोइया इड्ढिविसेसा भोगपरिच्चाया पव्वज्जाओ  
परियागा सुयपरिग्गहा तवोवहाणाईं पडिमाओ उवसग्गा संले-  
हणाओ भत्तपच्चक्खाणाईं, पाओवगमणाईं, अणुत्तरोववाइयत्ते  
उववत्ती, सुकुलपच्चायाईंओ, पुण बोहिलाभा, अंतकिरियाओ  
आघविज्जंति । अणुत्तरोववाइयदसासु णं परित्तावायणा, संखेज्जा  
अणुओगदारा, संखेज्जा वेढा, संखेज्जा सिलोगा, संखेज्जाओ  
निज्जुत्तीओ, संखेज्जाओ संगहणीओ, संखेज्जाओ पडिवत्तीओ ।  
से णं अंगट्ठयाए नवमे अंगे, एगे सुयक्खंधे, तिन्नि वग्गा,

थावरा, सासयकडनिवद्ध निकाइया जिणपणत्ता भावा आघतज्जंति  
पण्णविज्जंति, परूविज्जंति, दसिज्जंति, निदंसिज्जंति, उवदंसिज्जंति से  
एवंआया, एवंणाया, एवं विण्णाया ” इन समस्त पदो का अर्थ आचारांग  
के स्वरूप का निरूपण करते समय कर दिया गया है । इस प्रकार इस  
अंगमें उपर्युक्त प्रकार से अन्तकृत मुनियों की चरणसत्तरी तथा करण  
सत्तरी का आख्यान प्रज्ञापन आदि करनेमें आया है । इस तरह से अन्त-  
कृतदशाङ्ग का यह स्वरूप जानना चाहिये ॥ सू० ५२ ॥

निकाइया, जिणपणत्ता भावा, आघविज्जंति पण्णविज्जंति परूविज्जंति दंसि-  
ज्जंति, निदंसिज्जंति, उवदंसिज्जंति से एवं आया एवं णाया एवं विण्णाया ”  
ये अर्थां पढोने अर्थ आचारांग सूत्रनुं स्वइयनिइयणु करती वण्णते आया  
हीधो छे. आ रीते आ अंगमां उपर क्ख्हा प्रमाणे अंतकृत मुनियोनी यरण  
सत्तरी तथा करण सत्तरीनुं आख्यान, प्रज्ञापना आदि करवाभां आण्युं छे. आ  
रीते अंतकृतदशांगनुं आ स्वइय समण्वुं ॥ सू. ५२ ॥

तिन्नि उद्देशणकाला, तिन्नि समुद्देशणकाला, संखेज्जाइं पयसह-  
स्साइं पयग्गेणं, संखेज्जा अक्खरा, अणंता गमा, अणंता पज्जवा,  
परित्ता तसा, अणंता थावरा सासयकडनिबद्धनिकाइया जिण-  
पणत्ता भावा आघविज्जंति, पणविज्जंति, परूविज्जंति, दंसि-  
ज्जंति, निदंसिज्जंति उवदंसिज्जंति, से एवं आया, एवं नाया,  
एवं विण्णाया, एवं चरणकरणपरूवणा आघविज्जइ ६ ।  
से त्तं अणुत्तरोववाइयदसाओ ॥ सू० ५३ ॥

छाया—अथ कास्ता अनुत्तरोपपातिकदशाः ? अनुत्तरोपपातिकदशासु खलु  
अनुत्तरोपपातिकानां नगराणि उद्यानानि चैत्यानि वनपण्डाः राजानः अम्बापितरौ  
समवसरणानि धर्माचार्याः धर्मकथाः ऐहलौकिक पारलौकिक ऋद्धिविशेषाः भोग-  
परित्यागाः प्रव्रज्याः पर्यायाः श्रुतपरिग्रहाः तप उपधानानि प्रतिमा उपसर्गाः  
संलेखनाः भक्तप्रत्याख्यानानि पादपोषगमनानि अनुत्तरोपपातिकत्वे उपपातः,  
सुकुलप्रत्यायातयः पुनर्वीधिलाभाः अन्तक्रिया आख्यायन्ते अनुत्तरोपपातिकदशासु  
खलु परीता वाचनाः, संख्येयानि अनुयोगद्वाराणि, संख्येया वेष्टकाः, संख्येयाः  
श्लोकाः, संख्येया निर्युक्तयः, संख्येयाः संग्रहण्यः, संख्येयाः प्रतिपत्तयः । ताः  
खलु अङ्गार्थतया नवसमङ्गम्, एकः श्रुतस्कन्धः त्रयो वर्गाः, त्रय उद्देशनकालाः,  
त्रयः समुद्देशनकालाः, संख्येयानि पद सहस्राणि पदाग्रेण, संख्यातानि अक्षराणि,  
अनन्ता गमाः, परीतास्त्रसाः, अनन्ता स्थावराः, शाश्वतकृतनिबद्धनिकाचिता  
जिनप्रज्ञप्ता भावा आख्यायन्ते, प्रज्ञाप्यन्ते, प्ररूप्यन्ते, दर्श्यन्ते, निदर्श्यन्ते, उपद-  
र्श्यन्ते, स एवमात्मा, एवं ज्ञाता, एवं विज्ञाता, एवं चरणकरणप्ररूवणा आख्या-  
यते, ता एता अनुत्तरोपपातिकदशाः ॥ सू० ५३ ॥

टीका—‘ से किं तं० ’ इत्यादि ।

अथ कास्ता अनुत्तरोपपातिकदशाः ? इति प्रश्नः । उत्तरयति—अनुत्तरोपपाति-  
कदशासु—न विद्यते उत्तरः श्रेष्ठाऽस्मादित्यनुत्तरः उपपत्तनम्—उपपातः=जन्म, अनु-  
त्तर उपपातो येषां तेऽनुत्तरोपपातास्त एव—अनुत्तरोपपातिकास्तेषां दशास्तासु  
तथोक्तासु खलु अनुत्तरोपपातिकानां मुनीनां नगराणि, उद्यानानि, चैत्यानि, वन-

पण्डाः, राजानः, अम्बापितरः, समवसरणानि, धर्माचार्याः धर्मकथाः, इहलोक परलोक ऋद्धिविशेषाः, भोगपरित्यागाः=भोगपरिहाराः, प्रव्रज्याः, पर्यायाः, श्रुत-परिग्रहाः, तप उपधानानि, प्रतिमाः उपसर्गाः, संलेखनाः, भक्तप्रत्याख्यानानि, पाद-पोषगमनानि, अनुत्तरोपपातिकत्वे=अनुत्तरोपपातिकविमानेषु=उपपत्तिः=उपपातः, सुकुलप्रत्यायातयः=अनुत्तरविमानादायुः क्षयेण च्युतानां तेषां शोभनेषु कुलेषु जन्मानि,

अब नौवें अंगका स्वरूप कहते हैं—‘से किं तं अणुत्तरोववाइय-दसाओ०’ इत्यादि ।

शिष्य प्रश्न—हे भदन्त ! अनुत्तरोपपातिकदशाङ्ग का क्या स्वरूप है ? उत्तर—जिसकी अपेक्षा और कोई दूसरा जन्म श्रेष्ठ न हो उसका नाम अनुत्तरोपपात है । यह अनुत्तरोपपात जिनका होता है वे अनुत्तरोप-पातिक हैं । इनकी अवस्थाओं का जिसमें वर्णन है वह अनुत्तरोपपातिक-दशाङ्ग है । इस अनुत्तरोपपातिकदशाङ्ग में अनुत्तरोपपातिक मुनियों के नगरों का, उद्यानों का, चैत्योंव्यन्तरायतनों का, वनखंडों का, राजाओं का, मातापिता का, समवसहणों का, धर्माचार्यों का, धर्मकथाओं का, इस लोक संबंधी तथा परलोक संबंधी ऋद्धिविशेषों का, भागों के परित्याग का, दीक्षा का पर्यायों का, श्रुत के अध्ययन का दुष्करतपों का, विविध अवस्थाओं का, बारह भिक्षु प्रतिमाओं का, उपसर्गों का, भक्तप्रत्याख्यान नामके संधारे का, पादपोषगमन नामके संधारे का, अनुत्तरोपपात का—अनुत्तर विमानों में उत्पत्ति होने का, फिर वहां से आयु के अन्त में

हुवे नवमां अंगनुं स्वरूपवर्णुवे छे—“से किं तं अणुत्तरोववाइयदसाओ०” इत्यादि—

शिष्य प्रश्न—हे भदन्त ! अनुत्तरोपपातिक दशाङ्गनुं शुं स्वरूप छे ? उत्तर—जेना करतां भीजे केछि पणु जन्म श्रेष्ठ न होय तेनुं नाम अनुत्तरोपपात छे. जेने आ अनुत्तरोपपात थाय छे तेओ अनुत्तरोपपातिक कहेवाय छे. आ अनुत्तरोपपातिक दशाङ्गमां अनुत्तरोपपातिक मुनियोनां नगरानुं उद्यानानुं, चैत्यो—व्यन्तरायतनानुं, वनखंडानुं, राजाओनुं, मातापितानुं, समवसरणानुं, धर्माचार्योनुं, धर्मकथाओनुं, आदोड तथा परदोडनी आस ऋद्धिओनुं, लोगेना परित्यागनुं, दीक्षानुं, पर्यायानुं, श्रुतनां अध्ययननुं, दुष्करतपोनुं, विविध अवस्था-ओनुं, बार भिक्षु प्रतिमाओनुं, उपसर्गानुं, संलेखना भरणनुं, भक्त प्रत्याख्यान नामना संधारानुं, पादपोषगमन नामना संधारानुं, अनुत्तरोपपातनुं—अनुत्तर वि-मानोमां उत्पत्ति थवानुं, वणी त्यांथी आयुष्य पूरुं थतां व्यवीने उत्तम कुणोमां

પુનર્વોધિલાભાઃ, અન્તક્રિયાશ્ચ=મોક્ષપ્રાપ્તિલક્ષણાશ્ચ આખ્યાયન્તે । અનુત્તરોપપાતિક-  
 દશાસુ સ્વલુ પરીતાઃ=સંખ્યાતા વાચનાઃ, સંખ્યેયાનિ અનુયોગદ્વારાણિ, સંખ્યેયા  
 વેષ્ટકાઃ, સંખ્યેયાઃ શ્લોકાઃ, સંખ્યેયા નિર્યુક્તયઃ, સંખ્યેયાઃ સંગ્રહણ્યઃ, સંખ્યેયાઃ  
 પ્રતિપત્તયઃ । તાઃ સ્વલુ અઙ્ગાર્થતયા નવમમઙ્ગમ્ । અત્ર-એકઃ શ્રુતસ્કન્ધઃ ત્રયોવર્ગાઃ,  
 ત્રય ઉદ્દેશનકાલાઃ, ત્રયઃ સમુદ્દેશનકાલાઃ, સંખ્યેયાનિ પદસહસ્રાણિ=પટ્ચત્વારિંશ-  
 લ્લક્ષાણિ અષ્ટૌ ચ સહસ્રાણિ ( ૪૬૦૮૦૦૦ ) પદાનિ પદાગ્રેણ=પદપરિમાણેન,  
 સંખ્યેયાનિ અક્ષરાણિ, અનન્તા ગમાઃ, અનન્તાઃ પર્યવા, પરીતાસ્ત્રસાઃ, અનન્તાઃ  
 સ્થાવરાઃ, શાશ્વતકૃતનિવદ્ધનિકાચિતા જિનપ્રજ્ઞા ભાવા આખ્યાયન્તે, પ્રજ્ઞાપ્યન્તે,  
 પ્રરૂપ્યન્તે, દર્શ્યન્તે, નિદર્શ્યન્તે, ઉપદર્શ્યન્તે, સ એવમાત્મા, એવં જ્ઞાતા, એવં વિજ્ઞાતા  
 એવં ચરણકરણપ્રરૂપણા આખ્યાયતે ૬ । તા એતા અનુત્તરોપપાતિકદશાઃ ।  
 વ્યાખ્યા પૂર્વવત્ વોધ્યા ॥ સૂ. ૫૩ ॥

જ્યવ કર ઉત્તમ કુલોં મેં उनके जन्म लेने का पुनः बोधिप्राप्ति का  
 तथा अन्त में मोक्ष प्राप्त करने का कथन किया हुआ है । इस  
 अंग में संख्यात वाचनाएँ हैं संख्यात अनुयोग द्वार हैं संख्यात  
 वेष्टक हैं, संख्यात श्लोक हैं, संख्यात निर्युक्तियाँ हैं, संख्यात संग्रह-  
 णियाँ हैं और संख्यात प्रतिपत्तियाँ हैं । यह अंग, अंग की अपेक्षा नवमा  
 अंग है । इसमें एक श्रुतस्कंध है, तीन वर्ग हैं, तीन उद्देशनकाल हैं,  
 तीन समुद्देशनकाल हैं । इसमें पदों का परिमाण छयालीस लाख आठ  
 हजार ( ४६०८००० ) हैं । संख्यात अक्षर हैं । यहां भी “ अनन्तागमाः ”  
 इत्यादि पाठ का अर्थ पहले की भांति समझ लेना चाहिये । इस तरह  
 इस अंग में साधुओं के चरण और करण की प्ररूपणा हुई है । यह  
 अनुत्तरोपपातिकदशा का स्वरूप है ॥ सू. ५३ ॥

તેમનો જન્મ થવાનું, પુનઃ બોધિ પ્રાપ્તિનું તથા છેવટે મોક્ષ પ્રાપ્તિનું વર્ણન કરવામાં  
 આવ્યું છે. આ અંગમાં સંખ્યાત વાચનાઓ છે, સંખ્યાત અનુયોગ દ્વાર છે, સંખ્યાત  
 વેષ્ટક છે. સંખ્યાત શ્લોક છે, સંખ્યાત નિર્યુક્તિયો છે, સંખ્યાત સંગ્રહણિયો  
 છે, અને સંખ્યાત પ્રતિપત્તિયો છે. અંગોની અપેક્ષાએ આ નવમું અંગ છે. તેમાં  
 એક શ્રુતસ્કંધ છે, ત્રણ વર્ગો છે, ત્રણ ઉદ્દેશનકાળ તથા ત્રણ સમુદ્દેશનકાળ છે. તેમાં  
 છતાળીશ લાખ આઠ હજાર ( ૪૬૦૮૦૦૦ ) પદ છે. સંખ્યાત અક્ષર છે. અહીં  
 પણ “ અનન્તા ગમા ” ઇત્યાદિ પાઠનો અર્થ આગળની જેમ સમજી લેવો  
 જોઈયે. આ રીતે આ અંગમાં સાધુઓના ચરણ અને કરણની પ્રરૂપણા થઈ  
 છે. અનુત્તરોપપાતિક દશાનું આ સ્વરૂપ છે. ॥ સૂ. ૫૩ ॥

सम्प्रति प्रश्नव्याकरणनामकं दशममङ्गमाह —

मूलम्—से किं तं पण्हावागरणाइं ? पण्हावागरणेषु णं अट्ठु-  
त्तरं पसिणसयं अट्ठुत्तरं अपसिणसयं, अट्ठुत्तरं पसिणापसि-  
णसयं; तं जहा—अंगुट्ठपसिणाइं, बाहुपसिणाइं, अदागपसिणाइं,  
अन्ने वि विचित्ता विज्जाइसया, नागसुवन्नेहिं, सद्धिं दिव्वा  
संवाया आघविज्जंति । पण्हावागरणं परित्ता वायणा, संखेज्जा  
अणुओगदारा, संखेज्जा वेढा, संखेज्जा सिलोगा संखेज्जाओ  
निज्जुत्तीओ, संखेज्जाओ संगहणीओ, संखेज्जाओ पडिवत्तीओ ।  
से णं अंगट्ठयाए दसमे अंगे, एगे सुयक्खंधे, पणयालीसं अज्जयणा  
पणयालीसं उद्देसणकाला, पणयालीसं समुद्देसणकाला, संखेज्जाइं  
पयसहस्सायं पयग्गेणं, संखेज्जा अक्खरा, अणंता गमा  
अणंता पज्जवा, परित्ता तसा, अणंता थावरा, सासयकडनिबद्ध-  
निकाइया जिणपण्णत्ता भावा आघविज्जंति, पण्णविज्जंति,  
परूविज्जंति, दंसिज्जंति, निदंसिज्जंति, उवदंसिज्जंति । से एवं  
आया, एवं नाया, एवं विण्णाया एवं चरणकरणपरूवणा आघ-  
विज्जइ ६ । से तं पण्णावागरणाइं ॥ सू० ५४ ॥

छाया—अथ कानितानि प्रश्नव्याकरणानि ? प्रश्नव्याकरणेषु खलु अष्टोत्तरं  
प्रश्नशतम्, अष्टोत्तरम् अप्रश्नशतम्, अष्टोत्तरं प्रश्नाप्रश्नशतं विद्यातिशयाः, नागसु-  
पर्णैः सार्द्धं दिव्यासंवादा आख्यायन्ते, तद्यथा—अङ्गुष्ठप्रश्नाः, बाहुप्रश्नाः, आद-  
र्शप्रश्नाः अन्येऽपि विचित्रा प्रश्नव्याकरणानां परीता वाचनाः, संख्येयान्यनुयोग-  
द्वाराणि, संख्येया वेष्टकाः संख्येयाः श्लोकाः, संख्येयाः निर्युक्तयः, संख्येयाः  
संग्रहण्यः, संख्येयाः प्रतिपत्तयः । तानि खलु अङ्गार्थतया दशममङ्गम्, एकः श्रुत-



સ્કન્ધઃ, પશ્ચચત્વારિંશદધ્યયનાનિ પશ્ચચત્વારિંશદ્ ઉદ્દેશનકાલા, પશ્ચચત્વારિંશત્ સમુદ્દે-  
શનકાલાઃ, સંખ્યેયાનિ પદસહસ્રાણિ પદાગ્રેણ, સંખ્યેયાનિ, અક્ષરાણિ, અનન્તાગમાઃ  
અનન્તાઃ પર્યાયાઃ, અનન્તાઃ પર્યવાઃ, પરીતાસ્ત્રસાઃ, અનન્તાઃ સ્થાવરાઃ, શાશ્વત  
કૃતનિવદ્ધનિકાચિતાઃ જિનપ્રજ્ઞસા ભાવા આખ્યાયન્તે, પ્રજ્ઞાપ્યન્તે, પ્રરૂપ્યન્તે,  
દર્શ્યન્તે, નિદર્શ્યન્તે, ઉપદર્શ્યન્તે, સ એવમાત્મા, એવં જ્ઞાતા, એવં વિજ્ઞાતા, એવં  
ચરણકરણપ્રરૂપણા આખ્યાયતે તાન્યેતાનિ પ્રશ્નવ્યાકરણાનિ ॥ સૂ૦ ૫૪ ॥

ટીકા—‘ સે કિં તં ’ ઇત્યાદિ—

ગણિપિટકસ્ય દશમાઙ્ગસ્વરૂપજિજ્ઞાસયા પૃચ્છતિ—અથ કાનિતાનિપ્રશ્નવ્યાક-  
રણાનિ-પ્રશ્નાઃ=જિજ્ઞાસાવિષયીભૂતાઃ પદાર્થાઃ, વ્યાકરણાનિ=તન્નિર્વચનાનિ, એતેષાં  
યોગાદઙ્ગમપિ પ્રશ્નવ્યાકરણાનિ, અથવા-પ્રશ્નવ્યાકરણાનિ ચ સન્તિ યેષુ તાનિ-  
પ્રશ્નવ્યાકરણાનિ ?, ઉત્તરયતિ —પ્રશ્નવ્યાકરણેષુ સ્વલુ અષ્ટોત્તરં પ્રશ્નશતમ્=  
અષ્ટોત્તરશતસંખ્યકાઃ પ્રશ્નાઃ, અષ્ટોત્તરમપ્રશ્નશતમ્ — અષ્ટોત્તરશતસંખ્યકા  
અપ્રશ્નાઃ, અષ્ટોત્તરં પ્રશ્નાપ્રશ્ન શતમ્ — અષ્ટોત્તરશતસંખ્યકાઃ પ્રશ્નાપ્રશ્નાઃ,  
તત્ર-અઙ્ગુષ્ઠવાહુપ્રશ્નાદિકા મન્ત્રવિદ્યાઃ પ્રશ્નાઃ અયં ભાવઃ—યાસાં મન્ત્રવિદ્યાનાં પ્રમા-

અવ દશવેં અંગ પ્રશ્નવ્યાકરણકા સ્વરૂપ બતલાયા જાતા હૈ—

‘ સે કિં તં પળ્હાવાગરણાઈ૦ ’ ઇત્યાદિ ।

શિષ્ય પૂછતા હૈ—હે ભદ્રન્ત ! દશવેં અંગ પ્રશ્નવ્યાકરણકા કયા  
સ્વરૂપ હૈ ?

ઉત્તર—જિજ્ઞાસાકે વિષયભૂત પદાર્થ ઓર ઉત્તરકા નિર્વચન, હન દોનોં  
કે યોગ સે યહ અંગ મી ‘ પ્રશ્નવ્યાકરણ ’ હસ નામસે કહા ગયા હૈ । અથવા  
પ્રશ્ન ઓર વ્યાકરણ (ઉત્તર)કે દોનોં જિસ અંગમેં હૈં વહ પ્રશ્નવ્યાકરણ હૈ । હસ  
પ્રશ્નવ્યાકરણમેં એકસૌ આઠ ૧૦૮ પ્રશ્ન, એકસૌ આઠ ૧૦૮ અપ્રશ્ન તથા  
એકસૌ આઠ ૧૦૮ હી પ્રશ્નાપ્રશ્ન હૈં । જિન મન્ત્રવિદ્યાઓંકે પ્રમાવસે અંગુષ્ઠ

હવે દશમાં અંગ “ પ્રશ્નવ્યાકરણ ” નું સ્વરૂપ બતાવવામાં આવે છે—  
“ સે કિં તં પળ્હાવાગરણાઈ૦ ” ઇત્યાદિ.

શિષ્ય પૂછે છે—હે ભદ્રન્ત ! દશમાં અંગ પ્રશ્નવ્યાકરણનું શું સ્વરૂપ છે ?

ઉત્તર—જિજ્ઞાસાના વિષયભૂત પદાર્થો અને તેમનું નિર્વચન, એ બન્નેના  
યોગથી આ અંગ પણ “ પ્રશ્નવ્યાકરણ ” ના નામે યોગબધ છે. અથવા પ્રશ્ન અને  
વ્યાકરણ—(ઉત્તર) એ બન્ને જે અંગમાં છે તે પ્રશ્નવ્યાકરણ નામનું અંગ છે.  
આ પ્રશ્નવ્યાકરણમાં એક સો આઠ (૧૦૮) પ્રશ્નો, એકસો આઠ (૧૦૮) અપ્રશ્ન  
અને એકસો આઠ (૧૦૮) જ પ્રશ્નાપ્રશ્ન છે, જે મન્ત્રવિદ્યાઓના પ્રમાવથી

વેળ અઙ્ગુષ્ઠગ્રાહ્યાદયોઽપિ પૃષ્ઠાનાં વિષયાણામુત્તરં દદતિ સા મન્ત્રવિદ્યા અઙ્ગુષ્ઠગ્રાહુ-  
પ્રશ્નાદિકા ઉચ્યન્તે । તા એવં હ્ર પ્રશ્નશબ્દેન વિવક્ષિતા इति । याः पुनर्विद्या मन्त्र-  
विधिना जप्यमाना अपृष्ठा एव शुभाशुभं कथयन्ति ता अप्रश्नाः याः पुनर्विद्या  
अङ्गुष्ठादि प्रश्नभावं तदभावं चाधिगम्य शुभाशुभं कथयन्ति ताः प्रश्नाप्रश्नाः ।  
एते चतुर्विंशत्यधिकत्रिंशतसंख्यकाः प्रश्नाप्रश्न-प्रश्नाप्रश्नाः आख्यायन्ते । तानेवाह-  
-तद्यथा-अङ्गुष्ठप्रश्नाः, बाहुप्रश्नाः, आदर्शप्रश्नाः, तथा-इतोऽन्येऽपि विचित्राः=  
अनेकविधाः । विद्यातिशयाः=स्तम्भनवशीकरणविद्वेषणोच्चाटनादयः, तथा-साध-  
कानां नागसुपर्णैः=उपलक्षणत्वाद् यक्षादिभिश्च सह दिव्याः=तात्त्विकाः संवादाः=

બાહુ આદિ, પૂછે હુ એ વિષયોં કા ઉત્તર દેતે હું વે મંત્રવિદ્યાએં યહાં પ્રશ્ન શબ્દ  
સે ગૃહીત હુઈ હું । જો વિદ્યાએં મંત્રકી વિધિકે અનુસાર જપી જાને પર  
વિના પૂછે હી શુભ ઓર અશુભકો બતલાતી હું વે અપ્રશ્ન શબ્દસે યહાં  
ગૃહીત હુઈ હું । તથા જો વિદ્યાએં અંગુષ્ઠ આદિકે પ્રશ્નભાવકો તથા इनके  
अभावको लेकर शुभ और अशुभ को प्रकट करती हैं वे प्रश्नाप्रश्न हैं,  
और इनका ग्रहण यहाँ प्रश्नाप्रश्न शब्दसे हुआ है । इन सबकी संख्या  
योग करने पर तीनसौ चोबीस ३२४ होती हैं । इन्हीं प्रश्न आदिकों को  
सूत्रकार 'तं जहा' इत्यादिसे सूचित करते हैं, वे कहते हैं कि इस अङ्ग  
में अङ्गुष्ठप्रश्न, बाहुप्रश्न, आदर्शप्रश्नका वर्णन किया गया है, तथा  
इनसे अतिरिक्त अनेक प्रकारके जो स्तम्भन, विद्वेषण, वशीकरण उच्चाटन  
आदि ये विद्यातिशय हैं, तथा नागसुपर्णों के साथ एवं उपलक्षणसे यक्ष

અંગુષ્ઠ બાહુ આદિ, પૂછવામાં આવેલ વિષયોનો ઉત્તર આપે છે તે મંત્રવિદ્યાઓ  
અહીં પ્રશ્ન શબ્દથી ગૃહીત થયેલ છે. જે વિદ્યાઓ મંત્રની વિધિ પ્રમાણે જપી  
જવા છતાં પણ વિના પૂછયે જ શુભ અને અશુભને બતાવે છે તે અપ્રશ્ન છે,  
અને એમનું જ અપ્રશ્ન શબ્દથી અહીં ગ્રહણ થયેલ છે. તથા જે વિદ્યાઓ  
અંગુષ્ઠ આદિના પ્રશ્નભાવને તથા તેમના અભાવને લઈને શુભ અને અશુભને  
પ્રગટ કરે છે તેઓ પ્રશ્નાપ્રશ્ન કહેવાય છે, અને અહીં પ્રશ્નાપ્રશ્ન શબ્દ વડે  
તેમનું ગ્રહણ કરાયેલ છે. આ બધાનો સરવાળો કરતા તેમની કુલ સંખ્યા ત્રણસો  
ચોવીસ (૩૨૪) થાય છે. તે પ્રશ્ન વગેરેને સૂચિત કરવા માટે સૂત્રકારે 'તં જહા'  
ઇત્યાદિ પદો આપ્યા છે, તેઓ કહે છે કે આ અંગમાં અંગુષ્ઠપ્રશ્ન, બાહુપ્રશ્ન,  
આદર્શપ્રશ્ન વગેરેનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે. અને તેનાથી અતિરિક્ત અनेक  
પ્રકારના જે સ્તંભન, વિદ્વેષણ, વશીકરણ, ઉચ્ચાટન આદિ જે વિદ્યાતિશય છે,  
તથા નાગસુપર્ણોની સાથે અને ઉપલક્ષણથી યક્ષ આદિકોની સાથે સાધકલોકોનો



एकादशाङ्गस्वरूपमाह—

मूलम्—से किं तं विवागसुयं ? विवागसुएणं सुकडदुकड्डाणं कम्माणं फलविवागो आघविज्जइ । तत्थ णं दस दुहविवागा, दस सुहविवागा । से किं तं दुहविवागा ? दुहविवागेषु णं दुहविवागाणं नगराइं उज्जाणाइं वणसंडाइं चेइयाइं समोसरणाइं रायाणो अम्मापियरो धम्मायरिया धम्मकहाओ इहलोइयपरलोइया इड्ढिविसेसा, निरयगमणाइं संसारभवपवंचा, दुहपरंपराओ दुक्कुलपच्चायाईओ दुल्लहबोहियत्तं आघविज्जंति । से त्तं दुहविवागा । से किं तं सुहविवागा ? सुहविवागेषु णं सुहविवागाणं नगराइं उज्जाणाइं वणसंडाइं समोसरणाइं रायाणो अम्मापियरो धम्मायरिया धम्मकहाओ इहलोइयपरलोइय इड्ढिविसेसा भोगपरिच्चागा पव्वज्जाओ परियागा सुयपरिग्गहातबोवहाणाइं संलेहणाओ, भत्तपच्चक्खाणाइं, पाओवगमणाइं, देवलोगगमणाइं, सुहपरंम्पराओ, सुकुलपच्चायाईओ, पुणबोहिलाहा, अंतकिरियाओ आघविज्जंति । विवागसुयस्सणं परित्ता वायणा, संखेज्जा अणुओगदारा, संखेज्जा वेढा, संखेज्जा सिलोगा, संखेज्जाओ निज्जुत्तीओ, संखिज्जाओ संगहणीओ संखेज्जाओ पडिवत्तीओ । से णं अंगट्टयाए इक्कारसमे अंगे, दो सुयक्खंधा, वीसं अज्झयणा, वीसं उद्देसणकाला, वीसं समुद्देसणकाला, संखेज्जाइं पयसहस्साइं पयग्गेणं, संखेज्जा अक्खरा, अणंता गमा, अणंता पज्जवा, परित्ता तसा, अणंता थावरा,

सामयकद्विनिवृद्धनिकाइया जिणपणत्ता भावा आघविज्जंति,  
पणविज्जंति, परुविज्जंति, दंसिज्जंति निदंसिज्जंति, उवदं-  
सिज्जंति । से एवं आया, एवं नाया, एवं विण्णाया । एवं चरण  
करण परुवणा आघविज्जइ । से त्त विवागसुयं ॥ सू० ५५ ॥

छाया—अथ किं तद् विपाकश्रुतं ? विपाकश्रुते खलु सुकृतदुष्कृतानां कर्मणां  
फलविपाक आख्यायते । तत्र खलु दश दुःखविपाकाः दश सुखविपाकाः । अथ के  
ते दुःखविपाकाः ? दुःखविपाकेषु खलु दुःखविपाकानां नगराणि उद्यानानि  
वनपण्डाः चैत्यानि, समवसरणानि, राजानः अम्बाणितरः धर्माचार्याः धर्मकथाः  
ऐहलौकिकपारलौकिका ऋद्धिविशेषाः, निरयगमनानि संसारभ्रमप्रपञ्चाः, दुःख  
परम्परा दङ्कुलप्रत्यायातयः दुर्लभबोधिकत्वम् आख्यायते त एते दुःखविपाकाः ।  
अथ के ते सुखविपाकाः ? सुखविपाकेषु खलु सुखविपाकानां नगराणि, उद्यानानि,  
वनपण्डाः, चैत्यानि, समवसरणानि, राजानः, अम्बाणितरः, धर्माचार्याः, धर्मकथाः,  
ऐहलौकिक पारलौकिका ऋद्धि विशेषाः भोगपरित्यागाः प्रव्रज्याः, पर्यायाः,  
श्रुतपरिग्रहाः, तप उपधानानि, संलेखनाः, भक्तपत्याख्यानानि, पादपोषगमनानि,  
देवलोकगमनानि, सुखपरम्पराः, सकुलप्रत्यायातयः, पुनर्वोधिभिलाभाः, अन्तक्रिया  
आख्यायन्ते । विपाकश्रुतस्य खलु परीता वाचना संख्येयानि अनुयोगद्वाराणि,  
संख्येया वेण्टका, संख्येया श्लोकाः, संख्येयाः निर्युक्तयः, संख्येयाः संग्रहण्यः,  
संख्येयाः प्रतिपत्तयः तत् खलु अङ्गार्थतया एकादशमङ्गम्, विंशतिरध्ययनानि, विंश-  
तिरुद्देशनकालाः, विंशतिः समुद्देशनकालाः, संख्येयानि पदसहस्राणि, पदाग्रेण,  
संख्येयानि अक्षराणि, अनन्ता गमाः, अनन्ताः पर्यवाः परीतास्त्रमाः, अनन्ताः  
स्थावराः, शाश्वतकृतनिवृद्धनिकाचिता जिनप्रज्ञप्ता भावा आख्यायन्ते, प्रज्ञाप्यन्ते,  
प्ररूप्यन्ते, दर्श्यन्ते, निदर्श्यन्ते, उपदर्श्यन्ते । स एवमात्मा, एवं ज्ञाता, एवं विज्ञाता,  
एवं चरणकरणप्ररूपणा आख्यायते । तदेतद् विपाकश्रुतम् ॥ सू० ५५ ॥

टीका—‘ से किं तं विवागसुयं० ’ इत्यादि—

एकादशाङ्गजिज्ञासायां पृच्छति—अथ किं तद् विपाकश्रुतम् विपचनं विपाकः=

अव ग्यारहवे अंग विपाकश्रुतका स्वरूप कहते हैं—‘ से किं तं विवा-  
गसुयं ? ’ इत्यादि । ग्यारहवें अंग विपाकश्रुतके स्वरूपको जाननेकी इच्छा

हुवे अगीयारमां अंग—विपाकश्रुतनुं स्वइय वणुवे छे—“ से किं तं विवाग-  
सुयं ? ” इत्यादि. अगीयारमां अंग—विपाकश्रुतनुं स्वइय समजवाने भाटे शिष्य

શુભાશુભકર્મપરિણામસ્તત્પ્રતિપાદકં શ્રુતં વિપાકશ્રુતમ્, તત્કિસ્વરૂપમિતિ પ્રશ્નઃ ?  
 उत्तरयति-विपाकश्रुते खलु सुकृतदुष्कृतानां कर्मणां फलविपाकआख्यायते ।  
 तत्र=विपाके खलु दश दुःखविपाकाः=दुःखविपाकप्रदर्शकानि दशाध्ययनानि सन्ति,  
 सुखविपाक प्रदर्शकानि च दशाध्ययनानि सन्ति । दुःखविपाक स्वरूपजिज्ञा-  
 सायां पृच्छति-अथ के ते दुःखविपाकाः ? इति । उत्तरयति-दुःखविपाकेषु खलु  
 दुःखविपाकानाम्-दुःखविपाकोऽस्त्येषामिति दुःखविपाकाः, मत्वर्थीयोऽच् प्रत्ययः,  
 तेषां तथोक्तानाम्-दुःखफलभोक्तृणां जीवानां नगराणि, उद्यानानि, वनपण्डाः,

સે શિષ્ય પૂછતા હૈ-હે ભદ્રન્ત ! વિપાકશ્રુતકા સ્વરૂપ કયા હૈ ? ઉત્તર-શુભ  
 और अशुभ कर्मों के परिपाकका नाम विपाक है । इस विपाकका प्रति-  
 पादक जो श्रुत है वह विपाकश्रुत है । इस अंगमें पुण्य और पापप्रकृति-  
 विपाक का कथन किया गया है । इसमें दुःखविपाक दश हैं तथा सुख  
 विपाक भी दश हैं अर्थात्-इस विपाकश्रुतमें दुःखविपाकप्रदर्शक दश  
 अध्ययन हैं और सुखविपाक प्रदर्शक भी दश अध्ययन हैं, इस तरह  
 यह विपाकश्रुत बीस अध्ययनोंवाला है । दुःखविपाक प्रदर्शक अध्ययनों  
 का नाम दुःखविपाक और सुखविपाकप्रदर्शक अध्ययनों का नाम  
 सुखविपाक है । अब शिष्य दुःखविपाक के स्वरूप को जानने की इच्छा  
 से पूछता है-हे भदन्त ! वे दुःखविपाक कया है ?

ઉત્તર—इन दुःखविपाकोंमें दुःखविपाक को भोगनेवालों के नगरों  
 का, उद्यानों का, वनपण्डों का, चैत्यों का अर्थात् व्यन्तरायतनों का, सम-

પૂછે છે-હે ભદ્રન્ત ! વિપાકશ્રુતનું શું સ્વરૂપ છે ?

ઉત્તર—શુભ અને અશુભ કર્મોના પરિપાકનું નામ વિપાક છે. આ વિપાકનું  
 પ્રતિપાદન કરનાર જે સૂત્ર છે તે સૂત્રનું નામ વિપાકશ્રુત છે. આ અંગમાં પુન્ય  
 અને પાપપ્રકૃતિ રૂપ કર્મોના ફળસ્વરૂપ વિપાકનું વર્ણન કરાયું છે. આ વિપાક  
 શ્રુતમાં દુઃખવિપાક પ્રદર્શક દસ અધ્યયન છે અને સુખવિપાક પ્રદર્શક પણ દસ  
 અધ્યયન છે, આ રીતે આ વિપાકશ્રુત વીસ અધ્યયનો વાળું છે. દુઃખવિપાક  
 પ્રદર્શક અધ્યયનોનું નામ દુઃખવિપાક અને સુખવિપાક પ્રદર્શક અધ્યયનોનું નામ  
 સુખવિપાક છે. હવે શિષ્ય દુઃખવિપાકનું સ્વરૂપ જાણવાને માટે પૂછે છે-હે  
 ભદ્રન્ત ! તે દુઃખવિપાક શું છે ? ઉત્તર—અ દુઃખવિપાકોમાં દુઃખવિપાક ભોગ  
 નારાઓનાં નગરોનું ઉદ્યાનોનું, વનપડોનું ચૈત્યોનું એટલે કે વ્યન્તરાયતનોનું,



चैत्यानि, समवसरणानि राजानः, अम्बापितरः, धर्माचार्याः, धर्मकथाः, ऐहलौकिक पारलौकिका ऋद्धिविशेषाः, निरयगमनानि=नरकगमनानि, संसारभवप्रपञ्चाः—संसारे=संसृतौ भवानां=जन्मनां प्रपञ्चाः=विस्ताराः, दुःखपरम्पराः, दुष्कुलप्रत्यायातयः दुष्कुलेषु जन्मानि, दुर्लभबोधिता च आख्यायते । त एते दुःखविपाकाः । सम्प्रति सुखविपाकं जिज्ञासते—अथ के ते सुखविपाकाः ? इति । उत्तरयति—सुखविपाकेषु खलु सुखविपाकानां=सुखफलभोक्तृणां नगराणि, उद्यानानि, वनषण्डाः, चैत्यानि, समवसरणानि, राजानः, अम्बापितरः, धर्माचार्याः, धर्मकथाः, ऐहलौकिक पारलौकिका ऋद्धिविशेषाः, भोगपरित्यागाः, प्रव्रज्याः, पर्यायाः, श्रुतपरिग्रहाः, तप उपधानानि, संलेखनाः, भक्तप्रत्याख्यानानि, पादपोषगमनानि, देवलोकगमनानि, सुखपरम्पराः, सुकुलप्रत्यायातयः=देवलोकच्यव-

वसरणों का, राजाओं का, उनके माता पिताओं का, धर्मचार्यों का, ऐहलौकिक पारलौकिक ऋद्धिविशेषों का नरक गमन का, संसारमें जन्म लेने की परम्परा का, दुष्कुलोंमें जन्म लेने का, और दुर्लभबोधिता का कथन करनेमें आया है । ये दुःख विपाक कहे गये हैं । अब शिष्य सुखविपाक के स्वरूप को पूछता है—हे भदन्त ! सुखविपाक का स्वरूप क्या है ? उत्तर—सुखविपाकोमें सुख रूप फल भोगनेवाले जीवों के नगरों का, उद्यानों का, वनषण्डों का, चैत्यो—व्यन्तरायतनों का, समवसरणों का, राजाओं का, उनके माता पिताओं का, धर्माचार्यों का धर्मकथाओं का उनकी इहलोक संबंधी तथा परलोकसंबंधी ऋद्धियों का भोगों के परित्याग का प्रव्रज्या का पर्यायों का श्रुताध्ययनों का, प्रकृष्टतपों का, संलेखना के आराधन का, भक्तप्रत्याख्यान का, पादपोषगमन का, देवलोकप्राप्ति का,

समवसरणानुं, राज्ञ्यनुं, तेमनुं मातापितानुं, धर्माचार्यानुं, धर्मकथायानुं, ऐहलौकिक परलौकिक ऋद्धिविशेषानुं, नरकगमननुं, संसारमां जन्म देवानि परंपरानुं दुष्कुलोमां जन्मदेवानुं, अने दुर्लभ बोधितानुं वर्णन करवामां आव्युं छे. ये दुःखोने विपाक कहेवामां आव्यां छे. हवे शिष्य सुखविपाकनुं स्वरूप पूछे छे—हे भदन्त ! सुखविपाकनुं शुं स्वरूप छे ? उत्तर—सुखविपाकोमां सुखरूप इण भोगवनार लोवामां नगरानुं, उद्यानानुं, वनषण्डानुं, चैत्यो—व्यन्तरायतनानुं समवसरणानुं, राज्ञ्यनुं, तेमना मातापितानुं, धर्माचार्यानुं, धर्मकथायानुं, तेमनी आदौक संबन्धी तथा परलौक संबन्धी ऋद्धियानुं, भोगोना परित्यागनुं प्रव्रज्यानुं, पर्यायानुं, श्रुताध्ययनानुं, प्रकृष्ट तपानुं, संलेखनानां आराधननुं, भक्त प्रत्याख्याननुं पादपोषगमननुं, देवलोक प्राप्तिनुं, सुखोनी परंपरानुं त्यांथी

નાનન્તરં શોભનકુલેષ્ટત્તયઃ, પુનર્વોધિલાભાઃ, અન્તક્રિયાશ્ચ આખ્યાયન્તે । વિપાકશ્રુતસ્ય ચ્વલુ પરીતાઃ=સંખ્યેયા વાચનાઃ, સંખ્યેયાનિ અનુયોગદ્વારાણિ, યાવત્ સંખ્યેયા વેષ્ટકાઃ સંખ્યેયા શ્લોકાઃ, સંખ્યેયા નિર્યુક્તયઃ, સંખ્યેયાઃ સંગ્રહણ્યઃ, સંખ્યેયા પ્રતિપત્તયઃ । સ=વિપાકઃ ચ્વલુ અર્જાર્થતયા એકાદશમઙ્ગમ્ । અત્ર વિંશતિ-રધ્યયનાનિ, વિંશતિરુદ્દેશનકાલાઃ, વિંશતિઃ સમુદ્દેશનકાલાઃ । તથા-સંખ્યેયાનિ પદસહસ્રાણિ=એકાકોટિશ્ચતુરશીતિલક્ષાણિ દ્વાત્રિંશત્સહસ્રાણિ ( ૧૮૪૩૨૦૦૦ ) ચ પદાનિ પદાગ્રેણ=પદપરિમાણેન, તથા-સંખ્યેયાનિ અક્ષરાણિ, અનન્તાગમાઃ અનન્તાઃ પર્યવાઃ, ' પરીતાસ્ત્વસાઃ ' ઇત્યાધારમ્ય ' એવં વિજ્ઞાતા ' ઇત્યન્તઃ પાઠો વોદ્યઃ । એવમ્=ઉક્તપ્રકારેણાત્રાઙ્ગે સાધૂનાં ચરણકરણપ્રરૂપણા આખ્યાયતે=કથ્યતે । તદેતદ્ વિપાકશ્રુતમ્ ॥ સૂ. ૫૬ ॥

સુર્વોંની પરમ્પરા કા સુકુલોંમેં જન્મ ધારણ કરને કા, પુનર્વોધિ કી પ્રાપ્તિ હોને કા, તથા ઉનકી અન્તક્રિયા કા-મુક્તિમેં પહુંચને કા કથન કરને મેં આયા હૈ ।

વિપાકશ્રુતમેં સંખ્યાતવાચનાઈ હૈ, સંખ્યાત અનુયોગ દ્વાર હૈં' સંખ્યાત વેષ્ટક હૈં, સંખ્યાત શ્લોક હૈ, સંખ્યાત નિર્યુક્તિયાં હૈં, સંખ્યાત સંગ્રહણિયાં હૈં, ઓર સંખ્યાત પ્રતિપત્તિયાં હૈં । યહ વિપાક શ્રુત અંગ કી અપેક્ષા ગ્યારહવાં અંગ હૈ, હસમેં દો શ્રુતસ્કન્ધ વીસ અધ્યયન હૈં, વીસ હી ઉદ્દેશન કાલ એવં વીસ હી સમુદ્દેશનકાલ હૈં । હસકે સંખ્યાતપદ હૈં અર્થાત્ પદોં કા પ્રમાણ એક કરોડ ચોરાસી લાખ બત્તીસ હજાર ( ૧૮૪૩૨૦૦૦ ) હૈ । હસમેં સંખ્યાત અક્ષર હૈં, અનંત ગમ હૈં, પર્યાય મી અનંત હૈં, સંખ્યાત ત્રસ હૈં-યહાં સે લેકર ' હસ પ્રકાર કા વિજ્ઞાતા દો હૈ ' -યહાં તક સમજ-લેના ચાહિયે ।

અયવીને તે સુકુળોમાં જન્મ ધારણ કરવાનું, પુનર્વોધિની પ્રાપ્તિ થવાનું તથા તેમની અન્તક્રિયાનું-મોક્ષે પહોંચવાનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે.

વિપાકશ્રુતમાં સંખ્યાત વાચનાઓ છે. સંખ્યાત અનુયોગ દ્વાર છે, સંખ્યાત વેષ્ટક છે, સંખ્યાત શ્લોક છે, સંખ્યાત નિર્યુક્તિયો છે, સંખ્યાત સંગ્રહણિયો છે અને સંખ્યાત પ્રતિપત્તિયો છે. અંગોની અપેક્ષાએ આ વિપાકશ્રુત અગીયારમું અંગ છે. તેમાં બે શ્રુતસ્કંધો છે. વીસ અધ્યયન છે, વીસજ ઉદ્દેશનકાળ છે અને વીસ જ સમુદ્દેશનકાળ છે. તેમાં સંખ્યાત પદ છે, એટલે પહોતું પ્રમાણ એક કરોડ ચોરાસી લાખ બત્તીસ હજાર ( ૧૮૪૩૨૦૦૦ ) છે. તેમાં સંખ્યાત અક્ષર છે. અનંત ગમ છે, પર્યાય પણ અનંત છે, સંખ્યાત ત્રસ છે-અહીંથી લઈને ' આ પ્રકારનો વિજ્ઞાતા હોય છે ' -અહીં સુધી સમજાવેલું બોધ્યું.

પ્રવચનપુરુષસ્ય દ્વાદશમજ્ઞમાહ—

મૂલમ્—સે કિં તં દિદ્ધિવાણં? દિદ્ધિવાણં પં સવ્વભાવપ્રરૂપણા આઘવિજ્જહં । સે સમાસઓ પંચવિહે પળળત્તે, તં જહા—પરિકમ્મે ૧, સુત્તાઈં ૨, પુઠ્ઠવગયં ૩, અણુઓગો ૪, ચૂલિયા ૫ । સે કિં તં પરિકમ્મે? પરિકમ્મે સત્તવિહે પળળત્તે, તં જહા—સિદ્ધસેણિયા પરિકમ્મે ૧, મણુસેણિયાપરિકમ્મે ૨, પુદ્ધસેણિયા પરિકમ્મે ૩, ઓગાઢસેણિયા પરિકમ્મે ૪, ઉવસંપજ્જણસેણિયા પરિકમ્મે ૫, વિપ્પજહણસેણિયા પરિકમ્મે ૬, ચુયાચુયસેણિયા પરિકમ્મે ૭,

છાયા—અથ કોઽસૌ દૃષ્ટિવાદઃ ? દૃષ્ટિવાદે સ્વલુ સર્વભાવપ્રરૂપણા આખ્યાયતે, સ સમાસતઃ પંચવિધઃ પ્રજ્ઞસઃ, તથથા—પરિકર્મ ૧, મૂત્રાણિ ૨, પૂર્વગતમ્ ૩, અનુયોગઃ ૪, ચૂલિકા ૫, અથ કિં તત્પરિકર્મ ? પરિકર્મ સપ્તવિધં પ્રજ્ઞસમ્, તથથા—સિદ્ધશ્રેણિકા પરિકર્મ ૧, મનુષ્યશ્રેણિકા પરિકર્મ ૨, પૃષ્ઠશ્રેણિકા પરિકર્મ ૩, અવગાઢશ્રેણિકા પરિકર્મ ૪, ઉપસંપાદન શ્રેણિકા પરિકર્મ ૫, વિપ્રહાણશ્રેણિકા પરિકર્મ ૬, ચ્યુતાચ્યુતશ્રેણિકા પરિકર્મ ૭ ।

ટીકા—‘ સે કિં તં દિદ્ધિવાણં ’ इत्यादि ।

सम्प्रति द्वादशस्य दृष्टिवादाङ्गस्य स्वरूपं पृच्छति—

अथ कौऽसौ दृष्टिवादः ? इति । उत्तरयति—दृष्टिवादे-दृष्टयो=दर्शनानि

इस तरह इस अंग में साधुओं की चरणसत्तरी और करणसत्तरी प्ररूपित करनेमें आई है । यह विपाक श्रुतका स्वरूप है ॥ सू० ५५ ॥

अब सूत्रकार प्रवचन पुरुष के बारहवें अंग दृष्टिवाद का स्वरूप बताते हैं—‘ से किं तं दिद्विवाए० ’ इत्यादि ।

शिष्य प्रश्न—हे भदन्त ! दृष्टिवाद जो बारहवाँ अंग है उसका क्या

આ રીતે આ અંગમા સાધુઓની ચરણસત્તરી અને કરણસત્તરી પ્રરૂપિત કરવામાં આવી છે. વિપાકશ્રુતનું આ સ્વરૂપ છે. ॥ સૂ૦ ૫૫ ॥

હવે સૂત્રકાર પ્રવચન પુરુષના બારમાં અંગ—દૃષ્ટિવાદનું સ્વરૂપ બતાવે છે. “ સે કિં તં દિદ્ધિવાણં ” ઇત્યાદિ—

શિષ્ય પૂછે છે—હે ભદન્ત ! દૃષ્ટિવાદ કે જે બારમું અંગ છે તેનું શું

સે કિં તં સિદ્ધસેણિયાપરિક્રમે ? , સિદ્ધસેણિયાપરિક્રમે  
ચતુદસવિદે પળ્લવે, તં જહા—માઝગાપયાઈ ૧, ઇગદ્વિયપયાઈ  
૨, અદ્વપયાઈ ૩, પાઠોઆગાસપયાઈ ૪, કેઝભૂયં ૫, રાસિવદ્ધં ૬,  
ઇગગુણં ૭, દુગુણં ૮, તિગુણં, કેઝભૂયં ૧૦, પડિગ્ગહો ૧૧, સંસા-  
રપડિગ્ગહો ૧૨, નંદાવત્તં ૧૩, સિદ્ધાવત્તં ૧૪, સેત્તં સિદ્ધસેણિયા  
પરિક્રમે ॥ ૧ ॥

છાયા—અથ કિં તત્ સિદ્ધશ્રેણિકા પરિક્રમં ? સિદ્ધશ્રેણિકા પરિક્રમં ચતુર્દશવિધં  
પ્રજ્ઞપ્તમ્ , તથા—માતૃકાપદાનિ ૧. એકાર્થિકપદાનિ ૨, અર્થપદાનિ ૩, પૃથગાકાશ-  
પદાનિ ૪, કેતુભૂત ૫. રાશિવદ્ધમ્ ૬, એકગુણમ્ ૭, દ્વિગુણં ૮, ત્રિગુણં ૯, કેતુ-  
ભૂતં ૧૦, પ્રતિગ્રહઃ ૧૧, સંસારપ્રતિગ્રહઃ ૧૨, નન્દાવર્ત્ત ૧૩, સિદ્ધાવર્ત્તમ્ ૧૪,  
તદેતત્સિદ્ધ શ્રેણિકાપરિક્રમં ॥ ૧ ॥

મતાનિ, વદનં—વાદઃ, દષ્ટિનાં વાદઃ=કથનં યત્ર સ તસ્મિન્ , યદ્વા—દષ્ટીનાં=સર્વનય  
દષ્ટીનાં વાદઃ=કથનં યત્ર સ તસ્મિન્ , સર્વભાવ પ્રરૂપણા—સર્વે ચ તે ભાવાઃ—સર્વ-  
ભાવાઃ—જીવાદયઃ સકલપદાર્થાઃ ધર્માસ્તિકાયાદયો વા, તેષાં પ્રરૂપણા આખ્યા-  
યતે । સ દષ્ટિવાદઃ સ્વલુ સમાસતઃ=સંક્ષેપતઃ પશ્ચવિધઃ=પશ્ચપ્રકારઃ પ્રજ્ઞપ્તઃ=કથિતઃ  
સર્વમિદં દષ્ટિવાદાઙ્ગ પ્રાયો વિચ્છિન્નં, તથાપિ યથોપલઙ્ઘં કિંચિલ્લિખ્યતે, તથા—  
પરિક્રમ ૧, સૂત્રાણિ ૨, પૂર્વગતમ્ ૩, અનુયોગઃ ૪, ચૂલિકા ૫, ચેતિ । પશ્ચપ્ર-

સ્વરૂપ હૈ? ઉત્તર—ઇસમેં દર્શનોં કા અથવા સર્વનયોં કી દષ્ટિયોં કા કથન  
કિયા ગયા હૈ, ઇસલિયે ઇસ કા નામ દષ્ટિવાદ હુઆ હૈ । ઇસ દષ્ટિવાદ  
અંગમેં સમસ્ત જીવિક પદાર્થોં કી અથવા ધર્માસ્તિકાયાદિકોં કી પ્રરૂપણા  
કરનેમેં આઈ હૈ । યહ અંગ સંક્ષેપ સે પાંચ પ્રકાર કા હૈ, વહ પ્રકાર યહ હૈ—  
પરિક્રમ ૧, સૂત્ર ૨, પૂર્વગત ૩, અનુયોગ ૪, એવં ચૂલિકા ૫ । યદ્યપિ યહ

સ્વરૂપ છે? ઉત્તર—તેમાં દર્શનોનાં અથવા સર્વનયોની દષ્ટિઓનાં કથન કરાયું  
છે તેથી તેનાં નામ દષ્ટિવાદ પડ્યું છે આ દષ્ટિવાદ અંગમાં સમસ્ત જીવાદિક  
પદાર્થોની અથવા ધર્માસ્તિકાયાદિકોની પ્રરૂપણા કરવામાં આવી છે આ અંગ  
સંક્ષિપ્તમાં પાંચ પ્રકારનું છે. તે પ્રકારો આ પ્રમાણે છે—(૧) પરિક્રમ, (૨) સૂત્ર,  
(૩) પૂર્વગત, (૪) અનુયોગ અને (૫) ચૂલિકા. જો કે આ આખું દષ્ટિવાદ અંગ

કારેઽસ્મિન્ દૃષ્ટિવાદે પ્રથમઃ પ્રકારઃ કોદ્દશઃ? इति पृच्छति-अथ किं तत् परिकर्म? इति । उत्तरयति-परिकर्म=सूत्रादि ग्रहण-योग्यतासंपादनम् अवस्थितस्य वस्तुनो गुणाधान वा, तद्वेतुत्वात् शास्त्रमपि परिकर्मेत्युच्यते, तद्धि सप्तविधं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा-सिद्धश्रेणिकापरिकर्म १, मनुष्यश्रेणिका परिकर्म २, पृष्ठश्रेणिका परिकर्म ३, अवगाहनश्रेणिका परिकर्म ४, उपसंपादनश्रेणिका परिकर्म ५, विप्रहाणश्रेणिका परिकर्म ६, च्युताच्युतश्रेणिका परिकर्म च ७ इति ।

अथ किं तत् सिद्धश्रेणिका परिकर्म ? इति प्रश्नः । उत्तरयति-सिद्धश्रेणिका परिकर्म चतुर्दशविधं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा-मातृकापदानि १, एकार्थिकपदानि-एक=

સમસ્ત દૃષ્ટિવાદ અંગ પ્રાયઃ વિચ્છિન્ન હો ચુકા હૈ ફિર મી જો કુછ ઉપ-લબ્ધ હુઆ હૈ ઉસ પર કુછ લિખા જાતા હૈ—

શિષ્ય પૂછતા હૈ-હે ભદન્ત ! પરિકર્મ કા કયા સ્વરૂપ હૈ ?

ઉત્તર—સૂત્રાદિકોં કે ગ્રહણ કરને કી યોગ્યતા કા સંપાદન કરના, અથવા અવસ્થિત વસ્તુ કા ગુણધાન કરના ઇસકા નામ પરિકર્મ હૈ । ઇસ પરિકર્મ કા હેતુ હોને સે શાસ્ત્ર મી પરિકર્મ શબ્દ સે વ્યવહાર હો ગયા હૈ । યહ પરિકર્મ સાત પ્રકાર કા કહા હૈ, જૈસે-સિદ્ધશ્રેણિ કા પરિકર્મ ૧, મનુષ્યશ્રેણિ કા પરિકર્મ ૨, પૃષ્ઠશ્રેણિ કા પરિકર્મ ૩, અવગાઢશ્રેણિ કા પરિકર્મ ૪, ઉપસંપાદનશ્રેણિ કા પરિકર્મ ૫, વિપ્રહાણશ્રેણિ કા પરિકર્મ ૬ તથા ચ્યુતાચ્યુતશ્રેણિ કા પરિકર્મ ૭ । અબ શિષ્ય પૂછતા હૈ-હે ભદન્ત ! સિદ્ધશ્રેણિકા પરિકર્મ કા કયા સ્વરૂપ હૈ ?

ઉત્તર—સિદ્ધશ્રેણિ કા પરિકર્મ ચૌદહ પ્રકાર કા કહા ગયા હૈ, વે

વિચ્છિન્ન થઈ ગયું છે તો પણ જે કંઈ ઉપલબ્ધ થયું છે. તે વિષે થોડું લખવામાં આવે છે—

શિષ્ય પૂછે છે—હે ભદન્ત પરિકર્મનું શું સ્વરૂપ છે ?

ઉત્તર—સૂત્રાદિકોને ગ્રહણ કરવાની યોગ્યતા પ્રાપ્ત કરવી અથવા અવસ્થિત વસ્તુના ગુણધાન કરવા તેને પરિકર્મ કહે છે. આ પરિકર્મનો હેતુ હોવાથી શાસ્ત્ર પણ પરિકર્મ શબ્દથી વ્યવહાર થઈ ગયું છે. એ પરિકર્મ સાત પ્રકારના જેવાં કે—(૧) સિદ્ધશ્રેણિકાપરિકર્મ (૨) મનુષ્યશ્રેણિકાપરિકર્મ, (૩) પૃષ્ઠશ્રેણિકાપરિકર્મ, (૪) અવગાઢ શ્રેણિકાપરિકર્મ, (૫) ઉપસંપાદનશ્રેણિકા પરિકર્મ, (૬) વિપ્રહાણશ્રેણિકાપરિકર્મ, તથા (૭) ચ્યુતાચ્યુતશ્રેણિકાપરિકર્મ,

હવે શિષ્ય પૂછે છે—હે ભદન્ત ! સિદ્ધ શ્રેણિકાપરિકર્મનું શું સ્વરૂપ છે ?

ઉત્તર—સિદ્ધ શ્રેણિકા પરિકર્મ નીચે પ્રમાણે ચૌદ પ્રકારનું કહેલ છે—

से किं तं मणुस्ससेणियापरिकम्मे ? मणुस्ससेणियापरि-  
कम्मे चउदसविहे पणत्ते, तं जहा—माउगापयाइं १, एगट्टिय-  
पयाइं २, अट्टपयाइं ३, पाढोआगसपयाइं ४, केउभूयं ५,  
रासिबद्धं ६, एगगुणं ७, दुगुणं ८, तिगुणं ९, केउभूयं १०, पडिग्ग-  
हो ११, संसारपडिग्गहो १२, नंदावत्तं १३, मणुस्सावत्तं १४;  
से त्तं मणुस्ससेणियापरिकम्मे ॥ २ ॥

अथ किं तन्मनुष्यश्रेणिकापरिकर्म ? मनुष्यश्रेणिकापरिकर्म चतुर्दशविधं  
प्रज्ञप्तम्, तद्यथा—मातृकापदानि १, एकार्थिकपदानि २, अर्थपदानि ३, पृथगाकाश-  
पदानि ४, केतुभूतं ५, राशिवद्धम् ६, एकगुणं ७, द्विगुणं ८, त्रिगुणं ९, केतुभूतं  
१०, प्रतिग्रहः ११, संसारप्रतिग्रहः १२, नन्दावर्त्त १३, मनुष्यावर्त्तम् १४,  
तदेतन्मनुष्यश्रेणिकापरिकर्म ॥ २ ॥

समानोऽर्थ एकार्थः, सोऽस्ति येषां तानि एकार्थिकानि, तानि च पदानि चेति  
कर्मधारयः २, अर्थपदानि ३, पृथगाकाशपदानि ४, केतुभूतं ५, राशिवद्धम् ६,  
एकगुणम् ७, द्विगुणं ८, त्रिगुणं ९, केतुभूतं १०, प्रतिग्रहः ११, संसारप्रतिग्रहः  
१२, नन्दावर्त्त १३, सिद्धावर्त्तम् १४ । तदेतत् सिद्धश्रेणिकापरिकर्म ॥ १ ॥

अथ किं तन्मनुष्यश्रेणिकापरिकर्म ? इति प्रश्नः । उत्तरयति—मनुष्यश्रेणि-  
कापरिकर्म चतुर्दशविधं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा—मातृकापदानीत्यादि । अत्र मातृकापदा-  
प्रकार ये हैं—मातृकापद १, एकार्थिकपद २, अर्थपद ३, पृथगाकाशपद ४,  
केतुभूत ५, राशिवद्ध ६, एकगुण ७, द्विगुण ८, त्रिगुण ९, केतुभूत १०,  
प्रतिग्रह ११ संसारप्रतिग्रह १२, नन्दावर्त्त १३, और सिद्धावर्त्त १४ । इस  
प्रकार यह सिद्धश्रेणि का परिकर्म का स्वरूप है ॥१॥

शिष्यप्रश्न—मनुष्यश्रेणि का परिकर्म का क्या स्वरूप है ?

उत्तर—मनुष्यश्रेणिका परिकर्म भी चौदह प्रकार का है, वे प्रकार

(१) मातृकापद, (२) ऐकार्थिकपद, (३) अर्थपद, (४) पृथगाकाशपद, (५)  
केतुभूत, (६) राशिवद्ध, (७) ऐकगुण, (८) द्विगुण, (९) त्रिगुण, (१०) केतुभूत,  
(११) प्रतिग्रह, (१२) संसारप्रतिग्रह, (१३) नन्दावर्त्त अने (१४) सिद्धावर्त्त.  
आ प्रकारनुं आ सिद्धश्रेणिकापरिकर्मनुं स्वरूप छे.

शिष्य पूछे छे—मनुष्यश्रेणिकापरिकर्मनुं शुं स्वरूप छे ?

उत्तर—मनुष्यश्रेणिकापरिकर्म पणु नीचे प्रमाणे चौदह प्रकारनुं छे—(१)



સે કિં તં પુટ્ટસેણિયાપરિકમ્મે ? પુટ્ટસેણિયાપરિકમ્મે ઇક્કા-  
રસવિહે પળ્લન્તે, તં જહા-પાઠોઆગાસપયાઈ ૧, કેઝભૂયં ૨,  
રાસિવહ્નં ૩, એગગુણં ૪, દુગુણં ૫, તિગુણં ૬, કેઝભૂયં ૭, પઢિ-  
ગ્ગહો ૮, સંસારપઢિગ્ગહો ૯, નંદાવત્તં ૧૦, પુટ્ટાવત્તં ૧૧, સે ત્તં  
પુટ્ટસેણિયા પરિકમ્મે ॥ ૩ ॥

અથ કિં તત્ પૃષ્ઠશ્રેણિકાપરિકર્મ ? પૃષ્ઠશ્રેણિકાપરિકર્મ એકાદશવિધં પ્રજ્ઞ-  
સમ્, તથા-પૃથગાકાશપદાનિ ૧, કેતુભૂતં ૨, રાશિવહ્નમ્ ૩, એકગુણં ૪, દ્વિગુણં  
૫, ત્રિગુણં ૬, કેતુભૂતં ૭, પ્રતિગ્રહઃ ૮, સંસારપ્રતિગ્રહઃ ૯, નંદાવર્ત્તં ૧૦, પૃષ્ઠા-  
વર્ત્તમ્ ૧૦, તદેતત્પૃષ્ઠશ્રેણિકાપરિકર્મ ॥ ૩ ॥

ન્યારમ્ય નંદાવર્ત્તં યાવત્ પૂર્વોક્તાન્યેવ ત્રયોદશ પરિકર્માણિ, ચતુર્દશં તુ પરિકર્મ  
મનુષ્યાવર્ત્તમ્ । તદેતન્મનુષ્યશ્રેણિકાપરિકર્મ ૧૪ । તદુભયોઃ સંકલનેઽષ્ટાવિંશતિ-  
ર્ભેદાઃ ૨૮ । અવશેષાણિ પરિકર્માણિ પૃષ્ઠાદિકાનિ = પૃષ્ઠશ્રેણિકાપરિકર્માદીનિ  
ચ્યુતાચ્યુતશ્રેણિકાપરિકર્માન્તાનિ પશ્ચવિધાન્યવશિષ્ઠાનિ પરિકર્માણિ પ્રત્યેકમેકાદશ-  
વિધાનિ, તથાહિ-પૃષ્ઠશ્રેણિકાપરિકર્મ-પૃથગાકાશપદાન્યારમ્ય પૃષ્ઠાવર્ત્તપર્યન્તમેકા-  
યે હૈં-માતૃકાપદ ૧, એકાર્થિકપદ ૨, અર્થપદ ૩, આદિ તેરહ ભેદસિદ્ધ-  
શ્રેણિકાપરિકર્મ જૈસે હી હૈં કેવલ ચૌદહવેં ભેદ કા નામ ‘મનુષ્યાવર્ત’  
હૈ । યહ મનુષ્યશ્રેણિકાપરિકર્મ કા સ્વરૂપ હૈ । इन दोनों के भेदों को  
મિલારને સે અઢાઈસ ભેદ હોતે હૈં ૨૮ । અવશિષ્ટ પૃષ્ઠશ્રેણિકાપરિકર્મ સે  
લેકર જો ચ્યુતાચ્યુતશ્રેણિકાપરિકર્મ તક કે પાંચ ભેદ ઓર બચતે હૈં વે  
સવ ગ્યારહ ગ્યારહ પ્રકાર કે હૈં । इनमें प्रत्येक के ‘पृथगाकाशपद’ से  
લેકર દશ દશ ભેદ તો પૂર્વોક્ત હી હૈં, અન્તિમ એક એક ભેદ અપને

માતૃકાપદ, (૨) એકાર્થિકપદ, (૩) અર્થપદ આદિ તેર ભેદ સિદ્ધશ્રેણિકાપરિકર્મ  
જેવાં જ છે, ઇક્કાચૌદમાં ભેદનું નામ મનુષ્યાવર્ત છે. આ મનુષ્યશ્રેણિકાપરિકર્મનું  
સ્વરૂપ છે. આ બન્નેના ભેદનો સરવાળો કરતાં કુલ અઢાવીસ (૨૮) ભેદ થાય છે.  
બાકીના પૃષ્ઠશ્રેણિકાપરિકર્મથી માંડીને ચ્યુતાચ્યુતશ્રેણિકાપરિકર્મ સુધીના જે  
પાંચ ભેદ રહે છે તે દરેક અગીયાર અગીયાર પ્રકારના છે, તે પ્રત્યેકમાં ‘પૃથગા-  
કાશપદ’ થી માંડીને દશ દશ ભેદતો આગળ કહ્યા પ્રમાણે જ છે, અન્તિમ એક  
એક ભેદ પોતા-પોતાના નામપ્રમાણે સ્વતંત્ર છે, તે બતાવવામાં આવે છે-પૃષ્ઠ-

સે કિં તં ઓગાઢસેણિયાપરિકર્મમે ? ઓગાઢસેણિયા-પરિકર્મમે ઇક્કારસવિહે પળ્લન્તે, તં જહા—પાઠોઆગાસપયાઈં ૧, કેડભૂયં ૨, રાસિવદ્ધં ૩, એગુણં ૪, દુગુણં ૫, તિગુણં ૬, કેડ-ભૂયં ૭, પડિગ્ગહો ૮, સંસારપડિગ્ગહો ૯, નંદાવત્તં ૧૦, ઓગા-ઢાવત્તં ૧૧; ઓગાઢસેણિયાપરિકર્મમે ॥ ૪ ॥

સે કિં તં ઉવસંપજ્જણસેણિયાપરિકર્મમે ? ઉવસંપજ્જણસેણિ-યાપરિકર્મમે ઇક્કારસવિહે પળ્લન્તે, તંજહા—પાઠોઆગાસપયાઈં ૧, કેડભૂયં ૨, રાસિવદ્ધં ૩, એગુણં ૪, દુગુણં ૫, તિગુણં ૬, કેડ-ભૂયં ૭, પડિગ્ગહો ૮, સંસારપડિગ્ગહો ૯, નંદાવત્તં ૧૦, ઉવસંપ-જ્જણાવત્તં ૧૧; સે ત્તં ઉવસંપજ્જણસેણિયાપરિકર્મમે ॥ ૫ ॥

અથ કિં તત્ અવગાઢશ્રેણિકાપરિકર્મ ? અવગાઢશ્રેણિકાપરિકર્મ એકાદશવિધં પ્રજ્ઞસમ્, તથા—પૃથગાકાશપદાનિ ૧, કેટુભૂતં ૨, રાશિવદ્ધમ્ ૩, એકગુણમ્ ૪, દ્વિગુણં ૫, ત્રિગુણં ૬, કેટુભૂતં ૭, પ્રતિગ્રહઃ ૮, સંસારપરિગ્રહઃ ૯, નન્દાવર્તમ્ ૧૦, અવગાઢાવર્તં ૧૧; તદેતદવગાઢશ્રેણિકાપરિકર્મ ॥ ૪ ॥

અથ કિં તત્ ઉપસંપાદનશ્રેણિકા પરિકર્મ ? ઉપસંપાદનશ્રેણિકાપરિકર્મ એકા-દશવિધં પ્રજ્ઞસમ્, તથા—પૃથગાકાશપદાનિ ૧, કેટુભૂતં ૨, રાશિવદ્ધમ્ ૩, એક-ગુણં ૪, દ્વિગુણં ૫, ત્રિગુણં ૬, કેટુભૂતં ૭, પ્રતિગ્રહઃ ૮, સંસારપ્રતિગ્રહઃ ૯, નન્દા-વર્તમ્ ૧૦, ઉપસંપાદનાવર્તમ્ ૧૧; તદેતત્ ઉપસંપાદનશ્રેણિકાપરિકર્મ ॥ ૫ ॥

દશવિધમ્ ૧ । અવગાઢશ્રેણિકાપરિકર્મ—પૃથગાકાશપદાન્યારમ્ભ્યાવગાઢાવર્તપર્યન્તમે-કાદશવિધમ્ ૨ । ઉપસંપાદનશ્રેણિકાપરિકર્મ—પૃથગાકાશપદાન્યારમ્ભ્યોપસંપાદનાવ-અપને નામ સે સ્વતન્ત્ર હૈં, ઉન્હેં દિશ્વલાતે હૈં—પૃષ્ઠશ્રેણિકાપરિકર્મ કે ‘પૃથ-ગાકાશપદ’સે લેકર ‘નન્દાવર્ત’ તક દશ ઓર ગ્યારહવાં ‘પૃષ્ઠાવર્ત’ હૈ । હસી પ્રકાર અવગાઢશ્રેણિકાપરિકર્મ કા ગ્યારહવાં ભેદ ‘અવગાઢાવર્ત’ હૈ । ઉપસંપાદનશ્રેણિકાપરિકર્મ કા ગ્યારહવાં ભેદ ‘ઉપસંપાદનાવર્ત’ હૈ,

શ્રેણિકાપરિકર્મના ‘પૃથગાકાશપદ’થી માંડીને ‘નન્દાવર્ત’ સુધી દસ અને અગીયારમે ‘પૃષ્ઠાવર્ત’ લેદ છે. એજ પ્રમાણે અવગાઢશ્રેણિકાપરિકર્મના અગીયારમે લેદ ‘અવગાઢાવર્ત’ છે. ઉપસંપાદનશ્રેણિકાપરિકર્મના અગીયા-

से किं तं विप्पजहणसेणियापरिकम्मे ? विप्पजहणसेणियापरिकम्मे इक्कारसविहे पणत्ते, तं जहा—पाढोआगासपयाइं १, केउभूयं २, रासिबद्धं ३, एगगुणं ४, दुगुणं ५, तिगुणं ६, केउभूयं ७, पडिग्गहो ८, संसारपडिग्गहो ९, नंदावत्तं १०, विप्पजहणावत्तं ११; से त्तं विप्पजहणसेणियापरिकम्मे ॥ ६ ॥

से किं तं चुयाचुयसेणियापरिकम्मे ? चुयाचुयसेणियापरिकम्मे इक्कारसविहे पणत्ते, तं जहा—पाढो आगासपयाइं १, केउभूयं २, रासिबद्धं ३, एगगुणं ४, दुगुणं ५, तिगुणं ६, केउभूयं ७, पडिग्गहो ८, संसारपरिग्गहो ९, नंदावत्तं १०, चुयाचुयवत्तं ११; से त्तं चुयाचुयसेणियापरिकम्मे ॥ ७ ॥ छ चउक्कनइयाइं सत्त तेरासियाइं, से त्तं परिकम्मे ॥ १ ॥

अथ किं तद् विप्रहाणश्रेणिका परिकर्म ? विप्रहाणश्रेणिका परिकर्म एकादशविधं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा—पृथगाकाशपदानि १, केतुभूतं २, राशिबद्धम् ३, एकगुणं ४, द्विगुणं ५, त्रिगुणं ६, केतुभूतं ७, प्रतिग्रहः ८, संसारप्रतिग्रहः ९, नन्दावर्त्तं १०, विप्रहाणावर्त्तम् ११; तदेतत् विप्रहाणश्रेणिकापरिकर्म ॥ ६ ॥

अथ किं तत् च्युताच्युतश्रेणिकापरिकर्म ? च्युताच्युतश्रेणिका परिकर्म एकादशविधं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा—पृथगाकाशपदानि १, केतुभूतं २, राशिबद्धम् ३, एकगुणं ४, द्विगुणं ५, त्रिगुणं ६, केतुभूतं ७, प्रतिग्रहः ८, संसारप्रतिग्रहः ९, नन्दावर्त्तं १०, च्युताच्युतावर्त्तम् ११, तदेतच्च्युताच्युतश्रेणिकापरिकर्म ॥ ७ ॥

तैपर्यन्तमेकादशविधम् ३ । विप्रहाणश्रेणिकापरिकर्म—पृथगाकाशपदान्यारभ्य विप्रहाणावर्त्तपर्यन्तमेकादशविधम् ४ । च्युताच्युतश्रेणिकापरिकर्म—पृथगाकाशपदान्यारभ्य च्युताच्युतावर्त्तपर्यन्तमेकादशविधम् ५ । इत्थमेते पञ्चपञ्चाशद्भेदाः ५५ । एतेषु

विप्रहाणश्रेणिकापरिकर्म का ग्यारहवां भेद 'विप्रहाणावर्त्त' है, तथा च्युताच्युतश्रेणिकापरिकर्म का ग्यारहवां भेद 'च्युताच्युतावर्त्त' है। इस

२मो लेख 'उपसं'पादनावर्त्त' छे, विप्रहाणश्रेणिकापरिकर्मनो अगीयारमो लेख 'विप्रहाणावर्त्त' छे, तथा च्युताच्युतश्रेणिकापरिकर्मनो अगीयारमो लेख 'च्युता-

સપ્તસુ પરિકર્મસુ આદિતઃ षટ્ પરિકર્માણિ ચતુષ્કનથિકાનિ-ચત્વાર એવ ચતુષ્કાઃ, તે ચ તે નયાશ્ચેતિ ચતુષ્કનયાઃ, તે સન્તિ યેષાં તાનિ તથોક્તાનિ, સંગ્રહ ૧-વ્યવહાર ૨-ઋજુસૂત્ર ૩-શબ્દાદિ ૪-રૂપચતુર્નયયુક્તાનિ षટ્ પરિકર્માણિ સ્વસામાયિકાનિ ।

અર્થે ભાવઃ-નૈગમનયઃ સાંગ્રાહિકાઽસાંગ્રાહિકભેદેન દ્વિવિધઃ, તત્ર-સાંગ્રાહિકસ્ય સંગ્રહે સમાવેશઃ, અસાંગ્રાહિકસ્ય તુ વ્યવહારે સમાવેશઃ, શબ્દસમભિરૂઢૈવમ્ભૂતાસ્ત્રયો નયાઃ શબ્દાદિરૂપ એક એવ નયઃ, એવં ચ સંગ્રહવ્યવહારઋજુસૂત્રશબ્દાદિરૂપચતુર્નયયુક્તાનિ षટ્ પરિકર્માણિ નયચિન્તયા સ્વસામાયિકાનીતિ । તથા સપ્ત પરિકર્માણિ ત્રૈરા-

પ્રકારેન પાંચોં કે સબ ભેદ મિલ્લાને સે પચપન (૫૫) ભેદ હો જાતે હૈં । હસ તરહ ૧૪-૧૪-૧૧-૧૧-૧૧-૧૧-૧૧ સબ મિલાકર પરિકર્મ કે તિરાસી (૮૩) ભેદ હો જાતે હૈં ।

પરિકર્મ કે હન સાત ભેદોંમેં આદિ કે જો છહ ભેદ હૈં વે, સંગ્રહ વ્યવહાર ઋજુસૂત્ર તથા શબ્દાદિ હન ચાર નયોં સે યુક્ત હોને કે કારણ ચતુષ્કનથિક હૈં, અર્થાત્ સ્વસામાયિક હૈં । તાત્પર્ય યહ કિ-નૈગમનય-સાંગ્રાહિક ઓર અસાંગ્રાહિક કે ભેદ સે દો પ્રકાર કા હૈ, ઉનમેં સંગ્રાહિકનય કા સંગ્રહનયમેં સમાવેશ હો જાતા હૈ, ઓર અસાંગ્રાહિકનય કા વ્યવહાર નયમેં સમાવેશ હોતા હૈ । શબ્દ, સમભિરૂઢ ઓર એવમ્ભૂત, યે ત્રીન નય ‘શબ્દાદિ’ હસ નામ સે એક હી નય જ્ઞાને ગયે હૈં । હસ તરહ સંગ્રહ વ્યવહાર ઋજુસૂત્ર ઓર શબ્દાદિરૂપ ચાર નયોં સે યુક્ત છહ પરિકર્મ નયચિચાર સે સ્વસામાયિક હૈં । તથા સાત પરિકર્મ, સમસ્ત વસ્તુઓં કો ત્ર્યાત્મક

ચ્યુતાવર્ત ’ છે. આ રીતે એ પાંચેના લેહોનો સરવાળો પંચાવન (૫૫) થાય. આ રીતે ૧૪-૧૪-૧૧-૧૧-૧૧-૧૧-૧૧ એ બધા મળીને પરિકર્મના ત્યાસી (૮૩) લેહ થાય છે.

પરિકર્મના એ સાત લેહોમાં આદિના જે છ લેહ છે તે, સંગ્રહ, વ્યવહાર, ઋજુસૂત્ર, તથા શબ્દાદિ એ ચાર નયોથી યુક્ત હોવાથી ચતુષ્કનથિક છે, અર્થાત્ સ્વસામાયિક છે. તાત્પર્ય એ છે કે નૈગમનય-સાંગ્રાહિક અને અસાંગ્રાહિક લેહથી બે પ્રકારનો છે, તેમાં સાંગ્રાહિકનયનો સંગ્રહનયમાં સમાવેશ થઈ જાય છે, અને અસાંગ્રાહિકનયનો વ્યવહારનયમાં સમાવેશ થાય છે. શબ્દ, સમભિરૂઢ અને એવમ્ભૂત એ ત્રણ નયને “શબ્દાદિ” એ નામથી એક જ નય ગણેલ છે. આ રીતે સંગ્રહ, વ્યવહાર, ઋજુસૂત્ર અને શબ્દાદિરૂપ ચાર નયોથી યુક્ત છ પરિકર્મ નયચિચારથી સ્વસામાયિક છે. તથા સાત પરિકર્મ, સમસ્ત વસ્તુઓને

સે કિં તં સુત્તાઈ ? સુત્તાઈં બાવીસં પન્નત્તાઈં, તં જહા—ઉજ્જુ-  
સુયં ૧, પરિણયાપરિણયં, ૨ બહુભંગિયં ૩, વિજયચરિયં ૪, અણં-  
તરં ૫, પરંપરં ૬, આસાણં ૭, સજૂહં ૮, સંભિપ્પણં ૯, આહવ્વાયં ૧૦,  
ષટ્ ચતુષ્કનયિકાનિ, સપ્ત ત્રૈરાશિકાનિ તદેતત્ પરિકર્મ ॥ ૧ ॥

અથ કાનિ તાનિ સૂત્રાણિ ? સૂત્રાણિ દ્વાવિંશતિઃ પ્રજ્ઞપ્તાનિ, તથા—ઋજુકં ૧,  
પરિણતાપરિણતમ્ ૨, બહુભક્તિકમ્ ૩, વિજયચરિતમ્ ૪, અનન્તરમ્ ૫, પરમ્પરમ્ ૬,  
આસાનમ્ ૭, સયૂથમ્ ૮, સંભિન્નમ્ ૯, યથાવાદમ્ ૧૦, સૌવસ્તિકાવર્તમ્ ૧૧,  
શિકાનિ=ત્રૈરાશિકાભિમતાનિ । આજીવિકા એવ ત્રૈરાશિકા ઉચ્યન્તે, યતસ્તે સર્વં  
ત્ર્યાત્મકમિચ્છન્તિ । તન્મતે જીવોઽજીવો જીવાજીવઃ, લોકોઽલોકો લોકાલોકઃ,  
સત્ અસત્ સદસત્—ઈત્યેવમાદિ । તથા નયચિન્તાયામપિ ત્રિવિધં નયમિચ્છન્તિ,  
તથા—દ્રવ્યાર્થિકનયઃ, પર્યાયાર્થિકનયઃ, ઉભયાર્થિકનય ઇતિ । એતાનિ સપ્ત પરિ-  
કર્માણિ પૂર્વાપરસંકલનયા ત્ર્યશીતિવિધાનિ ભવન્તીતિ વિજ્ઞેયમ્ । ઉપસંહરન્નાહ-  
તદેતત્ પરિકર્મેતિ ॥ ૧ ॥

માનનેવાલે ત્રૈરાશિકોં દ્વારા સંમત હૈં ત્રૈરાશિકમતવાલે સમસ્ત વસ્તુઓં  
કો ત્ર્યાત્મક માનતે હૈં । ડનકે મતમેં—જીવ ૧, અજીવ ૨, જીવાજીવ ૩,  
લોક ૧ અલોક ૨, લોકાલોક ૩, સત્ ૧, અસત્ ૨, સદસત્ ૩, ઇત્યાદિ-  
રૂપ સે પદાર્થોં કા વિભાગ કિયા ગયા હૈ । તથા જબ નયોં કા વિચાર  
કિયા ગયા હૈ તબ વહાં ઓં ઇસા હી કહા હુઆ હૈ કિ નય દ્રવ્યાર્થિક ૧,  
પર્યાયાર્થિક ૨, ંવં ઉભયાર્થિક ૩, ભેદ સે તીન પ્રકાર કા હૈ । ઇસ તરહ  
સાત પરિકર્મોં કે ભેદોં કા સંકલન કરને સે તિરાસી (૮૩) ભેદ હોતે હૈં ।  
યહ પરિકર્મ કા સ્વરૂપ હૈ ॥ ૧ ॥

ત્ર્યાત્મક માનનાર ત્રૈરાશિકો દ્વારા સંમત છે. ત્રૈરાશિકમતવાળા સમસ્ત વસ્તુ-  
ઓને ત્ર્યાત્મક માને છે, તેના મતમાં—(૧) જીવ (૨) અજીવ (૩) જીવાજીવ,  
(૧) લોક (૨) અલોક (૩) લોકાલોક, (૧) સત્ (૨) અસત્ (૩) સદસત્—  
ઈત્યાદિરૂપથી પદાર્થોનો વિભાગ કરવામાં આવ્યો છે. તથા ન્યારે નયોનો  
વિચાર કરાયો છે ત્યારે પણ તેની બાબતમાં એવું જ કહેલ છે કે નય,  
(૧) દ્રવ્યાર્થિક, (૨) પર્યાયાર્થિક અને (૩) ઉભયાર્થિક એ ભેદોથી ત્રણ પ્રકારનો  
છે. આ રીતે સાતે પરિકર્મોના ભેદો એકત્ર કરતાં કુલ ત્યાસી ભેદ થાય છે.  
આ પરિકર્મનું સ્વરૂપ છે. (૧)

સોવત્થિયાવત્તં ૧૧, નંદાવત્તં ૧૨, બહુલં ૧૩, પુટ્ટાપુટ્ટં ૧૪, વિયા-  
વિત્તં ૧૫, એવંભૂયં ૧૬, દુયાવત્તં ૧૭, વત્તમાણપયં ૧૮, સમભિ-  
રૂઢં ૧૯, સઠ્ઠવઓમહં ૨૦, પસ્સાસં ૨૧, દુપડિગ્ગહં ૨૨; ઇચ્છેઇયાઇં  
બાવીસં સુત્તાઇં છિન્નચ્છેયનઇયાણિ સસમયસુત્તપરિવાડીણ, ઇચ્છે-  
ઇયાઇં બાવીસં સુત્તાઇં અચ્છિન્નચ્છેયનઇયાઇં આજીવિયસુત્તપરિ-  
વાડીણ, ઇચ્છેઇયાઇં બાવીસં સુત્તાઇં તિગણઇયાઇં તેરાસિયસુત્ત-  
પરિવાડીણ, ઇચ્છેઇયાઇં બાવીસં સુત્તાઇં ચ્ચઉક્કનઇયાઇં સસમય-  
સુત્તપરિવાડીણ । એવામેવ સપુઠ્ઠાવરેણં અટ્ટાસીઈં સુત્તાઇં ભવંતિત્તિ-  
મક્ખાયાઇં, સે ત્તં સુત્તાઇં ॥ ૨ ॥

નન્દાવર્તમ્ ૧૨, બહુલમ્ ૧૩, પૃષ્ઠાપૃષ્ઠમ્ ૧૪, વ્યાવર્તમ્ ૧૫, એવંભૂતમ્ ૧૬, દ્વિ-  
કાવર્તમ્ ૧૭, વર્તમાનપદમ્ ૧૮, સમભિરૂઢમ્ ૧૯, સર્વતોભદ્રમ્ ૨૦, પ્રશિષ્યમ્ ૨૧,  
દુષ્પ્રતિગ્રહમ્ ૨૨, इत्येतानि द्वाविंशतिः सूत्राणि छिन्नच्छेदनयिकानि स्वसमयसूत्र-  
परिपाठ्या, इत्येतानि द्वाविंशतिः सूत्राणि अच्छिन्नच्छेदनयिकानि आजीविकसूत्र-  
परिपाठ्या, इत्येतानि द्वाविंशतिः सूत्राणि त्रिनयिकानि त्रैराशिकसूत्रपरिपाठ्या,  
इत्येतानि द्वाविंशतिः सूत्राणि चतुष्कनयिकानि स्वसमयसूत्रपरिपाठ्या । एवमेव  
सपूर्वापरिण अष्टाशीतिः सूत्राणि भवन्तीत्याख्यातानि । तान्येतानि सूत्राणि ॥ २ ॥

અથ દ્વિતીયં ભેદમાહ—અથ કાનિ તાનિ સૂત્રાણિ ? इति । उत्तरयति—सूत्राणि=  
सर्वद्रव्यपर्यायनयार्थसूचनात् सूत्राणि द्वाविंशतिः=द्वाविंशतिसंख्यकानि प्रज्ञप्तानि,  
तद्यथा—ऋजुसूत्रम् १, परिणतापरिणतम् २, बहुभङ्गिकम् ३, विजयचरितम् ४,  
अनन्तरम् ५, परम्परम् ६, आसानम् ७, सयूथम् ८, संभिन्नम् ९, यथावादम् १०,

શિષ્યપ્રશ્ન—हे भदन्त ! दृष्टिवाद का जो द्वितीय भेद सूत्र है उसका क्या स्वरूप है ?

उत्तर—सूत्र बाइस प्रकार का है, वे प्रकार ये हैं—ऋजुसूत्र १, परि-  
तापरिणत २, बहुभंगिक ३, विजयचरित ४, अनन्तर ५, परंपर ६,

શિષ્ય પૂછે છે—હે ભદન્ત ! દૃષ્ટિવાદનો જે બીજો ભેદ ‘સૂત્ર’ છે તેનું શું  
સ્વરૂપ છે ? उत्तर—सूत्र नीचे प्रमाणे आवीस (२२) प्रकारना છે—(१) ऋजुसूत्र,  
(२) परिणतापरिणत, (३) बहुभंगिक, (४) विजयचरित, (५) अनन्तर,



સૌવસ્તિકાવર્ત્તમ્ ૧૧, નન્દાવર્ત્તમ્ ૧૨, બહુલમ્ ૧૩, પૃષ્ઠાપૃષ્ઠમ્ ૧૪, વ્યાવર્ત્તમ્ ૧૫, એવમ્ભૂતમ્ ૧૬, દ્વિકાવર્ત્તમ્ ૧૭, વર્ત્તમાનપદમ્ ૧૮, સમભિરૂઢમ્ ૧૯, સર્વતો-  
ભદ્રમ્ ૨૦, પ્રશિષ્યમ્ ૨૧, દુષ્પ્રતિગ્રહમ્ ૨૨. ઇત્યેતાનિ દ્વાવિંશતિઃ સૂત્રાણિ  
છિન્નચ્છેદનયિકાનિ=છિન્નં છેદેનેચ્છતિ યો નયઃ સ છિન્નચ્છેદનયઃ, યથા—  
' ધમ્મો મંગલમુક્કિટ્ટં ' ઇત્યાદિશ્લોકઃ સૂત્રાર્થતઃ પ્રત્યેકચ્છેદેન સ્થિતો ન દ્વિતી-  
યાદિશ્લોકમપેક્ષતે, ઇત્યત્ર છિન્નચ્છેદનયોઽસ્તિ યેપાં તાનિ છિન્નચ્છેદનયિકાનિ  
સ્વસમયપરિપાટયા । અયં ભાવઃ—જિનસિદ્ધાન્તાનુસારેણ ઋજુમૂત્રાદીનિ દ્વાવિંશતિઃ  
સૂત્રાણિ છિન્નચ્છેદનયિકાનીતિ । તથા આજીવિકસૂત્રપરિપાટયા ઇત્યેતાનિ દ્વાવિંશતિઃ

આસાન ૭, સંયૂથ ૮, સંભિન્ન ૯, યથાવાદ ૧૦, સૌવસ્તિક ૧૧, નંદા-  
વર્ત ૧૨, બહુલ ૧૩, પૃષ્ઠાપૃષ્ઠ ૧૪, વ્યાવર્ત ૧૫, એવંભૂત ૧૬, દ્વિકાવર્ત ૧૭,  
વર્તમાનપદ ૧૮, સમભિરૂઢ ૧૯, સર્વતોભદ્ર ૨૦, પ્રશિષ્ય ૨૧, ઓર દુષ્પ્ર-  
તિગ્રહ ૨૨. યે બાઈસ સૂત્ર જિનસિદ્ધાન્ત કે અનુસાર છિન્નચ્છેદનયિક હૈં ।  
જો નય છેદ સે—પદચ્છેદ સે છિન્ન પદકે—શ્લોકગત ભિન્ન ૨ પદકે અર્થ કા  
બોધક હોતા હૈં વહ છિન્નચ્છેદ નય હૈં । જૈસે—“ ધમ્મો મંગલમુક્કિટ્ટં ” યહ  
શ્લોક હૈં । યહ શ્લોક સૂત્રાર્થ કી અપેક્ષા ભિન્ન ૨ પદ વાલા હૈં । ઇસમેં ઇસકે  
અર્થ કો સમજાને કે લિયે દ્વિતીયશ્લોકગત પદોં કી અપેક્ષા નહીં પડતી હૈં ।  
તાત્પર્ય ઇસકા યહ હૈં કિ જિસ શ્લોક કે અર્થ કા બોધ ડસી શ્લોકમેં રહે  
હુએ ભિન્ન ૨ પદોં દ્વારા હો જાતા હૈં, ઇસકે સમજાને કે લિયે અન્ય શ્લોક-  
ગત પદોં કી અપેક્ષા નહીં કરની પડતી હૈં ઓર ન દૂસરે શ્લોકોં કે પદોં  
કી વહાં આવૃત્તિ હી લેની પડતી હૈં વૈં સબ શ્લોક છિન્નચ્છેદનયિક હૈં ।

(૬) પર પર, (૭) આસાન, (૮) સંયૂથ, (૯) સંભિન્ન, (૧૦) યથાવાદ, (૧૧) સૌવસ્તિક,  
(૧૨) નંદાવર્ત, (૧૩) બહુલ, (૧૪) પૃષ્ઠાપૃષ્ઠ, (૧૫) વ્યાવર્ત, (૧૬) એવંભૂત,  
(૧૭) દ્વિકાવર્ત, (૧૮) વર્તમાનપદ, (૧૯) સમભિરૂઢ (૨૦) સર્વતોભદ્ર,  
(૨૧) પ્રશિષ્ય, અને (૨૨) દુષ્પ્રતિગ્રહ. આ બાવીસ સૂત્ર જૈનસિદ્ધાન્તઅનુસાર  
છિન્નચ્છેદનયિક છે. જે નય છેદથી—પદચ્છેદથી છિન્ન પદના—શ્લોકગત બુદ્ધા બુદ્ધા  
પદના અર્થનો બોધક થાય છે તે છિન્નચ્છેદનય છે. જેમકે “ ધમ્મો મંગલમુક્કિટ્ટં ”  
આ શ્લોક છે. આ શ્લોક સૂત્રાર્થની અપેક્ષાએ ભિન્ન ભિન્ન પદવાળો છે. તેમાં  
તેના અર્થને સમજાવવા માટે દ્વિતીય શ્લોકમાં આવેલ પદોની જરૂર પડતી  
નથી, તેનું તાત્પર્ય એ છે કે જે શ્લોકના અર્થનો બોધ એજ શ્લોકમાં રહેલ  
ભિન્ન ભિન્ન પદો દ્વારા થઈ જાય છે, તેને સમજાવવા માટે બીજા શ્લોકમાં આવેલ  
પદોની જરૂર પડતી નથી અને બીજા શ્લોકોના પદોની ત્યા આવૃત્તિ જ લેવી  
પડતી નથી. એ બધા શ્લોક છિન્નચ્છેદનયિક કહેવાય છે. તથા આજીવિકમતા-

સૂત્રાણિ અચ્છિન્નચ્છેદનયિકાનિ, યો નયઃ સૂત્રમચ્છિન્નં છેદેનેચ્છતિ સોઽચ્છિન્નચ્છેદનયઃ, અત્ર નયે - ‘ ધમ્મો મંગલમુક્કિટ્ઠં ’ ઇત્યાદિઃ પ્રથમઃ શ્લોકો દ્વિતીયાદિ શ્લોકમપેક્ષમાણસ્તિષ્ઠતિ દ્વિતીયાદિ શ્લોકોઽપિ પ્રથમં શ્લોકમ્ અપેક્ષમાણસ્તિષ્ઠતિ, અર્થાદન્યોઽન્યસાપેક્ષસ્તિષ્ઠતિ, સોઽસ્તિ યેષાં તાનિ અચ્છિન્નચ્છેદનયિકાનિ । અયંભાવઃ-આજીવકમતે ઋજુકાદીનિ દ્વાવિંશતિઃ સૂત્રાણિ પરસ્પરસાપેક્ષાણિ સન્તીતિ । તથા-ઇત્યેતાનિ દ્વાવિંશતિઃ સૂત્રાણિ ત્રિકનયિકાનિ ત્રૈરાશિકસૂત્રપરિપાટયા । અયં ભાવઃ-ત્રૈરાશિકાનાં પરિપાટયા ઋજુ સૂત્રાદીનિ દ્વાવિંશતિઃ સૂત્રાણિ દ્રવ્યાર્થિકા પર્યાયાર્થિકોભયાર્થિકેતિ નયત્રિકવન્તિ સન્તીતિ । તથા ઇત્યેતાનિ દ્વાવિંશતિઃ સૂત્રાણિ ચતુષ્કનયિકાનિ સ્વસમયસૂત્રપરિપાટયા । અયં ભાવઃ-જિનસિદ્ધાન્ત સૂત્ર

તથા આજીવિક મતાનુસાર યે બાર્દસ સૂત્ર અચ્છિન્નચ્છેદનયિકા હૈં । તાત્પર્યં ઇસકા યદ્દ હૈં કિ યે ઋજુસૂત્રાદિક બાર્દસ સૂત્ર અપને ૨ અર્થ કા બોધ કરાને કે લિયે એક દુસરે કે પદોં કી અપેક્ષા રખતે હૈં । જૈસે-ધમ્મો મંગલમુક્કિટ્ઠં ” યદ્દ શ્લોક છિન્નચ્છેદનયકી અપેક્ષા અપને અર્થ કા બોધ સ્વતંત્રરૂપ સે કરતા હૈં, પરન્તુ ઇસ અચ્છિન્નચ્છેદનય કી અપેક્ષા યદ્દ શ્લોક અપને અર્થ કા બોધ કરાને કે લિયે દ્વિતીયશ્લોક ગત પદોં કી અપેક્ષા રખતા હૈં, તથા દ્વિતીય શ્લોક અપને અર્થ કા બોધ કરાને કે લિયે પ્રથમ શ્લોક કી અપેક્ષા રખતા હૈં, એસી માન્યતા આજીવિકાસિદ્ધાન્ત માનને વાલોં કી હૈં । તથા યે ઋજુસૂત્રાદિક બાર્દસ સૂત્ર દ્રવ્યાર્થિક, પર્યાયાર્થિક એવં ઉભયાર્થિક, ઇન ત્રીનોં નયોં કી અપેક્ષા વાલે હૈં, એસી માન્યતા ત્રૈરાશિક મતવાલોં કી હૈં । તથા યે ઋજુસૂત્રાદિક બાર્દસ સૂત્ર ચતુષ્ક નય વાલે હૈં, એસી માન્યતા જિનસિદ્ધાન્ત કો માનનેવાલોં કી હૈં । સંગ્રહનય,

નુસાર એ બારીસ સૂત્ર અચ્છિન્નચ્છેદ નયિક છે. તેનું તાત્પર્ય એ છે કે તે ઋજુ-સૂત્રાદિક બારીસ સૂત્ર પોત-પોતાના અર્થના બોધક થવાને માટે એક બીજાનાં પદોની અપેક્ષા રાખે છે. જેમકે “ ધમ્મો મંગલમુક્કિટ્ઠં ” આ શ્લોક છિન્નચ્છેદનયની અપેક્ષાએ પોતાના અર્થનો બોધ સ્વતંત્રરૂપે કરે છે. પણ તે અચ્છિન્નચ્છેદ નયની અપેક્ષાએ આ શ્લોક પોતાના અર્થનો બોધ કરાવવાને માટે દ્વિતીય શ્લોકમાં આવેલ પદોની અપેક્ષા રાખે છે, તથા દ્વિતીય શ્લોક પોતાના અર્થનો બોધ કરાવવાને માટે પ્રથમ શ્લોકની અપેક્ષા રાખે છે, એવી માન્યતા આજીવિકા સિદ્ધાન્તને માનનારાઓની છે. તથા આ ઋજુસૂત્રાદિક બારીસ સૂત્ર દ્રવ્યાર્થિક, પર્યાયાર્થિક, અને ઉભયાર્થિક, એ ત્રણ નયોની અપેક્ષા વાળાં છે, એવી માન્યતા ત્રૈરાશિક મતવાળાઓની છે. તથા આ ઋજુસૂત્રાદિક બારીસ સૂત્ર ચતુષ્કનયવાળાં છે. એવી માન્યતા જિન સિદ્ધાન્ત-માનનારાઓની છે. સંગ્રહનય, વ્યવહારનય, ઋજુસૂત્ર-



અથ તૃતીયભેદમાહ—સે કિં તં પુન્વગયં ' અથ કિં તત્ પૂર્વગતમ્ ?' ઇતિ ।  
ઉત્તરયતિ—પૂર્વગતં ચતુર્દશવિધં પ્રજ્ઞપ્તં, અયંભાવ-તીર્થકૃતો હિ તીર્થ પ્રવર્તનકાલે  
ગણધરેભ્યઃ સકલસૂત્રાધારકત્વેન પૂર્વ પૂર્વગતં સૂત્રાર્થમેવ ભાષન્તે, તદનુગણધરાઃ  
પ્રથમં પૂર્વગતમેવ રચયન્તિ, તત આચારાઙ્ગાદિકમ્ । ' સન્વેસિં આયારોપઢમો ' ઇતિ  
તુ ક્રમન્યાસમપેક્ષ્ય પ્રોચ્યતે, અક્ષરરચનાપેક્ષ્યા તુ પૂર્વગતશ્રુતમેવ પ્રથમમ્ ।  
તત્પૂર્વગતશ્રુતં ચતુર્દશવિધં કથિતમ્ । તદેવાહ—તદ્યથા—પ્રથમમ્ ઉત્પાદપૂર્વમ્—  
અત્ર સર્વ દ્રવ્યાણાં સર્વપર્યાયાણાં ચોત્પાદભાવમઙ્ગીકૃત્ય પ્રજ્ઞાપના કૃતા ।  
અસ્ય પદપરિમાણમેકા કોટિઃ । દ્વિતીયમ્—અગ્રાયણીયમ્—અત્ર હિ સર્વેષાં

અવ દૃષ્ટિવાદ કે ત્રીસરે ભેદ પૂર્વગત કા સ્વરૂપ કહતે હૈ—' સે કિં  
તં પુન્વગયં૦ ' ઇત્યાદિ ।

શિષ્ય પ્રશ્ન—પૂર્વગત જો દૃષ્ટિવાદ કા ત્રીસરા ભેદ હૈ ઉસકા કયા  
સ્વરૂપ હૈ ?

ઉત્તર—પૂર્વગત ચૌદહ પ્રકાર કા હૈ । તીર્થકર પ્રભુ તીર્થપ્રવર્તન કે  
સમય ગણધરોં કે લિયે સર્વપ્રથમ સકલ સૂત્રોં કા આધાર ભૂત હોને સે  
પૂર્વગત સૂત્રાર્થ કો હો પ્રરૂપણા કરતે હૈ । બાદમેં ગણધર ભગવાન સબ સે  
પહિલે પૂર્વગત સૂત્ર હો રચતે હૈ, પશ્ચાત્ આચારાંગ આદિ । " સન્વેસિં  
આયારો પઢમો " એસા જોં કહા જાતા હૈ વહ ક્રમન્યાસ કો અપેક્ષા સે  
હો કહા ગયા જાનના ચાહિયે । અક્ષર રચના કો અપેક્ષા સે તો પૂર્વગત  
શ્રુત હો સર્વપ્રથમ હૈ । બાદમેં ઔર અંગ-આચારાદિક હૈ । પૂર્વગત શ્રુત કે  
ચૌદહ પ્રકાર યે હૈ—ઉત્પાદપૂર્વ ૧, અગ્રાયણીયપૂર્વ ૨, વીર્યપ્રવાદપૂર્વ

હવે દૃષ્ટિવાદના ત્રીજા ભેદ. " પૂર્વગત " નું સ્વરૂપ વર્ણવે છે—" સે કિં  
તં પુન્વગયં ? " ઇત્યાદિ.

શિષ્ય પૂછે છે—દૃષ્ટિવાદનો જે ત્રીજો ભેદ ' પૂર્વગત ' છે તેનું શું સ્વરૂપ છે ?

ઉત્તર:—પૂર્વગત ચૌદ પ્રકારનું છે. તીર્થકર પ્રભુ તીર્થપ્રવર્તનને સમયે  
ગણધરોને માટે સૌથી પહેલાં સકળ સૂત્રોનું આધારભૂત હોવાથી પૂર્વગત સૂત્રા-  
ર્થની જ પ્રરૂપણા કરે છે, ત્યાર બાદ ગણધર ભગવાન સૌથી પહેલાં પૂર્વગત  
સૂત્ર જ રચે છે. ત્યાર પછી આચારાંગ આદિ " સન્વેસિં આયારો પઢમો " એમ જે  
કહેવામાં આવે છે તે ક્રમન્યાસની અપેક્ષાએ જ કહેલ માનવું જોઈએ. અક્ષર  
રચનાની અપેક્ષાએ તો પૂર્વગત શ્રુત જ સૌથી પહેલું છે. પછી બીજાં અંગ-આચારા-  
રાંગ આદિ. પૂર્વગત શ્રુતના ચૌદ પ્રકાર છે—(૧) ઉત્પાદપૂર્વ, (૨) અગ્રાયણીય

દ્રવ્યાણાં પર્યાયાણાં જીવવિશેષાણાં ચ અગ્રં=પરિમાણં વર્ણયતે इत्यत इदं  
 पूर्वमग्रायणीयम् । अत्र षण्णवति लक्षाणि पदानि सन्ति । तृतीयं-वीर्यं=वीर्यप्रवादम्,  
 अत्र कर्मसहितानां तद्रहितानां च जीवाजीवानां वीर्यं प्रोच्यते इत्यतो वीर्यप्रवाद-  
 मेतदुच्यते । अस्य पदपरिमाणं सप्ततिलक्षात्मकम् । चतुर्थम्-अस्ति नास्तिप्रवादम्-  
 यद्यल्लोके यथाऽस्ति यथा वा नास्ति अथवा-स्याद्वादभिप्रायेण 'तदेवास्ति तदेव  
 नास्ति' इत्येवं प्रवदति यत्तत् । अत्र पदपरिमाणं षष्टि लक्षात्मकम् । पञ्चमं ज्ञान-

૩, અસ્તિનાસ્તિપ્રવાદપૂર્વ ૪, જ્ઞાનપ્રવાદપૂર્વ ૫, સત્યપ્રવાદપૂર્વ ૬, આત્મ-  
 પ્રવાદપૂર્વ ૭, કર્મપ્રવાદપૂર્વ ૮, પ્રત્યાખ્યાનપ્રવાદપૂર્વ ૯, વિદ્યાનુપ્રવાદપૂર્વ  
 ૧૦, અવન્ધ્યપૂર્વ ૧૧, પ્રાણાયુપૂર્વ ૧૨, ક્રિયાવિશાલપૂર્વ ૧૩, તથા લોક-  
 વિન્દુસારપૂર્વ ૧૪ । ઉત્પાદપુર્વમેં સમસ્તદ્રવ્યોં એવં उनकी પર્યાયોં કી,  
 ઉત્પાદભાવ કો લેકર પ્રરૂપણા કી ગઈ હૈ । इसके पदों का प्रमाण एक करोड़  
 है । १। अग्रायणीय नाम के द्वितीय पुर्वमें सप्त जीवादिक द्रव्यों का, उनकी  
 पर्यायों का और जीवविशेषों का परिमाण वर्णित हुआ है । इसके पदों का  
 परिमाण छयान्नवे ९६ लाख है । २। तीसरे-वीर्य प्रवाद पुर्वमें कर्म सहित  
 एवं कर्मरहित जीवों का तथा अजीवों का वर्णन हुआ है । इसके पदों  
 का परिमाण सत्तर ७० लाख है । ३। चौथे-अस्तिनास्ति प्रवादपुर्वमें  
 स्याद्वाद सिद्धान्तानुसार यह बतलाया गया है कि लोकमें जो भी कुछ  
 है वह किस अपेक्षा अस्तिरूप है और किस अपेक्षा नास्तिरूप है । इसके  
 पदों का परिमाण ६० लाख है । ४। पांचवे-ज्ञान प्रवाद पूर्वमें मतिज्ञान

પૂર્વ, (૩) વીર્યપ્રવાદપૂર્વ, (૪) અસ્તિનાસ્તિપ્રવાદપૂર્વ, (૫) જ્ઞાનપ્રવાદપૂર્વ,  
 (૬) સત્યપ્રવાદપૂર્વ, (૭) આત્મપ્રવાદપૂર્વ, (૮) કર્મપ્રવાદપૂર્વ, (૯) પ્રત્યા-  
 ખ્યાનપ્રવાદપૂર્વ, (૧૦) વિદ્યાનુપ્રવાદપૂર્વ, (૧૧) અવન્ધ્યપૂર્વ, (૧૨) પ્રાણાયુ-  
 પૂર્વ, (૧૩) ક્રિયાવિશાલપૂર્વ, (૧૪) તથા લોકવિન્દુસારપૂર્વ. (૧) ઉત્પાદપૂર્વમાં  
 સમસ્ત દ્રવ્યો અને તેમની પર્યાયોની ઉત્પાદ લાવને લઈને પ્રરૂપણા કરેલ  
 છે. તેના પદોનું પ્રમાણ એક કરોડ છે. (૨) અગ્રાયણીય નામના બીજાં પૂર્વમાં  
 સમસ્ત જીવાદિક દ્રવ્યોનું, તેમની પર્યાયોનું, અને જીવવિશેષોનું પ્રમાણ વર્ણવ્યું  
 છે, તેમાં છનું લાખ (૯૬૦૦૦૦૦) પદો છે. (૩) ત્રીજાં વીર્યપ્રવાદ પૂર્વમાં  
 કર્મ સહિત અને કર્મ રહિત જીવોનું તથા અજીવોનું વર્ણન થયું છે. તેમાં  
 (૭૦) સીત્તર લાખ પદો છે. (૪) ચોથા અસ્તિનાસ્તિ પ્રવાદ પૂર્વમાં સ્યાદ્વાદ  
 સિદ્ધાન્તાનુસાર એ બતાવ્યું છે કે લોકમાં જે કંઈ પણ છે તે કંઈ અપેક્ષાએ  
 નાસ્તિરૂપ છે અને કંઈ અપેક્ષાએ અસ્તિરૂપ છે. તેમાં સાઠકિ (૬૦) લાખ પદો છે.



પ્રવાદમ્, અત્ર મત્યાદીનાં પશ્ચાનાં જ્ઞાનાનાં ભેદપ્રરૂપણા યસ્માદસ્તિ તસ્માદિદં પૂર્વ જ્ઞાનપ્રવાદમુચ્યતે । અત્ર પદપરિમાણમેકપદન્યૂનૈકા કોટિઃ । ષષ્ઠં સત્યપ્રવાદમ્-સત્યં=સંયમઃ સત્યવચનં વા, તદ્યત્ર સભેદં સપ્રતિપક્ષં ચ વર્ણ્યતે તત્સત્યપ્રવાદમ્, તસ્ય પદપરિમાણં ષડધિકૈકકોટિઃ । સપ્તમમ્-આત્મપ્રવાદમ્-યત્ર નયદર્શનપૂર્વક-માત્માઽનેકથા વર્ણ્યતે તત્ । તસ્ય પદસંખ્યા ષડ્વિંશતિકોટિપ્રમાણા । અષ્ટમં કર્મ-પ્રવાદમ્-જ્ઞાનાવરણીયાદિકમષ્ટવિધં કર્મ યત્ર પ્રકૃતિસ્થિત્યનુભાગપ્રદેશાદિભિર્મેદૈરિતરૈશ્ચોત્તરોત્તર ભેદૈર્વર્ણ્યતે તત્ । પદપરિમાણં ચાસ્ય એકાકોટિરશીતિશ્ચ સહ-સ્રાણિ । નવમં-પ્રત્યાખ્યાનપ્રવાદમ્-અત્ર યતઃ સર્વપ્રત્યાખ્યાનસ્વરૂપં વર્ણ્યતે તત્ત્વં પ્રત્યાખ્યાનપ્રવાદમુચ્યતે । અત્ર પદ સંખ્યા ચતુર્શીતિલક્ષાણિ । દશમં-વિદ્યાનુપ્રવા-

આદિ પાંચ જ્ઞાન કે ભેદોંની પ્રરૂપણા હુઈ હૈ । ઇસ કે પદોંની પ્રમાણ એક પદ કમ એક કરોડ હૈ ૫ । છઠે-સત્યપ્રવાદપૂર્વમેં સત્ય અર્થાત્-સંયમે, અથવા સત્યવચન કા ભેદ સહિત, એવં પ્રતિપક્ષસહિત વર્ણન હુઆ હૈ । ઇસ કે પદોંની પ્રમાણ છ ૬ અધિક એક કરોડ હૈ ૬ । સાતવેં આત્મ-પ્રવાદપૂર્વ મેં નયોંની માન્યતાનુસાર આત્મદ્રવ્ય કા અનેક પ્રકાર સે વર્ણન હુઆ હૈ । ઇસ કે પદોંની પ્રમાણ છઠ્ઠીસ ૨૬ કરોડ હૈ ૭ । આઠવેં-કર્મપ્રવાદપૂર્વ મેં જ્ઞાનાવરણીય આદિ આઠ પ્રકાર કે કર્મોંની પ્રકૃતિ સ્થિતિ અનુભાગ તથા પ્રદેશ આદિ ભેદોં દ્વારા, તથા ઓર મી ઉત્તરોત્તર ભેદોં દ્વારા વર્ણન કરને મેં આયા હૈ । ઇસ કે પદોંની પ્રમાણ એક ૧ કરોડ ૮૦ અસી હજાર હૈ ૮ । નૌવેં-પ્રત્યાખ્યાનપ્રવાદપૂર્વમેં સમસ્ત પ્રત્યાખ્યાનોંની સ્વરૂપ કા કથન કિયા ગયા હૈ । ઇસકે પદોંની પ્રમાણ

(૫) પાંચમાં જ્ઞાનપ્રવાદપૂર્વમાં મતિજ્ઞાન આદિ પાંચ ભેદોની પ્રરૂપણા થઈ છે. તેમાં એક કરોડમાં એક ન્યૂન પદ છે. (૬) છઠાં સત્યપ્રવાદપૂર્વમાં સત્ય એટલે સંયમ અથવા સત્યવચનના ભેદસહિત અને પ્રતિપક્ષ સહિત વર્ણન થયું છે. તેના પદોનું પ્રમાણ એક કરોડ અને છનું છે. (૭) સાતમાં આત્મપ્રવાદ પૂર્વમાં નયોની માન્યતા પ્રમાણે આત્મ દ્રવ્યનું અનેક પ્રકારે વર્ણન થયું છે. તેના પદોનું પ્રમાણ છવીસ (૨૬) કરોડ છે. (૮) આઠમાં કર્મપ્રવાદપૂર્વમાં જ્ઞાનાવરણીય આદિ આઠ પ્રકારનાં કર્મોનું પ્રકૃતિ, સ્થિતિ, અનુભાગ તથા પ્રદેશ આદિ ભેદો દ્વારા અને બીજા પણ ઉત્તરોત્તર ભેદો દ્વારા વર્ણન કરાયું છે. તેના પદોનું પ્રમાણ એક કરોડ એસી હજાર છે. (૯) નવમાં પ્રત્યાખ્યાન પ્રવાદ પૂર્વમાં સમસ્ત પ્રત્યાખ્યાનોનાં સ્વરૂપનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે. તેના પદોનું



દમ્, વિદ્યાનુપ્રવાદેऽનેકે વિદ્યાતિશયા વર્ણિતાઃ । તસ્ય પદપરિમાણમેકા કોટિર્દશ ચ લક્ષાણિ । એકાદશમ્-અવન્ધ્યમ્-વન્ધ્યં=નિષ્ફલમ્, ન વન્ધ્યમવન્ધ્યં સફલમિત્યર્થઃ, અત્ર હિ સર્વે જ્ઞાનાતપાસંયમયોગાઃ શુભફલેન સફલા વર્ણ્યન્તે, અપ્રશસ્તાશ્ચ પ્રામાદાદિકાઃ સર્વેઽશુભફલા વર્ણ્યન્તે, અતઃ્દમવન્ધ્યમુચ્યતે । અસ્ય પદપરિમાણં ષટ્ત્રિંશતિકોટિપરિમિતમ્ । દ્વાદશં-પ્રાણાયુઃ-અત્ર આયુપઃ પ્રાણસ્ય ચ વર્ણનં સભેદમુપદર્શ્યતે, તથા-અન્યેઽપિ ચ પ્રાણા ઉપદર્શ્યન્તે । અસ્ય પદપરિમાણમેકા-કોટિઃ ષટ્પન્ચાશચલક્ષાણિ । ત્રયોદશં ક્રિયાવિશાલં=ક્રિયાઃ=કાર્યિક્યાદયઃ સંયમક્રિયા-ચ્છન્દક્રિયાદયશ્ચ તાભિર્વિશાલં=વિસ્તીર્ણં યત્ તત્ । અસ્ય પદપરિમાણં નવકોટયઃ । ચતુર્દશં-લોકાવિન્દુસારમ્-ઇદં ચાસ્મિન્ લોકે શ્રુત લોકે વા વિન્દુરિવાક્ષરસ્ય સર્વોત્તમામિતિ, સર્વાક્ષરસન્નિપાતપ્રતિષ્ઠિતત્વેન લોકાવિન્દુસારમુચ્યતે । અસ્ય પદપરિમાણમર્દ્વત્રયોદશકોટયઃ ।

૮૪ ચોરાસી લાખ હૈ ૯ । દસવેં-વિદ્યાનુપ્રવાદપૂર્વ મેં વિદ્યાઓંકે અનેક અતિશય વર્ણિત હુએ હૈં । હસ કે પદોં કા પરિમાણ ૧ એક કરોડ ૧૦ દસ લાખ હૈ ૧૦ । ગ્યારહવે અવન્ધ્યપ્રવાદપૂર્વ મેં જ્ઞાન, તપ, એવં સંયમ તથા શુભયોગ યે સબ સફલ-શુભફલ પ્રદાયક હોતે હૈં તથા અપ્રશસ્ત જિતને ભી પ્રમાદ આદિ હૈં વે સબ અશુભ ફલવાલે હોતે હૈં, યહ વિષય વર્ણિત હુઆ હૈ । હસ કે પદોં કા પરિમાણ ૨૬ છબીસ કરોડ હૈ ૧૧ । બારહવે-પ્રાણાયુપૂર્વ મેં આયુ ઓર પ્રાણ કા તથા અન્ય ઓર ભી પ્રાણોં કા ભેદ સહિત વર્ણન હુઆ હૈ । હસ કે પદોં કા પ્રમાણ ૧ એક કરોડ ૫૬ છપ્પન લાખ હૈ ૧૨ । તેરહવે-ક્રિયાવિશાલપૂર્વ મેં કાર્ય કી આદિ ક્રિયાઓં કા ભેદોં કા તથા સંયમક્રિયાઓં કા એવં છંદક્રિયાઓં કા ભેદોં કા વર્ણન ક્રિયા ગયા હૈ । હસ કે પદોં કા પરિમાણ ૯ નૌ કરોડ હૈ ૧૩ । ચૌદહવાંપૂર્વ જો લોક-

પ્રમાણ ચોર્યાસી (૮૪) લાખ છે (૧૦) હસમાં વિદ્યાનુપ્રવાદપૂર્વમાં વિદ્યાઓના અનેક અતિશયનું વર્ણન કરાયું છે, તેના પદોનું પ્રમાણ એક કરોડ દસ લાખ છે. (૧૧) અગીયારમાં અવન્ધ્યપ્રવાદપૂર્વમાં જ્ઞાન, તપ, અને સંયમ તથા શુભયોગ એ બધા શુભફળ પ્રદાયક હોય છે, તથા પ્રમાદ આદિ જે અપ્રશસ્ત છે તે અશુભફળ દેનાર છે, આ વિષયનું વર્ણન કરાયું છે. તેમાં છવીસ કરોડ (૨૬૦૦૦૦૦૦૦) પદો છે, (૧૨) બારમાં પ્રાણાયુપૂર્વમાં આયુ અને પ્રાણના તથા બીજાં પ્રાણોનું ભેદસહિત વર્ણન થયું છે તેમાં પદોનું પ્રમાણ એક કરોડ છપ્પન લાખ છે. (૧૩) તેરમાં ક્રિયાવિશાલપૂર્વમાં કાર્યકી આદિ ક્રિયાઓના ભેદોનું તથા સંયમ ક્રિયાઓ અને છંદક્રિયાઓના ભેદોનું વર્ણન થયું છે. તેમાં નવ કરોડ પદો છે. (૧૪) ચૌદમું જે લોકાવિન્દુસારપૂર્વ છે તે અક્ષર ૫૨

ઉત્પાદપુઠ્વસ્સ ણં દસ વત્થૂ, ચત્તારિ ચૂલિયાવત્થૂ પળ્લન્તા ૧ । અગ્ગાણીયપુઠ્વસ ચોદસ વત્થૂ, દુબાલસ ચૂલિયાવત્થૂ પળ્લન્તા ૨ । વોરિયપુઠ્વસ્સ ણં અટ્ટવત્થૂ અટ્ટચૂલિયાવત્થૂ પળ્લન્તા ૩ । અત્થિનાત્થિપ્પ-  
 ચ્છલુ ચતુર્દશ વસ્તૂનિ, દ્વાદશ ચૂલિકા વસ્તૂનિ પ્રજ્ઞમાનિ ૨, વીર્યપૂર્વસ્ય ચ્છલુ અટ્ટ-  
 વસ્તૂનિ, અટ્ટ ચૂલિકા વસ્તૂનિ પ્રજ્ઞમાનિ ૩ । અસ્તિનાસ્તિપ્રવાદપૂર્વસ્ય ચ્છલુ અટ્ટ

ઉત્પાદપૂર્વસ્ય ચ્છલુ વસ્તૂનિ પ્રજ્ઞમાનિ, નિશ્ચિતાર્થાધિકાર-પ્રતિબદ્ધોઽધ્યયન-  
 સદૃશો ગ્રન્થવિશેષો વસ્તુ પ્રોચ્યતે । તથા ચત્તારિ ચૂલિકા વસ્તૂનિ=ચૂડા इव चूडाः,  
 इह दृष्टिवादे परिकर्मसूत्रपूर्वगतानुयोगेष्वनुक्तार्थानां संग्रहपरा ग्रन्थपद्धतयश्चूडा-  
 शब्देनाभिधीयन्ते, चूडा एव चूलिकाः, डलयोरेकत्वस्मरणात् । तासां वस्तूनि  
 प्रज्ञमानि । अग्रायणीयस्य च्छलु पूर्वस्य चतुर्दश वस्तूनि प्रज्ञमानि, तथा-द्वादश  
 चूलिकावस्तूनि प्रज्ञमानि । वीर्य पूर्वस्य च्छलु अट्ट वस्तूनि प्रज्ञमानि, तथा-अट्ट चूलि-

बिन्दुसार है वह अक्षर पर बिन्दु के समान, इस लोकमें अथवा श्रुतलोक  
 में सर्वोत्तम माना गया है । इस में सर्वाक्षरसंनिपात लब्धि आदि लब्धियों  
 का वर्णन है, इस के पदों का परिमाण साठे बारह १२॥ करोड़ है १४ ।

निश्चित अर्थाधिकार से प्रतिबद्ध अध्ययन के जैसा जो ग्रन्थविशेष  
 होता है उसका नाम वस्तु है । उत्पाद पूर्व की दश वस्तुएँ हैं, तथा  
 चार चूलिका वस्तु हैं । दृष्टिवाद के परिकर्म, सूत्र, पूर्वगत एवं अनुयोग  
 इन चार भेदों में जो अर्थ नहीं कहा गया है उस अर्थ का संग्रह करने  
 वाली जो ग्रन्थपद्धति है वह 'चूड़ा' शब्द का वाच्यार्थ है । 'चूड़ा' के  
 समान जो हो वह चूलिका है । कहीं २ 'ड' और 'ल' में भेद नहीं माना  
 जाता है, अतः चूड़िका या चूलिका एक ही है । इनकी वस्तु का नाम  
 चूलिका वस्तु है १ । दूसरे-अग्रायणीयपूर्व की चौदह वस्तुएँ, एवं बारह

બિન્દુના જેવા આલોકમાં અથવા શ્રુતલોકમાં સર્વોત્તમ મનાયુ છે તેમાં સર્વા-  
 ક્ષર સંનિપાત લબ્ધિ આદિ લબ્ધિઓનું વર્ણન છે, તેમાં સાઠા બાર કરોડ પદો છે.

નિશ્ચિત અર્થાધિકારથી પ્રતિબદ્ધ અધ્યયનના જેવા જે ગ્રન્થવિશેષ હોય  
 છે તેનું નામ વસ્તુ છે ઉત્પાદ પૂર્વની દસ વસ્તુ છે. તથા ચાર ચૂલિકા વસ્તુ છે.  
 દૃષ્ટિવાદના પરિકર્મ, સૂત્ર, પૂર્વગત, અને અનુયોગ એ ચાર ભેદોમાં જે અર્થ  
 કહેવાયો ન હોય તે અર્થને સંગ્રહ કરનારી જે ગ્રન્થપદ્ધતિ છે તે ચૂડા શબ્દનો  
 વાચ્યાર્થ છે ચૂડાના જેવી જે હોય તે ચૂલિકા કહેવાય છે. ક્યાંક ક્યાંક “ड”  
 અને “ल” માં ભેદ મનાતો નથી, તેથી ચૂડિકા કે ચૂલિકા એક જ છે. તેમની  
 વસ્તુનું નામ ચૂલિકા વસ્તુ છે (૧) બીજા અગ્રાણીય પૂર્વની ચૌદ વસ્તુઓ તથા

વાયપુઠ્વસ્સ ણં અદ્ધારસવત્થૂ, દસ ચૂલિયાવત્થૂ પળ્લણ્ણત્તા ૪। નાળ-  
 પ્પવાયપુઠ્વસ્સ ણં બારસવત્થૂ પળ્લણ્ણત્તા ૫, સચ્ચપ્પવાયપુઠ્વસ્સ  
 ણં દોણિણવત્થૂ પળ્લણ્ણત્તા ૬, આયપ્પવાયપુઠ્વસ્સ ણં સોલસવત્થૂ  
 પળ્લણ્ણત્તા ૭, કમ્મપ્પવાયપુઠ્વસ્સ ણં તીસંવત્થૂ પળ્લણ્ણત્તા ૮,  
 પચ્ચવચ્છાણપુઠ્વસ ણં વીસંવત્થૂ પળ્લણ્ણત્તા ૯, વિજ્ઞાણુપ્પવાય  
 પુઠ્વસ્સ ણં પન્નરસવત્થૂ પળ્લણ્ણત્તા ૧૦, અવંજ્ઞપુઠ્વસ્સ ણં બારસ વત્થૂ  
 દશવસ્તૂનિ દશ ચૂલિકાવસ્તૂનિ પ્રજ્ઞપ્પાનિ ૪। જ્ઞાનપ્રવાદપૂર્વસ્ય ચ્ચલુ દ્વાદશવસ્તૂનિ  
 પ્રજ્ઞપ્પાનિ ૫। સત્યપ્રવાદપૂર્વસ્ય ચ્ચલુ દ્વે વસ્તૂનિ પ્રજ્ઞપ્પે ૬। આત્મપ્રવાદપૂર્વસ્ય ચ્ચલુ  
 ષોડશ વસ્તૂનિ પ્રજ્ઞપ્પાનિ ૭। કર્મપ્રવાદપૂર્વસ્ય ચ્ચલુ ત્રિંશદ્ વસ્તૂનિ પ્રજ્ઞપ્પાનિ ૮।  
 પ્રત્યાખ્યાનપૂર્વસ્ય ચ્ચલુ વિંશતિર્વસ્તૂનિ પ્રજ્ઞપ્પાનિ ૯। વિદ્યાનુપ્રવાદપૂર્વસ્ય ચ્ચલુ

કાવસ્તૂનિ પ્રજ્ઞપ્પાનિ। અસ્તિનાસ્તિપ્રવાદપૂર્વસ્ય ચ્ચલુ અષ્ટાદશ વસ્તૂનિ પ્રજ્ઞપ્પાનિ,  
 તથા-દશ ચૂલિકાવસ્તૂનિ પ્રજ્ઞપ્પાનિ। જ્ઞાનપ્રવાદ પૂર્વસ્ય ચ્ચલુ દ્વાદશ વસ્તૂનિ પ્રજ્ઞ-  
 પ્પાનિ। સત્યપ્રવાદ પૂર્વસ્ય ચ્ચલુ દ્વે વસ્તૂની પ્રજ્ઞપ્પે। આત્મપ્રવાદ પૂર્વસ્ય ચ્ચલુ ષોડશ  
 વસ્તૂનિ પ્રજ્ઞપ્પાનિ। કર્મપ્રવાદપૂર્વસ્ય ચ્ચલુ ત્રિંશદ્ વસ્તૂનિ પ્રજ્ઞપ્પાનિ। પ્રત્યાખ્યાન પૂર્વસ્ય  
 ચ્ચલુ વિંશતિર્વસ્તૂનિ પ્રજ્ઞપ્પાનિ। વિદ્યાનુપ્રવાદ પૂર્વસ્ય ચ્ચલુ પચ્ચદશવસ્તૂનિ પ્રજ્ઞપ્પાનિ।

ચૂલિકા વસ્તુએ હૈં ૨। તીસરે-વીર્યપ્રવાદપૂર્વે કી આઠ વસ્તુએ, તથા આઠ  
 હી ચૂલિકા વસ્તુએ હૈં ૩। ચૌથે-અસ્તિનાસ્તિ પ્રવાદપૂર્વે કી અઠારહ વસ્તુએ  
 તથા દસ ચૂલિકા વસ્તુએ હૈં ૪। પાંચવેં-જ્ઞાનપ્રવાદપૂર્વે કી બારહ વસ્તુએ  
 હૈં ૫। છઠે-સત્યપ્રવાદપૂર્વે કી દો વસ્તુએ હૈં ૬। સાતવેં-આત્મપ્રવાદપૂર્વે  
 કી સોલહ વસ્તુએ હૈં ૭। આઠવેં-કર્મપ્રવાદપૂર્વે કી તીસ વસ્તુએ ૮ હૈં। નૌવેં-  
 પ્રત્યાખ્યાનપૂર્વે કી વીસ વસ્તુએ હૈં ૯। દસવેં-વિદ્યાનુપ્રવાદપૂર્વે કી પન્દરહ

બાર ચૂલિકા વસ્તુઓ છે (૨). ત્રીજાં વીર્યવાદ પૂર્વની આઠ વસ્તુઓ તથા આઠ  
 જ ચૂલિકાવસ્તુઓ છે. (૩). ચૈથાં અસ્તિનાસ્તિ પ્રવાદ પૂર્વની અઠાર વસ્તુઓ  
 તથા દસ ચૂલિકા વસ્તુઓ છે (૪). પાંચમાં જ્ઞાનપ્રવાદ પૂર્વની બાર વસ્તુઓ છે (૫)  
 (૫). છઠ્ઠા સત્યપ્રવાદપૂર્વની બે વસ્તુઓ છે (૬). સાતમા આત્મપ્રવાદપૂર્વની સોળ  
 વસ્તુઓ છે (૭). આઠમાં કર્મપ્રવાદપૂર્વની ત્રીસ વસ્તુઓ છે (૮). નવમાં પ્રત્યા-  
 ખ્યાનપૂર્વની વીસ વસ્તુઓ છે (૯). દસમાં વિદ્યાનુપ્રવાદપૂર્વની પંદર વસ્તુઓ

પળ્લતા ૧૧, પાળાઝપુઠ્વસ્સ પં તેરસ વત્થૂ પળ્લતા ૧૨, કિરિ-  
યાવિસાલપુઠ્વસ પં તીસં વત્થૂ પળ્લતા ૧૩, લોકવિન્દુસાર-  
પુઠ્વસ પં પળ્લવીસંવત્થૂ પળ્લતા ૧૪ ।

ગાહા—“દસ ૧ ચોદ્દહ ૨ અટ્ટ ૩ ટ્ઠારસે ૪ વ, વારસ ૫  
દુવે ય વત્થૂણિ ।

સોલસ ૭ તીસા ૮ વીસા ૯ પન્નરસ અણુપ્પવાયમ્મિ ॥૧॥

પચ્ચદશવસ્તૂનિ પ્રજ્ઞપ્પાનિ ૧૦ । અવન્ધ્યપૂર્વસ્ય સ્વલુ દ્વાદશ વસ્તૂનિ પ્રજ્ઞપ્પાનિ ૧૧ ।  
પ્રાણાયુઃપૂર્વસ્ય સ્વલુ ત્રયોદશ વસ્તૂનિ પ્રજ્ઞપ્પાનિ ૧૨ । ક્રિયાવિશાલપૂર્વસ્ય સ્વલુ  
ત્રિંશદ્વસ્તૂનિ પ્રજ્ઞપ્પાનિ ૧૩ । લોકવિન્દુસારપૂર્વસ્ય સ્વલુ પચ્ચવિંશતિર્વસ્તૂનિ  
પ્રજ્ઞપ્પાનિ ૧૪ ।

ગાહા—“દશ ચતુર્દશાષ્ટાદશૈવ દ્વાદશ દ્વે ચ વસ્તૂનિ ।

ષોડશ ત્રિંશદ્ વિંશતિઃ પચ્ચદશાનુ પ્રવાદે ॥ ૧ ॥

અવન્ધ્યપૂર્વસ્ય સ્વલુ દ્વાદશવસ્તૂનિપ્રજ્ઞપ્પાનિ । પ્રાણાયુઃપૂર્વસ્ય સ્વલુ ત્રયોદશ-  
વસ્તૂનિ પ્રજ્ઞપ્પાનિ । ક્રિયાવિશાલપૂર્વસ્ય સ્વલુ ત્રિંશદ્વસ્તૂનિપ્રજ્ઞપ્પાનિ । લોકવિન્દુ-  
સારપૂર્વસ્ય સ્વલુ પચ્ચવિંશતિર્વસ્તૂનિપ્રજ્ઞપ્પાનિ । એતદેવ સંક્ષેપેનાહ—

“દશ ચોદ્દસ અટ્ટઽટ્ઠારસેવ, વારસ દુવે ય વત્થૂણિ ।

સોલસ તીસા વીસા પન્નરસ અણુપ્પવાયમ્મિ ॥ ૧ ॥

વસ્તુએ હૈં ૧૦ । ગ્યારહવે—અવન્ધ્યપૂર્વની વારહ વસ્તુએ હૈં ૧૧ । વારહવે—  
પ્રાણાયુપૂર્વની તેરહ વસ્તુએ હૈં ૧૨ । તેરહવે—ક્રિયાવિશાલપૂર્વની તીસ  
વસ્તુએ હૈં ૧૩ । ચોદ્દહવે લોકવિન્દુસારપૂર્વની પચ્ચીસ વસ્તુએ હૈં—એસા  
જિનેન્દ્ર દેવ ને કહા હૈં । યહી વિષય સંક્ષેપ સે “દસ ચોદ્દસ” ઇત્યાદિ  
ગાથાઓ દ્વારા સ્પષ્ટ સમજાયા ગયા હૈં । હસ પ્રકાર યહ પૂર્વગત કા  
સ્વરૂપ હૈં । ૩ ।

છે (૧૦). અગીયારમાં અવન્ધ્યપૂર્વની બાર વસ્તુઓ છે (૧૧). બારમાં પ્રાણાયુ-  
પૂર્વની તેર વસ્તુઓ છે (૧૨). તેરમાં ક્રિયાવિશાલપૂર્વની ત્રીસ વસ્તુઓ  
છે (૧૩). ચોદ્દમાં લોકવિન્દુસારપૂર્વની પચ્ચીસ વસ્તુઓ છે એવું જિનેન્દ્ર  
દેવે કહેલ છે. એજ વિષય સંક્ષિપ્તમાં “દસ ચોદ્દસ” ઇત્યાદિ ગાથાઓ  
દ્વારા સ્પષ્ટ સમજાવ્યો છે, આ પ્રમાણે આ પૂર્વગતનું સ્વરૂપ છે. (૩)

बारस एकारसमे ११, बारसमे तेरसेव १२ वत्थूणि ।

तीसा पुण तेरसमे १३, चोदसमे पन्नवीसाओ १४ ॥२॥

चत्तारि १ दुवालस २, अट्ट ३ चेव दस ४ चेव चूल्ल  
वत्थूणि । आइल्लाण चउण्हं, सेसाणं चूलिया णत्थि ॥३॥

से त्तं पुव्वगए ॥३॥

से किं तं अणुओगे ?, अणुओगे दुविहे पणत्ते, तं जहा-  
मूलपढमाणुओगे य गंडियाणुओगे य । से किं तं मूलपढमा-

द्वादशैकादशे द्वादशे त्रयोदशैव वस्तूनि ।

त्रिंशत् पुनस्त्रयोदशे चतुर्दशे पञ्चविंशतिः ॥ २ ॥

चत्वारि द्वादशाष्ट चैव दश चैव चूलिका वस्तूनि ।

आदिमानां चतुर्णां चूलिकाः शेषाणां चूलिका न सन्ति ” ॥ ३ ॥

तदेतत्पूर्वगतम् ॥ ३ ॥

अथ कोऽसावनुयोगः ? अनुयोगो द्विविधः प्रज्ञप्तः, तद्यथा—मूलप्रथमानुयोगो  
गण्डिकानुयोगश्च । अथ कौऽसौ मूल प्रथमानुयोगः ? मूलप्रथमानुयोगे खलु

बारस एकारसमे बारसमे तेरसेव वत्थूणि ।

तीसा पुण तेरसमे चउदसमे पण्णवीसाओ ” ॥ २ ॥

छया—दश चतुर्दशाष्टाष्टा दशैव द्वादश द्वे च वस्तूनि ।

षोडश त्रिंशद् विंशतिः पञ्चदशानु प्रवादे ॥ १ ॥

द्वादशैकादशे द्वादशे त्रयोदशैव वस्तूनि ।

त्रिंशत्पुनस्त्रयोदशे चतुर्दशे पञ्चविंशतिः ॥ २ ॥

तथा—“ चत्तारि दुवालस अट्ट चेव दसचेव चूलवत्थूणि ।

आल्लाण चउण्हं, सेसाणं चूलियाणत्थि ॥ ३ ॥

छाया—चत्वारि द्वादशाष्ट चैव दश चैव चूलिका वस्तूनि ।

आदिमानां चतुर्णां, शेषाणां चूलिका न सन्ति ॥ ३ ॥ इति ।

उपसंहरन्नाह—तदेतत्पूर्वगतम् । इति ॥

अथ चतुर्थ भेदमाह—‘ से किं तं अणुओगे० ’ इत्यादि । ‘ अथ कोऽसावनु-  
योगः ’ इति । उत्तरयति—अनुयोगः=अनु-अनुकूलोऽनुरूपो वा योगः—सूत्रस्य

પુઓગે ? મૂલપદમાણુઓગે ણં અરહંતાણં ભગવંતાણં પુઠ્ઠભવા,  
દેવલોગગમણાઈં, આડં, ચવણાઈં, જમ્મણાણિ, અભિસેયા; રાય-  
વરસિરીઓ, પઠ્ઠજ્ઞાઓ, તવા ય ઉગ્ગા કેવલનાણુપ્પાયાઓ,  
તિત્થપવત્તણાણિ ય, સીસા, ગણા, ગણહરા, અજ્ઞા, પવત્તણીઓ,  
અર્હતાં ભગવતાં પૂર્વભવાઃ દેવલોકગમનાનિ આયુઃ, ચ્યવનાનિ, જન્માનિ, અભિષેકાઃ  
રાજવરાશ્રિયઃ, પ્રવ્રજ્યાઃ, તપાંસિ ચ ઉગ્રાણિ, કેવલજ્ઞાનોત્પાદઃ, તીર્થ પ્રવર્તનાનિ ચ,

સ્વાભિધેયેન સહ સંબન્ધોઽનુયોગઃ, સ દ્વિવિધઃ પ્રજ્ઞસઃ, દ્વૈવિધ્યમેવાહ—‘તં જઠ્ઠાં’  
ઈત્યાદિના, તથા—મૂલપ્રથમાનુયોગઃ, ગણ્ડિકાનુયાંગથ્થ । તત્ર પુનઃ પૃચ્છતિ—અથ  
કોઽસૌ મૂલ પ્રથમાનુયોગઃ ? इति । उत्तरयति—मूलप्रथमानुयोगे खलु अर्हतां भग-  
वतां पूर्वभवाः=पूर्वजन्मानि, देवलोकगमनानि, आयुः च्यवनानि, जन्मानि  
अभिषेकाः, राजवराश्रयः, प्रव्रज्याः, उग्राणि=घोराणि च तपांसि, केवलज्ञानोत्पादाः,

અવ ચૌથે મેદ્ અનુયોગ કા સ્વરૂપ કહતે હૈં—‘સે કિં તં અણુઓગે’  
ઈત્યાદિ । શિષ્ય પુછતા હૈ—હે ભદન્ત । અનુયોગ કા કયા સ્વરૂપ હૈ ?

ઉત્તર—સૂત્ર કા જો અપને અભિધેય કે સાથ અનુકૂલ અથવા અનુ-  
રૂપ સંબંધ હો ઉસ કા નામ અનુયોગ હૈ । અર્થાત્—સૂત્ર કે અનુકૂલ અર્થ  
કરના અનુયોગ હૈ । યહ અનુયોગ દો પ્રકાર કા હૈ, વે પ્રકાર યે હૈં—મૂલ-  
પ્રથમાનુયોગ ઔર ગણ્ડિકાનુયોગ ।

શિષ્ય પ્રશ્ન—મૂલપ્રથમાનુયોગ કા કયા સ્વરૂપ હૈ ?

ઉત્તર—મૂલપ્રથમાનુયોગ મેં અર્હન્ત ભગવાન કે પૂર્વભવોં કા, દેવલોક  
મેં ઉન કી ઉત્પત્તિ હોને કા ઉન કી આયુ કા, દેવલોક સે ઉન કે ચ્યવન  
કા, ઉનકે જન્મ કા, ઉનકે અભિષેક કા, ઉન કી રાજલક્ષ્મી—વિભૂતિ કા

હવે ચોથા લેઢ—અનુયોગનું સ્વરૂપ કહે છે—“સે કિં તં અણુઓગે” ઇત્યાદિ.

શિષ્ય પૂછે છે—હે ભદન્ત ! અનુયોગનું શું સ્વરૂપ છે ?

ઉત્તર—સૂત્રને જે પોતાના અભિધેયની સાથે અનુકૂળ અથવા અનુરૂપ  
સંબંધ હોય તેનું નામ અનુયોગ છે. એટલે કે સૂત્રનો અનુકૂળ અર્થ કરવો તેને  
અનુયોગ કહે છે. આ અનુયોગ બે પ્રકારનો છે—મૂલપ્રથમાનુયોગ અને  
ગણ્ડિકાનુયોગ.

શિષ્ય પૂછે છે—મૂલપ્રથમાનુયોગનું શું સ્વરૂપ છે ?

ઉત્તર—મૂલપ્રથમાનુયોગમાં અર્હન્ત ભગવાનના પૂર્વભવોનું, દેવલોકમાં  
તેમની ઉત્પત્તિ થવાનું, તેમના આયુનું, દેવલોકથી તેમના ચ્યવનનું, તેમના  
જન્મનું, તેમના અભિષેકનું, તેમની રાજલક્ષ્મી—વિભૂતિનું, તેમની પ્રવ્રજ્યાનું,



संघस्स चउव्विहस्स जं च परिमाणं, जिणमणपज्जव ओहिनाणी,  
 सम्मत्त सुय नाणिणो य वाई, अणुत्तरगई य, उत्तरवेउ विवणो  
 य मुणिणो, सिद्धिपहो जह देसिओ जच्चिरं च कालं, पाओव-  
 जत्तिया सिद्धा, गया जे जहिं जत्तियाई भत्ताई अणसणाए  
 शिष्याः, गणाः, गणधराः, आर्याः, प्रवर्त्तिन्यः, संघस्य चतुर्विधस्य यच्च परिमाणं  
 जिनमनः पर्यवावधि ज्ञानिनः, समस्त श्रुतज्ञानिनश्च, वादिनः, अनुत्तरगतयश्च, उ-  
 त्तरवैकुर्विणश्च मुनयो, यावन्तः सिद्धाः, सिद्धिपथो यथा देशितः, यावच्चिरं च कालं  
 पादपोपगताः, ये यत्र यावन्ति भक्तानि छित्त्वा अन्तकृतो मुनिवरोत्तमास्तिमिरौ-  
 तीर्थप्रवर्त्तनानि च, शिष्याः, गणाः, गणधराश्च, आर्याः, प्रवर्त्तिन्यः, संघस्य चतु-  
 र्विधस्य यच्च परिमाणम्, जिनमनः पर्यवावधिज्ञानिनः—तत्र—जिना इति=केवलिनः,  
 मनः—पर्यवावधिज्ञाने येषां ते मनः पर्यवावधि ज्ञानिनः, जिनाश्च मनः पर्यवावधि  
 ज्ञानिनश्चेति द्वन्द्वः; तथा—समस्तश्रुतज्ञानिश्च, वादिनः, अनुत्तरगतयश्च, उत्तरवैकु-  
 र्विणश्च, तथा यावन्तः सिद्धाः, यच्चिरं च कालं पादपोपगताः—तथा—यो यत्र  
 यावन्ति भक्तानि छेदयित्वा अन्तकृतो मुनिवरोत्तमः, तिमिरौघविप्रमुक्तः—तिमिरम्=  
 उनकी प्रव्रज्या का, उनकी घोर तपस्या का, उनके केवलज्ञान की उत्पत्ति  
 होने का, उनके तीर्थ प्रवर्तन का, उनके शिष्यों का, उनके गणों का उनके  
 गणधरों का, उनकी आर्यायों का और आर्यायों के गच्छ की प्रवर्तिनियों  
 का, उनके चतुर्विधसंघ के परिमाण का, केवलज्ञानियों का, मनः पर्ययज्ञा-  
 नियों का, अवधिज्ञानियों का समस्त श्रुतज्ञानियों का, वादियों का, अनु-  
 त्तर विमानों में उत्पत्ति होने का, उत्तर वैक्रियलब्धिधारियों का तथा  
 जितने सिद्ध हुए हैं उन का, तथा—जो जितने काल तक पादपोपगमन  
 किये उस काल का, तथा जहाँ जितने अनशन कर के अन्तकृत केवली

तेमनी घोर तपस्यानुं, तेमने केवलज्ञान पेदा थयानुं तेमना तीर्थप्रवर्त्तननुं,  
 तेमना शिष्येनुं, तेमना गण्णेनुं तेमना गणधरेनुं, तेमनी आर्याओनुं, अने  
 आर्याओना गच्छनी प्रवर्त्तिनीओनुं, तेमना चतुर्विध संघनां परिमाणुनुं, केवल-  
 ज्ञानीओनुं, मनःपर्यय ज्ञानीओनुं, अवधिज्ञानीओनुं, समस्त श्रुतज्ञानीओनुं,  
 वादीओनुं, अनुत्तर विमानोंमां उत्पत्ति थवानुं, उत्तरवैक्रिय लब्धिधारियोनुं, तथा  
 जेटला सिद्ध थयां छे तेमनुं, तथा जे जेटला काण सुधी पादपोपगमन कर्यां  
 ते काणनुं, तथा जेओ ज्यां जेटलां अनशन करीने अन्तकृत केवली थयां छे,

છેડતા અંતગટે, મુણિવરુત્તમે તિમિરઓઘવિપ્પમુક્કે મુક્કસુહ-  
મણુત્તરં ચ પત્તે, એવમન્ને ચ એવમાઇભાવા મૂલપઢમાણુઓગે  
કહિયા, સે તં મૂલપઢમાણુઓગે ।

સે કિં તં ગંડિયાણુઓગે? ગંડિયાણુઓગે અણેગવિહે પણ્ણત્તે,  
તં જહા-કુલગરગંડિયાઓ, તિત્થયરગંડિયાઓ, ચક્કવટ્ટિગંડિ-  
યાઓ, દસાર ગંડિયાઓ, બલદેવગંડિયાઓ, વાસુદેવગંડિયાઓ,  
ઘવિપ્રમુક્તાઃ મોક્ષસુખમણુત્તરં ચ પ્રાપ્તાઃ, એવમન્યે ચ એવમાદિભાવા મૂલપ્રથમાનુ-  
યોગે કથિતાઃ, સ એષ મૂલપ્રથમાનુયોગઃ ।

અથ કોઽસૌ ગણ્ડિકાનુયોગઃ ? ગણ્ડિકાનુયોગે કુલકરગણ્ડિકાઃ તીર્થકર-  
ગણ્ડિકાઃ, ચક્રવર્તિગણ્ડિકાઃ, દશારગણ્ડિકાઃ, બલદેવગણ્ડિકાઃ, વાસુદેવગણ્ડિકાઃ

અજ્ઞાનમ્ બુદ્ધિમલિનકારકત્વાત્, તસ્ય ઓઘઃ=સમૂહસ્તતો વિપ્રમુક્તઃ=રહિતઃ સન્,  
મોક્ષસુખમ્, કીદૃશં મોક્ષસુખમ્ ? इत्याह-अनुत्तरम्=प्रधानं-पुनरागमन रहितत्वात्  
પ્રાપ્તઃ । એવમ્=અનેન પ્રકારેણ અન્યે ચ અત્તરે ચ એવમાદિ ભાવાઃ=એવં રૂપા  
જીવાદિ પદાર્થા મૂલપ્રથમાનુયોગે કથિતાઃ સ એષ મૂલપ્રથમાનુયોગઃ ।

અથ કોઽસૌ ગણ્ડિકાનુયોગઃ ? ગણ્ડિકાનુયોગે-એક વક્તવ્યતાર્થાઽધિકારા-  
નુગતાવાક્યપદ્ધતયો ગણ્ડિકાસ્તાસામનુયોગોઽર્થકથનવિધિર્ગણ્ડિકાનુયોગઃ, તસ્મિન્  
-કુલકરગણ્ડિકાઃ, અત્ર કુલકરાણાં વિમલ વાહનાદીનાં પૂર્વ જન્માદીન્યભિ-

હુએ હૈં, જો કિ મુનિવરોમૈં ઉત્તમ હૈં, જિન્હોં ને અજ્ઞાન કે સમૂહ સે રહિત  
હોકર અનુત્તર મોક્ષ સુખ કો પ્રાપ્ત કિયા હૈં ઉનકા વર્ણન કિયા ગયા હૈં ।  
તથા ઇન વર્ણનોં કે અતિરિક્ત ઓર મી ઇસી તરહ કે જીવાદિક પદાર્થ  
મી ઇસમૈં કહે ગયે હૈં । ઇસ પ્રકાર યહ મૂલપ્રથમાનુયોગ કા સ્વરૂપ હૈં ।

ફિર શિષ્ય પૂછતા હૈ કિ-હે ભદન્ત ! ગણ્ડિકાનુયોગ કયા હૈ ?

જેઓ મુનિવરોમાં ઉત્તમ છે, જેઓ અજ્ઞાનના સમૂહથી રહિત થઈને અનુત્તર  
મોક્ષસુખને પામ્યાં છે, તેમનું વર્ણન થયું છે. તથા આ વર્ણનો ઉપરાંત બીજા  
પણ આજ પ્રકારના જીવાદિક પદાર્થનું પણ તેમાં વર્ણન કરાયું છે. આ પ્રકારનું  
આ મૂલપ્રથમાનુયોગનું સ્વરૂપ છે.

બીજી શિષ્ય પૂછે છે-હે ભદન્ત ! ગંડિકાનુયોગનું શું સ્વરૂપ છે ?

ગણધરગંડિયાઓ, ભદ્રવાહુગંડિયાઓ તવોકમ્મગંડિયાઓ હરિ-  
વંસગંડિયાઓ, ઉસ્સપ્પિણીગંડિયાઓ, ઓસપ્પિણીગંડિયાઓ,  
ચિત્તંતરગંડિયાઓ, અમર-નર-તિરિય-નિરય-ગહ્-ગમણ-વિવિહ-  
ગણધરગણિકાઃ, ભદ્રવાહુગણિકાઃ, તપઃ કર્મગણિકાઃ, હરિવંશગણિકાઃ,  
ઉત્સર્પિણીગણિકાઃ, અવસર્પિણી ગણિકાઃ, ચિત્રાન્તરગણિકાઃ, અમર-  
નર-તિર્યગ્ - નિરય - તિર્યક્ - નિરયગતિ-ગમન - વિવિધ - પરિવર્તનાનુયોગેષુ  
ધોયન્તે; તીર્થકરગણિકાઃ, ચક્રવર્તિગણિકા, આસુ ગણિકાસુ તીર્થકર ચક્રવર્તિનાં  
પૂર્વજન્માદોન્યભિધીયન્તે; દશાર્હગણિકાઃ-સમુદ્રવિજયાદિ વસુદેવાન્તાનામત્રપૂર્વ-  
જન્માદિ વર્ણનમ્ । એવમેવેતરગણિકાસ્વપિ તત્તદ્ વર્ણનં વિજ્ઞેયમ્ । બલદેવ ગણિકાઃ,  
વાસુદેવગણિકાઃ, ગણધરગણિકાઃ, ભદ્રવાહુગણિકાઃ, તપઃકર્મગણિકાઃ, હરિવંશ-  
ગણિકાઃ, ઉત્સર્પિણીગણિકાઃ, અવસર્પિણીગણિકાઃ, ચિત્રાન્તરગણિકાઃ,-

ઉત્તર—ગણિકાનુયોગમેં, અર્થાત્-એક અર્થ કે અધિકાર વાલી ગ્રન્થ  
પદ્ધતિ કો ગંડિકા કહતે હૈં, ઉનકે અનુયોગ અર્થકથનવિધિ-કો ગણિકા-  
કાનુયોગ કહતે હૈં । ઉસમેં કુલકરગણિકા-ઇસમેં વિમલવાહન આદિ કુલ  
કરોં કે પુર્વજન્મ આદિ વિષયોં પર પ્રકાશ ડાલા ગયા હૈં । તીર્થકરગણિકા-  
ઇસમેં તીર્થકર કે પુર્વજન્મ આદિ વિષયો પર વિવેચન કિયા ગયા હૈં ।

ચક્રવર્તિગણિકા-ઇસમેં ચક્રવર્તિયોં કે જન્મ આદિ કા, વર્ણન  
કિયા ગયા હૈં । દશાર્હગણિકા-ઇસમેં સમુદ્ર વિજય સે લેકર વસુદેવ  
તક કે યાદવવંશિયોં કે જન્મ આદિ કા વર્ણન કિયા ગયા હૈં । ઇસી તરહ  
સે જો બલદેવગણિકા, વાસુદેવગણિકા ગણધરગણિકા ભદ્રવાહુગ-  
ણિકા; તપઃકર્મગણિકા, હરિવંશગણિકા, ઉત્સર્પિણીગણિકા, અવ-

ઉત્તર—ગણિકાનુયોગમા, એટલે એક અર્થના અધિકારવાળી ગ્રન્થ પદ્ધતિને  
ગંડિકા કહે છે. તેમના અનુયોગ-અર્થકથન વિધિને ગંડિકાનુયોગ કહે છે, તેમાં  
કુલકર ગણિકા-તેમાં વિમલવાહન આદિ કુલકરોના પૂર્વજન્મ આદિ વિષયો પર  
પ્રકાશ પાડવામાં આવ્યો છે, તીર્થકર ગણિકા-તેમાં તીર્થકરોના પૂર્વજન્મ  
આદિ વિષયોનું વિવેચન કર્યું છે. ચક્રવર્તિ ગણિકા-તેમાં ચક્રવર્તિઓના જન્મ  
આદિનું વર્ણન થયું છે. દશાર્હ ગણિકા-તેમાં સમુદ્રવિજયથી માંડીને વસુદેવ  
સુધીના યાદવ વંશવાળાઓના જન્મ આદિનું વર્ણન કર્યું છે. એજ રીતે જે  
બળદેવ ગણિકા, વાસુદેવ ગણિકા, ગણધર ગણિકા, ભદ્રવાહુ ગણિકા, તપઃકર્મ

પરિયટ્ટના-ણુઓગેસુ એવમાદ્યાઓ ગંડિયાઓ આઘવિજ્ઞંતિ,  
પણવિજ્ઞંતિઃ । સે ત્તં ગંડિયાણુઓગે, સે ત્તંઅણુઓગે ॥ ૪ ॥

એવમાદિકાઃ ગણિકાઃ આખ્યાયન્તે, પ્રજ્ઞાપ્યન્તે ૬ । સ એષ ગણિકાનુયોગઃ ।  
સ એષોડનુયોગઃ ॥ ૪ ॥

અથ કાસ્તાશ્ચૂલિકાઃ ? ચૂલિકાઃ-આદિમાનાં ચતુર્ણાં પૂર્વાણાં ચૂલિકાઃ,  
શેષાણિ પૂર્વાણિ અચૂલિકાનિ । તા એતાશ્ચૂલિકાઃ ॥ ૫ ॥

ચિત્રાઃ=અનેકાર્થાઃ અન્તરેઃ=ઋષભાજિતતીર્થકૃતોરન્તરે યા ગણિકાસ્તાશ્ચિત્રાન્તર-  
ગણિકાઃ, અયંભાવઃ-ઋષભાજિતનાથયોરન્તરે યે શેષગતિગમનરહિતાસ્તદ્વંશજા  
નૃપાસ્તેષાં શિવગત્યનુત્તરોપપાતપ્રાપ્તિ પ્રતિપાદિકા ગણિકાશ્ચિત્રાન્તરગણિકા અભિ-  
ધીયન્તે । તથા-અમર નર તિર્યઙ્ નિરય ગતિગમનવિવિધ પર્યટનાનુયોગેષુ-અમર નર  
તિર્યઙ્ નિરયગતિષુ યદ્ ગમનાનિ તત્ર વિવિધાનિ યાનિ પર્યટનાનિ=પરિભ્રમણાનિ  
તેષામનુયોગાઃ=કથનવિધયસ્તેષુ એવમાદિકાઃ=ગણિકાઃ આખ્યાયન્તે પ્રજ્ઞાપ્યન્તે ।  
સ એષ ગણિકાનુયોગઃ ૪ ।

સર્પિણીગણિકા હૈં, ઉનમેં ખી ઉસ ૨ વિષયકા વર્ણન કિયા ગયા હૈં ।  
ચિત્રાન્તરગણિકા-ઋષભ ઓર અજિતનાથ કે અન્તરાલ મેં ઉનકે વંશજ  
જો નૃપતિ થે કિ જિન કી શિવ પદ પ્રાપ્તિરૂપ ગતિ કે સિવાય ઓર દૂમરી  
ગતિ હી નહીં હોતી થી ઉન કો ઇસ શિવગતિ કી પ્રાપ્તિ કા વર્ણન કરને  
વાલી જો ગણિકા હૈં ઉસકા નામ ચિત્રાન્તરગણિકા હૈં । તથા દેવગતિ,  
મનુષ્યગતિ તિર્યઙ્ગતિ ઓર નરકગતિ મેં જીવ કે વિવિધ પ્રકાર કે પરિ-  
ભ્રમણોં કો પ્રતિપાદન કરને વાલી વિધિકા નામ અમરનરતિર્યઙ્ નિરય-  
ગતિ ગમન વિવિધપર્યટનાનુયોગ હૈં । ઇસ મેં ઇસ પ્રકાર કી ગણિકાવેં  
સામાન્ય-વિશેષરૂપ સે કહી ગયી હૈં । ઇસ પ્રકાર યહ ગણિકાનુયોગ કા  
સ્વરૂપ હૈં ॥ ૪ ॥

ગંડિકા, હરિવંશ ગંડિકા, ઉત્સર્પિણી ગંડિકા છે તેમાં તે તે વિષયનું વર્ણન  
કરેલ છે ચિત્રાન્તર ગંડિકા-ઋષભ અને અજિતનાથના વચગાળાના સમયમાં  
તેમના વંશજ જે નૃપતિઓ હતા કે જેમની મોક્ષપ્રાપ્તિરૂપ ગતિ સિવાય બીજી  
કોઈ ગતિ જ ન હતી તેમની તે મોક્ષગતિની પ્રાપ્તિનું વર્ણન કરનારી જે  
ગંડિકા છે તેનું નામ ચિત્રાન્તર ગંડિકા છે. તથા દેવગતિ, મનુષ્યગતિ, તિર્યંચ-  
ગતિ, અને નરક ગતિમાં જીવના વિવિધ પ્રકારના પરિભ્રમણોનું પ્રતિપાદન  
કરનારી વિધિનું નામ “અમર નર તિર્યંચ નિરયગતિ ગમન વિવિધ પર્યટનાનુયોગ”  
છે તેમાં આ પ્રકારની ગંડિકાઓ સામાન્ય-વિશેષરૂપે વર્ણિત થઈ છે. આ  
પ્રકારનો ગંડિકાનુયોગ છે. (૪)

સે કિં તં ચૂલિયાઓ ?, ચૂલિયાઓ આઇલ્લાળં ચડળં  
પુઠ્ઠાળં ચૂલિયા, સેસાઇં પુઠ્ઠાઇં અચૂલિયાઇં । સે તં ચૂલિયાઓ ॥ ૫ ॥

દિટ્ટિવાયસ્સ પં પરિત્તા વાયણા, સંખેજ્ઞા અણુઓગદારા,  
સંખેજ્ઞા વેઢા, સંખેજ્ઞા સિલોગા; સંખેજ્ઞાઓ પડિવત્તીઓ, સંખે-

દષ્ટિવાદસ્ય खलु परीता वाचनाः, संख्येयानि अनुयोगद्वाराणि, संख्येया  
वेष्टकाः, संख्येयाः श्लोकाः, संख्येया प्रतिपत्तयः, संख्येयाः निर्युक्तयः  
संख्येयाः संग्रहण्यः, स खलु अङ्गार्थतया द्वादशमङ्गम्, एकः श्रुतस्कन्धः, चतुर्दश  
पूर्वाणि, संख्येयानि वस्तूनि, संख्येयानि चूल वस्तूनि, संख्येयानि प्राभृतानि,

अथ पञ्चमं भेदमाह—‘से किं तं चूलियाओ०’ इत्यादि । अथकास्ताश्चूलिकाः ?  
उत्तरयति—यत्खलु आदिमानां चतुर्णां पूर्वाणाम्=उत्पादादिमारभ्यास्ति नास्ति  
प्रवादान्तानां चतुर्णां पूर्वाणां चूलिकाः सन्ति ताश्चूलिका उच्यन्ते, तथा शेषाणि  
पूर्वाणि अचूलिकानि सन्ति ता एताश्चूलिकाः ।

દષ્ટિવાદસ્ય खलु परीताः=संख्येयाः वाचनाः, संख्येयान्यनुयोगद्वाराणि,  
संख्येयाः वेष्टकाः, संख्येयाः श्लोकाः. संख्येयाः प्रतिपत्तयः, संख्येया निर्युक्तयः,

अब दृष्टिवाद के पांचवें भेद को कहते हैं—‘से किं तं चूलि-  
याओ०’ इत्यादि ।

શિષ્ય પુછના હૈ—હે ભદન્ત ! ચૂલિકાઓં કા કયા સ્વરૂપ હૈ ?

उत्तर—उत्पादपूर्व, अग्रायणीयपूर्व, वीर्यप्रवाद और अस्तिनास्ति  
प्रवाद, इन चार पूर्वों की तो चूलिकाएँ हैं और बाकी के पूर्वों पर चूलिकाएँ  
नहीं हैं । यह चूलिकाओं का स्वरूप है । ५ ॥

इम दृष्टिवाद अंग की संख्यात वाचनाएँ हैं, संख्यात अनुयोग द्वार  
हैं । संख्यात वेष्टक हैं, संख्यात श्लोक हैं, संख्यात प्रतिपत्तियाँ हैं,

હવે સૂત્રકાર દષ્ટિવાદના પાંચમાં ભેદનું વર્ણન કરે છે—“સે કિં તં  
ચૂલિયાઓ ?” ઇત્યાદિ—

શિષ્ય પૂછે છે—હે ભદન્ત ! ચૂલિકાઓનું શું સ્વરૂપ છે ?

उत्तर—उत्पाद पूर्व, अग्रायणीय पूर्व, वीर्यप्रवाद पूर्व अने अस्तिनास्ति-  
प्रवाद ये चार पूर्वोंनी तो चूलिकाओ छे; अने जाझीना पूर्वोंनी चूलिकाओ  
नहीं. आ चूलिकाओंनું स्वरूप छे. (५)

દષ્ટિવાદ અંગની સંખ્યાત વાચનાઓ છે, સંખ્યાત અનુયોગ દ્વાર છે,

જાઓ નિજ્જુત્તીઓ, સંખેજાઓ સંગહણીઓ, સે પં અંગટયાણ  
 વારસમે અંગે, ઇમે સુચક્ષ્મધે, ચૌદસ પુઠ્ઠાંડં સંખેજાં વત્થૂ, સંખેજા  
 ચૂલવત્થૂ, સંખેજા પાહુડા, સંખેજા પાહુડાપાહુડા, સંખેજાઓ  
 પાહુડિયાઓ, સંખેજ્જાઓ પાહુડપાહુડિયાઓ, સંખેજ્જાં પય-  
 સહસ્સાં પયગ્ગેણં, સંખેજ્જાં અક્ષરા, અણંતા ગમા, અણંતા  
 સંખેયાનિ પ્રાભૂતપ્રાભૂતાનિ, સંખેયાઃ પ્રાભૂતિકાઃ, સંખેયાઃ પ્રાભૂતપ્રાભૂતિકાઃ,  
 સંખેયાનિ પદસહસ્રાણિ પદાગ્રેણ, સંખેયાન્યક્ષરાણિ, અનંતા ગમાઃ, અનંતા

સંખેયાઃ સંગ્રહણ્યઃ । સ સ્વલુ દૃષ્ટિવાદઃ અર્જાથતયા દ્વાદશમજ્ઞમ્, અત્ર-એકઃ  
 શ્રુતસ્કન્ધઃ, ચતુર્દશ પૂર્વાણિ, સંખેયાનિ વસ્તૂનિ, સંખેયાનિ ચૂલવત્તૂનિ, સંખે-  
 યાનિ પ્રાભૂતાનિ=ગ્રન્થાંશવિશેષાઃ, સંખેયાનિ પ્રાભૂતપ્રાભૂતાનિ-પ્રાભૂતસ્ય-ગ્રન્થાં-  
 શવિશેષસ્ય પ્રાભૂતાનિ=અંશવિશેષાઃ-પ્રાભૂતપ્રાભૂતાનિ, સંખેયાઃ પ્રાભૂતિકા,  
 સંખેયાઃ પ્રાભૂતપ્રાભૂતિકાઃ, સંખેયાનિ પદસહસ્રાણિ પદાગ્રેણ=પદપરિમાણેન  
 પ્રજ્ઞપ્તાનિ । તથાત્ર સંખેયાનિ અક્ષરાણિ, અનંતાઃ ગમાઃ, અનંતાઃ પર્યવાઃ,

સંખ્યાત નિર્યુક્તિયાં હૈં, તથા સંખ્યાત સંગ્રહણિયાં હૈં । યહ દૃષ્ટિવાદ અંગો  
 કી અપેક્ષા વારહવાં અંગ હૈ । હસમેં એકશ્રુતસ્કન્ધ હૈ । ચૌદહપૂર્વ હૈં । સંખ્યાત  
 વસ્તુઐ હૈં । સંખ્યાત ચૂલ વસ્તુઐ હૈં । સંખ્યાત પ્રાભૂત હૈં । ગ્રન્થાંશવિશેષ  
 કા નામ પ્રાભૂત હૈ । સંખ્યાત પ્રાભૂતપ્રાભૂત હૈં । ગ્રન્થાંશવિશેષ કે જો ઓર  
 અંશવિશેષ હૈં વે પ્રાભૂતપ્રાભૂત હૈં । સંખ્યાત પ્રાભૂતિકાઐ હૈં । સંખ્યાત  
 પ્રાભૂતપ્રાભૂતિકાઐ હૈં । તથા હસકે પદોં કા પ્રમાણ ભી સંખ્યાત હી બત-  
 લાયા ગયા હૈ । સંખ્યાત અક્ષર હૈં, અનંત ગમ હૈં, અનંત પર્યાયે હૈં, અસં-

સંખ્યાત વેષ્ટક છે, સંખ્યાત શ્લોક છે, સંખ્યાત પ્રતિપત્તિઓ છે, સંખ્યાત નિર્યુ-  
 ક્તિઓ છે, સંખ્યાત સંગ્રહણિઓ છે, અંગોની અપેક્ષાઓ આ દૃષ્ટિવાદ બારમું અંગ  
 છે. તેમાં એક શ્રુતસ્કન્ધ છે, ચૌદ પૂર્વ છે, સંખ્યાત વસ્તુઓ છે, સંખ્યાત ચૂલ વસ્તુઓ  
 છે, સંખ્યાત પ્રાભૂત છે. પ્રાભૂત એ (ગ્રન્થાંશવિશેષનું નામ છે.) સંખ્યાત પ્રાભૂત  
 પ્રાભૂત છે. ગ્રન્થાંશવિશેષના અંશ વિશેષને પ્રાભૂતપ્રાભૂત કહે છે. સંખ્યાત પ્રાભૂ-  
 તિકાઓ છે, સંખ્યાત પ્રાભૂત-પ્રાભૂતિકાઓ છે. તેનાં પદોનું પ્રમાણ પણ સંખ્યાત  
 બતાવ્યું છે. સંખ્યાત અક્ષર છે, અનંત ગમ છે, અનંત પર્યાયો છે, અસંખ્ય ત્રસ છે;



પજ્જવા પરિત્તા, તસા, અણંતા થાવરા સાસય કહ નિવદ્ધ નિકા-  
 ઇયા જિણપણત્તા ભાવા આઘવિજ્જંતિ, પણવિજ્જંતિ,  
 પરૂવિજ્જંતિ, દંસિજ્જંતિ, નિદંસિજ્જંતિ; ઉવદસિજ્જંતિ, સે એવં  
 આયા; એવં પાયા, એવં વિણાયા, એવં ચરણકરણ પ્રરૂવણા  
 આઘવિજ્જં ૬ । સે તં દિટ્ઠિવા ૧૨ ॥ સૂ. ૫૬ ॥

પર્યવાઃ, પરીતાસ્ત્વસાઃ, અનન્તાઃ સ્થાવરાશ્ચ શાશ્વત-કૃત-નિવદ્ધ-નિકાચિતાઃ  
 જિનપ્રજ્ઞસા ભાવાઃ આખ્યાયન્તે, પ્રજ્ઞાપ્યન્તે, પ્રરૂપ્યન્તે, દર્શ્યન્તે, નિદર્શ્યન્તે, ઉપદ-  
 ર્શ્યન્તે । સ એવમાત્મા, એવં જ્ઞાતા, એવં વિજ્ઞાતા । એવં ચરણકરણ પ્રરૂપણા આ-  
 ખ્યાયતે ૬ । સ એષ દટ્ઠિવાદઃ ॥ સૂ. ૫૬ ॥

પરીતાઃ = અસંખ્યાતાસ્ત્વસાઃ, અનન્તાઃ સ્થાવરાશ્ચ સન્તિ । ઉપરિનિર્દિષ્ટાઃ સર્વે  
 જિનપ્રજ્ઞસા ભાવાઃ શાશ્વતકૃતનિવદ્ધનિકાચિતાઃ-શાશ્વતાઃ = દ્રવ્યાર્થતયાઽવિચ્છેન  
 પ્રવૃત્તાનિત્યાઃ કૃતાઃ=પર્યાયાર્થતયા પ્રતિસમય મન્યથાત્વપ્રાપ્ત્યાકૃતાઃ નિવદ્ધાઃ=  
 સૂત્ર એવ ગ્રથિતાઃ, તથા - નિકાચિતાઃ - નિર્યુક્તિ સંગ્રહણી હેતુદાહરણાદિભિઃ  
 પ્રતિષ્ઠિતાશ્ચ અત્ર આખ્યાયન્તે, પ્રજ્ઞાપ્યન્તે, પ્રરૂપ્યન્તે, = દર્શ્યન્તે ઉપમાનો-  
 પમેયભાવાદિભિઃ કથ્યન્તે, નિદર્શ્યન્તે = પરાનુકમ્પયાભવ્યજનકલ્યાણાપેક્ષયા  
 વા નિશ્ચયેન પુનઃ પુનર્દર્શ્યન્તે ઉપદર્શ્યન્તે=ઉપનયનિગમનાભ્યાં સકલનયાભિપ્રાયતો

ખ્યાત ત્રસ હૈં, અનંત સ્થાવર હૈં । યે સર્વ ઉપર્યુક્ત ત્રસાદિપદાર્થ જિનેન્દ્ર  
 દ્વારા પ્રરૂપિત હુએ હૈં, તથા દ્રવ્યાર્થિકનયની અપેક્ષા સે સન્તતિરૂપ સે  
 અવિચ્છિન્ન હોને કે કારણ યે નિત્ય હૈં, પર્યાયાર્થિકનયની અપેક્ષા સે પ્રતિ  
 સમય પરિણમન શીલ હોને કે કારણ યે અનિત્ય હૈં, સૂત્ર મેં હી ગ્રથિત  
 હોને કે કારણ યે નિવદ્ધ હૈં, તથા નિર્યુક્તિ સંગ્રહણી હેતુ એવં ઉદાહરણ  
 આદિ દ્વારા પ્રતિષ્ઠિત હોને કે કારણ યે નિકાચિત હૈં । હસ અંગ મેં યે  
 સર્વ પદાર્થ આખ્યાત હુએ હૈં, પ્રજ્ઞાપિત આદિ હુએ હૈં । “ આખ્યાયન્તે ”

અનંત સ્થાવર છે. એ બધા ઉપર્યુક્ત ત્રસાદિ પદાર્થ જિનેન્દ્ર દ્વારા પ્રરૂપિત  
 થયાં છે. તથા દ્રવ્યાર્થિક નયની અપેક્ષાએ સન્તતિરૂપે અવિચ્છિન્ન હોવાને કારણે  
 નિત્ય છે, તથા પર્યાયાર્થિક નયની અપેક્ષાએ પ્રતિસમય પરિણમનશીલ હોવાને  
 કારણે અનિત્ય છે, સૂત્રમાં જ ગ્રથિત હોવાને કારણે નિવદ્ધ છે, તથા-નિર્યુક્તિ,  
 સંગ્રહણી, હેતુ અને ઉદાહરણ આદિ દ્વારા પ્રતિષ્ઠિત હોવાના કારણે નિકાચિત  
 છે, આ અંગમાં એ બધા પદાર્થ આખ્યાત થયા છે, પ્રજ્ઞાપિત આદિ થયેલ છે.

प्रस्तुतविषयमुपसंहरन्नाह—

मूलम्—इच्छेद्यमिमं दुवालसंगे गणिपिडगे अणंता भावा,  
अणंता अभावा, अणंता हेऊ, अणंता अहेऊ, अणंता कारणा,  
अणंता अकारणा, अणंता जीवा, अणंता अजीवा, अणंता  
भवसिद्धिया, अणंता अभवसिद्धिया, अणंता सिद्धा, अणंता  
असिद्धा पणत्ता—

भावमभावाहेऊ—महेउकारणमकारणे चेव ।

जीवाजीवा भवियमभविया सिद्धा असिद्धा य ॥१॥

वा शिष्यबुद्धौ निःशङ्कं व्यवस्थाप्यन्ते । संप्रति दृष्टिवादाङ्गाध्ययनफलमाह—‘से’  
सः=दृष्टिवादाङ्गस्याध्येता एवमात्मा=अस्मिन् भावतः सम्यग्धीते सति एवमात्मा  
भवति, तदुक्तक्रियापरिणामपरिणमनादात्मस्वरूपो भवतीत्यर्थः । एवं ‘क्रियासार  
मेव ज्ञानंश्रेयस्कर’—मिति ख्यापयितुं क्रियापरिणाममभिधाय सांप्रतं ज्ञानमधि-  
कृत्याह—एवं ज्ञाता इति । अयं भावः—इदमधीत्य सर्वं पदार्थसार्थं ज्ञायको भवति ।  
तथा—एवं विज्ञाता—एवम्=अमुना प्रकारेण विज्ञाता=विविध ज्ञानवान् भवति ।  
अनेन प्रकारेणात्र साधूनां चरणकरण प्ररूपणा आख्यायते ६ । उपसंहरन्नाह—स एष  
दृष्टिवादः । स एष द्वादशाङ्गो गणिपिटकः—आचारादि दृष्टिवादान्त द्वादशाङ्ग युक्तः  
गणिपिटकरूपः प्रवचन पुरुष एष एव विज्ञेय इति ॥ सू० ५६ ॥

आदि क्रिया पदों का अर्थ पहिले आचाराङ्ग के वर्णन के समय सू. ४५ में  
स्पष्ट लिखा जा चुका है । “स एवमात्मा” आदि पदों से इस अंग के  
अध्ययन का फल तथा ज्ञान का फल प्रकट किया गया है । इस तरह  
इस अंग में साधुओं के चरण करण की प्ररूपणा कही गई है ६ । यह  
दृष्टिवादअंग का स्वरूप है । इस प्रकार आचारांग से लेकर दृष्टिवाद  
तक का समस्त गणिपिटकरूप द्वादशांग है ॥ सू० ५६ ॥

“आख्यायन्ते” आदि क्रियापदों का अर्थ पहले आचाराङ्ग का वर्णन करते सू. ४५  
पिस्तालीसवां स्पष्ट कराया है. “स एवमात्मा” आदि पदों से आ अंग का  
अध्ययन करने तथा ज्ञान करने प्रकट करेला है. आ रीति आ अंगों में साधुओं का  
चरणकरण की प्ररूपणा करवाया आया है (६). आ दृष्टिवाद—अंग का स्वरूप है.  
आ प्रमाण आचाराङ्ग की लक्षणे दृष्टिवाद सुधीना समस्त गणिपिटक  
द्वादशांग है. ॥ सू० ५६ ॥

છાયા—ઇત્યેતસ્મિન્ દ્વાદશાંગે ગણિપિટકે અનન્તા ભાવાઃ, અનન્તા અભાવાઃ, અનન્તા હેતવઃ, અનન્તા અહેતવઃ, અનન્તાનિ કારણાનિ, અનન્તાનિ અકારણાનિ, અનન્તા જીવાઃ, અનન્તા અજીવાઃ, અનન્તા ભવસિદ્ધિકાઃ, અનન્તા અભવસિદ્ધિકાઃ, અનન્તાઃ સિદ્ધાઃ, અનન્તા અસિદ્ધાઃ પ્રજ્ઞપ્તાઃ ।

ભાવાભાવૌ હેત્વહેતૂ કારણાકારણે ચૈવ ।

જીવા અજીવા ભવિકા અભવિકાઃ સિદ્ધા અસિદ્ધાશ્ચ ॥ ૧ ॥

ટીકા—‘ ઇચ્છેહ્યમ્મિ૦ ’ ઇત્યાદિ ।

ઇત્યેતસ્મિન્—ઇતિ=ઇત્યમ્—અનેન પ્રકારેણ નિર્દિષ્ટે અસ્મિન્ દ્વાદશાંગે ગણિપિટકે અનન્તા ભાવાઃ=જીવપુદ્ગલાનામનન્તત્વાત્, તથા અનન્તા અભાવાઃ=અન્યભાવરૂપેણાન્યભાવસ્યાસત્ત્વાત્—એવ ભાવા અભાવા ભવન્તિ, ઇત્યતોઽનન્તા અભાવાઃ, તથા—અનન્તા હેતવઃ=હિન્વન્તિ—ગમયન્તિ=બોધયન્તિ જિજ્ઞાસાવિષયીભૂત ધર્મવિશિષ્ટાનર્થાન્ યે તે હેતવઃ, તે ચ વસ્તુનોઽનન્તધર્માત્મકત્વાત્, તત્પ્રતિવદ્ધાનન્તધર્મવિશિષ્ટાનન્તવસ્તુગમકત્વાચ્ચાનન્તાઃ, અતોઽનન્તા હેતવઃ । તથા—અનન્તા અહેતવઃ

દ્વાદશાંગી કા સ્વરૂપ વર્ણન રૂપ વિષય કા ઉપસંહાર કરતે હુએ સૂત્રકાર કહતે હૈં—‘ ઇચ્છેહ્યમ્મિ૦ ’ ઇત્યાદિ ।

હસ દ્વાદશાંગરૂપ ગણિપિટકમૈં જીવ ઔર પુદ્ગલોં કૈ અનંત ભાવ હૈ, તથા અનંત અભાવ હૈં—એક ભાવ—પદાર્થ અન્ય ભાવરૂપ સૈ નહીં રહતા, હસ લિયૈ સભી ભાવ પરસ્પર મૈં એક દૂસરૈ કૈ રૂપ મૈં અભાવતા કો પ્રાપ્ત હોતૈ હૈ, અતઃ અભાવોંકી અનંતતા હૈ, અનંત હેતુ હૈં—જિજ્ઞાસા કૈ વિષયીભૂત ધર્મવિશિષ્ટ અર્થોં કો જો બોધ કરાતા હૈ વહ હેતુ હૈ, વૈ હેતુ વસ્તુઓં કૈ અનન્ત ધર્માત્મક હોનૈ સૈ, તથા હેતુયુક્ત અનંતધર્મવિશિષ્ટ અનંત વસ્તુઓંકૈ બોધક હોનૈ સૈ અનન્ત હૈં, અતઃ હેતુ મૈં અનંતતા હૈ । તથા અનંત અહેતુ હૈં—એક

દ્વાદશાંગીના સ્વરૂપ વર્ણન રૂપ વિષયનો ઉપસંહાર કરતાં સૂત્રકાર કહે છે. “ ઇચ્છેહ્યમ્મિ૦ ” ઇત્યાદિ—

આ દ્વાદશાંગ-રૂપ ગણિપિટકમાં જીવ અને પુદ્ગલો અનંત હોવાથી અનંત ભાવ છે, તથા અનંત અભાવ છે—એક ભાવ—પદાર્થ અન્ય ભાવરૂપે રહેતો નથી, તે કારણે સમસ્ત ભાવ પરસ્પરમાં એક બીજાના રૂપમાં અભાવતાને પામે છે. તેથી અભાવોની અનંતતા છે. અનંત હેતુ છે—જિજ્ઞાસાના વિષયભૂત ધર્મવિશિષ્ટ અર્થોનો જે બોધ કરાવે છે તે હેતુ કહેવાય છે. તે હેતુઓ વસ્તુઓના અનન્ત-ધર્માત્મક હોવાથી, તથા હેતુયુક્ત અનંત ધર્મવિશિષ્ટ અનંત વસ્તુઓના બોધક હોવાથી અનન્ત છે, તેથી હેતુમાં અનંતતા છે. તથા અનંત અહેતુ છે—એક એક

प्रत्येकहेतुप्रतिबद्ध-प्रत्येकधर्मविशिष्टवस्तुगमकत्वं परस्मिन्नास्तीत्यनन्ता अहेतवः, तथा-अनन्तानि कारणानि=मृत्पिण्डतन्त्वादीन्यनन्तानि घटपटादिनिर्वर्तकानि कारणानि, तथा-अनन्तान्यकारणानि=तन्तु न घटस्य कारणम्, मृत्पिण्डं न पटस्य कारणम्, इत्येवमनन्तानिअकारणानि, तथा-अनन्ता जीवाः, अनन्ता अजीवा द्वयणुकादयः, अनन्ता भवसिद्धिकाः, अनन्ताः अभवसिद्धिकाः, अनन्ताः सिद्धाः, अनन्ता असिद्धाश्च प्रज्ञप्ताः ।

अमुमेवार्थं सूचयितुं गाथामाह—

‘भावमभावा०’ इत्यादि । गाथार्थः स्पष्टः ॥

२ हेतुयुक्त एक २ धर्म विशिष्ट वस्तु की बोधकता दूसरे में नहीं होने से एक हेतु दुसरे के प्रति अहेतु हो जाता है इसलिये अनन्त अहेतु हैं, तथा अनन्त कारण हैं—तथा घटपटादि अनन्तकार्यों के निष्पादक मृत्पिण्ड-तन्तु आदि अनन्त कारण हैं । तथा-अनन्त अकारण हैं—तन्तु घट का कारण नहीं होता, मृत्पिण्ड पट का कारण नहीं होता, इस तरह एक की अन्य के प्रति कारणता नहीं होने से कारण में अनन्तता है । तथा-अनन्त जीव, अनन्त अजीव-द्वयणुकादिक, अनन्त भवसिद्धिक, अनन्त अभवसिद्धिक, अनन्त सिद्ध, अनन्त असिद्ध, ये सब प्रज्ञप्त हुए हैं ।

इस पूर्वोक्त अर्थ को सूचित करनेवाली गाथा । सूत्रकार कहते हैं—‘भावमभाव’ इत्यादि ।

इस द्वादशाङ्ग में भाव, अभाव, हेतु, अहेतु, जीव, अजीव, भविक ( भवसिद्धिक ), अभविक ( अभवसिद्धिक ), सिद्ध और असिद्ध का प्ररूपण किया गया है ।

हेतु युक्त ओक ओक धर्मविशिष्ट वस्तुनी बोधकता भीलमां न होवाथी ओक हेतु भीलनी प्रति अहेतु थछ नय छे तेथी अनन्त अहेतु छे, तथा अनन्त कारण छे-घटपटादि अनन्त कार्योंना निष्पादक माटीना पिंड-तन्तु आदि अनन्त कारण छे. तथा अनन्त अकारण छे -तन्तु घट (घडा) नुं कारण नथी होतो, मृत्पिण्ड घटनुं कारण नथी होतो, आ रीते ओकनी अन्यना प्रति कारणता न होवाथी कारणमां अनन्तता छे. तथा अनन्त जिव, अनन्त अजिव.-द्वयणुकादिक, अनन्त भवसिद्धिक, अनन्त अभव सिद्धिक, अनन्त सिद्ध, अनन्त असिद्ध, ओ अधानुं वस्तुनकरायुं छे.आपूर्वोक्त अर्थने सूचित करवावाणी गाथा सूत्रकार कहे छे.— ‘भावमभाव’ इत्यादि

आ द्वादशाङ्गमां भाव, अभाव, हेतु, अहेतु, जिव, अजिव, भविक ( भवसिद्धिक ), अभविक ( अभवसिद्धिक ), सिद्ध अने असिद्धनुं प्ररूपण करवामां आयुं छे.

साम्प्रतं द्वादशाङ्गं विराधनाऽऽराधनाजनितं त्रैकालिकं फलमुपदर्शयति—

मूलम्—इच्छेइयं दुवालसंगं गणिपिडगं तीए काले अणंता जीवा आणाए विराहित्ता चाउरंतं संसारकंतारं अणुपरियट्ठिंसु । इच्छेइयं दुवालसंगं गणिपिडगं पडुप्पणकाले परिता जीवा आणाए विराहित्ता चाउरंतं संसारकंतारं अणुपरियट्ठंति । इच्छेइयं दुवालसंगं गणिपिडगं अणागए काले अणंता जीवा आणाए विराहित्ता चाउरंतं संसारकंतारं अणुपरियट्ठिस्संति ।

छाया—इत्येतं द्वादशाङ्गं गणिपिटकम् अतीतकाले अनन्ताः जीवाः आज्ञया विराध्य चातुरन्त संसारकान्तारम् अनुपर्यटन् । इत्येतं द्वादशाङ्गं गणिपिटकं प्रत्युत्पन्ने काले परीता जीवाः आज्ञया विराध्य चातुरन्तसंसारकान्तारम् अनुपर्यटन्ति । इत्येतं द्वादशाङ्गं गणिपिटकं अनागतेकाले अनन्ता जीवाः आज्ञया विराध्य चातुरन्तसंसारकातारं अनुपर्यटिष्यन्ति ।

टीका—‘ इच्छेइयं० ’ इत्यादि ।

इत्येतं द्वादशाङ्गं गणिपिटकम् अतीतकाले अनन्ताः जीवाः आज्ञया विराध्य = चातुरन्तसंसारकान्तारं = चत्वारः = नरकतिर्यङ्मनुष्यदेवगतिपरिभ्रमणलक्षणाः अन्ताः=परिणामा यस्य स चतुरन्तः, स एव चातुरन्तः, चातुरन्तश्चासौ संसारश्चेति कर्मधारयः, ततः ‘ कान्तरशब्देन सहोपमितसमासः ’ अनुपर्यटन्—जन्ममरणादिक्लेशमन्वभवन् । अयं भावः—इमं द्वादशाङ्गं गणिपिटकम् अभिनिवेशवशादन्यथा

अब सूत्रकार इस द्वादशांग की आराधना एवं विराधना से त्रैकालिक फल को कहते हैं—“ इच्छेइयं दुवालसंगं० ” इत्यादि ।

इस द्वादशांगरूप गणि पिटक की भूतकालमें आज्ञाद्वारा विराधना कर के अनंत जीवों ने नरक, तिर्यङ्, मनुष्य, तथा देव, इन चार गतिवाले संसाररूप गहन वन में परिभ्रमण किया है । तात्पर्य इसका यह है—

इये सूत्रकार आ द्वादशांगनी आराधना अने विराधनाथी थवावाणा त्रैकालिक फल छे—‘ इच्छेइयं दुवालसंगं० ’ इत्यादि ।

आ द्वादशांगइय गणिपिटकनी भूतकालमां विराधना करीने अनंत जीवोअे नरक, तिर्यंअ, मनुष्य, तथा देव अे आर गतिवाणा संसारइय गहनवनमां परिभ्रमण कर्युं छे, तेनुं तात्पर्य अे छे छे भूतकालमां जमाखिना जेवां अनंत

પાઠાદિલક્ષણયા સૂત્રાજ્ઞયા વિરાધ્ય ભૂતકાલેઽનન્તા જીવા નરકતિર્યક્મનુજદેવગતિ-  
ગહનાં ભવાટવીં જમાલિવત્ અનુપર્યટન્ । પુનરભિનિવેશવશાત્ અન્યથા પ્રરૂપણાદિ-  
લક્ષણયા અર્થાજ્ઞયા વિરાધ્યજીવા ગોષ્ઠમાહિલ-દણ્ડિ-ત્રયોદશપથધારિ (તેરહપંથી)  
પ્રમૃતીવત્ ચતુરન્તસંસારકાન્તારમનુપર્યટન્ । સૂત્રાર્થોભયાજ્ઞયા ચ વિરાધ્યાઽનન્તા  
જીવાશ્ચતુર્ગતિકસંસારકાન્તારમનુપર્યટન્ । इत्येतं द्वादशाङ्गं गणिपिटकं प्रत्युत्पन्ने-  
काले=वर्तमानकाले परीता जीवाः=संख्याता जीवाः, यावत्पर्यटन्ति, एवं भविष्य-  
त्कालेऽपि जिनाज्ञां विराध्य पर्यटिष्यन्ति ।

મૂલમ્—इच्चेइयं दुवालसंगं गणिपिडगं तीए काले अणंता  
जीवा आणाए आराहिता चाउरंतं संसारकंतारं वीईवइंसु ।  
इच्चेइयं दुवालसंगं गणिपिडगं पडुप्पणकाले परिता जीवा

ભૂતકાલ મેં જમાલિ કી તરહ અનંત જીવ એસે હુએ હૈં કિ જિન્હોં ને  
દુરભિનિવેશ વશ અન્યથા પ્રરૂપણા આદિ દ્વારા સૂત્રાજ્ઞા કી વિરાધના કી  
હૈં । इस विराधना जन्य पाप का परिणाम उन्होंने ने चतुर्गतिरूप भयंकर  
સંસાર કાન્તાર મેં પરિભ્રમણ કરને રૂપ મેં હી પાયા હૈં । तथा गोष्ठमा-  
हिल, दंडी, तेरहपंथी आदि कितनेक ऐसे जीव हुए हैं जिन्होंने सूत्रार्थ की  
આજ્ઞા કા યોટે અભિપ્રાયવશ અન્યથા પ્રરૂપણ કિયા હૈં । इस भयंकर  
વિરાધના જન્ય પાપ કા પરિણામ ઉન્હેં મી યહી ભોગના પડા હૈં । तथा  
સૂત્ર અર્થ ઔર उभय की आज्ञा की जिन्होंने विराधना की है ऐसे भी  
અનેક જીવ હુએ હૈં, ઔર उन्हें भी इस विराधाजन्य पाप का परिणाम  
યહી ભોગના પડા હૈં । इसी तरह इस द्वादशांगरूप गणिपिटक की दुरभि-  
निवेश वश अन्य था प्ररूपणा कर के इस वर्तमानकाल में भी कितनेक

એવાં જીવો થયાં છે કે જેમણે દુરભિનિવેશ વશ ખીજી રીતે પ્રરૂપણા આદિ દ્વારા  
સૂત્રાજ્ઞાની વિરાધના કરી છે. એ વિરાધના જન્ય પાપને પરિણામે તેમને ચતુ  
ર્ગતિરૂપ ભયંકર સંસારવનમાં પરિભ્રમણ કરવું પડ્યું છે. तथा गोष्ठमाहिल,  
દંડી, તેરહપંથી, આદિ કેટલાક એવાં જીવો થયાં છે કે જેમણે સૂત્રાર્થની આજ્ઞાનું  
ખોટાં અભિપ્રાયને કારણે જુદી રીતે પ્રરૂપણ કર્યું છે. એ ભયંકર વિરાધના  
જન્ય પાપનું પરિણામ તેમને પણ અહીં લોગવવું પડ્યું છે. तथा सूत्र अर्थ  
અને બન્નેઉ આજ્ઞાની જેમણે વિરાધના કરી છે એવાં પણ અનેક થયાં છે અને  
તેમને પણ આ વિરાધના જન્ય પાપોની એજ પરિણામ લોગવવું પડ્યું છે. એજ  
પ્રકારે આ દ્વાદશાંગરૂપ ગણિપિટકની દુરભિનિવેશ વશ ખીજી રીતે પ્રરૂપણા  
કરીને આ વર્તમાન કાળમાં પણ કેટલાક એવાં જીવ છે કે જે ચતુર્ગતિવાળા



આળાણ આરાહિત્તા ચાઉરંતં સંસારકંતારં વીર્ઘવયંતિ । ઇચ્છેઘયં  
દુવાલસંગં ગણિપિઢગં અળાગણ કાલે અળંતા જીવા આળાણ  
આરાહિત્તા ચાઉરંતં સંસારકંતારં વીર્ઘવઘસ્સંતિ ॥

છાયા—ઇત્યેતદ્ દ્વાદશાંગ્લં ગણિપિઢકમ્ અતીતે કાલે અનન્તા જીવા આજ્ઞયા  
આરાધ્ય ચતુરન્તં સંસારકાન્તારં વ્યત્યવ્રજન્ । ઇત્યેતદ્ દ્વાદશાંગ્લં ગણિપિઢકં પ્રત્યુ-  
ત્પન્નકાલે પરીત્તા જીવા આજ્ઞયા આરાધ્ય ચાતુરન્તં સંસારકાન્તારં વ્યતિવ્રજન્તિ ।  
ઇત્યેતદ્ દ્વાદશાંગ્લં ગણિપિઢકમ્ અનન્તા જીવા આજ્ઞયા આરાધ્ય ચતુરન્તં સંસારકા-  
ન્તારં વ્યતિવ્રજિષ્યન્તિ ॥

ટીકા—‘ ઇચ્છેઘયં૦ ’ ઇત્યાદિ ।

ઇત્યેતં દ્વાદશાંગ્લં ગણિપિઢકમ્ અતીતકાલે અનન્તા જીવા આજ્ઞયા=મૂત્રાર્થ  
તદુભયરૂપત્રિવિધાજ્ઞયા આરાધ્ય=સમ્યક્ પરિપાલ્ય ચાતુરન્તસંસારકાન્તારં વ્યત્યવ્ર-  
જન્=પારંજમ્બુઃ । અનેન પ્રકારેણૈવ પ્રત્યુત્પન્નેઽપિ=વર્તમાનેઽપિકાલે પરીતાઃ=સંખ્યેયા  
જીવા વ્યતિવ્રજન્તિ । એવમ્ અનાગતેઽપિ=ભવિષ્યત્યપિકાલે અનન્તા જીવા  
વ્યતિવ્રજિષ્યન્તિ ॥

જીવ એસે હૈં જો ઇસ ચતુર્ગતિવાલે સંસારકાન્તાર મેં પર્વટન કર રહે હૈં ।  
ઇસી તરહ ભવિષ્યત્કાલ મેં ઇની અનંત જીવ એસે હોંગે જો દુરભિનિવેશ-  
વશ ઇસ દ્વાદશાંગ રૂપ ગણિપિઢક કી આજ્ઞા કી વિરાધના કર કે ઇસ  
ચતુર્ગતિવાલે સંસારરૂપ ગહનવન મેં પરિભ્રમણ કરેંગે ।

તથા—અતીતકાલ મેં એસે ઇની અનંત જીવ હુએ હૈં કિ જિન્હોં ને સૂત્ર,  
અર્થ એવં ઉભય કી આજ્ઞા કી સમ્યક્ આરાધના કી હૈં ઓર ઇસ તરહ  
વે ઇસ ચતુર્ગતિરૂપ સંસાર વન સે પાર હો ગયે હૈં । ઇસી તરહ વર્તમાન  
કાલ મેં ઇની એસે સંખ્યાત ભવ્ય પ્રાણી હૈં જો ઇસ દ્વાદશાંગ  
ગણિપિઢક કી સમ્યક્ આરાધના કરકે ઇસ સંસાર રૂપ ગહન વન સે

સંસારકાનનમાં પરિભ્રમણ કરી રહ્યાં છે. ઓળ રીતે ભવિષ્ય કાળમાં પણ અનંત  
જીવ એવાં થશે કે જે દુરભિનિવેશ વશ આ દ્વાદશાંગરૂપ ગણિપિઢકની વિરાધના  
કરીને આ ચતુર્ગતિવાળા સંસારરૂપ ગહનવનમાં પરિભ્રમણ કરશે.

તથા ભૂતકાળમાં એવાં પણ અનંત જીવ થયાં છે કે જેમણે સૂત્ર, અર્થ  
અને ઉભયની સમ્યક્ આરાધના કરી છે અને ઓ રીતે તેઓ ચતુર્ગતિરૂપ સંસાર  
વનને તરી ગયાં છે. ઓળ રીતે વર્તમાન કાળમાં પણ એવાં સંખ્યાત ભવ્ય જીવો  
છે કે જે દ્વાદશાંગરૂપ ગણિપિઢકની સમ્યક્ આરાધના કરીને આ સંસારરૂપ

मूलम्—इच्छेइयं दुवालसंगं गणिपिडगं न कयाइ नासी, न कयाइ न भवइ न कयाइ न भविस्सइ, भुविं च, भवइ य, भविस्सइ य, धुवे नियए सासए अक्खए अव्वए अवट्टिए णिच्चे । से जहा णामए-पंच अत्थिकाया न कयाइ नासी, न कयाइ नत्थि, न कयाइ न भविस्सइ, भुविं च, भवइ य, भविस्सइ य, धुवा णिइया सासया अक्खया अव्वया अवट्टिया णिच्चा एवामेव दुवालसंगं गणिपिडगं न कयाइ नासी, न कयाइ नत्थि, न कयाइ न भविस्सइ, भुवि च, भवइ य, भविस्सइ य, धुवे, नियए, सासए, अक्खए, अव्वए, अवट्टिए, निच्चे । से समासओ चउव्विहे पणत्ते, तं जहा—दव्वओ, खित्तओ, कालओ, भावओ । तत्थ दव्वओणं सुयनाणी उवउत्ते सव्वदव्वाइं जाणइ पासइ । खित्तओ णं सुयनाणी उवउत्ते सव्वं खेत्तं जाणइ पासइ । कालओ णं सुयनाणी उवउत्ते सव्व कालं जाणइ पासइ । भावओ णं सुयनाणी उवउत्ते सव्वं भावं जाणइं पासइ ॥ सू० ५७ ॥

छाया—इत्येष द्वादशाङ्गः खलु गणिपिटको न कदापि नासीत्, न कदापि भवति, न कदापि न भविष्यति, अभूच्च, भवति च, भविष्यति च, ध्रुवः नियतः, शाश्वतः अक्षयः अव्ययः अवस्थितः नित्यः । तद्यथा नाम-पञ्चास्तिकायाः न कदापि नासन्, न कदापि न सन्ति, न कदापि न भविष्यन्ति, अभूवंश्च, सन्ति च, भविष्यन्ति च, ध्रुवा नियताः शाश्वताः अक्षयाः अव्ययाः अवस्थिताः नित्याः, एवमेव द्वादशाङ्गो गणिपिटको न कदापि नासीत्, न कदापि नास्ति, न कदापि न भवि-

पार हो रहे हैं । इसी प्रकार भविष्यत्काल में भी अनंत जीव इस द्वादशाङ्गरूप गणिपिटक की आराधना कर के संसारकान्तार से पार होंगे ।

गहून वनने पार करी रह्यां छे, जेअ रीते भविष्यत्कालमां पणु अनंत जीव आ द्वादशाङ्गइय गणिपिटकनी आराधना करीने संसारवनने ओणंगी जशे.

प्यति, अभूच्च, भवति च, भविष्यति च, ध्रुवः नियतः शाश्वतः अक्षयः अन्ययः अवस्थितः नित्यः । स समासतश्चतुर्विधः प्रज्ञप्तः, तद्यथा—द्रव्यतः, क्षेत्रतः, कालतः, भावतः । तत्र द्रव्यतः खलु श्रुतज्ञानी उपयुक्तः सर्वद्रव्याणि जानाति पश्यति । क्षेत्रतः खलु श्रुतज्ञानी उपयुक्तः सर्वं क्षेत्रं जानाति पश्यति । कालतः खलु श्रुतज्ञानी उपयुक्तः सर्वं कालं जानाति पश्यति । भावतः खलु श्रुतज्ञानी उपयुक्तः सर्वं भावं जानाति पश्यति ॥ सू० ५७ ॥

टीका —‘इच्छेइयं दुवालसंगं’ इत्यादि । साम्प्रतमस्य द्वादशाङ्गस्य गणिपिटकस्य त्रिकालावस्थायित्वं दर्शयति — इत्येष द्वादशाङ्ग खलुगणिपिटकः न कदापि नासीत्=कस्मिंश्चिदपि काले ‘अयं नासीत्’ इति नो शङ्कनीयम्, अपि तु अयं सर्वदाऽऽसीदेव अनादित्वात् । तथा न कदापि न भवति=‘कस्मिंश्चिदपि कालेऽस्य स्थितिर्नास्ति’ इत्यपि नो शङ्कनीयम्, अपि तु अयं सर्वं दैवास्ति — सर्वदा सद्भावात् । तथा अयं न कदापि न भविष्यति—अर्थात्—‘अयं कस्मिंश्चिदपि काले न भविष्यति’ इति नो शङ्कनीयम्, अपि तु—अयं सर्वं दैव भविष्यति—अपर्यवसितत्वात् । अमुमेवार्थमाह—अयम्—अभूच्च, भवति च,

अब इस द्वादशाङ्गरूप गणिपिटक की त्रैकालिक सत्ता को दिखलाते हैं—‘इच्छेइयं दुवालसंगं०’ इत्यादि—

यह द्वादशाङ्गरूप गणिपिटक किसी समय में नहीं था ऐसी बात नहीं है कारण यह अनादि है, और अनादि होने के कारण ऐसा कोई भी समय नहीं था कि जिसमें इसका सद्भाव न रहा हो । तथा वर्तमान में भी ऐसा कोई समय नहीं है, कि जिस समय में इसका सद्भाव न पाया जाता हो, तथा भविष्यत्काल में भी ऐसा कोई समय नहीं आवेगा कि जिस में इसका अस्तित्व न बना रहेगा । तात्पर्य यह है कि यह द्वादशाङ्गरूप श्रुत भूतकाल में था, वर्तमानकाल में है और भविष्यत्काल में

हुवे आ द्वादशाङ्गस्य गणिपिटकनी त्रैकालिक सत्ताने सूत्रकार अतावे छे—  
“इच्छेइयं दुवाल संगं०” इत्यादि—

आ द्वादशाङ्गस्य गणिपिटक केरुं पणु समये न हुतुं अवी वात नथी, करणु के ते अनादि छे, अने अनादि होवाथी अवेो केरुं पणु समय न हुतो के न्यारे तेनुं अस्तित्व न होय, तथा वर्तमानमां पणु अवेो केरुं समय नथी के ने समये तेनुं अस्तित्व न होय, तथा भविष्यकाणमां पणु अवेो केरुं समय नही आवे के न्यारे तेनुं अस्तित्व नही होय, लावार्थ अे छे के आ द्वादशाङ्गस्य गणिपिटक भूतकाणमां हुतुं, वर्तमानकाणमां छे, अने भविष्यकाणमां

ભવિષ્યતિ ચ । તસ્માદ્ અયં દ્વાદશાંગો ગણિપિટકઃ—ધ્રુવઃ=સ્થિરઃ મેરુપર્વતાદિવત્ , ધ્રુવત્વાદ્ નિયતઃ=નિશ્ચિતઃ પશ્ચાસ્તિકાયેષુ લોકવચનવત્ , નિયતત્વાદેવ શાશ્વતઃ=નિત્યઃ સમયાવલિકાદિષુ કાલવચનવત્ , શાશ્વતત્વાદેવ—અક્ષયઃ=સહસ્રશો વાચનાદિ પ્રદાનેઽપિ ક્ષયરહિતત્વાત્ , ગંગાસિન્ધુપ્રવાહેઽપિ પદ્મહ્રદવત્ , અક્ષયત્વાદેવ—અવ્યયઃ માનુષોત્તરાદ્વહિઃ સમુદ્રવત્ , અવ્યયત્વાદેવ અવસ્થિતઃ=સ્વપ્રમાણે જમ્બૂદ્વીપાદિવત્ ,

भी रहेगा, यही बात “अभूच्च, भवति च भविष्यति च” इन क्रियापदों द्वारा प्रदर्शित की गई है, इसलिये यह द्वादशांगरूप गणिपिटक काल-त्रय में रहने के कारण (१) ध्रुव, (२) स्थिर, (३) नियत—निश्चित, (४) शाश्वत, अक्षय-क्षयरहित, (५) अव्यय, (६) अवस्थित, एवं (७) नित्य माना गया है। ये ध्रुव आदि शब्द हेतु हेतुमद्भावसे यहाँ व्याख्यात हुए हैं। यह द्वादशांगरूप गणिपिटक अचल होने के कारण ही यह सुमेरु पर्वत आदि की तरह ध्रुवरूप में गया है। (१) पंचास्तिकायों में जैसे लोकवचन निश्चित है उसी तरह ध्रुव होने के कारण यह द्वादशांग भी नियतरूप वाला माना गया है। (२) समय, आवलिका आदि कों में जैसे कालव्यवहार शाश्वत माना जाता है उसी प्रकार यह भी नियत होने से शाश्वत माना गया है। हजारों (३) वाचनाएँ आदि देने पर भी इसका कभी भी क्षय नहीं होता है। जैसे गंगा सिन्धु आदि रूप प्रवाह के निकलते रहने पर भी पद्मह्रद अक्षय है। (४) अक्षय होने के कारण यह अव्यय बतलाया गया है, जैसे मानुषोत्तर के बाहर समुद्र

પણ રહેશે, એજ વાત “અભૂચ્ચ, ભવતિ ચ ભવિષ્યતિ ચ” આ ક્રિયાપદો દ્વારા દર્શાવવામાં આવી છે, તેથી દ્વાદશાંગરૂપ ગણિપિટક ત્રણે કાળમાં રહેવાને કારણે (૧) ધ્રુવ—સ્થિર, (૨) નિયત—નિશ્ચિત, (૩) શાશ્વત, (૪) અક્ષય—ક્ષય રહિત, (૫) અવ્યય, (૬) અવસ્થિત અને (૭) નિત્ય માનવામાં આવ્યું છે. એ ધ્રુવ આદિ શબ્દ હેતુ હેતુમદ્ભાવથી અહીં વ્યાખ્યાત થયાં છે. આ દ્વાદશાંગરૂપ ગણિ-પિટકને સુમેરુ પર્વત આદિના જેવું ધ્રુવ કહેલ છે (૧). પંચાસ્તિકાયામાં જેમ લોકવચન નિશ્ચિત છે એજ રીતે ધ્રુવ હોવાને કારણે આ દ્વાદશાંગ પણ નિયતરૂપ વાળું મનાયું છે (૨). સમય, આવલિકા આદિકોમાં જેમ કાળ વ્યવહાર શાશ્વત મનાય છે એજ પ્રકારે તે પણ નિયત હોવાથી શાશ્વત મનાયું છે (૩). હજારો વાચનાઓ આદિ દેવા છતાં પણ તેનો કદી ક્ષય થતો નથી, જેમ ગંગા, સિન્ધુ આદિરૂપ પ્રવાહ નીકળતો રહેવા છતાં પણ પદ્મ સરોવર અક્ષય છે, તેમ હજારો વાચનાઓ આદિ દેવા છતાં પણ દ્વાદશાંગનો કદી ક્ષય થતો નથી માટે તેને અક્ષય કહેલ છે (૪). અક્ષય હોવાને કારણે તે અવ્યય ખતાવેલ છે, જેમ માનુ-

અવસ્થિતત્વાદેવ નિત્યઃ—આકાશવત્ । અસ્મિન્નેવાર્થે દૃષ્ટાન્તમાહ—તદ્યથાનામ-  
પશ્ચાસ્તિકાયાઃ=ધર્માસ્તિકાયાદયઃ ન કદાપિ નાસન્, ન કદાપિ ન સન્તિ, ન કદાપિ  
ન ભવિષ્યતિ । અર્થ ભાવઃ—ધર્માસ્તિકાયાદયઃ આસન્નેવ, સન્ત્યેવ, ભવિષ્યન્ત્યેવ ।  
અમુમેવાર્થમાહ—અભૂવંશ્ચ, સન્તિ ચ, ભવિષ્યન્તિ, ચ ધર્માસ્તિકાયાદયઃ, । એતે  
હિ—પ્રવાઃ, નિયતાઃ, શાશ્વતા, અક્ષયાઃ, અવ્યયાઃ, અવસ્થિતાઃ, નિત્યાઃ પ્રવાદી-  
નામર્થાઃ પૂર્વવત્ । એવમેવ=અનેન પ્રકારેણેવ દ્વાદશાંગો ગણિપિટકઃ ન કદાપિ  
નાસીત્, ન કદાપિ નાસ્તિ, ન કદાપિ ન ભવિષ્યતિ, નિષેધ મુખેનાસ્ય ત્રૈકા-

અવ્યયરૂપ મેં હૈં ડસી પ્રકાર યહ દ્વાદશાંગ મી અક્ષય હોને કે કારણ  
અવ્યયરૂપવાલા કહા ગયા હૈ ૫ । જિસ પ્રકાર અપને પ્રમાણ મેં જંબૂ દ્વીપ  
આદિ અવસ્થિત હૈં ડસી તરહ યહ મી અવસ્થિત હૈ ૬ । ઓર ઇસીલિયે યહ  
આકાશ કી તરહ નિત્ય હૈ ૭ । ઇસી વાત કો દૃષ્ટાન્ત દ્વારા સૂત્રકાર સમ-  
જ્ઞાતે હૈં—જીવાસ્તિકાય ૧, પુદ્ગલાસ્તિકાય ૨, ધર્માસ્તિકાય ૩, અધર્મા-  
સ્તિકાય ૪, ઓર આકાશાસ્તિકાય ૫, યે પાંચ અસ્તિકાય દ્રવ્ય જૈસે  
ભૂતકાલ મેં કમી નહીં થે, વર્તમાનકાલ મેં નહીં હૈં તથા ભવિષ્યત્કાલ મેં  
નહીં હોગેં, એસી વાત નહીં હો સકતી, અર્થાત્ યે ભૂતકાલ મેં થે, વર્તમાન  
મેં હૈં ઓર ભવિષ્યત્કાલ મેં રહેંગે, ઇસી લિયે જૈસે યે ધ્રુવ, નિયત,  
શાશ્વત, અક્ષય, અવ્યય, અવસ્થિત એવં નિત્ય માને ગયે હૈં ઇસી તરહ યહ  
દ્વાદશાંગરૂપ ગણિપિટક કમી નહીં થા યહ વાત નહીં હૈં, વર્તમાન મેં નહીં  
હૈં યહ મી વાત નહીં હૈં, એવં ભવિષ્યત્ કાલ મેં નહીં રહેગા યહ મી વાત

પોત્તરની ખહાર સમુદ્ર અવ્યયરૂપે જ છે એજ પ્રકારે આ દ્વાદશાંગ પણ અક્ષય  
હોવાને કારણે અવ્યયરૂપવાળું કહેલ છે. (૫). જેમ પોતાના પ્રમાણમાં જંબૂદ્વીપ  
આદિ અવસ્થિત છે એજ પ્રમાણે આ દ્વાદશાંગ પણ અવસ્થિત છે (૬). અને  
તે કારણે તે આકાશની જેમ નિત્ય છે (૭). એજ વાતને સૂત્રકાર દૃષ્ટાન્ત દ્વારા  
સમજાવે છે—(૧) જીવાસ્તિકાય, (૨) પુદ્ગલાસ્તિકાય, (૩) ધર્માસ્તિકાય, (૪)  
અધર્માસ્તિકાય અને (૫) આકાશાસ્તિકાય. એ પાંચ અસ્તિકાય દ્રવ્ય જેમ ભૂત-  
કાળમાં કદી ન હતાં, વર્તમાનકાળમાં નથી, તથા ભવિષ્યકાળમાં હશે નહીં, એવી  
વાત અશક્ય છે એટલે કે તે ભૂતકાળમાં હતાં, વર્તમાન કાળમાં છે અને  
ભવિષ્ય કાળમાં રહેશે, તે કારણે તેઓને જેમ ધ્રુવ, નિયત, શાશ્વત, અક્ષય,  
અવ્યય, અવસ્થિત અને નિત્ય માન્યાં છે એજ પ્રમાણે આ દ્વાદશાંગરૂપ ગણિ-  
પિટક પણ કદી ન હતું એવી વાત નથી, વર્તમાનમાં નથી એવી પણ વાત નથી,

લિકત્વં સમર્થ્ય વિધિમુખેન તદેવ સમર્થયતિ-અમૂચ્ચ ભવતિ ચ ભવિષ્યતિ ચ । અત  
 एवायम्-ધ્રુવો નિયતઃ શાશ્વતઃ અક્ષયઃ અવ્યયઃ અવસ્થિતો નિત્યઃ । સ દ્વાદશઙ્ગો  
 ગણિપિટકઃ સમાસતઃ=સંક્ષેપતઃ ચતુર્વિધઃ=ચતુષ્પ્રકારકઃ પ્રજ્ઞપ્તઃ । તાન્ પ્રકારાનાહ  
 ‘તદથા’-ઇત્યાદિ । વ્યાખ્યા સુગમા । નવરમ્-ઉપયુક્તઃ-ઉપયોગવાનિતિ ॥ સૂ. ૫૭ ॥

સમ્પ્રતિ સૂત્રકાર ઉપસંહરન્ સંગ્રહગાથાઃ પ્રાહ—

મૂલમ્-અવસર સપ્તણી સમ્મં, સાદ્યં ચ્ચલુ સપજ્જવસિયં ચ ।

ગમિયં અંગપવિટ્ઠં, સત્ત વિ એણ સપહિવક્ખા ॥ ૧ ॥

નહીં હૈ, કિન્તુ થા, હૈ ઓર રહેગા । હસી લિયે યહ ધ્રુવ આદિ વિશેષણોં  
 વાલા હોકર અવસ્થિત એવં નિત્ય હૈ । હસ તરહ સૂત્રકાર ને પહિલે નિષે-  
 ધમુખ સે હસ મેં ત્રૈકાલિક સત્તા કા સમર્થન કિયા ઓર અવ વે “અમૂચ્ચ  
 ભવતિ ચ ભવિષ્યતિ ચ” હન ક્રિયાપદોં દ્વારા હસકા વિધિમુખ સે સમ-  
 ર્થન કિયા હૈ, અતઃ હસ કથન મેં યહાં પુનરુક્તિ કી આશંકા નહીં હો  
 સકતી હૈ ।

યહ દ્વાદશાઙ્ગ સંક્ષેપ મેં ચાર પ્રકાર કે કહે ગયે હૈં । વે ચાર પ્રકાર  
 દ્રવ્ય સે, કાલ સે ઓર ભાવ સે જાનને ચાહિયેં । દ્રવ્ય સે ઉપયોગવાન  
 શ્રુતજ્ઞાની સમસ્ત દ્રવ્યોં કો જાનતા હૈ, દેખતા હૈ । ક્ષેત્ર સે-ઉપયોગવાન  
 શ્રુતજ્ઞાની સમસ્ત ક્ષેત્રોં કો જાનતા હૈ, દેખતા હૈ । કાલસે-ઉપયોગવાન  
 શ્રુતજ્ઞાની સમસ્ત કાલકો જાનતા હૈ, દેખતા હૈ । ભાવ સે ઉપયોગવાન  
 શ્રુતજ્ઞાની સમસ્ત ભાવોં કો જાનતા હૈ, દેખતા હૈ ॥ સૂ. ૫૭ ॥

અને ભવિષ્યમાં નહીં રહે એવી વાત પણ નથી, પરન્તુ હેતુ, છે, અને રહેશે.  
 તે કારણે તે અચલ, ધ્રુવ આદિ વિશેષણોવાળું હોવાથી અવસ્થિત અને નિત્ય  
 છે. આ રીતે સૂત્રકારે પહેલાં નિષેધમુખે તેમાં ત્રૈકાલિક સત્તાનું સમર્થન કર્યું  
 અને હવે તેમણે “અમૂચ્ચ ભવતિ ચ ભવિષ્યતિ ચ” એ ક્રિયાપદો દ્વારા તેનું  
 વિધિમુખે સમર્થન કર્યું છે, તેથી આ કથનમાં અહીં પુનરુક્તિની આશંકા કરી  
 શકાતી નથી.

આ દ્વાદશાંગ સંક્ષેપમાં ચાર પ્રકારે છે. તે ચાર પ્રકારો, દ્રવ્યથી, ક્ષેત્રથી,  
 કાળથી અને ભાવથી જાણવા જોઈએ દ્રવ્યથી ઉપયોગવાન શ્રુતજ્ઞાની સમસ્ત દ્રવ્યોને  
 જાણે છે, જુએ છે. ક્ષેત્ર થકી ઉપયોગવાન શ્રુતજ્ઞાની સમસ્ત ક્ષેત્રોને જાણે છે. જુએ  
 છે. કાળથી ઉપયોગવાન શ્રુતજ્ઞાની સમસ્ત કાળને જાણે છે, જુએ છે, ભાવથી  
 ઉપયોગવાન શ્રુતજ્ઞાની સમસ્ત ભાવોને જાણે છે, જુએ છે. ( સૂ. ૫૭ )



आगमसत्थग्गहणं, जं बुद्धिगुणहिं अट्टहिं दिट्ठं ।  
 विंति सुयनाण लंभं, तं पुव्वविसारया धीरा ॥ २ ॥  
 सुस्सूसंइ पडिपुच्छंइ, सुणेइं गिण्हंइ य ईहएँ यावि ।  
 तत्तो अपोहंए वा, धारेइ करेइं वा सम्मं ॥ ३ ॥  
 मूयं१ हुंकारं२ वा, बाढंकारं३ पडिपुच्छ४ वीमंसा५ ।  
 तत्तो पसंगपारा—यणं६ च परिणिट्ठ७ सत्तमए ॥ ४ ॥  
 सुत्तत्थो खलु पढमो, बीओ निज्जुत्तिमीसिओ भणिओ ।  
 तइओ य निरव सेसो, एस विही होइ अणुओगे ॥ ५ ॥  
 से त्तं अंगपविट्ठं । से त्तं सुयनाणं । से त्तं परोक्खनाणं ।  
 से त्तं नाणं ॥ सू० ५८ ॥

॥ नन्दी समत्ता ॥

छाया—अक्षरसंज्ञि सम्यक्, सादिकं खलु सपर्यवसितं च ।  
 गमिकमङ्गप्रविष्टं, सप्ताऽप्येतानि सप्रतिपक्षाणि ॥ १ ॥  
 आगमशास्त्रग्रहणं, यद्बुद्धिगुणैरष्टभिर्दृष्टम् ।  
 ब्रुवते श्रुतज्ञानलभं, तत्पूर्वविशारदा धीराः ॥ २ ॥  
 शुश्रूपते प्रतिपृच्छति शृणोति गृह्णाति चेहते वाऽपि ।  
 ततोऽपोहते वा धारयति करोति वा सम्यक् ॥ ३ ॥  
 मूकः हुङ्कारः बाढंकारः, प्रतिपृच्छा विमर्शः ।  
 ततः प्रसङ्ग परायणं च परिनिष्ठा सप्तमकः ॥ ४ ॥  
 सूत्रार्थः खलु प्रथमः, द्वितीयो निर्युक्ति—मिश्रितो भणितः ।  
 तृतीयश्च निरववेष, एष विधिर्भवत्यनुयोगे ॥ ५ ॥  
 तदेतदङ्गप्रविष्टम्, तदेतच्छ्रुतज्ञानम्, तदेतत् परोक्षज्ञानम् । तदेतज्ज्ञानम् ॥ सू० ५८ ॥

॥ नन्दी समाप्ता ॥

टीका—‘अक्षरसन्धी’ इत्यादि । अक्षरम्=अक्षरश्रुतम् १, संज्ञि=संज्ञि-  
 अब सूत्रकार शास्त्र का उपसंहार करते हुए संग्रह गाथाएं कहते  
 हैं—‘अक्षरसण्णी०’ इत्यादि—

डवे सूत्रकार शास्त्रनो उपसंहार करता संग्रह गाथाओ। डडे छे—“अक्षर  
 सण्णी०” इत्यादि—

श्रुतम् २, सम्यक्=सम्यक्श्रुतम् ३, सादिकं=सादिकश्रुतम्, यस्य श्रुतस्यादि-  
विद्यते तत् सादिकश्रुतम् ४, तथा-सपर्यवसितम्=पर्यवसितं-पर्यवसानं विद्यते यस्य  
तत् सपर्यवसितम् अन्तसहितं श्रुतमित्यर्थः ५, गमिकम्=सदृशपाठयुक्तं शास्त्रम् ६,  
अङ्गप्रविष्टम्=द्वादशविधं प्रवचनम्-आचारादिदृष्टिवादपर्यन्तम् ७ । एतानि सप्त  
श्रुतज्ञानानि सप्रतिपक्षाणि=प्रतिपक्षसहितानि सन्ति । इह श्रुतज्ञानप्रकरणे एतच्छ-  
ब्देन अक्षरसंज्ञिप्रभृतीन्येव श्रुतज्ञानानि गृह्यन्ते । 'एए सपडिवक्खा' इति पुंलिङ्ग-  
निर्देशस्त्वार्षत्वात् । 'एते सप्तश्रुतज्ञानभेदाः सप्रतिपक्षाः' इति व्याख्याने मूले  
पुंलिङ्गनिर्देशः संगच्छते । अन्ये तु पुंलिङ्ग निर्देशानुरोधेन 'पक्षाः' इत्यध्याहारं  
कुर्वन्ति, तन्न सम्यक् पक्षा इत्यस्य पूर्वानुक्तत्वात् ।

अयमर्थः—अक्षरश्रुतम् १, अनक्षरश्रुतम् २, संज्ञिश्रुतम् ३, असंज्ञिश्रुतम् ४,  
सम्यक्श्रुतम् ५, मिथ्याश्रुतम् ६, सादिकश्रुतम् ७, अनादिकश्रुतम् ८, सपर्यव-  
सितश्रुतम् ९, अपर्यवसितश्रुतम् १०, गमिकश्रुतम् ११, अगमिकश्रुतम् १२, अङ्गप्र-  
विष्टश्रुतम् १३, अनङ्गप्रविष्टश्रुतम् १४, इत्येवं चतुर्दशभेदाः श्रुतज्ञानस्य भवन्तीति॥१॥

इदं श्रुतज्ञानं सर्वोत्कृष्ट रत्नतुल्यं प्रायोगुर्वधीनं च, अतः शिष्यानुग्रहार्थं श्रुत-  
ज्ञानलाभं वर्णयति—

अक्षरश्रुत १, संज्ञिश्रुत २, सम्यक्श्रुत ३, सादिकश्रुत ४, सपर्यव-  
सितश्रुत ५, गमिकश्रुत ६, और अंग प्रविष्टश्रुत ७ । ये श्रुत के सातों ही  
भेद अपने २ प्रतिपक्ष सहित हैं । जैसे—अक्षरश्रुत का प्रतिपक्ष अनक्षर-  
श्रुत १, संज्ञिश्रुत का प्रतिपक्ष असंज्ञिश्रुत २, सम्यक्श्रुत का प्रतिपक्ष  
मिथ्याश्रुत ३, सादिकश्रुत का प्रतिपक्ष अनादिकश्रुत ४, सपर्यवसित का  
प्रतिपक्ष अपर्यवसितश्रुत ५, गमिक का प्रतिपक्ष अगमिकश्रुत ६, तथा  
अंगप्रविष्ट का प्रतिपक्ष अनंगप्रविष्ट ७ । इस तरह श्रुतज्ञान के ये १४ चौदे  
भेद हैं । इनमें से जिस श्रुत की आदि है वह सादिकश्रुत है, जिसका  
पर्यवसान-अन्त है वह सपर्यवसितश्रुत है । सदृशपाठ से युक्त श्रुत

(१) अक्षरश्रुत, (२) संज्ञिश्रुत, (३) सम्यक्श्रुत, (४) सादिकश्रुत (५)  
सपर्यवसितश्रुत, (६) गमिकश्रुत अने (७) अंगप्रविष्टश्रुत ये श्रुतना साते लेह  
पोत पोताना प्रतिपक्ष युक्त छे. जेभके अक्षरश्रुतनुं प्रतिपक्ष अनक्षरश्रुत, संज्ञि-  
श्रुतनुं प्रतिपक्ष असंज्ञिश्रुत, सम्यक् श्रुतनुं प्रतिपक्ष मिथ्यात्वश्रुत, सादिकश्रुतनुं  
प्रतिपक्ष अनादिकश्रुत, सपर्यवसितनुं प्रतिपक्ष अपर्यवसित श्रुत, गमिकनुं प्रति-  
पक्ष अगमिकश्रुत तथा अंगप्रविष्टनुं प्रतिपक्ष अनंगप्रविष्ट, आ रीते श्रुत  
ज्ञानना ते चौद (१४) लेह छे. तेओभां जे श्रुतने! आदि छे ते सादिकश्रुत छे,  
जेनुं पर्यवसान-अन्त छे ते सपर्यवसित श्रुत छे. सदृशपाठवाणुं श्रुत गमिक

‘ આગમસત્થગ્રહણં ’ इत्यादि । अष्टभिः बुद्धिगुणैः=अव्यवहितोत्तर गाथायां वक्षमाणैः शुश्रूषादिभिः, यत् आगमशास्त्रग्रहणं=आ-मर्यादया, यथावस्थितप्ररूपणारूपयापरिच्छिद्यन्ते अर्थायेन स आगमः । स चोक्तव्युत्पत्त्याऽवधिकेवलादिज्ञानरूपोऽपि भवति, अतस्तन्निराकरणार्थमिह शास्त्रपदं प्रयुक्तम् । शास्यतेऽनेनेति शास्त्रम् ।

गमिक श्रुत है । एवं आचारांग आदि से लेकर दृष्टिवाद पर्यन्त समस्त श्रुत अंगप्रविष्ट है ॥ १ ॥

‘ આગમસત્થ૦ ’ इत्यादि ।

बुद्धि के आठ गुणों से युक्त होकर जो मनुष्यों द्वारा आगमशास्त्र का ज्ञान प्राप्त किया जाता है इसी का नाम श्रुतज्ञान लाभ है, ऐसा धीर वीर श्रुत केवलियों का कथन है । बुद्धि के आठ गुण अभी नीचे की गाथा द्वारा सूत्रकार स्वयं प्रकट करेंगे-आ-यथावस्थित प्ररूपणारूप मर्यादापूर्वक-गम-जीवादिक पदार्थ जिसके द्वारा जाने जाते हैं उसका नाम आगम है । आगम की जब इस प्रकार व्युत्पत्तिलभ्य अर्थ अवधिज्ञान मनः पर्यवज्ञान तथा केवलज्ञान में भी घटिक हो जाता है, कारण उनमें भी यथावस्थितप्ररूपणारूप मर्यादा रही हुए है । इस तरह इस व्युत्पत्तिलभ्य अर्थ में अतिव्याप्ति दोष का प्रसंग आता है सो यह प्रसंग यहां उपस्थित न हो इसके लिये आगम के साथ सूत्रकार ने शास्त्रपद प्रयुक्त किया है । अवधिज्ञान आदि ज्ञानशास्त्र नहीं हैं । “शास्यतेऽनेन इति शास्त्रम्”

શ્રુત છે. અને આચારાંગ આદિથી લઈને દ્રષ્ટિવાદ સુધીના સમસ્ત શ્રુત અંગ પ્રવિષ્ટ શ્રુત છે ॥ ૧ ॥

“આગમ સત્થ૦” ઇત્યાદિ.

બુદ્ધિના આઠ ગુણોથી યુક્ત થઈને જે મનુષ્યો દ્વારા આગમશાસ્ત્રનું જ્ઞાન પ્રાપ્ત કરાય છે એનું નામ શ્રુતજ્ઞાન લાભ છે, એવું ધીર, વીર શ્રુત કેવળીઓનું કથન છે. બુદ્ધિના આઠ ગુણ નીચેની ગાથા દ્વારા સૂત્રકાર પોતે હમણા જ પ્રગટ કરશે. -આ- યથાવસ્થિત પ્રરૂપણા રૂપ મર્યાદા પૂર્વક -ગમ- જીવાદિક પદાર્થને જેના દ્વારા જાણવામાં આવે છે તેને આગમ કહે છે. આગમની જે

આ પ્રમાણે વ્યુત્પત્તિ કરવામાં આવે તો તે વ્યુત્પત્તિલભ્ય અર્થ અવધિ-જ્ઞાન મનઃપર્યવજ્ઞાન તથા કેવળજ્ઞાનમાં પણ ઘટાવી શકાય છે, કારણ કે તેમનામાં પણ યથાવસ્થિત પ્રરૂપણારૂપ મર્યાદા રહેલ છે. આ રીતે આ વ્યુત્પત્તિલભ્ય અર્થમાં અતિવ્યાપ્તિ દોષનો પ્રસંગ આવે છે, તો આ પ્રસંગ અહીં ઉપસ્થિત ન થાય તે માટે આગમની સાથે સૂત્રકારે શાસ્ત્રપદનો ઉપયોગ કર્યો છે. અવધિ-જ્ઞાન આદિ જ્ઞાનશાસ્ત્રો નથી. “શાસ્યતેઽનેન ઇતિ શાસ્ત્રમ્” જેના દ્વારા શિક્ષા

આગમશ્રાસૌ શાસ્ત્રં ચ, આગમશાસ્ત્રં, તસ્ય ગ્રહણમ્ । પષ્ટિતન્ત્રાદિ કુશાસ્ત્રનિરાકરણાર્થ-  
માગમગ્રહણમ્ । પષ્ટિતન્ત્રાદીનાં યથાવસ્થિતાર્થપ્રકાશનાઽભાવાદનાગમત્વાત્, શાસ્ત્રતયા  
ચ રૂઢત્વાત્ । આગમરૂપસ્ય યથાવસ્થિતાર્થાનાં પ્રરૂપકસ્ય શાસ્ત્રસ્ય ગ્રહણં=જ્ઞાનં ભવ-  
તીતિ દૃષ્ટં=તીર્થકર ગણધરાદિભિરવલોકિતમ્ । તત્-તદેવ આગમશાસ્ત્રજ્ઞાનં પૂર્વવિ-  
શારદાઃ-ચતુર્દશ પૂર્વધરાઃ ધીરાઃ વ્રતપાલને દૃઢાઃ મુનયઃ શ્રુતજ્ઞાનલાભં બ્રુવતે=વદન્તિ ।  
જિનપ્રણીત પ્રવચનાર્થ પરિજ્ઞાનમેવ પરમાર્થતઃ શ્રુતજ્ઞાનં નાન્યદિતિ ભાવઃ ॥ ૨ ॥

પ્રાગુક્તાનષ્ઠૌ બુદ્ધિગુણાન્ પ્રાહ—‘સુસ્મૃસૃઈ૦’ ઇત્યાદિ । શુશ્રૂષતે-વિનીતઃ  
સન્ ગુરુવચનં શ્રોતુ મિચ્છતિ, શુશ્રૂષતે=સેવતે વા ગુરુમ્ ૧, પ્રતિપૃચ્છતિ-સંશયે  
જિસકે દ્વારા શિક્ષાદી જાવે વહી શાસ્ત્ર હોતા હૈ । યે તો પ્રત્યક્ષજ્ઞાન હૈ ।  
શાસ્ત્ર-પરોક્ષજ્ઞાન હૈ । પષ્ટિતન્ત્ર આદિકુશાસ્ત્રોં મેં આગમતા કા નિષેધ  
કરને કે લિયે શાસ્ત્ર કે પહિલે આગમ પદ રક્ષા હૈ । વ્યવહાર મેં  
પષ્ટિતન્ત્રાદિક શાસ્ત્રરૂપ સે જાને જાતે હૈ, પર યે આગમ નહીં હૈ, અના-  
ગમ હૈ । ઇસ તરહ યથાવસ્થિત અર્થોં કા પ્રરૂપક જો શાસ્ત્ર હૈ ઉસકા  
જ્ઞાન હી આગમશાસ્ત્ર જ્ઞાન હૈ । ઓર યહ આગમજ્ઞાન જિસ આત્મા મેં  
હો ગયા હૈ વહી શ્રુતજ્ઞાનલાભ હૈ । એસા કથન વ્રતપાલન મેં દૃઢ પ્રતિજ્ઞા  
હુએ ચતુર્દશપૂર્વધારી મુનિરાજોં કા હૈ । તાત્પર્ય ઇસકા યહી હૈ કિ જિન-  
પ્રણીત પ્રવચન કે અર્થ કા પરિજ્ઞાન હી પરમાર્થતઃ શ્રુતજ્ઞાન હૈ, અન્ય-  
પ્રણીત શ્રુત કા જ્ઞાન શ્રુતજ્ઞાન નહીં હૈ ॥ ૨ ॥

અબ બુદ્ધિ કે આઠ ગુણોં કો કહતે હૈ—‘સુસ્મૃસૃઈ૦’ ઇત્યાદિ ।  
વિનીત બનકર ગુરુ કે વચન કો સુનને કી ઇચ્છા રક્ષના, અથવા ગુરુ કી

અપાય તે શાસ્ત્ર કહેવાય છે. એ તો પ્રત્યક્ષ જ્ઞાન છે. શાસ્ત્ર પરોક્ષ જ્ઞાન છે.  
પષ્ટિતન્ત્ર આદિ કુશાસ્ત્રોમાં આગમતાનો નિષેધ કરવાને માટે શાસ્ત્રની પહેલાં  
આગમ શબ્દ મૂક્યો છે. વ્યવહારમાં પષ્ટિતન્ત્ર આદિકે શાસ્ત્રરૂપે મનાય છે પણ  
તે આગમ નથી, અનાગમ છે. આ રીતે યથાવસ્થિત અર્થોનું પ્રરૂપક જે શાસ્ત્ર  
છે તેનું જ્ઞાન જ આગમશાસ્ત્ર જ્ઞાન છે. અને તે આગમજ્ઞાન જે આત્મામાં થઈ  
ગયું છે એ જ શ્રુતજ્ઞાન લાભ છે. એવું કથન વ્રતપાલનમાં દૃઢપ્રતિજ્ઞ એવાં ચૌદ  
પૂર્વધારી મુનિરાજોંનું છે. તેનું તાત્પર્ય એ છે કે જિનપ્રણીત પ્રવચનના અર્થનું  
પરિજ્ઞાન જ પરમાર્થતઃ શ્રુતજ્ઞાન છે, અન્યપ્રણીત શ્રુતનું જ્ઞાન શ્રુતજ્ઞાન નથી. ॥૨॥

હવે બુદ્ધિના આઠ ગુણો બતાવે છે—“સુસ્મૃસૃઈ૦” ઇત્યાદિ—

(૧) વિનિત થઈને ગુરુનાં વચનોને સાંભળવાની ઈચ્છા રાખવી, અથવા

સમુત્પન્ને વિનયનમ્રતયા ગુરુમનઃ પ્રહાદયન્ પુનઃ પૃચ્છતિ ૨, શૃણોતિ-પૃષ્ઠઃ સન્ ગુરુર્યત્ કથયતિ, તત્ સાવધાનો ભૂત્વા શૃણોતિ ૩, ચ-પુનઃ ગૃહ્ણતિ-ગ્રહણં કરોતિ, શબ્દતોર્ઽર્થતશ્ચ જાનાતિ ૪, અપિ વા-ઈહતે-ઈહાં કરોતિ, પૂર્વાપરવિરોધેન પર્યા-લોચયતિ, કિંચિત્ સ્વબુદ્ધ્યા ઉત્પ્રેક્ષતે इति भावः । ૫ । તતઃ-તદનન્તરમ્ અપોહતે =નિર્ણયં કરોતિ । ૬ ॥ વા પુનઃ, ધારયતિ=ધારણાં કરોતિ ૭ । સમ્યક્ કરોતિ-ધારણાઽનુરૂપં કાર્યં સમ્યક્ કરોતિ, શાસ્ત્રોક્તમનુષ્ઠાનં સમ્યગાચરતીત્યર્થઃ । યથો-ક્તાનુષ્ઠાનમપિ શ્રુતજ્ઞાન પ્રાપ્તિ હેતુરિતિ ભાવઃ ॥ ૮ ॥ શ્રુતજ્ઞાનાવરણકર્મણઃ ક્ષયોપ-શમાજ્જાયમાનત્વાદિમે બુદ્ધેર્ગુણા इत्युक्तम् ॥ ૩ ॥

શાસ્ત્રશ્રોતુઃ સપ્તગુણાનાહ-‘મૂયં ૦’ इत्यादि । પ્રથમો ગુણઃ-મૂકં શૃણોતિ,

સેવા કરના ૧ । ગુરુ દ્વારા પાઠિત પાઠ મેં સંશય કે હોને પર વડી નમ્રતા કે સાથ ગુરુજન કા મન હર્ષિત કરતે હુએ સંશય કી નિવૃત્તિ કે નિમિત્ત પુનઃ પૂછના ૨ । પૂછને પર ગુરુજન કયા કહતે હૈં યહ વડી સાવધાની સે સુનના ૩ । પશ્ચાત્ પૂછે ગયે વિષય કા શબ્દ ઔર અર્થપૂર્વક અવધારણ કરના ૪ । પશ્ચાત્ પૂર્વાપર વિરોધ ન આવે इस रूप से उसकी पर्या-લોચના કરના ૫ । બાદ મેં ઉસકા નિશ્ચય કરના ૬ । કાલાન્તર મેં ઔ વહ વિષય વિસ્મૃત ન હો इस रूप से उसको धारण કરના ૭ । ફિર ધારણા કે અનુસાર શાસ્ત્રોક્ત અનુષ્ઠાન કો અપને જીવન મેં ઉતારના ૮ । યે બુદ્ધિ કે આઠ ગુણ હૈં । યે આઠ ગુણ શ્રુતજ્ઞાનાવરણીય કર્મ કે ક્ષયો-પશમ સે પૈદા હોતે હૈં, इसलिये इन्हें बुद्धि के गुणरूप में प्रगट किये हैं ॥૩॥

અવ શાસ્ત્રકાર શાસ્ત્ર સુનનેવાલે કે સાત ગુણ કહતે હૈં-‘મૂયં ૦’ इत्यादि । પ્રથમગુણ-શ્રોતા શાસ્ત્ર કો જવ સુને તવ વડી નમ્રતા કે સાથ

ગુરુની સેવા કરવી, (૨) ગુરુ દ્વારા પાઠિત પાઠમાં સંશય આવતાં ઘણી નમ્રતા-પૂર્વક ગુરુજનનું મન હર્ષિત કરતાં સંશયનું નિવારણ કરવા માટે ફરીથી પૂછવું, (૩) પૂછતાં ગુરુજન જે કહે તે સાવધાનીથી સાંભળવું, (૪) પછી પૂછેલ વિષયનું શબ્દ અને અર્થપૂર્વક અવધારણ કરવું, (૫) પછી પૂર્વાપર વિરોધ ન આવે તે રીતે તેની પર્યાલોચના કરવી, (૬) પછી તેનો નિશ્ચય કરવો, (૭) કાલાન્તરે પણ તે વિષય ભૂલાય નહીં તે રીતે તેને ધારણ કરવો, (૮) અને ધારણા પ્રમાણે શાસ્ત્રોક્ત અનુષ્ઠાનને પોતાના જીવનમાં ઉતારવું, એ બુદ્ધિના આઠ ગુણ છે. એ આઠ ગુણ શ્રુતજ્ઞાનાવરણીય કર્મના ક્ષયોપશમથી પૈદા થાય છે તેથી તેમને બુદ્ધિના ગુણરૂપે પ્રગટ કર્યા છે ॥૩॥

હવે શાસ્ત્રકાર શાસ્ત્ર સાંભળનારના સાત ગુણ કહે છે-‘મૂયં ૦’ इत्यादि. (૧) પ્રથમગુણ-શ્રોતા શાસ્ત્રનું જ્યારે શ્રવણ કરે ત્યારે ઘણી નમ્રતાપૂર્વક

અયં ભાવઃ-સંયતગાત્રઃ સન્ મૌનં કરોતીતિ । ૧ । દ્વિતીયો ગુણઃ-હુંકારં કરોતિ સ્વીકાર સૂચકં “ હા ” इत्यव्यक्तध्वनिं करोतीत्यर्थः । ૨ । તૃતીયો ગુણઃ-બાઢંકારં કરોતિ, બાઢમ્-एवमेतत्, नान्यथेत्युक्त्वा स्वीकारं करोतीत्यर्थः । ૩ । ચતુર્થો ગુણઃ-પ્રતિપૃચ્છાં કરોતિ અયં ભાવઃ ગૃહીત પૂર્વાપર સૂત્રાભિપ્રાયવાન્ સંશયે સતિ કિંચિત્ પૃચ્છતિ-‘ કથમેતત્ ’ इति ४ । પંચમો ગુણઃ-વિમર્શ કરોતિ-પ્રમાણ જિજ્ઞાસાં કરોતીતિ ભાવઃ ૫ । તતઃ-પ્રસન્નપરાયણં ભવતિ । પ્રસન્નશ્ચ પરાયણં चेति समाहारः । અયમર્થઃ-પૂર્વોક્ત ગુણયુક્તસ્ય શ્રોતુઃ પ્રસન્નઃ=उत्तरगुणप्रसङ्गः, उत्तरगुण प्रसङ्गो भवति परायणं=पारगमनं शास्त्रस्य चेति षष्ठो गुणो भवति ६ । તતઃ સપ્તમકો=સપ્તમો ગુણઃ - પરિનિષ્ઠા-સંપૂર્ણતા ભવતિ । અયમર્થઃ-असौ श्रोता गुरुवत् परिनिष्ठितो भवतोत्यर्थः । गुरुवदनु भाषते एवेति भावः । ७ । અથવા—

શરીર કો સંયતકર મૌનપૂર્વક સુનતા હૈ, અર્થાત્ બીચ બીચ મેં બાતચીત નહીં કરતા હૈ ૧ । દૂસરા ગુણ-હુંકાર કરતા હૈ, અર્થાત્ સ્વીકૃતિસૂચક ‘ હા ’ એસી અવ્યક્ત ધ્વનિ કરતા હૈ ૨ । તૃતીયગુણ-બાઢંકાર કરતા હૈ, અર્થાત્-‘તहत्ति-तथेति’ કરતા હૈ એસાં બોલતા હૈ કિ-‘ जैसा आप कहते हैं वह वैसा ही है अन्यथा नहीं है ’ એસાં કહકર શાસ્ત્રોક્ત વિષય કો માન્ય કરતા હૈ ૩ । ચતુર્થગુણ-પ્રતિપૃચ્છા કરતા હૈ, અર્થાત્-पूर्वापररूप से शास्त्र का अभिप्राय ग्रहणकर जब उसमें संशय उत्पन्न होता है तो ‘ हे भदन्त ! यह बात कैसे है ? ’ इस रूप से कुछ पूछता है ४ । પંચમ-ગુણ-‘ इसमें क्या प्रमाण है ? ’ इस प्रकार का प्रमाण जिज्ञासारूप विमर्श करता है ५ । છઠા ગુણ-ફિર શ્રોતા ઉત્તરોત્તર ગુણોં કી વૃદ્ધિ સે શાસ્ત્ર કા પારગામી હોતા હૈ ૬ । સાતવાં ગુણ-इस तरह श्रोता गुरु की तरह बोलनेवाला बन जाता है ७ । વાસ્તવ મેં તો યહ શાસ્ત્રશ્રવણ મેં સાત

શરીરને સંયત કરીને મૌનપૂર્વક સાંભળે છે, એટલે કે વચ્ચે વચ્ચે વાતો કરતો નથી. (૨) બીજો ગુણ-હુંકાર કરે છે એટલે કે સ્વીકૃતિસૂચક “ હા ” એવો અવ્યક્ત ધ્વનિ કરે છે. (૩) ત્રીજો ગુણ-બાઢંકાર કરે છે-એટલે કે “तहत्ति-तथेति” કહે છે એવું બોલે છે કે, “ आप जेम कड़ो छो तेम न छे, अन्यथा नथी ” આમ કહીને શાસ્ત્રોક્ત વિષયને માન્ય કરે છે. (૪) ચોથો ગુણ-પ્રતિપૃચ્છા કરે છે, એટલે કે પૂર્વાપર રૂપે શાસ્ત્રનો અભિપ્રાય ગ્રહણ કરીને જો તેમાં સંશય પેદા થાય તો “ हे भदन्त ! आ बात केवी रीते छे ? ” આ રીતે કંઈક પૂછે છે. (૫) પાંચમો ગુણ-“ आमां कथुं प्रमाण छे ” આ પ્રકારનો પ્રમાણજિજ્ઞાસા-રૂપ વિમર્શ કરે છે. (૬) છઠો ગુણ-વળી શ્રોતા ઉત્તરોત્તર ગુણોની વૃદ્ધિથી શાસ્ત્રનો પારગામી થાય છે. (૭) સાતમો ગુણ-આ રીતે શ્રોતા ગુરુની પ્રમાણ



શાસ્ત્રશ્રવણેડયં સપ્તવિધો વિધિર્ભવતિ: — મૂક: — મૂકભાવ:—આચાર્યાદિવાક્યા-  
પરિસમાપ્તૌ મૌનાવલમ્બનં પ્રથમ: । ૧ । હુઢ્કાર: — આચાર્યાદિવાક્યાવસાને  
તદનુમોદનાર્થ ' હાં ' इत्यव्यक्त ध्वनिकरणं द्वितीय: । ૨ । વાઢ્કાર:—  
' તથેતિ ભદન્ત ! ' इत्यादि वाचा तदङ्गीकरणं तृतीय: । ૩ । પ્રતિપૃચ્છા-  
સંશયે સમુત્પન્ને સતિ તન્નિવારણાર્થ વાક્યાવસાને સ વિનયં પ્રચ્છનં ચતુર્થ: । ૪ ।

પ્રકાર કી વિધિ હૈ, જૈસે-પ્રથમવિધિ-આચાર્ય આદિ ગુરુજન જબ શાસ્ત્ર  
કા પ્રવચન કરે તવ શ્રોતા કા યહ કર્તવ્ય હૈ કિ વહ શાસ્ત્રીય પ્રવચન  
કો સુનને કે લિયે સર્વપ્રથમ મૌનાવલમ્બન કરે, વહાં ઇધર-ઉધર કી બાતે  
ન કરે । ધ્યાનપૂર્વક આચાર્ય મહારાજ ક્યા પ્રતિપાદન કર રહે હૈં ઇસકો  
સુને ? । દૂસરી વિધિ-જબ વે અપને વિષય કા પ્રતિપાદન કર ચુકે તવ  
અનેકે દ્વારા કથિત વિષય કી અનુમોદના કરને કે લિયે હુંકાર શબ્દ  
કરે અર્થાત્ ' હાં ' એસા બોલે ૨ । ત્રીસરી વિધિ-વાઢંકાર કરે, અર્થાત્  
' તહત્તિ ' કહકર અનેકે વચનોં કો સ્વીકાર કરે, ઓર યહ પ્રકાશિત  
કરે કિ-હે ભદન્ત ! આપને જો કુછ કહા હૈ વહ એસા હી હૈ ૩ । ચૌથી  
વિધિ-પ્રતિપૃચ્છા કરે, અર્થાત્ શ્રોતાઓં કો જબ ગુરુ મહારાજ દ્વારા પ્રકા-  
શિત અર્થ મેં કિસી ભી પ્રકાર કા સંશય હો જાવે તો ડસકી નિવૃત્તિ  
કે લિયે જબ વે અપના વક્તવ્ય સમાપ્ત કર દે તવ બઢી નમ્રતા કે સાથ

બોલનાર થઈ જાય છે. વાસ્તવમાં તો શાસ્ત્રશ્રવણમાં આ સાત પ્રકારની વિધિ  
છે, જેમકે-પ્રથમ વિધિ આચાર્ય આદિ ગુરુજન જ્યારે શાસ્ત્રનું પ્રવચન કરે ત્યારે  
શ્રોતાની એ ફરજ છે કે તે શાસ્ત્રીય પ્રવચન સાંભળવા માટે સૌથી પહેલાં મૌન  
પાળે, ત્યાં અહીંતહીંની વાતો ન કરે. ધ્યાનપૂર્વક આચાર્ય મહારાજ શું  
પ્રતિપાદન કરી રહ્યા છે તે સાંભળે (૧). બીજી વિધિ-જ્યારે તેઓ પોતાના વિષ-  
યનું પ્રતિપાદન કરી રહે ત્યારે તેમના દ્વારા કથિત વિષયનું અનુમોદન કરવા  
માટે હુંકાર શબ્દ કરે અથવા “હા” એવું બોલે (૨) ત્રીજી વિધિ-બાઢંકાર  
કરે, એટલે “તહત્તિ-તથેતિ” કહીને તેમનાં વચનોનો સ્વીકાર કરે, અને  
એ બહાર કરે કે, ‘ હે ભદન્ત ! આપે જે કંઈ કહ્યું તે બરાબર છે. ’ (૩).  
ચોથી વિધિ-પ્રતિપૃચ્છા કરે-એટલે કે શ્રોતાઓને જે ગુરુમહારાજ દ્વારા  
પ્રકાશિત અર્થ વિષે કોઈ પણ પ્રકારનો સંશય થાય તો તેના નિવારણ માટે  
જ્યારે તેઓ તેમનું વક્તવ્ય પૂરું કરે ત્યારે ઘણી નમ્રતાપૂર્વક તેમને તે વિષયમાં

વિમર્શ:-પદાર્થાનાં હેયોપાદેયત્વેન વિચારઃ પશ્ચમાઃ। પ્રસંગપરાયણમ્-પ્રસંગેન=ઉત્તરોત્તર ગુણવૃદ્ધ્યા પરે=ઉત્કૃષ્ટભાવે અયનં=ગમનં ષષ્ઠઃ । ૬ । સપ્તમોવિધિઃ પરિનિષ્ઠા-પરિઃ=સમન્તાત્ નિષ્ઠા=શ્રદ્ધા પરિનિષ્ઠા-વીતરાગ વચનેષ્વવિચલશ્રદ્ધા । ૭ ।

સૂત્રે ‘મૂક’ મિત્યાદૌ સૌત્રત્વાન્નપુંસકત્વમ્ ॥ ૪ ॥

શ્રવણવિધિરુક્તઃ, અધુના વ્યાખ્યાન વિધિમાહ—‘સુત્તત્થો’ ઇત્યાદિ ।

उनसे उस विषय में पूछे ४ । पांचवी विधि-विमर्श करे, अर्थात्-पदार्थों के विषय में हेय और उपादेयरूप से जो विचार किया जाता है, अर्थात्-गुरु महाराज के वचनश्रवण के बाद जो श्रोता के अंतरंग में ऐसी विचारधारा उत्पन्न होती है कि-‘यह पदार्थ ग्रहण करने योग्य है तथा यह पदार्थ त्यागने योग्य है, एवं इस पदार्थ पर हमारी उपेक्षावृत्ति रहनी चाहिये’ इत्यादि रूप से परामर्श करे ५ । छठी विधि-प्रसंगपरायण होवे, अर्थात्-श्रोता के हृदय में सांसारिक पदार्थों के प्रति आसक्ति घटकर उनके प्रति विरक्ति बढे । इस तरह उत्तरोत्तर गुणों की वृद्धि से श्रोता का उनके त्यागने रूप उत्कृष्ट भाव में पहुँचना ६ । सातवीं विधि-परिनिष्ठा होवे, अर्थात्-श्रोता के चित्त में वीतराग प्रभु के वचनों में अविचल श्रद्धा का होना ७ ॥ ४ ॥

શ્રવણવિધિ કહકર અચ સૂત્રકાર વ્યાખ્યાનની વિધિ પ્રકટ કરતે હૈ—‘સુત્તત્થો’ ઇત્યાદિ ।

પ્રશ્ન પૂછે (૪). પાંચમી વિધિ-વિમર્શ કરે એટલે કે-પદોના વિષયમાં હેય અને ઉપાદેય રૂપે જે વિચાર કરાય છે, એટલે કે ગુરુમહારાજના વચન સાંભળ્યા પછી શ્રોતાના અંતરંગમાં જે એવી વિચારધારા ઉત્પન્ન થાય છે કે, “આ પદાર્થ ગ્રહણ કરવા યોગ્ય છે તથા આ પદાર્થ ત્યાગવા યોગ્ય છે, અને આ પદાર્થ પર અમારી ઉપેક્ષાવૃત્તિ રહેવી જોઈ એ” ઇત્યાદિ રીતે પરામર્શ કરે (૫). છઠી વિધિ-પ્રસંગ પરાયણ થાય-એટલે કે શ્રોતાનાં હૃદયમાં સાંસારિક પદાર્થો પ્રત્યે આસક્તિ ઘટીને તેમના તરફ વિરક્તિ વધે. આ રીતે ઉત્તરોત્તર ગુણોની વૃદ્ધિથી શ્રોતાનું તેમને ત્યાગવા રૂપ ઉત્કૃષ્ટ ભાવમાં પહોંચવું (૬). સાતમી વિધિ-પરિનિષ્ઠા થાય-એટલે કે શ્રોતાનાં ચિત્તમાં વીતરાગ પ્રભુનાં વચનોમાં અવિચલ શ્રદ્ધા થવી (૭). ॥ ૪ ॥

શ્રવણવિધિનું વર્ણન કરીને હવે સૂત્રકાર વ્યાખ્યાનની વિધિ પ્રગટ કરે છે-‘સુત્તત્થો’ ઇત્યાદિ.

सूत्रार्थः—सूत्रार्थमात्रकथनरूप एव प्रथमोऽनुयोगः कार्यः । प्राथमिक शिष्याणां मोहो न भवेदित्येतदर्थं सूत्रार्थमात्रोपदेशः कर्तव्य इति भावः । इह 'खलु' शब्दोऽवधारणार्थकः । द्वितीयोऽनुयोगः, निर्युक्तिमिश्रितः=सूत्रस्पर्शिक निर्युक्तिसहितः, भणितः=कथितः । तृतीयोऽनुयोगश्च निरवशेषः=प्रसंगानुप्रसंग प्रतिपादनपरः सूत्रार्थो-भयनिर्युक्ति प्रभृतिपुरस्सरं निरूपणरूप इत्यर्थः कथितः । एषः—उक्तलक्षणः, विधिः प्रकारः, 'अणुओगे' इति—सूत्रस्य स्वाभिधेयेन सह अनुकूलो योगोऽनुयोगः—सूत्रार्थं व्याख्यानम्, तस्मिन् अनुयोगे, सूत्रार्थं व्याख्याने भवति । तदेतद् अङ्गप्रविष्टं वर्णितम् तदेतच्छ्रुतज्ञानं वर्णितम् । तदेतत् परोक्षज्ञानं वर्णितम् ॥सू० ५८॥

॥ इति नन्दीसूत्रं सम्पूर्णम् ॥

प्रथमविधि—प्राथमिक शिष्यजनों को संदेह उत्पन्न न हो, इसके लिये आचार्य आदि गुरुजन उन्हें सूत्र के अर्थमात्र का उपदेश देंगे । यह 'सूत्रार्थ' नामका प्रथम अनुयोग है १ । सूत्र के अर्थ को स्पर्श करनेवाली निर्युक्ति होती है, इससे मिश्रित प्रवचन करना यह निर्युक्ति मिश्रित नामका द्वितीय अनुयोग है २ । सूत्र, अर्थ एवं तदुभय (सूत्रार्थ) का तथा इनकी निर्युक्ति आदि का प्रवचन करना यह निरवशेष नामका तृतीय अनुयोग है ३ । अनुयोग शब्द का अर्थ सूत्र अर्थ आदिका व्याख्यान करना है । इस व्याख्यानरूप अनुयोग में सूत्र का अपने अभिधेय के साथ अनुकूल योग-सम्बन्ध होता है, इसीलिये इसको अनुयोग कहा है ॥ ५ ॥

• इस तरह अंग प्रविष्टका वर्णन हुआ । इसका वर्णन समाप्त होने पर श्रुतज्ञान का वर्णन समाप्त हुआ । श्रुतज्ञानके इस पूर्णवर्णन में परोक्ष-

पड़ेली विधि—प्राथमिक शिष्यजनोंने संदेह पैदा न थाय, ते माटे आचार्य आदि गुरुजन तेमने सूत्रना अर्थमात्रने उपदेश आपे. आ "सूत्रार्थ" नामने पड़ेले अनुयोग छे (१). सूत्रना अर्थने स्पर्श करनारी निर्युक्ति होय छे, तेनाथी मिश्रित प्रवचन करवुं ते "निर्युक्ति मिश्रित" नामने भीजे अनुयोग छे (२). सूत्र, अर्थ तथा ते भन्ने (सूत्रार्थ) नु तथा तेमनी निर्युक्ति आदिनुं प्रवचन करवुं ते "निरवशेष" नामने त्रीजे अनुयोग छे (३). अनुयोग अटले सूत्र अर्थ आदिनुं व्याख्यान करवुं. आ व्याख्यानरूप अनुयोगमां सूत्रने पोताना अभिधेयनी साथे अनुक्षण योग-संबंध होय छे, तेथी तेने अनुयोग कडे छे ॥ ५ ॥

आ रीते आ अंगप्रविष्टनुं वर्णन थयुं. तेनु वर्णन पूरुं थतां श्रुतज्ञाननुं वर्णन समाप्त थयुं. श्रुतज्ञानना आ पूर्ण वर्णनमां परोक्षज्ञाननु वर्णन थयुं.

અથ ષડ્વિંશતિતમ સૂત્રોક્તાનિ ( પૃ૦ ૩૦૧ ) ઉદાહરણાનિ વર્ણ્યન્તે—

ઔત્પત્તિકીબુદ્ધિદૃષ્ટાન્તાઃ—

ઔત્પત્તિકયા બુદ્ધેરુદાહરણાનિ—‘ ભરહસિલ મિઢકુક્કુડ ’ ઇતિ ગાથાયાં નામ માત્રતો નિર્દિષ્ટાનિ । અધુના ક્રમશસ્તાન્યુદાહરણાનિ પ્રદર્શ્યન્તે । તત્ર ‘ ભરતશિલા ’ ઇતિ પ્રથમો દૃષ્ટાન્તઃ । સ ચૈવમ્—

જ્ઞાન વર્ણિત હુઆ । તાત્પર્યં ઇસકા યહ હૈ કિ, પહિલે શિષ્યને પૂછા થા કિ, હે ભદન્ત ! અંગપ્રવિષ્ટ કા કયા સ્વરૂપ હૈ ? ઇસકે ઉત્તર મેં આચાર્ય મહારાજને યહ કહા હૈ કિ “ તદેતદ્ અંગપ્રવિષ્ટં વર્ણિતમ્ ” કિ આચારાંગ આદિ અંગપ્રવિષ્ટકા સ્વરૂપ હૈ । જબ આચારાંગ આદિકા વર્ણન સમાપ્ત હો ચુકા તો ઇસ તરહ અંગપ્રવિષ્ટ ઔર અનંગપ્રવિષ્ટ આદિ કા વર્ણન હો ચુકને પર શ્રુતજ્ઞાન કા વર્ણન પૂર્ણરૂપ સે હો ચુકા હૈ એસા જાનના ચાહિયે । શ્રુતજ્ઞાન કે ઇસ પૂર્ણ વર્ણન મેં હી પરોક્ષજ્ઞાન કા પૂર્ણવર્ણન આ જાતા હૈ, અતઃ ‘ તદેતત્ પરોક્ષજ્ઞાનં વર્ણિતમ્ ” એસા આચાર્યને કહા હૈ ॥

॥ ઇતિ નંદીસૂત્ર સંપૂર્ણ ॥

અથ છઠ્ઠીસવેં સૂત્ર (પૃ૦ ૩૦૧) મેં ઉક્ત ઉદાહરણોં કા વર્ણન કિયા જાતા હૈ—

॥ ઔત્પત્તિકી બુદ્ધિ કે દૃષ્ટાન્ત ॥

ઔત્પત્તિકી બુદ્ધિ કે ઉપર જો ઉદાહરણ “ ભરહસિલ મિઢકુક્કુડ ” ઇસ ગાથામેં નામ માત્ર રૂપસે સૂચિત કિયે ગયે હૈં, વે અવ ક્રમશઃ પ્રદ-

તેનું તાત્પર્યં એ છે કે, પહેલાં શિષ્યે પૂછ્યું હતું કે “ ભદન્ત ! અંગપ્રવિષ્ટનું શું સ્વરૂપ છે ? ” તેના ઉત્તરમાં આચાર્ય મહારાજે એ કહ્યું છે કે “ તદેતદ્ અંગપ્રવિષ્ટં વર્ણિતમ્ ” આચારાંગ આદિ અંગપ્રવિષ્ટ છે અને એજ અંગપ્રવિષ્ટનું સ્વરૂપ છે—જ્યારે આચારાંગ આદિનું વર્ણન સમાપ્ત થઈ ગયું ત્યારે આ રીતે અંગપ્રવિષ્ટ અને અનંગપ્રવિષ્ટ આદિનું વર્ણન થઈ જતાં શ્રુતજ્ઞાનનું વર્ણન સંપૂર્ણ રીતે થઈ ગયું છે એમ સમજવું જોઈએ. શ્રુતજ્ઞાનના આ પૂર્ણ વર્ણનમાં જ પરોક્ષજ્ઞાનનું પૂર્ણવર્ણન આવી જાય છે, તેથી “ તદેતત્ પરોક્ષજ્ઞાનં વર્ણિતમ્ ” એવું આચાર્યે કહ્યું છે.

॥ ઇતિ નંદીસૂત્ર સંપૂર્ણ ॥

હવે છઠ્ઠીસમાં સૂત્ર (પૃ૦ ૩૦૧)માં કહેલા ઉદાહરણોનું વર્ણન કરવામાં આવે છે—

“ ઔત્પત્તિકી બુદ્ધિનાં દૃષ્ટાન્તો ”

ઔત્પત્તિકી બુદ્ધિના ઉપર જે ઉદાહરણ “ ભરહસિલ મિઢકુક્કુડ ” આ ગાથામાં નામ માત્રથી જ સૂચિત કરાયા છે તે હવે ક્રમશઃ બતાવવામાં આવે

आसीत् कश्चिदुज्जयिनी नगर्याः समीपे नटानां ग्रामः । तत्र भरतो नाम नटः प्रतिवसति । तस्य भार्या मृता । रोहक नामकस्तत्पुत्रः आसीत् ।

अथ भार्यायां मृतायां भरतेन द्वितीया भार्याकृता । साच रोहकं प्रति सम्यग् न वर्तते, ततो रोहकेणोक्तम्—मातर्मया सह सम्यग् न वर्तसे, तदेतस्य फलं ज्ञास्यसि । ततस्तया कथितम्—अरे रोहक ! किं करिष्यसि ? । रोहकोऽब्रवी—एवं करिष्यामि यथा मच्चरणोपरि पतिष्यसि ।

शित किये जाते हैं—उनमें “भरतशिला” यह प्रथम दृष्टान्त इस प्रकार है—

उज्जयिनी नगरी के पास एक नटों का गांव था । उसमें “भरत” इस नाम का नट रहता था । उसकी पत्नी घर चुकी थी । उससे उसको एक पुत्र प्राप्त हुआ था, जिसका नाम रोहक था । पत्नी विना घर का काम चलना बड़ा कठिन है ऐसा समझ कर उसने अपना दूसरा विवाह कर लिया । सौतेली माता होने के कारण उसका व्यवहार रोहक के साथ ठीक नहीं बैठता था । एक दिन सौतेली माता के दुर्व्यवहार से अप्रसन्न होकर रोहक ने उससे कहा—हे माता ! ध्यान रखना, यदि तू मेरे साथ ठीक २ व्यवहार नहीं करोगी, तो इसका फल एक न एक दिन तुम्हें भोगना ही पड़ेगा । रोहक की इस बात को सुनकर सौतेली माता को क्रोध चढ़ गया । वह बोली—अरे रोहक ! तू मेरा क्या करेगा ? रोहक ने कहा क्या करेगा ? वह करूंगा जिससे तू मेरे चरणों में पड़ेगी ।

छे. तेजोभां “भरतशिला” आ पडेहुं दृष्टांत आ प्रभाणे छे—

उज्जयिनी नगरी पास नटदोड्डेनुं ओक गांव डेतुं. तेभां “भरत” नामनो नट रहेतो डेतो. तेनी पत्नी भरी गछ डती. तेनाथी तेने ओक पुत्रनी प्राप्ति थछ डती, जेतुं नाम रोहक डेतुं. पत्नी विना घरनुं काम बालवुं धल्लुं भुशकेल छे ओम भानीने तेले पोतानो भीजे विवाड कर्यो. अपरमात डोवाने डारले रोहकनी साथे तेनुं वर्तन भराभर डेतुं नड्यो. ओक दिवस अपरमाता ना दुर्व्यवहारथी नाभुश थछने रोहके तेने कहुं—“डे माता ! ध्यान राओ, जे तमे भारी साथे पोथ्य वर्तन नड्यो राओ तो तेनुं इण तभारे डोछ दिवसे जर लोगववुं पडशे” रोहकनी आ बात सांलणीने अपरमाताने धल्लो क्रोध थयो. ते भोली,—“अरे रोहक ! तुं मने शुं करी शकीश ?” रोहके कहुं—“शुं करीश ? ओवुं करीश डे जेथी तुं भारे पगे पडीश.”

અથૈકદા રોહકસ્તસ્યાં દ્વેષાવેશેન નિશિ સહસા સ્વપિતરમાહ-મો મો પિતઃ । પલાયમાનોઽયં કશ્ચિત્ પુરુષો ગચ્છતિ, તં પશ્ય । વાલકસ્ય વચનં શ્રુત્વા નટઃ સ્વભાર્યાં પ્રતિ શીલભઙ્ગશઙ્કયા પ્રીતિ રહિતો જાતઃ । તતો નટભાર્યા ચિન્તયામાસ-નૂનમેતચ્ચરિતં રોહકસ્ય, યન્મમ પતિઃ પ્રીત્યા ન સંભાષતે । અન્યથા કથમકાણ્ડેવાયં મયિ દોષાભાવેઽપિ પરાઙ્મુખો જાતસ્તસ્માદ્ રોહકં પ્રસાદયામિ । એવં

એક દિનની બાત હૈ કિ રોહક ને સૌતેલી માતા કે દ્વેષ સે પ્રેરિત હોકર યૌં હી અપને પિતા સે રાત્રેમાં કહા પિતાજી ! દેલ્લિયે, દેલ્લિયે, અપને ઘર સે નિકલકર કોઈ યહ પુરુષ દૌડા હુઆ બાહર જા રહા હૈ । રોહક કે મુખ સે એસા સુનકર નટ કે ચિત્તમેં અપની ભાર્યા કે પ્રતિ શીલભંગ હોને કી આશંકા ને સ્થાન કર લિયા । ઇસ તરહ વહ ઉસમેં સ્નેહરહિત થન ગયા । અપને પતિ કી ઇસ વૃત્તિ સે ઉસ સૌતેલી માતા કો બડા દુઃખ હોને લગા । ઉસને સોચા-યહ સબ કરામાત રોહક પુત્ર કી હૈ । દેલ્લો, પહિલે મેરા પતિ મેરે પ્રતિ કિતના સ્નેહાલથા ? અવ તો યહ મુઝસે પ્રીતિ-પૂર્વક બોલતા સી નહીં હૈ । મેં જબ અપને વિષયમેં વિચારતી હૂં, તો મુઝમેં કુછ ભી દોષ નજર નહીં આતા હૈ, ફિર બિના કારણ પતિ કી અપ્રીતિ કા કયા કારણ હો સકતા હૈ । જ્ઞાત હોતા હૈ કિ ઇસ સબકા મૂલ કારણ એક રોહક હી હૈ અતઃ ઉસકો હી સબસે પહિલે અવ પ્રસન્ન કર લેના ચાહિયે, ઇસીમેં ભેરી મલાઈ હૈ, ઇસ પ્રકાર કી વિચારધારા સે પ્રેરિત હોકર

ત્યાર બાદ એક દિવસે અપરમાતાના દ્વેષથી પ્રેરાઈને રોહકે અમસ્તું જ પોતાના પિતાને રાત્રે કહ્યું-“પિતાજી, જુવો-જુવો, આપણા ઘરમાંથી નીકળીને કોઈ પુરુષ દોડતો દોડતો બહાર જાય છે.” રોહકના મોઢે એવું સાંભળીને નટના મનમાં પોતાની પત્ની ચારિત્રલક્ષ હોવાની શંકાએ સ્થાન જમાવ્યું. તે રીતે તે તેનામાં સ્નેહરહિત બન્યો. પોતાના પતિની આ વૃત્તિથી તે અપરમાતાને ઘણું દુઃખ થયું. તેણે વિચાર્યું “આ બધી રોહકની જ કરામત છે. જુઓ, પહેલાં મારા પતિ મારા પ્રત્યે કેટલા બધા સ્નેહાળ હતા ! હવે તો તેઓ મારી સાથે પ્રેમથી બોલતા પણ નથી. હું જો મારી બાબતમાં વિચાર કરું છું તો મને મારો કોઈ પણ દોષ દેખાતો નથી. તો વિના કારણ પતિની અપ્રીતિનું શું કારણ હોઈ શકે ? એવું લાગે છે કે આ બધાનું મૂળ કારણ એક રોહક જ છે, તો સૌથી પહેલાં તેને જ પ્રસન્ન કરી લેવો જોઈએ, તેમાંજ માફ હિત છે.” આ પ્રકારની વિચારધારાથી પ્રેરાઈને



વિચિન્ત્ય સા રોહકમાહ-વત્સ ! કિમિદં ત્વયાકૃતમ્ । તવ પિતા મયિ પ્રતિકૂલો જાતઃ । રોહકઃ પ્રાહ-કિમિતિ મયિ ભવત્યા સમ્યગ્ ન વર્તિતમ્ ? । તયોક્તમ્-ઇત ઊર્ધ્વ તવ વિપ્રિયં નાચરિષ્યામિ । તતો રોહકઃ પ્રાહ-ભવ્યં તર્હિ, તથા યતિષ્યે યથા મમ પિતા ત્વયિ સુપ્રસન્નઃ સ્યાત્ ।

અથાન્યદા રોહકો નિશિ ચન્દ્રિકાપ્રકાશે નિજચ્છાયામઙ્ગુલ્યગ્રેણ દર્શયન્ બાલ-ભાવેન પિતુઃ શઙ્કામપનેતુકામઃ પિતરમબ્રવીત્-ભો ભો પિતઃ ? પશ્ય एष પુરુષો ડસને રોહકસે કહા-પુત્ર ! યહ તૂને ક્યા ક્યા જો અપને પિતાકો મેરે પ્રતિ અપ્રસન્ન કર દિયા ? । રોહક ને સુનકર કહા તુમને જૈસા ક્યા ડસકા અબ ફલ ભોગો । ક્યોં નહીં તુમ મેરે પ્રતિ સદ્વ્યવહાર કરતી હો ? રોહક કી બાત ધ્યાન મેં રખકર સૌતેલી માતા બોલી-વેટા ! જો કુછ હુઆ સો હુઆ, અબ આગે ંસા નહીં હોગા, મેં તુમ્હારા કિસી ભી પ્રકાર કા અનિષ્ટ નહીં કરૂંગી, ંર ન અબ તુસસે વિરુદ્ધ હોકર હી ચલૂંગી । સૌતેલી માતા કે મન્તવ્ય સે સહમત હોકર રોહક ને ડસસે કહા-અચ્છી બાત હૈ, અબ મેં ડસ પ્રયત્નમેં રહૂંગા કિ જિસસે પિતા કા સ્નેહ તુમ પર પૂર્વવત્ હો જાય ।

અબ ંક સમય કી બાત હૈ કિ રોહક ચાંદની રાત મેં પિતા કી પાસ વૈઠા હુઆ થા । ડસ સમય પાસ મેં ંર કોઈ થા નહીં, સહસા બાલસુ-લભ ચપલતા સે ડસ ચાંદની કે પ્રકાશમેં અપની છાયા દેઁકર ડસને ંંગુલી કે ડશારે સે પિતા સે કહા-પિતાજી ! દેઁકિયે, વહ પુરુષ યહ જા રહા

તેણે રોહકને કહ્યું, “ બેટા ! એવું તે શું કયું છે કે તારા પિતા મારા તરફ અપ્રસન્ન રહે છે ? ” રોહકે જવાબ આપ્યો, “ તેં જે કયું છે તેનું ફળ હવે તું ભોગવ. ક્રમણ કે તું મારા પ્રત્યે અયોગ્ય વ્યવહાર કરે છે. ” રોહકની વાત સાંભળીને અપરમાતાએ કહ્યું, “ બેટા ! જે થયું તે થયું, હવે આગળ એવું નહીં બને, હું તારું કોઈ પણ રીતે અનિષ્ટ નહીં કરું, અને હવેથી તારી વિરુદ્ધ આવીશ નહીં. ” અપરમાતાના મંતવ્ય સાથે સહમત થઈને રોહકે તેને કહ્યું, “ ઘણું સરસ, હવે હું એવો પ્રયત્ન કરીશ કે જેથી મારા પિતાનો તારી પર પૂર્વવત્ પ્રેમ થઈ જાય. ”

હવે એક સમયની વાત છે. રોહક ચાંદની રાત્રે પિતાની સાથે બેઠો હતો ત્યારે તેમની પાસે બીજું કોઈ ન હતું. સહસા બાલસુલભ ચપળતાથી તે ચાંદનીના પ્રકાશમાં પોતાનો પડછાયો બોધને તેણે આગળીના ઈશારાથી પિતાને કહ્યું, “ પિતાજી ! જુઓ, આ તે પુરુષ જઈ રહ્યો છે. પોતાના પુત્ર રોહકની

गच्छति । ततः स्वबालकस्य वचनं निशम्य भरतः परपुरुषप्रवेशशङ्कया खङ्गमुद्यम्य धावमानो वदति—वद पुत्र ! कुत्रासौ पुरुषः । ततो रोहकः पितुरन्तिके बालभावं प्रकटयन् निजच्छायां प्रदर्शयन्नाह—एष पुरुषो गच्छतीति । ततो भरतो रोहकं पृच्छति—पूर्वं त्वत्प्रदर्शितः पुरुषः कीदृश आसीत् ? रोहकेणोक्तम्—सोऽयमेवास्ति । ततो भरतश्चिन्तयति—धिङ्माम्, यदहं बालकवचना दलीकंसंभाव्य दोषरहितायाः प्रियाया अप्रियं कृतवानिति, ततोऽसौ पश्चात्तापं कृत्वा तस्यां सानुरागो जातः । रोहकोऽपि—‘कदाचिदेव पूर्वविप्रियकारिणं मां विषादिना मारयिष्यतीति’ विचिन्त्य पित्रा सहैव भुङ्क्ते, न तु केवलः ।

है । अपने पुत्र रोहक की इस बात को सुनकर भरत ने सहसा गृहमें पर-पुरुष के प्रवेश की आशंका से उसे मारने के लिये अपनी तलवार म्यान से बाहर निकाल ली, और आवेग से दौड़ कर कहने लगा—बेटा ! बतला वह पुरुष कहाँ है । रोहक ने पिता की इस सहसावृत्ति को देखकर पास में जाकर अपनी छाया बतलाते हुए कहा—पिताजी ! देखिये, यहरहा वह पुरुष । भरत ने रोहक की इस बालोचित लीला को देख कर आश्चर्य के साथ पूछा—तो क्या तूने जिस पुरुष के विषय में पहिले मुझसे कहा था वह भी ऐसा ही था ? हाँ ऐसा ही था । इस प्रकार रोहक का उत्तर सुन कर भरत ने विचार किया, मुझ मूर्खको धिक्कार है । व्यर्थ ही मैंने बालक के कहनेमें आकर निर्दोष अपनी पत्नी को दूषित मान कर कष्ट पहुँचाया । इस तरह अपनी पत्नी को निर्दोष जानकर अब भरत पहिले की तरह उसके साथ प्रेममय व्यवहार करने लगा । इधर रोहक ने यह विचार

आ बात सांभलाने भरते सड़सा घरमां परपुरुषना प्रवेशनी आशंकाथी तेने मारवाने भाटे पोतानी तलवारने म्यानमांथो ञहार काढी, अने आवेगपूर्वक होउतो कडेवा लाग्यो, “बेटा ! बताव, ते पुरुष कयां छे ?” रोहके पिताबुं आ साहस जेधने तेमनी पासे जेधने पोतानो पछायो अतावीने कहुं, “पिताछु जुओ, आ रह्यो ते पुरुष !” भरते रोहकनी ते आलोचित लीला जेधने आश्चर्य साथे पूछ्युं, “शुं तें जे पुरुषने विषे पड़ेलां भने कहुं छतुं ते पणु आवो ज छतो ?” “हो, ओवो ज छतो.” आ प्रमाणे रोहकने जवाब सांभलीने भरते विचार कर्यो, धिक्कार छे भने मूर्खने नकाभी भें ञाणकनी बात साथी मानीने भारी निर्दोष पत्नीने दोषित मानीने तेने दुःख पड़ेयाउथुं.” आ रीते पोतानी पत्नीने निर्दोष मानीने छवे भरत पड़ेलांनी जेम तेनी साथे प्रेममय वर्तन राखवा

अथैकदा कार्यवशात् पित्रा सह रोहकः समीपवर्तिनीमुज्जयिनीं गतः, स देव नगरीमिवोज्जयिनीं विलोक्यातीव हृष्टो जातः । ततः पित्रैव सह नगरीतो निष्क्रान्तः । पिता च तत्र नगर्यां ' किमपि विस्मृत ' -मिति कृत्वा रोहकं क्षिप्रा नदी तटेऽवस्थाप्य तदानेतुं पुनरपि नगरीं प्राविशत् । रोहकेणापि च तत्र क्षिप्रानदीतटोपरि बालभावेन संपूर्णोज्जयिनी नगरी सिकताभिरालिखिता ।

इतश्च राजाऽश्वारूढः कथंचिदेकाकी भूतस्तेन पथा गन्तुं प्रवृत्तः । तदा रोहकः स्वलिखितनगरीमध्यभागेन समागच्छन्तं तं नृपं वदति-राजन् ! अनेन पथा मा

किया कि शायद सौतेली माता कदाचित् पूर्व विरोध के कारण सुझे विष आदि देकर न मार डाले, इसलिये वह इस विचार से प्रेरित हो अपने पिता भरतके ही साथ भोजन करने के लिये जाने लगा, अकेला नहीं ।

एक दिनकी बात है कि, पिता को उज्जयिनी में किसी कार्यवश जाना था, सो रोहक भी उसके साथ गया । देवनगरी के समान उज्जयिनी नगरी को देखकर रोहक के चित्त में बड़ा विस्मय हुआ । जब वह वहां से चला तो पिता चलते समय वहां अपनी कोई चीज भूल आया था इसलिये वह उसके लाने के लिये नगरी में वापिस आते समय रोहक को क्षिप्रा नदी के तट पर ठहरा दिया । रोहक ने वहां तट पर बालुका से संपूर्ण उज्जयिनी का चित्र अंकित कर दिया । इतने में वहां का राजा घोड़े पर चढ़कर अकेला ही उस रास्ते से आ निकला । अपने द्वारा चित्रित उस बालुका की नगरी के मध्य भाग से निकलकर जाते हुए राजा को देखकर रोहक ने कहा-

लाग्यो. हुवे रोहके ओवो. विचार कर्यो के कदाचि आ अपरमाता आगणना विरोधने कारणे मने विष आदि आपीने मारी नाभशे. तेथी ते ओ विचारथी प्रेरणने पोताना पिता भरतनी साथे न भोजन करवा नवा लाग्यो, ओकडो नहीं.

ओक दिवसे तेना पिताने ओध कार्य माटे उज्जयिनी नवानु थयु, तो रोहक पुण तेनी साथे गयो. देवनगरी नैवी उज्जयिनी नगरीने ओधने रोहकना मनमा लारे नवारि थर्ध. न्यारे त्यांथी उपड्या त्यारे पिता उपडती वभते पोतानी ओध वस्तु नगरीमा भूली आव्यो हुतो तेथी ते रोहकने क्षिप्रा नदीने किनारे ओसाडीने, तेने लाववा माटे नगरीमा पाछो कर्यो. रोहके त्यां कांठा पर रेतीनी मददथी आपी उज्जयिनी नगरीनु चित्र होथु. ओवाभां त्यांने राजा घोडेस्वार थर्धने ओकडो न ते रस्तेथी नीकन्यो. पोते चित्रेव ते रेतीनी नगरीना मध्य भागमांथी नीकणीने नता हुता ते राजाने ओधने रोहके

गच्छ । नृपेणोक्तम्-किं कारणम् ? । रोहकः प्राह-मया लिखितमिदं राजभवनं किं न पश्यसि । ततः स राजा कौतुकवशात् तल्लिखितां नगरीं विलोक्य पृच्छति-भो बालक ! अन्यदापि किं त्वया नगरीयं दृष्टा ? रोहकोवदति-पूर्वमियं नगरी मया न दृष्टा, केवलमद्यैवग्रामादिहागतोऽस्मि । ततो नृपेण चिन्तितम्-अहो ! बालकस्य कीदृशः प्रज्ञातिशयः । अथ नृपः पृच्छति-भो बालक ! किं ते नाम, कुत्र च वासस्थानम् ? । बालकेनोक्तम्-रोहक इति मदीयं नाम, एतन्नगरी समीपवर्तिनि नटानां ग्रामे निवसामि ।

राजन् ! इस मार्ग से होकर आप न जाइये । राजा ने न जाने का कारण ज्यों ही रोहक से पूछा तो वह कहने लगा-क्या आप नहीं देख रहे हैं कि यहां मेरे द्वारा बनाया हुआ यह राजभवन है जो आपके चलने से खराब हो जायगा । राजा ने उसकी बात मान ली और बड़े कौतुक से उसके द्वारा चित्रित राजनगरी को देखकर पूछा-बालक ! क्या तुमने पहिले कभी यह नगरी देखी है ? राजा की बात सुनकर रोहक ने उत्तर दिया-महाराज ! इसके पहिले मैंने कभी भी इस नगरी को नहीं देखा है । मैं तो आज ही ग्राम से यहां आया हूं । रोहक की बात से प्रसन्न होकर राजा ने विचार किया कि, अहो ! इस बालक की प्रज्ञा कितनी अतिशयवाली है ! अच्छा, अब इसका नाम-ठाम भी तो पूछूं, राजा ने कहा-बालक ! तेरा नाम क्या है ? । कहां रहता है ? । बालक ने उत्तर दिया-मेरा नाम रोहक है, और आपकी इस नगरी के पास की-नटों की बसती में रहता हूं ।

કહ્યું, “હે રાજન્ ! આ માર્ગેથી આપ જશે નહીં.” રાજાએ ન જવાનું કારણ જેવું રોહકને પૂછ્યું કે તેણે કહ્યું “શું આપ જોતા નથી કે અહીં મેં બનાવેલ આ રાજભવન છે જે આપના ચાલવાથી બગડશે.” રાજાએ તેની વાત માની લીધી અને ભારે કૌતુક સાથે તેના વડે ચિત્રિત રાજનગરીને જોઈને પૂછ્યું, “બાળક ! તે પહેલાં કદી આ નગરી જોઈ છે ?” રાજાની વાત સાંભળીને રોહકે જવાબ આપ્યો, “મહારાજ ! આ અગાઉ મેં કદી પણ આ નગરી જોઈ નથી. હું તો આજે જ ગામડેથી અહીં આવ્યો છું.” રોહકની વાતથી ખુશી થઈને રાજાએ વિચાર કર્યો કે “અહો ! આ બાળકની પ્રજ્ઞા કેટલી બધી વિશાળ છે ! ઠીક, હવે તેનું નામઠામ તો પૂછું.” રાજાએ કહ્યું. હે બાળક ! તારું નામ શું છે ? તું ક્યાં રહે છે ?” બાળકે જવાબ આપ્યો, “મારું નામ રોહક છે અને આપની આ નગરી પાસેના નટોના ગામમાં હું રહું છું.”

अत्रान्तरे रोहकस्य पिता तत्रागत्य पुत्रेण सह स्वग्रामं प्रतिचलितः । राजा च स्वस्थानमागत्य चिन्तयति—‘ममैकोनानिपञ्चशतानिमन्त्रिणः सन्ति, यदि मन्त्रिमण्डले कश्चिदेको महाप्रज्ञः परमो मन्त्री भवेत् तदा मम राज्यं सुखेन वर्धेत । बुद्धिबल संपन्नो हि नृपः प्रायः सेनादिवलन्यूनोऽपि शत्रुतः पराजयं न लभते ’ एवं चिन्तयित्वा स राजा रोहकबुद्धिं परीक्षार्थमुद्यतो बभूव ।

एकदा स राजा तद्ग्रामनिवासिनः प्रधानपुरुषानादिपटवान्—‘युष्मद्ग्रामस्य बहिर्तीव महती शिला वर्तते, तामनुत्पाद्य राजयोग्यमण्डपं कुरुत ’ । ततस्तद्ग्राम-

इतने में ही रोहक का पिता भी उज्जयिनी से लौटकर वापिस वहां आ गया और अपने पुत्र रोहक के साथ ग्राम की ओर चल दिया । राजा भी वहां से चला गया । अपने स्थानपर आकर राजा ने विचार किया—मेरे चारसौ निन्यानवे ४९९ मंत्री हैं । इस विशाल मंत्रीमंडल में कम से कम एक ऐसा महाप्रज्ञाशाली मंत्री अवश्य होना चाहिये जो इस राज्य की अनायास वृद्धि करने में सहायक हो । यह बात प्रायः मानी हुई है कि, राजा भले ही सेनादिवल से न्यून हो पर यदि वह बुद्धि बल से युक्त है तो कभी भी शत्रु से पराजित नहीं किया जा सकता । इस विचार से प्रेरित होकर राजा ने रोहक की बुद्धि की परीक्षा करने का प्रयत्न प्रारंभ कर दिया । राजा ने एक दिन नट ग्रामवासियों के प्रधान व्यक्तियों को बुलाकर कहा कि, आय लोगों के गांव के बाहिर एक बहुत बड़ी शिला है, सो तुम सब उसके बिना उखाड़े ही एक राज-

એટલામા જ રોહકના પિતા પણ ઉજ્જયિની જઈને ત્યાં પાછાં આવી ગયાં અને પોતાના પુત્ર રોહકની સાથે પોતાના ગામ તરફ ઉપડ્યાં. રાજા પણ ત્યાંથી ચાલ્યો ગયો. પોતાના સ્થાને જઈને રાજાએ વિચાર કર્યો “મારા ચારસો નવાણું (૪૯૯) મંત્રી છે. આ વિશાળ મંત્રીમંડળમાં એક એવો મહાપ્રજ્ઞાશાળી મંત્રી અવશ્ય હોવો જોઈએ કે જે આ રાજ્યની અનાયાસ વૃદ્ધિ કરવામાં સહાયક થાય. સામાન્ય રીતે આ વાતને બધા માન્ય કરે છે કે રાજા પાસે ભલે સેનાદિ બળ ન્યૂન હોય પણ જો તે બુદ્ધિબળથી યુક્ત હોય તો શત્રુ તેને કદી પણ પરાજિત કરી શકતો નથી.” આ વિચારથી પ્રેરાઈને રાજાએ રોહકની બુદ્ધિની કસોટી કરવાના પ્રયત્ન શરૂ કર્યા. રાજાએ એક દિવસ નટ-ગ્રામવાસીઓના આગેવાનોને બોલાવીને કહ્યું “આપના ગામ બહાર એક ઘણી જ મોટી શિલા છે. તો તમે બધા તેને ઉખાડ્યા વિના એક મોટો રાજમંડપ ત્યાં તૈયાર કરો.” રાજાની તે આશા સાંભળીને તે બધા લોકો ચિન્તિત થઈને

वासिनो लोका राज्ञ आदेशं श्रुत्वा कथमेवं मण्डपं कर्तुं पारयाम इति चिन्तया व्याकुलीभूता एकत्र कुत्रचिद् ग्रामस्य वहिर्भागे समागत्य सभां कृतवन्तः । तत्राय विचारः प्रस्तुतः—अस्माभिः किमिदानीं कर्तव्यम्, दुष्करोऽयं नृपादेशः, असंपन्ने च नृपादेशे महाननर्थः समापतेदिति । एवं चिन्तयतां तेषां मध्याह्नकालः—समागतः । तदा रोहकस्य पिता ग्रामसभायामासीदिति तेन विना रोहको न भुङ्क्ते । क्षुधया पीडितो रोहकः पितु सन्निधौ समागत्याह—पितः ? क्षुधया पीडितोऽस्मि गच्छ गृहं भोजनाय । भरतः प्राह—वत्स ! सुखितोऽसि, किञ्चिदपि ग्रामकण्ठं न जानासि ।

योग्य मण्डप तयार करो । राजा की इस आज्ञाको सुनकर वे सब लोग चिन्तित होकर परस्पर में विचार करने लगे कि, कहो भाई ! यह काम कैसे हो सकेगा ? विचारविनिमय के लिये उन्होंने गांव के बाहिर एक सभा का आयोजन किया । अपनी २ विचारधारा सुनाने के बाद यह विचार बड़े जोर से वहां चलने लगा कि, भाई ! कहो, अब क्या करना चाहिये ? राजा की उक्त आज्ञा महान् दुष्कर है । यदि इसकी पूर्ति हम लोगों से नहीं हो सकी तो यह भूलने की बात नहीं है कि, राजा की तरफ से हम लोगों पर अनेक अनर्थों की वर्षा न हो इस प्रकार विचार चलते २ मध्याह्नकाल हो गया । खानेपीने की भी चिन्ता लोगों के चित्त से चली गई । सभा में रोहक के पिताजी भी सम्मिलित थे । इधर रोहकने घर पर विचार किया कि मैं विना पिता के कैसे भोजन करूं ? भूख मुझे सता रही है, न मालूम वे कब घर आयेगे । इस लिये मैं स्वयं ही जाकर

परस्पर विचार करवा लाग्या के कड़ो लाध, आ काम केवी रीते थर्ध शकशे ? विचारविनिमय भाटे तेमणे गामनी गडार ओक सभा पणु गोलावी. पोत पोतानी विचारधारा सलगाव्या पछी विचार धणु जेरथी त्यां थालवा लाग्यो के लाध । कड़ो डवे शुं करवुं जेधये ? राजनी ते आशानुं पादन करवुं धणुं डुंकर छे. जे आपणे तेनुं पादन नही करीये तो जे भूलवा जेवुं नथी के राजनी तरक्षुथी आपणा उपर अनेक भडान अनर्थोनी वर्षा थशे. आ प्रमाणे विचार करतां करतां मध्याह्नकाण थयो. दोडोनां चित्तमांथी आवापीवानी चिन्ता पणु थाली गध. सलामां रोहकना पिता पणु डाजर डतां. डवे घेर रोहके विचार कर्यो के “पिताणु विना डुं केवी रीते लोअन कइ ? क्षुधा मने सतावी रही छे. शी जणर तेज्यो क्यारे घेर पाछां आवशे ? तो डुं जते ज त्या जधने तेमने गोलावी लावुं.” आ प्रमाणे विचार करीने ते सलामां पितानी पासे गयो



રોહકો વદતિ—કિં તત્ કષ્ટમ્ ? । તતો ભરતેન નૃપાદેશઃ સવિસ્તરં વર્ણિતઃ । રોહકઃ પિતુર્વચનં શ્રુત્વા વિહસ્યાહ—અધુનૈવ કષ્ટમિદં દૂરી કરોમિ અલમનયા ચિન્તયા, મણ્ડપનિષ્પાદનાય શિલાયા અધસ્તાદ્ ભૂમિઃ સ્વન્યતામ્ સ્તમ્ભા અપિ યથાસ્થાનં

उन्हें क्यों न बुला लाऊं ? इस तरह विचार कर वह पिता के पास उस सभामें आया और बोला—पिताजी! खाने का समय हो गया है, मैं क्षुधा से आकुलित हो रहा हूं, अतः अब आप घर चलिये । रोहक की बात सुनकर पिताने ताने मार कर उससे कहा—बेटा ! तुम्हें खाने की पड़ी है, यहां तो खाया हुआ भी नहीं पच रहा है । तुम्हें नहीं मालूम इस समय गांव कितने कष्ट में पड़ा हुआ है । पिताकी ऐसी अनोखी बात सुन कर रोहक से चूप नहीं रहा गया, वह बोला—पिताजी ! मुझे कहिये कि—इस समय ग्राम पर कौन सा कष्ट आकर पड़ा है ? । पुत्र की बात सुनकर पिता ने उसको जो कुछ राजा का आदेश था वह सब आद्योपान्त सुना दिया । पिता के वचनों को सुनकर रोहक को कुछ हंसी सी आ गई, वह बोला—पिताजी ! यह कौन सा कष्ट है इसकी निवृत्ति अभी हो जाती है, आप चिन्ता न कीजिये, देखो, मंडप बनाने के लिये शिला के नीचे की जमीन खुदवाईये, और साथ २ में वहां यथास्थान खंभे भी लगाते जाईये, तथा उसके चारों ओर भीत भी बनवाते जाईये । इस

અને કહ્યું. “ પિતાજી ! જમવાનો વખત થઈ ગયો છે. હું ક્ષુધાથી વ્યાકૂળ થઈ ગયો છું, તો હવે આપ ઘેર ચાલો. ” રોહકની વાત સાંભળીને પિતાએ મહેલું મારીને તેને કહ્યું. “ બેટા ! તને ખાવાની પડી છે, અહીં તો ખાધેલું પણ પચતું નથી. તને ખબર નથી કે અત્યારે ગામ કેવાં સંકટમાં મૂકાયું છે. ” પિતાની એવી અનોખી વાત સાંભળીને રોહક ચૂપ રહી શક્યો નહીં, તેણે કહ્યું, “ પિતાજી ! મને કહો કે અત્યારે ગામ પર કયું સંકટ આવી પડ્યું છે ? ” પુત્રની વાત સાંભળીને પિતાએ તેને રાજાનો જે આદેશ હતો તે આદિથી અંત સુધી કહી સંભળાવ્યો. પિતાનાં વચન સાંભળીને રોહકને સહેજ હાસ્ય થયું તેણે કહ્યું, “ પિતાજી ! આ કયું મોટું કષ્ટ છે ? તેનું હમણા જ નિવારણ થઈ જશે. આપ ચિન્તા ન કરો. મંડપ બનાવવાને માટે શિલાની નીચેની જમીન ખોદાવો અને સાથે સાથે ત્યાં યથાસ્થાને સ્થંભો પણ ઉભા કરાવો, તથા તેની ચારે તરફ દિવાલ પણ બનાવરાવતા જાઓ. આ પ્રમાણે કરવાથી રાજ્ય યોગ્ય મંડપ તૈયાર થઈ જશે. ”

નિવેશનીયા इति तदर्थं मध्यवर्तिभूमिरपि खननीया, चतसृषुदिक्षु च भित्तिर्निर्मय-  
ताम्, एवं राजयोग्यमण्डपो भविष्यति । एवं रोहकस्य वचनं निशम्य सर्वैरपि ग्राम-  
प्रधानपुरुषैर्भद्रमिति प्रतिपन्नम् । ततः सर्वे भोजनार्थं स्वस्वगृहं गताः । भुक्त्वा च  
तत्र समागत्य सर्वलोकाः शिलाप्रदेशे खननं प्रारब्धवन्तः । अल्पेष्वेव दिवसेषु परि-  
पूर्णो मण्डपः संजातः । शिला च नृपादेशानुसारेण मण्डपाच्छादनरूपाऽभवत् ।  
तदा राज्ञः समीपे समागत्य ग्रामवासिभिः प्रधानपुरुषैर्निवेदितम् हे देव ! निष्पा-  
दितो भवदीयादेशः । राजा प्राह-कथमिति ? । ततस्ते सर्वमपि मण्डपनिष्पाद-  
नप्रकारं कथयामासुः ।

तरह करने से राजयोग्य मंडप तैयार हो जावेगा । इस प्रकार रोहक के  
बचन सुनकर उन सबने एकमत हो उसकी बात मान ली और कहने  
लगे-अच्छा ! प्रशस्त मार्ग उस बालक ने बतलाया । वे सब निश्चित हो  
गये और भोजन के लिये वहां से अपने २ घर पर चले आये । खाने-  
पीने के बाद सब लोग वहां पुनः एकत्रित हुए, और उस शिलातल की  
भूमि खोदने में जुट गये । निश्चित मार्ग के अनुसार थोड़े ही दिनों में  
वहां एक राजयोग्य मंडप बनकर तैयार हो गया । वह शिला राजा के  
कहने के माफिक उस मंडप की ढक्कन जैसी बना दी गई । काम समाप्त  
होते ही ग्रामवासी प्रधानपुरुषों ने राजा के पास जाकर निवेदन किया-  
हे महाराज ! आपने जो काम करने की आज्ञा दी थी वह हमलोगों ने  
पूरी कर दी है राजा ने कहा-अच्छा, यह काम किस प्रकार से आप  
लोगों ने किया ? सबने राजा को मंडप बनाने के प्रकार से जब परिचित

રોહકનાં આ પ્રકારનાં વચનો સાંભળીને તે બધાએ એકમતીથી તેની  
વાત સ્વીકારી લીધી અને કહ્યું કે આ બાળકે ઘણો સરસ માર્ગ કાઢ્યો છે.  
તેઓ બધા નિશ્ચિત થઈને ભોજન કરવા માટે પોતપોતાને ઘેર ગયા. ખાઈ  
પીને તેઓ બધાં ત્યાં ફરીથી એકઠાં થયાં અને તે શિલાતળની જમીન ખોદવા  
લાગી ગયા નિશ્ચિત માર્ગ પ્રમાણે થોડા દિવસમાં જ ત્યાં એક રાજયોગ્ય મંડપ  
તૈયાર થઈ ગયો. તે શિલા રાજાના કહેવા પ્રમાણે તે મંડપ ઉપરના આવરણ  
જેવી બનાવી દેવામાં આવી, કામ સંપૂર્ણ થતા ગામના આગેવાનોએ રાજાની  
પાસે જઈને નિવેદન કર્યું, “હે મહારાજ ! આપે જે કામ કરવાની આજ્ઞા  
આપી હતી તે આજ્ઞાનું અમે સંપૂર્ણ રીતે પાલન કર્યું છે.” રાજાએ કહ્યું,  
“સાહે ! તે કામ તમે કેવી રીતે કર્યું ?” બધાએ જ્યારે મંડપ કેવી રીતે

राजा पृच्छति—कस्येयं बुद्धिः ? । ग्रामवासिभिरुक्तम्—हे देव । भरतपुत्रस्य रोहकस्येयं बुद्धिः ।

॥ इति प्रथमो भरतशिलादृष्टान्तः ॥ १ ॥

अथ द्वितीयो मेषदृष्टान्तः—

ततो राजा रोहकबुद्धि परीक्षार्थं ग्राम्यपुरुषान् प्रतिमेषमेकं प्रेषितवान्, आदिष्टवांश्च । एष यावत्पलप्रमाणः संप्रति वर्तते, पक्षाति क्रमेऽपि तावत्—पलप्रमाण एव युष्माभिः समर्पणीयो न न्यूनो नाप्यधिक इति । ततस्तद्ग्रामनिवासिनः सर्वे पुरुषा राजादेशं श्रुत्वा व्याकुलीभूता बहिः सभायां रोहकमाहूय सादरमुक्तवन्तः—

कराया तो राजा को बड़ा आश्चर्य हुआ । राजा ने कहा—इसमें किसकी बुद्धि ने काम किया है ? सब ने सब एक स्वर से कहा कि, महाराज ! भरत के पुत्र रोहक की बुद्धि ने ॥

॥ यह भरतशिला नामक प्रथम दृष्टान्त ॥ १ ॥

अब इसी पर दूसरा मेष दृष्टान्त कहते हैं—

पुनः रोहक की बुद्धि की परीक्षा करने के भाव से प्रेरित होकर राजा ने उन ग्रामवासियों के पास एक मेंढा भेजा, और साथ में यह भी कहला भेजा कि, देखो, इस मेंढे का जितना वजन है वह उतना ही रहना चाहिये, एक रत्तीभर भी घटना-बढ़ना नहीं चाहिये । खाने को खूब घास आदि इसको मिलते रहे, इस व्यवस्था में कोई खामी न रहे । यह एक पक्ष तक ही तुम्हारे पास रखा जायगा । अधिक दिनों तक नहीं ।

अन्यो ते वातनी राजने माडिती आपी त्यारे राजने धलु अचरन् थयुं. राजन्ये कहुं, “आमां केनी बुद्धिये काम कयुं छे ?” अधाये ओकी अवाजे कहुं, “हे महाराज ! भरतना पुत्र रोहकनी बुद्धिये ”

॥ आ भरतशिला नामनुं पडेलु दृष्टान्त समाप्त ॥ १ ॥

हुवे तेना पर भीलुं मेषदृष्टान्त कडे छे—

वणी रोहकनी बुद्धिनी कसोटी करवानी वृत्तिथी प्रेराने राजन्ये ते ग्रामवासीन्यो पासे ओक घेदुं भोकल्युं, अने साथे ओम पाणु कडेवरान्युं के “लुओ, आ घेदानुं जेटलुं वजन छे ओटलुं वजन रडेवुं जेधये, ओक रतीलार वधवुं-घटवुं न जेधये. तेने आवा माटे भूअ घास आदि भणतुं रडेवुं जेधये, ते व्यवस्थांमां केध पाणु आमी रडेवी जेधये नही. आ घेदुं ओक पअवाडिया सुधी तमारी पासे रडेशे, वधारे दिवसो सुधी नही. राजनी

वत्स ! पूर्वं त्वया स्वबुद्धिबलेन वयं राजदण्डतो मोचिताः, अद्य पुनः स्वबुद्ध्या ग्रामकष्टं निवारय । इत्युक्त्वा ते दुष्करं नृपादेशं रोहकाय निवेदयामासुः । ततो रोहकः प्राह—पञ्जरस्थं व्याघ्रं प्रत्यासन्नं कृत्वा मेषमेनं यवसदानेन पोषय यवसं हि भुञ्जानः खल्वेष दुर्बलो न भविष्यति, व्याघ्रं च दृष्ट्वा न वृद्धिं प्राप्स्यति । ततो

राजा की इस अटपटी आज्ञा सुनकर सब लोग बड़े चिन्तित हुए, पहिले की तरह ही उन सबने मिलकर गाँव के बाहर सभा एकत्रित की । उसमें रोहक को आमंत्रित किया । रोहक के आने पर बड़े आदर से सब ने उससे कहा—भाई ! तुमने अपनी बुद्धि के बल से पहिले जिस प्रकार उपाय बतलाकर हमारी रक्षा की और राजदंड से हमें बचाया, उसी तरह आज भी हमें उपाय बतलाकर राजदंड से बचाओ । राजाने इस प्रकार करने की आज्ञा दी है—सो समस्त ग्राम आज कष्ट में पड़ा हुआ है, समझ में नहीं आता है कि इस विषय में क्या करना चाहिये । सब की दुःखभरी आवाज सुनकर रोहक ने मुसकुराते हुए कहा कि—इसमें अपने को घबराना नहीं चाहिये, उपाय कोई बड़ा भारी कठिन नहीं है । सुनिये—एक व्याघ्र को पिंजरेमें बन्द कर मेंढे के सामने कुछ थोड़ी दूर पर बांध कर रखना चाहिये, और उसीके ठीक साम्हने एक दूसरी ओर मेंढेको । इस तरह करने से मेंढा खा पीकर भी न घट सकेगा और न बढ़ सकेगा । जितना उसका वजन होगा उतना ही रहेगा । रोहक की

આ અટપટી આજ્ઞા સાંભળીને બધા લોકો ચિન્તિત થયાં. પહેલાંની જેમજ તે બધાએ મળીને ગામની બહાર સભા કરી. તેમાં રોહકને આમંત્રણ આપ્યું. રોહક આવતા બધાએ ઘણા આદરથી તેને કહ્યું, “ભાઈ! તમે તમારી બુદ્ધિના પ્રભાવે પહેલાં જે રીતે ઉપાય બતાવીને અમારું રક્ષણ કર્યું અને રાજદંડથી અમને બચાવ્યા એજ રીતે આજે પણ કોઈ ઉપાય બતાવીને, રાજદંડથી અમને બચાવો. રાજાએ આ પ્રમાણે કરવાની આજ્ઞા કરી છે. તેથી આખું ગામ મુશ્કેલીમાં મૂકાયું છે. અમને તો સમજતું નથી કે આ બાબતમાં શું કરવું? ” બધાનો દુઃખભર્યો અવાજ સાંભળીને રોહકે મલકાતા મલકાતાં કહ્યું “ તમારે ગલરાવાની કોઈ જરૂર નથી. તેનો ઉપાય બહુ મુશ્કેલ નથી. સાંભળો, એક વાઘને પાંજરામાં પૂરીને ઘેટીની સામે થોડે દૂર રાખવો જોઈએ, અને તેની બરાબર સામે થોડે અંતરે ઘેટાને બાંધવું. આ પ્રમાણે કરવાથી ઘેટું ખાવા-પીવા છતાં પણ વજનમાં વધશે-ઘટશે નહીં. તેનું જેટલું વજન હશે તેટલું

ગ્રામવાસિભિઃ પુરુષૈસ્તથૈવ કૃતમ્ । પક્ષાતિક્રમે ચ સ મેષો રાજે સમર્પિતઃ । રાજઃ સમીપે તોલને કૃતે સ મેષસ્તાવત્પલપ્રમાણ એવ જાતો ન તુ ન્યૂનપ્રમાણો નાપ્યધિક પ્રમાણ ઇતિ ।

॥ ઇતિ દ્વિતીયો મેષદૃષ્ટાન્તઃ ॥ ૨ ॥

અથ કુક્કુટદૃષ્ટાન્તઃ—

અથૈકદા પુનરસૌ રાજા રોહકબુદ્ધિ પરીક્ષાર્થં ગ્રામવાસિનાં સમીપે કુક્કુટમેકં પ્રેષિતવાન્ આદિષ્ટવાંશ્ચ । અન્યકુક્કુટમન્તરેણ યથાઽયં કુક્કુટો યુદ્ધકારી ભવેત્ તથા કૃત્વા મમ સંનિધૌ સમાનેતવ્ય ઇતિ । એવં વિધં નૃપાદેશં શ્રુત્વા પુનઃ સર્વે ગ્રામવાસિનઃ

इस सलाह सुनकर ग्रामवासियों ने ऐसा ही किया । जब पन्द्रह दिन निकल चुके तब उन्होंने इस मेंढे को ले जाकर राजा के पास अर्पण किया । राजा ने जब उसकी तौल कराई तो जितना उसका वजन पन्द्रह दिन पहिले था उतना ही वजन उस दिन भी निकला, न वह बढ़ा और न घटा ॥ २ ॥

॥ यह दूसरा मेष दृष्टान्त हुआ ॥ २ ॥

ત્રીસરા કુક્કુટ દૃષ્ટાન્ત—

एक दिन पुनः राजाने रोहक की बुद्धि की परीक्षा करने के लिए ग्राम-वासियों के पास एक कुक्कुट भेजा और कहला भेजा कि विना किसी दूसरे कुक्कुट के जिस तरह यह युद्ध करनेवाला बन जाय उस तरह इसे सिखलाकर मेरे पास वापिस भेज दिया जावे । इस प्रकार का राजा का

જ રહેશે ” રોહકની આ સલાહ સાંભળીને ગ્રામવાસીઓએ તે પ્રમાણે કર્યું. ન્યારે પંદર દિવસ પ્રસાર થયાં ત્યારે તેમણે તે ઘેટું લઈ જઈને રાજાને અર્પણ કર્યું. રાજાએ ન્યારે તેનું વજન કરાવ્યું ત્યારે પંદર દિવસ પહેલાં તેનું જેટલું વજન હતું તેટલુંજ વજન ત્યારે પણ થયું તે વધ્યું પણ નહીં કે ઘટ્યું પણ નહીં ॥ ૨ ॥

॥ આ બીજું ઘેટાનું દૃષ્ટાંત સમાપ્ત થયું ॥૨॥

ત્રીજું ફૂંકડાનું દૃષ્ટાંત—

એક દિવસ શ્રીથી રોહકની બુદ્ધિની પરીક્ષા કરવા માટે રાજાએ તે ગ્રામવાસીઓ પાસે એક ફૂંકડો મોકલ્યો, અને કહેવરાવ્યું કે “બીજા કોઈ ફૂંકડાની મદદ લીધા સિવાય આ ફૂંકડો યુદ્ધ કરનાર અને એવી રીતે તેને તાલીમ આપીને મારી પાસે પાછો મોકલો.” રાજાની તે પ્રકારની આજ્ઞા સાંભળીને બધા

रोहकान्तिकमागत्याब्रुवन्-वत्स ! कुक्कुटान्तरं विना कथमयं राजकुक्कुटो युद्धं कर्तुमुत्सहेत, केनोपायेन नृपादेशं कर्तुं पारयामः ?, पूर्ववत् स्वबुद्धिवलेन ग्रामकण्टं निवारय' इति । ततो रोहकेणोक्तम्-एको निर्मलोमहादर्पणः समानीयताम् ।

अथ रोहकवचनाद् ग्रामवासिभिस्तथाकृते सति रोहकेण स महादर्पणस्तस्य कुक्कुटस्य समक्षं स्थापितः । तत्र दर्पणे स राजकुक्कुटः स्वप्रतिबिम्बमवलोक्य द्वितीयं स्वप्रतिपक्षं कुक्कुटं मत्वा तेन सह योद्धुं प्रवृत्तः । तिर्यञ्चो हि जडबुद्धयो

आदेश पाकर समस्त ग्रामवासी पुरुष चिन्तित जैसे बन कर रोहकके पास आये, और राजा का आदेश सुनाकर कहने लगे-वत्स ! विना दूसरे कुक्कुट के यह राजाका कुक्कुट युद्धकारी कैसे बन सकता है ? जब तक यह बात पूरी नहीं हो सकती है राजाका आदेश तब तक पालित भी कैसे हो सकता है ? अतः जिस प्रकार तुमने पहिले हमें दो संकटों से उबारा है अब तीसरी बार भी हमें इस संकट से उबारने की युक्ति कहो ? ग्रामवासियों की इस संकटमय स्थितिको देखकर रोहक ने उनसे कहा-आप लोग इसकी जरा भी चिन्ता न करें, मैं जैसा कहूँ वैसा आप कीजिये । एक बड़ा भारी स्वच्छ दर्पण ले आईये । लोगोंने ऐसा ही किया । जब दर्पण आया, तो रोहक ने उस दर्पण को राजकुक्कुट के समक्ष रख दिया । राजकुक्कुट ने उसमें ज्यों ही अपना प्रतिबिम्ब झलकते देखा तो उसके चित्त में यह बात जम गई कि यहां कोई दूसरा कुक्कुट है । इस तरह उन दोनों में जमकर परस्पर युद्ध होना प्रारंभ हो गया । उस

ग्रामवासी पुरुषो चिन्तित यद्यने रोहकनी पासे आव्या अने राजनी आज्ञा तेने कही संलणावीने कडेवा लाग्यां, “ भेटा ! भीजे झूठानी भट्ट विना राजने आ झूठो युद्ध करनार केवी रीते भनी शके ? न्यां सुधी आ बात भने नही त्या सुधी राजनी आज्ञानुं पालन पणु केवी रीते थाय ? तो तमे आ पडेलां ने रीते जे संकटोमांथी अभने उगारी लीधां छे तेम आ संकट-मांथी पणु उगारवानी युक्ति भतावे। ” ग्रामवासीओनी आ संकटभरी स्थिति जेधने रोहके तेमने कहुं, “ आप तेनी जरि पणु चिन्ता करशे नही हुं कहुं तेम आप करे। जेक भोटो स्वच्छ अरीसो लावे। ” बोकेअे ते प्रभाणु कथुं, न्यारे अरीसो आव्यो त्यारे रोहके ते अरीसाने राजना झूठो सामे भूक्यो। राजना झूठोअे न्यारे ते दर्पणमां तेनुं प्रतिभिभ जेथुं त्यारे तेना मनमां जे बात दृढ थध गध के अहीं केध भीजे झूठो छे। आ रीते ते भन्ने वर्ये लयंकर युद्ध न्दस्युं, राजना ते झूठाने, पोते तिर्यञ्च डोवाने झारणु



भवन्ति । एवमन्यकुक्कुटाभावेऽपि राजकुक्कुटं युध्यमानं त्रिलोक्य ग्रामवासिनः पुरुषाः साश्चर्यं रोहकस्य बुद्धिं प्रशंसन्ति स्म । ततस्तै रसौ राजकुक्कुटो राज्ञे सम्पितः । द्वितीयरहितस्यापि कुक्कुटस्य पूर्ववद् युद्धकरणं निरोक्ष्यराजा सुप्रसन्नो जातः ।

॥ इति तृतीयो कुक्कुटदृष्टान्तः ॥ ३ ॥

अथ तिलदृष्टान्तः—

अथान्यदा पुनरसौ नृपस्तद्ग्रामनिवासिनः पुरुषानादिष्टवान्—युष्माकमग्रेयस्ति-  
लराशिरस्ति तत्र कियन्तस्तिલાः सन्तोति तिलान् ગણયિત્વા શીઘ્રં વ્રૂત । રાજૈવમા-  
દિષ્ટાસ્તદ્ગ્રામનિવાસિનો લોકાશ્ચિન્તિતા અભવન્ । તતસ્તે રોહકાન્તિકમાગત્ય રાજા-

રાજકુક્કુટ કો તિયંચ હોને કે નાતે इतना भान तो था ही नहीं कि, यह मेरा ही प्रतिबिम्ब है । मैं किस के साथ झगड रहा हूं? कुक्कुट को इस तरह अन्य कुक्कुट के अभाव में भी युद्ध करता देखकर ग्रामवासियों को रोहककी बुद्धि पर बड़ा आश्चर्य हुआ । सर्वों ने मिल कर उसकी बड़ी सराहना की । कुछ दिनों बाद जब वह कुक्कुट युद्धकारी बन गया तो उन ग्रामवासियों ने उसे राजा के पास वापिस भेज दिया । राजा ने भी जब कुक्कुट की इस स्थिति का अवलोकन किया तो वह बड़ा ही संतुष्ट हुआ ॥ ३ ॥

॥ यह तीसरा कुक्कुट दृष्टान्त हुआ ॥ ३ ॥

चौथा तिल दृष्टान्त—

एक समय की बात है कि राजा ने उन ग्रामवासियों से ऐसा कहा कि भाईयों ! आप लोगों के समक्ष जो यह तिल की राशि पड़ी हुई है, सो

એટલુ ભાન તો ન હતું કે તે તેનું જ પ્રતિબિંબ છે, અને પોતે કેાની સાથે લડી રહ્યો છે, આ રીતે બીજો ફૂકડો ન હોવા છતાં પણ પ્રતિબિંબને ફૂકડો માનીને તેની સાથે રાબના ફૂકડાને યુદ્ધ કરતો બેઠા ગામના લોકોને રોહકની બુદ્ધિ માટે ઘણું અચરજ થયું. બધાએ મળીને તેની બુદ્ધિની ઘણી પ્રશંસા કરી કેટલાક દિવસો પછી તે ફૂકડો યુદ્ધકળામાં પ્રવીણ થઈ ગયો, ત્યારે ગામવાસીઓએ તેને રાબની પાસે પાછો મોકલી દીધો. રાબએ પણ બ્યારે ફૂકડાની તે સ્થિતિનું અવલોકન કર્યું તો તે ઘણા સંતોષ પામ્યો ॥૩॥

॥ આ ત્રીજું ફૂકડાનું દષ્ટાંત સમાપ્ત ॥ ૩ ॥

ચોથું તલનું દષ્ટાંત—

એક સમયની આ વાત છે. રાબએ ગામવાસીઓને એવું કહ્યું કે, “ભાઈઓ, આપની પાસે આ જે તલનો ઢગલો પડ્યો છે તેમાં તલના કેટલા

देशमब्रुवन । रोहकेणोक्तम्—विमधुना राज्ञ उन्मादो जातः, एवं विधोऽपि प्रश्नः संभवति किम् ?, अस्तु । गच्छन्तु सर्वे ब्रुवन्तु राजानम् । भो राजन् ! वयं न गणितज्ञाः, कथमस्माभिस्तिलसंख्या वाच्या, तथापि भवदीयादेशं शिरसि निधाय तदुपमामवलम्ब्यकथयामः—ग्रामोपरिभागे नभसि यावत्त्यस्तारकाः सन्ति तावन्त-  
स्तिला अत्र—तिलराशौ विद्यन्ते । ततो रोहक वचनात् सर्वैर्ग्रामवासिभिस्तथैव राज्ञः समीपे कथितम् । राजा परितुष्टोऽभवत् ।

॥ इति चतुर्थस्तिलहृष्टान्तः ॥ ४ ॥

बतलावो कि इसमें कितने तिलकण हैं । राजाकी इस बातकों सुन कर लोगों को बड़ा आश्चर्य हुआ । साथमें राजाकी आज्ञा अनुल्लंघ्य होती है, इसकी भी उन्हें बड़ी चिन्ता लग गई । इसका कोई उपाय न देख-  
कर वे रोहक के पास आये और राजा ने जो आदेश दिया था वह यथा-  
वत् कह सुनाया । सुनकर रोहक को भी बड़ा अचंभा हुआ, उसने कहा—क्या राजा को कोई उन्माद का रोग तो नहीं हो गया है जो ऐसी असंभव बात को भी संभवित करने का प्रश्न कर रहा है ? खैर ! कोई चिन्ता नहीं, अब आप लोग जायें और राजा से कहें महाराज ! हम लोग कोई गणितज्ञ तो हैं नहीं जो तिलों को गिनकर उनकी संख्या आप को बतला सकें, फिर भी आपका आदेश शिर पर रखकर इतना कह सकते हैं कि इस ग्राम के ऊपर रहे हुए आकाश में जितने तारे हैं उतने ही तिल इस तिलराशि में मौजूद हैं । रोहक की इस सूझ से सब ग्रामवासी बड़े ही प्रसन्न हुए । सब ने जाकर राजा से ऐसा ही कहा ।

દાણા છે તે બતાવો ” રાજાની આ વાત સાંભળીને લોકોને ભારે અચરજ થઈ. વળી રાજાની આજ્ઞા અનુલ્લંઘ્ય હોય છે તેની પણ તેમને મોટી વિમા-  
સણ થઈ પડી. તેનો કોઈ ઉપાય ન સમજવાથી તેઓ રોહકની પાસે ગયા અને રાજાએ જે આદેશ આપ્યો હતો તે સંપૂર્ણ રીતે કહી સંભળાવ્યો. તે સાંભળીને રોહકને પણ ઘણી નવાઈ થઈ. તેણે કહ્યું, “શું રાજાને કોઈ ઉન્મા-  
દનો રોગ તો નથી થયોને કે જેથી તે આવી અશક્ય વાતને પણ શક્ય કર-  
વાનો પ્રશ્ન પૂછી રહેલ છે ! ખેર ! કોઈ ચિંતા નહીં, હવે આપ લોકો જાવ અને રાજાને કહો કે મહારાજ ! અમે એવા ગણિતજ્ઞ તો નથી કે તલને ગણીને તેની સંખ્યા આપને બતાવી શકીએ, છતાં પણ આપની આજ્ઞા માથે ચડાવીને એટલું કહી શકીએ છીએ કે આ ગામની ઉપર રહેલ આકાશમાં જેટલા તારા છે, એટલા જ તલ આ તલના ઢગલામાં મોજૂદ છે. ” રોહકની આ અછલ-  
જોઈને ગામવાસીઓ ઘણા ખુશી થયા. બધાએ જઈ ને રાજાને એ પ્રમાણે જ

અથ વાલુકાદૃષ્ટાન્તઃ—

અથાન્યદા પુનરસૌ નૃપો રોહકબુદ્ધિ પરીક્ષાર્થં ગ્રામ્ય પુરુષાન્ પ્રતિનિજાદેશં પ્રેષિતવાન્—યુષ્મદ્ગ્રામસ્ય સમીપે રમણીયા વાલુકા વર્તન્તે, તાભિર્વહુસ્થૂલા રજ્જું કૃત્વા શીઘ્રં પ્રેષયત । એવં નૃપાદેશં શ્રુત્વા ગ્રામ્યલોકા રોહકાન્તિકમાગત્ય નૃપાદે-  
શમબ્રુવન્ । રોહકેણોક્તમ્—યૂયં રાજઃ સમીપે એવં બ્રૂત—વય નટાઃ સ્મઃ, નૃત્યમેવ કર્તું જાનીમો ન તુ રજ્જુમ્ । તથાપિ રાજ આદેશોઽવશ્યં કર્તવ્યઃ, તસ્માદસ્માકમિયં

રાજા મી ઇસ ઉત્તર કો સુનકર વડા પ્રમુદિત મન હુઆ ॥

॥ યહ ચૌથા તિલદૃષ્ટાન્ત હુઆ ॥ ૪ ॥

પાંચવાં વાલુકાદૃષ્ટાન્ત—

કિસી એક સમય રાજા ને પુનઃ રોહક કી બુદ્ધિ કી પરીક્ષા કરને કે લિયે ગ્રામવાસિયોં કે પાસ એસા અપના આદેશ મેજા, કિ તુમ્હારે ઇસ ગ્રામ કે બાહર જો રમણીય બાલુ હૈ, ઉસસે તુમ લોગ બહુત સ્થૂલ રસસી બનાકર શીઘ્ર હી મેજો । રાજા કે ઇસ આદેશ સે ઉન ગ્રામવાસિયોં મેં સ્વલબલી મન્ચ ગઈ । સબકે સબ એકઠે હોકર રોહક કે પાસ આયે । આને કા કારણ પૂછને પર રોહક કો ઉન્હોને રાજા કા આદેશ કહ સુનાયા । રોહક ને અપની બુદ્ધિ કી ચતુરાઈ સે ઉનકે કષ્ટ કો દૂર કરને કા ઉન્હેં આશ્વાસન દિયા । ઇસમેં ઉન્હેં ઉસને સમજાયા કિ તુમ સબ રાજા કે પાસ જાકર કહો કિ મહારાજ ! હમ લોગ તો નટ હૈં, નટોં કા કામ નાચને કા હૈ અતઃ હમ નાચના હી જાનતે હૈં રસસી બનાના નહીં, ફિર મી

કહું રાજ આ ઉત્તર સાંભળીને મનમાં ઘણો ખુશ થયો.

॥ આ ચોથું તલનું દૃષ્ટાંત સમાપ્ત ॥ ૪ ॥

પાંચમું રેતીનું દૃષ્ટાંત—

કોઈ એક દિવસે રાજાએ ફરીથી રોહકની બુદ્ધિની પરીક્ષા કરવા માટે ગામવાસીઓને એવી આજ્ઞા આપી કે, “તમારા આ ગામની બહાર જે સુંદર રેતી છે, તેનું એક બહુ જ જડું દોરડું બનાવીને જલદી મારી પાસે મોકલો.” રાજાની આ આજ્ઞા સાંભળીને તે ગામવાસીઓમાં બળબળાટ મચ્યો, ગામના બધા લોકો એકઠા મળીને રોહકની પાસે આવ્યા આવવાનું કારણ પૂછતાં તેમણે રોહકને રાજાની આજ્ઞા કહી સંભળાવી રોહકે પોતાના બુદ્ધિચાતુર્યથી તેમના કષ્ટનું નિવારણ કરવાનું તેમને આશ્વાસન દીધું. તેણે તેમને સમજાવ્યું કે, “તમે બધા રાજાની પાસે જઈને કહો કે હે મહારાજ ! અમે લોકો તો નટ છીએ. નટોનું કામ તો નાચવાનું છે. તો અમે નાચવાનું જ જાણીએ દોરડાં વણવાનું

प्रार्थना भवति-भवदीयं राजकुलं चिरन्तनमिति चिरन्तना रज्जवो वालुकामयाः कतिचिद्राजभवने भविष्यन्तीति तन्मध्यादेका काचित् पुरातना रज्जुः प्रेषणीया येन तदनुसारेण वयमपि वालुकामयां रज्जुं कुर्म इति । रोहकवचनं श्रुत्वा ग्राम्यपुरुषैर्नृप-समीपे समागत्य तथैवोक्तम् । राजा ग्राम्यपुरुषाणां वचः श्रुत्वा सुप्रसन्नो जातः ।

॥ इति पञ्चमो वालुकादृष्टान्तः ॥ ५ ॥

अथ हस्तिदृष्टान्तः—

अथान्यदा पुनरसौ नृपतिरेकं प्रत्यासन्नमृत्युं हस्तिनं ग्राम्यपुरुषाणामन्तिके प्रेषितवान् एवमादिष्टवाञ्छ—‘गजोऽयं मृतः’ इति न वाच्यं, तथा तस्य वार्ता

आपका आदेश हमें प्रमाण है, अतः हमारी आप से यह प्रार्थना है कि यह आपका राजकुल बहुत अधिक पुराने समय से चला आ रहा है। इसमें उस-उस समय की पुरानी वालुकानिर्मित कितनीक रस्सियां होंगी ही, अतः जिस रस्सी को बनाने का आपने हमें आदेश दिया है, हमें समझाया जावे कि हम उसे किस रस्सी के अनुसार बनावे, इसलिये बड़ी दया होगी जो आप उन पुरानी वालुका की रस्सियोंमें से कुछ रस्सियां हमारे पास भेज दें तो। हम उन्हीं के अनुसार इस नवीन वालुकाकी रस्सी को बनाकर आप की सेवामें उपस्थित कर देंगे। इस प्रकार रोहक की सलाह मानकर उन ग्रामनिवासियों ने राजा की पास जाकर इसी तरह से कहा। राजा उनके इस प्रकार के वचन सुनकर बड़ा प्रसन्न हुआ ॥

॥ यह पांचवा वालुकादृष्टान्त हुआ ॥ ५ ॥

नडीं. तो પણ आपની आज्ञા અમે માથે ચડાવીએ છીએ. તો અમારી આપને એ વિનંતિ છે કે આપનું આ રાજકુળ ઘણું જ પ્રાચીન સમયથી ચાલ્યું આવે છે. તેમાં તે તે સમયની પુરાણી, રેતીમાંથી બનાવેલાં કેટલાંક દોરડાં હશે જ. તો જે દોરડું બનાવવાનો આપે અમને આદેશ આપ્યો છે, તે દોરડું કયાં દોરડા પ્રમાણે બનાવવું તે અમને સમજાવવામાં આવે એવી અમારી વિનંતિ છે. તો દયા કરીને આપ પુરાણા દોરડાંઓમાંથી કેટલાંક દોરડાંના નમૂનાઓ અમને મોકલો તો અમે તે નમૂના પ્રમાણે નવીન રેતીનાં દોરડાં બનાવીને આપની સેવામાં મોકલી આપશું.” રોહકની આ પ્રકારની સલાહ માનીને તે ગ્રામવાસીઓએ રાજાની પાસે જઈને એજ પ્રમાણે કહ્યું. રાજા તેમનાં તે પ્રકારનાં વચન સાંભળીને ઘણો પ્રસન્ન થયો.

॥ આ પાંચમું રેતીનું દ્રષ્ટાંત સમાપ્ત ॥ ૫ ॥

प्रत्यहं निवेदनीया, अन्यथा तीव्रदण्डो भविष्यति । एवं भूतं नृपादेशं श्रुत्वा सर्वे ग्राम्यलोकाश्चिन्तया व्याकुलीभूता रोहकान्तिके राजाऽऽज्ञामब्रुवन् । रोहकेणोक्तम्—यवसोऽस्मै दीयताम् यत् पश्चात् भविष्यति, तस्योपायं करिष्यामि । ततो रोहक-वचनाद् ग्राम्य पुरुषास्तस्मै हस्तिने धान्यादि यवसं दत्तवन्तस्तथाप्यसौ हस्ती तस्यामेव रात्रौ मृतः । ततो रोहकवचनाद् ग्राम्यपुरुषैर्नृपान्तिकमागत्य निवेदितम्

### छद्वा हस्तिदृष्टान्त—

एक दिन की बात है—राजाने उन ग्रामवासियों के पास एक ऐसे हाथी को भेजा जिसका मृत्युसमय विलकुल नजदीक था । भेजकर यह कहलाया कि “ हमारे पास ऐसा समाचार कि “ यह हाथी मर गया है ” इस रूपमें नहीं आना चाहिये, तथा हाथी की स्थिति कैसी क्या रहती है यह समाचार प्रतिदिन आते रहना चाहिये । इस कार्यमें यदि जरा भी प्रमाद या त्रुटि होगी तो तुम लोगों को इसका तीव्रदंड भुगतना पड़ेगा । ” इस तरह का नृपादेश सुनकर वे सब के सब ग्रामनिवासीजन चिन्ता से आकुलव्याकुल बनकर रोहक के पास पहुँचे और उससे “ राजा की ऐसी आज्ञा हुई है ” यह सब समाचार कहे । रोहक ने कहा—घबराओ नहीं, मैं इसका उपाय कहता हूँ, इसको प्रतिदिन घास तो डालते ही रहो, इसके बाद जो कुछ होगा सो देख लिया जावेगा । उसके इस बतलाये हुए उपाय को सुनकर उन्होंने ऐसा ही किया । प्रतिदिन वे उसको घास आदि खाने को देने लगे फिर भी हाथी की स्थिति बिगडती ही चली गई,

### छद्दुं हाथीनुं दृष्टान्त—

એક દિવસની વાત છે. રાજાએ તે ગામવાસીઓ પાસે એક એવો હાથી મોકલ્યો કે જેનો મૃત્યુસમય બિલકુલ નજદીક હતો, અને એમ કહેવરાવ્યું કે, “ આ હાથી મરી ગયો છે ” એ રૂપે એવા સમાચાર મારી પાસે આવવા જોઈએ નહીં, તથા હાથીની સ્થિતિ કેવી રહે છે તે સમાચાર દરરોજ મને મળવા જોઈએ. આ કાર્યમાં સહેજ પણ પ્રમાદ કે ખામી રહેશે તો તે માટે તમને આકરી સજા થશે. ” આ પ્રકારની રાજાની આજ્ઞા સાંભળીને તે ગામના બધા લોકો ચિન્તાથી આકુળવ્યાકુળ થઈને રોહકની પાસે આવ્યા અને તેને “ રાજાની આ પ્રમાણે આજ્ઞા થઈ છે ” તે બધા સમાચાર કહ્યા. રોહકે કહ્યું, “ ગભરાશો નહીં, હું તેનો ઉપાય કહું છું. આ હાથીને દરરોજ ઘાસ તો નાખતા રહો ત્યાર બાદ શું થાય છે તે જોઈ લેવાશે ” તેણે બતાવેલો તે ઉપાય સાંભળીને તેમણે તે પ્રમાણે જ કર્યું. દરરોજ તેને ઘાસ આદિ ખાવા આપ્યું, તો પણ હાથીની સ્થિતિ બગડતી જ ગઈ અને તે તેજ રાત્રે મરી ગયો. તેમણે રોહકની

-હે દેવ ! અથ હસ્તીનોત્તિષ્ઠતિ નોપવિશતિ ન ચ खादति नापि मलं मूत्र वा उत्सृजति, ન ચોચ્છ્વાસ નિઃશ્વાસૌ કરોતિ, કિં વહુના, હે દેવ ! કાપિ ચેષ્ટા સચેતનસ્ય નાસ્તિ । તતો રાજાકથિતમ્-અરે ! હસ્તી મૃતઃ કિમ્ । ગ્રામ્યલોકૈરુક્તમ્ હે દેવ ! ભવન્ત એવ એવં વદન્તિ ન તુ વયમિતિ । ગ્રામ્યલોકૈરેવમુક્તો રાજા તૂષ્ણીં સ્થિતઃ । રાજા સુપ્રસન્નો જાત ઇતિ મત્વા ગ્રામ્યલોકાઃ સહર્ષં ગ્રામં પ્રવિષ્ટાઃ ।

॥ इति षष्ठो हस्तिदृष्टान्तः ॥ ६ ॥

और वह उसी रात को मर गया । रोहक के पास जाकर उन्होंने ने जब इस समाचार से उसे अवगत कराया तो उसने उन से कहा कि तुम सब राजा के पास जाकर ऐसा कहो-“देव ! आज हाथी न तो उठता है और न बैठता है, न खाता है न पीता है, न मलमूत्र का ही त्याग करता है, उच्छ्वास-निःश्वास क्रिया भी उस की बंध हो गई है, और अधिक क्या कहें जो सचेतन प्राणी की चेष्टा होती है उसकी ऐसी कोई भी चेष्टा नहीं हो रही है” । ग्रामनिवासीजनों ने राजा के पास जाकर ऐसा ही कहा तो उन की ऐसी बात सुनकर राजा ने कहा “तो क्या हाथी मर गया है ?” राजा की ऐसी बात सुनकर उन ग्रामनिवासियों ने कहा-महाराज ! आप ही ऐसा कह रहे हैं, हम तो ऐसा कुछ कहते नहीं हैं । ग्रामनिवासी पुरुषों की इस बात से राजा चूप हो गया और बड़ा प्रसन्न हुआ । वे सब के सब वादमें हर्षित होते हुए अपने २ घर पर वापिस लौट आये ॥

॥ यह छठा हस्ति दृष्टान्त हुआ ॥ ६ ॥

પાસે જઈને આ સમાચાર તેને આપ્યા ત્યારે તેણે તેમને કહ્યું કે તમે બધા રાજાની પાસે જઈને આ પ્રમાણે કહો “ દેવ ! આજે હાથી ઉઠતો નથી, બેસતો નથી, ખાતો નથી, પીતો નથી, મળમૂત્રનો ત્યાગ પણ કરતો નથી, તેની ઉચ્છ્વાસ નિઃશ્વાસની ક્રિયા પણ બંધ પડી ગઈ છે, વધુ શું કહીએ સચેતન પ્રાણીની જે ચેષ્ટા હોય છે એવી કોઈ પણ ચેષ્ટા તે કરતો નથી.” ગામવાસીઓએ રાજાની પાસે જઈને એ પ્રમાણે જ કહ્યું, તો તેમની વાત સાંભળીને રાજાએ કહ્યું, “ તો શું હાથી મરી ગયો છે ? ” રાજાની એવી વાત સાંભળીને તે ગામ વાસીઓએ કહ્યું, “ મહારાજ ! આપ જ એવું કહો છો, અમે તો એવું કંઈ કહેતા નથી ” ગામવાસીઓની એ વાત સાંભળીને રાજા ચૂપ થઈ ગયો અને ઘણું પ્રસન્ન થયો. તે બધા રાજા થતા પોતપોતાને ઘેર પાછા ફર્યા.

॥ આ છઠું હાથીનું દષ્ટાંત સમાપ્ત ॥ ૬ ॥



अथागडदृष्टान्तः—

अगडः=कूपः । एवं तदुदाहरणम्—

अन्यदा पुनरसौ नृपतिर्ग्राम्यपुरुषान् समादिष्टवान्—युष्मद्ग्रामे यः सुस्वादुजलपूर्णः कूपोऽस्ति, स इह सत्वरं प्रेषणीयः । एवमादिष्टा ग्राम्यपुरुषाश्चिन्तया व्याकुलचित्ताः सन्तो रोहकाग्रे नृपादेशं निवेदितवन्तः । रोहकेणोक्तम्—यूयं नृपान्तिके गत्वा वदत—ग्रामीणः कूपः स्वभावतो भीरुर्भवति न च तस्य सजातीयं विनाऽन्यस्मिन् विश्वासो जायते अतः कश्चिदेको नागरिकः कूपः प्रेषणीयः, येन

सातवां अगड दृष्टान्त—

एक दिन राजा ने ग्रामवासी पुरुषों से ऐसा कहा कि तुम्हारे गाँवमें जो सुस्वादुजल से पूर्ण कुआ है उसे यहां शीघ्र भेज दो । राजा की इस अटपटी आज्ञा को सुनकर वे सब बड़े चकित हुए । उपाय कुछ जब सम्झ में नहीं आया तो बेचारे वे रोहक के पास पहुँचे । रोहक ने आने का कारण पूछा तो उन्होंने राजा की कुआ भेजने की जो बात थी वह उसे सुना दी । रोहक ने शीघ्र ही उन्हें उपाय बतलाते हुए सचेतकर कहा देखो तुम सब इसी समय राजा के पास जाओ और कहो-महाराज ! गाँव का कुआ स्वभावतः भीरु-डरपोक-होता है, जबतक उसे सजातीय दूसरा कुआ न मिल जावे तबतक वह अन्य किसी दूसरे व्यक्ति में विश्वास नहीं कर सकता है, इस लिये आप उसे बुलाने के लिये कोई दूसरा नागरिक कुआ भेज दीजिये कि जिससे उस पर यह विश्वास कर आपके नगरमें उसी के साथ २ आजावे । रोहक के इस उपाय से संमत

सातमुं अगड दृष्टान्त ( कूपानुं दृष्टान्त )—

એક દિવસ રાજાએ તે ગામના લોકોને કહ્યું કે, “ તમારા ગામમાં જે મીઠા પાણીથી ભરેલો કુવો છે તેને જલ્દી અહીં મોકલી આપો.” રાજાની આ અટપટી આજ્ઞા સાંભળીને બધાને ધણી જ નવાઈ થઈ જ્યારે કોઈ ઉપાય ન જડ્યો ત્યારે બિચારા તેઓ રોહકની પાસે આવ્યા. રોહકે તેમના આગમનનું કારણ પૂછ્યું ત્યારે તેમણે રાજાની કુવો મોકલવાની જે આજ્ઞા હતી તે તેને કહી સંભળાવી. રોહકે તરત જ તેમને ઉપાય બતાવતાં સચેત કરીને કહ્યું, “ તમે બધા અત્યારે જ રાજાની પાસે જાઓ અને કહો “ મહારાજ ! ગામડાંનો કુવો સ્વભાવે ડરપોક હોય છે. જ્યાં સુધી તેનો સજાતીય બીજો કુવો ન મળે ત્યાં સુધી તે બીજા કોઈ પણ વ્યક્તિ પર વિશ્વાસ મૂકતો નથી. તો આપ તેને બોલાવવા માટે નગરના બીજા કોઈ કુવાને મોકલો કે જેથી તેના પર વિશ્વાસ મૂકીને

તસ્મિન્નેષ વિશ્વસ્ય તેન સહ સમાગમિષ્યતિ । તતો રોહક વચનાદ્ ગ્રામ્યપુરુષૈર્નૃપા-  
ન્તિકમાગત્ય તથૈવ નિવેદિતમ્ । રાજા ચ સ્વચેતસિ રોહકસ્ય બુદ્ધચતિશયં વિભાવ્ય  
મૌનમવલમ્બ્ય સ્થિતઃ । ગ્રામ્યલોકા રાજાનં સુપ્રસન્નં મત્વા હર્ષેણ સ્વસ્થાનમાગતાઃ ।

॥ ઇતિ સપ્તમોઽગડદૃષ્ટાન્તઃ ॥ ૭ ॥

અથ વનખણ્ડદૃષ્ટાન્તઃ—

અથાઽન્યદા પુનર્નૃપતિગ્રામવાસિનઃ પુરુષાનાદિષ્ટવાન્—યુષ્માભિર્ગ્રામસ્ય પૂર્વસ્યાં  
દિશિ વર્તમાનો વનખણ્ડઃ પશ્ચિમાયાં દિશિ કર્તવ્ય ઇતિ । અસ્મિન્નપિ રાજા આદેશે  
સમાગતે રોહકવચનાદ્ ગ્રામ્યપુરુષાવનખણ્ડસ્ય પૂર્વસ્યાં દિશિ વ્યવસ્થિતાઃ । તથા

હોકર વે સબ કે સબ રાજા કે પાસ પહુંચે ઔર પૂર્વોક્ત રૂપ સે उनसे  
निवेदन किया । राजाने इस तरह की उनकी बात सुनकर यह समझ  
लिया कि यह सब रोहक की बुद्धि का ही प्रभाव है । इस प्रकार रोहक  
की बुद्धि की अतिशय विशालता को जानकर राजा चूप हो गया । तथा  
वे सब ग्रामनिवासी जन भी प्रसन्न होते हुए अपने २ घर पर लौट आये ॥

॥ यह सातवां अगड (कूप) दृष्टान्त हुआ ॥ ७ ॥

આઠવાં વનખણ્ડ દૃષ્ટાન્ત—

રાજા ને એક દિન ગ્રામવાસિયોં સે એસા કહા કિ તુમ્હારે હસ ગ્રામ  
કી પૂર્વ દિશામેં જો વનખણ્ડ હૈ ડસકો તુમ સબ મિલકર પશ્ચિમદિશા મેં  
કર દો । રાજા કે હસ આદેશ કો સુનકર ડનલોગોં ને રોહક કે પાસ  
જાકર રાજા કા વહ આદેશ કહ સુનાયા । રોહક ને મી ડન્હેં હસકા  
ઉપાય બતલા દિયા । ડસીકે અનુસાર વે સબ કે સબ અબ વનખંડ કી

तेनी साथे नगरमां आवे. ” रोहकना आ उपाय साथे संमत थछने तेओ  
अधाय राजनी पासे पछोन्था. अने आगण कहा प्रभाए तेमने विनंति करी.  
राजअ तेमनी ओ प्रकारनी बात सांलणीने ओपुं भान्युं के आ अघो रोहकनी  
बुद्धिने न प्रभाव छे. आ रीते रोहकनी बुद्धिनी विशालता जेधने राज चूप  
थछ गयो. तथा ते ग्रामवासी लोक पणु प्रसन्न थछने पोतपोताने घेर  
पाछां क्यो.

॥ आ सातमुं अगड (कूप) दृष्टांत समाप्त ॥ ७ ॥

આઠમું વનખંડ દૃષ્ટાન્ત—

રાજાએ એક દિવસ ગામવાસીઓને કહ્યું કે, “ તમારા ગામની પૂર્વ દિશામાં  
જે વનખંડ છે તેને તમે અથા મળીને પશ્ચિમ દિશામાં કરી નાખો. રાજાનો  
આ આદેશ સાંલળીને તે લોકોએ રોહકની પાસે જઈને રાજાનો તે આદેશ  
કહી સંલળાવ્યો. રોહકે પણુ તેમને તેનો ઉપાય બતાવ્યો. તે પ્રભાણુ તેઓ

सति वनखण्डो ग्रामस्य पश्चिमायां दिशि संवृत्तः । राज्ञ आदेशः पूर्णो जात इति निवेदितं राज्ञः समीपे राजपुरुषैः ।

॥ इति वनखण्डनामकोऽष्टमो दृष्टान्तः ॥ ८ ॥

अथ पायसदृष्टान्तः—

पायसं-परमान्नं 'खीर' इति भाषा प्रसिद्धम् । पुनरन्यदा स नृपतिरादिष्टवान्-भो ग्रामवासिनः पुरुषाः ! यूयं विनाऽग्नि संयोगेन पायसं कृत्वा प्रेषयत । ततस्तैः पुरुषैर्नृपादेशं श्रुत्वा रोहकान्तिके समागत्य नृपादेशः प्रोक्तः । रोहकेणोक्तम्-तण्डुलान् जले निक्षिप्य तण्डुलेषु प्रफुल्लितेषु पश्चात् 'परिपक्वचूर्णशर्करोपरि तण्डुलपयोभृता प्रतला स्थालो निवेश्यताम्, तदनु ताः परिपक्वचूर्णशर्करा मुहुर्मुहुर्जलैः

पूर्व दिशा में जाकर वस गये । इस तरह वह वनखंड स्वभावतः ग्राम की पश्चिम दिशामें हो गया । राजा का आदेश इस प्रकार पूर्ण हुआ जान-कर उन लोगों ने इसकी खबर राजपुरुषों को दे दी । राजपुरुषों ने भी यह समाचार राजा के पास भेज दिया । सुनकर राजा बड़ा प्रसन्न हुआ ॥

॥ यह आठवां वनखण्ड दृष्टान्त हुआ ॥ ८ ॥

नौवां पायस दृष्टान्त—

एक दिन राजा ने ग्रामनिवासियों से ऐसा कहा कि-तुम लोग विना अग्नि पर पकाये खीर बना कर भेजो । लोगों ने इस आदेश की पूर्ति का उपाय रोहक से पूछा । रोहक ने कहा-तुम ऐसा करो-चावलों को पानीमें डाल दो और जब वे फूल जावें तब उन्हें तथा दूध को एक पतली सी थाली भरकर रख लो, बादमें चूने के ककडों के ऊपर उस थाली को जमा-

अथां ते वनखण्डनी पूर्वदिशां गच्छन्ते रड्वा लाग्या. आ रीते ते खण्ड स्वा-  
भाविक रीते न गामनी पश्चिम दिशां आवी गयो. आ रीते राजानो आदेश  
पूर्णं यतां तेमले तेनी अग्निराजपुरुषेने आयी. राजपुरुषेने ते समाचार  
राजाने भोक्त्या. सांलणीने राजा धरेला भुशी थये.

॥ आ आठमं वनखण्ड दृष्टान्तं समाप्त ॥ ८ ॥

नवमुं पायस दृष्टान्त—

एक दिवस राजा ने ग्रामवासीयों से ऐसी आज्ञा आयी है, "तमै अग्निपर पकाव्या विना भीर बनावीने भोक्तवी आयो" दोऊने ते आदेशनुं पालन कर-वाने उपाय रोहकने पूछये. रोहकने कहुं, "तमै आ प्रभावे करे-थोआने पाणीमां नाभी राणे न्यारे ते पतलीने कुवे त्यारे तेने तथा दूधने एक पातली ऐवी थाणीमां लरी राणे पछी युनाना कांकराओ पर ते थाणीने गोठवीने

१ पके हुए चूनेके कंकर ।

સેવનીયા યેન પરમાન્નં સંપદ્યતે । તતો રોહકવચનાદ્ ગ્રામવાસિભિસ્તથૈવ કૃતે સતિ  
પરમાન્નં સંપન્નમ્ । તચ્ચ રાજે તૈ નિવેદિતમ્ । રાજાસાશ્વર્યં સુપ્રસન્નો જાતઃ ।

॥ ઇતિ નવમઃ પાયસદૃષ્ટાન્તઃ ॥ ૯ ॥

અથ અતિગદૃષ્ટાન્તઃ—

અતિગઃ—તીવ્રબુદ્ધિમાન્ । અથાન્યદા રાજા રોહકસ્ય બુદ્ધ્યતિશયમવગત્ય  
તમાકારયિતુમાદિષ્ટવાન્—યેન વાલકેન સ્વબુદ્ધિવશાત્ સર્વાં અપિ મમાજ્ઞાઃ સંપા-  
દિતાસ્તેન મમ સમીપે સમાગન્તવ્યમ્ કિં તુ (૧) ન શુક્લપક્ષે, ન કૃષ્ણપક્ષે, (૨)

કર રાખ દો । ધીરે ૨ ડન કકડોં કો પાની કી બિન્દુઓં સે સિશ્વિત કરતે  
જાઓ । હસ તરહ્ બહુત અચ્છી સ્ત્રીર બનકર તૈયાર હો જાવેગી । રોહક  
કી હસ યુક્તિ સે સહમત હોકર સબ ને એસા હી કિયા । બઢિયા સુન્દર  
સ્ત્રીર પકકર તૈયાર હો ગઈ । લોગોં ને જાકર વહ સ્ત્રીર રાજા કો દી ।  
રાજાને દેઘકર બઢી પ્રસન્નતા પ્રકટ કી ॥

॥ યહ નૌવાં પાયસદૃષ્ટાન્ત હુઆ ॥ ૯ ॥

દસવાં અતિગદૃષ્ટાન્ત—

કુછ દિનોં કે બાદ રાજા જબ હસ તરહ્ સે વહ રોહક કી બુદ્ધિ કે  
અતિશય સે પરિચિત હો ગયા તો ડસકો અપને પાસ બુલારને કે લિયે  
સ્ત્રીર મેજી, ઓર સાથ મેં યહ મી કહલા મેજા કિ જિસ વાલક ને મેરી  
સબ આજ્ઞાઈ સંપન્ન કી ડસ વાલક રોહક કો હમારે પાસ હસ તરહ્ સે  
આના ચાહિયે કિ જિસમેં (૧) ન શુક્લપક્ષ હો, ન કૃષ્ણપક્ષ હો, (૨) ન રાત્રિ

મૂકો. ધીરે ધીરે તે કાંકરાઓ પર પાણીના ટીપાં છાંટતા રહો. આ રીતે ઘણી  
સરસ ખીર બનીને તૈયાર થશે. રોહકની આ યુક્તિ સાથે સમ્મત થઈને બધાએ  
તે પ્રમાણે કર્યું. ઘણી જ સરસ ખીર રંધાઈને તૈયાર થઈ ગઈ. દોકોએ જઈને  
તે ખીર રાખને આપી. રાખએ તે ખીર જોઈને ઘણી પ્રસન્નતા દર્શાવી.

॥ આ નવમું પાયસ દૃષ્ટાંત સમાપ્ત ॥

દસમું અતિગ દૃષ્ટાંત—

કેટલાક દિવસ પછી રાખ જ્યારે આ પ્રકારની રોહકની બુદ્ધિની તીવ્ર  
તાથી પરિચિત થઈ ગયો ત્યારે તેણે તેને પોતાની પાસે બેલાવવાને માટે બખર  
મોકલ્યા, અને સાથે એ પણ કહેવરાવ્યું કે “જે બાળક રોહકે મારી બધી  
આજ્ઞા પૂર્ણ કરી તે બાળક રોહકે અમારી પાસે આ રીતે આવવું જ્યારે (૧)  
ન શુક્લપક્ષ હોય, ન કૃષ્ણપક્ષ હોય, (૨) ન રાત્રી હોય ન દિવસ હોય,

न रात्रौ, न दिवसे, (३) न छायायां, न चातपे तेनागन्तव्यम् । (४) न छत्रेण, नचाछत्रेण, (५) न वाहनेन, न चरणाभ्यां, (६) न मार्गेण, नचाऽमार्गेण, (७) न स्नातेन, नचास्नातेन (८) न रिक्त हस्तेन नाप्यरिक्तहस्तेन समागन्तव्यम् । एवं नृपेणादिष्टो रोहकः कण्ठदेश पर्यन्तं शरीरं जलेन प्रक्षाल्य शिरसि चालनिकां कृत्वा पदपथेन—‘पगदंडी’ इति भाषा प्रसिद्धेन मार्गेण मेषमारुह्य सायंकालेऽमावास्या प्रतिपत्संगमे एकं मृत्खण्डं हस्ते निधाय राज्ञः पार्श्वे समागतः ।

(१) राजापृच्छति—किं शुक्लपक्षे समागतोऽसि, किं वा कृष्णपक्षे ? । रोहके-

हो, (३) न दिन हो, न धूप हो और न छाया ही हो । (४) न छत्र सहित हो न छत्र रहित हो साथमें इसका भी पूरा ध्यान रहना चाहिये कि वह आगमन (५) वाहन से न हो, पैरों से न हो, और (६) न मार्ग से हो और न अमार्ग से हो । तथा (७) न स्नान कर हो, न अस्नान कर हो, (८) न रिक्त हाथ हो और न अरिक्त हाथ हो । जब रोहकने अपने आनेमें इस नियमों से युक्त इस प्रकार की राजा की आज्ञा सुनी तो वह बड़ा प्रसन्न हुआ । उसी समय उसने अपना शरीर कंठतक धोलिया और मेष पर चढ़ कर पगदंडी वाले मार्ग से वह राजा के पास चल दिया । चलते समय सायंकाल था अमावास्या और प्रतिपदा का संगम था । हाथमें उसने एक मिट्टी का ढेला ले रक्खा था । राजा के पास ज्यों ही वह पहुँचा तो ।

“ (१) राजा ने उससे पूछा—रोहक ! कह कि तू शुक्लपक्षमें आया है

(३) न तड्डो डोय न छांयडो डोय, (४) छत्रसहित न डोय तेम छत्ररहित पणु न डोय, वणी अणुं पणु पूडुं ध्यान राण्वुं डे ते आगमन (५) वाहन वडे न थाय, पगपाणा न थाय, (६) मार्गथी न डोय अने अमार्गथी पणु न डोय. तथा (७) स्नान करीने पणु न आवे, स्नान कर्या बिना पणु न आवे, (८) आली हाथे न डोय, लया हाथे पणु न डोय.” ज्यारे रोहके पोताने त्यां जवा माटेनी आ नियमोथी युक्त राजनी आज्ञा सांलणी त्यारे ते धणुओ भुश थयो. त्यारे ज तेणु कंठ सुधी पोतानुं शरीर धोछ नाण्युं अने घेटा पर असीने पंगदंडी-वाणा मार्गे ते राजनी पास जवा उपडयो. आलती वणते संध्याकाण डतो, अमावास्या अने प्रतिपादाने संगम डतो, तेणु हाथमां माटीनुं अक ढेकुं राण्युं डतुं. जेवे ते राजनी पास पडोअ्यो डे तरत ज.

(१) राजअे तेने पूछयु, “ रोहक ! डडे डे तुं शुक्लपक्षमां आव्यो छे डे कृष्ण

णोक्तम्—नाहं शुक्लपक्षे समागतोऽस्मि, नापि कृष्णपक्षे, किं त्वमावास्या प्रतिप-  
त्संगमे समागतोऽस्मि, असौ समयो न शुक्लपक्षो न कृष्णपक्षः । (२-३) राजा  
पुनः पृच्छति—अरे रोहक ! रात्रौ त्वमागतोऽसि किं दिवसे, किं वा छायायाम्,  
अथवा—आतपे ? । रोहकेणोक्तम्—नाहं दिवसे समागतोऽस्मि, न रात्रौ न छाया-  
याम्, नाप्यातपे, किं तु सायंकाले समागतोऽस्मि, असौ समयो न दिवसरूपो न  
रात्रिरूपः तथा न छायारूपो न चातपरूपः । (४) पुनः राजा पृच्छति—किं छत्रेण  
समागतोऽसि किमच्छत्रेण ? रोहकः प्राह—राजन् ! न छत्रेण न चाछत्रेण समाग-  
तोऽस्मि, शिरसश्चालनिकयाऽऽच्छादितत्वात्, (५) राजा पृच्छति—किं वाहनेन  
समागतोऽसि, किं वा चरणाभ्याम्—रोहकः प्राह—नाहं वाहनेन समागतोऽस्मि न  
या कृष्णपक्षमें आया है ? रोहक ने उत्तर दिया न मैं शुक्लपक्षमें आया  
हूँ और न कृष्णपक्षमें आया हूँ किन्तु अमावास्या और प्रतिपदाके संग-  
ममें आया हूँ वह समय न शुक्लपक्ष का है न कृष्णपक्ष का । (२) राजाने फिर  
पूछा—रोहक ! तू रात्रिमें आया है या दिनमें ? (३) छायामें आया है या धूपमें ?  
रोहक ने कहा—राजन् ! न मैं रात्रिमें आया हूँ और न दिनमें, तथा न  
छायामें आया हूँ न धूपमें, किन्तु सायंकालमें आया हूँ क्यों कि यह  
समय न दिन का है न रात्रि का है तथा न धूप का है और न छाया का है ।  
राजा ने फिर पूछा—(४) क्या तू छत्र सहित आया है ? या छत्र रहित ?  
रोहक ने कहा—राजन् ! न मैं छत्र सहित आया हूँ और न छत्र रहित  
ही, किन्तु शिर पर चालनी रखकर आया हूँ । (५) राजा ने फिर  
पूछा—क्या तू वाहन से आया है या पैरों से चलकर आया है ? रोहक

पक्षमां ? ” रोहके जवाब आये, “ हुं शुक्लपक्षमां आव्यो नथी अने कृष्णपक्षमां  
पणु आव्यो नथी पणु अमास अने प्रतिपदाना संगममां आव्यो छुं; ते समय  
शुक्लपक्षनो नथी. कृष्णपक्षनो पणु नथी. ” (२) राजाये वणी पूछयु, “ रोहक ! तुं  
रात्रे आव्यो छे के दिवसे ? (३) छांयडामां आव्यो छे के तडकामां ? ” रोहके कहुं,  
“ राजन् ! हुं रात्रे आव्यो नथी अने दिवसे पणु आव्यो नथी, तथा तडके  
आव्यो नथी के छांयडामां पणु आव्यो नथी, पणु संध्याकाणे आव्यो छुं कारण  
के ते दिवसनो समय नथी अने रात्रीनो पणु समय नथी, तडकानो समय  
नथी अने छांयडानो पणु समय नथी. ” वणी राजाये पूछयुं, (४) छत्र साथे  
आव्यो छे के छत्र वगर ? रोहके कहुं हुं छत्र सहित पणु आव्यो नथी  
अने छत्ररहित पणु आव्यो नथी पणु साथे चारणी मूझीने आव्यो छुं तेथी  
छत्र सहित पणु नथी अने छत्र वगर पणु न कडेवाय. “ (५) शुं तुं वाहनमां  
न० ८८



चरणाभ्याम्, मेषारूढः समागतोऽस्मि । (६) राजा पृच्छति-रोहक ! त्वं मार्गेण समागतः उत अमार्गेण ? रोहकेणोक्तम्-न मार्गेण न चामार्गेण समागतोऽस्मि, हस्त्यश्वादि गमनागमनमार्गं विहाय पदपथेन 'पगदंडी' इति प्रसिद्धेन मार्गेण समागमनात्, स तु न मार्गे न चामार्गः । (७) राजा पृच्छति-किं स्नातोऽसि, किं वा-अस्नातोऽसि ? रोहकेणोक्तम्-कण्ठदेशपर्यन्तं शरीरं प्रक्षाल्य समागतोऽस्मि तेन न स्नातोऽस्मि नाप्यस्नातोऽस्मि (८) नृपेणोक्तम्-रे रोहक ! किं रिक्तहस्तः किमरिक्तहस्तो वा समागतोऽसि ? । रोहको मृत्खण्डं नृपस्य पुरतः संस्थाप्य निगदति-राजन् ! न रिक्तहस्तो नाप्यरिक्तहस्तः समागतोऽस्मि । राजाऽऽह-

ने कहा-राजन् ! न मैं वाहन से आया हूं न पैरों से चलकर, किन्तु मेष पर चढ़ कर आया हूं । (६) राजा ने फिर पूछा-क्या तू मार्ग से होकर आया है या अमार्ग से ? रोहक ने कहा-राजन् ! न मैं मार्ग से होकर आया हूं और न अमार्ग से, किन्तु पगदंडी से आया हूं क्योंकि वह हाथी घोड़ों के गमनागमन से रहित होने से न मार्ग है और पगदंडी होने से न अमार्ग है । (७) राजा ने फिर पूछा-तू स्नान करके आया है या बिना स्नान किये ? तब रोहक ने कहा-मैं नहीं तो स्नान करके आया हूं और न बिना स्नान किये आया हूं किन्तु कण्ठ तक शरीर धोकर आया हूं । (८) राजा ने पुनः पूछा कि तू रिक्त हाथ आया है या अरिक्त हाथ ? इस पर रोहक ने मिट्टी के ढेले को सामने रखकर कहा-महाराज ! नहीं मैं रिक्त हाथ आया हूं और न अरिक्त हाथ राजा ने

आव्यो छे के पगपाणा आव्यो छे ?" रोहके जवाब आव्यो, "राजन् ! हुं वाहनमां आव्यो नथी अने पगे आदीने पण आव्यो नथी, पण घेटा पर भेसीने आव्यो छुं." (६) इरीथी राज्जे पूछ्युं, "शुं तुं मार्गेथी आव्यो छे के अमार्गेथी ? रोहके जवाब आव्यो, "हुं मार्ग परथी आव्यो नथी के अमार्ग परथी पण आव्यो नथी. पण पगदंडी परथी आव्यो छुं, कारण के ते हाथी घोडानी अवरजवर विनानी होवाथी मार्ग न गणाय अने पगदंडी होवाथी अमार्ग पण न गणाय." इरीथी राज्जे पूछ्युं, "तुं स्नान करीने आव्यो छे के स्नान कर्यां विना आव्यो छे ?" त्तारे रोहके कछुं, "हुं स्नान करीने पण आव्यो नथी अने स्नान कर्यां विना पण आव्यो नथी पण कंठ सुधी शरीरने धोईने आव्यो छुं." इरीथी राज्जे पूछ्युं, "तुं आदी हाथे आव्यो छे के लयां हाथे आव्यो छे ?" त्तारे रोहके माटीना ठक्षने सामे भूझीने कछुं, "महाराज ! हुं आदी हाथे पण आव्यो नथी अने लयां हाथे

કથમેતત્ ? । રોહકઃ પ્રાહ-ભવાન્ પૃથિવીપતિઃ, અતો મયા પૃથિવી સમાનીતા તેન ન રિક્ત હસ્તોઽહમ્, મૃત્વણ્ડસ્ય તુચ્છરૂપત્વાન્નાપ્યરિક્તહસ્તોઽહમ્ । પ્રથમદર્શનસમયે રોહકસ્ય મઙ્ગલવચઃ શ્રુત્વા રાજા પરિતુષ્ટોઽભવત્ । ગ્રામવાસિનો લોકા અપિ ગ્રામં ગતવન્તઃ ।

॥ ઇતિ દશમોઽતિગદ્દાન્ટઃ ॥ ૧૦ ॥

યદ્વા—‘ અહ્યા ’ ઇત્યસ્ય ‘ અજિકા ’ ઇતિચ્છાયા । ‘ અજા ’ એવ અજિકા । તથા ચ-અજા દૃષ્ટાન્ટ ઇતિ બોધ્યમ્ । સ ચૈવમ્—

અથ રાજા પરિતુષ્ટઃ સન્ રાત્રૌ રોહકં સ્વસમીપે શાયિતવાન્ । અન્યેઽપિ લોકા ઇતસ્તતસ્તત્સમીપે શાયિતાઃ । રજન્યાઃ પ્રથમ-યામાન્તે રોહકં પ્રાહ-રે રોહક !

કહા-યહ કૈસે ? રોહક ને ઉત્તર દિયા-મિટ્ટી કા ઢેલા હાથમેં લેકર આયો હું રાજા ને કહા યહ કૈસે ? રોહકને ઉત્તર દિયા-આપ પૃથિવી પતિ હૈં અતઃ મૈં પૃથિવી લેકર આયા હૂં ઇસ લિયે મૈં રિક્ત હસ્ત-ખાલી હાથ નહીં આયા હૂં, ઓર મિટ્ટી કા ઢેલા તુચ્છ રૂપ હોને સે અરિક્ત હસ્ત-ભરે હાથ મી નહીં આયા હૂં । ઇસ તરહ પ્રથમ દર્શનકાલમેં રોહક કે ઇસ પ્રકાર કે મંગલીક વચન સુનકર રાજા બહુત સન્તુષ્ટ હુઆ । ગ્રામવાસી લોગ અપને ગ્રામ કી તરફ ચલે ગયે ॥

॥ યહ દસવાં અતિગદ્દાન્ટ હુઆ ॥ ૧૦ ॥

યહાં મૂલમેં ‘ અહ્યા ’ પદ હૈં ઉસ કી છાયા ‘ અજિકા ’ એસી મી હોતી હૈં ઇસલિયે ફિર દસવાં અજાદ્દાન્ટ હૈં—

તુષ્ટ હુએ રાજા ને રોહક કો રાત્રિમેં અપને પાસ સુલાયા, તથા ઓર જો લોગ થે ઉન્હેં ઇધર ઉધર ઉસકે પાસ સુલાયા । રાત્રિ કા જબ પ્રથમ

પણુ આંચો નથી. ” રાત્રીએ કહ્યું, “ એ કેવી રીતે ? ” રોહકે જવાબ આપ્યો “ આપ પૃથ્વીપતિ છો. તેથી હું પૃથ્વી (માટી) લઈને આંચો છું, તેથી હું ખાલી હાથે આંચો નથી અને માટીનું ઢેકું તુચ્છ હોવાથી ભર્યા હાથે પણુ આંચો નથી. ” આ રીતે પ્રથમ દર્શનકાળે રોહકનાં આ પ્રકારના માંગલિક વચન સાંભળીને રાત્રી ઘણું સંતોષ પામ્યો. ગામવાસી લોકો પોતાને ગામ આવ્યા ગયા.

॥ આ દસમું અતિગદ્દાન્ટ સમાપ્ત ॥ ૧૦ ॥

અહીં મૂળમાં “ અહ્યા ” પદ છે. તેની છાયા “ અજિકા ” પણુ થાય છે. તેથી ફરીથી દસમું અજાદ્દાન્ટ મૂક્યું છે—

સંતુષ્ટ થયેલ રાત્રીએ રોહકને રાત્રે પોતાની પાસે સુવાડ્યો, અને બીજા જે લોકો હતા તેમને અહીં તહીં તેની પાસે સુવાડ્યા, જ્યારે રાત્રીનો પહેલો

જાગર્મિં કિં વા સ્વપિષિ ? । રોહક આહ-મહારાજ ! જાગર્મિં । રાજાપ્રાહ-રોહક ! તર્હિં કિં ચિન્તયસિ ? । રોહકઃ પ્રાહ-રાજન્ ! અજાયા ઉદરે યન્ત્રોત્તીર્ણાં ઇવ વર્તુલગુલિકાઃ કથં ભવન્તીતિ ચિન્તયામિ । તત એવમુક્તે સતિ રાજા તમેવ પૃષ્ટ-વાન્-કથય રોહક ! કથમિતિ । રોહકેણોક્તમ્—રાજન્ । સંવર્તક નામકાદ્ વાયુ વિશેષાત્ । એવમુક્ત્વા રોહકઃ સુપ્તઃ ।

॥ ઇતિ અજાદૃષ્ટાન્તઃ ॥ ૧૦ ॥

પ્રહર પૂરા હુઆ તો રાજાને રોહક સે કહા-રોહક ! તૂં જગ રહા હૈ યા સો રહા હૈ ? રોહક ને સુનતે હી ઝટ સે ઉત્તર દિયા-મહારાજ જગ રહા હું । સુનકર રાજા ને ફિર ઉસસે કહા-જગતા હુઆ કયા વિચાર કર રહા હૈ ? રોહક ને કહા-મહારાજ ! કયા બતલાઝું-બડા અચ્છા વિચાર કર રહા હું । વહ યહ હૈ કિ બકરી કે પેટમેં યંત્ર (મશીન) પર ઘડી ગઈ કે સમાન જો ગોલ ૨ ગુલિકા-લેંડી હોતી હૈં વે કૈસે હોતી હૈં । રોહક કી હસ વાત કો સુનકર રાજા ને કુછ મી ઉત્તર ન દેતે હુએ ઉસસે હી પૂછા કિ રોહક ! તૂ હી હસકા खुलाशा ઉત્તર બતલા । રોહક ને કહા-રાજન્ ! સુનો, બકરી કે પેટમેં એક સંવર્તક વાયુ રહા કરતી હૈ જિસસે ઉસ કે ઉદરમેં હસ પ્રકાર કી ગોલ ૨ લેંડિયાં વના કરતી હૈં । હસ ઉત્તર સે રાજાં પ્રસન્ન હુઆ । રોહક વાદમેં સો ગયા ॥

॥ યહ દસવાં દૂસરા અજાદૃષ્ટાન્ત હુઆ ॥ ૧૦ ॥

પ્રહર પૂરો થયો ત્યારે રાજાએ રોહકને કહ્યું, “રોહક ! તું જાગે છે કે સૂઈ ગયો છે ?” રોહકે સાંભળતાં જ તરત જવાબ આપ્યો “મહારાજ ! જાગું છું.” જવાબ સાંભળીને રાજાએ ફરી પૂછ્યું, “જાગતો જાગતો શો વિચાર કરે છે ?” રોહકે કહ્યું, “મહારાજ ! શું બતાવું ? ઘણો જ સરસ વિચાર કરી રહ્યો છું. તે એ છે કે બકરીના પેટમાં યંત્ર વડે બની હોય તેવી જે ગોળ ગોળ લીંડીઓ હોય છે તે કેવી રીતે બનતી હશે ?” રાજાએ રોહકની આ વાત સાંભળીને કંઈ પણ જવાબ ન આપતાં તેને જ પૂછ્યું “રોહક ! તું જ તેનો ખુલાસા વાર જવાબ આપ.” રોહકે કહ્યું, “રાજન્ ! સાંભળો. બકરીના પેટમાં એક સંવર્તક વાયુ હોય છે જેથી તેના પેટમાં આ પ્રકારની ગોળ ગોળ લીંડીઓ બન્યા કરે છે.” આ જવાબથી રાજા પ્રસન્ન થયો. પછી રોહક ઊંઘી ગયો.

॥ આ બીજી વખત દસમું અજા દૃષ્ટાંત સમાપ્ત ॥ ૧૦ ॥

अथ पत्रदृष्टान्तः—

राज्ञः समीपे सुप्तं रोहकं रात्रौ यामद्वये व्यतीते सति राजा पुनरब्रवीत्—  
अरे रोहक ! जागर्षि किं वा स्वपिषि ? । रोहक आह—राजन् ! जागर्षि । राज्ञा  
प्रोक्तम्—तर्हि किं चिन्तयसि ? । रोहकेणोक्तम्—राजन् ! अश्वत्थ पत्रस्य किं दण्डो  
महान् भवति, उत शिखारूपः—पत्राग्रभागः ? । एवमुक्ते राजा संशयमापन्नो वदति  
—रोहक ! त्वया सम्यक् चिन्तितम् किं तु निर्णयः क इति वद । रोहकः प्राह—  
यावत् पत्राग्रभागो न शुष्यति, तावद् द्वे अपि समे । ततो राज्ञा पार्श्ववर्तीलोकः पृष्टः

ग्यारहवां पत्रदृष्टान्त—

राजा के पासमें सोये हुए रोहक के जब रात्रि के दो प्रहर व्यतीत  
हो चुके तो राजा ने उससे कहा—रोहक ! जग रहा है या सो रहा है ?  
रोहक ने संभलकर उत्तर दिया—महाराज ! जग रहा हूं । जगता २ क्या  
विचार कर रहा है । इस प्रकार राजा के पूछने पर रोहक ने उत्तर दिया—  
महाराज ! मैं विचार कर रहा हूं कि अश्वत्थ—पीपल—के पते का दण्ड  
महान् होता है या उसका शिखारूप अग्रभाग महान् होता है ? रोहक  
की इस विचारधारा से परिचित होने पर राजा स्वयं संशयापन्न होकर  
कहने—लगा रोहक ! तू ने विचार तो अच्छा किया पर निर्णय इसका  
क्या है सो तू ही कह मेरी तो समझमें कुछ भी नहीं आ रहा है । रोहक  
ने राजा की बात सुनते ही उत्तर दिया—देखो, जब तक पत्राग्रभाग शुष्क  
नहीं होता है तबतक दोनों ही समान माने जाते हैं ! रोहक की इस बात

अगीयारमुं पत्र दृष्टान्त—

राजानी पासो सूतेला रोहकने रात्रिना जे प्रहर पसार थतां राजाये  
कहुं, “ रोहक ! जगे छे के सुध गयो छे ? ” रोहके ते सांलणीने जवाण  
आप्यो, “ महाराज ! जगुं छुं. ” जगतो जगतो शे विचार करी रह्यो छे ? ”  
अवे राजानो अश्व सांलणीने रोहके जवाण आप्यो, “ महाराज ! हुं ते विचार  
कइं छुं के पीपणाना पाननो दंड महान् डाय छे के तेनो शिखाइप अग्रभाग  
महान् डाय छे ? ” रोहकनी आ विचार धाराथी परिचित थतां राजा पोतेज  
संशययुक्त थईने कहेवा लाग्यो, “ रोहक ! ते विचार तो सरस कर्यो पण तेनो  
शे निर्णय छे ते तुंज कडे. मने ते कंई पण समजतु नथी. ” रोहके राजानी  
वात सांलणतान जवाण आप्यो, “ बुझ्यो, जयां सुधी पत्राग्रभाग सूकातो  
नथी त्यां सुधी जन्ने समान ज मनाय छे. ” रोहकनी आ वातनो निर्णय

રોહકસ્ય કથનં તથ્યમતથ્યં વેતિ કથ્યતામ્ । લોકેનાપ્યુક્તમ્-તથ્યમેવૈતત્ । તતો રોહકઃ પુનરપિ સુપ્તઃ ॥

॥ इत्येकादशः पत्रदृष्टान्तः ॥ ११ ॥

अथ खाडहिलादृष्टान्तः—

खाडहिला—‘ खिसकोली ’ ‘ टाली ’ इति भाषा प्रसिद्धः पञ्चेन्द्रिय जीव विशेषः। रात्रौ तृतीया यामे व्यतीते राजा रोहकं पुनः पृष्ठवान्—रे रोहक ! किं जागर्षि किं वा स्वपिषि ? । रोहकः प्राह—राजन् ! जागर्मि । राजा प्राह—अरे रोहक ! किं चिन्तयसि ? । रोहकेणोक्तम्—राजन् ! खाडहिला—जीवस्य यावन्मात्रं शरीरं,

का निर्णय राजा ने जब पार्श्ववर्ती लोगों से पूछा कि रोहक का यह कथन सत्य रूप है या असत्य रूप है ? तो उन्होंने ने एक स्वर से कहा कि ठीक है, तब राजा ने इस बात को मानली ॥

॥ यह ग्यारवां पत्रदृष्टान्त हुआ ॥ ११ ॥

बारहवां खाडहिलादृष्टान्त—

खाडेहिला का अर्थ है खिसकोली-इसको हिन्दी भाषामें टाली या गिलहरी कहते हैं। यह पांचों इन्द्रियवाली होती है। रात्रिका जब तीसरा पहर व्यतीत हो गया, तब राजाने रोहक से पुनः पूछा—कह भाई ! तूं जग रहा है या सो रहा है ? सुनकर रोहक ने कहा । राजन् ! मैं जग रहा हूं । तो क्या विचार कर रहा है । राजा की बात सुनकर रोहक ने उत्तर दिया—राजन् ! मैं इस समय यह विचार कर रहा हूं कि खाडहिला

જ્યારે રાજાએ પાસે રહેલા લોકોને પૂછ્યો કે રોહકનું આ કથન સત્ય છે કે અસત્ય છે ? તો તેમણે એકી અવાજે કહ્યું કે તેનું કથન ખરાબર છે. ત્યારે રાજાએ તે વાત માની લીધી.

॥ આ અગીયારમું પત્ર દૃષ્ટાંત સમાપ્ત ॥ ૧૧ ॥

બારમું खाडहिला (ખિસકોલી)નું દૃષ્ટાંત—

( ખાડહિલાનો અર્થ ખિસકોલી થાય છે તેને હિન્દી ભાષામાં ટાલી કે ગિલહરી કહે છે. તે પાંચે ઇન્દ્રિયવાળી હોય છે. )

રાત્રિનો ત્રીજો પહોર જ્યારે પ્રસાર થયો ત્યારે રાજાએ રોહકને ફરી પૂછ્યું, “ કહે ભાઈ ! તું જાગે છે કે ઉઘે છે ? ” તે સાંભળીને રોહકે કહ્યું, “ રાજન્ ! હું જાગું છું ” રાજાએ પૂછ્યું, “ તો તું શો વિચાર કરી રહ્યો છે ? ” રોહકે જવાબ આપ્યો, “ રાજન્ ! હું અત્યારે તે વિચાર કરું છું કે

तावन्मात्रं पुच्छं किं वा न्यूनम् ? अधिकं वा ' इति चिन्तयामि । राजातन्निर्णयं कर्तुमशक्तस्तमेव पृष्ठवान्—रे रोहक ! कोऽत्र निर्णयः ? । रोहकेणोक्तम्—राजन् ! द्वे अपि समे भवतः । एव मुक्त्वा रोहकः सुप्तः ॥

॥ इति द्वादशः खाडहिलादृष्टान्तः ॥ १२ ॥

अथ पञ्चपितृकदृष्टान्तः—

इतश्च प्राभातिके माङ्गलिकवाद्यनिःस्वने प्रवृत्ते सति राजा प्रबुद्धः सन् रोहकमाह—अरे रोहक ! किं जागर्षि ? किं वा स्वपिषि ? । तदा रोहकोगाढ नाम का जो पंचेन्द्रिय प्राणी होता है उसका जितना शरीर है उतनी ही उसकी पूंछ होती है, अथवा उससे कुछ कम होती है या उससे अधिक होती है ? यदि इस विषय को आप जानते हों तो आप बतलाईये । राजा ने रोहक की बात सुनकर कहा—मैं स्वयं इस विषय का निर्णय नहीं कर सकता हूँ तो तेरे को क्या बतलाऊँ ? तू ही कह । रोहकने झट जबाब दिया कि राजन् ! ये दोनों ही समान होते हैं । कमती बढ़ती नहीं होते । बस ऐसा कहकर रोहक सो गया ॥

॥ यह बारहवां खाडहिला का दृष्टान्त हुआ ॥ १२ ॥

तेरहवां पंच पितृक का दृष्टान्त—

रात्रि समाप्त प्राय हो चुकी थी । इधर प्रभातकाल के सूचक वाद्यों की तुमुल ध्वनि मन को हरण कर रही थी । राजा ने जगकर सोते हुए

भिसकोली नामनुं जे पंचेन्द्रिय प्राणी होय छे तेनुं शरीर जेवडुं छे जेवडी ज पूंछडी होय छे अथवा तेना करतां टुंकी होय छे, के तेना करतां लांभी होय छे ? जे आ आभतमां आप भाहितगार हो तो मने समजवो ।” राजा जे रोहकनी बात सांझीने कलु, “ हूँ पोते ते बातनो निर्णय करी शकतो नथी तो तारे ज ते कडेपुं पडथे. ” रोहके तरत ज जवाब आये, “ हे राजन् ! जे भन्ने समान ज होय छे. वधु के ओछां होतां नथी. ” अस जेभ कडीने रोहक सूछ गये.

॥ आ आरमुं खाडहिला नुं दृष्टांत समाप्त ॥ १२ ॥

तेरमुं पंचपितृक नुं दृष्टांत—

दगलग रात्रि पूरी थई हती. त्यां प्रभातकाणना सूयक वाद्योनो तुमुल ध्वनी मनने आकर्षी रह्यो छेतो. राजा जे जगीने सूतेला रोहकने जगाडवा



निद्रामुपगतः किञ्चिन्नोवाच । ततो राजा लीलाकङ्कतिकया रोहकं मनाक् स्पृशति । ततश्च रोहको विनिद्रः संजातः । राजा पृच्छति—अरे रोहकः ! किं स्वपिपि ? । रोहकेणोक्तम्—राजन् ! जागर्मि । राजा प्राह—तर्हि किं चिन्तयसि ? । रोहकेणोक्तम्—राजन् ! एतच्चिन्तयामि—भवतः कतिपये पितरः सन्तीति । ततो राजा सलज्जः सन् मनाक् तूष्णींस्थित्वा प्राह—कथय—मम कति पितरः सन्तीति । रोहकः प्राह—राजन् ! पञ्च । राजा पुनः पृच्छति—कथय—ते च के । रोहकेणोक्तम्—प्रथमस्तावद् वैश्रवणः वैश्रवणस्येव भवतो दानशक्तेर्दर्शनात् । द्वितीयश्चाण्डालः, शत्रुसमूहं प्रति चाण्डाल-

रोहक को जगाया पर वह नहीं जगा । इतनेमें राजाने सोते हुए उसके शरीरमें कंधी के दोंतों का स्पर्श कराया तो वह निद्रारहित हो गया पर ज्यों का त्यों पड़ा रहा । इतनेमें राजा ने पुनः उससे पूछा—रोहक ! जग रहा है या सो रहा है । रोहकने उत्तर दिया महाराज ! जग रहा हूं । राजा ने कहा—क्या विचार कर रहा है ? राजा के इस प्रश्न को सुनकर रोहक ने कहा—क्या कहूं ? राजाने कहा कुछ तो कह । रोहकने कहा—यदि कहूंगा तो आप नाराज हो जावेंगे, राजाने कहा—नाराज नहीं होऊंगा, कह । तब रोहकने कहा—सुनिये मैं इस समय यह विचार कर रहा हूं कि आप के कितने पिता हैं ? राजा को इस रोहक के विचार पर कुछ लज्जा जैसी तो आई पर उसने वह उसके लिये प्रकट नहीं होने दी, थोड़ी ही देर चुप रहने के बाद राजा ने रोहक से कहा—मेरे कितने पिता हैं ? रोहक ने कहा—आपके पांच पिता हैं । राजा—वे कौन २ से हैं ? बतला ।

માંડ્યો પણ તે બગ્યો નહીં. એવામાં રાબાએ સૂતેલા એવા તેના શરીર પર કાંસકીનાં દાંતાઓનો સ્પર્શ કરાવ્યો તે નિદ્રા રહિત થઈ ગયો પણ ત્યાંને ત્યાં પડ્યો રહ્યો, એટલે રાબાએ તેને ફરીથી પૂછ્યું, “રોહક ! તું બગે છે કે ઉઘે છે ?” રોહકે જવાબ આપ્યો, “મહારાજ ! બગું છું.” રાબાએ પૂછ્યું, “શે વિચાર કરે છે ?” રાબાનો આ પ્રશ્ન સાંભળીને રોહકે કહ્યું, “શું કહું ?” રાબાએ કહ્યું, “કંઈક તો કહે” રોહકે કહ્યું “જે કહીશ તો તમે નારાજ થશો.” રાબા એ કહ્યું “કહે, નાગજ નહીં થાઉં.” રોહકે કહ્યું, “સાંભળો, અત્યારે હું તે વિચાર કરી રહ્યો છું કે આપના પિતા કેટલા છે ?” રાબાને રોહકના આ વિચાર પર થોડી શરમ જેવું તો લાગ્યું પણ તેણે તે તેની પાસે પ્રગટ થવા દીધી નહીં. થોડીવાર મૌન રહીને રાબાએ રોહકને પૂછ્યું “મારે કેટલા પિતા છે ?” રોહકે કહ્યું “આપના પાંચ પિતા છે.” રાબાએ પૂછ્યું “તેઓ

સ્યેવ કોપદર્શનાત્ । તૃતીયો રજકઃ, યતો યથા રજકો વસ્ત્રં પરિનિષ્પીડ્ય તસ્ય સર્વં મલમપહરતિ તથાઽપરાધિનઃ સર્વસ્વં હરસિ । ચતુર્થોઽવૃથ્ચિકઃ, યન્મામપિ બાલકંનિદ્રાભરુષં લીલાકઙ્કતિકાગ્રેણ વૃથ્ચિક ઇવ નિર્દયં તુદસિ । પશ્ચમસ્તુ નિજપિ તૈવ, યેન યથાવસ્થિતં ન્યાયં સમ્યક્ પરિપાલયસિ । એવ મુક્તે સતિ રાજા તૂળ્ણીમાસ્થાય પ્રાભાતિકં કૃત્યં જિનસ્મરણાદિકં કૃતવાન્ । તતો રાજા માતુઃ સમીપમાગત્ય નમસ્કૃત્ય

રોહક-સુનો, એક હૈ આપકા પિતા વૈશ્રવણ, ક્યોં કિ વૈશ્રવણ કે સમાન આપમેં દાનશક્તિ કે દર્શન હોતે હૈં ૧ દૂસરા પિતા હૈ આપ કા ચાંડાલ, ક્યોં કિ શત્રુસમૂહ કે પ્રતિ આપમેં ચાંડાલ કી तरह કોપ દિશ્વલાઈ દેતા હૈ ૨, તીસરા પિતા હૈ આપ કા ધોબી, ધોબી જિસ तरह વસ્ત્ર કો પછાડકર ઉસકે મૈલ કો હર લેતા હૈ ઉસી तरह આપ બી અપરાધી કો પછાડકર ઉસ કે સર્વસ્વ રૂપ મૈલ કા હરણ કર લેતે હો ૩ । ચૌથા પિતા હૈ આપકા વૃથ્ચિક, વૃથ્ચિક જિસ तरह સોયે હુણ વ્યક્તિ કો નિર્દય હોકર હંક માર કર વ્યથિત કર દેતા હૈ ઉસી પ્રકાર આપને બી અબી સોયે હુણ સુજ બાલક કો કંધી ચુમો કર વ્યથિત કર દિયા હૈ ૪ । પાંચવા પિતા હૈ આપકા વહ કિ જિસને આપકો જન્મ દિયા હૈ, કારણ ઉસી કે અનુસાર આપ અપની પ્રજા કા ન્યાયનીતિ પૂર્વક પાલન કર રહે હો ૫ । હિસ બાત કો સુનકર રાજા ચુપચાપ હો ગયા ઓર જિનસ્મરણ પૂર્વક સમસ્ત પ્રાભાતિક કાર્ય સમ્પાદ કર અપની માતા કે પાસ ચલ દિયા ।

કોણુ કોણુ છે તે બતાવ.” રોહકે કહ્યું “ સાંભળો, એક આપના પિતા વૈશ્રવણુ છે, કારણુ કે આપનામાં વૈશ્રવણુ જેવી દાન શક્તિનાં દર્શન થાય છે, (૧) આપનો બીજો પિતા ચાંડાલ છે કારણુ કે શત્રુસમૂહ પ્રત્યે આપનામાં ચાંડાલ જેવો ક્રોધ નજરે પડે છે. (૨) આપનો ત્રીજો પિતા ધોબી છે કારણુ કે જેમ ધોબી વસ્ત્રને પછાડી પછાડીને તેનો મેલ દૂર કરે છે તેમ આપ પણ અપરાધીને પછાડી પછાડીને તેના સર્વસ્વરૂપ મેલનું હરણ કરે છે. (૩) આપનો ચોથો પિતા વીંછી છે, જેમ વીંછી સૂતેલી વ્યક્તિને નિર્દય થઈને ડાંબ દબને વ્યથિત નરે છે તેમ આપે પણ સૂતેલા એવા મને-બાળકને કાંસકી ભોકીને વ્યથિત કર્યો છે. (૪) આપના પાંચમા પિતા તે છે કે જેમણે આપનો જન્મ આપ્યો છે, કારણુ કે તેમના પ્રભાણે આપ આપની પ્રજાનું ન્યાય, નીતિપૂર્વક પાલન કરી રહ્યા છો. ” (૫) આ વાત સાંભળીને રાજા ચૂપ થઈ ગયો અને જિન સ્મરણુ પૂર્વક સમસ્ત પ્રાતઃકર્મ પૂરા કરીને પોતાની માતાની પાસે ચાલ્યો ગયો. ત્યાં પહોંચીને માતાને નમન કર્યું”

रहसि पृष्ठवान्—मातः ! कथय, अहं कतिभिर्जातोऽस्मि ? । जननी प्राह—वत्स ! किमेतत् प्रष्टव्यम् निजपित्रा त्वं जातोऽसि । ततो राजा रोहकोक्तं वचः कथयित्वा जननीमिदमब्रवीत्—मातः ! स रोहकः प्रायोऽलीक बुद्धिर्न भवतीति ततः कथय सस्यम् , एवं पुनः पुनः पृष्टा माता राजानं प्राह—यदा मम कुक्षौ त्वं समवतरितः तत् प्रभाते तव पितुः समीपे वैश्रवण सदृशः परमोदारो जिनदत्तनामा नगरश्रेष्ठी मया दृष्टः, तथा—तदा चाण्डालरजकवृश्चिका अपि तत्र दृष्टाः । एवं त्वत्पित्रादीनां पञ्चानां दर्शनेन तत्संस्कारयुक्तस्त्वमुत्पन्नः । अतस्त्वां निरीक्ष्य रोहकः प्रोक्तवान् । तत एव मुक्ते सति राजा जननीं प्रणम्य रोहकबुद्धिं प्रति साश्चर्यचित्तः स्म, स्वा-

पहुंचते ही उसने माता को नमस्कार किया और एकान्त पाकर पृच्छा—हे माता ! मैं कितने बाप की संतान हूं ? माने सुनकर कहा—बेटा ! इसमें पूछने की बात ही कौनसी है ? तुम अपने पिता की ही संतान हो । बादमें राजा ने अपनी माता को रोहक की बात से परिचित कराते हुए कहा, माता ! रोहक की बातें प्रायः सब सत्य निकलती हैं तो तुम सच २ कहो, रोहकने हमको ऐसा क्यों कहा ? इस तरह माता से बारंबार पूछने पर उसने अपने पुत्र से कहा—बेटा ! तुम जिस समय मेरी कुक्षि में अवतरित हुए थे उसी दिन प्रातः तुम्हारे पिता के पास मैंने वैश्रमण जैसे परम उदार नगर श्रेष्ठ जिनदत्त श्रेष्ठी को देखा था ? । तथा उसी समय वह चाण्डाल, रजक एवं वृश्चिक भी देखे थे । इस तरह इन पांचों के देखने से तुम इन के संस्कारों से युक्त उत्पन्न हुए हो । रोहक ने तुम्हें देखकर इसी लिये ऐसा कहा है । माता की इस बात को सुनकर राजा

अने एकान्त जेध ने पूछ्युं—“ हे माता हुं डेटला पितानो पुत्र छुं ? ” माये सांलणीने कहुं, “ तेमां पूछवा जेवुं न शुं छे ? तुं तारा पितानो न पुत्र छे. ” त्यार भाद राजाये पोतानी माताने रोहकनी बातथी परिचित करावीने कहुं, “ माता ! रोहकनी बातो सामान्य रीते साथी पडी छे तो तये साथे साथुं कडे, रोहके भने जेवुं शा माटे कहुं डशे ? ” आ प्रभाणे ते माताने बारंवार पूछवांमां आवतां तेमणे पोताना पुत्रने कहुं, “ हे भेटा ! जे समये भारी कुपे तारे जन्म थये ते न्हिवसे प्रातःकाणे तारा पितानी यासे में वैश्रवण जेवा परम उदार नगरश्रेष्ठ जिनदत्त श्रेष्ठीने जेयां हुतां. तथा ते न समये ते चाण्डाल, घोषी अने वींछीने पणु जेयां हुतां. आ रीते ते पांचेने जेवाथी तेमना ते ते संस्कार तारांमां उतर्या छे. रोहके तने जेधने ते कारणे न जेवुं कहुं छे. ” मातानी आ बात सांलणीने राजाना मनमां रोहकनी बुद्धि माटे बारे

વાસસ્થાનમગમત્ । રોહકં ચ સર્વેષાં મન્ત્રિણાં મુખ્યં મન્ત્રિણં કૃતવાન્ ।

॥ इति त्रयोदशः पञ्चपितृकदृष्टान्तः ॥ १३ ॥

ઔત્પત્તિકી બુદ્ધેર્વાચનાન્તરેણોદાહરણાનિ પ્રદર્શિતાનિ । યથા—‘ભરહસિલ પણિયરૂઝ્વે૦’ ઇત્યાદિ । તત્ર—‘ભરતશિલાનામકઃ પ્રથમો દૃષ્ટાન્તઃ પૂર્વોક્તવદ્ બોધ્યઃ ।

અથ દ્વિતીયઃ પણિતદૃષ્ટાન્ત ઉચ્યતે—કશ્ચિદ્ ગ્રામીણઃ કૃષીબલઃ સ્વગ્રામા-શ્ચિર્મિટિકા આનીય વિક્રેતું નગરદ્વારે વર્તતે, તં પ્રતિ ધૂર્તો નાગરિકઃ પ્રાહ—કિમેકો મનુષ્યસ્તવ સર્વાશ્ચિર્મિટિકા ભક્ષયિતું ન પ્રભવતિ ? । ગ્રામીણઃ પ્રાહ—ક એવં સમર્થઃ સ્યાત્, ય એતાશ્ચિર્મિટિકા ભક્ષયેત્ । નાગરિક આહ—યદ્યહં ભક્ષયામિ, તર્હિં કિં મે

કે ચિત્તમેં રોહક કી બુદ્ધિ કે પ્રતિ બડા અચંભા હુઆ ઔર માતા કો નમસ્કાર કી इस चतुराई को देखकर राजा ने उसको अपने यहां प्रधान-मंत्री के पद पर रखलिया १३ ॥

यह तेरहवां पंचपितृकदृष्टान्त हुआ ॥ १३ ॥

ઔત્પત્તિકી બુદ્ધિ કે ડપર અન્ય વાચનાઓં કે અનુસાર દૃષ્ટાન્ત इस प्रकार हैं—“ भर हसिल पणियरूखे० ” इत्यादि ।

इनमें भरतशिला नामका प्रथम उदाहरण जैसा पूर्वमें लिखा गया है वैसा जानना चाहिये १ । पणित दृष्टान्त इस प्रकार है—

કોઈ એક ગ્રામીણ કૃષીબલ બહુત સે ચીમડોં કો ભર કર વેચને કે લિયે નગર કે દ્વાર પર આયા । યહ દેઝકર એક નાગરિક ધૂર્તને उसको कहा—क्या एक मनुष्य तुम्हारे इन चीमडों को नहीं खा सकता है? कृषी-

अथर न थर अने माताने नमन करीने ते पोताने स्थाने आह्यो गये। रोहकनी आ चतुराई लेधने राजा ने तेने पोताने त्यां वडा प्रधान पद राभी दीधो।

॥ આ તેરમું પંચપિતૃક દૃષ્ટાંત સમાપ્ત ॥ ૧૩ ॥

ઔત્પત્તિકી બુદ્ધિના વિષયમાં બીજી વાચનાઓ પ્રમાણે આ પ્રકારનાં દૃષ્ટાંત છે—“ ભર હસિલ પણિય રૂઝ્વે૦ ” ઇત્યાદિ—

તેમાં ભરતશિલા નામનું પહેલું ઉદાહરણ જે રીતે પાછળ લખેલ છે તે પ્રમાણે જ સમજી લેવાનું છે (૧). પણિત દૃષ્ટાંત આ પ્રમાણે છે—

કોઈ એક ગામડાનો ખેડૂત ઘણું ચિલડાં લઈને વેચવાને માટે નગરના દરવાજા પાસે આવ્યો. તે જોઈને નગરના એક ધૂતારાએ તેને કહ્યું “ શું એક માણસ તારાં આ ચિલડાંઓને ખાઈ શકતો નથી ? ” ખેડૂતે કહ્યું, “ હા, નથી

પ્રયચ્છસિ । इदमसंभवं मत्वा ग्रामीण आह यदि भक्षयिष्यसि, तर्हि यादृशो मोद-  
कोऽनेन द्वारेण प्रविष्टो न स्यात् एवं भूतं मोदकं तुभ्यं पारितोषिकं दास्यामि ।  
तदा तावुभौ कंचित् साक्षिणं कृत्वा प्रतिज्ञां कृतवन्तौ । ततोऽसौ नागरिकस्तस्य  
सकलाश्चिर्भिटिका उच्छिष्टाः कृत्वा त्यजति । ततः पश्चान्नागरिको वदति—मया  
सकलाश्चिर्भिटिका भक्षिताः, अतः स्वप्रतिज्ञाऽनुसारेण तथाविधं महामोदकं मह्यं  
प्रयच्छ । ग्रामीणः प्राह—त्वया मम चिर्भिटिका न भक्षिताः, कथं ते महामोदकं  
दास्यामि । नागरिकः—मया सर्वाश्चिर्भिटिका भक्षिता इति न मन्यसे चेत् तर्हि तव

बलने कहा—हां नहीं खा सकता है । नागरिक धूर्त ने कहा—यदि खा जाय  
तो ? कृषीबल ने कहा कौन ऐसा समर्थ व्यक्ति है ? । नागरिक धूर्तने कहा  
में हूं । बोलो मैं यदि इन्हें खा जाऊ तो क्या इनाम दोगे । नागरिक के  
इस कथन का असंभव मानकर ग्रामीण ने कहा—यदि खाजाओ तो मैं  
तुम्हें इनाममें इतना बड़ा लड्डु दुंगा जो इस दरवाजेमें नहीं घुस सकेगा  
इस तरह उन दोनों ने किसी एक व्यक्ति को अपनी २ प्रतिज्ञा के विष-  
यमें साक्षीभूत बना लिया । अब उस नागरिक ने उस किसान के वे  
समस्त चीभडे थोड़ा २ खाकर झुंटे कर दिये और एक तरफ चीभड़ों  
को खालिया है इसलिये तुम अपनी शर्त के अनुसार मुझे मोदक दो ।  
ग्रामीण ने कहा—क्यों दूँ—तुमने समस्त चीभडे खाये कहां हैं । खाने पर  
ही तो मोदक देने की शर्त है । नागरिक ने कहा वाह ! भाई ! वाह !  
कौन कहता है कि मैंने तुम्हारे समस्त चीभडे नहीं खाये हैं । यदि यह

ખાઈ શકતો. ” નગરના ધૂતારાએ કહ્યું, જો ખાઈ જાય તો ? ” ખેડૂતે કહ્યું  
“ એમ કરવાને સમર્થ વ્યક્તિ કોણ છે ? ” નાગરીક ધૂતારે કહ્યું, “ હું પોતે  
જ છું. જો હું આ બધાં ચિલડાં ખાઈ જઉં તો મને શું ઇનામ આપીશ ? ”  
ધૂતારાની આ વાતને અસંભવિત માનીને ગામડીયાએ કહ્યું, “ જો તમે ખાઈ  
જાઓ તો તમને હું ઇનામમાં એવડો મોટો લાડુ આપીશ જે આ દરવાજામાં  
પેસી શકશે નહીં. ” આ રીતે તે બન્નેએ કોઈ એક વ્યક્તિને પોત પોતાની  
પ્રતિજ્ઞાનો સાક્ષી બનાવ્યો. હવે તે ધૂતારાએ તે ખેડૂતના બધા ચિલડાંને થોડાં  
થોડાં ખાઈને એંઠાં કરી નાખ્યાં. અને એક તરફ મુકી દીધા. તે કહેવા લાગ્યો,  
“ જો ખેડૂત ! મેં તારા બધા ચિલડા ખાઈ લીધા તેથી તું તારી શરત પ્રમાણે  
નો લાડુ મને આપ. ” ગામડીયાએ કહ્યું “ શા માટે આપુ ? તમે બધાં ચિલડા  
ખાધાં નથી. ખાધાપછી તો લાડુ આપવાની શરત છે ” ધૂતારાએ કહ્યું, “ વાહ !  
ભાઈ, વાહ ! કોણ કહે છે કે મેં તારાં બધાં ચિલડાં ખાધા નથી ? જો તને

विश्वासमुत्पादयामि । तेनोक्तम्—विश्वासमुत्पादय । नागरिकेणोक्तम्—चिर्मिटिका विपणिवीथ्यां विक्रयार्थं विस्तीर्य परीक्ष्यताम् । ग्रामीणेन तद् वचः स्वीकृतम् । ततो द्वाभ्यामपि विपणिवीथ्यां विक्रयार्थं चिर्मिटिका विस्तारिताः । ग्राहकाः समागताः । तैरुक्तम्—एताः सर्वा अपि चिर्मिटिका भक्षिता एव सन्ति एव मुक्ते सति नागरिकः प्राह—लोकानां वाक्यैर्विश्वासः क्रियताम् । नागरिकवचनं श्रुत्वा ग्रामीणः क्षुब्धो भूत्वा चिन्तयति—कथं मयाऽनेन द्वारेणाऽगम्यो महामोदकः प्रदेयः इति चिन्तया व्याकुलो भूतः स ग्रामीणस्तस्मान्नागरिक धूर्तादात्मानं मोचयितुं भीतः सन्नेकं रूप्यकं दातुमुद्यतोऽभवत् किं तु तेनधूर्तेन रूप्यकं न गृहीतम् । अन्ते स

बात तुम्हें मंजूर नहीं है तो तुम ऐसा करो इन्हें बेचने के लिये बाजारमें ले चलो फिर देखो तुम्हें यह विश्वास हो जावेगा कि मैंने तुम्हारे ये समस्त चीभडे खाये हैं या नहीं । कृषीबल ने नागरिक धूर्त की इस बात को मान लिया । अब क्या था वे दोनों वहां से उन चीभडों को लेकर बाजारमें आये, और वहां उन्हें रख कर वे बेचने लगे । ग्राहकों ने वहां आकर ऐसा कहना प्रारंभकरदिया कि ये समस्त चीभडे तो खाये हुए हैं । ऐसा कहते ही नागरिक धूर्तने उस किसान से कहा देखो भाई ये सब लोग क्या कह रहे हैं ? अब तो तुम विश्वास करो । नागरिक के इन वचनों को सुनकर ग्रामीण कृषक क्षुब्ध हो उठा और सोचने लगा इतना बड़ा मोदक में इसे कहां से लाकर दूं । इस प्रकार की चिन्ता से व्याकुल होकर उस कृषीबल ने उस धूर्त से अपना बचाव करने के

એ વાત મંજૂર ન હોય તો તું તેને વેચવા માટે બજારમાં લઈ જા પછીજેજે તને ખાતરી થશે કે મેં તારાં આ બધાં ચિલડાં ખાધાં છે કે નહીં ? ખેડૂતે નાગરિક ધૂતારાની તે વાત માન્ય કરી. હવે તેઓ બન્ને તે ચિલડાંને લઈને બજારમાં આવ્યા, અને ત્યાં તેને મૂકીને વેચવા લાગ્યા. આહકેએ ત્યાં આવીને એવું કહેવા માંડયું કે આ બધાં ચિલડાં તો કોઈએ ખાધેલાં છે. એવું સાંભળતાં જ તે ધૂતારાએ તે ખેડૂતને કહ્યું, “ જો ભાઈ! આ બધા લોકો શું કહે છે ? હવે તો તને ખાતરી થઈને ? ” ધૂતારાનાં એ વચનો સાંભળીને તે ગામડીયો ખેડૂત ક્ષોભ પામ્યો અને તે વિચારવા લાગ્યો “ એવડો મોટો લાડવો હું આ માણસને ક્યાંથી લાવીને આપું ? ” આ પ્રકારની ચિન્તાથી વ્યાકુળ થઈને તે ખેડૂતે તે ધૂતારાથી પોતાનો બચાવ કરવા માટે કહ્યું, “ ભાઈ, તમે



ग्रामीणः शतं रूप्यकाणि दातुं प्रवृत्तः किंतु तदधिकं लिप्सुना तेन धूर्तेन शतं ग्रहीतुं न स्वीकृतम् ततोऽसौ ग्रामीणश्चिन्तयति—हस्ती हस्तिनैवापनेयो भवति, अयं नागरिकः केनचिदन्येन नागरिकधूर्तेनैव समाधेयो भविष्यतीत्यनेन सह कतिपयदिनानि व्यवस्थां कृत्वा नागरिक धूर्तैः सह मिलिष्यामि । इति विचिन्त्य तथैव कृतम् । केनचिदन्येन नागरिक धूर्तेन तस्मै ग्रामीणाय बुद्धिः प्रदत्ता । ततस्तद्बुद्धिवलेन पूषिकाऽऽपणत एकं महामोदकमादाय ग्रामीणेन प्रतिद्वन्द्वी धूर्त आकारितः, साक्षि-

लिये कहा—भाई ! तुम मुझ से इसके बदलेमें एक रुपया ले लो । परन्तु उस धूर्त ने इस बात को कबूल नहीं किया । अन्तमें होते २ उस कृषक ने उसे सौ रुपये तक देने को कहा, परन्तु अधिक लेने की चाहना से उसने उन्हें लेना भी मंजूर नहीं किया । “ग्रामीण ने विचारा ” बड़ी मुश्किल की बात है अब क्या किया जाय ? खैर—“हाथी हाथी से ही हठता है” ईस कहावत के अनुसार यह धूर्त किसी दूसरे नागरिक धूर्त से ही समझाया जा सकता है । ऐसा सोचकर उसने उस धूर्त से कहा कि भाई तुम कूछ समय तक अब ठहर जाओ, जो तुम मांगोगे सो दूंगा । ऐसा विचार कर वह किसी और दुसरे नागरिक धूर्त के साथ मिल गया । अब क्या था—उस ग्रामीण कृषक के लिये दुसरे धूर्तने बुद्धि दी । उस बुद्धिवल से वह हलवाई की दुकान से एक बडासा मोदक ले आया, और उस प्रतिद्वन्द्वी धूर्त के पास आ पहुंचा, तथा इस शर्तमें जो पहिले के साथी थे उन्हें भी बुला लिया । उन सब के सामने उसने उस

तेना ખદલામાં भारી પાસેથી એક રૂપીયો લો.” પણ તે ધૂતારાએ તેની તે વાત મંજૂર ન કરી. છેવટે વધતાં વધતાં તે ખેડૂતે તેને સો રૂપીયા આપવાનું કહ્યું. પણ વધારે મેળવવાની ઇચ્છાથી તેણે તે રકમ લેવાની ના પાડી. “ગામડીયાએ વિચાર્યું” ભારે મુશ્કેલી ઉભી થઈ છે. હવે શું કરું? ખેર! “હાથીને હાથી જ ખસેડી શકે છે.” આ કહેવત પ્રમાણે આ ધૂતારાને કેઈ ખીજ નાગરિક ધૂતારા વડે જ સમજાવી શકાશે. ” એમ વિચારીને તેણે તે ધૂતારાને કહ્યું, “ તમે થોડી વાર અહીં થાભો, તમે જે માગશો તે આપીશ.” આવો વિચાર કરીને તે શહેરના કેઈ ખીજ ધૂતારાને જઈને મળ્યો. હવે શું થયું? તે ગામડીયા ખેડૂતને ખીજ ધૂતારાએ બુદ્ધિ આપી. (ચુક્રિત ખતાવી) તે બુદ્ધિબળે તે એક કંદોઈની દુકાનેથી મોટો એવો લાડુ લઈ આવ્યો. અને તે પ્રતિસ્પર્ધિ ધૂતારાની પાસે આવી પહોંચ્યો અને શરતનો જે સાક્ષી હતો તેને પણ બોલાવી લીધો. એ બધાની સામે તેણે લાડુને ઠરવાળાની એક તરફ

જોડ્યાકારિતાઃ । તતો ગ્રામીણેન સાક્ષિણાં સમક્ષે સ મહામોદકઃ કસ્મિંશ્ચિદિન્દ્રકીલકે ( નગરદ્વારૈકદેશે ) સ્થાપિતઃ કથિતશ્ચ રે મોદક ! ગમ્યતામ્, ગમ્યતામ્ । તતોઽસૌ મોદકો ન ચલતિ । તતસ્તેન ગ્રામીણેન સાક્ષિણાં સમીપે કથિતમ્—મયા યુષ્મત્ સમીપે એવં પ્રતિજ્ઞાતમ્, યદ્યહં પરાજિતો ભવિષ્યામિ, તદા નગર દ્વારેણ યો ન નિર્ગચ્છતિ સ મહામોદકો મયા પ્રદેયઃ, અયમપિ મોદકો ન ગચ્છતિ, તસ્માદહં સ્વપ્રતિજ્ઞાબન્ધાન્મુક્તો જાતઃ । એતદ્ધ સાક્ષિભિરન્યૈશ્ચ નાગરિકૈઃ પ્રતિપન્નમિતિ સ પ્રતિદ્વન્દ્વીધૂર્તઃ પરાજિતઃ । ઇતીયં નાગરિકધૂર્તસ્યૌત્પત્તિકીબુદ્ધેર્દ્વિતીયઃ પણિતદ્રષ્ટાન્તઃ ॥ ૨ ॥

इतिद्वितीयः पणितद्रष्टान्तः

अथ तृतीयो वृक्षदृष्टान्तः—

આમ્રફલાભિલાષિણાં પથિકાનાં ક્વચિદ્વને મર્કટા અન્તરાયં કૃતવન્તઃ । તતઃ પથિકાસ્તેષામામ્રફલાનાપ્રાપ્તે રૂપાયં વિચિન્ત્ય તદુપરિ પાષાણસ્વઙ્ઘૈઃ પ્રહારં કૃતવન્તઃ ।

મોદક કો દરવાજે કી એક ઓર રખા દિયા ઓર કહના પ્રારંભ કિયા કિ ઓ મોદક ? જા-જા । પરન્તુ યહ મોદક ઉસ સ્થાન સે ચલ વિચલ નહીં હુઆ । તવ ગ્રામીણને સાક્ષિયોં કે સામને એસા કહા કિ મૈને આપ લોગોં કે સામને એસી પ્રતિજ્ઞા કી થી કિ યદિ મૈ હાર જાઝંગા તો ઇસ નગર કે દ્વાર સે જો નહીં નિકલેગા એસા બડા મોદક ઢૂંગા । સો યહ મોદક યહાં સે નહીં ચલતા હૈ અતઃ આપ ઇસે લે લીજિયે । અવ મૈ અપની પ્રતિજ્ઞા સે મુક્ત હોતા હૂં । ઉસકે ઇસ કથન કી સરાહના સાક્ષિયોં ને તથા અન્ય નાગરિકો ને ભી કી ઓર ઉસકી વાત કો સ્વીકાર ભી કિયા ઇસ તરહ ઉસ કૃષીબલ ને ઔત્પત્તિ કી બુદ્ધિ કે પ્રભાવ સે ઉસ નાગરિક ધૂર્ત કોં પરાસ્તકર અપને ઘર ગયા ॥ ૨ ॥

यह दुसरा पणितद्रष्टान्त हुआ ॥२॥

મૂક્યો અને કહેવા લાગ્યો, “ હે લાડુ ! જા ! જા ! પણ તે લાડુ તે જગ્યાએથી ખસ્યો નહીં. ત્યારે ગામડીયાએ સાક્ષીઓની સામે એવું કહ્યું કે “ મેં આપ લોકોની આગળ એવી પ્રતિજ્ઞા કરી હતી કે જો હું હારીશ તો આ નગરના દરવાજામાંથી નહીં નીકળે તેવો મોટો લાડુ આપીશ, તો આ લાડુ અહીંથી ચાલતો નથી. તો આપ તેને લઈ લો. હવે હું મારી પ્રતિજ્ઞાથી મુક્ત થયો છું ” તેના આ કથનની સાક્ષીઓએ તથા બીજા નાગરીકોએ પણ પ્રશંસા કરી. અને તેની વાતને માન્ય પણ કરી. આ રીતે તે ખેડૂતે ઔત્પત્તિકી બુદ્ધિના પ્રભાવથી તે નાગરીક ધુતારાને પરાસ્ત કર્યો અને તે પોતાને ઘેર ગયો. ॥ ૨ ॥

આ બીજું પણિત દ્રષ્ટાંત સમાપ્ત ॥૨॥

मर्कटा अपि क्रोधवशात् पथिकान् प्रतिहन्तुमाम्रवृक्षोपरिसमारुह्याम्रफलानि त्रोटयित्वा पथिकोपरिप्रहरन्तिस्म । एवं पथिकानां स्वाभीष्टसिद्धिरनायासतः संजाता ।

इति तृतीयो वृक्षदृष्टान्तः ॥ ३ ॥

अथ चतुर्थः क्षुल्लकदृष्टान्तः—

प्रायः सार्धसहस्रद्वयं वर्षाणि पूर्वं राजगृहनगरे प्रसेनजित नामा नृप आसीत् ।

तीसरा वृक्ष दृष्टान्त—

एक वनमें अनेक आम के वृक्ष थे । वहीं पर बन्दर भी बहुत सँ रहा करते थे । ऋतु के समय जब उन वृक्षोंमें फल लग आते तो वहाँ से निकल ने वाले रास्तागिरों का मन उन फलों को तोड़कर खाने के लिये लालायित होने लगता, परन्तु करें क्या? क्यों कि उन पर बन्दर रहते थे इसलिये रास्तागीर उन फलों को नहीं खा सकते थे । फिर अंतमें वे अपने बुद्धिबल से फल प्राप्त करने का उपाय सोचकर पत्थरों के ढेलों से बन्दरों की तरफ फेंकने लगे । तब वे बन्दर इस स्थितिमें उन वृक्षों के फलों को तोड़ कर उन रास्तागिरों पर प्रहार करनेकी भावनासे फल फेंकने लगे इससे रास्ता गिरो को अनायास ही आम्रफल खानेको मिल गये ॥ ३ ॥

॥ यह तीसरा वृक्षदृष्टान्त हुआ ॥ ३ ॥

चौथा क्षुल्लकदृष्टान्त—

प्रायः ढाईहजार वर्ष पहिले की यह कथा है—जब कि प्रसेनजित नाम

त्रीणु वृक्षदृष्टांत—

एक वनमां आंणानां अनेक वृक्ष उतां. तेना उपर घण्टा वानरा रडेना उता. इण पाकवानी भोसभमां ते वृक्षो पर इणो लागतां, तो तेमने - जेध ने त्यांथी प्रसार थता मुसाइरोनुं मन ते इणोने तोडीने आवा भाटे ललयातुं, उतु, पणु करे शुं ? कारणु के ते वृक्षो उपर वानरा रडेता उता तेथी राहुगीरो ते इणो आशु शकता नडीं. पछी तेमणे पोतानी युद्धिथी इण भेजववानी युद्धि शोधी डाढी. तेओ वानराओने पथ्थर मारवा लाग्यां, त्यारे वानराओ ते वृक्षोनां इणो तोडी तोडीने ते राहुगीरोने मारवानी लावनाथी डेडवा लाग्या. आ रीते राहुगीरोने अनायासे ज केरी आवाने मणी गर्ध.

॥ आ त्रीणुं वृक्षनुं दृष्टांत समाप्त ॥ ३ ॥

चौथुं क्षुल्लकदृष्टांत—

अढी डुन्नर वर्ष पडेलांनी आ कथा छे, ज्यारे प्रसेनजित नामने राज

तस्य बहवः पुत्रा आसन् । तत्रैकः श्रेणिक एव राजलक्षणसम्पन्नः पुत्रस्तस्य संमतः । अत एव राजा तस्मै न किञ्चिदपि ददाति, न च वचसाऽपि लालनं वा क्रियते, तदाऽन्ये मम पुत्रा ईर्ष्यावशात् श्रेणिकं हनिष्यन्तीति । इत्थं विचिन्त्य स मनसैव सावधानस्तद्रक्षणपरायण आसीत् ।

अथैकदा श्रेणिकः पितुः किञ्चिदप्यलभमानः सखेदः स्वभवनात् प्रस्थितः । स च पथिगच्छन् क्रमेण वेन्नातटनामके नगरे गतः । तत्रासौ श्रेणिकः धन्यनामकस्य श्रेष्ठिनो विपणौ समुपविष्टः तेन च श्रेष्ठिना तस्यामेव रात्रौ स्वप्ने सर्वगुण-

का राजा राजगृह नगरमें राज्य शासन करता था । उस के अनेक पुत्र थे । उनमें श्रेणिक नाम का पुत्र ही ऐसा था जो राजलक्षणों से संपन्न होने के कारण उसको अधिक प्रिय था परन्तु यह उसका प्रेम अन्य पुत्रों पर प्रकट नहीं हो पाता, कारण राजा न तो उसके लिये कुछ देता और न कभी प्रेमपूर्वक उससे बोलता ही था ऐसा भी वह इसलिये नहीं करता था कि ऐसा करने से अन्य पुत्रों के हृदयमें दाह होगी और इससे वे इसको मार डालेंगे । फिर भी मनमें यह ध्यान सदा रखता कि श्रेणिक की रक्षामें किसी भी प्रकार छुटि न रहे ।

एकदिन की बात है कि श्रेणिक अपने पिता के पास से कुछ भी जब नहीं पाया तो खेदस्त्रिन्न होकर वह अपने भवन से बाहर जानेके लिये निकल पड़ा । चलते २ वह वेन्नातट नाम के किसी एक नगरमें जा पहुँचा । वहाँ एक धन्य नाम के सेठ रहते थे । इनके यहाँ दुकानदारी का काम

राजगृह नगरमां राज्य करतो હતો. તેને અનેક પુત્ર હતા. તે બધામાં શ્રેણિક નામનો પુત્ર જ એવો હતો કે જે રાજલક્ષણોથી યુક્ત હોવાને કારણે તેને વધારે પ્રિય હતો, પરન્તુ તેનો તે પ્રેમ બીજાં પુત્રોના બાળુવામાં આવતો નહીં, કારણ કે રાજા તેને માટે કંઈ આપતો પણ નહીં અને તેની સાથે પ્રેમથી બોલતો પણ નહીં. એવું પણ તે તેને માટે કરતો ન હતો કે એવું કરવાથી બીજાં પુત્રોના મનમાં ઈર્ષ્યા થાય અને તેઓ તેને મારી નાખે તો પણ તેના મનમાં તે ચિન્તા હંમેશા રહેતી હતી કે શ્રેણિકની રક્ષામાં કોઈ ત્રુટિ રહેવી બેઠ એ નહીં.

એક દિવસની વાત છે કે શ્રેણિકને પોતાના પિતા પાસેથી કંઈ પણ નહીં મળવાથી તે ગમગીન થઈને પોતાના મહેલમાંથી બહાર જવા નીકળી પડ્યો. ચાલતો ચાલતો તે વેન્નાતટ નામનાં કોઈ એક નગરમાં જઈ પહોંચ્યો ત્યાં ધન્ય નામનો એક શેઠ રહેતો હતો. તેની દુકાન ચાલતી હતી. નગરમાં

सम्पन्नः कुमारो निजदुहितरं परिणयन् दृष्टः । तस्य श्रेष्ठिनः श्रेणिकपुण्यप्रभावात् तस्मिन् दिने चिरसंचितप्रचुरद्रव्यविक्रयेण महान् लाभो जातः । म्लेच्छहस्ताश्च महारत्नानि स्वल्पमूल्येन लब्धानि । ततः सोऽचिन्तयत्-अस्य ममान्तिकमुपागतस्यायं पुण्यप्रभावः, यन्मयाऽद्य महती संपत्तिः प्राप्ता । ततः स श्रेष्ठी श्रेणिकस्याकृतिमतिमनोहरामालोक्य स्वचेतसि विचारयति-अयमेवकुमारः स्वप्ने मया रात्रौ दृष्टः । ततोऽसौ श्रेष्ठी कृताञ्जली संपुटः सविनयं श्रेणिकं प्रोक्तवान्-कस्य यूय प्राघूर्णिकाः?!

होता था । नगरमें पहुँचते ही श्रेणिक इनकी दुकान पर जाकर बैठ गया । इस सेठने उसी रात्रिमें एक ऐसा स्वप्न देखा था कि मेरी पुत्री का वैवाहिक संबंध किसी सर्वगुणसंपन्न कुमार के साथ हो गया है । श्रेणिक के पुण्य प्रभाव से उस दिन सेठ को बहुत दिनों का संचित सामान बिक जाने से बड़ा लाभ हुआ, तथा किसी म्लेच्छ के पास से उन्हें उसी दिन बहुमूल्य रत्न भी अल्पमूल्यमें मिल गये, इसलिये उसने विचारा कि-यह सब आज का लाभ मेरे पास आये हुए इस व्यक्ति के ही प्रभाव का फल है । जो लाभ इस दुकानमें आजतक मुझे नहीं प्राप्त हुआ वह इतना अधिक आज मुझे मिला है, इसमें इसके सिवाय और क्या कारण हो सकता है । इस तरह के विचार करने के साथ २ उसने यह भी विचार किया कि यह लड़का आकृति से कितना अधिक सुन्दर है जो देखने वालों के मन को अपनी ओर आकृष्ट कर लेता है । मालूम पड़ता है जिस सुन्दर कुमार को मैंने स्वप्नमें देखा है वह यही है । इस तरह अपनी विचार धारामें मग्न हुए श्रेष्ठीने कुमार को विनयावन्त

पड़ोसीने श्रेष्ठिक तेमनी दुकाने जध ने गेसी गयो. ते शेठ ते ज रात्र ओक ओवुं स्वप्नुं जेयुं हुतुं के भारी पुत्रीने विवाह कोध सर्वगुणसंपन्न कुमारनी साथे थर्ध गयो. श्रेष्ठिकना पून्यप्रभावे ते द्विसे शेठने धणु द्विसथी संग्रह करेद भाद वेथार्ध गयो, तथा कोध म्लेच्छनी पासेथी तेने धणुं कीमती रत्न ओ ज द्विसे थोड़ी कीमतमां भणी गयुं, तेथी तेले भान्युं के आजने आ भयो दास भारी पासे आवेद आ व्यक्तितना प्रभावे ज भज्यो छे. आज सुधी आ दुकानमां जेटवो दास थयो नथी जेटवो दास आजे भने भज्यो छे, तेनुं आ व्यक्ति सिवाय भीनुं शुं कारण संलवी शके ? आ प्रभाणे विचार करतां करतां तेने ओ पणु विचार थयो के आ छोकरे देभावमां जेटवो भयो सुंदर छे जे जेनारना मनने तेना तरक् आकषे छे. जे सुंदर कुमार मे स्वप्नामां जेयो हुतो ते आ कुमार ज छोवो जेधये ओम लागे छे. आ प्रभाणे विचारधारामां दीन थयेद ते शेठ ते कुमारने विनयपूर्वक पूछ्युं

श्रेणिक आह-भवतः । ततः श्रेष्ठी श्रेणिकवचनश्रवणतो वर्षाऽऽहतकदम्बकुसुम-  
मिव पुलकितसमस्तदेहः श्रेणिकं सवहुमानं स्वगृहं नीतवान् । भोजनादिकं सक-  
लमपि तदुचितं तस्मै प्रदत्तम् । तस्य पुण्यप्रभावात् प्रतिदिवसं मम संपत्तिवर्धमाना-  
ऽस्तीति मन्वानः स श्रेष्ठी कतिपयदिनातिक्रमे तस्मै नन्दा नाम्नीं स्वदुहितरं  
प्रदत्तवान् । व्यतीतेषु कतिपयदिवसेषु नन्दा गर्भवती जाता ।

इतश्च प्रसेनजिन्नृपः स्वान्तसमयमुपागतं विचिन्त्य श्रेणिकस्य वार्तां जनपर-  
म्परागतामधिगत्य तदाकारणार्थमुष्ट्रवाहनात् पुरुषान् प्रेषयति । तैश्च श्रेणिकान्तिक

होकर कहा । आप किस के यहां महमान होकर के आये हुए हैं । सुनकर  
कुमार ने प्रत्युत्तर दिया-आप के यहां । अब क्या था कुमार की इस  
बात को सुनकर सेठ का समस्त शरीर ऐसा आनंदोल्लास से पुलकित  
हो उठा जैसा वर्षा के जल से कदम्ब का पुष्प विकसित हो उठता है ।  
वह दुकान से शीघ्र उठा और बड़े आदर के साथ कुमार को अपने घर  
ले गया । वहां उसने उचित भोजनादि सामग्री से कुमार का खूब  
आदर सत्कार किया । कुमार जितने दिनों तक उसके घर रहा, उतने  
दिनों तक सेठ को व्यापार में अच्छा लाभ होता रहा अतः उसको  
अधिक पुण्यशाली मानकर सेठ ने कुछ दिनों के निकल जाने के बाद  
अपनी पुत्री नन्दा का विवाह उस कुमार के साथ कर दिया । विवाह  
हो जाने पर जब कितनेक दिन निकल चुके तो सेठ की पुत्री नन्दा  
गर्भवती हो गई ।

इधर राजगृह नगर में श्रेणिक के निकल जाने के कारण बड़ी खल  
बली मची । प्रसेनजित राजा ने उसी दिन से उसकी तलाश करवानी

“आप ढोने त्यां अतिथि थधने आंव्या छे ?” ते सांलणीने कुमारे जवाब  
आप्यो, “आपने त्यां ” हुवे शुं थयुं ? जेम वर्षाकाणे कदम्बनुं कूल विकसे  
छे तेम कुमारनां आ वथने सांलणीने शेठनुं समस्त शरीर आनंदोल्लासथी  
पुलकित थध गयु. तेओ तरतज दुकानेथी उला थधने कुमारने मानपूर्वक  
पोताने घेर लध गया. त्यां तेमले योग्य लोअनादि सामग्री वडे कुमारने भूष  
आदरसत्कार क्यो, कुमार जेटला हिवस त्यां रह्यो अटला हिवसो सुधी शेठने  
वेपारमां सारे लाल भणतो रह्यो. तेथी तेने धणो पुन्यशाणी मानीने शेठ  
कटलाक हिवसो व्यतीत थया पछी पोतानी पुत्री नन्दाना लग्न तेनी साथे क्यो.  
विवाह क्यो पछी कटलेक हिवसे शेठनी पुत्री नन्दा गर्भवती थध.

हुवे राजगृह नगरमां श्रेणिकना आल्या जवाथी लारे भणलणाट भय्यो  
प्रसेनजित राजाओ ओ ज हिवसथी तेनी शोध कराववा मांडी, धीरे धीरे सभा-



માગત્ય વિજ્ઞાપિતમ્—કુમાર ! શીઘ્રમાગમ્યતામ્, રાજા સત્વરમાકારયતિ । તતઃ શ્રેણિકઃ પિતુર્વચનં શિરોધાર્યં મત્વા સગર્ભીં નન્દાં પૃષ્ઠા રાજપુરુષૈઃ સહ રાજગૃહં નગરં પ્રસ્થિતઃ । તદા શ્રેણિકેન સ્વપરિચયપ્રદાનાર્થં નન્દાનિવાસભવનસ્ય ભિત્તૌ સ્વનામ-ગ્રામાદિકં લિખિતમ્ । નિર્ગતે શ્રેણિકે માસત્રયે વ્યતીતે સતિ નન્દાયાશ્ચ દેવલોક-ચ્યુતમહાનુભાવગર્ભસત્ત્વ પ્રભાવાદેવં દોહદઃ સમુત્પન્નઃ—અહં ગજોપરિ સમાસીના દીનેભ્યઃ પ્રચુરં દ્રવ્યદાનં દદામિ, અમારિ ઘોષણાં કારયિત્વા—ચાભયદાનં દદામીતિ ।

પ્રારંભ કર દી । ધીરે ૨ પતા ચલા કિ શ્રેણિક વેજ્ઞાતટ નગર મેં ધન્યશ્રેષ્ઠી કે ઘર પર હૈ । બડે આનંદ કે સાથ વહ ઉસકા જામાતા બનકર અપના સમય વ્યતીત કર રહા હૈ । એક સમય કી વાત હૈ કિ પ્રસેનજિત રાજા કો જબ અપના અન્ત સમય આ ચુકા હૈ એસા જ્ઞાત હુઆ તો ઉસને શ્રેણિક કો બુલારને કે લિયે અપને યહાં કે ઉષ્ટ્રવાહકોં કો ઉસકે પાસ મેજા । વે વહાં પહુંચકર કહને લગે—કુમાર ! આપ શીઘ્ર ઘર ચલિયે, રાજા ને આપ કો બહુત જલ્દી બુલાયા હૈ । ઉન ઉષ્ટ્રવાહકોં કી હસ વાત કો સુનકર એવં પિતા કે આજ્ઞારૂપ વચનોં કો શિરોધાર્ય માનકર શ્રેણિકને સગર્ભાં નંદા કો વહીં પર છોડકર ઉન લોગોં કે સાથ ૨ વહાં સે રાજગૃહ કી તરફ પ્રસ્થાન કર દિયા । શ્રેણિક જિસ સમય વહાં સે પ્રસ્થિત હુઆ થા ઉસ સમય ઉસને અપના ગ્રામ આદિ કા સમય પરિચય નંદા કે નિવાસ ભવન કી ભિત્તિ પર લિખ દિયા થા । શ્રેણિક કો ગયે હુએ જબ ત્રીન માસ વ્યતીત હો ચુકે તબ દેવલોક સે વ્યુત હોકર ગર્ભ મેં આયે હુએ મહાપ્રભાવશાલી બાલક કે પ્રભાવ સે નંદા કો દોહદ ઉત્પન્ન

ચાર મળ્યા કે શ્રેણિક વેજ્ઞાતટ નગરમાં ધન્ય શેઠને ઘેર રહે છે, અને તેમનો જમાઈ થઈને ઘણા આનંદમાં પોતાનો સમય વ્યતીત કરે છે. એક દિવસની વાત છે કે જ્યારે પ્રસેનજિત રાજાને પોતાનો અન્તકાળ નજીક છે તેમ લાગ્યું, ત્યારે તેમણે શ્રેણિકને બોલાવવા માટે પોતાને ત્યાંથી ઊંટવાહકોને તેની પાસે મોકલ્યા. તેમણે ત્યાં જઈને કહ્યું, “કુમાર ! આપ જલદી ઘેર આવો, રાજાએ આપને ઘણા જલદી બોલાવ્યા છે.” તે ઊંટવાહકોની આ વાત સાંભળીને અને પિતાની આજ્ઞાને માથે ચડાવીને, શ્રેણિક સગર્ભાં નંદાને ત્યાં જ મૂકીને તે લોકોની સાથે જ રાજગૃહ જવા ઉપડ્યો. શ્રેણિક જ્યારે ત્યાંથી રવાના થયો ત્યારે તેણે પોતાના ગામ આદિનો ખર્ચો પરિચય નંદાના નિવાસસ્થાનની દિવાલ પર લખી દીધો હતો. જ્યારે શ્રેણિકને ત્યાંથી ગયે ત્રણ માસ પસાર થયા ત્યારે દેવલોક-માંથી ચ્યવીને ગર્ભમાં આવેલ મહાપ્રભાવશાળી બાળકને પ્રભાવે નંદાને એવો દોહદ ઉત્પન્ન થયો કે હું હોથી પર સવાર થઈને ગરીબ લોકોને પુષ્કળ દાન

नन्दायाः पिता तदोहदं विज्ञाय वेन्नातटनगराधीशस्य राज्ञोऽनुमतिमादाय दोहदं पुरितवान् । कालक्रमेणप्रसवसमये समागते तस्याः प्रातः सूर्यमण्डलमिव दिशः प्रकाशयन् पुत्रः समुत्पन्नः । द्वादशे दिवसे धन्यश्रेष्ठिना दोहदानुसारेण 'अभयकुमार' इति तन्नामकृतम् । अभयकुमारोऽपि नन्दनवने कल्पतरुरिवसुखेन वर्धते । तेन यथा समयं सकलाऽपि कला गृहीता ।

हुआ कि मैं हाथी के ऊपर बैठकर दीनजनों को प्रचुर द्रव्य दान करूँ, और अमारि घोषणा द्वारा जीवों को अभयदान दूँ । नन्दा के पिता ने अपनी पुत्री के इस दोहद को जानकर उसको पूर्ति की आज्ञा वेन्नातट नगर के राजा से लेकर दान पुण्यपूर्वक अमारि घोषणा द्वारा जीवों को अभयदान देकर अपनी पुत्री के दोहद की पूर्ति की । नन्दा का धीरे २ गर्भ का समय व्यतीत होने लगा । कालक्रम से उसके नौ मास साढ़े सात रात्रि बीतने पर दशों दिशाओं को प्रकाशित करने वाले प्रातः कालिक सूर्यमण्डल के समान अपनी प्रभा से दिशाओं को प्रकाशित करते हुए एक महातेजस्वी पुत्र का जन्म हुआ । बारह दिन के बाद धन्य श्रेष्ठि ने दोहद के अनुसार अर्थात् गर्भ में अभयदानका भावना होनेसे उस नवीन बालक का नाम अभयकुमार रखा । नन्दनवन में जिस तरह कल्पवृक्ष वृद्धिगत होता है उसी प्रकार अभयकुमार भी अपने नाना के यहां सुखपूर्वक बढ़ने लगा । क्रमशः जैसा २ यह कुमार बढ़ता गया वैसे २ वह अनेकविध कलाएँ भी सीखता गया । इस तरह धीरे धीरे २ सकलकलाओं में वह पारंगत हो गया ।

आपुं अने अमारिघोषणा द्वारा जिवोने अलयदान आपुं नन्दाना पिताये पोतानी पुत्रीना आ दोहदने जाणीने ते पूरे करवा माटे वेन्नातट नगरना राजनी आज्ञा लधने दान पुन्य सहित अमारिघोषणा द्वारा जिवोने अलयदान दधने पोतानी पुत्रीना दोहद पूरे कर्यो । नन्दाना गर्भने समय धीमे धीमे व्यतीत थवा लाज्यो । कालक्रमे नव मास अने साडासात रात्रि पसार थतां तेणे हसे दिशायेने प्रकाशित करनार प्रातःकाणना सूर्यमंडल जेवां, पोताना तेजथी दिशायेने प्रकाशित करता अेक महातेजस्वी पुत्रने जन्म आय्यो । बारहिवस पछी धन्यशेठे अलयदानना दोहद अनुसार ते नवागत आणकनुं नाम अलयकुमार आपुं । नन्दनवनमां जेम कल्पवृक्ष वधे छे तेम अलयकुमार पण पोताना दोहदने त्यां सुखपूर्वक मोटो थवा लाज्यो, जेम जेम ते मोटो थतो गयो तेम तेम ते अनेक प्रकारनी कणाओ पण सीखतो गयो । आ रीते धीरे धीरे ते सधणी कणाओमां पारंगत थयो ।

स चैकदा मातरं पृष्ठवान्-मातः ! पिता मम कोऽस्ति? स च कुत्र वर्तते ?। अभयकुमारस्य वचः श्रुत्वा जननी मूलतः समारभ्य सर्वं वृत्तं तस्मै कथयित्वा श्रेणिक लिखितं परिचयं भित्तौ दर्शयतिस्म। ततो मातुर्वचनात् भित्तिलिखित पठनाच्च पितुः परिचयं ज्ञात्वा स मातरमब्रवीत्-राजगृहेऽस्माभिर्गन्तव्यम्। एवं विचार्य तौ धन्यश्रेष्ठिनामापृच्छच्च राजगृहनगरसमीपे समागतौ। अभयकुमारस्तत्र बहिस्थाने मातरं निवेश्य पितुर्दर्शनार्थं राजगृहनगरं प्रविष्टः।

तत्र पुरः प्रवेश एव निर्जल कूपतटे समन्तादवस्थितं लोकसमूहं दृष्टवान्।

एक दिन की बात है कि अभयकुमार ने अपनी माता से पूछा कि माताजी-यह तो बताओ कि मेरा पिता कौन है और वे कहां रहते हैं। पुत्र की इस बात से प्रभावित होकर उसकी माता नन्दा ने उससे पिता का वृत्तान्त आद्योपान्त उसको सुना दिया, तथा उनका भित्तिपर लिखित पता भी उसको बतला दिया माता से कहने से तथा भित्तिपर लिखे हुए परिचय के देखने से अभयकुमार ने जब अपने पिता का परिचय पा लिया तो वह बाद में अपनी मां से कहने लगा-माता! चलो-हम तुम दोनों राजगृहनगर चले। विचार निश्चित हो चुकने के बाद वे दोनों धन्य श्रेष्ठी को पूछकर वहां से चले, और चलते २ राजगृह के पास आगये। अभयकुमार बाहिर के बगीचे में माता को रखकर स्वयं पितासे मिलने के लिये राजगृह नगर में जाने लगा। वहां उसने लोगों का एक समूह देखा जो निर्जल कुए को सब तरफ से घेर कर खड़ा था।

એક દિવસ અભયકુમારે તેની માતાને પૂછ્યું. “ માતાજી ! એ તો અતાવો કે મારા પિતાજી કોણ છે અને ક્યાં રહે છે ? ” પુત્રની આ વાતથી પ્રભાવિત થઈને તેની માતા નન્દાએ આદિથી અન્ત સુધીનું તેના પિતાનું વૃત્તાંત તેને સંભળાવ્યું, અને દિવાલ પર લખેલ તેમનું ઠેકાણું પણ તેને બતાવ્યું. માતાના કહેવાથી તથા દિવાલ પર લખેલ પરિચય જોઈને જ્યારે અભયકુમારને તેના પિતાનો પરિચય મળ્યો ત્યારે તે તેની માને કહેવા લાગ્યો, “ માતા ! ચાલો, આપણે જાને રાજગૃહ નગરમાં જઈએ. ” ચોક્કસ નિર્ણય થતાં ધન્ય શ્રેષ્ઠીને પૂછીને તેઓ જાને રાજગૃહ જવાને ઊપડ્યાં, અને ચાલતાં ચાલતાં રાજગૃહની પાસે આવી ગયાં. અભયકુમાર બહાર બગીચામાં માતાને મૂકીને પોતે પિતાને મળવા માટે રાજગૃહ નગરમાં જવા લાગ્યો. ત્યાં તેણે કોકોનું એક ટોળું જોયું જે એક નિર્જળ કુવાને ચારે તરફથી ઘેરીને

અભયકુમારસ્તત્ર ગત્વા લોકાન્ પૃચ્છતિ—કિમિત્યેષ લોકસમૂહઃ ? । જનૈરુક્તમ્—  
અસ્ય મધ્યે રાજોઽઙ્ગુલિમુદ્રિકાવર્તતે, યઃ સ્વલુ તદેસ્થિત એવ સ્વહસ્તેન ગૃહ્ણતિ, તસ્મૈ  
રાજા મહત્ પારિતોષિકં પ્રદાસ્યતિ । તતોઽસૌ કુમારો રાજપુરુષાન્ પૃચ્છતિ-કિમિત્યેષ  
લોક સમૂહો વર્તતે । રાજપુરુષૈરપિ તથૈવ કથિતમ્ । અભયકુમારો રાજપુરુષાન્ પ્રાહ  
—અહં કૂપાદ્ બહિઃ સ્થિત એવ તદઙ્ગુલ્યાભરણં સમુદ્ધરામિ યદિ રાજા સ્વપ્રતિજ્ઞાં  
પાલયેત્ । રાજપુરુષૈરુક્તમ્—હે ભદ્ર ! ઉદ્ધ્રિયતાં તદઙ્ગુલીયકમ્ રાજા સ્વપ્રતિજ્ઞમવશ્યં  
પાલયિષ્યતિ । અભયકુમારસ્તદઙ્ગુલીયકં સમ્યક્નિરીક્ષ્ય તદુપરિ અશુષ્કં ગોમયં  
પાતયતિ । અશુષ્કગોમયાઽઽહતં સત્ તદઙ્ગુલીયકં તત્ર સંલગ્નમ્ । તતસ્તદુપરિ

અભયકુમાર શીઘ્ર હી વહાં પહુંચા ઓર લોગોં સે પૂછને લગા  
—યહ લોગોં કા સમુદાય યહાં કયોં એકત્રિત હુઆ હૈ । સુનકર  
લોગોં ને ઉત્તર દિયા—ઈસમેં રાજા કી અંગૂઠી ગિરગઈ હૈ, જો વ્યક્તિ  
ઉસકો ડપર સ્વડે ૨ હી અપને હાથ સે નિકાલ દેગા—ઉસ કો  
રાજા બડી ભારી ઇનામ પ્રદાન કરેગા । લોગોં કી ઇસ વાત કા  
સંવાદ પાને કે લિયે અભયકુમાર ને વહાં સ્વડે હુએ રાજપુરુષોં સે પૂછા  
તો વહી પહિલી વાલી વાત ઉન્હોં ને બી ઉસ સે કહી । સુનકર અભય-  
કુમાર ને રાજપુરુષોં સે કહા—મેં કુંએ સે રાજા કી અંગૂઠી કો બાહિર સ્વડે  
રહ કર હી નિકાલ સકતા હૂં, યદિ વે અપની પ્રતિજ્ઞા કે પક્કે હોં તો ।  
અભયકુમાર કી ઇસ વાત સે પ્રસન્ન હોકર ઉન્હોં ને કહા—ભદ્ર ! આપ તો  
અપના કામ કીજિયે, રાજા અપની પ્રતિજ્ઞા કા પાલન અવશ્ય કરેગા ।  
ઈસ વાત કો સુનકર અભયકુમાર ને કુંએ મેં અંગૂઠી કિસ ઓર પડી હૈ  
યહ અચ્છી તરહ દેસ્યા, પશ્ચાત્ ઉસ કે ડપર ઉસને કહીં સે લાકર ગોવર

ઉભું હેતું. અભયકુમાર તરત જ ત્યાં પહોંચ્યો, અને ઢોડોને પૂછવા લાગ્યો કે  
“ઢોડોનું ટોળું અહીં શા માટે એકઠું થયું છે ? ઢોડોએ જવાબ આપ્યો,  
“આ કુવામાં રાજાની વીંટી પડી ગઈ છે જે વ્યક્તિ ઉપર ઉભા ઉભા જ પોતાના  
હાથે તેને બહાર કાઢશે, તેને રાજા મોટું ઇનામ આપશે.” ઢોડોની આ વાતની  
ખાતરી કરવા માટે અભયકુમારે ત્યાં ઉભેલા રાજપુરુષોને પૂછ્યું તો તેમણે પણ  
એ જ પ્રમાણે કહ્યું, તે સાંભળીને અભયકુમારે રાજપુરુષોને કહ્યું, “જો રાજા  
પોતાની પ્રતિજ્ઞામાં દેઢ હોય તો હું કુવામાંથી રાજાની વીંટી બહાર ઉભો રહીને  
જ કાઢી શકું તેમ છું.” અભયકુમારની આ વાતથી પ્રસન્ન થઈને તેમણે કહ્યું,  
“ભદ્ર ! આપ આપનું કામ પૂરું કરો. રાજા પોતાની પ્રતિજ્ઞાનું અવશ્ય  
પાલન કરશે.” આ વાતને સાંભળીને અભયકુમારે કુવામાં કંઈ બાબતે વીંટી  
પડી છે તે ધ્યાનપૂર્વક જોયું, પછી તેણે કોઈ જગ્યાએથી છાણ લાવીને તેના

शुष्कतृणानि पातितानि । अथ कथंचित् तत्राग्नि संयोगेकृते गोमयः शुष्को जातः । एवं गोमये शुष्के सति कूपान्तरात् पानीयमानीय तेन कुमारेण स कूपः संभृतः । जलपरिपूर्णस्य कूपस्योपरि तदङ्गुलीयक सहितः शुष्कगोमयस्तरति । ततः कूप-  
तटस्थ एवाभयकुमारस्तदङ्गुलीयकं गृहीतवान् । तदा लोका आनन्दकोलाहलं कुर्वन्ति । राजपुरुषा राज्ञः समीपमागत्य निवेदयन्ति—स्वामिन् ! एकेन बालकेनाङ्गुलीयकं कूपात् समुद्धृतम्, न चासौ बालकः कूपे प्रविष्टः । ततो राज्ञा सोऽभयकुमारो राजपुरुषैराकारितः । अभयकुमारस्तदङ्गुलीयकं गृहीत्वा राज्ञः समीपमागत्य तदङ्गुलीयकं राज्ञे समर्पितम् । राजा तं पृच्छति — कस्त्वम् ? । अभयकुमारेणोक्तम्—

डाल दिया। गोबर में वह अंगूठी चिपक गई। बादमें उसने उस गोबर के ऊपर शुष्कतृणों को डालकर किसी तरह वहां अग्नि प्रज्वलित की। इस तरह गोबर के सूक जाने पर दूसरे कुए से पानी लाकर उस कुए में भर दिया गया। पानी भी इतना भरा गया कि वह कुए के कंठ तक आगया उसमें अंगूठी युक्त वह शुष्क गोमय भी ऊपर तिर आया। अभयकुमार ने उसको कुए पर खड़े रहकर ही उठा लिया। इस तरह जब उसके पास राजा की अंगूठी आगई तो लोगों ने यह देखकर बड़ा भारी आनंद कोलाहल करना प्रारंभ किया। राजा को जब राजापुरुषों ने जाकर यह समाचार सुनाया तो उसने प्रसन्न होकर बालक अभयकुमार को अपने पास बुलवाया। राजपुरुषों ने आकर अभयकुमार से कहा कि आप को राजा साहेब बुला रहे हैं। अभयकुमार उनके साथ अंगूठी को लेकर राजा के समीप आया, और वह अंगूठी बड़े आनंद के साथ राजा को दे दी। राजा ने हर्षित होते हुए उस से पूछा—तुम कौन हो। अभयकु-

ऊपर नाभ्यु, छाणुमां ते वींटी चोटी गध. त्थार भाद तेणे ते छाणु ऊपर सूकुं धास नाभीने डोई पणु रीते त्यां अग्नि सणगाव्यो. आ रीते छाणु सूकाई जतां भीज कुवामांथी पाणी लावीने ते कुवाने पाणीथी लरी दीधो. ओटलुं पाणी लयुं डे ते कुवो कांठा सुधी लराई गयो. वींटी वाणुं ते सूकुं छाणु पणु पाणी पर तरवा लायु. अलयकुमार डे कुवा पर उला रहीने ज पोताना हाथे ते उपाडी दीधुं. आ रीते ज्यारे तेनी पासे राननी वींटी आवी त्यारे दोडोये ते जेईने आनंदसूयक ध्वनि क्यो. रानने राजपुरुषोये जेईने समाचार संलणाव्या त्यारे तेणे प्रसन्न थई ने जातक अलयकुमारने पोतानी पासे ओलाव्यो. राजपुरुषोये आवीने अलयकुमारने कहुं डे “आपने रान साडेण ओलावे छे.” अलयकुमार तेमनी साथे वींटी लईने राननी पासे गयो, अने ते वींटी धणु आनंद साथे रानने आवी. रानये भुशी थईने तेने पूछ्युं. “तमे डोणुछे ?”



સ્વયમેવ પરીક્ષ્યતામ્ । એવમુક્તે સતિ રાજા તલ્લક્ષણાદિનાઽસૌ કુમારઃ સ્વપુત્રત્વેન જ્ઞાતઃ । તતોઽસૌ કુમારો રાજાપૃષ્ઠઃ સન્ પ્રાક્તનવૃત્તાન્તં કથિતવાન્ । અભયકુમારસ્ય વચઃ શ્રુત્વા રાજા પ્રમુદિતો જાતઃ । તતો રાજા પ્રાહ-વત્સ ! તવ જનની કુત્ર વર્તતે । અભયકુમારઃ પ્રાહ=અસ્ય નગરસ્ય બહિરુદ્યાને, તતો રાજા સપરિવારસ્તસ્યાઃ સંમુખે ગતઃ । અભયકુમારશ્ચાગ્રે ગત્વા સર્વં વૃત્તં માત્રે નિવેદયતિ સ્મ । અત્રાન્તરે રાજા સમાગતઃ । તચ્ચરણયોર્નન્દા પ્રણમતિ । તતો રાજા ભૂષણાદિપ્રદાનેન સંમાનિતા સા સપુત્રા વિપુલાર્દ્રા નગરં પ્રવેશિતા । અભયકુમારશ્ચામાત્યપદે સ્થાપિતઃ ॥

॥ ઇતિ ચતુર્થઃ કુલકટકાન્તઃ ॥ ૪ ॥

માર ને કહા આપ હસ કી સ્વયં જાચ કીજિયે । રાજા ને ઉસકે લક્ષણ આદિ દેખકર યહ નિશ્ચય કર લિયા કિ યહ કુમાર મેરા હી નિજપુત્ર હૈ । રાજા ને ઉસ સે સબ પહિલે કી વાતે પૂછી તો ઉસને સબ અપની પહિલે કી વાતે બતલા દીં । હસ તરહ અભયકુમાર કે વચનોં કો સુનકર રાજા કો બડી ભારી પ્રસન્નતા હુઈ । ઉસને કહા બેટા ! તુમ્હારી માતા કહાં હૈ । અભયકુમાર ને કહા-હસ નગર કે બગીચે મેં હૈ । સુનતે હી રાજા સપરિવાર ઉસ કે સંમુખ ગયા । અભયકુમાર માતા સે ઉનકે જાને સે પહિલે પહિલે હી પહુંચકર સબ સમાચાર કહ રહા થા કિ હતને મેં રાજા વહાં સપરિવાર આ પહુંચા । પતિ કો આયા હુઆ દેખકર નંદા ને ઉનકે ચરણોં મેં નમસ્કાર કિયા । રાજા ને ભૂષણ આદિ પ્રદાન કર ઉસકા બહુત અચ્છા સ્વાગત સત્કાર કિયા । બાદ મેં બડે ઠાઠ બાટ કે સાથ ઉસકા પુત્રસહિત નગર મેં પ્રવેશ કરાયા ગયા । રાજા અભયકુમાર કો પ્રધાન પદ દેકર

અભયકુમારે કહ્યું, “આપ જાતે જ તેની તપાસ કરો.” રાજાએ તેનાં લક્ષણ આદિ જોઈને એવો નિર્ણય કર્યો કે આ કુમાર મારો પોતાનો જ પુત્ર છે. રાજાએ પહેલાંની બધી વાતો તેને પૂછી તો તેણે પોતાની પહેલાંની બધી વાતો બતાવી દીધી આ પ્રમાણે અભયકુમારનાં વચનો સાંભળીને રાજા ઘણો સંતોષ પામ્યો. તેણે કહ્યું, “બેટા ! તારી માતા ક્યાં છે ?” અભયકુમારે કહ્યું, “આ નગરની બહાર આવેલ બગીચામાં છે.” તે સાંભળતા જ રાજા સપરિવાર તેની પાસે ગયો. તેમના ત્યાં પહોંચતાં પહેલાં જ અભયકુમાર તેની માતાને બધા સમાચાર આપતો હતો એવામાં રાજા સપરિવાર ત્યાં આવી પહોંચ્યા પતિને આવેલ જોઈને નંદાએ તેમને ચરણે પડીને નમન કર્યું, રાજાએ આભૂષણો આદિ આપીને તેનું ઘણું જ સ્વાગત કર્યું. પછી મોટા ઠાઠ માઠથી પુત્ર સહિત તેનો નગરમાં પ્રવેશ કરાવવામાં આવ્યો. રાજા અભયકુમારને પ્રધાન પદ



અથ પશ્ચમઃ પટદૃષ્ટાન્તઃ—

ઉભૌ પુરુષૌ ક્વચિજ્જલાશયે સૈઘ્વ ગત્વા સ્નાતું પ્રવૃત્તૌ । તૈત્રૈકસ્યોર્ણમયં  
પ્રાવરણમાસીત્ દ્વિતીયસ્ય શરીરાચ્છાદનવસ્ત્રં કાર્પાસિકસૂત્રમયમ્ । કમ્બલધરઃ  
પુરુષસ્તદા સ્નાત્વા સત્વર મન્યસ્ય કાર્પાસિકસૂત્રમયં વસ્ત્રમાદાય ચલિતઃ । તદા  
દ્વિતીયસ્તમાહ્વયન્ વદતિ—અયિ ! इदं भवदीयं वस्त्रमत्रवर्त्तते त्वया मम वस्त्रं गृहीतम्  
अतस्तन्मे देहि इत्युक्तोऽसौ तद्वचनमशृण्वन्नेव गतः । ततो ग्रामे समागत्य विवद-  
मानौ तौ पुरुषौ न्यायार्थं राजकुलं गतवन्तौ । तत्र न्यायाध्यक्ष निदेशेन कश्चिद्रा-  
वडे उत्साह और हर्ष के साथ अपना समय व्यतीत करने लगा ४ ।

॥ यह चौथा क्षुल्लकदृष्टान्त हुआ ॥ ४ ॥

પાંચવાં પટદૃષ્ટાન્ત—

एक समय की बात है कि कोई दो पुरुष किसी जलाशय में साथ २  
स्नान करने के लिये उतरे । एक के पास ऊनी कपड़े थे और दूसरे के  
पास सूती । जिस के पास ऊनी कपड़े थे वह जब स्नानकर जलाशय से  
बाहर निकला तो उसने दुसरे व्यक्ति के वे सूती कपड़े उठा लिये और  
लेकर चला गया । उसने उसको पुकारा कि भाई । तुम्हारे ऊनी कपड़े तो  
यहां रक्खे हैं मेरे सूती कपड़े तुम ले जा रहे हो सो मुझे दे दो । परन्तु  
उस की बात उसने नहीं सुनी और आगे चला गया । वह भी नहा  
धोकर उसके साथ ही चला । परस्पर में दोनों की बातचीत होने लगी ।

આપીને ઘણા હર્ષ તથા ઉત્સાહપૂર્વક પોતાનો સમય વ્યતીત કરવા લાગ્યો.

॥ આ ચોથું ક્ષુલ્લકદૃષ્ટાન્ત સમાપ્ત ॥ ૪ ॥

પાંચમું પટદૃષ્ટાન્ત—

એક સમયની વાત છે. કેઈ બે પુરુષ કેઈ જળાશયમાં એકી સાથે સ્નાન  
કરવાને માટે ઉતર્યાં. એકની પાસે ગરમ કપડાં હતાં અને બીજાની પાસે સૂત-  
રાઉ કપડાં હતાં. જેની પાસે ગરમ કપડાં હતાં તે જ્યારે જળાશયમાંથી સ્નાન  
કરીને બહાર નીકળ્યો ત્યારે તેણે બીજા માણસના સૂતરાઉ કપડાં ઉપાડી  
લઈને ચાલતો થયો. બીજા માણસે જ્યારે આ જોયું ત્યારે તેને મોટા  
અવાજે કહ્યું “ભાઈ! તમારાં ગરમ કપડાં તો અહીં પડ્યાં છે. મારાં સૂતરાઉ  
કપડાં તમે લઈ જાઓ છો તો મને તે આપી દો ” પણ તેણે તેની તે વાત  
સાંભળી જ નહીં અને તે આગળ ચાલ્યો ગયો. તે પણ નાહી ધોઈને તેની  
પાછળ પડ્યો; અને તેની સાથે થઈ ગયો. બન્ને વચ્ચે ચર્ચા થવા લાગી. વાત

जपुरुषस्तयोर्द्वयोरपि शिरः केशान् कङ्कतिकया संमार्जयति । केशानां संमार्जने कृते सति ऊर्णामयपट स्वामिनः केशेभ्य ऊर्णावयवा विनिर्गताः, ततो ज्ञातम् अयमेव कम्बलस्य स्वामीति द्वितीयो निगृहीतः । स न्यायाध्यक्षेण समर्पितं स्वकीयं सूत्र-मयं वस्त्रं गृहीत्वा प्रथमो गतः ।

॥ इति पञ्चमः पटदृष्टान्तः ॥ ५ ॥

अथ षष्ठः सरटदृष्टान्तः—

कश्चित् पुरुषः पुरीषोत्सर्गं कर्तुं वने प्रविष्टः । तत्र क्वचिद् विलमदृष्ट्वा तत्स-मीपे मलत्यागार्थमुपविष्टः तदा सरटो विले प्रविशन् स्वपुच्छेन तस्य गुदं स्पृष्टवान् ।

बात करते करते यहां तक बात बन गई कि उन दोनों को अपना न्याय प्राप्त करने के लिये राजकूल तक में जाना पडा । न्यायाध्यक्ष ने इन दोनों की बातें सुन कर अपने बुद्धिबल से कचहरी के किसी सिपाही को आदेश दिया कि तुम इन दोनों के केशों को कंधी से उँछो । उसने वैसा ही किया । जिसके उनके वस्त्र थे उसके केशों में से उन के अवयव निकले । इससे यह बातें जानने में देर नहीं लगी कि यह ऊनी वस्त्रों का मालिक है, सूती का नहीं । इस तरह न्यायाध्यक्ष द्वारा अपने सूती वस्त्र प्राप्त कर वह चला गया ॥ ५ ॥

॥ यह पांचवां पटदृष्टान्त हुआ ॥ ५ ॥

छठा सरटदृष्टान्त—

कोई पुरुष मलत्याग करने के लिये जंगल में गया । वहाँ वह पुरुष किसी स्थान पर मलत्याग करने के निमित्त बैठा । जहाँ वह बैठा था, उसी के समीप में गिरगिट की बिल थी जिस को उस ने नहीं देखा । उसी

ओटले सुधी आगण वधी के ते जन्नेने न्याय कराववा भाटे राजसलामांजपुं पड्युं. न्यायाधीशे ते जन्नेनी बात सांलणीने पोताना बुद्धिजणथी तेना निकाल क्यो. तेमणे कचेरीना ओक सिपाईने आशा करी के तु आ जन्ने भाणुसना वाजने कांसकी वडे ओण. तेणे ते प्रभाणे ज क्युं. तेथी जेनां गरम वस्त्रो हुतां तेना वाणमांथी उनना देसा नीकल्यां. तेथी ते बात समजता वार न लागी के ते गरम वस्त्रोना मालिक छे, सूतराउने नही. आ प्रभाणे न्यायाधीश द्वारा पोतानां सूतराउ कपडां मेणवीने ते आयेो गयेो. ॥ ५ ॥

॥ आ पांचमुं पट दृष्टांत साभास ॥ ५ ॥

छठुं सरट दृष्टांत—

कोई पुरुष आडे करवा भाटे जंगलमां गयेो. त्यां कोई स्थाने ते आडे करवा भाटे जेठो. ते न्यां जेठो हुतो तेनी ज पासो काथीं डानुं ओक दर डपुं,

एतावतैव तस्यैवं-शङ्का समुत्पन्ना-गुदमार्गेण ममोदरे सरटः प्रविष्टः । ततो  
गृहं गतोऽसौ तच्चिन्तया रोगीव प्रतिदिवसं दुर्बलो जातः । बहुशश्चिकित्साकृता किंतु  
सर्वाऽपि निष्फलैव जाता । एकदा केनचिद् वैद्येन सम्यक् परीक्ष्य तर्कबुद्ध्या  
ज्ञातम् केवलं भ्रमोऽस्य वर्तते अन्यत् किमपि नास्ति, इत्येवं विदित्वा वैद्योऽब्रवीत्-  
तव रोगं निवर्तयिष्यामि किंतु शतं रूप्यकाणि त्वत्तो ग्रहीष्यामि । ततो वैद्यवचनं  
तेन स्वीकृतम् । ततोऽसौ वैद्यस्तस्मै विरेचकौषधं दत्त्वा मृन्मयभाण्डं लाक्षारसेन

સમય બિલ મેં પ્રવેશ કરતે હુણ ગિરગિટ કી પૂંછ કા ઉસ કે ગુદ પ્રદેશ મેં  
સ્પર્શ હો ગયા । ગિરગિટ કી પૂંછ કે સ્પર્શ હો જાને સે ઉસ પુરુષ કે  
મન મેં યહ આશંકા હુઈ કિ યહ ગિરગટ ગુદ માર્ગ સે મેરે ઉદર મેં પ્રવિષ્ટ  
હો ગઈ હૈ એસી આશંકા સે યુક્ત વહ પુરુષ અપને ઘર ગયા, પરન્તુ 'મેરે પેટ  
મેં ગિરગિટ ઘુસ ગઈ હૈ' ઇસ ચિન્તા સે વહ રોગી કે સમાન પ્રતિદિન  
દુર્બલ હોને લગા । ઉસને અનેક પ્રકાર કી ચિકિત્સાયેં કરાવીં, કિન્તુ સભી  
નિષ્ફલ હો ગયીં । એક સમય એક વૈદ્યને ઉસકી અચ્છી તરહ પરીક્ષા કર  
અપની તર્ક બુદ્ધિ સે ઉસ કે રોગ કે નિદાન કો જાન લિયા ઓર ઉસ કો  
યહ બાત અચ્છી તરહ સમજ્ઞ મેં આ ગયી કિ ઇસ કો કોઈ રોગ નહીં હૈ,  
માત્ર રોગ કા ભ્રમ હૈ । ફિર ઉસ વૈદ્યને ઉસ પુરુષ સે કહા-મૈં તુમ્હારા  
રોગ દૂર કર ડુંગા, પરન્તુ તુમ્હેં સૌ રૂપયે દેને હોંગે । વૈદ્ય કી બાત ઉસ  
પુરુષ ને માન લી । તવ વૈદ્ય ને ઉસ કો વિરેચક ઔષધ (જુલાબ) દિયા  
ઓર એક મિટ્ટા કે પાત્ર કો લાક્ષા રસ સે ભરકર ઉસમેં એક મરી હુણ ગિર-

જે તેણે જોયું ન હતું. ત્યારે દરમાં પ્રવેશ કરતા કાર્થીડાની પૂંછડીને  
તેની શુદ્ધતા ભાગે સ્પર્શ થઈ ગયો. કાર્થીડાની પૂંછડીને સ્પર્શ થતાં તે  
પુરુષના મનમાં એવો સંદેહ થયો કે તે કાર્થીડો શુદ્ધ ભાગે મારા ઉદરમાં  
પેસી ગયો છે. આ સંદેહવાળો તે પુરુષ પોતાને ઘેર ગયો, પણ “મારા પેટમાં  
કાર્થીડો પેસી ગયો છે” આ ચિન્તાને લીધે તે રોગીની જેમ દિવસે દિવસે  
હબળો પડવા લાગ્યો. તેણે ઘણા પ્રકારની ચિકિત્સા કરાવી પણ તે બધી નિષ્ફળ  
ગઈ એક દિવસ એક વૈદ્યે તેની સારી રીતે પરીક્ષા કરીને પોતાની તર્કશક્તિથી  
તેના રોગનું નિદાન જાણી લીધું, અને તેની એ વાત સ્પષ્ટ રીતે સમજાઈ ગઈ  
કે તેને કોઈ રોગ જ નથી, માત્ર રોગનો ભ્રમ જ છે. પછી તે વૈદ્યે તેને કહ્યું,  
“હું તમારો રોગ મટાડીશ, પણ તમારે મને સો રૂપિયા આપવા પડશે.” તેણે  
વૈદ્યની વાતનો સ્વીકાર કર્યો. ત્યારે વૈદ્યે તેને જુલાબ આપ્યો, અને એક માટીના  
કામને રાખથી ભરીને તેમાં એક મરેલો કાર્થીડો મૂકીને તેને કહ્યું કે તમારે

भृत्वा तत्र-मृतं सरटं प्रक्षिप्य वदति त्वयाऽस्मिन् भाण्डे पुरीपोत्सर्गः कर्तव्यः । तेन तथाकृते सति वैद्यस्तद्भाण्डे सरटं दर्शयन् प्राह—पश्य त्वदुदरादयं सरटो निर्गतः । तदैव तस्य शङ्काऽपगता, अचिरेणैव स नीरोगः संजातः ।

॥ इति षष्ठः सरटदृष्टान्तः ॥ ६ ॥

अथ काकदृष्टान्तः—

वेन्नातटे नगरे रिपुमर्दननामको राजा धीरमतिनामकं सचिवं बुद्धिपरीक्षार्थं पृष्ठवान्—अस्मिन् ग्रामे कियन्तः काकाः ? इति । एवं पृष्ठः स प्राह—पण्डित-सहस्राणि काका अत्र ग्रामे निवसन्ति । राज्ञा प्रोक्तम्—यदि त्वदुक्तसंख्यातो न्यूना

गिट को डालकर उस से कहा—तुम इस मिट्टी के पात्र में मल त्याग करना । उस पुरुष ने वैसा ही किया तब उस वैद्य ने उस पुरुष को उस पात्र में मरे हुए गिरगिट को दिखलाते हुए कहा—देखो, तुम्हारे पेट से यह गिरगिट निकला है । उस मरे हुए गिरगिट को देखकर उस पुरुष की आशङ्का दूर हो गयी । और बहुत शीघ्र ही नीरोग हो गया ॥ ६ ॥

॥ यह छद्म सरटदृष्टान्त हुआ ॥ ६ ॥

सातवां काकदृष्टान्त—

वेन्नातट नाम का नगर था । यहां के राजा का नाम रिपुमर्दन था । इस का धीरमति नाम का एक मंत्री था । एक दिन की बात है कि धीर-मति की परीक्षा करने के निमित्त राजाने उस से पूछा—इस ग्राम में कितने कौवे रहते हैं । सुनकर उसने शीघ्र ही राजा को उत्तर दिया—महाराज । इस ग्राम में साठ हजार कौवे रहते हैं । मंत्री की बात सुनकर राजाने

आ माटीना वासणुमां ज ओडे जतुं ते पुरुषे ते प्रमाणे ज कथुं. त्यारे ते वैदे ते पुरुषने ते पात्रमां भरेलो. कार्योडे अतावीने कथुं, “जुवो, तमारा पेट-मांथी आ कार्योडे नीकज्यो छे. ते भरेला कार्योडाने जेधने तेनी आशंकानुं निवारण थर्ग गथुं. अने ते धाणी अउपथी नीरोगी अन्यो.

॥ आ छद्म सरट दृष्टान्त समाप्त ॥ ६ ॥

सातवुं काक दृष्टान्त—

वेन्नातट नामे नगर હતું. ત્યાં રિપુમર્દન નામનો રાજા હતો. તેને ધીર-મતિ નામનો એક મંત્રી હતો. એક દિવસ ધીરમતિની પરીક્ષા કરવાને માટે તેને પૂછયું, “આ ગામમાં કેટલા કાગડા રહે છે ?” તે સાંભળતા જ તેણે જવાબ આપ્યો, “મહારાજ ! આ ગામમાં સાઠ હજાર કાગડા રહે છે.” મંત્રીની આ વાત સાંભળીને રાજાએ કહ્યું કે “જો તમારી વાત સાચી ન પડે તો કેટલો દંડ

અધિકા વા ભવેયુસ્તર્હિ દણ્ડનીયો ભવિષ્યસિ । સચિવેનોક્તમ્—યદિ કદાચિદેભ્યઃ  
કાકેભ્યો ન્યૂનસંખ્યકાભવેયુસ્તદાકેચિત્ પ્રાણુણિકતયા ગ્રામાન્તરં ગતા इत्यवसेयम् ।  
યદ્યધિક સંખ્યકા ભવેયુસ્તદા પ્રાણુણિકા હ્રા ગતા इत्यवगन्तव्यम् । एवं મન્ત્રિવ-  
ચનં શ્રુત્વા રાજા તુષ્ટો જાતઃ ।

॥ इति सप्तमः काकदृष्टान्तः ॥ ७ ॥

अथाष्टम उच्चारदृष्टान्तः—

ઉચ્ચારો મલઃ । ક્વચિન્નગરે કશ્ચિદ્ બ્રાહ્મણ આસીત્ । એકદા સ બ્રાહ્મણઃ સ્વ-  
ભાર્યયા સહ દેશાન્તરં ગચ્છતિ । તસ્ય પથિ કશ્ચિદ્ ધૂર્તો મિલિતઃ । સ ધૂર્તો બ્રાહ્મ-  
કહા કિ યદિ યહ બાત ઠીક નહીં નિકલી તો બોલો કયા દણ્ડ દોગે । મંત્રી  
ને સુનતે હી જવાબ દિયા મહારાજ । દણ્ડ કી કયા વાત હૈ—વે તો હતને હી  
હૈ, પરન્તુ મેરી સંખ્યા સે ડનકી સંખ્યા યદિ કદાચિત્ કુછ વઢ જાંય તો  
સમજ્ઞ લેના ચાહિયે કિ બાહર સે કુછ કૌવે હન કૌવોં કે યહાં પાહુનચારી  
કરને કે લિયે આયે હુએ હૈ । યદિ કદાચિત્ ઘટ જાય તો યહ સમજ્ઞ લેના  
ચાહિયે કિ હન મેં સે કુછ કૌવે ડુસરે ગાંવ પાહુનચારી કે લિયે ગયે હુએ હૈ ।  
હસ પ્રકાર મંત્ર કે વચન સુનકર રાજા બહુત હી પ્રસન્ન હુઆ ॥ ૭ ॥

॥ यह सातवां काकदृष्टान्त हुआ ॥ ७ ॥

आठवां उच्चारदृष्टान्त—

કિસી એક નગર મેં કોઈ એક બ્રાહ્મણ રહતા થા । એક દિન કી વાત  
હૈ કિ વહ અપનીં પત્નીં કે સાથ દેશાન્તર ચલા । ચલતે ર ડસકો

ભરશે ?” તે સાંભળતા જ મંત્રીએ જવાબ આપ્યો “ મહારાજ ! હંડની વાત જ  
ક્યાં છે ? મેં કહ્યા તેટલા જ તે તો છે, પણ છતાં મેં કહેલ સંખ્યા કરતાં  
તેમની સંખ્યા કદાચ વધારે થાય તો એમ સમજવું કે બહારથી કેટલાક કાગડા  
આ કાગડાઓને ત્યાં મહેમાનતરીકે આવ્યા છે, અને કદાચ તે સંખ્યા ઓછી  
થાય તો તેમ સમજી લેવું પડે કે તેમનામાંથી કેટલાક કાગડા બીજે ગામ મહે-  
માન થઈને ગયા છે.” મંત્રીનાં આ પ્રકારના વચન સાંભળીને રાજા ધણો  
ખુશી થયો.

॥ આ સાતમું કાકદૃષ્ટાંત સમાપ્ત ॥ ૭ ॥

આઠમું ઉચ્ચારદૃષ્ટાંત—

કોઈ એક નગરમાં કોઈ એક બ્રાહ્મણ રહેતો હતો. એક દિવસ તે  
પોતાની પત્નીની સાથે બીજે દેશ જવા નીકળ્યો. આવતાં આવતાં માર્ગમાં

णभार्यया सह वार्तालापमात्रेण तां प्रेमानुबद्धामकरोत् । ततः किञ्चिद्दूरं गत्वा धूर्तः प्राह—ममैषा भार्या । ब्राह्मणोऽवदत्—मैवम् । इयं मदीया धर्मपत्नी । एवं विवद-मानौ तौ न्यायार्थं राजकुलं प्राप्तौ न्यायाधीशेन तावुभौ पृथक् पृथगन्यत्र स्थापयित्वा पृष्ठौ—गत दिवसे त्वया किं भक्षितम् ? ब्राह्मणेनोक्तम्—मया भार्यया सह गतदिने तिलमोदका भक्षिताः धूर्तेनान्यत् किमप्युक्तम् । तदा विरेचनौषधं दत्त्वा धूर्त ब्राह्मणयोः परीक्षा कृता । ब्राह्मणस्य भाषणं सत्यमभूत् । ततो न्यायाधीशेन सा ब्राह्मणाय समर्पिता धूर्तस्तु निगृहीत ।

॥ इत्यष्टम उच्चारदृष्टान्तः ॥ ८ ॥

मार्ग में एक धूर्त मिल गया । वह बड़ा चालाक था । उसने ब्राह्मण की स्त्री से बातचीत में ही अपना प्रेममय संबंध जोड़ लिया । कुछ दूरजाने पर ब्राह्मण से वह धूर्त कहने लगा कि—यह स्त्री मेरी है । धूर्त की बात से अप्रसन्न होकर ब्राह्मण बोला—भाई यह क्या कह रहे हो ? ऐसा मत कहो यह तो मेरी ही पत्नी है । इस तरह उन दोनों की परस्परमें अधिक से अधिक बातचीत बढ़ गई और न्याय प्राप्त करने के लिये उन दोनों को राजकुल के पास जाना पड़ा । राजकुल में पहुँचते ही न्यायाध्यक्ष ने उन दोनों को अलग २ बैठा दिया और पूछा कहो—कल तुमने क्या खाया था ? ब्राह्मण ने कहा—महाराज ! मैंने और मेरी पत्नी ने तिल के लड्डू खाये थे । धूर्त को बुलाकर पूछा तो उसने कोई दुसरी ही बात बतलाई । इस तरह सत्य झूठ की परीक्षा के लिये न्यायाधीश ने अपने बुद्धि बल से उन दोनों को विरेचन की औषधि दी । इससे ब्राह्मण का कथन सत्य

तेने એક ધૂતારે મળ્યો. તે ઘણો ચાલાક હતો. તેણે બ્રાહ્મણની પત્ની સાથે વાતચીતમાં જ પોતાનો પ્રેમસંબંધ બાંધી દીધો. થોડે દૂર જતાં તે ધૂતારાએ બ્રાહ્મણને કહ્યું, “આ મારી સ્ત્રી છે.” ધૂતારાની વાતથી નારાજ થઈને બ્રાહ્મણે કહ્યું, “ભાઈ, આ તમે શું કહો છો ? એવું બોલશો મા. આ તો મારી જ પત્ની છે.” આ રીતે તે બંને વચ્ચે પરસ્પરમાં વધારેમા વધારે વાદવિવાદ થયો. છેવટે ન્યાય કરાવવાને માટે તે બંને રાજકચેરીએ પહોંચ્યા. ન્યાયાધીશે તેમની વાત સાંભળીને તે બંનેને જુદા જુદા સ્થાને બેસાડ્યા, અને પૂછ્યું, “કહો, કાલે તમે શું ખાધું હતું ?” બ્રાહ્મણે કહ્યું, “સાહેબ ! મેં તથા મારી પત્નીએ તલના લાડુ ખાધા હતા,” ધૂર્તને બોલાવીને એ જ પ્રશ્ન પૂછ્યો તો તેણે બીજી કોઈ ચીજ બાંધી હતી તેમ બતાવ્યું. હવે ન્યાયાધીશે સાચા—ખોટાની પરીક્ષા માટે પોતાની બુદ્ધિથી તે બંનેને વિરેચક ઔષધિ આપી. તે વડે બ્રાહ્મણનું



અથ નવમો ગજદૃષ્ટાન્તઃ—

વસન્તપુરાધીશો નૃપતિર્વિશિષ્ટબુદ્ધિસંપન્નસચિવપ્રાપ્ત્યર્થં ચતુષ્પથે આલાન-  
સ્તમ્ભે ગજમેકં વન્ધયિત્વા ઘોષણાં કારયતિ હમં ગજં યસ્તોલયિષ્યતિ, તસ્મૈ રાજા-  
પારિતોષિકતયા વૃત્તિં દાસ્યતીતિ । ઘોષણાં શ્રુત્વા કથિદ્ બુદ્ધિમાન્ પુરુષસ્તં ગજં  
તોલયિતું સ્વીકૃતવાન્ । તતોઽસૌ ક્વચિજ્જલાશયે નૌકાયાં ગજમારોહ્ય નાવં ચાલ-  
યતિ । ગજભારેણ નૌકાયા યાવાન્ ભાગોજલે નિમગ્નોઽભવત્ તં રેખાઢ્ઢિતં કૃત્વા  
નિકલા । વાદમેં બ્રાહ્મણી ઉસકો સોંપકર ન્યાયાધીશને ધૂર્તકો  
દણ્ડિતકિયા ॥ ૮ ॥

॥ યહ આઠવાં ઉચ્ચારદૃષ્ટાન્ત હુઆ ॥ ૮ ॥

નૌવાં ગજદૃષ્ટાન્ત—

વસન્તપુરનામકા એકપુરથા । વહાંકે રાજાને વિશિષ્ટબુદ્ધિસંપન્ન  
મંત્રીકી પ્રાપ્તિકે લિયે એકઉપાય હસપ્રકારકિયા—ચૌહદ્દેમેં એક આલા-  
નસ્તંભમેં ઉસને એક હાથી વંધવા દિયા, ઓર હસ પ્રકાર ઘોષણા કર-  
વાઈકિ જો કોઈ હસ હાથીકી તોલકર દેગા ઉસકો રાજા પારિતો-  
ષિકરૂપમેં વૃત્તિપ્રદાન કરેગા । હસ ઘોષણાકો સુનકર કિસી એક  
વિશિષ્ટબુદ્ધિસંપન્નવ્યક્તિને હાથીકો તોલને કી શર્ત મંજૂર કરલી ।  
ઉસને ફિર ઉસકો હસ પ્રકાર તોલા—કિસી જલાશયમેં જાકર ઉસને  
ઉસ હાથીકો એક નૌકામેં ચઢાયા, વાદમેં ઉસકો પાનીમેં ચલાયા  
તો નૌકાકા જિતના ભાગ પાનીમેં ડૂબા ગયા ઉસ ભાગમેં ઉસને એક

કથન સાચું ઠ્યું. પછી બ્રાહ્મણને તેની પત્ની સોંપીને ન્યાયાધીશે ધૂર્તને  
સજા કરી. ॥ ૮ ॥

॥ આ આઠમું ઉચ્ચારદૃષ્ટાન્ત સમાપ્ત ॥ ૮ ॥

નવમું ગજદૃષ્ટાન્ત—

વસન્તપુરનામે એક નગર હતું. ત્યાંના રાજાએ વિશિષ્ટબુદ્ધિવાળો મંત્રી  
મેળવવાને માટે આ પ્રમાણે એક ઉપાય કર્યો—એકમાં હાથી બાંધવાના ખીલા  
સાથે તેણે એક હાથી બાંધાવ્યો, અને આ પ્રમાણે ઘોષણા કરાવી કે જે કોઈ  
આ હાથીનું વજન કરી આપશે તેને ધનામ રૂપે જાણે હોદ્દો આપવામાં આવશે.  
આ ઘોષણા સાંભળીને કોઈ એક વિશિષ્ટબુદ્ધિસંપન્ન માણસે હાથીનું વજન  
કરી આપવાની શરત મંજૂર કરી. પછી તેણે આ રીતે તેને તોળ્યો—કોઈ જળા-  
શયમાં લઈ જઈને તેણે તે હાથીને એક હોડીમાં ચડાવ્યો, પછી તે નૌકા  
પાણીમાં ચલાવી તેનો જેટલો ભાગ પાણીમાં ડૂબી ગયો તે ભાગમાં તેણે એક

तेन नौकाया गजोऽवतारितः । ततोऽसौ नौका पाषाणैस्तथा संभृतो यथा  
नौकायाः पूर्वे रेखाङ्कितो भागो जलमग्नः स्यात् । पश्चात् ते पाषाणास्तोलिताः  
तदनुसारेण गजस्य मानं ज्ञातम् । राजा तस्य बुद्धिं प्रति प्रसन्नो जातः ।

॥ इति नवमो गजदृष्टान्तः ॥ ९ ॥

अथ दशमो भण्डनदृष्टान्तः—

आसीत् कोऽपि पुरुषो राज्ञः प्रत्यासन्नवर्ती । तत्समीपे राजा भार्यायाः  
प्रशंसां करोति । एकदा राज्ञा कथितम्—मम राज्ञी चतुराऽस्ति निदेशकारिणी च ।  
पुरुषेणोक्तम्—महाराज ! यदि तवाज्ञाकारिणी स्यात् तदा स्वार्थवशात् । मद्रचने

रेखा अंकित कर दी । बाद में हाथी को नौका से उतार दिया, पश्चात् उस  
में पाषाणखंड इतने भरे कि जिन्हों के वजन से रेखाङ्कित वह नौका  
का भाग पानी में डूब गया । बाद में वे समस्त पत्थर नौका से बाहर  
निकाल कर तौले गये तो जितना उन का वजन हुआ वही हाथी का वजन  
माना गया । इस तरह राजा उस की इस बुद्धि का वैभव देखकर बड़ा  
अधिक प्रसन्न हुआ ॥ ९ ॥

॥ यह नौकां गजदृष्टान्त हुआ ॥ ९ ॥

दसवां भण्डनदृष्टान्त—

एक पुरुष राजा के पास सदैव रहता था । राजा उसके सामने अपनी  
रानी की प्रशंसा खूब किया करता था । यह भी उस को बड़े चाव से  
सुनता रहता । एक दिन जब राजा ने उस से ऐसा कहा कि मेरी रानी  
बड़ी चतुर एवं आज्ञाकारिणी है तो उस ने इस के प्रत्युत्तर में कहा—ठीक

ढीठी होरी ढीधी, पछी डाथीने डोडीमांथी उतारी नाभ्यो; अने डोडीमां अटलां  
पथर लयां डे जेना वजनथी ढीठी करेला लाग सुधी डोडी पाणीमां डूभी  
गध. पछी अे ञधां पथरने डोडीमांथी ञहार डाढीने तेमनु वजन कथुं तो  
जेटवुं तेमनु वजन थयु ते डाथीनु वजन मानी ढीधुं. आ प्रकारनी तेनी  
तीव्र बुद्धिथी राज्ञ धणो प्रसन्न थयो. ॥ ८ ॥

॥ आ नवमुं गजदृष्टांत समाप्त ॥ ८ ॥

दसमुं भण्डनदृष्टांत—

એક પુરુષ હ'મેશાં કેઈ એક રાજા પાસે રહેતો હતો. રાજા તેની આગળ  
પોતાની રાણીનાં ખૂબ વખાણ કર્યા કરતો હતો. તે પણ તેને ઘણા રસપૂર્વક  
સંભળતો હતો. એક દિવસ જ્યારે રાજાએ તેને એવું કહ્યું કે મારી રાણી  
ઘણી ચતુર અને આજ્ઞાકારિણી છે ત્યારે તેણે તેને જવાબ આપ્યો, “ સાહે, પણ

સંશયોઽસ્તિ ચેત્ પરીક્ષ્ય દ્રષ્ટવ્યમ્ । તસ્યા અગ્રે એવમુચ્યતામ્—અપરાંકાંચિદ્ ભાર્યં કર્તુમિચ્છામિ, તત્પુત્રાય રાજપદં પ્રદાસ્યામિ । એતત્ તવપ્રિયં ચેદ્ ભવેત્ તર્હિ મયા એવં કર્તવ્યમ્ । એવમેવ રાજા દ્વિતીયે દિવસે કથિતમ્ । રાજી પ્રત્યાહ—રાજન્ ! યદિ ભવાન્ દ્વિતીયાં ભાર્યં કર્તુમિચ્છતિ તર્હિ કરોતુ કિંતુ રાજ્યાધિકારઃ પૂર્વોત્પન્નસ્ય મમૈવ પુત્રસ્ય સ્યાદ્ નાન્યસ્ય । એતદ્વચનં શ્રુત્વા રાજા સ્મિતં કરોતિ ।

હૈ યદિ વહ આપ કી પ્રત્યેક આજ્ઞા કો માનતી હૈ તો ઇસ મેં ડસ કા નિજ સ્વાર્થ ભરા હુઆ હૈ । અપને સ્વાર્થ કે વશ સે હી વહ આપ કે પ્રત્યેક આદેશ કોં સ્વીકાર કર લિયા કરતી હૈ । યદિ મેરે ઇસ કથન મેં આપકો કિસી ભી તરહ કા સંશય હો તો આપ ઇસ કી પરીક્ષા કર સકતે હો । અચ્છા એસા કરો—આજ ડસસે જાકર કહના કિ મૈં ડુસરી રાની કરના ચાહતા હૂં ઓર ડસ સે જો પુત્ર ઉત્પન્ન હોગા ડસે મૈં રાજ્ય દેના ચાહતા હૂં । બોલો યહ વાત મેરી તુમ્હેં માન્ય હૈ કિ નહીં ? માન્ય હોને પર હી મૈં અપની ઇસ વિચારધારા કો સફલ કરૂંગા । ડસ પુરુષ કી ઇસ સલાહ કે અનુસાર રાજાને અપની યહ પૂર્વોક્ત વાત ડુસરે દિન રાની સે જાકર જ્યોં કી ત્યોં કહ દી । રાની ને સુનકર જવાબ દિયા—મહારાજ ! આપ ડુસરી સ્ત્રી કરના ચાહતે હૈં તો રુશી સે કરિયે, “ ઇસમેં હમેં કોઈ આક્ષેપ નહીં હૈ, પરન્તુ આપ કા જો એસા વિચાર હૈ કિ હમ ડસકે હી લડકે કો રાજ્ય દેંગે સો યહ વાત સુઝે માન્ય નહીં હૈ । રાજ્ય કા અધિકારી તો મેરા હી પુત્ર હોગા । રાની કે ઇન વચનોં સે રાજા કો કુછ હંસી

જો તે તમારી બધી આજ્ઞા પાળતી હોય તો તેમાં તેનો પોતાનો સ્વાર્થ રહેલો છે. પોતાનો સ્વાર્થ સાધવા માટે જ તે આપની પ્રત્યેક આજ્ઞા સ્વીકાર્યા કરે છે. જો મારા આ કથનમાં તમને કોઈ પણ પ્રકારનો સંશય હોય તો આપ તેની કસોટી કરી શકો છો. આ પ્રમાણે કરો—આજે જ તેની પાસે જઈને કહો કે હું બીજી રાણી કરવા માગું છું. અને તેને જે પુત્ર થશે તેને જ હું રાજ્ય આપવા માગું છું. બોલો, મારી આ વાત આપને મંજૂર છે કે નહીં ? માન્ય હોય તો જ હું મારી આ વિચારધારાને સફળતાનું રૂપ આપીશ. ” તે પુરુષની આ સલાહ પ્રમાણે રાજાએ બીજે દિવસ રાણી પાસે જઈને પૂર્વોક્ત વાત તે પુરુષે કહ્યા પ્રમાણે જ કહી દીધી તે સાંભળીને રાણીએ જવાબ આપ્યો, “ એમાં મને કોઈ વાંધો નથી, પણ આપનો જે એવો વિચાર છે કે આપ તેના જ પુત્રને રાજ્ય સોંપશો તે વાત મને મંજૂર નથી. મારો જ પુત્ર રાજ્યનો અધિકારી થશે. ” રાણીનાં આ વચનોથી રાજાને સહેજ હસવું આવ્યું. રાણીએ

राज्ञी स्मितस्य कारणं पृच्छति । राज्ञा मौनमालम्बितम् । पुनः पुनस्तया पृष्टो राजा प्रत्यासन्नवर्तिपुरुषप्रोक्तं वचः कथितवान् । राज्ञी क्रोधवशात् तस्य देशवहिष्कारार्थमादेशं कृतवती । ततोऽसौ पुरुषश्चिन्तयति—किमधुना विधेयम्, अन्ततः स स्वबुद्ध्या 'महान्तमुपानहं भारं शिरसि गृहीत्वा राज्ञीं प्रोक्तवान्—अधुना देशान्तरं गच्छामि । राज्ञी प्राह—किमर्थमुपानह्जारं वहसि । स वदति—देवि ! इयतीभिरुपानद्विर्यावन्ति देशान्तराणि गन्तुं शक्यामि तावत्सु देशान्तरेषु भवत्या भण्डनं ( अकीर्तिं ) करिष्यामि । ततो राज्ञी लोकापवादभयात् सत्वरं पूर्वोक्तं निदेशं निवर्तयति स्म ।

॥ इति दशमो भण्डनदृष्टान्तः ॥ १० ॥

आगई। रानीने राजा से इस हँसी का कारण पूछा तो उसने जब कुछ जवाब नहीं दिया तो पुनः उसने जानने का आग्रह किया, अन्त में राजा ने जो बात जैसी थी वह उससे कह दी। रानी को उस पुरुष पर बड़ा क्रोध आया और इसी आवेश में उसने उस पुरुष को देश से बाहिर चले जाने की आज्ञा जारी कर दी। रानी के इस आदेश से चिन्तित हो उस पुरुष ने विचार किया—अब क्या उपाय करना चाहिये ? अन्त में उसको एक बुद्धि सूझी और उसी के अनुसार उसने जूतों की एक बड़ी भारी गठरी बांधकर उस को माथे पर उठाली और रानी से बोला मैं अब यहां से दुसरे देश को जा रहा हूं। रानी ने पूछा—तो यह जूतों की गठरी शिर पर क्यों रख छोड़ी हैं। उसने जबाब दिया कि इतने जूतों से जितने देशों में जा सकूंगा उतने देशों में आप की अपकीर्ति करूंगा। रानी ने

राजने ते હાસ્યનું કારણ પૂછ્યું તો તેણે કંઈ જવાબ આપ્યો નહીં. ત્યારે ફરીથી તેણે કારણ જાણવાનો આગ્રહ કર્યો. છેવટે રાણીએ જે વાત બની હતી તે તેને કહી. રાણીને તે પુરુષ પર ઘણો ક્રોધ ચડ્યો અને આવેશમાં ને આવેશમાં તેણે તે પુરુષને દેશવટાની આજ્ઞા આપી દીધી. રાણીના આ હુકમથી ચિન્તાતુર થયેલ તે પુરુષે વિચાર કર્યો—“હવે શો ઉપાય કરવો ?” છેવટે તેને એક યુક્તિ જડી અને તે યુક્તિ પ્રમાણે તેણે જોડાનું એક ઘણું ભારે પોટલું બાંધીને તેને માથે ઉપાડી લીધું, અને રાણીને કહ્યું કે હું અહીંથી બીજા દેશમાં જઈ છું.” રાણીએ પૂછ્યું, “તો આ જોડાનું પોટલું શા માટે માથે મૂક્યું છે ?” તેણે જવાબ આપ્યો, “આટલા જોડાથી જેટલા દેશોમાં

अथैकादशो गोलकदृष्टान्तः—

कस्यचिद् बालकस्य नासा नलिकायां लाक्षागोलकः कथंचित् प्रविष्टः । तस्य पिता सुवर्णकारस्य समीपे तं बालकं नीतवान् । सुवर्णकारः प्रतप्ताग्रभागया लौहशलाकया शनैः शनैर्यत्नतो लाक्षागोलकं प्रताप्य शनैः शनैः समाकृष्टवान् ।

॥ इत्यैकादशो गोलकदृष्टान्तः ॥ ११ ॥

इस प्रकार के लोकापवाद के भय से देश बाहिर चले जाने का उसका वह अपना आदेश वापिस ले लिया ॥ १० ॥

॥ यह दसवां भण्डनदृष्टान्त हुआ ॥ १० ॥

ग्यारहवां गोलकदृष्टान्त—

एक किसी बालक की नाक में लाख की एक गोली अन्दर चली गई थी। उसके पिता ने जब बालक को इस स्थिति को देखा तो वह शीघ्र ही उसको किसी सुनार के पास ले गया। सुनार ने बड़ी चतुराई के साथ उसे बाहर निकालने का प्रयत्न किया। सब से पहिले उसने एक लोहे की पतली सी शलाई ली। उस को आगी में गरम किया और धीरे २ उस लाख की गोली पर उसे चिपकाया तो इस तरह कुछ देर तक करते रहने से वह लाख की गोली पिघलकर नाक से बाहर निकल आई। बाद में उसने फिर उसे बाहर खेंच लिया ॥ ११ ॥

॥ यह ग्यारहवां गोलकदृष्टान्त हुआ ॥ ११ ॥

જઈ શકીશ એટલા દેશોમાં આપની અપકીર્તિ કરીશ.” રાણીએ પોતાની અપકીર્તિના લયથી તેને દેશવટો આપવાની પોતાની આજ્ઞા પાછી ખેંચી લીધી.

॥ આ દશમું ભંડનદ્રષ્ટાંત સમાપ્ત ॥ ૧૦ ॥

અગિયારમું ગોલકદ્રષ્ટાંત—

કોઈ એક બાળકના નાકની અંદર લાખની ગોળી બાંડી ઉતરી ગઈ. બ્યારે તેના પિતાએ બાળકની આ સ્થિતિ જોઈ ત્યારે તે તરતજ તેને એક સોની પાસે લઈ ગયો. સોનીએ ઘણી ચતુરાઈથી તે ગોળીને બહાર કાઢવાનો પ્રયત્ન કર્યો. સૌથી પહેલાં તેણે લોઢાની એક પાતળી સળી લીધી. તેને અંગીઠીમાં ગરમ કરી. અને ધીમે ધીમે તે લાખની ગોળીમાં તેને લોંકી. આ પ્રમાણે થોડી વાર કરતા રહેવાથી તે લાખની ગોળી ઓગળીને નાકમાંથી બહાર નીકળી આવી. પછી તેને બહાર ખેંચી લીધી ॥ ૧૧ ॥

॥ આ અગિયારમું ગોલકદ્રષ્ટાંતસમાપ્ત ॥ ૧૧ ॥

अथ द्वादशः स्तम्भदृष्टान्तः—

कश्चित् राजा योग्यसचिव प्राप्त्यर्थं नगरवर्तिनो महाविस्तरस्य जलाशयस्य मध्ये स्तम्भं स्थापितवान् एवं घोषणां च कारितवान्—यस्तटे तिष्ठन् रज्ज्वास्तम्भ-  
मिमं बध्नीयात् तस्मै लक्षं पारितोषिकं राजा दास्यतीति । एवं भूतां घोषणां श्रुत्वा  
केनचिद् बुद्धिमता तथाकर्तुं स्वीकृतम् । ततोऽसौ जलाशयस्य तटे कीलकमेकं स्थाप-  
यित्वा तत्र रज्जुबद्ध्वा चतुर्षु तटेषु तां नयन् समागतः । तेन स मध्यवर्ती स्तम्भो  
रज्जुबद्धो जातः । एवं तद्बुद्धिं निरीक्ष्य परितुष्टो राजा तं स्वसचिवं कृतवान् ।

॥ इति द्वादशः स्तम्भदृष्टान्तः ॥ १२ ॥

बारहवां स्तम्भदृष्टान्त—

किसी राजा ने योग्य मंत्री की प्राप्ति के लिये नगर के पास के  
विस्तृत तालाब के बीच में एक स्तम्भ गढ़वा कर इस प्रकार की घोषणा  
करवाई कि जो कोई व्यक्ति तट पर बैठा रस्सी से इस स्तम्भ को  
बांध देगा उस के लिये राजा एक लाख रुपये का पारितोषिक देगा । इस  
प्रकार की घोषणा को सुनकर किसी बुद्धिमान् व्यक्ति ने इस प्रकार करना  
स्वीकार कर लिया । बाद में उसने जलाशय के एक तट पर एक लोहे  
की कील गाढ़ दी और उस में रस्सी बांधकर उस को तलाब के चारों  
कोनों पर उस ने फिराया । इस तरह चारों कोनों पर रस्सी के फिराने  
से वह मध्यवर्ती खंभा उस रस्सी द्वारा अनायास बंध गया । उस व्यक्ति  
की ऐसी बुद्धि की चतुराई देखकर राजा ने बड़ी प्रसन्नता प्रकट करते हुए

भारमुं स्तम्भदृष्टान्त—

કોઈ એક રાજાએ યોગ્ય મંત્રી મેળવવાને માટે નગરની પાસેના વિશાળ  
તળાવની વચ્ચે સ્થંભ ઉભો કરાવીને એવી ઘોષણા કરાવી કે જે કોઈ માણસ  
તળાવના કાંઠે બેઠાં બેઠાં દોરડા વડે આ થાંભલાને બાંધી દેશે તેને રાજા એક  
લાખ રૂપિયાનું ઈનામ આપશે. આ પ્રકારની ઘોષણા સાંભળીને કોઈ બુદ્ધિ-  
શાળી માણસે તે કામ કરવાનું માથે લીધું. પછી જળાશયને એક કાંઠે તેણે  
એક લોહાનો ખીલો ખોડ્યો અને તેમાં દોરડું બાંધીને તે દોરડાને તળાવની  
ચારે તરફ તેણે ફેરવ્યું. આ પ્રમાણે ચારે ખૂણે દોરડું ફરી વળવાથી વચ્ચેનો  
તે સ્થંભ તે દોરડા દ્વારા અનાયાસ બંધાઈ ગયો. તે માણસનું આ બુદ્ધિ-  
ચાતુર્ય જોઈને રાજાએ ઘણી પ્રસન્નતા પ્રગટ કરીને તેને પોતાના રાજ્યનું  
પ્રધાનપદ સોંપ્યું. ॥ ૧૨ ॥

॥ આ ભારમું “સ્તમ્ભદ્રષ્ટાંત” સમાપ્ત ॥ ૧૨ ॥



અથ ત્રયોદશઃ સુહુગ - ક્ષુલ્લક ( બાલક ) દૃષ્ટાન્તઃ—

કાચિત્ પરિવ્રાજિકા રાજાઃ સમીપે પ્રતિજ્ઞાં કૃતવતી—સર્વં કાર્યં કર્તું શક્નોમિ, કલાસુ માં પરાજેતું કોઽપિ સમર્થો નાસ્તિ । રાજા ઘોષણા કારિતા—યદિ કશ્ચિત્ કલાકારઃ કલાસુ પરિવ્રાજિકાં પરાજયેત્, તદા તસ્મૈ રાજા પારિતોષિકં દાસ્યતે । ઘોષણાં શ્રુત્વા કશ્ચિદ્ બાલકો રાજાઃ સમીપમાગત્ય વદતિ—રાજન્ ! અહં પરિવ્રાજિકાં પરાજેષ્યામિ કિન્તુ મમાપરાધઃ ક્ષન્તવ્યઃ । રાજા તથૈવ સ્વીકૃતમ્ । પરિવ્રાજિકા

ઉસ કો અપને રાજ્ય કા મંત્રી પદ પ્રદાન કર દિયા ॥૧૨॥

॥ યહ બારહવાં સ્તમ્ભદૃષ્ટાન્ત હુઆ ॥૧૨॥

તેરહવાં ક્ષુલ્લક (બાલક) દૃષ્ટાન્ત—

કિસી પરિવ્રાજિકા ને રાજા કે પાસ એસી પ્રતિજ્ઞા કિ મૈં સબ કામ કર સક્તી હું । એસા કોઈ વ્યક્તિ નહીં હૈ જો કલાઓં મેં મુઝે પરાજિત કર સકે । કારણ મુજ સે કોઈ ભી કલા અછૂતી નહીં વચી હૈ । મૈં સબ કલાઓં મેં નિપુણ હૂ । ઉસ કી એસી બાત સુનકર રાજા ને ઘોષણા કર-વાઈ કિ યદિ કોઈ કલાકાર કલાઓં મેં પરિવ્રાજિકા કો પરાજિત કર સકે તો વહ ઇસ કે સમક્ષ અપની કલાભિજ્ઞતા પ્રકટ કરને કે લિયે આવે યદિ વહ ઇસ કે સમક્ષ વિજય શ્રી પાને કા અધિકારી પ્રમાણિત હો જાયગા તો ઉસ કો મેરી ઓરસે વિશેષ પારિતોષિક દિયા જાયગા । ઇસ ઘોષણા કો સુનકર રાજા કે પાસ ઉસી સમય એક બાલક આયા ઓર આતે હી ઉસને કહા—મહારાજ ! મૈં પરિવ્રાજિકા કો જીત સક્તા હૂં પરન્તુ મેરા એક અપરાધ ક્ષમા કિયા જાવે તો । રાજા ને ઉસ કો અભય દેકર કહા

તેરમું ક્ષુલ્લક (બાલક) દૃષ્ટાન્ત—

કોઈ પરિવ્રાજિકાએ રાજાની પાસે એવી પ્રતિજ્ઞા કરી કે “હું સઘળાં કામ કરી શકું છું. કળાઓમાં મને પરાજિત કરી શકે તેવી કોઈ વ્યક્તિ નથી. કારણ કે કોઈ પણ કળાનો મને અનુભવ ન હોય તેવું નથી. હું સઘળી કળાઓમાં નિપુણ છું” તેની એવી વાત સાંભળીને રાજાએ ઘોષણા કરાવી કે જો કોઈ કળાકાર કળાઓમાં પરિવ્રાજિકાને પરાજિત કરી શકે તેમ હોય તો તે તેની પાસે પોતાની કળાનિપુણતા પ્રગટ કરવા માટે આવે, જો તે તેની સમક્ષ વિજય પ્રાપ્ત કરવાનો અધિકારી સાબીત થશે તો તેને મારા તરફથી વધારાનું ધનમ પણ આપવામાં આવશે. આ ઘોષણા સાંભળીને એ જ વખતે રાજાની પાસે એક બાળક આવ્યો અને આવતાં જ તેણે કહ્યું “મહારાજ ! હું પરિવ્રાજિકાને હરાવી શકું તેમ છું પરન્તુ આપ મારે એક અપરાધ માફ કરો તો જ તેમ ખતી શકશે.” રાજાએ તેને અભય દઈને કહ્યું “તારો અપરાધ

प्राह—लघुरयं बालकः कथं मम पराजयं करिष्यति । ततो बालकः स्वकीयं कौपीनवस्त्रमपनीय नग्नमुद्रयानानाविधमासनं प्रदर्श्य परिव्राजिकामबदत्-परिव्राजिके ! एवमेव नग्नमुद्रया स्वकलाकौशलं प्रदर्शय । तदा एवं कर्तुमसमर्था परिव्राजिका स्वपराजयं मत्वा लज्जिता सती ततश्चलिता । लोकास्तस्य बालकस्य विजयं प्रोक्तवन्तः ॥

इति त्रयोदशः क्षुल्लकदृष्टान्तः ॥ १३ ॥

तुम्हारा अपराध क्षमा है, बताओ अपनी कलाओं का कौशल । बालक को देखकर परिव्राजिका कहने लगी—महाराज ! यह नन्हासा बालक कलाओं में क्या कुशलता प्रकट कर सकेगा ? और कैसे मेरा पराजय कर सकेगा । इस तरह परिव्राजिका का आक्षेप सुनकर बालक ने उसी समय लंगोटी खोलकर नगनावस्था में ही अनेक प्रकार के आसनों का प्रदर्शन करना प्रारंभ किया । जब वह अपना काम पूर्णरूप से समाप्त कर चुका तो बाद में परिव्राजिका से बोला परिव्राजिके ! तुम भी इसी मुद्रा में होकर अपनी कलाकुशलता बतलाओ । बालक की इस बात से असहमत होकर वह अपनी कलाकुशलता प्रदर्शित करने में इस रूप में असमर्थ रही इसलिये बालक के समक्ष उसने अपना पराजय स्वीकार कर लिया और वहां से अनमनी होकर वह चली गई । लोगों ने बालक की खूब प्रशंसा की ॥१३॥

॥ यह तेरहवा क्षुल्लक (बालक) दृष्टान्त हुआ ॥१३॥

भाइ करीश, ताइं कणाकौशल अताव. ” आणकने जेधने परिव्राजिका कडेवा दागी, “ आ नानकडो आणक कणाओमां शी कुशलता अगट करी शकवानो छे ? अने भारो पराजय केवी रीते करी शकशे ? परिव्राजिकानो आ प्रकारनो आक्षेप सांभणीने ते आणके त्यारे ज दंगोटी छोडी नाणीने नगनावस्थाभां ज अनेक प्रकारनां आसनो अताववानो प्रारंभ कर्यो. न्यारे तेणे पूरुंइये पोतानुं काम पूरं कर्युं त्यारे तेणे परिव्राजिकाने कहुं, “ परिव्राजिका ! तमे पणु भारा प्रमा-लेणी मुद्राभां तमाइं कणाकौशल अतावो. ” आणकनी आ वात साथे असम्मत थधने ते पोतानुं कणाकौशल्य ओ रीते अताववाने असमर्थ थध. ते कारणे आणकनी पासे तेणे पोतानो पराजय स्वीकारी दीधो अने त्याथी नाराज थधने ते आदी गध. दोडोओ आणकनी भूण प्रशंसा करी. ॥१३॥

॥ आ तेरमुं क्षुल्लक (आणक) दृष्टान्त समाप्त ॥ १३ ॥

અથ ચતુર્દશો માર્ગદૃષ્ટાન્તઃ—

સભાર્યઃ કશ્ચિત્ પુરુષો યાનેન ગ્રામાન્તરં ગચ્છતિ । ક્વચિત્ પથિ તસ્ય ભાર્યા શરીર ચિન્તાયં યાનાદવતીર્ય કિંચિદ્દરે ગત્વા શઙ્કાં નિવારયતિ । અત્રાન્તરે તત્ર પ્રદેશે નિવસન્તી કાચિદ્ વિદ્યાધરી રથારૂઢં તં પુરુષમતિસુન્દરં દૃષ્ટ્વા મોહિતા જાતા । સા તસ્ય ભાર્યાયારૂપં ધૃત્વા સત્વરમાગત્ય રથોપરિ સમારૂઢા । યદા સા તદ્ભાર્યા શરીરચિન્તાં નિવાર્ય રથસમીપે સમાયાતિ, તદાઽન્યાં સ્ત્રિયં સ્વસમાનરૂપાં રથોપરિ પશ્યતિ । વિદ્યાધરી તદ્ભાર્યામન્તિકાગતાં વોક્ષ્ય પુરુષં કથયતિ—ઇયં કાચિદ્ વ્યન્તરી મત્સદ્શરૂપં વિધાય ત્વત્સમીપે સમાગચ્છતિ । અતો યાનં ચાલય । એવમુક્તઃ

ચૌદહવાં માર્ગદૃષ્ટાન્ત—

એક સમય કી વાત હૈ કિ કોઈ પુરુષ અપની પત્ની કે સાથ રથ મેં બૈઠકર કિસી દૂસરે ગાંવ જા રહા થા । ચલતે ૨ માર્ગ મેં ઉસ કી પત્ની કો મલત્યાગ કી વાધા હો ગઈ । વહ કુછ દુર જાકર નિવટને લગી । હતને મેં એક વિદ્યાધરી ને જો ઉસ સ્થાન પર રહતી થી, રથ મેં બૈઠે હુણે ઉસ સુન્દર યુવા કો દેખા, દેખતે હી વહ ઉસ પર સુગ્ધ હો ગઈ । ઉસી સમય ઉસ ને વિદ્યા કે પ્રભાવ સે ઉસ કી સ્ત્રી કા રૂપ ધારણ કિયા ઓર ઉસ કે પાસ આકર વહ રથ પર બૈઠ ગઈ । હતને મેં હી મલત્યાગ સે ઉસ કી સ્વાસ પત્ની આગઈ । ઉસ ને આતે હી જ્યો હી ઉસ વિદ્યાધરી કો રથ મેં બૈઠી હુઈ દેખી ઓર વિદ્યાધરી ને ઉસ કો આતી હુઈ દેખી તો વહ બનાવટી સ્ત્રી ઉસ યુવા સે કહને લગી—દેખો ! યહ કોઈ વ્યન્તરી મેરા જૈસા રૂપ બનાકર આપ કે પાસ આ રહી હૈ હસલિયે આપ

ચૌદમું માર્ગ દૃષ્ટાન્ત—

એક સમયની વાત છે કે કેટલાં પુરુષ પોતાની પત્ની સાથે રથમાં બેસીને બીજે ગામ જતો હતો. મુસાફરી દરમિયાન માર્ગમાં તેની પત્નીને ઝાડે ફરવા જવાની જરૂર પડી, તે થોડે દૂર જઈને ઝાડે ફરવા બેઠી. એવામાં એક વિદ્યાધરી, કે જે તે સ્થાને રહેતી હતી, તેણે રથમાં બેઠેલ તે સુંદર યુવાનને જોયો. બેતાં જ તે તેના ઉપર મોહિત થઈ ગઈ એ જ વખતે તેણે પોતાની વિદ્યાના પ્રભાવથી તેની સ્ત્રીનું રૂપ ધારણ કર્યું અને તેની પાસે આવીને તે રથમાં બેસી ગઈ. એવામાં ઝાડે જવાનું કામ પતાવીને તેની પોતાની પત્ની આવી પહોંચી. તેણે આવતાં જ જોવી તે વિદ્યાધરીને રથમાં બેઠેલી જોઈ અને વિદ્યાધરીએ તેને આવતી જોઈ ત્યારે તે બનાવટી સ્ત્રીએ તે યુવાનને કહ્યું, “બુવો, આ કેટલાં વ્યન્તરી મારા જેવું રૂપ બનાવીને તમારી પાસે આવી રહી છે. તેથી આપ જલ્દી

पुरुषस्तथैव रथं चालयति । इतश्च सा रुदती आर्तनादं कुर्वती रथस्य पश्चाद्भागे संलग्ना धावमाना समागच्छति । तस्याः आर्तनादं श्रुत्वा स पुरुषो मन्दं मन्दं रथं चालयति । तदा सा मानुषी स्त्री विद्याधरी च मिथः कलहं कुर्वती ग्रामे समागत्य न्यायाधीशस्य पुरस्तादभियोगं करोति । न्यायाधीशः पुरुषं पृच्छति—कथय, का त्वदीया भार्या । एवं पृष्ठोऽसौ पुरुषः स्त्रियं निर्णेतुमसमर्थो जातः । ततो न्यायाधीशः स्वबुद्ध्या पुरुषं दूरे नीत्वा द्वे अपि स्त्रियावुक्तवान्—कथितवान् युवयोर्मध्ये या पूर्वं स्वहस्ते नास्य स्पर्शं करिष्यति—तस्या एव पतिरयं भविष्यति । तदा विद्याधरी दिव्यशक्त्या स्वहस्तं विस्तृतं कृत्वा पूर्वमेव तं स्पृशति । न्यायाधीशो विद्याधरीं

रथ को शीघ्र यहां से ले चलिये । वनावटी स्त्री की ऐसी बात सुनकर उसने वहां से रथ को आगे हांकना प्ररंभ कर दिया । पहिली स्त्री ने यह हालत देखी तो वह रथ के पीछे २ रोती हुई चलने लगी । युवाने जब उसका आर्तनाद सुना तो उस को उस पर करुणा आगई और रथ की चाल उसने कुछ ढीली कर दी । दोनों स्त्रियां परस्पर में लड़ने झगडने लगी और इसी हालत में गांव में आपहुंची । वहां आते ही पहिली स्त्रीने उस दुसरी स्त्री पर अभियोग लगाकर उसको कचहरी में न्यायाधीश के समक्ष उपस्थित किया । न्यायाधीश ने पुरुष से पूछा—कहो इनमें तुम्हारी स्त्री कौनसी हैं ? पुरुष ने कहा—महाराज ! मैं इसका निर्णय करने के लिये असमर्थ हूं । जब पुरुष की असमर्थता न्यायाधीश ने देखी तो उसने उस को वहां से दूर कर के उन दोनों स्त्रियों से कहा—तुम दोनों में से जो सब से पहिले अपने हाथ से यहां ही खडी २ इस पुरुषको स्पर्श करेंगी वही इस की पत्नी और उसी का यह पति माना जावेगा । न्यायाधीश

रथने अडींथी डंकारी भूके।” जनावटी स्त्रीनी जेवी बात सांलजीने तेले रथने त्यांथी आगण डंकारवा मांडयो. जरी पत्नीजे न्यारे ते जेथुं त्यारे ते रोती रोती रथनी पाछण होडवा लागी. युवाने न्यारे तेनो आर्तनाद सांलज्यो त्यारे तेने तेना पर दया आवी, जने तेले रथनी गति थोडी घटाडी नाथी. जन्ने स्त्रीजे परस्पर जगडो करवा लागी जने जे ज हालतमां गाममां आवी पडोंथी. त्यां आवतां ज पडेली स्त्रीजे भील स्त्री पर इरियाद करीने तेने कचेरीमां न्यायाधीशनी आगण डांजर करी. न्यायाधीशे पुरुषने पूछ्युं, “कडो आ जेमांथी तमारी पत्नी डोणु छे ?” पुरुषे कछुं, “साडेण, तेनो निर्णय करवाने हुं असमर्थ छुं.” न्यारे पुरुषनी असमर्थता न्यायाधीशे जेध त्यारे तेमणे तेने त्यांथी इर भोडलीने ते जन्ने स्त्रीजेने कछुं, “तमारा जन्नेमांथी जे अडीं छेली छेली पोताना डायथी सोथी पडेलां तेनो स्पर्श करशे जे ज तेनी पत्नी

વિજ્ઞાય વદતિ—‘ ઇતો ગચ્છ, ત્વમસ્ય ભાર્યા ન ભવસિ ઇયં માનુષી અયં સ્વત્પતિ-  
નાસ્તિ, વિદ્યાધરી ત્વમસિ । ત્વયા દેવશક્ત્યા સ્વહસ્તો વિસ્તારિતઃ । ઇયં તુ  
માનુષી ’ ઇત્યુક્ત્વા તસ્મૈ માનુષીં સ્ત્રિયં પ્રદત્તવાન્ ।

॥ ઇતિ ચતુર્દશો માર્ગદૃષ્ટાન્તઃ ॥ ૧૪ ॥

અથ પશ્ચદશઃ સ્ત્રીદૃષ્ટાન્તઃ—

મૂલ દેવઃ કણ્ડરીક નામ્ના મિત્રેણ સહ ગચ્છતિ ઇતશ્ચ કોઽપિ સમાર્યઃ પુરુષ-  
સ્તેન માર્ગેણ તત્સંમુખં સમાયાતિ । કણ્ડરીકસ્તદ્ધાર્યામવલોક્ય મોહિતો જાતઃ ।

કીં ઇસ વાત કો સુનતે હી વિદ્યાધારી ને દિવ્યશક્તિ કે પ્રભાવ સે અપના  
હાથ લમ્બાકર વહીં સે સ્વહી ૨ ઉસ પુરુષ કો પહિલે સ્પર્શ કર લિયા । એસી  
સ્થિતિ દેસકર “યહ વિદ્યાધરી હૈ” એસા ન્યાયાધીશ ને જાન લિયા ઓર  
વહ ઉસ સે કહને લગા—બસ અબ તુમ યહાં સે ચલી જાઓ, તુમ ઇસ કી  
પત્ની નહીં હો । પત્ની તો ઇસ કી યહ હૈ । તુમ તો વિદ્યાધરી હો ।  
દિવ્યશક્તિ કે પ્રભાવ સે હી તુમને અપના હાથ વિસ્તારિત કિયા હૈ । ઇસ  
તરહ ઔત્પત્તિકી બુદ્ધિસે ન્યાયાધીશ ને ઇસ અભિયોગ કા ઉચિત  
નિર્ણય કર વહ સ્ત્રી ઉસ કે પતિ કો દે દી ॥૧૪॥

॥ યહ ચૌદહવાં માર્ગદૃષ્ટાન્ત હુઆ ॥૧૪॥

પન્દ્રહવાં સ્ત્રીદૃષ્ટાન્ત—

એક થા મૂલદેવ ઓર ઉસકે મિત્ર કા નામ થા કણ્ડરીક । યે દોનોં  
કહીં જા રહે થે । જિસ માર્ગ સે હોકર યે દોનોં ચલ રહે થે ઉસી માર્ગ

અને તેનોજ તે પતિ માનવામાં આવશે ” ન્યાયાધીશની આ વાત સાંભળતાં  
જ વિદ્યાધારીએ દિવ્ય શક્તિના પ્રભાવથી પોતાનો હાથ લાંબાવીને ત્યાં ઉભા ઉભા  
જ તે પુરુષનો પહેલાં સ્પર્શ કર્યો. આ સ્થિતિ જોઈને ન્યાયાધીશ સમજી ગયાં  
કે “આ વિદ્યાધરી છે,” અને તેમણે કહ્યું, “બસ હવે તું અહીંથી ચાલી  
જા. તું આની પત્ની નથી. આ સ્ત્રી જ તેની પત્ની છે. તું તો વિદ્યાધરી છે.  
દિવ્યશક્તિના પ્રભાવથી જ તેં તારો હાથ લાંબાવ્યો છે.” આ પ્રમાણે ઔત્પત્તિકી  
બુદ્ધિથી ન્યાયાધીશે આ ક્રિયાદેનો યોગ્ય નિર્ણય કરીને તે સ્ત્રી તેના પતિને સોંપી.

॥ આ ચૌદસું માર્ગદૃષ્ટાન્ત સમાપ્ત ॥ ૧૪ ॥

પંદરમું સ્ત્રી દૃષ્ટાન્ત—

મૂળદેવ નામનો એક માણસ હતો. તેને કંડરીક નામનો મિત્ર હતો. તેઓ  
બંને કોઈ સ્થળે જતાં હતાં. જે માર્ગે તેઓ જતાં હતાં એ જ માર્ગ ઉપરથી

कण्डरीको मूलदेवं वदति-यदीयं प्राप्यते तदा जीविष्यामि, नान्यथा । मूलदेवः प्राह-त्वरितो मा भव साधयिष्यामि तव मनोरथम् । ततस्तौ द्वावप्यलक्षितौ सत्वरं दूरं गतौ । ततो मूलदेवः कण्डरीकमेकस्मिन् वनकुञ्जेस्त्रीवेषेणसंस्थाप्य मार्गे समागतः । ततः पश्चात् सभार्यः स पुरुषस्तत्र समायातः । मूलदेवस्तं पुरुषं वदति-भो महापुरुष! अस्मिन् वननिकुञ्जे मम भार्यायाः प्रसवकालो वर्तते । अतः क्षणमात्रं स्वभार्यां तत्र गन्तुमाज्ञापय । पत्या विसर्जिता सा कण्डरीकस्य पार्श्वे समागता । तत्र सा पुरुषं विज्ञाय स्वशीलं रक्षयन्ती स्वपतिसमीपे पुनः समागता ॥

॥ इति पञ्चदशः स्त्रीदृष्टान्तः ॥ १५ ॥

से एक कोई दूसरा मनुष्य अपनी पत्नीको साथ में लेकर इनकी तरफ आ रहा था । कण्डरीक ने ज्यों ही उसकी पत्नी को देखा तो वह उस पर मुग्ध हो गया । मूलदेव से कहने लगा-भाई यदि मुझे यह स्त्री मिले तो ही मैं जी सकता हूं नहीं तो नहीं । कण्डरीक की ऐसी बात सुनकर मूलदेव ने उससे कहा-शीघ्रता मत करो-धीरे २ तुम्हारा मनोरथ मैं पूर्णकरूंगा । ऐसा कह कर उसने उसको धैर्य बंधा दिया । अब वे दोनों अलक्षित होकर वहां से दूर चल दिये । मूलदेव ने इसके बाद कण्डरीक को एक वन निकुञ्ज में स्त्री वेष पहिराकर बैठा दिया और आप रास्ते में आकर बैठ गया । चलते २ वह पुरुष भी सपत्नीक वहां आ गया । मूलदेव ने उससे कहा-भाई इस वन निकुञ्ज में मेरी भार्या बैठी हुई है, उसका प्रसव काल बिलकुल ही नजदीक है सो आप कृपा कर उसके पास एक क्षण मात्र के लिये अपनी पत्नी को जाने की आज्ञा

कोई भीने भाणुस पोतानी पत्नीने साथे लईने तेमना तरश् आवतो हुतो. कंडरीके नेवी तेनी पत्नीने नेछ के ते तेना पर मोहित थछ गयो. तेणे भूणदेवने कहुं, “बाछ! ने मने आ स्त्री मणशे तो न हुं लुवी शकीश, नही तो लुवी शकीश नही” कंडरीकनी नेवी बात सांलणीने भूणदेवे तेने कहुं, “उतावण करो मा धीरे धीरे हुं तारो मनोरथ पूरो करीश.” आम कडीने तेणे तेने आश्वासन आभ्युं. हुवे तेणे नेने तेमनी नजरे न पडे अटवे हर आदया गया. त्यार भाद भूणदेवे कंडरीकने स्त्रीने पोषाक पहिरावीने अछ वन निकुंजमां जेसाडी दीधो अने पोते रस्ता पर आवीने जेसी गयो. आदतां आदतां पेदो पुरुष पणु पत्नीनी साथे त्यां आवी पछोअ्यो. भूणदेवे तेने कहुं “आ वन निकुंजमां मारी पत्नी जेछो छे, तेने प्रसवकाण तदन नजदीक आव्यो छे. तो आप कृपा करीने तेनी पासे अछ क्षण मात्रने माटे तमारी पत्नीने जवानी आज्ञा



अथ षोडशः पतिदृष्टान्तः—

एकस्य क्षेत्रस्य स्वामी कश्चित् कृषीवल आसीत् । तं दुर्बलं विज्ञाय कश्चिदपरो-  
धूर्तः कृषीवलः प्राह—अरे अस्य क्षेत्रस्य पतिर्मां विना कोऽन्यो भवितुमर्हति । एवं  
विवदमानौ तौ न्यायालयं गतौ । न्यायाधीशः पृथक् पृथग्भौ रहसि नीत्वा प्राह—

दे दीजिये । मूलदेव की ऐसी करुणोत्पादक बात सुनकर उसने अपनी  
पत्नी को वहां जाने के लिये आदेश दे दिया । वह पति का आदेश  
पाकर कण्डरीक के पास चली आई । परन्तु जब उसने स्त्री के वेष में  
छिपे हुए पुरुष को जाना तो वह अपने शील की किसी तरह रक्षा करती  
हुई वापिस अपने पति के पास लौट आई ॥ १५ ॥

॥ यह पन्द्रहवां स्त्रीदृष्टान्त हुआ ॥ १५ ॥

सोलहवां पतिदृष्टान्त—

किसी एक खेत का स्वामी कोई किसान था । वह कमजोर था ।  
उसको कमजोर देखकर किसी दूसरे धूर्त किसानने उससे कहा—भाई !  
इस खेत के मालिक तुम नहीं हो, मैं हूं, कारण मेरे सिवाय यहां खेत  
का मालिक और कौन हो सकता है । इस तरह उन दोनों में उस खेत  
को लेकर विवाद खड़ा हो गया । परस्पर में जब इसका निबटेरा नहीं  
हुआ तो वे दोनों कचहरी पहुँचे । कचहरी में उन्होंने अपना २ अभियोग  
पेश किया । न्यायाधीश ने बड़े ध्यान से उन दोनों की बातों को सुना ।  
अन्त में वह अलग २ एकान्त में लेजाकर एक एक से पूछने लगा,

आपो ” भूणदेवनी आवी करुणाजनक बात सांलणीने तेणे पोतानी पत्नीने त्यां  
ज्वानी आज्ञा करी. ते पतिनी आज्ञा थतां कंडरीक पासे आली आवी. पणु  
न्याये तेणे स्त्रीना वेषमा धूपायेव पुरुषने जेयो त्याये ते पोताना शियणी  
रक्षा करती कोध पणु रीते पोताना पति पासे पाछी करी ॥ १५ ॥

॥ आ पंढरमुं स्त्री दृष्टान्त समाप्त ॥ १५ ॥

सोणमुं पतिदृष्टान्त—

कोई एक जेतरेना मालीक ओक जेडूत हुतो. ते कमजोर हुतो. तेने कमजोर  
जेधने कोध भीज धूर्त जेडूते तेने कहुं, “लाछा । आ जेतरेना मालीक तमे  
नथी, हुं छुं, कारण के मारा सिवाय अहीं भीजे कोध जेतरेना मालिक न कोध  
शके. ” आ रीते आ जेतरे जाणतमां ते जन्ने वच्ये विवाह थये. आपस आप-  
समां तेना कोध निवेडो न आवता तेओ कयेरीमां पडोन्था. कयेरीमां तेमणे  
पोतपोतानी हुकीकत रणु करी, न्यायाधीशे धणा ध्यानपूर्वक ते जन्नेनी बात  
सांलणी. छेवटे तेमणे ते दरेकने अलग अलग ओकान्तमां लध जधने पूछ्युं—

अतीतेषु द्वादशेषु वर्षेषु प्रतिवर्षं यानि धान्यानि त्वया समुत्पादितानि तानि क्रमशो ब्रूहि । एवमुक्तः क्षेत्रपतिः क्रमेण द्वादशेषु वर्षेषु तत्रोत्पादित धान्यानां नामान्युक्तवान् । अपरेण धूर्तेन तु तद्विपरीतमेवोक्तम् । न्यायाधीशः पुनराह—स्वभाषिते प्रमाणपत्रं प्रदर्शय । तदा क्षेत्र पतिना प्रतिवर्षीयं प्रमाणपत्रं स्वगृहादानीय तस्मै प्रदर्शितम् । अपरो धूर्तस्तु प्रमाणपत्रमानेतुमसमर्थो जातः । ततस्तस्मै क्षेत्र स्वामिने न्यायाधीशेन क्षेत्रं प्रदत्तम् ' अपरस्तु धूर्तो निगृहीतः ।

॥ इति षोडशः पतिदृष्टान्तः ॥ १६ ॥

पहिले क्षेत्रपति को पूछा कि—गत बारह वर्षों में प्रत्येक वर्ष में जितना अनाज इस खेत में उपजा है उन सब का हमें पृथग् २ नाम लेकर हिसाब समझाओ । इस तरह न्यायाधीश के कथन को सुनकर क्षेत्रपति ने बारह वर्ष में जो जो अनाज जितना पैदा किया था उस सबका नाम निदेश करते उसको हिसाब समझा दिया । फिर एकान्त में उस धूर्त से यही बात पूछी गई तो उसने उस पहिले कथन से अपना मन्तव्य विपरीत बतलाया । इस तरह उन दोनों की भिन्न २ बातें सुनकर न्यायाधीश ने पुनः उनसे कहा—भाई तुम अपना २ प्रमाण पत्र उपस्थित करो । क्षेत्रपति ने उसी समय घर से लाकर प्रत्येक वर्ष का प्रमाण पत्र न्यायाधीश को लेकर दे दिया । परन्तु जो धूर्त था वह इस बात में असमर्थ पाया गया । फिर न्यायाधीशने वह खेत खेत के मालिक को दिलाया और उस धूर्त को दंडित किया ॥ १६ ॥

॥ यह सोलहवां पतिदृष्टान्त हुआ ॥ १६ ॥

પહેલાં ખેતરના માલિકને પૂછ્યું, “ ગયા બાર વર્ષોમાં દરેક વર્ષ જેટલું અનાજ આ ખેતરમાં પાક્યું હોય તે બધાનો નામ વાર મને હિસાબ સમજાવો.” આ પ્રમાણે ન્યાયાધીશનું કથન સાંભળીને ખેતરના સાચા માલિકે બાર વર્ષમાં જે જે અનાજ જેટલું જેટલું પાક્યું હતું તે બધાના નામના ઉલ્લેખ સાથે તેનો હિસાબ સમજાવી દીધો. પછી એકાન્તમાં ધૂર્તને પણ એ જ વાત પૂછવામાં એવી, તો તેણે પહેલા ખેડૂતના કથન કરતાં પોતાનું વિપરિત મતવ્ય બતાવ્યું. આ પ્રમાણે તે બન્નેની જુદી જુદી વાત સાંભળીને ન્યાયાધીશે ફરીથી તેમને કહ્યું, “ભાઈઓ! તમે પોતપોતાની સાળીતિઓ રજુ કરો.” ક્ષેત્રપતિએ તરત જ ઘરે જઈને પ્રત્યેક વર્ષના પાકનું પ્રમાણપત્ર લાવીને ન્યાયાધીશ આગળ રજુ કર્યું. પણ ધૂર્ત તેમ કરવાને અસમર્થ નિવડ્યો. પછી ન્યાયાધીશે તે ખેતર ખેતરના સાચા માલિકને અપાવ્યું અને ધૂર્તને શિક્ષા કરી ॥ ૧૬ ॥

આ સોળમું પતિદૃષ્ટાન્ત સમાપ્ત ॥ ૧૬ ॥

અથ સપ્તદશઃ પુત્રદૃષ્ટાન્તઃ—

કસ્યચિદ્ વણિજો દ્વે માર્યેસ્તઃ । તત્રૈકા પુત્રવતી, અપરાત્વપુત્રાઽઽસીત્ । અપુત્રા માર્યા તં સપત્નીવાલકં લાલયતિ પાલયતિ । અતઃ સ વાલકો ન જાનાતિ—ઇયં મમ માતુઃ સપત્ની ઇતિ ।

एकदा स वणिक् स्वभार्यापुत्रसहितो देशान्तरं गतः । गतमात्र एवासौ मृतः । ततस्तयोः स्त्रियोः पुत्रार्थं कलहो जातः । एकावदति—अयं मम पुत्रस्ततोऽहं गृह-स्वामिनी । अपराप्राह—अयं मम पुत्रस्ततोऽहमेव गृहस्वामिनी ’ इति । एवं तयो-र्विवादे प्रवृत्ते सति द्वे अपि न्यायालयं गते । राजसचिवः स्वबुद्ध्या निर्णेतुं राज-पुरुषान् प्राह—अनयोर्यावन्ति धनानि सन्ति, तेषां द्वि भागं कृत्वा बालकं करपत्रेण

સત્રહવાં પુત્રદૃષ્ટાન્ત—

કિસી વણિક્ કે દો સ્ત્રિયાં થીં । ઇનમેં એક પુત્રવતી થી ઓર દૂસરી પુત્ર વિના કી થી । જિસકે પુત્ર નહીં થા વહ સ્ત્રી અપની સૌત કે પુત્ર કા લાલન પાલન બડે ચાવ સે કિયા કરતી થી, ઇસલિયે ઉસ વાલક કો યહ નહીં માલૂમ હો પાયા કિ યહ મેરી માં હૈ ઓર યહ મેરી વિમાતા હૈ । એક દિન કી બાત હૈ કિ વહ વણિક્ ઇન દોનોં સ્ત્રિયોં કે સાથ વાલક કો લેકર પરદેશ ગયા, પરન્તુ દૈવદુર્વિપાક સે વહ જાતે હી મર ગયા । ઉસકે મરતે હી ઉન દોનોં સ્ત્રિયોં મેં ઉસ લડકે કે લિયે પરસ્પરમેં વિવાદ યદા હો ગયા । એક ને કહા — યહ મેરા લડકા હૈ અતઃ મેં ઘર કી સ્વામિની હૂં । દૂસરીને કહા—યહ મેરા લડકા હૈ, અતઃ મેં હી ઘરકી સ્વામિની હૂં । ઇસ પ્રકાર જબ ઉન દોનોં મેં વિવાદ બઢ ગયા તો વે દોનોં હી અન્ત મેં ન્યાયાલય કી શરણ મેં પહુંચી । રાજમંત્રી ને અપની

સત્તરમું પુત્રદૃષ્ટાન્ત—

કોઈ એક વણિકને એ પત્ની હતી. તેમાંની એકને એક પુત્ર હતો ખીજીને કંઈ સંતાન ન હતું. જેને સંતાન ન હતું તે સ્ત્રી પોતાની શોકયના પુત્રનું ઘણા પ્રેમથી લાલન પાલન કરતી હતી, તેથી તે બાળકને તે ખબર પણ ન હતી કે તે તેની માતા છે કે અપરમાતા. એક દિવસ તે શેઠ બન્ને પત્નીઓ તથા બાળકને લઈને પરદેશ ગયો, પણ દુર્ભાગ્યે તે ત્યાં પહોંચતા જ મરણ પામ્યો. તેનું મૃત્યુ થતાં જ તે બન્ને સ્ત્રીઓ વચ્ચે તે બાળકની બાબતમાં ઝગડો ઉભો થયો. એકે કહ્યું—આ મારો પુત્ર છે મારે ઘરની માલિક હું છું. ખીજી સ્ત્રીએ કહ્યું—આ તો મારો પુત્ર છે. તેથી હું જ ઘરની માલિક છું. આ રીતે બન્ને વચ્ચે ઝગડો વધતાં તે બન્ને ન્યાયાલયમાં પહોંચી. રાજમંત્રીએ પોતાની બુદ્ધિથી

द्वौ भागौ कुरुत । एकैकं भागमेकैकस्यै समर्पयत । एतन्मन्त्रिवचनं श्रुत्वा तस्य बालकस्य जननी शिरसि कृतवज्रप्रहारेव परमव्याकुला सति मंत्रिणं प्राह—हे स्वामिन् ! अयमेतस्या एव पुत्रोऽस्तु अहं तु पुत्रं नेच्छामि । पुत्रोऽयमस्या एव दीयताम्, किं त्वयं न हन्तव्यः वरमियं गृहस्वामिनी भवतु नास्ति मे किञ्चिदपि दुःखम् । अहं त्वन्यस्य कस्यचिद्दासीभूत्वा दूरस्थिताऽपि बालकं यदि जीवितं द्रक्ष्यामि, तावताऽपि मनसि मम संतोषः स्यात् । किं तु बालकमनालोक्य मया प्राणान्

बुद्धि से उन दोनों के विवाद का निर्णय किया और राजपुरुषों को आदेश दिया, कि इन दोनों का जितना द्रव्य है उसके दो विभाग करो, साथ में बालक के भी करोंत से चीर कर दो टुकड़े करो । एक एक टुकड़ा और द्रव्य का एक एक विभाग इन दोनों को दे दो । इस तरह मंत्री के वचन सुनकर बालक की माता के हृदय में चोट पहुँची । वह वज्रके प्रहार से निहत होकर रोती हुई मंत्री से कहने लगी—स्वामिन् । बालक के दो टुकड़े मत करवाइये । भले ही यह बालक इसका रहे । मुझे ऐसी अवस्था में बालक की चाहना नहीं है । पुत्र इसको ही दे दीजिये । कम से कम इसके पास रहने से यह जीवित तो रहेगा । मुझे घर की स्वामिनी बनने में ऐसी अवस्था में कोई सुख नहीं है । यही घर की स्वामिनी बने, मुझे इस बात का जरा भी दुःख नहीं है । मैं तो किसी दूसरे के घर का काम काज कर अपने दिन निकाल लूंगी, परन्तु बालक तो सुरक्षित रहेगा और मैं वहीं से इसको देख र कर आनंदित

तेमना जगडानो निर्णय कर्यो अने राजपुरुषोने टुकड कर्यो के आ अन्ने पासो जे धन छे तेना जे लाग पाडो अने आणकना पणु करवतथी यीरीने जे टुकडा करो. जेक जेक टुकडो तथा द्रव्यनो जेक जेक डिस्सो आ अन्नेने आपो. मंत्रीना जेवां वचनो सांलणतां ज आणकनी माताना हृदयमां आघात लाग्यो. तेना पर जणु वज्रनो प्रहार पड्यो छेय तेम आघात पाभेली ते रडती रडती मंत्रीने कहेवा लागी, “साडेअ आणकना जे टुकडा न करावशो. लवे आ आणक तेनी पासो रडे. मने आ हावतमां आणक देवानी छिछा नथी. पुत्र तेने ज आपी हो. तेनी पासो रडेवाथी ते अवतो तो रडेशे. आ स्थितिमां घरनी मालिक अनवामां मने कंई सुअ नहीं मणे. लवे ते ज घरनी मालिक अने, मने जे वातनुं बिलकुल दुःअ नथी. हुं तो जीज दोडोना घरनुं कामकाज करीने अंहणीना आकीना दिवसो काफीश, पणु आणक तो सुरक्षित रडेशे, अने

ધારયિતું ન શક્યતે । તદા તત્સપત્ની તુ ન કિંચિત્ પ્રોક્તવતી । તતઃ સચિવસ્તાં  
પુત્ર શોકાર્તો દૃષ્ટ્વા જાનાતિ-एषा बालकस्य माता, तस्मादियमेव गृहस्वामिनी  
भवितुमर्हति, इति । ततो मन्त्रिणा प्रोक्तम्-अयमेतस्याः पुत्रो नास्या इति, सैव च  
गृहस्वामिनी कृता, अन्या तु निगृहीता ॥

॥ इति सप्तदशः पुत्रदृष्टान्तः ॥ १७ ॥

अथाष्टादशो मधुसिक्थदृष्टान्तः—

મધુયુક્તં સિક્થં-મધુસિક્થં મધુચ્છત્રમ્ । કસ્યાશ્ચિત્ પર્વતીય નદ્યા ઉભયતટે  
ધીવરા નિવસન્તિ । ઉભયતટનિવાસિનાં ધીવરાણાં જાતીય સમ્બન્ધે સત્યપિ પરસ્પરં  
વૈમનસ્યમાસીત્ । અતસ્તે ધીવરાઃ સ્વ સ્વ ભાર્યીં પરતીરગમને પ્રતિષેધયન્તિસ્મ ।

હોતી રહુંગી । બાલક કે મર જાને પર તો મહારાજ ! મેં કિસી ખી તરહ  
જીવિત નહીં રહ સકતી હું । જબ બાલક કી માતા એસા કહ રહી થી  
તબ उस विमाताने ऐसा कुछ नहीं कहा । अतः मंत्री ने यह जान लिया  
कि बालक की खास माता यही है और यह नहीं है । इसलिये यही  
गृहस्वामिनी के योग्य है । ऐसा जानकर वह पुत्र उसको सोंपा और  
गृहस्वामिनी का पद भी उसको ही दिया । दूसरी उस विमाता को  
दंडित किया ॥ १७ ॥

॥ यह सत्रहवां पुत्रदृष्टान्त हुआ ॥ १७ ॥

अठारहवां मधुसिक्थ (मधुच्छत्र) दृष्टान्त—

एक नदी थी उसके दोनों तट पर धीवर लोग रहते थे । इनमें  
यद्यपि जातीय संबंध था तो भी ये परस्पर में लड़ते झगड़ते रहते थे ।

હું ત્યાંથી જ તેને જોઈને આનંદિત થતી રહીશ. મહારાજ ! બાળક મરશે તો  
હું કોઈપણ રીતે જીવી શકીશ નહીં' જ્યારે બાળકની માતા આમ કહેતી  
હતી ત્યારે વિમાતા એ એવું કંઈ પણ ન કહ્યું. તેથી મંત્રીએ સમજી લીધું  
કે બાળકની સાચી માતા આ સ્ત્રી જ છે. પેલી નથી. તેથી તેજ ઘરની માલિક  
થવાની હકદાર છે. તેમ સમજીને તેમણે તે પુત્ર તેને સોંપ્યો અને ઘરની  
માલિક પણ તેને જ બનાવી. અને બીજી સ્ત્રીને-વિમાતાને સજા કરી. ॥ ૧૭ ॥

આ સત્તરમું પુત્રદૃષ્ટાંત સમાપ્ત ॥ ૧૭ ॥

અઠારમું મધુસિક્થ (મધુચ્છત્ર)નું દૃષ્ટાંત—

એક નદી હતી. તેના બન્ને કાંઠે માછીમારો રહેતાં હતાં. તેઓ વચ્ચે  
જાતિવ્યવહાર હોવાં છતાં તેઓ અંદરે અંદર ઝગડતાં હતાં આ ઝગડાને કારણે

किं तु यदा धीवराः स्वव्यवसायार्थं गृहाद् बहिर्गच्छन्ति, तदा तेषां पत्न्यः परतीरे गत्वा स्वस्वसम्बन्धिनां गृहे गमनागमनं कुर्वन्ति ।

एकदा काचिद्धीवरी स्वगृहस्य समीपे कुञ्जे मधुच्छत्रं परतीराद् दृष्टवती । द्वितीयदिवसे तस्याः पतिर्मधुक्रयणार्थं प्रवृत्तः । तदा तस्य भार्या प्राह—मधु मा कृणीहि, आगच्छ तव स्वगृहसमीपे एव मधुच्छत्रं दर्शयामि ।—इत्युक्त्वा मधुच्छत्रं दर्शयितुं पत्या सह गतवती । किन्तु तया मधुच्छत्रं तत्र न दृष्टम् । ततः सा साश्चर्यं

इस लड़ाई झगड़े में विचारी स्त्रियों पर आपत्ति आती रहती, वें दूसरे तट पर कभी भी अपने संबंधियों के यहां नहीं जा सकती थीं, परन्तु ये लोग अपने २ व्यापार के लिये घर से बाहर चले जाते थे उस समय वे स्त्रियां अपने २ संबंधियों के घर पर आती जाती थी । अब एक दिन की बात है किसी धीवरी ने दूसरे तट पर से अपने घर के पास कुंज में एक मधुच्छत्र लगा हुआ देखा । दूसरे दिन ही उसके पति को मधु की आवश्यकता पड़ गई तो वह मधु लेने के लिये जब बाहर जाने लगा तो उसकी पत्नी ने मना करते हुए उससे कहा—बाहर मधु लेने को मत जाओ, तुम्हारे घर के पास ही मधुच्छत्र लगा हुआ है, चलो, हम तुम्हें बतलावें । ऐसा कहकर वह उस मधुच्छत्र को बताने के लिये पति के साथ गई, परन्तु वहां उसको मधुच्छत्र दिखलाई नहीं पड़ा । उसने आश्चर्य के साथ अपने पति से कहा—यहां से तो मधुच्छत्र दिखलाई

विचारी स्त्रीओ पर मुश्केली आवी पडती. तेओ सामे कांठे रहेता पोताना सगां-संभंधीओने मणवा जठ शकती नडीं; छतां पण तेओ न्यारे पोत-पोताना धंधाने भाटे अडार जतां त्यारे ते स्त्रीओ पोत-पोताना संभंधीओने त्यां आवती-जती रहेती. हुवे ओक द्विसे ओवुं अन्युं के कोर भाछणे भीज कांठेथी पोताना घरनी पासेनी वृक्षकुंजमां ओक मधपूडा लागेलेो जेथो. भीजे द्विसे ज तेना पतिने मधनी जर पडी, तेथी ते मध लेवा भाटे अडार जवा लाग्यो. त्यारे तेनी पत्नीओ तेने अडार जतो रेडीने कहुं—“मध लेवा भाटे अडार जशो मा. तमारा घरनी पासे ज मधपूडा लागेलेो छे, यादेो ते हुं तमने अतावुं.” आम कहीने ते मधपूडा अताववा भाटे पतिनी साथे गछ, पण त्यां तेने मधपूडा देआथो नडीं. तेछे आश्चर्य साथे पोताना पतिने कहुं—“अडीं तो मधपूडा देआतो नथी, पण चेदा किनारेथी ते स्पष्ट देआय छे, तो यादेो त्यांथी अतावुं.” पत्नीनी ओवी बात सांलणीने ते ते किनारा पर तेनी साथे गयो. जे घरमां तेने आववा-जवानी मनाछ करी डती, ओज घरनी पासे



वदति - परतीरतो मधुच्छत्रं स्पष्टं दृश्यते, गच्छ तत्र गत्वा पश्यामि । धीवरोऽपि  
तया सह परतीरं गतः । तत्र सा प्रतिषिद्धगृहस्य समीप एव स्थित्वा मधुच्छत्रं  
प्रदर्शितवती । धीवरेण ज्ञातम्-इयमत्र प्रतिषिद्धे गृहे याति समायाति च । इति  
धीवरस्यौत्पत्तिकी बुद्धिः ।

इत्यष्टादशो मधुसिक्थदृष्टान्तः ॥ १८ ॥

अथैकोनविंशतितमो मुद्रिकादृष्टान्तः—

एकस्मिन्नगरे सत्यवादिनामकः पुरोहितो वर्तते । लोकस्यैवं विश्वासो जातः—  
अयं समयातिक्रमेऽपि केनचिद्भृतं निक्षेपं ददाति । एवं जातविश्वासः कश्चिद्  
द्रमक ( दरिद्रः )—स्तस्यान्तिके स्वनिक्षेपं निधाय देशान्तरं गतः ।

नहीं पड़ता है, परन्तु उस तट से देखने से यह स्पष्ट दिखलाई देता है,  
इस लिये चलो वहां से दिखलाऊँ । पत्नी की ऐसी बात सुनकर वह उस  
तीर पर उसके साथ चला गया । जिस घर में उस स्त्री का आना जाना  
निषिद्ध कर रखा था वह उसी घर के पास खड़ी होकर अपने पति को  
मधुच्छत्र दिखाने लगी तो पतिने अपनी बुद्धि से जान लिया कि यह मेरे  
निषेध किये हुए घर में प्रतिदिन आती जाती है ॥ १८ ॥

॥ यह अठारहवां मधुसिक्थ (मधुच्छत्र) दृष्टान्त हुआ ॥ १८ ॥

उन्नीसवां मुद्रिकादृष्टान्त—

एक नगर में कोई सत्यवादी नाम का पुरोहित रहता था । उसके  
ऊपर लोगों का ऐसा विश्वास जमा हुआ था कि यह अवधि निकल  
जाने पर भी कभी भी किसी की धरोहर को हड़प कर अपना नहीं करता  
है—वापिस लौटा देता है । एक समय किसी दरिद्र ने उसके पास अपनी  
कुछ धरोहर रखकर देशान्तर गया ।

उली रडीने ते तेना पतिने मधपूडा अताववा लागी त्यारे पतिअे पोतानी  
बुद्धिथी समलु दीधुं के आ भें ज्यां ज्वानी मनाई करी छे ते घेर दररोज  
आवे जाय छे. ॥ १८ ॥

आ अगीयारमुं मधपूडानुं दृष्टान्त समाप्त ॥ १८ ॥

ओगणीसमु मुद्रिका दृष्टान्त—

ओक नगरमां सत्यवादी नामने ओई ओक पुरोहित रडेतो हुतो. तेना उपर  
होकेने ओवो विश्वास ओसी गयो हुतो के मुहत प्रसार थई जवा छतां पणु  
ते ओईनी अनामत (थापणु) पयावी पाउतो नथी. ओक वणत ओई दरिद्र  
माणस तेनी पासे पोतानी अमुक थापणु भूझीने परदेश गयो.

સ વિદેશે બહુનિ દિનાનિ સ્થિત્વા યદા સ્વગૃહમાગતસ્તદા પુરોહિતં પ્રાહ-હે પુરોહિત ! મયા ત્વયિ નિહિતો નિક્ષેપો મહં દીયતામ્ । પુરોહિતઃ પ્રાહ-કસ્ત્વમ્ ? તવ નિક્ષેપઃ કીદૃશઃ?, નાહં જાનામિ તવ નિક્ષેપમ્-ઇતિ પુરોહિત વચનં શ્રુત્વા સ સ્વનિક્ષેપાર્થં ચિન્તા-તુરા જાતઃ । દ્વિતીયદિવસે રાજમન્ત્રી પથિ ગચ્છંસ્તેન દ્રમકેણ દૃષ્ટઃ । સ રાજમન્ત્રિ-ણમાહ-મહાનુભાવ ! મયા પુરોહિતાન્તિકે સહસ્રરૂપ્યકનિક્ષેપો નિહિતઃ, સ મહં ન દાતુમિચ્છતિ, કૃપયા દાપયતુ, મહાનુપકારો ભવિષ્યતિ । સર્વં વૃત્તં વિજ્ઞાય મન્ત્રી તસ્મિન્

વહાં રહતે ૨ ઉસકો બહુત દિન નિકલ ચુકે । જવ વહ વાપિસ વહાં સે અપને ઘર પર આયા તો ઉસને પુરોહિત સે કહા-પુરોહિતજી ! મૈને આપકે પાસ જો ધરોહર રચ્છ છોડી હૈ વહ અબ સુઝે દે દીજિયે । સુનતે હી પુરોહિત ને કહા-તુમ કૌન હો ? ઔર કૈસી તુમ્હારી ધરોહર હૈ ? સુઝે તો ઇસ કી ચ્વર તકુ ખી નહીં હૈ । પુરોહિત કી ઇસ વાત સે ચિચારે ઉસ દરિદ્ર કે ચિત્ત મેં બડી ચિન્તા હુઈ ઔર વહ વિશેષ ચિચાર મેં પડ ગયા । દૂસરે દિન કી વાત હૈ કિ જવ રાજમંત્રી વહાં સે હોકર જા રહે થે તો ઉસ દરિદ્રને ઉન્હેં દેચ્છ લિયા ઔર દેચ્છતે હી ઉનકે પાસ જાકર કહને લગા-મહારાજ ! મૈને પુરોહિતજી કે પાસ ઇક હજાર રૂપયા ધરોહર કે રૂપ મેં રચ્છ છોડે થે અબ વે ઉન્હેં દેતે નહીં હૈ, બડી કૃપા હોગી નાથ ! જો આપ ઉન્હેં દિલા દેવેં । સુઝ ગરીબ કા બડા ઉપકાર હોગા । દરિદ્ર કી ઇસી વાત સુનકર મંત્રી કો ઉસકે ઉપર બડી દયા આગઈ । જવ મંત્રી ને સબ વાત અચ્છી તરહ સમજ્જ લી તો ઉસને જાકર યહ વૃત્તાન્ત રાજા સે ખી કહ દિયા । રાજાને ઉસી સમય પુરોહિતજી કો બુલાયા

ત્યાં રહેતા રહેતા તેનો ઘણો સમય વ્યતીત થઈ ગયો. જ્યારે તે ત્યાંથી પાછો ફર્યો ત્યારે તેણે પુરોહિતને કહ્યું-“મેં તમારે ત્યાં જે થાપણ મૂકી છે તે હવે મને પાછી આપો.” તે સાંભળતા જ પુરોહિતે કહ્યું, “તમે કોણ છો ? અને કેવી તમારી થાપણ છે ? હું તો તે બાબતમાં કંઈ જ બાણુતો નથી.” પુરોહિતની એ વાતથી બિચારા દરિદ્રના મનમાં ચિન્તા થઈ અને તે મુંજવણમાં પડ્યો. ખીજે દિવસે જ્યારે રાજમંત્રી ત્યાંથી જતાં હતાં ત્યારે તે દરિદ્રે તેમને બોલ્યા અને તેમને બોલતા જ તેમની પાસે જઈને કહ્યું-“મહારાજ ! મેં એક હજાર રૂપીયા પુરોહિ-તજી પાસે થાપણ રૂપે મૂક્યા હતા. હવે તેઓ મને તે આપતા નથી, આપ તે મને અપાવો તો આપની મોટી મહેરબાની. મારા જેવાં ગરીબ ઉપર મોટો ઉપકાર કર્યો ગણાશે.” દરિદ્રની એવી વાત સાંભળીને મંત્રીને તેના પર દયા આવી. જ્યારે મંત્રીએ બધી વિગત બરાબર સમજી લીધી ત્યારે તેણે રાજા પાસે જઈને આખો વૃત્તાન્ત કહી દીધો. રાજાએ એજ વખતે પુરોહિતને બોલાવ્યો.

દ્રમકે દયાવાનુ જાતઃ । મન્ત્રિણા રાજે નિવેદિતમ્ । તતો રાજા પુરોહિતમાહૂય વદતિ-અસ્ય દ્રમકસ્ય નિક્ષેપસ્ત્વયા ધૃતઃ સ તસ્મૈ દીયતામ્ । પુરોહિતઃ ગ્રાહ-રાજન્ ! અસ્ય કિમપિ મયા ન ગૃહીતમ્ , કિં દેયમ્ ? । પુરોહિતવચનં શ્રુત્વા રાજા તૂષ્ણીં વભૂવ । પુરોહિતે ગૃહં ગતે સતિ રાજા તં દ્રમકં પૃથ્વાન્-સત્યં વદ, કસ્યાન્તિકે ત્વયા નિક્ષેપઃ સ્થાપિતઃ । રાજા પૃથોઽસૌ દ્રમકો 'યદા યત્ર યસ્ય સમક્ષે ચ નિક્ષેપઃ સ્થાપિતઃ ' સર્વ રાજે નિવેદિતવાન્ । તતો રાજા તદ્વચનં નિર્ણેતુમેકદા તેનપુરોહિતેન સહ કંચિત્ ક્રીડાવિશેષં કર્તું પ્રવૃત્તઃ । તદા નૃપઃ ક્રીડાક્રમેણ સ્વકીયાઙ્ગુલિ-મુદ્રિકાં પુરોહિતસ્ય હસ્તે દત્ત્વા પુરોહિતસ્ય મુદ્રિકાં સ્વયં ગૃહીતવાન્ । તદ્વૃત્તં

और कहा-तुम्हारे पास जिस दरिद्र की धरोहर रखी हुई है वह उसको वापिस कर दो। राजा की बात सुनते ही पुरोहित ने कहा-महाराज ! मेरे पास तो इसकी कोई भी धरोहर नहीं रखी हुई है मैं क्या दूँ ? पुरोहित की ऐसी बातें सुनकर राजा चुप हो गया। पुरोहित वहाँ से उठकर अपने घर चला आया। अब राजाने उस दरिद्र को बुलाकर पूछा-तुम सत्य २ कहना किसके पास तुमने धरोहर रखी है ?। राजा के पूछने पर उस दरिद्र ने जिस समय जहाँ जिसके समक्ष धरोहर रखी थी वह सब बात राजा से स्पष्ट कह दी। अब राजा ने इसका निर्णय करने के लिये अपनी बुद्धि से एक उपाय सोचा, जो इस प्रकार है-एक दिन राजा ने पुरोहित को बुलाकर उनसे कहा-पुरोहितजी ! आओ, आज हम लोग कोई विशेष खेल खेलें। ऐसा ही हुआ। वे दोनों क्रीडा-विशेष करने लगे। खेल खेल में अंगूठियों का उन दोनों ने परिवर्तन

અને કહ્યું, “ તમારી પાસે જે દરિદ્રની થાપણ પડેલ છે તે તેને પાછી સોંપો.” રાજાની વાત સાંભળતા જ પુરોહિતે કહ્યું-“ મહારાજ ! મારે ત્યાં તો તેણે મૂકેલી કોઈ થાપણ નથી. હું શું આપું ? ” પુરોહિતની એવી વાત સાંભળીને રાજા ચુપ થઈ ગયો, પુરોહિત ત્યાંથી ઉઠીને પોતાને ઘેર આવ્યો ગયો. હવે રાજાએ તે દરિદ્રને બોલાવીને પૂછ્યું અને કહ્યું, “ તું સાચે સાચું કહે, કોની પાસે તે થાપણ મૂકી છે ? ” ત્યારે તેણે જે સમયે, જ્યાં, જેની સમક્ષ થાપણ મૂકી હતી તે બધી વિગત રાજાને સ્પષ્ટ કહી દીધી. હવે રાજાએ તેના નિર્ણય કરવાને માટે પોતાની બુદ્ધિથી એક ચુક્તિ શોધી જે આ પ્રમાણે હતી-એક દિવસ રાજાએ પુરોહિતને બોલાવીને કહ્યું-“ પુરોહિતજી ! ચાલો, આજે આપણે કોઈ રમત રમીએ. એવું જ બન્યું. તે બંને કોઈ ખાસ રમત રમવા લાગ્યા. રમતા રમતા તે બંનેએ પોતાની અંગૂઠીઓ બદલી લીધી. રાજાએ પોતાની

પુરોહિતેન ન જ્ઞાતમ્ । તતો રાજા પુરોહિતાદ્ગુલિમુદ્રિકાં કસ્યચિત્ સ્વપુરુષસ્ય હસ્તે દત્ત્વા પ્રોક્તવાન્—પુરોહિતસ્ય ગૃહે ગત્વા તદ્ધાર્યામેવં વદ—અહં પુરોહિતેન પ્રેષિતો-ઽસ્મિ, इदं च नाममुद्राऽभिज्ञानम्, तस्मिन् दिने तस्यां वेलायां या निक्षेपस्य नवलिका त्वत्समक्षममुकप्रदेशे स्थापिता तां शीघ्रं समर्पय ' इति । नृपाज्ञया तेन पुरुषेण तथैव कृतम्, साऽपि च पुरोहितस्य भार्या नाममुद्रां दृष्ट्वाऽभिज्ञानमिलनाच्च ' सत्यमेष पुरोहितेन प्रेषितः ' इति विश्वासं कृतवती । ततः सा पुरोहितभार्या तां द्रमकनिक्षेपनवलिकां समर्पितवती । राज्ञा चान्यासां नवलिकानां मध्ये सा द्रमक-

કર લિયા-રાજા ને અપની અંગૂઠી પુરોહિત કો પહિરા દી ઓર પુરોહિત કી અંગૂઠી રાજા ને પહિર લી-“યહ એસા ક્યોં કિયા?” યહ બાત પુરોહિત કે ધ્યાનમેં નહીં આઈ । રાજાને પુરોહિત કો અંગૂઠો કિસી રાજપુરુષ કે હાથ મેં દેતે હુએ કહા-જાઓ પુરોહિત કે ઘર પર, વહાં ઉસકી પત્ની સે એસા કહના-“મુજે પુરોહિતજી ને ભેજા હૈ, વિશ્વાસ ન હો તો દેખો ઉનકે નામ કી યહ મુદ્રિકા હૈ । ઓર ઉન્હોંને યહ કહલા ભેજા હૈ કિ ઉસ દિન, ઉસ સમય મેં જો ધરોહર કી નવલિકા (પોટલી)-તુમ્હારે સમક્ષ અમુક સ્થાન પર મૈંને રાખ દી થી વહ ઇસકો શીઘ્ર હી દે દો ।” રાજપુરુષ ને પુરોહિત કે ઘર પર આકર એસા હી ઉનકી ધર્મપત્ની સે કહા । ધર્મપત્ની ને ભી “ઇસકો અપને નામ કી મુદ્રિકા દેકર હી પુરોહિત ને મેરે પાસ ભેજા હૈ એસા પૂર્ણ વિશ્વાસ ઉસ મુદ્રિકા કો દેખકર કર લિયા । ઓર જો ધરોહર કી નવલિકા પુરોહિત ને ઉસકે સમક્ષ જહાં રાખી થી ઉસકો ઉઠાકર ઉસને ઉસ રાજપુરુષ કો દે દી ।

અંગૂઠી પુરોહિતેને પહેરાવી દીધી, અને પુરોહિતની અંગૂઠી પોતે પહેરી લીધી. “આમ કેમ કર્યું?” તે વાત પુરોહિતના ધ્યાનમાં આવી નહીં. રાજાએ પુરોહિતની અંગૂઠી કેાઈ રાજપુરુષના હાથમાં આપીને કહ્યું-“જાઓ, પુરોહિતજીને ઘેર જઈને તેમની પત્નીને આ પ્રમાણે કહેજો-“મને પુરોહિતજીએ મોકલ્યો છે. વિશ્વાસ ન આવે તો જુવો, એમના નામની આ મુદ્રિકા છે, અને કહેવરાવ્યું છે કે તે દિવસે, તે સમયે મેં જે થાપણની થેલી તમારી રૂબરૂ અમુક સ્થાન મૂકી છે તે આને તરત જ આપી દેશો.” રાજપુરુષે પુરોહિતને ઘેર જઈને તેમની પત્નીને એ પ્રમાણે કહ્યું-તેમની ધર્મપત્નીએ પણ “આ માણસને પોતાની મુદ્રિકા આપીને પુરોહિતજીએ જ મારી પાસે મોકલ્યો છે” એવો સંપૂર્ણ વિશ્વાસ તે મુદ્રિકાને જોઈને મૂક્યો. અને જે થાપણની થેલી પુરોહિતજીએ તેની રૂબરૂમાં જ્યાં મૂકી હતી ત્યાંથી લઈને તે રાજપુરુષને આપી દીધી.

नवलिका प्रक्षिप्ता । ततो राजा तं द्रमकमाहूय स्वनवलिकां स्पर्शयितुमादिष्टवान् । ततोऽसा द्रमकः नवलिकां परिज्ञाय हस्तेन स्पृष्टवान् । ततो राजा 'द्रमकोऽयं सत्यं ब्रवीति'—इति मत्वा तां नवलिकां ग्रहीतुमादिशति । पुरोहितं तु दण्डयति स्म ।

॥ इत्येकोनविंशतितमो मुद्रिकादृष्टान्तः ॥ १९ ॥

अथ विंशतितमोऽङ्कदृष्टान्तः—

केनाऽपि पुरुषेण कस्यचित् श्रेष्ठिनः समीपे सहस्रसंख्यकरूप्यकैः संभृता नवलिका निक्षिप्ता । स श्रेष्ठि नवलिकाया अधोभागं छिन्वा ततो रूप्यकाणि निःसार्य कूटरूप्यकैर्भृत्वा छिन्नभागं सीवित्वा यथास्वरूपां तां नवलिकां स्थापितवान् ।

राजपुरुष ने लाकर वह राजा को दे दी । राजाने अन्य पोदलियों के साथ उसको मिलाकर बीच में रख दिया । पश्चात् दरिद्र को बुलाकर उस से कहा—देखो इन पोदलियों में जो तुम्हारी धरोहर की पोदली हो उसको तुम सुझे छूकरके बताओ । राजा की आज्ञा से उस दरिद्र ने वैसा ही किया । राजा ने तब जान लिया कि यह दरिद्री ठोक कहता है और यह इसकी ही धरोहर की पोदली है । उसे आदेश दिया कि तुम इसको ले लो । दरिद्र ने उसे ले लिया और बहुत प्रसन्न हुआ । राजाने इस कृत्य पर पुरोहित को दंडित किया ॥ १९ ॥

॥ यह उन्नीसवां मुद्रिकादृष्टान्त हुआ ॥ १९ ॥

बीसवां अंकदृष्टान्त—

किसी पुरुष ने किसी सेठ के पास एक हजार रूपयों से भरी हुई एक नौली निक्षेपरूप में रखी । सेठ चालाक था । उसने उस नौली के

राजपुरुषे लावीने ते राजने आपी. राजने भील थेदीयो लेगी तेने पणु वथमां गोठनी. पछी दरिद्रने जोलावीने कथुं, “जुओ, आ थेदीयोमांथी जे तारी थापणुनी थेदी डोय तेने स्पर्शनि मने अताव.” राजनी आज्ञाथी ते दरिद्रे ते प्रमाणे कथुं. राज त्यारे समल गयो डे आ दरिद्र आदमी सायु ज कडे छे, अने आ तेनी ज थापणुनी थेदी छे तेथी तेमणु तेने आदेश आप्यो डे तुं आने लछडे, दरिद्रे ते लछ लीधी अने ते घणो. राल थयो. राजने आ कृत्य भाटे पुरोहितने शिक्षा करी ॥ १८ ॥

आ ओगणीसमुं मुद्रिका दृष्टान्त समाप्त ॥ १८ ॥

वीसमुं अंक दृष्टान्त—

कोई पुरुषे ओक सेठने त्यां ओक हजार रुपिया लरेदी थेदी थापणु तरीडे भूडी. सेठ जालाक छतो. तेणे ते थेदीनो नीचेनो भाग कापीने रुपिया काढी



ततः कालान्तरे निक्षेपस्वामिना स्वनवलिका याचिता । श्रेष्ठी तस्मै नवलिकां दत्तवान् । यदा स नवलिकामुद्घाटय पश्यति तदा सर्वाणि कूटरूप्यकाणि दृष्ट्वा न्यायाधीशसमीपेऽभियागं कृतवान् । न्यायाधीशः पृच्छति - तव नवलिकायां कियन्ति रूप्यकाण्यासन् ? । निक्षेपस्वामी प्राह—सहस्रम् । न्यायाधीशेन परीक्षितम् “ यावान् भागो नवलिकायाश्छिन्न आसीत् तावन्त्येव रूप्यकाण्यवशिष्टानि, नवलिका तु परिपूर्णा जाता । किंतु यावान् भागोऽधस्ताच्छिन्नस्तावान् न्यून इति

नीचे के भाग को काटकर रूपये निकाल लिये और खोटे रूपये उसमें भर दिये तथा फटे हुए भाग को सीकर उसको ज्यों का त्यों कर नौली को रख दी । कुछ दिनों के बाद जिसने वह नौली सेठ के पास रखी थी वह आया और उससे अपनी वह धरोहर की रखी हुई नौली मांगी । सेठ ने मांगते ही उसको वह सौंप दी । उसको लेकर वह ज्यों ही खोलकर देखता है तो उसमें सब के सब रूपये खोटे खोटे उसको दिखलाई दिये । सेठ से कहा तो ‘ उलटा चोर कोतवाल को दंडे ’ वाली कहावत चरितार्थ हुई । विचारा वहां से दौड़ा हुआ न्यायाधीश के पास आया । मुकद्दमा चालू हुआ । न्यायाधीश ने पूछा—भाई ! तुम्हारी नौली में कितने रूपये भरे जा सकते हैं ? तो उसने कहा—एक हजार । न्यायाधीश ने उस नौली में हजार रूपये भरकर परीक्षा की । परन्तु उस नौली के नीचे का भाग जितना कटा था उतने ही रूपये बच गये, नौली भर गई । अवशिष्ट रूपये डाल देने पर वह नौली सीई नहीं जा सकती थी । इससे न्यायाधीश को पूर्ण विश्वास हो गया कि इस नौली के नीचे के

दीधा अने तेमां ओटा इपीया लरी दीधा, तथा इडेला लागने सीवीने तेने इतो तेवे करीने थेदीने मूझी दीधी, डेटलाइ दिवस पछी जेजे ते थेदी शेठने त्यां मूझी इती ते आये अने तेजे पोतानी थापणी थेदी शेठनी पासेथी पाछी भागी, शेठे भागतां ज ते तेने सोंपी दीधी, तेने डायमां लधने जेवी तेजे ओदीने जेध के तरत ज अधा ओटा इपीया तेनी नजर पड्या. तेजे शेठने कहुं तो “ चोर डेटवाणने उडे ” वाणी कडेवत जेवुं थयु, भियारे त्यांथी होउते न्यायाधीशनी पासे गये. डेस यालु थये. न्यायाधीशे पूछ्युं, “ भाई ! तमारी थेदीमां डेटला इपीया समाय छे ? तो तेजे कहुं, “ जेक डजर ”. न्यायाधीशे ते थेदीमां डजर इपीया लरी जेधने तेनी आत्री करी पण ते थेदीनी नीचेने जेटले लाग कपाये इतो तेटला लागमां समाय जेटला इपीया आत्री रहां छतां थेदी लराध गध. आकीना इपीया तेमां लरवाथी ते थेदीने सीवी शकाती न इती. तेथी न्यायाधीशने आतरी थध गध के आ



તદુપરિ સીવિતું ન શક્યતે ” ઇતિ । તતો ન્યાયાધીશેન નિર્ણીતમ્-નૂનમસ્યાપદ્ધતાનિ  
રૂપ્યકાણિ । તતો નિક્ષેપકર્ત્રે ન્યાયાધીશો રૂપ્યકસહસ્રં દાપયતિ સ્મ ।

ઇતિ વિંશતિતમોઽક્ટદષ્ટાન્તઃ ॥ ૨૦ ॥

અથૈકવિંશતિતમો નાણકદષ્ટાન્તઃ—

एको वणिक् कस्यचित् श्रेष्ठिनोऽन्तिके सुवर्णमुद्रासंभृतामेकां नवलिंकां निक्षिप्य  
देशान्तरं गतः । स श्रेष्ठी तस्या नवलिंकाया उत्तमसुवर्णमुद्रा अपहृत्य तावत्संख्यका  
अल्पमूल्याः सुवर्णमुद्रास्तत्र भृत्वा पूर्ववन्नवलिंकां सीव्यति स्म ।

अन्यदा नवलिंका निक्षेपको वणिक् विदेशात्समागतः । स श्रेष्ठिनः समीपं

भाग को काट कर रुपये निकाल लिये गये हैं । अत एव जितना भाग  
काट दिया गया है उतने भाग में आने वाले रुपये अवशिष्ट रह जाते हैं ।  
इस प्रकार परीक्षा कर के यथार्थ निर्णय पर पहुँचे हुए उस न्यायाधीशने  
यही विधान किया कि इसके रुपये निकाल लिये गये हैं । तब उस न्याया-  
धीश ने उस नौली वाले को एक हजार रुपये उस सेठ से दिलवा दिये ॥

॥ यह बीसवां अंकदृष्टान्त हुआ ॥ २० ॥

इक्कीसवां नाणकदृष्टान्त—

कोई एक वणिक् किसी सेठ के पास सोने की मुहरों से भरी हुई  
एक नौली-थैली रखकर बाहर परदेश के लिये गया । सेठने उसमें से  
उत्तम सोने की मुहरों को निकाल कर उसमें उतनी ही और थोड़ी कीमत  
की मुहरें भर दीं, और सीकर उसको रख दी । एक दिन की बात है  
कि वह वणिक् परदेश से लौटकर वापिस आ गया । सेठ के पास

થેલીને નીચેનો ભાગ કાપીને રૂપીયા કાઢી દેવામાં આવ્યા છે, તેથી જેટલો  
ભાગ કાપી લીધો છે તેટલો ભાગમાં ભરી શકાય તેટલો રૂપીયા વધે છે, આ  
પ્રમાણે પરીક્ષા કરીને યથાર્થ નિર્ણય પર આવેલ તે ન્યાયાધીશે એવો નિર્ણય  
કર્યો કે તેના રૂપીયા કાઢી દેવામાં આવ્યા છે. ત્યારે તે ન્યાયાધીશે તે થાપણની  
થેલી વાળાને શેઠ પાસેથી હજાર રૂપીયા અપાવ્યા ॥ ૨૦ ॥

॥ આ વીસમું અંક દૃષ્ટાંત સમાપ્ત ॥ ૨૦ ॥

એકવીસમું નાણક દૃષ્ટાંત—

કોઈ એક વણિક કોઈ એક શેઠને ત્યાં સોનામહોરોથી ભરેલી એક થેલી  
મૂકીને પરદેશ ઉપડ્યો. શેઠે તેમાંથી ઉત્તમ સોનાની મહોરો કાઢી લઈને તેમાં  
એટલી જ પણ્યો આછી કીમતની ખીજી મહોરો ભરી દીધી, અને થેલીને સીવીને  
મૂકી દીધી. એક દિવસ તે વણિક પરદેશથી પાછો ફર્યો. શેઠની પાસે આવીને

ગત્વા સ્વનવલિકાં યાચિતવાન્ । શ્રેષ્ઠિના તસ્મૈ નવલિકા દત્તા । સ નવલિકાં સમ્યગ્ દદ્ધા-“સૈવેયં મમ નવલિકા ” ઇતિ જાનાતિ । યદા તુ ગૃહમાગત્ય તામુદ્દાટિતવાન્, તદા તેન જ્ઞાતમ્-અત્ર સુવર્ણમુદ્રા મદીયા ન સન્તિ, ઇમાસ્તુ સર્વાઃ કૂટમુદ્રાઃ સન્તિ । સ પુનરાગત્ય શ્રેષ્ઠિનઃ સમીપે વદતિ-યા નવલિકા ત્વયા દત્તા તત્ર મદીયા મુદ્રા ન સન્તિ । શ્રેષ્ઠી ગ્રાહ-ત્વયા યા નવલિકા મયિ નિશ્ચિન્તા સૈવ તુભ્યં મયા સમર્પિતા । તતો ન્યાયાલયે વ્યવહારો જાતઃ । ન્યાયાધીશો નવલિકાયા

અસને અપની નૌલી માંગી । સેઠ ને અસકો ડઠાકર અસકી નૌલી દે દી । અસને અસકો પહિચાન કર લે લી । લેકર જબ યહ ઘર આયા ઓર ઘોલકર ડ્યોં હી અસને અસકો દેખા તો અસકો માલૂમ હોને લગા કિ હસમેં જો યે સુવર્ણમુદ્રાઈ ભરી હુઈ હૈં વે મેરી નહીં હૈં । યે તો અનકે સ્થાન મેં કૂટ મુદ્રાઈ ભર દી ગઈ હૈં । અવ વહ અસકો લેકર વાપિસ સેઠ કે પાસ આયા, કહને લગા-હે સેઠ ! જો નૌલી આપને મુઝે દી હૈ અસમેં મેરી સ્વર્ણમુદ્રાઈ નહીં હૈં । વણિક્ક કી હસ વાત સે સચેત હોકર સેઠ ને કહા-ભાઈ ! તુમને જો નૌલી મુઝે રાખને કો દી થી વહી તુમહારે માંગને પર મૈને તુમ્હેં વાપિસ ડઠાકર દી હૈ, અવ મૈં કયા જાનૂં કિ વહ તુમહારી નહીં હૈ । તુમને લેતે સમય મી યહ અચ્છી તરહ દેખ હી લિયા થા કિ યહી નવલિકા હમારી હૈ, અવ એસા કયોં કહતે હો ? સેઠ કે હસ પ્રકાર કે વ્યવહાર સે અસંતુષ્ટ હોકર વણિક્ક ને ન્યાયાલય મેં અસ પર અભિયોગ કર દિયા । ન્યાયાધીશ ને દોનોં તર્ફ કી વાતેં સુનીં ।

તેણે પોતાની થેલી માગી. શેઠે લાવીને તેને તેની થેલી આપી દીધી. તેણે બાળ-બીને તે લઈ લીધી, લઈને જ્યારે તે ઘર આવ્યો અને તેને પોલીને બેઠ તો તેને બળર પડી કે આમાં આ જે સોનામહોરો ભરેલી છે તે મારી નથી. આ તો તેની જગ્યાએ પોટી મહોરો ભરેલી છે. હવે તે તેને લઈને શેઠની પાસે પાછો ફર્યો અને કહ્યું “હે શેઠ ! તમે જે થેલી મને આપી છે તેમાં મારી મહોરો નથી.” વણિકની આ વાતથી સાવચેત બનીને શેઠે કહ્યું-“ભાઈ ! તમે જે થેલી મને સાચવવા આપી હતી એજ થેલી તમે માગી ત્યારે લાવીને મેં તમને આપી છે, હવે હું કેવી રીતે માનું કે તે તમારી થેલી નથી ? તમે તે લેતી વખતે બરાબર બેઠ લીધું હતું કે તે થેલી તમારી જ છે. હવે આ પ્રમાણે કેમ કહો છો ? ” શેઠના આ પ્રકારના વ્યવહારથી અસંતુષ્ટ થઈને વણિકે કચેરીમાં તેની સામે ફરિયાદ દાખલ કરી. ન્યાયાધીશે બંને પક્ષની હકીકત

નિક્ષેપારં પ્રાહ-કસ્મિન્ કાલે ત્વયા નવલિકા મુક્તા । તતો વાણિજા યસ્મિન્ વર્ષે યસ્મિન્ દિવસે નવલિકા નિક્ષેપા સર્વં વૃત્તં ન્યાયાધીશસ્ય પુરતઃ પ્રોક્તમ્ । ન્યાયાધીશઃ સુવર્ણમુદ્રાસુ લિખિતં તન્નિર્માણકાલં પશ્યતિ । નિક્ષેપ કાલાન્તરસમુત્પન્ના એતા મુદ્રાઃ સન્તીતિ વિજ્ઞાય શ્રેષ્ઠિનં પ્રોક્તવાન્-એતા મુદ્રા અસ્ય ન સન્તિ, યતો નિક્ષેપે કૃતે સતિ તતઃ પશ્ચાદેતા નિર્મિતાસ્તસ્માદસ્ય મુદ્રાસ્ત્વયાગૃહીતાસ્તા અસ્મે દેહિ । તતઃ શ્રેષ્ઠિના તસ્મે મુદ્રાઃ પ્રદત્તાઃ ।

इत्येकविंशतितमो नाणकदृष्टान्तः ॥२१॥

પશ્ચાત્ અપની બુદ્ધિ સે સોચકર ન્યાયાધીશ ને વણિક્ સે કહા-તુમને કિસ સમય इनके पास अपनी नौली रखी थी? न्यायाधीश के इस प्रश्न को सुनकर नौली वाले वणिक् ने जिस वर्ष में जिस दिन में वह नौली सेठ के यहां रखी थी वह सब बात यथावत् सुना दी । वणिक् की बात को सुनकर न्यायाधीश ने उन कूट सुवर्णमुद्राओं में उनके निर्माण का समय देखा तो उसको पता चला कि “ निक्षेपकाल के बाद ही ये कूट सुवर्णमुद्राएँ बनाई गई हैं ” । ऐसा जानकर फिर उसने सेठ से कहा-हे सेठ ! ये मुद्राएँ इसकी नहीं हैं । कारण, रखने के समय से ये पीछे की बनी हुई हैं । इसलिये यह निश्चित है कि इसकी मुद्राएँ तुमने ले ली हैं, अतः तुम वे इसको दे दो । सेठ ने न्यायाध्यक्ष के द्वारा प्रदत्त न्याय के अनुसार उसकी सब मुद्राएँ उसको दे दीं ॥ २१ ॥

॥ यह इक्कीसवां नाणकदृष्टान्त हुआ ॥ २१ ॥

સાંભળી. પછી ખોતાની બુદ્ધિથી ઉપાય શોધીને તેણે વણિકને પૂછ્યું “ તમે કયા દિવસે તે શેઠને ત્યાં તમારી થેલી મૂકી હતી ? ” ન્યાયાધીશને. તે પ્રશ્ન સાંભળીને થેલીવાળા વણિકે જે વર્ષના જે દિવસે તે થેલી શેઠને ત્યાં મૂકી હતી તે બધી વિગત બરાબર કહી. વણિકની વાત સાંભળીને ન્યાયાધીશે તે ખોટી સોના મહોરોમાં તેમના નિર્માણનો સમય વાંચ્યો તો તેને બબર પડી કે “ થાપણ મૂક્યા પછીને સમયે જ એ ખોટી સોના મહોરો બનેલી છે ” એમ સમજીને તેમણે ફરીથી શેઠને કહ્યું-“ હે શેઠ ! આ સોનામહોરો તેની નથી, કારણ કે તમારે ત્યાં તેની થાપણ મૂક્યા પછીને સમયે તે બનેલ છે. તેથી તે વાત ચોક્કસ થાય છે કે તમે તેની સોનામહોરો લઈ લીધી છે, તો તમે તે તેને આપી દો. ” શેઠે ન્યાયાધીશે આપેલ ચુકાદા પ્રમાણે તેની બધી સોનામહોરો તેને સોંપી દીધી. ॥૨૧॥

॥ આ એકવીસમું નાણક દૃષ્ટાંત સમાપ્ત ॥૨૧॥

अथ द्वाविंशतितमो भिक्षुकदृष्टान्तः—

एको वणिक् कस्यचिन्मठाधीशभिक्षुकस्य समीपे सुवर्णमुद्रासहस्रं निक्षिप्तवान् । कालान्तरे यदा स भिक्षुकात् स्वनिक्षेपं याचते, तदा स भिक्षुकः—अद्य दास्यामि, इत्युक्तवान् । पुनस्तेन याचितः “ स्वस्तुभ्यं दास्यामि ” इत्युक्त्वा कालातिक्रमं कृतवान् । स वणिक् तदनन्तरं द्यूतकारिभिर्मैत्रीं कृतवान् । ततो वणिग् ‘ भिक्षुकेण निक्षेपो गृहीतः ’ इति स्वमित्रेभ्यः कथयति । द्यूतकारिभिः प्रोक्तम्—तुभ्यं स्वदीयाः सर्वाः सुवर्णमुद्रास्तस्माद् भिक्षुकात् प्रदापयिष्यामः । ततस्ते

बाईसचां भिक्षुकदृष्टान्त—

किसी एक वणिक् ने एक मठाधीश भिक्षुक के पास एक हजार सुवर्ण मुद्रिकाएँ धरोहर के रूप में रख दी थीं । कालान्तर में जब उसने उससे वे मांगी तो भिक्षुक ने ‘ अभी देता हूँ ’ ऐसा कहकर उसको ढाल दिया । पुनः उसने जब वे उसको नहीं दी गईं तो कहा—महाराज । अब दे दीजिये—तब भिक्षुक ने कहा—‘ भाई कल दे दूंगा ’ । इस तरह से जब बहाना बनाकर वह मठाधीश भिक्षुक उसे उसका निक्षेप देने में ढालम-ढूल करने लगा तो वणिक् ने अपनी बुद्धि से एक युक्ति सोची, वह यह है—वह शीघ्र ही जुआरियों के पास आया और उनसे मित्रता कर कहने लगा—भाई ! मैं क्या कहूँ—देखो तो सही उस मठाधीश भिक्षुक ने मेरी एक हजार सुवर्णमुद्रिकाएँ जो मैंने उसके पास धरोहर के रूप में रख दी थीं पचाली हैं, मांगने पर भी वह नहीं देता है, इसका कोई उपाय हो

भावीसमुं लिक्षुकदृष्टान्त—

कोई एक वणिक् के एक मठाधीश लिक्षुक पास के एक डण्डर सोनामछोरे अनामत तरीके भूझी डूती. थोड़ा वणत पछी न्यारे तेणे ते तेनी पास भागी तो लिक्षुके “ डमणुं आपुं छुं ” अम छडीने तेने खाना कर्यो. इरीथी पण ते वणिक् न्यारे ते भागी ल्यारे लिक्षुके कछुं, “ लार्छ ! कादे आपी दधशि.” आ रीते आना छडीने न्यारे ते मठाधीश लिक्षुक तेने तेनी थापणु आपवामां आंटा ईरा अवराववा लाग्यो ल्यारे ते वणिक् पोतानी बुद्धिथी अक युक्ति शेधी छडी ते युक्ति आ प्रमाणे डूती—ते तरत न जुगारीओ पास आव्यो अने तेमनी साथे मित्रता आंधी. पछी तेमने कछुं “ लार्छ शुं वात करं ! जुवे तो भरा ! ते मठाधीश लिक्षुके भारी अक डण्डर सोनामछोरे न मे तेनी पास थापणु इपे भूझी डूती ते पयावी पडी छे, भागवा छतां पण ते आपतो नथी. तो ते भेणववानो कोई उपाय डोय तो आप दोडो मने अतावे.” जुग-

गैरिकरक्तवस्त्रैः साधुवेषं कृत्वा सुवर्णैष्टकां गृहीत्वा वणिजं तत्समये तत्रागमनाय संकेतं कृत्वा भिक्षुकस्य समीपे समागत्य प्रोक्तवन्तः—वयं तीर्थयात्रां कर्तुं गच्छामस्त्वं तु परमविश्वासपात्रमसि, अतस्त्वत्समीपे सुवर्णैष्टकामिमां निक्षिपाम इति। तस्मिन्नेव काले पूर्वसंकेतितः स वणिक् तत्रागत्य वदति—‘महाराज! मम निक्षेपं देहि’ इति। तदा स मठाधीशो भिक्षुकः सुवर्णैष्टकालोभवशात् तदैव तस्मै सुवर्ण-

तो आप लोग बतलाओ। जुआरियों ने अपने इस नवीन मित्र की बात सुनकर उसको धैर्य बंधाते हुए कहा—हे मित्र! इसकी क्या चिन्ता करते हो घबड़ावो नहीं, हम वे सबकी सब तुम्हें दिला देंगे। तुम एक उपाय करो—हम सब गैरिक-रक्तवस्त्र पहिनकर आज ही साधु के वेष में उस मठाधीश भिक्षुक के पास एक सोने की ईंट लेकर चलते हैं ज्यों ही हम वहां पहुँचें कि तुम भी उसके पास आ जाना। इस प्रकार का संकेत देकर ज्यों ही वे सब के सब गैरिक वस्त्रधारी भिक्षुक के वेष में उस मठाधीश भिक्षुक के पास पहुँचें कि यह भी उसी समय उस के पास जाने के लिये चला। इन गैरिक वस्त्रधारी भिक्षुकों ने उस मठाधीश भिक्षुक से कहा—महाराज! हम लोग तीर्थयात्रा करने जा रहे हैं, हमारे पास यह सोने की ईंट है। सुना है—आप बड़े विश्वासपात्र हैं अतः इस को हम आप के पास रखने आये हैं। वे सब ऐसा कह ही रहे थे कि इतने में यह वणिक् भी वहां आपहुँचता है। आते ही वह कहने लगा—महाराज! हमारी जो आप के पास एक हजार सुवर्ण मुद्रिकाएँ रखी हैं

रीओ ओ पोताना आ नवा मित्रनी वात सांलणीने तेने आश्वासन आपता-  
कहुं, “हे मित्र, तेनी चिन्ता शा भाटे करे छे. गलराशे नही. अमे ते  
अधी तमने अपावशुं. तमे ओक उपाय करे. अमे अधा लगवां वस्त्रधारी  
साधुना वेषमां आने ज ते मठाधीश भिक्षुकी पास ओक सोनानी धंटे लघने  
जधओ छीओ, जेवां अमे त्यां पड़ोय्ये के तरत ज तमारे पणु तेनी पास  
आवी पड़ोय्ये. आ प्रमाणे संकेत करीने ते अधा लगवां वस्त्रधारी भिक्षुकी  
वेषमां जेवां मठाधीश भिक्षुकी पास पड़ोय्ये के तरत ज ते पणु तेनी पास  
जवाने भाटे नीकय्ये. ते लगवां वस्त्रधारी भिक्षुकेओ ते मठाधीश भिक्षुके  
कहुं, “महाराज! अमे तीर्थयात्रा करवा जधओ छीओ, अमारी पास सोनानी  
आ धंटे छे. सांलणुं छे के आप धणु विश्वासपात्र छे. तेथी अमे आ सोनानी  
धंटे तमारी पास भूकवा भाटे आव्या छीओ.” तेओ आ प्रमाणे कहेता उता  
ओवामां ते वणिक् पणु त्यां आवी पड़ोय्ये. आपतां ज कहेवा लाग्ये, “महा-  
राज! आपनी पास में जे ओक हजार सोनांभडोरो भूकी छे ते मने पाछी

મુદ્રાસહસ્રં પ્રદત્તવાન્ । ઘૂતકારિણઃ કિંચિદ્ વિમૃશ્ય ભિક્ષુકં પ્રાહુઃ—‘મહારાજ !  
અત્રૈવાવશ્યકં કિંચિત્ કાર્યમુપસ્થિતમ્ , અતોઽધુનાઽસ્માભિર્ન ગન્તવ્યમ્’ इत्युक्त्वा  
ભિક્ષુકાત્ સુવર્ણેષ્ટકાં ગૃહીત્વા ઘૂતકારિણો ગતવન્તઃ ।

इति द्वाविंशतितमो भिक्षुकदृष्टान्तः ॥ २२ ॥

अथ त्रयोविंशतितमः चेटकनिधानदृष्टान्तः—

चेटकः—बालकः । निधानं—प्रसिद्धम् ।

દ્વૌ પુરુષૌ પરસ્પરં મિત્રભાવં પ્રતિપન્નૌ । તામ્યામન્યદા ક્વચિત્ પ્રદેશે નિધાનં  
પ્રાપ્તમ્ । તત્રૈકઃ પ્રથમઃ કપટહૃદયઃ । દ્વિતીયઃ સરલહૃદયઃ । કપટહૃદયો બ્રૂતે—આગા-  
વે દે દીજિયે । મઠાધીશ ભિક્ષુક ને સુવર્ણ કી રૂંટ કે લોભ કે વશ મેં  
આકર ઉસી સમય ઉસ કો એક હજાર સુવર્ણમુદ્રિકાઈ દે દીં । ઉન ઘૂત-  
કારોં ને જબ યહ દેખા તો વે થોડી દેર બાદ ઉસ મઠાધીશ ભિક્ષુક સે  
બોલે—મહારાજ ! હમેં યહાં હી કુછ આવશ્યક કાર્ય આગયા હૈ સો અબ  
અમી હમ લોગ નહીં જા સકેંગે અતઃ વહ રૂંટ વાપિસ કર દીજિયે, જબ  
જાવેંગે તબ પુનઃ આકર આપ કે પાસ રખ જાવેંગે । એસા કહ કર વે  
ઉસ સે ઉસ રૂંટ કો વાપિસ લેકર બહાં સે ખુશી ખુશી હોતે હુએ વાપિસ  
અપને સ્થાન પર ચલે આયે ॥ ૨૨ ॥

॥ यह बाईसवां भिक्षुकदृष्टान्त हुआ ॥ २२ ॥

तेईसवां चेटक (बालक) निधानदृष्टान्त—

કિસી સ્થાન પર દો પુરુષ રહતે થે । પરસ્પર મેં ઉન કી બડી મિત્રતા થી ।  
એક સમય કી બાત હૈ કિ ઇન્હેં કિસી સ્થાન પર એક નિધાન પ્રાપ્ત

આપો.” મઠાધીશ ભિક્ષુકે સોનાની ઇંટના લોભને વશ થઈ ને એજ વખતે તેની  
એક હબક સોનામહોરો તેને આપી દીધી. તે જુગારીઓએ જ્યારે તે બેયું  
ત્યારે થોડા સમય પછી તેમણે તે મીઠાધીશ ભિક્ષુકને કહ્યું, “ મહારાજ ! અહીં  
જ અમારે એક આવશ્યક કાર્ય આવી પડ્યું છે તો હવે અત્યારે અમે જઈ  
શકીએ તેમ નથી. તો તે ઇંટ પાછી આપી દો, જ્યારે જવાનું થશે ત્યારે  
આવીને આપની પાસે તે મૂકી જઈશું. આ પ્રમાણે કહીને તેની પાસેથી તે  
ઇંટ પાછી લઈને તેઓ ખુશી થતાં ત્યાંથી પોત પોતાને સ્થાને પાછાં ફર્યા ॥૨૨॥

॥ આ બાવીસમું ભિક્ષુકદૃષ્ટાંત ॥ ૨૨ ॥

तेवीसमुं “ चेटक ” ( बालक ) “ निधान ” दृष्टांत—

કોઈ એક જગ્યાએ બે પુરુષો રહેતા હતા તેમની વચ્ચે ગાઢ મૈત્રી હતી.  
એક વખત તેમણે કોઈ એક જગ્યાએ જમીનમાં દાટેલ ખજાનો જોયો. તેને



મિદિવસે શુભે નક્ષત્રે નિધાનમિદં ગ્રહીષ્યામઃ। દ્વિતીયઃ સરલચિત્તતયા તથૈવ સ્વીકૃતમ્। તતસ્તેન કૂટમનસ્કેન તત્ર રાત્રાવાગત્ય નિધાનમાદાય તત્રાઙ્ગારકાઃ (કોયલા) પ્રક્ષિપ્તાઃ। તતો દ્વિતીયદિને દ્વાવપિ સહ ભૂત્વા તત્ર ગતૌ। તૌ તત્રાઙ્ગારકાન્ દૃષ્ટવન્તૌ।

તતઃ સ માયાવી સ્વવક્ષસ્તાડયન્ ક્રન્દિતું પ્રવૃત્તઃ સન્ પ્રાહ—“ વયં ભાગ્ય-હીનાઃ, યતો દૈવેન નિધાનસ્થાનેઽઙ્ગારકાઃ પ્રદર્શિતાઃ। યથાઽસ્માકમક્ષિ દત્ત્વા દૈવેન પુનસ્તદપહૃષમ્ ’ ઇતિ જાનામિ।—ઇત્યુક્ત્વા સ માયાવી પુનઃ પુનઃ સ્વમિત્રં પશ્યતિ। દ્વિતીયસ્તસ્ય કપટચિન્તયા સર્વં સત્યવૃત્તં વિજ્ઞાય ભાવપરિવર્તનેન વદતિ—મિત્ર ! નિધાનાર્થ મા ચિન્તય, ગચ્છ; એવમેવ ભાગ્યમસ્માકમ્। તતઃ શાન્તચેતસા દ્વાવપિ સ્વસ્વગૃહં ગતવન્તૌ।

હો ગયા। ઉસ કો દેખતે હી એક કે હૃદય મેં કપટ ભાવ જાગ ગયા, ઉસને અપને મિત્ર સે કિ જિસ કા ચિત્ત કપટ સે રહિત થા કહા—ભાઈ ! યહ નિધાન આજ નહીં લેંગે, કલ લેંગે। ચલો—અવ યહાં સે ઘર પર ચલે। વે દોનોં ઘર આ ગયે। અવ કપટ હૃદયવાલે મિત્ર ને સરલ હૃદય વાલે મિત્ર કો વિના ખબર દિયે હી રાત્રિ મેં આકર ઉસ યજાને કો વહાં સે નિકાલ કર ઉસ કે સ્થાન મેં કોયલે ભર દિયે ઓર નિધાન અપને ઘર લે ગયા। દૂસરે દિન પ્રાતઃકાલ હોતે હી જબ વે દોનોં મિલકર વહાં આયે તો ઉન્હોં ને નિધાન કે સ્થાન પર કોયલે ભરે હુએ દેખે। દેખતે હી વહ માયાવી વ્યક્તિ છાતી કો કૂટ ૨ કર રોને લગા ઓર કહને લગા “ હાય હાય હમ કિતને ભાગ્ય હીન હૈં જો ભાગ્ય ને નિધાન કે સ્થાન પર હમેં કોયલે ભરે હુએ દિખલાયે હૈં। “ ભાગ્ય ને આંખે દેકર ફિર ફોડ ઢાલી હૈં। યહી યુક્તિ ઇસ સમય હમારે ડપર ચરિતાર્થ હો રહી હૈં। ઇસ તરહ

જેતા જ એકના હૃદયમાં કપટભાવ પેદા થયો તેણે પોતાનો મિત્ર કે જે નિષ્ક-પટી ચિત્તવાળો હતો તેને કહ્યું, “ ભાઈ આ ખજાનો આજે દેવો નથી, કાલે લઈશું. ” આલો હવે આહીંથી ઘેર જઈએ. ” તેઓ ખન્ને ઘેર આવ્યા. હવે કપટી મિત્રે સરળહૃદયી મિત્રને ખબર આપ્યા વિના રાત્રે જઈને ખજાનાને ત્યાંથી કાઢીને તેની જગ્યાએ કોલસા ભરી દીધા અને ખજાનો પોતાના ઘર લેગો કર્યો. બીજે દિવસે પ્રાતઃકાળે તે ખન્ને મળીને ત્યાં આવ્યા તો તેમણે ખજાનાની જગ્યાએ કોલસા ભરેલા ભાવ્યાં. તે જોતા જ તે કપટી માણસ છાતી કૂટી કૂટીને રડવા લાગ્યો અને કહેવા લાગ્યો “ હાય, હાય ! આપણે કેટલા દુર્ભાગી છીએ કે નસીબે આપણને ખજાનાની જગ્યાએ કોલસા ભરેલા બતાવ્યા છે. ” “ નસીબે આંખો આપીને પાછી ફેાડી નાખ્યા જેવું કયું છે ” આજ વાત અત્યારે આપણને ખરાખર લાશુ પડે છે. ” આ પ્રમાણે બનાવટી વાતો બનાવીને તે મિત્રની તરફ

इतश्च सरलहृदयो द्वितीयस्तस्य मायाविनो मित्रस्य लेप्यमयीं प्रतिकृतिं कृतवान्। केनचित् पालितौ द्वौ मर्कटावपि गृहीतवान्। तयोर्मर्कटयोर्भक्ष्यं फलादिकं प्रतिकृतेश्चोत्सङ्गे हस्ते शिरसि स्कन्धेऽन्यत्र च यथायोग्यं ददातिस्म। तौ च मर्कटौ क्षुधितौ तत्रागत्य प्रतिकृते रत्नसङ्गादौ निक्षिप्तं भक्ष्यं भक्षितवन्तौ। एवं च प्रति दिवसं करणे तयोस्तादृशः स्वभाव एव संजातः।

बनावटी बातें बनाकर वह मित्र की ओर निहार ने लगा। उस निष्कपटी मित्र ने उस की बनावटी बातों को सुनकर अपनी बुद्धि से जान लिया कि 'यह कपटी है'। ऐसा जानकर उस समय उससे कुछ नहीं कहा, परन्तु अपने मन में जान ही लिया कि यह सब करामात भाग्य की नहीं किन्तु इसी कपटी मित्र की है। अपने भावों को बदलते हुए उस ने उस से कहा-मित्र चिन्ता मत करो, हम लोगों का ऐसा ही खोटा भाग्य है, चलो अब घर चलिये। इस तरह परस्पर में वे दोनों विचार करते हुए अपने २ घर पर आ गये ॥

कुछ दिनों के बाद उस निष्कपटी मित्र ने उस मायावी मित्र की एक लेप्यमयी आकृति तैयार की। जब वह अच्छी तरह बन चुकी तो उसने उसके गोद, हाथ, शिर, स्कंध, एवं और भी जगह पर फल वगैरह रखना प्रारंभ किया। दो पालतू बंदरों को भी यह कहीं से ले आया। उन बंदरों ने जब इस आकृति के अंग उपांगों पर रखे हुए फलादिक देखे तो वे वहां आकर उन्हें खाने लगे। इस तरह करते २ उन बंदरों का

निहाणवा लाग्यो. ते सरलहृदयी मित्रे तेने बनावटी वातो सांभणीने पोतानी बुद्धिथी समज्ज दीधुं के "आ कपटी छे." जेम समज्जने पणु त्यारे तेणे तेने कंठ पणु कहुं नही, पणु पोताना मनमां समज्ज दीधुं के आ भधी करामत लाग्यनी नथी पणु आ कपटी मित्रनी ज छे. पोताना मनोलावने धूपावीने तेणे मित्रने कहुं, " मित्र ! चिन्ता न करे, आपाणुं नसीज्ज ज्ज पराज छे; यावो हुवे घेर ज्ज ज्ज. आ प्रमाणे परस्परमां विचार करतां करतां तेज्जो ज्जने घेर आव्यां. केटलाक दिवस पछी ते निष्कपटी मित्रे ते कपटी मित्रनी ज्जक माटीनी भूर्ति बनाववा मांडो. ज्यारे ते पूरे पूरी ज्जनी ज्जक त्यारे तेणे तेनी गोद, हाथ, भस्तक, ज्जला ज्जने ज्जली ज्जयाज्जो पर पणु क्कण वगेरे भूकवा मांडयां. जे पाणेला वानराज्जोने पणु ते कोर्ध स्थणेथी लर्ध आव्यो. ते वानराज्जो ज्यारे ते भूर्तिनां अंग उपांग पर भूकेल क्कणादि ज्जेयां त्यारे तेज्जो त्यां आवीने तेने भावा लाग्यां. आ प्रमाणे करतां करतां ते वानराज्जोने ज्जेवी

एकदा पर्वदिवसमुपलक्ष्य सरल हृदयेन मायाविमित्रस्य द्वावपि पुत्रौ भोजनार्थं निमन्त्रितौ, महताऽऽदरेण प्रेम्णा च तौ मित्रस्य पुत्रौ भोजयित्वा तत्रैव कुत्रचिद् गुप्तस्थाने सुखपूर्वकं संगोपितौ । द्वितीय दिवसेऽपि बालकौ नागतौ, ततस्तत्पिता तयोरन्वेषणार्थं मित्रस्य समीपं गत्वा पृच्छति—मित्र ! क्व द्वौ बालकौ स्तः ? मित्रेणोक्तम्—मित्र ! महान् खेदोऽस्ति, तौ त्वत्पुत्रौ मर्कटौ संजातौ । ततोऽसौ स्वमित्रस्य गृहं प्रविशति, तदा तेन सरलहृदयेन मित्रेण तौ पालितौ मर्कटौ बन्धनादुन्मोचितौ । तौ किलकिलशब्दं कुर्वन्तौ समागत्य तस्याङ्गेषु संलग्नौ, लीढवन्तौ च ।

ऐसा स्वभाव हो गया कि ज्यों ही यह उस पर फलादिकों को चढाता तो वे आरकर उन्हें वहां से उठारकर खाने लग जाते । इस तरह बंदर और वह परस्पर में खूब हिलमिल गये ।

एक दिन की बात है कि पर्व का दिन आया । उस समय सरल हृदय वाले मित्र ने कपटी हृदयवाले मित्र के दो बालकों को अपने घर पर आमंत्रित किया । बड़े आदर से उन दोनों बालकों को जिमाकर अन्त में उसने उन्हें किसी सुरक्षित गुप्त स्थान पर छुपा दिया । जब वे दोनों बालक अपने घर पर नहीं पहुँचे तो उनके पिता ने उनके विषय में मित्र के घर आकर पूछा—भाई वे दोनों बालक कहाँ हैं । मित्र ने कहा—भाई क्या कहें, बड़े दुःख की बात है कि वे दोनों ही बालक बंदर बन गये हैं । यह सुनते ही वह उस के घर में घुस गया तो उस ने वे दोनों पालित बंदर बंधन से निर्मुक्त कर दिये । छूटते ही वे किल किलाहट करते हुए उसके अंगो पर आकर चिपट गये उसको चाटने लगे बंदरों को

ટેવ પડી ગઈ કે જેવો તે તેના પર ફળાદિક મૂકતો કે તેઓ આવી આવીને તેમને ત્યાંથી ઉઠાવી ઉઠાવીને ખાવા મંડી જતા. આ પ્રમાણે વાનરા અને તે પરસ્પરમાં ખૂબ હળીમળી ગયાં.

એક દિવસની વાત છે. કેઈ પર્વનો દિવસ હતો. તે દિવસે સરળ હૃદયી મિત્રે કપટી મિત્રનાં બે બાળકોને પોતાને ઘેર આમંત્રણ આપ્યું. ઘણા ભાવથી બંને બાળકોને જમાડીને છેવટે તેણે તેમને કેઈ સુરક્ષિત ગુપ્ત જગ્યાએ સંતાડી દીધાં. જ્યારે તે બંને બાળકો પોતાને ઘેર પહોંચ્યા નહીં ત્યારે તેમના પિતાએ મિત્રને ઘેર આવીને પૂછ્યું, “ભાઈ તે બંને બાળકો ક્યાં છે ?” મિત્રે કહ્યું, “ભાઈ ! શું વાત કરે, ભારે દુઃખની વાત છે કે તે બંને બાળકો વાનરા બની ગયાં છે.” આ સાંભળતાં જ તે તેના ઘરમાં ઘૂસ્યો ત્યારે તેણે તે પાળેલા બંને વાનરાને બંધનથી મુક્ત કર્યાં. છૂટતાં જ કિલકિલાટ કરતાં તેઓ તેના અંગો ઉપર આવીને ચોંટી ગયા; અને તેનું શરીર ચાટવા લાગ્યા, વાનરાને

સરલહૃદયેનોક્તમ્-પશ્ય ! ઇમૌ ત્વયિ પુત્રવત્ પ્રેમ દર્શયતઃ । તત્પિતા વદતિ-  
મિત્ર ! મનુષ્યઃ કિં ક્ષણમાત્રેણ મર્કટો ભવિતુમર્હતિ ? । સરલહૃદયેનોક્તમ્-હે  
ભ્રાતઃ ! અસ્માકં સ્વકર્મવશાત્ નિધાનં યથાઙ્ગારકરૂપં જાતં તથૈવ ત્વત્કર્મવ-  
શાત્ ત્વત્પુત્રૌ મર્કટૌ સંજાતૌ । તતસ્તત્પિતા ચિન્તયતિ-અહો નૂનમનેન મત્કૃતં  
નિધાનાપહરણં વિજ્ઞાતમ્ । યદ્યુચ્ચૈઃ શબ્દં કરિષ્યામિ, તર્હિ રાજા નિગૃહીતો ભવિષ્યામિ,  
પુત્રાવપિ ન મે મિલિષ્યતઃ । તતસ્તેન માયાવિમિત્રેણ સર્વં યથાવસ્થિતં વૃત્તં નિવેદિતમ્,  
દત્તશ્રાપહૃતે નિધાને તસ્ય ભાગઃ । સરલહૃદયેન મિત્રેણ ચ સમર્પિતૌ તસ્ય પુત્રૌ ।

॥ ઇતિ ત્રયોવિંશતિતમશ્ચેટકનિધાનદૃષ્ટાન્તઃ ॥ ૨૩ ॥

એસા કરતે હુએ દેખકર સરલહૃદયવાલે મિત્ર ને ઉસ સે કહા-ભાઈ દેખો યે  
કૈસા તુમ્હારેં ઝપર પુત્ર જૈસા સ્નેહ પ્રકટ કર રહે હૈં । પુત્રોં કે પિતા ને કહા-  
ક્યા મિત્ર ! મનુષ્ય ભી ક્ષણમાત્ર મેં બંદર બન સકતા હૈ । સુનતે હી  
સરલહૃદય વાલે મિત્ર ને ઉસસેં કહા-ભાઈ ! જબ હમારે કર્મોં કે વશ  
સે નિધાન અંગારરૂપ (કોચલેરૂપ) હો સકતા હૈ તો તુમ્હારે પુત્ર ભી  
કર્મોં કે અનુસાર બંદર બન સકતે હૈં । ઇસ મેં કહને સુન ને જૈસી વાત હી  
ક્યા હો સકતી હૈ । મિત્ર કી એસી અનોચી વાત સુનકર ઉસ ને વિચાર  
કિયા-નિશ્ચય સે મેરા કપટ ઇસ કો જ્ઞાત હો ચુકા હૈં-ઇસ કો પતા પડ  
ગયા હૈ કિ નિધાન મેં ને હી અપહત કિયા હૈ । અબ યદિ મૈં ઇસ વિષય  
મેં રોતા પીટતા હૂં ઓર કિસી સે કુછ કહતા હૂં તો ઇસ વાત કા પતા  
રાજા કો ભી કાનોં કાન લગ સકતા હૈ । એસી સ્થિતિ મેં બડી ભારી  
આપત્તિ મેં પડ સકતા હૂં । રાજા દ્વારા નિગૃહીત હોકર મેરા ઘરબાર સબ

આ પ્રમાણે કરતાં જોઈને સરળ હૃદયવાળા મિત્રે કહ્યું, “ભાઈ ! જુવો, તેઓ  
તમારા પર કેવો પુત્રના જેવો પ્રેમ પ્રગટ કરે છે ?” પુત્રોના પિતાએ કહ્યું,  
“મિત્ર ! શું માણસ પણ ક્ષણવારમાં વાનર બની શકતો હશે ?” તે સાંભળતા  
જ સરળહૃદયવાળા મિત્રે કહ્યું, “ભાઈ ! જો આપણા હુર્ભાગ્યે બળનો અંગાર  
રૂપ (કોચલારૂપ) બની શકે તો તમારા પુત્રો પણ હુર્ભાગ્ય વશ વાનરો બની  
શકે છે. તેમાં કહેવા કે સાંભળવા જેવી વાત જ શી હોઈ શકે ?” મિત્રની  
આવી અનોખી વાત સાંભળીને તેણે વિચાર કર્યો, “ચોક્કસ માફ કપટ આ  
બાણી ગયો છે-તેને ખબર પડી ગઈ છે કે બળનો મેં જ લઈ લીધો છે. હવે  
જો આ બાબતમાં હું રડું કે માથુંકેટું, કે કોઈને કંઈ કહું તો આ વાતની  
ખબર રાજાને કાને પણ પહોંચી જાય. આ પરિસ્થિતિમાં હું ભારે મુશ્કેલીમાં  
મૂકાઈ જઈશ. રાજા દ્વારા મને ઘરમાંથી બહાર પણ કાઢી મૂકાય અને મારા  
ઘરમાંનું બધું નષ્ટ પણ કરી શકાય. પુત્રો પણ મળે નહીં. તેથી માફ ભલું

अथ चतुर्विंशतितमः शिक्षादृष्टान्तः—

शिक्षा धनुर्वेदविषये । कोऽपि पुरुषो धनुर्वेद निपुणः परिभ्रमन् कस्मिंश्चिन्न-  
गरे समागतः । स तत्र धनिकानां पुत्रान् शिक्षयितुं प्रवृत्तः । असौ कलाचार्य स्तेभ्यो  
बालकेभ्यः प्रचुराणि धनानि प्राप्तवान् । एतद् विदित्वा श्रेष्ठिनश्चिन्तयन्ति—अस्मै  
कलाचार्याय बालकैः प्रभूतं धनं दत्तम्, अतोऽस्य स्वगृहं प्रतिगन्तुमुद्यतस्य सर्वं

नष्ट हो सकता है । पुत्र भी नहीं मिल सकते हैं । अतः अब भलाई मेरी  
इसी में है कि मैं, जो कुछ हुआ है वह सब यथार्थरूप से इस अपने  
मित्र से निवेदित कर दूँ । ऐसा विचार कर उस ने जो कुछ निधान के  
विषय में घटना घटित हुई थी वह सब मित्र से प्रकट कर दी और क्षमा  
याचना की । इस के बाद सरल हृदय वाले मित्र ने उस से अपना आधा  
भाग निधान का प्राप्त कर उस के दोनों पुत्रों को उस को समर्पित  
कर दिया ॥ २३ ॥

॥ यह तेइसवां चेटकनिधानदृष्टान्त हुआ ॥ २३ ॥

चोईसवां शिक्षादृष्टान्त—

यह दृष्टान्त धनुर्विद्या के विषय में है, जो इस प्रकार है—एक धनु-  
र्वेद विद्याविशारद मनुष्य इधर-उधर भ्रमण करता हुआ किसी नगर में  
आ निकला । वहाँ के एक धनिक ने इस से अप ने बालकों को धनुर्विद्या  
में निपुण करने के लिये इस को सौंप दिया । अन्य और भी धनिकों के  
बालक इस विद्या को सीखने के लिये इसके पास आने लगे । गुरुभक्ति  
से प्रेरित होकर बालकों ने इसको प्रचुर द्रव्य दिया । जब सेठ को यह

એમાં જ રહેલું છે કે જે કંઈ બન્યું છે તે સત્ય રીતે આ મારા મિત્ર આગળ  
જાહેર કરું. ” એવો વિચાર કરીને બળના બાબતમાં જે કંઈ બન્યું હતું તે મિત્ર  
પાસે જાહેર કર્યું અને તેની ક્ષમા માગી. ત્યાર બાદ સરળહૃદયી મિત્રે તેની પાસેથી  
બળનાનો પોતાનો અર્ધો હિસ્સો મેળવીને તેના બન્ને પુત્રો તેને સોંપ્યા. ॥૨૩॥

॥ આ તેવીસમું ચેટકનિધાનદૃષ્ટાન્ત સમાપ્ત ॥ ૨૩ ॥

ચોવીસમું શિક્ષાદૃષ્ટાન્ત—

આ દૃષ્ટાન્ત ધનુર્વિદ્યાના વિષયમાં છે, જે આ પ્રમાણે છે—

એક ધનુર્વેદ વિદ્યાવિશારદ મનુષ્ય અહીં—તહીં ફરતો ફરતો કોઈ એક  
નગરમાં આવી પહોંચ્યો. ત્યાંના એક ધનિકે પોતાના બાળકોને ધનુર્વિદ્યામાં  
નિપુણ કરવાને માટે તેને સોંપ્યા. બીજા ધનિકોનાં બાળકો પણ ધનુર્વિદ્યા  
શીખવા માટે તેની પાસે આવવા લાગ્યાં. ગુરુ ભક્તિથી પ્રેરાઈને તે બાળકોએ  
તેને ઘણું ધન આપ્યું. જ્યારે શેઠને તે વાતની ખબર પડી ત્યારે તેમણે વિચાર



ધનં ગ્રહીષ્યામ્ इति । कलाचार्येण कथंचिदिदं वृत्तं ज्ञातम् । ततोऽसावन्यस्मिन् ग्रामेऽवस्थितान् स्वबन्धून् विज्ञापयति-अहममुकस्यां रात्रौ नद्यां गोमयपिण्डान् प्रेक्षेप्स्यामि, भवद्भिस्ते ग्राह्या इति । ततस्तद्बन्धुभिस्तथैव स्वीकृतम् ततः कलाचार्यो गोमयपिण्डेषु द्रव्याणि निक्षिप्य तान् गोमयपिण्डान् सूर्यकिरणेषु शोषयति । ततः कलाचार्यो बालकान् ब्रूते-एवमस्माकं कुलाचारः, मत्कुलोत्पन्ना अमुकपर्वणि स्नानं कृत्वा नद्यां गोमयपिण्डान् मन्त्रपूर्वकं पातयन्ति । बालकैरुक्तम्-शोभनम् । ततः कलाचार्यस्तैर्बालकैः सह तस्यां रात्रौ नद्यां गोमयपिण्डान् मन्त्रपूर्वकं प्रक्षिप्तवान् । इतश्च ते गोमयपिण्डाः कलाचार्यस्य बन्धुभिर्गृहीताः ।

જાત જ્ઞાત હુઈ તો ઉસને વિચાર કિયા કિ કલાચાર્ય ને હમારે બાલકોં સે પ્રચુરદ્રવ્ય લિયા હૈ તો હમેં અબ ઇસ કો પારિશ્રમિક દેને કી વ્યા આવશ્યકતા હૈ, તથા ઇસકે પાસ જો હમારે બાલકોં દ્વારા દ્રવ્ય પહૂંચ ચુકા હૈ વહ બી અપહૃત કર લેના ચાહિયે । સેઠ કા જબ યહ વિચાર કલાચાર્ય કો કિસી તરહ વિદિત હો ગયા તો ઉસને અપની બુદ્ધિ સે ઉપાય સોચા, વહ યહ-અન્ય ગ્રામોં મેં રહે હુએ અપને બંધુઓં કો બુલાયા ઔર કહા દેખો મેં અમુક રાત્રિ મેં નદી મેં સૂચે ગોવર પિંડો કો ડાલૂંગા સો તુમ સબ ઉનકો ઉઠા લેના । ઇસ પ્રકાર ઉન્હેં અપને વિચારોં સે સહમત કરકે કલાચાર્ય ને ગોવર પિંડોં મેં દ્રવ્ય ભરકર ઉન્હેં ધૂપ મેં સુકાના પ્રારંભ કર દિયા । ઔર બાલકોં સે ફિર વહ કહને લગા કિ હમારે કુલ કા આચાર ચલા આ રહા હૈ જો હમારે વંશજ અમુક પર્વ મેં ગોમય પિંડોં કો નદી મેં સ્નાન કરકે મંત્ર જપતે હુએ ફેંકતે હૈં । અતઃ મેં બી એસા હી

કર્ચો કે કલાચાર્યે° અમારા બાળકો પાસેથી ઘણુ ધન લીધું છે તો હવે તેને મહેનતાણું આપવાની શી આવશ્યકતા છે? તથા તેની પાસે અમારાં બાળકો દ્વારા જે ધન પહોંચ્યું છે તે પણ પડાવી લેવું જોઈએ. શેઠનો આ વિચાર બ્યારે કોઈ પણ રીતે કલાચાર્યે° જાણી લીધો ત્યારે તેણે પોતાની બુદ્ધિથી તેનો ઉપાય શોધી કાઢ્યો તે વિચાર આ પ્રમાણે હતો-તેણે બીજાં ગામોમાં રહેતા પોતાના ભાઈઓને બોલાવ્યા અને કહ્યું, “જુવો, અમુક રાત્રે હું નદીમાં સૂકાં છાણાં નાખીશ, તો તમે તે બધાને લઈ લેજો” આ પ્રમાણેના પોતાના વિચાર સાથે તેમને સમ્મત કરીને કલાચાર્યે° છાણાં પિંડોમાં દ્રવ્ય ભરીને તે પિંડોને તડકામાં સૂકવવા માંડ્યા. પછી તે બાળકોને કહેવા લાગ્યો, “અમારા કુટુંબમાં એવો રિવાજ આવ્યો આવે છે કે અમારા કુટુંબના લોકો અમુક પર્વને દિવસે નદીમાં સ્નાન કરીને મંત્ર જપતા જપતા ગાયના છાણાં પિંડોને નદીમાં ફેંકે છે. તેથી હું પણ તે પ્રમાણે કરીશ.” કલાચાર્યની તે વાત સાંભળીને



अन्यदा कलाचार्यस्तान् बालकान् श्रेष्ठिन्श्च पृष्ट्वा देहरक्षणोपयोगिमात्रं वस्त्र-  
मादाय स्वग्रामं प्रतिचलितः । श्रेष्ठिनोऽपि कलाचार्यस्य शरीरे धनादिकमदृष्ट्वा  
तद्वधार्थमनुद्यता अभूवन् । 'अनेन किंचिद् धनमस्माकं न गृहीत'—मिति मत्वा  
कलाचार्यं मुक्तवन्तः । इत्येवं कलाचार्येण स्वशरीरं धनं च रक्षितम् ।

॥ इति चतुर्विंशतितमः शिक्षादृष्टान्तः ॥ २४ ॥

करूंगा । कलाचार्य की इस बात को सुनकर बालकों ने कहा बहुत अच्छी  
बात है महाराज ! इसके बाद कलाचार्य उन बालकों को साथ लेकर  
रात्रि में नदी पर जा पहुँचा, और स्नान कर उन सूखे गोबर पिण्डों को  
मंत्र जपते हुए उसमें फेंकने लगा ! उन गोबर पिण्डों को नदी में से  
पूर्वसंकेतित उसके बंधुओं ने फेंकते ही उठाना शुरू कर दिया । इस  
तरह जब वे समस्त गोबरपिण्ड बंधुओं के हाथ में आगये तब यह  
निश्चिन्त होकर अपने स्थान पर उन बालकों के साथ वापिस लौट आया ।

कुछ दिनों के पश्चात् बालकों एवं सेठों से पूछकर यह कलाचार्य  
देह की रक्षा में उपयुक्त मात्र वस्त्रों को लेकर अपने ग्राम की ओर चलने  
को तैयार हुआ । सेठों ने जब यह देखा कि इसके पास वस्त्रों के सिवाय  
और कुछ नहीं है तो वे उसको मारने आदि के विचार से रहित हो  
गये और 'इसने हमारा कुछ भी नहीं लिया है' ऐसा समझकर उन  
सबने उस कलाचार्य को खुशी से घर जाने की भी आज्ञा दे दी ! इस  
तरह कलाचार्य ने अपनी और द्रव्य की रक्षा की ॥ २४ ॥

यह चौईसवां शिक्षादृष्टान्त हुआ ॥ २४ ॥

भाण्डोळे कहुं, " धण्णी सरस वात छे, भडाराज ! " त्यार भाद ते कणाचार्य  
ते भाण्डोळे साथे लधने रात्रे नदीछे पडोऱ्या, अने स्नान करीने ते सूकां  
छाण्वां ने मंत्र जपता जपता नदीमां डेंकवा लाग्या. ते छाण्वां ने पूर्व संकेत  
प्रमाणे नदीमांथी तेना लाध्छोछे डेंकता ज उपाडवा मांडयां. आ रीते छे अधां  
छाण्वां न्यारे तेना लाध्छोना हाथमां पडोऱ्यां त्यारे ते निश्चित थधने ते  
भाण्डोळे साथे पोताने स्थाने पाछा कुर्यां.

केटलाक दिवसे भाद भाण्डोळे तथा शेठने पूछीने ते कणाचार्य देहनी  
रक्षा भाटे जरूरी छेटलां ज वस्त्रो लधने पोताना गाम तरफ उपाडवा तैयार  
थया. शेठोछे न्यारे ते जेयु के तेमनी पासे वस्त्रो सिवाध कंघ पणु नथी.  
त्यारे तेछो तेने मारवाना विचारथी रहित थध गया, अने " आण्णे अमाइं  
कंघ पणु लीधुं नथी " अम समलुने ते अधाछे ते ते कणाचार्यने खुशीथी  
घेर जवानी रज आपी. आ रीते कणाचार्य पोतानी तथा द्रव्यनी रक्षा करी ॥ २४ ॥

॥ आ ओवीसमुं शिक्षादृष्टान्त समाप्त ॥ २४ ॥

अथ-पञ्चविंशतितमोऽर्थशास्त्र दृष्टान्तः—

एकस्य श्रेष्ठिनो द्वे भार्येस्तः । तत्रैका पुत्रवती, अपरा त्वपुत्रा जाता । परंत्व पुत्राऽपि तं बालकमतीवलालयति पालयति । यतोऽसौ बालकस्तयोर्मात्रोर्भेदो नामन्यतः । एकदा स श्रेष्ठी व्यवसायार्थं परिभ्रमन् हस्तिनापुरे गतवान् । स दैवात् तत्र मृतः । अथ तत्संपत्तिप्राप्त्यर्थमुभयोर्भार्ययोः कलहः प्रवृत्तः । एका वदति—अयं मम पुत्रः, तस्मादहं गृहस्वामिनी । द्वितीया वदति—नैवम्, अहमेव गृहस्वामिनी यतोऽयं पुत्रो ममैवास्ति । कलहे प्रवर्धमाने न्यायार्थं राजकुले गतवत्यौ । राज्ञी मङ्गलादेवी

पच्चीसवां अर्थशास्त्रदृष्टान्त—

एक सेठ की दो स्त्रियां थीं । इनमें एक पुत्रवती थी दूसरी विना पुत्र की । जिसके पुत्र नहीं था वह भी पहिली के बालक का अच्छी तरह से लालन पालन करती रहती थी, इससे उस बालक के ध्यान में यह कभी नहीं आया कि यह मेरी माता है, अगर यह मेरी माता नहीं हैं । एक दिन की बात है कि सेठ के चित्त में ऐसा विचार आया कि कहीं परदेश चलकर अपना व्यवसाय चलाना चाहिये, अतः व्यवसाय (व्यापार) के निमित्त इधर उधर परिभ्रमण करता हुआ वह हस्तिनापुर आया । भाग्यवशात् वहां उस की मृत्यु होगई । अब उस की दोनों स्त्रियों में संपत्ति प्राप्ति के लिये झगडा खडा हो गया । साथ में उस बालक के प्रति भी । एक ने कहा—यह मेरा पुत्र है—अतः मैं घर की स्वामिनी हूं । दूसरी ने कहा—नहीं मैं ही घर की स्वामिनी हूं कारण यह पुत्र मेरा है । इस तरह परस्पर में बढे हुए उन के विवाद का जब कोई निबटोरा नहीं हो सका तो वे दोनों

पच्चीशमुं अर्थशास्त्रदृष्टान्त—

એક શેઠને બે પત્નીઓ હતી. તેમાં એકને પુત્ર હતો બીજી નિઃસંતાન હતી. જેને પુત્ર ન હતો તે પણ શોકયના બાળકનું સારી રીતે લાલન પાલન કરતી હતી, તેથી તે બાળકના ધ્યાનમાં એ વાત કદી આવી ન હતી કે આ મારી માતા નથી. એક દિવસ શેઠને મનમાં એવો વિચાર આવ્યો કે કોઈ પરદેશમાં જઈને પોતાનો વ્યવસાય ચલાવવો, તેથી વ્યવસાયને નિમિત્તે ફરતો ફરતો તે હસ્તિનાપુર આવ્યો. ભાગ્યવશાત્ ત્યાં તેનું મૃત્યુ થયું. હવે તેની બન્ને પત્નીઓ વચ્ચે તેની મિલકત મેળવવા માટે ઝઘડો ઉભો થયો. અને તે બાળકની બાબતમાં પણ ઝગડો પડ્યો. એકે કહ્યું “ આ મારો પુત્ર છે, માટે ઘરની માલિક હું છું.” બીજીએ કહ્યું, “ ના ઘરની માલિક હું જ છું કારણ કે આ પુત્ર મારો છે.” આ પ્રમાણે તેમની વચ્ચે વધેલા વિવાદનો જ્યારે પરસ્પરમાં કોઈ

यदा वृत्तमिदं जानाति स्म, तदा स्वपार्श्वेते उभेस्त्रियावाहूय वदति—किंचिद्दिना-  
नन्तरं मम पुत्रो भविष्यति, स च वर्धितोऽस्याशोकवृक्षस्याधस्तादुपविष्टः सन् युव-  
योन्यायं करिष्यति, तावत्पर्यन्तमत्र युवां तिष्ठतम् । अयं च बालको ममाधीनस्ति-  
ष्ठतु । न्याये जाते सति पश्चाद् यस्याः पुत्रो भविष्यति, तस्यै दास्यामि । इति  
तद्वचः श्रुत्वा तदानीमपुत्रा भार्या मङ्गला देव्यावचनं सहर्षं स्वीकृतवती । तावतैव  
मङ्गलादेव्या विज्ञातम्—इयमेवापुत्राऽस्ति नायं बालकोऽस्याः पुत्र इति । ततस्तया  
पुत्रवत्यै भार्यायै पुत्रः समर्पितः, सैव च गृहस्वामिनी कृता । एवमुभयोरर्थं विषयः  
कलहो निवृत्तः ।

॥ इति पञ्चविंशतितमोऽर्थशास्त्रदृष्टान्तः ॥ २५ ॥

न्यायप्राप्ति के लिये राजकुल में गई। वहां राजा की राना मंगला देवी  
को जब उन के विवाद का पता चला तो उसने बुद्धि सोची और उन  
दोनों स्त्रियों को अपने पास बुलाकर कहा—तुम दोनों यहीं पर ठहरो,  
झगडा मत करो देखों मेरे यहाँ कुछ दिनों के बाद पुत्र होगा—जब वह  
बडा हो जावेगा तब इस अशोकवृक्ष के नीचे बैठ कर तुम दोनों का न्याय  
कर देगा, अतः जब-तक तुम्हारा न्याय नहीं हो है तबतक यह तुम्हारा  
बालक मेरे पास ही रहेगा। न्यायप्राप्त होने पर यह बालक जिसका  
प्रमाणित होगा उस को ही सौंप दिया जावेगा। इस तरह रानी मंगला-  
वती देवी के वचनों को सुनकर वह अपुत्रवती स्त्री बड़ी खुश हुई और  
उस ने रानी की बात मानली। अपनी बात स्वीकृत होते ही रानी ने यह  
जान लिया कि यह बालक इसका नहीं है। इस तरह वह बालक जिस

ઉકેલ ન આપ્યો ત્યારે તેઓ ન્યાયમેળવવા માટે રાજદરબારે પહોંચી. ત્યાં રાજાની  
રાણી મંગલાદેવીને જ્યારે તેમના વિવાદની ખબર પડી ત્યારે તેમણે પોતાની  
બુદ્ધિથી ઉપાય શોધી કાઢ્યો, અને તે બંને સ્ત્રીઓને પોતાની પાસે બોલાવીને  
કહ્યું. “તમે બંને અહીં જ રહો, ઝગડો કરશો મા, જુવો, મારે ત્યાં કેટલાક  
દિવસો પછી પુત્ર જન્મશે. તે જ્યારે મોટો થશે ત્યારે આ અશોકવૃક્ષ નીચે  
બેસીને તમારો બંનેનો ન્યાય કરશે, તો જ્યાં સુધી તમારો ન્યાય ન થાય  
ત્યાં સુધી તમારો આ બાળક મારી પાસે જ રહેશે, ન્યાય મળતાં આ બાળક  
જેનો સાબીત થશે તેને જ સોંપી દેવાશે રાણી મંગલાવતી દેવીની આ પ્રકારની  
વાત સાંભળીને તે અપુત્રવતી સ્ત્રી ઘણી ખુશ થઈ અને તેણે રાણીની વાત મંજૂર  
કરી. તેના દ્વારા પોતાની વાતનો સ્વીકાર થતાં જ રાણી સમજી ગઈ કે આ  
બાળક તેનો નથી. ખીજી સ્ત્રીએ રાણીની વાત સ્વીકારી નહીં, જેણે રાણીની વાત

અથ ષષ્ઠવિંશતિતમઃ ઇચ્છામહદ્ દૃષ્ટાન્તઃ—

કાઽપિ શ્રેષ્ઠિનઃ પત્ની સ્વમર્તરિ મૃત્યુમુપાગતે સતિ વૃદ્ધચર્યે પૂર્વપ્રયુક્તં દ્રવ્યં લોકેભ્યો ન લભતે । તતઃ સા પતિમિત્રં વદતિ—‘મમદાપય લોકેભ્યો ધનમ્’ ઇતિ । તેનોક્તમ્—યદિ પ્રાપ્તેષુ દ્રવ્યેષુ કિંચિન્મહ્યં દાસ્યસિ તર્હિ લોકેભ્યસ્તવ ધનં દાપયામિ । શ્રેષ્ઠિભાર્યા પ્રાહ યાદૃશી તવાનુકમ્પા સ્યાત્ તથા મયા વિધેયમ્ । તતોઽસૌ લોકેભ્યઃ સર્વં તદ્ધનં ગૃહીતમ્, કિંતુ પ્રાપ્તસ્ય તદ્ધનસ્યાલ્પીયાન્ ભાગઃ શ્રેષ્ઠિ ભાર્યાયૈ

સ્ત્રી કા થા કિ જિસને રાની કી વાત કબૂલ નહીં કી થી ઉસકો વહ દે દિયા ગયા ઓર વહી ગૃહસ્વામિની ઘોષિત કી ગઈ । ઇસ પ્રકાર ઇન દોનોં કા અર્થ વિષય કલહ નિવૃત્ત હુઆ ॥ ૨૫ ॥

॥ યહ પચ્ચીસવાં અર્થશાસ્ત્રદૃષ્ટાન્ત હુઆ ॥ ૨૫ ॥

છાઈસવાં ઇચ્છામહદ્દૃષ્ટાન્ત—

કોઈ એક સેઠ કી પત્ની ને જબ કિ પતિ કે મર જાને પર વ્યાજ પર દિયે ગયે અપને દ્રવ્ય કી વસૂલી હોતે નહીં દેખી તો અપને પતિ કે મિત્ર સે કહા—વ્યાજ પર દિયે ગયે દ્રવ્ય કી ઉગાહી નહીં હો રહી હૈ, અતઃ આપ ઉન લોગોં સે કહકર દ્રવ્ય કી વસૂલી કરવા દેં તો બડી કૃપા હોગી । મિત્ર ને સુનતે હી જવાબ દિયા—યદિ મુझे પ્રાપ્ત દ્રવ્ય મેં સે આપ હિસ્સા દેં તો મૈં લોગોં કો ઉધાર દિયા ગયા આપ કા દ્રવ્ય વસૂલ કરવા સકતા હૂં । મિત્ર કી ઇસ વાત કો સુનકર સેઠાની ને કહા—ઠીક હૈ, જૈસી આપ કી આજ્ઞા હોગી વૈસા હી મૈં કરૂંગી । સેઠાની કી ઇસ વાત સે સહમત હોકર મિત્ર ને સેઠ કા ઉધારી પર રહા હુઆ સમસ્ત ધન લોગોં

સ્વીકારી નહીં તેનો જ તે બાળક છે એમ સમજીને રાણીએ તે બાળક તેને સાંખ્યો, અને તેને જ ઘરની માલિક બાહેર કરી. આ પ્રમાણે તે બંનેના અર્થ (દ્રવ્ય) માટેના ઝગડાનો અંત આવ્યો. ॥ ૨૫ ॥

॥ આ પચીશમું અર્થશાસ્ત્રદૃષ્ટાંત સમાપ્ત ॥ ૨૫ ॥

છવીસમું ઇચ્છામહદ્ દૃષ્ટાંત—

કોઈ એક શેઠનું મૃત્યુ થતાં તેમની પત્નીએ જ્યારે પતિએ વ્યાજે ધીરેલ લેણું વસૂલ થવા ન માંડયું ત્યારે પોતાના પતિના મિત્રને કહ્યું, “વ્યાજે આપેલ નાણાની ઉધરાણી પતતી નથી. તો આપ કૃપા કરીને તે દેણદારો પાસેથી તે નાણાં વસૂલ કરી દો.” મિત્રે જવાબ આપ્યો, “જો પતેલી ઉધરા-રાણીમાંથી મને હિસ્સો આપો તો લોકોને ઉછીના આપેલ નાણાની હું વસૂલત કરી શકું તેમ છું.” મિત્રની આ વાત સાંભળીને શેઠાણીએ કહ્યું “ઠીક, આપ જેમ કહેશો તેમ હું કરીશ. શેઠાણીની આ વાત સાથે સહમત થઈને શેઠના મિત્રે શેઠની ઉધરાણી પતાવવાનું કામ શરૂ કર્યું. ઉધરાણીની જે રકમ આવતી

दातु मिच्छति । श्रेष्ठिपत्नी अपरितुष्टा जाता । राजकुले व्यवहारो जातः । न्यायाधीशस्तद्धनं द्विधा विभक्तं कृतवान् एकस्तत्र महान् भागः, द्वितीयस्तोकः कृतः । ततो न्यायाधीशः श्रेष्ठिमित्रं प्राह—अत्र कं भागं ग्रहीतुमिच्छसि ? । महान्तं भागं ग्रहीतुमिच्छामि । न्यायाधीशः स्वमनसि विचार्य प्रोक्तवान्—अस्या महान् भागोऽस्ति । द्वितीयस्तुतवास्ति ।

॥ इति षड्विंशतितम इच्छामहद्दृष्टान्तः ॥ २६ ॥

अथ सप्तविंशतितमः शतसहस्रदृष्टान्तः—

कस्यचित् परिव्राजकस्य रजतमयं महत् खोरकाभिधं भाण्डमासीत् । तस्मिन् से उगाना प्रारंभ कर दिया । जो द्रव्य उगाही में आता उस में से वह मित्र सेठानी के लिये बहुत कम देने की भावना रखने की वजह से कम देता । सेठानी इस कारण उस पर अप्रसन्न रहने लगी । होते होते राजकुल में इन दोनों की यह तकरार पहुँची तो वहाँ न्यायाधीशने अपनी बुद्धि लगा कर उस द्रव्य के दो विभाग किये । एक विभाग में अपार धनराशि रखी और दूसरे विभाग में थोड़ी सी । फिर उसने श्रेष्ठ मित्र से कहा इनमें से आप किस विभाग को लेना चाहते हो—तो झट से उस ने कह दिया कि महाराज ! इस अपार धनराशिवाले विभाग को । सुनते ही न्यायाधीश ने अपने मन में सोच समझ कर उस से कहा—नहीं यह विभाग तो सेठानी का है तुम्हारा नहीं, तुम्हारा तो यह दूसरा विभाग है ॥ २६ ॥

॥ यह छाईसवां इच्छामहत् दृष्टान्त हुआ ॥ २६ ॥

तेमांथी ते मित्र शेठाणीने भाटे धळुं ओछुं आपवानी लावनाथी तेमने धळी थोडी रकम आपतो आ कारले शेठाणी तेना पर नाराज रडेवा लागी. छेवटे ते भन्नेनी आ तकसार राजनी कचेरीमां पडोंथी त्यारे त्यां न्यायाधीशे पोतानी बुद्धि यदावीने ते द्रव्यना जे विभाग कर्या. ओक विभागमां अपार धनराशि भूझी अने भीजमां थोडुं ज धन भूझ्युं. पछी तेमणे शेठना मित्रने कळुं, “आ जे मांथी तमे कये विभाग देवा भागे छे. त्यारे तेले तुरत ज कळुं, “महाराज ! आ अपार धनराशिवाणे विभाग.” ते सांलगता ज न्यायाधीशे पोताना मनमां विचार करीने तथा समज्जने तेने कळुं, “ना आ विभाग तो शेठाणीने छे, तमाशे नथी; तमाशे तो आ भीजे विभाग छे ॥२६॥

॥ आ छवीससुं इच्छामहत् दृष्टान्त समाप्त ॥ २६ ॥

परिव्राजके चैको विशिष्टो गुण आसीत्-यदसौ सकृत् शृणोति, तद् धारयति, अतस्तस्याहङ्कारः समुत्पन्नः । एवमसौ घोषणां कारयति-यः कश्चिन्मह्यं किञ्चिद-श्रुतपूर्वं वृत्तं श्रावयेत्, तस्मै ददामीदं भाजनम्, इति । परं तु न कोऽप्य पूर्वं श्रावयितुं शक्नोति, स हि यत् किमपि शृणोति तत् सर्वमस्खलितं तथैवानुवदति । ततः केनापि सिद्धपुत्रेण ज्ञातप्रतिज्ञेन कथितम्-अपूर्वं श्रावयिष्यामि यदि परिव्राजकः स्वप्रतिज्ञां पालयेत् । एतद् वृत्तं राज्ञा विज्ञातम् । राजभवने बहुतरो लोको मिलितः । परिव्राजकोऽपि समागतः । राज्ञः समक्षं सिद्धपुत्रः पठति—

सत्ताईसवां शतसहस्रदृष्टान्त—

किसी परिव्राजक के पास एक चांदी का बड़ा भाजन था । इसका नाम खोरक था । परिव्राजक में एक विशिष्ट गुण यह था कि वह एक ही बार में सुनी गई बात को हृदय में धारण कर लेता था । इस से उसके मन में बड़ा भारी अपनी इस स्थिति का अहङ्कार था । वह जगह २ कहता फिरता था कि जो कोई मुझे अश्रुतपूर्व बात सुनावेगा वह भाजन का मालिक होवेगा । परन्तु कोई भी व्यक्ति उसको ऐसा नहीं मिला जो अश्रुतपूर्व बात उसको सुनावे । जो भी कुछ उसको सुनाया जाता वह झट से अस्खलित रूप में उसी तरह उसको कह देता, अतः सब लोग इससे बहुत तंग आगये । यह बात धीरे २ किसी सिद्धपुत्र के पास पहुंची तो उसने कहा कि यदि परिव्राजक अपनी प्रतिज्ञा पर अटल रहें तो मैं अवश्य ही उन्हें अश्रुतपूर्व बात सुना सकता हूं । होते २ यह खबर राजा तक भी पहुँच गई । राजाने एक सभा एकत्रित की-वहाँ

सत्तावीसमुं शतसहस्रदृष्टान्त—

कोई परिव्राजकनी पासे चांदीनुं ओक मोटुं पात्र हुतुं, तेनुं नाम खोरक हुतुं, परिव्राजकमां ओक विशिष्ट गुण हुतो के ते ओक न वषत सांल-गेली वातने मनमां याद राखी शकतो हुतो, तेथी पोतानी आ सिद्धिनुं तेने धाणुं लारे अलिमान हुतुं, ते स्थणे स्थणे ओम कडेतो इरतो हुतो के ने कोई मने अश्रुतपूर्व वात संलणावशे ते आ पात्रनो मालिक थशे, पण तेने कोई ओवी व्यक्ति न मणी के ने तेने अश्रुतपूर्व वात संलणावे, तेने ने कंछ संलणाववामां आवतुं, ते अस्खलित रीते अने ओन प्रकारे ते ओली जतो, ते कारणे जधा दोको तेनाथी गणे आवी गया, आ वात धीरे धीरे कोई सिद्धपुत्रनी पासे पहुँची तो तेणे कहुं के ने परिव्राजक पोतानी प्रतिज्ञा पाण-वामां भकभ डोय तो हुं तेने अश्रुतपूर्व वात संलणाववा तैयार छुं धीरे, धीरे आ वात राजने काने पण पडी, राजने ओक सभा ओलावी, त्यां परि-



“ તુજ્ઞ પિયા મહ પિણ્ણો, ધારેઈ અણ્ણગં સયસહસ્સં ।

જહ સુયપુવ્વં દિજ્જહ, અહ ન સુયં સ્વોરયં દેસુ ” ॥

છાયા—તવ પિતા મમ પિતુ ધારયતિ અન્યૂનકં શતસહસ્રમ્ ।

યદિ શ્રુતપૂર્વં દદાતુ, અથ ન શ્રુતં સ્વોરકં દેહિ ॥ ૧ ॥

સિદ્ધપુત્રઃ પરિવ્રાજકં પરાજયતિ સ્મ । તતઃ પરિવ્રાજકઃ સ્વકીયં સ્વોરકં રજત-  
ભાજનં સિદ્ધપુત્રાય દત્તવાન્ ।

इति सप्तविंशतितमः शतसहस्रदृष्टान्तः ॥ २७ ॥

॥ इति-औत्पत्तिकबुद्धिवर्णनम् ॥ १ ॥

અથ વૈનયિકબુદ્ધિદૃષ્ટાન્તાઃ પ્રદર્શ્યન્તે ( પૃષ્ઠ ૩૦૯ ) । તત્ર પ્રથમો નિમિત્ત  
દૃષ્ટાન્તઃ પ્રોચ્યતે—

પરિવ્રાજક મી બુલાયે ગયે જવ સવ લોગ યથાસ્થાન બેઠ ચુકે તવ ઉસ  
સિદ્ધપુત્ર ને એક ગાથા પઢી જિસકા ભાવ યહ થા કિ મહારાજ ! તુમ્હારે  
પિતા પર હમારે પિતા કા ઠીક એક લાખ કા કર્જા હૈ, યદિ યહ વાત  
આપકે સુનને મેં આઈ હૈ તો આપ વહ કર્જા ચુકતા કીજિયે, નહીં તો  
ઇસ સ્વોરક-ભાજન કો હમેં દે દીજિયે । સિદ્ધપુત્ર કી ઇસ વાત કો  
સુનકર વહ પરિવ્રાજક પરાજિત હો ગયા ઓર અપના સ્વોરક ઉસકો  
દે દિયા ॥ ૨૭ ॥

॥ यह सत्ताईसवां शतसहस्रदृष्टान्त हुआ ॥ २७ ॥

॥ यह औत्पत्तिकी बुद्धि का वर्णन हुआ ॥ १ ॥

અવ વૈનયિકી બુદ્ધિ કે ઉદાહરણ કહે જાતે હૈં (પૃષ્ઠ ૩૦૯) જિસમેં-  
પ્રથમ નિમિત્તદૃષ્ટાન્ત ઇસ પ્રકાર હૈ—

પ્રાજકને પણ ખોલાવવામાં આવ્યા. જ્યારે બધા લોકો પોત પોતાની જગ્યાએ  
બેસી ગયા ત્યારે તે સિદ્ધપુત્ર એક ગાથા બોલ્યો, જેનો ભાવાર્થ આ પ્રમાણે  
હતો—“ મહારાજ ! તમારા પિતા પાસે મારા પિતાનું બરાબર એક લાખનું દેણું છે.  
જો તે વાત તમારા સાંભળવામાં આવી હોય તો આપ તે દેણું ભરપાઈ કરી  
દો. નહીં તો આ ખોરકપાત્ર મને આપી દો. સિદ્ધપુત્રની તે વાત સાંભળીને  
તે પરિવ્રાજકે હાર કબૂલ કરી લીધી અને પોતાનું ખોરક તેને આપ્યું. ॥ ૨૭ ॥

॥ આ સત્યાવીસમું શતસહસ્રદૃષ્ટાન્ત સમાપ્ત ॥ ૨૭ ॥

આ ઔત્પત્તિકીબુદ્ધિનું વર્ણન થયું ॥ ૧ ॥

હવે વૈનયિક બુદ્ધિનાં ઉદાહરણો આપવામાં આવે છે—(પૃ ૩૦૬)

પહેલું નિમિત્તદૃષ્ટાન્ત આ પ્રમાણે છે—

કસ્મિન્નિગરે સિદ્ધપુત્રઃ સ્વકીયૌ દ્વૌ શિષ્યૌ નિમિત્તશાસ્ત્રં પાઠયતિ સ્મ । તયોરેકો વિનયસમ્પન્ન આસીત્ સ ગુરોરુપદેશં વહુમાનપૂર્વકં સ્વીકરોતિ । યત્ર સંશયઃ સમુત્પદ્યતે, તન્નિરાકરણાર્થં ગુરોરન્તિકં ગત્વા સવિનયં પૃચ્છતિ । એવમસૌ વિનય-વિવેકપુરસ્સરં શાસ્ત્રમધીત્ય તીવ્રબુદ્ધિલબ્ધવાન્ । દ્વિતીયસ્તુ શિષ્યો વિનયાદિ ગુણ-રહિતત્વાત્ કેવલં શબ્દજ્ઞાનં પ્રાપ્તવાન્ ।

एकदा तौ गुरुनिदेशेन समीपवर्तिनिग्रामे गच्छतः । मार्गे कस्य चिन्महा प्राणिनश्चरणचिह्नानि ताभ्यां दृष्टानि । विनयी शिष्यो द्वितीयं पृच्छति-इमे कस्य चरणाः ? द्वितीयः शिष्य आह-अत्र का पृच्छा ? । इमानि हस्तिनश्चरणचिह्नानि

કિસી નગર મેં કોઈ સિદ્ધપુત્ર અપને દો શિષ્યોં કો નિમિત્ત શાસ્ત્ર પઢાયા કરતા થા । उनमें एक शिष्य बहुत विनयी था । वह अपने गुरु के उपदेश का बहुत भारी सन्मान करता और उसको मानता था । उसमें जब इसको कोई संशय जैसी बात मालूम पड़ती तो वह उसको दूर करने के लिये बड़ी विनयके साथ गुरु के पास जाकर पूछा करता । इस तरह विनय विवेक पुरस्सर शास्त्र का अध्ययन कर वह तीव्र बुद्धि वाला बन गया । दूसरा शिष्य ऐसा नहीं था वह विनयादि गुण से रिक्त था । इससे उसको मात्र शब्दज्ञान ही प्राप्त हो सका, अधिक कुछ नहीं ।

एक दिन की बात है कि ये 'दोनों' शिष्य गुरु की आज्ञा से किसी समीपवर्ती ग्राम में गये । मार्ग में इन लोगोंने किसी महाप्राणी के चरणचिह्नो को देखा । विनीत शिष्य ने उस अविनीत शिष्य से पूछा-भाई । ये चरण किसके हैं ? सुनते ही अविनीत शिष्य ने कहा-इसमें पूछने की क्या बात है-ये हाथी के पैर के चिह्न हैं यह क्या तुम नहीं

કોઈ એક નગરમાં કોઈ સિદ્ધપુત્ર પોતાના બે શિષ્યોને નિમિત્તશાસ્ત્ર ભણાવતાં હતાં. તેમાં એક શિષ્ય ઘણો જ વિનયી હતો. તે ગુરુના ઉપદેશનું ઘણું સન્માન કરતો હતો અને તેને માનતો હતો. તેમાં તેને કોઈ બાબતમાં સંશય થતો તો તેનું નિવારણ કરવા માટે તે વિનયપૂર્વક ગુરુની પાસે જઈને પૂછતો હતો. આ પ્રમાણે તે વિનય વિવેકપૂર્વક શાસ્ત્રનો અભ્યાસ કરીને તીવ્ર બુદ્ધિવાળો બની ગયો. બીજો શિષ્ય એવો ન હતો. તે વિનયાદિ ગુણોથી રહિત હતો. તેથી તેને માત્ર શબ્દજ્ઞાન જ પ્રાપ્ત થયું વધારે કંઈ નહીં.

એક દિવસ તે બન્ને શિષ્યો ગુરુની આજ્ઞાથી પાસેના ગામમાં ગયાં. રસ્તામાં તેમણે કોઈ મોટાં પ્રાણીના પગલાં જોયાં. વિનીત શિષ્યે તે અવિનીત શિષ્યને પૂછ્યું, “ભાઈ! આ કોનાં પગલાં છે?” તરત જ અવિનીત શિષ્યે કહ્યું, “આમાં પૂછવા જેવું શું છે? આ હાથીનાં પગલાં છે, તે શું તું સમજ

દૃશ્યન્તે । વિનીતો વદતિ—નૈવમ્, નૈવમ્, इमानि हस्तिनीचरणचिह्नानि । हस्तिनी वामाक्षणा काणा । तदुपरि महाकुलीना सधवा ' स्त्री समुपविष्टा गच्छति । अद्यश्वो वा प्रसविष्यति । पुत्रश्च तस्या भविष्यति । एवमुक्ते चाविनीतो ब्रूते—कथमेतदव-  
सीयते ? । विनीतः प्राह—प्रत्ययाद् व्यक्तं भविष्यति । ततस्तौ ग्रामं गतवन्तौ ।  
तस्य ग्रामस्य बहिः प्रदेशे महासरसः समीपे वस्त्रनिर्मित निवासस्थाने राज्ञी ताभ्यां  
दृष्टा । वामेन चक्षुषा काणा हस्तिनी च दृष्टा ।

अत्रान्तरे काचिद् दासचेटी हस्तिपકં વદતિ—રાજઃ પુત્રો જાત ઇતિ રાજાનં  
જય જયેત્યાદિશબ્દેન વર્ધાપય । વિનીતો દ્વિતીયં પ્રત્યાહ—દાસચેટી વચનં પરિ-  
જાન સકતે હો ? વિનીત—હાં જાન તો સકતા હું પર યે હાથી કે પૈર કે  
ચિહ્ન નહીં હૈં યે તો હસ્તિની કે ચરણચિહ્ન હૈં । તથા ઓર દેખો—યહ  
હથિની વામ આંખ સે કાંની હૈ । ઇસકે ડપર કોઈ મહાકુલીન સધવા  
સ્ત્રી વૈઠી હુઈ ગઈ હૈ । જિસકે આજકલ મેં પ્રસવ હોને વાલા હૈ । ડસ પ્રસવ  
મેં ડસકે પુત્ર કા જન્મ હોગા । ઇસ પ્રકાર વિનીત શિષ્ય કે કહને પર  
અવિનીત શિષ્યને ડસસે કહા—યહ સવ તુમ કૈસે જાના । વિનીત ને  
ઉત્તર દિયા—કિસ પ્રકાર કી સાધન સામગ્રી સે યહ પીછે વતલાઝંગા ।  
ઇસ તરહ વાતચીત કરતે હુએ વે દોનોં હી જિસ ગ્રામ કો જાના થા ડસ  
ગ્રામ કી ઓર ચલે । જાતે ૨ ગ્રામ કે બાહર ડન્હોંને દેખા કિ એક વડી  
ભારી તાલાવ કે તટ પર એક વડા તમ્બૂ તના હુઆ હૈ । ડસમેં એક રાની  
ઠહરી હૈ । પાસ મેં તંબૂ કી એક ઓર એક વાંચે આંખ સે કાની હથિની  
ભી બંધી હુઈ હૈ । ઇસી સમય ડન્હોંને યહ ભી સુના કિ એક ચેટી મહાવન  
સે યહ કહ રહી હૈ કિ જાઓ ઓર રાજા કો જય જય શબ્દ પૂર્વક વધાઈ દો,

શકતો નથી ? ” વિનીત શિષ્યે કહ્યું, “ હા સમજી તો શકું છું કે આ હાથીના  
પગલાં નથી પણ હાથણીનાં પગલાં છે. વગી જીવો, આ હાથણી ડાબી આંખે  
કાણી છે. તેની ઉપર કોઈ મહાકુલીન સગર્ભા સ્ત્રી બેઠેલ છે, જેને આજકાલમાં  
પ્રસવ થવાનો છે. તેને પુત્રનો પ્રસવ થવાનો છે. આ પ્રમાણે વિનીત શિષ્યનું  
કથન સાંભળીને અવિનીત શિષ્યે કહ્યું, આ બધું તમે કેવી રીતે જાણ્યું. વિનીત  
શિષ્યે કહ્યું, કયા પ્રકારની સાધન સામગ્રીથી તે પછી બતાવીશ.” આ પ્રમાણે  
વાતચીત કરતાં કરતાં તે બંને જે ગામ જવાનું હતું તે તરફ ચાલ્યા. જતાં  
જતાં ગામની બહાર તેમણે જોયું કે એક મોટાં તળાવને કાંઠે એક મોટો  
તંબૂ તાણેલો છે. તેમાં એક રાણી ઉતરી છે. પાસે તંબૂની એક તરફ ડાબી  
આંખે કાણી એક હાથણી પણ બાંધેલી છે. એજ વખતે તેમણે એ પણ સાંભળ્યું  
કે એક દાસી મહાવતને કહેતી હતી કે જાઓ અને, રાજાને જય જય શબ્દ

માવય । તેનોક્તમ્—પરિભાવિતં મયા સર્વં, તવજ્ઞાનં સત્યમેવાસ્તિ । તતસ્તૌ તસ્મિન્ મહાસરસસ્તટે કરચરણં પ્રક્ષાલ્ય વટવૃક્ષસ્યાધસ્તાદ્ વિશ્રામાર્થં સ્થિતૌ । તદૈકા વૃદ્ધા શિરસિ જલપૂર્ણઘટં ધૃત્વા ગચ્છતિ । સા વૃદ્ધાતાવુમૌ આકૃત્યાદિના નૈમિત્તિકો વિજ્ઞાય પૃચ્છતિ—હે આર્ય ! દેશાન્તરગતો મમ પુત્રઃ કદા પુનરાગમિષ્યતિ । તદા-નીમેવ તન્મસ્તકાદ્ ઘટઃ પતિતઃ સ્વણ્ડશો ભગ્નઃ । અવિનીતેનાવિમૃશ્યૈવ તદા શ્લટિતિ કથિતમ્—તવ પુત્રો ઘટ ઇવ નષ્ટો જાતઃ । તદા વિનીતો વિમૃશ્ય બ્રૂતે—નૈવમ્ નૈવમ્, અસ્યાઃ પુત્રો ગૃહે સમાગતો વર્તતે । હે માતર્ગૃહં ગચ્છ, સ્વપુત્રમુખમવલોકય । એવ-

કારણ उनके यहां पुत्र रत्न का जन्म हुआ है । इस तरह दासी के वचन सुनकर विनीतशिष्य ने अविनीत से कहा—देखा सुना दासी क्या कह रही है ? । अविनीत ने कहा—हां देख सुन लिया—भाई ! तुम्हारा ज्ञान बिलकुल सच्चा है । इस तरह परस्पर में बातें करते हुए उन दोनों ने उस तालाब के तट पर अपने हाथ पैरों को धोया और वहीं पर के एक वटवृक्ष की छाया में विश्राम किया । इतने में ही वहां एक वृद्धा ने जो जल से भरे हुए घड़े को अपने माथे पर रखे हुईं जारही थी इन्हें देखा । आकृति आदि से वह इन्हें ज्योतिषी जानकर पूछने लगी हे आर्य ! मेरा पुत्र देशान्तर गया हुआ है सो बतलाई ये वह कब आवेगा ? । इस प्रश्न के साथ ही उस बिचारी का घड़ा माथे पर से नीचे गिर कर फूट गया । अविनीत शिष्य ने यह देखकर उस से कहा—माँ ! तेरा तो पुत्र इस घड़े की तरह समझले नष्ट हो गया है । अविनीत की इस बात को सुनकर विनीत ने कहा—भाई ! नहीं २ ऐसा मत कहो इसका पुत्र तो

પૂર્વક વધામણી આપો કે તેમને ત્યાં પુત્રનો જન્મ થયો છે. દાસીના એવાં વચનો સાંભળીને વિનીત શિષ્યે અવિનીત શિષ્યને કહ્યું, “સાંભળ્યું, દાસી શું કહી રહી છે ?” અવિનીત શિષ્યે કહ્યું, “હા, જોયું અને સાંભળ્યું. લાઈ ! તમારી કલ્પના તદ્દન સાચી છે.” આ પ્રમાણે વાતો કરતા કરતાં તે બંનેએ તળાવને કાંઠે પોતાના હાથપગ ધોયા અને ત્યાં જ એક વડની નીચે છાંયડામાં વિશ્રામ લેવા લાગ્યા. એવામાં માથે પાણીનો ઘડો લઈને જતી એક વૃદ્ધાએ તેમને જોયાં. મુખાકૃતિ આદિથી તેમને જ્યોતિષી માનીને પૂછવા લાગી, “હે આર્ય ! મારો પુત્ર પરદેશ ગયો છે. તો તે ક્યારે આવશે તે બતાવો.” આ પ્રશ્નની સાથે જ તે બિચારીનો ઘડો માથા ઉપરથી નીચે પડ્યો અને કુટી ગયો. અવિનીત શિષ્યે આ જોઈને તેને કહ્યું, “મા ! આ ઘડાની જેમ તમારો પુત્ર નાશ પામ્યો છે એમ સમજી લો.” અવિનીત શિષ્યની આ વાત સાંભળીને વિનીત શિષ્યે કહ્યું, “ના, ના એવું ન કહો. તેમનો પુત્ર તો ક્યારેનાય ઘેર આવી ગયો છે. મા !

मुक्ता सा तं विमृश्यकारिणं विनीतं शुभाशीर्वचनशतानि प्रयुञ्जाना स्वगृहं गतवती ।  
सा स्वपुत्रं गृहमागतं पश्यति । पुत्रो मातरं प्रणमति । सा च निजपुत्राय शुभाशी-  
र्वचनं ददाति । नैमित्तिकेन विमृश्यकारिणा यथाकथितं पुत्राय तया सर्वं निवेदि-  
तम् । ततः सा वृद्धा पुत्रं पृष्ट्वा तत्रागत्य तस्मै विमृश्यकारिणे वस्त्रयुगलं सुवर्णमुद्रा-  
दिविविधवस्तुजातं च समर्पयति । अविमृश्यकारी तदा चिन्तयति—अहं गुरुणा न  
सम्यक् पाठितः । कथमन्यथाऽहं न जानामि अयं तु जानाति ।

कभी का घर पर आ गया है । माँ ! तुम घर जाओ और अपने पुत्र के  
मुख का अवलोकन करो । इस प्रकार वह विनीत शिष्य के वचन सुन  
उस को समझदार समझ अनेक शुभाशीर्वाद देती हुई अपने घर आ  
पहुँची । वहाँ आते ही उस ने प्राणाधिक अपने प्रिय पुत्र को देखा ।  
उस को बड़ी प्रसन्नता हुई । पुत्र ने भी ज्यों ही अपनी माता को देखा  
तो वह आकर उस के चरणों से लिपट गया । शुभाशीर्वाद देकर उस ने  
पुत्र को उठा कर छाती से लगा लिया । उस माता ने पुत्र से जो कुछ  
उस से उस नैमित्तिक ने कहा था सब यथावस्थित कह दिया । पश्चात् उस  
ज्योतिषी के लिये उस ने अपने पुत्र से पूछकर एक धोती, एक दुपट्टा,  
तथा सुवर्ण मुद्रा आदि अनेक कीमती वस्तुएँ प्रदान की ! विमृश्यकारी  
शिष्य की इस प्रतिष्ठा से प्रभावित होकर उस अविनीत शिष्य अपने  
मन में विचार किया—मुझे गुरु ने अच्छी तरह नहीं पढ़ाया है, इस को  
ही अच्छी तरह पढ़ाया है, नहीं तो ऐसा कैसे हो सकता था कि यह  
तो वाते जान जावे और मैं न जान सकूँ ।

તમે ઘેર જાઓ અને તમારા પુત્રના મુખના દર્શન કરો. ” આ પ્રમાણે તે વિનીત  
શિષ્યના વચન સાંભળીને, તેને બુદ્ધિશાળી માનીને અનેક શુભ આશીર્વાદ દઈને  
તે પોતાને ઘેર પહોંચી. ત્યાં આવતાં જ તેણે પોતાના પ્રાણથી પણ પ્રિય પુત્રને  
જોયો. તે ઘણી ખુશ થઈ. પુત્રે પણ જેવી પોતાની માને જોઈ કે તે તેમના  
ચરણે પડ્યો. શુભાશીર્વાદ દઈને તે પુત્રને ભેટી પડી. તે માતાએ તે નૈમિત્તિકે  
જે કંઈ પોતાને કહ્યું હતું તેનાથી પોતાના પુત્રને સંપૂર્ણ રીતે વાકેફ કર્યો. પછી  
પોતાના પુત્રને પૂછીને તેણે તે જ્યોતિષીને માટે એક ધોતી, એક દુપટ્ટો, તથા  
સોનામહોર વગેરે ઘણી કીમતી વસ્તુઓ ભેટ આપી. વિનીત શિષ્યની આ પ્રતિષ્ઠાથી  
પ્રભાવિત થઈને તે અવિનીત શિષ્યે પોતાના મનમાં વિચાર કર્યો, “ મને ગુરુએ  
સારી રીતે ભણાવ્યો નથી, આને જ સારી રીતે ભણાવ્યો છે, નહીં તો એવું કેમ  
બને કે તે જે વાતો જાણી શકે તે હું ન જાણી શકું ? ”



ગુરુકાર્યે સંપન્ને સતિ દ્વાવપિ ગુરોઃ પાર્શ્વે સમાગતૌ । તત્ર વિમૃશ્યકારી શિષ્યો  
દર્શનમાત્રે એવ શિરો નમયિત્વા કૃતાઞ્જલિપુટઃ સ વહુમાને હર્ષાશ્રુપૂર્ણલોચનો ગુરો-  
શ્રવણયોશિરોનિધાય પ્રણામંકૃત્વા પ્રાપ્તં તત્સર્વં વસ્તુજાતં ગુરવે સમર્પિતવાન્ ।  
દ્વિતીયસ્તુ શૈલસ્તમ્ભ ઇવ મનાગપ્યનમિત શરીરૌ દ્વેષપૂર્ણઃ સન્ ગુરુસમીપેઽવતિષ્ઠતે ।  
તદા દ્વિતીય શિષ્યં પ્રતિ ગુરુરાહ — અરે ! કિં કારણમ્ અથ ન પ્રણમસિ ? સ  
પ્રાહ — યઃ સમ્યક્ પાઠિતઃ સ એવ ચરણે પતિષ્યતિ । ગુરુરાહ — ત્વં મયા ન સમ્યક્  
પાઠિતોઽસિ કિમ્ ? તતોઽસૌ સર્વં પૂર્વવૃત્તાન્તં નિવેદિતવાન્ ।

અવ-જિસ કાર્ય કે લિયે ગુરુ ને ઉન દોનોં કો ગ્રામ મેં મેજા થા  
વહ કાર્ય જબ ઉનકા સમાપ્ત હો ચુકા તબ વે દોનોં વહાં સે વાપિસ ગુરુ કે  
પાસ આ ગયે । ઇન મેં વિનીતશિષ્ય ને આતે હી ગુરુ કે દર્શન સે અપને  
આપ કો વડા ભાગ્યશાલી માનતે હુએ ઉન્હેં દોનોં હાથ જોડકર પ્રણામ  
કિયા । તથા વહુ માનપૂર્વક ઉન કે ચરણોં મેં અપના શિર રખકર વારંવાર  
ઉન્હેં સ્પર્શ કિયા । એવં ગ્રામ મેં જો કુછ મિલા થા વહ સબ ઉન કે સમક્ષ  
રખ દિયા । અવિનીત શિષ્ય ને એસા કુછ નહીં કિયા-વિદ્વેષ સે ભરા  
હોકર વહ તો ગુરુ કે પાસ શૈલસ્તમ્ભ ( પર્વતસ્તમ્ભ ) કી તરહ કેવલ  
અકડકર હી યહા રહા । ગુરુ ને જબ ઉસ કી એસી હાલત દેખી તો ઉસસે  
કહા-તૂં એસા કયોં યહા હુઆ હૈ । કયોં તૂં આજ મુજે પ્રણામાદિ  
નહીં કર રહા હૈ ? । સુનતે હી ગુરુ સે ઉસ ને કહા-મહારાજ ! કયા કરૂં,  
જિસ કો આપને અચ્છી તરહ સે વિદ્યા મેં નિષ્ણાત બનાયા હૈ વહી આપ કે  
ચરણોં મેં પડે, મુજે તો આપને એસા કુછ નહીં કિયા । અવિનીત કી ઇસ

હવે તેમને જે કામે તે ગામમાં મોકલ્યા હતા તે કામ પૂરું થતાં તેઓ  
બન્ને ત્યાંથી ગુરુની પાસે પાછાં ફર્યાં. તેઓમાંના વિનીત શિષ્યે આવતાં જ  
ગુરુના દર્શનથી પોતાને ઘણો ભાગ્યશાળી માનીને બન્ને હાથ જોડીને તેમને  
પ્રણામ કર્યાં. અને ઘણા માનપૂર્વક તેમનાં ચરણમાં મસ્તક નમાવીને વારંવાર  
તેમનો ચરણસ્પર્શ કર્યો અને ગામમાંથી જે કંઈ મળ્યું હતું તે બધું તેમના ચરણ  
આગળ ધર્યું. અવિનીત શિષ્યે એવું કંઈ ન કર્યું. દ્વેષથી ભરેલો એવો તે ગુરુની  
પાસે શૈલ સ્તંભ ( પર્વતસ્તંભ ) ની જેમ અકડકડ જ ઉભો રહ્યો. ગુરુએ જ્યારે  
તેની એવી હાલત જોઈ ત્યારે કહ્યું, “ તું આજે આમ કેમ ઉભો છે ? આજે તું મને  
પ્રણામાદિ કેમ કરતો નથી ? તે સાંભળતા જ તેણે ગુરુને કહ્યું—‘ મહારાજ ! શા  
માટે કંઈ ? આપે જેને સારી રીતે વિદ્યામાં નિષ્ણાત બનાવ્યો છે તે આપના  
ચરણમાં પડે, મારાં ઉપર તો આપે એવી કોઈ કૃપા કરી નથી ” અવિનીત



ततो गुरुर्विनयिनं शिष्यं पृच्छति-कथय, तद्वृत्तं त्वया कथं विदितम्। विमृ-  
श्यकारी शिष्यः प्राह-हे गुरुदेव ! मया भवचरणनिदेशेन विमर्शः कर्तुमारब्धः—  
हस्तिचरणा दृश्यन्त एव, किन्त्वत्र को विशेषः ? इति चिन्तयता मया मूत्र दर्शनेन  
निर्णीतम्-एतेचरणा हस्तिन्या एव भवितुमर्हन्ति। दक्षिणभागवर्तिवृक्षशाखा भक्षिताः,  
न तु वामभागस्थाः, इत्यनेन मया विदितम्-‘ इयं वामेन चक्षुषा काणा ’ इति।

बात से गुरु ने उस से कहा-तो क्या तू यह मान रहा है कि मैंने तुम्हें  
अच्छी तरह से नहीं पढ़ाया है ? हाँ मैं यही मान रहा हूँ। कारण-  
यही है कि आप के विनीत शिष्य ने विद्या के बल से आज ऐसा कर के  
बतलाया है। गुरु ने ज्यों ही अविनीत की यह बात सुनी तो उन्होंने  
विनीत शिष्य से पूछा-कहो शिष्य ! तुमने यह सब कैसे जानकर  
बतलाया है। विनीत ने कहा हे गुरु महाराज ! मैंने जो कुछ बतलाया  
है वह आपके श्री चरणों का प्रताप है। ज्यों ही मैंने वहाँ उन चरणों  
का निरीक्षण किया जानने में देरी नहीं लगी कि ये चरण हाथी के ही हैं।  
क्यों कि वे तो स्पष्ट दिखलाई पड़ रहे थे, परन्तु उन्हीं के पास जो  
मूत्र पड़ा था उससे मैंने यह निर्णय कर लिया कि ये चरणचिह्न हाथी  
के नहीं किन्तु हथिनी के हैं। वह जिस मार्ग से होकर निकली थी  
उसके दक्षिण भाग में जो वृक्ष खड़ा था उसकी शाखा उस ने खाई थी,  
वामभाग की नहीं। इससे मैंने यह जान लिया कि वह वामचक्षु से

शिष्यनी आ बात सांभलीने गुरुअ तेने कछुं, तो शुं तुं अम माने छे के  
में तने सारी रीते लख्खुअये नथी ? ” “ हा, हुं अम न मानुं छुं ” “ कारण ? ”  
कारण अम छे के आपना विनीत शिष्ये आने विद्याना प्रभावे आबुं आपुं  
करो अतावुं छे. ” गुरुअ न्यारे अविनीत शिष्यनी आ बात सांभली त्पारे  
तेमले विनीत शिष्यने पूछ्युं, “ कछो शिष्य, तमे आ अधुं केवी रीते लख्खीने  
अतावुं ” विनीत शिष्ये कछुं, “ गुरु महाराज ! में ने कंछ अतावुं छे ते  
आपना श्री चरणोनो प्रताप छे. जेवुं में ते पगदांओनुं निरीक्ष्युं क्युं के ते  
लख्खता वार न लागी के ते पगदांनं निशान हाथीनीना न छे, कारण के ते तो  
स्पष्ट नजरे पडतां हुतां, पण ते पगदां पासे ने मूत्र पड्युं हुतुं तेनी महदथी  
में ओवो निर्णय क्यो के ते पगदां हाथीनां नथी पण हाथणीनां छे. ते ने  
मागेथी पसार थर हुती तेनी नमखीणानु ने वृक्षो ठगेदां हुतां तेनी अणियो  
तेले आधी हुती. अणी आणुनां वृक्षोनी नही. तेथी हुं ओवा निर्णय पर  
आव्यो के ते हाथणी अणी आपे काणी छे. साधारण व्यक्ति तो हाथणी पर

साधारणो जनो हस्तियानेन गन्तुं नार्हतीति कोऽपि राजकीयो जनोगतः, इति निश्चितम् । रक्तवस्त्र तन्तुं संलग्नं वृक्षे दृष्ट्वा मया विदितम्-सधवा राज्ञी गतवतीति । क्वचित् प्रदेशे हस्तिन्या अवतीर्य लघुशङ्का कृत्वा भूमौ हस्तं निवेश्य, उत्थितेति, तथा-विधहस्तचिह्नं तत्र दृष्ट्वा मया निश्चितम्-इयं राज्ञी गर्भवती' इति । दक्षिणे चरणे हस्तेचाधिकभारो जात इत्यनेन स्तोकएव समये पुत्रोत्पत्तिर्भविष्यतीति

कानी है? साधारण व्यक्ति तो हस्तिनी पर बैठ कर चल फिर नहीं सकता इसलिये जो व्यक्ति इस पर बैठ कर यहां से निकला है वह कोई राजकीय व्यक्ति ही होना चाहिये । ज्यों ही मेरे चित्त में यह विचार आ रहा था कि इतने में ही मुझे पास के एक वृक्ष के ऊपर रक्तवस्त्र का तन्तु लगा हुआ दिखलाई पड़ा । मैं इससे इस निश्चय पर पहुँचा कि ऐसे वस्त्र को धारण करने वाली राजा की रानी ही हो सकती है, साधारण स्त्री नहीं । एवं जिसने यह वस्त्र पहिर रक्खा है वह विधवा नहीं सधवा है । तथा वहीं पास के किसी स्थान पर जो मुझे मूत्र दिखलाई दिया और वहीं पर हाथ की हथेली का जमीन पर चिह्न प्रतीत हुआ- एवं पैर का चिह्न भी वहीं नजर पड़ा तो मैं इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि वह गर्भवती है । कारण पेशाब से निवृत्त कर जब वह उठी है तो उस समय वह जमीन पर हाथ टेककर ही उठी है, इससे उसके शरीर में गर्भ का भार है यह मालूम पड़ा । तथा हथेली से जब वह पेशाब करने के लिये उतरी होगी तो उतरते समय उसके दक्षिण पैर पर शरीर का

जैसेने इरी शके नडी तेथी तेना पर सवार थधने त्यांथी नीकणेल व्यक्ति डोर्ध  
राजकीय व्यक्ति न होवी जेधजे. जेवे मे निष्पत्ति कथी. जेवे भारा मनमां  
आ विचार आये. के तरत न पासेनां जेक वृक्ष उपर लालवस्त्रने. जेक तांतणु  
लागेले. भारी नजर पड्यो. तेथी हुं जेवा निष्पत्ति पर आये. के आ प्रका-  
रनुं वस्त्र धारण करनार राजनी राणी न होर्ध शके, सामान्य स्त्री नडी,  
अने जेणे ते वस्त्र पड्युं छे ते विधवा नडी पण सधवा न छे. तथा त्यां न  
पासेनी जेक जग्याजे जे मूत्र भारी नजर पड्युं अने त्यां न जमीन पर  
हाथनी हथेलीनुं निशान देणायुं, अने पगनां निशान पण त्यां नजर पड्यां  
त्यारे हुं ते निष्पत्ति पर पड्यो. के ते स्त्री गर्भवती छे, कारण के पेशाब  
करीने ज्यारे ते उठी हथेली त्यारे ते जमीन पर हाथने टेको हथने उठी हथे,  
तेथी तेना शरीरमां गर्भने लार छे ते अणर पडी. तथा ज्यारे ते हाथणी  
उपरथी पेशाब करवा माटे नीचे उतरी हथे त्यारे तेना जमणु पण उपर  
न० ९८

विदितम् । तथा-तस्यावृद्धायाः प्रश्नानन्तरं घटः पतितो भग्नश्च खण्डश इति दृष्ट्वा मया विमर्शः कृतः-यत् सरस्तीरे घटस्य मृद्भागो मृत्तिकायां जलभागो जले यथा मिलितस्तथा वृद्धाया अपि पुत्रो मिलिष्यतीति संभाव्यते । यद्वा-एष घटो यत् उत्पन्नस्तत्र मिलितः, जलमपिसरसो गृहीतं सरस्येवमिलितं तथा पुत्रोऽप्यस्या मिलिष्यति ' इति निश्चितम् । विनययुक्तस्य तस्य विमृश्यकारिणः शिष्यस्य वचनं

भार अधिक पड़ने के कारण उसकी निसानी जमीन में अधिक गद्दी हुई नजर आरही थी । और इसी तरह से हाथ की निशानी भी । इस से मैं इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि यह आसन्नप्रसवा है, और इसके गर्भ में पुत्र है इसके विना दक्षिण हाथ और दक्षिण पैर के चिह्न जमीन पर अधिकरूप में गढ़े हुए नहीं हो सकते हैं ।

इसी तरह “ वृद्धा के पुत्र का मिलाप वृद्धा से होगा ऐसा जो मैंने विचार किया उसका कारण यह है-जब मैंने यह देखा कि वृद्धा के मस्तक से प्रश्न पूछते ही घट गिर कर भग्न हो गया है, तो मैंने ऐसी संभावना की कि जिस प्रकार तलाब के तट पर घट संबंधी मृत्तिकाद्रव्य मृत्तिकाद्रव्य के साथ, जलभाग जल के साथ मिल गया है उसी प्रकार इस वृद्धा का भी पुत्र इसको मिल जायगा । अथवा-यह निश्चित है कि जिस तरह यह घडा जिस से उत्पन्न हुआ है उस से मिल गया, तथा तलाब से गृहीत हुआ जल तलाब में मिल गया है उसी तरह इस का पुत्र भी इस से मिलेगा । इस प्रकार अपने विनीत शिष्य के वचन सुनकर गुरु

शरीरनो वधारे लार पडवाने कारणे ते पणतुं निशान जमीनमां वधारे ठांडुं उतरेलुं देखातुं હતુ, અને એજ પ્રમાણે હાથનું પણુ. તેથી હું એવા નિર્ણય પર આવ્યો કે તે સ્ત્રીનો પ્રસવકાળ નજીક છે, અને તેના ગર્ભમાં પુત્ર છે નહીંતો જમણા હાથ અને જમણા પગનું નિશાન જમીનમાં વધારે ઊંડું ઉતરેલું ન હોઈ શકે. એજ પ્રમાણે “વૃદ્ધાને તેના પુત્રનો મેળાપ થશે એવો જે મેં નિર્ણય કર્યો તેનું કારણ આ પ્રમાણે છે-જ્યારે મેં જોયું કે પ્રશ્ન પૂછતાં જ વૃદ્ધાના માથેથી ઘડો પડીને કુટી ગયો, ત્યારે મેં એવી કલ્પના કરી કે જે રીતે તળાવનાં કાંઠા ઉપર ઘડામાંનું મૃત્તિકા દ્રવ્ય (માટી) મૃત્તિકાદ્રવ્યની સાથે તથા જળભાગ પાણીની સાથે મળી ગયો છે તેમ આ વૃદ્ધાનો પુત્ર પણુ તેને મળશે. અથવા-એ ચોકકસ છે કે જેમ આ ઘડો જેમાંથી ઉત્પન્ન થયો તેમાં મળી ગયો તથા તળાવમાંથી લીધેલું પાણી જેમ તળાવમાં મળી ગયું એજ પ્રમાણે તેનો પુત્ર પણુ તેને મળશે. ” આ પ્રમાણે પોતાના વિનીત શિષ્યનાં વચન

નિશમ્ય ગુરુસ્તં પ્રશંસતિ સ્મ । અવિમૃશ્યકારિણં દ્વિતીયંશિષ્યં ગુરુર્વદતિ-વત્સ !  
અત્ર નાસ્તિ મમ દોષઃ, કિંતુ તવાયં દોષઃ, યદ્ વિમર્શં ન કરોષીતિ, અસ્માભિરુ-  
ભયોઃ સદૃશં પાઠિતમિતિ ।

॥ ઇતિ વૈનયિકબુદ્ધેઃ પ્રથમો નિમિત્તદૃષ્ટાન્તઃ ॥ ૧ ॥

અર્થશાસ્ત્રવિષયે કલ્પકમન્ત્રિદૃષ્ટાન્તઃ શ્રૂયતે । સ ચ વૈનયિક્યા બુદ્ધેર્દ્વિતીયો  
દૃષ્ટાન્તો બોદ્યવ્યઃ ॥ ૨ ॥

લિપિજ્ઞાનં તૃતીયા વૈનયિકબુદ્ધિઃ ॥ ૩ ॥

ગણિતજ્ઞાનં ચતુર્થી વૈનયિકી બુદ્ધિરિતિ દ્રષ્ટવ્યમ્ ॥ ૪ ॥

પશ્ચમસ્તુ કૂપદૃષ્ટાન્તઃ—કૂપ ઇત્યનેન ભૂમિવિજ્ઞાનેકુશલ ઇત્યવગમ્યતે સ ચૈવમ્  
—કશ્ચિદ્ ભૂમિવિજ્ઞાનકુશલઃ પુરુષઃ કૃષોવલં પ્રાહ—અત્ર ભૂમ્યામિયતિ દૂરે જલમસ્તિ ।

ને उस की बहुत अधिक प्रशंसा की। तथा अविनीत शिष्य को समझाते  
हुए उससे कहा—वत्स ! इस में मेरा कुछ भी दोष नहीं है, दोष है तो  
केवल तुम्हारा ही। जो तुम विनयादि गुणों से विवर्जित होकर मेरी कही  
हुई बात पर कुछ भी विमर्श नहीं करते हो। यह विश्वास रखो—हमने  
तो तुम दोनों को ही एकसाथ पढ़ाया है ॥ १ ॥

॥ यह प्रथम निमित्तदृष्टान्त हुआ ॥ १ ॥

અર્થશાસ્ત્ર કે ડપર જો કલ્પક મંત્રી કા દૃષ્ટાન્ત હૈ—વહ વૈનયિક  
બુદ્ધિ કા દ્વિતીય દૃષ્ટાન્ત હૈ ૨ । લિપિજ્ઞાન, યહ વૈનયિક બુદ્ધિ કા તીસરા  
દૃષ્ટાન્ત હૈ ૩ । ગણિતજ્ઞાન યહ વૈનયિક બુદ્ધિ કા ચૌથા દૃષ્ટાન્ત હૈ ૪ ।  
કૂપ દૃષ્ટાન્ત ઇસ પ્રકાર હૈ—

કોઈ એક વ્યક્તિ એસા થા જો ભૂમિવિજ્ઞાન મેં વિશેષ કુશલ થા ।  
ઁસને કિસી કિસાન સે કહા કિ—ઇસ ભૂમિ મેં ઇતની દૂરી પર જલ હૈ ।

સાંભળીને ગુરુએ તેની ઘણી જ પ્રશંસા કરી, તથા અવિનીત શિષ્યને સમજાવતા  
કહ્યું “ વત્સ ! આમાં મારો કોઈ દોષ નથી. દોષ હોય તો ફક્ત તારો જ છે કે  
તું વિનયાદિ ગુણોથી રહિત બનીને મેં કહેલી વાત પર કોઈ નિર્ણય જ કરતો  
નથી. એ વિશ્વાસ રાખ કે મેં તો તમને બંનેને એક સરખું જ શિખવ્યું છે.

॥ આ પહેલું નિમિત્તદૃષ્ટાન્ત સમાપ્ત ॥ ૧ ॥

અર્થશાસ્ત્ર ડપર જે કલ્પકમંત્રીનું દૃષ્ટાન્ત છે, તે વૈનયિકબુદ્ધિનું બીજું  
દૃષ્ટાન્ત છે. (૨). લિપિજ્ઞાન, એ વૈનયિક બુદ્ધિનું ત્રીજું દૃષ્ટાન્ત છે (૩). ગણિતજ્ઞાન,  
એ વૈનયિકબુદ્ધિનું ચોથું દૃષ્ટાન્ત છે (૪). પાંચમું કૂપ દૃષ્ટાન્ત આ પ્રમાણે છે—

તાવત્યા ભૂમેઃ સ્વનને કૃતે સતિ જલં નિર્ગતમ્ । તતઃ સ કૃપીવલઃ પ્રાહ-તત્પાર્શ્વ  
ભાગે સ્તોકં પાર્ણિ (એડી) પ્રહારં કુરુ । એવં કૃતે સતિ તદૈવ જલં તત્ર સમુચ્છલિતમ્ ।

॥ ઇતિ વૈનયિક્યા બુદ્ધેઃ પશ્ચમઃ કૂપદૃષ્ટાન્તઃ ॥ ૫ ॥

અથ ષષ્ઠોઽશ્વદૃષ્ટાન્તઃ—

બહવોઽશ્વવણિજો દ્વારવતીં જગ્મુઃ । તત્ર સર્વે કુમારાઃ સ્થૂલાન્ બૃહતશ્ચાશ્વાન્  
ગૃહ્ણન્તિ । વાસુદેવેન તુ દુર્વલો લક્ષણ સમ્પન્નો લઘીયાનશ્વઃ ક્રીતઃ । સ ચ કાર્યનિ-  
ર્વાહકઃ પ્રભૂતાશ્વાગ્રેસરશ્ચ જાતઃ ।

॥ ઇતિ ષષ્ઠોઽશ્વદૃષ્ટાન્તઃ ॥ ૬ ॥

કિસાન ને હસ બાત કો સુનતે હી ભૂમિ યોદના પ્રારંભ કિયા । જિતની  
દૂરતક જલ બતલાયા થા વહાં તક ડસ ને જમીન યોદ ડાલી પરન્તુ જલ  
નહીં નિકલા । તબ કિસાન ને ડસ સે કહા-ભાઈ ! જલ તો નહીં નિકલા ।  
તબ ડસ ને કહા-દેસો । ડસકે પાર્શ્વભાગ મેં ધીરે સે એડી કા પ્રહાર કરો  
તો વહાં જલ નિકલેગા । એસા કરતે હી વહાં ડસી સમય જલ ડછલ પડા ॥ ૫ ॥

॥ યહ પાંચવાં કૂપદૃષ્ટાન્ત હુઆ ॥ ૫ ॥

છઠા ઘોડે કા દૃષ્ટાન્ત—

બહુત સે ઘોડે કે વ્યાપારી એક સમય દ્વારિકા નગરી મેં ગયે હુએ થે ।  
વહાં સમસ્ત યાદવ કુમારોં ને ડનકે સ્થૂલ કાય બડે ૨ ઘોડે સ્વરીદ  
લિયે, પરન્તુ વાસુદેવ ને એસા નહીં કિયા । ડસને તો કમજોર પતલા  
દુબલા હી એક ઘોડા સ્વરીદા । ધીરે ૨ વહી ડન સર્વ મેં એસા મજબૂત

કોઈ એક માણસ ભૂમિવિજ્ઞાનમાં વિશેષ કુશળ હતો તેણે કોઈ ખેડૂતને  
કહ્યું કે આ ભૂમિમાં આટલી ઉંડાઈએ પાણી છે. ખેડૂતે તે વાત સાંભળતા જ  
ભૂમિ ખોદવા માંડી. જેટલી ઉંડાઈએ પાણી બતાવ્યું હતું તેટલી ઉંડાઈ સુધી  
તેણે જમીન ખોદી નાખી પણ પાણી નીકળ્યું નહીં. ત્યારે ખેડૂતે તેને કહ્યું  
“ભાઈ! પાણી તો ન નીકળ્યું” ત્યારે તેણે કહ્યું, “જુવો! તેની આબુના  
ભાગમાં ધીમેથી લાત મારો તો પાણી નીકળશે” એમ કરવામાં આવતા ત્યાંથી  
એજ સમયે પાણી નીકળ્યું ॥ ૫ ॥

॥ આ પાંચમું કૂપદૃષ્ટાન્ત સમાપ્ત ॥ ૫ ॥

છટ્ઠું ઘોડાનું દૃષ્ટાન્ત—

એક વખત ઘણા ઘોડાના વેપારી દ્વારિકા નગરીમાં આવ્યા, ત્યાંના બધા  
યાદવકુમારોએ તેમના સ્થૂળ શરીરવાળા મોટા મોટા ઘોડા ખરીદી લીધા. પણ  
વાસુદેવે તેમ કંઈ નહીં. તેણે તો હુબળો, પાતળો અને કમજોર એક જ ઘોડો  
ખરીદ્યો. ધીરે ધીરે એજ ઘોડો તે બધા ઘોડામાં એવો મજબૂત અને ઉપયોગી

अथ सप्तमो गर्दभदृष्टान्तः—

कोऽपि राजा यौवनप्रारम्भे राज्यं प्राप्तवान् । अतस्तारुण्यमेव सर्वकार्यक्षमं रमणीयं च मत्वा निजसैन्येषु तरुणानेव धारितवान्, वृद्धास्तु सर्वानपि बहिष्करोतिस्म । स चान्यदा सैन्येन सह गच्छन् क्वचिदटव्यां गतः, तत्र च समस्तोऽपि जनः पिपासया पीडितो जातः । तदा राजा किं कर्तव्यमूढोऽभवत् । ततो राज्ञः समीप-  
और कार्यसधक निकला कि जिस के आगे वे सब घोड़े फीके एवं कम-  
जोर साबित हुए इस तरह वासुदेव का वह घोड़ा सब घोड़े के बीच  
विशेष महत्व शाली प्रमाणित होने के कारण उन सब में अग्रेसर  
माना गया ॥ ६ ॥

॥ यह छठा घोड़े का दृष्टान्त हुआ ॥ ६ ॥

सातवां गर्दभदृष्टान्त—

किसी राजा ने यौवन के प्रारंभ काल में ही राज्य प्राप्त कर लिया था, अतः उसके ध्यान में यह बात जम गई कि समस्त कार्यों की साधक एक मात्र यौवन अवस्था ही है, इसलिये उसने अपनी सेना में तरुण व्यक्तियों को ही भर्ती कर ने का आदेश जारी किया, तथा जो वृद्धजन पहिले से सेनाविभाग में काम करते आ रहे थे उन्हें निकालना प्रारंभ कर दिया । एक दिन की बात है—राजा अपनी सेना को साथ लेकर कहीं बाहर जा रहा था । चलते २ वह एक महान् अटवी में आपहुँचा, जिस में पानी आदि का बिलकुल अभाव था । वहां आते ही उस के सैनिक जन

नीवड्यो के तेनी आगण भीन् घोडा झीका अने कमजोर साबित थया. आरीते वासुदेवनो घोडा ते अधा घोडाओमां वधारे भडत्वशाणी साबित थवाथी ते अधानो आगेवान गणुवा लाग्यो ॥ ६ ॥

॥ आ छठुं घोडानु दृष्टांत समाप्त ॥ ६ ॥

सातमुं गर्दभदृष्टांत—

कोई राजा युवावस्थाना प्रारंभकाले न राज्य भोग्युं हुतुं, तेथी तेना मनमां ओयो पाके निर्णय थयो के सधणा कार्यो साधनारी ओके मात्र युवावस्था न छे. तेथी तेणे पोताना सैन्यमां युवान माणुसोनी न भरती करवानो आदेश आय्यो, तथा ने वृद्ध माणुसो पडलेथी तेनी सेनामां काम करता हुता तेभने छूटा करवा मांडया. ओके द्विस राजा पोतानी सेना साथे कोठके स्थणे नतो हुतो. यावतां यावतां ते ओके मोटा नंगलमां आवी पडोअ्यो, न्यां पाणी आदिनो तदन अभाव हुतो. त्यां आवता तेना सैनिको तृपाथी



માગત્યકથિત્ત્વે સેવકો વદતિ-દેવ ! અયમાપત્સમુદ્રઃ કથમસ્યાપત્સમુદ્રસ્યપારં  
ગચ્છામઃ, વૃદ્ધ પુરુષસ્ય વુદ્ધિરિહ નૌકા ભવેત્ અતઃ ક્વાપિ વૃદ્ધંગવેષયન્તુ ભવન્તઃ ।  
તતો રાજ્ઞા સર્વસ્મિન્નપિકટકે ઘોષણાકારિતા । તત્ર ચૈકઃ પિતૃભક્તઃ સૈનિકઃ  
પ્રચ્છન્નતયા સ્વપિતરં સમાનીતવાન્ । તતસ્તેનોક્તમ્-રાજન્ ! મમ પિતાવૃદ્ધોઽસ્તીતિ ।  
તતો રાજાજ્ઞયા તેનાસૌ રાજ્ઞઃ પાર્શ્વે નીતઃ । રાજા વહુમાનપુરસ્સરં પૃચ્છતિ-  
મહાપુરુષ ! કથય, કથં મે કટકે જલં ભવિષ્યતિ ? । તેનોક્તમ્-રાજન્ રાસમાઃ સ્વૈરં

પ્યાસ સે આકુલિત હોકર વ્યાકુલ હો ઉઠે । રાજા ને જ્યોં હી અપને  
સૈનિકોં કી યહ હાલત દેસ્વી તો વહ ઘવડા ઉઠા ઓર કર્તવ્ય વિમૂઢ  
બન ગયા । ઇતને મેં ઉસ કે પાસ એક સેવક ને આકર કહા-મહારાજ !  
યહ એક બડા ભારી આપત્તિરૂપ સમુદ્ર સામ્હને આગયા હૈ, ઇસ કા પાર  
પાના બડા કઠિનતર દિશ્વલાઈ દે રહા હૈ । હાં ! યદિ યહાં કોઈ વૃદ્ધજન  
સલાહ દેને વાલા હો તો ઇસ વિપત્તિ સે છુટકારા મિલ સકતા હૈ, ઇસ-  
લિધે મેરી રાધ એસી હૈ કિ કિસી વૃદ્ધજન કી આપ ગવેષણા કરાવેં ।  
સેવક કી ઇસ વાત સે પ્રભાવિત હોકર રાજા ને એસા હી કિયા । ઉસ ને  
શોઘ્ર હી અપને સમસ્ત કટક મેં ઇસી તરહ કી ઘોષણા કરવા દી । સેના  
મેં એક પિતૃભક્ત સૈનિક ને પ્રચ્છન્ન રૂપ સે અપને વૃદ્ધ પિતા કો સેવા  
કરને કે લિધે સાથ મેં લાયા થા વહ રાજા કે પાસ જાકર યહ ખબર દી  
કિ મહારાજ ! મેરા પિતા વૃદ્ધ હૈ યદિ આપકી આજ્ઞા હો તો ઉસ કો  
આપકે પાસ ઉપસ્થિત કરૂં । રાજા કી સ્વીકૃતિ પાકર વહ અપને વૃદ્ધ

આકુળ આકુળ થયા. રાજાએ જેવી પોતાના સૈનિકોની તે હાલત જોઈ કે તે  
ગભરાઈ ગયો અને શું કરવું તેની કંઈ સૂઝ પડી નહીં. એવામાં એક સેવકે  
તેની પાસે આવીને કહ્યું, “ મહારાજ ! આપની સમક્ષ આ એક મોટો આપત્તિ  
રૂપ સાગર આવી પડ્યો છે, તેનો પાર પામવો ઘણો કઠિન લાગે છે. પણ  
સલાહ દેનાર કોઈ વૃદ્ધ માણસ મળી આવે તો આ મુશ્કેલીમાંથી ઉગરી શકાય  
તેમ છે. તો ભારી એવી સલાહ છે કે આપ કોઈ વૃદ્ધ પુરુષની શોધ કરાવો ”  
સેવકની આ વાતની રાજા પર સારી અસર થતા રાજાએ એ પ્રમાણે કયું.  
તેણે તરત જ પોતાના આખા સૈન્યમાં એ પ્રકારની ઘોષણા કરાવી દીધી, સેના-  
માંનો એક પિતૃભક્ત સૈનિક સેવા કરવાની ઇચ્છાથી પોતાના પિતાને ધૂપાવીને  
સાથે લાવ્યો હતો. તેણે રાજાની પાસે જઈને ખબર આપી કે મહારાજ ! મારા  
પિતા વૃદ્ધ છે. જો આપ આજ્ઞા આપો તો તેમને આપની સમક્ષ હાજર કરું ”  
રાજાની મંજૂરી મળતા તે તેના વૃદ્ધ પિતાને રાજાની પાસે લઈ ગયો. રાજાએ

મુચ્યતામ્, યત્ર તે ભૂમિં ગ્રાસ્યન્તિ, તત્ર જલમતિપ્રત્યાસન્નંભવિવ્યતિ । રાજા તથૈવ કારિતમ્ । જલં ચ પ્રાદુર્ભૂતમ્ । સમસ્તં કટકં સ્વસ્થીભૂતમ્ ।

इति स्थविरस्य वैनयिकी बुद्धिः ॥ इति सप्तमो गर्दभदृष्टान्तः ॥७॥

अथाष्टमो लक्षणदृष्टान्तः—

આસીત પારસદેશીયઃ કશ્ચિદશ્વાનાં સ્વામી । સ ચ કચિત્ યોગ્યં પુરુષમશ્વરક્ષ-  
ણાર્થં નિયુક્તવાન્ । તદાઽશ્વ સ્વામી તમશ્વરક્ષકં પ્રોક્તવાન-એતાવદ્વર્ષપયન્તં ત્વ કર્મ

પિતા કો રાજા કે પાસ લે ગયા । રાજા ને બહુમાન પુરસ્સર उस वृद्ध से पूछा-महापुरुष ! मेरा समस्त कटक प्यास से आकुलित हो रहा है, यहां पास में कहीं पर भी जल का नाम दिखलाई नहीं पड़ रहा है, अतः आप कोई उपाय बतलाईये कि जिस से आपत्ति दूर हो जावें । राजा की बात सुनकर उस वृद्ध ने कहा महाराज ! अब आप ऐसा कीजिये कि गधों को अपनी इच्छानुसार छाड़ दीजिये, वे जहां पर जमीन को सूखे, समझलीजिये वहीं पर नीचे जल अतिनिकट है । राजा ने उस वृद्ध की सम्मति के अनुसार ऐसा ही किया तो उस को जल की प्राप्ति होगई और कटक का संकट टल गया । यह स्थविर की वैनयिक बुद्धि हुई ॥

॥ यह सातवां गर्दभदृष्टान्त हुआ ॥ ७ ॥

આઠવા લક્ષણદ્રષ્ટાન્ટ—

પારસદેશ કા નિવાસી એક વ્યક્તિ થા । જિસકે યહાં અનેક ઘોડે થે । उसने उन घोड़ों की सार संभाल करने के लिये एक योग्य पुरुष की नियुक्ति की । पारिश्रमिक उसका इस प्रकार निर्णीत किया गया

ઘણા માનપૂર્વક તેને પૂછયુ, “મહાપુરુષ ! મારું સમસ્ત સૈન્ય તૃષાથી આકુળ વ્યાકુળ થઈ ગયુ છે. આટલામાં પાસે કયાંય પણ પાણી બિલકુલ દેખાતું નથી. તો આપ એવો કોઈ ઉપાય બતાવો કે જેથી આ મુશ્કેલી ટળે ” રાજાની વાત સાંભળીને ને વૃદ્ધે કહ્યું “મહારાજ ! આપ આ પ્રમાણે કરો-ગધેડાંએને તેમની ઈચ્છા પ્રમાણે જવા દો, તેઓ જે જગ્યાએ જમીન સૂકે, તે જમીનની નીચે થોડી જ ઉંડાઈએ પાણી મળશે તેમ માનવું.” રાજાએ તે વૃદ્ધની સલાહ પ્રમાણે જ કર્યું, તો તેને પાણી મળ્યું અને સૈન્યની મુશ્કેલીનો પણ અંત આવ્યો. આ વૃદ્ધની વૈનયિકબુદ્ધિ થઈ.

॥ આ સાતમું ગર્દભદ્રાન્ટ સમાપ્ત ॥૭॥

આઠમું લક્ષણદ્રષ્ટાન્ટ—

ઈરાનનો નિવાસી એક માણસ હતો. તેને ત્યાં અનેક ઘોડા હતા. તેણે તે ઘોડાની સંભાળ રાખવા માટે એક માણસની નિમણૂક કરી. આ પ્રકારે તેનું વેતન નક્કી કર્યું-તમે આટલા વર્ષ સુધી અહીં કામ કરશો તો તેના બદલામાં

करिष्यसि, तदाऽश्वरक्षणस्य पारिश्रमिकं द्वावश्वौ तुभ्यं दास्यामि । तेनापि स्वीकृतम् । सहनिवसतस्तस्याश्वरक्षकस्य तत्पुत्र्या सह स्नेहानुबन्धः संजातः । एकदाऽसौ तां पृच्छति—सर्वेष्वश्वेषु कौ भव्यौ ? इति । तयोक्तम्—अमीषामश्वानां विश्वस्तानां मध्ये यौ पाषाणभृतकुतपानां वृक्षशिखरान्मुक्तानामपि शब्दमाकर्ण्य नो त्रस्यतस्तौ भव्यौ । तेन तथैवतावश्वौ परीक्षितौ । ततोऽश्वरक्षकः स्व वेतनग्रहणसमये स्वामिनं ब्रूते—इमौ द्वावश्वौ मह्यं देहि । स्वामी प्राह—अरे ! अन्ये बहवोऽश्वाः सन्ति शोभनाः

कि यदि तुम इतने वर्षतक यहां काम करोगे तो इसके उपलक्ष में तुम्हें दो घोड़े दिये जावेंगे । मालिक की इस बात से वह सहमत हो गया और अपने काम में लग गया । मालिक की एक लड़की भी थी । रहते २ उसकी उससे जान पहिंचान हो गई और धीरे २ उसके साथ उसका स्नेह भी बढ़ गया । एक दिन लड़की से उसने पूछा ! तुम्हारे इन समस्त घोड़ों में अच्छे कौन २ दो घोड़े माने जाते हैं । उत्तर में उसने कहा—देखो इन विश्वस्त समस्त घोड़ो के बीच में जो दो घोड़े वृक्ष के शिखर से गिराये गये पत्थर के टुकड़ों से भरे हुए कूडो ( चमड़े के घी भरने के पात्रों ) के शब्द को सुनकर भी नहीं डरे वे ही समझ लो अच्छे हैं । उसकी बात मानकर उसने उनकी परीक्षा की तो जो इस परीक्षा में उत्तीर्ण हुए वे उसने अपने ध्यानमें रखलिये । बाद में जब वेतन ग्रहण करने का समय आया तो उसने मालिक से वेतन में वे दोनों घोड़े मांगे । मालिक ने कहा—अरे—इन घोड़ों के अतिरिक्त और भी बहुत से घोड़े बड़े अच्छे हैं उन्हें तुम ले लो इन्हें क्यों लेते हो ।

तमने जे घोड़ा आपवामां आवशे मालिकनी ते वात मंजूर करीने ते पोताने कामे लागी गये। मालिकने एक पुत्री पणु छती. धीमे धीमे तेने तेनी साथे परियय थये। अने ते परियय वधता वधता तेनी साथेना प्रेममां परिणुभ्ये। एक द्विपस ते छेकरीने तेणु पूछयुं, “तमारा आ अधा घोडामां क्या क्या घोडा सारामां सारा गणाय छे ?” तेणु जवाण आभ्ये, “जुवे। आ अधा विश्वास पात्र घोडामांना जे जे घोडा वृक्षनी टोय उपरथी नीचे झेंडेला पथ्यरना टुकडाओथी लरेला कुंडा (घी लरवा माटेना आभडानां पात्रे) ने अवाज सांलणीने पणु डरे नडीं अमने ज सारामां सारा समण देवा. तेनी सलाह मानीने तेणु तेमनी कसोटी करी तो जे घोडा ते कसोटीमां सक्षण थया तेमने तेणु ध्यानमां राणी लीधा. पछी ज्यादे वेतन देवाने। समय पाकथे। त्यारे तेणु वेतन तरीके ते जे घोडा माज्या. मालिके कहुं “अरे ! आ घोडाओ करतां तो जीण घणु घोडा वधादे सारा छे, तो आ घोडाने अदबे तुं जीण घोडा पसंद

તાન્ ગૃહાણ, આશ્યામલમ્, ઇમૌ ન શોભનો । એવ મુક્તોઽસાવશ્વરક્ષકઃ સ્વામિવચનં નામન્યત । તતોઽશ્વસ્વામિનાચિન્તિતમ્-અયમશ્વરક્ષકો મયા ગૃહજામાતાકર-  
ણીયઃ । અન્યથાઽયં તાવશ્ચૌ ગૃહીત્વા ગમિષ્યતિ । લક્ષણસમ્પન્નેનાશ્વેન કુટુમ્બસ્ય  
વાઽશ્વસ્ય વા વૃદ્ધિર્ભવિષ્યતિ । એવં વિચિન્ત્ય સ સ્વપુત્ર્યા સહ તસ્ય વિવાહં કારિ-  
તવાન્ । તં ચ ગૃહજામાતરં વિધાય દ્વાવપિ લક્ષણસમ્પન્નાવશ્ચૌ સ્વગૃહે સ્થાપિતવાન્ ।  
इत्यश्व स्वामिनो विनयजा बुद्धिः ।

॥ इत्यष्टमो लक्षणदृष्टान्तः ॥ ८ ॥

अथ नवमो ग्रन्थिदृष्टान्तः—

કદાચિત્ પાટલિપુત્ર નામ્નિનગરે મુરુઢ નામકો રાજા રાજ્યં કરોતિ । અન્ય  
યે તો અચ્છે નહીં હૈં । ઇસ પ્રકાર સ્વામી કે વચન સુનકર ઉસને  
કહા-મહારાજ ! મૈં તો ઇન્હેં હી લૂંગા, ઢસરોં કી ચાહના મુઝે નહીં હૈ ।  
અશ્વમાલિક ને ઇસ તરહ કે જબ ઉસકે વચન સુને તો મન મેં ઉસને  
વિચાર કિયા કિ અબ તો ઇસે ઘરજમાઈ બનાને મેં હી લાભ હૈ, નહીં તો  
યહ ઇન દોનોં ઘોડોં કો લેકર યહાં સે અવદ્ય ચલા જાયગા । ઇસ  
તરહ વિચાર કર ઉસને અપની પુત્રી કે સાથ ઉસકા વિવાહ કર દિયા ।  
ઔર ઉસકો ધર જમાઈ રસ્ત લિયા । તથા ઉન દોનોં લક્ષણસંપન્ન ઘોડોં  
કો બી । ઇસ પ્રકાર અશ્વસ્વામી ને વૈનયિકીબુદ્ધિ કે પ્રભાવ સે અપના  
કામ બના લિયા ॥ ૮ ॥

॥ यह आठवां लक्षणदृष्टान्त हुआ ॥ ८ ॥

नौवां ग्रन्थिदृष्टान्त—

કિસી સમય પાટલિપુત્ર મેં ( પટના શહર મેં ) મુરુઢ નામ કા રાજા

કર. આ ઘોડા શા માટે લે છે? એ તો સારા નથી ” માલિકના આ પ્રકારનાં  
વચનો સાંભળીને તેણે કહ્યું “ શેઠ સાહેબ ! હું તો એ ઘોડા જ લઈશ, ખીજ  
લેવાની મારી ઈચ્છા નથી. ” ઘોડાના માલિકે જ્યારે આ પ્રકારના તેના શબ્દો  
સાંભળ્યા ત્યારે તેણે વિચાર્યું કે હવે તો તેને ઘરજમાઈ બનાવવામાં જ લાભ  
છે, નહીં તો તે આ બંને ઘોડાને લઈને અહીંથી ચાલ્યો જશે. આવો વિચાર  
કરીને તેણે પોતાની પુત્રી સાથે તેના લગ્ન કરી નાખ્યા. અને તેને ઘરજમાઈ  
તરીકે રાખ્યો, અને તે બંને લક્ષણોયુક્ત ઘોડા પણ તેની પાસે જ રહ્યા. આ  
રીતે અશ્વના માલિકે વૈનયિકીબુદ્ધિના પ્રભાવે પોતાનું કામ પાર પાડ્યું ॥ ૮ ॥

॥ આ આઠમું લક્ષણદૃષ્ટાંત સમાપ્ત ॥ ૮ ॥

નવમું ગ્રન્થિદૃષ્ટાંત—

કેઈ સમયે પાટલિપુત્રમાં ( પટણા શહેરમાં ) મુરુઢ નામનો રાજા રાજ્ય

राष्ट्रस्य राजा एकदा कौतुकार्थं तत्समीपे त्रीणि वस्तूनि प्रेषितवान्—गूढं सूत्रम्—  
गुप्तग्रन्थिमत् सूत्रम् १, समायष्टिः—समभागं काष्ठम् २, अलक्षितद्वारः समुद्रको  
जतुना लिप्तः ३ । मुरुण्डस्तानिवस्तूनि स्वपुरुषानाहूय दर्शयति, न च तानि  
केनापि विदितानि ततो राजा कलाचार्यमाहूय पृच्छति—हे आर्य ! भवान् अस्य  
ग्रन्थिद्वारं जानाति ? आचार्य आह—जानामि । इत्युक्त्वा तेन तदैव सूत्रमुष्णजले  
निक्षिप्तम्, ततस्तत्सूत्रमुष्णजलसंयोगेन निर्मलं जातम् मलापगमे सति लब्धः सूत्र-  
स्यान्तः, ग्रन्थिभागोऽपि दृष्टः । यष्टिरपि जले निक्षिप्ता । ततो गुरुभागो मूलमिति  
विज्ञातम् । गुरुभागे एव ग्रन्थिर्भवति । समुद्रकोऽप्युष्णोदके क्षिप्तः, तेन सर्वं जतु

राज्य करता था । उसके पास किसी दूसरे राष्ट्र के राजा ने क्रीडानिमित्त  
तीन वस्तुएँ भेजी । उनमें एक गूढसूत्र था, जिसमें गांठ गुप्त थी १ । दूसरी  
समभागवाली यष्टि थी जिसका मूल भाग गुप्त था २ । तीसरा लाख से  
अलक्षित द्वारवाला डिब्बा था ३ । मुरुण्ड ने इन तीनों चीजों को अपने  
निजी व्यक्तियों को बुलाकर दिखलाया परन्तु कोई भी इन के भेद को  
नहीं जान सका । बाद में कलाचार्य को बुलाकर राजा ने उस से पूछा—हे  
आर्य ! आप इस सूत्र के ग्रन्थिद्वार को जानते हैं । कलाचार्य ने कहा—हां  
जानता हूं । फिर उस कलाचार्य ने गर्मजल मंगवाकर उस सूत्र को उस  
गरमजल में डाल दिया । गरमजल के संबंध से वह निर्मल हो गया ।  
मल रहित होते ही सूत्र का अंत और ग्रन्थिभाग ये दोनों दिखलाइ देने  
लगे । बाद में उस ने यष्टि को भी जल में डाल दिया । डालते ही यष्टि  
का जो मूलभाग था वह जल में डूब गया । डूबते ही उसको इस बात का

करतो હતો. કેઈ બીજા રાજ્યના રાજાએ તેની પાસે ક્રીડાનિમિત્તે ત્રણ વસ્તુઓ  
भेजदी. (१) તેમાં એક ગૂઢસૂત્ર હતું, જેમાં ગુપ્ત ગાંઠ હતી. (૨) બીજી સરખા  
ભાગ વાળી લાકડી હતી જેનો મૂળ ભાગ ગુપ્ત હતો (૩) લાખથી અલક્ષિત  
દ્વારવાળો ડબ્બો હતો. મુરુડે તે ત્રણ ચીજો પોતાના ખાસ માણસોને બોલાવીને  
બતાવી, પણ કેઈ પણ તેનું રહસ્ય સમજી શક્યું નહીં. ત્યાર બાદ કળાચાર્ય-  
ને બોલાવીને રાજાએ તેમને પૂછ્યું, “હે આર્ય ! આપ આ સૂત્રના ગ્રન્થિ  
દ્વારને જાણો છો ? કલાચાર્યે કહ્યું, “હા જાણું છું.” પછી તે કળાચાર્યે ગરમ  
પાણી મંગાવ્યું, અને તે સૂત્રને તે ગરમ પાણીમાં મૂક્યું. ગરમ પાણીના સંસ-  
ર્ગથી તે સ્વચ્છ થયું. નિર્મળ થતાં જ સૂત્રનો અંત તથા ગ્રન્થિભાગ એ બન્ને  
દેખાવા લાગ્યા. પછી તેમણે લાકડીને પણ પાણીમાં મૂકી મૂકતા જ લાકડીનો  
જે મૂળ ભાગ હતો તે પાણીમાં ડૂબી ગયો. ડૂબતા જ તેમને તે વાત સમજઈ

गलितम् । ततश्च तस्य द्वारं प्रकटीभूतम् । ततो राजा तमाचार्यं प्राह—हे आर्य !  
दुर्विज्ञेयं किमपि कौतुकं भवानपि करोतु येन तत्र प्रेषयामि । आचार्येण काचित्  
तुम्बी एकस्मिन् प्रदेशे खण्डमेकमपहाय रत्नैर्भृता । तत् खण्डं तथा मुद्रितं यथा न  
केनापि लक्ष्यते । ततो राजा तां तुम्बीं दत्त्वा स्वान् पुरुषान् तत्समीपे प्रेषयति  
कथयति च—इमां तुम्बीमत्रोदयित्वा रत्नानि ग्रहीतव्यानीति । ते पुरुषास्तां तुम्बी-  
मादाय तत्र गत्वा तस्मै तां समर्प्य तथैव ब्रुवन्ति—तत्रस्था राजपुरुषा बहुशः प्रयत्ने  
कृतेऽपि तथा कर्तुमसमर्था अभूवन् । इयमाचार्यस्य विनयजा बुद्धिः ।

॥ इति नवमो ग्रन्थिदृष्टान्तः ॥ ९ ॥

पता पड़ गया कि यष्टि का यह मूलभाग है । और इसी में गांठ है ।  
इसी तरह समुद्रक-डिब्बे को भी गरमजल में डालकर कलाचार्य ने उसके  
द्वार का पता लगा लिया । कारण गरमजल में डालते ही उसके ऊपर  
लिस हुई लाख पिघलकर दूर हो गई थी । कलाचार्य की इस अभिज्ञता  
से राजा बड़ा प्रसन्न हुआ । उसने कलाचार्य से कहा—आर्य ! तुम भी  
दुर्विज्ञेय कुछ कौतुक करो कि जिसको हम भी उस राजा के पास भेज  
सके । राजा की बात सुनकर कलाचार्य ने एक तुम्बी ली और उस का एक  
टुकड़ा अलग कर उस में रत्न भर दिये और उस खंड को इस प्रकार  
चिपका दिया कि जिस से उसका संधिभाग किसी को भी ज्ञात न  
हो सके । बाद में राजा ने इस तुम्बी को अपने कर्मचारियों को देकर उन से  
कहा—यह तुम्बी उस राजा के पास ले जाओ और उन्हें दे कर कहना कि  
इसको बिना तोड़े ही इसमें से आप रत्न निकाल लो । राजा की आज्ञा-

गर्भ के दाकडीने आ मूण लाग छे. अने अभांज गांठ छे. अज रीते उज्जाने  
पणु गरम पाणीमां भूडीने कलाचार्य तेनुं द्वार पणु गोती काठयुं कारण के  
गरम पाणीमां नाभता ज तेना उपर जे लाग छती ते पीगणीने हर थर  
गर्भ. कलाचार्यनी आ प्रकारनी बुद्धिथी राजा धणो पुशी थयो. तेणु कलाचार्यने  
कहुं, “आर्य ! तमे पणु अबुं कंठ दुर्विज्ञेय कौतुक करे के जेने अमे पणु  
ते राजा पासे भोक्ली शकीअे.” राजनी बात सांलणीने कलाचार्ये अक तुंभडी  
दीधी, अने तेना अक टुकड़ा जुहो करीने तेमां रत्न लरी दीधां अने पछी  
ते टुकडाने तेना पर अवी रीते चोटाडी दीधा के तेना सांधे कोर्धने पणु  
जडी शके नडी. पछी राजाअे ते तुंभडी चोताना सेवडाने आपीने कहुं,  
“आ तुंभडी ते राजा पासे लरि जाव, अने तेमने आ आपीने कडेले के तेने  
तोड्या बिना तेनी अंदरथी रत्नो काढी दो. राजनी आज्ञानुसार ते माणुसे ते



અથ દશમોઽગદદૃષ્ટાન્તઃ—

કસ્યચિદ્રાજઃ સૈન્યં શત્રુભૂપેન વિષપ્રયોગેન મૂર્ચ્છિતં કૃતમ્ । તાદૃશીં સ્વસૈન્ય-  
સ્થિતિં વિલોક્ય રાજા વૈદ્યમાહૂય વદતિ—પ્રચુરં મમ સૈન્યં પરચક્રેણ વિપાક્રાન્તં  
કૃતં તત્કથમેતત્ પ્રચુરં મમ સૈન્યં નિર્વિષં ભવેત્ ? । વૈદ્યેનોક્તમ્—સર્વં સ્વરૂપેનૈવ  
કાલેન નૈરુજ્યં પ્રાપ્સ્યતિ । તતો વૈદ્યઃ સ્તોકમૌપધમાનીય રાજાનં દર્શયતિ । રાજા

નુસાર વે પુરુષ ઉસ તુંબી કો લેકર ઉસ રાજા કે પાસ પહુંચે ઓર જૈસા  
રાજા ને ઉન સે કહને કો કહા થા વૈસા હી ઉન્હોં ને વહાં જાકર કહા ।  
ઉસ રાજા ને અપને રાજપુરુષોં કો ઉસ સમય બુલાયા ઓર તુંબી દેકર  
કહા—કિ વિના ફોડે હસ મેં સે રત્નો કો બાહર નિકાલો । રાજપુરુષોં ને  
અનેક પ્રકાર કે પ્રયત્ન કિયે પરન્તુ વે ઉસ મેં સે રત્ન નહોં નિકાલ સકે ।

યહ આચાર્ય કી વિનયજા બુદ્ધિ કા નૌવાં ઉદાહરણ હુઆ ॥ ૯ ॥

દસવાં અગદદૃષ્ટાન્ત—

કિસી એક રાજા કી સેના કો ઉસ સે કિસી વિપક્ષી રાજાને વિષપ્રયોગ  
દ્વારા મૂર્ચ્છિત કર દિયા થા । અપની સેના કી હસ સ્થિતિ સે ચિન્તિત હોકર  
રાજા ને ઉસી સમય વૈદ્ય કો બુલાકર કહા—વૈદ્યજી ! મેરા પ્રચુર સૈન્ય પરચક્ર  
ને ( શત્રુ કી સેના ને ) વિષપ્રયોગ દ્વારા મૂર્ચ્છિત કર દિયા હૈ તો અવ આપ  
બતલાઈયે—યહ કૈસે સચેત હો સકતા હૈ । રાજા કી વાત સુનકર વૈદ્ય ને કહા  
આપ ચિન્તા ન કીજિયે બહુત જલ્દી આપકા યહ સૈન્ય ઠીક હો જાવેગા ।  
એસા કહકર ઉસને રાજા કો થોડો સી ઔષધી લાકરકે દિખલાઈ ।

તુંબડી લઈને તે રાજા પાસે પહોંચ્યા, અને રાજાએ જે પ્રમાણે કહેવાની  
સૂચના આપી હતી તે પ્રમાણે ત્યાં જઈને કહ્યું. તે રાજાએ તેજ સમયે પોતાના  
રાજપુરુષોને બોલાવ્યા. અને તુંબડી આપીને કહ્યું કે આને કાપ્યા વિના તેમાંથી  
રત્નો બહાર કાઢી દો. રાજપુરુષોએ અનેક પ્રકારના પ્રયત્નો કર્યા પણ તેઓ  
તેમાંથી રત્નો કાઢી શક્યા નહીં.

॥ આ આચાર્યની વૈનયિકીબુદ્ધિનું નવમું ઉદાહરણ ॥ ૯ ॥

દસમું અગદ (ઔષધ) દૃષ્ટાન્ત—

કોઈ એક રાજાની સેનાને તેના દુશ્મન રાજાએ વિષપ્રયોગ દ્વારા મૂર્ચ્છિત  
કરી નાખી હતી. પોતાની સેનાની એ હાલતથી ચિન્તિતુર થઈ ને રાજાએ એજ  
સમયે વૈદ્યને બોલાવીને કહ્યું, “ વૈદ્યજી ! મારા આખાં સૈન્યને દુશ્મનની સેનાએ  
વિષપ્રયોગ દ્વારા મૂર્ચ્છિત કરી નાખ્યું છે, તો આપ બતાવો કે આ લોકો કેવી  
રીતે સચેત થશે ? ” રાજાની વાત સાંભળીને વૈદ્યે કહ્યું, “ આપ ચિન્તા ન કરો  
ધણું જલ્દી આપનું સૈન્ય સાફ થઈ જશે. ” એવું કહીને તેણે રાજાને થોડી

ચ સ્તોકમૌષધં દૃષ્ટ્વા તદુપરિ કોપં કૃતવાન્ । વૈદ્યો વદતિ-મહારાજ ! इदं लक्षारोग्यप्रदमौषधमस्ति, अल्पं दष्ट्वा भवान् कौपं मा करोतु । राजा पृच्छति-कथमेतन्निश्चेतव्यम् ? वैद्यः प्राह-राजन् ! आनाय्यतां कोऽपि विपाक्रान्तः । राज्ञा तादृशो हस्तीदर्शितः । ततो वैद्यो हस्तिनः पुच्छदेशे वालमेकमुत्पाठ्य तदीयरन्ध्रे तदौषधं संचारितम् । तेन सहस्ती स्वस्थो जातः वैद्यो वदति-राजन् । हस्ती नैरुज्यं प्राप्तः । एवमेतदौषधं लक्षारोग्यप्रदम् । हस्तिनि स्वस्थे जाते सति राजा शान्तचेतसा वैद्यं वदति-करोत्वैवम् वैद्येन तदौषधप्रयोगः सैन्ये संचारितः । जातं तत्प्रचुरमपि सैन्यं निर्विषम् । राजा वैद्यं प्रति संतुष्टो जातः । इति वैद्यस्य विनयजा बुद्धिः ।

॥ इति दशमोऽगदद्वंद्वान्तः ॥ १० ॥

થોડી ઔષધી દેખકર રાજા કો વૈદ્ય કે પ્રતિ ક્રોધ કા આવેગ જગ ગયા । વૈદ્ય ને યહ દેખકર રાજા સે ડસી સમય કહા-મહારાજ ! इतनी सी यह औषधी एक लाख आदमियों को आरोग्य प्रदान करने वाली है, आप इसको थोड़ी सी जानकर कोप न कीजिये । वૈદ્ય કી હસ વાત કા વિશ્વાસ ન કરતે હુએ રાજા ને ડસસે કહા-इस बात का निश्चय कैसे किया जावे ? । વૈદ્ય ને કહા મહારાજ ! આપ કિસી વિષાક્રાન્ત પ્રાણી કો મંગવાઈયે । રાજા ને વૈસા હી કિયા-एक हाथी जो विष की वेदना से सूँछित था दिखलाया वૈદ્ય ને ડસી સમય ડસકી પૂંછ કા એક વાલ નિકાલા ઔર ડસ સ્થાન મેં ડસ ઔષધી કો સ્વર દિયા । થોડી દેર વાદ વહ હાથી મૂર્છા સે રહિત હોકર સ્વસ્થ હો ગયા । વૈદ્ય ને કહા-महाराज ! देखिये इस औषधि का कितना प्रभाव है ? जो थोड़ी ही देर में हस्ती सूँछा से रहित हो गया है । इसी तरह यह औषधी एक लाख प्राणियों को

સરખી દવા લાવી બતાવી. થોડી દવા ભેઠને રાજાને વૈદ્ય પ્રત્યે ક્રોધનો આવેગ આવી ગયો, વૈદ્યે તે ભેઠને તેજ વખતે રાજાને કહ્યું “આટલી જ ઔષધિ લાખ માણસોને આરોગ્ય દેનારી છે. તેવું થોડું પ્રમાણ ભેઠને આપ ગુસ્સો ન કરશો. વૈદ્યની આ વાત પર વિશ્વાસ ન મૂકતા રાજાએ કહ્યું, “એ વાતની ખાતરી કેવી રીતે થાય ?” વૈદ્યે કહ્યું, “આપ ઝેરનો લોગ બનેલ કોઈ પ્રાણીને બતાવો.” રાજાએ એવું જ કયું-એક હાથી કે જે વિષની વેદનાથી મૂર્ચ્છિત હતો તે બતાવ્યો. વૈદ્યે તરત જ તેની પૂછડીમાંથી એક વાળ ખેંચી કાઢ્યો અને તે સ્થાને તે ઔષધિને મૂકી. થોડી જ વારમા તે હાથીની મૂર્છા વળી અને તે સ્વસ્થ થઈ ગયો. વૈદ્યે કહ્યું, “મહારાજ ! જુવો આ ઔષધિનો કેટલો પ્રભાવ છે, કે થોડી જ વારમા હાથી મૂર્ચ્છાથી રહિત થઈ ગયો. એજ પ્રમાણે આ ઔષધિ એક લાખ માણસોને આરોગ્ય અર્પી શકે છે.” રાજાએ હાથીને સ્વસ્થ

રથિકદૃષ્ટાન્તો—ગણિકાદૃષ્ટાન્તથ વૈનયિકબુદ્ધેરેકાદશો દ્વાદશથ દૃષ્ટાન્તઃ  
ક્રમેણ વ્રોધ્યઃ । સ્થૂલભદ્રકથાનકે રથિકસ્ય યત્ સહકારફલગુચ્છત્રોટનમ્, યચ્ચ  
ગણિકાયાઃ સર્પપરાશેરુપરિ નર્તનં, તે દ્વે અપિ વૈનયિકી બુદ્ધિફલે ॥

અથ ત્રયોદશઃ શાટિકાદિદૃષ્ટાન્તઃ—

एकः कलाचार्यो राजकुमारान् शिक्षयति । राजकुमारा अपि बहुमूल्यद्रव्यैः

આરોગ્ય પ્રદાન કર સકતી હૈ । રાજા ને હસ્તી કો સ્વસ્થ દેખકર શાન્ત  
ચિત્ત હો વૈદ્ય સે કહા—અચ્છા આપ હસ ઔષધિ કા પ્રયોગ સૈન્યજનો  
કો સ્વસ્થ કરને કે લિયે કીજિયે । મેરી તરફ સે આપકો આજ્ઞા હૈ ।  
રાજા કી આજ્ઞા પાતે હી વૈદ્યને ઉસ ઔષધિ કા પ્રયોગ સૈન્ય કો સ્વસ્થ  
કરને કે લિયે કિયા તો વહ સમસ્ત મૂર્ચ્છિત હુઆ સૈન્ય સ્વસ્થ હો ગયા ।  
રાજા વૈદ્ય કી હસ ચિકિત્સા સે વડા પ્રસન્ન હુઆ ॥ ૧૦ ॥

॥ यह दसवां अगददृष्टान्त हुआ ॥ ૧૦ ॥

હસી તરહ રથિક દૃષ્ટાન્ત ઔર ગણિકા કા દૃષ્ટાન્ત યે વૈનયિક બુદ્ધિ  
કે ગ્યારહવેં એવં બારહવેં દૃષ્ટાન્ત હૈં । સ્થૂલભદ્ર કી કથા મેં યે દોનોં  
દૃષ્ટાન્ત લિખે હુએ હૈં । રથિક ને જો આમ્ર કે ફલ કે ગુચ્છોં કો તોડા હૈ,  
તથા સરસોં કી રાશિ કે ડપર જો વેશ્યા ને નૃત્ય કિયા હૈ યે દોનાં  
વાતે વૈનયિક બુદ્ધિ કે ફલ હૈં ॥ ૧૧-૧૨ ॥

॥ यह ग्यारवां रथिकदृष्टान्त, बारहवां वेश्यादृष्टान्त हुआ ॥ ૧૧-૧૨ ॥

તેરહવાં શાટિકાદિદૃષ્ટાન્ત—

एक कलाचार्य राजकुमारों को पढ़ाता था । राजकुमार भी उसका

થયેલો જોઈને શાત ચિત્ત થઈને તે વૈદ્યને કહ્યું, “સારું, આપ આ ઔષ-  
ધિનો ઉપયોગ સૈનિકોને સ્વસ્થ કરવા માટે કરો આપને મારો તે આદેશ છે”  
રાજાનો આદેશ મળતાં જ વૈદ્યે તે ઔષધિનો પ્રયોગ મૂર્ચ્છિત સૈન્યને સ્વસ્થ  
કરવા માટે કર્યો ત્યારે તે આખું મૂર્ચ્છિત થયેલું સૈન્ય સ્વસ્થ થયું. રાજા વૈદ્યની  
આ ચિકિત્સાથી ઘણો ખુશી થયો ॥ ૧૦ ॥

॥ આ દસમું અગદદૃષ્ટાન્ત સમાપ્ત ॥ ૧૦ ॥

એજ પ્રમાણે રથિકદૃષ્ટાન્ત અને ગણિકાદૃષ્ટાન્ત તે વૈનયિક બુદ્ધિના  
અગીયારમાં અને બારમાં દૃષ્ટાન્ત છે. સ્થૂલભદ્રની કથામાં તે બંને દૃષ્ટાન્તો  
લખેલાં છે. રથિકે જે આમ્રફળનાં ગુચ્છાંઓને તોડ્યાં છે, તથા સરસવના ઢગલા  
પર વેશ્યાએ જે નૃત્ય કર્યું છે તે બંને વાતો વૈનયિકબુદ્ધિનું ફળ છે ॥ ૧૧-૧૨ ॥  
॥ આ અગીયારમું રથિકદૃષ્ટાન્ત, અને બારમું વેશ્યાદૃષ્ટાન્ત સમાપ્ત ॥ ૧૧-૧૨ ॥

તેરમું શાટિકાદિદૃષ્ટાન્ત—

એક કલાચાર્ય-રાજકુમારોને ભણાવતા હતા. રાજકુમારો પણ વખતો-

સમયે સમયે કલાચાર્ય સમ્માનયતિ । કલાચાર્યો મમ પુત્રેભ્યો વહુમૂલ્યાનિ દ્રવ્યાનિ  
ગૃહીતવાનિતિ જ્ઞાત્વા રાજાકોપવશાત્ તં કલાચાર્યં હન્તુમિચ્છતિ । રાજકુમારૈરિદં વૃત્તં  
કથંચિદ્ જ્ઞાતમ્ । તૈશ્ચિન્તિતમ્-આચાર્યોઽપ્યસ્માકં પિતાઽસ્તિ । અતોઽસ્માભિઃ કેના-  
પ્યુપાયેન સ રક્ષણીયઃ । તસ્મિન્નેવ આચાર્યો ભોજનાર્થમાગતઃ, સ્નાનં કૃત્વા પરિધા-  
નાર્થં સ્વશાટિકાં યાચતે । રાજકુમારાઃ-શુષ્કાં શાટિકાં વિદિત્વાઽપિ સ્નાનશાટી  
આર્દ્રાઽસ્તીત્યુક્તવન્તઃ, તથા દ્વારસ્ય સમીપે લઘુ તૃણં સ્થાપયિત્વા પ્રોક્તવન્તઃ-  
તૃણમિદં દીર્ઘમસ્તિ । એવમેવ ક્રૌશ્વનામા શિષ્યઃ પૂર્વં કલાચાર્યસ્ય દક્ષિણતઃ પ્રદક્ષિણાં  
કર્તુમર્હતિ, કિં તુ ઇદાનીં સ વામભાગેન પ્રદક્ષિણાં કરોતિ । એવં કુમારાણામાર્દ્રશાટી

સમય ૨ પર વહુ મૂલ્ય દ્રવ્યોં સે સત્કૃત કિયા કરતે થે । રાજા કો જવ  
યહ વાત જ્ઞાત હુઈ કિ કલાચાર્ય મેરે પુત્રોં સે વહુમૂલ્ય વસ્તુઓં કો લેતા  
રહતા હૈ તો રાજા ને કલાચાર્ય કો મારને કા વિચાર કિયા । રાજકુમારોં  
કો અપને પિતા કા યહ કુવિચાર જવ કિસી તરહ સે છાલૂમ પડ ગયા  
તો ઉન્હાં ને સોચા-આચાર્ય ભો તો હમારે પિતા હૈ અતઃ હમેં ઉન કી રક્ષા  
કિસી ન કિસી ઉપાય દ્વારા અવશ્ય કરની ચાહિયે । વે એસા વિચાર કર  
હી રહે થે કિ ઇતને મેં ઉસી સમય કલાચાર્ય ભો વહાં ભોજન કરને કે  
લિયે આયે । આતે હી કલાચાર્ય સ્નાન કર કે પહિરને કે લિયે રાજકુ-  
મારોં સે ધોતી માંગી તો ઉન રાજકુમારોં ને સૂઝી ધોતી કો ગીલી વત-  
લાયા । તથા દ્વાર કે પાસ લઘુ તૃણ રખકર ઉસકો દીર્ઘ (વડા) વતલાયા ।  
તથા ઇન શિષ્યોં મેં જો ક્રૌંચ નામ કા શિષ્ય થા કિ જો પહિલે ઇન કી  
પ્રદક્ષિણા દક્ષિણ ભાગ સે કિયા કરતા થા ઉસને વામભાગ સે પ્રદક્ષિણા

વખત બહુ મૂલ્ય દ્રવ્યોથી તેમનો સત્કાર કરતા હતા. રાજાને જ્યારે આ  
વાતની ખબર પડી કે કલાચાર્ય મારા પુત્રો પાસેથી બહુ મૂલ્ય ચીજો મેળવે  
છે, ત્યારે રાજાએ કલાચાર્યને મારવાનો વિચાર કર્યો. રાજકુમારોને પોતાના  
પિતાનો તે કુવિચાર જ્યારે કોઈ પણ રીતે જાણવામાં આવ્યો ત્યારે તેમણે  
વિચાર્યું-“આચાર્ય પણ આપણા પિતા સમાન છે, તેથી આપણે કોઈ પણ ઉપાયે  
અવશ્ય તેમનું રક્ષણ કરવું જોઈએ. તેઓ આવો વિચાર કરી રહ્યા હતા કે  
એવામાં કલાચાર્ય પણ ભોજન કરવા માટે ત્યાં આવ્યાં આવતાં જ કલાચાર્યે  
સ્નાન કરીને પહેરવા માટે રાજકુમારો પાસે ધોતી માંગી ત્યારે  
તે રાજકુમારોએ સૂઝી ધોતીને લીની ખતાવી, તથા દ્વારની પાસે લઘુ  
તૃણ રાખીને તેને દીર્ઘ (મોટું) ખતાવ્યું. તથા તે શિષ્યોમાં જે ક્રૌંચ નામનો  
શિષ્ય હતો કે જે પહેલાં તેમની પ્રદક્ષિણા જમણી બાજુથી કર્યા કરતો હતો  
તેણે ડાબી બાજુથી પ્રદક્ષિણા કરવા માંડી આ પ્રમાણેના કુમારોના આચરણથી

कथनेन तृणस्य दीर्घत्वकथनेन क्रौञ्चस्य वामभ्रमणेन च कलाचार्यो ज्ञातवान्—  
सर्वे मम विरुद्धाः सन्ति, केवलं कुमारा एव भक्तिं विज्ञापयन्ति । एवं विचिन्त्य  
कलाचार्यो नृपेणालक्षितः सन् नगराद्वहिर्गतवान् । इयं संकेतज्ञानेनाचार्यस्य,  
संकेतद्वारा कलाचार्यस्य हित संपादनेन कुमाराणां च वैनयिकी बुद्धिः । शाटिका  
शब्देनात्र धौतवस्त्रं गृह्यते ।

॥ इति त्रयोदशः शाटिकादिदृष्टान्तः ॥ १३ ॥

अथ चतुर्दशो नीत्रोदकदृष्टान्तः—

नीत्रोदकम्—गृहच्छादन प्रान्तपतितं जलम् । काचिद् वणिजोभार्या चिर  
प्रोषिते भर्तरि दास्यै निजभावं निवेदयति । आनय कमपि पुरुषम् 'इति । ततस्तया  
देना प्रारंभ किया । इस तरह कुमारा के इस आचरण से आचार्य ने  
यह समझ लिया कि इस समय मुझ से सब विरुद्ध हैं, केवल कुमार  
ही मुझ में अपनी भक्ति प्रदर्शित कर रहे हैं । इस तरह विचार कर वह  
कलाचार्य राजा से अलक्षित होकर वहाँ से बाहिर चला गया इस प्रकार  
आचार्य ने संकेत द्वारा जो अपनी व अपने द्रव्य की रक्षा की वह वैन-  
यिकी बुद्धि का ही परिणाम है । तथा शिष्यों का जो कलाचार्य द्वारा  
हित संपादन हुआ उस से जो उन में बुद्धि उद्भूत हुई वह भी इसी वैन-  
यिकी बुद्धि का फल है ॥ १३ ॥

॥ यह तेरहवां शाटिकादिदृष्टान्त हुआ ॥ १३ ॥

चौदवां नीत्रोदकदृष्टान्त—

एक वणिक् था । वह अपनी पत्नी को घर पर छोड़कर प्रायः परदेश  
में ही रहता था । एक दिन की बात है कि उसकी पत्नी ने काम व्यथा  
से व्यथित होकर अपनी दासी से कहा कि तू किसी पुरुष को ले आ ।

आचार्ये ते समञ्ज लीधुं के अत्यारे ष्ठा भारी विरुद्ध छे, इक्षत कुमारो ञ भारा  
उपरने तेमने लक्षितभाव प्रदर्शित करी रह्या छे. आ प्रमाणे विचार करीने  
ते कलाचार्य राजनी नजरे पड्या विना त्यांथी ष्ठार आल्या गया. आ प्रमाणे  
आचार्ये संकेत द्वारा पोतानी तथा द्रव्यनी जे रक्षा करी ते वैनयिकबुद्धिनुं  
ञ परिणाम हुतुं. तथा शिष्येनुं कलाचार्य द्वारा जे हित संपादन थयुं ते  
कारणे तेमनामां बुद्धि उत्पन्न थछ ते पणु अेञ वैनयिकीबुद्धिनुं इण हुतुं. ॥१॥

॥ आ तेरमुं शाटिकादिदृष्टान्त समाप्त. ॥ १३ ॥

औदमुं नीत्रोदकदृष्टान्त—

એક વણિક હતો. તે પોતાની પત્નીને ઘેર મુકી જઈને સામાન્ય રીતે  
પરદેશમાં જ વસતો હતો. એક દિવસે તેની પત્નીએ કામવ્યથાથી વ્યાકુળ થઈને  
પોતાની દાસીને કહ્યું કે તું કોઈ પણ પુરુષને ઓલાવી લાવ. દાસીએ

समानीतः । ततो नापितेन तस्य नखकृन्तनादिकं तथा कारितम् । रात्रौ च तौ द्वावपि संभोगार्थं द्वितीयभूमिकामारुढवन्तौ । मेघश्च वृष्टिं कर्तुमागन्धवान् । ततस्तेन पिपासाव्याकुलेन पुरुषेण नीव्रोदकं पीतम् । ततश्च त्वग्निपभुजङ्गसंपृष्ट तज्जलपानेन स मृतः । ततस्तया वणिग्भार्यया रात्रिपश्चिमयाम एव शून्य देवालये मोचितः । प्रभाते दण्डधराः पाशधराश्च राजपुरुषास्तं मृतकं दृष्टवन्तः । तस्य नखादिकर्म दृष्ट्वा ते नापितान् पृष्टवन्तः, अस्य केनेदं नखकृन्तनं क्षौरकर्म च कृतम् । दासी ने ऐसा ही किया । वह किसी पुरुष को ले आई । वणिक की पत्नी ने एक नाई को बुलवाकर उससे उनके नख केश कटवाना आदि करवाया । रात का जब समय आया तो वे दोनों मकान के ऊपर के भवन में गये । उस समय आकाश में मेघ घिरा हुआ था । धीरे २ पानी बरसाना प्रारंभ हुआ । उस पुरुष को प्यास लगी हुई थी अतः उस ने नीव्रोदक नेवा का जल-पी लिया । वह जल त्वग्निष जिस की चमड़ी में विप भरा हुआ था ऐसा सर्प के शरीर से छुआ हुआ आया था, इसलिये पीने के कुछ ही देर बाद उस की मृत्यु हो गई । उस को मरा हुआ देखकर वणिक भार्या को बड़ी चिन्ता हुई । उस ने रात्रि के पिछले पहर में उस मृतक शरीर को किसी शून्य देवालय में रखवा दिया । प्रभात होते ही राजपुरुषों ने इस मृतक शरीर को ज्यों ही देखा तो उस के ताजे नखकृन्तन आदि चिह्नों को देखकर उन्होंने ने वहाँ के 'नाईयों' को बुलवाकर पूछा कि कहो इस का नखकृन्तन तथा क्षौरकर्म तुम लोगों में से किस ने

प्रभाते न कथं । ते कोऽपि पुरुषने लब्ध आसीत् । वणिक्पत्नीने अथैव हनमने भोलावीने तेना नभ, वाण वगेरे कथाव्या । रात्रि पडतां तेने भन्ने मकानने उपरने भाणे गयां । त्यारे आकाशमां वादणां छवायेलां हतां । धीरे धीरे वरसाद वरसये । शङ्क थये । त्यारे ते पुरुषने तरस लागी होती । तेथी तेले नीव्रोदक (नेवांमांथी पडतुं पाणी) पी लीधुं । ते पाणी त्वग्निष-नेनी आमडीमां विष बरेलु डोय जेवा सर्पना शरीरने स्पर्शीने आव्युं हुतुं, तेथी ते पीधां पछी थोडीन वारमां मृत्यु पाभ्यो । तेने मृत्यु पासेल लेधने वणिक्पत्नीने लारे चिन्ता थध । तेले रात्रिने पाछणे प्रहरे ते मूर्दाने कोऽपि आसीत् देवालयमां भूकावी दीधुं । सवार पडतां न राजपुरुषां जेवुं ते मूर्द लेयुं के तेना नभ कथाव्या आदिनां ताळां निशान लेधने तेमले त्यांना हनमने भोलावीने पूछ्युं, “कोऽपि आना नभ कायवानुं तथा वाण कायवानुं काम तमाराभाथी कोले



તત એકેન નાપિતેનોક્તમ્—અમુકવણિગ્ભાર્યાદાસ્યાદેશેન મયાઽસ્ય નચ્ચક્રન્તનાદિકં  
કૃતમ્। તતઃ સા, પૃષ્ઠા સાઽપિ ચ પૂર્વં ન કથિતવતી। તતો રાજપુરુષૈસ્તાડ્યમાના  
યથાવસ્થિતં કથયામાસ। ઇતિ રાજપુરુષાણાં વૈનયિકવુદ્ધિઃ।

॥ ઇતિ ચતુર્દશો નીત્રોદકદૃષ્ટાન્તઃ (પૃષ્ઠ ૩૦૯) ॥ ૧૪ ॥

વૃષભસ્ય હરણમ્, અશ્વસ્ય મરણમ્, વૃક્ષાત્ પતનં ચેતિ પશ્ચદશો દૃષ્ટાન્તઃ—

આસીદેકસ્મિન્ ગ્રામે કશ્ચિદ્દરિદ્ર પુરુષઃ। સ સ્વમિત્રાદ્ વૃષભં યાચિત્વા  
હલં ચાલયતિ સ્મ। સાયં સમયે તં વૃષભં મિત્રાલયે નીત્વા ત્યક્ત્વાન્। તદા તસ્ય

કિયા હૈ?। उनकी इस बात को सुनते ही एक नाई ने उत्तर में कहा कि  
मैंने इस के नखकृन्तन आदि किये हैं। मुझे अमुक सेठ की पत्नी की दासी  
बुलाकर ले गई थी और उस ने मुझ से ऐसा कर ने को कहा था। राज-  
पुरुषों ने उसी समय उस दासी को बुलवाया। उससे पूछ ने पर जब  
उस ने कुछ नहीं बतलाया तो उन्होंने ने दासी को ताड़ना दी। मार खाते  
ही उसने उसी समय जो कुछ घटना घटी थी वह सब याथार्थ कह दी।  
यह राजपुरुषों की वैनयिकी बुद्धि का उदाहरण है ॥ १४ ॥

यह चौदहवां नीत्रोदकदृष्टान्त हुआ ॥ १४ ॥

વૃષભ કા હરના, અશ્વ કા મરના તથા વૃક્ષ સે ગિરના યહ પન્દ્રહવાં  
દૃષ્ટાન્ત હૈ—જો હસ પ્રકાર હૈ—

કિસી ગ્રામ મેં એક દરિદ્ર રહતા થા। ઉસ કે પાસ ચેતી કરને કે  
લિયે બૈલ નહીં થે। અતઃ ઉસને અપને મિત્ર સે બૈલ માંગે ઓર ચેત મેં  
હલ ચલાકર અનાજ બો દિયા। પશ્ચાત્ સાયંકાલ મેં યહ ઉન બૈલોં કો  
અપને મિત્ર કે ઘર પહુંચાને આયા। જવ યહ ઉન બૈલોં કો વહાં પહુંચાને

કયું હતું? ” તેમની આ વાત સાંભળીને એક હબમો કહ્યું કે મેં તેના નખ  
કાપવા આદિ કાર્ય કર્યા છે. મને અમુક શેઠની દાસી બોલાવીને લઈ ગઈ  
હતી અને તેણે મને તે પ્રમાણે કરવાનું કહ્યું હતું. રાજપુરુષોએ એજ સમયે  
તે દાસીને બોલાવી. તેને પૂછવામાં આવતા કેઈ જવાબ ન મળતાં તેમણે તેને  
મારવા માંડી. માર પડતાં જ તેણે બે કંઈ બન્યું હતું તે બધું સાચે સાચું  
કહી દીધું. આ રાજપુરુષોની વૈનયિકીબુદ્ધિનું ઉદાહરણ છે. ॥ ૧૪ ॥

॥ આ ચૌદમું નીત્રોદકદૃષ્ટાન્ત સમાપ્ત ॥ ૧૪ ॥

બળદની ચેરી, અશ્વનું મરણ તથા વૃક્ષથી પડવાનું આ પંદરમું દૃષ્ટાન્ત—

કેઈ એક ગામમાં એક ગરીબ માણસ રહેતો હતો. તેની પાસે ખેતી  
કરવા માટે બળદ ન હતાં. તેથી તેણે પોતાના મિત્રના બળદ લાવીને અને ખેતર  
ખેડીને અનાજ વાવી દીધું. પછી સાંજે તે એ બળદોને પાછા આપવા પોતાના

सुहृद् भुञ्जान आसीत्, अतोऽसौ वृषभस्य समीपे न गतः, किं तु वृषभं दृष्टवान्, अतः स दरिद्र पुरुषो मित्रमनुक्त्वा गृहं गतः। स्वामिनोऽनवधानेन वृषभस्तदालयाद् बहिर्निर्गतः। तं चौरा अपहृत्य नीतवन्तः।

वृषभस्वामी स्वालये वृषभमनालोक्य दरिद्र पुरुषस्य गृहं गत्वा तस्माद् याचते — यो मम वृषभस्त्वया समानीतस्तं वृषभं देहि। चौरैरपहतत्वात् स वृषभस्तेन कथं देयः स्यात्। ततोऽसौ दरिद्र पुरुषं न्यायालये नेतुं प्रवृत्तः?।

गया था तो उस समय उस का मित्र भोजन कर रहा था, इसलिये उन बैलों के पास वह नहीं आसका, पर बैलों को उस ने आया हुआ अवश्य देख लिया था, अतः मित्र से वह दरिद्र व्यक्ति बिना कुछ कहे सुने ही अपने घर पर चला आया। वहां बैल अपने स्वामी की असावधानी से घर से बाहर निकल गये। अरक्षित स्थिति में उन बैलों को देखकर चौर न जाने उन्हें कहां ले गये। जब बैलों के मालिक ने बैलों को ठाण में नहीं देखा ता वह भगकर अपने दरिद्र मित्र के घर पहुँचा। वहां जाकर उसने उस दरिद्र मित्र से बैलों की माँग की। कहा जो तुम बैल मेरे वहाँ से लाये थे वे दो। मित्र ने सुनकर कहा—बैल तुम्हारे घर पहुँचा दिये हैं। परन्तु मित्र ने उस की नहीं मानी और बैलों को दूढ़कर लाने की बात उससे कही। उस ने बैलों की खोज की तो वे उस को नहीं मिले, उन्हें तो चौर ले गये थे, इसलिये परस्पर में इन दोनों में झगड़ा हो गया। अन्त में बैलों के मालिक ने उसको कचहरी में न्याय प्राप्त करने की

मित्रने घर आये। न्यारे ते એ બળદોને લઈને આવ્યો ત્યારે તેના મિત્ર ભોજન કરતો હતો, તેથી તે એ બળદોની પાસે આવી શક્યો નહીં પણ તેણે બળદોને આવતાં અવશ્ય જોયા હતા, તેથી તે ગરીબ આદમી મિત્રને કંઈપણ કહ્યા વિના પોતાને ઘર આવ્યો ગયો. હવે એવું બન્યું કે તે બળદો પોતાના માલિકની બેઠાબેઠી બહાર આવ્યા ગયા. તે બળદોને અરક્ષિત હાલતમાં જોઈને ચોર તેમને કોઈ અબાણે સ્થળે લઈ ગયા. ન્યારે બળદના માલિકે બળદોને ગમાણ પાસે ન જોયા ત્યારે તે ઝડપથી તેના મિત્રને ઘર પહોંચ્યો. ત્યાં જઈને તેણે તે ગરીબ મિત્ર પાસે પોતાના બળદો માંગ્યા. તેણે કહ્યું કે તમે જે બળદો મારી પાસેથી લઈ ગયા હતા તે મને પાછા આપો. તે માલિકે બળદો જ મિત્રે કહ્યું કે બળદો તો તમારે ઘર પહોંચ્યાહી દીધાં છે, પણ મિત્રે તેની વાત માની નહીં અને બળદો શોધી લાવવાનું તને કહ્યું ઘણી શોધ કરવા છતાં પણ બળદો જડ્યાં નહીં કારણ કે તેમને ચોર લઈ ગયો હતો. તે કારણે તે બંને વચ્ચે ઝગડો પડ્યો. છેવટે બળદના માલિકે તેને ન્યાય મેળવવા

कश्चिदश्चारूढः पुरुषस्तस्याभिमुखमागच्छति । अकस्मादश्वो भीत्या समुच्छ-  
लितस्तेन सोऽश्वात् पतितः, अश्वश्च पलायितः । दरिद्र पुरुषेण सहासौ वृषभस्वामी  
मार्गे तदभिमुखमागच्छति, तस्मान्तं दृष्ट्वाऽश्वस्वामी प्राह—पलायमानमश्वं प्रहा-  
रेणावरुन्धि । ततोऽसौ दरिद्रपुरुषस्तद्वचनं श्रुत्वैवाश्वस्य प्रहारं कृतवान् । स प्रहा-  
रस्तस्यमर्मणि संलग्नस्तेन सोऽश्वः प्रकृति कोमलत्वात् मृतः । ततोऽश्व स्वामी  
दरिद्र पुरुषं गृहीत्वा तदभियोगं कर्तुं प्रवृत्तः । तेषु सर्वेषु नगरान्तिकमुपागतेषु सूर्यो-  
ऽस्तं गतः । रात्रौ तन्नगरो पान्ते वहिः प्रदेशे ते सर्वे स्थिताः २ ।

आशा से ले जाने का आयोजन किया । जब यह कचहरी के लिये ले  
जाया जा रहा था तो इस के ऊपर दैव दुर्विपाक से मार्ग में दो घटनाएँ  
और घट गई जो इस प्रकार हैं—एक व्यक्ति घोड़े पर चढ़ा हुआ उसकी  
तरफ आ रहा था । घोड़ा अचानक भय से ज्यों ही उछला कि वह व्यक्ति  
घोड़े पर से उछल कर नीचे आ गिरा, और घोड़ा भाग गया । भागते हुए  
अपने घोड़े को देखकर उस ने दरिद्र पुरुष से जो कचहरी की तरफ बैलों  
के मालिक के साथ जा रहा था कहा—भाई ! इस घोड़े को मारो और  
जैसे वने वैसे रोक लो । दरिद्रपुरुष ने वैसा ही किया । दरिद्र पुरुष ने घोड़े  
को जो मार मारा वह जाकर उसके मर्मस्थान में लगी, लगते ही घोड़ा  
स्वभावतः कोमल होनेसे उसी समय मर गया । घोड़े को मरा हुआ  
देखकर उसके मालिक ने उस पर हत्या का अभियोग लगा दिया, और  
इस तरह लड़ते झगड़ते ये सब के सब नगर के पास ज्यों ही आकर  
उपस्थित हुए कि इतने में सूर्य अस्त हो गया । रात्रि में नगर में न जाकर  
ये लोग बाहर ही कहीं ठहर गये । वहाँ वृक्ष के नीचे अनेक नट ठहरे

भाटे कचेरीमां लधं जवानो निर्णय कर्था. ज्यारे ते तेने कचेरीमां लधं जते।  
डते त्यारे मार्गमां तेने दुर्भाग्ये भीष्म जे दुर्घटनाओ नडी, जे आ प्रमाणे  
छे—अेक व्यक्ति घोडे सवार थधने तेनी तरफ आवती डती. घोडे अयानक  
लयथी जेवो उछल्यो डे ते सवार उछलीने नीचे पडयो, अने घोडे नासवा  
लाग्यो. पोताना घोडाने नासतो जेधने तेणे, जणहोना मालिक साथे कचेरीमां  
जता ते दरिद्र आदमीने कछुं—लाधं आ घोडाने मारो, अने जे प्रकारे जनी  
थके ते प्रकारे तेने रोके दरिद्र आदमीओ अपुं ज कथुं. दरिद्र पुरुषे घोडाने  
जे मार भार्यो ते तेने मर्मस्थाने वागवाथी, जेवो मार वाग्यो डे स्वभावतः  
ते घोडा डेमण डोवाथी ओज समये मरी गयो. घोडाने मरी गयेवो जेधने  
घोडाना मालिके तेना उपर घोडानी डत्याने आरोप भूकयो, अने आ प्रमाणे  
तेओ लडता अगडता जेवां नगरनी पासे पडोअ्यां डे सूर्य अस्त थधं गयो.  
रात्रे नगरमां न जता तेओ नगरनी अडारज केधं स्थणे थोली ग्यां. त्यां

तत्र बहवो नटावृक्षतले सुप्ताः सन्ति । तदानीं दरिद्र पुरुषश्चिन्तयति-अस्मादा-  
पत्समुद्रान्मम निस्तारो नास्तीति वृक्षमारुह्य गले पाशं बद्ध्वा प्राणांस्त्यजामि,  
इति चिन्तयित्वा तथैव कर्तुमारब्धम् । जोर्णवत्खण्डेन गले पाशोबद्धः । तच्च वृक्ष  
खण्डमतिदुर्बलमिति तद्भाराक्रान्तं सत् त्रुटितम् । स दरिद्र पुरुषोऽधस्तात् सुप्तनट  
मुख्यस्योपरि पतितः, येनाऽसौ नटो मृतः । नटा अपि तं दरिद्रपुरुषं गृहीतवन्तः ३।

हुए थे । वे सब के सब उस समय सो रहे थे । इस विचारे दरिद्रपुरुष के  
चित्त में वहां इन समस्त आपत्तियों से पीड़ित होने के कारण ऐसा विचार  
उत्पन्न हुआ कि-इन आपत्तियों को भोगने की अपेक्षा अब तो मर  
जाना ही कहीं अच्छा है । इस तरह विचार कर इसने वृक्षपर चढ़कर  
गले में फांसी लगाने की आयोजन किया । जिस वृक्ष की उसने फांसी  
बनाई थी वह पुराना एवं बहुत अधिक जीर्णशीर्ण था इसलिये ज्यों ही  
यह गले में उस फांसी को डालकर लटका तो वह उसके भार को सहन  
नहीं कर सकने के कारण टूट पड़ी । जिस स्थान पर इसने फांसी लगाई  
हुई थी उस स्थान पर एक नट का मुखिया ठीक इस के नीचे सो रहा था,  
जो रात्रि होने के कारण इसको दिखलाई नहीं दिया था । फांसी के  
टूटते ही यह उस नट के मुखिये पर आकर गिरा । इसके गिरते ही वह  
नट मर गया । उस की चीख सुनकर सब नट जाग पड़े और उन्होंने इस  
विचारे आपत्तिग्रस्त दरिद्रको पकड़ लिया । प्रातःकाल जब हुआ तो सब

कोई वृक्षनी नीचे अनेक नट पहुँचतां हुतां । ते जधा त्यारे सूतां हुतां ।  
हुवे आ जधी आपत्तियोथी व्याकुल जनेल ते दरिद्र आदमीना मनमां ओवे  
विचार आओये के आ मुश्केलीये वेकवा करतां तो मरी जवुं वधारे सारुं, आ  
प्रमाणे विचार करीने तेणे वृक्ष पर चढ़ीने गणे क्षंसे आवानी येजना करी.  
जे वस्त्रने तेणे क्षंसे जनाव्यो हुतां ते जूवुं अने तदन लुण्ठुंशीणुं डोवाथी  
जेवे ते जणामां क्षंसे लगावीने लटकये के तेने लार सहन न करी शकवाने  
कारणे क्षंसा वाणुं वस्त्र तूटी गयु. जे स्थाने तेणे क्षंसे आवा भाटे वस्त्र  
लटकाव्युं हुतुं. ते स्थाननी जराजर नीचे ज नटलोकेने ओक आगेवान सूते  
हुतां, ते रात्रिना अधाराने लीधे तेनी नजर पडयो न हुतां. क्षंसे तूटता ज  
ते ओ नटना आगेवान उपर आवीने पडयो. ते पडता ज ते नट मरी गयो.  
तेनी चिस सालणीने जधा नट जगी गया, अने तेमणे ओ जियारा आप  
त्तिमां मुकायेला दरिद्रने पकडी लीधो. सवार पडता ज तेओ जधा नगरमां

अथ प्रभाते दरिद्रपुरुषं गृहीत्वा सर्वे राजकुलं गताः । राजकुमारः सर्वेषां भाषणं श्रुत्वा दरिद्रपुरुषं पृच्छति—किमेतेषां भाषणं सत्यम् ?, दरिद्रपुरुषः सदैन्यं ब्रूते—महाराज ! यदेते वदन्ति—तत् सत्यमपि । ततो राजकुमारः दरिद्रपुरुषं प्रति-जातानुकम्पस्तस्य मित्रमब्रवीत्—एष तुभ्यं वृषभौ दास्यति किं तु तवाक्षिणी उत्पा-टयिष्यति, एष तदैवानृणो जातः, यदाऽनेन समर्पितौ वृषभौ त्वयाऽवलोकितौ । यदि तु त्वया न दृष्टो स्यातां, तदाऽयमपि स्वगृहं न गच्छेत् । अयं तु तवसमं वृषभो नीतवान्, अतोऽयं निर्दोषः ? ।

के सब नगरमें जाकर अपना २ अभियोग इस पर चलाने के लिये कच-हरी में उपस्थित हुए । वहां वहीं के राजकुमार मुकद्दमों का निपटेरा किया करते थे । इन लोगों से जब राजकुमार ने कचहरी में आने का कारण पूछा तो सब ने अपना २ जो मामला था वह कह दिया । सब की पृथक् २ रूप से बात सुनकर राजकुमार ने उस दरिद्रपुरुष से पूछा—कहो, इन सब का जो तुम्हारे विषय में ऐसा २ कहना है वह सत्य है क्या ? हाथ जोड़कर दरिद्रपुरुष ने उससे कहा हा महाराज ! जो कुछ ये कह रहे हैं । वह सब सत्य है । इस प्रकार कह कर उसने जो २ घटनाएँ जिस २ रूप से घटित हुई थी वे सब उस राजकुमार को सुना दी । सुनकर राजकुमार के चित्त में उस के प्रति दयाका भाव जग उठा । राजकुमार ने उस के मित्र से कहा तुम्हारे दोनों बैलों को देने को तैयार है—परन्तु तुम्हें इसे अपनी दोनों आखें उखाड़कर देनी पड़ेगी । कारण—यह तो उसी समय कण रहित हो गया—जब इसने तुम्हारे देखते २ दोनों बैलों को तुम्हारे

जधने ते दरिद्र पर पोत पोतानी इरियाह करवा भाटे क्येरीमां गया. त्यां त्यांनाज राजकुमारो इरियाहो सांलणी तेमने निकाव करता हुता. ज्यारे राज-कुमारो आ बोडोने क्येरीमां आववानु कारण पूछ्यु त्यारे ते अधाये पोत पोतानी जे हुकीकत हुती ते रणु करी. ते अधानी अलग अलग वात सांल-णीने राजकुमारो ते दरिद्रने पूछ्यु, “कडो, आ बोडोनी तारी साभे आ, आ प्रकारनी इरियाह छे, ते शुं साथी छे ? दरिद्र आदमीये हाथ जेडीने तेमने कहुं, “महाराज ! तेजो जे कंठ कडे छे. ते सत्य छे. आ प्रमाणे कडीने तेजे जे जे घटनाजो जे जे रीते जनी हुती ते अधी ते राजकुमारने कडी सांलणावी. ते सांलणीने ते राजकुमारना मनमां तेने भाटे दया उत्पन्न थछ. राजकुमारो तेना मित्रने कहुं, “ते तमारा जन्ने जणह आववाने तैयार छे यणु तमारे तेने तमारी जन्ने आंजो काढी आपवी पडशे, कारण के ज्यारे तेजे तमारा देजतां ज तमारा जन्ने जणहोने तमारे



તથા દ્વિતીયોઽશ્વસ્વામી શબ્દિતઃ । રાજકુમારો વદતિ — તવાશ્વં દાપયિષ્યામઃ, કિં તુ ત્વયા સ્વજિહ્વાં છિત્વાઽગ્નૈ દાતવ્યા, યદા હિ ત્વયા ભાષિતમ્—‘એનમશ્વ દળ્ઢેન તાડયિત્વા પરાવર્તય ’ઇતિ, તદાઽનેન દળ્ઢેનાહતસ્તવાશ્વઃ । પ્રથમોદોષસ્તવ જિહ્વાયા એવ, અતોઽય નિર્દોષઃ ૨ ।

તથા નટાન પ્રત્યાહ—પશ્ય, અસ્ય પાર્શ્વે કિમપિ નાસ્તિ, કિં દાપયામઃ, ઘર પર છોડ દિયા । યદિ તુમ ઉગ્ઢેં નહીં દેશ્વતે તો યહ ઉસ સમય ઘર નહીં જાતા । અતઃ ઇસ મેં ઇસકા દોષ નહીં હૈ, તુમ્હારી આંશ્વોં કા દોષ હૈ । અતઃ ઉસ કી સજા તમ્હારી આંશ્વોં કો શુગતના ચાહિયે, ન કિ ઇસકો । તુમને ક્યોં નહીં અપને બૈલોં કો સંભાલા । ઇસ તરહ યહ નિર્દોષ પ્રમાણિત કર દિયા ગયા ।

યહ હુઆ બૈલોં કા હરણ કા દૃષ્ટાન્ત ॥ ૧ ॥

અવ અશ્વ કે સ્વામી સે વલાકર રાજકુમાર ને કહા—મેં તમ્હારા ઘોડા ઇસસે દિલવા દૂંગા, પર તુમ્હેં ઇસ કે લિયે અપની જીભ કાટકર દેની હોગી । કારણ—જિસ સમય તુમ ને એસા કહા થા કિ “ ઇસ ઘોડે કો મારો ઓર રોકો ” તમ્હી તો ઇસને તુમ્હારે ઘોડે કો ડડે સે આહત કિયા । ઇસલિયે સર્વ પ્રથમ યહ અપરાધ તુમ્હારી જિહ્વા કા હી હૈ, ઇસકા નહીં, યહ તો નિરપરાધ હૈ ॥

॥ યહ હુઆ ઘોડે કે મરણ કા દૃષ્ટાન્ત ॥ ૨ ॥

અવ નટોં કી બારી આઈ । જવ રાજકુમાર ને નટોં સે કહા—દેશ્વો ભાઈયો । ઇસ કે પાસ તો એસી કોઈ ચીજ હૈ નહીં જો તુમ્હેં દિલવા દી

ત્યાં છુટા સુકયા ત્યારથી જ તે તમારા ઋણથી મુક્ત થઈ ગયો ગણાય. જે તમે તે બળદો જોયા ન હોત તો તે, તે સમયે ઘેર ગયો ન હોત. તેથી તેમાં તેનો દોષ નથી, દોષ તમારી આંખોનો જ છે. તો તેની સજા તમારી આંખોએ ભોગવવી જોઈ એ, તેણે નહીં. તમે તમારા બળદોની સંભાળ કેમ ન લીધી ? ” આ રીતે તેને નિર્દોષ સાબિત કરવામાં આવ્યો.

આ બળદોના અપહરણનું દૃષ્ટાંત થયું (૧) હવે અશ્વના માલિકને બોલાવીને રાજકુમારે કહ્યું, “હું આ માણસ પાસેથી તમને ઘોડો અપાવીશ, પણ તે માટે તમારે તમારી જીભ કાપીને આપવી પડશે, કારણ કે જ્યારે તમે એવું કહ્યું કે “આ ઘોડાને મારો અને રોકો” ત્યારે આ માણસે તમારા ઘોડાને ડંડો માર્યો, તો તેમાં અપરાધ તમારી જીભનો જ છે, આ માણસનો નથી, તે તો નિર્દોષ છે. આ ઘોડાના મરણનું દૃષ્ટાંત થયું (૨).

હવે નટલોકોનો વારો આવ્યો. રાજકુમારે નટોને કહ્યું, “જીવો ભાઈ એ ! આ માણસની પાસે એવી કોઈ ચીજ નથી કે જે તમને અપાવી



યથાડ્યં ગલે પાશં વદ્ધ્વા વૃક્ષાત્ ત્વત્સ્વામિશરોરોપરિપતિતઃ, એવમેવ યુષ્માસુ કશ્ચિત્ પ્રધાનઃ પુરુષસ્તથૈવ વૃક્ષાત્ પતતુ, અયમધસ્તાત્ સુપ્તસ્તિષ્ઠતુ । એવં કુમારસ્ય વચનં શ્રુત્વા સર્વે તૂષ્ણીંભાવં સમાશ્રિતાઃ । સ દરિદ્ર પુરુષસ્તદભિયોગતો મુક્તઃ ।  
 ઇતિ રાજકુમારસ્ય વૈનયિકી બુદ્ધિઃ ।

॥ ઇતિ પશ્ચદશો દૃષ્ટાન્તઃ ॥ ૧૫ ॥

॥ ઇતિ વૈનયિકબુદ્ધિવર્ણનમ્ (પૃષ્ઠ ૩૦૯) ॥ ૨ ॥

અથ કર્મજાયાબુદ્ધેદૃષ્ટાન્તાઃ પ્રોચ્યન્તે (પૃ૦ ૩૧૦) । તત્ર પ્રથમો હૈરણ્યકદૃષ્ટાન્તઃ પ્રદર્શ્યતે ।

હૈરણ્યકઃ=સુવર્ણકારઃ । યઃ સુવર્ણકારઃ સુવર્ણાદિવિજ્ઞાનં સમ્યક્ પ્રાપ્તવાન્, સ સમયં પ્રાપ્ય હસ્તસ્પર્શમાત્રેણ દર્શનમાત્રેણ વો સુવર્ણં રજતં વા યથાર્થં જાનાતિ ।  
 ઇતિ સુવર્ણકારસ્ય કર્મજા બુદ્ધિઃ ।

॥ ઇતિ પ્રથમો હૈરણ્યકદૃષ્ટાન્તઃ ॥ ૧ ॥

જાવે-અતઃ તુમ એસા કરો-જિસ પ્રકાર યહ ગલે મેં ફાંસી દેકર વૃક્ષ સે તુમ્હારે સ્વામી કે ડપર ગિરા હૈ-ઉસી તરહ તુમ લોગોં મેં સે કોઈ એક નટ ગલે મેં ફાંસી લગાકર વૃક્ષસે ઇસ્કે ડપર ગિરો । હમ ઇસે ઉસ કે નીચે સુલાયે દેતે હૈં । ઇસ પ્રકાર કે રાજકુમાર કે વચન સુનકર વે સવ નટ બિલકુલ ચુપચાપ હો ગયે । ઓર વહ વિચારા દરિદ્રપુરુષ ઉન્કે અભિ-યોગ સે મુક્ત હો ગયા । યહ હુઆ વૃક્ષ સે ગિરને કા દૃષ્ટાન્ત ૩ । યહ સવ રાજકુમાર કી વૈનયિકીબુદ્ધિ હૈ ॥

॥ યહ પન્દ્રહવા દૃષ્ટાન્ત હુઆ (પૃ૦ ૩૧૦) ॥ ૧૪ ॥

॥ યહ વૈનયિકીબુદ્ધિ કે ઉદાહરણ હુઆ ॥ ૨ ॥

શકાય તો તમે આ પ્રમાણે કરો. જે પ્રમાણે આ માણસ ગળામાં ફાંસો લગાવીને તમારા આગેવાન ઉપર પડ્યો, એજ પ્રમાણે તમારામાંથી કોઈ એક નટ ગળામાં ફાંસો લગાવીને વૃક્ષ ઉપરથી તેના પર પડે. અમે તેને તે વૃક્ષ નીચે સૂવરાવીએ છીએ ” આ પ્રકારના તે રાજકુમારનાં વચન સાંભળીને તે બધા નટ ચૂપ થઈ ગયાં. અને તે બિચારો દરિદ્ર આદમી તેના અપરાધમાંથી મુક્ત થઈ ગયો. આ વૃક્ષની નીચે પડવાનું દૃષ્ટાંત થયું. આ બધાં રાજકુમારની વૈન-યિકી બુદ્ધિનાં દૃષ્ટાંત છે.

॥ આ પંદરમું દૃષ્ટાંત સમાપ્ત ॥ ૧૪ ॥

॥ આ વૈનયિકી બુદ્ધિનાં ઉદાહરણો થયાં (પૃ૦ ૩૧૦) ॥ ૨ ॥

હવે કર્મજા બુદ્ધિનાં દૃષ્ટાંતો કહે છે-પહેલું હૈરણ્યક દૃષ્ટાંત-હૈરણ્યક એટલે સોની. તે સુવર્ણ કે ચાંદીને બોધને કે સ્પર્શીને તેમાં યથાર્થત્વ કે અયથાર્થ-ત્વને બાણી દે છે તે કર્મબુદ્ધિનું પરિણામ છે. ॥ ૧ ॥

અથ દ્વિતીયઃ કર્ષકદૃષ્ટાન્તઃ—

કશ્ચિચૌરો રાત્રૌકસ્યચિદ્વણિજો ગૃહે પન્નાકારં खातं खातवान् । प्रातःकाले बहवो लोकास्तत्र समागत्य चौरस्य खातकरणं प्रशंसन्ति स्म । गुप्तरूपेण तस्करोऽपि स्वप्रशंसां गृणोति । तत्रैकः कर्षकोऽब्रवीत्—शिक्षितस्य किं दुष्करम्, येन यत् कार्य-मभ्यस्तम् स तस्मिन् कुशलो भवत्येव, अत्र किमाश्चर्यम् ? कर्षकस्य वचः श्रुत्वा चौरस्य क्रोधः समुत्पन्नः । स एकं जनं पृच्छति—कोऽयम्?, कुत्र निवसति च ?

અવ કર્મજો બુદ્ધિકે દૃષ્ટાન્ત કહતે હૈં(૫૦૩૧૦)—પ્રથમ હૈરણ્યક દૃષ્ટાન્ત ।

હૈરણ્યક નામ સોની-સુનાર કા હૈ । વહ જો સુવર્ણ યા ચાંદી આદિ કો દેખ કર યા છૂ કર ઉનમૈં યથાર્થત્વ યા અયથાર્થત્વ કી પહિચાન કર લિયા કરતા હૈ વહ કર્મજા બુદ્ધિ કા પરિણામ હૈ ॥ ૧ ॥

॥ यह पहला हैरण्यकदृष्टान्त हुआ ॥ १ ॥

दूसरा कर्षकदृष्टान्त—

एक चोर ने किसी वणिक् के मकानमें रात्रिके समय कमलाकार खात दिया । जब प्रातःकाल हुआ तो लोकोंने इस खात को देख कर चोर की प्रशंसा की । इन लोगों में चोर भी गुप्तरूप से सम्मिलित था । लोग जब ऐसा कह रहे थे कि धन्य है उस चोर को जिसने कमल के आकारवाला यह खात दिया है । तो वहां एक खड़े हुए किसान ने ऐसा कहा कि भाई ! शिक्षित को क्या दुष्कर होता है । जो जिस काम को सीखे हुए होता है वह उस में निपुण हाता ही है । इसमें प्रशंसा करने की बात ही कौन सी है ? इस तरह अपनी प्रशंसा के निषेधक वचनों को सुनकर उस चोर को क्रोध जग गया । उसने पास में खड़े हुए एक

॥ આ પહેલું હૈરણ્યક દૃષ્ટાન્ત થયું ॥ ૧ ॥

બીજું કર્ષક દૃષ્ટાન્ત—

એક ચોરે કોઈ એક વણિકના મકાનમાં રાત્રે કમળના આકારે ખાતર પાડ્યું. જ્યારે પ્રભાત થયું ત્યારે લોકો તે ખાતરને જોઈને ચોરની કળાની પ્રશંસા કરવા લાગ્યા. એ લોકોમાં ચોર પણ ગુપ્ત રીતે સામેલ હતો. લોકો જ્યારે એવું કહેવા લાગ્યા કે ધન્ય છે એ ચોરને કે જેણે કમળના આકારનું આ ખાતર દીધું છે, ત્યારે ત્યાં ઉભેલા એક ખેડૂતે કહ્યું, “ભાઈ ! શિક્ષિતને માટે દુષ્કર શું છે? જેઓ જે કામ શીખ્યા હોય છે તેમાં તે નિપુણ હોય જ છે. આમાં પ્રશંસા કરવા જેવી શી વાત છે ?” આ પ્રમાણે પોતાની પ્રશંસાના વિરોધી વચનો સાંભળતા જ તે ચોરને ક્રોધ થયો. તેણે પાસે ઉભેલ એક

इति । कस्यचिज्जनस्य वचनात् तत्परिचयं ज्ञात्वा स चौरः किञ्चित् कालानन्तरं कर्षकस्य समीपे क्षेत्रे छुरिकामाकृष्य गतः । ततश्चौरो वदति—त्वामद्यहनिष्यामि । कर्षको ब्रूते—केन कारणेन मां हनिष्यसि । चौरः प्राह—त्वया तदानीं मम खातं न प्रशंसितमिति । कर्षकोवदति—यो यस्मिन् कर्मणि सदैवाभ्यासपरः स तद्विषये प्रज्ञाप्रकर्षवान् भवत्येव, तत्राहमेव दृष्टान्तः । तथाहि—अमून् मुद्गान् हस्तगतान् यदि भणसि, तर्हि सर्वानप्यधोमुखान् पातयामि, यद्वा ऊर्ध्वमुखान् । अथवा—

आदमी से पूछा—यह कौन है—और कहाँ रहता है। उसने उस का परिचय उस को दे दिया। कुछ समय बाद जब यह किसान अपने खेत पर गया हुआ था तब यह चोर भी उस के पीछे २ चला गया और वहाँ जा कर छुरी को खेंचते हुए उस से कहने लगा—संभल जाओ—मैं आज तुम्हारा खून करूंगा। चोर के इस प्रकार वचन सुन कर कृषक ने कहा मेरे खून करने का कारण क्या है?। उत्तर में चोरने कहा याद करो—जिस दिन लोग मेरे दिये कमलाकार खात की मुक्त कंठ से प्रशंसा कर रहे थे उस दिन तुमने मेरे कृत्य की प्रशंसा नहीं की है। चोर के इस तरह वचन सुन कर कृषक ने कहा भाई! इसमें प्रशंसा करने की बात ही कौन सी है? जो जिस विषय में सदा अभ्यस्तशील होता है वह उस विषय में विशेष बुद्धि प्रकर्षवाला होता है। इसमें मैं दूसरे की क्या बात कहूँ अपनी ही बात कहता हूँ—सुनिये मेरे हाथ में ये मूँग के दाने हैं। अब आप कहिये मैं इन्हें “सब को नीचे मुख रहे” इस रूप से

भाषुसने पूछ्युं, “आ कोणु छे अने क्यां रडे छे?” तेणु तेने तेना परिचय आये। केटलाक द्विस पछी न्यारे ते जेडुत पोतानां जेतरे जेतो डेतो त्यारे ते चोर पछु तेनी पाछण पाछण बाली नीकज्यो अने त्यां जेने छरी काढीने तेने कडेवा लाग्यो, “सावधान! हुं आजे ताइं भून करी नाभीश. चोरना आ प्रकारनां वयने सांलजीने जेडुते कछुं, “भाइं भून करवानुं शुं कारणु छे?” तेना जवाबमां चोरे कछुं, याद कर, ते द्विसे दोके मे' हीधेल कमलाकार खातरनी न्यारे प्रशंसा करता डेतो त्यारे ते' मारा कार्यनी प्रशंसा करी न डेती.” चोरनी आ प्रकारनी बात सांलजीने जेडुते कछुं, “बाछ! तेमां प्रशंसा करवा जेवी बात ज शी छे? जे विषयने जेने डमेशने अनुभव डोय छे ते भाषुस ते विषयमां विशेष बुद्धिप्रकर्षवाणो डोय छे. ते भाषतमां हुं भीलनी शी बात कइं मारी पोतानी ज बात कहुं छुं ते सांलण मारा हाथमां आ भगना दाष्टा छे. तमे ज कडे हुं तेमने अधानुं भुज नीचे रडे ते प्रभाषे

પાર્શ્વસ્થિતાન્, इति । ततोऽसौ साश्चर्यमाह—सर्वानप्यधोमुखान् पातय, इति भूमौ पटो विस्तारितः । सर्वेऽप्यधोमुखामुद्राः पातिताः । महाश्चर्यं जातम् । चौरस्तस्य पुनः पुनः प्रशंसां कृतवान्—‘अहो ! कर्षकस्य विज्ञानम् ?, इति यद्येते मुद्रा अधो-मुखाः पातिता, नाभविष्यन्, तदा नियमेन त्वामहनिष्यम् । इति कर्षकस्य तस्करस्य च कर्मजा बुद्धिः ।

॥ इति द्वितीयः कर्षकदृष्टान्तः ॥ २ ॥

अथ तृतीयः कौलिकदृष्टान्तः—

कौलिकस्तन्तुवायः । तन्तुवायो मुष्ट्या तन्तून् गृहीत्वा जानाति एतावद्भिः कण्डकैः पटो भविष्यति ॥ ३ ॥

गिराऊँ या “ ऊँचा मुख रहे ” इस रूप से गिराऊँ, या ‘ ये सब तुम्हारे पास ही गिरें ’ इस रूप से गिराऊँ ? जिस से एक भी दाना इधर उधर न गिरे किसान की ऐसी बात सुन कर आश्चर्यचकित हुए उस चोर ने उस से कहा—इन सब दानों को आप इस रूपमें गिरावें कि जिस से ये सब अधोमुख आ कर पड़े । किसान ने जल्दी से जमीन पर वस्त्र फैला दिया । उस पर उसने उन समस्त मूंग के दानों को इस रूप से गिराया कि वे सब के सब उस पर अधोमुख हो कर गिरे । चोर को इस बात से बड़ा आश्चर्य हुआ । किसान की उसने बार २ भूरि प्रशंसा की । बाद में बोला—यदि आज आप इन मूंग के दानों को अधोमुख पतित न करते तो नियम से मैं आप का खून कर देता । इस प्रकार यह तस्कर और कृषक की कर्मजा बुद्धिका परिणाम है ।

॥ यह दूसरा कर्षकदृष्टान्त हुआ ॥ २ ॥

નાણું કે ઉંચે મુખ રહે તે પ્રમાણે નાણું કે બધા તમારી પાસે જ પડે એ રીતે નાણું ? ” ખેડૂતની એવી વાત સાંભળીને નવાઈ પામેલા ચોરે કહ્યું, “ એ બધા દાણાને તમે એવી રીતે ફેંકે કે જેથી તે બધા અધોમુખ પડે. ખેડૂતે જલ્દી જમીન પર વસ્ત્ર પાથરી દીધું. તેના પર તેણે એ બધા મગના દાણાને એવી રીતે-ફેંક્યા કે તે બધા અધોમુખ થઈને જ પડ્યા. ચોરને આ વાતથી ઘણું આશ્ચર્ય થયું. તેણે ખેડૂતની વારંવાર ઘણી પ્રશંસા કરી. પછી તેણે કહ્યું, જો આજે તમે આ મગના દાણાને અધોમુખ ફેંક્યા ન હોત તો જરૂર હું તમારું ખૂન કરત. ” આ હકીકત તે ખેડૂત અને ચોરની કર્મજા બુદ્ધિનું દૃષ્ટાંત છે ॥ ૨ ॥

॥ આ બીજું કર્ષકદૃષ્ટાંત થયું ॥ ૨ ॥

અથ ચતુર્થો દર્વીકારદૃષ્ટાન્તઃ ।

દર્વીકારો ( લોહકારો ) જાનાતિ એતાવદત્ર માસ્યતીતિ ॥ ૪ ॥

અથ પશ્ચમો મૌક્તિકદૃષ્ટાન્તઃ—

મણિકારો ( મણિયારા ) નભસિ મૌક્તિકં પ્રક્ષિપ્ય મુકરવાલં તથા—ધારયતિ  
યથા પતનો મૌક્તિકસ્ય રન્ધ્રે સ પ્રવિશતીતિ પશ્ચમો મૌક્તિકદૃષ્ટાન્તઃ ॥ ૫ ॥

અથ ષષ્ઠો ઘૃતદૃષ્ટાન્તઃ—

ઘૃતવિક્રયી સ્વવિજ્ઞાન પ્રકર્ષપ્રાપ્તો યદિ રોચતે, તર્હિ શકટેऽપિ સ્થિતોઽધસ્તાત્  
કુણ્ડિકાનાલેઽપિ ઘૃતં પ્રક્ષિપતિ ।

॥ इति षष्ठो घृतदृष्टान्तः ॥ ६ ॥

ત્રીસરા કૌલિકદૃષ્ટાન્તઃ—

કૌલિક નામ વસ્ત્ર બુનનવાલે કા હૈ । વહ મુઢી સે ડોરોં કો પકડ  
કર' યહ જાન લિયા કરતા હૈ કિ હતને કાઢકોં સે નિર્મિત હો  
સકતા હૈ ॥ ૩ ॥

ચૌથા દર્વીકાર દૃષ્ટાન્ત — લુહાર કા નામ દર્વીકાર હૈ । યહ  
જાનતા હૈ કિ હસમેં હતના માવેગા ॥ ૪ ॥

પાંચવા મૌક્તિક દૃષ્ટાન્ત—મણિહારા આકાશમેં મોતિ કો ઉછાલ  
કર સૂઅર કે વાલ-કેશ કો હસ રૂપ સે રખતા હૈ કિ જિસસે વહ નીચે  
ગિરતે હુએ ઉસ મોતી કે છિદ્ર મેં સ્વતઃ પ્રવિષ્ટ હો જાતા હૈ ॥ ૫ ॥

છઠા ઘૃતદૃષ્ટાન્ત—ઘૃત કા વ્યાપારી જબ ઉસકા વિશિષ્ટ જ્ઞાનવાલા  
બન જાતા હૈ તો વહ ગાઢી મેં બેઠ કર મી નીચે રખી હુઈ કુણ્ડિકા કે  
નાલે મેં ઘી કો ડાલ દેતા હૈ ॥ ૬ ॥

ત્રીજી કૌલિકદૃષ્ટાન્ત—

કપડાં વણુનારને કૌલિક કહે છે. તે મુઢીમાં દોરાને પકડીને તે બાણી  
શકે છે કે આટલા તારથી વસ્ત્ર બની શકે તેમ છે ॥ ૩ ॥

ચોથું દર્વીકારદૃષ્ટાન્ત—લુહારને દર્વીકાર કહે છે. તે એ બાણે છે કે આમાં  
આટલું સમાશે. ॥ ૪ ॥

પાંચમું મૌક્તિકદૃષ્ટાન્ત—મણિયાર મોતીને બાંધે ઉછાળીને સૂવરના વાળને  
એવી રીતે રાખે છે કે તે નીચે પડતાં મોતીનાં છિદ્રમાં આપોઆપ પેસી  
બંધ છે ॥ ૫ ॥

છટ્ઠું ઘૃતદૃષ્ટાન્ત—ઘીના વેપારી બ્યારે તેના ખાસ અનુભવ વાળો થાય  
છે ત્યારે તે ગાઢી પર બેસીને પણ નીચે રાખેલ કબખાનાં નાળયામાં ઘીને  
રેડી દે છે ॥ ૬ ॥

અથ સપ્તમઃ પ્લવકદૃષ્ટાન્તઃ—

પ્લવકઃ—કૂર્દકઃ પુરુષઃ । સ ચાકાશેઽનેક વિધાં ક્રીડાં પ્રદર્શયતિ ।

॥ इति सप्तमः प्लवकदृष्टान्तः ॥ ७ ॥

અથાષ્ટમઃ ‘તુન્નાય’ ઇતિ તુન્નવાયદૃષ્ટાન્તઃ—

તુન્નવાયઃ—સીવનકર્મકારકઃ । સ ચ સ્વવિજ્ઞાન પ્રકર્ષપ્રાપ્તસ્તથા સીવતિ, યથા કેનાપિ લક્ષિતો ન ભવતિ ॥

॥ इत्यष्टमस्तुन्नवायदृष्टान्तः ॥ ८ ॥

અથ નવમોવર્ધકિદૃષ્ટાન્તઃ—

વર્ધકિઃ=રથકારઃ ‘વઢઈ’ ઇતિ પ્રસિદ્ધઃ । સ ચ સ્વવિજ્ઞાનપ્રકર્ષપ્રાપ્તોમાનમકૃત્વાપિ રથાદૌ યોજનીયકાષ્ઠસ્ય માનં વિજાનાતિ ॥

॥ इति नवमोवर्धकिदृष्टान्तः ॥ ९ ॥

અથ દશમ આપૂપિકદૃષ્ટાન્તઃ—

અપૂપઃ—‘માલપૂઆ’ ઇતિ ભાષાપ્રસિદ્ધઃ । અપૂપનિર્માણકુશલઃ આપૂપિકઃ । સ તન્માનમકૃત્વાઽપિ તન્માનં જાનાતિ, ગ્રાહકો યથાઽઽદિશતિ—તથાઽપૂપાદિકં વસ્તુ નિર્માતિ ।

॥ इति दशम आपूपिकदृष्टान्तः ॥ १० ॥

સાતવાં પ્લવક દૃષ્ટાન્ત—જો નટ હોતા હૈં વહ આકાશ મેં અનેક પ્રકાર કી ક્રીડાઓં કા પ્રદર્શન કરતા હૈં ॥ ૭ ॥

આઠવાં તુન્નવાય દૃષ્ટાન્ત—તુન્નવાય શબ્દકા અર્થ સીને કી કલા મેં જો ચતુર હૈં । વહ હસ ઢંગ સે સીતા હૈં કિ વસ્ત્રમેં ડસકી સિલાઈ કા પતા ખી નહીં પડતા ॥ ૮ ॥

નૌવાં વર્ધકિદૃષ્ટાન્ત—જબ વઢઈ અપને વિષયકા વિશેષ વિજ્ઞાતા બન જાતા હૈં તો વહ વિના નાપ કિયે હી રથ આદિ મેં લગાને યોગ્ય કાષ્ઠકા નાપ અપને આપ જાન લેતા હૈં ॥ ૯ ॥

સાતમું પલ્લવકદૃષ્ટાન્ત—નટ આકાશમાં અનેક પ્રકારના ખેલ કરી બતાવે છે ॥ ૭ ॥

આઠમું તુન્નવાયદૃષ્ટાન્ત—સીવવાની કળામાં જે ચતુર હોય તેને તુન્નવાય કહે છે. તે એવી રીતે સીવે છે કે વસ્ત્રમાં તેની સિલાઈ પણ નજરે પડતી નથી ॥ ૮ ॥

નવમું વર્ધકદૃષ્ટાન્ત—જ્યારે સુથાર પોતાના ધંધાનો ખાસ બાબતર થાય છે ત્યારે તે માપ લીધા વિના પણ રથ આદિમાં જડવાના લાકડાનું માપ આપો આપ બાણી શકે છે ॥ ૯ ॥



અથૈકાદશો ઘટકારદૃષ્ટાન્તઃ—

કુમ્ભકારઃ સ્વવિજ્ઞાનપ્રકર્ષપ્રાપ્તઃ પ્રથમતઃ પ્રમાણયુક્તાં મૃદં ગૃહ્ણાતિ ।

॥ इत्येकादशो घटकारदृष्टान्तः ॥ ११ ॥

અથ દ્વાદશચિત્રકારદૃષ્ટાન્તઃ—

નિપુણચિત્રકાર ચિત્રસ્ય ભૂમિમમિત્વા ચિત્રપ્રમાણં જાનાતિ, વર્ણકુશ્વિકાયાં તાવન્માત્રમેવ વર્ણં ગૃહ્ણાતિ, યાવન્માત્રસ્ય તસ્ય પ્રયોજનમ્ ।

॥ इति द्वादशचित्रकार दृष्टान्तः ॥ १२ ॥

॥ इति कर्मजाया बुद्धेरुदाहरणानि ॥ १२ ॥

દસવાં આપૂપિકદૃષ્ટાન્ત—જો વ્યક્તિ માલપુઆ કે નિર્માણ કાર્યમેં નિષ્ણાત હોતા હૈ વહ उसकी तौल किये बिना ही उसका प्रमाण कर लेता है और ग्राहक जितनी तौल का उससे मांगता है वह बिना तौले ही ठीक उतना ही उसको दे देता है ॥ १० ॥

ગ્યારહવાં ઘટકાર દૃષ્ટાન્ત—ઘટ કાર્ય કે બનાવે મેં જો કુંભકાર નિષ્ણાત હોતા હૈ વહ पहिले से ही जितने प्रमाण का घट बनाना चाहता है उतने प्रमाण की मिट्टी ले लेता है ॥ ११ ॥

વારહવાં ચિત્રકારદૃષ્ટાન્ત—નિપુણ ચિત્રકાર ચિકકે સ્થાનકા નાપ કિયે વિના હી उसके प्रमाण को जान लेता है । और जितना रंग उसके निर्माण कार्य में खर्च होना होता है उतना ही रंग वह अपनी कुश्विका में भरता है ॥ १२ ॥

॥ ये कर्मजाबुद्धिके उदाहरण हुए ॥ ३ ॥

દસમું આપૂપિકદૃષ્ટાન્ત—જે વ્યક્તિ માલપુઆ બનાવવામાં નિષ્ણાત હોય છે, તે તેનું વજન કર્યા વિના જ પ્રમાણ નક્કી કરી શકે છે. અને ગ્રાહક જેટલા વજનના માલપુઆ તેની પાસે માગે છે એટલા જ તે તોલ કર્યા વિના જ તેને આપે છે. ॥ ૧૦ ॥

અગીયારમું ઘટકારદૃષ્ટાન્ત—ઘડા બનાવવાના કામમાં જે કુંભાર નિપુણ હોય છે તે પહેલેથી જ જેવડા માપનો ઘડો બનાવવા માગતો હોય એટલા પ્રમાણમાં જ માટી લે છે. ॥ ૧૧ ॥

બારમું ચિત્રકાર દૃષ્ટાન્ત—નિપુણ ચિત્રકાર ચિત્રના સ્થાનનું માપ લીધા વિના જ તેનું પ્રમાણ જાણી લે છે. અને તે ચિત્ર નિર્માણમાં જેટલા રંગની જરૂર પડે તેમ હોય તેટલો જ રંગ તે પોતાની કુશ્વિકામાં ભરે છે ॥ ૧૨ ॥

॥ આ કર્મજા-બુદ્ધિના ઉદાહરણો થયાં ॥ ૩ ॥

અથ પારિણામિક્યા બુદ્ધેશ્વદાહરણાનિ પ્રદર્શ્યન્તે (પૃ૦ ૩૧૪)। પ્રાચી વયોવિપાક-જન્યોબુદ્ધિવિશેષઃ પારિણામિકી બુદ્ધિઃ । તત્રામયકુમારદૃષ્ટાન્તઃ પ્રથમઃ પ્રોચ્યતે—

અમયકુમારેણ ચચ્ચણ્ડપ્રધોતાદ્ વરચતુષ્ઠયં યાચિતમ્, ચચ્ચણ્ડપ્રધોતં વદ્ધ્વા નગરમધ્યેનાઽઽરટન્તં નીતવાનિત્યાદિ ।

॥ ઇતિ પ્રથમ અમયકુમારદૃષ્ટાન્તઃ ॥ ૧ ॥

અથ દ્વિતીયઃ શ્રેષ્ઠદૃષ્ટાન્તઃ—

કોઽપિ શ્રેષ્ઠી સ્વભાર્યાયા દુશ્ચારિત્રમાલોક્ય દીક્ષાં ગૃહીતવાન્ । ઇતથ તસ્યાઃ પરપુરુષસમાગમેન ગર્ભો જાતઃ । તદનન્તરં રાજપુરુષૈઃ સા રાજાન્તિકં સમાનીતા । તસ્મિન્નેવકાલે એક મુનિર્વિહારક્રમેણ તસ્માદ્ ગ્રામાન્નિર્ગતઃ સા તમાલોક્ય રાજ-પુરુષાણાં સમક્ષં બ્રૂતે—હે મુને ! અયં ગર્ભસ્ત્વદીયોઽસ્તિ, ત્વમેનં વિહાય ગ્રામાન્તરં

અબ યહાં સે પારિણામિક બુદ્ધિકે ઉદાહરણ કહતે હૈં પૃ૦ ૩૧૪—

જો બુદ્ધિ પ્રાચઃ વય કે વિપાક સે ઉત્પન્ન હોતી હૈં ઉસકા નામ પારિ-  
ણામિકી બુદ્ધિ હૈં । ઇસ પર સર્વ પ્રથમ અમયકુમાર કા દૃષ્ટાન્ત હૈં—  
અમયકુમાર ને ચણ્ડ પ્રધોતન સે ચાર વર માંગે થે । ફિર વાદ મેં ઉસકો  
ઉસને બાંધ લિયા થા, ઓર બાંધ કર વહ ઉસકો નગરકે વીચસે ચિહ્લાતે  
હુએ લે ગયા થા । ઇત્યાદિ ॥ ૧ ॥

દૂસરા શ્રેષ્ઠ દૃષ્ટાન્ત—કિસી સેઠ ને અપની પત્ની કા દુશ્ચારિત્ર દેખ-  
કર દીક્ષા લેલી । ઇધર વહ પરપુરુષ કે સાથ સમાગમ કરને સે ગર્ભવતી  
હો ગઈ । રાજપુરુષોં ને જબ ઇસ કી યહ હાલત દેખી તો વે ઉસકો રાજા કે  
પાસ લે ચલે । જબ વે ઉસકો લે જા રહે થે કિ ઇતને મેં ઉસ ગ્રામ સે વિહાર  
કરતે હુએ કોઈ એક મુનિરાજ જા રહે થે । ઉન્હેં દેખકર ઉસને રાજપુરુષોંકે

હવે એહીંથી પારિણામિક બુદ્ધિનાં ઉદાહરણ આપે છે—(પૃ૦ ૩૧૪)

જે બુદ્ધિ સામાન્ય રીતે વયના વિપાકથી ઉત્પન્ન થાય છે તેને પારિણા-  
મિકી બુદ્ધિ કહે છે. તે વિષે પહેલું અમયકુમારનું દૃષ્ટાંત છે—

અમયકુમારે ચંડપ્રધોત પાસેથી ચાર વચન માગ્યાં હતાં. પછી તેણે તેને  
બાંધી લીધો હતો, અને બાંધીને તે તેને રડતો રડતો નગરની વચ્ચેથી લઇ  
ગયો હતો. ઇત્યાદિ ॥ ૧ ॥

બીજું શ્રેષ્ઠદૃષ્ટાંત—કોઈ શેઠે પોતાની પત્નીનું દુશ્ચરિત્ર જોઈને દીક્ષા  
લઈ લીધી. હવે તે પરપુરુષ સાથે સમાગમ કરવાથી ગર્ભવતી થઈ રાજપુરુ-  
ષોએ જ્યારે તેની એવી હાલત જોઈ ત્યારે તેઓ તેને રાજા પાસે લઈ જવા  
લાગ્યા. જ્યારે તેઓ તેને લઈને જતાં હતાં ત્યારે જ તે ગામથી વિહાર કરીને  
કોઈ એક મુનિરાજ જતાં હતાં. તેમને જોઈને તે સ્ત્રીએ રાજપુરુષોની સાથે જ

ગચ્છસિ, કથમહં ભવિષ્યામિ । એતદ્વચનં શ્રુત્વા મુનિશ્ચિન્તયતિ-અસત્યભાષણે નૈવા જિનશાસનસ્ય સચ્ચરિત્ર સાંધૂનાં ચાકીર્તિં કરિષ્યતિ, અતસ્તન્નિવારણં કર્તવ્યમ્ ।  
 इत्येवं विचिन्त्य मुनिना तस्यै शापः प्रदत्तः-यदि मत्कृतोऽयं गर्भस्तर्हि पूर्णे समये योनितो निःसरतु । यदि तु मत्कृतो नास्ति, तर्हि उदरं भित्त्वा निर्गच्छतु । तत-  
 स्तस्य शापप्रभावाद् गर्भस्तत्क्षण एवोदरं भित्त्वा निर्गन्तुं प्रवृत्तः, अतस्तस्या अतिकष्टं समुत्पन्नम् । ततः सा राजपुरुषाणां समक्षं मुनिराजं प्रार्थयति-महाराज । अयं गर्भो भवत्कृतो नास्ति, मया मिथ्यापवादः कृतः । पुनरेवं न करिष्यामि । तस्या असह्यं

સામ્હને હી ઉન મુનિરાજ સે કહા-હે મુને ! યહ ગર્ભ આપ કા હૈ । આપ  
 इस को छोड़कर क्यों ग्रामान्तर जा रहे हैं । कहिये अब मेरा क्या होगा ।  
 इस प्रकार उस की बात सुनकर मुनि ने मनमें विचार किया-यह असत्य  
 भाषण कर के जिन शासन की तथा सचरित्र साधुओं की अकीर्ति कर  
 रही है, इसलिये इसका निवारण अवश्य करना चाहिये । ऐसा विचार  
 कर उन्होंने ने उसी समय ऐसा उसे शाप दिया कि यदि यह गर्भ मेरा है  
 तो पूर्ण समय में यह होवे, और यदि ऐसा नहीं है तो अभी ही यह तेरा  
 पेट फाड़कर बाहर निकले । इस के बाद मुनि के शाप के प्रभाव से उसी  
 समय गर्भ पेट फाड़कर बाहर निकलना चाहा, अतः उस को महान् कष्ट  
 होने लगा । तब पुनः उसने मुनिराज से उन्हीं राजपुरुषों के समक्ष ऐसा  
 कहा-महाराज ! यह गर्भ आपके द्वारा नहीं हुआ है मैंने व्यर्थ ही आपका  
 अपवाद किया है-अतः मैं इस के लिये आप से क्षमा चाहती हूं, आगे

તેમને કહ્યું, “હે મુનિ ! આ ગર્ભ આપથી જ રહેલ છે. આપ તેને છોડીને  
 બહારગામ શા માટે જઈ રહ્યા છો ? કહો, હવે મારું શું થશે ? ” આ પ્રકારની  
 તેની વાત સાંભળીને મુનિએ મનમાં વિચાર કર્યો, “આ સ્ત્રી જુદું જોતીને જિન  
 શાસનની તથા સચ્ચરિત્ર સાધુઓની અપકીર્તિ કરી રહી છે, તો તેનું નિવારણ  
 અવશ્ય કરવું જ જોઈએ. ” એવો વિચાર કરીને તેમણે એજ સમયે તેને એવો  
 શાપ દીધો કે આ ગર્ભ મારાથી રહેલ હોય તો પૂરા દહાડે તેને પ્રસૂતિ થાય,  
 અને જો એવું ન હોય તો તે તારું પેટ ફાડીને અત્યારેજ બહાર નીકળે. ” ત્યારબાદ  
 મુનિના શાપના પ્રભાવે તેનો ગર્ભ પેટ ફાડીને બહાર આવવા લાગ્યો. તેથી  
 તેને ભારે કષ્ટ થવાં લાગ્યું. ત્યારે તેણે ફરીથી તે મુનિરાજ સમક્ષ એજ  
 રાજપુરુષોની રૂબરૂ આ પ્રમાણે કહ્યું, “ મહારાજ ! આપના દ્વારા આ ગર્ભ  
 રહ્યો નથી મેં આપના ઉપર જોડું કલંક ચડાવ્યું હતું. તો હું તે માટે આપની

कष्टमालोक्य स कारुणिको मुनिः स्वशापं प्रतिनिवर्त्य धर्मस्य मानं स्त्रियं गर्भं च रक्षितवान् ।

॥ इति द्वितीयः श्रेष्ठिदृष्टान्तः ॥ २ ॥

अथ तृतीयः कुमारदृष्टान्तः—

कस्यचिद्राजकुमारस्य मिष्टान्नं प्रियमासीत् । एकदाऽसौ पूर्णोदरं यावद् मोद-  
कान् भक्षितवान् । अतिभोजनेनाजीर्णरोगः संजातः । ततश्च मुखाद् दुर्गन्धो निर्गतः ।  
दुःखी भूत्वा राजकुमारश्चिन्तयति—अनेनाशुचि शरीरेण संयोगं प्राप्य मिष्टान्न रूपं  
मनोहरं वस्तु विकृतं संजातम्, अस्य देहस्य सुखार्थं लोका अनेकविधं पापं कुर्वन्ति,  
इति विचिन्त्य स विरक्तो जातः । इति राजकुमारस्य पारिणामिकी बुद्धिः ।

॥ इति तृतीयः कुमारदृष्टान्तः ॥ ३ ॥

ऐसा नहीं करूंगी । इस तरह उस की प्रार्थना सुनकर और असह्य उसका  
कष्ट देखकर उन कारुणिक मुनिराज ने अपने शाप को वापिस लौटाकर  
धर्म की प्रभावना एवं उस स्त्री के प्राणों की तथा गर्भकी रक्षा की ॥२॥

तीसरा कुमारदृष्टान्त—किसी एक राजकुमार को मिष्टान्न विशेष  
प्रिय था । एक दिन की बात है कि इस ने पेट भर लड्डु खा लिये । वे  
पचे नहीं अतः इस को अजीर्ण रोग हो गया । इस के मुख से दुर्गन्ध  
निकलने लगी । दुःखित होकर उस राजकुमार ने मन में ऐसा विचार  
किया कि जिस अशुचि इस शरीर के संपर्क से यह मिष्टान्नरूप मनोहर  
वस्तु भी विकृत हो गई है उस शरीर को सुख पहुँचाने के लिये लोग  
अनेक प्रकार के पाप करते रहते हैं । इस तरह के विचार से उस को वैराग्य  
हो गया और वह संसार, शरीर और भोगों से विरक्त हो गया ॥ ३ ॥

क्षमा भागुं छुं, डुवेथी कही पणु आणुं नही कइं.” आ प्रभाणु तेनी विनंति  
सांलणीने अने तेनुं असह्य कष्ट जेधने ते दयाणुं अनिराजे पोताने शाप  
पाछे जेअये। अने जे रीते धर्मना प्रभावनी तथा ते स्त्रीना प्राण तथा  
गर्भनी रक्षा करी. ॥ २ ॥

त्रीणुं कुमारदृष्टान्त—कोई एक राजकुमारने मिष्टान्न वधाये प्रिय डतुं.  
जेक हिवस तेणु पेट भरिने लाडु खाधा. ते पय्यां नही. तेथी तेने  
अणुणुंने रोग थये. तेना मोमांथी दुर्गन्ध नीकणवा लागी. तेथी दुःखी थये।  
ते राजकुमारे विचार कयो “अशुचि जेवा आ शरीरना संपर्कथी आ मिष्टान्न  
इप मनोहर वस्तु पणु विकृत थई गई छे, ते शरीरने सुख आपवा माटे  
लोके अनेक प्रकारना पाप करे छे.” आ प्रकारने विचार आवता ज तेने  
वैराग्य उत्पन्न थये अने ते संसार, शरीर अने लोगोथी विरक्त थई गये. ॥ ३ ॥

अथ चतुर्थो देवीदृष्टान्तः—

पुष्पवती नाम काचित्स्त्री प्रव्रज्यां परिपाल्य देवलोके देवीत्वेन समुत्पन्ना । सा स्वपूर्वभवपुत्रपुत्रयोरनुचितसम्बन्धमवलोक्य चिन्तयति—इमौ परस्परं विषयमूर्च्छितौ जातौ । अनयोस्वरयं दुर्गतिर्भविष्यति । तस्मादनयोः सन्मार्गे स्थापनं मम कर्तव्यमस्ति । इति मनसि निधाय सा देवी तयोः प्रथमदिने रजन्यां स्वप्ने नरकनिगोद-दुःख प्रदर्शनं कारितवती । ततस्तयोश्चिन्ता समुत्पन्ना नरकलोकदुःखेभ्यः कथं मुक्तौ भविष्याव इति । द्वितीये दिने तयोः स्वप्ने देवलोकसुखं प्रदर्शितम् ।

चौथा देवी दृष्टान्त—पुष्पवती नाम की एक स्त्री थी, उसने संसार, शरीर एवं भोगों से विरक्त होकर भागवती दीक्षा धारण करली । जब आयु के अंत में वह मरी तो देवलोक में वह देवी की पर्याय से उत्पन्न हुई । वहां उस ने अवधिज्ञान से अपने पुत्र और पुत्री को अनुचित संबंध जानकर विचार किया—देखो—ये दोनों कितने विषय सेवन की मूर्च्छा से मूर्च्छित हो रहे हैं जो यह भी नहीं समझ रहे हैं कि हम दोनों कौन हैं ? और क्या कर रहे हैं ? । इन लोगों की अवश्य खोटी गति होगी । इसलिये इस अवस्था में इन दोनों को समझाना मेरा कर्तव्य है, ताकि ये सन्मार्ग में लग जावें । इस प्रकार विचार कर उसने उन दोनों के लिये स्वप्न में प्रथम रात्रि में नरक और निगोद के दुःखों का प्रदर्शन कराया । इन दुःखों को देखकर उन दोनों के चित्त में बड़ी भारी चिन्ता हुई । उन्होंने ने विचार किया—हम इन दुःखों से कैसे मुक्त हो सकेंगे । दूसरे दिन उस देव ने स्वप्न में उन दोनों को स्वर्गलोक के सुखों का प्रदर्शन कराया । इन सुखों को देखकर वे मुग्ध हो गये, और धर्माचार्य

थोथुं देवी दृष्टान्त—पुष्पवती नामे ऐक स्त्री હતી. તેણે સંસાર, શરીર અને ભોગોથી વિરક્ત થઈને ભગવતી દીક્ષા લીધી હતી. આયુષ્ય પૂર્ણ થતાં તે મરીને દેવલોકમાં દેવી રૂપે ઉત્પન્ન થઈ. ત્યાં તેણે અવધિજ્ઞાનથી પોતાના પુત્ર અને પુત્રીને અનુચિત સંબંધ જાણીને વિચાર કર્યો—“આ લોકો વિષય સેવનની મૂર્છાથી કેટલા બધા મૂર્છિત થયાં છે કે તેઓ એટલું પણ સમજી શકતા નથી કે અમે બન્ને કોણ છીએ ? અને શું કરી રહ્યાં છીએ ? આ લોકોની અવશ્ય દુર્ગતિ થશે. તેથી આ પરિસ્થિતિમાં તેમને સમજાવવાની भारी ફરજ છે કે જોથી તેઓ સન્માર્ગે વળે. આ પ્રમાણે વિચાર કરીને તેણે તે બન્નેને રાત્રે સ્વપ્નમાં નરક અને નિગોદનાં દુઃખોનું દર્શન કરાવ્યું. એ દુઃખો જોઈને તે બન્નેનાં ચિત્તમાં ઘણી ભારે ચિન્તા પેદા થઈ. તેમણે વિચાર કર્યો કે આપણા આ દુઃખોમાંથી કેવી રીતે છુટકારો થશે ? બીજે દિવસે તે દેવીએ રાત્રે સ્વપ્નમાં તેમને સ્વર્ગલોકનાં સુખ બતાવ્યાં. એ સુખોને જોઈને તેઓ મુગ્ધ થયાં, અને



तदनन्तरमाचार्यस्य पार्श्वे समागत्य तौ पृष्ठवन्तौ-भगवन् ! येनोपायेन जीवस्य नरकगतिर्न भवेत्, देवगतिप्राप्तिश्च भवेत्, तमुपायं समादिशन्तु भवन्तः । आचार्यः स्वर्गप्राप्तिमार्गं प्रदर्शयन् धर्मोपदेशं कृतवान् । देव्याः पूर्वभवीयः पुत्रः पुत्री च तस्याचार्यस्य समीपे दीक्षां गृहीत्वा सकलदुःखात्यन्तविमोक्षरूपं मोक्षं प्राप्तवन्तौ ॥ इति देव्याः पारिणामिको बुद्धिः ॥ इति चतुर्थो देवीदृष्टान्तः ॥ ४ ॥

अथ पञ्चम उदितोदयदृष्टान्तः ॥ ५ ॥

पुरिमताले नगरे उदितोदयनामको नृप आसीत् । तस्य भार्या च विशिष्ट-रूपवती श्रीकान्तानाम्नी । श्रीकान्तानिमित्तं वाराणसीनिवासिना कर्मरुचिनाम्ना राज्ञा सर्वबलेन समागत्य पुरिमतालनगरं वेष्टितम् । उदितोदयश्चिन्तयति-निष्कारणं

के पास पहुँचकर उन्होंने ने पूछा-भगवन् ! आप ऐसा उपाय बतलाईये कि जिस से जीव को नरकगति की प्राप्ति न होवे, और स्वर्गीय सुखों का लाभ होवे । आचार्य ने उनकी इस प्रकार जिज्ञासा जानकर स्वर्ग की प्राप्ति का मार्ग बतलाते हुए उन्हें धर्म का उपदेश दिया । अन्त में उन दोनों ने विषयादिक से विरक्त होकर उन्होंने आचार्य के पास जिन दीक्षा धारण कर सकल दुःखों से सर्वथा रहित ऐसे मोक्ष को प्राप्त किया ॥४॥

पाँचवां उदितोदय दृष्टान्त-पुरिमताल नाम के नगर में उदितोदय नामका एक राजा रहता था । उस की रानी का नाम श्रीकान्ता था । यह विशिष्ट रूपवती थी । इस के रूप सौन्दर्य की प्रशंसा सुनकर वाराणसी नगर के रहनेवाले कर्मरुचि नाम के राजा ने सैन्य को लेकर पुरिमताल नगर को चारों ओर से घेर लिया । नगर को घिरा देखकर उदितोदय ने

धर्माचार्यनी पासो जेधने तेमणे तेमने पूछ्यु, “महाराज ! आप जेवो उपाय बतावो के जेथी जेवने नरक गति प्राप्त न थाय जेने स्वर्गीय सुखोनी प्राप्ति थाय,” आचार्ये तेमनी ते प्रकारनी जिज्ञासा जेणीने स्वर्गनी प्राप्तिनो मार्ग बतावता तेमने धर्मनो उपदेश आब्यो. अन्ते तेमणे विषयादिकथी विरक्त थधने जेज आचार्यनी पासो जिन दिक्षा अंगीकार करी जेने सकल दुःखोथी सर्वथा रहित जेवा मोक्षनी प्राप्ति करी ॥ ४ ॥

पाँचवुं उदितोदय दृष्टान्त-पुरिमताल नामना नगरमां उदितोदय नामनो राजा राज्य करतो હતો. તેની રાણીનું નામ શ્રીકાન્તા હતું. તે બહુ જ સુંદર હતી. તેનાં રૂપ-સૌંદર્યનાં વખાણ સાંભળીને વારાણસી નગરના કર્મરુચિ નામના રાજાએ સૈન્યને લઈને પુરિમताल નગરને ચારે તરફ ઘેરો ઘાટ્યો. નગરને ઘેરાયેલ જોઈને ઉદિતોદયે વિચાર કર્યો કે એક જીવની રક્ષા માટે સંગ્રામમાં નકામી



प्रभूतजनानां परिक्षयोभविष्यतीति । एवं विचिन्त्य स उपवासं कृत्वा तपोबलेन वैश्रवणदेव मावाहयति । स देवो कर्मरुचिं नीत्वा वाराणस्यामेव स्थापितवान् । इत्येवमुदितोदयनृपः स्वात्मानं प्रजाजनं च रक्षितवान् । इति राज्ञः पारिणामिकीबुद्धिः ॥

इति पञ्चम उदितोदयदृष्टान्तः ॥ ५ ॥

अथ षष्ठः साधुनन्दिषेणदृष्टान्तः ॥ ६ ॥

भगवतो महावीरस्वामिनः समवसरणे कश्चित् साधुश्चित्तचाञ्चल्यवशात् साधु-  
व्रतं परिहातुमिच्छति स्म । तदा प्रभुवन्दनार्थं राजकुमारो नन्दिषेणः स्वान्तःपुरेण  
सह समागतः । तस्यान्तःपुरं रूपलावण्येनाप्सरोवृन्दं जयति, तथापि प्रभोरुप-  
देशेन नन्दिषेणो विरक्तो भूत्वा सर्वमन्तःपुरं परित्यजति । इदं दृष्ट्वा स साधुरपि

विचार किया एक जीव की रक्षा के निमित्त व्यर्थ ही संग्राम में अनेक  
जीवों का वध करना उचित नहीं । ऐसा विचार कर वह उपवास धारण  
कर बैठ गया । इस के तपोबल के प्रभाव से वैश्रवण नाम के देव ने  
आकर उस कर्मरुचि राजा को वहां से उठाकर उसी के नगर में रख दिया ।  
इस तरह उदितोदय ने अपनी और अपने प्रजाजनों की रक्षा की ॥ ५ ॥

छट्ठा साधु नन्दिषेण का दृष्टान्त—किसी साधु ने महावीर स्वामी के  
समवसरण में चित्त की चंचलता के वश होकर सुनिव्रत छोड़ने का विचार  
किया । इतने में वहां प्रभु की वंदना करने के लिये नन्दिषेण नाम का  
एक राजकुमार आपहुँचा । उस के साथ उस का अन्तःपुर था । अन्तःपुर  
का रूप लावण्य इतना अधिक था कि उसके सामने अप्सराओं का  
समुदाय भी न कुछ था । नन्दिषेण प्रभु का उपदेश सुनकर उसी समय  
उस साधु के देखते २ अन्तःपुर का परित्याग कर विरक्त हो गया । साधु

अनेक जिवानी छुट्या करवी ते योग्य नहीं. એવો વિચાર કરીને તે ઉપવાસ કરીને  
એસી ગયો. તેના તપોબળને પ્રભાવે વૈશ્રવણ નામના દેવે આવીને તે કર્મરુચિ  
રાજાને ત્યાંથી ઉપાડીને તેના નગરમાં મૂકી દીધો. આ રીતે ઉદિતોદયે પોતાની  
તથા પોતાની પ્રજાની રક્ષા કરી ॥ ૫ ॥

છટ્ઠું સાધુ નન્દિષેણનું દ્રષ્ટાંત—કોઈ સાધુએ મહાવીર સ્વામીના સમવસર-  
ણમાં ચિત્તની ચંચળતાને કારણે સુનિવ્રત છોડવાનો વિચાર કર્યો. એવામાં ત્યાં  
પ્રભુને વંદણા કરવા માટે નંદિષેણ નામનો એક રાજકુમાર આવી પહોંચ્યો. તેની  
સાથે તેનું અન્તઃપુર હતું. અન્તઃપુરનું રૂપ લાવણ્ય એટલું બધું હતું કે તેમની  
આગળ અપ્સરાઓનો સમૂહ પણ કોઈ વિસાતમાં ન હતો. નંદિષેણ પ્રભુનો  
ઉપદેશ સાંભળીને એજ સમયે તે સાધુની નજર સમક્ષજ અન્તઃપુરનો પરિત્યાગ

सम्यक् संयमाराधनतत्परो जातः ॥ इति साधोः पारिणामिकी बुद्धिः ॥ इति षष्ठः  
साधुनन्दिषेणदृष्टान्तः ॥ ६ ॥

अथ सप्तमो धनदत्तदृष्टान्तः ॥ ७ ॥

चम्पानगर्यां धनदत्तो नाम श्रेष्ठी निवसति । तस्य पुण्यप्रभावेण विपुलं धनं  
विपुलः परिवारो विपुला ऋद्धिरासीत् । स च विपुलसत्कारसम्मानसंपन्नः सर्वसुख-  
समन्वितः समृद्धिसमृद्धः केनाऽप्यपरिभूतश्चाभूत् । एकस्मिन् दिने तस्य श्रेष्ठिनः  
सुपात्रदानकरुणादानाभयदानादिविषये बुद्धिविपर्यासः संजातः । ततः स चिन्तयति-  
कथमद्य मम बुद्धिविपर्यासः संजात इति । तत स्तेन शुभकर्मोदयवशात् तत्क्षणमेव  
ने जब यह देखा तो अपने विचार की निन्दा की और उसी समय  
संभल कर अपने व्रतों की रक्षा की ॥ ६ ॥

सातवां धनदत्त का दृष्टान्त-चंपानगरी में धनदत्त नाम का एक  
सेठ रहता था । उसके यहां पुण्योदय से विपुल धन, विपुल परिवार  
और विपुल ऋद्धि थी । लोग उसका सब से अधिक आदर सत्कार एवं  
सन्मान किया करते थे । सांसारिक किसी भी सुख की उसके यहां कमी  
नहीं थी । तिरस्कार कैसा होता है यह वह स्वप्न में भी नहीं जानता  
था । एक दिन की बात है कि इस सेठ के सुपात्रदान, करुणादान, तथा  
अभयदान आदि के विषय में बुद्धि की विपर्यासता हो गई । इस विप-  
र्यासता के आने का कारण क्या है इस बात का जब उसने ज्ञानदृष्टि से  
विचार किया तो शुभ कर्मों के उदय से उसके अन्तःकरण में संसार की  
असारताका भान होने लगा, उसने 'शुभस्य शीघ्रम्' की उक्तिको चारितार्थ

करीने विरक्त થઈ ગયો. સાધુએ જ્યારે તે જોયું ત્યારે તેને પોતાના વિચાર માટે  
પસ્તાવો થયો અને તેજ સમયથી સાવધાનીપૂર્વક તે પોતાનાં વ્રતોનું રક્ષણ  
કરવા લાગ્યો. ॥ ૬ ॥

सातवुं धनदत्तनुं दृष्टान्त-चंपा नगरीमां धनदत्त नामना ओक शेठ रहेता  
हुता. तेमने त्यां पुन्योदयने कारणे विपुल धन, विपुल परिवार अने विपुल  
ऋद्धि हुती. दोडो सौथी वधारे तेमनो आदर सत्कार करता हुता. कोध पणु  
प्रकारनां सांसारिक सुखनी तेमने त्या उणुप न हुती तिरस्कार ओटले शुं ओ  
तो तेमणे स्वप्नमां पणु अनुभव्यु न हुतुं. ओक हिवस ओवुं अन्युं के सुपात्र-  
दान, करुणादान, अलयदान आदिना विषयमां ते शेठनी बुद्धिनी अश्रद्धा थई  
गई. आ अश्रद्धा आववानुं शुं कारण छे तेनो ज्यारे तेमणे ज्ञानदृष्टिथी विचार करी  
त्यारे शुभ कर्मना उदयथा तेमना अंतःकरणमां संसारनी असारतानु लान थवा

ज्ञानदृष्ट्या संसारासारतां विचार्य प्रव्रज्या गृहीता । तस्येयं पारिणामिकी बुद्धिः ॥  
इति सप्तमो धनदत्तदृष्टान्तः ॥ ७ ॥

अथाष्टमः श्रावकदृष्टान्तः ॥ ८ ॥

कश्चिदेकः श्रावकः परस्त्रीगमनपरित्यागव्रतं गृहीतवान् । एकदा स्वपत्न्याः सखीं विलोक्य मनसि विकारो जातः । तद्भार्या मधुरवचनेन तमाश्वास्य एकदा रात्रौ स्वसखीवेषेण सा पत्युरन्तिके गता । तां दृष्ट्वा तत्कालमेव परस्त्रीपरित्यागव्रतं स्मृत्वा पश्चात्तापं कृतवान् । तस्य भार्या वदति—‘अहमेवासं न सखी’—इति । पश्चादसौ गुरुसमीपे गत्वा दूषितमनःसंकल्पनिमित्तव्रतभङ्गशुद्ध्यर्थं प्रायश्चित्तं गृहीतवान् । इयं श्रावकस्य पारिणामिकी बुद्धिः ॥

इत्यष्टमः श्रावकदृष्टान्तः ॥ ८ ॥

करते हुए उसी समय जिन दीक्षा अंगीकार करलीं । यह उसकी पारिणामिकी बुद्धि का फल है ॥ ७ ॥

आठवां श्रावक दृष्टान्त—किसी एक श्रावक के परस्त्रीगमनत्यागरूप व्रत था । एक दिन जब उसने अपनी पत्नी की सखी को देखा तो उस के प्रति चित्त में उसके विकार आव आ गया । जब यह बात उस की पत्नी को ज्ञात हुई तो उसने उसको मधुर वचनों से खूब समझाया बुझाया, परन्तु यह नहीं समझा । एक दिन रात्रि में उसकी पत्नी ने उस को प्रतिबोध देने के अभिप्राय से अपनी सखी का वेष बनाया, और फिर वह पति के पास गई । उस को देखकर श्रावक को तत्क्षण ही परस्त्री त्यागरूप व्रतकी स्मृति आ गई । इस के प्रभाव से वह पश्चात्ताप करने लगा । पश्चात्ताप करते हुए अपने पति को देखकर स्त्री ने कहा—नाथ ! मैं सखी नहीं हूँ, मैं तो आप की पत्नी हूँ । बाद में वह गुरु के पास पहुँचा

लाग्युं, तेमणे “शुभस्य शीघ्रम्” नी उक्तिने सार्थक करतां, अेज समये जिन दीक्षा अंगीकार करी लीधी. आ तेमनी पारिणामिकीबुद्धिनुं इण छे ॥ ७ ॥

आठमुं श्रावकदृष्टान्त—कोई एक श्रावकने परस्त्री गमनना त्यागनुं व्रत हुतुं. अेक द्विस न्यारे तेमणे तेमनी पत्नीनी सखीने जेठ तो तेना प्रत्ये तेमना चित्तमां विकार आव थयो. न्यारे तेमनी पत्नीअे आ बात जण्णी न्यारे तेमणे तेमने मधुर वचने द्वारा पूष समज्जयां पणु ते समज्जयां न नहीं अेक रात्रे तेमनी पत्नीअे तेने बोध आपवा भाटे पोतानी सखीने वेष लीधी अने पछी ते पतिनी पास गछ. तेने जेता तेज क्षणे ते श्रावकने परस्त्री त्यागना व्रतनी याद आवी. तेना प्रभावे ते पश्चात्ताप करवा लाग्यो. पोताना पतिने पश्चात्ताप करतो जेठने ते स्त्रीअे कहुं, “नाथ ! हुं सखी नथी, हुं तो आपनी न

અથ નવમોઽમાત્યદૃષ્ટાન્તઃ ॥ ૯ ॥

અમાત્યો મન્ત્રી । ધનુનામકો મન્ત્રી સ્વામિપુત્રસ્ય બ્રહ્મદત્તસ્ય રક્ષાર્થં વિલ-  
માર્ગં સ્વનયિત્વા તેન માર્ગેણ બ્રહ્મદત્તં વહિર્નીતવાન્ । ઇયં મન્ત્રિણઃ પારિણામિકી  
બુદ્ધિઃ ॥ ઇતિ નવમોઽમાત્યદૃષ્ટાન્તઃ ॥ ૯ ॥

અથ દશમઃ ક્ષપક (સાધુ) દૃષ્ટાન્તઃ ॥ ૧૦ ॥

કોઽપિ સાધુઃ ક્રોધાવેશેન મૃતસ્તેન કારણેન સ સર્પો જાતઃ । સર્પભવે મૃતઃ સન્  
શુભકર્મોદયાત્ કુત્રચિદ્રાજકુલે જન્મ લબ્ધવાન્ । સ મુનીનામુપદેશેન વિરક્તો ભૂત્વા  
પ્રવ્રજ્યાં ગૃહીતવાન્ । સ ચ સુકુમારતયા તપશ્ચર્યાયામસમર્થ આસીત્ । સાંવત્સરિક-  
ઔર ઉનસે પરસ્ત્રીત્યાગરૂપ વ્રત મેં હસ મનઃ સંકલ્પ સે ઉત્પન્ન દોષ કી  
શુદ્ધિ કે લિયે ઉસને પ્રાયશ્ચિત્ત લિયા । યહ શ્રાવક કી પારિણા-  
મિકી બુદ્ધિ હૈ ॥ ૮ ॥

નૌવાં અમાત્ય દૃષ્ટાન્ત-ધનુ નામ્ન કે કિસી મંત્રી ને અપને સ્વામી  
કે પુત્ર બ્રહ્મદત્ત કા રક્ષા કર ને કે અભિપ્રાય સે સુરંગમાર્ગં સુદવાયા ।  
ઉસ માર્ગ સે વહ બ્રહ્મદત્ત કો બાહર લે ગયા । યહ મંત્રી કી પારિણામિ  
કી બુદ્ધિ કા ઉદાહરણ હૈ ॥ ૯ ॥

દસવાં ક્ષપક સાધુ કા દૃષ્ટાન્ત-કોઈ એક સાધુ ક્રોધ કે આવેગ મેં મરા  
હસલિયે વહ મર કર સર્પ કી પર્યાય મેં ઉત્પન્ન હુઆ । વહાં સે મર કર  
ફિર વહ શુભકર્મ કે ઉદય સે કિસી રાજકુલ મેં પુત્ર રૂપ સે અવતારિત  
હુઆ । વહાં ઉસકો મુનિરાજ કે ઉપદેશ કો સુન ને કા અવસર મિલા ।  
હસસે વહ સંસાર સે વિરક્ત હોગયા, ઔર દીક્ષા ધારણ કર લી । સુકુમાર  
શરીર હોને કે કારણ યહ ઠીકર રીતિ સે તપશ્ચર્યા કરને મેં અસમર્થ રહતા

પત્ની છુ'." ત્યાર પછી તે શુરુની પાસે પહોંચ્યો અને પોતાનાથી પરસ્ત્રી ત્યાગ  
રૂપ વ્રતમાં મનઃસંકલ્પને કારણે ઉત્પન્ન થયેલ દોષને માટે તેમની પાસે પ્રાયશ્ચિત્ત  
માગ્યું. આ શ્રાવકની પારિણામિકી બુદ્ધિનું દૃષ્ટાંત છે ॥ ૮ ॥

નવમું અમાત્યદૃષ્ટાંત-ધનુ નામના કોઈ મંત્રીએ પોતાના રાજાના પુત્ર  
બ્રહ્મદત્તના રક્ષણ ને માટે એક સુરંગમાર્ગ ખોદાવ્યો તે માર્ગે તે બ્રહ્મદત્તને  
બહાર લઈ ગયો. આ મંત્રીની પારિણામિકી બુદ્ધિનું ઉદાહરણ છે. ॥ ૯ ॥

દસમું ક્ષપક સાધુનું દૃષ્ટાંત-કોઈ એક સાધુ ક્રોધના આવેગમાં મરવાને  
કારણે સર્પની પર્યાયમાં ઉત્પન્ન થયો. ત્યાંથી મરીને ફરીથી શુભકર્મના ઉદયથી તે  
કોઈ રાજકુળમાં પુત્ર રૂપે અવતર્યો. ત્યાં તેને મુનિરાજનો ઉપદેશ સાંભળવાનો  
અવસર મળ્યો. તેથી તે સંસારથી વિરક્ત થઈ ગયો, અને દિક્ષા અંગીકાર કરી  
લીધી. સુકુમાર શરીર હોવાને કારણે તે યોગ્ય રીતે તપશ્ચર્યા કરવાને અસમર્થ હતો.

दिनेऽल्पाहारमानीय गुरवे प्रदर्शितवान् । गुरुणा दृष्ट्वा तत्पात्रे श्रुत्कृतम् । ततोऽसौ स्वात्मनिन्दां कर्तुं प्रवृत्तः—‘धिगस्तु मां यत् सांवत्सरिकपर्वाराधनेऽप्यसमर्थोऽस्मी’-ति । एवमात्मानं निन्दयन् शुभेन परिणामेन, प्रशस्ताध्यवसायेन तदावरणीयानां कर्मणां क्षयेण केवलज्ञानं प्राप्तवान् । इयं तस्य पारिणामिकी बुद्धिः ॥ इति दशमः क्षपक-दृष्टान्तः ॥ १० ॥

अथैकादशोऽमात्यपुत्रदृष्टान्तः ॥ ११ ॥

दीर्घपृष्ठराजा वरधनुर्नामकममात्यपुत्रं ब्रह्मदत्तविषयेऽनेक प्रश्नान् पृच्छति स्म । तेषामुत्तरं वरधनुस्तथा दत्तवान् येन दीर्घपृष्ठपुत्रो न जानाति—‘अयं मम प्रतिकूल-वर्ती’-ति । तथा-वरधनुर्ब्रह्मदत्तस्यापि रक्षां कृतवान् । इयं तस्य पारिणामिकी बुद्धिः ॥ इत्येकादशोऽमात्यपुत्रदृष्टान्तः ॥ ११ ॥

था । इसलिये सांवत्सरिक के दिन में भी इस से आहार का परित्याग करते नहीं बन सका, अतः वह आहार लेने चला गया । आहार में जो कुछ यह लाया था वह सब इसने अपने गुरु को बतलाया—तो गुरुदेव ने देखकर उस के पात्र में थूक दिया । इस से अपनी बड़ी भारी निंदा की और सोचने लगा—देखा मैं कितने धिक्कार का पात्र हूँ, जो आज सांवत्सरीकपर्व की आराधना करने में भी असमर्थ हो रहा हूँ । इस प्रकार आत्मनिंदा करते हुए उस को शुभाध्यवसाय के प्रभाव से तदावरणीय कर्मों का क्षय हो जाने के कारण केवलज्ञान प्राप्त हो गया । यह उस की पारिणामिकी बुद्धि का फल है ॥ १० ॥

ग्यारहवां अमात्यपुत्र का दृष्टान्त—दीर्घपृष्ठ राजा ने वरधनु नामक अमात्यपुत्र से ब्रह्मदत्त के विषय में अनेक प्रश्नों को पूछा था । उन का उत्तर उस वरधनु ने इस प्रकार से दिया कि जिस से दीर्घपृष्ठ यह नहीं

तेथी संवत्सरीने दिवसे पण ते आहारने त्याग करी शक्यो नही । तेथी गोचरीमां जे कंठ मळ्युं ते ण्धुं तेणे पोताना शुरुने ण्ठाव्युं । त्यारे शुद्धेव ते जेधने तेनां पात्रमां थूंक्या । तेथी तेने पोतानी जतने धणी निंदी अने विचार कर्यो, “हुं डेटवो ण्धो धिक्कारने पात्र छुं के जेथी आजे संवत्सरी पर्वनी आराधना करवाने पण असमर्थ निवड्यो छुं ।” आ प्रमाणे आत्म-निंदा करता, तेने शुभाध्यवसायने प्रभावे तेनुं आवरणु करता कर्मोना क्षय थवाथी केवणज्ञान प्राप्त थयुं । आ तेनी पारिणामिकी बुद्धिनुं इण हुतुं ॥ १० ॥

अगीयारमुं अमात्यपुत्रनुं दृष्टान्त—दीर्घपृष्ठ राजाजे वरधनु नामना अमा-त्यपुत्रने ब्रह्मदत्तना विषयमां अनेक प्रश्नो पूछ्या हुता । ते प्रश्नोना जवाब ते वरधनुजे जे रीते आये के जेथी दीर्घपृष्ठ ते वात समजु शक्यो नही के

॥ અથ દ્વાદશશ્ચાણક્યદૃષ્ટાન્તઃ ॥

ચાણક્યેનોદ્ધોષણા કારિતા-‘યદ્ દિવસૈકમાત્રજાતાનામશ્વાનાં મહિષાણાં  
વૃષભાણાં કુક્કુરાણાં ચ પ્રત્યેકં સપાદપશ્ચશતકમથ પૂર્વાહ્નિ એવ સમાનયન્તુ, નો ચેત્  
પ્રતિગૃહેણ મુદ્રાશતં દણ્ડો દેયઃ’ ઇતિ । એવં માળ્ડાગારં પૂર્ણં કૃતવાન્ । ઇયં ચાણક્યસ્ય  
પારિણામિકી બુદ્ધિઃ ॥

॥ ઇતિ દ્વાદશશ્ચાણક્યદૃષ્ટાન્તઃ ॥ ૧૨ ॥

॥ અથ ત્રયોદશઃ સ્થૂલભદ્રદૃષ્ટાન્તઃ ॥

સ્થૂલભદ્રસ્ય પિતરિ હતે સતિ નન્દો મન્ત્રિપદપરિપાલનાર્થં સ્થૂલભદ્રં પ્રાર્થયતિ  
સ્મ । કિં તુ સ્થૂલભદ્રઃ સંસાર સમ્બન્ધં દુઃસ્વકરં વિજ્ઞાય પ્રવ્રજ્યાં ગૃહીતવાન્ । ઇયં  
તસ્ય પારિણામિકી બુદ્ધિઃ ॥

॥ ઇતિ ત્રયોદશઃ સ્થૂલભદ્રદૃષ્ટાન્તઃ ॥ ૧૩ ॥

જાન સકા કિ અમાત્ય પુત્ર મેરે પ્રતિકૂલ હૈ । ઇસ તરહ વરધનુને અપની  
પારિણામિકી બુદ્ધિ કે પ્રભાવ સે બ્રહ્મદત્ત કી રક્ષા કી ॥ ૧૧ ॥

બારહવાં ચાણક્ય દૃષ્ટાન્ત-ચાણક્ય ને ઇસ પ્રકાર કી ઘોષણા કી કિ  
હરેક પ્રજાજન એક હી દિન મેં ઉત્પન્ન હુએ પાંચસૌ પચીસ ૫૨૫ ઘોડોં  
કો પાંચસૌ પચીસ ૫૨૫, મૈસોં કો પાંચસૌ પચીસ ૫૨૫ બૈલોં કો ઓર  
પાંચસો પચીસ ૫૨૫ કુત્તોં કો આજપૂર્વાહ્નિ મેં લાકર ઉપસ્થિત કરે નહીં  
તો પ્રત્યેક ઘર કો સૌ સૌ મુંહરોં કા જુર્માના દેના પડેગા । ઇસ તરહ કી  
આજ્ઞા સે ડસને અપને માળ્ડાર કો દ્રવ્ય સે સ્વૂબ ભર દિયા । યહ ડસ  
કી પારિણામિકી બુદ્ધિ કા પ્રભાવ હૈ ॥ ૧૨ ॥

તેરહવાં સ્થૂલભદ્ર દૃષ્ટાન્ત-સ્થૂલભદ્ર કા પિતા જબ માર દિયા ગયા તો  
નન્દ ને સ્થૂલભદ્ર સે અપ ને પિતા કે સ્થાન કો ગ્રહણ કરને કી પ્રાર્થના કી

અમાત્યપુત્ર મારી વિરૂદ્ધ છે. આ રીતે વરધનુએ પોતાની પારિણામિકી બુદ્ધિથી  
બ્રહ્મદત્તનું રક્ષણ કર્યું ॥ ૧૧ ॥

બારમું ચાણક્યદૃષ્ટાન્ત-ચાણક્યે આ પ્રકારની ઘોષણા કરાવી કે દરેક પ્રજા-  
જન એક જ દિવસે જન્મેલ પાંચસો પચીસ (૫૨૫) ઘોડા, પાંચસો પચીસ (૫૨૫)  
ભેંસો, પાંચસો પચીસ (૫૨૫) બળદો અને પાંચસો પચીસ (૫૨૫) કુતરાઓ  
આજે મધ્યાહ્ન પહેલાં લાવીને હાજર કરે, નહીં તો દરેકને સો સો સોનામહોરોના  
ઠંડ ભરવો પડશે. આ પ્રકારની આજ્ઞાથી તેણે પોતાના ભાંડાગારને દ્રવ્યથી  
ભરી દીધો. આ તેની પારિણામિકી બુદ્ધિનો પ્રભાવ છે ॥ ૧૨ ॥

તેરમું સ્થૂલભદ્ર દૃષ્ટાન્ત-જ્યારે સ્થૂલભદ્રના પિતાની હત્યા કરવામાં આવા  
ત્યારે નન્દે સ્થૂલભદ્રને તેના પિતાનું સ્થાન ગ્રહણ કરવા વિનંતિ કરી, પણ સ્થૂલ-



अथ नासिक्यसुन्दरीनन्ददृष्टान्तः—

नासिक्यपुरे नन्दनामको भूपतिरामीत् । तस्य महिषी सुन्दरी नाम्नी । भूपते-  
भ्राता धर्मप्रियनामकः । स सीमन्ताचार्यसमीपे देशनां श्रुत्वा प्रव्रजितः । विविध-  
कठिनतपश्चरणेन विविधलब्धिसंपन्नो जातः । स चैकदा राजानं राज्ञीं च लब्धि-  
प्रभावेण देवदेवीदर्शनं कारितवान् । तदनु तावुभौ प्रव्रजितौ । साधोरियं पारिणा-  
मिकी बुद्धिः ॥

इति चतुर्दशो नासिक्यसुन्दरीनन्ददृष्टान्तः ॥ १४ ॥

अथ पञ्चदशो वज्रदृष्टान्तः ॥

आसीदवन्तीदेशे उज्जयिनीनगर्यां कश्चिदिभ्यपुत्रो धनगिरिनामकः । तस्य माता-  
पितरौ धनपालपुत्र्या सुनन्दा नाम्न्या सह तस्य पाणिग्रहणं कारितवन्तौ । धनगिरिश्च

परन्तु स्थूलभद्र ने संसार के संबंध को दुःखकर जानकर जो दीक्षा धारण  
कर ली यह उनकी पारिणामिकीबुद्धि का प्रभाव था ॥ १३ ॥

चौदहवां नासिक्य सुन्दरीनन्द दृष्टान्त—नासिक्यपुर में एक नन्द  
नाम का राजा था । उस की स्त्री का नाम सुन्दरी था । राजा का जो भाई  
था उसका नाम धर्मप्रिय था । धर्मप्रिय ने सीमन्ताचार्य के पास धर्मदे-  
शना सुनकर भागवती दीक्षा धारण करली । अनेक प्रकार के तपश्चरणों  
के प्रभाव से उसको उसके अनेक प्रकार की लब्धियां सिद्ध हो गईं । उसने  
राजा और रानी को लब्धि के प्रभाव से देव और देवी के दर्शन करवाये ।  
दर्शन कर वे दोनों दीक्षित हो गये । साधु की यह पारिणामिकी बुद्धि  
का प्रभाव है ॥ १४ ॥

पन्द्रहवा वज्र दृष्टान्त—अवन्ती देश की उज्जयिनी नगरी में कोई  
एक धनगिरि नामका धनिक पुत्र रहता था । उस के माता पिता ने

लद्रे संसारना संभोधने दुःखकर भानीने दीक्षा अंगीकार करी. आ तेनी  
पारिष्ठाभिकीबुद्धिने प्रभाव डतो ॥ १३ ॥

चौदहमुं नासिक्यसुन्दरीनन्ददृष्टान्त—नासिक्यपुरमां नन्द नामने. ओक  
राजा डतो. तेनी स्त्रीनुं नाम सुंदरी डतुं. राजाना लार्धनुं नाम धर्मप्रिय डतुं.  
धर्मप्रिये सीमन्ताचार्य पासे धर्मदेशना सांलणीने लगवती दीक्षा अंगीकार करी.  
अनेक प्रकारनी तपस्याने प्रभावे तेने अनेक प्रकारनी लब्धिये प्राप्त थछ तेले लब्धिना  
प्रभावे राजा अने राणीने देव अने देवीनां दर्शन कराव्यां. दर्शन करीने ते अन्नेओ  
दीक्षा लछ लीधी. आ साधुनी पारिष्ठाभिकी बुद्धिने प्रभाव थयो ॥ १४ ॥

पंदरमुं वज्रदृष्टान्त—अवन्ती देशनी उज्जयिनी नगरीमां धनगिरि नामने  
कैछ ओक धनिक पुत्र रहेतो डतो. तेना माता पिताओ तेना विवाह धनपालनी

संसारसारतां बुद्ध्वा गर्भवत्या सुनन्दाभार्यया प्रतिरुद्धोऽपि सिंहगिरिसमीपे प्रव्रजितः । तदनु प्रसूतिसमये सा नन्दा पुत्रं जनितवती । तस्य वज्रवद्देहं दृष्ट्वा—‘वज्र’ इति नाम कृतम् । एकदा स्त्रीभिः परस्परमुक्तम्—अयं धनगिरेः पुत्रः पुण्यशाली वर्तते । यद्यस्य पिता दीक्षां नाग्रहीष्यत् तदाऽस्यापूर्वो महोत्सवोऽभविष्यत् । तासामेतद्वचनं श्रुत्वा स बालः पालनस्थ एव जातिस्मृतिं प्राप्तवान् । तेन स्वपूर्वभवं प्रव्रजितं पितरं च ज्ञात्वा तथा रोदितुमारेभे यथा माता तं प्रति निर्वेदं प्राप्नुयात् ।

उसका विवाह धनपाल की पुत्री सुनंदा के साथ कर दिया । धनगिरि ने धीरे २ गृहस्थ जीवन बीताते हुए अपना समय शांति के साथ व्यतीत किया । काल लब्धि के प्रभाव से धनगिरि को संसार की असारता का ज्यों ही भान हुआ तो उसने अपनी गर्भवती सुनंदा भार्या द्वारा समझाये जाने पर भी सिंहगिरि के समीप जाकर जिनदीक्षा धारण करली । सुनंदा का जब प्रसूति का समय आया तो उसके एक पुत्र हुआ जिस का नाम वज्र था । इसकी देह वज्र जैसी थी । एक समय की बात है कि कुछ स्त्रियों ने मिलकर परस्पर ऐसी बातचीत की कि—यह धनगिरि का पुत्र वज्र बड़ा भाग्यशाली है । यदि इसके पिता जिन दीक्षा धारण न करते तो वे इस के जन्म के समय का उत्सव बड़े ठाटबाट से मनाते । जिस समय यह बातचीत उन स्त्रियों में चल रही थी—उस समय वह बालक पालने में सोया हुआ था । उन की इस बात को सुनते ही उस बालक को अपने पूर्वभव की याद आगई । जब उसने अपने पूर्वभव एवं दीक्षित हुए पिता को जाना तो ऐसा रोना प्रारंभ किया कि जिस से

पुत्री सुनंदा साथे कथीं. धनगिरिञ्च गृहस्थ जवन व्यतीत करता करता पोताने समय शान्तिथी पसार कथीं. काललब्धिना प्रभावथी धनगिरिने जेवुं संसारनी असारतानुं भान थयुं के तरत ज पोतानी गर्भवती पत्नी सुनंदाञ्च समभव्या छतां पणु सिंहगिरि समक्ष जधने जिनदीक्षा ग्रहण करी. सुनंदा ने प्रसूतिने समय आवता ओक पुत्र जन्म्ये जेनुं नाम वज्र राख्युं. तेनु शरीर वज्र जेवुं हुतुं. ओक दिवस जेवुं अन्युं के केटलीक स्त्रीओलेगी थधने आपस आपसमां बातचीत करवा लागी के आ धनगिरिने पुत्र वज्र धणु जे लाभ्यशाली छे, जे तेना पिताञ्च जिन दीक्षा अगीकार न करी छेत तो तेओ तेना जमेत्सव बारे ठाठमाठथो उजवत. न्यारे ते स्त्रीओ वच्चे आ प्रमाणे बातचीत यादती छती, ल्यारे ते आणक पारणामां सूतो छतो. तेमनी आ बात साबणता ज तेने पोताने पूर्व लव याद आव्यो. न्यारे तेणे पोताने पूर्वलव तथा दीक्षित थयेद पितानी आ बात जणु ल्यारे तेणे जेवुं रउवा मांडयुं के जेथी तेनी माताने

एवं षण्मासाः व्यतीताः । एकदा तत्र सिंहगिरिआचार्यः धनगिर्यादिशिष्यपरिवारेण सह समागतः । धनगिरिणा भिक्षाचर्यार्थं गन्तुं पृष्ठ आचार्यः प्राह—हे धनगिरे ! अद्य तव पात्रे यत्किञ्चित्सचित्तमचित्तं वा पतेत् तद्ग्राह्यमेवेति । ततो धनगिरिरकस्मात् सुनन्दागृहे भिक्षार्थं प्राविशत् । सा च स्वपतिमुनिं विलोक्योक्तवती—इयन्ति दिनानि तवार्भको मया यथाकथञ्चित् पालितः, संप्रति गृहाणैतं नित्यं रुदन्तं बालम् । अहमस्मिन् बालके निःस्पृहाऽस्मीति कृत्वा सा तं मुनिपात्रे ससाक्षिकं न्यस्तवती । धनगिरिमुनिश्च तमानीय गुरोरे स्थापितवान् । गुरुणा स

उस की माता को उसकी तरफ से विरक्ति हो गई । इस तरह छह मास व्यतीत हो चुके । एक समय की बात है कि वहां सिंहगिरि आचार्य अपने धनगिरि आदि शिष्य परिवारों के साथ विहार करते हुए आये । धनगिरि ने आचार्य महाराज से गोचरी जाने के लिये आज्ञा मांगी तो आचार्य महाराज ने कहा—आज तुम्हारे पात्र में जो भी वस्तु आजावे चाहे वह सचित्त हो या अचित्त, सभी ले आना । आचार्य महाराज की इस प्रकार आज्ञा पाते ही धनगिरि वहां से गोचरी के लिये निकले । अकस्मात् सब से पहिले वे सुनंदा के घर पहुँचे, सुनंदा ने जब यह देखा कि ये हमारे पति हैं तो उसने उनसे कहा—मैंने इतने दिनों तक जैसे भी बनावैसे आप के बालक का पालन पोषण किया है अब आप इसको ले जाइये, यह रात दिन रोता रहता है । मैं तो इस के इस रोने से बहुत अधिक परेशान रहती हूँ, इसीलिये अब इस बालक के प्रति मेरी कोई ममता नहीं रही है । ऐसा कह कर उसने उस बालक को मुनि के पात्र में लोगों को साक्षि बना कर डाल दिया । धनगिरि मुनि ने उस को

तेना तरङ्ग विरङ्कित थछ गछ. आ रीते छ मास व्यतीत थछ गयां. ओक समय ओवुं अन्युं के सिंहगिरि आचार्य पोताना धनगिरि आदि शिष्य परिवार सहित विहार करतां करतां त्यां आव्या. धनगिरिओ आचार्य महाराज पासो गोचरी भाटे जवानी आज्ञा मागी त्यारे आचार्य महाराजो कहुं—आजे तभारा पात्रमां जे कोछ वस्तु आवे ते लहे सचित्त होय के अचित्त होय पणु ते अधी देता आवजे. “आचार्य महाराजनी आ प्रकारनी आज्ञा भणतां ज धनगिरि त्यांथी गोचरी भाटे उपड्या. अकस्मात् तेओ सौथी पछेदां सुनंदा ने घेर पछोन्त्या. सुनंदाओ जेयुं के आ भारा पति छे त्यारे तेणु तेभने कहुं, भाराथी अनि शक्युं ते रीते आटला द्विसो सुधी आपना आलकनुं पालन पोषणु क्युं”, हवे आप तेने लछ जवो. ते तो रातदिवस रड्या ज करे छे. तेना इहनथी हुं तो गणे आवी गछ छुं. ते कारणे आ आणक प्रत्ये भने कोछ ममता नथी.” आभ कडीने तेणु ते आणकने मुनिनां पात्रमां दोकोने साक्षि अनावीने भूझीदीधो. धनगिरि

संघाय समर्पितः । संघेन स पालितोऽष्टवर्षीयो जातः । तदनु तन्माता स्वपुत्रं  
ग्रहीतुं संघस्य समीपे समागता । संघेन एकतो विविधालंकार वैभवादिका अनेके  
पदार्थाः स्थापिताः, एकतश्च सदोरकमुखवस्त्रिका-रजोहरणपात्रादीन्युपकरणानि  
स्थापितानि । कथितं च-यदस्मै बालकाय रोचते तदयं गृह्णातु, अयमेवात्र न्यायः ।  
एतन्निश्चय्य स बालकः शीघ्रमुत्थाय सदोरकां मुखवस्त्रिकां मुखे वद्ध्वा रजोहरण-  
पात्राणि गृहीतवान् । इयं वज्रस्वामिनः पारिणामिकी बुद्धिः ॥

॥ इति पञ्चदशो वज्रदृष्टान्तः ॥ १५ ॥

अथ चरणाहतदृष्टान्तः—

वसन्तपुरे रिपुमर्दनो नाम नृपतिरासीत् । एकदा तरुणाः सेवका राजानमब्रुवन्—

लाकर आचार्य महाराज के समक्ष रख दिया । गुरुमहाराज ने वह बालक  
श्रीसंघ को सौंप दिया । संघ ने उसका लालन पालन बड़े प्रेमके  
साथ किया । जब वह बालक आठ वर्षका हो गया तो माता सुनंदा  
बालक वज्र को वापिस लेने के लिये श्रीसंघ के पास आई । संघ ने उस  
समय एक तरफ विविध अलंकार तथा वैभव का पुंज एकत्रित कर रख  
दिया और दूसरी तरफ सदोरकमुखवस्त्रिका, रजोहरण, तथा पात्र  
आदि उपकरण रख दिये, और ऐसा कहा—जो इनमें से इस बालक को  
रुचे वही यह ले लेंगे, हमें इसमें कोई विवाद नहीं है । इस प्रकार का  
न्याय सुनकर उस बालक ने शीघ्र ही उठकर सदोरकमुखवस्त्रिका को  
अपनी मुख पर बांध लिया और रजो हरण तथा पात्रों को अपने हाथ ले  
लिया । इस तरह यह वज्रस्वामी की पारिणामिकी बुद्धि का दृष्टान्त है ॥ १५ ॥

सोलहवां चरणाहत दृष्टान्त—वसन्तपुरमें रिपुमर्दन नामका राजा

मुनिअ तेने लावीने आचार्य महाराज समक्ष भूझी दीधो. गुरुमहाराजे ते  
आलक श्री संघने सोंपी दीधो संघे धण्ण प्रेमपूर्वक तेनुं लावनपालन कथुं.  
न्यारे ते आलक आठ वर्षने थये त्यारे तेनी माता सुनंदा आलक वज्रने  
पाछो लेवा माटे श्री संघनी पासो आवी. संघे ते समये अेक तरफ विविध  
अलंकार तथा वैभवने पुंज अेकत्र करीने भूझये अने भीण तरफ होरा साथेनी  
मुडपत्ती, रजोहरण, तथा पात्र आदि उपकरण भूझयां अने अेवु कहुं के आमांथी  
आ आलकने ने गमे ते ते लछ ले, तेमां अमने कोछ वांधो नथी. आ प्रका-  
रने न्याय सांखणता ज ते आणक तरत ज उठीने होरा सडितनी मुडपत्तीने  
पोताना मुण पर आंधी दीधी, तथा रजोहरण अने पात्रांने पोताना हाथमां  
लछ दीधां. आ रीतनुं आ वज्र स्वामीनी पारिणामिकी बुद्धिनुं दृष्टांत छे ॥ ५ ॥

सोणमुं अरणाडतदृष्टांत—वसन्तपुरमां रिपुमर्दन नामने राजा राज्य करतो

स्वामिन् ! जीर्णशरीरान् पक्वकेशान् वृद्धान् सेवकानपनीय भवता तरुणा एव सेवका नियुज्यन्ताम् । त एव सर्वाणि कार्याणि सम्यक् साधयिष्यन्ति । एकदा राजा परीक्षार्थं तान् पृच्छति—यदि कश्चिन्मम शिरसि चरणप्रहारं कुर्यात् तर्हि कीदृशो दण्डो देयः ? तरुणा ऊचुः—महाराज ! खण्डं खण्डं कृत्वा स हन्तव्यः । राजा पुनरिमं प्रश्नं वृद्धानपि पृष्ठवान् । वृद्धैरुक्तम्—स्वामिन् ! विचार्य कथयिष्यामः । इत्युक्त्वा ते निर्जनस्थानं गताः, तत्र गत्वा ते विचारयन्ति—राज्ञीमन्तरेण कोऽन्यो

राज्य करता था । एक समय कुछ तरुण सेवकों ने मिल कर राजा से कहा—महाराज ! जीर्ण शरीर हुए, तथा धवलित केश हुए, ऐसे वृद्ध पुरुषों को आप राज्यकार्य से मुक्तकर तरुण सेवकों को रखिये, कारण बुढ़ों से कुछ काम नहीं हो सकता है । तरुण ऐसे होते हैं कि वे समस्त कार्य अच्छी तरह से करते हैं, और कर सकते हैं । उनकी इस बात को सुनकर राजा ने एक दिन उन की परीक्षा लेने के अभिप्राय से ऐसा पूछा—बताओ यदि कोई मेरे भस्तक पर चरण का प्रहार करे तो उसको क्या दंड देना चाहिये । राजा की इस बात को सुनकर उन तरुणों ने कहा—महाराज ! इस में पूछने की क्या बात है, यह तो स्पष्ट है कि ऐसे व्यक्ति को तिल २ बराबर खंड २ कर के मार देना चाहिये । उनकी इस बात को सुनकर राजा ने यही बात वृद्धजनों से पूछी तो उन्होंने कहा—स्वामिन् ! हम इसका उत्तर विचार कर कहेंगे । ऐसा कहकर वे एक निर्जन स्थान में जाकर विचार करने लगे, विचार करते २ यह बात उन की समझ में आई कि रानी के सिवाय राजा के भस्तक पर चरण

डतो. એક વખત કેટલાક યુવાન સેવકોએ મળીને રાજાને કહ્યું, “ મહારાજ ! જીર્ણશીર્ણ શરીરવાળા તથા ધોળાં વાળવાળાં પુરુષોને આપ રાજ્યના કાર્યમાંથી છૂટા કરીને યુવાન સેવકોને રાખો, કારણ કે વૃદ્ધોથી કંઈ કામ થઈ શકતું નથી. યુવાનો એવા હોય છે કે તે સમસ્ત કાર્યને સારી રીતે કરે છે, અને કરી શકે છે. તેમની એ વાત સાંભળીને રાજાએ એક દિવસ તેમની કસોટી કરવા માટે તેમને એવું પૂછ્યું કે કહો, કોઈ માગ ભસ્તક પર લાત મારે તો તેને શો દંડ આપવો જોઈએ. રાજાની એ વાત સાંભળીને તે યુવાનોએ કહ્યું, “ મહારાજ ! તેમાં પૂછવાની વાત જ શી છે ? એ તો સ્પષ્ટ છે કે એવી વ્યક્તિના તો રાઈ રાઈ જેવાં ટુકડા કરીને તેને મારી નાખવી જોઈએ. ” તેમની આ વાત સાંભળીને તેમણે એજ વાત વૃદ્ધોને પૂછી ત્યારે તેમણે કહ્યું, “ મહારાજ ! વિચાર કરીને અમે તેનો જવાબ આપશું ” આ પ્રમાણે કહીને એકાન્તમાં જઈને તેઓ વિચાર કરવા લાગ્યા. વિચાર કરતાં કરતાં એ વાત તેમના સમજવામાં આવી ગઈ કે રાણીના સિવાય રાજાના ભસ્તક પર લાત મારવાનું સામર્થ્ય કે હિંમત



રાજાઃ શિરસિ ચરણેન પ્રહારં કર્તું શક્નોતિ ? સા રાજી તુ વિશેષસમ્માનયોગ્યા ભવતિ, इति विचिन्त्य राज्ञः समीपमागत्य वृद्धा ऊचुः--राजन् ! शिरसि चरण-प्रहारकरणे विशिष्टसत्कारः करणीयः । वृद्धानां वचः श्रुत्वा तद् बुद्धिं प्रति राजा परितुष्टो जातः । ततश्चासौ वृद्धानेव स्वपार्श्वे स्थापयामास । इयं राज्ञस्तथा वृद्धानां च पारिणामिकी बुद्धिः ।

॥ इति षोडशचरणाहतदृष्टान्तः ॥ १६ ॥

अथ सप्तदश आमंड-कृत्रिमामलकदृष्टान्तः—

कश्चित् कुम्भकारः कस्मैचित् कृत्रिमामलकं दत्तवान् । वर्णतः स्वरूपतश्चामल-कसादृश्यसद्भावेऽप्यतिकठिनस्पर्शवत्त्वात्, तदुत्पत्तिकालाभावाच्च नेदं वास्तविकमा-मलकं किन्तु कृत्रिममिति तेन ज्ञातम् । तस्यामलकपरीक्षकस्येयं पारिणामिकी बुद्धिः ।

॥ इति सप्तदश आमंड-कृत्रिमामलકદૃષ્ટાન્તઃ ॥ १७ ॥

પ્રહાર દેને કી સામર્થ્ય ઔર किस में हो सकती है । फिर भी वह विशेष संमान के ही योग्य मानी जाती है । ऐसा विचार कर चुकने पर वे पीछे राजा के पास आकर कहने लगे—राजन् ! आपके शिर पर चरण प्रहार करने वाला व्यक्ति विशेष सत्कार का पात्र होता है । इस प्रकार उनके वचन सुनकर राजा उनके बुद्धिवैभव पर बड़ा प्रसन्न हुआ, और उन्हें ही उसने अपने पास रखा । इस तरह यह राजा और वृद्धों की पारिणा-मिकी बुद्धि का दृष्टान्त है ॥ १६ ॥

સત્રહવાં આમંડ-કૃત્રિમામલક દૃષ્ટાન્ત—કિસી એક કુંભારને કિસી દૂસરે વ્યક્તિ કે લિયે બનાવટી આંબલા દિયા । જો રૂપ તથા રંગ મેં બિલકુલ સચ્ચે આંબલે કે સમાન થા, પરન્તુ ઉસને ઉસે કઠિન સ્પર્શ હોનેકે કારણ તથા વહ સમય ઉસકી ઉત્પત્તિ કા ન હોને કે કારણ યહ

બીજા કોનામાં સંભવી શકે ? છતાં પણ તે વિશેષ સન્માનને યોગ્ય મનાય છે. આ પ્રમાણે વિચાર કરીને તેઓ રાજા પાસે પાછાં ફર્યા અને તેમણે રાજાને કહ્યું, “ મહારાજ ! આપના શિર પર ચરણ પ્રહાર કરનાર વ્યક્તિ તો વિશેષ સત્કારને પાત્ર હોય છે. ” આ પ્રમાણે તેમના વચન સાંભળીને રાજા તેમનો બુદ્ધિવૈભવ જોઈને ઘણો ખુશ થયો અને તેમને જ તેણે પોતાની સેવામાં રાખી લીધા. આ પ્રમાણે આ રાજા અને વૃદ્ધોની પારિણામિકી બુદ્ધિનું દૃષ્ટાંત છે ॥ ૧૬ ॥

સત્તરમું આમંડ-કૃત્રિમામલક દૃષ્ટાંત-કોઈ એક કુંભારે કોઈ એક વ્યક્તિને માટે બનાવટી આંબળું દીધું. તે રૂપ અને રંગમાં સાચાં આંબળા જેવું જ હતું. પણ તેણે તેનો સ્પર્શ કરતાં કહ્યું લાગવાથી તથા તે તેની ઉત્પત્તિનો સમય ન



અથાષ્ટાદશોમણિદૃષ્ટાન્તઃ—

કશ્ચિત્ સર્પો વૃક્ષમારુહ્ય પશ્ચિશાવકાન્ નિત્યં સ્વાદતિ । એકદા સ સર્પો વૃક્ષાદ્ વિચ્યુતોઽધઃ પતિતઃ । તસ્ય મણિસ્તસ્ય વૃક્ષસ્ય ક્વચિત્ પ્રદેશે સ્થિત આસીત્ । મણિપ્રકાશે ભ્રમણશીલોઽસૌ સર્પસ્તત્પ્રકાશાભાવાત્તદ્વૃક્ષાધસ્તલસ્થિતકૂપે પતિતો મૃતઃ । વૃક્ષશાખાવસ્થિતમણિકિરણચ્છાયાયા તસ્ય કૂપસ્ય સકલજલં રક્તવર્ણં સમદ્રશ્યત । તતઃ કશ્ચિદ્વાલકસ્તત્ર ક્રીડન્નિદં સાશ્ચર્યમપશ્યત્ । તતસ્તેન વાલકેન પિતુઃ સમીપે સમાગત્ય તદ્વૃત્તં નિગદિતમ્ । વૃદ્ધસ્તત્પિતાઽપિ તત્રાગત્ય સમ્યક્ પશ્યતિ, તતઃ પશ્ચાદસૌ મણિં નિશ્ચિત્ય વૃક્ષમારુહ્ય તં ગૃહીતવાન્ । તસ્યેયં પારિણામિકી બુદ્ધિઃ ।

॥ इत्यष्टादशो मणिदृष्टान्तः ॥ १८ ॥

સમજાને મેં દેર નહીં કી કિ યહ વાસ્તવિક નહીં હૈ કિન્તુ બનાવટી હી હૈ । યહ ઉસકી પારિણામિકી બુદ્ધિ કા ફલ હૈ ॥ ૧૭ ॥

અઠારહવાં મણિ દૃષ્ટાન્ત—એક સર્પ કિ જિસ કી ફળા મેં મણિ થા । વૃક્ષ પર ચઢ કર પશ્ચિયોં કે બચ્ચોં કો પ્રતિદિન સ્વા જાયા કરતા થા । એક દિન કી વાત હૈ કિ વહ સર્પ વૃક્ષ સે ચૂક કર નીચે ગિર પડા । ઉસકા મણિ ઉસ વૃક્ષ કે એક કોને મેં રહ્યા હુઆ થા । ઇસ સે ઉસ કા પ્રકાશ દૂસરી શાખા પર ન પડને સે વહ જ્યોં હી ગિરા તો કુએ મેં જા કર પડ ગયા ઓર મર ગયા । કુએ કા જલ વૃક્ષકી શાખા પર રહે હુએ મણિ કી કિરણોં કી છાયા સે રક્તવર્ણ કા દિસલાઈ દેતા થા । વહાં એક વાલક રેલ રહ્યા થા । ઉસને જ્યોં હી ઇસ દ્રશ્ય કો દેસ્યા તો ઉસ કો વડા આશ્ચર્ય હુઆ । પિતા કે પાસ આ કર ઉસને યહ સબ વાત ઉનસે કહ દી । વહ શીઘ્ર હી વહાં ગયા ઓર અચ્છી તરહ દેખભાલ કી ।

હોવાથી તેને સમજી જવામાં વાર ન લાગી કે તે સાચું આંમળું નથી પણ બનાવટી છે. આ તેની પારિણામિકી બુદ્ધિનું ફળ હતું. ॥ ૧૭ ॥

અઠારમું મણિ દૃષ્ટાન્ત—એક સર્પ કે જેની ફેણમાં મણિ હતો તે દરરોજ વૃક્ષ પર ચડીને પશ્ચિઓનાં બચ્ચાને ખાઈ જતો હતો. એક દિવસ એવું બન્યું કે તે સર્પ વૃક્ષ પરથી ચૂકવાથી નીચે પડી ગયો. તેનો મણિ તે વૃક્ષના એક ખૂણે મૂકેલો હતો. તેથી તેનો પ્રકાશ ખીણ ડાળી પર ન પડવાથી તે જેવો પડ્યો કે નીચે ફૂવામાં જઈને પડ્યો અને મરી ગયો. ફૂવાનું પાણી વૃક્ષની ડાળી પર પડેલા તે મણિનાં કિરણોની છાયાથી લાલરંગનું દેખાતું હતું. ત્યાં એક બાળક રમતો હતો. તેણે જેવું તે દ્રશ્ય જોયું કે તેને ભારે આશ્ચર્ય થયું. પિતાની પાસે જઈને તેણે તે બધી વાત તેમને કહી. તે તરત જ ત્યાં આવ્યો અને બરાબર નિરીક્ષણ કર્યું. જ્યારે તેને મણિ વિષે ખાતરી થઈ ગઈ ત્યારે તેણે વૃક્ષ પર

अथैकोनविंशतितमः सर्पदृष्टान्तः—

भगवतो महावीरस्यालौकिकरक्तमास्वाद्य चण्डकौशिकसर्पो ज्ञानं प्राप्तवान् ।  
इयं तस्य पारिणामिकी बुद्धिः ।

इत्यैकोनविंशतितमः सर्पदृष्टान्तः ॥ १९ ॥

अथ विंशतितमः खड्गिदृष्टान्तः—

खड्गी—‘ गेंडा ’ इति प्रसिद्धोऽरण्यपशुविशेषः । कोऽपि श्रावको यौवनमदेन  
व्रतातिचाराणामालोचनामकृत्वा मृतः । ततोऽसौ वने खड्गिपशुभवं ग्राप्य तस्मिन्  
वने आगन्तुकान् मनुष्यान् निहत्य भक्षयति । एकदा तेन मार्गेण गच्छन्तो बद्धौ  
सदोरकमुखवस्त्रिकाः साधवस्तेन दृष्टाः । स खड्गी पशुस्तान् साधूनाक्रामति, किन्तु

जब उस को मणि का निश्चय हो गया तो उसने वृक्ष पर चढ़ कर उस  
मणि को ले लिया । इस प्रकार यह उस की पारिणामिकी बुद्धि को  
उदाहरण है ॥ १८ ॥

उन्नीसवां सर्प दृष्टान्त—चण्डकौशिक सर्पने महावीर स्वामी के  
अलौकिक रक्त का आस्वादन करने के जो ज्ञान प्राप्त किया वह उसकी  
पारिणामिकी बुद्धिका फल है ॥ १९ ॥

बीसवां खड्गि दृष्टान्त—कोई श्रावक यौवन के मद में आ कर  
व्रतों में लगे हुए दोषों की आलोचना नहीं कर के मरा तो वह गेंडाकी  
पर्याय से उत्पन्न हुआ । वह इतना नृशंस था कि वन में जो भी कोई  
मनुष्य आता उस को यह मार कर खा जाता । एक समय इसने मार्ग  
में जाते हुए मुख पर सदोरकमुखवस्त्रिका बांधे हुए अनेक मुनियों को  
देखा । देखते ही यह उन पर आक्रमण करने के लिये झपटा, परन्तु

यडीने ते भण्णि लधं लीधो. आ प्रभाणु आ तेनी पारिणामिकी बुद्धिनुं  
उदाहरणं थयुं ॥ १८ ॥

ओगणीसमुं सर्पं दृष्टान्त—यं उकौशिक नामे महावीर स्वामीना अलौकिक  
रक्तने आभीने जे ज्ञान प्राप्त कयुं ते तेनी पारिणामिकी बुद्धिनुं क्षणं उतुं ॥ १९ ॥

बीसमुं खड्गं दृष्टान्त—कोई अक श्रावक यौवनना मदमां आवीने व्रतोमां  
आवेल होषोनी आलोचना कर्या विना भरवाथी गेंडाइये उत्पन्न थयो. ते अटवो  
अधो निहत्य उतो के वनमां जे कोई मनुष्य आवतो तेने मारीने भाँजतो.  
अक दिवस तेणु मार्ग परथी जतां मुणपर होरी सहितनी मुडयत्तीवाणा अनेक  
मुनियोने जेया. तेमने जेतां ज ते तेमना पर आक्रमण करवा माटे दूधो

तेषां तपःप्रभावात् तथा कर्तुमसमर्थो जातः । 'कथमक्षमो जातोऽस्मी'ति पुनः पुनर्विचिन्तनेन तेन पूर्वभवस्मरणात्मकं ज्ञानं प्राप्तम्, तथाऽशनं कृत्वा देवलोकं गतः । तस्येयं पारिणामिकी बुद्धिः ॥ २० ॥

॥ इति विंशतितमः खड्गिदृष्टान्तः ॥

अथैकविंशतितमः स्तूपेन्द्रदृष्टान्तः—

अजितस्वामिशासने तद्वंशे समाराधितदेवः समरनामा भूप आसीत् । स देव-साहाय्येन देशरक्षार्थं राज्यरक्षार्थं कुलधनवैभवादिरक्षार्थं च स्तूपेन्द्रं विशालं कीर्ति-स्तम्भं—समारोपितवान् असौ स्तूपेन्द्रोऽनेकेषां प्राणिनामाश्रयभूतो जातः । तद्वंशे चिरेण नीतिरहितो नवनीतनामा भूपो बभूव । स चैकदा जीर्णशीर्णं विविधप्राणि-निवासास्पदं तं कीर्तिस्तम्भमुत्पाटयितुं भृत्यवर्गमादिष्टवान् । तदा तत्र विविधल-

तपके प्रभाव से यह उन पर आक्रमण नहीं कर सका । मेरा आक्रमण इन पर खाली क्यों गया? इसका बार २ विचार करते हुए उसको जाति-स्मरण ज्ञान प्राप्त हो गया इससे वह अनशन कर मरा और देवलोक में जाकर उत्पन्न हुआ । इस प्रकार यह उस की पारिणामिकी बुद्धि का दृष्टान्त है ॥ २० ॥

इक्कीसवां स्तूपेन्द्र दृष्टान्त—अजितनाथ स्वामी का जब शासन चल रहा था उस समय उन के वंश में समर नामका एक राजा हुआ । यह दोनों की विशेषरूप से आराधना किया करता था । इसने देव की सहा-यता से देश की रक्षा, राज्य की रक्षा, तथा कुल वैभव आदि की रक्षा के लिये एक विशालकीर्तिस्तम्भ बनवाया । इसमें अनेक प्राणियों को निवास करने रूप आश्रय मिलता था । समर के वंश में एक नवनीत नाम का राजा हुआ जो न्यायनीति से रहित था । इसने इस विशाल कीर्तिस्तम्भ

पणु तेमना तपना प्रभावे ते तेमना पर आक्रमण करी शक्यो नही. आ लोको परनुं भाइं आक्रमण शा करणु निष्कण गयुं तेनो वारंवार विचार करतां तेने नतिस्मरण ज्ञान उत्पन्न थयुं. तेथी ते अनशन करीने भये अने देवलोकां उत्पन्न थयो. आ प्रभाणु आ तेनी पारिणामिकीबुद्धितुं दृष्टांत थयुं ॥ २० ॥

अेकवीसमुं स्तूपेन्द्र दृष्टांत—न्याये अजितनाथ स्वामीनुं शासन बालतुं हुतुं त्यारे तेमनां वंशमां समर नामे अेक राजा थयो. ते विशेषरूपे देवानी आराधना करतो हुतो. तेणु देवनी सहायताथी देश, राज्य तथा कुलवैभव आदिनी रक्षा भाटे अेक विशाल कीर्तिस्थंल बनावराव्यो. तेमां अनेक प्राणी-ओने रहवा भाटे आश्रय भणतो हुतो. समरना वंशमां अेक नवनीत नामने राजा थयो जे न्यायनीतिथी रहित हुतो. ते विशालकीर्तिस्तम्भने लुण्णीशीर्ण

न्विसम्पन्नः सुसंयतनामानगारः समागतः । स्तूपोत्पाटनविषयकं वृत्तं विज्ञाय स्वसमीपे दर्शनार्थमागताय नवनीतभूपाय कथयति—हे राजन् ! अस्योत्पाटने विविधप्राणिनां संहारः सुरकोपेण देशविप्लव राज्यविप्लवादिर्महाननर्थो भविष्यतीति नोत्पाटनीयोऽयं स्तूपेन्द्रः ।

॥ इत्येकविंशतितमः स्तूपेन्द्रदृष्टान्तः ॥ २१ ॥

॥ इत्यश्रुतनिश्चितमतिज्ञानदृष्टान्तभागः संपूर्णः ॥

को जब कि यह जीर्णशीर्ण हो चुका उखाड़ने का अपने भृत्यवर्ग को आदेश दे दिया । इसी समय वहां विविधलब्धिसंपन्न सुसंयत नामके मुनिराज विहार करते हुए आये । जब उन्हें इस कीर्तिस्तंभ को उखाड़े जाने का पता पड़ा तो उन्होंने ने नवनीत राजा से जो वंदना करने के लिये आया हुआ था कहा—राजन् ! इस कीर्तिस्तंभ को उखाड़ने से अनेक प्राणियों का संहार, देव प्रकोप से देश में उपद्रव, राज्य में विप्लव आदि अनेक होंगे, इसलिये इस को आप मत उखडवाईये । इस प्रकार यह सुसंयत मुनिराज की पारिणामिकी बुद्धि का प्रभव है जो वह विशालकीर्तिस्तंभ नहीं उखाड़ा गया ॥ २१ ॥

इस तरह ये सब दृष्टान्त अश्रुत निश्चित मतिज्ञान के हुए ॥

॥ नंदीसूत्र का हिन्दी अनुवाद संपूर्ण ॥



थयेલ જોઈને, તેણે પોતાના સેવકોને તે પાડી નાખવાનો આદેશ આપ્યો. એજ વખતે વિવિધ લબ્ધિ સંપન્ન સુસંયત નામના મુનિરાજ વિહાર કરતાં કરતાં ત્યાં પધાર્યાં. જ્યારે તેમને આ કીર્તિસ્તંભને પાડી નાખવાનો છે એવી ખબર પડી ત્યારે નવનીત રાજા કે જે ત્યાં તેમને વંદણા કરવા આવ્યો હતો તેને કહ્યું, “રાજન્ ! આ કીર્તિસ્તંભને પાડી નાખવાથી અનેક પ્રાણીઓનો સંહાર થશે, દેવ, દેવપ્રકોપથી દેશમાં ઉપદ્રવ, રાજ્યમાં વિપ્લવ આદિ અનેક મુશ્કેલીઓ આવી પડશે. તો આપ તેને પડાવશો નહીં” આ પ્રકારની સુસંયત મુનિની પારિણામિકીબુદ્ધિને પ્રભાવે તે વિશાળ કીર્તિસ્તંભને પાડવામાં આવ્યો નહીં. ॥ ૨૧ ॥

આ રીતે આ બધાં અશ્રુત નિશ્ચિત મતિજ્ઞાનનાં દૃષ્ટાંતો પૂરાં થયાં ॥

॥ નંદીસૂત્રનો ગુજરાતી અનુવાદ સંપૂર્ણ ॥

## अथ शास्त्रप्रशस्तिः ।

सम्यक्त्वधारी जनतोपकारी,  
 विचारकारी जिनधर्मचारी ।  
 कन्धारगोत्रः खलु “वल्लभो”ऽभूत्,  
 श्रेष्ठी समापन्नविपन्निहन्ता ॥ १ ॥

( २ )

तस्यात्मजन्मा क्षपिताऽघकर्मा,  
 संप्राप्तधर्माऽवितधर्ममर्मा ।  
 “श्रीनेमिचन्द्रो” गुरुभक्त्यतन्द्रो,  
 जिनेन्द्रधर्मे परमानुरक्तः ॥ २ ॥

( ३ )

पत्नी “समर्था” पतिसेवनार्था,  
 जिनोक्तधर्माचरणे समर्था ।  
 तस्यातिशुद्धा सुकृतप्रबुद्धा,  
 चेतोऽनुकूला सदया सुशीला ॥ ३ ॥

( ४ )

तस्यां शुभस्वप्नवशेन जातः,  
 “श्रीवाडिलाल”-स्तनयोऽस्ति धीमान् ।  
 श्रीसङ्गराज्यादिषु मुख्य एष,  
 सर्वोपकारी किल प्राङ्गिवाकः ( वकील ) ॥ ४ ॥

( ५ )

शीलं दधाना महिलाप्रधाना,  
 “रम्भा”ऽभिधाना सरलस्वभावा ।  
 स्वाभ्येकभक्ता सुकृताऽनुरक्ता,  
 छायेव तस्याऽनुचरा प्रियाऽस्ति ॥ ५ ॥

( ६ )

पुत्री शुशीला शुभबाललीलां,

“ श्रीसुन्दरी ” नाम विराजतेऽस्य ।

स्मेरानना पङ्कजिनीव कल्ये,

तथे-“ न्दुमत्य ”-न्यमनोहराऽऽख्या ॥ ६ ॥

( ७ )

श्री वाडिलालस्य कनिष्ठबन्धु,-

“ मर्नोहरो ” नाम मनोहराङ्गः ।

तस्याऽस्ति भार्या किल “ मञ्जुला ”-ख्या,

धर्मानुरक्ता सरलस्वभावा ॥ ७ ॥

योग-शीतांशु-शून्या-क्षि,-(२०१३) मिते वैक्रमवत्सरे ।

वैशाखस्य सिते पक्षे, तृतीयायां गुरोर्दिने ॥ ८ ॥

पुरे “ वीरमगामे ”ऽस्मिन्, “ गुर्जरा ”-न्तर्गते गतः ।

“ नन्दीसूत्रस्य ” सम्पूर्णां, टीकां तत्प्रार्थितो व्यधाम् ॥ ९ ॥

॥ इति शास्त्रप्रशस्तिः सम्पूर्णा ॥

इति श्रीविश्वविख्यात-जगद्वल्लभ-प्रसिद्धवाचक-

पञ्चदशभाषाकलितललितकलापालापक-प्रवि-

शुद्धगद्यपद्यनैकग्रन्थनिर्मायक-वादिमानमर्दक-

श्रीशाहूछत्रपति-कोल्हापुरराजप्रदत्त-

‘जैनशास्त्राचार्य’-पदभूषित-कोल्हापुर-

राजगुरु-बालब्रह्मचारि-जैनाचार्य-

जैनधर्मदिवाकर-पूज्यश्री-धासीलाल-

व्रतिविरचिता नन्दीसूत्रस्य-

ज्ञानचन्द्रिका टीका सम्पूर्णा ।

॥ शुभं भूयात् ॥

॥ श्रीरस्तु ॥





# દાતાઓની નામાવલી

આદ્યમુરખીશ્રી, મુરખીશ્રી, સહાયક મેમ્બરો  
તથા મેમ્બરોની યાદી

✽

ગામવાર કુકાવારી લીબટ

✽

તા. ૧૮-૧૦-૪૪ થી તા. ૨૦-૫-૫૮ સુધીમાં  
દાખલ થએલ મેમ્બરો,

✽

(રૂા. ૨૫૦ થી ઓછી રકમો આ યાદીમાં સામેલ કરી નથી.)

શ્રી અખિલ ભારત શ્વેતામ્બર સ્થાનકવાસી  
જૈન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિ

ગરેડીઆ કુવારોડ - ગ્રીન લોજ પાસે

રાજકોટ

## આઘમુરખીશ્રીઓ-૪

(ઓછામાં ઓછી રૂ. ૫૦૦૦ ની રકમ આપનાર)

નંબર	નામ	ગામ	રૂપિયા
૧	શેઠ શાન્તીલાલ મંગળદાસભાઈ જાણીતા મીલમાલીક અમદાવાદ		૧૦૦૦૦
૨	શેઠ હરખચંદ કાલીદાસભાઈ વારીયા હા. શેઠ લાલચંદભાઈ. જેચંદભાઈ, નગીનભાઈ, વૃજલાલભાઈ તથા વલ્લભદાસભાઈ ભાણુવડ		૬૦૦૦
૩	કોઠારી જેચંદભાઈ અજરામર હા. હરગોવીંદભાઈ જેચંદભાઈ રાજકોટ		૫૨૫૧
૪	શેઠ ધારશીભાઈ જીવનભાઈ	સોલાપુર	૫૦૦૧

## મુરખીશ્રીઓ-૨૨

(ઓછામાં ઓછી રૂ. ૧૦૦૦ ની રકમ આપનાર)

૧	વકીલ જીવરાજભાઈ વર્ધમાન કોઠારી હ. કહાનદાસભાઈ તથા વેણીલાલભાઈ	જેતપુર	૩૬૦૫
૨	દોશી પ્રભુદાસ મૂળજીભાઈ	રાજકોટ	૩૬૦૪
૩	મહેતા ગુલાબચંદ પાનાચંદ	રાજકોટ	૩૨૮૯૧૧-૧૧
૪	સ્વ. પિતાશ્રી છગનલાલ શામળદાસના સ્મરણાર્થે હ. ભાવસાર ભોગીલાલ છગનલાલ	અમદાવાદ	૩૨૫૧
૫	મહેતા માણેકલાલ અમુલખરાય	ઘાટકોપર	૩૨૫૦
૬	સંઘવી પીતામ્બરદાસ ગુલાબચંદ	જામનગર	૩૧૦૧
૭	શેઠ શામજીભાઈ વેલજીભાઈ વીરાણી	રાજકોટ	૨૫૦૦
૮	નામદાર ઠાકોર સાહેબ લખધીરસિંહજી બહાદુર	મોરબી	૨૦૦૦
૯	શેઠ લહેરચંદ કુંવરજી હા. શેઠ ન્યાલચંદ લહેરચંદ	સિદ્ધપુર	૨૦૦૦
૧૦	શાહ છગનલાલ હેમચંદ વસા હા. મોહનલાલભાઈ તથા મોતીલાલભાઈ	મુંબઈ	૨૦૦૦
૧૧	શ્રી સ્થાનકેવાસી જૈન સંઘ	મોરબી	૧૯૬૩
૧૨	મહેતા સોમચંદ તુલસીદાસ તથા તેમના ધર્મપત્ની અ. સૌ. મણીગૌરી મગનલાલ	રતલામ	૧૫૦૦
૧૩	મહેતા પોપટલાલ માવજીભાઈ	જામજોધપુર	૧૩૦૧
૧૪	દોશી કપુરચંદ અમરશી હા. દલપતરામભાઈ	જામજોધપુર	૧૦૦૨
૧૫	બગડીઆ જગજીવનદાસ રતનશી	દામનગર	૧૦૦૨
૧૬	શેઠ આત્મારામ માણેકલાલ	અમદાવાદ	૧૦૦૧
૧૭	શેઠ માણેકલાલ ભાણુજીભાઈ	પોરબંદર	૧૦૦૧
૧૮	શ્રીમાન ચાંદ્રસિંહજી મહેતા ( રેલ્વે મેનેજર સાહેબ )	કલકત્તા	૧૦૦૧

૧૯	મહેતા સોમચંદ નેણસીભાઈ (કરાંચીવાલા)	મોરબી	૧૦૦૧
૨૦	શાહ હરીલાલ અનોપચંદભાઈ	ખંભાત	૧૦૦૧
૨૧	કોઠારી છખીલદાસ હરખચંદભાઈ	મુંબઈ	૧૦૦૦
૨૨	કોઠારી રંગીલદાસ હરખચંદભાઈ	શિહોર	૧૦૦૦

### સહાયક મેમ્બરો-૪૧

(ઓછામાં ઓછી રૂ. ૫૦૦ ની રકમ આપનાર)

૧	શાહ રંગજીભાઈ મોહનલાલ	અમદાવાદ	૭૫૧
૨	મોદી કેશવલાલ હરીચંદ્ર	સાબરમતી	૭૫૦
૩	શ્રી સ્થાનકવાસી જૈનસંઘ હા. શેઠ જુઝાભાઈ વેલસીભાઈ વઢવાણ શહેર		૭૫૦
૪	શેઠ નરોત્તમદાસ ઓઘડભાઈ	જોરાવરનગર	૭૦૦
૫	શેઠ રતનશી હીરજીભાઈ હા. ગોરધનદાસભાઈ	જામજોધપુર	૫૫૫
૬	ખાટવીયા ગીરધર પ્રમાણુદ હા. અમીચંદભાઈ	ખાખીજાળીઆ	૫૨૭
૭	મોરબીવાળા સંઘવી દેવચંદ નેણસીભાઈ તથા તેમનાં ધર્મપત્ની અ. સૌ. મણીબાઈ તરફથી હ. મુળચંદ દેવચંદ (કરાંચીવાલા) મલાડ		૫૧૧
૮	વોરા મણીલાલ પોપટલાલ	અમદાવાદ	૫૦૨
૯	ગોસલીયા હરીલાલ લાલચંદ તથા અ. સૌ. ચંપાબેન ગોસલીયા અમદાવાદ		૫૦૨
૧૦	પ્રેમચંદ માણેકચંદ તથા અ.સૌ. સમરતબેન(રાજસીતાપુર)અમદાવાદ		૫૦૨
૧૧	શેઠ ઇશ્વરલાલ પુરષોત્તમદાસ	અમદાવાદ	૫૦૧
૧૨	શેઠ ચંદુલાલ છગનલાલ	અમદાવાદ	૫૦૧
૧૩	શાહ શાન્તીલાલ માણેકલાલ	અમદાવાદ	૫૦૧
૧૪	શેઠ શીવલાલ ડમરભાઈ (કરાંચીવાળા)	લીંમડી	૫૦૧
૧૫	કામદાર તારાચંદ પોપટલાલ ધોરાજીવાળા	રાજકોટ	૫૦૧
૧૬	મહેતા મોહનલાલ કપુરચંદ	રાજકોટ	૫૦૦
૧૭	શેઠ ગોવીંદજી પોપટભાઈ	રાજકોટ	૫૦૦
૧૮	શેઠ રામજી શામજી વીરાણી	રાજકોટ	૫૦૧
૧૯	સ્વ. પિતાશ્રી નંદાજીના સ્મરણાર્થે હા. વેણીચંદ શાન્તીલાલ (જાળુઆવાળા)	મેઘનગર	૫૦૧
૨૦	શ્રી સ્થાનકવાસી જૈનસંઘ હા. શેઠ ઠાકરશી કરસનજી	થાનગઢ	૫૦૦
૨૧	શેઠ તારાચંદજી પુખરાજજી	ઔરંગાબાદ	૫૦૦
૨૨	શ્રી સ્થાનકવાસી જૈનસંઘ	ઔરંગાબાદ	૫૦૦
૧૫૦	શેઠ શેષમલજી જીવરાજજી		
૧૨૫	શેઠ અનરાજજી લાલચંદજી		

૧૨૫ ધુકડચંદ્રજી રૂપચંદ્રજી  
૧૦૦ દગડુમલજી ચાંદમલજી

૫૦૦

૨૩	મહેતા મૂળચંદ રાઘવજી હા. મગનલાલભાઈ તથા દુર્લભજીભાઈ ધ્રાક્ષ	૭૫૦
૨૪	શેઠ હરખચંદ પુરૂષોત્તમ હા. ઈન્દુકુમાર ચોરવાડ	૫૦૦
૨૫	શેઠ કેસરીમલજી વસતીમલજી ગુગલીયા રાણાવાસ	૫૦૧
૨૬	સ્થા જૈનસંઘ હા. બાટવીઆ અમીચંદ ગીરધરભાઈ ખાખીબળીઆ	૫૦૧
૨૭	શેઠ ખીમજીભાઈ બાવાભાઈ હા. કુલચંદભાઈ, નાગરદાસભાઈ તથા જમનાદાસભાઈ મુંબઈ	૫૦૧
૨૮	શેઠ મણીલાલ મોહનલાલ ડગલી હા. મુળજીભાઈ મણીલાલ મુંબઈ	૫૦૧
૨૯	સ્વ. કાંતીલાલભાઈના સ્મરણાર્થે હા. શેઠ બાલચંદ સાંકરચંદ મુંબઈ	૫૦૧
૩૦	કામદાર રતીલાલ દુર્લભજી (જેતપુરવાળા) મુંબઈ	૫૦૧
૩૧	શાહ જયંતીલાલ અમૃતલાલ શીવ	૫૦૧
૩૨	વોરા મણીલાલ લક્ષ્મીચંદ શીવ	૫૦૧
૩૩	શેઠ ગુલાબચંદ ભુદરભાઈ ખારરોડ	૫૦૧
૩૪	મહાન ત્યાગી યેન ધીરજકુંવર ચુનીલાલ મહેતા ભાણુવડ	૫૦૧
૩૫	શ્રી સ્થાનકવાસી જૈનસંઘ ધ્રાક્ષ	૫૦૧
૩૬	શ્રી મગનલાલ છગનલાલ શેઠ રાજકોટ	૫૦૧
૩૭	શેઠ ચતુરદાસ ઠાકરશી તથા અ. સૌ. નંદકુંવરબેન તરફથી જામનગર	૫૦૩
૩૮	શેઠ દેવચંદ અમરશી ( યેન ધીરજકુંવરની દિક્ષા પ્રસંગે લેટ ) ભાણુવડ	૫૦૧
૩૯	શ્રી સ્થાનકવાસી જૈનસંઘ ( યેન ધીરજકુંવરની દિક્ષા પ્રસંગે લેટ ) ભાણુવડ	૫૦૧
૪૦	વકીલ વાડીલાલ નેમચંદ શાહ વીરમગામ	૫૦૧
૪૧	મહેતા શાંતિલાલ મણીલાલ હા. કમળાબેન મહેતા અમદાવાદ	૫૫૬

૩૩૫ મેમ્બરોનું ગામવાર લીસ્ટ  
અમદાવાદ તથા પરાંઓ.

૧	શેઠ ગીરધરલાલ કરમચંદ	૨૫૧
૨	શેઠ છોટાલાલ વખતચંદ હા. ફકીરચંદભાઈ	૨૫૧
૩	શાહ કાન્તીલાલ ત્રીલોવનદાસ	૨૫૧
૪	શાહ પોચાલાલ પીતામ્બરદાસ	૨૫૧
૫	શાહ પોપટલાલ મોહનલાલ	૨૫૧

૬	શેઠ પ્રેમચંદ સાકરચંદ	૨૫૦
૭	શાહ રતીલાલ વાઠીલાલ	૨૫૧
૮	શેઠ લાલભાઈ મંગળદાસ	૨૫૧
૯	સ્વ. અમૃતલાલ દેશાઈ	
	હા. કાનજીભાઈ અમૃતલાલ વર્ધમાનના સ્મરણાર્થે	૨૫૧
૧૦	ભાવસાર ભોગીલાલ જમનાદાસ (પાટણવાળા)	૨૫૧
૧૧	શાહ નટવરલાલ ચંદુલાલ	૨૫૧
૧૨	શાહ નરસિંહદાસ ત્રીભોવનદાસ	૨૫૧
૧૩	શ્રી શાહપુર દરીયાપુરી આઠકોટી સ્થા. જૈન ઉપાશ્રય	
	હા. વહીવટ કર્તા શેઠ ઇશ્વરલાલ પુરૂષોત્તમદાસ	૨૫૧
૧૪	શ્રી છીયાપોળ દરીયાપુરી આઠકોટી સ્થા. જૈનસંઘ હા. ચંદુલાલ અમૃતલાલ	૨૫૧
૧૫	શાહ ચીનુભાઈ બાલાભાઈ C/o શાહ બાલાભાઈ મહાસુખરામ	૨૫૧
૧૬	શાહ ભાઈલાલ ઉજમશી	૨૫૧
૧૭	શ્રી સુખલાલ ડી. શેઠ હા. ડો. કુ. સરસ્વતીબહેન શેઠ	૨૫૧
૧૮	શ્રી સૌરાષ્ટ્ર સ્થા. જૈનસંઘ હા. શાહ કાન્તીલાલ જીવણલાલ	૨૫૧
૧૯	મોદી નાથાલાલ મહાદેવદાસ	૨૫૧
૨૦	શાહ મોહનલાલ ત્રીકમદાસ	૨૫૧
૨૧	શ્રી છકોટી સ્થા. જૈનસંઘ હા. પોચાલાલ પીતામ્બરદાસ	૨૫૧
૨૨	શેઠ પોપટલાલ હંસરાજના સ્મરણાર્થે હા. શેઠ બાબુલાલ પોપટલાલ	૨૫૧
૨૩	દેશાઈ અમૃતલાલ વર્ધમાન બાપોદરાવાળા	
	હા. ભાઈલાલ અમૃતલાલ દેશાઈ	૨૫૧
૨૪	શાહ નવનીતલાલ અમુલખરાય	૨૫૧
૨૫	શાહ મણીલાલ આશારામ	૨૫૧
૨૬	શાહ ચીનુભાઈ સાકરચંદ	૨૫૧
૨૭	શાહ વરજીવનદાસ ઉમેદચંદ	૨૫૧
૨૮	શાહ રજનીકાન્ત કસ્તુરચંદ	૨૫૧
૨૯	સંઘવી જીવણલાલ છગનલાલ (સ્થા. જૈન)	૨૫૧
૩૦	શાહ શાંતિલાલ મોહનલાલ ધ્રાંગધ્રાવાળા	૨૫૧
૩૧	અ. સૌ. બેન રતનભાઈ નાદેચા હા. શાહ ધુલાજી ચંપાલાલજી	૨૫૧
૩૨	શાહ હરિલાલ જેઠાલાલ ભાડલાવાળા	૨૫૧
૩૩	શ્રી સરસપુર દરીયાપુરી આઠકોટી સ્થા. જૈન ઉપાશ્રય	
	હા. ભાવસાર ભોગીલાલ છગનલાલ	૨૫૧



૩૪	શેઠ પુખરાજી સમતીરામજી સાદડીવાળા	૨૫૧
૩૫	શેઠ લાલચંદ મીશ્રીલાલ	૨૫૧
૩૬	સ્વ. પિતાશ્રી જવાહીરલાલજી તથા પૂજ્ય ચાચાજી હનરીમલજી ખારડીયાના સ્મરણાર્થે હા. મૂળચંદ જવાહરલાલ	૨૫૧
૩૭	સ્વ. ભાવસાર બખાભાઈ (મંગળદાસ) પાનાચંદના સ્મરણાર્થે હા. તેમના ધર્મપત્ની પુરીબેન	૨૫૧
૩૮	સ્વ. પિતાશ્રી રવજીભાઈ તથા સ્વ. માતૃશ્રી મૂળીબાઈના સ્મરણાર્થે હા. કકલભાઈ કોઠારી	૩૦૧
૩૯	ભાવસાર કેશવલાલ મગનલાલ	૨૫૧
૪૦	શાહ કેશવલાલ નાનચંદ જાખડાવાળા હા. પાર્વતીબેન	૨૫૧
૪૧	શાહ જીતેન્દ્રકુમાર વાડીલાલ માણેકચંદ રાજસીતાપુરવાળા(સાબરમતી)	૨૫૧
૪૨	શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ (સાબરમતી)	૨૫૦
૪૩	બીપીનચંદ્ર તથા ઉમાકાંત ચુનીલાલ ગોપાણી (રાણપુરવાળા)	૩૦૧
૪૪	ભાવસાર છોટાલાલ છગનલાલ	૨૫૧
૪૫	ભાવસાર સકરાભાઈ છગનલાલ	૨૫૧
૪૬	અ. સૌ. જીવીબેન રતીલાલ હા. ભાવસાર રતીલાલ હરગોવિંદદાસ	૨૫૧
૪૭	સંઘવી બાલુભાઈ કમળશી તથા તેમનાં ધર્મપત્નિઓ અ. સૌ. ચંપાબેન તથા વસંતબેન તરફથી	૨૫૧
૪૮	અ. સૌ. વિદ્યાબેન વનેચંદ દેશાઈ હા. ભૂપેન્દ્રકુમાર વનેચંદ દેશાઈ	૨૫૧
૪૯	સ્વ. પારેખ નાનચંદ ગોવિંદજી મોરબીવાળાના સ્મરણાર્થે હા. રતીલાલ નાનચંદ પારેખ	૩૦૧

### અમદાનેર

૧	શાહ નાગરદાસ વાઘજીભાઈ	૨૫૧
૨	શ્રી સ્થા. જૈનસંઘ હા. શાહ ગાંડાલાલ ભીખાલાલ	૨૫૧

### આણંદ

૧	શેઠ રમણીકલાલ એ. કપાસી હ. મનસુખલાલભાઈ	૨૫૧
---	--------------------------------------	-----

### આસનસોલ

૧	બાવીસી મણીલાલ ચત્રભુજના સ્મરણાર્થે તેમનાં ધર્મપત્નિ મણીબાઈ તરફથી હા. રસીકલાલ, અનીલકાંત, વિનોદરાય	૨૫૧
---	---	-----

### આટકોટ

૧	શાહ ચુનીલાલ નારણજી	૩૦૧
---	--------------------	-----

### ઉદેપુર

૧	શેઠ મોતીલાલજી રણજીતલાલજી હીંગડ	૨૫૧
---	--------------------------------	-----

- ૨ શેઠ મગનલાલજી બાગરેયા ૨૫૧
- ૩ અ. સૌ. ખડેન ચંદ્રાવતી તે શ્રીમાન બહોતલાલજી નાહરનાં  
ધર્મપત્ની હા. શેઠ રણુજીતલાલજી હીંગલ ૨૫૧
- ૪ સ્વ. શેઠ કાળુલાલજી લોઢાના સ્મરણાર્થે હા. શેઠ દોલતસિંહજી લોઢા ૨૫૧
- ૫ સ્વ. શેઠ પ્રતાપમલજી સાખલાના સ્મરણાર્થે  
હા. પ્રાણુલાલ હીરાલાલ સાખલા ૨૫૧
- ૬ પૂજ્ય પિતાશ્રી મોતીલાલજી મહેતાના સ્મરણાર્થે  
હા. રણુજીતલાલજી મોતીલાલજી મહેતા ૨૫૧
- ૭ શેઠ છગનલાલ બાગરેયા ૨૫૧

### ઉમરગાંવરોડ

- ૧ શાહ મોહનલાલ પોપટલાલ પાનેલીવાળા ૨૫૧

### ઉપલેટા

- ૧ શેઠ જેઠાલાલ ગોરધનદાસ ૨૫૧
- ૨ સ્વ. યેન સંતોકયેન કચરા હા, ઓગમચંદભાઈ,  
છોટાલાલભાઈ તથા અમૃતલાલભાઈ વાલજી (કલ્યાણવાળા) ૨૫૧
- ૩ શેઠ ખુશાલચંદ કાનજીભાઈ હા. શેઠ પ્રતાપભાઈ ૨૫૧
- ૪ સંઘાણી મૂળશંકર હરજીવનભાઈના સ્મરણાર્થે  
હા. તેમના પુત્રો જયંતીલાલભાઈ તથા રમણીકલાલ ૨૫૧
- ૫ દોશી વિકૃલજી હરખચંદ ( આગળના રૂા. ૧૫૧ મળીને ) ૨૫૧

### એડન કેમ્પ

- ૧ શાહ ગોકળદાસ શામજી ઉદાણી ૨૫૧

### કલોલ

- ૧ શેઠ મોહનલાલ જેઠાભાઈના સ્મરણાર્થે હા. શેઠ આત્મારામ મોહનલાલ ૨૫૧
- ૨ ડો. માયાચંદ મગનલાલ શેઠ હા. ડો. રતનચંદ માયાચંદ ૨૫૧
- ૩ સ્વ. નાથાલાલ જિમેદચંદના સ્મરણાર્થે હા. શાહ રતીલાલ નાથાલાલ ૨૫૧
- ૪ શાહ મણીલાલ તલકચંદના સ્મરણાર્થે હા. મારફતીયા ચંદુલાલ મણીલાલ ૨૫૧

### કડી

- ૧ શ્રી સ્થા. દરીયાપુરી જૈન સંઘ હા. ભાવસાર દામોદરદાસ ઈશ્વરભાઈ ૨૫૧

### કાનપુર

- ૧ શાહ રમણીકલાલ પ્રેમચંદ ( આગળના રૂા. ૧૫૦ મળીને ) ૩૦૦

### કુંદણી:-(આટકોટ)

- ૧ દોશી રતીલાલ ટોકરશી ૨૫૧

## કોલકી

- ૧ પટેલ ગોવીંદલાલ ભગવાનજી ૨૫૧  
 ૨ પટેલ ખીમજી જેઠાભાઈ વાઘણી(તેમના સ્વ. સુપુત્ર રામજીભાઈ સ્મરણાર્થે) ૩૦૨

## ખાખીજીયા

- ૧ ખાટવીયા ગુલાબચંદ લીલાધર (આગળના રૂ. ૧૫૧ મળીને) ૨૫૧  
 ખીચન

- ૧ શેઠ કીશનલાલ પૃથ્વીરાજ ૩૫૨

## અંભાત

- ૧ શેઠ માણેકલાલ ભગવાનદાસ ૨૫૧  
 ૨ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હા. પટેલ કાન્તીલાલ અંબાલાલ ૨૫૧  
 ૩ શાહ સાકરચંદ મોહનલાલ ૨૫૧  
 ૪ શાહ ચંદુલાલ હરીલાલ ૨૫૧

## ગુંદા

- ૧ સ્વ. મહેતા પુનમચંદ ભવાનભાઈના સ્મરણાર્થે  
 હા. તેમનાં ધર્મપત્નિ દીવાળીબેન લીલાધર ૨૫૧

## ગોંડલ

- ૧ સ્વ. બાખડા વચ્છરાજ તુલસીદાસનાં ધર્મપત્નિ કમળબાઈ તરફથી  
 હા. માણેકચંદભાઈ તથા કપુરચંદભાઈ ૨૫૧  
 ૨ પીપળીઆ લીલાધર દામોદર તરફથી તેમનાં ધર્મપત્ની અ. સૌ.  
 લીલાવતી સાકરચંદ કોઠારીના બીજા વરસીતપની ખુશાલીમાં ૩૦૧  
 ૩ કામદાર જીઠાલાલ કેશવજીના સ્મરણાર્થે હા. હરીલાલ જીઠાભાઈ ૩૦૧

## ગોધરા

- ૧ શાહ ત્રીલોવનદાસ છગનલાલ ૩૦૧

## ઘટકણુ

- ૧ શાહ ચંદુલાલ કેશવલાલ ૨૫૧

## ઘોલવાડ (થાણા)

- ૧ મહેતા ગુલાબચંદજી ગંભીરલાલજી ૩૦૦

## ચુડા (બાલાવાડ)

- ૧ શ્રી સ્થા. જૈનસંઘ હા. રતીલાલ ગાંધી પ્રમુખ ૨૫૧

## જલેસર (બાલાસોર)

- ૧ સંઘવી નાનચંદ પોપટભાઈ ચાનગઢવાળા ૨૫૧

## જામજોધપુર

- ૧ શ્રી સ્થા. જૈનસંઘ ૩૮૭

૨	શાહ ત્રીલોચનદાસ ભગવાનજી પાનેલીવાળા	૨૫૧
૩	દોશી માણેકચંદ ભવાન (આગળના રૂ. ૧૫૧ મળીને)	૨૫૧
૪	પટેલ લાલજી જુઠાભાઈ (આગળના રૂ. ૧૫૧ મળીને)	૨૫૧
૫	શેઠ બાવનજી જેઠાભાઈ (આગળના રૂ. ૧૫૧ મળીને)	૨૫૧

### જામનગર

૧	શેઠ છોટાલાલ કેશવજી	૨૫૧
૨	વોરા ચીમનલાલ દેવજીભાઈ	૨૫૧

### જામખંભાળીઆ

૧	શેઠ વસનજી નારણજી	૨૫૧
૨	શ્રી સ્થા. જૈનસંઘ હા. મહેતા રણછોડદાસ પરમાનંદ	૨૫૧
૩	સંઘવી પ્રાણુલાલ લવજીભાઈ	૨૫૧

### જુનાગઢ

૧	શાહ મણીલાલ મીઠાભાઈ હા. હરીલાલભાઈ (હાટીના માળીઆવાળા)	૨૫૧
---	---	-----

### જુનારદેવ (મધ્ય પ્રાંત)

૧	ઘેલાણી ત્રીકમજી લાધાભાઈ	૨૫૧
---	-------------------------	-----

### જેતપુર

૧	શેઠ અમૃતલાલ હીરજીભાઈ હા. નરભેરામ (જસાપુરવાળા)	૨૫૧
૨	દોશી છોટાલાલ વનેચંદ	૨૫૧
૩	કોઠારી ડાલરકુમાર વેણીલાલ	૨૫૧

### જેતલસર

૧	શાહ લક્ષ્મીચંદ કપુરચંદ	૨૫૧
૨	કામદાર લીલાધર જીવરાજના સ્મરણાર્થે તેમનાં ધર્મપત્નિ જખકબેન તરફથી હા. શાન્તીલાલભાઈ ગોંડલવાળા	૨૫૧

### ડભાસ

૧	સ્વ. તુરખીઆ લહેરચંદ માણેકચંદના સ્મરણાર્થે તેમનાં ધર્મપત્નિ જીવતીબાઈ તરફથી હા. જયંતીભાઈ	૨૫૧
---	--	-----

### ડોંડાઈઆ

૧	શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હા. શેઠ ચંપાલાલજી મારવે	૨૫૦
---	--	-----

### થાનગઢ

૧	શાહ ઠાકરશીભાઈ કરશનજી	૨૫૧
૨	શેઠ જેઠાલાલ ત્રીલોચનદાસ	૨૫૧
૩	શાહ ધારશી પાશવીર હા. સુખલાલભાઈ	૨૫૧

## દહાણુ રોડ (થાણા)

૧ શાહ હરજીવનદાસ ઓઘડ ખંધાર (કરાંચીવાળા) ૨૫૧  
દિલ્હી

૧ લાલા પૂર્ણચંદ જૈન (સેન્ટ્રલ બેંકવાળા) ૩૫૧  
ધાર (મધ્યપ્રાંત)

૧ શેઠ સાગરમલ જી પનાલાલ જી ૨૫૧  
ધાંગધા

૧ શ્રી સ્થા. જૈન મોટા સંઘ હા. શેઠ માવજીભાઈ જીવરાજ ૨૫૧

૨ સંઘવી નારણદાસ વખતચંદ ૩૦૧

૩ ઠક્કર નારણદાસ હરગોવીંદદાસ ૨૫૧

## ધારાજી

૧ મહેતા પ્રભુદાસ મૂળજીભાઈ ૩૫૧

૨ સ્વ. પિતાશ્રી ભગવાનજી કચરાભાઈના સ્મરણાર્થે  
હા. પટેલ દલીચંદ ભગવાનજી ૨૫૧

૩ અ. સૌ. બચીબેન બાબુભાઈ ૨૫૧

૪ ધી નવસૌરાષ્ટ્ર ઓઘલ મીલ પ્રા. લીમીટેડ ૨૫૧

૫ સ્વ. રાયચંદ પાનાચંદ શાહના સ્મરણાર્થે હા. ચીમનલાલ રાયચંદ ૩૦૧

૬ ગાંધી પોપટલાલ જેચંદ ૨૫૦

૭ દેશાઈ છગનલાલ ડાહ્યાભાઈ લાઠવાળાનાં ધર્મપત્ની દિવાળીબેન  
તરફથી હા. કુમારી હસુમતી ૨૫૧

## ધંધુકા

૧ ભાવસાર ખોડીદાસ ગણેશભાઈ ૨૫૧

૨ શેઠ પોપટલાલ ધારશી ૨૫૧

૩ સ્વ. ગુલાબચંદભાઈના સ્મરણાર્થે હા. વેરા પોપટલાલ નાનચંદ ૨૫૧

૪ વસાણી ચત્રભુજ વાઘજીભાઈ ૨૫૧

## નંદુરબાર

૧ શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ હા. શેઠ પ્રેમચંદ ભગવાનલાલ ૨૫૦

## પાણસાણા

૧ શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ ૨૫૧

## પાલણપુર

૧ લક્ષ્મીબેન હા. મહેતા હરીલાલ પીતામ્બરદાસ ૨૫૧

૨ શ્રી લોકાગચ્છ સ્થાનકવાસી જૈન પુસ્તકાલય ૨૫૧

## પાલેજ

- ૧ સ્વ. મનસુખલાલ મોહનલાલ સંઘવીના સ્મરણાર્થે  
હા. ભાઈ ધીરજલાલ મનસુખલાલ ૩૦૧  
બરવાળા (ઘેલશા)
- ૨ સ્વ. મોહનલાલ નરસીદાસના સ્મરણાર્થે  
હા. તેમનાં ધર્મપત્નિ સુરજબેન મોરારજી ૨૫૧  
બગસરા (ભાયાણી)
- ૧ સ્વ. પૂજ્ય માતુશ્રી જકલબાઈના સ્મરણાર્થે  
હા. દેશાઈ વ્રજલાલ કાળીદાસ ૨૫૧
- ૨ શેઠ પોપટલાલ રાઘવજી રાયડીવાળા હા. શેઠ માનસંગ પ્રેમચંદ ૨૫૧  
બેરાજ (કચ્છ)
- ૧ શેઠ ગાંગજી કેશવજી (જ્ઞાનભંડાર માટે) ૨૫૧  
બેંગલોર
- ૧ બાટવીયા વનેચંદ અમીચંદ મહાવીર ટેક્ષટાઇલ સ્ટોર તરફથી  
ભાઈ ચંદ્રકાંતની લગ્નની ખુશાલીમાં ૨૫૨  
બોટાદ
- ૧ સ્વ. વસાણી હરગોવિંદદાસ છગનલાલના સ્મરણાર્થે  
હા. તેમનાં ધર્મપત્નિ છબલબેન ૨૫૧
- ૨ શ્રી સ્થાનકવાસી જૈનસંઘ (૨૫૦ બાકી) ૨૫૧  
બોડેલી
- ૧ શાહ પ્રવીણચંદ્ર નરસીદાસ (સાષ્ટંદવાળા) ૨૫૧
- ૨ શાહ ગીરધરલાલ સાકરચંદ ૨૫૧
- ભાણુવડ
- ૧ શેઠ જેચંદલાઈ માણેકચંદ ૩૫૧
- ૨ સંઘવી માણેકચંદ માધવજી ૨૫૧
- ૩ શેઠ લાલજીભાઈ માણેકચંદ (લાલપુરવાળા) ૨૫૧
- ૪ શેઠ રામજી જીજીભાઈ ૨૫૧
- ૫ શેઠ પદમશી લીમજી ફેફરીઆ ૨૫૧
- ૬ ફેફરીઆ ગાંડાલાલ કાનજીભાઈ હા. અ. સૌ. શાંતાબેન વસનજી ૨૫૧
- ૭ વકીલ મણીલાલ ખેંગારભાઈ પૂનાતર ૨૫૧
- ભોળાય (કચ્છ)
- ૧ જ્ઞાન મંદિરના સેક્રેટરી શાહ કુંવરજી જીવરાજ ૨૫૧



## મદ્રાસ

- ૧ શેઠ મેઘરાજજી દેવચંદજી ૨૫૧
- મનોર (થાણા)
- ૧ શાહ શેરમલજી દેનીચંદજી જસવંતગઢવાળા ૨૫૧
- હા. પૂનમચંદજી શેરમલજી બોદ્યા
- માનકુવા (કચ્છ)
- ૧ સ્વ. મહેતા કુંવરજી નાથાલાલના સ્મરણાર્થે ૨૫૧
- હા. તેમનાં ધર્મપત્નિ કુંવરબાઈ હરખચંદ
- ( માનકુવા સ્થાનકવાસી જૈનસંઘ માટે )
- મુંબાઈ તથા પરાંઓ
- ૧ શેઠ છગનલાલ નાનજીભાઈ ૨૫૧
- ૨ શાહ હરજીવન કેશવજી ૨૫૧
- ૩ ઘેલાણી પ્રભુલાલ ત્રીકમજી (બોરીવલી) ૨૫૨
- ૪ શેઠ છોટુભાઈ હરગોવિંદદાસ કટોરીવાલા ૨૫૧
- ૫ શ્રી વર્ધમાન સ્થા. જૈન સંઘ હા. કેસરીમલજી ૨૫૧
- અનોપચંદજી શુગળીયા ( મલાડ )
- ૬ શેઠ કુંગરશી હંસરાજ વીસરીયા. ૨૫૧
- ૭ શાહ રમણીકલાલ કાળીદાસ તથા અ. સૌ. કાન્તાબેન રમણીકલાલ ૨૫૧
- ૮ શાહ હિંમતલાલ હરજીવનદાસ ૨૫૧
- ૯ શાહ રતનશી મોણશીની કંપની ૨૫૧
- ૧૦ શાહ શીવજી માણેક ( કચ્છ બેરાળવાળા ) ૨૫૧
- ૧૧ વોદા પાનાચંદ સંઘવીના સ્મરણાર્થે ૨૫૧
- હા. ત્રંબકલાલ પાનાચંદ એન્ડ બ્રધર્સ
- ૧૨ સ્વ. પૂ. પિતાશ્રી વીરચંદ જેસીંગભાઈ લખતરવાળાના ૨૫૧
- સ્મરણાર્થે હા. કેશવલાલ વીરચંદ શેઠ
- ૧૩ શા. કુંવરજી હંસરાજ ૨૫૧
- ૧૪ સ્વ. માતુશ્રી માણેકબેનના સ્મરણાર્થે
- હા. શેઠ વલ્લદાસ નાનજી (પોરબંદરવાળા) ૩૦૧
- ૧૫ શેઠ દેવરાજજી જીતમલજી પૂનમીયા સાદડીવાળા ૨૫૧
- ૧૬ એક સફળહસ્થ હા. શેઠ મુંદરલાલ માણેકચંદ ૨૫૧
- ૧૭ અ. સૌ. પાનબાઈ હા. શેઠ પદમશી નરસિંહભાઈ (મલાડ) ૨૫૧
- ૧૮ શ્રીચુત અમૃતલાલ વર્ધમાન બાપોદરાવાળા હા. દલીચંદ અમૃતલાલ ૨૫૧
- ૧૯ સ્વ. શાહ નાગાશી સેજપાળ શુંદાળાવાળાના સ્મરણાર્થે
- હા. રામજી નાગશી (મલાડ) ૩૦૧

૨૦	શાહ રામજી કરશનજી થાનગઢવાળા	૨૫૧
૨૧	શાહ નગીનદાસ કલ્યાણજી વેરાવળવાળા	૨૫૧
૨૨	શીવલાલ ગુલાબચંદ શેઠ મેવાવાળા	૨૫૧
૨૩	સ્વ. જટાશંકર દેવજી દોશીના સ્મરણાર્થે હા. રણછોડદાસ (ખાખુલાલ) જટાશંકર દોશી	૩૦૧
૨૪	સ્વ. ગોડા વણારશી ત્રીલોવન સરસઈવાળાના સ્મરણાર્થે હા. જગજીવન વણારશી ગોડા (મલાડ)	૨૫૧
૨૫	સ્વ. ત્રીલોવનદાસ વ્રજપાળ વીંછીયાવાળાના સ્મરણાર્થે હા. હરગોવિંદદાસ ત્રીલોવનદાસ અજમેરા	૨૫૧
૨૬	સ્વ. કાનજી મૂળજીના સ્મરણાર્થે તથા માતૃશ્રી દિવાળીબાઈના ૧૬ ઉપવાસના પારણા પ્રસંગે હા. જયંતીલાલ કાનજી કાળાવડવાળા (મલાડ)	૨૫૧
૨૭	શેઠ ખુશાલભાઈ ખેંગારભાઈ	૨૫૦
૨૮	શાહ પ્રેમજી માલશી ગંગર (મલાડ)	૨૫૧
૨૯	સ્વ. પિતાશ્રી પતુભાઈ મોનાભાઈના સ્મરણાર્થે હા. શાહ કાનજી પતુભાઈ (મલાડ)	૨૫૧
૩૦	શાહ વેલજી જેશીંગભાઈ છાસરાવાળા તરફથી તેમનાં ધર્મપત્નિ અ. સૌ. સ્વ. નાનબાઈના સ્મરણાર્થે	૩૦૧
૩૧	સ્વ. પિતાશ્રી રામશી વેલજીના સ્મરણાર્થે હા. શાહ દામજી રામશી (મલાડ)	૩૦૧
૩૨	શેઠ ત્રંબકલાલ કસ્તુરચંદ લીંબડીવાળા તરફથી શ્રી અજરામર શાસ્ત્રલંકાર લીંબડી માટે (માઠુંગા)	૨૫૧
૩૩	સ્વ. પિતાશ્રી ભીમજી કોરશી તથા માતૃશ્રી પાલાબાઈના સ્મરણાર્થે હા. શાહ ઉમરશીભાઈ ભીમશી કચ્છપતરીવાળા (મલાડ)	૩૦૧
૩૪	શેઠ ચુનીલાલ નરભેરામ વેકરીવાળા	૨૫૧
૩૫	શાહ વૃન્નંગભાઈ શીવજી (મલાડ)	૨૫૧
૩૬	સ્ત્રીલાલ ભાઈચંદ મહેતા	૨૫૧
૩૭	શાહ ખીમજી મૂળજી પૂન્ન (મલાડ)	૨૫૧
૩૮	મેસર્સ સવાણી ટ્રાન્સપોર્ટ કંપની હા. શેઠ માણિકલાલ વાડીલાલ	૨૫૧
૩૯	ઘેલાણી વલ્લજી નરભેરામ હા. નરસીભાઈ વલ્લજી	૨૫૧
૩૦	અ. સૌ. સમતાબેન શાન્તીલાલ C/o શાન્તીલાલ ઉજમશી શાહ(મલાડ)	૨૫૧
૪૧	તેજાણી કુબેરદાસ પાનાચંદ	૨૫૧

૪૨	કપાસી મોહનલાલ શીવલાલ	૨૫૧
૪૩	સ્વ. પિતાશ્રી કેશવલાલ વછરાજ કોઠારીના સ્મરણાર્થે સુરજબેન તરફથી હા. તનસુખલાલભાઈ (મલાડ)	૨૫૧
૪૪	દડીયા અમૃતલાલ મોતીચંદ (ઘાટકોપર)	૨૫૧
૪૫	શેઠ સરદારમલભાઈ દેવીચંદભાઈ કાવેડીયા (સાદડીવાળા)	૨૫૧
૪૬	દોશી ચત્રભુજ સુંદરભાઈ (ઘાટકોપર)	૨૫૧
૪૭	દોશી જીગલકીશોર ચત્રભુજ (ઘાટકોપર)	૨૫૧
૪૮	દોશી પ્રવીણચંદ્ર ચત્રભુજ (ઘાટકોપર)	૨૫૧
૪૯	શાહ ત્રીલોવનદાસ માનસિંગ દોઢીવાળાના સ્મરણાર્થે હા. શાહ હરખચંદ ત્રીલોવનદાસ	૨૫૧
૫૦	શાહ જેઠાલાલ ડામરશી ધાંગધાવાળા હા. શાહ વાડીલાલ જેઠાલાલ	૨૫૦
૫૧	શાહ ચંદુલાલ કેશવલાલ	૨૫૧
૫૨	સ્વ. પિતાશ્રી શામળભાઈ કલ્યાણભાઈ ગોંડલવાળાના સ્મરણાર્થે તેમના પુત્રો તરફથી હા. વૃજલાલ શામળભાઈ બાવીશી	૩૦૧
૫૩	શાહ પ્રેમભાઈ હીરભાઈ ગાલા	૨૫૧
૫૪	સ્વ. પિતાશ્રી ભગવાનભાઈ હીરાચંદ જસાણીના સ્મરણાર્થે હા. લક્ષ્મીચંદ તથા કેશવલાલભાઈ	૩૦૧
૫૫	સ્વ. પિતાશ્રી હંસરાજ હીરાના સ્મરણાર્થે હા. દેવશી હંસરાજ કચ્છ ખીડાલાવાળા (મલાડ)	૨૫૧
૫૬	સ્વ. માતૃશ્રી ગોમતીબાઈના સ્મરણાર્થે હા. શાહ પોપટલાલ પાનાચંદ	૨૫૧
૫૭	શેઠ નેમચંદ સ્વરૂપચંદ ખંભાતવાળા હા. ભાઈ જેઠાલાલ નેમચંદ	૨૫૧
૫૮	સ્વ. પિતાશ્રી શાહ અંબાલાલ પરસોતમ પાણશણવાળાના સ્મરણાર્થે તેમનાં પુત્રો તરફથી હા. બાપાલાલભાઈ	૨૫૧
૫૯	બેન કેશરભાઈ ચંદુલાલ જેસીંગલાલ શાહ	૨૫૧
૬૦	દડીયા જેસીંગલાલ ત્રીકમભાઈ	૨૫૧
૬૧	શાહ કાન્તીલાલ મગનલાલ (ઘાટકોપર)	૨૫૧
૬૨	કોઠારી સુખલાલભાઈ પૂનમચંદભાઈ (ખાર)	૨૫૧
૬૩	સ્વ. માતૃશ્રી કડવીબાઈના સ્મરણાર્થે હા. તેમનાં પૌત્ર હકમીચંદ તારાચંદ દોશી (કાંદીવલી)	૨૫૧
૬૪	શેઠ સારાભાઈ ચીમનલાલ	૨૫૧
૬૫	શાહ કેરશીભાઈ હીરભાઈ	૩૦૧

- ૬૬ પિતાશ્રી કુંદનમલજી મોતીલાલજીના સ્મરણાર્થે  
હા. મોતીલાલ જીખરમલ (અહમદનગરવાળા) ૨૫૧
- ૬૭ શ્રી વર્ધમાન શ્રવેતામ્બર સ્થા. જૈન સંઘ  
હા. શેઠ રૂપચંદ શીવલાલ કામદાર (અંધેરી) ૨૫૧
- ૬૮ અ. સૌ. કમળાબેન કામદાર હા. રૂપચંદ શીવલાલ (અંધેરી) ૨૫૧
- ૬૯ ધી મરીના મોડર્ન હાઇસ્કુલ ટ્રસ્ટ ફંડ હા. શાહ મણીલાલ ઠાકરશી. ૨૫૧
- ૭૦ સ્વ. માતૃશ્રી જીવીબાઈના સ્મરણાર્થે  
હા. શામજી શીવજી કચ્છ ગુંદાળાવાળા ( ગોરેગાંવ ) ૨૫૧
- ૭૧ શાહ રાવજીભાઈ તથા ભાઈલાલભાઈની કંપની (કાંદીવલી) ૨૫૧
- ૭૨ અ. સૌ. લાહુબેન હા. રવજી શામજી (કાંદીવલી) ૨૫૧
- ૭૩ અ. સૌ. બેન કુંદનગૌરી મનહરલાલ સંઘવી (ખારરોડ) ૨૫૧
- ૭૪ શાહ કરશન લધુભાઈ (દાદર) ૩૦૧
- ૭૫ અ. સૌ. રંજનગૌરી ચંદુલાલ શાહ C/o ચંદુલાલ લક્ષ્મીચંદ (માટુંગા) ૨૫૧
- ૭૬ મહેતા મોટર સ્ટોર્સ હ. અનોપચંદ ડી. મહેતા (મુંબઈ) ૨૫૧
- ૭૭ શેઠ મનુભાઈ માણેકચંદ હા. ઓટકીયા નરભેરામ મોરારજી (ઘાટકોપર) ૨૫૧
- ૭૮ ખેતાણી મણીલાલ કેશવજી (વડીયાવાળા) ઘાટકોપર ૨૫૧
- ૭૯ સ્વ. કસ્તુરચંદ અમરશીના સ્મરણાર્થે હા. તેમનાં ધર્મપત્નિ  
ઝવેરબેન મગનલાલની વતી-જયંતીલાલ કસ્તુરચંદ મશ્કારીયા  
(ચુડાવાળા) ૨૫૧

### માંડવી (કચ્છ)

- ૧ શ્રી સ્થા. કોટી જૈન સંઘ હા. મહેતા ચુનિલાલ વેલજી ૨૭૭  
મેસાણા
- ૧ શાહ પદમશી સુરચંદના સ્મરણાર્થે હા. શીવલાલ પદમસી વીરમગામવાળા ૨૫૧  
મોમ્બાસા

- ૧ શાહ દેવરાજ પેથરાજ ૨૫૦
- ૨ શ્રીચુત નાથાલાલ ડી. મહેતા ૨૫૧

### યાદગીરી

- ૧ શેઠ બાદરમલજી સૂરજમલજી બેન્કર્સ, ૨૫૦
- રાણપુર (ઝાલાવાડ)
- ૧ શ્રીમતી માતૃશ્રી અમૃતબાઈના સ્મરણાર્થે  
હા. ડૉ. નરોત્તમદાસ ચુનીલાલ ૨૫૧

## રાણાવાસ (મારવાઠ)

૧ શેઠ જવાનમલજી નેમીચંદજી હા. બાબુ રીખબચંદજી ૩૦૧

## રાજકોટ

- ૧ ધી વાડીલાલ ડાઇંગ એન્ડ પ્રિન્ટીંગ વર્ક્સ ૪૦૦  
 ૨ શેઠ રતીલાલ ન્યાલચંદ ૨૫૧  
 ૩ બાબુ પરશુરામ જગનલાલ શેઠ (ઉદ્દેપુરવાળા) ૨૫૦  
 ૪ શેઠ મનુભાઈ મુળચંદ (એન્જનીઅર સાહેબ) ૨૫૧  
 ૫ શેઠ શાન્તીલાલ પ્રેમચંદ તેમનાં ધર્મપત્નિના વરસીતપ પ્રસંગે ૨૫૧  
 ૬ ઉદાણી ન્યાલચંદ હાકેમચંદ વકીલ ૨૫૧  
 ૭ શેઠ પ્રજારામ વીઠ્ઠલજી ૨૫૧  
 ૮ શેઠ હકમીચંદ દીપચંદ (ગોંડલવાળા) રટેશન માસ્તર ૨૫૧  
 ૯ બહેન સચુબાળા નૌત્તમલાલ જસાણી (વરસીતપની ખુશાલી) ૨૫૧  
 ૧૦ મોદી સૌભાગ્યચંદ મોતીચંદ ૨૫૧  
 ૧૧ બહાણી ભીમજી વેલજી તરફથી તેમનાં ધર્મપત્નિ  
 અ. સૌ. સમરતબેનના વરસીતપની ખુશાલી ૨૫૧  
 ૧૨ દોશી મોતીચંદ ધારશીભાઈ ( રીટાયર્ડ એન્જનીઅર સાહેબ ) ૨૫૧  
 ૧૩ કામદાર ચંદુલાલ જીવરાજ ૨૫૦  
 ૧૪ હેમાણી ઘેલુભાઈ સવચંદ ૨૫૧

## રંગુન

૧ કામદાર ગોરધનદાસ મગનલાલનાં ધર્મપત્નિ અ. સૌ. કમળાબેન ૨૫૧

## લાખતર

- ૧ શાહ રાયચંદ ઠાકરશીના સ્મરણાર્થે હા. શાહ શાન્તીલાલ રાયચંદ ૨૫૧  
 ૨ ભાવસાર હરજીવનદાસ પ્રભુદાસના સ્મરણાર્થે  
 હા. ભાઈ ત્રીભોવનદાસ હરજીવનદાસ ૨૫૧  
 ૩ શાહ તલકશી હીરાચંદના સ્મરણાર્થે હા. ભાઈ અમૃતલાલ તલકશી ૨૫૧  
 ૪ શાહ ચુનીલાલ માણેકચંદ ૨૫૧  
 ૫ શાહ જહવજી ઓઘડભાઈ સદાદવાળાના સ્મરણાર્થે  
 હા. ભાઈ શાન્તીલાલ જહવજી ૨૫૧  
 ૬ દોશી ઠાકરશી ગુલાબચંદના સ્મરણાર્થે તેમનાં ધર્મપત્નિ સમરતબેન  
 વૃજલાલ તરફથી હા. જયંતીલાલ ઠાકરશી ૨૫૧

## લાલપુર

૧ શેઠ નેમચંદ સવજીભાઈ મોદી હા. મગનલાલભાઈ ૨૫૧

૨ શેઠ મુળચંદ પોપટલાલ હા. મણીલાલભાઈ તથા જેસીંગલાલભાઈ ૨૫૧  
લાખેરી (રાજસ્થાન)

૧ માસ્તર જેઠાલાલ મોનજીભાઈ હા. મહેતા અમૃતલાલ જેઠાલાલ ૨૫૧  
(સીવીલ એન્જનીઅર સાહેબ)  
લીમડી (પંચમહાલ)

૧ શાહ કુંવરજી ગુલાબચંદ ૨૫૧

૨ છાજેડ ઘાસીરામ ગુલાબચંદ ૨૫૧  
લોનાવાલા

૧ શેઠ ધનરાજજી મૂળચંદજી મૂથા ૨૫૧  
વઢવાણ શહેર

૧ શાહ દીલીપકુમાર સવાઈલાલ હા. સવાઈલાલ ત્રંબકલાલ શાહ ૨૫૧

૨ શાહ મગનલાલ ગોકળદાસ હા. રતીલાલ મગનલાલ કામદાર ૨૫૧

૩ સંઘવી મુળચંદ બેચરભાઈ હા. ભાઈ જીવણલાલ ગફલદાસ ૨૫૧

૪ શેઠ વૃજલાલ સુખલાલ ૨૫૧

૫ શેઠ કાન્તીલાલ નાગરદાસ ૨૫૧

૬ વોરા ચત્રભુજ મગનલાલ ૨૫૧

૭ સંઘવી શીવલાલ હીમજીભાઈ ૨૫૧

૮ શાહ દેવશી દેવકરજી ૨૫૧

૯ વોરા ડોસાભાઈ લાલચંદ સ્થા. જૈન સંઘ હા. વોરા નાનચંદ શીવલાલ ૨૫૧

૧૦ વોરા ધનજીભાઈ લાલચંદ સ્થા. જૈન સંઘ હા. વોરા પાનાચંદ ગોકળદાસ ૨૫૧

૧૧ દોશી વીરચંદ સુરચંદ હા. દોશી નાનચંદ ઉજમશી ૨૫૧

૧૨ સ્વ. વોરા મણીલાલ મગનલાલ હા. વોરા ચત્રભુજ મગનલાલ ૨૫૧

### વટામણ

૧ શ્રી વટામણ સ્થા. જૈન સંઘ હા. શ્રી ડાદ્યાભાઈ હલુભાઈ પટેલ ૨૫૧

### વલસાડ

૧ શાહ ખીમચંદ મૂળજીભાઈ ૨૫૧

### વાણી

૧ મહેતા નાનાલાલ છગનલાલનાં ધર્મપત્નિ સ્વ. ચંચળબેન તથા ૨૫૧  
પુરીબેનના સ્મરણાર્થે હા. ભાઈ મનહરલાલ નાનાલાલ

### વડોદરા

૧ કામદાર કેશવલાલ હિમતરામ પ્રોફેસર સાહેબ (ગોંડલવાળા) ૨૫૧

૨ વકીલ મણીલાલ કેશવલાલ શાહ ૨૫૧



- ૩ સ્વ. પિતાશ્રી શાહ ફકીરચંદ પુનભાઈના સ્મરણથે  
હા. શાહ રમણલાલ ફકીરચંદ ૨૫૧

### વડીયા

- ૧ પંચમીયા લવાનભાઈ કાળાભાઈ (જેતપુરવાળા) ૨૫૧

### વાંકાનેર

- ૧ માસ્તર કાન્તીલાલ ત્રંબકલાલ ખં ઢેરીયા ૨૫૧  
૨ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ (રૂ. ૨૫૦ બાકી) ૨૫૧  
૩ હક્તરી ચુનીલાલ પોપટભાઈ મોરખીવાળા હા.ભાઈ પ્રાણુલાલ ચુનીલાલ ૨૫૧

### વીંછીયા

- ૧ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હા. અજમેરા રાયચંદ વૃજપાળ ૨૫૧

### વીરમગામ

- ૧ શાહ વીકુલભાઈ મોદી માસ્તર ૨૫૧  
૨ શાહ નાગરદાસ માણેકચંદ ૨૫૧  
૩ શાહ મણીલાલ જીવણુલાલ (શાહપુરવાળા) ૨૫૧  
૪ શાહ અમુલખ(ખચુભાઈ)નાગરદાસનાં ધર્મપત્નિ અ.સૌ.બેન લીલાવંતીના  
વરસીતપના પારણાની ખુશાલીમાં હાજર ભાઈ કાન્તીલાલ નાગરદાસ ૩૦૦  
૫ સ્વ. શેઠ ઉજમશી નાનચંદના સ્મરણથે તેમના પુત્રો તરફથી  
હા. શેઠ ચુનીલાલ નાનચંદ ૨૫૧  
૬ સ્વ. શેઠ મણીલાલ લક્ષ્મીચંદના સ્મરણથે તેમના પુત્રો તરફથી  
હા. ખીમચંદભાઈ (ખારાઘોડાવાળા) ૨૫૧  
૭ સ્વ. શેઠ હીરાલાલ પ્રભુદાસના સ્મરણથે હા. શેઠ અનુભાઈ હરીલાલ ૨૫૧  
૮ સંઘવી જેચંદભાઈ નારણદાસ ૨૫૧  
૯ સ્વ. શાહ વેલશીભાઈ સાકરચંદભાઈના સ્મરણથે  
હા. ચીમનલાલ વેલશી (કત્રાસવાળા) ૨૫૧  
૧૦ પારેખ મણીલાલ ટોકરશી લાતીવાળા તરફથી (મોટીબેનના સ્મરણથે) ૨૫૧  
૧૧ શાહ નારણદાસ નાનજીભાઈના સુપુત્ર વાડીલાલભાઈનાં ધર્મપત્નિ અ. સૌ.  
નારંગીબેનના વરસીતપ નિમિત્તે હા. શાન્તીભાઈ ૨૫૧  
૧૨ સ્વ. છખીલદાસ ગોકળદાસના સ્મરણથે તેમનાં ધર્મપત્નિ  
કમળાબેન તરફથી હા. મંજુલાકુમારી ૨૫૧  
૧૩ શ્રી સ્થા. જૈન શ્રાવિકા સંઘ હા. પ્રમુખ અ. સૌ. રંભાબેન વાડીલાલ ૨૫૧  
૧૪ સ્વ. ત્રીલોવનદાસ દેવચંદ તથા સ્વ. અ. સૌ. ચંચળબેનના  
સ્મરણથે હા. ડા. હિંમતલાલ સુખલાલ ૨૫૧

- ૧૫ શાહ મૂળચંદ કાનજીભાઈ તરફથી હા. શાહ નાગરદાસ ઓઘડભાઈ ૨૫૧  
 ૧૬ શેઠ મોહનલાલ પીતાંબરદાસ હા.ભાઈ કેશવલાલ તથા મનસુખલાલભાઈ ૨૫૧  
 ૧૭ શ્રીમતી હીરાબેન નાથુભાઈના વરસીતય નિમિત્તે

હા. નાથુભાઈ નાનચંદ શાહ ૩૦૧

- ૧૮ સ્વ. મણીયાર પરસોતમદાસ સુદરજીના સ્મરણાર્થે

હા. શેઠ સાંકરચંદ પરસોતમદાસ ૨૫૧

- ૧૯ શેઠ મણીલાલ શીવલાલ ૨૫૧

### વેરાવલ

- ૧ શાહ કેશવલાલ જયંદભાઈ ૨૫૧

- ૨ શાહ ખીમચંદ સૌભાગ્યચંદ વસનજી ૨૫૧

### સતારા

- ૧ સ્વ. મદનલાલજી કુંદનમલજી કોઠારીના સ્મરણાર્થે

હા. તેમનાં ધર્મપત્નિ રાજકુંવરબાઈ મદનલાલજી ૨૫૧

### સાલખની (ખંગાળ)

- ૧ દોશી ચુનીલાલ કુલચંદ મોરખીવાળા ૨૫૦

### સાણંદ

- ૧ શાહ હીરાચંદ છગનલાલ હા. શાહ ચીમનલાલ હીરાચંદ ૩૦૧

- ૨ અ. સૌ. ચંપાબેન હા. દોશી જીવરાજ લાલચંદ ૨૫૧

- ૩ પટેલ મહાસુખલાલ ડોસાભાઈ ૨૫૧

- ૪ શાહ સાંકરચંદ કાનજીભાઈ ૨૫૧

- ૫ પુરીબેન ચીમનલાલ કલ્યાણજી સંઘવી લીંમડીવાળાના સ્મરણાર્થે

હા. વાડીલાલ મોહનલાલ કોઠારી ૨૫૧

- ૬ પારેખ નેમચંદ મોતીચંદ મુળીવાળાના સ્મરણાર્થે

હા. પારેખ ભીખાલાલ નેમચંદ ૨૫૧

- ૭ સંઘવી નારણદાસ ધરમશીના સ્મરણાર્થે હા.ભાઈ જયંતીલાલ નારણદાસ ૨૫૧

### સુરત

- ૧ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હા. શાહ છોટુભાઈ અલેચંદ ૨૫૧

### સુવર્ધ (કચ્છ)

- ૧ સાવળા શામજી હીરજી તરફથી સદાનંદી જૈન મુનિશ્રી છોટાલાલ

મહારાજના ઉપદેશથી સુવર્ધ સ્થા. જૈન સંઘ જ્ઞાનભંડારને લેટ ૨૫૧

### સુરેન્દ્રનગર

- ૧ શેઠ ચાંપશીભાઈ સુખલાલ ૨૫૧

- ૨ ભાવસાર ચુનીલાલ પ્રેમચંદ ૨૫૧

૩ સ્વ. કેશવલાલ મૂળજીભાઈનાં ધર્મપત્નિ અમૃતબાઈના રમરણાર્થે  
હા. શાહ ભાઈલાલ કેશવલાલ (યાનગઢવાળા) ૨૫૧

૪ શાહ ન્યાલચંદ હરખચંદ ૨૫૧

૫ શાહ વાડીલાલ હરખચંદ ૨૫૧

### સંજેલી (પંચમહાલ)

૧ શાહ લુણાજી ગુલાબચંદ ૨૫૧

૨ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હા. શેઠ પ્રેમચંદ દલીચંદ ૨૫૧

### હાટીનામાળીયા

૧ શેઠ ગોપાલજી મીઠાભાઈ ૨૫૦

### હારીજ

૧ શાહ અમુલખભાઈ મુળજી હા. પ્રકાશચંદ અમુલખ ૩૦૧

૨ સ્વ. બેન ચંદ્રકાન્તાના રમરણાર્થે હા. અમુલખ મુળજીભાઈ ૩૦૧

### હુબલી

૧ હીરાચંદ વનેચંદજી કટારીઆ ૨૫૧

કુલ્લે મેમ્બરોની સંખ્યા તા. ૨૦-૫-૫૮ સુધી

૪ આઘ મુરખીશ્રીઓ ૩૩ પ્રથમ વર્ગના મેમ્બરો

૨૨ મુરખીશ્રીઓ ૭૭ બીજા વર્ગના મેમ્બરો

૪૧ સહાયક મેમ્બરો ૪૭૯ કુલ મેમ્બરો

(બીજા વર્ગને સહંતર બંધ કરવામાં આવેલ છે.)

રાજકોટ, તા. ૨૦-૫-૫૮ સાકરચંદ ભાઈચંદ શેઠ

મંત્રી

શ્રી અ. ભા. શ્રવે. સ્થા. જૈન શા. સ.

તા. ૭-૬-૫૮ સુધીમાં નીચેની રકમો મળી છે.

### અમદાવાદ

૧ ભાવસાર છગનલાલ શામળદાસના રમરણાર્થે તેમના પુત્રો તરફથી  
હ. ભોગીલાલ છગનલાલ ભાવસાર અગાઉ રૂા. ૩૦૦૦૭ મળેલ  
છે, તેમાં બે હજાર વધારે મોકલાવ્યા છે, તેઓશ્રી મુરખી  
પદમાંથી આઘ મુરખીમાં દાખલ થાય છે. ૨૦૦૦

૨ શાહ નટવરલાલ ગોકળદાસ ૨૫૧

૩ શાહ શામળભાઈ અમરશીભાઈ ૨૫૧

### માડુંગાં

૧ શાહ નટવારલાલ દીપચંદ તરફથી તેમનાં ધર્મપત્નિ અ. સૌ.  
શુશીલાબેનના વરસીતપની ખુશાલીમાં ૨૫૧

### રાજકોટ

૧ દક્ષતરી પ્રભુલાલ ન્યાલચંદ

